इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

BHIC-102

प्राचीन विश्व की सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक पैटर्न

'' शिक्षा मानव को बन्धनों से मुक्त करती है और आज के युग में तो यह लोकतंत्र की भावना का आधार भी है। जन्म तथा अन्य कारणों से उत्पन्न जाति एवं वर्गगत विषमताओं को दूर करते हुए मनुष्य को इन सबसे ऊपर उठाती है।''

–इन्दिरा गांधी

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

" Education is a liberating force, and in our age it is also a democratising force, cutting across the barriers of caste and class, smoothing out inequalities imposed by birth and other circumstances."

– Indira Gandhi

इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

BHIC-102

प्राचीन विश्व की सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक पैटर्न

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

विशेषज्ञ समिति

प्रो. दरवेश गोपाल
निदेशक
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. पी. के. बसंत
इतिहास एवं संस्कृति विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

प्रो. आई. एच. सिद्दीकी
पूर्व-प्रोफेसर (इतिहास)
अलीगढ़ मुस्लिम यूनीवर्सिटी
अलीगढ़, उत्तरप्रदेश

डॉ. संगीता पांडे
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

डॉ. नलिनी तनेजा
स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

प्रो. एस. एम. अज़ीज़ुद्दीन
इतिहास एवं संस्कृति विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

प्रो. आभा सिंह
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. ए. आर. खान (*संयोजक*)
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम संयोजक : प्रो. आभा सिंह

प्रधान संपादक : प्रो. ए. आर. खान

पाठ्यक्रम संयोजन दल

प्रो. आभा सिंह **डॉ. दिव्या सेठी** **डॉ. प्रियंका खन्ना**

पाठ्यक्रम निर्माण दल

इकाई सं.	इकाई लेखक	अनुवादक
1	डॉ. प्रियंका खन्ना मानविकीय एवं सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ जी.डी. गोयनका विश्वविद्यालय, हरियाणा	डॉ. मारतंड प्रगल्भा सेंटर फॉर लैंग्वेज, लिट्रेचर एंड कल्चर स्टडीज जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय नई दिल्ली
2	प्रो. रश्मि सिन्हा मानव विज्ञान संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ इग्नू, नई दिल्ली	सुश्री गीता नई दिल्ली
3	डॉ. शतरुपा भट्टाचार्य लेडी श्री राम कॉलेज दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली	डॉ. मारतंड प्रगल्भा सेंटर फॉर लैंग्वेज, लिट्रेचर एंड कल्चर स्टडीज जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय नई दिल्ली
4	डॉ. श्री मंजरी मिरांडा हाउस दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	सुश्री गीता नई दिल्ली
5	डॉ. श्री मंजरी मिरांडा हाउस दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	सुश्री गीता नई दिल्ली
6	प्रो. पी. के. बसंत इतिहास एवं संस्कृति विभाग जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली	सुश्री गीता नई दिल्ली
7	प्रो. जया मेनन शिव नाडर यूनीवर्सिटी गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश	डॉ. मारतंड प्रगल्भा सेंटर फॉर लैंग्वेज, लिट्रेचर एंड कल्चर स्टडीज जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
8	डॉ. सोहिनी बसाक सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	डॉ. मारतंड प्रगल्भा सेंटर फॉर लैंग्वेज, लिट्रेचर एंड कल्चर स्टडीज जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
9	प्रो. माधवी थापी ऑनरेरी फैलो इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एडवान्स्ड स्टडीज़ शिमला	डॉ. शिवांगिनी टंडन महिला अध्ययन (विमेंस स्टडीज) विभाग अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ़, उत्तर प्रदेश

10	डॉ. शतरुपा भट्टाचार्य लेडी श्री राम कॉलेज दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	डॉ. मुनि विजय स्कूल ऑफ सोशल साइंसेस इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
11	डॉ. बिन्दु साहनी फैलो, इंडियन इन्स्टीट्यूट ऑफ एडवान्स्ड स्टडीज़ शिमला	डॉ. मुनि विजय स्कूल ऑफ सोशल साइंसेस इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
12	डॉ. जीना जेकब सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज जवाहरलाल नहेरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	सुश्री गीता नई दिल्ली
13	डॉ. जीना जेकब सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज जवाहरलाल नहेरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	सुश्री गीता नई दिल्ली
14	डॉ. नलिनी तनेजा स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	डॉ. मुनि विजय स्कूल ऑफ सोशल साइंसेस इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
15	डॉ. नलिनी तनेजा स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	डॉ. दिव्या सेठी इतिहास संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

सामग्री एवं प्रारूप संपादन

प्रो. आभा सिंह
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

डॉ. प्रियंका खन्ना
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

डॉ. दिव्या सेठी
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

हिंदी परिष्कर

प्रो. ए. आर. खान

हिंदी संयोजक

प्रो. आभा सिंह
डॉ. दिव्या सेठी

मुद्रण प्रस्तुति

श्री तिलक राज
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन)
इग्नू, एमपीडीडी

श्री यशपाल
अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)
इग्नू, एमपीडीडी

आरेख

सुश्री अरविन्दर चावला
आरेख डिज़ाइनर
नई दिल्ली

आवरण चित्रण

सुश्री अरविन्दर चावला
आरेख डिज़ाइनर

सितम्बर, 2020

© *इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2020*

ISBN: 978-93-90496-08-2

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफी (चक्र मुद्रण) द्वारा अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदान गढ़ी नई दिल्ली–110068 से अथवा इग्नू की आधिकारिक वेबसाइट www.ignou.ac.in से प्राप्त की जा सकती है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से कुलसचिव, एमपीडीडी द्वारा मुद्रित और प्रकाशित।

लेजर टाइप सेट– ग्राफिक प्रिंटर्स, मयूर विहार फेस 1, दिल्ली – 110091

मुद्रण – गीता ऑफसेट प्रिंटर्स प्रा. लि., सी–90, ओखला औद्योगिक क्षेत्र, फेज़–1, नई दिल्ली–20

विषय-वस्तु

		Pages
पाठ्यक्रम परिचय		**7**
खंड I	**मानव का क्रमिक विकास**	
इकाई 1	प्राक्-इतिहास और स्रोत	17
इकाई 2	मानव का जैविक विकास	34
इकाई 3	पुरापाषाण और मध्यपाषाण संस्कृतियाँ	56
खंड II	**खाद्य उत्पादन**	
इकाई 4	पौधे उगाना और पशु-पालन	83
इकाई 5	विभिन्न क्षेत्रों में आरंभिक कृषि	104
इकाई 6	कृषि के परिणाम	122
खंड III	**कांस्य युगीन सभ्यताएँ**	
इकाई 7	कांस्य युगीन सभ्यताएँः मुख्य विशेषताएँ	139
इकाई 8	मिस्र की सभ्यता	156
इकाई 9	चीन की शांग सभ्यता	175
खंड IV	**लौह युग**	
इकाई 10	लोहे का प्रयोग और उसके निहितार्थ प्रभाव	197
इकाई 11	मध्य और पश्चिम एशिया में खानाबदोश समूह	213
खंड V	**साम्राज्यों का गठन**	
इकाई 12	साम्राज्यों का गठनः असीरियन और बेबीलोनियन	247
इकाई 13	साम्राज्यों का गठनः सासानिद	261
खंड VI	**प्राचीन यूनान**	
इकाई 14	यूनान में लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था	295
इकाई 15	यूनानी सांस्कृतिक परम्पराएँ	323

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

पाठ्यक्रम अध्ययन संबंधी दिशानिर्देश

इस पाठ्यक्रम में हमने अध्ययन सामग्री के प्रस्तुतिकरण का समरूप पैटर्न अपनाया है। यह पाठ्यक्रम परिचय से प्रारम्भ होता है जिसमें कालक्रमानुसार विकास के महत्वपूर्ण चरणों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें 6 विशिष्ट अध्याय हैं जिन्हें 15 इकाइयों में बांटा गया है। अध्ययन की सुविधा के लिए इकाइयों की संरचना एक समान रखी गई है। इकाई के प्रथम भाग, उद्देश्य का प्रयोजन आपको इकाई के अध्ययन से संबंधित विशिष्ट मुद्दों से अवगत कराना है। कृपया इन उद्देश्यों को ध्यान से पढ़िये और प्रत्येक इकाई के भाग को पढ़ने के बाद खुद पुनः उस पर चिन्तन कीजिए। इकाई की प्रस्तावना आपको इकाई की विषयवस्तु से परिचित कराती है तथा आपको इकाई की विषयवस्तु के संबंध में दिशा निर्देश देती है। तत्पश्चात् पाठ्यक्रम की सुगमता के लिए विभिन्न भागों तथा उपभागों में मुख्य विषय की चर्चा की गई है। इकाई के बीच में बोध प्रश्न दिए गए हैं। हमारा निवेदन है कि आप जब भी इन प्रश्नों तक पहुँचे, इन्हें अवश्य पढ़ें तथा हल करें। यह न केवल आपको आपके स्वयं अध्ययन के मूल्याकंन में सहायक होगा, बल्कि इससे आप यह भी जांच सकेंगे कि आपने विषय विशेष को कितना समझा। अपने उत्तर की जांच आप सारांश के बाद दिए गए उत्तर संबंधित मुख्य बिंदुओं के मिलान से कीजिए। प्रत्येक इकाई के अंत में शब्दावली प्रदान की गई है, जिसे इकाई में बोल्ड में दर्शाया गया है। प्रत्येक इकाई के अंत में सदर्भ ग्रंथ सूची प्रदान की गई है। इस सूची में उन स्त्रोतों तथा ग्रंथों की चर्चा की गई है जो आपके अध्ययन के लिये उपयोगी हैं अथवा अध्ययन सामग्री के निर्माण के दौरान प्रयुक्त किए गए हैं। आप उन पर अवश्य नज़र डालें। हमने कुछ शैक्षणिक वीडियो अध्ययन समझ को बढ़ाने के लिए दिए हैं। कृपया आप इन वीडियो को देखें, यह आपकी संबंधित विषय-वस्तु की व्यापक समझ को बढ़ाने में सहायक होंगे।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पाठ्यक्रम परिचय

मानव की उत्पत्ति उतनी ही प्रभावशाली और महत्वपूर्ण प्रक्रिया थी जितना कि जीवन की उत्पत्ति। हालांकि हम *होमो सेपियन सेपियन्स* एक जैविक प्रजाति के तौर पर अन्य 'नरवानर संबंधियों' से भिन्न हैं। इस पाठ्यक्रम में हमारा उद्देश्य मानव के विकास के क्रम में शिकारी-संग्रहकर्ता से साम्राज्य निर्माता तक, और पर्यावरण और प्रकृति के साथ उनके संबंधों का अध्ययन करना है। क्रम विकास की इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाने में विभिन्न क्षेत्रों में फैले हुए मनुष्यों का योगदान था तथा इसका श्रेय किसी एक क्षेत्र या मानव समूह को नहीं दिया जा सकता। इसलिए इस पाठ्यक्रम को समाज विशेष और विशिष्ट क्षेत्रों के इतिहास के रूप में नहीं बल्कि मानवता के इतिहास के रूप में देखा जाना चाहिए।

यह पाठ्यक्रम मानव क्रम विकास की जानकारी देने वाले विभिन्न स्त्रोतों की विस्तृत चर्चा के साथ शुरू होता है। यहां इन स्त्रोतों के हमारे ज्ञानभंडार को दो भागों में विभाजित किया गया है। इनमें से पहले को आमतौर पर प्राक्-इतिहास के रूप में जाना जाता है जो कि लिखित रिकार्डों या दस्तावेज़ों के उद्भव से पहले का काल था। और दूसरा भाग वह है जब हमें लिखित दस्तावेज़ों और लेखों के साथ-साथ अन्य स्त्रोत भी प्राप्त होने लगते हैं। इसके बाद हम मानव विकास की प्रक्रिया को समझने के लिए आगे बढ़ते हैं। मानव इतिहास की व्यापक समझ मानव जैविक विकास की प्रक्रिया के साथ शुरू होती है। वातावरण की परिस्थितियों में बदलाव ने *होमो* प्रजातियों में बेहतर अनुकूलन क्षमता और द्विपादिता (bipedalism: दो पैरों पर चलने की क्षमता) को विकसित किया। आधुनिक मानव का विकास एक लाख से अधिक वर्षों में कई चरणों के माध्यम से गुजरते हुए आज से करीब 40,000 वर्ष पूर्व प्रजाति *होमो सेपियन* के रूप में हुआ। मानव क्रम विकास केवल जैविक ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक बदलावों द्वारा चिन्हित किया गया। इतिहास में पुरापाषाण युग (पच्चीस लाख वर्ष से दस हज़ार वर्ष पूर्व तक) और मध्यपाषाण युग (11,500-5000 बी पी[1]) में विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न संस्कृतियों के साक्ष्य प्राप्त होते हैं। सामान्य ओल्डोवान औज़ारों (तन्ज़ानिया में ओल्डुवाई गॉर्ज के नाम पर नामांकित) के निर्माण के साथ मानव ने श्रेष्ठ उपकरणों का निर्माण शुरू किया। और बचे मृतक पशुओं और फलों को ढूंढ़ने (scavenging) से शुरू करके वह प्रतिष्ठित शिकारी-संग्रहकर्ता के रूप में उभरे। इस घटनाक्रम ने शिकारी-संग्रहकर्ता समाज से नवपाषाण काल (लगभग 12,000-3500 बी सी ई) में एक जटिल खाद्य उत्पादन करने वाली अर्थव्यवस्था में बदलाव को प्रोत्साहित किया।

हर क्षेत्र में यह संक्रमण और उससे जुड़ी प्रथाएं और प्रतिमान समान नहीं थे। उदाहरण के लिए, पश्चिमी एशिया, अमेरिका, चीन और यूरोप की कृषि पद्धतियों की प्रकृति में विविधता थी। कृषि की शुरुआत का बुनियादी चरण पौधे उगाना और पशुपालन करना था। हालांकि हर क्षेत्र में इस संक्रमण का कारण खाद्य उत्पादन नहीं था। कृषि की उत्पत्ति की व्याख्या इतिहासकारों में वाद-विवाद का विषय है जिसमें किसी एक तर्क को सहमति प्राप्त नहीं है। कुछ विशेषज्ञों द्वारा यह माना जाता है कि कृषि के प्रभाव इतने विशाल थे कि वे उसे 'नवपाषाण क्रांति' के नाम से संबोधित करते हैं। भौतिक संस्कृति के विभिन्न स्वरूप, मिट्टी के बर्तनों के निर्माण, अलंकरण, बुनाई की शैलियां और धातु कर्म की तकनीकें विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में उभरीं और विकसित हुईं। इन प्रवृत्तियों ने लोगों के मध्य आर्थिक संपर्कों को बढ़ावा दिया, जिससे सामग्री के आदान-प्रदान के साथ-साथ उत्साहजनक वैचारिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदान हुआ। इस प्रकार जटिल सामाजिक संरचनाओं और सभ्यताओं का उद्भव हुआ।

अध्ययन की सुविधा और प्राचीन दुनिया के सामाजिक तथा सांस्कृतिक पहलुओं को समझने के लिए इस पाठ्यक्रम को 6 खंडों में बांटा गया है। और इसी तरह इन 6 खंडों को 15 उप-विषयों में बांटा गया है, हर उप-विषय को एक इकाई के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

[1] बी पी – बिफोर प्रेजेंट (वर्तमान से पूर्व)

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

यह पाठ्यक्रम **मानव के क्रमिक विकास** (**खंड I**) के साथ शुरू होता है जो ऐतिहासिक शोध के प्रमुख सरोकार का विवरण यानि अतीत की समझ प्रस्तुत करता है। यहां हमारा प्रयास प्राक्-इतिहास, आद्य-इतिहास, सर्वाधिक प्राचीन ऐतिहासिक लेखन और मानव अतीत की जानकारी के लिए आधुनिक ज्ञान की विभिन्न शाखाओं, विशेष रूप से पुरातत्व और मानव शास्त्र की शाखाएं, की स्पष्ट समझ प्रदान करना है। प्राक्-इतिहास या प्रागैतिहासिक काल उस पुरातन काल को कहते हैं जब लेखन नहीं था और मानव का लेखन या लिखित दस्तावेजों से कोई परिचय भी नहीं था। मानव क्रम विकास की जानकारी प्राप्त करने के लिए जिन प्रक्रियाओं का अनुसरण किया जाता है उनमें पुरातात्विक अन्वेषण के दौरान पाई गई कलाकृतियों और लक्षणों का विश्लेषण शामिल है। इनके अलावा विभिन्न पद्धतियों द्वारा पुरातात्विक अवशेषों का तिथि निर्धारण, उनके गुण और क्षमताओं का अध्ययन भी किया गया है। पिछले कुछ वर्षों में पुरातत्व के क्षेत्र में बहुत उन्नति हुई है। अन्तर्जलीय अन्वेषण जैसी वैज्ञानिक प्रौद्योगिकियों की मदद से जलमग्न स्थलों की खोज भी संभव हो पाई है। तिथि निर्धारण पद्धति के रूप में ताप-उद्भासन (थर्मोलुमिनिसेंस) मिट्टी के बर्तन बनाने वाली प्रागैतिहासिक संस्कृतियों को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण पुरातात्विक विधि है (**इकाई 1**)।

मानव के जैविक विकास का अध्ययन पाठ्यक्रम की **दूसरी इकाई** में किया गया है। यह इकाई विस्तार से डार्विन से पूर्व के जैविक विकास के सिद्धांतों के बारे में विश्लेषण करती है जिसमें निर्जीव पदार्थ से सजीव की उत्पत्ति वाले यूनानी सिद्धांतों से लेकर मध्यकालीन सिद्धांतों और जैविक विकास के सिद्धांत शामिल हैं। मध्य 19वीं शताब्दी में चार्ल्स डार्विन ने अपने ग्रंथ *ओरिजिन ऑफ स्पीशीज़* में जैविक क्रम विकास को परिभाषित किया। विकास के सबसे ज्यादा प्रभावशाली सिद्धांत को नव-डार्विनवादियों ने आगे बढ़ाया जिनके द्वारा प्राकृतिक चयन की अवधारणा का समर्थन किया गया। मानव जैविक विकास के इतिहास में सबसे बड़ी उपलब्धि जीवाश्म (fossil) साक्ष्यों के साथ हुई, जिन्होंने मानव की वानरों से समानताएं और विभिन्नताएं निर्धारित की। अन्य प्रजातियों के विलुप्त होने और आधुनिक मानव के विकसित होने तक बहुत सी मानव प्रजातियों ने विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में आवास किया। इनमें से *होमो सेपियन* या 'बुद्धिमान मानव' – वह प्रजाति है जिससे आधुनिक मानव संबंधित है। इसीलिए पुरामानवशास्त्रियों द्वारा पाए गए साक्ष्यों और मानव जैविक विकास के विभिन्न सिद्धांतों द्वारा आज से 6,000,000 वर्ष से लेकर 40,000 वर्ष पूर्व की अवधि में विस्तारित मानव जैविक विकास की एक व्यापक समझ विकसित हुई है।

मानव जैविक विकास सांस्कृतिक विकास के साथ भी जुड़ा हुआ है जिसकी चर्चा अगली **इकाई 3** में की गई है। इस इकाई का केंद्र सांस्कृतिक आयामों– औज़ार बनाने की संस्कृति से लेकर कला के भिन्न रूपों तक – पर है, जिनका विश्व में उद्भव हुआ, विशेष तौर पर यूरोप और पश्चिमी एशिया में। मानव विकास के तीन चरणों में से सबसे पहला चरण पुरापाषाण संस्कृति या पूर्व-पाषाण युग था। यह पच्चीस लाख वर्ष पूर्व से लेकर उस समय को समाविष्ट करता है जब मानव ने विशेष रूप से पत्थर के उपकरण या औज़ार बनाने शुरू किए। दूसरी ओर मध्यपाषाण काल, जिसे आमतौर पर नवपाषाण काल की प्रस्तावना के रूप में समझा जाता है, जो उपकरणों के आकार में सूक्ष्मता और विशिष्ट जलवायु परिवर्तनों द्वारा चिह्नत था। मध्यपाषाण काल मनुष्य के सांस्कृतिक अनुकूलन और अधिक स्थायी अस्तित्व, जो आरंभिक पौधे उगाने और जानवरों को पालतू बनाने पर आधारित था, की सबसे अच्छी अभिव्यक्ति है। अतः हम यह मान सकते हैं कि पुरापाषाण काल और मध्यपाषाण काल ने मानव समाज की नींव रखी और एक साधारण शिकार-भोजन संग्रहण करने वाले समाज को नवपाषाण काल की खाद्य उत्पादक अर्थव्यवस्थाओं में रूपांतरण के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

अंतिम हिम युग या प्लीस्टोसीन युग के अंत में शिकारी-संग्रहकर्ताओं की भोजन इकट्ठा करने की रणनीति में बदलाव आया (**खंड II**)। आरंभिक प्लीस्टोसीन युग में भीषण पर्यावरणीय

परिवर्तनों की वजह से विश्व के भूगोल में परिवर्तन आया और वनस्पति के चरित्र भी प्रभावित हुए। इसीलिए इन परिवर्तनों से और भोजन की कमी से निपटने के लिए मनुष्य ने अपने आहार की वस्तुओं को विस्तृत किया और वह व्यापक स्पेक्ट्रम अर्थव्यवस्था पर निर्भर हुआ, जिसमें विशेष प्रकार के शिकार, मौसमी संग्रहण, मछली पकड़ना और अन्य गतिविधियां शामिल थीं। विश्व के बहुत से क्षेत्रों में लोगों ने भोजन प्राप्त करने के नए तरीकों की तलाश की। कृषि की शुरुआत की पहली आवश्यकता पौधे उगाना और पशुओं का पालन करना था, जिसकी चर्चा इस पाठ्यक्रम की **इकाई 4** में की गई है।

कृषि की शुरुआत की सही प्रकृति पर पहुंचना बहुत मुश्किल है क्योंकि इतिहासकारों द्वारा कृषि की शुरुआत का कोई एक सिद्धांत स्वीकृत नहीं किया गया है। हालांकि नवपाषाण संक्रमण क्या था और उसके पीछे क्या कारण थे यह प्राक्-इतिहास का सबसे दिलचस्प प्रश्न बना हुआ है। लेकिन यह भी एक तथ्य है कि 6000 बी सी ई तक विश्व की पर्याप्त आबादी नियमित रूप से पशुपालन और खेती संबंधित गतिविधियों से जुड़ चुकी थी। कृषि की शुरुआत के क्रांतिकारी महत्व की वजह से बहुत से विद्वानों ने उसे नवपाषाण क्रांति का नाम दिया। हमें यह ध्यान में रखने की जरुरत है कि हर शिकारी-संग्रहकर्ता अर्थव्यवस्था ने पौधे उगाने और पशुओं का पालन करने की शुरुआत नहीं की थी। बहुत से पुरातात्विक स्थल यह दर्शाते हैं कि विकसित कृषि उत्पादन के बिना भी एक ही स्थान पर बहुत बार बसावटें हो सकती थीं **(इकाई 5)**।

हालांकि पर्यावरणीय परिवर्तन ने कृषि को प्रेरित नहीं किया, परंतु कई स्थानों पर वह प्रवासी तरीकों को प्रेरित करने में एक महत्वपूर्ण कारक था। एक विशाल आबादी के लिए भोजन इकट्ठा करने की रणनीतिओं को अपनाना और उनका पोषण करना इसके अन्य कारक थे। इस दौरान बहुत से परिवर्तनों को देखा गया जैसे कि नए और परिष्कृत औज़ारों का विकास, घर बनाने के बदलते तरीके और अन्य निर्माण, जैसे बाढ़ नियंत्रण निर्माण, प्रकृति के साथ मानव के विविध हस्तक्षेपों द्वारा सिंचाई पर निर्भरता, विस्तृत ग्रामीण बस्तियां, मिट्टी के अद्वितीय बर्तन बनाने की शैलियां, विचारों का स्थानीय अनुकूलन और क्षेत्रों के बीच नियमित रूप से आदान-प्रदान के संबंध। एनातोलिया में स्थित कटालहोयुक, उत्तर नवपाषाण स्थलों में से सबसे विशाल और प्रमुख स्थल है।

एक जटिल समाज और सभ्यता की उत्पत्ति के लिए सबसे पहली आवश्यकता कृषि का संक्रमण था। इस संक्रमण ने विभिन्न मानव समुदायों के आपसी और प्रकृति के प्रति अधिक कठोर रवैये को प्रोत्साहित किया। प्रारंभ में, इसका मानव शरीर क्रिया विज्ञान पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। मानव आहार और विस्तृत हुआ, और अनाज उनकी भोजन व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण घटक बन गया। इसने लंबी दूरी तक किए जाने वाले व्यापार को बढ़ाया और चीनी मिट्टी के बर्तनों का निर्माण कराया। मानव कपाल का शुभारंभ, जबड़े की हड्डी (जॉलाइन) और आकार और जीवन-अवधि में महत्वपूर्ण परिवर्तन देखे गए। साथ ही मसूड़ों की बीमारियां एक नकारात्मक परिणाम के रूप में उत्पन्न हुईं। इसके फलस्वरूप मानव की वस्तुओं को जांचने-परखने की क्षमता और अवलोकन के गुणों में वृद्धि हुई। अनाज की भरोसेमंद आपूर्ति और संवर्धित भूमि की वहन क्षमता के साथ कृषि आबादी में वृद्धि हुई। कृषक समाज की भूमिकाओं में विभेदीकरण भी संभव हुआ।

व्यवस्था और विवाद, रिश्तेदारी संबंधों, और संसाधनों और काम के बोझ के वितरण से संबंधित नई चिंताएं सामने आईं। इस तरह के प्रतिवाद बहुत से नवपाषाण गांवों में किलेबंदी की उपस्थिति की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। इसी प्रकार ईश्वरीय विश्वास और धर्म के क्षेत्र में नए वैचारिक परिवर्तन दिखाई देते हैं। आरंभिक गांव समुदायों में नई शैली की पूजा प्रणाली – प्रजनन संबंधी अनुष्ठान और पूर्वजों की पूजा – देखने को मिलती है। उदाहरण के लिए,

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

समकालीन तुर्की के गोबेल्की तेपे नामक स्थल पर औपचारिक संरचनाएं पाई गई हैं। भौतिक संस्कृति, जैसा कि मिट्टी के बर्तन, वस्त्रों की बुनाई और धातु कार्य में उल्लेखनीय परिवर्तन सुस्पष्ट हैं। सामग्री शोधन की अन्य विशेषताओं की अपेक्षा मिट्टी के बर्तन, किसी संस्कृति और उससे संबंधित पहलू को पहचानने और उसकी तिथि निर्धारण करने में महत्वपूर्ण पुरातात्विक अवशेषण में मदद करते हैं। इन उत्पादन की वस्तुओं के आदान-प्रदान ने अंत में तांबे और कांस्य के धातुकार्यों के प्रसार को ज्यादातर नवपाषाण युग के स्थलों पर बढ़ावा दिया (**इकाई 6**)।

मनुष्य द्वारा विभिन्न सामग्रियों के प्रयोग के परिपेक्ष में पत्थर के उपयोग से शुरू होकर उसके बाद तांबे और कांसे के इस्तेमाल से अंत में लोहे की तरफ परिवर्तित होता है। 'कांस्य युग' एक ऐसी समय अवधि को दर्शाता है जब उपकरण बनाने के लिए बड़े पैमाने पर कांसे का इस्तेमाल किया जाता था। कांस्य युग की परिभाषा केवल मनुष्य द्वारा इस्तेमाल की गई सामग्री तक ही सीमित नहीं है, वह सभ्यता के रूप में जानी जाने वाली एक खास प्रकार के सामाजिक गठन से भी जुड़ी हुई है। 'सभ्यता' सामाजिक विकास का वह चरण है जो कई विशेषताओं द्वारा चित्रित किया जाता है जैसे कि लेखन प्रणाली, धार्मिक विश्वास प्रणाली, कला के विभिन्न रूप, शिल्प और औज़ारों की उत्पादन तकनीकें। एक विशाल भौगोलिक क्षेत्र में नियमितता से दिखाई देने वाली यह विशेषताएं 'संस्कृति' के रूप में जानी जाती हैं।

एक समय अवधि में किसी विशेष भौगोलिक क्षेत्र में समान कलाकृतियों का संकलन ही संस्कृति कहलाता है। हमें यह याद रखना चाहिए कि विश्व का हर क्षेत्र कांस्य युग से नहीं गुजरा, अपितु बहुत सी सभ्यताएं समानान्तर रूप में अस्तित्व में रहीं। हमने यहां कांस्य युगीन सभ्यताओं की सामान्य विशेषताओं पर चर्चा की है, परंतु इस खंड में केवल मिस्र और चीन के विशिष्ट अध्ययन का प्रयत्न किया गया है (**खंड III**)।

कांस्य युगीन सभ्यताएं विकसित लेखन रूपों द्वारा चिन्हित थीं: मेसोपोटामिया में क्यूनिफार्म शैली, मिस्र में चित्रलिपि और चीन में ओरेकल हड्डी-लेखन। कांस्य युगीन सभ्यताएं सामाजिक स्तरीकरण द्वारा चिन्हित की गई थीं जैसे कि शवाधान तरीकों और लेखन साक्ष्यों से स्पष्ट होता है। उनकी बसावटें नदी घाटियों के आसपास थीं और वह चौथी से दूसरी सहस्त्राब्दी बी सी ई में अस्तित्व में थीं। इन सभ्यताओं की प्रमुख विशेषताओं में शहरीकरण इतना प्रमुख था कि गॉर्डन वी. चाइल्ड ने इस घटनाक्रम को 'शहरी क्रांति' का नाम दिया। कांस्य युग का केन्द्रीय चरित्र शहर था। शिल्प विशेषज्ञता ने लोगों को गतिशीलता प्रदान की। कृषि उत्पादन खेतों की जुताई की तकनीक पर निर्भर था। मौद्रिक अर्थव्यवस्था के अभाव में उच्च विशेषज्ञता व्यवस्थित श्रम विनियोग के जरिये हासिल की गई। इस काल की ज्यादातर जानकारी उस समय के मिथकों और गाथाओं से प्राप्त होती है। उन समाजों में धन शक्ति और प्रतिष्ठा के बीच एक मजबूत संबंध था। शासक निरंकुश व्यक्तित्व के रूप में उभरे जिन्होंने धार्मिक तथा राजनैतिक दोनों सत्ताओं पर अपना नियंत्रण रखा। नगर-राज्यों के बीच संपन्नता ने धर्मनिरपेक्ष शक्ति केंद्रों के उद्भव को अग्रसर किया (**इकाई 7**)। मिस्र में कांस्य युग के दौरान भव्य पिरामिडों का निर्माण किया गया जिन्हें आज भी दुनिया के अजूबों में माना जाता है और उसी के साथ-साथ उन्हें शोषण के एक बड़े प्रतीक के रूप में भी देखा जाता है, क्योंकि वह दासों के परिश्रम के माध्यम से बनाए गए थे। समुद्री व्यापार और मिस्र के लोगों की सामुद्रिक गतिविधियों की उपस्थिति उनके जहाज और नौकाओं के चित्रों में दर्ज की गई है (**इकाई 8**)। उसी समय एक और कांस्य युगीन सभ्यता विकसित हुई जो चीन के क्षेत्र में स्थित थी (**इकाई 9**)। इस क्षेत्र में अद्वितीय और सामान्य कांस्य कास्टिंग प्रौद्योगिकी और कांस्य वस्तुओं के सबसे बड़े संग्रह की प्राप्ति प्रौद्योगिकी का एक चमत्कार माना जाता है। चीन की सभ्यता के प्रारंभिक काल में शांग की विरासत इस पाठ्यक्रम में कांस्य युगीन सभ्यताओं के अध्ययन के महत्व को दर्शाती है।

लौह युग (**खंड IV**) का उद्भव, कांस्य युगीन सभ्यताओं के पतन और खानाबदोश समूहों के आगमन के समकालीन था। कांस्य से भिन्न, जो कि एक कुलीन मिश्रित धातु थी, लोहे के इस्तेमाल ने समाज पर अधिक प्रभाव डाला क्योंकि वह अधिकांश भौगोलिक क्षेत्रों में आसानी से उपलब्ध था। अधिक इस्तेमाल की जाने वाली धातु के रूप में लोहे की तरफ संक्रमण कुछ विद्वानों द्वारा मानव इतिहास में उतना ही महत्वपूर्ण समझा जाता है जितना कि पौधे उगाना और जानवरों को पालतू बनाने की प्रक्रिया। लोहे की क्षमता और उसे उगाने का ज्ञान कृषि, उद्योग और युद्धों के प्रजातंत्रीकरण या आम लोगों तक उसकी पहुँच का कारक माना जाता है। आरंभिक लोहे की वस्तुएं आकस्मिक उत्पाद थीं, समय के साथ लोहा गलाने का ज्ञान विकसित हुआ (**इकाई 10**)। बाद में यूनानियों और ईरानियों ने लोहे को निर्माण के कार्य के लिए इस्तेमाल किया। इस प्रकार लोहा एक बहुमूल्य धातु की बजाय आम प्रयोग की धातु के रूप में उभरा। उस समय का एक और महत्वपूर्ण घटनाक्रम घोड़े को पालतू बनाने की प्रक्रिया और आरा युक्त पहियों वाले रथों का आरंभ था। इसलिए लौह युग के दौरान लोहे से जुड़ी प्रौद्योगिकी के फैलाव के साथ-साथ खेती में कई गुना वृद्धि हुई जिसके कारण कृषि उत्पादन का विस्तार इस युग की एक महत्वपूर्ण विशेषता थी। इसी के साथ-साथ घुड़सवार योद्धा वर्ग, धन, व्यापार और नए शहरों का उद्भव समाज में बदलाव लाया।

11वीं इकाई, लगभग सातवीं सदी बी सी ई से मध्य और पश्चिमी एशिया के मुख्य खानाबदोश समूहों के बारे में चर्चा करती है। मध्य एशिया की अवस्थिति में उसके पर्यावरणीय कारणों और भोजन की खोज में घूमने की वजह ने अंत में खानाबदोश साम्राज्यों की स्थापना के लिए मार्ग प्रशस्त किया। घुड़सवारी ने एक कारक के रूप में इस क्षेत्र में कई शताब्दियों के लिए खानाबदोशों के वर्चस्व में मदद की। घोड़ा और उनके खास टेंट, जो सामाजिक पदानुक्रम के सिद्धांतों पर आधारित थे और *युर्त* के नाम से जाने जाते थे, ने उन्हें गतिशीलता प्रदान की। छठी और सातवीं सदी में हेफ्थेलाइट मध्य एशिया का सबसे शक्तिशाली खानाबदोश समूह था। हालांकि 10वीं और 11वीं सदी तक इस क्षेत्र में सामानिद, सेल्जुक, तुर्क और ख्वारिज्म जैसे शक्तिशाली साम्राज्य उभरे। इन खानाबदोश समूहों के उनके पड़ोसी स्थायी समुदायों के साथ सहयोग और संघर्ष के संबंध थे। हथियारों के इस्तेमाल के कारण उन्होंने अपने पड़ोसी स्थायी समुदायों पर वर्चस्व प्राप्त किया। अरब प्रायद्वीप के आंतरिक क्षेत्र, दक्षिण सीरिया और इराक पर अरब के बद्दू खानाबदोश समूहों का कब्जा था। बद्दू समूहों की उत्पत्ति विद्वानों में प्रतिवाद का विषय है। उनके अरेबिया के स्लेब्स के साथ रिश्तों की चर्चा **इकाई 11** में विस्तार के साथ की गई है। दक्षिण एशिया और यूरेशिया के खानाबदोश समूह पशुधन की परवरिश, पशुओं को चारागाहों में चराने, खानाबदोश समूहों के आवागमन, और विभिन्न प्रकार के शिल्प और युद्ध विद्या की विकसित तकनीकों से परिचित थे। उनकी अत्यधिक विकसित सामाजिक संरचना पशुधन के व्यक्तिगत स्वामित्व और चारागाहों के सांप्रदायिक स्वामित्व की दोहरी प्रणाली पर आधारित थी। वह आमतौर पर मरुद्वीपों के आसपास ही बसावट करते थे, यानी कि बसे हुए कृषकों के नजदीक। यह समूह अपने मुखियाओं के नेतृत्व में रहते थे जिन्हें अपने साथी कबीला निवासियों पर अत्यधिक अधिकार प्राप्त थे। खानाबदोश सांस्कृतिक जीवन ने खुद को अत्यन्त जीवन्त रूपों में प्रस्तुत किया। हालांकि कुछ खानाबदोश समूहों ने, जैसे मंगोल, अपनी शक्ति को समेकित कर शक्तिशाली खानाबदोश साम्राज्य का गठन किया।

एक नए राजनीतिक विन्यास, जिसे साम्राज्य के रूप में जाना जाता है, का उद्भव पश्चिमी एशिया के क्षेत्र में हुआ (**खंड V**)। यह साम्राज्य ज्यादातर राजतंत्रीय प्रकृति के थे इनकी साम्राज्यी शक्ति का संचालन भेंट के संग्रह के माध्यम से किया जाता था और उसमें आपस में नातेदारी से संबंधित लोग शामिल होते थे (अपनी जातीय पृष्ठभूमि या आदिवासी संबंधों की वजह से)। इन विशाल साम्राजों ने अत्यंत संगठित व्यवस्थाओं की नींव रखी, जैसे कराधान

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

प्रणाली, विस्तृत नौकरशाही प्रणाली, कानून व्यवस्था और स्थाई सेना। मेसोपोटामिया के बेबीलोनिया ने साम्राज्य के गठन की प्रक्रिया शुरू की जिसके बाद इस प्रक्रिया का हिट्टियों और असीरियों द्वारा अनुसरण किया गया। यह साम्राज्य बाद के विभिन्न साम्राज्यों के लिए एक मॉडल के तौर पर उभरे, जो कि उस क्षेत्र और अन्य क्षेत्रों में उभरे **(इकाई 12)**। अगली इकाई **(इकाई 13)** सासानिद साम्राज्य, उसके विकास और सुदृढ़ीकरण, प्रशासनिक संस्थाओं, सामाजिक संघटन, अर्थव्यस्था, शहरीकरण, धर्म और साम्राज्य की संस्कृति का विश्लेषण करती है। सासानिद साम्राज्य के काल को पूर्व इस्लामी ईरानी साम्राज्य के स्वर्ण युग के रूप में जाना जाता है। साम्राज्य का प्रारंभ आमतौर पर चौथी और तीसरी सदी बी सी ई में माना जाता है, जब उसकी नींव रखी गई। इसके बाद पतन का काल आया जब हेफ़्थेलाइटों ने इस क्षेत्र पर आक्रमण किया। खुसरो के शासन के अधीन, जिसने शासन की विभिन्न प्रणालियों में कई सुधारों की शुरुआत की, साम्राज्य ने काफी ऊंचाईयां प्राप्त कीं और उसके बाद उसके बहुत से उत्तराधिकारी शासकों ने शासन किया। अंततः अरबों ने इस क्षेत्र में आक्रमण किया और इस साम्राज्य के पतन की छाप लगा दी।

पाठ्यक्रम के आखिरी **खंड (VI)** में यूनानी सभ्यता को शामिल किया गया हैः भौगोलिक सीमा; विभिन्न स्त्रोत्र; यूनानी समाज की सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था के महत्वपूर्ण पहलू इस इकाई में शामिल किए गए हैं। इनके अतिरिक्त शहरीकरण, भौतिक संस्कृति, यूनानी विश्व दृष्टि, लोकतंत्र की प्रकृति, दास प्रणाली की मौजूदगी और उसकी विरासत पर भी चर्चा की गई है। प्राचीन विश्व की यूनानी सभ्यता एक बदलती हुई भौगोलिक इकाई थी जिसका केंद्र भूमध्यसागर था **(इकाई 14)**। साम्राज्य के गठन के युग में भी यूनानी समाज स्वतंत्र नगर-राज्यों (जैसे एथेंस और स्पार्टा) का समूह था जिसने सभ्यता की एकजुटता को संगठित किया। मायसीनियाई सभ्यता के पतन के साथ तथाकथित 'अंधकार युग' शुरू हुआ जिसमें लंबी दूरी के व्यापार का अंत, शहरों का विनाश और सामाजिक जीवन में विघटन प्रमुख घटनाएं थीं।

यूनानी समाज, अपने सभी तर्कसंगत और सभ्य रूपों के साथ, अन्य श्रमिक प्रकारों के सह-अस्तित्व सहित अनिवार्य रूप से एक दास समाज था। शहर और ग्रामीण इलाकों के बीच एक अद्वितीय संबंध था। अर्थव्यवस्था मजबूत व्यापार नेटवर्क पर आधारित थी, विशेषरूप से तटीय व्यापार क्योंकि कोई भी शहरी राज्य समुद्र से 25 मील से अधिक दूर स्थित नहीं था। भूमिपति वर्ग और किसानों के बीच संघर्ष का रिश्ता था। समाज में महिलाओं की स्थिति अधीनस्थ थी, उन्हें नागरिक नहीं माना जाता था और वह राजनीतिक गतिविधियों में भाग नहीं ले सकती थीं। यूनानी नगर-राज्यों अथवा *पोलिस* के प्रशासनिक संस्थान राजशाही, कुलीन तंत्र और लोकतंत्र का एक मिश्रण थे।

इस पाठ्यक्रम की आखरी **इकाई (15)** यूनानी संस्कृति की विशेषताओं के बारे में गहराई से विश्लेषण प्रदान करती है, पिछली इकाई से अलग जहां पर यूनानी लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था के सामाजिक आधार पर चर्चा की गई है। यूनानी दार्शनिकों ने यूनानी सांस्कृतिक परंपराओं को समृद्धि प्रदान की। उन्हें इस घटनाक्रम की समृद्धि में अपने क्षेत्र के अलावा पूर्वी क्षेत्रों के योगदान के बारे में भी जानकारी थी। इस लंबे युग के दौरान बहुत से विचारक उभरे जिनमें से सुकरात, प्लेटो और अरस्तु आज भी प्रसिद्ध हैं। अरस्तु, जिन्हें पश्चिमी दर्शन का पिता माना जाता है, ने प्राणिशास्त्र, भौतिकी, तत्वमीमांसा और राजनीति के क्षेत्रों में विशिष्ट योगदान दिया और अन्य क्षेत्रों में भी लेखन किया। इस प्रकार यूनानी चिकित्सा और विज्ञान ने ज्ञान के नए भंडार खोले। आज हम जिसे इतिहासलेखन के रूप में जानते हैं यूनानियों को उसके बुनियादी तत्वों की नींव रखने का श्रेय जाता है। हेरोडोटस को विश्व का सबसे पहला इतिहासकार माना जाता है। दूसरी ओर थ्यूसीडाइडिस को पहला वैज्ञानिक मूल्यों पर आधारित इतिहासलेखन का श्रेय प्राप्त है।

यूनानी दर्शन ने मौलिक प्राकृतिक घटनाओं के स्पष्टीकरण का पता लगाया। उन्होंने इन घटनाओं के पीछे की वजह और कारण का अनुमान लगाया। इस चेतना के साथ धार्मिक और पौराणिक मान्यताओं को चुनौती देना मुमकिन हुआ। अंधकार युग, प्राचीन और क्लासिकल यूनान में विशाल मंदिर परिसरों के समुदाय-स्थलों के रूप में उभरने की वजह से सार्वजनिक अनुष्ठान के विस्तारित हुए। उदाहरण के लिए, डेल्फी और ओलंपिया में स्थित मंदिर परिसर। ऐसा कहा जाता है कि नगर-राज्यों को एकजुट रखने में क्षेत्र के लोकप्रिय मिथकों और गाथाओं का योगदान था। यूनानी साहित्य वैश्विक मूल्यों की उपदेशात्मक अभिव्यक्ति को पेश करता है। होमर द्वारा रचित *इलियाड* और *ओडिसी* जैसे महाकाव्य विस्तार से न केवल उस समय के समाज की धारणाओं के बारे में वर्णन करते हैं, बल्कि वह लेखक द्वारा अभिव्यक्त मानव जीवन की धारणाओं को भी व्यक्त करते हैं। कला, वास्तु-कला और मूर्तिकला के क्षेत्रों ने सामूहिक से व्यक्तिगत प्रकृति तक का रास्ता तय किया। शारीरिक शक्ति का प्रदर्शन और खेलकूद अंततः मनुष्य के कौशल के गुणगान, उत्सव मनाने और सराहना के साथ उनके जीवन का एक अनिवार्य हिस्सा बन गए। आधुनिक समय के ओलंपिक खेल भी प्राचीन यूनान से संबंध रखते हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

14 Blank

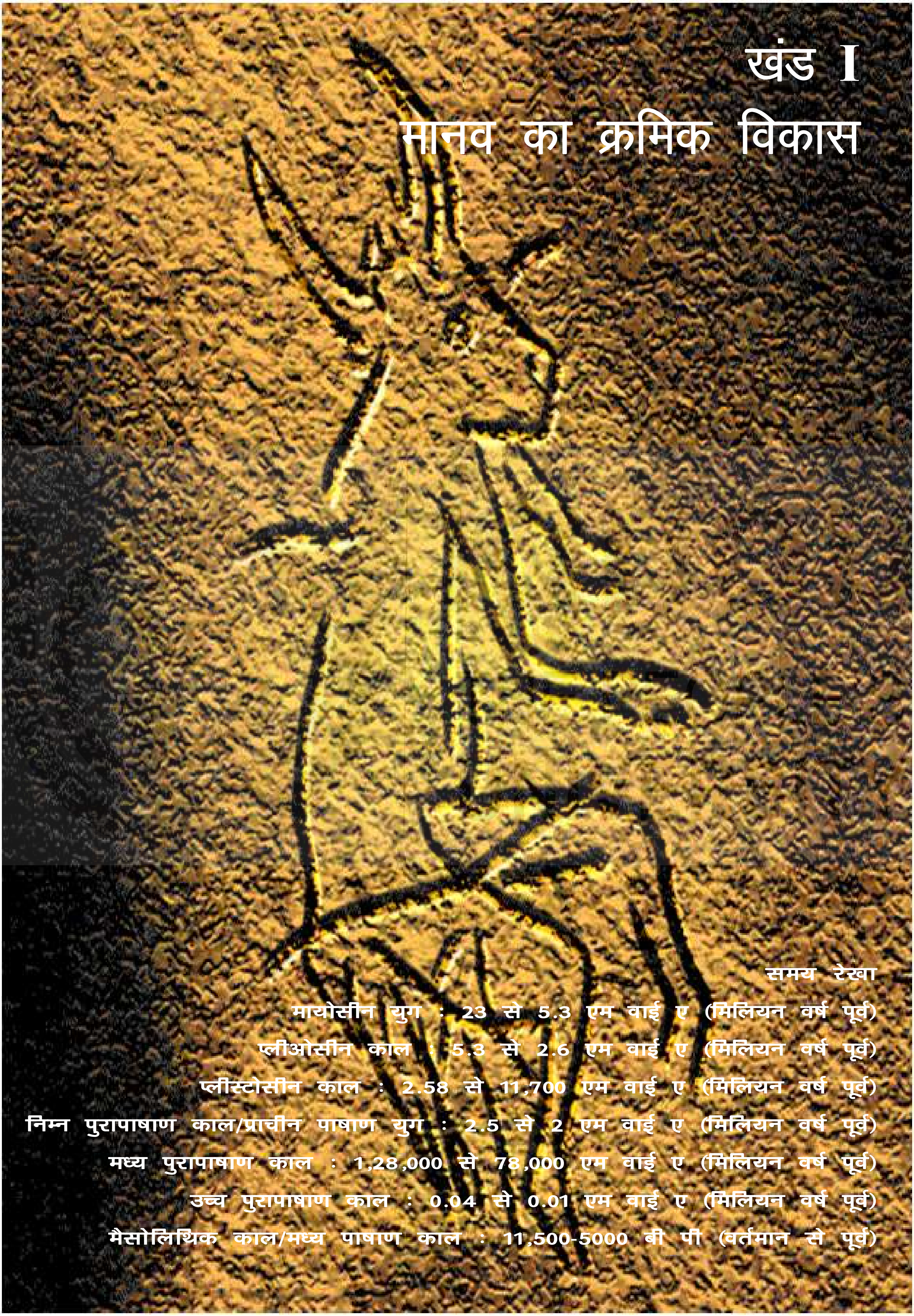

खंड I
मानव का क्रमिक विकास

समय रेखा

मायोसीन युग : 23 से 5.3 एम वाई ए (मिलियन वर्ष पूर्व)

प्लीओसीन काल : 5.3 से 2.6 एम वाई ए (मिलियन वर्ष पूर्व)

प्लीस्टोसीन काल : 2.58 से 11,700 एम वाई ए (मिलियन वर्ष पूर्व)

निम्न पुरापाषाण काल/प्राचीन पाषाण युग : 2.5 से 2 एम वाई ए (मिलियन वर्ष पूर्व)

मध्य पुरापाषाण काल : 1,28,000 से 78,000 एम वाई ए (मिलियन वर्ष पूर्व)

उच्च पुरापाषाण काल : 0.04 से 0.01 एम वाई ए (मिलियन वर्ष पूर्व)

मैसोलिथिक काल/मध्य पाषाण काल : 11,500-5000 बी पी (वर्तमान से पूर्व)

चित्रांकनः पुरापाषाण गुफा चित्र, डॉरडोग्न, फ्रांस

फोटोग्राफः लोकुटस बोर्ग, 2007

स्त्रोत : https://upload/wikimedia.org/wikipedia/commons/7/74/Gabillou_Sorcier.png

इकाई 1 प्राक्-इतिहास और स्रोत*

इकाई की रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 प्राक्-इतिहास क्या है?

1.4 प्राक्-इतिहास संबंधित ज्ञान की शाखाएँ

1.5 पुरातत्त्वविज्ञान का परिचय

1.6 पुरातात्विक शोध के स्रोत और पद्धतियाँ

1.7 पुरातत्त्वविज्ञान में काल-निर्धारण की पद्धतियाँ

1.8 मानवविज्ञान क्या है?

1.9 मानवविज्ञान की शाखाएँ

1.10 सारांश

1.11 शब्दावली

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.13 संदर्भ ग्रंथ

1.14 शैक्षणिक वीडियो

1.1 उद्देश्य

इस इकाई में हम **प्राक्-इतिहास** और उसके स्रोतों की विवेचना करेंगे। प्राक्-इतिहास लिखित रिकॉर्डों के उद्भव के पहले का काल है। इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपः

- प्राक्-इतिहास के अर्थ को परिभाषित कर सकेंगे,
- प्राक्-इतिहास, **आद्य-इतिहास** और इतिहास के बीच अंतर को समझ पाएँगे,
- प्राक्-इतिहास के स्रोतों की पहचान कर सकेंगे,
- प्राक्-इतिहास पर शोध की मुख्य धाराओं से परिचित हो सकेंगे,
- पुरातात्त्विक शोध के अर्थ और पद्धतियों की व्याख्या कर पाएँगे,
- मानवविज्ञान शोध के अर्थ और पद्धतियों की खोज को समझ सकेंगे,
- पुरातत्त्व और मानवविज्ञान के बीच अंतर कर सकेंगे, तथा
- प्रागैतिहासिक काल पर शोध संबंधी नयी खोजों को जान सकेंगे।

प्राक्-इतिहास और इसके स्रोतों का अध्ययन उस अतीत की प्रकृति को समझने के लिहाज से महत्वपूर्ण है जहाँ लेखन की जानकारी नहीं थी और कोई लिखित दस्तावेज नहीं थे। यह आपको ऐतिहासिक काल में संक्रमण को पहचानने और उसकी तुलना में सहयोग करेगा।

1.2 प्रस्तावना

ऐतिहासिक शोध का केन्द्रीय उद्देश्य अतीत के ज्ञान की पुनर्प्राप्ति है। इस इकाई में हम प्राक्-

* डॉ. प्रियंका खन्ना, स्कूल ऑफ ह्यूमनटीस एंड सोशल सांइन्सेज़, जी. डी. गोयनका विश्वविद्यालय, गुरूग्राम, हरियाणा

इतिहास का अध्ययन करेंगे – मानव विकास के ऐसे काल में जहाँ लिखित रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं थे। आज प्राक्-इतिहास मानव अनुभव के एक विस्तृत क्षेत्र की तरह पहचाना जाता है। विशेषकर चार्ल्स डार्विन की बुनयादी कृतियों – 1859 में *ऑन द ओरिजिन ऑफ़ स्पीशीज़ बाय मीन्स ऑफ़ नेचुरल सिलेक्शन* और 1871 में *डिसेंट ऑफ़ मैन* – के प्रकाशन के बाद से इसने गंभीर शैक्षिक स्वीकार्यता हासिल की है जिनमें मानव के जीवाश्मी रिकॉर्ड और सभ्यताओं के उद्‌भव के सारे विश्व में उपलब्ध साक्ष्यों का अपूर्व अभिलेखन हुआ था। तब से प्राक्-इतिहास के बारे में ज्ञान की पुनर्प्राप्ति के लिए सार्थक शोध और पद्धतियाँ विकसित की गयी हैं। यह इकाई प्राक्-इतिहास पर शोध की मुख्य विशेषताओं, स्रोतों और प्रागैतिहासिक काल पर शोधों की महत्वपूर्ण शाखाओं की विवेचना करेगी।

1.3 प्राक्-इतिहास क्या है?

प्राक्-इतिहास, जिसे प्रागैतिहासिक काल भी कहते हैं, उस पुरातन काल की ओर ले जाता है जहाँ लेखन नहीं था और लिखित दस्तावेजों से कोई परिचय भी नहीं था। प्राक्-इतिहास की शुरुआत के संकेत *होमो* जाति (आधुनिक मानव और उनके नजदीकी विलुप्त पूर्वजों से संबंधित – इस पाठ्यक्रम की **इकाई 2** में विस्तारित) के आरंभिक प्रतिनिधियों के उद्‌भव में है। फिलहाल इस साक्ष्य का काल अफ्रीका में 50-20 लाख साल बी पी, यूरोप और एशिया में करीब दस लाख साल पूर्व, ऑस्ट्रेलिया में लगभग 40,000 साल बी पी और अमेरिका में उससे भी कम है।

वर्तमान से लेकर प्राचीनतम काल (BP, Before Present)

- इस काल मापन का उद्‌भव 1940 के दशक के अंत में रेडियो कार्बन डेटिंग पद्धति की खोज के बाद हुआ (**भाग 1.7** देखें)।
- इस काल मापन पद्धति में 'वर्तमान', सन् 1950 के लगभग माना जाता है।

लिखित दस्तावेजों के उद्‌भव के पहले के मानव इतिहास के काल को दर्शाने के लिए फ्रेंच पुरातत्त्वविद पॉल तौर्नल ने 1833 में *पेरिओड एंटी-हिस्टोरिक* (*période anti-historique*) शब्दावली की व्युत्पुत्ति की जिससे 'प्राक्-इतिहास' शब्द की उत्पत्ति हुई (ग्रेयसन, 1983)। फ्रेंच शब्दावली सिमट कर 'प्राक्-इतिहास' हो गई जिसका पहला प्रयोग 1851 में डेनियल विल्सन ने अपनी प्रारंभिक किताब *द आर्कियोलॉजी एंड प्रीहिस्टोरिक एनल्स ऑफ़ स्कॉटलैंड*[1] में किया था। 'प्राक्-इतिहास' शब्द का प्रयोग शुरू में उस काल के लिए हुआ था जब मनुष्य विलुप्त हो चुके प्राणियों के समकालीन थे और जिनके अवशेष **भूगर्भशास्त्रियों** (वैज्ञानिक जो धरती को बनाने वाले ठोस और तरल पदार्थों का अध्ययन करते हैं) और **जीवाश्मवैज्ञानिकों** (जीवाश्मों का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिक) को पुरानी भूगर्भी तहों में प्राप्त हुए थे। प्राक्-इतिहास फ़िलहाल लिखित दस्तावेजीकरण के पहले होने वाले मानव के सांस्कृतिक विकास के उस पूरे काल को शामिल करता है जो कम से कम 26 लाख साल पीछे तक फैला है। लिखित रिकॉर्डों के अभाव में **शिल्पकृतियाँ** या भौतिक अवशेष ही प्राक्-इतिहास को समझने के प्राथमिक स्रोत हैं। भौतिक अवशेष अधिकांशतः पत्थर के औज़ारों, पशु-अवशेषों, नृ-जीवाश्मों, जैव-तथ्यों और सांस्कृतिक भू-दृश्यों के रूप में उपलब्ध हैं। इस इकाई के आगे के भागों में इनकी विस्तृत व्याख्या की गई है।

यहाँ यह समझना महत्वपूर्ण है कि प्राक्-इतिहास और सबसे पुराने ऐतिहासिक रिकॉर्डों के बीच अन्वेषकों ने एक संक्रमण काल की पहचान की है जिसे आद्य-इतिहास (proto-history) का नाम दिया गया है। आद्य-इतिहास शब्द का सृजन किसी संस्कृति के अभिलिखित इतिहास की शुरुआत के ठीक पहले उपस्थित काल को बताने के लिए किया गया था। आद्य-

[1] 'प्राक्-इतिहास' शब्द में विस्तृत कवरेज दिया सर जॉन लुब्बौक ने 1865 में प्रकाशित अपनी *प्रीहिस्टोरिक टाइम्सः ऐज इलस्ट्रेटेड बाय एनसिएंट रिमेंस,* एवं *द मैनर्स एंड कस्टम्स ऑफ़ मॉडर्न सैवेजेस* में (एडिन्बर्गः विलियम्स एंड नोर्गेट)।

इतिहास का इस्तेमाल मनुष्यों या इलाकों के उस काल का इतिहास बताने के लिए किया जाता है जब मनुष्य या उस इलाके के बाशिंदे अभी भी निरक्षर थे परन्तु जिनके बारे में जानकारी अधिक उन्नत और पहले से साक्षर पड़ोसियों के लिखित साक्ष्यों में मिलती है। उदाहरण के लिए, बी सी ई चौथी सदी. में ग्रीक और लैटिन इतिहासकारों के सेल्टिक जनजातियों के विषय में लेखन मिलते हैं, जबकि वह जनजाति अभी भी निरक्षर थी (*हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमैनिटी*, 1: 95)। 'आद्य-इतिहास' शब्द का इस्तेमाल कई बार ऐसी आबादियों के संबंध में भी किया जाता है जिनके लेखन को अभी तक पढ़ा नहीं जा सका है (जैसे प्राचीन एट्रस्कन भाषा, इटली के लोगों की भाषा, और हड़प्पावासियों की भाषा)।

1.4 प्राक्-इतिहास संबंधित ज्ञान की शाखाएँ

आधुनिक मानवों के उद्‌भव और क्रमिक विकास का अध्ययन आधुनिक ज्ञान की सभी शाखाओं का केन्द्रीय सरोकार रहा है। भौतिक और जैविक विज्ञानों, चिकित्सा विज्ञानों, भाषावैज्ञानिक अध्ययनों, ललित कलाओं और समाज विज्ञानों की विभिन्न शाखाओं ने विविध पद्धतियों के सहारे मानव अतीत का ज्ञान प्राप्त किया है। इस पाठ्यक्रम में इन सब क्षेत्रों की व्याख्याओं और इनके द्वारा प्रयुक्त स्रोतों की प्रकृति का अध्ययन करना संभव नहीं है। इसलिए हम यहाँ प्राथमिक रूप से समाज विज्ञान के दो क्षेत्रों – पुरातत्त्वशास्त्र और मानवविज्ञान तक खुद को सीमित रखेंगे। यह इकाई इन दो क्षेत्रों के स्रोतों और शोध विधियों की व्याख्या के सहारे मानव के क्रमिक विकास की प्रक्रिया और उनकी संस्कृतियों के बारे में आपको जानकारी देगी।

1.5 पुरातत्त्वविज्ञान का परिचय

पुरातत्त्वविज्ञान अनुसन्धान का वह क्षेत्र है जो भौतिक अवशेषों के अध्ययन के सहारे अतीत का ज्ञान उपलब्ध कराता है। प्राक्-इतिहास के अध्ययन की सबसे पुरानी जड़ें *एंटीक्वारिस* या पुरावशेष-संग्रहियों (वे लोग, आमतौर पर सम्भ्रांत, जो मुख्यतः पुरानी चीजें इकट्ठी करते थे) के क्रियाकलाप में देखी जा सकती हैं। पुरावशेष-संग्रहियों ने 14वीं और 15वीं सदी के आस-पास यूरोप में पुनर्जागरण (14-17वीं सदी सी ई) और मानवतावाद (14वीं सदी सी ई के उत्तरार्द्ध में विकसित) के काल के दौरान क्लासिकीय पुरातत्त्वविज्ञान के उद्‌भव का मार्ग प्रशस्त किया।

पुरातत्त्वविज्ञान अतीत में मानवों द्वारा निर्मित और उनके द्वारा पीछे छोड़ी गई चीजों के विश्लेषण द्वारा लिखित भाषाओं के अस्तित्व के पहले के समय का विषद् अध्ययन करता है। ऐसी सामग्रियों के विश्लेषण के द्वारा यह अतीत में लोगों की जिंदगियों की झलक दिखाता है। परन्तु पुरातत्त्वविज्ञान केवल प्राक्-इतिहास की जानकारी ही नहीं देता। वास्तव में यह अध्ययन का ऐसा क्षेत्र है जो मनुष्यों द्वारा आबाद सभी काल अवधियों और भौगोलिक इलाकों को शामिल करता है। शोध की पुरातात्त्विक प्रणालियों के विकास के साथ, पुरातत्त्वविज्ञान व्यक्तियों, परिवारों और समुदायों के जीवन का परिचय भी देता है जो अन्यथा लिखित दस्तावेजों के अभाव में अदृश्य ही रह जाते।

1.6 पुरातात्त्विक शोध के स्रोत और पद्धतियाँ

अतीत की शिल्पकृतियाँ या भौतिक अवशेष प्राक्-इतिहास पर पुरातात्त्विक शोध के प्राथमिक स्रोत हैं। किसी शिल्पकृति का मतलब है 'मनुष्यों द्वारा प्रयुक्त, संशोधित या निर्मित कोई वस्तु' (रेंफ्रू और बान, 2008: 578)। शिल्पकृतियाँ कई रूपों में सामने आती हैं, जैसे:

क) पत्थर के अनगढ़ या सुगढ़ अवशेष जो हज़ारों या लाखों साल पुराने हो सकते हैं

ख) प्रारंभिक किसानों द्वारा उपयोग में आने वाले मृद-भांडों के टुकड़े

ग) टूटी हड्डियाँ

घ) काष्ठ के अवशेष

ङ) बुने हुए वस्त्र

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

चित्र 1.1: पत्थर के प्रागैतिहासिक औज़ार
ले एइज़ेस दे त्याक, डॉर्डोग्न, फ्रांस में स्थित ले कोम्ब्रल्लेस गुफा से प्राप्त
कालांकन लगभग 12,000-10000 बी पी
साभार: सेम्हर, 2009
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/5/5f/Prehistoric_Tools_-_Les_Combarelles_-_Les_Eyzies_de_Tayac_-_MNP.jpg

चित्र 1.2: प्रागैतिहासिक गुफा चित्रकारी, लास्कॉक्स, डॉर्डोग्न, फ्रांस
कालांकन 17,000 बी पी
साभार: प्रो. साक्स, 2006
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/1/1e/Lascaux_painting.jpg

'फीचर्स' (features) कहलाने वाली असंवहनीय शिल्पकृतियाँ भी पुरातात्त्विक स्थलों के बारे में सूचना के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। फीचर्स मिट्टी के धब्बों (stains) जैसी चीजों को शामिल करता है जो बताते हैं कि कहाँ किस समय भंडार के गड्ढे, कचरे का ढेर, संरचनाएँ, या बाड़ा आदि स्थित थे। इसी तरह जैव-वस्तुओं (जिसे इकोफैक्ट्स भी कहा जाता है) या पुरातात्त्विक

स्थलों पर मिलने वाले नैसर्गिक अवशेष भी अतीत को समझने में पुराशास्त्रियों की मदद करते हैं। जैव-वस्तुओं में प्राथमिक रूप से जानवरों या पौधों के जैविक अवशेष जैसे पशु हड्डियाँ, पराग कण और लकड़ियाँ शामिल होती हैं जो तत्कालीन आहार और निर्वाह के पैटर्नों के निर्धारण में सहयोग करती हैं। किसी स्थल पर एक या अधिक प्रकार के पुरावशेषों की उपलब्धता उस इलाके की प्राकृतिक संरक्षण की स्थितियों, मौसम और जलवायु पर निर्भर करती है। किसी स्थल पर प्राप्त प्रत्येक वस्तु पुराशास्त्रियों के लिए प्रासंगिक होती है क्योंकि प्रत्येक वस्तु अतीत में मनुष्य के व्यवहार की कोई न कोई सूचना देती है। खंडित रिकॉर्डो से इस व्यवहार की पुनर्रचना वैज्ञानिक कुशलता, अंतर्दृष्टि, और सृजनात्मकता की मांग करती है। इस कारण पुराशास्त्री शोध चरण की एक श्रृंखला का पालन करते हैं जिन्हें नीचे दिए गए बॉक्स में रेखांकित किया गया है।

पुरातात्त्विक अन्वेषण के चरण

1) **शोधः** किसी स्थल की पहचान और अगर कोई पूर्व-शोध हैं तो उसे पढ़कर अन्वेषण के लिए स्थल के महत्त्व को समझना। इस स्तर पर पुराशास्त्री मूलतः स्थानिक पहलूओं में रुचि लेता है।

2) **भूमि की माप-जोखः** शिल्पकृतियों के समूहों/झुण्डों को खोजने के लिए व्यक्तिगत जांच-पड़ताल। इस पद्धति का उपयोग किसी स्थल की अवस्थिति निर्धारण में होता है। स्थल पर मानवीय उपस्थिति और क्रियाकलापों को बताने वाले चिह्नों की पहचान करना।

3) **खड्डे की जांचः** इस चरण में उत्खनन करने वाले स्थल का सांगोपांग सर्वेक्षण करते हैं ताकि अधिकतम शिल्पकृतियों की जगह का पता चले जिसके सहारे स्थल के केन्द्र का निर्धारण हो सके जहाँ पूर्ण **उत्खनन** शुरू किया जा सके।

4) **पूर्ण उत्खननः** पूरे स्थल को उत्खनित करना और साथ-साथ पुराशास्त्रियों द्वारा नक़्शे बनाना, माप लेना और शिल्पकृतियाँ इकट्ठी करना। इस प्रक्रिया में प्राप्त शिल्पकृतियों की सफाई, छँटाई, गिनती और नमूने का रेखांकन भी शामिल है।

   यहाँ इस बात पर ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि किसी पुरातात्विक भंडार से खोजी गयी शिल्पकृतियाँ हमेशा सिलसिलेवार स्तरों या तहों के संदर्भ में मिलती हैं। यह उस स्थल के संस्तरण का निर्माण करती है अर्थात् एक दूसरे के ऊपर स्तरों या तहों का अध्यारोपण। पुराशास्त्रियों द्वारा संस्तरों के अध्ययन को स्तर-विज्ञान कहा जाता है। अध्यारोपण का आधारभूत विचार यह है कि किसी अबाधित सिलसिले में नीचे की तहें ऊपर के मुकाबले पुरानी होती हैं। जब कोई पुराशास्त्री उत्खनित स्थल की विभिन्न तहों की पहचान करता है तो इसे 'अनुभाग-पाठन' कहते हैं। यह किसी स्थल को समझने का अनिवार्य चरण और यथोचित उत्खनन की पूर्वशर्त है। एक पुराशास्त्री को अनिवार्यतः निर्धारित करना चाहिए कि कौन सा स्तर अर्थपूर्ण और कालानुक्रम से उपयुक्त है। विशिष्ट स्तरों की पहचान कई कसौटियों पर निर्भर करती है जैसे स्तर के रंग, मृदा गठन (कंकड़, बजरी, बालू या गाद), बनावट, स्तरों में पाई जाने वाली सांस्कृतिक सामग्रियाँ, इत्यादि।

5) **पुनर्निर्माण और सूचीपत्रणः** पुराशास्त्री शिल्पकृतियों को लेकर प्रयोगशाला में जाते हैं जहाँ प्रत्येक अवशेष की सूची बनायीं जाती है।

6) **विश्लेषणः** इसमें एकत्रित शिल्पकृतियों का वैज्ञानिक अध्ययन होता है। यह अध्ययन इनमें से एक या अधिक सूचनाओं को स्पष्ट करता हैः शिल्पकृतियों का काल, शिल्पकृतियों की सामग्रियाँ, इसके उपयोग, कब-कब इनका उपयोग होता था, आदि।

7) **रिपोर्टिंगः** खुदाई का मुख्य काम अतीत के ज्ञान को हासिल करना और उसका प्रसार करना है इसलिए इस चरण में शिल्पकृति(यों) से एकत्रित ज्ञान प्रकाशन या/और संग्रहालय में प्रदर्शन द्वारा जन-साधारण को उपलब्ध कराया जाता है।

https://prezi.com/1plupeynwwpv/the-seven-stages-of-archaeology से अंशतः रूपांतरित
उत्खनन के बारे में ज्यादा विस्तार के लिए यह वृत्तचित्र देखें;

'द ऐक्सकेवेशन प्रोसेसः हाउ वी एक्सकेवेट' from https://www.youtube.com/watch?v=PcT1vGyJzygcom/watch?v=PcT1vGyJzyg

'अनअर्दिंग द पास्ट' from http://www.egyankosh.ac.in/youtubevideo.jsp?src= P4LVNTL8egk&title=Unearthing%20the%20Past

जैसा कि ऊपर वर्णित किया गया है पुरातात्विक शोध में पहला और सबसे महत्वपूर्ण कदम है किसी स्थल का चुनाव। पहले स्थल का चुनाव मौखिक परम्पराओं, मिथकीय संदर्भों, मृदा अपरदन या स्तूपों की आकृतियों के द्वारा सतह पर कुछ अवशेष प्राप्त होने से होता था। कई महत्वपूर्ण स्थल संयोग या दुर्घटनावश प्रकाश में आए हैं, मसलन किसी भवन निर्माण के कारण होने वाली खुदाई के दौरान, सड़क या रेल पटरियाँ बिछाने के दौरान या किसी जमीन को जोतते वक़्त। उदाहरण के लिए, हड़प्पा सभ्यता उस समय प्रकाश में आई जब पास में ही रेल पटरियां बिछा रहे कुछ ठेकेदारों ने पास के टीले से ईंटें लाने का निर्णय किया और इसे उजागर किया। और जैसा कि सब जानते हैं, इसके बाद के उत्खनन से भारतीय उपमहाद्वीप की सबसे पुरानी सभ्यता प्रकाश में आई।

आज पुराशास्त्री अतीत में किसी स्थल पर मानव बसाव के प्रमाण या चिह्न हासिल करने के लिए कई प्रकार की वैज्ञानिक पद्धतियों का इस्तेमाल करते हैं। इनमें से खोज की कुछ पुरातात्विक पद्धतियाँ हैं:

1) **हवाई फोटोग्राफी**: इस पद्धति में हवाईजहाज, गरम हवा वाले गुब्बारे या ड्रोन से किसी इलाके का हवाई चित्र लेना शामिल है। उच्च परिशुद्धता वाले कैमरे की सहायता से ये हवाई चित्र ज़मीन की सतह पर होने वाले बदलाओं को रिकॉर्ड करने के लिए खींचे जाते हैं। इन फोटोचित्रों की सहायता से मिट्टी के रंगों (मृदा चिह्नों) में अंतर या वनस्पति के विकास (फसल चिह्नों) को भी रिकॉर्ड किया जाता है, जो अधिकतर दफन हुए पुरावशेषों के परिणाम होते हैं। अपनी प्रकृति के कारण यह पद्धति जंगलों के सर्वेक्षण की तुलना में खुले भू-दृश्यों में ज्यादा कारगर है। पुरातात्विक शोधों में इस पद्धति का इस्तेमाल 1919 से होता आया है (हवाई फोटोचित्रों के उदाहरण के लिए देखें: ज्योर्ज गेर्स्टर. 2005. *द पास्ट फ्रॉम अबव: एरियल फोटोग्राफ्स ऑफ़ आर्कियोलोजिकल साइट्स.* ऐडिटिड. शार्लोट ट्रुम्प्लर, लॉस एंजलस: गेट्टी पब्लिकेशनस)[2]।

चित्र 1.3 : पेरू में स्थित "नाज़्का बन्दर" की हवाई पुरातात्विक फोटोग्राफी

साभार: मारिया रीख़, 1953

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/3/3b/Nazca_monkey.jpg

2) **अन्तर्जलीय अन्वेषण या समुद्री पुराशास्त्र**: इस पद्धति का इस्तेमाल समुद्र या मीठे पानी के नीचे पुरावशेषों और जलमग्न स्थलों की खोज में होता है। जहाजों के मलबों की पुनर्प्राप्ति में यह विशेषकर उपयोगी है। इस क्षेत्र में औपचारिक व्यवस्थित जांच, आधुनिक उपकरणों की उपलब्धता और विशेषकर काउस्त्यु और गैगनन द्वारा 1943 के आस-पास एक्वालंग/जलफेफड़ों (जल के भीतर श्वसन उपकरण जिसने स्कूबा डाइविंग को प्रोत्साहित किया) की खोज से महत्वपूर्ण हो उठी थी। अन्तर्जलीय

[2] हवाई फोटोग्राफी की पद्धतियों और औजारों के बारे में अधिक सूचना के लिए देखें: https://wwwIjstorIorg/stable/pdf/277280Ipdf?refreqid=search%3A18dOeebe497372be497372b8716ba5ea76ed57f9

टेलीविजन कैमरा और बाथिस्काफ (गहरे समुद्र में निमज्जन-योग्य फ्री-डाइविंग जलयान) अन्तर्जलीय सर्वेक्षण के दूसरे अन्य महत्वपूर्ण उपकरण हैं।[3]

चित्र 1.4 : एस्टोनिया, उत्तरी यूरोप में ब्रिटिश स्टील कार्गो ई-रुसस जलयान के ध्वंसावशेष

साभार: जुहा पिलक्मन, सबज़ोन ओ वाई, 2013

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/0/07/Kaubalaeva_%22E._Russ%22_vrakk.jpg

3) **चुम्बकीय सर्वेक्षण:** इस पद्धति में, जिसे चुम्बकीय-मापशास्त्र या मैग्नेटोमेट्री भी कहा जाता है, इसमें एक भू-भौतिक सर्वेक्षण तकनीक शामिल होती है जो अतीत की मानवीय गतिविधियों को पहचानने और उन्हें परिभाषित करने में सहयोग करती है।

चित्र 1.5: फ्लक्सगेट मैग्नोमीटर

साभार: जुरेक्स, 2008

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/5/5c/Magnetometr_transduktorowy_by_Zureks.jpg

इसे मृदा, उपमृदा और आधारशिला (bedrock) के चुम्बकीय गुणों में होने वाले दिक्-विषयक स्थानिक परिवर्तनों और विषमताओं के मानचित्रण के जरिये किया जाता है। इस तकनीक का इस्तेमाल घास-भूमियों, फसली खेतों और भूमि के अनावृत (open)

[3] अन्तर्जलीय और मीठे पानी के पुराशास्त्र की विस्तृत चर्चा के लिए देखें: https://wwwIjstorIorg/stable/pdf//20562008Ipdf?refreqid=search%3A7faa211567c6f4597417b3dfdaa2ce9b; https://wwwIjstorIorg/stable/pdf//20617994Ipdf?refreqid=search%3A9edb4c1038d9fea98e2889501eb44e48

क्षेत्रों के ऊपर किया जाता है। यह पद्धति विशेष रूप से धातु की वस्तुओं, भट्टियों, चूल्हों, भरे गड्ढों और कुओं, नीवों, मकबरों और दूसरी संरचनाओं की पहचान और परिभाषा में सहायक होती है। कैसियम चुम्बकीयमापक और फ्लक्सगेट ग्रैडियोमीटर फिलहाल पुराशास्त्रीय शोधों में इस्तेमाल होने वाले चुम्बकीय अन्वेषण के प्राथमिक उपकरण हैं। ये उपकरण चुम्बकीय तरंगों का पता लगाते हैं और इस प्रकार किसी शिल्पकृति के काल और उससे सम्बन्धित ज्ञान को उजागर करने में सहायक हैं।[4]

4) **मृदा का रासायनिक विश्लेषणः** यह प्रक्रिया मिट्टी में फॉस्फेट और पोटैसियम की मात्रा निर्धारित करने के काम आती है जिससे प्राचीन काल में मानवीय क्रियाकलापों की उपस्थिति मालूम करने में सहायता मिलती है।[5]

5) **उपमृदा में असंगति की पहचानः** इस पद्धति में पुराशास्त्री पोटेंसीयोमीटर नामक बिजली के एक उपकरण का इस्तेमाल करते हैं जो मिट्टी की प्रतिरोधात्मकता या प्रतिरोधी क्षमता को मापता है। प्रतिरोधात्मकता में विचलन और किसी हद तक असंगति/अनियमितता की पहचान का उपयोग पुरातात्त्विक संरचनाओं जैसे सांस्कृतिक सस्तर, पत्थर की दीवारें, खाइयाँ, कब्रों आदि की संभावित उपस्थिति को निगमित करने में होता है। मसलन, अगर प्रतिरोधी बिजली की धारा की शक्ति या चालकता मिट्टी में घट रही है तो इससे किसी नींव की उपस्थिति का अनुमान होता है। इसी तरह बढ़ी हुई चालकता भरे हुए गड्ढों की सूचना देती है।[6]

6) **ध्वनि या भूकम्पीय पद्धति से अन्वेषणः** इस पद्धति में ज़मीन पर आघात करने से उत्पन्न ध्वनि और कम्पन को रिकॉर्ड किया जाता है। इस पद्धति का इस्तेमाल उन उपकरणों के सहारे किया जाता है जो स्थल की गूँज या अस्थिर-आवृति वाले हर्टज़ियन तरंग के संचरण के उपरान्त परावर्तन, अपवर्तन या अनुनाद से प्राप्त कम्पन संवृति का हिसाब करते हैं। यह पद्धति ख़ास कर पानी में डूबे हुए स्थलों की पहचान और जांच में सहायक है और अन्तर्जलीय अन्वेषण से जुड़कर यह बहुत उपयोगी साबित होती है।

यद्यपि ये सब आधुनिक तकनीकें पुरातात्त्विक शोध के महत्वपूर्ण सहयोगी हैं परन्तु इनके परिणाम केवल सांकेतिक हैं। इसलिए पुराशास्त्रियों के लिए ज़रूरी हो जाता है कि किसी स्थल के उत्खनन का अंतिम निर्णय लेने से पहले उसका भौतिक परीक्षण करें।

जब उत्खनन के दौरान मिलने वाले अवशेषों और शिल्पकृतियों के विश्लेषण की बात आती है तो उसका एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि प्राप्त वस्तु की अवस्थिति का निर्धारण और संरक्षण हो, जिसमें प्राप्त अवशेष की परत (layer) को याद रखना भी शामिल है। अपने स्थल और स्थिति से हटे हुए अलग-थलग पड़ी शिल्पकृतियाँ पुराशास्त्रियों के ज्यादा काम की नहीं होतीं।[7] इस समस्या के निराकरण के लिए पुराशास्त्री स्थल के विभिन्न हिस्सों के विस्तृत नक़्शे और साइट प्लान बनाते हैं। विस्तृत रिकॉर्ड डायरियों और प्राप्ति की अवस्थिति के

---

[4] इस विधि के विस्तार के लिए देखें, ए. श्मिट. (2007) 'आर्कीआलजी, मैगनेटिक मैथड'. डी. गुब्बिन्स और ई. हरे़रो. (संपा.) *एनसाइक्लोपीडिया ऑफ जिओमौनिटिज़्म एंड पैलियोमैगनेटिज़्म. एसाइक्लोपीडिया ऑफ अर्थ साइंसेस सीरीज.* हाइडलबर्गः स्प्रिंगर, 23-31।
पीडीएफ इस वेबलिंक से डाउनलोड किया जा सकता हैः
https://wwwIresearchgateInet/publication/228666190 Archaeology magnetic methods

[5] इस प्रक्रिया के विस्तार के लिए देखें:
https://wwwIjstorIorg/stable/pdf/276788Ipdf?refreqid=search%3A3ee2e08b47a983f425 63c9254349a44a

[6] इस विधि के बारे में विस्तार के लिए देखें, एन्थोनी क्लार्क, (2003) *सीइंग बिनीथ द सॉयलः प्रोस्पेक्टिंग मेथड्स इन आर्कियोलॉजी.* (न्यूयॉर्कः रूटलेज).

[7] पुराशास्त्रियों और इतिहासकारों के लिए हज़ारों बहुमूल्य चीजें नष्ट हो गयीं क्योंकि मूल स्थल से शिल्पकृतियों को हटाकर चोरों और खनिकों ने उन्हें बेच दिया।

साइट प्लान पर निशानों के रूप में किया जाता है। बिना इन नक्शों, योजनाओं और शिल्पकृतियों तथा संरचनाओं की अवस्थिति के रख-रखाव के कोई भी उत्खनन कारगर नहीं होता। आकार का रिकॉर्ड, सामग्रियों की माप और प्रत्येक प्राप्त वस्तु का भौतिक परीक्षण उत्खनन के अनिवार्य तत्व हैं।

बोध प्रश्न-1

1) प्राक्-इतिहास की व्याख्या लगभग 50 शब्दों में करें।

....

....

....

....

....

2) प्राक्-इतिहास और आद्य-इतिहास के बीच क्या अंतर है?

....

....

....

....

....

3) शिल्पकृति क्या है?

....

....

....

....

....

4) पुरातात्विक शोध के चरण बताएं।

....

....

....

....

....

5) पुराशास्त्र के क्षेत्र में हाल-फिलहाल में क्या प्रगति हुई है?

....

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

....

....

....

....

1.7 पुरातत्वविज्ञान में काल-निर्धारण की पद्धतियाँ

किसी उत्खनित वस्तु या स्थल का काल-निर्धारण पुरातात्त्विक शोध का अत्यंत महत्वपूर्ण पहलू है। शोध प्रक्रिया के इस हिस्से को कालांकन कहा जाता है। लिखित रिकॉर्डों और कैलंडरों के अभाव में जब सही-सही कालांकन की तकनीकें उपलब्ध नहीं थीं, आरंभिक पुराशास्त्रियों के लिए बहुधा कालक्रमिक अनुक्रम का निर्धारण कठिन, लेकिन ज़रूरी कार्यभार था। इसलिए आरंभिक पुराशास्त्रियों का मुख्य ध्यान दिक्-काल के परिप्रेक्ष्य में पुरावशेषों को व्यवस्थित करना था। सालों साल पुराशास्त्रियों द्वारा किसी संस्कृति और शिल्पकृति के वास्तविक या सन्निकट काल निर्धारण के लिए विभिन्न विधियों का इस्तेमाल किया गया है। कुछ बहुप्रयुक्त विधियाँ इस प्रकार हैं:

वृक्षकालानुक्रमिकी (dendrochronology): यह पद्धति वृक्षों में प्रतिवर्ष बढ़ने वाले छल्लों की संख्या और जलवायु के कारण उनकी मोटाई में होने वाले परिवर्तनों के विश्लेषण पर आधारित है। परन्तु वृक्षों की सभी प्रजातियों पर जलवायु परिवर्तन का एक सा प्रभाव नहीं पड़ता जो कि कालांकन की इस पद्धति को सीमित करता है। साथ ही किसी दिए गए इलाके का डाटा किसी दूसरी लघु-जलवायु में स्वतः स्थान्तरित नहीं किया जा सकता। फिर भी वृक्षकालानुक्रमिकी का इस्तेमाल अब तेजी से किया जाने लगा है क्योंकि यह अस्सी लाख साल पुराने लकड़ी के नमूने के कालांकन को भी संभव बनाता है। इस पद्धति का महत्व इस कारण भी बढ़ा है क्योंकि इसके सहारे कालांकन की दूसरी पद्धतियों की परिशुद्धता जाँची जा सकती है, विशेषकर रेडियोकार्बन कालांकन की।

रेडियोकार्बन कालांकनः कार्बन-14 या 14-C के नाम से भी जानी जाने वाली यह पद्धति वैज्ञानिक कालांकन की सबसे प्रचलित पद्धति है। यह पद्धति पदार्थ में नए अणुओं के कॉस्मिक किरण उत्पादन पर आधारित है जिसे रेडियोसक्रिय क्षरण भी कहा जाता है। कार्बन-14 रेडियोसक्रिय क्षरण के पश्चात् नाइट्रोजन-14 में बदलने के पहले औसतन 8300 साल तक रहता है और इस समय के दौरान यह सभी जीवित वस्तुओं के साथ ही सागर-जल और हवा में भी प्रवेश कर जाता है। रासायनिक रूप से कार्बन डाइऑक्साइड जो कि हवा में कार्बन के दहन (जो 20% ऑक्सीजन है) के फलस्वरूप बनता है, समस्त जीवन का आधार है और संभवतः इसी के सहारे नया रेडियोकार्बन सभी जीवों में समान रूप से प्रवेश करता जाता है। किसी पौधे या जानवर के मरने के बाद ही रेडियोसक्रिय क्षरण के सहारे 14-C का उद्ग्रहण कम होने लगता है। अमेरिकी रसायनशास्त्री विलियार्ड लिब्बी ने सबसे पहले रेडियोकार्बन कालांकन की इस पद्धति का उपयोग किया और अनुमान लगाया कि किसी नमूने में 14-C के आधे भाग के अर्द्ध-काल क्षरण में 5568 साल लगते हैं। आधुनिक शोध बताते हैं कि ज्यादा सटीक आँकड़ा 5730 साल है। तथापि, लिब्बी ने पहचाना कि 14-C क्षरण दर या अर्द्ध-काल जानने के बाद किसी नमूने में बचे हुए रेडियोकार्बन की मात्रा की गणना के आधार पर मृत पौधे या जानवरों के ऊतक की उम्र जानी जा सकती है।

लिब्बी की महान् व्यवहारिक उपलब्धि गणना के परिशुद्ध साधनों का तरीका निकालना था। पहले तो 14-C के सुराग ही बहुत कम मात्रा में मिलते हैं और उस पर 5730 साल बाद वह भी आधा रह जाता है। 23,000 साल बाद शुरुआती न्यून सांद्रता का भी केवल सोलहवां

हिस्सा नमूने में बचा रहता है। लिब्बी ने खोजा कि 14-C का प्रत्येक अणु बीटा कणों के निस्सरण द्वारा क्षरित होता है और वह 'गीगर काउंटर' द्वारा इस उत्सर्ग को गिनने में सफल रहा। यह पारंपरिक पद्धति का आधार है और कई रेडियोकार्बन प्रयोगशालाओं में अभी भी प्रयुक्त होता है। पुरातात्त्विक स्थलों से प्राप्त होने वाले नमूनों में साधारणतः जैविक सामग्रियाँ जैसे चारकोल, लकड़ी, बीज, और वृक्षों के अवशेष, और मनुष्य या जानवरों की हड्डियाँ शामिल होती हैं। हालाँकि 14-C पद्धति लकड़ी या चारकोल जैसी चीजें जिसमे कार्बन अंश पाया जाता है उनके काल-निर्धारण के लिए सबसे प्रभावी है लेकिन यह पद्धति उसी स्थल या स्तर से प्राप्त अन्य वस्तुओं (जिसमें कार्बन अंश नहीं है) के काल-निर्धारण में भी उपयोगी है।

किसी नमूने में 14-C क्रियाओं की माप गणना में गलती, पृष्ठभूमि में कॉस्मिक विकिरण, खराब नमूना-चयन, आदि द्वारा प्रभावित हो सकता है। इन सीमाओं के बावजूद, C-14 50,000 से 80,000 साल पुराने जैविक पदार्थों के कालांकन का प्राथमिक साधन है। इस प्रकार प्राप्त काल सामान्यतः वर्तमान पूर्व (बी पी) में अभिव्यक्त किया जाता है (**भाग 1.3** देखें)।

पोटेशियम-आर्गन कालांकनः यह पद्धति, जिसे K-Ar कालांकन भी कहा जाता है, वह इस बात पर आधारित है कि पोटेशियम का एक रेडियोसक्रिय समस्थानिक (K-40) जो चट्टानों और ज्वालामुखी राख में बहुत कम मात्रा में उपस्थित होता है एक ज्ञात दर (किसी दी गयी मात्रा का आधा K-40 लगभग 1.3 बिलियन साल में Ar-40 में बदल जाता है) से आर्गन गैस (Ar-40) में क्षरित हो जाता है। चूँकि Ar-40 एक गैस है अतः जब चट्टान पिघलती है तो वह बाहर निकलती है (जैसे लावा में) लेकिन जैसे ही चट्टान ठंडी होती है वह इसके भीतर फंस जाती है। संवेदनशील उपकरणों की सहायता से जब K-40 और Ar-40 के अनुपात की माप की जाती है तो यह पता लगाना संभव हो जाता है कि किसी चट्टान या राख को ठंडा होने में कितना वक़्त लगा था। चूँकि K-40 का अर्द्ध-जीवन बहुत लम्बा होता है (1.3 बिलियन साल) इसलिए पोटेशियम-आर्गन कालांकन का उपयोग कई मिलियन साल पुरानी सामग्रियों के काल-निर्धारण में किया जा सकता है।

पुराचुम्बकत्वः पुराशास्त्र में इस पद्धति की शुरुआत 1960 के आरंभ से मध्य दशक में डॉ. रॉबर्ट डूबोइस ने किया था। जब विद्युत आवेशित कण गतिमान होते हैं तभी चुम्बकत्व पैदा होता है। यह विधि धरती के चुम्बकीय अवशेषों पर निर्भर है और कालान्तर से विभिन्न चुम्बकीय खनिजों में संरक्षित धरती के चुम्बकीय क्षेत्र के रिकॉर्ड का अध्ययन है।

इसे इस तरह समझा जा सकता है कि जब मृत्तिका गरम होती है तो उसमें स्थित सूक्ष्मातिसूक्ष्म लोहे के कण धरती के चुम्बकीय क्षेत्र के समानांतर एक अवशेषी चुम्बकत्व हासिल कर लेते हैं। ये कण भौगोलिक उत्तरी ध्रुव के आस-पास की उस स्थिति की ओर इशारा करते हैं जहाँ अपनी घूर्णन स्थिति में चुम्बकीय उत्तरी ध्रुव था। एक बार जब मृत्तिका ठंडी हो जाती है तो दोबारा गरम होने तक ये लोहे के कण उस चुम्बकत्व को बनाए रखते हैं। कालांकन की दूसरी विधियों (जैसे वृक्षकालानुक्रमकी या रेडियोकार्बन कालांकन) के इस्तेमाल द्वारा प्राप्त किसी पुरातात्त्विक वस्तु (जैसे चूल्हे) के सटीक काल-निर्धारण और मिट्टी में चुम्बकत्व की दिशा और घूर्णन के माप द्वारा चुम्बकीय उत्तरी ध्रुव की उस समय की स्थिति का पता लगाना संभव है जब वह मिट्टी आखिरी बार जली थी। यह प्रक्रिया आभासी भू-चुम्बकीय ध्रुव या वी जी पी (VGP; वर्चुअल जिओमैग्नेटिक पोल) कहलाती है। पुराशास्त्री कई प्राचीन VGP इकठ्ठा करते हैं और ध्रुवीय घूर्णन का एक संयुक्त वक्र बनाते हैं (जिसे VGP वक्र कहा जाता है)। इस वक्र का इस्तेमाल एक मास्टर रिकॉर्ड की तरह किया जाता है जिसके हिसाब से किसी अज्ञात काल के नमूने के VGP की तुलना द्वारा उसकी तिथि बतायी जाती है।

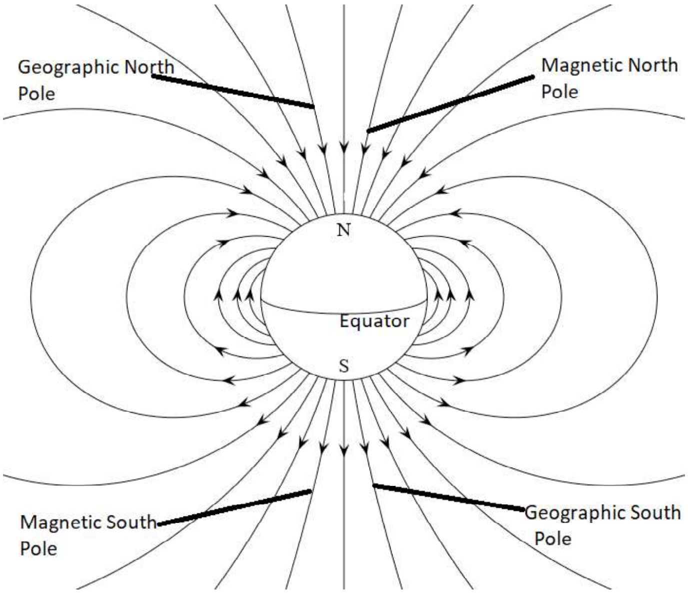

चित्र 1.6: आभासी भू-चुम्बकीय ध्रुव की प्रस्तुति
साभार: गीक3, 2010
स्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/7/70/VFPt_Dipole_field.svg से रूपान्तरित

ताप-उद्भासन (Thermoluminiscence; TL): इस विधि का उपयोग मुख्यतः पकी हुई मिट्टी से बनी चीजों के कालांकन में होता है। मिट्टी, जिसमे बर्तन बनाने वाली मिट्टी शामिल है, में मुख्यतः युरेनियम, थोरियम, पोटेशियम और रूबिडीयम आदि के कई प्रकार के नैसर्गिक समस्थानिक शामिल होते हैं जो 'क्वार्ट्ज़' जैसे कुछ खनिजों को प्रदीप्त करते हैं जिससे परमाणुओं का विस्थापन होता है और फिर नियमित अंतराल में वे 'ट्रैप्स' (या रवों के जाल में गड़बड़ी) में संचित हो जाते हैं। जब इन खनिजों को गरम किया जाता है तो 320 डिग्री सेल्सियस पर इनमें संचित ऊर्जा प्रकाश के रूप में निकलती है। जैसे ही ये खनिज ठंडे होते हैं रेडियोसक्रियता के कारण पुनः ऊर्जा संचित कर लेते हैं। उदाहरण के लिए, जब बर्तन का कोई टुकड़ा गरम किया जाता है तो इसमें शामिल 'क्वार्ट्ज़' की संचित ऊर्जा निकलती है लेकिन जैसे ही वह ठंडा होता है क्वार्ट्ज़ पुनः ऊर्जा संचित करना शुरू कर देता है। दूसरी ओर जब बर्तन के टुकड़े को गरम किया जाता है, अतिरिक्त ऊर्जा प्रकाश के उत्सर्जन के साथ मुक्त होती है। इस प्रकाश की तीव्रता संचित ऊर्जा की मात्रा पर निर्भर करती है। प्रकाश का माप प्रयोगशाला की प्रक्रिया में किया जाता है जहाँ ऊर्जा संचय की दर पता चलती है और जिसके आधार पर पुराशास्त्री बर्तन के गरम किये जाने के पश्चात् व्यतीत समय की गणना कर सकते हैं। इस विधि का इस्तेमाल आग में पके चकमक पत्थरों पर भी किया जा सकता है और इस प्रकार यह विधि मिट्टी के बर्तन बनाने से परिचित प्रागैतिहासिक संस्कृतियों के कालांकन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

इसके अलावा भी कालांकन की कई विधियाँ हैं, जैसे परमाणु घूर्णन अनुनाद (electron spin resonance), युरेनियम क्रम, फिशन-ट्रैक कालांकन आदि, लेकिन यहाँ हम उनके विस्तार में नहीं जाएंगे क्योंकि पुरातत्वविज्ञान की दृष्टि से या तो इनकी उपयोगिता सीमित है या फिर वे अभी प्रयोगात्मक स्तर पर ही हैं।

बोध प्रश्न-2

1) पुरातत्वविज्ञान में प्रयुक्त सबसे विश्वसनीय कालांकन की पद्धति का नाम बताएं और उसकी व्याख्या करें।

....

....

....

....

....

2) निम्नलिखित में से वस्तु के कालांकन की किस विधि का प्रयोग पृथ्वी की सतह के भू-चुम्बकीय क्षेत्र की अवस्थिति पर निर्भर है?

क) ताप-उद्भासन

ख) पुराचुम्बकत्व

ग) C-14

घ) पोटेशियम-आर्गन कालांकन

3) K-Ar (पोटेशियम-आर्गन) कालांकन क्या है?

....

....

....

....

....

1.8 मानवविज्ञान क्या है?

मानवविज्ञान ज्ञान की वह शाखा है जिसमें मनुष्यों और उनकी संस्कृतियों के जीव-वैज्ञानिक क्रम-विकास की खोज की जाती है। मानवविज्ञानी विभिन्न प्रकार के होमोनिड्स, अर्थात् ऐसा समूह जिसमें आधुनिक और विलुप्त मनुष्य और महान् वानर जैसे गुरिल्ला, चिम्पैंज़ी, और ओरंगुटान और उनके सभी निकटतम पूर्वज शामिल हैं, भौतिक विशेषताओं और रूपों में लाखों सालों के दौरान हुए परिवर्तनों के विश्लेषण में सहायता करते हैं। आरंभिक मनुष्यों के सांस्कृतिक पैटर्न, खान-पान, व्यावहारिक पैटर्न्स और संचार की विधियाँ ऐसी दूसरी चीजें हैं जहाँ मानवविज्ञान प्राक्-इतिहास की समझ में हमारी सहायता करता है।[8]

भौतिक अवशेषों के सहारे प्राचीन और नवीन मानव अतीत का अध्ययन करने वाला पुरातत्वशास्त्र दरअसल मानवविज्ञान, जो सभी मानवीय संस्कृतियों का अध्ययन है, का एक उपक्षेत्र है। इसलिए जब एक पुरातत्वशास्त्री किसी शवाधान स्थल का उत्खनन करता है तब उसे किसी मानवविज्ञानी के साथ काम करने की सलाह दी जाती है जो मृतकों की उम्र, लिंग और कद जैसी जनानंकीय प्रकृति की सूचनाएँ दे सकते हैं। पुरातत्वशास्त्र की तरह मानवविज्ञान में भी शोध के कई चरण होते हैं:

1) मानवविज्ञान शोध का पहला चरण यह निर्धारित करना है कि खोजी गयी शिल्पकृति अस्थि है या नहीं।

2) इसके बाद कालांकन की बारी आती है। मानवविज्ञानी अक्सर निक्षेप (deposition) के संदर्भ से किसी कंकाल का संभावित काल निर्धारित करते हैं।

[8] हमें याद रखना चाहिए कि प्राक्-इतिहास के अलावा भौतिक मानवविज्ञान हाल के समय के साथ सरोकार रखता है।

3) शरीर की अवस्थिति, स्थिति, और परिस्थिति के विश्लेषण के सहारे दफनाने के पहले होने वाली संभावित घटनाओं का सुराग मिलता है।

4) अगले चरण में मानवविज्ञानी प्राप्त अस्थि के सहारे उम्र, लिंग, कद और पूर्वज-संबंधी एक जैविक प्रोफाइल बनाने की चेष्टा करते हैं। अस्थि के आकार, प्रकार और संरचना की जांच कर मानवविज्ञानी निश्चित करते हैं कि यह मनुष्य की हड्डी है या जानवर की।[9] कभी-कभी यह मृत्यु का कारण भी स्पष्ट करने में मदद करता है।

5) आगे की व्याख्याएं, जैसे कोई हड्डी क्या संकेत देती है, इसका महत्व और सम्बन्धित विशेषताएँ रिपोर्ट लेखन में विस्तार पाती हैं। यहाँ यह भी जोड़ा जा सकता है कि दफनाई गईं अस्थियों से प्राप्त सूचनाएं असमाधिस्थ (uncremated) अस्थियों के अध्ययन से प्राप्त सूचनाओं के समान हो सकती हैं।

1.9 मानव विज्ञान की शाखाएँ

मानवविज्ञान के अंतर्गत चार मुख्य उप-विभाग शामिल हैं – जैविक मानवविज्ञान, प्रागैतिहासिक मानवविज्ञान, भाषाई मानवविज्ञान और नृजाति विज्ञान जिसे सांस्कृतिक मानवविज्ञान भी कहा जाता है।

i) **जैविक (या भौतिक) मानवविज्ञान** मनुष्यों या लगभग-मनुष्यों के अ-सांस्कृतिक पहलूओं का अध्ययन है। अ-सांस्कृतिक से मतलब उन सब जैविक चरित्रों से है जो, सीखी गयी योग्यताओं के विपरीत, अनुवांशिक विरासत में प्राप्त होते हैं। लगभग-मनुष्य के समान शब्द का प्रयोग वानरों, बंदरों, और आधुनिक मनुष्यों के दूसरे प्राइमेट्स और जीवाश्मी पूर्वजों को दर्शाने के लिए होता है। जैविक मानववैज्ञानिक मानव क्रम-विकास, अनुवांशिक विरासत और विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों में मानव भिन्नता और अनुकूलनों की प्रक्रिया की जांच करते हैं।

जैविक मानवविज्ञान के उप-विभाग

मानव जीवशास्त्र

मानवीय विविधता, आनुवांशिक विरासत पैटर्न्स, पर्यावरणीय दबाओं के कारण अ-सांस्कृतिक अनुकूलन और *होमो सेपियंस*, मनुष्य प्रजाति, की जैविक प्रकृति से सम्बन्धित।

नर-वानरशास्त्र (प्रायमेटोलॉजी)

प्राथमिक रूप से प्राइमेट्स – हमारे सबसे करीबी जीवित संबंधियों – की क्षमताओं और व्यवहारों को जानना ताकि हमारे आरंभिक मानव पूर्वजों के जीवन को समझा जाये।

पुरामानवविज्ञान (पैलियोएन्थ्रोपोलॉजी)

आरंभिक मनुष्यों और उनके प्राइमेट पूर्वजों के जीवाश्मी रिकॉर्डों का अध्ययन ताकि मानववंशीय चरणों – आधुनिक मनुष्यों तक उद्‌भव की प्रक्रिया, जिसे मानवीकरण/होमीनाइजेशन भी कहते हैं – का पता चले।

ii) **सांस्कृतिक (या सामाजिक-सांस्कृतिक) मानवविज्ञान** पूरी दुनिया में मानव समाजों

[9] सभी स्तनधारी एक सामान्यीकृत कंकाल टेम्पलेट साझा करते हैं, इस अर्थ में कि उनके पास लगभग एक ही स्थान पर एक ही हड्डियां हैं: एक खोपड़ी, रीढ़ (जो पूंछ में समाप्त होती है), पसलियां (जो आंतरिक अंगों को आधार प्रदान करती हैं), और पैर की हड्डियों के चार सेट। हालांकि हड्डियों का आकार और जिस तरह से वे एक-दूसरे से संबंधित होते हैं, विभिन्न जानवरों के बीच भिन्न होते हैं। इस प्रकार, एक हड्डी के आकार, आकृति और संरचना की जांच करके, एक मानवविज्ञानी यह निर्धारित कर सकता है कि यह मानव का है या नहीं।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

के सांस्कृतिक पहलूओं की जांच करता है। इन पहलूओं में सामाजिक और राजनीतिक संगठन, विवाह पैटर्न्स और रक्त-संबंधी व्यवस्था, निर्वाह और आर्थिक पैटर्न्स, और विभिन्न समाजों की विश्वास व्यवस्था शामिल है। यद्यपि अधिकतर मानवविज्ञान प्राचीन के बदले समकालीन समाजों का अध्ययन करते हैं फिर भी ऐसा करते हुए ये मानववैज्ञानिक अतीत की खो गयी विविधताओं और सांस्कृतिक व्यवहारों की पुनर्पहचान द्वारा प्रागैतिहासिक काल की समझदारी में योगदान करते हैं।

iii) **भाषाई मानवविज्ञान** मानव संचार प्रक्रिया पर ध्यान केन्द्रित करता है। भाषाई मानवविज्ञान मूलतः वाक् संबंधी क्रियाविज्ञान और बोलने तथा लिखने पर सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभावों का अध्ययन करते हैं। वे अशाब्दिक संचार और भाषाओं के विकास की जांच भी करते हैं। इस संदर्भ में कुछ मानववैज्ञानिक प्राक्-इतिहास को प्राक्-भाषा अर्थात् शब्दों और आद्य-भाषा के प्राचीन रूप अर्थात् विलुप्त हो गयी भाषाओं के प्राचीन, लेकिन वर्तमान कई भाषाओं के, पूर्ववर्ती रूपों से संबंध की लाक्षणिक व्याख्या करते हैं। इस ऊपर वर्णित क्षेत्र के रूप में ही भाषाई मानवविज्ञान प्राक्-इतिहास – ऐसा काल जिसका कोई लिखित दस्तावेजीकरण नहीं है – को समझने में योगदान देता है।

बोध प्रश्न-3

1) पुरातत्वविज्ञान और मानवविज्ञान में क्या अंतर है?

....

....

....

....

....

2) पुरातत्वविज्ञान की विभिन्न शाखाएँ प्राक्-इतिहास को समझने में कैसे योगदान देती हैं?

....

....

....

....

....

1.10 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के दौरान आप समझ गए होंगे कि अतीत का ज्ञान केवल लिखित दस्तावेजों से प्राप्त सूचनाओं तक ही सीमित नहीं है। वास्तव में विभिन्न प्रकार के भौतिक अवशेष प्राक्-इतिहास को समझने के महत्वपूर्ण स्रोत आधार का निर्माण करते हैं और शोध की विविध पद्धतियों के सहारे पुरातत्व वैज्ञानिक और मानववैज्ञानिक लगातार प्रागैतिहासिक काल के हमारे ज्ञान के विस्तार में लगे हैं।

इसके अतिरिक्त यहाँ यह भी नोट करना ज़रूरी है कि मानवविज्ञान और पुरातत्त्वविज्ञान, जिनका अध्ययन हमने इस इकाई में किया है, के अलावा पुरावनस्पतिशास्त्र (वनस्पति अवशेषों का अध्ययन), पुराप्राणीशास्त्र (पशु अवशेषों का अध्ययन), चिकित्सा विज्ञान, आणविक रसायनविज्ञान और आनुवांशिकी भी प्राक्-इतिहास और अलग-अलग चरणों में

होमिनिड्स के जैविक क्रम-विकास को समझने में योगदान देते हैं। इन विविध क्षेत्रों के साथ कोशिकाओं में उपस्थित और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक आनुवांशिक चरित्रों के संवाहक डी एन ए (डीऑक्सीरायबो न्यूक्लिक एसिड) का अध्ययन अतीत के शोध में बड़ी उपलब्धि है। इस शोध के उद्भव के बाद से वैज्ञानिक दुनिया के अलग-अलग हिस्सों से प्राप्त मनुष्य जाति में संरक्षित कोशिकाओं और मेरु-रज्जु में मिले DNA के अध्ययन कर रहे हैं। उन्होंने एक निश्चित पैटर्न का पता लगाया है जिसके द्वारा लम्बे समयांतराल में डी एन ए बदलता है। इस विधि में दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में रहने वाले आधुनिक मनुष्यों, जिसमें वैसे समूह भी शामिल हैं, जो आज अलग-थलग रहते हैं या आखेटक-संग्राहक के रूप में विरल जीवन-यापन करते हैं, उनके डी एन ए की तुलना विभिन्न संस्कृतियों से प्राप्त संरक्षित डी एन ए से की जाती है। इसके साथ ही रक्त समूह, खोपड़ी के आकार-प्रकार, कपाल क्षमता, अस्थि रचना, मांसलता और अंग रूपों के अध्ययन ने आधुनिक मनुष्यों *(होमो सेपियंस सेपियंस)* के जैविक क्रम-विकास के बारे में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान की है। जैविक क्रम-विकास की विस्तृत चर्चा इस पाठ्यक्रम की **इकाई 2** में की गयी है।

1.11 शब्दावली

शिल्पकृति	:	अतीत में मानवों द्वारा प्रयुक्त, विकृत या निर्मित भौतिक वस्तुएं
उत्खनन	:	किसी पुरातात्विक स्थल की खुदाई या खनन
भूवैज्ञानिक	:	पृथ्वी पर स्थित ठोस और तरल पदार्थों और उसे बनाने वाली प्रक्रिया का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिक
होमीनिन	:	सभी आधुनिक और विलुप्त मनुष्यों और उनके निकटतम पूर्वजों, विशेषकर चिम्पैंज़ी की अपेक्षा आधुनिक मनुष्यों के ज्यादा करीबी प्रजातियों से बनने वाले समूह का कोई सदस्य
पुराचुम्बकत्व	:	पुराने समयांतराल में बनी चट्टानों के चुम्बकत्व का अध्ययन। अधिक विस्तार से कहें तो भूवैज्ञानिक कालों के दौरान धरती के चुम्बकीय क्षेत्र में होने वाले बदलावों का अध्ययन
जीवाश्मशास्त्री	:	वैज्ञानिक जो जीवन की शुरुआत और विकास के इतिहास तक पहुँचने के लिए जीवाश्मों का अध्ययन करते हैं
प्राक्-इतिहास	:	ऐसा काल जिसका कोई लिखित दस्तावेज हमारे पास नहीं है और जिसकी जानकारी का स्रोत पुरावशेष हैं
आद्य-इतिहास	:	प्राक्-इतिहास और इतिहास के बीच का काल जिसके दौरान कोई संस्कृति या सभ्यता लेखन का विकास नहीं कर पाई थी परन्तु जिसकी उपस्थिति के बारे में दूसरी संस्कृतियों के लेखन में उल्लेख मिलता है

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 1.3 देखें

2) काल जिसमे कोई लिखित रिकॉर्ड नहीं है बनाम संक्रमण का काल। भाग 1.3 देखें

3) अतीत के भौतिक अवशेष। भाग 1.6 देखें

4) भाग 1.6 में बाक्स में दी गयी जानकारी देखें

5) हवाई फोटोग्राफी अन्तर्जलीय अन्वेषण, इत्यादि। भाग 1.6 देखें

बोध प्रश्न-2

1) 14-C; भाग 1.7 देखें

2) विकल्प ख, भाग 1.7 देखें

3) पोटेशियम-आर्गन कालांकन। भाग 1.7 देखें

बोध प्रश्न-3

1) भौतिक अवशेषों के द्वारा मानव अतीत का अध्ययन बनाम अस्थि अवशेष के सहारे मानव संस्कृति का अध्ययन। भाग 1.8 देखें

2) मानव विकास, सांस्कृतिक व्यवहार, पुरा/आद्य भाषाओं को समझना, इत्यादि। भाग 1.9 देखें

1.13 संदर्भ ग्रंथ

अग्रवाल, डी.पी. और ए. घोष (संपा.). 1973. *रेडियोकार्बन और भारतीय पुरातत्व.* बॉम्बेः टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च.

बर्नार्ड, एलन. 2016. *द एवोल्यूशन ऑफ़ लैंग्वेजः ऐन एंथ्रोपोलोजिकल अप्रोच लैंग्वेज इन प्रीहिस्ट्री.* कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

क्लार्क, अन्थोनी. 2003. *सीइंग बिनीथ द सोश्लः प्रॉस्पेक्टिंग मेथडस इन आर्कियॉलाजी.* न्यू एडिशन, न्यूयार्कः रुटलेज.

क्लार्क, जे.डी.जी. 1965. 'रेडियोकार्बन डेटिंग एंड एग्रीकल्चर इकॉनमी'. *एंटीक्विटी,* 39:45-48.

कुलकर्णी, ए. सी. 2015. 'ऑफशोर टेक्नालॉजी एंड मैरीन आर्किओलॉजी', ए.एस गौड़ और सुंदरेश (संपा.) में. *रीसेंट रिसर्चेज़ ऑन इंडस सिविलाइज़ेशन एंड मैरीटाइम आर्किओलॉजी इन इंडिया,* दिल्लीः आगम कला प्रकाशन.

लाएट, एस.जे. डे (संपा.), ए.एच. डेनी, जे.एल लोरेन्जो गीइज़्टर और आर.बी. नूनू (सह-संपा.) 1996. *हिस्ट्री ऑफ ह्यूमेंनिटी,* भाग 1 *: प्रीहिस्ट्री एंड द बिगनिंग ऑफ सिविलाइज़ेशन.* यूनेस्को. लंदनः रूटलेज.

लुब्बॉक, जॉन. 1865. *प्रीहिस्टोरिक टाइम्सः एज इलस्ट्रेटेड बाय एनसिएंट रिमेंस, एंड द मैनर्स एंड कस्टम्स ऑफ़ मॉडर्न सेवेजेस,* एडिनबर्गः विलियम्स और नॉर्गेट.

रेंफ्यु, सी. एवं पी.बान. 2008. *आर्किओलॉजी: थ्योरीस, मेथड्स एंड प्रैक्टिसेज,* लंदन: थाम्स और हडसन.

शिमट, ऐ. 2007. 'आर्किओलॉजी, मेग्निटिक मेथॅडस', डी., गबिन्स एवं ई. हेरेंरो-बर्वेरा (सपा.)'. *एन्साइक्लोपीडिया ऑफ ज़िओमैगनटिज़्म एंड पैलियोमैगेनटिज़्म एन्साइक्लोपीडिया ऑफ अर्थ सांइसेज़ सीरीज़.* हाइडेलबर्ग, न्यूयार्क: स्प्रिंगर : 23-31.

पी डी एफ:

https://www.jstor.org/stable/pdf/20079007.pdf?refreqid=search%3Af78cba054579b0acebd3139146894353

https://www.jstor.org/stable/pdf/25801250.pdf?refreqid=search%3Af78cba054579b0acebd3139146894353

https://www.jstor.org/stable/pdf/3557110.pdf?refreqid=search%3Ab59fb18f38ce92f6c891da4a5d3d0a25

https://www.jstor.org/stable/pdf/40366435.pdf?refreqid=search%3A3358b0b6bd28ac026724dc6965d34953

https://www.jstor.org/stable/pdf/24950591.pdf?refreqid=search%3A1d0fc6dd47257518fe616ac6f2f904f7

https://www.jstor.org/stable/pdf/3024893.pdf?refreqid=excelsior%3A44638ad7fb36c31784cc9f708821de2b

https://www.jstor.org/stable/pdf/73915.pdf?refreqid=excelsior%3Af23c3833695fc94278db8240d22ba613

1.14 शैक्षणिक वीडियो

डेटिंग-द रेडियोकार्बन वे
https://www.youtube.com/watch?v=-xKvq6VLe4s

द एक्सकेवेशन प्रासेस: हाउ वी एक्सकेवेट
https://www.youtube.com/watch?v=PcT1vGyJzyg

अंडरवाटर आर्कीओलाजी
https://www.youtube.com/watch?v=qgCvnogeN2s

स्पेस आर्कीओलाजी: ए न्यू फ्रंटियर ऑफ एक्सप्लोरेशन
https://www.youtube.com/watch?v=gxD32LRC1QE

इकाई 2 मानव का जैविक विकास*

इकाई की रूपरेखा

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 क्रमिक विकास के सिद्धांत

2.3.1 डार्विन पूर्व क्रमिक विकास के सिद्धांत

2.3.2 डार्विन का सिद्धांत

2.3.3 क्रमिक विकास का कृत्रिम (सिंथेटिक) सिद्धांत

2.4 होमीनाईज़ेशन

2.4.1 द्विपादिता

2.4.2 एनसेफ्लाईज़ेशन

2.4.3 लैंगिक द्विरूपता

2.4.4 अन्य कारक

2.5 मानव का जैविक विकास

2.5.1 पूर्व मानव

2.5.2 मानव प्रजाति का जैविक विकास

2.6 सारांश

2.7 शब्दावली

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.9 संदर्भ ग्रंथ

2.10 शैक्षणिक वीडियो

2.1 उद्देश्य

यह इकाई मानव के क्रमिक विकास का वर्णन करती है। इस इकाई के पठन के बाद, आपः

- मानव के क्रमिक विकास का वर्णन कर सकेंगे,
- विकास से संबंधित विभिन्न प्रकार के सिद्धांतों की तुलना और मूल्यांकन कर पाएँगे,
- क्रमिक विकास को समझने में डार्विन के योगदान का विवरण दे सकेंगे,
- मानव के जैविक विकास में जीवाश्म कैसे सबसे बड़ा साक्ष्य है इसका आंकलन कर सकेंगे,
- वानर और मानव के मध्य अंतर को पहचान सकेंगे, तथा
- वानर का मनुष्य (*होमो सेपियंस*) में रूपांतरण का विवरण दे सकेंगे।

* प्रो. रश्मि सिन्हा, मानवविज्ञान संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

2.2 प्रस्तावना

हॉल और हालग्रिमसन (2008) ने क्रमिक विकास को 'जन समुदाय के क्रमबद्ध पीढ़ियों के बीच पैतृक विशिष्ट लक्षणों में परिवर्तन के रूप में परिभाषित किया है'। हरबर्ट स्पेंसर, एक अंग्रज़ी दार्शनिक, ने 1862 में सबसे पहले 'क्रमिक विकास' शब्द का प्रयोग जीवन के ऐतिहासिक विकास को संबोधित करने के लिए किया। विकास जीवाश्म के अंदर एक क्रमिक परिवर्तन है। यह परिवर्तन जब एक समयावधि के दौरान होता है तो वह 'सूक्ष्म विकास' और जब इसका संबंध एक से दूसरे में परिवर्तनों के रूपांतरण से होता है तो उसे 'वृहत-विकास' कहा गया। मानव विकास के अध्ययन में चार्ल्स डार्विन, जो एक महत्वपूर्ण नाम है, ने क्रमिक विकास को 'वंश में रूपांतरण' कहा जिससे तात्पर्य है कि अपने उत्तराधिकार के कारण निकटतम सम्बंधित प्रजाति एक दूसरे के सदृश हैं; और अपने पूर्वजों के पृथक्करण के दौरान पैतृक भिन्नताओं के कारण एक दूसरे से भिन्न हैं।

मानव के क्रमिक विकास की चर्चा प्रारंभ करने से पूर्व, इस क्रमिक विकास की प्रक्रिया के बारे में दिए गए विभिन्न सिद्धांतो को समझ लेते हैं।

2.3 क्रमिक विकास के सिद्धांत

विकासमूलक विचारधारा का विस्तार अरस्तु के शास्त्रीय सिद्धांत से लेकर क्रमिक विकास के आधुनिक कृत्रिम सिद्धांत तक है। ये सिद्धांत जीवन के क्रमिक विकास और उसकी विविधता पर आधारभूत ज्ञान प्रदान करते हैं। ये क्रमिक विकास के आधुनिक सिद्धांत के अस्तित्व में आने तक के क्रमबद्ध चरण भी निर्धारित करते हैं।

2.3.1 डार्विन पूर्व क्रमिक विकास के सिद्धांत

चार्ल्स डार्विन वैज्ञानिक के तौर पर जाने जाते हैं जिन्होंने विकासमूलक सिद्धांत को बदल दिया और एक ऐसे ठोस आधार की स्थापना की जिस पर क्रमिक विकास का अध्ययन किया जा सके। हालांकि, डार्विन से पूर्व भी अनेक सिद्धांत प्रस्तुत किए गए जिन्होंने वास्तव में विकासमूलक विचारधारा की वृद्धि के मार्ग को प्रशस्त किया। यूनानी विचारकों के प्रारंभ से लेकर लायल के सिद्धांत तक, ये डार्विन पूर्व सिद्धांत बताते हैं कि डार्विन से पहले शोधार्थियों द्वारा क्रमिक विकास को किस तरह समझा गया।

यूनानी सिद्धांत

यूनानी दार्शनिकों, जैसे कि अरस्तु (384-322 बी सी ई), हेरोडोटस (484-425 बी सी ई) और एम्पिडोक्लेस (504-433 बी सी ई) विकास की विचारधारा के पथ प्रदर्शक रहे। उनका विश्वास था कि जीवन स्वरूपों की निरंतरता ही उसे नूतन स्वरूपों में बदलती है। अरस्तु का मानना था कि संघटित शरीर रचनाओं की एक विशिष्ट आंतरिक सहज प्रवृति होती है जो उन्हें रूपांतरण के दौरान बेहतर प्रयास करने में सक्षम बनाती है। उन्होंने यह क्षमता पौधों, जानवरों और मनुष्यों सभी में पाई। मनुष्यों में अंतर्दृष्टि पर सर्वप्रथम प्रकाश डालने वाले के रूप में अरस्तु को मानवविज्ञान अर्थात मानव जीवन के अध्ययन की अवधारणा के अविष्कार का श्रेय भी जाता है (अधिक जानकारी के लिए इस पाठ्यक्रम की **इकाई 1**, **भाग 1.8** देखें) और इसीलिए वे 'मानवविज्ञान के पितामह' के तौर पर जाने जाते हैं।

हेरोडोटस और एम्पिडोक्लेस ने भी जीवित प्राणियों और उनके जैविक क्रमिक विकास से सम्बंधित विशेष विचारधारा को विकसित किया। इन दर्शिनिकों के विचार रूपांतरण की अवधारणा की ओर संकेत करते हैं; वनस्पति का जानवरों से पहले विकसित होना, और अंततः मानव का क्रमिक विकास उच्च संघटित शरीर रचना के क्रम को दर्शाता है। **सहज वृत्ति**

का सिद्धांत अथवा जीवोत्पत्ति के नाम से पहचाने जाने वाले इस सिद्धांत का मत है कि जीवन की उत्पत्ति निर्जीव और अजैविक तत्वों से होती है, जैसे कि खाद, ओस, सड़ा हुआ चिपचिपा कीचड़, सूखी लकड़ी, और पसीना इत्यादि। अरस्तु, थेल्स (लगभग 624-546 बी सी ई), प्लेटो (लगभग 423-347 बी सी ई) और वॉन हेलमोंट (1580-1644 बी सी ई), आदि वैज्ञानिक भी 17वीं शताब्दी तक जीवोत्पत्ति की विचारधारा के समर्थक थे। 17वीं शताब्दी के मध्य में यह सिद्धांत फ़्रांसिस्को रेडी, स्पैलानज़ानी और लुई पास्चर के द्वारा अप्रमाणित करार दिया गया।

मध्यकालीन युग के सिद्धांत

मध्यकालीन युग, जो यूरोपीय जगत में 'ईसाई युग' के नाम से भी प्रसिद्ध है, ने यूनानियों के क्रमिक विकास के सिद्धांत का खंडन किया। मध्यकालीन युग में **विशिष्ट सृष्टि के ईसाई सिद्धांत** का वर्चस्व था। इस सिद्धांत के अनुसार धरती पर समस्त क्रियाशील जीवों की रचना दैवीय शक्ति द्वारा छः दिन में की गई थी। स्पेनिश पादरी, **फादर सुआरेज़** (1548-1671) इस सिद्धांत के प्रबल समर्थक थे। चूंकि समस्त क्रियाशील जीवों की रचना दैवीय शक्ति द्वारा की गई थी, वे उत्पत्ति के दिन से लेकर अब तक अपरिवर्तनीय और स्थायी हैं। इस सिद्धांत का अनुकरण 19वीं शताब्दी के मध्य तक हुआ।

वर्तमान स्थिति की शाश्वतता सिद्धांत सृष्टि की अपरिवर्तित प्रकृति के तर्क में विश्वास रखता है। इस सिद्धांत का मानना है कि जीव अपने विशिष्ट अस्तित्व के शुरू से अंत तक अपरिवर्तनीय रहता है और अनन्तकाल तक उसी तरह अपरिवर्तनीय अवस्था में रहेगा।

जैविक विकास के सिद्धांत

मध्य 18वीं शताब्दी में जीवों पर हुए जीव विज्ञान के विकास ने विज्ञान जगत में क्रांति ला दी। इस काल में स्वीडन के वनस्पति वैज्ञानिक **कार्ल लिनियस** (1707-1778) ने अपनी अमर कृति 'सिस्टमा नेचुरई' (1735) प्रकाशित की। लिनियस ने सर्वप्रथम प्रत्येक क्रियाशील जीव को दो दोहरे नामकरण के साथ निर्दिष्ट किया, और प्रत्येक जीव को दो लेटिन नाम दिए, एक वंश और दूसरा प्रजाति के लिए। इस प्रकार, लिनियस के समय से, वैज्ञानिक दृष्टि से मानव प्रजाति होमा-सेपियन्स के तौर पर पहचानी जाती है।

18वीं शताब्दी के अंत में, फ्रांसीसी वैज्ञानिक, **कोम्टे डे बफ़न** (1707-1788), जो कार्ल लिनियस के समकालीन थे, ने तर्क दिया कि जीवन के स्वरूप निर्धारित और स्थाई नहीं हैं। उनका विश्वास था कि जीवों के क्रमिक विकास पर पर्यावरण का बहुत गहरा प्रभाव रहा है।

तदोपरान्त, **इरास्मस डार्विन** (1731-1802), 18वीं शताब्दी के एक अन्य विकासवादी वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन के दादा, ने अपने शोधों के माध्यम से जानवरों की विकासमूलक अवस्था पर प्रकाश डाला और दृढ़ता से दावा किया कि धरती और इस पर जीवन अवश्य ही लाखों वर्षों से विकसित हो रहे हैं और इस श्रेणी में मानव जीव का क्रमिक विकास नवीनतम है।

लेमार्क (1744-1829), एक फ्रांसीसी प्रकृतिवादी, प्रथम विकासवादी वैज्ञानिक थे जिन्होंने विश्वास के साथ जीवों में जैविक परिवर्तन की प्रमुख प्रक्रिया के बारे में विचार को आगे बढ़ाया। उनका यह सिद्धांत 'गुणों का पैतृक अभिगृहण' के नाम से जाना जाता है और यह नई प्रजाति की उत्पत्ति का विवरण प्रदान करता है। लेमार्क, जो जानवरों के श्रेणी विभाजन में विशेषज्ञ थे, ने जाना कि विभिन्न प्रजातियाँ एक सुव्यवस्थित सम्बंध के अनुरूप हो सकती हैं जिसने जीवन के सबसे सरल छोटे रूप में जटिल मानव के सतत वंशानुक्रम को क्रमबद्ध किया। वे प्रथम प्रकृतिवादी थे जिन्होंने यह विश्वास दिलाया कि जानवर अपने को पर्यावरण

के अनुकूल ढालने के लिए अपने आप को परिवर्तित करते हैं। अपने सिद्धांत में उन्होंने दर्शाया कि ये प्रजातियां अपरिवर्तनीय नहीं थीं, बल्कि पूर्ववर्ती प्रजातियों से उत्पन्न हुई थीं। उन्होंने सुझाव दिया कि एक जीव का ढांचा उसके कार्य पर निर्भर करता है। इसके लिए उन्होंने जिराफ के उदाहरण का प्रयोग किया, और व्याख्यायित किया कि उसकी लंबी गर्दन का ढांचा उसके द्वारा अपनी गर्दन के निरंतर प्रयोग और पेड़ों के सबसे ऊँचे पर्ण समूहों तक पहुँच सकने के प्रयास के कारण हुआ। इस विचार के आधार पर, उन्होंने निम्नलिखित चार तत्वों के आधार पर एक सिद्धांत स्थापित किया:

1) अंगों का प्रयोग और अनुप्रयोग

2) अभिगृहीत विशिष्टताओं का वंशानुगत होना

3) आंतरिक प्रेरणा

4) प्रत्यक्ष वातावरण और नई इच्छाएं

उनके अनुसार, जिराफ की लंबी गर्दन एक अभिगृहीत विशिष्टता थी जिसे अगली पीढ़ी द्वारा विरासत में प्राप्त किया गया। इसी प्रकार सांप का लचकदार शरीर बिल में रहने के कारण उसके अनुपयोगी अवयवों का परिणाम था।

दुर्भाग्यवश, लेमार्क का 'गुणों के पैतृक अभिगृहण' का सिद्धांत वैज्ञानिक समुदाय के बीच तर्कसंगत सिद्ध नहीं हुआ क्योंकि वह सभी प्रश्नों के समाधान के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत नहीं करता। फिर भी, लेमार्क का क्रमिक विकास का सिद्धांत विकासमूलक जीवविज्ञान में एक मील का पत्थर है।

जार्ज क्यूवियर (1769-1832) एक अन्य फ्रांसीसी वैज्ञानिक हैं जिन्होंने लेमार्क के क्रमिक विकास के सिद्धांत का दृढ़ता से विरोध किया, लेकिन उसने लेमार्क के जीवाश्म संबंधी साक्ष्य और जैविक सम्बंधों से संबधित विचार का समर्थन किया। उनके अनुसार डायनासोर का विलुप्त होना, उनकी प्रजाति की 'जड़ता' के कारण हुआ। उन्होंने आगे 'विपदावाद' की वकालत की जो यह प्रस्तावित करता है कि पृथ्वी की परत में परिवर्तन आकस्मिक प्राकृतिक आपदाओं के कारण हुए हैं। हालांकि इस सिद्धांत को वैज्ञानिक आधार से पूर्ण समर्थन प्राप्त नहीं था।

चार्ल्स लायल (1797-1875), एक अंग्रेज वकील और महत्वपूर्ण भूवैज्ञानिक, ने क्यूवियर के विपदावादी सिद्धांत का खंडन किया। लायल ने अपनी तीन खंड में प्रकाशित पुस्तक (1830-1833) में प्रमाणों के साथ बाईबिल की विचारधारा के विपरीत सिद्ध किया कि पृथ्वी स्थापित धारणा से कुछ हज़ार वर्ष अधिक प्राचीन है; लम्बी समयावधि के साथ ही लम्बी भूगर्भीय समयावधि के लम्बे अंतराल में मन्द गति से प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा जैसे, भू-क्षरण, भूकंप, हिमनदीय गतिविधियाँ और ज्वालामुखियों के कारण पृथ्वी संरचनात्मक तथा जलवायु संबंधी अनेक परिवर्तनों से गुज़री। उन्होंने एकरूपतावाद के सिद्धांत के लिए निर्णायक साक्ष्य प्रस्तुत किया। जिसके अनुसार पृथ्वी में आए प्राकृतिक परिवर्तनों ने भूतकाल में भी उसी प्रकार प्रतिक्रिया की होगी और उसी तीव्रता के साथ की जैसा कि प्रतिक्रियाओं का रूप वर्तमान में दिखाई देता है।

2.3.2 डार्विन का सिद्धांत

डार्विन से पूर्व प्रचलित सिद्धांतों का अध्ययन, जिसने चार्ल्स डार्विन (1809-1882) को प्रकृति और जीवों के चयन के बारे में सोचने के लिए प्रेरित किया, और बाद में उन्होंने प्राकृतिक चयन और विकास के प्रसिद्ध सिद्धांत को अपनी प्रकाशित पुस्तक 'प्रजातियों की उत्पत्ति' (ओरीजिन

ऑफ स्पीशीज़) में प्रतिपादित किया। डार्विन के अनुसार, प्राकृतिक चयन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीव स्वयं को अपने पर्यावरण के परिवर्तन के अनुकूल कर सकते हैं और इसीलिए वे जीवित रह पाते हैं और प्रजनन के योग्य होते हैं। डार्विन सर चार्ल्स लायल, टी. आर. माल्थस और अल्फ्रेड रसैल वॉलेस जैसे विद्वानों से प्रभावित थे।

डार्विन पर दो प्रमुख प्रभाव	
माल्थस और उनका जनसंख्या का सिद्धांत	**अल्फ्रेड रसैल वॉलेस और उनका प्राकृतिक चयन का सिद्धांत**
• **थॉमस रॉबर्ट माल्थस** (1766-1834) 18वीं शताब्दी के एक अंग्रेज़ दार्शनिक और अर्थशास्त्री थे। • माल्थस द्वारा प्रस्तुत सिद्धांत जिसके अनुसार चिरघातांकी रूप से मानव जनसंख्या में वृद्धि (प्रत्येक चरण में दोगुनी), जबकि खाद्य उत्पादन में वृद्धि अंकगणितीय दर से होती है (उदाहरणार्थ, समय के प्रत्येक अंतराल पर एकसमान वृद्धि)। • सिद्धांत का उद्देश्य जनसंख्या की वृद्धि के परिणामस्वरूप खाद्य उत्पादन और खाद्य उपलब्धता में कमी को प्रकाश में लाना था। • यह सिद्धांत 1798 में 'एन एस्से ऑन द प्रिंसिपल ऑफ पापुलेशन' शीर्षक के अंतर्गत प्रकाशित हुआ था जो कि माल्थस द्वारा बदलाव के साथ दुबारा 1803 के आगामी संस्करण में प्रकाशित किया गया।	• **अल्फ्रेड रसैल वॉलेस** (1823-1913) एक ब्रिटिश प्रकृतिवादी, जीवभूगोलवेत्ता, लेखक और मानवतावादी थे। • वॉलेस क्रमिक विकास के सिद्धांत में डार्विन के एक सह-खोजकर्ता थे। • वॉलेस के सिद्धांत का कार्यकारी सिद्धांत, डार्विन की भांति प्राकृतिक चयन और प्रजातियों के उनके पर्यावरण के अनुकूलन पर आधारित था। • वॉलेस और डार्विन के शोध पत्र संयुक्त थे और 1859 में संयुक्त लेखन के अंतर्गत प्रकाशित हुए।

डार्विनवाद पाँच सिद्धांतों से युक्त है जो कि हैं:

i) **अधिक उत्पादन अर्थात अधिक उत्पादन का आधिक्य**: माल्थस का जनसंख्या सिद्धांत संकल्पना प्रजनन से सम्बंधित था और यह सिद्धांत इस पर ज़ोर देता है कि मानव की प्रत्येक पीढ़ी में जन्म लेने वाले व्यक्तियों की संख्या जीवित रहने योग्य लोगों से अधिक होगी।

ii) **विभिन्नता और अनुवांशिकता**: इसके अनुसार समान प्रजाति के प्रत्येक व्यक्ति एक समान नहीं होते बल्कि वे एक दूसरे से विभिन्न विशिष्टाओं के कारण भिन्न होते हैं। इनमें से कई अनुकूल रूपांतरण अनुवांशिक हैं और वे भावी पीढ़ी की संतान को हस्तांतरित हो जाते हैं।

iii) **अस्तित्व के लिए संघर्ष**: जैविक प्राणी ज्यामितीय अनुपात में वृद्धि करते हैं, जबकि खाद्य उत्पादन में वृद्धि केवल अंकगणितीय अनुपात में होती है। परिणामस्वरूप, यहाँ सीमित संसाधनों के लिए संघर्ष होता है। केवल चुनिंदा व्यक्ति ही इन सीमित संसाधनों को पा पाते हैं और बाकी इस जीवन संघर्ष में नष्ट हो जाते हैं।

iv) **योग्यतम की उत्तजीविता अर्थात प्राकृतिक चयनः** कुछ व्यक्ति विशेष में विशिष्ट विशेषताएं अथवा भिन्नताएं होने के कारण उनमें अन्य कम गुणों वाले व्यक्तियों की अपेक्षा जीवित रहने और प्रजनन करने के बेहतर अवसर होते हैं।

v) **प्रजातियों में परिवर्तनः** प्रजातियों में क्रमबद्ध परिवर्तन लम्बी भूगर्भीय समयावधियों में मंदगति से पर्यावरण में परिवर्तन के कारण प्रजातियों की चयन क्षमताओं में भी परिवर्तन आते हैं। जिसके परिणामस्वरूप इन प्रजातियों के योगात्मक परिवर्तनों में भी बदलाव आते हैं और वे अपने पैतृक जनसमुदाय से पूर्ण रूप से भिन्न हो जाते हैं।

डार्विनवाद जैविक विकास का सबसे अधिक प्रभावशाली सिद्धांत बना, परन्तु ये यह परिभाषित करने में अयोग्य साबित हुआ कि प्राकृतिक चयन वास्तव में किस प्रकार क्रमिक विकास में परिणित होता है। फिर भी, डार्विन के विचार को कुछ विद्वानों के समूह जैसे चार्ल्स, जार्ज लायल, थॉमस हक्सले, अर्नेस्ट हेकल, ऑगस्ट विसमेन, अल्फ्रेड रसैल, वॉलेस और सिम्पसन जैसे विद्वानों ने आगे बढ़ाया। डार्विन के प्राकृतिक चयन की अवधारणा का समर्थन करने की वजह से ये शोधार्थी नव-डार्विनवादियों के नाम से जाने जाते हैं। बाद में, इस विचारधारा के कुछ विद्वान जैसे सीवॉल राईट, रोनाल्ड फिशर और जे.बी.एस. हॉल्डेन ने प्राकृतिक चयन की व्याख्या आधुनिक संश्लेषण अर्थात नवीन-डार्विनवाद द्वारा की।

2.3.3 क्रमिक विकास का कृत्रिम सिद्धांत

विकास का यह सिद्धांत अनिवार्य रूप से प्राकृतिक चयन, अनुवांशिक उत्तराधिकार, उत्पत्ति संबंधी जनसांख्यिकी, वर्गीकरण विज्ञान और विशिष्टता का सिद्धांत और वृहत् विकास की अवधारणा का संयोजन है। इसके अतिरिक्त यह सिद्धांत विकास के अचयनित घटकों, विशिष्ट रूप से पृथक्करण, **उत्परिवर्तन** (mutation) और पुनःसंचयन पर भी जोर देती है (रीफ इत्यादि, 2000)।

जीवित प्राणियों का विभिन्न छोटे-छोटे समूहों अथवा आबादियों में भौगोलिक अथवा शारीरिक अवरोध विकास के लिए उत्तरदायी कारकों में प्रमुख है। इन बाधाओं में समुद्र, नदियां, पहाड़ आदि आते हैं जो समरूप व्यक्तियों में अन्तः प्रजनन प्रक्रिया में बाधक होते हैं। दूसरी ओर, उत्परिवर्तन जो व्यक्तियों में जीन की संरचना में परिवर्तन के लिए उत्तरदायी हैं, व्यक्तियों की विविधता का कारण हैं। अधिकतर अनुवांशिकविद् मानते हैं कि उत्परिवर्तन द्वारा जीन की परिवर्तन की आकृति प्राकृतिक चयन की तुलना में बहुत छोटी थी।

अनुवांशिकी रचनातंत्र की अपेक्षाकृत पूर्ण समझ के साथ, आज यह माना जाता है कि क्रमिक विकास वास्तव में व्यक्तियों में, जो जनसंख्या के एक समान-जीन-समुच्चय (gene pool) का अंश है, अनुवांशिक रूप से प्राप्त परिवर्तन का कुल योग है तथा एक व्यक्ति विशेष के बजाय समान जनसंख्या पर क्रमिक विकास के प्रकार्य का कारण है।

क्रमिक विकास के रचनातंत्र का आधुनिक सिद्धांत डार्विनवाद से निम्न तीन महत्वपूर्ण पहलुओं से भिन्न हैः

i) प्राकृतिक चयन के अतिरिक्त आधुनिक सिद्धांत क्रमिक विकास और अन्य महत्वपूर्ण बलों की पहचान करता है, जैसे उत्परिवर्तन (mutation), पृथक्करण (isloation) और जीन का प्रवाह (genetic drift)।

ii) क्रमिक विकास का आधुनिक सिद्धांत मानव की विशिष्ट अनुवांशिक तत्वों की पहचान करता है जिसे जीन के नाम से जाना जाता है। जनसंख्या में यह भिन्नता जीन के विविध युग्मों (alleles) की उपस्थिति के कारण है।

iii) यह सिद्धांत बतलाता है कि नई प्रजाति की रचना सामान्यतः छोटे अनुवांशिक परिवर्तनों के क्रमबद्ध संचयन से होती है।

आधुनिक कृत्रिम सिद्धांत मूलतः जीन, फेनोटाइप्स (phenotypes) और जनसंख्या के स्तर पर जैविक विकास की कार्यप्रणाली की व्याख्या करता है। हालांकि इस सिद्धांत को लेकर नव-उत्परिवर्तनवादियों (Neo-mutationists) ने अक्सर चुनौती दी है। आणविक जीवविज्ञानी मासातोशी नेई से प्रेरित अन्य कई नव-उत्परिवर्तनवादियों ने जैविक विकास के प्रमुख घटक के रूप में प्राकृतिक चयन की बजाय, उत्परिवर्तन (mutation) की प्रघटना (phenomenon) की वकालत की है।

क्रमिक विकास के ये सिद्धांत मानव के जैविक विकास के इतिहास को समझने योग्य बनाने में सहायता करते हैं। जीवाश्म के रूप में भूतकाल के साक्ष्य यह सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं कि मानव, वानर प्रजाति (apes) से कैसे विकसित हुआ। मानव विकास के सिद्धांत **जीवाश्मविज्ञानियों** और पुरातत्ववेत्ताओं द्वारा खुदाई में प्राप्त साक्ष्यों पर आज़माए गए। होमीनिड जीवाश्म के रूप में साक्ष्य, मानव के जैविक विकास को प्रक्षेप पथ (trajectory) प्रदान करने में सक्षम थे। इसने यह निर्धारित किया कि स्तनधारी वानर किस प्रकार आधुनिक मानव के रूप में विकसित हुए। वैज्ञानिकों का मानना है कि इस प्रक्रिया में लगभग 6 लाख वर्ष लगे।

बोध प्रश्न-1

1) जैविक विकास को 50 शब्दों में परिभाषित कीजिए।

....

....

....

....

....

2) लेमार्क के क्रमिक विकास सिद्धांत की मुख्य विशेषताएं क्या हैं?

....

....

....

....

....

3) डार्विनवाद की मुख्य विशेषताओं की सूची बनाइये।

....

....

....

....

....

4) रिक्त स्थान भरें:

क) माल्थस के जनसंख्या के सिद्धांत के अनुसार, मानव जनसंख्या .... दर से बढ़ती है, जबकि खाद्य उत्पादन की वृद्धि .... दर से बढ़ती है।

ख) 'अभिगृहीत गुणों' का सिद्धांत .... के द्वारा प्रतिपादित किया गया।

ग) अल्फ्रेड रसैल वॉलेस ने .... सिद्धांत प्रतिपादित किया।

5) डार्विनवाद क्रमिक विकास के कृत्रिम सिद्धांत से किस प्रकार भिन्न है?

....

....

....

....

....

2.4 होमीनाईज़ेशन

होमीनाईज़ेशन वह प्रक्रिया है जो मानव के शारीरिक रूप से उनके वानर पूर्वजों से *होमो* प्रजाति में आविर्भाव को परिभाषित करती है। लेटिन शब्द 'होमो' जो एक जीव के रूप में मानव का प्रतिनिधित्व करता है, का सबसे पहले प्रयोग करने वाले स्वीडन के प्रकृतिवादी कार्ल लिनेयस थे। *होमो* वह प्रजाति है जो ***होमो सेपियंस*** के वंश को सम्मिलित करती है, जिसमें आधुनिक मानव के साथ-साथ अनेक विलुप्त प्रजातियां, जो आधुनिक मानव के बहुत नज़दीकी हैं, सबसे अधिक महत्वपूर्ण *होमो इरेक्टस* को भी सम्मिलित करती है।

मानव के जैविक विकास की कथा उसके वानर पूर्वजों के साथ 65 लाख वर्ष पहले आरंभ होती है। प्रोसिमिएंस (prosimians) से आरंभ होकर बंदर, वानर, विशालकाय वानर और अंत में मानव तक। वह डार्विन ही थे जिन्होंने वानर और मानव के मध्य की कड़ी को समझना संभव बनाया। अपनी कृति 'प्रजातियों की उत्पत्ति' (*Origins of Species*) में वे नई प्रजाति के अपने पूर्वजों से जैविक विकास के विचार पर तर्क देते हैं। मानव क्रमिक विकास का इतिहास *होमोनिड* और मानव के मध्य के महत्वपूर्ण चरण की खोज को भी शमिल करता है। यह चरण आधुनिक मानव के जन्म अर्थात आरंभ को उनके वानर पूर्वजों से अलग करके चिन्हित करता है।

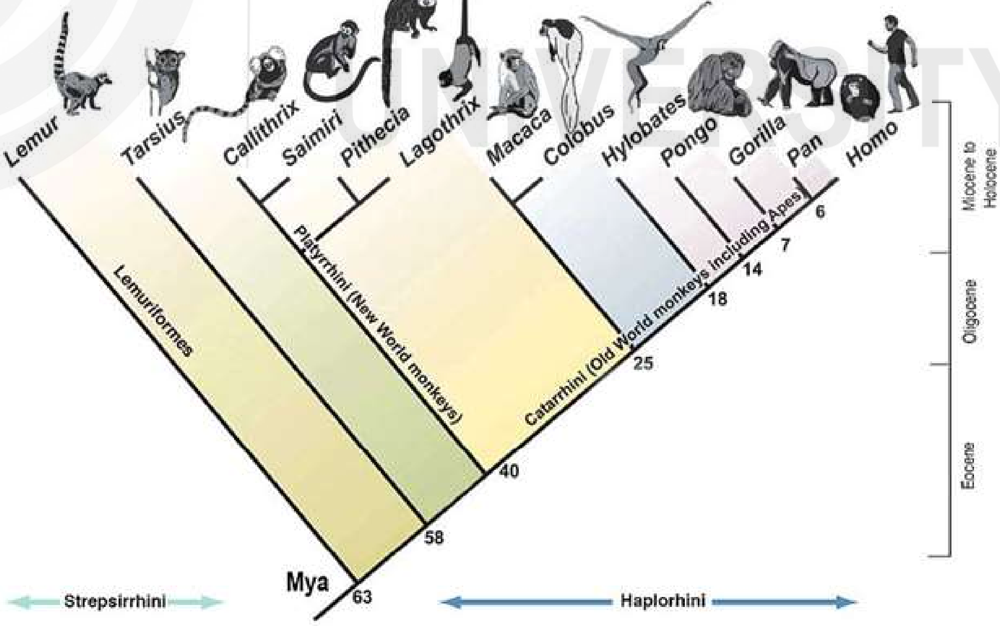

चित्र 2.1: मानव के क्रमिक विकास के चरण
साभारः विकिमीडिया कॉमन्स
स्रोतः https://en.wikipedia.org/wiki/File:PrimateTree2.jpg

यह माना जाता है कि मानव के पूर्वजों की सबसे नज़दीकी कड़ी मायोसीन युग (23 लाख से 53 लाख वर्ष पहले) की है। सदाबहार पतझड़ वाले जंगलों के कारण उनका खुली

वनस्थली, झाड़ीदार मैदान, घास के मैदान में बदलना और मिश्रित (mosaic) वास, कभी-कभी झीलों, नदियों और जलधाराओं के किनारे घने छत्र वाले जंगलों में वानर स्वरूप पूर्वज इस युग में फले-फूले। पर्यावरण की विविधता ने नवीन परिवर्तन, जिसमें कई प्रकार के जानवरों सहित नर-वानर की गतिशीलता को उद्यीप्त किया। इसने इन्हें वृक्षवासी से भूमि पर जीवन की ओर स्थानान्तरित किया। द्विपादिता (bipedalism) का विकास अर्थात होमिनिन्स की सीधे चलने की योग्यता ने उन्हें खुली वनस्थली में बेहतर प्रयास करने के योग्य बनाया। नीचे हम वानर और मानव के बीच प्रमुख भेद वाले लक्षणों की चर्चा करेंगे, जिसमें द्विपादिता सबसे महत्वपूर्ण भेद है।

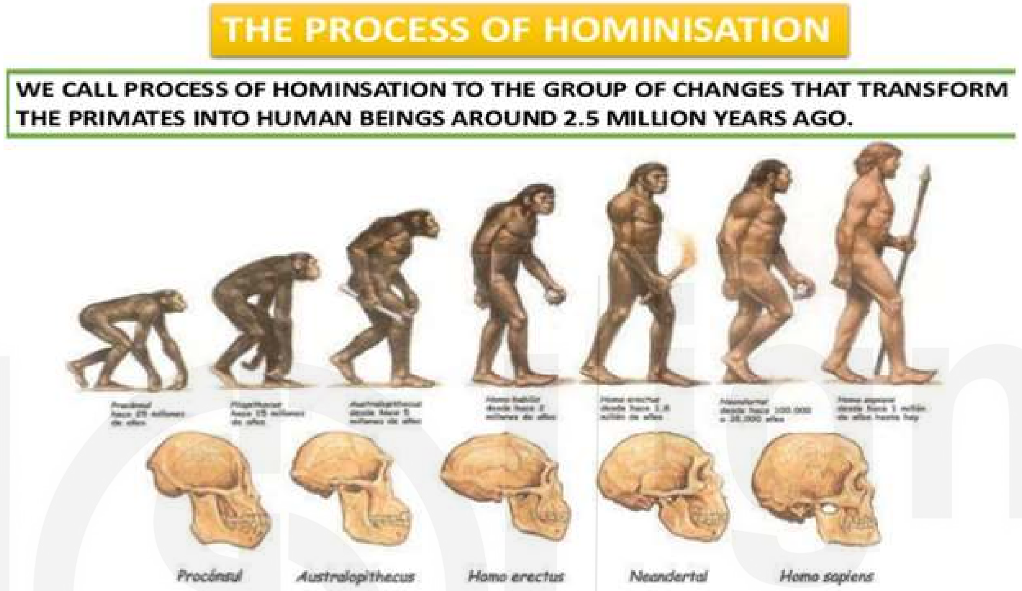

चित्र 2.2: होमोनाईज़ेशन

साभार: Prof. Pedro Flores, Professor de Geografía e Historia en IES Blas de Otero

स्त्रोत: https://www.slideshare.net/pflores88/the-prehistory-72472639

2.4.1 द्विपादिता (Bipadelism)

मानव ढांचे के कंकालीय परिवर्तनों के पीछे द्विपादिता एक मुख्य कारण था जो सभी द्विपादीय होमोनिडों में मौजूद है। *सहेलेंथ्रोपस* अर्थात *ओरोरिन* द्विपादिता के सर्वाधिक आदिम उदाहरण हैं। इन्हें अंतिम नर-वानर (primate) माना जाता है, जो वंश परंपरा में घुटनों से चलने वालों – गोरिल्ला और चिम्पांजी – की तरह था। द्विपादिता के अनेक लाभ हैं जैसे कि:

1) सीधा चलना हाथों को भोजन तक पहुँचने और उठाने के लिए स्वतंत्रता प्रदान करता है,

2) द्विपादिता गतिशीलता के दौरान ऊर्जा बचाता था,

3) इससे लम्बी दौड़ और शिकार में सहायता मिलती थी,

4) यह दृष्टि अवलोकन का एक विस्तृत क्षेत्र उपलब्ध कराता है,

5) यह सूर्य आदि के सीधे संपर्क में आने वाले भू-क्षेत्र को कम करके अतिताप (hyperthermia) से बचने में सहायता करता है,

6) यह एक साथ कई कार्य करने और उत्पादकता बढ़ाने में सहायता करता है, और

7) द्विपादिता, आगे अथवा पीछे के लंबे हाथ-पैर (hindlimbs and forelimbs) वाले वानर की तुलना में, आगे और पीछे के हाथ-पैरों द्वारा एक संतुलित अनुपात का निर्देशन करता है। आगे-पीछे घूमने योग्य अंगूठा औज़ार बनाने में सहायक सिद्ध हुआ।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

द्विपादिता के साथ जुड़े हुए अन्य बदलाव हैं: लम्बे अंगूठे, कूल्हों और जन्म नलिका और कंकालीय ढ़ांचे में अन्य परिवर्तन।

2.4.2 एनसेफलाईज़ेशन (Encephalization)

होमोनाईज़ेशन की प्रक्रिया में अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तन मानव के मस्तिष्क के आकार में वृद्धि था जो गोरिल्ला अर्थात चिम्पांजी की तुलना में, आकार में तीन गुना अधिक बढ़ा। मस्तिष्क के विस्तारण की यह प्रक्रिया एनसेफलाईज़ेशन कहलाती है और यह प्रक्रिया *होमो हेबीलिस* प्रजाति के साथ आरंभ हुई। परिणामस्वरूप, मस्तिष्क की कनपटी के पिण्डक में वृद्धि हुई, जिसका प्रयोग भाषा के प्रसंस्करण में किया जाता है और पूर्व-ललाट का बाहरी आवरण जटिल निर्णय लेने में सहायक होता है (मानव के जैविक विकास का वर्णन इस इकाई के **भाग 2.5** में किया गया है)।

2.4.3 लैंगिक द्विरूपता

एक अन्य घटक जो वानर से मानव पूर्वज में भेद करता है वह है लैंगिक द्विरूपता। जैसे वह स्थिति जिसमें एक ही प्रजाति के दो भिन्न लिंग अलग तरह के स्वभाव का प्रदर्शन करते हों। मानव की लैंगिक द्विरूपता में कमी आई जो कि अन्य वानर प्रजातियों (गिब्बन के अलावा, जो छोटे वानर भी कहे जाते हैं) की तुलना में नर के श्वदंत (canine) के घटाव, साथ ही भोंह कटक (brow ridges) और नरों का ज़्यादा शक्तिशाली होना, द्वारा विशेषित है। मानव में अन्य महत्वपूर्ण शारीरिक परिवर्तन कामुकता से सम्बंधित हैं जो गुप्त कामोत्तेजना (यौन ग्रहणशीलता की स्थिति) का क्रमिक विकास था।

2.4.4 अन्य कारक

अनेक दूसरे कारक जैसे कि उल्नर (ulnar) प्रतिकूलता (एक ही हाथ के अंगूठे और छोटी उंगली में सम्पर्क कर पाना), सूंघने की अपेक्षा दृष्टि में वृद्धि, आंत का छोटा होना, दंत पंक्ति में बदलाव, स्वेद (पसीना) ग्रंथियों में बदलाव आदि मानव और वानर में विभेदन निर्धारित करते हैं।

मानव और वानर के मध्य सम्बंध अनेक साक्ष्यों के आधार पर स्थापित किए गए हैं। आणविक जीवविज्ञान ने मानव और चिम्पांजी के मध्य डी.एन.ए. की 95-99 प्रतिशत समानता पाई है। चिम्पांजी और *होमोनिन* के मध्य अलगाव लगभग 40-80 लाख वर्ष पूर्व चिन्हित किया गया है।

मानव क्रमिक विकास का सबसे सुस्पष्ट साक्ष्य जीवाश्म की पहचान के साथ आया। जीवाश्मविज्ञानी वानर और मानव प्रजाति के जीवाश्म में समानताएं और असमानताएं ढूंढ कर वानर से मानव के क्रमिक विकास की जाँच कर पता लगाने में सक्षम थे। जीवाश्म अवशेष आधुनिक मानव प्रजाति के क्रमिक विकास के क्रमबद्ध चरणों को परिभाषित करने में सहायक हुए।

- जीवाश्म 1891 में ट्रिनिल, जावा द्वीप, इंडोनेशिया में खोजे गए।
- खोज के स्थान के आधार पर, जीवाश्म जनसाधारण द्वारा 'जावा मैन' के तौर पर पहचाने गए।
- प्रजाति की खोज यूजीन ड्यूबोइस के नेतृत्व में खुदाई करने वाले एक दल द्वारा की गई।
- नमूने को प्रारंभ में मानव और वानर के मध्य एक नई प्रजाति समझा गया और *पिथेकैन्थ्रोपस इरेक्टस* के तौर पर वर्गीकृत किया गया।

- अंततः 1940/50 के दशक में जर्मन जीवविज्ञानी अर्नस्ट मायर ने *सिनान्थ्रोपस पेकिनैन्सिस* (पीकिंग मैन) के जीवाश्म और जावा मैन के मध्य सम्बंध स्थापित किया, जिसके द्वारा दोनों एक ही प्रजाति *होमो इरेक्टस* (इसका इकाई में बाद में विस्तार से वर्णन किया गया है) के अंश के तौर पर वर्गीकृत किए गए।

1891 में जब सबसे पहले *होमिनिन* जीवाश्म खोजा गया, इसे भूलवश एक मानव प्रजाति का समझ लिया गया जो किसी प्रकार की बीमारी से पीड़ित था। 1920 के दौरान जब समान प्रकार के जीवाश्मों की खोज शुरू हुई तब ये अलग प्रजाति के तौर पर वर्गीकृत किए गए।

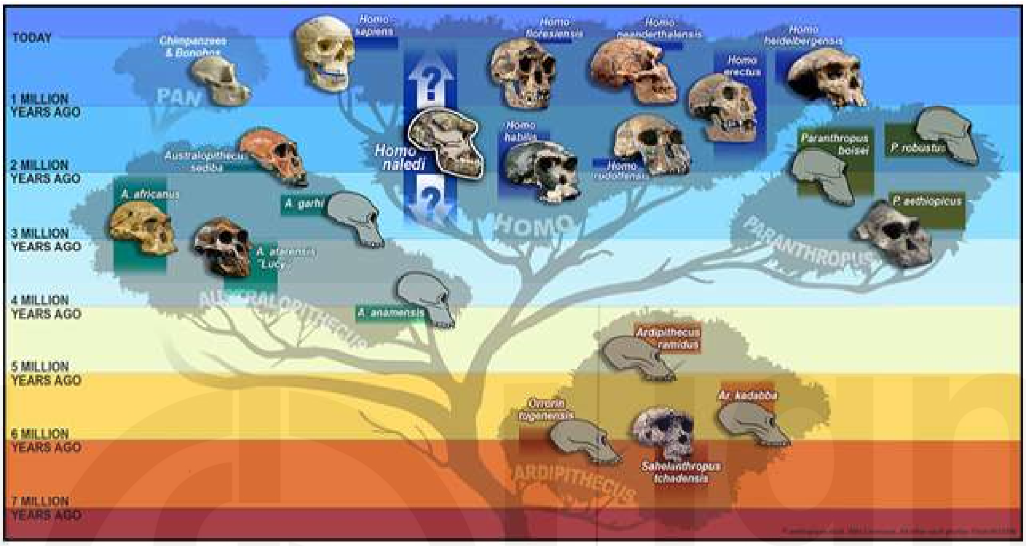

चित्र 2.3: होमो नलेडीः मानव वंश-वृक्ष की एक नवीन प्रजाति

साभार: चित्रणः एस.वी. मेदारिस, यू. डब्ल्यू-मैडिसन

स्त्रोतः यूनिवर्सिटी ऑफ विस्कान्सिन (https://news.wisc.edu/naledi/)

2.5 मानव का क्रमिक विकास

मानव के सबसे नज़दीकी पूर्वजों के क्रमिक विकास को दो श्रेणी में विभाजित किया जा सकता हैः होमो-पूर्व और होमो प्रजाति का क्रमिक विकास (चित्र के लिए देखें, https://www.britannica.com/science/human-evolution)।

2.5.1 होमो-पूर्व

यह वर्ग होमिनिड के जीवाश्म साक्ष्यों से वर्गीकृत किया गया है जो मानव के नज़दीकी सादृश्य तो हैं, लेकिन यह वानर से अधिक समीप्य हैं।

ड्रियोपिथिकस

ड्रियोपिथिकस, वानर सदृश्य विलुप्त जीव की एक प्रजाति है जो मानव के क्रमिक जैविक विकास के चरण का प्रतिनिधित्व करता है, जब मानव और वानर एक ही वंशावली का अंश थे। यह मिओसिन और प्लिओसिन भण्डार (23 से 2.6 लाख वर्ष पुराने) में जीवाश्म के रूप में प्राप्त हुए और शुरूआत में स्पष्ट रूप से अफ्रीका में उत्पन्न हुए थे। ड्रियोपिथिकस के अनेक रूप जाने जाते हैं, जिनमें छोटे, मध्यम और बड़े, गोरिल्ला के आकार के जीव सम्मिलित हैं। इसमें एक मानव और एक वानर में भेद करने वाली विशेषताओं का अभाव है। मानव की तुलना में श्वदंत (canine) बड़े हैं लेकिन अन्य वानर जीव जितने मजबूती से विकसित नहीं हैं। हाथ बहुत लम्बे नहीं थे। कपाल की ढाल में उचित विकास और आधुनिक वानर में मिलने वाली भारी भौंह कटक का अभाव था। इसलिए, ये गोरिल्ला और चिम्पैंजी का अग्रदूत था (चित्र के लिए देखें: https://www.thoughtco.com/dryopithecus-tree-ape-1093073)।

चित्र 2.4: ड्रियोपिथिकस के जीवाश्म
साभार: Ghedoghedo, 2013
स्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/0/02/Dryopithecus_fontani_mio_med_francia.JPG

रामापिथिकस

पहला रामापिथिकस जीवाश्म 1932 में उत्तर-पश्चिमी भारत की शिवालिक पहाड़ियों के जीवाश्म भण्डार में मिला। प्राइमेट्स (primates) जीवाश्म मध्य और उत्तर माइओसिन युग (लगभग 16.6 लाख से 5.3 लाख वर्ष पूर्व) से प्राप्त होते हैं। दो प्रजाति, *रामापिथिकस पंजाबीकस और रामापिथिकस विकेरी*, सबसे पहले खोजी गई थीं। जीवाश्म में प्राप्त जबड़े के टुकड़े *रामापिथिकस* का सम्बंध एक भिन्न प्रजाति के तौर पर देखा गया जो कि आधुनिक मानव (*होमो सेपियंस*) का प्रथम प्रत्यक्ष पूर्वज था। फिर भी, जब अमेरिकन मानवशास्त्री डेविड पिल्बीम ने *रामापिथिकस* के पूरे जबड़े की खोज की, जिसमें जबड़े की सुस्पष्ट रूप से आकृति थी और जो वी आकार के थे, मानव वंशावली के सदस्यों के अणुवृत आकृति के जबड़ों से भिन्न चिन्हित किए गए। इस साक्ष्य के आधार पर, पिल्बीम ने *रामापिथिकस* का वनमानुष के पूर्वज *सिवापिथेकस*, से सादृश्यता होने का निष्कर्ष निकाला (रिचर्ड लीके द्वारा खोजा गया रामापिथिकस मेंडीबल का चित्रण देखें: http://www.angelfire.com/mi/dinosaurs/zramapithecus.html)।

जिगांटोपिथिकस

एक बड़े कपि जीवाश्म की जाति, जिसमें दो प्रजातियां जानी जाती हैं: *जिगांटोपिथिकस बिलासपुरेंसिस*, जो कि 60 से 90 लाख वर्ष पूर्व भारत में निवास करती थीं, और *जिगांटोपिथिकस ब्लैकि*, जो चीन में कम से कम 10 लाख वर्ष पूर्व तक जीवित था। ये वानर उनके दांतो, निचले जबड़े की हड्डियों और संभवत बाहरी प्रांगडिका (हाथ के ऊपरी भाग की हड्डी) के टुकड़े से पहचाने जाते हैं। ये आकार में विशाल थे, शायद गोरिल्ले से भी बड़े। ये खुले मैदान में रहते थे और इनके पीसने और चबाने वाले मजबूत दांत थे (चित्र के लिए देखें: https://prehistoric-fauna.com/Gigantopithecus-blacki)।

सबसे पहले नमूने जर्मन-डच जीवाश्म विज्ञानी जी.एच.आर. वॉन कोएनिग्सवाल्ड द्वारा खोजे गए, जो चीन की एक दवा की दुकान में मिलें, वहां ये 'ड्रेगन के दांत' के नाम से जाने जाते थे। यद्यपि, दांत बड़े थे, लेकिन उसमें मानव के दांत से कुछ समानताएं भी थीं, जिसने कुछ

जीवाश्म विज्ञानियों को यह सोचने के लिए प्रेरित किया कि अवश्य ही मानव के पूर्वज 'विशाल' रहे होंगे। बाद में पूरे जबड़े की हड्डियों की खोज ने यह प्रमाणित किया कि वे विलुप्त वानर प्रजाति से सम्बंधित थे (रैफरटी, 2018)।

ऑस्ट्रैलोपिथिकस

चित्र 2.5: ऑस्ट्रैलोपिथिकस जीवाश्म
सभार: दुरोवा, 2007
स्त्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/7/7d/Australopithecusafarensis_reconstruction.jpg

ऑस्ट्रैलोपिथिकस का पहला जीवाश्म 1924 में रेमंड डार्ट द्वारा खोजा गया, वे दक्षिणी अफ्रीका, के टाँग शहर के जोहान्निसबर्ग में शरीर रचना विज्ञान के प्रोफेसर थे। यह पाँच वर्ष के बच्चे का दूध के दांतों सहित कपाल था। कपाल (skull) की संरचना में वानर सदृश्य कई विशेषताएं थीं जैसे कि उठा हुआ (projecting) चेहरा और छोटा मस्तिष्क। इसकी स्पष्टतः मानव सहश्य विशेषताएं भी थीं। उदाहरण के तौर पर, वानरों की तरह नुकीले के बजाय गोलाई जबड़ा। **फोरामेन मेग्नम** (foramen magnum; कपाल के आधार पर छिद्र जो मेरुदण्ड रज्जू में मिलता है) के वेन्ट्रल (ventral) की स्थिति दर्शाती है कि जीव सीधा चला करता था। कपाल 28 लाख वर्ष पुराना है और इसे *ऑस्ट्रैलोपिथिकस अफ्रीकानस* का नाम दिया गया। जनसाधारण में कपाल को उसकी खोज के स्थान के नाम पर टाँग बालक के तौर पर भी जाना गया।

सबसे सुस्पष्ट और अच्छी तरह से संरक्षित किया गया ऑस्ट्रैलोपिथिकस का नमूना, एक मादा कंकाल का है जो कि 1974 में जीवाश्म विज्ञानी डोनाल्ड जॉनसन के नेतृत्व में वैज्ञानिकों के एक दल ने इथियोपिया के हदर क्षेत्र में खोजा था। मानवशास्त्री उस कंकाल का लगभग 40% एकत्रित कर सके और उसे 'लूसी' उपनाम दिया गया[1]।

1938 में, ऑस्ट्रैलोपिथिकस जाति के अन्य दूसरे जीवाश्म की खोज हुई, जिसे ऑस्ट्रैलोपिथिकस रोबस्टस का नाम दिया गया।

ऑस्ट्रैलोपिथिकस

ऑस्ट्रैलोपिथिकस की विभिन्न प्रजातियां प्लिओसीन (53 लाख से 26 लाख वर्ष पूर्व) और प्लिस्टोसीन (26 लाख से 11,700 लाख वर्ष पूर्व) युग के दौरान जीवित थीं। वहाँ लगभग 40 लाख से 18 लाख वर्ष पूर्व ऑस्ट्रैलोपिथिकस (Au) की प्रजातियां जैसे ऑस्ट्रैलोपिथिकस ऐनामेंसिस, ऑस्ट्रैलोपिथिकस अफारेंसिस, ऑस्ट्रैलोपिथिकस अफ्रीकानस, ऑस्ट्रैलोपिथिकस बाहरेलघज़ाली, ऑस्ट्रैलोपिथिकस गर्ही और आस्स्ट्रैलोपिथिकस सेडिबा थीं। वहाँ लगभग 30 लाख से 27 लाख वर्ष पूर्व केन्यान्थ्रोपस के साथ प्रजाति के. प्लेट्योपस था। इसकी अंतिम उप-पीढ़ी लगभग 30 लाख से 12 लाख वर्ष पूर्व, पेरांथ्रोपस थे, जिसकी प्रजातियां पी. ऐथिओपिकस, पी. बोईसेई और पी. रोबस्टस थीं।

प्रजाति होमो से *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* का विभेद मुख्यतः सबसे छोटे आकार के शरीर, अपेक्षाकृत सबसे छोटे आकार के मस्तिष्क, अपेक्षाकृत सबसे छोटे दांत और बड़े चेहरे, इसके अतिरिक्त अन्य शरीरिक अंतर की वजह से है।

[1] इसका नामकरण रॉक बैंड बीटल्स के प्रसिद्ध गीत 'लूसी इन द स्काय विद डायमंड्स' से प्रेरित होकर किया गया।

नवीनतम खोजें

जीवाश्म विज्ञानी लगातार जीवाश्मों की खोज में शामिल रहे। कुछ वर्ष पहले ही, मानव जीव की उत्पत्ति से सम्बंधित अनेक नए साक्ष्य प्राप्त हुए। उदाहरण के तौर पर, अक्टूबर 2009 में, मध्य इथियोपिया में एवॉश के एक दल द्वारा मानव जीवाश्म का सबसे बड़ा भण्डार खोजा गया जिसमें *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* और *आरडीपिथिकस* की अलग प्रजातियां थीं।

8 अप्रैल 2010 को, कुछ वैज्ञानिकों ने दक्षिणी अफ्रीका में *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* की नई प्रजाति के जीवाश्म की खोज की। नई प्रजाति को *ऑस्ट्रैलोपिथिकस सेडिबा* नाम दिया गया, जो मालापा नाम की गुफा से प्राप्त हुआ। जीवाश्म 19.5 और 17.8 लाख वर्ष के लगभग पुराना है। जीवाश्म में एक युवा नर, जिसकी आयु मृत्यु के समय लगभग 12-13 वर्ष होगी, जिसकी एक खोपड़ी और आंशिक कंकाल और एक वयस्क मादा का जबड़ा और आंशिक कंकाल सम्मिलित हैं। पहले, विस्तारित मस्तिष्क और शिशुओं का बड़े मस्तिष्क के साथ जन्म लेना मानव की उत्पत्ति के लिए एक विशिष्ट कारक माना गया था लेकिन *ऑस्ट्रैलोपिथिकस सेडिबा* के कंकालों के जीवाश्म पर नई खोज दर्शाती है कि कूल्हे और मस्तिष्क की बाहरी सतह में महत्वपूर्ण परिवर्तन मस्तिष्क के विस्तार से पूर्व घटित हुआ।

दिसम्बर 2003 में, वैज्ञानिकों ने निएन्डरथल के जीन्स का खाका तीन अलग निएन्डरथल मानव जीवाश्मों की हड्डी से लिए गए डी.एन.ए. अंशों से बनाया, प्रत्येक एक-दूसरे से भिन्न हैं, यह इसे वह सबसे पहली विलुप्त प्रजाति बनाता है जिसका डी.एन.ए. खोजा गया है। यह जीवाश्म विन्दिजा गुफा, क्रोएशिआ से प्राप्त किए गए थे जो लगभग 44,000 वर्ष पुराने हैं।

मार्च 2015 में वैज्ञानिकों को इथियोपिया में एक नया जीवाश्म मिला, जिसे 'लेडी जॉ' का नाम दिया गया और जिसका तिथि निर्धारण 27.5 लाख से 28.0 लाख वर्ष पूर्व किया गया है। इसके निचले जबड़े, सिर्फ बाईं ओर के आधे जबड़े, जिसके *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* के पूर्वज से छोटे दांत हैं, जबकि इसके अन्य गुण बाद की *होमो* प्रजाति से समानताएं रखते हैं जैसे कि *होमो हैबिलिस*।

सितम्बर 10, 2015 को अन्य असाधारण खोज हुई जब दक्षिणी अफ्रीका की राइजिंग स्टार गुफा से पंद्रह कंकाल मिले। इन कंकालों के आधुनिक मानव के समान पैर और हाथ, साथ ही ऊंचे कंधे, चौड़े कूल्हे और *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* के प्ररूपी फैली हुई पसलियाँ इसे *होमो* पूर्वज के सदृश्य बनाते हैं। अभी तक प्राप्त जीवाश्म भण्डारों में लक्षणों का यह संयोजन अब तक कहीं और नहीं मिलता, अतः शोध दल ने इस जीवाश्म को एक नई प्रजाति *होमो नलेडी* का नाम दिया (**स्रोत:** https://www.si.edu/; *होमो नलेडी* पर ज्यादा जानकारी के लिए देखें: https://www.youtube.com/watch?v=oxgnlSbYLSc)।

अब हम प्रजाति होमो की तरफ बढ़ते हैं और पूरी दुनिया में पाई गई होमो की विभिन्न प्रजातियों के बारे में चर्चा करते हैं।

2.5.2 मानव (होमो) प्रजाति का क्रमिक विकास

ऐसा विश्वास किया जाता है कि प्रथम मानव ऑस्ट्रौलोपिथेसिन के पूर्वज से लगभग 2 लाख वर्ष पूर्व विकसित हुए। *ऑस्ट्रैलोपिथिकस अफ्रेंसिस* को आमतौर पर *होमो* जाति के पूर्वज के सबसे नज़दीकी समझा जाता है। होमो जाति को पत्थर के औज़ार के प्रयोग और कूल्हों के विकास के द्वारा वर्गीकृत किया गया था।

होमो हैबिलिस

होमो हैबिलिस 28 लाख से 14 लाख वर्ष पूर्व जीवित थे। यह दक्षिणी और पूर्वी अफ्रीका में होलोसीन युग के अंत और प्रारंभिक प्लीस्टोसीन युग में विकसित हुए। पहला जीवाश्म 1960 में मैरी लीके और लुई के नेतृत्व में एक दल द्वारा तंज़ानिया के ओल्डुवई गॉर्ज, पूर्वी अफ्रीका में खोजा गया। इस स्थान पर हड्डियों के साथ पत्थर के औज़ार मिले। इसका औज़ारों के

साथ सम्बंध होने के कारण, यह आरंभिक मानव *होमो हैबिलिस* कहलाया, मतलब 'हैंडी मैन'। *होमो हैबिलिस* का कद छोटा था, जिसके हाथ, पैरों से लम्बे थे और कंकाल काफी हद तक ऑस्ट्रैलोपिथिकस जैसा था। इनका मस्तिष्क बड़ा था और दाढ़ें ऑस्ट्रैलोपिथिकस की अपेक्षा छोटी थीं।

चित्र 2.6: होमो हैबिलिस की फोरेन्सिक पुनर्रचना
साभार: W. Schnaubelt & N. Kieser, 2006/7
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/4/48/Homo_habilis.JPG

चित्र 2.7: कूबी फोरा, उत्तरी केन्या से प्राप्त होमो हैबिलिस के कपाल की प्रतिकृति
साभार: Locutus Borg, 2007
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/4/45/Homo_habilis-KNM_ER_1813.jpg

मई 2010 में दक्षिणी अफ्रीका के गॉन्टेन में जोहानसबर्ग के समीप स्टर्कफॉंटेन गुफा में एक नई प्रजाति *होमो गॉटेनजेनसिस* प्राप्त हुई। दो प्रकार के नमूने, *होमो रूडोल्फेनसिस* और *होमो इर्गास्टर, होमो हैबिलिस* और *होमो इरेक्टस* के मध्य के काल के माने जाते हैं।

होमो इरेक्टस

होमो इरेक्टस का अर्थ है 'सीधा मानव' जो *होमो* जाति की एक विलुप्त प्रजाति है। यह लगभग 19 लाख वर्ष पूर्व प्लीस्टोसीन युग में रहता था। *होमो इरेक्टस* एक मध्यम कद का मानव था जो सीधा चलता था। इसका मस्तिष्क कोटर (braincase) नीचे था, माथा पीछे की ओर था और नाक, जबड़े, तालू चौड़े थे। मस्तिष्क छोटा था और दांत आधुनिक मानव की तुलना में बड़े थे। ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ 1,000,000 वर्ष पूर्व *होमो इरेक्टस* आग को काबू करने वाली प्रथम मानव प्रजाति थी।

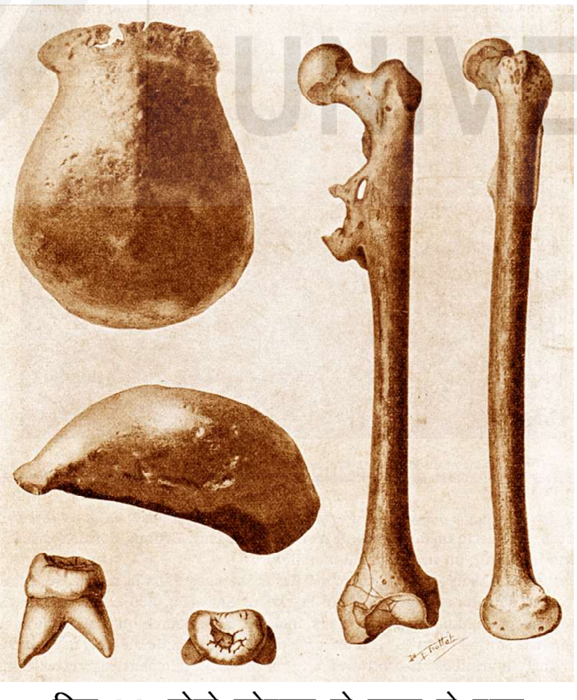

चित्र 2.8: होमो इरेक्टस के जावा से प्राप्त जीवाश्म, 1891
साभार: पर्सनल स्कैन 120
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Pithecanthropus-erectus.jpg

अब तक इसकी तीन उपप्रजातियाँ: *होमो इरेक्टस जावानेनसिस* (जावा), *होमो इरेक्टस पीकिन्सिस* (चीन) और *होमो इरेक्टस नरमादेन्सिस* (भारत) प्राप्त हुई हैं।

होमो सोलोएन्सिस

होमो सोलोएन्सिस की खोज 1931-1933 के बीच गुस्ताव हेनरिक रॉल्फ वॉन कोएंग्सवाल्ड के द्वारा की गई, यह *होमो इरेक्टस* की एक उपप्रजाति है। इंडोनेशिया के जावा द्वीप की सोलो नदी के किनारे इसे खोजा गया। यह प्रजाति बाद के *होमो इरेक्टस* का एक रूपांतर है और *होमो हाइडेलबर्जेन्सिस* के समय की है। यह भी संभव है कि ये आदिम *होमो सेपियंस* के समय की हो। आकृति के अनुसार इसकी नेत्र क्षमता 1,013-1,252 क्यूबिक सें.मी. (ब्राउन, 1992) है जो कि *होमो इरेक्टस* के समरूप है।

डेनिसोवा होमिनिन्स

डेनिसोवा होमिनिन्स अथवा *डेनिसोवांस,* होमो जाति के आद्य मानव की विलुप्त या उपप्रजाति है। मार्च 2010 में वैज्ञानिकों ने अल्ताई पर्वतों में स्थित साईबेरिया की डेनिसोवा गुफा से एक किशोर मादा, जो लगभग 41,000 वर्ष पूर्व अस्तित्व में थी, की उंगली की हड्डी के टुकड़े की खोज की घोषणा की। यह गुफा निएंन्डरथलों और आधुनिक मानव का भी आवास रही। इस प्रजाति के शारीरिक अवशेषों में सिर्फ उंगली की हड्डी, दो दांत और एक पैर के पंजे की हड्डी मिली है। ये साक्ष्य संकेत देते हैं कि *डेनिसोवा* बहुत शक्तिशाली थे, संभवतः *निएंडरथल* के समान आकार में बड़े थे।

होमो निएंडरथलेन्सिस

निएंडरथल को अक्सर *होमो सेपियंस निएंडरथलेन्सिस* भी कहा जाता है। इनका नाम जर्मनी की एक घाटी निएंडर वैली के नाम पर रख गया है, जहां 1856 में सबसे पहले इनके जीवाश्म प्राप्त हुए। ये यूरोप और एशिया में लगभग 400,000 से 28,000 वर्ष पूर्व जीवित थे। *निएंडरथल* मानव ने विविध प्रकार के औज़ार बनाए जिनमें खुरचनी, भाले की नोक और हाथ की कुल्हाड़ी सम्मिलित हैं। ये झोपड़ियों और गुफाओं में रहते थे, अपने घायलों और बीमारों की देखभाल करते थे और आमतौर पर अपने मृतकों को वस्तुओं के साथ दफनाते थे। इस तरह दफनाना संकेत देता है कि मृत्यु के बाद भी जीवन होता है, इस अवधारणा में उनका विश्वास था। यह आधुनिक मानव की सांकेतिक सोच के लक्षण का पहला साक्ष्य है (रावेन इत्यादि, 2005)।

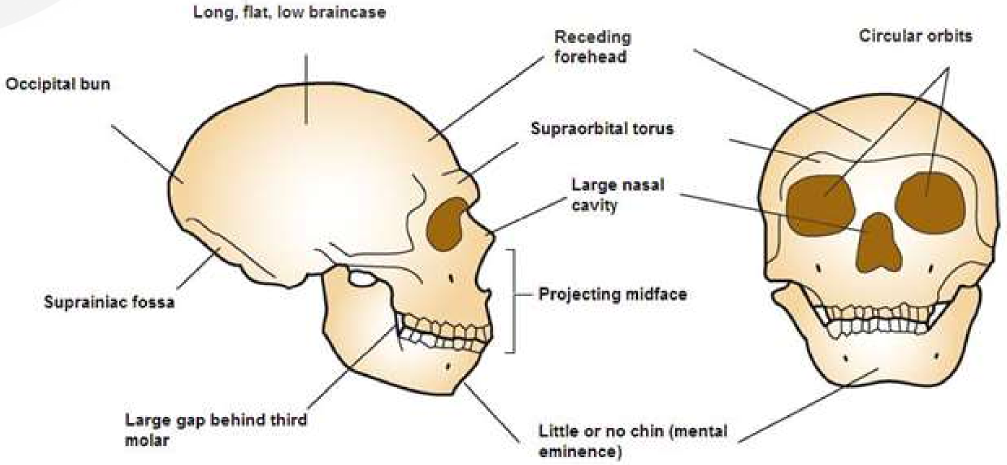

चित्र 2.9: निएंडरथलों की कपालीय शारीरिक रचना

साभार: जेसन पॉटर

स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Neanderthal_cranial_anatomy.jpg

हालांकि, आधुनिक मानव और निएंन्डरथलों की जनसंख्या के बीच कई शारीरिक भिन्नताएं हैं। निएंडरथलों की ठंड को सहन करने की क्षमता श्रेष्ठतर थी, उनके मस्तिष्क उल्लेखनीय रूप से बड़े, तथा उनकी दृष्टि बेहतर और वे शारीरिक रूप से श्रेष्ठतर थे।

निएंडरथल लगभग 38,000 वर्ष पूर्व विलुप्त हो गए थे। हाल ही के दशकों में दो मुख्य सिद्धांत उभरे हैं जिनका फोकस उनके विलोपन पर केंद्रित है। प्रथम सिद्धांत के अनुसार, पश्चिमी यूरोप में भीषण ठंड की वजह से प्रजाति पर अत्यधिक तनाव पड़ा। दूसरे सिद्धांत के अनुसार, आधुनिक मानव जिनके मस्तिष्क बड़े, और जिनका पर्यावरण के प्रति बेहतर अनुकूलन था, से मुकाबले के कारण निएंडरथल जीवित न रह सके और विलुप्त हो गए।

क्रमिक विकास के दौरान मानव बुद्धि के कई लक्षण विकसित हुए जैसे कि सहानुभूति, विलाप, अनुष्ठान तथा प्रतीकों और औज़ारों का प्रयोग। ये लक्षण महान् वानरों (apes) में भी पाए जाते थे लेकिन आधुनिक मानव से कम जटित रूप में, जैसे कि महान् वानरों की भाषा। *होमो सेपियंस* में पूर्ण रूप से समझने और एक दूसरे से संवाद करने की क्षमता विकसित थी। मानव बोध का क्रमिक विकास मानव मस्तिष्क, बातचीत और भाषा की उत्पत्ति के क्रमिक विकास से करीब से सम्बंधित है। आधुनिक मानव और निएंडरथलों की कंठिका की हड्डियों में लगातार गिरावट आई जिसके कारण भिन्न प्रकार की ध्वनियों का निर्माण हुआ। बुद्धिमत्ता और बोलने की क्षमता साथ-साथ विकसित होती हैं। ज्ञान के लिहाज से बुद्धिमत्ता सबसे उन्नत रचना है जो हमारी बुद्धि में यंत्रस्थ है। वास्तव में अधिकतर मानवशास्त्री इस बात से सहमति रखते हैं कि 'ग्रेट लीप फॉरवर्ड', जिसका आरंभ मानव अस्तित्व के आधुनिक युग में हुआ, होने का कारण पूर्ण संज्ञानात्मक विकास था जिसने जटिल भाषा को संभव बनाया।

होमो सेपियन्स

होमो सेपियन्स यानी 'बुद्धिमान मानव' वह प्रजाति है जिससे आधुनिक मानव संबधित है। *होमो सेपियन्स* 40,000 वर्षों पूर्व से अस्तित्व में हैं। इन्हें क्रो-मैग्नॉन मानव भी कहते हैं, जिसका नाम फ्रांस की एक घाटी के नाम पर रखा गया है जहां पर उनके जीवाश्म सर्वप्रथम 1868 में खोजे गए। क्रो-मैग्नॉन मानव का सामाजिक संगठन जटिल था और धारणा है कि उनकी भाषा क्षमता परिपूर्ण थी। वह शिकार करके जीवन बिताते थे। इसके साथ ही वे विस्तारित मस्तिष्क (***इंट्राक्रेनियल***) की बढ़ी हुई क्षमता और पत्थर के औज़ारों की तकनीकी का ज्ञान और प्रयोग द्वारा चिह्नित किए जाते हैं और यही सबूत हैं *होमो इरेक्टस* से *होमो सेपियन्स* में संक्रमण का।

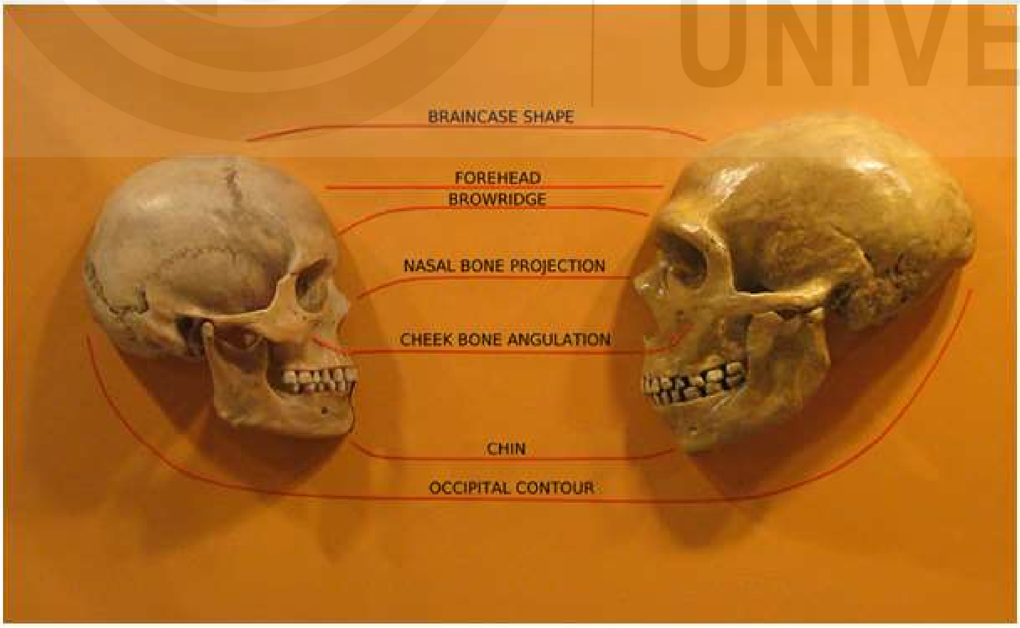

चित्र 2.10: होमो सेपियन्स (बांए) और होमो निएंडरथल (दांए) के मध्य कपाल की शारीरिक रचना की तुलना (क्लीवलेंड म्यूज़ियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री)

साभार: hairymuseummatt, KaterBegemot (https://www.flickr.com/photos/hmnh/3033749380/)

स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Sapiens_neanderthal_comparison_en.png

प्रारंभिक *होमो सेपियन्स* स्थायी जीवनशैली के अतिरिक्त शिकार और भोजन एकत्रीकरण पर जीवन निर्वाह के लिए निर्भर थे। वे बड़ी गुफाओं या तम्बुओं में रहते थे और गुफाओं में नक्काशी, चित्रकारी और अन्य प्रकार के कलात्मक क्रियाकलापों में भी संलग्न रहते थे। उनके पास बड़ी संख्या में औज़ार और शिकार करने के विविध हथियार मौजूद थे।

बोध प्रश्न-2

1) कौन-कौन सी विशेषताएं मानव को वानर से भिन्न करती हैं ?

....

....

....

....

....

2) द्विपादिता से आप क्या समझते हैं ?

....

....

....

....

....

3) होमो प्रजाति को अन्य होमिनिड जीवाश्म से क्या भिन्न करता है?

....

....

....

....

....

4) खाली स्थान भरें:

क) सबसे अच्छी तरह से संरक्षित *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* प्रतिरूप का उपनाम .... है। इस जीवाश्म की खोज .... में पुरामानव वैज्ञानिक (Paleoanthropologist) .... ने की।

ख) शब्द *'होमो सेपियन्स'* का अर्थ है ....।

ग) .... शब्द का मतलब है 'सीधी आकृति वाला मानव'।

घ) प्रथम *होमो हेबिलिस* जीवाश्म की खोज मैरी लीके और लुई के नेतृत्व में एक दल ने 1960 के दशक में .... नामक स्थान पर की गई।

2.6 सारांश

जैविक क्रमिक विकास एक बहुत जटिल घटना है जिसका अध्ययन अनेक विद्वान यूनानी काल से करते आए हैं। लैमार्क, लायल, मैंडल और माल्थस के अनेक महत्वपूर्ण सैद्धांतिक योगदानों ने व्यापक रूप से स्वीकृत डार्विन के सिद्धांत के विकास में योगदान दिया। फिशर, राइट और हाल्डेन ने अपनी 'सिंथेटिक थ्योरी ऑफ इवोल्युशन' में इसे पुनः परिष्कृत किया। प्राकृतिक चयन और जीन की विरासत का सम्मिश्रण क्रमिक विकास के कारकों के तौर पर इन सिद्धान्तों को चिह्नित करता है। मानव की उत्पत्ति को स्थापित करने के लिए इन घटनाओं का अन्य शारीरिक मानव विज्ञान के सबूतों के साथ उपयोग किया गया। जीवाश्म की प्राप्ति एक ऐसा सबूत था जो अब तक मानव विकास के क्रमिक चरणों का पता लगाने में सबसे कारगर साबित हुआ है। पुरामानव वैज्ञानिकों ने जीवाश्म की खोज की और उन्हें तुलनात्मक शारीरिक रचना द्वारा वर्गीकृत किया। वानर और मानव को जीवाश्म की मदद से पूर्वज के रूप में स्थापित किया गया है। मानव विकास की यात्रा प्राइमेटस से शुरू हुई और वानर में विकसित हुई। जलवायु परिस्थितियों में परिवर्तन की वजह से खुली भूमि की तरफ बेहतर अनुकूलन क्षमता का विकास हुआ और इसी वजह से मानव का सीधे खड़े होकर दो पैरों पर चलना संभव हो पाया। आगे चलकर मानव के सबसे निकटतम पूर्वज का जन्म हुआ जो दो पैरों पर चलते थे। ड्रायोपिथिकस से *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* तथा उससे *होमो सेपियन्स* तक आधुनिक मानव कुछ 40,000 वर्ष पहले क्रमिक विकास की प्रकिया द्वारा विकसित हुए। यह प्रकिया अब से 60 लाख वर्षों से 40,000 वर्ष पहले घटित हुई।

2.7 शब्दावली

द्विपादिता : सीधे दो पैरों पर चलने की प्रक्रिया

जीवाश्म : पृथ्वी पर जीवित रहने वाले अति प्राचीन जीवों के परिरक्षित अवशेष या उनके द्वारा चट्टानों में छोड़ी गई छापें जो पृथ्वी की सतहों या चट्टानों की परतों में सुरक्षित पाई जाती हैं। मानव जीवाश्म मुख्य रूप से कंकाल और दांत के रूप में पाये जाते हैं।

उत्परिवर्तन (mutation) : किसी जीन के डी. एन. ए. में कोई स्थायी परिवर्तन होना।

पुरामानव वैज्ञानिक : वह विशेषज्ञ जो पुरातत्व की शाखा के माध्यम से वर्तमान मानव प्रजातियों के मूल और पूर्ववर्ती मानव का अध्ययन करते हैं। जीवाश्म और अन्य अवशेशों के उपयोग से यह अध्ययन किया जाता है।

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 2.2 देखें

2) उप-भाग 2.3.1 देखें

3) उप-भाग 2.3.2 देखें

4) क) चिरघातांकी, अंकगणितीय दर

 ख) लैमार्क

 ग) प्राकृतिक चयन

5) उप-भाग 2.3.2 और उप-भाग 2.3.3 की तुलना करें (उपभाग 2.3.3 ध्यान से देखें)

बोध प्रश्न-2

1) भाग 2.4 और उप-भाग 2.4.1 से 2.4.4 देखें

2) उप-भाग 2.4.1 देखें

3) उप-भाग 2.5.2 देखें

4) क) लूसी, डोनाल्ड जोहानसन, इथियोपिया में हदर

 ख) बुद्धिमान मानव

 ग) *होमो इरेक्टस*

 घ) तंजानिया, पूर्व अफ्रीका में ओल्डुवाई गॉर्ज

2.9 संदर्भ ग्रंथ

ब्राउन, पी. (1992). 'रीसन्ट ह्यूमन इवोल्युशन इन ईस्ट एशिया एंड ऑस्ट्रेलिया'. *फ़िलॉसॉफ़िकल ट्रान्ज़ेक्शन्स ऑफ द रॉयल सोसायटी ऑफ लंदन. बी, 337* (1280): 235-242.

हॉल, बी. एवं *एम. डब्ल्यू. बरजर.* (2008). *बरजर्स इवोलुशन.* (जोन्ज़ एवं बार्टलेट लर्निंग).

क्रॉजे, जे., फू, क्यू, गुड, जे. एम., वीओला, बी., शुनकोव, *एम. वी., डेरेवीआनको, पी.,* एवं पाबौ, एस. (2010). 'द कम्प्लीट माइटोकॉन्ड्रियल डी एन ए जीनोम ऑफ एन अन्नोन होमिनिन, फ्रांम सदर्न साइबेरिया'. *नेचर*. *464* (7290), 894.

रेफर्टी, जे. *पी. 2008. 'गिगन्टोपिथेकस'. एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका.*

रेवन, *पी. एच., जॉनसन, जी.* बी., लॉसोस, जे. बी. एवं सिंगर, एस. आर. (2005). *बायोलॉजी.* सातवाँ संस्करण. नई दिल्लीः टाटा मेक्ग्रॉ हिल पब्लिशिंग कंपनी लिमिटिड.

रीफ, डब्ल्यू. ई., जन्कर, टी., एवं हाब्फेल्ड, यू. (2000). 'द सिन्थेटिक थ्योरी ऑफ इवोल्यूशनः जनरल प्रॉब्लम्स एंड द जर्मन कान्ट्रीब्यूशन टू द सिन्थेसिस'. *थ्योरी इन बाओसाइन्सेज़.* 119 (1), 41-91.

स्पेन्सर, *एच.* (1862). *फ़र्स्ट प्रिन्सपल्स.*, मेक्मास्टर यूनिवर्सिटी ऑर्काइव फॉर द हिस्ट्री ऑफ इकोनोमिक थॉट.

स्मिथसोनियन नेशनल म्यूज़ियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री. 28 अगस्त 2017 को एक्सेस किया. https://www.si.edu/

स्टोन, लिंडा, लरक्विन, पॉल एफ. एवं कावाली-एसफोरज़ा., एल. लूका. (2006). *जीन्ज़, कॅल्चर एंड ह्यूमन इवोल्युशनः ए सिन्थेसिस.* न्यूयॉर्कः विली ब्लैकवेल.

पी डी एफ:

हाउ ह्यूमन्स इवॉल्वड

www.mhhe.com/biosci/genbio/raven6b/graphics/raven06b/other/raven06b_23.pdf

https://www.britannica.com/animal/Gigantopithecus

https://www.jstor.org/stable/pdf/4330635.pdf?refreqid=search%3A57645ec65070a67f12177cb266930cc7

https://www.jstor.org/stable/pdf/192425.pdf?refreqid=search%3A1c2eb48887010d229bb6ab4511e283e5

https://www.jstor.org/stable/pdf/24931324.pdf?refreqid=search%3Aec37a33d68c0038dbf95a1537f171fc0

https://www.jstor.org/stable/pdf/2742808.pdf?refreqid=search%3Ad44a9ef7270a9ad75f42b6c72cd2472a

https://en.wikipedia.org/wiki/Human_evolution

2.10 शैक्षणिक वीडियो

ऑरिजिन्स ऑफ ह्यूमन्स
https://www.youtube.com/watch?v=SUfujVWcj5I

द निएंडरथल्स: फर्स्ट पीपल्स ऑफ यूरोप
https://www.youtube.com/watch?v=FbAptAnrwN8

न्यू ह्यूमन एन्सेस्टर डिस्कवर्ड: होमो नलेडी
https://www.youtube.com/watch?v=oxgnlSbYLSc

ऐप टू मैन: एवोल्यूषन डॉक्यूमेन्ट्री
https://www.youtube.com/watch?v=5sMqFivWTmk

इकाई 3 पुरापाषाण और मध्यपाषाण संस्कृतियाँ*

इकाई की रूपरेखा

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 पुरापाषाण संस्कृतियाँ

3.3.1 पुरापाषाण समाज में लिंग आधारित श्रम विभाजन पर दृष्टिपात

3.3.2 निम्न पुरापाषाण संस्कृतियाँ

3.3.3 मध्य पुरापाषाण संस्कृतियाँ

3.3.4 उत्तर पुरापाषाण संस्कृतियाँ

3.3.5 कलात्मक अभिव्यक्तियाँ

3.4 मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

3.4.1 पर्यावरण संबंधी बदलाव

3.4.2 सूक्ष्मपाषाण औज़ार

3.4.3 जीवन निर्वाह का तरीका और सामाजिक जटिलता

3.4.4 यूरोप में मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

3.4.5 स्कैंडिनेविया और ब्रिटेन में मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

3.4.6 दक्षिण पश्चिम एशिया में मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

3.5 सारांश

3.6 शब्दावली

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.8 संदर्भ ग्रंथ

3.9 शैक्षणिक वीडियो

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

3.1 उद्देश्य

इस इकाई में **पुरापाषाण** और **मध्यपाषाण** संस्कृतियों को विश्व परिप्रेक्ष में देखा गया है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपः

- पुरापाषाण और मध्यपाषाण का अर्थ समझ सकेंगे,
- इस काल की औज़ार तकनीकी को पहचान पाएँगे,
- इस काल से जुड़े स्थानों से संबधित उपयुक्त उदाहरण देने में सक्षम होंगे,
- इस काल के सांस्कृतिक स्वरूपों की विशेषताएँ बता सकेंगे, और
- विकास की प्रक्रिया के रूप में पुरापाषाण और मध्यपाषाण काल की संस्कृतियों का विवरण दे सकेंगे।

3.2 प्रस्तावना

मनुष्यों के क्रमिक विकास की गाथा उनके सांस्कृतिक विकास से जुड़ी है। ब्रिटिश

* डॉ. शतरूपा भट्टाचार्य, लेडी श्रीराम कालेज फॉर वुमन, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

पुरातत्वशास्त्री इयान होडर (2016) के अनुसार, औज़ार निर्माण और अन्य भौतिक संस्कृतियों के साथ मानव संबंध उनके जैविक और संज्ञानात्मक विकासमूलक परिवर्तनों में योगदान देते हैं। इसी प्रकार, विलियम आंद्रेफस्की जूनियर (2009) कहते हैं कि पाषाण तकनीकियों और उनके बनाने के तरीके, उत्पादन, पुनः प्रयोग और त्याग देने की प्रक्रिया, हमें घुमंतु समाजों की ग्राह्य रणनीतियों के बारे में बताते हैं। अक्सर, पत्थर के औज़ार प्रागैतिहासिक मानव के जीवन पर प्रकाश डालने वाले एकमात्र पुरावशेष हैं जो समय की अनिश्चिताओं के सामने टिक पाये। प्रारंभिक पुरावशेषों के महत्व को समझने के लिए, दुनिया भर में अस्तित्व में आई सभ्यताओं के विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक स्वरूपों, औज़ार संस्कृति से लेकर कला रूपों की चर्चा इस इकाई में की गयी है, हालांकि यहाँ चर्चा का केन्द्र यूरोप और पश्चिम एशिया है।

प्रारंभिक मानव की कहानी उनके उन कार्यकलापों से जुड़ी है जिसके सहारे उन्होंने अपने परिवेश को बदलना और पर्यावरण के साथ संपर्क बनाना शुरू किया। जिन्दा रहने और औज़ार निर्माण की योग्यता ने प्रारंभिक सांस्कृतिक परिवर्तनों को दिशा दी। जैसा कि इस पाठ्यक्रम की **इकाई 2** (मानव का जैविक विकास) में आपने देखा कि *होमो* प्रजाति 25 लाख साल पहले प्रकट हुई और इसके साथ ही पत्थर के औज़ार भी प्रारंभ हुए। औज़ारों को मानव-निर्मित वस्तुओं के रूप में पहचाना गया है जिनका इस्तेमाल शारीरिक श्रम करने में होता था। औज़ार सांस्कृतिक परिवर्तनों के सबसे महत्वपूर्ण साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। **फलक** तकनीक (flaking: एक बड़े पत्थर को छील कर छोटे टुकड़ों में बदलना) के सहारे औज़ारों को एक विशेष आकार दिया जाता था ताकि विभिन्न कार्यों में इसका इस्तेमाल किया जा सके। औज़ारों के आकार और इस्तेमाल की विशिष्टताओं ने विभिन्न संस्कृतियों के महत्वपूर्ण आपसी अंतरों को जन्म दिया। इसके अतिरिक्त, ग्राह्य क्षमता उत्तरजीविता का एक महत्वपूर्ण तरीका था। जिसने प्रारंभिक मानव के प्रसार और विकास को सुनिश्चित किया। मानव की कहानी शिकार और भोजन संग्रहण के लिए सरल औज़ार बनाने और इसके साथ होने वाले उन असंख्य परिवर्तनों से शुरू होती है, जिन्होंने मानवता के इतिहास को बदलकर रख दिया।

इतिहासकार, मानवविज्ञानी, पुरातत्त्वविदों और भौतिकविदों ने मानव के सांस्कृतिक विकास को समझने और समझाने के लिए कई सिद्धांत प्रस्तावित किये हैं (*हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमैनिटीज़,* भाग 1, 1996)। उदाहारण के लिए, सी.जे. थॉम्सन ने, प्रागैतिहासिक संस्कृतियों के तीन-स्तरीय वर्गीकरण का सुझाव दिया, जो निम्नलिखित हैंः

क) प्रारंभिक पुरापाषाण काल खाद्य-संग्रहण के चरण का प्रतिनिधित्व करता है,

ख) उत्तर पुरापाषाण काल संगठित शिकार और चुनिन्दा संग्रहण के चरण के रूप में सामने आता है, और

ग) नवपाषाण काल खाद्य उत्पादन का चरण है।

दूसरी तरफ, एस. नीलसन ने जंगली, शिकारी या ख़ानाबदोश, कृषक और सभ्यता के चरणों के आधार पर विकास के चार चरणों को प्रतिपादित किया है। एडवर्ड टेलर के अनुसार, मनुष्यों में सामान्य बुद्धि और तर्कसंगत व्यवहार था जिसने उनके सांस्कृतिक विकास को दिशा दी। उन्होंने मनुष्यों के सांस्कृतिक विकास के तीन चरणों का उल्लेख किया हैः क्रूरता, बर्बरता, और सभ्यता। अमेरिकी मानवशास्त्री, लुईस एच. मॉर्गन (*हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमैनिटी,* भाग 1, 1996) का मानना है कि मानव का सामाजिक विकास पर्यावरण संबंधी तनावों के अनुसार खुद को ढालने की उनकी क्षमता में निहित है। इस आधार पर उन्होंने विकास को सात चरणों में वर्गीकृत किया है, जो बर्बरता के निम्नतम चरण से शुरू होकर सामान्य खाद्य-संग्रहाक चरण से होते हुए सभ्यता के चरण को उस समय प्राप्त करता है जब समाज में लेखन कला का विकास होता है।

3.3 पुरापाषाण संस्कृतियाँ

'Palaeolithic' शब्द दो यूनानी शब्दों से बना हैः *palaios* का अर्थ 'पुराना' और *lithos* का अर्थ 'पत्थर' है और इसका उपयोग '**पुरापाषाण काल**' को इंगित करने के लिए किया जाता है। यह शब्द 1865 में पुरातत्त्ववेत्ता जॉन लब्बॉक द्वारा चलन में लाया गया और इसका प्रयोग लगभग 25 लाख वर्ष पहले प्रागैतिहासिक काल के लिए किया जाता था जब मनुष्यों ने पत्थर के औज़ार बनाने शुरू किए।

होमो हैबिलिस से *होमो सेपियन्स* तक मानव के विकास की एक लंबी प्रक्रिया है, जिसे आपने जैविक परिवर्तनों से सम्बंधित **इकाई 2** में सीखा। विकास को प्रभावित करने वाले परिवर्तन सिर्फ जैविक नहीं वरन् सांस्कृतिक भी थे। प्रारंभिक मनुष्यों के विकास में सांस्कृतिक परिवर्तनों की भी एक प्रमुख भूमिका थी। इस संदर्भ में जब हम सांस्कृतिक परिवर्तनों का जिक्र करते हैं, तो हम न केवल पत्थर के औज़ारों का निर्माण और उनके सामयिक विकास का, बल्कि पर्यावरण के बदलाव और संसाधनों की उपलब्धता का जिक्र भी करते हैं जिसमें शिकार की रणनीतियाँ, संचार के तरीके, आग को नियंत्रित करने, औज़ार बनाने और संशोधित करने की क्षमता, निर्वाह के स्वरूप, शवाधान के तरीके, चित्रकला आदि शामिल हैं।

औज़ारों के उत्पादन का उनकी उपयोगिता से निकट का रिश्ता है। यह अधिकतर उस काल की निर्वाह रणनीति से जुड़ा होता है। शोधार्थियों के लिए यह बहस का मुद्दा रहा है कि किस हद तक शिकार अर्थव्यवस्था का आधार था। क्या हम शुरुआती मानव को शिकारी या शिकारी-संग्रहकर्ता के रूप में या संग्रहकर्ता के रूप में पहचान सकते हैं? और क्या हम औज़ारों के साथ-साथ जीवाश्म रिकॉर्ड के मामले में पाए गए सबूतों के आधार पर इन संस्कृतियों में श्रम के लिंग आधारित विभाजन के बारे में बात कर सकते हैं?

3.3.1 पुरापाषाण समाज में लिंग आधारित श्रम विभाजन पर दृष्टिपात

बहुत लंबे समय तक 'शिकार की परिकल्पना' सबसे स्वीकार्य सिद्धांत था जिसके अनुसार शिकार जीवन जीने का एक तरीका था और इसे पुरुष प्रधान गतिविधि के रूप में समझा जाता था। शिकार को सर्वप्रमुख आर्थिक प्रयास के रूप में चित्रित किया गया था और यह माना जाता था कि भोजन की व्यवस्था करना और उसे आपस में बांटने पर पुरुषों का नियंत्रण था। ऐसा माना जाता था कि पुरुष नेता और 'प्रभारी' होते थे और महिलाओं और बच्चों पर नियंत्रण रखते थे। यह माना जाता था कि महिलाओं का उत्तरदायित्व, उनकी प्रजनन क्षमताओं के कारण, मातृत्व कार्यों और देखभाल करने तक सीमित था और जिनकी गतिविधियां आधार क्षेत्र के अन्दर ही सीमित थीं।

दूसरी तरफ, पुरुषों पर शिकार करने और भोजन उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी थी – एक संगोष्ठी में रिचर्ड बी. ली और आई. देवोर (1968) ने 'मैन द हंटर' की अवधारणा के साथ शुरुआत की और बाद में यही उनकी पुस्तक का शीर्षक बना। नैन्सी टैनर, ए. जिह्लमैन (1978) और अन्य विद्वानों ने लैंगिक ध्रुवीकरण पर आधारित इन सिद्धांतों की कड़ी आलोचना की और प्रागैतिहासिक समाजों में लिंग आधारित श्रम विभाजन की धारणा का खंडन किया। उनका मानना था कि शिकार केवल अवसरवादी जरुरत था। उनके अनुसार, अजीर्ण औज़ारों और उनके कार्यों से पता चलता है कि शिकार शुरुआती मानव की मुख्य आर्थिक गतिविधि नहीं थी, बल्कि वे संग्रहकर्ता थे। ये विद्वान इस धारणा पर सवाल करते हैं कि क्या सभी महिलायें माँ थीं? और तर्क देते हैं कि प्रसव आधारित श्रम विभाजन की धारणा भ्रामक है। कई मानववैज्ञानिक अध्ययनों से पता चलता है कि महिलाओं ने शुरुआती समय में औज़ार निर्माताओं के रूप में काम किया था। उदाहरण के लिए, नारीवादी पुरातत्वविदों में अग्रणी जोआन गेरो (कैथ्रीन डब्ल्यू आर्थर, 2010 में उद्धृत) का तर्क है कि प्रागैतिहासिक महिलायें

अवश्य ही औज़ार-निर्माता रही होंगी क्योंकि उन्हें कई तरह के कार्यों को करने के लिए फलक औज़ारों की आवश्यकता होती थी। मानवविज्ञान के अध्ययनों से पता चलता है कि अधिकतर संग्राहक समाजों में महिलायें खाद्य उत्पादन प्रक्रियाओं के एक बड़े हिस्से में अपना योगदान देती थीं। इसके अलावा, कई समाजों में महिलायें, अकेले अथवा पुरुषों के साथ, शिकार पर निकल जाती थीं। एक प्रकार से प्रागैतिहासिक समाजों में संग्रहण लिंग आधारित श्रम विभाजन को चुनौती देता है।

इन विद्वानों के तर्कों को आगे बढ़ाने के लिए संग्रहण परिकल्पना दी गई जिसके अनुसार प्रागैतिहासिक काल में पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं ने एक केन्द्रीय भूमिका निभाई थी। यह सिद्धांत बताता है कि महिलाओं ने पेड़-पौधों से प्राप्त भोजन के संग्रहण और प्रक्रमण के लिए औज़ारों का उपयोग किया। वे तर्क देते हैं कि संग्रहण भी एक महत्वपूर्ण गतिविधि थी और इसे कम उत्पादक 'महिलाओं के काम' या कम उत्पादक काम के रूप में पेश नहीं किया जा सकता। हालांकि, यह परिकल्पना शुरुआती समाजों में लिंग आधारित श्रम विभाजन की उपस्थिति को स्वीकार करती है। ए. जिह्लमैन (1978) जैसे विद्वानों का मानना है कि मानव जीवन का तरीका श्रम के लिंग विभाजन पर आधारित नहीं था, बल्कि एक ऐसी प्रणाली पर आधारित था जहां पुरुष और महिलाएं एक शिकारकर्ता के रूप में व्यवहारिक लोचकता के साथ एकत्रण और शिकार कार्य में संलग्न होते थे जो प्रारंभिक मानव (होमिनिडों) के अस्तित्व का प्रमुख कारक था। एक तरह से प्रारंभिक समाज के अस्तित्व के लिए दोनों का योगदान समान रूप से जरुरी था।

3.3.2 निम्न पुरापाषाण संस्कृतियाँ

पुरापाषाण संस्कृति को औज़ारों की प्रगति, सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों, बसावट के पटैर्न तथा अन्य मानदंडों के आधार पर तीन कालों में बांटा गया है। यह निम्न पाषाण संस्कृति से शुरू होती है जिसके बारे में हम इस उप-भाग में चर्चा करेंगे।

ब्रायन फेगन (2014) चार मानदंडों की चर्चा करते हैं जिसके आधार पर 'मानव' को परिभाषित किया जाता है। पहला, मस्तिष्क का आकार जो 600 घन सेंटीमीटर से अधिक होना चाहिए। दूसरा, भाषा की समझ, जिसे मस्तिष्क के अन्दर पाये गए पैटर्न्स के आधार पर पहचाना जा सकता है। तीसरा, एक मानव की तरह सटीक पकड़ और मुड़ सकने वाला अंगूठा। और चौथा, औज़ार निर्माण की क्षमता।

प्रागैतिहासिक काल के वो पहले 'मानव' कौन थे जिन्होंने औज़ार निर्माण सीखा यह अब तक एक पहेली है। इस मामले में 25 लाख साल पहले मनुष्यों की एक प्रजाति जिन्हें *ऑस्ट्रैलोपिथिकस गर्ही* कहा जाता है, एक दिलचस्प खोज है। इस प्रजाति के मस्तिष्क का आकार प्रारंभिक मनुष्यों का एक तिहाई था और वो वानर की तरह दिखते थे। लेकिन *आस्ट्रैलोपिथिकस गर्ही* के जीवाश्मों के पास पाए गए हिरण और चिकारा की हड्डियों पर पत्थर के औज़ारों के प्रहार के निशान पाए गए। लेकिन ऐसा कोई औज़ार अभी तक नहीं मिला है जिसे प्राथमिक औज़ार निर्माता की पहचान के पुख्ता सबूत की तरह इस्तेमाल किया जा सके। हालांकि, इस बात के कुछ सबूत मिले हैं जो इस बात की ओर इशारा करते हैं कि प्रारंभिक मनुष्य प्रजातियाँ मांसाहारी थीं और उन्होंने पत्थर के कुछ औज़ारों का उपयोग सीख लिया था जिसने मानव विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

25 लाख साल पुराने *होमो हैबिलिस* द्वारा निर्मित औज़ार पाए गए हैं जो साधारण और अपरिष्कृत थे। उनके साथ जुड़ी तकनीक को ओल्डोवान टूल तकनीकी कहा जाता है, जिसका नाम तंजानिया में ओल्डुवाई गॉर्ज के नाम पर रखा गया है, जहां यह औज़ार पहली बार खोजे गए थे। काटने वाला गंडासा सबसे शुरुआती औज़ार माना जाता है। ये आमतौर

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

पर प्रहार विधि (यानी एक वस्तु का दूसरे पर प्रहार) द्वारा बनाए जाते थे, आमतौर पर लावा के छोटे पत्थरों को आपस में टकराया जाता था। इस प्रकार उत्पादित फलक (खंडित पत्थर के छोटे, पतले टुकड़े) लंबे और तेज होते थे जिनका इस्तेमाल खुरचने और काटने वाले औज़ार बनाने के लिए किया जाता था जिनसे लकड़ी, पौधों, त्वचा और मांस को काटा या खुरचा जाता था।

निकोलस टोथ (*हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमैनिटी*, 1996) ने तर्क दिया है कि प्रथम औज़ार निर्माताओं को औज़ार की क्षमता, साथ ही औज़ार तकनीकी की यांत्रिकी की स्पष्ट समझ थी। औज़ार बनाने के लिए हाथों और आँखों में एक अच्छे समन्वय की आवश्यकता तथा एक औज़ार को आकार देने के लिए पत्थरों में तीव्र कोणों को पहचानने और मानसिक प्रसंस्करण की क्षमता होनी चाहिए। इस प्रकार पत्थर में आकार और किनारों से यह पहचानना संभव हो जाता है कि इसे प्रारंभिक मानव द्वारा एक औज़ार के रूप में तैयार किया गया था। डी. स्ट्रॉउट (2011) ने दर्शाया है कि ओल्डोवान औज़ार जैसी सरल शिल्पकृति में भी एक जटिल विधि शामिल थी जिसमें कच्चे माल का सावधानीपूर्वक चयन किया जाता था, इसके बाद फलक उत्पादन और फिर फलक का पृथक्करण किया जाता था। इसके बाद, प्रहार विधि के इस्तेमाल से औज़ारों का उत्पादन किया जाता था।

चित्र 3.1: पत्थर का गंडासा ओल्डोवान
साभारः जोसे-मैनुअल बेनिटो अलवारेज, 2007
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/a/a7/Oldowan_tradition_ chopper.jpg

ओल्डोवान तकनीक ही औज़ार बनाने की एकमात्र ऐसी तकनीक थी जो 10 लाख साल से ज्यादा चलन में रही। 'नैपिंग' शब्द फलकों को कोर से हटाने और 'डेबिटेज' शब्द अपशिष्ट पदार्थों के लिए इस्तेमाल किया गया है। सबसे पुराना कोर सरल एकध्रुवीय (एकल) कोर था जिसमें से एक या दो फ्लेक्स हटा दिए गए थे। बाद के प्रारंभिक मानव अधिक जटिल लेवलोइस तकनीक का इस्तेमाल करने लगे जिसमें पूर्वनिर्धारित आकार और माप के फलक को हटाया जा सकता था। सबसे शुरुआती कोर को आमतौर पर गुटिका-औज़ार (pebble-tool) कहा जाता था।

औज़ार उपयोग पर हाल के शोध से पता चलता है कि ओल्डोवान औज़ार शिकार के लिए नहीं थे और पौधों और जानवरों को काटने या छीलने में उपयोगी थे। वे ज्यादातर शवों के

प्रक्रमण, खाल उतारने, जोड़ों और मांस खोलने, और हड्डियों को खोलने के लिए तोड़ने के लिए इस्तेमाल किए जाते थे। ओल्डोवाई जॉर्ज और कूबी फोरा (उत्तरी केन्या में झील तुर्काना के नजदीक) दोनों स्थानों पर बड़ी संख्या में जानवरों की हड्डियों और औज़ारों को एक साथ एक छोटे से क्षेत्र में केंद्रित पाया गया है। अन्य परभक्षियों की उपस्थिति के साथ, इस चरण में आग या पालतू जानवरों की खोज की अनुपस्थिति और उन स्थानों पर औज़ारों के साथ-साथ जानवरों की हड्डियों का पाया जाना इस बात की ओर इशारा करता है कि प्रारंभिक होमिनिड्स अक्सर मांस के लिए अवसरवादी संग्रहण पर निर्भर करते थे और यदा-कदा मांस की खोज में घूमते थे।

स्टीवन मिथेन (1995) का मानना है कि प्रारंभिक मनुष्यों की संज्ञानात्मक या सीखने और समझने की क्षमता महत्वपूर्ण थी। यह उनके आसपास के वातावरण को समझने में मदद करती थी। इन परिवर्तनों के साथ सामाजिक बुद्धि भी विकसित हुई होगी, जिसे निर्वाह पैटर्न, औज़ार बनाने आदि के संदर्भ में देखा जा सकता है। मानवविज्ञानी रॉबिन डनबर (फेगन, 2014 में उद्धृत) ने तर्क दिया है कि *होमो हैबिलिस* अवश्य ही समूहों में रहते होंगे, क्योंकि यह उत्तरजीवी रहने की एक आवश्यक रणनीति थी। जी. क्लार्क (फेगन, 2014 में उद्धृत) सुझाव देते हैं कि उन्होंने शायद समर्थित शाखाओं के साथ पत्थर की संरचना द्वारा किसी प्रकार का आश्रय बनाया होगा। संचार कौशल इस अवधि से जुड़ा एक और विकास है। वे संवाद करने के लिए अवश्य ही गुर्राहट और इशारों का उपयोग करते होंगे। दूसरों के साथ बातचीत करने की क्षमता ने अन्य जटिल सामाजिक बातचीत के लिए मार्ग प्रशस्त किया होगा, जिसने उनकी संज्ञानात्मक क्षमताओं की वृद्धि में योगदान दिया होगा।

होमो इरेक्टस का आना सिर्फ जैविक परिवर्तनों से नहीं बल्कि औज़ार तकनीक में हुए महत्वपूर्ण परिवर्तनों से भी जुड़ा है। ये शुरुआती मनुष्य एश्युलियन औज़ार प्रौद्योगिकी से जुड़े थे, जिसका नाम फ्रांस के सेंट एश्युल स्थान के नाम पर रखा गया है। इस तकनीक में दोधारी औज़ार शामिल थे जिसमें दोनों पक्षों पर फ्लेकिंग (flaking) की गई थी और ये औज़ार अधिक नुकीले और बेहतर थे। वे बहुउद्देश्यीय औज़ार थे, जिनका उपयोग लकड़ी के काम करने, खाल निकालने के साथ-साथ जानवरों को काटने के लिए भी किया जाता था। इसके साथ ही हस्त-कुल्हाड़ी और क्लीवर या मांस काटने वाले बड़े चाकू जैसे औज़ार पहली बार सामने आते हैं और बहुत उपयोगी साबित होते होंगे क्योंकि उन्हें कई बार तेज किया जा सकता था। पशुओं की चीरफाड़ करने और बड़े पशुओं के शिकार के साक्ष्य बॉक्सग्रोव (वेस्ट ससेक्स, इंग्लैंड), और एम्ब्रोना और टोर्रल्बा (मध्य स्पेन) जैसी जगहों पर पाए गए हैं। एम्ब्रोना और टोर्रल्बा में, अपरिष्कृत हस्त-कुल्हाड़ी, बड़े चाकू, खुरचनी और काटने के औज़ार भी पाए गए हैं। साक्ष्य इंगित करते हैं कि हाथी, गैंडा, जंगली भैंसा, हिरण आदि जैसे बड़े जानवरों को इन जगहों में काटा गया था। कई विद्वानों का मानना है कि ये स्थान सूझबूझ के साथ योजनाबद्ध परिष्कृत शिकार का प्रतिनिधित्व करते हैं।

फलक (Flakes)

- फलकों को दो समूहों में वर्गीकृत किया जाता हैः उप-उत्पाद और साभिप्राय फ्लेकिंग।
- फ्लेक्स का उत्पादन औज़ारों से काम करने के परिणामस्वरूप हो सकता है और ये फलक मलबे का हिस्सा होते हैं।
- क्लेक्टोनियन, लेवालोइस और मोस्तारियन जैसे तरीकों से साभिप्राय फलकों का उत्पादन किया जा सकता है, जिसका विवरण इस भाग में आगे किया गया है।

चित्र 3.2: एक एश्युलियन हस्त-कुल्हाड़ी के विभिन्न पक्ष. फ्रांस के हॉट-गारोन से प्राप्त, 500,000 और 300,000 बी पी
साभार: डिडिएर देस्कौएन्स, 2010
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/8/87/Biface_Cintegabelle_MHNT_PRE_2009.0.201.1_V2.jpg

एश्युलियन तकनीक का सबसे विशिष्ट औज़ार हस्त-कुल्हाड़ी, एक आँसू की बूंद के आकार का औज़ार था। औज़ार प्रौद्योगिकी में नवोंमेषों के आधार पर, एश्युलियन तकनीक को प्रारंभिक और बाद के चरण में विभाजित किया जा सकता है। ब्लैंक (blank) नामक बड़े फलकों का उत्पादन, जो हस्त-कुल्हाड़ी को आकार देने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त था, इस चरण में प्रारंभिक एश्युलियन तकनीक का एक महत्वपूर्ण नया प्रयोग था, हालांकि हस्त-कुल्हाड़ी इस चरण का एक छोटा और सुडौल औज़ार था। *होमो इरेक्टस* बेहतर शिकारी थे और हस्त-कुल्हाड़ी का उपयोग प्रक्षेप्य (projectile) के रूप में कर सकते थे। इस प्रकार, हस्त-कुल्हाड़ी को एक औज़ार के साथ-साथ एक हथियार के रूप में भी इस्तेमाल किया जा सकता था। दूसरा महत्वपूर्ण औज़ार क्लीवर (cleaver; मांस काटने वाला बड़ा चाकू) था, जो एक छोर पर सीधे कटे किनारों वाला एक बड़ा फलक था। इन औज़ारों का पुनः उपयोग किया जा सकता था, इन्हें पुनः तेज किया जा सकता था और एक फलक औज़ार के रूप में इनका पुनर्नवीनीकरण किया जा सकता था। इन औज़ारों के उत्पादन के लिए पत्थरों के अलावा लकड़ी, बारहसिंगे के सींग और हड्डियों का इस्तेमाल भी किया जाता था। आहार में मांस के शामिल होने से अन्य सामाजिक परिवर्तन भी हुए जैसे समूह का गठन और पृथक औज़ार किट का निर्माण। खुरचनी, क्लीवर, सतह-खुरचनी, बोला (bola) पत्थर और अन्य सरल लेकिन कुशल औज़ार उत्पादित किए गए।

चित्र 3.3: क्लैक्टोनियन हस्त-कुल्हाड़ी, लगभग 350,000 बी सी ई तथा रिकसन फार्म के गड्ढ़ों से उत्खनित, यूनाइटेड किंगडम
साभार: बेल्लरोथ, 2010
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/6/6e/Hand-axe-Clactonian.JPG

एश्युलियन प्रौद्योगिकी के बाद के चरण में, उद्यत कोर (core) तकनीक का उपयोग करके औज़ारों का उत्पादन किया जाने लगा, यानी, पहले कोर को तराशा जाता था और उसके बाद वांछित औज़ार का उत्पादन करने के लिए फलक का उत्पादन किया जाता था। क्लैक्टोनियन (clectonian) तकनीक निम्न पुरापाषाण तकनीक से जुड़ा एक विशिष्ट पाषाण संयोजन है जिसका नामकरण क्लेक्टन-ऑन-सी (एसेक्स, इंग्लैंड) नामक स्थान के आधार पर किया गया है। हेनरी ब्रुइल के वर्गीकरण के अनुसार (ओहेल, 1978 में उद्धृत) ये औज़ार बड़े, चौड़े और मोटे फलकों से ब्लाक-ऑन-ब्लाक (खंड-दर-खंड) पद्धति द्वारा निर्मित थे। इन्हें एश्युलियन औज़ारों से अलग माना जाता था। हालांकि, आजकल कई विद्वान जैसे ओहेल और अन्य विद्वान क्लैक्टोनियन तकनीक को एक अलग औज़ार प्रौद्योगिकी के रूप में नहीं बल्कि फ्लेकिंग प्रक्रिया के ही एक हिस्से के रूप में देखते हैं। इस विधि को कभी-कभी हस्त-कुल्हाड़ी रहित निम्न पुरापाषाणिक औज़ार संस्कृति के रूप में भी समझा जाता है। कई विद्वान इस विधि को लेवालोईस (Levallois) तकनीक के अग्रदूत के रूप में भी मानते हैं।

होमो इरेक्टस अफ्रीका से बाहर निकलने वाला पहला समूह था जिससे उनकी अपने को परिस्थितियों के अनुकूल ढाल लेने की क्षमता फिर से प्रतिबिंबित होती है। वे पूर्वी अफ्रीका में सवाना से जावा, उत्तरी अफ्रीका, यूरोप, एशिया इत्यादि की दुर्गम जलवायु के अनुसार खुद को ढाल सकते थे। वे आग को नियंत्रित करने की क्षमता से भी वाकिफ़ थे। दक्षिण अफ्रीका की वंडरवर्क गुफा से 18 लाख वर्ष पहले की भट्ठी की तरह की व्यवस्था के सबसे पुराने सबूतों की खोज की गई है। स्वार्तक्रान (दक्षिण अफ्रीका) और चेसोवान्या (रिफ्ट वैली, केन्या) जैसी अन्य जगहें भी राख और हड्डी के टुकड़ों के साथ नियंत्रित आग के लगातार उपयोग को दर्शाती हैं। इसी तरह, इज़राइल में गेशर बेनोट-यागोव में 790,000 साल पहले की जली हुई लकड़ी और बीज के प्रमाण मिलते हैं। बीजिंग, चीन की झोउकौडियन गुफाओं में, 400,000 साल पहले के लकड़ी के कोयले, जले हुए हड्डी के टुकड़े और भट्ठी में राख संचय का प्रमाण इंगित करता है कि होमिनिड्स आग का उपयोग करते थे। उन्होंने क्वार्ट्ज से फलक बनाना भी सीख लिया था। वे गंड़ासे, खुरचनी, सुआ और अन्य कलाकृतियों का निर्माण भी करते थे।

निम्न पुरापाषाण काल का जीवन निर्वाह शिकार, संमार्जन (scavenging) के साथ-साथ पौधों द्वारा भोजन को इकट्ठा करने पर आधारित था। वे शायद अब मौसम की बेहतर समझ रखते थे। वे बड़े झुंड में रहते थे और कभी-कभी जब प्रचुर मात्रा में शाकाहारी खाद्य सामग्री उपलब्ध होती थी तो वे छोटे झुंडों में भी रहते थे। यह उनकी सामाजिक प्रज्ञता और लचीलेपन को प्रतिबिंबित करता है। उनके पास एक पूर्ण विकसित ब्रोका क्षेत्र (आमतौर पर होमिनिड मस्तिष्क के बाईं तरफ का अधिक प्रबल क्षेत्र जो वाक शक्ति या बातचीत करने की क्षमता से जुड़ा है) था। इसलिए, इस सबूत के आधार पर यह अनुमान लगाया जाता है कि होमिनिड्स में स्पष्ट वाक् क्षमता रही होगी। इशारों और गुर्राहटों के सहारे संचार के अलावा भाषा के विकास ने मस्तिष्क के विकास को प्रोत्साहन दिया।

निम्न पुरापाषाण संस्कृति सरल ओल्डोवान औज़ारों को अधिक जटिल एश्युलियन औज़ारों में बदलने की विकासवादी प्रक्रियाओं को प्रतिबिंबित करती है। परिवर्तनों को जीवन निर्वाह के पैटर्न, आग पर नियंत्रण, समूह संरचना और भाषा के अनुकूलन के संदर्भ में देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न-1

1) निम्न पुरापाषाण काल की जीवन निर्वाह रणनीतियों पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

2) ओल्डोवान औज़ार तकनीकी पर एक संक्षिप्त नोट लिखिए।

....

....

....

....

....

3) *होमो इरेक्टस* से जुड़े सांस्कृतिक परिवर्तन क्या हैं?

....

....

....

....

....

3.3.3 मध्य पुरापाषाण संस्कृतियाँ

मध्य पुरापाषाण काल (लगभग 78,000 से 128,000 साल पूर्व) एक नई औज़ार तकनीकी, जीवन निर्वाह रणनीति के नए रूपों के साथ-साथ होमिनिड्स की दूसरी प्रजाति, निएंडरथलों से संबंधित था। निएंडरथल एक विशिष्ट औज़ार किट यानि मौस्तारी औज़ारों से जुड़े थे। मौस्तारी औज़ार दो प्रमुख तरीकों से बने थेः लेवालोइस (Lavallois) विधि और डिस्क कोर (disc core) तकनीक। इस तकनीक में, कोर को तराशा जाता है और फिर पूर्व निर्धारित आकार और प्रकार के फलक काटे जाते हैं। इस प्रकार, औज़ार बहुत तेज और साथ ही आकार में छोटे होते हैं। कोर धीरे-धीरे छोटा होता जाता है और समतल चकली (Flat disk) का उपयोग नोक बनाने और खुरचनी के लिए किया जा सकता है।

लेवालोइस तकनीक को छंटनी करने की विधि के रूप में समझा जाता है जो बड़े फलकों, आमतौर पर आकार में अंडाकार और तीव्र-कोण वाले, तेज़, उपयोगी किनारों को बनाने के लिए किया जाता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इस विधि का उपयोग कोर से हटाने से पहले अंतिम उत्पाद के आकार को पूर्व निर्धारित करने के लिए किया जाता था। इस विधि का इस्तेमाल विभिन्न प्रकार के फलकों, जैसे कि उप-गोलाकार फलक, ब्लेड, ब्लेड-जैसे फलकों इत्यादि के उत्पादन के लिए किया जाता था।

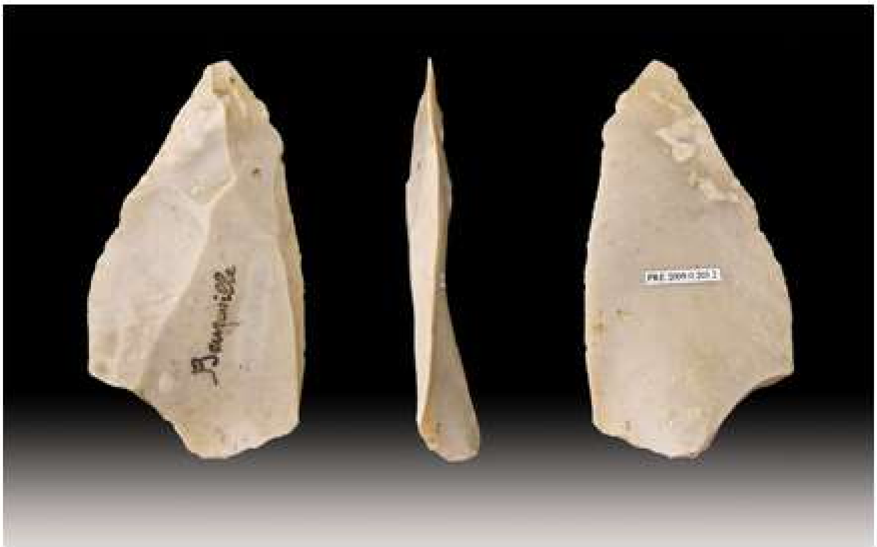

चित्र 3.4: फ्रांस के ब्यूजविले में पाया गया लेवालोइस नोकधार औज़ार
साभार: डिडिएर देस्कौएन्स, 2010
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/c/cf/Pointe_levallois_Beuzeville_MHNT_PRE.2009.0.203.2.fond.jpg

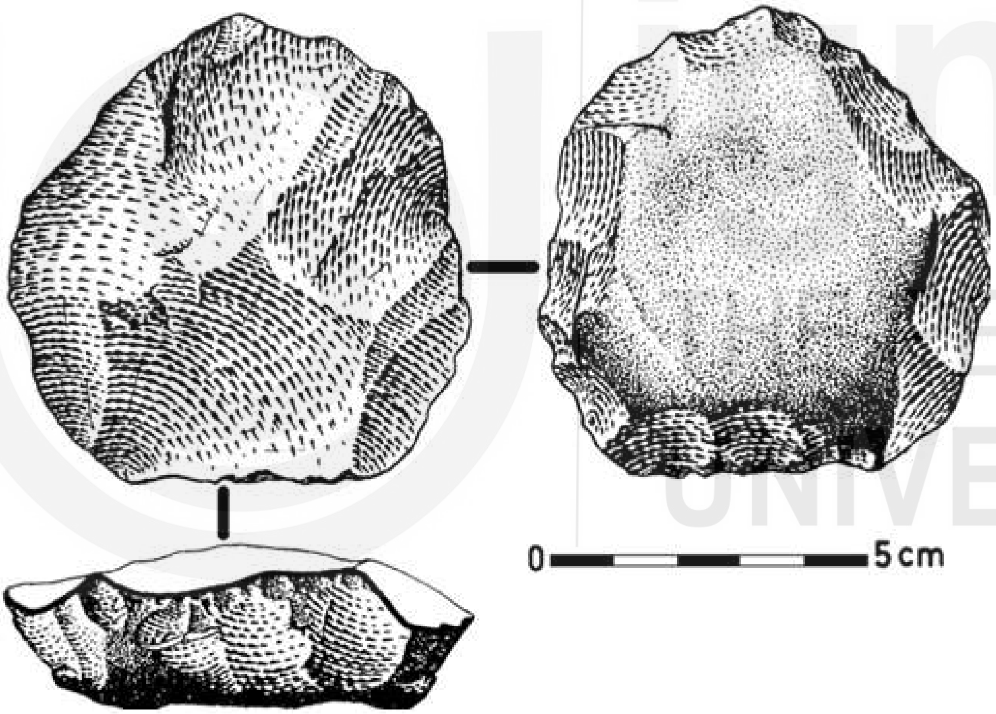

चित्र 3.5: लेवालोइस तकनीक
साभार: जोस-मैन्युअल बेनीरो अलवारेज
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Levallois-Nucleo_reiterativo.png

इस अवधि तक संयुक्त औज़ारों का उत्पादन किया जाने लगा था। मौस्तारी औज़ारों में सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता दिखाई देती है, जिसका नाम ले मौस्तार (दक्षिणपश्चिम फ्रांस) के नाम पर रखा गया है। ये ज्यादातर फलक औज़ार थे, जिनमें सबसे आम औज़ार खुरचनी, तक्षणी और भाले की नोक, हस्त-कुल्हाड़ी के अलावा, नुकीले फलक थे जिनका इस्तेमाल मांस को अलग करने के लिए किया जाता था। उदाहरण के लिए, एक भाला, नोक और डंठल को एक साथ जोड़कर बनाया गया था। इसने निएंडरथलों को एक बेहतर शिकारी बना दिया। मौस्तारी तकनीक में बड़ी विविधता है जो विद्वानों के बीच बहस का विषय रहा है। पी. बोर्डिस (1961) के अनुसार, इन भिन्नताओं में अलग-अलग समयाविधि, और परिवर्तनीय जलवायु या मौसम परिलक्षित होते हैं। लुईस और सैली बिनफोर्ड (1966) का मानना है कि

औज़ारों की परिवर्तनशीलता निएंडरथलों द्वारा किए गए विभिन्न कार्यों का प्रतिनिधित्व करती है, जो अभी तक अस्पष्ट हैं। पत्थर की नोक वाली भाला जैसी कलाकृतियाँ बहुउद्देशीय नहीं थीं, बल्कि इनका इस्तेमाल विशिष्ट उद्देश्यों के लिए किया जाता था।

निएंडरथलों ने मौसमी दौरों द्वारा एक बड़े क्षेत्र पर अपना दख़ल जमा लिया था जहाँ वे हर वर्ष वापस आते थे। वे अपने स्थानीय पर्यावरण को अच्छी तरह से जानते थे और तदनुसार प्रवासन की योजना बनाते थे। वे गुफाओं और चट्टानों के नीचे आश्रय लेते थे। वे अच्छे शिकारी थे और विशाल जानवरों जैसे मैमथ (हाथियों की एक विलुप्त प्रजाति), हिरण, पक्षियों के अलावा जंगली घोड़ों और मछलियों का शिकार करते थे।

निएंडरथलों से जुड़ी एक और महत्वपूर्ण जटिलता उनकी धार्मिक मान्यतायें थीं। कई विद्वानों का मानना है कि निएंडरथल अपने मृतकों को दफनाते थे। चट्टानों और गुफाओं के साथ-साथ खुली जगहों में भी कब्रें पाई गई हैं। एकल कब्र अधिक आम थीं और इसमें चकमक पत्थर (flint) के औज़ार और खाद्य/मांस भी दफ़न थे। इस तरह की कब्रें इराक के ज़ाग्रोस पहाड़ों की शनीदार गुफाओं में पाई गई हैं। फ्रांस में एक और स्थल ला चैपल-ऑक्स सेंट्स है जहाँ ऐसी कब्रों के सबूत मिलते हैं जहां मृतक, छाती पर जंगली-भैंसे के पैर, हड्डी के औज़ारों और अन्य मलबों के साथ दफनाये गए हैं। कई विद्वानों का मानना है कि ऐसा परिस्थितिवश हुआ और ये जानबूझकर दफन नहीं किये गए हैं। फ्रांस में ले आइज़ियों में एक चट्टान आश्रय ला फेरासी में दो वयस्कों और चार बच्चों को एक शिविर में एक साथ दफनाये जाने के सबूत मिलते हैं। फेगन (2014) का कहना है कि हालांकि निएंडरथल अपने मृतकों को दफनाते थे लेकिन मृत्युपरान्त जीवन की अवधारणा के साथ इसे जोड़ना संदेहात्मक है।

मध्य पुरापाषाण काल में न केवल बेहतर औज़ार और जटिल शिकार रणनीतियों के संदर्भ में बल्कि सामाजिक और पर्यावरणीय अनुकूली रणनीतियों के संदर्भ में भी बदलाव आया। इसके अलावा हमारे पास दफन की प्रथाओं के संदर्भ में कुछ अनुष्ठानों के सबूत मिलते हैं जो प्रारंभिक मनुष्यों को अन्य जानवरों से अलग करते हैं।

बोध प्रश्न-2

1) आप निम्न और मध्य पुरापाषाण संस्कृतियों में कैसे अंतर करेंगे?

....

....

....

....

....

....

2) निएंडरथल और उनकी संस्कृति पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

....

3.3.4 उत्तर पुरापाषाण संस्कृतियाँ

अभी तक ज्ञात पूर्ण विकसित मानव प्रजाति क्रो-मेगनॉन है जिसका नामकरण दक्षिण पश्चिम फ्रांस के ले आइजियों के शैलाश्रय के नाम पर किया गया है। वे दक्षिण पश्चिम और मध्य यूरोप में 40,000 वर्ष पूर्व आकर बसे थे और 35,000-40,000 वर्ष पूर्व दक्षिण पश्चिम फ्रांस में प्रविष्ट हुए। उत्तर पुरापाषाण काल की औज़ार तकनीकी ब्लेड तकनीकी के रूप में जानी जाती है। क्रो-मेगनॉन द्वारा पैने लम्बे समानान्तर सहायक रिक्त स्थानों का निर्माण किया गया जिनका प्रयोग अन्य कार्यों के अतिरिक्त शिकार, चीर-फाड़ करने, त्वचा के प्रक्रमण (processing), लकड़ी के काम अथवा वस्त्र उत्पादन आदि विभिन्न प्रकार के क्रियाकलापों के लिए विस्तृत श्रेणी की कलाकृतियों के निर्माण में किया जाता था। ब्लेड के औज़ार उपयोगी औज़ार थे जैसे खुरचनी, सुआ, चाकू, छिद्रित सुई वाले तक्षण, आदि। औज़ार हड्डियों, पत्थरों तथा हाथीदांत के भी बने होते थे। चकमक, चर्ट (chert) अथवा लावा कांच (obsidian) का प्रयोग आमतौर पर औज़ारों के उत्पादन में किया जाता था। उन्होंने तक्षणी, जो कि एक उत्कीर्णक (engraving) औज़ार था तथा जिसने बाहरसिंगों के सींगों और हड्डियों पर कार्य की दक्षता में योगदान दिया, का परिशोधन किया। हड्डियों तथा बारहसिंगों के सींगों से औज़ार बनाने की तकनीक खांचा और खपच्ची (groove and splinter) तकनीकी के नाम से जानी जाती थी।

इस काल की अर्थव्यवस्था संग्रहण तथा आखेटक की थी, जिसमें मछली पकड़ना भी शामिल था। पश्चिम तथा मध्य यूरोप के क्रो-मेगनॉनों ने अधिक विस्तृत तथा परिष्कृत आखेटक सभ्यता का विकास किया। ये सभ्यतायें न केवल औज़ारों के अर्थ में भिन्न थीं, बल्कि सामाजिक तथा धार्मिक जीवन के संदर्भ में भी इनमें भिन्नता थी। इन क्षेत्रों के क्रो-मेगनॉनों ने नदी घाटियों की ओर प्रवास किया। उन्होंने पेड़-पौधों से खाद्य पदार्थ संग्रहण के अतिरिक्त बड़े जानवरों, बल्कि छोटे जानवरों, जैसे खरगोश, भेड़िये, पक्षियों, इत्यादि का भी शिकार किया। जैसा कि फेगन वर्णित करते हैं कि वे ज्यादातर छोटे समूहों में रहते थे तथा जीवन निर्वाह के लिए विभिन्न पशुओं के शिकार तथा संग्रहित खाद्य पदार्थों पर निर्भर थे तथा पुनः वे बसंत, गर्मी तथा प्रारम्भिक पतझड़ के मौसम में बड़े समूह में एकत्रित हो जाते थे जब रेंडियर प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते थे। जाड़े के मौसम में वे फिर छोटे-छोटे समूहों में विभिन्न दिशाओं में बिखर जाते थे।

कुछ उत्तर पुरापाषाण संस्कृतियाँ

उत्तर पुरापाषाण काल की प्रमुख संस्कृतियों में से एक **चेटेलपरोनियन संस्कृति** है जो पश्चिमी यूरोप में प्रभावशाली थी और लगभग 35,000-30,000 बी पी में फली-फूली। यह संस्कृति ब्लेड बनाने के लिए जानी जाती है। सबसे आम औज़ारों में तक्षणी फ़लक-खुरचनी, चाकू, छेनी इत्यादि के अलावा, दांतेदार औज़ार (पत्थर के औज़ार जिनमें एक या अधिक किनारे होते हैं), नोकदार औज़ार (points) थे। इस संस्कृति का विशिष्ट औज़ार एक ब्लेड से बना हुआ चेटेलपरोनियन चाकू था, जिसका एक किनारा धारदार, जबकि दूसरा किनारा घुमावदार या कुंद था। इस संस्कृति के लोगों ने हड्डी के औज़ार भी बनाए। उनकी आवास संरचनायें बहुत अच्छी तरह से व्यवस्थित थीं। अधिकांशतः आवास कैल्सरस ब्लॉक (यानी अधिक कैल्शियम कार्बोनेट युक्त मिट्टी) के साथ गोलाकार होते थे, जो सिगड़ी (hearth) के आसपास स्तम्भ-छिद्र या जमीन पर गड़े हुए विशाल गजदंत के साथ बनाये जाते थे।

इस अवधि की एक और महत्वपूर्ण संस्कृति **पत्तीरूपी नोक संस्कृति** (Leaf-shaped Point Culture) है। यह संस्कृति ब्रिटेन और रूस में कुछ स्थानों पर पहले की संस्कृतियों के समकालीन ही थी। चेटेलपरोनियनों की तरह, इस संस्कृति के लोगों ने भी चाकू बनाये थे लेकिन वे एक पर्ण या पत्ते के आकार के थे, जिसके आधार पर इस संस्कृति का नामकरण

हुआ। इस संस्कृति की एक महत्वपूर्ण बस्ती ले-कॉटे, फ्रांस में है। इस संस्कृति को महत्वपूर्ण माना जाता था क्योंकि इसका विकास मध्य यूरोप में ग्रेवेटियन स्थलों (उत्तर पुरापाषाण के अंतिम पुरातात्विक उद्योग) के गठन के कारण हुआ था।

हालांकि, ग्रेवेटियन संस्कृति से पहले **ऑरिग्नेसिअन संस्कृति** थी जिसका काल निर्धारण पश्चिम एशिया में लगभग 40,000 बी पी में किया जा सकता है। यह क्रो-मैगनॉन मानवों की संस्कृति मानी जाती है। इस औज़ार संस्कृति को चोंचदार तक्षणी, चपटी पेंदी वाली खुरचनी, और छोर खुरचनी के अलावा हड्डी के औज़ारों की कई किस्मों के द्वारा दर्शाया जाता है। इस संस्कृति में छिद्रित दांतों के अलावा पेंडेंट (pendent), हाथीदांत के बने मनके, बूंद के आकार के पेंडेंट और अंगूठियों जैसे गहनों के साक्ष्य भी मिलते हैं। इसके अलावा, हाथीदांत से बनी चीजों के साक्ष्य स्वैबियन जुरा, जर्मनी की गुफाओं में पाए गए हैं जहां आमतौर पर जानवरों को गोलाकार रूप में चित्रित किया गया है। अन्य जगहों पर भी चट्टानों के नीचे बने आश्रय तथा इनमें जानवरों और मनुष्यों का प्रतिनिधित्व करने वाली नक्काशी के नमूने पाए गए हैं। ले-आइज़ीज़, डॉर्डोग्न, फ्रांस में एक क्रो-मैगनॉन आश्रय में एक सामूहिक कब्र भी पाई गई है।

27,000-22,000 बी पी के बीच, **ग्रेवेटियन संस्कृति** को बारीक़ या महीन ब्लेडों के लिए जाना जाता है, जिसे ग्रेवेटियन नोक (points) कहा जाता है। वे कांटों और चपटी पत्ती के आकार वाले बर्छी का भी इस्तेमाल करते थे। कलछी, कुदाली (picks), कुल्हाड़ी (picke) जैसे अन्य औज़ारों का इस्तेमाल आवास संरचनाओं के निर्माण के लिए किया जाता था। वे हड्डियों और बारहसिंघे के सींग दोनों का इस्तेमाल औज़ार बनाने के लिए कच्चे माल के रूप में करते थे। गोलाकार आवास क्रबों और मूर्तियों के निर्माण से सम्बंधित खुले इलाकों के साथ पाए गए हैं। यह दर्शाता है कि ये स्थायी आवास रहे होंगे जिनमें प्राकृतिक आश्रय और खुले मैदान शामिल थे।

ग्रेवेटियन विशेष रूप से 'वीनस मूर्तियों' के लिए जाने जाते थे। ये व्यापक नितम्बों, लटके हुए स्तनों और बड़े कूल्हों वाली महिलाओं की मूर्तियां थीं। हाथ-पैर अधिकतर टूटे हुए थे, और इन मूर्तियों के चेहरों में कोई विशेषताएं नहीं थीं। डोलनी वेस्टोनिस, मोराविया, चेक गणराज्य में मूर्तियों को नरम पत्थरों, हाथीदांत या टेराकोटा से बनाया जाता था। मोराविया के साथ-साथ यूक्रेन में स्त्रियों की मूर्तियों के अलावा, गैंडा, मैमोथ (विशालकाय हाथियों की प्राचीन प्रजाति) आदि जानवरों की मूर्तियां भी पाई गईं हैं। ऐसा माना जाता है कि ये मूर्तियां सांस्कृतिक या धार्मिक प्रथाओं के लिए उपयोग में लाई जाती थीं।

लगभग 20,000-15,000 बी पी की **सोल्यूट्रियन संस्कृति** ज्यादातर फ्रांस और स्पेन में पाई जाती है, जो संभवतः अपने से पहले की ग्रेवेटियन संस्कृति का विस्तार थी। इस संस्कृति ने हड्डियों से विभिन्न प्रकार की नोकों (points), कांटें (barbs), सुईयों, छेद वाली सुइयों का उत्पादन किया। उनकी अर्द्धगोलाकार आवासीय संरचनाएं थीं और यहां गुफा चित्रों और नक्काशी के सबूत भी मिलते हैं। सोल्यूट्रियन बस्तियों के ब्लॉक्स पर की गई नक्काशी तुंदिल, छोटे पैरों वाले जानवरों का प्रतिनिधित्व करती है। इस संस्कृति का जल्द ही पराभव हो गया और इसने पश्चिम यूरोप में मेग्दालेनियन संस्कृति के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

मेग्दालेनियन संस्कृति को कालानुक्रम में लगभग 18,000-8,000 बी पी निर्धारित किया जा सकता है। यह संस्कृति जटिल बस्तियों के निर्माण के लिए जानी जाती है। इस संस्कृति के लोगों ने भी संयुक्त औज़ार जैसे **सूक्ष्मपाषाण प्रक्षेप्य** (projectile), धनुष, कांटेदार बर्छी और लघु ब्लेड (bladelets) बनाना सीख लिया था। यह संस्कृति अपनी कलात्मक उपलब्धियों, विशेष रूप से गुफा कला के लिए भी जानी जाती है, जिस पर अगले उप-भाग में चर्चा की गई है।

लेकिन इससे पहले कि हम उस पर जाएं, यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि अब तक उत्तर

पुरापाषाण काल औज़ारों, आवास संरचनाओं, शिकार रणनीतियों आदि के संदर्भ में क्षेत्रीय विविधताओं द्वारा पहचाना गया। अब हम उत्तर पुरापाषाण संस्कृतियों के विकास को उनकी कलात्मक सक्रियता द्वारा चिह्नित कर बारी-बारी से समझेंगे।

3.3.5 कलात्मक अभिव्यक्तियां

48,000 साल पहले यूरोपियों ने गुफा की दीवारों पर चित्र बनाने के अलावा मनके, पेंडेंट (pendants), छिद्रित दांत, इत्यादि जैसे गहने बनाने की कला भी सीख ली थी। पूर्व-ऐतिहासिक कला की दो प्रमुख किस्में हैंः विचल (mobilier) और पार्श्विक (parietal)। गतिशील वस्तुओं पर निष्पादित सजावट या कला कार्य या जिसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जा सकता है उसे विचल कला या गृह कला कहा जाता है। गुफा की दीवारों और छत में पाई जाने वाली कला को गुफा कला या पार्श्विक कला कहा जाता है। इसके अलावा, प्रागैतिहासिक कला विभिन्न रूपों जैसे नक्काशी, चित्रकला, उभरी हुई नक्काशी (bas-relief) इत्यादि में नजर आती है और कला के इन सभी रूपों को उत्तर पुरापाषाण कला के रूप में देखा जा सकता है। कलात्मक अभिव्यक्ति का एक अन्य महत्वपूर्ण रूप धारी या रेखाओं द्वारा अलंकरण (flutting) था, जिसमें गुफा की दीवारों पर टेढ़ी-मेढ़ी लकीरों के चिन्ह अंकित होते थे। विद्वानों का मानना था कि ये बच्चों द्वारा बनाए गए थे लेकिन वयस्कों द्वारा समर्थित थे क्योंकि ये दीवारों पर काफी ऊंचाई पर पाए गए हैं। यह माना जाता है कि इन कला रूपों की सादगी के आधार पर इन्हें बच्चों को सौंपा गया था। हालांकि विद्वानों का यह भी मानना है कि इस तरह के कला रूपों के कुछ अनुष्ठानिक उद्देश्य भी हो सकते हैं।

चित्रकला संज्ञानात्मक क्षमता और प्रागैतिहासिक मानव की अधिक भावनात्मक शक्ति को दर्शाती है, जिसके कारण इसे संचार के एक तरीके के रूप में समझा गया था। ऐसा माना जाता था कि वे प्रतीकात्मक अर्थों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिन्हें समझना मुश्किल है। यह एक ही निरंतरता में अपने सामाजिक, आध्यात्मिक और प्राकृतिक संसारों की गहरी समझ का प्रतिनिधित्व करता है (फेगन, 2014)।

पुरापाषाण कला पत्थर, हड्डी, बारहसिंगे के सींग, लकड़ी, मिट्टी, और हाथीदांत पर निष्पादित की जाती थी। कला में 'वीनस मूर्तियों' के चित्रण, पेंडेंट और मनके जैसे गहने और जर्मनी में पाई जाने वाले बांसुरी जैसे संगीत वाद्ययंत्र शामिल हैं। मैग्डालेनियन कांटेदार बर्छी, भालों को अन्य प्राकृतिक नक्काशियों द्वारा भी सजाते थे। स्टीफन मिथेन (1995) का मानना है कि उच्च संज्ञानात्मक क्षमता के दो प्रमुख परिणाम हुए हैं, पहला जटिल सामाजिक संबंध और दृश्य प्रतीकात्मकता और दूसरा विकास, यानी संचार और अभिव्यक्ति के साधन के रूप में कला का विकास।

शैल चित्रण कला

सबसे मशहूर उत्तर पुरापाषाण गुफा कला लस्कॉक्स (दक्षिण पश्चिम फ्रांस), ले कैम्बरेल्स (ले-आइज़िस डे टेयॉक, डॉरडोग्न, फ्रांस), अल्तामीरा (कैंटाब्रिया, स्पेन), और ग्रोत डी शॉवेट, फ्रांस आदि स्थानों पर पाई गई हैं। इन स्थानों की गुफा कला आमतौर पर पशुओं के रूपांकन, मानव आकृतियों, अवताररूपी मानवों (जैसे मानव-पशु रूपों) के चित्रों को दर्शाती है। वे अमूर्त और गैर-प्रकृतिवादी संकेतों का भी प्रतिनिधित्व करते हैं, जिन्हें आमतौर पर तंबूरूप (tectiform) कहा जाता है। इस कला को दीवार पर चित्रित किया गया था या चट्टान की दीवार के प्राकृतिक आकार पर चित्रित किया गया था। नक्काशी और उभार वाले चित्रों (bas-relief) को गुफा के नजदीक और आसपास पाए गए मिट्टी और पत्थर के स्लैब में भी दोहराया गया था। चित्र स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले गेरू, खनिज ऑक्साइड, इत्यादि को पीसकर और जानवरों के खून और मूत्र, पानी आदि जैसी अन्य सामग्रियों के साथ पीसकर तैयार किए गए वर्णक के उपयोग से बनाये जाते थे। चित्र की रूपरेखा तैयार करने के लिए काले, लाल और कभी-कभी पीले रंग के रंगों का मिश्रित या अलग-अलग इस्तेमाल

किया जाता था। फ्रांस के ग्रोट डी शॉवेट में, लगभग 30,000 बी सी ई पुराने तीन सौ से अधिक चित्र पाए गए हैं। भागते हुए जानवरों के सरों का अतिव्यापी (overlapping) चित्रण चित्रकला में गतिशीलता का आभास देते हैं।

लगभग 16,000 बी सी ई पुराने दक्षिण पश्चिम फ्रांस में मैग्डालेनियन स्थलों जैसे लेस्कॉक्स के चित्रों में जंगली घोड़ों, बैलों, रेंडियर और अन्य जानवरों को दर्शाया गया है। इन चित्रों के लिए उपयोग किए जाने वाले रंग खनिजों से प्राप्त किए गए थे और सबसे आम हेमेटाइट, अर्थात लाल रंग था। इसके अलावा, प्राकृतिक या प्रज्वलित मैंगनीज, मिट्टी और चारकोल में मिश्रित रक्त या पशु मज्जा या वसा को भी रंगीन घटकों के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। प्रारंभिक मानव ने अपनी उंगलियों का उपयोग करने के अलावा पंखों, टहनियों और बालों को ब्रश या कूँची के रूप में इस्तेमाल किया। वे ज्यादातर चट्टान की प्राकृतिक सतह पर चित्र बनाते थे। वे आमतौर पर सादा और चिकनी सतह पसंद करते थे, लेकिन यह सतह को चुनने का एकमात्र मानदंड नहीं था क्योंकि वे ऊंचाई पर, छतों पर और गहरी अंदरूनी गुफाओं पर भी चित्र बनाते थे। जानवरों के शरीर को आमतौर पर खाली छोड़ दिया जाता था और चित्र छोटे से लेकर बहुत बड़े आकार के होते थे।

चित्र 3.6: अल्तामीरा गुफाओं की चित्रकला
साभार: मूसियो दे अल्तामीरा वाई डी. रोड्रिगुएज़, 2010
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/8/8b/9_Bisonte_Magdaleniense_polícromo.jpg

विद्वानों के पास इन कला रूपों के पीछे बनाए जाने के उद्देश्य के संबंध में सर्वसम्मतिपूर्ण विचार नहीं हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि ये कला रूप अनुष्ठानिक विश्वास का प्रतिनिधित्व करते हैं। अन्य लोग तर्क देते हैं कि वे सौंदर्य उद्देश्य के लिए बने थे। जबकि कुछ अन्य विद्वान पुरापाषाण गुफाओं की कला को जादू-टोने के साथ जोड़ते हैं। गॉर्डन चाइल्ड जैसे विद्वानों ने तर्क दिया कि ये शौकिया कला नहीं थी, बल्कि इन्हें कलात्मक ढंग से बनाया गया था तथा इन प्रारंभिक समाजों में ऐसे विशेषज्ञ अवश्य रहे होंगे जिन्होंने ऐसी पेंटिंग की हो। इससे सवाल उठता है कि निर्वाह अर्थव्यवस्था पर आधारित इस समाज ने इतनी मुश्किल पहुँच वाली इन गुफाओं में चित्रों को बनाने में समय और ऊर्जा क्यों लगाई। एच. ब्रेउल (फेगन, 2014 में उद्धृत) का मानना है कि आखेटक-संग्राहक समूह इन गुफाओं में अनुष्ठान किया करते थे और इस तरह के कार्य शिकार की सफलता सुनिश्चित करने के लिए थे। वास्तव में, लुईस-विलियम्स और डॉउसन (पालासीओ-पेरेज़, 2013 में उद्धृत) जैसे

कुछ विशेषज्ञों का तर्क है कि गुफा कला शमनवादी (आत्मा आदि में विश्वास वाले) अनुष्ठानों से जुड़ी हुई थी और जानवरों के चित्र शमनों के लिए प्राणियों की आत्मा या जीवन शक्ति की छवियां थीं। इन विचारों के विपरीत, कई विद्वानों का मानना है कि गुफा कला केवल प्रारंभिक मनुष्यों की दुनिया का प्रतिनिधित्व करती है। उन्हें यूको और रोसेनफेल्ड (पालासिओ-पेरेज़, 2013 में उद्धृत) द्वारा टोटेमवाद (totemism) के सहानुभूतिपूर्ण जादू के रूप में भी समझा गया है। इस प्रकार पुरापाषाण कला की व्याख्या शुद्ध सौंदर्यशास्त्र से लेकर कार्यरूपी अथवा उपयोग रूपी के रूप में की गई।

बोध प्रश्न-3

1) यूरोप में उत्तर पुरापाषाण संस्कृतियों पर एक नोट लिखिए।

....

....

....

....

....

2) शैल चित्रण कला का मूल्यांकन कीजिए और बताइये कि यह उत्तर पुरापाषाण काल की जटिलता का प्रतिनिधित्व कैसे करती है।

....

....

....

....

....

3.4 मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

मेसोलिथिक काल शब्द का अर्थ मध्यपाषाण काल है। इसे आमतौर पर नवपाषाण काल की प्रस्तावना के रूप में समझा जाता है। इस अवधि को औज़ारों के आकार में कटौती और असाधारण जलवायु परिवर्तनों के संदर्भ में पहचाना जाता है। इस काल ने हिमयुग का अंत और गर्म अवधि की शुरुआत देखी और फिर बाद का ठंडा चरण भी देखा। गर्म अवधि में समुद्र के स्तर में वृद्धि हुई। तट, मुहाना और झील अत्यधिक उत्पादक और जलीय संसाधन क्षेत्र बन गए, अतः उनका अच्छी तरह से उपयोग किया गया (फेगन, 2014)। इन परिवर्तनों का वनस्पति के साथ-साथ जानवरों पर भी असर पड़ा, उदाहरण के लिए रोएँदार (ऊनी) मैमथ गायब हो गए और हिरण अधिक आम हो गए। भोजन के लिए गिरीदार फल वाले पौधे अधिक प्रचलित हो गए। भोजन में वृद्धि ने जनसंख्या वृद्धि में योगदान दिया होगा।

3.4.1 पर्यावरण संबंधी बदलाव

होलोसीन युग, एक भूगर्भशास्त्रीय विभाजन जो 13,700 बी पी से शुरू हुआ, में पर्यावरण संबंधी बड़े परिवर्तन देखे गए। अस्थिर और परिवर्तनशील जलवायु पुरापाषाण काल के अंत और नए लघु पाषाण औज़ारों, जिसे सूक्ष्मपाषाण कहा जाता है, के शुरुआती काल में देखी जा सकती है, जिसके साथ शिकार रणनीतियों में धनुष और बाण का इस्तेमाल और गहन संग्रहण की प्रक्रिया की शुरुआत हुई (इसकी चर्चा हम इस उप-भाग में करेंगे)। जलवायु शुष्क और बंजर होती जा रही थी और इसके साथ ही इस क्षेत्र में वनस्पतियों और जीवों में बदलाव हो रहे थे। जनसंख्या में भी वृद्धि हुई थी, जिसकी वजह से दो प्रकार के बदलाव

आवश्यक हो गए थे। पहला, औज़ारों के उपयोग में परिवर्तन और दूसरा, उपलब्ध खाद्य संसाधनों के उपयोग में परिवर्तन।

फ्रांस के नजदीक, मा दे'अज़िल की गुफाओं की खोज के साथ मध्यपाषाण काल को एक विशिष्ट सांस्कृतिक काल के रूप में पहचाना जाने लगा। इन जगहों पर उत्तर पुरापाषाण काल के मैग्देनियन औज़ारों की जगह मध्यपाषाण औज़ार पाए गए और इस खोज के साथ यूरोप में एक विशिष्ट चरण की पहचान हुई। मध्यपाषाण काल को अक्सर पुरापाषाण और नवपाषाण काल के बीच की संस्कृति के रूप में परिभाषित किया जाता है।

डी. प्राइस (1991) के अनुसार मध्यपाषाण काल केवल सूक्ष्मपाषाण औज़ारों के उपयोग या वन या तटों के शोषण या कुत्ते को पालतू बनाने से ही नहीं जुड़ा था। इसे कृषि की शुरुआत से पहले की उत्तर हिमनदीय काल के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। क्लार्क यह भी मानते हैं कि मध्यपाषाण काल अनिवार्य रूप से संस्कृति के अंत का उद्घोषक होने की बजाय संस्कृति के विकास में मौलिक परिवर्तनों की प्रस्तावना का काल था।

3.4.2 सूक्ष्मपाषाण औज़ार

इस अवधि से जुड़े औज़ारों को सूक्ष्मपाषाण औज़ार कहा जाता है। ये आकार में छोटे, धारदार और बहुत उपयोगी थे। इस अवधि में बेहतर संयुक्त औज़ारों और हथियारों के संदर्भ में विकास भी देखा गया। सूक्ष्मपाषाण औज़ार आमतौर पर ज्यामितीय रूपों में बनाये जाते थे, जैसे त्रिकोणीय और विषमबाहू आकार के, लेकिन उन्हें चंद्राकार और अन्य गैर ज्यामितीय रूपों में भी बनाया जाता था। इस अवधि में पहले की अवधि की ब्लेड तकनीकी को और संशोधित किया गया था। यह अवधि धनुष और तीरों के उपयोग से भी जुड़ी हुई है, जिसने मध्यपाषाण मानव को बेहतर शिकारी बना दिया होगा। इस अवधि को कलाकृतियों के स्थानीयकरण और नई संस्कृतियों के गठन के आधार पर चिह्नित किया गया है जैसा कि अगले उप-भाग में चर्चा की जाएगी।

चित्र 3.7: सूक्ष्मपाषाण औज़ार
साभार: यॉर्क म्यूज़ियम ट्रस्ट, एली कॉक्स, 2018
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/d/d0/Microlith_%2C_Mesolithic_%28FindID_628327%29.jpg

मछली पकड़ना भी आमतौर पर इस अवधि के दौरान शुरू हुआ था जैसा कि औज़ार किट से देखा जा सकता है जिसमें अब कांटे (barb), बर्छी (harpoon), भाले, इत्यादि शामिल थे जो मछली पकड़ने के विशेष औज़ार थे। औज़ार पत्थर, हड्डी और लकड़ी से बने थे। चाकू, कुल्हाड़ी (axe), भाले, ब्लेड, लकड़ी के तीर जैसे अन्य औज़ार भी इस काल में पाए गए हैं। धारदार ब्लेड जोर से आघात मारने वाली (pressure flaking) तकनीक के द्वारा बनाए गए थे और इस प्रकार औज़ार समानांतर किनारों के साथ संरचना में अधिक सुडौल थे। इस अवधि तक, यूरोप के कुछ हिस्सों में मानव ने सुडौल संरचना वाले प्रक्षेप्य औज़ारों की नोक (points) बनाना सीख लिया था।

3.4.3 जीवन निर्वाह का तरीका और सामाजिक जटिलता

मध्यपाषाण अर्थव्यवस्था शिकार, संग्रहण और मछली पकड़ने पर आधारित थी। मध्यपाषाणकालीन मानव नदी के किनारे अर्द्ध-स्थायी या स्थायी बस्तियों में समूहों में रहते थे। इंग्लैंड में स्टार कैर लगभग 9500 बी पी का एक महत्वपूर्ण मध्यपाषाण स्थल है। इसके प्रमाण मिलते हैं कि इस अवधि तक मनुष्यों ने कुत्ते को पालतू बनाना या उससे मित्रता करना सीख लिया था। हालांकि मध्यपाषाण अर्थव्यवस्था में पिछली उत्तर पुरापाषाण अर्थव्यवस्था से कोई भी विशिष्ट परिवर्तन नहीं दिखाई देता।

फेगन (2014: 292) उल्लेख करते हैं कि मध्यपाषाण काल एक अनिश्चित जलवायु स्थितियों में भोजन एकत्रित करने की रणनीतियों की तीव्रता के साथ आर्थिक और सामाजिक जीवन में व्यापक भिन्नता की अवधि थी। उत्तर पुरापाषाण काल से ही मानव की नई परिस्थितियों में अनुकूलित होने की क्षमता दिखाई देती है। यह मध्यपाषाण काल के दौरान और अधिक प्रासंगिक हो गई। इन रणनीतियों में नए औज़ार शामिल थे जो समुद्री स्तनधारियों, मछली आदि जैसे जलीय संसाधनों का शिकार करने में उपयोगी थे। बिनफोर्ड (फेगन, 2014 में उद्धृत) के अनुसार मध्यपाषाण काल के दौरान मनुष्य मछली की उपलब्धता के कारण नदी घाटी के चारों ओर बस गए। जल संसाधनों की उपलब्धता ने समाजों को एक स्थान पर बसने और जनसंख्या वृद्धि की परिस्थितियों में रह-सकने की कुशलता प्रदान की। दूसरी ओर सी. गैंबल (फेगन, 2014 में उद्धृत) का मानना है कि नदी घाटियों में बदलाव जनसंख्या में वृद्धि का परिणाम था जिससे भोजन की कमी हुई और इसका सामना करने के लिए जलीय संसाधन ही एकमात्र उपाय था। मछली पकड़ने के काम में सघन श्रम लगता था और यह भू-खाद्यानों की तरह पौष्टिक भी नहीं था। डेविड यसनर (फेगन, 2014 में उद्धृत) एक अलग परिप्रेक्ष्य लेते हैं और तर्क देते हैं कि बदलते हुए पर्यावरण, आबादी का दबाव, और खाद्यानों की कमी की वजह से जलीय संसाधनों की तरफ रुख करना प्रारम्भिक मानव के लिए 'सर्वाधिक उपयोगी रणनीति' थी।

3.4.4 यूरोप में मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

यूरोप में मध्यपाषाण काल में जलवायु परिवर्तनों और नए खाद्य संग्रह और शिकार की रणनीतियों के साथ-साथ विभिन्न औज़ार संस्कृतियों में बदलाव के परिणामस्वरूप विभिन्न नई संस्कृतियों का प्रादुर्भाव देखा जा सकता है। एज़िलियन, सॉवेटेरियन, प्रारंभिक टारडेनॉइसेन, एस्च्युरियन और लार्नियन संस्कृतियाँ पश्चिमी यूरोप में सबसे प्रमुख थीं जबकि मैग्लेमोसियन, किचन-मिडन और कैम्पेग्नियन उत्तरी यूरोप में प्रमुख थे। पश्चिमी यूरोप में मध्यपाषाण संस्कृति में घोंघा के महत्व को देखा जा सकता है। समलम्ब (Trapezoidal) लघुपाषाण औज़ार कई स्थलों पर बड़ी संख्या में पाए गए थे (गैबल, 1958)।

लगभग 10,000 बी पी की उत्तरी यूरोपीय संस्कृतियों को धनुष और तीर, कुत्ते को पालतू बनाना, डोंगी (एक संकीर्ण जल-खेवन नाव) का उपयोग और अन्य समुद्री नौकाओं के

अलावा जाल, हुक आदि मछली पकड़ने के औज़ारों से पहचाना जाता है (प्राइस, 1991)। कुल्हाड़ी, सेल्ट (celts; पत्थर से बने लंबे और पतले औज़ार), प्रक्षेप्य (हड्डी, लकड़ी, बारहसिंगों के सींग और पत्थर से बने) जैसे औज़ार उत्तरी यूरोप में लगभग 6000 बी पी में मध्यपाषाण काल के अंत में दिखाई देते हैं। यूरोप, विशेष रूप से उत्तरी यूरोप में, हिमनदीय बर्फ के पिघलने के परिणामस्वरूप समुद्र के स्तर में बदलाव देखा गया। इससे जलीय संसाधनों में वृद्धि हुई जिनका उपयोग इस अवधि के दौरान अच्छी तरह से किया गया।

3.4.5 स्कैंडिनेविया और ब्रिटेन में मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

स्कैंडिनेविया और ब्रिटेन में अच्छी तरह से चिह्नित आबादी का दबाव और स्थायी आवास मध्यपाषाण काल की विशेषता है। तटीय गांवों से समुद्री और वन संसाधनों के शोषण के आधार पर मिश्रित अर्थव्यवस्था के साक्ष्य मिलते हैं। बाद की अवधि में लगभग 4000 बी पी तक मिट्टी के बरतन बनाने की शुरुआत हो गई थी। यहाँ की मध्यपाषाण संस्कृति को तीन कालों में बांटा जा सकता है – मैग्लेमोज, कांगमोस और एर्टेबोले।

मैग्लेमोज संस्कृति (लगभग 9500-7700 बी पी) की विशेषता आखेटक और चारागाही (भोजन की खोज में घूमने वाली) अर्थव्यवस्था के साथ नदी घाटी बस्तियाँ थीं। ज्यादातर बस्तियां ग्रीष्मकालीन झील के किनारे थीं। साक्ष्य समुद्री संसाधनों पर निर्भरता का संकेत देते हैं क्योंकि यहाँ मछलियों की बहुत सी हड्डियाँ पाई गई हैं। इस संस्कृति के लोग ज्यादातर छोटी झोपड़ियों में रहते थे जिनमें कभी-कभी कुछ में फर्श भी उनके द्वारा निर्मित किए गए थे। उदाहरण के लिए, डेनमार्क में उल्केस्ट्रप में छाल और लकड़ी के फर्श के साथ झोपड़ियाँ पाई गई हैं (फेगन, 2014)।

मैग्लेमोज़नों की तरह, कांगमोस संस्कृति (लगभग 7700-6600 बी पी) भी नदी के किनारों के पास विकसित हुई। उत्तर-पश्चिम स्वीडिश तट के पास सेगेब्रो इस संस्कृति का एक प्रमुख स्थल है। इस स्थान की विशेषता विषमकोण नोक वाले तीर हैं। शिकार अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार था। कांगमोस संस्कृति के बाद एर्टेबोले संस्कृति प्रकाश में आई।

एर्टेबोले संस्कृति (लगभग 6600-5300 बी पी) हड्डी, बारहसिंगे के सींग और लकड़ी के औज़ारों के साथ एक विस्तृत औज़ार तकनीक वाली संस्कृति थी। अर्थव्यवस्था शिकार पर आधारित थी। मत्स्य पालन भी एक महत्वपूर्ण गतिविधि थी क्योंकि मछली उनके आहार का एक अभिन्न अंग था। वे कब्रिस्तान में अपने मृतकों को दफन करते थे और कब्र में शरीर को विभिन्न तरीकों से रखते थे। कभी-कभी कुत्ते को भी मानव शरीर के साथ दफनाया जाता था। दफन के तरीके कई प्रकार की सामाजिक भिन्नताओं को दर्शाते हैं। ज़ीलैण्ड (डेनमार्क का सबसे बड़ा द्वीप) और स्कैनिया (स्वीडन का दक्षिणी प्रांत) में पाए गए कब्रिस्तान सामाजिक और आनुष्ठानिक जटिलता में वृद्धि को दर्शाते हैं। दक्षिण स्कैनिया के स्केटहोम में, जहाँ 40 क़ब्रें मिली हैं, कब्रिस्तान की खुदाई में शरीरों को भिन्न तरीकों से लिटाकर दफ़न करने के और कई कब्रों में कुत्तों के साथ दफ़न करने के प्रमाण मिले हैं।

एर्टेबोले संस्कृति के औज़ारों में कुल्हाड़ी, खुरचनी, छिद्रित सींग आदि शामिल हैं। कुछ खाना पकाने के बर्तन भी पाए गए थे। इन स्थलों से मानव द्वारा तटीय और अंतर्देशीय स्थानों पर साल भर स्थायी रूप से बसावट के साक्ष्य भी मिलते हैं। उनके पास निर्वाह के कई आधार थे जिनमें घूरा शैल और पशु अवशेषों के साक्ष्य मिलते हैं।

3.4.6 दक्षिण पश्चिम एशिया में मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

दक्षिण पश्चिम एशिया पौधों और विशेष रूप से जानवरों को पालतू बनाने वाली प्रवृति के विकास को समझने के लिए एक आकर्षक क्षेत्र रहा है। यह वह क्षेत्र है जो खाद्य उत्पादन का प्रथम स्थल बन गया। इसकी शुरुआत मध्यपाषाण काल की मुशाबियान और केबरान

संस्कृति के उद्भव के साथ हुई, जिसके बाद नातुफियान संस्कृति आई। मुशाबियान संस्कृति पूर्वी भूमध्य क्षेत्र में लगभग 14,000-12,800 बी पी के आसपास उभरी। इस संस्कृति की विशेषता ज्यामितीय सूक्ष्मपाषाण औज़ार हैं। केबरान संस्कृति (लगभग 13,500-11,500 बी पी) को कोर से ब्लेड के टुकड़ों (bladelets) को हटाकर औज़ार बनाने वाली संस्कृति के रूप में चिह्नित किया जाता है। ब्लेडलेट्स सूक्ष्मपाषाण औज़ार थे जो 4-7 मिलीमीटर से लेकर विभिन्न आकार के होते थे। अर्थव्यवस्था शिकार और संग्रहण पर आधारित थी। लगभग 13,000 बी पी में, दक्षिण-पश्चिम एशिया ने पर्यावरण और वानस्पतिक परिवर्तनों को देखा। इन स्थलों पर पत्थरों के पीसने वाले औज़ार (नवपाषाण संस्कृति की विशेषता में से एक) जैसे खल्ल और मूसल और अन्य औज़ार भी पाए गए।

नातुफियान संस्कृति, लगभग 12,500-10,200 बी पी, के स्थल लीवेंट से कृषि की शुरुआत के सबूत मिलते हैं। इसलिए इसे मध्यपाषाण और नवपाषाण चरणों के बीच संक्रमण की अवधि के रूप में देखा जाता है। इस संस्कृति को गांवों के साथ एक स्थान पर बसकर रहने वाली जीवन शैली द्वारा चिह्नित किया गया है। इस संस्कृति को सूक्ष्मपाषाण, तक्षणी, परिवेधक, खुरचनी, ब्लेड, चाकू और कुदालों द्वारा परिभाषित किया गया है। बाद में यहाँ तीर की नोकें भी पाई गईं। इसके साथ-साथ, चक्की, मूसल, ओखली और अन्य पत्थर के पीसने वाले औज़ार और पत्थर के पात्र भी पाए गए। मछली के हुक, और जाल के साक्ष्य इस संस्कृति के मानव आहार में मछली के महत्व को दर्शाते हैं। हालांकि, इस संस्कृति के लोग अभी भी शिकारी थे और खाद्य संग्रहण करते थे और सबूत दर्शाते हैं कि वे जानवरों जैसे चिंकारा (gazelle), हिरण, जंगली बकरी इत्यादि का शिकार करते थे।

अन्वेषणों के आधार पर, पुरातत्त्वविद, अन्ना बेलफ़र-कोहेन और ओफर बार-योसफ (1989) का तर्क है कि लीवेंट से प्राप्त साक्ष्य प्रारंभिक नातुफियान संस्कृति में साल भर एक ही स्थान पर बसावट को इंगित करते हैं। उनके अनुसार, यह सांस्कृतिक रूप से एक जटिल शिकारी-संग्राहक समाज था जिसमें आवास, भूमिगत भंडारण, कब्रें, चकमक (flint) कलाकृतियों, तथा पत्थर और हड्डी की कलाकृतियों को देखा जा सकता है। साक्ष्य 'आधार शिविरों' और 'मौसमी शिविरों' के मध्य अंतर दर्शाते हैं (बेलफ़र-कोहेन, 1989: 473-74)। पूर्ण बसावट और अर्द्ध-बसावट के आधार पर बस्तियों में हुए परिवर्तनों ने लीवेंट को भी परिवर्तित किया (बेलफ़र-कोहेन, 1989: 474)।

बोध प्रश्न-4

1) मध्यपाषाण संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषताएं क्या हैं?

....

....

....

....

....

2) मध्यपाषाण काल से जुड़े औज़ारों में प्रयुक्त तकनीकी क्या हैं?

....

....

....

....

3) यूरोप में पाई जाने वाली मध्यपाषाण संस्कृतियों पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

4) संक्रमण काल के रूप में दक्षिण पश्चिम एशिया में नातुफियन संस्कृति के महत्व पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

3.5 सारांश

पुरापाषाण और मध्यपाषाण काल प्रमुख परिवर्तनों का काल था, जिसने मानव समाज की नींव रखी। जैविक परिवर्तनों के साथ, प्रारंभिक मानव महान् सांस्कृतिक बदलाव भी ला रहे थे। सरल ओल्डोवान औज़ार बनाने की कला के साथ प्रारम्भ करके वे इतिहास के उस पड़ाव तक पहुँचे जहां उन्होंने ब्लेड के प्राथमिक रूपों का उत्पादन शुरू किया। संमार्जक (scavenger) से वे विशेषज्ञ शिकारियों के साथ-साथ संग्रहकर्ता के रूप में विकसित हुए। पर्यावरणीय परिवर्तनों को अपनाने से लेकर, नई परिस्थितियों में समायोजन करने तक, प्रारम्भिक मानव ने एक साधारण शिकार-संग्राहक-संमार्जक से खाद्य उत्पादक अर्थव्यवस्थाओं में रूपांतरण तक का अपना सफ़र तय किया। इस काल में औज़ार तकनीकी, समाज, अर्थव्यवस्था, धर्म, साथ ही सभ्यता के संदर्भ में हम जिन परिवर्तनों को देखते हैं, उन्होंने मानव विकास के अगले चरण का मार्ग प्रशस्त किया।

3.6 शब्दावली

फलक : औज़ार बनाने के लिए इस्तेमाल किए गए पत्थर के छोटे और पतले टुकड़ों की कतरनें

नैपिंग : पत्थर के मूल से फ्लेक्स हटाने की प्रक्रिया

पुरापाषाण : पत्थर के औज़ार के विकास से चिह्नित प्रागैतिहासिक काल जिसे पुरापाषाण काल कहा जाता है।

मध्यपाषाण : इसका शाब्दिक अर्थ है मध्यपाषाण का काल, यह पुरापाषाण और नवपाषाण काल के बीच का मानव प्रागैतिहासिक काल है।

सूक्ष्मपाषाण : पत्थरों के सूक्ष्म औज़ार

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) शिकार-संग्रहण और संमार्जक अर्थव्यवस्थाओं की व्याख्या करें। इस्तेमाल किए गए औज़ारों और उनके कार्यों का भी उल्लेख करें। उप-भाग 3.3.2 देखें

2) कुल्हाड़ी, चाकू जैसे सरल औज़ारों का उल्लेख करें और यह बताएं कि शिकार के औज़ार के रूप में वे कितने उपयोगी थे। उप-भाग 3.3.2 देखें

3) औज़ारों, अग्नि के प्रयोग, भाषा आदि से संबंधित *होमो इरेक्टस* से जुड़े परिवर्तनों का उल्लेख करें। उप-भाग 3.3.2 देखें

बोध प्रश्न-2

1) औज़ारों, उनकी आयु, उनके प्रकार, उपयोग और कार्य, आर्थिक गतिविधि, सामाजिक परिवर्तनों के साथ-साथ दफनाने के संबंध में विभिन्नताओं को स्पष्ट करें। उप-भाग 3.3.2 और 3.3.3 देखें

2) मॉस्टेरियन औज़ार तकनीकी, शिकार रणनीतियों, बसावट के विभिन्न स्थलों, और दफनाने के तरीकों का उल्लेख करें। उप-भाग 3.3.2 और 3.3.3 देखें

बोध प्रश्न-3

1) औज़ारों और जीवन निर्वाह रणनीतियों के बारे में विवरण के साथ यूरोप में पाई गई संस्कृतियों का उल्लेख करें। उप-भाग 3.3.4 देखें

2) शिला चित्रों का विवरण करें: उनकी विषय वस्तु, रंग, पत्थर का चयन, इत्यादि। इन गतिविधियों से संबंधित विभिन्न व्याख्याओं पर भी चर्चा करें। उप-भाग 3.3.5 देखें

बोध प्रश्न-4

1) खाद्य की प्राप्ति, औज़ारों में परिवर्तन, जीवन निर्वाह अर्थव्यवस्था आदि के संदर्भ में विशेषताओं का उल्लेख करें। भाग 3.4 और उप-भाग 3.4.1, 3.4.2 और 3.4.3 देखें

2) मध्यपाषाण औज़ारों का संदर्भ दें: उनकी विविधता और उपयोग के बारे में बताऐं। उप-भाग 3.4.2 देखें

3) मध्य यूरोपीय और उत्तरी यूरोपीय संस्कृतियों दोनों का उल्लेख करें। उप-भाग 3.4.4 देखें

4) सांस्कृतिक विशेषताओं के साथ संक्रमण की अवधि के रूप में नातुफियनों के महत्व का उल्लेख करें। उप-भाग 3.4.6 देखें

3.8 संदर्भ ग्रंथ

आंद्रेफस्की जूनियर विलियम, 2009. 'द एनालिसिस ऑफ़ स्टोन प्रोक्योरमेंट' एंड मेन्टिनेन्स, *जर्नल ऑफ़ आर्कियोलॉजिकल रिसर्च,* भाग 17(1): 65-103.

आर्थर, कैथ्रीन डब्ल्यू, 2010. 'फेमिनिन नॉलेज एंड स्किल रिकंसिडर्ड': विमेन एंड फ्लेकड स्टोन टूल्स', *अमेरिकन एंथ्रोपोलॉजिस्ट,* न्यू सीरीज़, भाग 112(2): 228-243.

बेलफ़र-कोहेन, अन्ना और ओफर बार-योसेफ, 1989. 'द ऑरिजिंस ऑफ़ सेडेंटिज्म एंड फार्मिंग कम्युनिटीज इन द लीवेंट', *जर्नल ऑफ प्रिहिस्ट्री*, भाग 3(4): 447-498.

बिनफोर्ड, लुईस आर. और सैली आर. बिनफोर्ड, 1966. ए प्रेलिमिनरी एनालिसिस ऑफ़ फंक्शनल वेरिअबिलिटी इन द लेवलियोइस फैंसीज़ के, *अमेरिकन एंथ्रोपोलॉजिस्ट*, 68(2): 238-295.

बोर्डेस, फ्रैंकोइस, 1961. 'मॉस्तारियन कल्चर्स इन फ्रांस', *साइंस*, न्यू सीरीज, 134(3482): 803-810.

चाइल्ड, वी. गॉर्डन, 1956 1942. *व्हाट हैपनड इन हिस्ट्री*, हार्मंडवर्थः पेरेग्रीनबुकस.

चाइल्ड, वी. गॉर्डन, (1945). 'डायरेक्शनल चंजेस इन फ्यूनेररी प्रैक्टिसेज डूरिंग 50,000 इयर्स', *मैन*, 45: 13-19.

फेगन, ब्रायन एम., और नाडिया दुर्रानी, 2014. *पीपल ऑफ़ द अर्थः एन इंट्रोडक्शन टू वर्ल्ड प्रीहिस्ट्री*, 14वां संस्करण, न्यूयॉर्कः रूटलेज.

फेगन, ब्रायन एम, 2002, *वर्ल्ड प्रीहिस्ट्री ए ब्रीफ इंट्रोडक्शन*, पांचवां संस्करण. न्यू जर्सीः प्रेंटिस-हॉल.

गैबेल, डब्ल्यू. सी., 1958. 'द मेसोलिथिक कंटिन्यूयम इन वेस्टर्न यूरोप', *अमेरिकन एंथ्रोपोलॉजिस्ट*, न्यू सीरीज़, भाग. 60(4): 658-667.

होडर, इयान, 2016. *स्टडीज इन ह्यूमन-थिंग एंटेगलमेंट*, ओपन एक्सेस लाइसेंस फ्रॉम क्रिएटिव कॉमन्स एट्रिब्यूशन.

लाएट, एस.जे. डे (संपा.), ए.एच.दानी, जे.एल. लोरेन्जो गीइज़्टर और आर.बी. नूनू (सह-संपादक). 1996. *हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमैनिटी*, भाग 1: *प्रीहिस्ट्री एंड द बिगनिंग ऑफ़ सिविलाइज़ेशन*. यूनेस्को. लंदनः रूटलेज.

ली, रिचर्ड बी. और आई. देवोर (संपा.), 1968. *मैन द हंटर*, न्यूयॉर्कः एल्डिन डी ग्रुइटर.

मिथेन, स्टीफन, 1995. 'पेलिओलिथिक आर्किओलॉजी एंड द इवोल्यूशन ऑफ माइंड', *जर्नल ऑफ आर्कियोलॉजिकल रिसर्च*, भाग 3(4): 305-332.

ओहेल, मिला वाई, 1978., ''क्लेक्टोनियन फ्लेकिंग" एंड प्राइमरी फ्लेकिंगः सम इनिशियल ऑब्ज़र्वेशन्स'. *लिथिक टेक्नोलॉजीस*, 7(1): 23-28.

पालासीओ-पेरेज़, ई., 2013. 'द ओरिजिंस ऑफ़ द कांसेप्ट ऑफ़ 'पेलिओलिथिक आर्ट': थियोरिटिकल रूट्स ऑफ एन आइडिया', *जर्नल ऑफ आर्कियोलोजिकल मेथड्स एंड थ्योरी*, वॉल्यूम 20(4): 682-714.

प्राइस, डगलस, 1991. 'द मेसोलिथिक ऑफ़ नॉर्देर्न यूरोप', *एनुअल रिव्यु ऑफ़ एंथ्रोपोलॉजी*, भाग 20: 211-233.

सैंडगाथ, डेनिस एम. 2004. 'अल्टरनेटिव इंटरप्रिटेशन ऑफ़ लेवलियोइस रिडक्शन तकनीक', *लिथिक टेक्नोलॉजी*, 29 (2): 147-159.

स्टाउट, डाइट्रिच, 2011, 'स्टोन टूलमेकिंग एंड द इवोल्यूशन ऑफ ह्यूमन कल्चर एंड कॉग्निशन', *फिलोसोफिकल ट्रांज़ेक्शंसः बायोलॉजिकल साइंसेज*, 366(1567): 1050-1059.

टैनर, नैन्सी और एड्रियान जिहलमैन, 1976. *'वीमेन इन इवोल्यूशन.* भाग 1: *इनोवेशन एंड सलेक्शन इन ह्यूमन ओरिजिंस, साइन्स,* 1(3): 585-608.

वेन्के, रॉबर्ट और डेबोरा आई. ओल्स्ज़वेस्की, 2006 (1980). *पैटर्न्स इन प्रीहिस्ट्री: ह्यूमनकाइंडस फर्स्ट थ्री मिलियन इयर्स.* पांचवां संस्करण, न्यूयॉर्क: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

जिहलम, एड्रियान एल, 1978. *'वीमेन इन इवोल्यूशन,* भाग 2: *सब्सिस्टेंस एंड सोशल ऑर्गनाइजेशन अमंग अर्ली होमिनिड्स', साइन्स,* 4(1): 4-20.

पी डी एफ:

https://www.jstor.org/stable/pdf/2949307.pdf?refreqid=search%3Af915cb64622b05eda2bd630f15cf13ea

https://www.jstor.org/stable/pdf/41492314.pdf?refreqid=search%3Af9d917af0f4d7cdaf506748db9444eed

3.9 शैक्षणिक वीडियो

हिस्ट्री डॉक्यूमैन्टरी स्टोरीज़ फ्राम द स्टोन ऐज : द हयूमन एडवेन्चर

https://in.video.search.yahoo.com/search/video?fr=spigot-nt-gcmac&p=prehistoric+tool+bbc+documentary:id=2&vid=9ce7c690f5fdd1c32adb23b72f71a334&action=click

व्हाय प्रीहिस्टॉरिक वीमेन हैड सुपर-स्ट्रांग बोन्स

https://video.nationalgeographic.com/video/171129-strong-prehistoric-women-vin-spd

मिस्ट्री ऑफ लाइफ इन द पैलिओलिथिक ऐज

https://www.youtube.com/watch?v=Tx9cuROQWlM

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

80 Blank

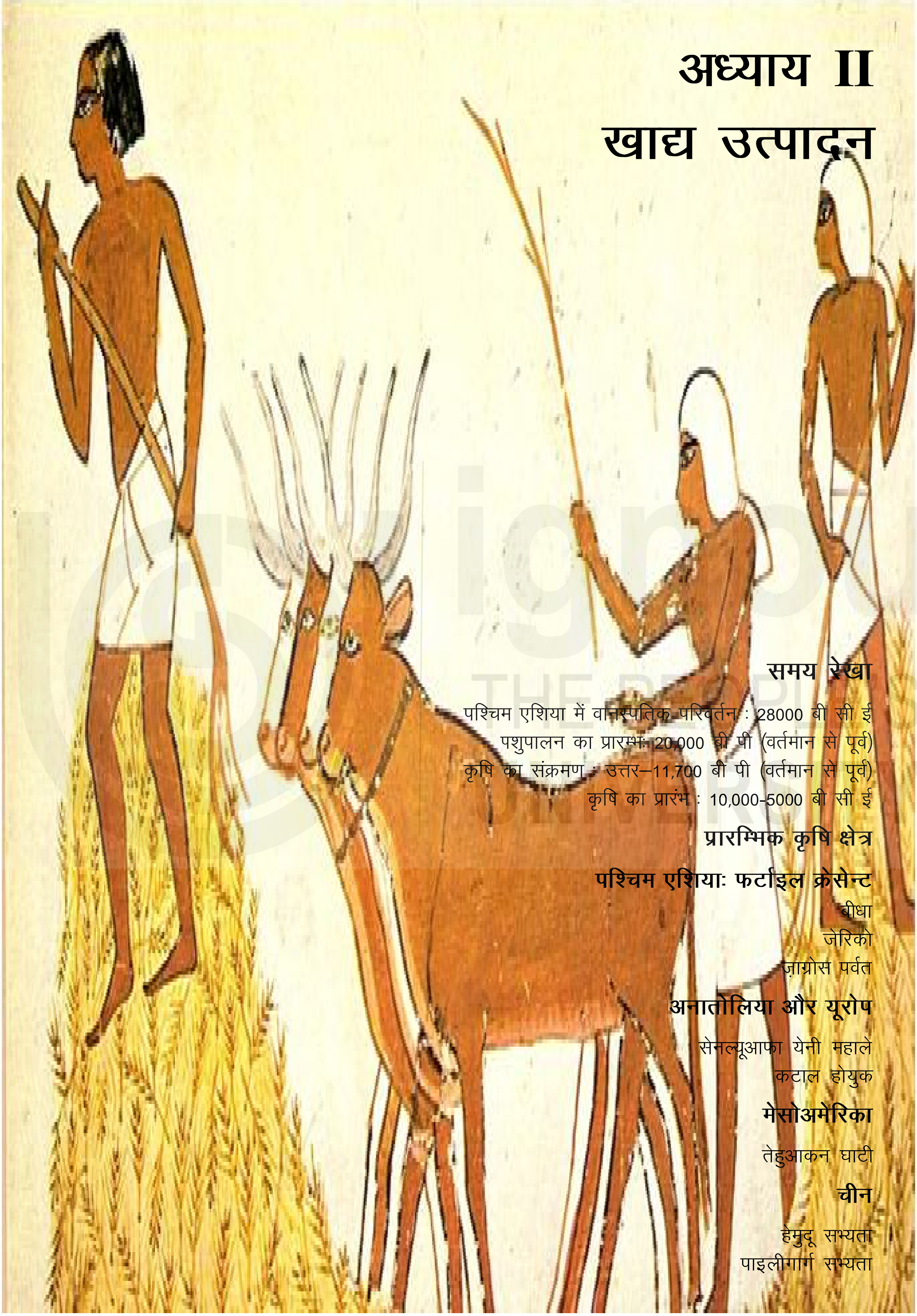

अध्याय II
खाद्य उत्पादन

समय रेखा

पश्चिम एशिया में वानस्पतिक परिवर्तन : 28000 बी सी ई
पशुपालन का प्रारम्भः 20,000 बी पी (वर्तमान से पूर्व)
कृषि का संक्रमण : उत्तर–11,700 बी पी (वर्तमान से पूर्व)
कृषि का प्रारंभ : 10,000-5000 बी सी ई

प्रारम्भिक कृषि क्षेत्र

पश्चिम एशियाः फर्टाइल क्रेसेन्ट

बीधा
जेरिको
ज़ाग्रोस पर्वत

अनातोलिया और यूरोप

सेनल्यूआफा येनी महाले
कटाल होयुक

मेसोअमेरिका

तेहुआकन घाटी

चीन

हेमुदू सभ्यता
पाइलीगार्ग सभ्यता

चित्रांकनः प्राचीन मिश्र में गेंहू-गाहन

फोटोग्राफः कार्लोस ई. सोलीवरेज़

स्रोतः https://commons.wikimedia/wiki/File:Trilla_del_trigo_en_el_Antiguo_Egipto.jpg

इकाई 4 पौधे उगाना और पशु-पालन*

इकाई की रूपरेखा

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

4.3 प्रारंभिक अभिनव युग (Holocene) में पर्यावरणीय परिवर्तन

4.4 पौधे उगाना

4.5 पशुओं को पालतू बनाया जाना

4.6 कृषि की ओर संक्रमणः विभिन्न दृष्टिकोण

4.6.1 जलवायु दबाव संबंधी अवधारणाः मरुद्वीप सिद्धांत

4.6.2 परमाणु-क्षेत्र अवधारणा

4.6.2 जनसाख्यिंकी अवधारणा

4.6.4 पारिस्थितिकीय अवधारणा

4.6.5 सामाजिक अवधारणा

4.7 सारांश

4.8 शब्दावली

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.10 संदर्भ ग्रंथ

4.11 शैक्षणिक वीडियो

4.1 उद्देश्य

इस इकाई में हम कृषि के आरंभ अर्थात पौधों को उगाना और जानवरों को पालतू बनाए जाने के लिए आवश्यक क्रियाकलाप के निहितार्थों तथा अर्थ की चर्चा करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आपः

- 'पालतू बनाने' की व्याख्या और अर्थ को अपेक्षाकृत ज़्यादा अभ्रमणशील मानव समूहों द्वारा चयनित आरंभिक पौधों और जानवरों के उदाहरणों के संदर्भ में कर सकेंगे,
- पौधों को उगाने और जानवरों को पालने की प्रक्रिया के आरंभ के लिए उत्तरदायी पर्यावरण परिस्थिति के संदर्भ को पहचान सकेंगे,
- दुनिया के अलग-अलग भागों में कृषि के आरंभ के पीछे के कारणों की सैद्धांतिक आधार पर व्याख्या कर पाएंगे,
- यह बता सकेंगे कि क्यों कुछ विशेष पशु ही पालतु बनाए गए, और
- यह जान सकेंगे कि प्रारंभिक चरणों में मनुष्यों द्वारा उगाये गए पौधों का चयन किस आधार पर किया गया।

* डॉ श्रीमंजरी, इतिहास विभाग, मिरांडा हाउस, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

4.2 प्रस्तावना

हमारे दैनिक जीवन में खाद्य आवश्यकताओं की पुनः पूर्ति के लिए निःसंदेह ही कृषि की स्वीकार्यता है। हालांकि, वनस्पतिज्ञ, जीवविज्ञानी, पर्यावरणविद्, पुरातत्ववेत्ता और प्राक्-इतिहासकारों के मध्य कृषि की उत्पत्ति से सम्बंधित अध्ययन आज भी वाद-विवाद का विषय बना हुआ है। शिकार और संग्रहण वह गतिविधियां थीं जिन्हें मानव ने प्राकृतिक तौर पर जैविक और सांस्कृतिक परिवर्तनों के संयोजन द्वारा अपनाया, खासतौर पर प्रत्यक्ष ज्ञान में सुधार, और औज़ार और हथियार बनाने की सांस्कृतिक योग्यता के कारण। शिकारी और संग्रहणकर्ता के तौर पर हमारा अस्तित्व लगातार, **अभिनूतन युग** (Pleistocene epoch; अंतिम हिम युग) में बदलते हुए मौसम और जलवायु की परिस्थितियों में परिवर्तनों के साथ सह-सम्बंधों द्वारा काफी हद तक बहुत लम्बी समयावधि तक रहा। अभिनूतन युग को मानव युग के रूप में भी पहचाना गया क्योंकि ये मानव के जैविक विकास का समकालिक है। भूविज्ञान की दृष्टि से, पृथ्वी के इतिहास में यह भाग सर्वाधिक नूतन है जिसका आरंभ लगभग 2.6 मिलियन वर्ष पूर्व और अंत 11,700 वर्ष पूर्व के आसपास हुआ। इसलिए, जैसा कि नये अध्ययन दर्शाते हैं कि मानव समुदायों ने पौधों और जानवरों में अन्तर्निहित क्षमताओं के बारे में जानकारी एकत्रित तो की थी लेकिन उन्होंने अपने भोजन संग्रहण के कौशल को त्यागने की अनिवार्यता महसूस नहीं की। हालांकि, शिकारी संग्रहणकर्ताओं के भोजन प्राप्ति के कौशल में अभिनूतन युग के अंत में परिवर्तन आया, जिसने काफी संख्या में भोजन संग्राहकों को चरवाहों और कृषकों में रूपांतरित कर दिया। पौधों और जानवरों को पालतू बनाने की प्रक्रिया ने कृषि को संभव बनाया। जिसकी जांच इस इकाई में हम विद्वानों द्वारा प्रस्तुत विभिन्न दृष्टिकोणों और सैद्धांतिक अन्तर्दृष्टि से करेंगे।

पौधों को उगाना और जानवरों को पालतू बनाना, पौधों और जानवरों की प्रजनन प्रक्रिया में मानव के हस्तक्षेप को अपरिहार्य बनाता है। यह उन जैविक अवरोधों, जैसे पौधों में तनों (rachis) में भंगुरता के रूप में जो बीज के आसानी से बिखराव का कारण बनता है; खाने योग्य पौधों की छाल (husk) अथवा भूसी (glume) की कठोरता; और विशेष अनाज घासों का अनुकूलन अधिक उर्वरक बाढ़ के मैदानों की बजाय विशिष्ट पर्यावरण जैसे पहाड़ियों के किनारे और ढलान में होना, का निदान करता है। इसी तरह, 'पालतू' जानवरों की जंगली प्रजातियां जैसे भेड़ और बकरी आकार में बड़ी थीं और जैसा कि दक्षिणपश्चिमी एशिया के कुछ अध्ययनों में दर्शाया गया है कि उस समय वहां युवा नर जानवरों की संख्या अधिक थी। इस प्रकार, इससे पहले मनुष्य जानवरों को शिकार के अलावा अन्य किसी तरीके से उपयोग में लाते, मानव का जानवरों के आयु-लैंगिक अनुपात के विभिन्न चरणों में हस्तक्षेप आवश्यक था। इस प्रक्रिया ने पौधों और जानवरों को 'पालतू बनाने' की पहचान को और कुछ का उनके प्राकृतिक आवास से विस्थापन को आवश्यक बनाया। यह उनकी नये स्थानों में उपलब्धता में, और कई बार बेहतर और अधिक लाभदायक रूप में, योगदान देता है। यह उन्हें मनुष्य के लिए और अधिक रोचक और उपयोगी बनाता है। यह अत्यधिक प्रत्यक्ष प्रक्रिया है और तीन महत्वपूर्ण प्राथमिक साक्ष्यों के आधार पर इनका पता लगाया जा सकता है:

क) जानवरों और पौधों की उनके प्राकृतिक परिसर के बाहर उपलब्धता।

ख) आकार सम्बंधी और संरचनात्मक परिवर्तन।

ग) जानवरों और पौधों की संख्या में वृद्धि।

यह सत्य है कि पौधों में बदलाव की प्रक्रिया प्राकृतिक होती है जो हवा के झोंकों, वर्षा और बाढ़ के कारण, पक्षियों और जानवरों द्वारा गिराए गए बीजों और **परागण** आदि द्वारा होती है। इसी प्रकार, जानवर मौसम के अनुसार और पर्यावरण की मुख्य घटनाओं के कारण प्रवास

करते हैं। यह इन्हें नए भू-क्षेत्रों में ले जाता है। इस प्रकार, नए भू-भाग में पौधों और जानवरों में नवीन नस्लों का विकास नई जलवायु की परिस्थितियों के अनावरण और पार-निशेचन (cross-fertilzation) के द्वारा हुआ। यह विशेष रूप से पौधों के लिए सत्य है। हालांकि, मानव का अन्तर्ज्ञान और सृजनात्मकता पौधों और जानवरों को मानव समाज के लिए अधिक उपयोगी बनाने के लिए आवश्यक थी। मानव, पौधों और जानवरों के इस परस्पर विकास की प्रक्रिया की जांच हम इस इकाई में करेंगे।

4.3 प्रारंभिक अभिनव युग (Holocene) में पर्यावरणीय परिवर्तन

पालतु बनाने की प्रक्रिया में और पौधों और जानवरों की प्रजाति पर मानव हस्तक्षेप और नियंत्रण अपेक्षित है। यह याद रखना चाहिए कि यह न तो पूर्ण रूप से अभिनूतन युग के पश्चात् का अनुकूलन है और न ही शिकारी-संग्रहणकर्ताओं के जीवन में अचानक गांवों में स्थाई रूप से रहने वालों के रूप में परिवर्तन है। पौधों की रूपात्मक संरचना में पर्यावरण अनुकूलन ने निर्णायक भूमिका निभाई। यह विशेष रूप से अंत के अभिनूतन युग के बाद लगभग 20,000 वर्ष पूर्व के काल के बारे में सत्य है जब वहां विशिष्ट पौधों और जानवरों की प्रजातियों में स्पष्टतः दिखाई देने योग्य परिवर्तन हुए। **अभिनव युग** अर्थात लगभग 11,700 बी पी की समाप्ति तक आते-आते पूरी दुनिया में जलवायु परिवर्तन हुए। इन परिवर्तनों को अब नव-थर्मल पर्यावरणीय परिस्थितियों के आरंभ के तौर पर वर्णित किया गया है जो गर्म से ठंडा; शुष्क से आर्द्र में बदलता रहता था। बोएलिंग-एलेरॉड इंटरस्टेडियल (Boiling-Allerod Interstadial) अर्थात अंतिम हिमकाल के दौरान अप्रत्याशित गर्म और आर्द्र काल, जो लगभग 2000 वर्ष के करीब लगभग 12,700 से 10,950 बी सी ई, तक चला, जिसमें दुनिया के तापमान के साथ-साथ समुद्र के जल-स्तर में भारी वृद्धि देखी गई। ये परिवर्तन हिमाच्छादन (Wurm glaciation; लगभग 11,700-11,500 वर्ष पूर्व) के शीत घटनाक्रम का अंत लेकर आया। यह अल्पाईन क्षेत्र में अंतिम हिमकाल था। यंगर-ड्रायस इंटरवल (Younger Dryas Interval; लगभग 10,950 से 9,650 बी सी ई) इसके बाद घटित हुआ। इस चरण में अति शीत अवस्था के एक छोटे से काल के प्रमाण मिलते हैं, तत्पश्चात् दुबारा गर्म परिस्थितियां आईं, जिसके बाद गर्म जलवायु में लगातार वृद्धि होती रही। इन परिवर्तनों ने दुनिया के भूगोल में मुख्य बदलावों की शुरुआत की। स्कैंडिनेविया में बर्फ की चादरों के विशाल शिलाखंडों के पीछे सरकने के कारण पृथ्वी की ऊपरी सतह पर दबाव उत्पन्न हुआ; उत्तरी समुद्र में बाढ़ आने के कारण ब्रिटेन, यूरोप से अलग हो गया। तकरीबन 100,000 वर्ष के बाद पहली बार बर्फ की चादरों के सरकने के कारण उत्तरी अमेरिका और उत्तरी यूरोप के बड़े क्षेत्र मानव की बसावट के लिए उपलब्ध हुए।

तापमान और वर्षा के बदलाव ने दुनिया के अलग-अलग भागों में वानस्पतिक परिवर्तनों को प्रभावित किया। हाल ही के शोध ने यह सिद्ध किया है कि प्रारंभिक अभिनव युग के पर्यावरण में कार्बनडाइऑक्साइड की मात्रा, अभिनूतन युग के अंत तक, किसी भी समय की तुलना में बहुत अधिक थी। अभिनव युग के पौधे इसलिए, प्रकाश संश्लेषण में अधिकता, जैव ईंधन और बीज की पैदावार और अतिशय जलवायु परिवर्तनों के प्रति अधिक सहनशक्ति के कारण अधिक उत्पादकता वाले थे (फेगन, 2016: 282)। अभिनूतन युग के महाप्राणि जिनमें जानवरों के सबसे बेहतर प्रतिनिधि, जैसे मैमथ, बालों वाला गेंडा और जंगली भैंसा (bison), मध्य और पश्चिमी यूरोप में विलुप्त हो गए। बर्फ की चादरों की गतिविधियों का अनुसरण करते हुए रेंडियर ऐल्प्स और ऐपिनीस के अधिक ठंडे क्षेत्रों की ओर चले गए। इनका स्थान छोटे जानवरों जैसे लाल हिरण और रो (roe) हिरण ने ले लिया। इसी तरह के परिवर्तन उष्णकटिबंध प्रदेशों में भी हो रहे थे। उस समय वहां मृग, जंगली भेड़, बकरी, गोजातीय

(bovine) जानवरों और जंगली सुअर में प्रमुख रूप से वृद्धि हुई। इस प्रकार, प्रारंभिक अभिनव युग के शिकारी-संग्रहणकर्ताओं ने जलवायु के बदलावों और भोजन की कमी का सामना, अपने आहार में वैविध्यता लाकर और शिकार में विशेषता, मौसमी संग्रहण और मछली पकड़ना और अन्य क्रियाकलापों का अनुसरण करते हुए, विस्तृत श्रेणी की अर्थव्यवस्था **(व्यापक स्पेक्ट्रम अर्थव्यवस्था)** पर आश्रित होकर किया। दुनिया के अलग-अलग भागों में **मध्यपाषाण** अर्थव्यवस्थाएं इन सामंजस्यों और अनुकूलन के उदाहरण के रूप में देखी जा सकती हैं। पौधों और जानवरों के जीवाश्मों के अवशेष, मध्यपाषाण काल के शिकारी-संग्रहणकर्ताओं और मछली पकड़ने वालों के औज़ारों का समूह और उनके शवाधान सम्बंधी व्यवहार, प्रारंभिक अभिनव युग में मानव समुदायों के सांस्कृतिक अस्तित्व के बदलावों की ओर संकेत करता हैं।

4.4 पौधे उगाना

पश्चिमी एशिया में 28,000 बी सी ई के बाद विस्तृत और बड़े बीज वाली लम्बी घास के क्षेत्रों में वानिस्पतिक परिवर्तन देखे जा सकते हैं। वहां दो प्रकार की बड़े बीज वाली लम्बी घासें थीं। पहली किस्म में वह घास थी जिसकी नोक ढीली और बिखरी हुई थी। इसलिए इन घासों के बीज पौधों के पकने से पहले ही बिखर जाते थे। आरंभ में, शिकारी-संग्रहणकर्ताओं ने इन पौधों के बीजों को तने पर डंडी द्वारा झाड़कर एकत्रित किया होगा। यदि इन बीजों को 'विशेष दबाव' में बोया जाता तो यह पौधों की विविध किस्म के फैलाव के पक्ष में होता और यह फैलाव प्राकृतिक तरीके से अपना कार्य करता। रूसी कृषि वैज्ञानिक निकोलई वाविलोव (1887-1943) ने बहुत पहले ही यह सुझाव दिया था कि खेती में मुख्य परिवर्तन खेती की पद्धति में ही अंतर्निहित है। साधारणतः अचेतन में चयन से चेतन में चयन की ओर गतिशीलता होती है। एंगल ब्रेख्त, वनस्पति भूगोलवेत्ता ने इस ओर इशारा किया कि आज उगाए जाने वाले बहुत से पौधों और फसलों का चयन किसी समय अनजाने में किया गया था। इस संदर्भ में कुछ महत्वपूर्ण पौधों के उदाहरण जैसे लौकी, टमाटर जो पहले अनजाने में बीजों को निकाल कर फेंकने के कारण 'बसावटों के निकट उपजी जंगली घास' **(habitation-weed)** के रूप में उगे थे; इसी तरह जौ और राई (rye) मध्य एशिया में गेंहूँ की निम्न श्रेणी की जंगली किस्में थीं। द्वितीय श्रेणी की सबसे आकर्षक फसल बाजरा थी, जिसके बीज बहुत छोटे थे इस वजह से यह पौधा आरंभिक कृषकों का ध्यान आकर्षित करने में असफल रहा (डार्लिंगटन, 1969: 68)। हालांकि, बाद में मजबूल बाली वाले ये पौधे प्राथमिक बन गए होंगे। ये वो घासें थीं जिनके बीज केवल पौधों के पकने के बाद ही बिखरते थे।

मजबूत बाली वाले पौधों के बीजों की बुआई में अतिरिक्त प्रयासों की आवश्यकता थी। इन बीजों को जंगली पौधों और जंगली घासों से दूर बोया जाना आवश्यक था ताकि ये पौधे इनका अतिक्रमण न कर सकें। बीज लगाए जाने के लिए भूमि के छोटे भूखंडों को साफ करने की आवश्यकता होती थी जहां की भूमि के आसपास पर्याप्त वर्षा होती हो अथवा पानी के पर्याप्त स्रोत हों जैसे झीलें, झरनें और नदियां।

पौधों को उगाने में मानव हस्तक्षेप अनिवार्य था। इसने पौधों के जीन समुच्चय (pool) को विस्तृत किया। पौधों की खेती करने की प्रारंभिक प्रक्रिया इज़राइल और सीरिया के कृषि स्थल जैसे – क्रमशः नेटिव हागदूद और अबू हुरेरा में देखी जा सकती है, जहां कुशल शिकारी-संग्रहणकर्ताओं ने पौधों की खेती में सर्वप्रथम प्रयोग 10,500-10,000 बी सी ई में किया। जंगली एनकॉर्न और एम्मर गेंहू, जौ और राई (rye) के बीज और पौधों की उपलब्धता यह दर्शाते हैं कि ये बहुत आरंभिक काल में चयन करके उगाए गए थे जब मानव मुख्य रूप से खानाबदोश थे। इसी तरह के विकास के पैटर्न दक्षिणी तुर्की, उत्तरी इराक और उत्तर-पश्चिम ईरान में दिखाई देते हैं। पौधों को उगाने की प्रक्रिया में एक समानता यह भी देखी जा सकती

है कि बीजों को अधिक समतल भूमि की ओर लाया गया जिसके पास पानी के अच्छे स्रोत या ऐसे स्थान थे जहां पर्याप्त वर्षा होती हो ताकि पौधे अच्छी तरह फल-फूल सकें। अनाजों के अवशेष इसके साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। इन पौधों की बालियां मजबूत थीं जिन्हें जंगली किस्म से अलग नहीं किया जा सकता था। ये अपनी प्रजाति के प्राकृतिक वास से दूर पाए गए हैं।

चित्र 4.1: उत्पादित एम्मर गेंहूँ की बालियां
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/5/5f/Usdaemmer1.jpg

चित्र 4.2: जंगली एनकॉर्न गेंहूँ
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/f/f3/Wildeinkorn.jpg

वेंके ने उपजाए गए गेहूं में हुए परिवर्तनों को रेखांकित किया है। उसके अनुसार 'दुनिया की सबसे महत्वपूर्ण फसल गेहूं को उपजाने में मनुष्य द्वारा विशेष तकनीकी का इस्तेमाल किया गया और इसके साथ-साथ प्राकृतिक जीव संकरण ने भी इसमें अपना सहयोग किया। मनुष्य की कोशिश यह थी कि ऐसी किस्मों को उपजाया जाए जो हवा के झोंके से गिरे नहीं और बाद में इसे पीटकर निकाल लिया जाए। सबसे साधारण किस्म के गेहूं को 'डाइप्लॉएड' कहा जाता था यानी इसमें सात गुणसूत्र (chromosomes) के दो जोड़े होते थे। संकरण से संबंद्धित किस्मों के रूप टेट्राप्लॉएड गेहूं का उत्पादन किया गया जिसमें गुणसूत्र की चार जोड़ियां हुआ करती थीं। संकरण से वस्तुतः हेक्साप्लॉएड गेंहूँ पैदा किया गया जिसमें छह जोड़ी गुणसूत्र होते थे जो केवल उगाए गए गेहूँ की प्रजातियों में ही पाए जाते थे। विभिन्न प्रजातियों के जेनेटिक पदार्थों को मिलाकर आरंभिक किसान गेहूं की ऐसी किस्में उपजाते थे जो कहीं भी उपजाई जा सकती थीं' **(वेंके और ओलज़ीउस्कि, 2007: 248)**।

4.5 पशुओं को पालतू बनाया जाना

पालतू जानवर उसे कहते हैं जिसे मानव समुदाय आर्थिक लाभ के लिए अपने पास रखकर पालता है। मानव का जानवरों के प्रजनन, क्षेत्र और भोजन की आपूर्ति पर पूर्ण नियंत्रण होता है। पशुओं को पालतू बनाने का इतिहास यह दर्शाता है कि इस प्रक्रिया का आरंभ शिकारी-संग्रहणकर्ताओं के बीच शुरू हुआ होगा। शिकार किए गए पशुओं के छोटे बच्चे जो त्याग दिए गए या अकेले रह जाते थे वे स्वयं ही लोगों से घुल-मिल जाते थे। यह 'प्रभावात्मकता' के कारण होता था, इसका तात्पर्य यह है कि पशुओं का अपनी शैशव अवस्था के प्रभावात्मक काल में सबसे पहले जीवंत प्राणी का अनुकरण करने की प्रवृति होती है। यह भी हो सकता है कि शिकार-संग्रहण समुदाय यत्र-तत्र पशु पालन करते होंगे ताकि शिकार के समय वे उनका प्रयोग शिकार को फंसाने के लिए कर सकें। यह शायद वही रीति थी जिसके अंतर्गत कुत्ते को लगभग 20,000 बी पी में पालतू बनाया गया था। यह अब भी विवाद का विषय बना हुआ है कि पालतू कुत्ता पहले जंगली कुत्ता था या भेड़िया। हालांकि, उत्तर पुरापाषाण युग (40,000-11,700 बी पी) और मध्यपाषाण युग (लगभग 8,000 बी सी ई) के मानव समुदायों में कुत्ता शिकार के दौरान एक सहायक के रूप में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ।

उन्नत शिकारी-संग्रहणकर्ताओं के लिए उन जानवरों को अपने वश में करना, झुंड में रखना और पालतू बनाना आसान रहा होगा जो प्रकृति से विनम्र स्वभाव के थे और संभवतः 'पालतू बनाने लायक' थे। झुंड में एकत्रित किए गए पशुओं को अन्य कई उपायों द्वारा और अधिक विनम्र बनाया जा सकता था जैसे झुंड में अधिक हिंसक नरों की हत्या करके या उनका बंध्याकरण करके। पशुओं को पालतू बनाने के आरंभिक चरण पौधों को उगाने की तरह ही अनिश्चित रहे होंगे। पशु पालन के इतिहास की पुनर्रचना ताज़ा आकृतिमूलक और जीव संबंधी आंकड़ों के आधार पर की जा रही है। ऐसे शोध दर्शाते हैं कि पशु पालने की प्रक्रिया शिकारी-संग्रहकर्ताओं के बीच ही शुरू हुई होगी, लेकिन मनुष्य जिन जानवरों का शिकार करता था उन सभी जानवरों को पालतू नहीं बनाया जा सकता था। इसलिए कुछ विद्वानों का तर्क है कि जिन जानवरों को पालतू बनाया गया, उन जानवरों की प्रजनन क्षमता पर प्रभाव पड़े बिना ही वे शारीरिक और मनोवैज्ञानिक तौर पर पालतू बनाए जाने लायक जानवर थे। उन्हीं पशुओं का चयन पालतू बनाने के लिए किया जाता था जिनकी प्रजनन क्षमता पर मनुष्य के बंधन का प्रभाव नहीं पड़ता था। उदाहरण के लिए, जब पशुओं को पालने की प्रथा शुरू हुई होगी तब झुंड में उन्हीं पशुओं को पालना शुरू किया गया होगा जो ज़्यादा आक्रामक और मनुष्य को नुकसान पहुंचाने वाले न हों। पशुओं को मारकर या फिर आक्रामक नर जानवरों के बंध्याकरण के द्वारा उनकी प्रजनन प्रक्रिया में हस्तक्षेप करके एक समय के बाद धीरे-धीरे विनम्र पालतू जानवरों की एक अलग नस्ल और किस्म नियोजित ढंग से तैयार की गई होगी। इसलिए यह भी देखा जा सकता है कि अनियोजित ढंग से पाली गई नस्ल बाद में नियोजित तरीके से अप्राकृतिक चयन की ओर बढ़ी होगी जिससे समान पालतू प्रजाति की विभिन्न नस्लें पैदा हुई होंगी। इस तरह मानव समुदायों ने दुनिया के अलग-अलग भागों में सूअर, बकरी, भेड़ और गाय-बैलों को पालतू बनाया।

यद्यपि निश्चय ही पालतू पशु संकट के समय भोजन के रूप में सहज उपलब्ध होते होंगे, परंतु ऐसा नहीं लगता कि भोजन के अभाव के कारण पशुओं को पालतू बनाया गया था। शुरू में झुंडों में पाले गए पशुओं का उपयोग अनुष्ठानिक बलियों में भी किया जाता होगा। ये पशु सामाजिक ढ़ांचे में समाविष्ट हो गए थे और स्वामित्व की प्रथम 'वस्तु' बने। इस प्रकार, पालतू कुत्ता, भेड़, गाय-बैल और सूअर जंगली जानवरों की तरह शिकार किए जाने की बजाए अपने मालिकों के साथ 'पशुधन' की तरह रहते थे। पालतू बनाने की प्रक्रिया की आरंभिक अवस्था में बकरी, भेड़ और गाय-बैल का उपयोग केवल मांस और खाल के लिए किया गया होगा। जंगली गाय-बैल अधिक दूध नहीं देते थे और जंगली भेड़ें ऊनी नहीं थीं बल्कि बालों वाली थीं। पालतू बनाए जाने के अथक प्रयासों के द्वारा ही ये जानवर दूध और ऊन देने योग्य बन पाए। इन लक्षणों को वास्तविक रूप में आने में समय लगता है। पालतू बनाए जाने के बाद और इनके प्रत्यक्ष रूप (एक पीढ़ी से, छोटी प्रजाति में, इस प्रक्रिया को दो या तीन वर्ष का समय लगा और बड़े स्तनधारियों में चार या पांच वर्ष का समय लगा) में आने से पहले, रूपात्मक परिवर्तनों को मापने के लिए लगभग तीस पीढ़ियों की आवश्यकता होती है। हालांकि, आरंभिक अथक प्रयासों के कारण बकरी, भेड़ और गाय-बैल के मांस, खाल, ऊन और दूध के लिए पालतू बनाए जाने में और अधिक नियमितता आई। कुत्ते और सुअर, जो कि 18,000 वर्ष पूर्व से मनुष्य द्वारा पालतू बनाए गए, मनुष्य के बचे-खुचे भोजन के कचरे के अपमार्जक का कार्य कर रहे थे। विशेषकर सूअर को अधिक मात्रा में वानस्पतिक चारे की आवश्यकता नहीं होती थी तथा वे शिकारी-संग्रहणकर्ताओं के जैसा ही भोजन खाते थे।

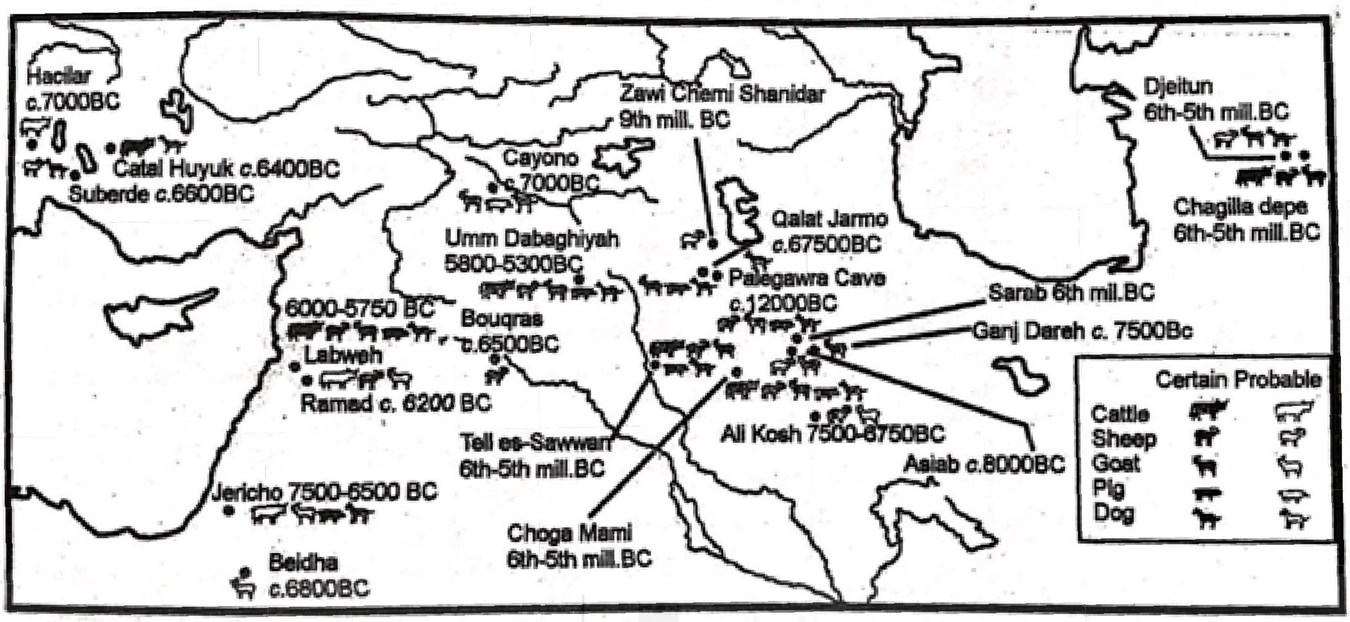

मानचित्र 4.1: पश्चिम एशिया में जानवरों को पालतू बनाने का पैटर्न (*हिस्ट्री ऑफ ह्यूमेनिटी*, भाग-एक, पृ. 393 से उद्धृत)

स्रोतः एम एच आई-01: प्राचीन और मध्यकालीन समाज, 1990, खंड 1, इकाई 2, मानचित्र 1, पृ. 31.

कृषि में परिवर्तन अभिनूतन युग के अंत के बाद लगभग 11,700 बी पी के आसपास हुआ। इस समय शिकारी-संग्रहणकर्ताओं ने पशुओं और पौधों की तरह जलवायु परिवर्तन के अनुकूल जीवन निर्वाह की रणनीति को अपना लिया था। शिकार और संग्रहण गतिविधियां और अधिक नियंत्रित और विशेषीकृत हुईं तथा इसके साथ ही पौधों और जानवरों के संबंध में आंतरिक जानकारी की आवश्यकता भी बढ़ी। इस प्रकार मौजूदा जंगली पौधों और जानवरों के बारे में बेहतर जानकारी कृषि के आरंभ के लिए पूर्व शर्त थी। अधिक निपुण औज़ारों का प्रयोग, जैसे चौड़ी और चपटी बर्छी, हँसिया और कटाई वाला चाकू और नए औज़ारों से परिचय जैसे ओखली-मूसली और अन्य पिटाई और प्रहार करने वाले उपकरण यह संकेत देते हैं कि दुनिया के कई भागों में लोग भोजन प्राप्त करने के नवीन तरीके खोज रहे थे। साधारणतः कहा जाता है कि पुरातत्ववेत्ताओं ने कृषि के आरंभ को पूर्णतः सांस्कृतिक विकासक्रम के एक नए चरण – **नवपाषाण युग** (10,000-5,000 बी सी ई) से सम्बंधित बताया है। लगभग 6000 बी सी ई के आसपास दुनिया की आबादी के एक विशेष वर्ग ने शिकार और संग्रहण का त्याग कर दिया था तथा कृषि और पशुपालन संबंधी गतिविधियों को अपना लिया था।

बोध प्रश्न-1

1) वह क्रमबद्ध प्रकिया समझाएं जिसके द्वारा मानव समुदाय ने अपने को पर्यावरण की नई परिस्थितियों के अनुकूल ढाला ?

....

....

....

....

....

....

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

2) क्या आप इस विचार से सहमत हैं कि कृषि की शुरुआत एक अचानक घटित घटना थी या मानव, पौधों और पशुओं की धीरे-धीरे बढ़ती परस्पर निर्भरता का परिणाम थी ?

....

....

....

....

....

3) सबसे पहले पालतु बनाए गए जानवरों के नाम बताइए और यह भी बताइए कि वे मानव के लिए किस प्रकार उपयोगी थे?

....

....

....

....

....

4.6 कृषि की ओर संक्रमणः विभिन्न दृष्टिकोण

पिछले भाग की चर्चा यह संकेत देती है कि पौधे उगाना और पशुओं को पालतू बनाने की प्रक्रिया अचानक शिकार-संग्रहण जीवन पद्धति से दूसरे चरण में जाने का परिणाम नहीं थी। विभिन्न जलवायु परिवर्तनों के अनुभव, वनस्पति और जानवरों के जीवन पर इसके प्रभाव देखने और समझने ने मानव समाज की वनस्पति सम्बंधी और प्राणिविज्ञान के ज्ञान में वृद्धि की। इस प्रकार, पुरातात्विक काल के मानव के सांस्कृतिक अनुकूलन, उसके अपेक्षाकृत एक स्थान पर स्थाई रूप से बसने के अस्तित्व के रूप में पौधे उगाने और पशुओं को पालतू बनाने के आरंभिक काल का प्रतिनिधित्व मध्यपाषाण युग करता है।[1] मध्यपाषाण युग की संस्कृति मानव समुदाय के पुरापाषाण युग की पृष्ठभूमि के साथ मंद अनुकूलन को प्रदर्शित करती है जो कि परिवर्तित नव-थर्मल पर्यावरण कृषि अर्थव्यवस्था की उन्नति के लिए अपेक्षाकृत अधिक अनुकूल थी। इसके महत्व पर प्रकाश डालते हुए जी. क्लार्क कहते हैं, 'मनुष्य, पशुओं और पौधों के सम्बंधों में परिवर्तन ने सामाजिक व्यवस्था को प्रेरित किया। वह मध्यपाषाण युग के द्वारा संपन्न हुई न कि नवपाषाण युग के द्वारा। समीक्षात्मक रूप से इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप मानव नवपाषाणिक बना' (क्लार्क 1977: 42)। नवपाषाण युग से सम्बंधित सबसे महत्वपूर्ण विकास कृषि में नवीन 'बुनियादी और परिष्कृत' औज़ारों के प्रयोग से कृषि में संक्रमण और साथ ही गांव की अर्थव्यवस्था और समाज के उदय के रूप में समानान्तर परिवर्तन हुए। इस प्रकार, दुनिया के कई भागों में, भोजन संग्रहण क्रमबद्ध रूप से भोजन उत्पादन में परिवर्तित हो गया। गॉर्डन चाइल्ड के लिए खाद्य उत्पादन 'आर्थिक क्रांति' का द्योतक है जो'आग पर काबू पाने के बाद मानव इतिहास में महान्तम है' (अधिक जानकारी के लिए, देखें क्लार्क, 1977)।

कृषि के आरंभ से सम्बंधित अनेक व्याख्याएं प्रस्तुत की गई हैं। ये व्याख्याएं चिंतन, परिकल्पना और स्थानीय अध्ययन पर आधारित हैं जो सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रकृति को जानने के लिए प्रेरित करती हैं, जिसे मानवता ने हिमकाल के अंत में अनुभव किया। जनसंख्या वृद्धि को पुरातात्विक साक्ष्यों में गांवों और कब्रिस्तानों की संख्या में वृद्धि के तौर पर देखा जाता है जो

[1] पश्चिमी एशिया में मध्यपाषाण युग का आरंभ 11,000 बी सी ई के आसपास और अंत लगभग 8,500 बी सी ई, और यूरोप में इस युग का विस्तार 8,000-3,500 बी सी ई में हुआ।

इस ओर संकेत देती हैं कि मनुष्य उस समय प्राकृतिक आपदाओं से निपटने के लिए सांस्कृतिक रूप से सक्षम था। हालांकि, उस काल के संबंध में अन्य कई प्रश्न पूछे जा सकते हैं। क्या खेती की शुरुआत किसी खास स्थान और समय में हुई और फिर यह पूरी दुनिया में फैली ? क्या खेती किसी एक प्रजाति की 'खोज' थी या भाग्यवश एक प्राकृतिक घटना? क्या पौधों को लगाना और जानवरों को पालना एक ही साथ शुरू हुआ या एक के बाद एक ? और ऐसे ही अनेक प्रश्न। इन प्रश्नों में यह विश्वास अंतर्निहित है कि दुनिया के विभिन्न भागों में एक बड़े जनसमुदाय द्वारा कृषि को अपनाया गया था। साथ ही, कुछ विशेषज्ञ इस सत्य के बारे में चिंतित थे कि दुनिया की जनसंख्या के अधिकतम वर्ग ने जांची-परखी शिकार-संग्रहण की गतिविधियों का त्याग कर किसी न किसी रूप में कृषि को यह जानते हुए भी अपनाया कि कृषि में असीम खतरे हैं, जिसमें आरंभिक अवस्था की वर्षा आधारित खेती अथवा खेती की शुष्कता सम्मिलित थे। इस प्रश्न ने उन्हें भोजन उपलब्धि की इन दो विधियों के लाभ और नुकसानों को परखने के लिए बाध्य किया।

बदले हुए एक विशिष्ट दबाव के रूप में जनसंख्या और पर्यावरण परिवर्तनों में क्रमबद्ध वृद्धि आदि ने जीवन निर्वाह की गतिविधियों में परिवर्तन को आवश्यक बनाया। जीवाश्मिक साक्ष्य यह दर्शाते हैं कि जैविक दुनिया में परिवर्तन मुख्य रूप से परिवर्तित चयनित दबाव का परिणाम हैं जिसने मानव समुदाय द्वारा इन समायोजित परिवर्तनों को अनिवार्य बनाया (कोहेन 1977: 1)। इसके साथ ही, यह समझना आवश्यक है कि समस्त अभिनूतन युग के दौरान शिकार-संग्रहण अर्थव्यवस्था के सामान्य ढांचे के अंदर एक विशिष्ट दबाव के कारण वनस्पति और जंतु समूह और मानव के विकास में बहुत अधिक बदलाव हुए। इसका मनुष्य पर प्रभाव केवल मनोवैज्ञानिक नहीं था बल्कि तंत्रिका सम्बंधी और व्यवहारिक भी था, इसने परोक्ष ज्ञान और सामाजिक अस्तित्व में सुधार किया। विशिष्ट दबाव की मात्रा और सीमा का प्रभाव अभिनूतन युग के दौरान आरंभिक भूवैज्ञानिक युग की तुलना में अधिक गहन था। इसके अतिरिक्त, इन्होंने जन आबादी के एक बड़े वर्ग को विविध पारिस्थितिक संदर्भ में प्रभावित किया।

4.6.1 जलवायु दबाव संबंधी विचार का प्रारूपः मरुद्वीप सिद्धांत

सोवियत कृषि वैज्ञानिक निकोलई वाविलोव, अमेरिकी भूवैज्ञानिक कार्ल ओ. सौर और ब्रिटिश पुरातत्ववेत्ता वी. गॉर्डन चाइल्ड 1920 और 1930 के दशकों में कृषि की उत्पत्ति पर सबसे पहले चर्चा करने वालों में से हैं। चाइल्ड का विश्लेषण पुरातात्विक आँकड़ों की आर्थिक व्याख्या पर केंद्रित था। उपलब्ध आँकड़ों ने अभिनूतन युग के अंत के बाद दक्षिण-पश्चिम एशिया और उत्तरी अफ्रीका में झीलों और पानी के अन्य स्रोतों के घटने के कारण गहन निर्जलीकरण की ओर संकेत किया है। मानव समुदायों को भूखे रहने के स्तर तक निर्वाह की स्थिति के कारण उन्हें उत्तर-हिमनद काल के पश्चात् आर्थिक जीवन के पुनः अनुकूलन की आवश्यकता थी। इस प्रकार, गॉर्डन चाइल्ड का जलवायु तनाव विविध प्रकार से 'मरुद्यान' ('Oasis'), निर्जलीकरण (desiccation) या उसके समीप्य (propinquity) के सिद्धांत का वर्णन करता है कि प्रागैतिहसिक काल में जलवायु संकटों में मानव के प्रयत्न कैसे थे। उनका विचार था कि कृषि का आरंभ **फर्टाइल क्रेसेन्ट** (Fertile Crescent; दक्षिण-पश्चिम एशिया) के कुछ भागों में कठोर जलवायु परिवर्तनों के कारण हुआ। इस क्षेत्र में आकस्मिक जलवायु व्युत्क्रमण (reversal) ने उत्तर की ओर वर्षा वाले बादलों का रूख मोड़ दिया। इन स्थितियों के कारण प्रचंड सूखे और भुखमरी के स्तरों में वृद्धि हुई। इस प्रकार मनुष्य, पौधे और जानवर मरुद्यान में केंद्रित हो गए जो विशाल मरुस्थल क्षेत्र से अलग हुए हरियाली वाले छोटे भूखंड थे। गर्म और सूखी परिस्थितियों में परिवर्तन के कारण 'बलपूर्वक निकटता' ने मानव, पौधों और पशुओं तीनों के मध्य सांकेतिक सम्बंध को प्रेरित किया।

'मरुद्वीप सिद्धांत' इस विचार पर आधारित है कि सामाजिक-आर्थिक गतिविधियां जैसे कृषि

की शुरुआत एक ही साथ विश्वव्यापी स्तर पर प्रारंभ नहीं हुई। कुछ विशेष और सीमित क्षेत्रों में, लगभग कुछ सौ मील की परिधि में इसकी शुरुआत हुई। इन क्षेत्रों में खेती की शुरुआत के बाद ही अन्य क्षेत्रों में कृषि के फैलने की प्रक्रिया आगे बढ़ी। चाइल्ड के आंकलन के अनुसार कृषि का आंरभ नवपाषाण क्रांति लाया। उनके अनुसार, 'खाद्य उत्पादन – जानबूझकर खाद्य वनस्पति, विशेषकर, अनाज उत्पादन तथा पशुओं को पालतू बनाना, प्रजनन और जानवरों का चयन – मानव इतिहास में आग पर काबू पाने के बाद यह एक महान् आर्थिक क्रांति थी' (1952: 23)।

मानचित्र 4.2: फर्टाइल क्रेसेन्ट,
साभार: नफसाध

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/7/7b/Map_of_fertile_crescent.svg

4.6.2 परमाणु-क्षेत्र प्रारूप

उत्तर-अभिनूतन युग के तुरंत बाद से जलवायु परिवर्तन के परिमाण के कारण जलवायु प्रारूप ने विद्वानों के ध्यान को उलझाये रखा। कुछ ने संदेह किया, तथा कुछ का मत था कि जलवायु परिवर्तन अभिनूतन युग के अंतिम चरण में यंगर ड्रायस घटनाक्रम के दौरान हुआ जब शीत और शुष्कता की तीव्रता का आवेग था।

यंगर ड्रायस ऐपिसोड आकस्मिक, गहन और तीव्र शीतलन काल है जो लगभग 12,800 वर्ष पूर्व उत्तर-अभिनूतन युग से आरंभ हुआ। जब उत्तरी महाद्वीप गर्म होने लगे थे तब तापमान में गिरावट आई और उन पर से बर्फ का आवरण कम होने लगा था। हालांकि गर्म होने की प्रक्रिया अचानक ठंड के वापस आने से बाधित हुई जिसमें मैमथ (हाथियों की विलुप्त प्रजाति) जैसे जानवरों की अनेक प्रजातियां विलुप्त हो गईं। इससे उत्तरी गोलार्ध और विशेषकर उत्तरी यूरोप में ठंड फिर से वापस आ गई। शीत जलवायु की स्थिति 1000 वर्ष से अधिक तक बनी रहीं और आकस्मिक रूप से गायब हो गई जिस तरह यह11,500 वर्ष पूर्व पुनः वापस आई, और वर्तमान जलवायु स्थिति की ओर बढ़ते हुए गर्म होने की प्रक्रिया पुनः शुरू हुई।

अमेरिका के शिकागो विश्वविद्यालय के प्रसिद्ध पुरातत्व वैज्ञानिक रॉबर्ट ब्रेडवुड ने 1950 में जाग्रोस पहाड़ी क्षेत्र की पश्चिमी ढलानों पर हिमकाल के तुरंत बाद जलवायु परिवर्तन के प्रभाव और प्रकृति पर अध्ययन करने के लिए फील्ड वर्क किया। वनस्पतिज्ञों, भूवैज्ञानिकों, जीवविज्ञानियों और पुरातत्ववेत्ताओं की सहायता से विस्तृत जांच के बाद उन्होंने इस क्षेत्र की जलवायु में किसी भी तरह के आकस्मिक परिवर्तन की बात को नकारा। हालांकि, ऐसे स्थानों पर जहां वे जंगली प्रजाति के रूप में प्रचुर मात्रा में थे, पौधे उगाने और जानवरों को पालतू बनाने के पूर्ण साक्ष्य मौजूद थे। अगर कृषि के आरंभ के लिए जलवायु परिवर्तन ही एकमात्र कारक होता तो इसी तरह पालतू बनाने की प्रक्रिया में परिवर्तन अभिनूतन युग में आरंभिक अंतर-हिमनदीय काल के दौरान भी होने चाहिए थे, जब जलवायु काफी हद तक गर्म हो चुकी थी। चूंकि उस पूर्ववती काल में ऐसे कोई सांस्कृतिक परिवर्तन नहीं हुए, यह खारिज करना आवश्यक था कि हिमनद काल के बाद जलवायु में हुए परिवर्तनों को एक महत्वपूर्ण निर्धारक के रूप में न देखा जाए।

रॉबर्ट ब्रेडवुड का तर्क था कि खाद्य उत्पादन के चरण की ओर विकास नियंत्रित तथा क्रमिक था। उनके अनुसार कृषि का आरंभ 'नाभकीय क्षेत्र' या प्राकृतिक वास के क्षेत्र में हुआ, अथात उन क्षेत्रों में जहां पर जानवर और पौधों की प्रजातियां प्रचुर मात्रा में थीं। कालनिर्धारण की कार्बन-14 विधि द्वारा उनकी टीम यह समय निर्धारित करने में सफल हुई कि अलग-अलग स्थलों पर कब आरंभिक खाद्य उत्पादन शुरू हुआ था। यहां ध्यान देना आवश्यक है कि जब चाइल्ड अपना विश्लेषण कर चुके थे तब तक इस नई कालनिर्धारण विधि की तकनीक का विकास नहीं हुआ था। जार्मो के निकट एक पुरातत्व स्थल, जिसका काल निर्धारण लगभग 11,000 वर्ष पूर्व का है, ब्रेडवुड ने जंगली, लेकिन खाने योग्य पौधों और जानवरों को खोजा, उन्होंने इस पर प्रकाश डाला कि लोग तब भी जंगली भेड़, बकरी के शिकार और जंगली गेंहु और जौ के संग्रहण पर निर्भर थे। दो हज़ार वर्ष पश्चात्, 9,000 बी पी में, जार्मो एक गांव के रूप में विकसित हुआ। इस साक्ष्य के आधार पर उन्होंने 'नाभिकीय क्षेत्र' सिद्धांत प्रस्तावित किया जिसे कृषि के आरंभ के विभिन्न सांस्कृतिक स्तरों पर, भोजन संग्रहण से लेकर भोजन के उत्पादन के चरण तक, प्रयोग मे लाया गया। उनके आंकलन के अनुसार परिवर्तन की प्रक्रिया को मानव संस्कृति के परिवर्तन के संदर्भ में देखा जाना चाहिए जिसे उन्होंने 'संस्कृति विभेदन और मानव समुदाय में विशिष्टिकरण में निरन्तर वृद्धि' के तौर पर परिभाषित किया। उनके अनुसार, इस तरह के परिवर्तन पहले नहीं हुए थे क्योंकि 'संस्कृति इसे अपनाने के लिए तैयार नहीं थी'। इसके विपरीत, अभिनूतन युग के अंत तक मानव अपने लाभ के लिए प्राकृतिक वास का शोषण करने में सांस्कृतिक रूप से निपुण हो गए थे।

इस प्रकार, कृषि में परिवर्तन मुख्य रूप से मानव संस्कृति में संयुक्त परिवर्तनों के कारण हुआ। ब्रेडवुड सहित अन्य कई विद्वानों ने कृषि को 'क्रांति' और मानव के लिए बहुत आवश्यक उपलब्धि माना जिसने प्रागैतिहासिक लोगों को सुरक्षा और आराम उपलब्ध कराया। हालांकि, इस सांस्कृतिक प्रारूप में, इस पूर्वानुमान का परीक्षण नहीं हो सका कि मानव प्रकृति की जीवंतता के कारण कृषि क्रांति हुई।

4.6.3 जनसांख्यिकी प्रारूप

लुईस बिनफोर्ड (1968) ने जलवायु प्रारूप को चुनौती देते हुए कहा कि महत्वपूर्ण परिवर्तन जैसे कृषि का आरंभ केवल बहुत बड़े उद्दीपन के कारण ही हो सकता है। उदाहरण के लिए जनसांख्यिकी दबाव अथवा तनाव के रूप में उद्दीपन। उन्होंने आंतरिक और बाहरी जनसांख्यिकी दबाव में भेद किया। बिनफोर्ड के मतानुसार, जनसंख्या वृद्धि सर्वोत्कृष्ट क्षेत्र में होनी चाहिए। उदाहरण के लिए, वह क्षेत्र जो इसके लिए अच्छी तरह से उपलब्ध हो। दक्षिण-पश्चिमी एशिया और तटीय पेरू के मामले में, अभिनूतन युग के अंत में समुद्र के स्तर में वृद्धि ने जनसंख्या को शिकारी-संग्रहणकर्ता से मछली पालन की ओर प्रेरित किया। जीवननिर्वाह गतिविधियों में

परिवर्तन के साथ जनसंख्या में वृद्धि हुई जिसके कारण पर्यावरण बढ़ते हुए जनसंख्या घनत्व का बोझ उठाने में अक्षम हो गया। जनसंख्या का दबाव सबसे घनी बसावट के पास अधिक था। इस तरह की 'आंतरिक' जनसंख्या वृद्धि केवल सबसे घने जनसंख्या क्षेत्र की परिधि वाली संतति जनसंख्या के अलग होने से ही अतंर्विष्ट हो सकता था। ये कम बसे हुए क्षेत्र शिकारी-संग्रहणकर्ताओं द्वारा अधिकृत थे। अधिक घने क्षेत्रों से और अधिक कृषि समूहों के पहुंचने की वजह से जनसंख्या और खाद्य संसाधनों के बीच संतुलन बिगड़ गया। बाहरी जनसांख्यिकी दबाव, संख्या में जैविक वृद्धि के बजाय लोगों के नए समूहों के आगमन के कारणवश हुआ जिससे निर्वाह के संसाधनों में कमी आई। इस असंतुलन ने आर्थिक गतिविधियों में अनुकूलनीय बदलाव को आवश्यक बना दिया। इस प्रकार, कृषि, जनसांख्यिकी दबाव का परिणाम थी जो अभिनूतन युग में जलवायु परिवर्तन के साथ आरंभ हुआ। जनसंख्या और उत्प्रवास इस समस्या से निपटने के लिए आंशिक उपाय थे।

जे.टी. मेयर्स (1971) ने जनसांख्यिकी मॉडल का विस्तार ऐसे क्षेत्र के लिए स्वीकार किया जो कि अच्छे, लेकिन फैलाव की दृष्टि से संकीर्ण पर्यावरण के संदर्भ में था, जिसने जंगली पौधों और जानवरों पर आधारित कृषि जीवन को काफी हद तक संभव बनाया। हालांकि, जब जनसंख्या वृद्धि बहुत अधिक होती है तो संसाधनों पर आंतरिक दबाव को कृषि और पशुपालन द्वारा संतुलित किया जाता है। मेक्सिको की ऊपरी और आसपास की घाटियों का उदाहरण देते हुए वे दर्शाते हैं कि ऊंची पहाड़ियाँ और घाटी के निकास मार्ग पर स्थित शीतोष्ण जंगल लोगों के आवागमन का मार्ग अवरूद्ध करते थे इसलिए वहां की जनसंख्या प्रवासन पद्धति से नहीं रोकी जा सकती थी। अतः आंतरिक सुधार के द्वारा ही इस समस्या को नियंत्रण में रखा जा सकता था। शिकार-संग्राहक समुदायों के विषय में हुए शोध कार्यों ने अभ्रमणशीलता (sedentarism) में वृद्धि को निश्चय ही ऐसे कारण के रूप में देखा जिसने इन समुदायों में प्रजनन दर वृद्धि में सहयोग दिया। परंतु सर्वोत्कृष्ट पर्यावरण के तौर पर मध्य-मेक्सिको की अर्ध-शुष्क घाटी के बारे में यह स्थापित करना कठिन है।

मार्क कोहेन (1977, 2009) के विचार में, कृषि के आरंभ के लिए पर्यावरणीय परिवर्तन की तुलना में मानव की प्रतिक्रिया अधिक महत्वपूर्ण थी। वह ईस्टर बोसेरप (1965) से सहमति रखते हैं कि जनसंख्या वृद्धि गहन कृषि में सहयोग देती है। बोसेरप ने कृषि के कारण जनसंख्या वृद्धि पर आधारित जनसंख्या परिवर्तन के माल्थस द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत का विरोध किया। मार्क कोहेन पूरे अभिनूतन युग के दौरान जनसंख्या वृद्धि के स्तर के विस्तार का उल्लेख करते हैं। शिकारी-संग्रहणकर्ताओं के बीच जनसंख्या वृद्धि ने अधिकार क्षेत्र में विस्तार और सीमांत क्षेत्रों में घुसपैठ को उस सीमा तक बढ़ावा दिया कि जिससे आगे के विस्तार का मार्ग पूरी तरह से अवरूद्ध हो गया। जब जनसंख्या वृद्धि संकटपूर्ण सीमा रेखा के स्तर पर पहुंच जाती है तो शिकार और संग्रहण सफलतापूर्वक नहीं किया जा सकता, अतः इसका (जनसंख्या का) प्रयोग कृषि आरंभ करने के लिए किया गया। अन्य शब्दों में, शिकार और संग्रहण के अलग-अलग चरणों के दौरान पेड़-पौधों के रखरखाव सम्बंधी जानकारी में बहुत महत्वपूर्ण वृद्धि हुई थी। परंतु यह व्यवहार में नहीं आ सका क्योंकि इसके लिए काफी संख्या में कार्य करने वाले नहीं थे। अभिनूतन युग के अंत के बाद शिकार क्षेत्र में कमी के कारण शिकार और संग्रहण कायम नहीं रह पाए लेकिन अधिक व्यक्तियों के कृषि कार्य में लगने से गहन कृषि की जा सकी। यह व्याख्या न सिर्फ उत्तर-अभिनूतन युग के दौरान बल्कि प्रागैतिहासिक काल में शुरू से अंत तक जनसंख्या विस्तार के महत्व पर प्रकाश डालती है। हालांकि, बहुत सारे शोधार्थी इस दावे पर अविश्वास करते हैं। जनसंख्या एक सीमा तक तो बढ़ी लेकिन खाद्य उत्पादन के कालक्रम में, कमोबेश जनसंख्या वृद्धि ज़रूर लगभग समान और नियंत्रण करने योग्य रही होगी।

हालांकि, जनसांख्यिकीय दबाव के महत्व को अनदेखा तो नहीं किया जा सकता, लेकिन यह

भी समझना महत्वपूर्ण है कि उच्च जनसंख्या के कारण यह जरूरी नहीं है कि कृषि की ओर परागमन हो। उत्तर-अभिनूतन युग के दौरान दुनिया के अनेक भागों में जनसंख्या घनत्व में वृद्धि के कारण संसाधनों में कमी आई। लेकिन इस प्रकार के परिवर्तन नहीं हुए जैसा कि कृषि के आरंभ में देखा गया है, जनसांख्यिकीय वृद्धि का कालक्रम सांस्कृतिक परिवर्तन की सीमा से मेल नहीं खाता इसलिए आलोचकों ने अनुभव किया कि जनसंख्या वृद्धि अकेले सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन को निर्धारित नहीं कर सकती। हालांकि वैसे भी यहां कोई भी ऐसा साक्ष्य नहीं मिलता जो प्रागैतिहासिक काल में जनसंख्या दबाव के कारण कृषि उत्पत्ति काअग्रगामी हो।

4.6.4 पारिस्थितिकीय प्रारूप

कार्ल सॉयर (1952) ने जलवायु दबाव के प्रारूप को पूरी तरह से ख़ारिज कर दिया और उसके बदले में पारिस्थितिकीय प्रारूप प्रस्तावित किया जिसमें मानव के हस्तक्षेप को अधिकतम प्रमुखता दी गई है। वे अपने तर्क की पुष्टि नीचे दिए गए प्रमाणों के आधार पर करते हैः '1) कृषि की उत्पत्ति खाद्य अभाव के कारण नहीं हुई। भुखमरी के कगार पर लोगों के पास इतना खाली समय नहीं होता कि वे खाद्यान्न पौधों में सुधार के लिए प्रयोग करें। 2) 'पशु पालन और पौधों को उगाने के प्रमाण' बड़ी विविधता वाले पौधों और जानवरों के चिन्हित क्षेत्रों में पाए जाने चाहिए, वह भू-भाग जो क्षेत्रीय भिन्नता और परिवर्तनशील जलवायु दोनों के द्वारा वर्गीकृत हो। 3) पशु पालन और कृषि की प्रक्रिया नदी घाटियों में आरंभ नहीं हुई, जो कि बाढ़ और सूखे से प्रभावित होता है और जिसे सिंचाई की आवश्यकता होती है। 4) आरंभिक कृषि का प्रयोग 'जंगलों वाली भूमि' पर किया गया।5) आरंभिक कृषकों ने पहले ही विशेष कौशल की प्राप्ति कर ली थी जिसने उन्हें पशु-पालन और कृषि की ओर प्रवृत किया। 6) कृषि के खोजकर्ता पहले से ही अभ्रमणशील बन चुके थे, क्योंकि बढ़ती हुई फसल पर निरंतर ध्यान रखने की आवश्यकता होती है। भूमि पर पौधे बोना और उसे कटाई के समय तक के लिए छोड़ना हिंसक जानवरों के हमलों को निमंत्रण देना होगा जो फसल को नुकसान पहुंचा सकता था' (राईट, 1990: 120)।

कार्ल सॉयर पूर्ववर्ती या पूर्वजों के लिए, मध्यपाषाण युग की ओर देखते हैं जहां के समुदायों के बारे में हमारे पास साक्ष्य हैं जो बताते हैं कि वे विकसित शिकार और संग्रहण के साथ-साथ समुद्र या ताज़ा पानी के झरनों के पास रहकर मछली पकड़ने का कार्य कर रहे थे। इस प्रकार, आरंभिक कृषकों के बारे में उनका मानना था कि वे मछुआरे हो सकते हैं। इस विचार का समर्थन रॉबर्ट मैक एडम्स (1966) भी करते हैं। इनके आंकलन के अनुसार मछली पकड़ने की क्रिया ने ही लोगों को कृषि की ओर प्रवृत किया जिसने अभ्रमणशीलता को और अधिक बढ़ावा दिया और लोगों को एक ही स्थान पर लंबे समय तक टिके रहने के योग्य बनाया। सॉयर ने सुझाव दिया कि मछुआरे जो ताज़ा पानी के किनारे सुहावनी जलवायु वाले स्थानों पर रहते थे, वे अधिक नवप्रवर्तनशील थे। मछली पकड़ने के कार्य में मिलने वाला खाली समय इन्हें पौधों के लिए आसपास के क्षेत्रों का दोहन करने के लिए प्रेरित करता होगा। जो पौधे मांड वाला भोजन, जो मछली पकड़ने के लिए बुने जाने वाले जाल और धागे के लिए सख़्त पदार्थ और उसे जल प्रतिरोधी बनाता है, उपलब्ध कराते थे वे जड़ों वाली फसलें थीं (जिनमें भोजन जड़ों से प्राप्त होता था) जिनको सबसे पहले उगाना शुरू किया गया। आरंभिक कृषकों ने वानस्पतिक पुनःउत्पादन (उदाहरण के लिए, जड़ वाली फसलों को प्रयोग करके या तने को काटकर फिर से उगाना) का उपयोग किया और 'बुआई' से पहले 'पौधा लगाना' सीखा। आरंभिक फसलें थीं केला, अदरक, अरबी और कुछ विशेष भूमिगत भोजन जैसे कांदा और गन्ना इत्यादि। इन क्षेत्रों में ही सर्वप्रथम कुत्तों, सूअरों, मुर्गाबी और बतखों को पालतू बनाया गया (सॉयर, 1952: 120)। पालतू कुत्ते और सूअर की दक्षिण-पश्चिम एशिया में उपस्थिति की व्याख्या सॉयर ने दक्षिण-पूर्व की जनसंख्या के फैलाव के परिणाम के रूप में की है।

ऐसे समय में जब जनसंख्या में निरंतर वृद्धि हो रही थी, दो अलग-अलग जगह से प्राप्त होने वाले खाद्यान्नों – मछली और अनाज (एक पानी में उपलब्ध होती है और दूसरा धरती पर) से कृषि पर और अधिक आश्रित होने को बढ़ावा मिला। कार्ल सॉयर दावा करते हैं कि उन्होंने पारिस्थितिकीय मॉडल अपनाया है, हालांकि उनका शोध मुख्य रूप से आरंभिक 'चूल्हों' की खोज अथवा खाद्य उत्पादन के केंद्र थे। अपने 'जल-स्रोत-केन्द्रक मॉडल' में उन्होंने बुआई फसलों की अपेक्षा जड़ वाली फसल आधारित कृषि तथा पशुपालन की प्रक्रिया दक्षिण-पूर्व एशिया से दक्षिण-पश्चिम एशिया में फैलने के विचार को प्राथमिकता दी। पश्चिमी एशिया में अनाज उत्पादन और पशुपालन की प्रक्रिया जड़ वाली फसलों के उत्पादन के बिना ही देखने को मिलती है।

लेज़ली व्हाईट (1959) ने पारिस्थितिकीय मॉडल का विस्तारण किया, उन्होंने इस विचार का खंडन किया कि खाद्य उत्पादन का अचानक विकास हुआ था। क्रमिकतावादी दृष्टिकोण को अपनाते हुए उन्होंने अनुभव किया कि शिकारी-संग्रहणकर्ता कुछ पौधों और जानवरों की 'पालतू बनने' की क्षमता (domesticability) को समझने के लिए अपने परिवेश को अच्छी तरह जानते थे। इस प्रकार, कृषि का आरंभ मानव समाज और पौधों के बीच के सम्बंध के परिवर्तन को दर्शाता है। व्हाईट ने चाइल्ड के तर्क को आगे बढ़ाया कि जलवायु और भौगोलिक कारकों ने हिमकाल के पश्चात् गर्म परिस्थितियों के रूप में, जनसंख्या वृद्धि और लोगों के प्रवास को उत्प्रेरित किया। जैसे-जैसे लोग नए प्रदेशों में बसे इससे संसाधनों की मांग और पूर्ति में असंतुलन पैदा हुआ। इस असंतुलन ने लोगों को अपने बागवानी सम्बंधी ज्ञान का अभ्यास करने के लिए प्रेरित किया जिसे उन्होंने समय के साथ विकसित किया था, और नई तकनीकों की खोज के लिए प्रोत्साहित किया। रॉबर्ट मैक एडम्स सांस्कृतिक और पारिस्थितिकीय मॉडल प्रस्तुत करते हैं जिसमें स्थानीय पारिस्थितिकीय-तंत्र में परिवर्तनों ने स्थानीय परिवर्तनों को प्रेरित किया जिसमें कृषि का आरंभ भी सम्मिलित है।

केंट फ्लेनरी (1965, 1968) और लुईस बिनफोर्ड के विश्लेषण और जॉर्डन हिलमैन की शिष्या रोमाना अंगर-हेमिल्टन के पुरातत्व संस्थान, लंदन में हाल ही के शोध ने हिमकाल के अंत की ओर बढ़ते हुए विकास के क्रम को प्रमाणित करने वाले स्थानीय अध्ययन की प्रासंगिकता को स्थापित किया। लगभग 1968 के आसपास से कृषि की उत्पत्ति से सम्बंधित और अधिक विस्तारित सिद्धांतों को आगे बढ़ाने के प्रयास किए गए। भूगर्भीय शोध और पुरातात्विक उत्खननों ने दुनिया के अलग-अलग भागों से नवीन साक्ष्य प्रकट किए हैं। इसने दर्शाया कि पर्यावरणीय परिवर्तनों ने दुनिया के विभिन्न भागों को अलग-अलग तरीके से प्रभावित किया। अभिनव युग के आरंभ ने, विशेषकर दक्षिण-पश्चिम एशिया ने तापमान में आकस्मिक और तीव्र बदलाव देखे जैसे विचार अब मान्य नहीं थे। साथ ही अब भी पर्यावरणीय परिवर्तन को एक कारक के तौर पर पूर्ण रूप से नकारा नहीं गया था। हालांकि, शोध का केन्द्र अब अधिक अभ्रमणशील जीवनशैली के कारण अन्य कारकों जैसे जनसंख्या वृद्धि के सामाजिक परिणामों पर केन्द्रित हो गया।

डेविड हेरिस (1969) का विचार था कि जनसंख्या आमतौर पर संसाधनों से अधिक नहीं बढ़ती। लेकिन ऐसा हिमकाल के अंत में प्रागैतिहासिक काल के दौरान पर्यावरणीय अधोगति के कारण हुआ। पर्यावरणीय परिवर्तनों ने गतिशील शिकारी-संग्रहणकर्ताओं की गतिशीलता को प्रभावित किया और अभ्रमणशीता को प्रेरित किया जिसके कारण जनसांख्यिकीय दबाव उत्पन्न हुआ। पर्यावरणीय बदलावों ने मानव जनसंख्या को दुनिया के संक्रमणकालीन भूभागों, जंगल और घास के मैदान, सवाना, नदियों, तटों और उच्च और निम्न भूमि के सीमांत क्षेत्रों के बीच बसने के लिए प्रवृत किया। संक्रमणकालीन भूभागों में पारिस्थितिक-तंत्र इस प्रकार का था जहां पौधों और जानवरों की प्रजातियों की बहुत सारी किस्में थी। इन भूभागों में लोग 'बस सकते' थे और खेती और पशु पालन से पौधों और जानवरों की विविध किस्मों का दोहन कर सकते थे।

व्यवस्था आधारित मॉडल

केंट फ्लेनरी (1968, 1969) ने भी शिकार और संग्रहण से कृषि की ओर संक्रमण के लिए क्रमिकतावादी विकास का सिद्धांत ही अपनाया। इस विचार के बीज डार्विन (1868) द्वारा प्रतिपादित कृषि के प्रथम चरण संबंधी व्याख्या में देखा जा सकता है। इसमें खेती की निरंतरता पर बल दिया गया है न कि शिकार-संग्रहण और खेती को एक दूसरे का विरोधी बताया है। 'भोजन प्राप्ति' की विधि में परिवर्तन की व्याख्या सर्वांगी सम्बंधों के आधार पर की गई थी, उदाहरण के लिए, पर्यावरणीय, जनसांख्यिकी और सांस्कृतिक परिवर्तनों की निरंतर अंतःक्रिया के विश्लेषण के आधार पर।

फ्लेनरी का प्रारूप इन तीन अवधारणाओं पर आधारित हैः

क) खाद्य उत्पादन के पहले शिकारी-संग्रहकर्ता आबादी में वृद्धि हुई थी।

ख) खाद्य उत्पादन की शुरुआत सीमांत क्षेत्रों यानी उन भूभागों में हुई जो ईरान, इराक और तुर्की के पहाड़ी इलाके और फिलिस्तीन के जंगली इलाके के सर्वोत्कृष्ट भूभाग थे।

ग) आरंभ से ही खाद्य उत्पादन के कई केन्द्र थे। खेती की शुरुआत होने से पहले लोग किसी विशिष्ट परिवेश के आदी नहीं थे बल्कि विभिन्न परिवेशों में उपलब्ध पशुओं और पेड़-पौधों के आदी थे। अतएव शिकारी-संग्रहकर्ता भ्रमणशील समूहों ने विभिन्न प्रकार के परिवेशों का शोषण किया। वे अपने साथ विभिन्न प्रकार के उत्परिवर्ती (mutant) पौधों के बीज जुटाते चलते थे और उसे नए प्रदेशों में लगाया करते थे।

'व्यवस्था' सिद्धांत जो ज़ाग्रोस पहाडियों और मैक्सिको की दक्षिणी उच्च भूमि दोनों पर समान रूप से लागू किया गया था, उसमें फ्लेनरी ने मौसमी शिकार और संग्रहण की गतिविधि को प्राथमिकता दी जिसके कारण वे अलग-अलग भूभागों की वनस्पति और जीव जंतु समूह को अनुभव कर सके। डार्विन के **प्राकृतिक चयन** के सिद्धांत में, पौधों की प्रजातियां 'नकारात्मक प्रतिक्रिया' के सिद्धांत द्वारा संचालित होती है, उदाहरण के लिए प्रकृति में प्रचलित सिद्धांत के अनुसार समान प्रजाति के पौधे अलग पर्यावरणीय क्षेत्र में अलग-अलग समय में बढ़ते और तैयार होते हैं। शिकारी-संग्रहणकर्ताओं ने बहुत लंबे समय तक शिकार और संग्रहण के अनुभवों का अध्ययन किया और वे स्वयं भी उसी तरह, मौसम के अनुरूप विभिन्न **पारिस्थितिक-शरण** स्थलों पर आते-जाते थे। विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्ध पौधों और पशुओं के अनुसार समूह की गतिशीलता और आकार निर्धारित होता था। इस प्रकार लोग 'व्यापक स्पेक्ट्रम' अर्थव्यवस्था पर आश्रित थे न कि थोड़े से पौधों और पशुओं पर उनका जीवन आधारित था।

चूंकि मानव समाज और उसके पर्यावरण के बीच का सम्बंध संस्कृति द्वारा अनुकूलन के रचनातंत्र की प्रमुखता के रूप में बना है, शिकारी और संग्रहणकर्ताओं ने अपने भोजन की खोज कला का विशिष्ट प्रजाति के पौधे और जानवरों के चुनाव द्वारा बेहतर तरीके से उपयोग किया। अक्सर पौधों की उत्परिवर्ती किस्म को नए स्थान पर ले जाने से शिकारी-संग्रहणकर्ताओं ने उस क्षेत्र का विस्तारण किया जहां विशेष प्रजाति का ही पौधा उग सकता था। उदाहरण के लिए, गेहूं को ज़ाग्रोस पहाड़ियों पर लाना और मैक्सिको की उच्च भूमि पर मक्का बोना। नए स्थानों पर लगाने से इन पौधों ने पर्यावरणीय संतुलन उलट-पलट कर दिया। इस प्रकार, भोजन खोजने में सक्षम गतिशील शिकारी-संग्रहणकर्ता, **'सकारात्मक प्रतिक्रिया'** सिद्धांत के सूत्रपात के लिए उत्तरदायी थे जिसमें एक ही पौधे को एक ही स्थान पर साल के अलग-अलग समय में उगाया जा सकता था। संकरण और संयोजन द्वारा बीन्स (फलियाँ), कुम्हड़ा और मक्के जैसे पौधों को मैक्सिको तथा कहीं भी किसी भी समय पूरे सालभर वहां उपजाया जा सकता था, जहां ये नहीं पाए जाते थे। शिकारी और संग्रहणकर्ता

के अस्तित्व की पुरानी पद्धति जिसमें वे मौसम के बदलाव के अनुसार घूम-घूम कर शिकार-संग्रहण करते थे धीरे-धीरे एक जगह टिककर खाद्य उत्पादन करने और रहने की पद्धति में परिवर्तित हो गई। कॉलिन रेनफ्रियू (1973) जैसे विद्वानों ने भी संस्कृति परिवर्तन की व्याख्या करते हुए व्यवस्था आधारित सिद्धांत को स्वीकार किया है।

कृषि की उत्पत्ति से सम्बंधित सिद्धांतों और विचारों को कभी-कभी 'दबाव देने' (push) और 'खींचने' (pull) के मॉडल के रूप में वर्गीकृत किया गया है। दबाव देने वाले मॉडल में शिकारी-संग्रहणकर्ताओं को कृषक बनने की तरफ या तो दबाव दिया गया या बाध्य किया गया। ये सिद्धांत जलवायु अथवा जनसंख्या के परिवर्तनशील होने को महत्व देते हैं और परिवर्तशीलता के उन दबावों पर प्रकाश डालते हैं जो समाज को नए सांस्कृतिक अनुकूलन की ओर धकेलते हैं। खिंचाव वाले मॉडल कुछ निश्चित पौधों और पशुओं में अंतर्निहित लक्षणों की ओर संकेत करते हैं जो मानव समुदायों को एक नई जीवनशैली या व्यावहारिक परिवर्तनों के लाभ की ओर आकर्षित करती अथवा खींचती हैं।

4.6.5 सामाजिक प्रारूप

सामाजिक प्रारूप सामाजिक संबंधों के उपार्जन के लिए व्यक्तियों या समूह द्वारा विनिमय की सामाजिक अनिवार्यताओं और दावतों और समारोहों का प्रबंध करने की बाध्यता पर निर्भर था। शिकारी-संग्रहकर्ता समाज के सदस्य वस्तु, भोजन और खराब ना होने वाले सामान के विनिमय से परिचित थे और उनका विनिमय करते थे। अतः विनिमय के लिए उत्पादन करने की जरुरत खाद्य उत्पादन पर आधारित समाज की बढ़ती अभ्रमणशील जीवनशैली की प्रेरक शक्ति थी। नई व्यवस्था ने सामाजिक सहयोग और आपस में आदान-प्रदान को बढ़ाया और इस प्रकार भुखमरी की आशंका को कम किया। अतः बारबरा बेंडर (1975) के मतानुसार शुरू-शुरू में वितरण और विनिमय की आवश्यकता के कारण सामाजिक संबंध परिवर्तित हुए। हाल ही में, ब्रायन हेडन (1995) ने तर्क दिया कि कृषि ने व्यक्ति विशेष की नेतृत्व क्षमता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जिससे वह समूह के अन्य सदस्यों के लिए भोज समारोह का आयोजन करके अन्यों के साथ सफलतापूर्वक प्रतिस्पर्धा कर सकें। भोज समारोहों का आयोजन करके इन विशेष व्यक्तियों ने अपना सामाजिक स्तर और सम्मान बढ़ाया जिसने भुखमरी की आशंका के घटकों को कम किया। इसके फलस्वरूप परस्पर आदान-प्रदान पर आधारित सम्बंध अब असमानता और पदानुक्रम आधारित व्यवस्था में बदल गए। सामाजिक प्रारूप महत्वपूर्ण हैं परन्तु इसके साक्ष्य जमा करना और जांचना कठिन है। यहां निकट-पूर्व (Near East) की ओर आरंभिक नवपाषाणिक समाज में सामाजिक असमानता में वृद्धि के महत्वपूर्ण साक्ष्य मिलते हैं। परन्तु यह अब तक ज्ञात नहीं हो सका है कि क्या ये कृषि के आरंभ के कारणों में से भी एक था।

बोध प्रश्न-2

1) पौधे उगाना और पशुओं को पालतू बनाए जाने की शुरुआत विवाद का विषय क्यों है ?

....

....

....

....

....

....

2) पौधे उगाने की शुरुआत से सम्बंधित विभिन्न सैद्वान्तिक दृष्टिकोणों के प्रमुख बिन्दुओं को पहचानिये।

....

....

....

....

....

3) क्या आप विभिन्न विद्वानों द्वारा कृषि की शुरुआत से संबंधित सैद्वान्तिक अंतर्दृष्टि में समानता और अंतर को पहचान सकते हैं? किन्हीं दो प्रारूपों पर चर्चा करें।

....

....

....

....

....

4.7 सारांश

अब तक आप यह समझ गए होंगे कि कृषि के आरंभ की वास्तविक प्रकृति तक पहुँचना आसान नहीं है। कृषि के आरंभ की कोई एक स्वीकृत व्याख्या नहीं है। शोध अभी भी चल रहे हैं। सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न जिसने विद्वानों को बहस में उलझाया है वह यह है कि क्या कृषि का आरंभ कठिन परिस्थितियों में हुआ था, जहां प्राकृतिक संसाधनों का अभाव था, या कृषि की शुरुआत सर्वोतम परिस्थितियों में हुई थी, जहां नए प्रयोग करना कम जोखिम भरा था। हाल ही में डगलस टी. प्राइस और ऐनी बी. गिबॉयर (1995) ने तर्क दिया कि पौधे उगाना और पशुओं को पालतू बनाया जाना जैसे प्रयोग वहीं सफल होतें हैं जहां खतरा कम हो। पर्यावरणीय परिवर्तनों, जनसांख्यिकीय बदलाव तथा स्थानान्तरण, बृहद सांस्कृतिक पारस्परिक अंतःसम्बंध और सामाजिक गतिशीलता संबंधित अनुसंधान यह दर्शाते हैं कि क्यों और कैसे नवपाषाण संक्रमण, मानव के जैविक क्रमिकविकास के सवाल की तरह, प्रागैतिहासिक काल के सबसे अधिक पेचीदा सवालों में से एक है। निःसंदेह रूप से हालांकि, लगभग 12,000 वर्ष पहले भोजन की तलाश में घूमने वाले कई समूहों ने नियमित रूप से पशुचारणता (pastoralism) और कृषि (farming) को चुना।

4.8 शब्दावली

व्यापक स्पेक्ट्रम अर्थव्यवस्था : एक ऐसी अर्थव्यवस्था जो विविध प्रकार के संसाधनों का दोहन अपनी खाद्य आपूर्ति के लिए करती है।

पारिस्थितिक-शरण स्थल : इसे पारिस्थितिकीय-वास के रूप में भी जाना जाता है, इस शब्दावली का प्रयोग किसी प्रजाति या जनसंख्या की सम्बंधात्मक अवस्था को वर्णित करने के लिए किया जाता है।

फर्टाइल क्रेसेंट (Fertile Crescent) : मध्य पूर्व तथा पश्चिम एशिया का क्षेत्र, जिसकी बनावट चौथ के चांद के आकार में मुड़ी हुई है,

जिसका विस्तार फारस की खाड़ी से दक्षिणी इराक, सीरिया, लेबनान, जॉर्डन, इज़राईल और उत्तरी मिस्र क्षेत्र में है।

होलोसीन/अभिनव काल (Holocene) : भूवैज्ञानिक आंकड़ों के अनुसार आधुनिकतम या हाल ही की स्तरीकृत इकाई जो 11,700 बी पी से आज तक के अंतराल को सम्मिलित करती है। होलोसीन/अभिनव काल, जिसका अर्थ है 'पूर्ण रूप से अभी का', शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम जर्वेस (1867-69) ने किया जो वातावरण के गर्म होने की घटना की ओर संकेत करता है जो अंतिम हिमकाल से प्रारंभ हुई। यह शब्द औपचारिक तौर पर अंतर्राष्ट्रीय भौगोलिक कांग्रेस (IGC) द्वारा 1885 में स्तरीकृत आंकड़े की समुचित इकाई और इस घटनाक्रम की ओर संकेत देने के लिए अपनाया गया। पिछले अभिनूतन युग के साथ अभिनव युग को औपचारिक रूप से चार भागों वाली समयावधि (Quarternary System) के अंदर के युग के रूप में परिभाषित किया गया है।

मध्यपाषाण युग : पुरापाषाण युग की प्रारंभिक शिकार-संग्रहण अर्थव्यवस्था और नवपाषाण युग की कृषि अर्थव्यवस्था के बीच का संक्रमण काल जब हमें जानवरों को पालतू बनाने, पशुपालन और पौधों की किस्मों का ध्यानपूर्वक चयन करने के प्रयास मिलते हैं।

प्राकृतिक चयन : प्रकृति का वह सिद्धांत जो किसी क्रिया के अपने आप दुबारा होने के अंतिम परिणाम की रोकथाम करता है।

नवपाषाण युग : एक पुरातात्विक काल जो अपेक्षाकृत विकसित भूमि और परिष्कृत औज़ारों के आधार पर कृषि के आरंभ का प्रतिनिधित्व करता है।

अभिनूतन काल (Pleistocene) : वह भूवैज्ञानिक युग जो लगभग 16 लाख वर्ष पूर्व से 15,000 वर्ष पूर्व तक अस्तित्व में रहा।

परागण (Pollination) : परागों के पुंकेसर (stamen; पौधे का नर भाग) से पिस्टिल (pistil; पौधे का मादा भाग) में स्थानांतरण होना जो धीरे-धीरे निषेचन (fertilzation) और बीजों के उत्पादन को संभव बनाता है।

सकारात्मक प्रतिक्रिया : यह प्रकृति का वह सिद्धांत है जो किसी क्रिया के स्वयं दुबारा होने के अंतिम परिणाम को होने देता है।

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) आपके उत्तर में निम्न तर्क होने चाहिए: जलवायु परिवर्तन, उसका पशुओं और पौधों की संरचना पर प्रभाव, मानव के द्वारा उपयोग किए गए नए उपकरण और भोजन संग्रह, खाद्य उत्पादन तथा मानव द्वारा जानवरों का परिनियोजन। भाग 4.2 और 4.5 देखें

2) भाग 4.4 और 4.5 देखें

3) कुत्ता, सूअर, बकरी, भेड़। उनकी शिकार, पशुधन, दूध, ऊन आदि के संबंध में उपयोगिता समझाइए। भाग 4.5 देखें

बोध प्रश्न-2

1) कोई एक सिद्धांत पूरी तरह स्वीकारा नहीं गया है। भाग 4.6 देखें

2) उप-भाग 4.6.1-4.6.4 देखें

3) उप-भाग 4.6.1-4.6.4 देखें

4.10 संदर्भ ग्रंथ

एडम्स रॉबर्ट मैक्सी. 2007 [1966]. *द इवॉल्यूशन ऑफ अर्बन सोसाइटीः अर्ली मेसोपोटामिया एंड प्रीहिस्पानिक मेक्सिको.* न्यू ब्रंसविक और लंदन एल्डाइन ट्रांज़ेक्शन.

बॉसरप, ऐस्टर. 1965. *द कंडीशन्स ऑफ एग्रीकल्चरल ग्रोथः द इकॉनोमिक्स ऑफ एग्रेरियन चेंज अंडर पोप्युलेशन प्रेशर,* लंदनः एलन एंड अनविन.

बेंडर, बारबरा. 1975. *फारमिंग इन प्रीहिस्ट्रीः फ्रॉम हंटर-गैदरर टू फूड प्रोड्यूसर.* न्यूयॉर्कः सेंट मॉर्टिन.

बिनफोर्ड, लुईस ऑर. 1968. 'पोस्ट-प्लीइस्टोसीन अडेप्टेशंस', एल. ऑर. बिनफोर्ड एवं एस. ऑर. बिनफोर्ड (संपादित), *न्यू पर्सपेक्टिव इन आर्कियोलॉजि,* पृ. 313-342. शिकागोः एलडाइन पब्लिकेशन कंपनी.

बोगुकी, पी. 1999. *द ओरीजिंस ऑफ ह्यूमॅन सोसाइटी.* मैसाचुसेट्स एंव ऑक्सफ़ोर्डः ब्लैकवेल पब्लिशर्स.

ब्रेडवुड, रॉबर्ट. 1960. 'द एग्रीकल्चरल रिवोल्यूशन', *साइन्टिफ़िक अमेरिकन सीरीज़,* 203 (3): 130-148.

क्लार्क, ग्राहेम जे. 1977. *वर्ल्ड प्रीहिस्ट्री इन न्यू पर्सपेक्टिव.* एन इलस्ट्रेटिड थर्ड एडिशन. केम्ब्रिजः केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

कोहेन एम. 1977. *फूड क्राइसिस इन प्रीहिस्ट्रीः ओवरपॉप्यूलेशन एंड द ओरीजिन्स ऑफ एग्रीकल्चर.* न्यू हेवॅनः येल यूनिवर्सिटी प्रेस.

कोहेन, एम. 2009. 'इन्ट्रोडक्शन, रीथिंग्किग द ओरीजिन्स ऑफ एग्रीकल्चर'. *करंट ऐन्थ्रोपॉलजी,* 50 (5): 591-595-

डारलिंगटन, सी. डी. 1969. 'द साइलेंट मिलेनिया इन द ओरीजिन्स ऑफ एग्रीकल्चर', पीटर जे. ऊको एवं जी. डब्ल्यू. डिम्बलबाय (संपादित), *द डोमेस्टिकेशन एंड इक्स्प्लॉइटेशन ऑफ़ प्लान्ट्स एंड एनिमल्स.* पृ. 67-72. लंदनः डक्स्वर्थ.

फेगन, बी. एम. एवं एन. दुर्रानी., 2016. *द पीपल ऑफ द अॅर्थः ऐन इनट्रोडक्शन टू वर्ल्ड प्रीहिस्ट्री.* लंदनः रूटलेज.

होल, फ्रेंक, फ्लैनरी, केंट वी एवं नीली, जेम्स. ए. 1969. *प्रीहिस्ट्री एंड ह्यूमॅन इकोलॉजी ऑफ द देह लुरान लेनः एन अर्ली विलेज सिक्वेंस फ्रॉम खुज़िस्तान, ईरान.* ऐन आरबरः मेमॉयर्स ऑफ द म्यूज़ियम ऑफ ऐन्थ्रोपॉलजी, यूनिवर्सिटी ऑफ मिचिगन, नं. 1.

कारलोवस्की, सी. सी. लेम्बरग एवं जेरेमी ए सेबलॉफ. 1979. *ऐनशियन्ट सिविलाइज़ेशन्सः द नीयर ईस्ट एंड मेसोअमेरिका.* केलिफोर्नियाः बेंजामिन-कमिन्स पब्लिशिंग कंपनी.

फ्लैनरी, के. वी. 1965. 'द इकोलॉजी ऑफ अर्ली फूड प्रोडक्शन इन मेसोअमेरिका', *साइन्स,* 147 (3663): 1247-1256.

फ्लैनरी, के.वी. 1968. 'आर्कियोलॉजिकल सिस्टम्स थ्योरी एंड अर्ली मेसोअमेरिका', बैट्टी जे. मेगर्स (संपादित), *ऐन्थ्रोपॉलजीकल आर्कियोलॉजी इन द अमेरिकाज़,* पृ. 67-87. वाशिंगटन, डी सी.: द ऐन्थ्रोपॉलजीकल सोसाइटी ऑफ वाशिंगटन.

फ्लैनरी, के.वी. 1973. 'द ऑरिजिन्स ऑफ एग्रीकल्चर'. *ऐन्यूअल रिव्यू ऑफ ऐन्थ्रोपॉलजी,* 2: 271-310.

प्राइस, टी. डी. (संपादित). 2000. *यूरोप्स फर्स्ट फारमर्स,* केम्ब्रिजः केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

प्राइस, टी. डी. एवं ए. बी. गिबोयर (संपादित). 1995. *लास्ट हंटरस-फर्स्ट फारमर्सः न्यू प्रर्स्पेक्टिवस ऑन द प्रीहिस्ट्रारिक ट्रांज़िशन टू एग्रीकल्चर,* सांता फे, न्यू मेकस्किोः स्कूल ऑफ अमेरिकन रिसर्च.

प्राइस, टी. डॅगलस एवं ओफर बार-योसफ. 2011. 'द ओरीजिन्स ऑफ एग्रीकल्चरः न्यू डाटा, न्यू आईडियाज़', *करंट ऐन्थ्रोपॉलजी,* 52 (4), 163-174.

रेडमैंन, सी. एल. 1978. *द राईज़ ऑफ सिविलाइज़ेशन्स. फ्रॉम अर्ली फारमर्स टू अरबन सोसाइटी इन द ऐनशिन्ट नीयर ईस्ट.* सैन फ्रांसिस्कोः डब्ल्यू. एच. फ्रिमैंन.

रेन्फ्रू, कॉलिन. 1973. *बिफोर सिविलाइज़ेशन : द रेडियोकार्बन एंड प्रीहिस्टॉरिक यूरोप.* लंदन : जोनाथन केप.

सॉयर, कार्ल ओ. 1952. *एग्रीकल्चरल ओरीजिन्स एंड डिस्परसल्स.* न्यूयॉर्कः अमेरिकन जिआग्रेफ़िकल सोसाइटी.

ऊको, पीटर जे. एवं जी. डब्ल्यू. डिम्बलबाय (संपादित). 2009 (1969). *द डोमेस्टिकेशन एंड इक्स्प्लॉइटेशन ऑफ़ प्लान्ट्स एंड एनिमल्स.* न्यू ब्रन्सविक एवं लंदनः ऐलडाइन ट्रान्ज़ेक्शन [ओरिजनली पब्लिश्ड इन शिकागोः ऐलडाइन पब्लिकेशन कंपनी].

वेंके, आर. जे. एवं डी. आई. ओलज़ेवस्कि. 2007. *पैटर्नस इन प्रीहिस्ट्री ह्यूमॅनकाइन्ड्स फर्स्ट थ्री मिल्यन इयर्स.* 5th ऐडिशन. न्यूयॉर्कः ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

राईट, गैरी ऐ. 1992. 'ऑरीजिन्स ऑफ फूड प्रोडक्शन इन साऊथ-वेस्टर्न एशियाः सर्वे ऑफ आइडियाज़', *करंट ऐन्थ्रोपॉलजी,* 33 (1). *सप्लीमेंटः इंक्वाइरी एंड डिबेट इन ह्युमन साइन्सेज़: कंट्रीब्युशंस फ्रॉम करंट ऐन्थ्रोपॉलजी,* 1960-1990: 109-139 [ओरिजनली पब्लिश्ड इन *करंट ऐन्थ्रोपॉलजी,* 12 (4/5), 1971: 447-477].

पी डी एफः

https://www.academia.edu/14869132/Theories_about_Origin_of_Domestication_and_Agriculture

http://hdl.handle.net/2027/spo.0522508.0015.103

4.11 शैक्षणिक वीडियो

मैनकांइडः द स्टॉरी ऑफ ऑल ऑफ असः डोमेस्टिकेटिंग द डॉग
https://www.youtube.com/watch?v=mCLQ_8I1paY

मैनकांइडः द स्टॉरी ऑफ ऑल ऑफ असः बर्थ ऑफ फ़ार्मिंग
https://www.youtube.com/watch?v=bhzQFIZuNFY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 5 विभिन्न क्षेत्रों में आरंभिक कृषि*

इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 पश्चिमी एशिया में कृषि का आरंभ

5.3.1 बीधा और जेरिको

5.3.2 ईरान और इराक़ में ज़ाग्रोस पर्वत

5.4 अनातोलिया और यूरोप से प्राप्त साक्ष्य

5.5 मेसोअमेरिका और चीन

5.6 सारांश

5.7 शब्दावली

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.9 संदर्भ ग्रंथ

5.10 शैक्षणिक वीडियो

5.1 उद्देश्य

इस इकाई में हम कृषि के आरंभ और विश्व के विभिन्न भागों में आरंभिक कृषि प्रणाली के बारे में चर्चा करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- उन क्षेत्रों की पहचान कर सकेंगे जहां आरंभिक कृषि का आविर्भाव हुआ,
- उन कारकों की व्याख्या कर पांएगे जिनके कारण अलग-अलग क्षेत्रों में कृषि की प्रकृति में विविधता आई, और
- भोजन खोजने और घुमंतुपन के साथ-साथ कृषि विकास के महत्व को समझ सकेंगे।

5.2 प्रस्तावना

कृषि और पशुपालन की ओर परागमन मानव समुदायों के सामाजिक और आर्थिक व्यवस्थापन के लिए बहुत महत्वपूर्ण था। मानव जीवन में कृषि से क्रांतिकारी परिवर्तन आया क्योंकि अब उनके पास बढ़ती हुई मांग की पूर्ति और आपातकालीन समय में उपयोग के लिए भंडारण की अतिरिक्त संभावना थी। हालांकि, शिकार-संग्रहण और भ्रमणशील जीवनशैली पूर्ण रूप से त्यागी नहीं गई थी, और विश्व के कई भागों में यह समाज के जीवन निर्वाह की आवश्यकताओं की पूर्ति करती रही। अनेक विद्वानों में कृषि के आरंभ की व्याख्या नवपाषाण काल की क्रांति के रूप में प्रस्तुत करने पर विवाद है, विशेषकर जब इसका प्रयोग आकस्मिक और अप्रत्याशित परिवर्तन का वर्णन करने के लिए किया गया था। हालांकि, जीवन निर्वाह के अस्तित्व और बसावट के प्रतिरूप पर प्रभाव के रूप में कृषि के क्रांतिकारी महत्व पर व्यापक समर्थन है।

* डॉ श्रीमंजरी, इतिहास विभाग, मिरांडा हाउस, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

विश्व के विभिन्न भागों से प्राप्त पुरातात्विक साक्ष्यों ने पर्यावरणीय और सामाजिक-आर्थिक प्रभावों की एक विस्तृत श्रेणी स्थापित की है, जैसे विश्व के तापमान में वृद्धि और इसका वनस्पति और जीव जंतुओं पर व्यापक प्रभाव और बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए अनेक खाद्य स्रोतों जैसे घोंघा, केकड़ा, सीपी और मछली आदि का दोहन करने की अंतर्निहित क्षमता में वृद्धि हुई। ऐसे ही एक प्रसंग में, कैंट फ्लेनरी (1973: 276) ने अनुभव किया कि जंगली अनाज की बाली उसे उगाने और तैयार करने में लगने वाले परिश्रम के बावजूद स्वादिष्ट लगती होगी। कुछ विशेष पौधे और जानवरों का इस तरह कुशलतापूर्वक प्रयोग किया गया कि वे मानव समाज के लिए दीर्घकालिक आधार पर उपयोगी बन गए। इस प्रसंग में विशेषकर कृषि के आरंभ को एक अपरिवर्तनीय घटना के रूप में देखा गया। आरंभिक कृषि की प्रकृति और समय निर्धारण में क्षेत्रीय विविधता थी। आरंभिक कृषि स्थलों की भौगोलिक स्थिति, जलवायु और पर्यावरण के कारण ही आरंभिक कृषि में यह विविधता महसूस की गई। इस इकाई में हम, आरंभिक कृषि की प्रकृति में क्षेत्रीय विविधता के साथ-साथ व्यापक सांस्कृतिक समानताओं का इन दोनों क्षेत्र विशेषज्ञों द्वारा किए गए शोध की छान-बीन करेंगे। एक इकाई में विश्व के सभी क्षेत्रों का अध्ययन कर पाना संभव नहीं है, इसलिए हमने उदाहण के तौर पर पश्चिमी एशिया, यूरोप, मेसोअमेरिका तथा चीन का अध्ययन यहां प्रस्तुत किया है।

5.3 पश्चिमी एशिया में कृषि का आरंभ

पुरातत्ववेताओं और अन्य विशेषज्ञों का ध्यान तथा शोध पश्चिमी एशिया पर काफी केंद्रित रहा जो आरंभिक कृषि को समझने के लिए पर्याप्त जानकारी उपलब्ध कराता है। गॉर्डन चाइल्ड, रॉबर्ट ब्रेडवुड, लुईस बिनफोर्ड, कैंट फ्लेनरी, ऐंथनी मूर और ओफार बार-योसफ समेत अन्य बहुत से विद्वान आरंभिक कृषि पर विभिन्न परिप्रेक्ष्य से बहस कर चुके हैं। उनके विचारों में भेद होने के बावजूद, जैसा कि **इकाई 4** में देखा गया, कि इन सभी विद्वानों के शोधों ने आरंभिक अधिवासियों द्वारा भूपरिदृश्य को मानव के रहने लायक बनाने में उल्लेखनीय प्रगति के रूप में इस क्षेत्र की प्रचुर समृद्धि पर प्रकाश डाला है। भूवैज्ञानिक जेम्स हैनरी ब्रेस्टेड ने इस क्षेत्र को 'उपजाऊ अर्धचंद्र' (Fertile Crescent) कहा – जो यहां आरंभिक कृषकों की कृषि उत्पादन के विशिष्ट केन्द्रों की प्राकृतिक प्रवृति की ओर संकेत देता है।

जैसा कि हमने पिछली इकाई में देखा, अभिनूतन युग के अंत में, लगभग 11,700 बी सी ई और उसके पश्चात् अभिनव युग के आरंभ में पश्चिमी एशिया में शिकारी-संग्रहकर्ताओं का जीवन जलवायु के उतार-चढ़ाव द्वारा प्रभावित हुआ। पश्चिमी एशिया के गहरे समुद्र केन्द्रों, ऊपरी तलछट और झीलों से प्राप्त पराग के कणों से प्राप्त साक्ष्य दर्शाते हैं कि अभिनूतन युग के अंतिम भाग की जलवायु ठंडी और शुष्क थी। अभिनूतन युग के अंत के तुरंत पश्चात् तापमान और वर्षा में वृद्धि के बाद लगभग 9000 बी सी ई के दौरान शुष्कता अर्थात सूखे में वृद्धि इुई। तब भी, अभिनव युग के आरंभ के समय, जलवायु ठंडी और आर्द्र थी। ये परिस्थितियां विशेषकर मानव के बसने के लिए उपयुक्त थीं। वर्षा में वृद्धि के कारण पूर्वी भूमध्यसागरीय क्षेत्र के तटीय पर्वतों के आसपास वन क्षेत्र में विस्तार हुआ। आधुनिक तुर्की, सीरिया, इज़राइल, इराक़ और ईरान के पर्वतों और निचली पहाड़ियों को सर्दियों में पर्याप्त मात्रा में वर्षा (वर्ष में 20 इंच से अधिक) प्राप्त हुई। इससे आगे के घास के मैदान पौधों और जानवरों की प्रजाति दोनों ही में समृद्ध थे। उदाहरण के लिए, लेवांट का क्षेत्र (Levant) दो प्रकार के जंगली गेहुँ (एनकॉर्न और एम्मर) और ज़ौ के लिए उपयुक्त था।

भेड़ और बकरी के जंगली पूर्वज पहाड़ी भूभाग में बसते थे। 11,000 बी सी ई के आसपास उत्तर केबारन काल के दौरान यहां पशुओं के चराने के साक्ष्य मिलते हैं। उसके शीघ्र पश्चात्, जॉर्डन घाटी (विशेषकर वादी-एन-नतूफ) में मध्यपाषाण युग के नेतुफियन समुदाय ने यहां काफी हद तक जीवन निर्वाह का आधार विकसित किया। उन्होंने जंगली मृग, भेड़ और बकरी

के मध्य-ग्रीष्मकाल में घास की खोज में ऊपरी पहाड़ियों की ओर प्रवासी परागमन का अनुसरण किया। उन्होंने तटीय जल ससांधनों का दोहन किया और क्षेत्र की नवीन-निर्मित झीलों में मछली पकड़ने का कार्य किया। उन्नत घुमंतुओं ने वहां पाए जाने वाले जंगली अनाजों और पौधों को भी एकत्रित किया।

केबारन काल (13,000-11,000 बी सी ई) का नाम जॉर्डन घाटी की कबारा गुफा स्थल के नाम पर रखा गया है। यह काल अनुपुरापाषाण काल के रूप में पहचाना गया, अर्थात यह वह काल है जो पुरापाषाण काल के बाद और मध्यपाषाण काल के पूर्व का काल है।

नेतुफियन पश्चिमी एशिया के मध्यपाषाण काल की संस्कृति से सम्बंधित हैं। इनका नाम जॉर्डन घाटी क्षेत्र की वादी-एन-नतूफ स्थल के ऊपर रखा गया। ये क्षेत्र के अपेक्षाकृत अधिक स्थायी रूप से बसे समूहों में प्रथम थे जिन्होंने नियमित तरीके से जंगली अनाजों की बालियों को जमा करने तथा पशुपालन के साथ नए औज़ारों जैसे पत्थर का हँसिया और पीसने-कूटने वाले उपकरण, जैसे ओखली और मूसली, का प्रयोग भी किया।

नेतुफियन उस समय प्रचलित खाद्य संग्रहण के कौशल में इतने निपुण थे कि उसने उन्हें एक विशेष स्थान पर लम्बे समय तक टिके रहने के योग्य बनाया और उस समय प्रचलित उनकी घुमंतु गतिविधियों को कम किया। 10,500 बी सी ई के सांस्कृतिक दस्तावेजों में औज़ार, जैसे छोटी बर्छी, लघुपाषाण औज़ार और मछली पकड़ने के हुक आदि कुल्हाड़ियों और हँसियों के साथ-साथ मिले जो कि अधिक स्थायी बसावट वाली जीवनशैली की प्रवृति की ओर संकेत करता है। हँसिए पर अनाज की बाली से प्राप्त हुए सिलिका के कणों की जमावट के कारण चमक, यह इस तथ्य की पुष्टि करती है कि उन्होंने पौधों की खेती करनी शुरू कर दी थी। उन्होंने एक स्थान पर बसने की जीवनशैली को और अधिक बढ़ाने के लिए अन्य टिकाऊ भोजन जैसे बाँजफल (बलूत का फल; oaknut) की ओर भी रूख किया होगा। नेतुफियन स्थलों से प्राप्त औज़ार जैसे ओखली और मूसली, पौधों पर उगने वाली फसल पर उनकी अधिक निर्भरता की पुष्टि करते हैं। जैसे-जैसे आगे तापमान में वृद्धि हुई और यह 8000 बी सी ई के आसपास दक्षिणी लेवांट में बढ़कर और अधिक गर्म हो जाता है, तो वहां वन आवरण और वर्षा में कमी आई जिसने नेतुफियनों को जानवरों के लेबनान और सीरिया की ओर प्रवास का अनुकरण करने के लिए प्रेरित किया होगा। बहुत से नेतुफियन स्थलों को त्याग दिया गया था, और बाद में कुछ स्थलों, जैसे जेरिको, में फिर से बसावट हुई और जिसे आरंभिक कृषि बसावट के रूप में पुरातात्विक मान्यता मिली।

अब यह बहुत अच्छी तरह स्थापित हो गया है कि सिर्फ जलवायु परिवर्तन ने ही कृषि को प्रेरित नहीं किया। बड़े जनसमुदाय की आजीविका के पोषण के लिए तथा यह तथ्य कि आरंभिक कृषि गहन श्रम वाली थी और तभी की जा सकती थी जब कार्य करने के लिए अधिक हाथ उपलब्ध हों, जिसने समुदायों को कृषि द्वारा अधिक अभ्रमणशील अस्तित्व की ओर खींचा। इस प्रकार, लगभग 8500 बी सी ई के बाद, जब नेतुफियन अधिक अनुकूल वातावरण वाले क्षेत्रों की ओर पलायन कर गए, वहां समुदायों को उपयुक्त प्रोत्साहन मिला जिससे वे प्रकृति की ओर से उपलब्ध अच्छे भूभागों की खोज कर सकते थे, विशेषकर नए पालतू बनाए गए पशुओं के लिए पानी और चारागाही भूमि। आरंभिक गांव निचली यूफ्रेट्स के बजाय ऊपरी यूफ्रेट्स की तरफ सिमटे हुए थे जहां कृषि सिंचाई, और बाद में कई हज़ार साल में शहरीकरण की प्रक्रिया देखी गई। नवपाषाण गांव जैसे तैल मुर्रेबित, जो सीरिया में मध्य यूफ्रेट्स स्थित एक स्थल (लगभग 8000-7600 बी सी ई) है, विशेषकर अधिक वर्षा और चारागाह की उपलब्धता के कारणवश ही अस्तित्व में आया। परिवर्तन की प्रक्रिया के पूर्ववर्ती काल में संसाधनों की उपलब्धता और जनसंख्या द्वारा उसके दोहन करने की आवश्यकता के बीच असंतुलन की लगातार उत्तरोतर बढ़ती हुई गति के कारण भोजन प्राप्ति के कौशल और नए तरीकों को बढ़ावा मिला। जानवरों को और अच्छे तरीके से नियंत्रित किया गया और पौधों को उगाने में और अधिक व्यवस्थित पद्धति को अपनाया गया।

5.3.1 बीधा और जेरिको

जैसा कि पहले भी बताया गया है कि, आरंभिक नवपाषाण गांव उन क्षेत्रों के पास स्थापित हुए जहां पानी, कृषि योग्य भूमि और चारागाह थे। जॉर्डन स्थित बीधा में नेतुफियन स्तर पर *कापरा* (बकरी की एक प्रजाति) को कुल जीव-जंतु समूह का 76% मानते हैं। यह दर्शाता है कि *कापरा* सबसे अधिक शिकार की जाने वाली प्रजाति थी। बाद में नवपाषाण काल में 7500-6200 बी सी ई में यहां बाह्याकृति, प्रजनन और पशुओं की जीवन पद्धति में परिवर्तन के संकेत मिलते हैं जिसकी पुष्टि जीन समूह और जीवाश्म अवशेषों के अध्ययन से होती है, जो इंगित करता है कि पशुओं के झुंडों की देखरेख पर आधारित सफल पशुचारी अर्थव्यवस्था ने पशुओं को पालतू बनाए जाने वाली अर्थव्यवस्था की जगह ले ली। आरंभिक नवपाषाण स्तरों में उच्च गुणवत्ता वाली प्रोटीनयुक्त सब्ज़ियों के स्रोत जैसे मटर, दालें और अन्य फलीदार पौधे भी उपस्थित थे। बीधा में अल्पविकसित प्रारंभिक सिचांई तकनीकी जानकारी के साक्ष्य और मूसलियों (pestles) और पत्थर के अन्य बर्तनों का प्रयोग यह प्रदर्शित करता है कि इसने कृषि को आगे बढ़ाया।

जॉर्डन घाटी क्षेत्र में जेरिको (वर्तमान में फिलिस्तीन में) सदाबहार झरने के पास था, अतः यह बढ़ती हुई कृषि बस्ती के लिए पानी का महत्वपूर्ण स्रोत था। मध्य-बीसवीं सदी में पुरातात्विक खुदाईयां मुख्य रूप से कैथलीन केन्यॉन (1959) द्वारा की गई जिसने दर्शाया कि वहां बसावट में मध्यपाषाण काल से आरंभिक कृषि चरण तक, जो लगभग 10000 बी सी ई के बाद, यहां एक निरंतरता देखने को मिलती है। जेरिको के निचले स्तरीकृत खुदाई-क्षेत्र में उनके द्वारा मिट्टी के बर्तनों के प्रयोग के साक्ष्य नहीं मिलते। इस पूर्व-मृदभांड-नवपाषाण ए (PPNA) अवस्था (लगभग 8300-7300 बी सी ई) में उगने वाले गेहुँ और जौ मूल रूप से इस प्रदेश के नहीं थे। इन बालियों के बीज संभवतः जॉर्डन घाटी से लाए गए थे। हालांकि, जल्दी ही यहां इन बालियों की खेती में आरंभिक प्रयासों के बाद, आरंभिक कृषकों ने पर्यावरण का दोहन कुछ इस प्रकार किया कि वे अधिशेष खाद्य उत्पादन करने के योग्य हो गए। मृग, सुअर और जंगली गाय-बैल जानवर पी पी एन ए आरंभिक स्तर के प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। इस अवस्था में जानवरों को पालतू बनाए जाने के कोई साक्ष्य नहीं मिलते। जेरिको से जो साक्ष्य मिलता है वह महत्वपूर्ण ढंग से यह तथ्य स्थापित करता है कि विशेषीकृत शिकार ने जानवरों को पालतू बनाने की प्रक्रिया को तो प्रोत्साहित किया, लेकिन यह ज़रूरी नहीं है कि हर शिकार करने वाली अर्थव्यवस्था (इस संदर्भ में मृग शिकार अर्थव्यवस्था) शिकार किए जाने वाले जानवरों को आवश्यक रूप से पालतू बनाने की ओर बढ़ाती। जेरिको में मृग की बजाए भेड़ और बकरी को चुना गया था। यह कुछ इच्छित लक्षणों (जैसे बालों वाला शरीर) अथवा उन पशुओं की खाने की आदतों के कारण हो सकता है। मृग का एक विशेष प्रकार का आहार और सीमित वास स्थान होता है, जो उसे पालतू बनाए जाने के लिए अयोग्य बनाता है।

जेरिको में प्रारंभिक कृषि काल में कृषि पर अधिक आश्रयता के कारण मध्यपाषाण औज़ार जैसे लघुपाषाण औज़ार और हड्डी से बनी बर्छी धीरे-धीरे समाप्त हो गए और इनकी जगह काटने, खोदने वाली छड़ी, एक सामान्य किस्म के पीसने और कूटने वाले उपकरणों द्वारा प्रतिस्थापित हो गए। हर प्रकार के फलक जिसमें हँसिए के स्पष्ट दांतेदार फलक और अच्छी तरह बनाए गए तीर अनुपात में छोटे थे और उस समय लघुपाषाण औज़ारों की प्रकृति में गुणात्मक बदलाव आया। अनुवर्ती पूर्व पॉटरी-मृदभांड-नवपाषाण ए चरण में, जो एक समय अंतराल (लगभग 9250-8350 बी सी ई) के पश्चात् अस्तित्व में आया जब वहां बसावट में कमी आई थी, तब वहां लघुपाषाण औज़ारों की प्रकृति में गुणात्मक बदलाव आया। अपेक्षाकृत नए औज़ारों की श्रेणी में पीसने वाले उपकरण जैसे ओखली, मूसली, चक्की, साथ ही हथौड़े का पत्थर और चमकाने (पॉलिश) के पत्थरों का मिलना निश्चित रूप से कृषि अर्थव्यवस्था पर अधिक आश्रित होने का संकेत देता है।

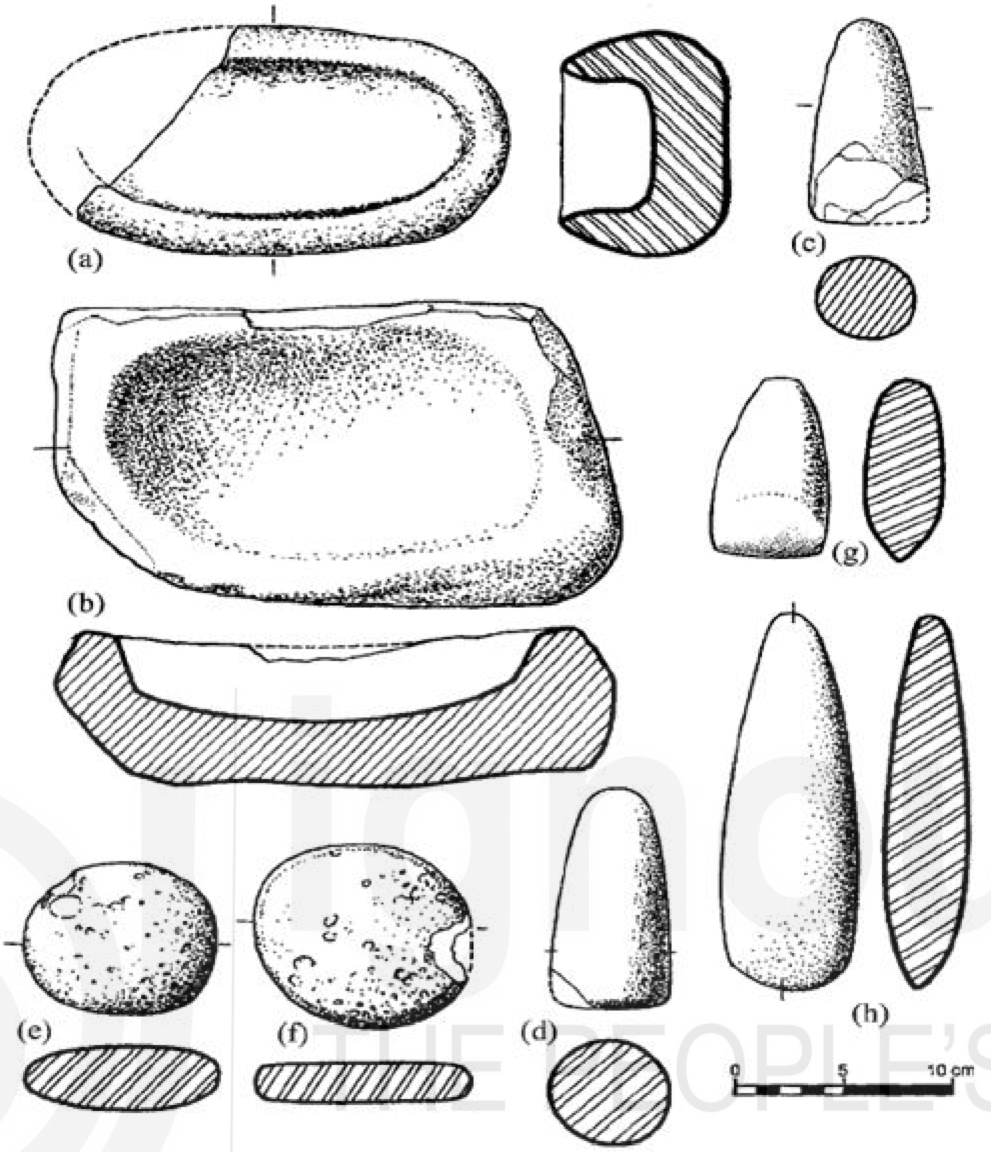

चित्र 5.1: जेरिको सहित दक्षिणी लेवांट के पूर्व मृदभांड-नवपाषाण बी (PPNB) से प्राप्त पीसने वाले और पत्थर के पालिश किए हुए उपकरण (a और b); पीसने वाले पत्थर; (c और d) ओखली; (e और f) हाथ के पत्थर; (g और h) घिसाई और पॉलिश की हुई कुल्हाड़ी

साभार: क्यीत, इयान और मॉरिस, एड्रियन-नीजेल गोरिंग, (2002): 'फार्मिंग एंड सोशल कॉम्प्लेक्सिटी इन द प्री-पॉटरी निओलिथिक ऑफ द सदर्न लेवांटः ए रिव्यु, एंड सिन्थसिस' *जर्नल ऑफ वर्ल्ड प्रीहिस्ट्री*, भाग 16 (4). पृ. 361-440.

स्रोत: https://www.researchgate.net/figure/Ground-and-polish-stone-tools-from-the-Early-Middle-and-Late-Pre-Pottery-Neolithic-B_fig12_227138426

बदलती हुई आवासीय स्थापत्य कला में यह समझना आसान है कि कृषि आवासीय परियोजना से जनसंख्या में बढ़ोत्तरी हुई। पी पी एन ए अवस्था में घर गोल अथवा वक्रीय थे और बाद में पी पी एन बी अवस्था (लगभग 7300-6000 बी सी ई) में आयताकार योजना में बनाए गए थे। स्थापत्य शैली में परिवर्तन जीवन पद्धति में बदलाव के साथ-साथ जनसंख्या में वृद्धि दोनों की ओर संकेत देता है। आरंभिक काल के गोलाकार घर हल्के सामान से बने थे और आसानी के साथ ले जाए जा सकते थे। आयताकार घरों में मिट्टी के पलस्तर के साथ ईंटों से बना चबूतरा भी था। आयताकार ढांचे में कमरे जोड़े जा सकते थे और इसलिए, ये घर जनसंख्या में वृद्धि के साथ व्यापक स्तर पर अभ्रमणशीलता का भी संकेत देते हैं। दिलचस्प बात यह है कि 1950 में कैथलीन केन्यॉन द्वारा खुदाई के दौरान यहां, तेरह फुट की गहराई पर, गोलाकार घरों के बिल्कुल नीचे, गाद की एक मोटी सतह (deposit) भी प्राप्त हुई।

यह सतह बहुत सी सतहों के ऊपर तले होने से बनी थी जो ठोस दीवार से तो संयुक्त नहीं थी लेकिन मिट्टी के टीलों से झोपड़ी जैसे आवास के फर्श की तरह लगता है। अतः इस प्रकार की सतहों को बनाने के लिए समय की एक लम्बी अवधि की ज़रूरत होती है, जो दर्शाती है कि समुदाय सदाबहार झरनों के पास स्थाई रूप से कमोबेश रह रहे थे परंतु ये निवास स्थान पर, जो खानाबदोशों के रहने के लिए अधिक उपयुक्त थे और बाद में वे और अधिक स्थाई निवास स्थानों की ओर चले गए (केन्यॉन, 1959: 40)।

चट्टान से काटी हुई एक 9 फुट गहरी और 10 फुट चौड़ी खाई मिली है जिसमें बुर्जों के साथ पत्थर की दीवार से अच्छी तरह बाड़ बनाई गई थी। हालांकि दीवार बनाने का असली कारण स्पष्ट नहीं है, संसाधनों की कमी के कारण स्पर्धा और इन संसाधनों को सुरक्षित रखना संभवतः इस सुरक्षा व्यवस्था का कारण था। हाल ही के कुछ भूआकृति विज्ञान के शोधकर्ता (ऑफर बार-योसफ, 1998) दर्शाते हैं कि जेरिको बाढ़ प्रभावित क्षेत्र था, जिससे संकेत मिलता है कि शायद यह दीवार बाढ़ रोकने के लिए बनाई गई हो।

उत्तरी फिलिस्तीन-दमिश्क नदी घाटी और भूमध्यसागरीय तट की बस्तियों के अलावा, बीधा और जेरिको में नवपाषाणिक गांव 6000 बी सी ई के पश्चात् नष्ट हो गए। पर्यावरण में गिरावट आने और आर्द्रता में वृद्धि के कारण स्टैप्स का परित्याग कर दिया गया जिससे बसावट में उस समय कमी दिखाई देती है। नवपाषाणिक समुदाय की इस बदलाव में भूमिका थी। पौधों को उगाने और पशुओं को पालतू बनाने में छोटे भूखण्डों को कृषि के साथ-साथ पशुओं को चरने के लिए साफ करने की आवश्यकता थी। इससे निश्चित रूप से वनों की कटाई पर प्रभाव पड़ा। इस प्रकार, ईंधन के लिए लकड़ी प्राप्त करने के लिए भी पेड़ों को गिराने के चलन ने पर्यावरण के साथ छेड़खानी की जिसके साक्ष्य नवपाषाण काल की स्तरीकृत परतों में पराग कणों में कमी से मिलते हैं।

चित्र 5.2: जेरिको टॉवर, तैल एस-सुल्तान पुरातत्व स्थल, लगभग 7000 बी सी ई
साभारः रेन्हार्ड दीत्रिख
स्रोतः विकिपीडिया कॉमन्स (https://fr.m.wikipedia.org/wiki/Fichier:Tower_of_Jericho.jpg)

5.3.2 ईरान और इराक़ में ज़ाग्रोस पर्वत

ईरान और इराक़ में जॉग्रोस पर्वत के वन प्रदेश कुछ अनाजों की बाली जैसे जंगली गेंहुँ, जौ, दालें, फलियाँ (vetch; मटर के परिवार की एक जंगली प्रजाति), मटर और अलसी के साथ कुछ पालतू बनाए जाने वाले पशुओं की प्रजातियों के भी प्राकृतिक उत्पत्ति स्थल थे। हालांकि, कई फसलों में तनों (rachis) की भंगुरता के कारण बीजों के पकने के बाद झड़ के बिखर जाने के कारणवश अनाजों के बीजों को एकत्रित करने की प्रक्रिया धीमी होती होगी। इसके साथ ही, जैक हरलेन का 1960 के दौरान किया अध्ययन भली प्रकार प्रमाणित करता है कि आवश्यक उपकरणों की अनुपस्थिति के कारण अनाजों के बीजों को हाथ से अलग किया जाता था। 10,000-7000 बी सी ई के मध्य इन कृषि संसाधनों पर निर्भरता बढ़ी होगी जब आरंभिक कृषकों ने नए प्रकार के काटने वाले उपकरण और भंडारण की सुविधा को अपना लिया।

कुर्दिस्तान के स्थल जैसे करीम शहर, शानिदार और तेपे असियाब की खुदाईयां दर्शाती हैं कि शिकारी-संग्रहकर्ताओं को 9800 बी सी ई से जंगली गेंहुँ और अन्य पौधों की जानकारी थी तथा वे उसे उगा रहे थे। ज़ाग्रोस पर्वतों के कुछ आरंभिक कृषि स्थलों पर मध्यपाषाण काल और नवपाषाण काल के बीच बसावट निरंतरता दिखाई देती है। गंज-दरेह, जो ज़ॉग्रोस पर्वत पर 4,593 फुट की ऊँचाई पर स्थित है, लगभग 10,500 वर्ष पूर्व शिकारी-संग्रहकर्ताओं द्वारा इसे मौसमी शरण स्थल की तरह प्रयोग किया जाता था। यहाँ विश्व में बकरी को पालतू बनाए जाने के सबसे पहले साक्ष्य मिलते हैं (ज़ेदर और ब्रियान, 2000: 2254)। नवपाषाण काल के दौरान यह गांव के रूप में परिवर्तित हो गया था। पश्चिमी ईरान के आर्द्र घास के मैदान (स्टैप्स क्षेत्र) में स्थित अली कोश, दसवीं सहात्राब्दि बी सी ई के मध्य बसा हुआ था। यह वह समय था जब शिकारी-संग्रहकर्ता मछली, मृग, जंगली गधा, सूअर, का शिकार करते थे; मेहमेह नदी में मछली और शंख मछली एकत्रित करते और जंगली पक्षियों को पकड़ते थे। 1960 के दौरान फ्रेंक होल और केंट फ्लेनरी ने खुदाई में जिस बसावट में उत्खनन किया था वह दशार्ते हैं कि उस बसावट में रहने वाले 8000 बी सी ई के दौरान सामान्य सी खेती, शिकार और संग्रहण सभी तरीके का मिला-जुला जीवन जीते थे।

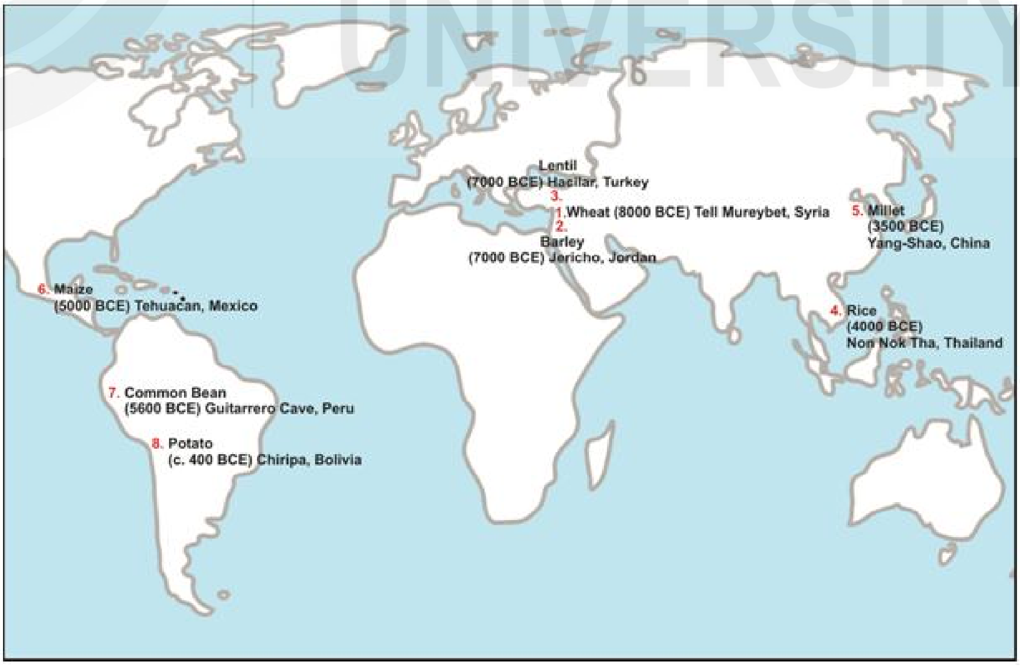

मानचित्र 5.1: उगाए जाने वाले आरंभिक पौधों की प्रजातियां (वेंके, रॉबर्ट जे., (1984). *पैटर्नस इन प्रीहिस्ट्रीः ह्यूमनकाइंड्स फर्स्ट थ्री मिलियन इयर्स*.ऑक्फोर्डः ओयूपी. पृ. 162 पर आधारित)

स्रोतः एम एच आई-01: ऐंशियंट एंड मिडिवल सोसाईटीज़, इग्नू स्टडी मटीरियल, 1990, खंड 1, इकाई 3, मानचित्र 4, पृ. 55

इराक़ की कुर्दिश पहाड़ों की तलहटी में स्थित जार्मो के विकास का इतिहास (लगभग 7000-4700 बी सी ई) बहुत लम्बा है, कि किस प्रकार यह अस्थाई बसावट से स्थाई गांव में विकसित हुआ। यहां सबसे पहले खुदाई, शिकागो विश्वविद्यालय के ओरिएंटल संस्थान के रॉबर्ट जे. ब्रेडवुड ने 1949-50 में की थी। ब्रेडवुड का इस बात पर बहुत गहरा विश्वास था कि खाद्य उत्पादन का सबसे पहला केन्द्र ज़ाग्रोस पर्वतों की पहाड़ियों के बीच में रहा होगा जहां पर्यावरणीय कारणों से उगाए जाने वाले पौधों और पालतू बनाए जाने वाले पशु प्राकृतिक रूप से प्रचुर मात्रा में उपलब्ध थे। इन्होंने इस जगह को 'नाभिकीय क्षेत्र' (nuclear zone) की संज्ञा दी। खुदाई, जो अगले पांच वर्ष, 1955, तक चलती रही, दर्शाती है कि जार्मो का नवपाषाणिक गांव 4700 बी सी ई के दौरान अच्छी तरह विकसित हो गया था और जो लगभग तीन से चार एकड़ में फैला हुआ था ('जार्मो एक्सपीडीशन', 1955: 460)। यहां रहने वालों ने मिट्टी के मकान बनाए थे जो अधिक टिकाऊ नहीं थे। यहां पर एक ही जगह पर दुबारा निर्माण के साक्ष्य मिलते हैं। मकानों की मरम्मत की गई थी और शायद भूमि की किफायत के लिए उसी स्थान पर दुबारा निर्माण किया गया था। बार-बार निर्माण के कारण विघटित ढेरों से लगभग 5 फुट मोटी एक दीवार उठाई गई थी जो शायद बाढ़ से भी बचाव करती थी। लगातार इस क्षेत्र में पुनः बसावटों के कारण 12 अलग-अलग स्तरों के उच्च स्थल मिलते हैं। जार्मो में पकी हुई मिट्टी से बने लगभग 24 घरों का समूह मिलता है। जार्मो में मिट्टी के पलस्तर की दीवार वाले गांव कुछ-कुछ संकेत देते हैं कि इस गांव का फैलाव 150 लोगों के आसपास था।

जार्मो चरवाहों और कृषकों का समाज था। जानवरों की हड्डियों के अवशेषों में खासतौर पर पालतू बनाए जाने वाले जानवरों जैसे भेड़, बकरी और सूअर की हड्डियाँ बड़ी संख्या में पाई गई हैं। खुदाई में प्राप्त पीसने वाले पत्थर, ओखली, मूसली, पत्थर का हँसिया और अनाज के कार्बन में परिवर्तित दाने दर्शाते हैं कि जार्मो में रहने वाले अत्यधिक सक्रिय कृषक थे। वनस्पतिज्ञ हेंस हॉलबैक, जो इस अभियान का हिस्सा थे, उन्होंने आरंभिक 1950 के दौरान जार्मो में खुदाईयां करवाईं, उन्हें घरों की मिट्टी की दीवारों पर अनाज के निशान मिले, विशेषकर चूल्हे की मिट्टी की दीवारों पर। ब्रेडवुड के अनुसार यहां पर कृषक गेंहुँ और जौ ऊपजाने के आरंभिक चरण में थे। अनाज की बालियों के साथ-साथ मटर और दालें भी उगाई जाती थीं। यहां के निवासी दैनिक जीवन में पत्थर का व्यापक स्तर पर इस्तेमाल करते थे। उनके औज़ारों के किनारे चकमक (flint) पत्थर और चमकदार **लावे के कांच** (obsidian; लावे से बना प्राकृतिक कांच) से मढ़े हुए थे और उनके औज़ारों के भंडार में लघुपाषाण औज़ार भी सम्मिलित थे। लावे का कांच मुख्य रूप से अनातोलिया, लगभग तीन सौ मील उत्तर, से वान झील क्षेत्र से लाया जाता था। इसका अर्थ यह है कि इन दोनों क्षेत्रों के बीच नियमित आदान-प्रदान का सम्बंध था।

पत्थर का प्रयोग पीसने वाले उपकरण जैसे मूसली, ओखली और चक्की आदि बनाने के लिए भी किया गया था। अनेक सजावटी चीज़ें जैसे मोती, लॉकेट और कंगन भी पत्थर से बनाए गए थे। हड्डी का प्रयोग दैनिक प्रयोग की वस्तुऐं बनाने और सजावट दोनों के लिए किया गया था जैसे सुआ, सुईयां, पिनें, चम्मचें और मोती। मिट्टी का व्यापक प्रयोग मनुष्य और जानवरों के कई किस्म के सिर बनाने में किया जाता था जिन्हें संभवतः ईश देवता की भेंट, अनुष्ठान अथवा प्रजनन संबंधी धार्मिक कृत्यों के लिए प्रयोग किया जाता था। यह दिलचस्प है कि, मिट्टी की सुघढ़ता से परिचित होते हुए भी जार्मो के आरंभिक निवासियों ने इसका प्रयोग आसानी से उठाकर ले जाने योग्य मिट्टी के बर्तन बनाने में नहीं किया और उन्होंने पत्थर के कटोरे और तारकोल की कलई **(डांबर)** वाली टोकरियों का ही प्रयोग जारी रखा। लिंडा ब्रेडवुड (1952) का विचार है कि हालांकि मिट्टी के बर्तनों का प्रयोग, जो काफी सुघड़ता से निर्मित थे, बाद में इस कालावधि में आखरी निवासियों द्वारा किया गया, जो दर्शाते हैं कि यह तकनीक जार्मो के पास बाहर से आई थी, जिसे क्षेत्रीय निवासियों द्वारा अपनाया गया था।

चित्र 5.3: जार्मो से प्राप्त व्यक्तिगत आभूषण – 1. कार्नेलियन मनके, 2. फिरोजा मनके 3. मिट्टी के मनके 4. पत्थर के कंगन, 5. मिट्टी, पत्थर तथा सीप के पेंडेंट
साभार: दादेरॉत ओरियंटल संस्थान संग्रहालय की प्रदर्शिनी शिकागो विश्वविद्यालय, शिकागो, यू.एस.ए.
स्रोत: क्रिएटिव कॉमंस (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Jarmo_personal_adornments,_1_carnelian_beads,_2_turquoise_bead,_3_clay_beads,_4_stone_bracelets,_ 5_pendants_of_clay,_stone,_and_shell_-_Oriental_Institute_Museum,_University_of_ Chicago_-_DSC06938.JPG)

दक्षिण पश्चिम मध्य ईरान के पड़ोसी क्षेत्रों में भी इसी तरह का विकास हो रहा था। कर्मनशाह और ज़ाग्रोस के पूर्व की तरफ के स्थलों पर बीसवीं सदी के मध्य से शुरू की गई खोजों ने शिकार और संग्रहण में निपुणता के आधार पर समुदायों के बसने की आरंभिक प्रक्रिया को प्रदर्शित किया है। रॉबर्ट ब्रेडवुड अपने इस विचार पर लगातार बने रहे कि इन स्थलों से प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर केंट फ्लेनरी द्वारा प्रस्तावित तीन प्रकार के जीवनयापन की अवधारणा को स्थापित करना बहुत मुश्किल है जिसमें उन्होंने विशेषीकृत शिकार-संग्रहण के चरण और 'आरंभिक कृषि' के उस चरण में भेद किया जिसने 'व्यापक स्पैक्ट्रम क्रांति (broad spectrum revolution)' का नेतृत्व किया।

हालांकि, लगभग 6000 से 5,000 बी सी ई की सीरिया और मेसोपोटामिया नवपाषाण संस्कृतियों में महत्वपूर्ण प्रगति देखी गई। इसके उदाहरण हलफ़, हसुना, समारा और उबैद की संस्कृतियों में देखे जा सकते हैं। यह प्रगति हाथ से मिट्टी के बने बर्तनों की विशिष्टता, घरों की निर्माण कला और कुछ स्थलों पर सिचांई पर निर्भरता में साफ दिखाई देती है। 5500 बी सी ई तक दक्षिणी मेसोपोटामिया के कुछ भागों में कृषि, गाय-बैल और भेड़ के पालन, खजूर की खेती और मछली पकड़ने में महत्वपूर्ण सुधार हुआ था।

बोध प्रश्न-1

1) पश्चिमी एशिया के कुछ आरंभिक कृषि स्थलों के नाम बताइए।

....

....

....

....

....

2) ऊपर चर्चित क्षेत्रों के संदर्भ में पर्यावरणीय परिवर्तनों, जनसंख्या वृद्धि और सामाजिक परिवर्तन के बीच परस्पर सम्बंध की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

3) पश्चिमी एशिया के स्थलों में कृषि गतिविधियों में समानताओं और असामानताओं पर प्रकाश डालिए।

....

....

....

....

....

5.4 अनातोलिया और यूरोप से प्राप्त साक्ष्य

आरंभिक अभिनव युग में अनातोलिया में वर्षा में वृद्धि लगातार बनी रही। जिससे इस क्षेत्र के, विशेषकर पश्चिमी और मध्य भागों में वन आवरण को फैलने में सहायता मिली। लेवांट में मानव-आवास की परिस्थितियों में सुधार बहुत बाद में शुरू हुआ लेकिन आवासीय परिस्थितियां यहां बहुत लम्बे समय तक बनी रहीं। दक्षिणपूर्वी अनातोलिया में फ़रात (Euphrates) और टिगरिस द्वारा जलप्लावित क्षेत्रों में एनकॉर्न गेहूं की खेती के साक्ष्य मिलते हैं। सनलिउरफा येनी महाले क्षेत्र, जिसे विश्व में एनकॉर्न की खेती के सबसे पुराने स्थल के रूप में पहचाना गया है, लगभग 9400 बी सी ई पुराना है। आसपास के अन्य स्थलों जैसे कि सायोनु तेपेसी (8600-7000 बी सी ई) में हम स्पष्ट तौर पर शिकार संग्रहण और कृषि के कुछ अंश दोनों पर निर्भर सामान्य सी अर्थव्यवस्था की प्रगति को पहचान सकते हैं, जैसा कि वहां पत्थर के पीसने वाले उपकरण बनाने की प्रक्रिया और इसके साथ ही कैप्राइन (caprines; बकरी से सम्बंधित) को पालतू बनाने के साक्ष्य मिलते हैं। सैद्धांतिक रूप से भेड़ और बकरी, जिनका आंशिक रूप में अनुष्ठानिक महत्व था, जटिल सामाजिक रीति-रिवाज से संबंधित थे।

जे. मेलार्ट ने 1960 के दशक के दौरान, केटालहोयुक स्थल की सबसे पहले खुदाई की थी, और इयान होडर द्वारा यहां हाल ही में की गई खुदाई के आधार पर इसे अनातोलिया में उत्तर नवपाषाणिक स्थलों में सबसे बड़ा और प्रमुख स्थल माना जाता है। 7400 बी सी ई और 6200 बी सी ई के बीच यह एक गांव था। यह उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी पर और झरने के समीप स्थित था जिसने पौधों को उगाने और अनाज के **संकरण** (एक किस्म को दूसरी किस्म के साथ मिलाकर पैदावार करना) के लिए उत्कृष्ट अवसर प्रदान किए। यहां पालतू बनाए जाने वाले सबसे प्रमुख जानवर गाय-बैल थे। अनातोलिया के पठार पर स्थित यह प्रदेश लावे के कांच (obsidian) की चट्टान के पास था, ज्वालामुखी के लावे का कांच कृषि में इस्तेमाल करने वाले उपकरणों की धार को तेज़ बनाने के लिए किया जाता था जिसका पूरे पश्चिमी एशिया में आदान-प्रदान किया जाता था। यह इतने व्यापक स्तर पर फैला हुआ था कि विद्वान इस तरह के लावे के कांच को आमतौर पर दूसरी वस्तुओं से आदान-प्रदान के लिए 'व्यापार' शब्द का प्रयोग करते हैं।

चित्र 5.4: केटालहोयुक की आरंभिक खुदाई
साभार: उमर हॉफ्तुन
स्रोत: वीकीपीडिया
(https://commons.wikimedia.org/wiki/File:%C3%87atalh%C3%B6y%C3%BCk_excavations_..jpg)

लगभग 8000 वर्ष पूर्व, केटालहोयुक की नवपाषाणिक बसावट 32 एकड़ क्षेत्र तक फैली हुई थी। धूप में सुखाई गई ईंटों से लगभग समान आकार के अनगिनत मकान बनाए गए थे। मकानों की नींव में भी मिट्टी की ईंटों का प्रयोग किया गया था। मकान आयताकार थे और उसमें एक भण्डार गृह भी जुड़ा होता था। वे एक दूसरे के पीछे बने हुए और कई बार छोटे से आंगन से अलग होते थे। मकानों के अन्दर उल्लेखनीय समरूपता देखने को मिलती है जिसमें आराम करने की जगह, रसोई और पूजास्थल के लिए विशेष स्थान बनाए हुए थे। मकानों का प्रवेश छत से था जिसमें हटाई जा सकने वाली सीढ़ी की सहायता से पहुंचा जा सकता होगा। इसके द्वारा बाहरी लोगों और बाढ़ से सुरक्षा मिलती होगी। सुरक्षा की यह व्यवस्था बहुत हद तक सफल रही होगी क्योंकि केटालहोयुक के विनाश का कारण सिर्फ आग ही थी। यह ऐसा गांव था जिनमें अक्सर शहर के गुण भी देखे गए। 1200 वर्ष की समयावधि में उसका 18 बार पुनः निर्माण किया गया।

दिलचस्प है कि, पड़ोस के गोबेक्ली तेपे स्थल के विपरीत, जहाँ हाल ही में की गई खुदाईयों में महापाषाणीय ढांचों की उपस्थिति मिली है, केटालहोयुक में सार्वजनिक पूजास्थल या उत्सव केन्द्र नहीं मिलते। लौकिक और आनुष्ठानिक दोनों प्रकार की गतिविधियां घरों के अन्दर ही किए जाने के साक्ष्य मिलते हैं। पुरातात्विक साक्ष्य दर्शाते हैं कि अनेक मकानों के समूहों को केवल मलबे के ढेर या फिर संकरी गलियां अलग करती थीं, इनमें व्यापक अलंकरण था और वे उच्च स्तर की प्रतीकात्मकता को दर्शाते हैं। ईयान होडर की टीम को यहां खुदाई के दौरान मानव और जानवरों के बड़ी संख्या में चित्र, कई घरों में कब्रें, मृत्यु के बाद अलग की गई खोपड़ियां, साथ ही साथ बैलों के सींग और लेप लगाए हुए सांड के सींग प्राप्त हुए जो दीवारों तथा बैंचों पर व्यवस्थित रूप से रखे हुए थे। यह विस्तृत फैलाव तथा आदान-प्रदान और पहचान के जटिल अर्थों को प्रतिबिम्बित करता है। यह ये भी दर्शाता है कि वहां पवित्र और सांसारिक पूरी तरह एक दूसरे में मिले हुए थे, लेकिन फिर भी, जैसा कि होडर (2010) ने अपने शोध के आधार पर निष्कर्ष निकाला, कि वहां के लोगों का पूर्वजों के साथ गहरा जुड़ाव बना हुआ था। अनातोलिया और अन्य दक्षिण पश्चिम क्षेत्र में इसके समान लेकिन संभवतः कम जटिल प्रवृति प्रचलन में थी। कृषि का आरंभ अपने आप में कोई अलग घटना नहीं थी। कहीं

यह पहले घटी और कहीं बाद में, कई बार अनुसरण करते हुए जटिल सामाजिक और सांस्कृतिक बदलाव के साथ कदम मिलाती रही जिससे विद्वानों में जिज्ञासा बनी हुई है।

यूरोप में कृषि का आरंभ कम आकस्मिक था। बर्फ की चादरों के संकुचन और हिमकाल के अंत के परिणामस्वरूप गर्म और आर्द्र परिस्थितियों का आरंभ हुआ। इस कारण रेंडियर अधिक ठंडे प्रदेशों की तरफ चले गए और लाल हिरण और एल्क (elk; हिरण परिवार का सदस्य) जैसे शाकाहारी जानवर उत्तरपश्चिमी यूरोप की ओर चले गए। शिकारी-संग्रहकर्ता समूहों ने मध्यपाषाणकाल में नव निर्मित झीलों और झरनों का लाभ उठाया। अन्यत्र, बाल्टिक और केस्पियन सागर के किनारे मछली पकड़ने और जाल द्वारा पक्षी पकड़ने से जीवन निर्वाह के अतिरिक्त स्रोत मिले। उत्तरपश्चिमी यूरोप (लगभग 11,000-9000 बी सी ई) में मध्यपाषाणकाल के पुरातात्विक दस्तावेज़ दर्शाते हैं कि जलवायु परिवर्तन के कारण छोटे जानवर जैसे हिरण, जलपक्षी, मछली, घोंघे और सीपी में बहुत अधिक वृद्धि हुई जिसने शिकार को कठिन बनाया, जिसने समुदायों को गहन भोजन संग्रहण और सीमित शिकार करने पर मजबूर कर दिया।

यूरोप में कृषि के आरंभ को लेकर विद्वानों में विवाद है। अनेक विद्वानों का मत है कि कृषि की उत्पत्ति पश्चिमी एशिया में हुई और अनातोलिया और अन्य भागों से किसानों के आने के पश्चात् यूरोप के विभिन्न भागों में फैली। इस विचार को यूरोप में कृषि की स्थानीय वृद्धि का तर्क देने वालों के द्वारा चुनौती मिली। यूरोप में एम्मर गेंहुँ, जौ की खेती तथा गाय-बैल और सूअर को पालतू बनाने के आरंभिक साक्ष्य दक्षिण-पूर्व यूनान (7000 बी सी ई) में अरगिस्सा-मघुला से और बाद में फ्रांचथी गुफाओं से (6000 बी सी ई) मिलते हैं। इटली के पश्चिमी तट ने 6000 बी सी ई के आसपास इसी तरह के विकास का अनुभव किया।

जहां तक कि सम शीतोष्ण यूरोप का सम्बंध है, कृषि का आरंभ स्थानीय और बाहरी दोनों तत्वों के आने के परिणामस्वरूप हुआ। पर्यावरणीय परिवर्तनों, जैसा कि भूमध्यसागर के जल स्तरों में वृद्धि के कारण काले सागर का जल स्तर बढ़ने ने भी समुदायों को डेन्यूब घाटी के ऊपरी हिस्सों और समुद्र के किनारों और तटों पर बसने के लिए प्रेरित किया होगा। यह घटना संभवतः 5500 बी सी ई के दौरान घटी। सम शीतोष्ण यूरोप में आरंभिक कृषि मुख्य रूप से लोएस मिट्टी (loess; एक प्रकार की उपजाऊ रेतीली पीली मिट्टी) में उसके उपजाऊ होने के कारण हुआ जिसे खोदने वाली लकड़ियों और सामान्य हल से आसानी से जोता जा सकता था। गाय-बैलों के पालन और जौ, एनकॉर्न जैसी फसलों पर आधारित कृषि अर्थव्यवस्था का विकास यहां छठी सहस्त्राब्दि बी सी ई के अंत तक हो चुका था।

बाल्कन क्षेत्र (दक्षिण-पूर्व यूरोप में स्थित) के बाढ़ के उपजाऊ मैदानों में कृषि के आरंभिक प्रयोग बहुत हद तक सफल रहे। 5500 बी सी ई के दौरान गेंहुँ और जौ की खेती, पालतू भेड-बकरी और एक कमरे के मिट्टी के लेप वाले मकान पर आधारित कृषि अर्थव्यवस्था यहां फल-फूल रही थी। बाल्कन ऐसा क्षेत्र है जहां पश्चिमी एशिया और अनातोलिया की तरह काफी पर्यावरणीय विविधता और तापमान में विभिन्नता है। उपजाऊ और स्थाई रूप से झरनों द्वारा जल प्राप्त करने वाले बाढ़ के मैदान वाले नम क्षेत्रों ने समुदायों को बिना किसी व्यवधान के लम्बे समय तक यहां रहने के लिए प्रेरित किया। करानोवो (लगभग 5500 बी सी ई) और उसके कुछ बाद की बंदकेरामिक (5300 बी सी ई) संस्कृति जौ, एनकॉर्न, एम्मर गेंहुँओं और गौण पौधों जैसे फ्लैक्स की कृषि के आधार पर बनी रही। उन्होंने फसल के नियमित आवर्तन और भूमि को खाली छोड़ने की प्रणाली का प्रयोग किया। इस प्रक्रिया में, पैदा की गई फसल के ठूंठों को जला दिया जाता था ताकि भूमि अपनी उर्वरता पुनः प्राप्त कर ले। झूम कृषि (swidden cultivation) अथवा फसल काटने के बाद खेत जलाने वाली खेती की इस प्रक्रिया ने किसानों को एक स्थान पर लम्बे समय तक टिके रहने के योग्य बनाया। भेड़, बकरी और कुत्ते रखे जाते थे लेकिन गाय-बैल मुख्य पालतू पशु थे। जैसे-जैसे जनसंख्या घनत्व में वृद्धि

हुई और कृषि ने जनसंख्या वृद्धि का सफलतापूर्वक पोषण किया, वैसे-वैसे बंदकेरामिक संस्कृति का यूरोप के अन्य भागों में विस्तार हुआ। हॉलैंड और अन्य स्थानों पर 4000 बी सी ई के आसपास धारीदार पट्टियों वाले सजावटी मिट्टी के बर्तनों की उपस्थिति से यह स्पष्ट होता है।

जैविक विविधता और समृद्ध वनस्पति और जीवों ने शिकारी-संग्रहकर्ताओं को पूर्वी यूरोप में फलने-फूलने में सहायता की। 8000 बी सी ई के आसपास पूर्वी यूरोप चीड़ (pine) और भोज (birch) वनों के साथ उत्तर में चौड़ी पत्तियों वाले पेड़ों की प्रजातियों और दक्षिण में घास के मैदान (स्टैप्स) वाली वनस्पतियों के आवरण से ढका हुआ था जिसने विशाल जानवरों का पालन किया। इसने शिकार-संग्रहण अर्थव्यवस्था को विशेष आधार प्रदान किया होगा। कुछ विद्वानों ने यह भी पाया कि बाद में नवपाषाणिक भागों से नए पारिस्थितिकीय स्थानों पर जनसंख्या के जाने से वहां उन्होंने मध्यपाषाणिक जीवन शैली को अपनाया। अतः जीवन निर्वाह की पुरानी पद्धति में प्रत्यावर्तन भी संभव था!

अभी तक कृषि के आरंभ पर चर्चा करने का हमारा मुख्य उद्देश्य इस बात पर प्रकाश डालना और आपको यह समझाना था कि आरंभिक कृषकों ने पर्यावरण विशेष को नहीं अपनाया था बल्कि अनेक पर्यावरणों में उपलब्ध विशेष पौधों और जानवरों को अपनाया था। कुछ अनाज वाले पौधों के साथ इनका परिचय इन पौधों के बीजों को एकत्रित करने के दौरान आरंभ हुआ होगा। उदाहरण के लिए, नेतुफियनों का वर्ष के विशेष समय में विशेष स्थानों पर पौधों और जानवरों के विचरण की दिशा अथवा उपलब्धता के आधार पर शिकार और संग्रहण गतिविधियों में बदलाव करने का एक नियत समय था। अंततः, उदाहरण के लिए, अनियमित और बिना किसी योजना के भोजन प्राप्ति के बजाय उन्होंने नियत समयानुसार भोजन प्राप्ति का तरीका अपनाया, जिसने उन्हें निश्चित प्रकार के पौधों और जानवरों पर निर्भर बनाया। पश्चिमी एशिया और यूरोप के विभिन्न स्थलों के संदर्भ यह तथ्य स्थापित करते हैं कि कृषि के पूर्ण रूप से विकसित हुए बिना ही एक ही स्थान पर साल भर लम्बे समय तक रहा जा सकता था और इस बसावट को दोहराया भी जा सकता था।

5.5 मेसोअमेरिका और चीन

मेसोअमेरिका प्रशांत महासागर और मेक्सिको की खाड़ी में स्थित एक भौगोलिक क्षेत्र है **(मानचित्र 5.2)**। जिस समय पश्चिमी एशिया और यूरोप के विभिन्न भागों में कृषि कार्य हो रहा था, मेसोअमेरिका में एक परस्पर विरोधी प्रवृति उभर रही थी। मेसोअमेरिका में मक्का की खेती करने के बाद भी अस्थायी बसावट और खानाबदोशी भी बनी रही । इस क्षेत्र का पर्यावरण शिकारी-संग्रहकर्ता समूहों के लिए प्रतिकूल था क्योंकि उन्हें यहां शिकार प्राप्त करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता था। तेहुअकान खाड़ी क्षेत्र, जो मेक्सिको शहर से 125 मील दक्षिण पूर्व में स्थिति था, में 11,000 बी सी ई के बाद जलवायु धीरे-धीरे शुष्क-आर्द्र होती चली गई। शिकारी-संग्रहकर्ता मौसम आधारित शिकार और संग्रह करने लगे जिससे संसाधनों पर अनावश्यक बोझ नहीं पड़ा। ठंड में वे शिकार किया करते थे और गर्मी के दिनों में घाटी के अपेक्षाकृत बेहतर जल वाले सिंचित क्षेत्रों में फल और बीज एकत्रित किया करते थे।

जैसे-जैसे लोग एक पारिस्थितिक क्षेत्र से दूसरे पारिस्थितिक क्षेत्र में जाते थे, विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त प्रजातियों के बारे में उनकी जानकारी में वृद्धि होती थी। वे मेसोअमेरिका के निचले और ऊपरी दोनों हिस्सों में मक्का, कुम्हड़ा और फली उपजाया करते थे और हमेशा नए क्षेत्रों को खोजते रहते थे। 5000 बी सी ई तक आते-आते छोटे शिकारी-संग्रहकर्ता समूह कहीं-कहीं तट के किनारे बसने लगे। मक्का उपजाने के लगभग 4000 वर्ष बाद तटीय क्षेत्रों में कृषि उत्पादन और ग्रामीण जीवन के निशान मिलने लगते हैं। 3400 बी सी ई तक आते-आते लोग

गांवों में रहने लगे और मक्का पैदा करने लगे। मक्का के साथ-साथ कुम्हड़ा और फली भी पैदा हुआ करती थीं और यह वहां रहने वाले लोगों का मुख्य भोजन था। 3000 बी सी ई के आसपास पेरू, अर्जेंटीना और चिली जैसे मध्य और दक्षिण अमेरिकी क्षेत्र से मक्का उगाने के प्रमाण मिलते हैं जिससे यह प्रमाणित होता है कि जो पौधा मूलतः उच्च भूमि में होता था बाद में इसे हर पारिस्थितिक क्षेत्र में लगाया जाने लगा। परंतु खानाबदोशी और घुमंतू जीवनशैली का पूरी तरह से परित्याग नहीं किया गया था।

मानचित्र 5.2: मेसोअमेरिका और उसके सांस्कृतिक क्षेत्र
साभार: ग्रिन्गोनचिली
स्रोत: वीकीपीडिया के मानचित्र पर आधारित (https://en.wikipedia.org/wiki/Mesoamerica#/media/File:Mesoamerica_ english.PNG)

चीन में कृषि का आरंभ आरंभिक अभिनव युग में चावल और बाजरा (millet) उगाने से सम्बंधित है। वनस्पति विज्ञानियों का मानना है कि दोनों, एशियाई चावल और बाजरे के प्रकार, अभिनूतन युग के पश्चात् पूर्वी हिमालय क्षेत्र से फैल थे। दोनों में से चावल गर्म और नमी वाली परिस्थितियों में उगाने के लिए उपयुक्त है, वही जलवायु दक्षिण चीन में स्थित मध्य-यांगज़ी के दलदली क्षेत्रों में मौजूद थी। बाद में चावल की जंगली प्रजाति के फैलाव ने दक्षिण के कछार और तर क्षेत्रों में गति पकड़ी। अतः जंगली चावल की किस्म का एकत्रण 10,000-8000 बी सी ई के बीच में किया गया। भोजन की खोज में घूमने वाले समुदायों का निर्वाह व्यापक स्पेक्ट्रम अर्थव्यवस्था (broad spectrum economy) के तहत बीज, जल वनस्पति और जड़ प्रजातियों के संग्रहण, मछली पकड़ने और छोटे जानवरों, जैसे हिरण और सूअर, के शिकार द्वारा होता था। कुछ समय पश्चात् पौधे तैयार होने के बाद टूट कर नहीं फैलने वाले चावल की किस्म के चयन ने इसकी कृषि करने के कार्य को प्रोत्साहित किया। चावल की खेती का विस्तार अन्य क्षेत्रों में कुछ स्थायी बस्तियों के विस्तार के साथ हुआ। इसका निश्चित प्रमाण मध्य-यांगज़ी घाटी के पेन्गटोउशान से 6500-5800 बी सी ई के बीच में मिलता है। दक्षिण शंघाई की हेमुदु संस्कृति में लगभग 7000 बी सी ई से चावल की खेती, हड्डी के फावड़ों और हस्तनिर्मित मिट्टी के बर्तनों के प्रमाण मिलते हैं।

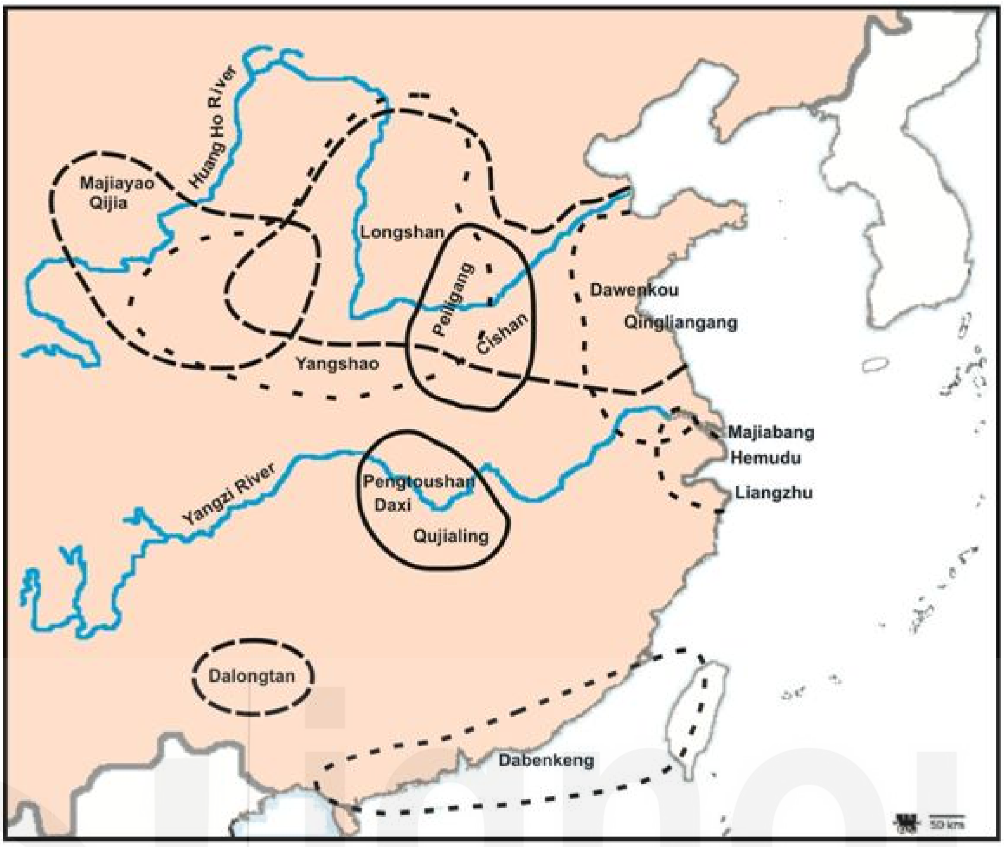

मानचित्र 5.3: चीन में विभिन्न नवपाषाण संस्कृतियों द्वारा अधिकृत क्षेत्र

साभारः लामासू डिज़ाइन गुरडाइफ (लोपेस, रूई ऑलिविरा. 2014. 'सिक्योरिंग द हारमोनि बिटवीन द हाई एंड लो: पॉवर एनिमल्स एंड सिंबल्स ऑफ पोलिटिकल अथॉरिटी इन एनसिएन्ट चाइनीज़ जेड्स एंड ब्रोंज', *एशियन परस्पेक्टिव*. भाग 53 (2): 195-225 के मानचित्र पर अधारित)

स्रोतः क्रिएटिव कॉमंस (https://en.wikipedia.org/wiki/List_of_Neolithic_cultures_of_China#/media/File:Neolithic_china.svg)

उत्तरी चीन की हुआंग-हो घाटी में मुख्य पैदावार बाजरे की थी पर यहां चावल की खेती के आरंभ का प्रमाण लगभग मध्य-सातवीं सहस्त्राब्दि बी सी ई के आसपास मिलता है। सबसे पुराने गांव यहां 6300-5100 बी सी ई में मिलते हैं जो पेएलीगांग संस्कृति से संबंधित थे। यहां की दो सर्वाधिक ज्ञात क्षेत्रीय संस्कृतियां – यांग-शाओ (लगभग 5100-3000 बी सी ई) और लांग-शान संस्कृति (लगभग 3000 बी सी ई) (**मानचित्र 5.3**) थीं। यांग-शाओ संस्कृति की अर्थव्यवस्था कुदाल और खुदाई करने वाली लकड़ियों की मदद से बाजरे (foxtail millet) की खेती और शिकार करने तथा मछली पकड़ने पर आधारित थी। यहां शहतूत के पेड़ों का उपयोग रेशम के कीड़ों के लिए किया जाता था। लांग-शान संस्कृति का विस्तार पूर्व और दक्षिण की ओर हूनान, शानतुंग, हूपेई कियांगसू, शेकियांग और ताइवान में हुआ। जो मुख्य रूप से चावल, बाजरा, गेहूं, सोयाबीन की कृषि और मुर्गी, भेड़ और मवेशियों के पालन पर आधारित थी। दोनों संस्कृतियों के गांवों में सुरक्षा के लिए व्यापक खाई बनाई गई थी। यहां पर घरों की इमारतें या तो अर्द्ध-भूमिगत थीं या उनकी सतह लकड़ी से निर्मित थी। चीन में कांस्य युग से सम्बंधित बहुत सी विशेषताएं पहले से ही नवपाषाणकाल से स्थापित थीं जैसे कि उच्च कोटि के मिट्टी के बर्तनों के निर्माण की परम्परा, लेखन प्रणाली और एक जटिल स्तरीकृत समाज।

बोध प्रश्न-2

1) केटालहोयुक के आरंभिक कृषि-स्थल के रूप में महत्व पर संक्षेप में चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

2) क्या आप यह मानते हैं कि एक स्थान पर बसकर रहने वाला जीवन कृषि के बिना संभव था और क्या ख़ानाबदोश कृषि के आरंभिक प्रयासों के साथ-साथ मौजूद रह सकते थे? कुछ उदाहरण दीजिए।

....

....

....

....

....

3) चीन में कृषि के आरंभ की प्रक्रिया का वर्णन कीजिये।

....

....

....

....

....

4) मेसोअमेरिका कहां पर स्थित है? उस क्षेत्र के भूगोल का ख़ानाबदोशी के साथ पौधे उगाने की प्रकिया के प्रयोग पर क्या प्रभाव पड़ा?

....

....

....

....

....

5.6 सारांश

अब तक की चर्चा यह तथ्य स्थापित करती है कि कृषि की ओर जो संक्रमण हुआ वह अत्यधिक महत्वपूर्ण था और कुछ मायने में उसने सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रिया को तेज़ किया। कृषि से संबंधित दो विशेषताएं, जो कारण और प्रभाव दोनों ही बने, वह थे – जनसंख्या वृद्धि और बस्तियों का विस्तार। इसने मानव को बदलती परिस्थितियों से उभरने के लिए नई रणनीतियों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया। हालांकि यह निष्कर्ष निकालना ग़लत होगा

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

कि कृषि के आरंभ ने आरंभिक कृषकों के जीवन में तुरंत क्रांति ला दी थी, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं है कि सिंचाई आधारित खेती में निहित क्षमता (अधिशेष की संभावना, अधिक से अधिक आदान-प्रदान, आदि) ने एक जटिल समाज के गठन को प्रोत्साहित किया। यह इकाई विश्व के विभिन्न भागों में कृषि के आरंभ के अनेक तरीकों के अध्ययन की एक रूपरेखा प्रदान करती है। कृषि के आरंभ के प्रयासों का विश्व के विभिन्न भागों में मानव समुदायों पर निश्चित प्रभाव पड़ा, जिसका वर्णन अगली इकाई में किया गया है।

5.7 शब्दावली

बिटूमन / डांबर : यह एक हाइड्रोकार्बन है जो कच्चे तेल के आंशिक आसवन द्वारा निर्मित किया जाता है। इसका प्रयोग आजकल सड़क निर्माण में किया जाता है।

संकरण (Hybridization) : वह प्रकिया जिसमें दो अलग-अलग प्रजाति के पशुओं या पौधों में निशेचन (breeding) कर नया पशु या पौधा उत्पन्न किया जाता है।

ओब्सीडियन / लावा कँाच : प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला ठोस कँाच जो ज्वालामुखी-शिला का अत्यन्त कांचीय रूप है। इसका इस्तेमाल चाकू और खुरचनी बनाने में किया जाता था।

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 5.3 और उसके दोनों उप-भाग देखें

2) तापमान बढ़ने और वर्षा, नए स्थानों के लिए खोज, जनसंख्या वृद्धि, निर्वाह की नई रणनीतियाँ और वर्षा के बीच अंतर-सम्बन्ध पर चर्चा करें। भाग 5.3 और उसके दोनों उप-भाग देखें

3) विभिन्न कृषि-पद्धतियों, स्थायी बसावटों या ख़ानाबदोशी मिश्रित जीवन, और मिट्टी के बर्तनों, उपकरणों, इत्यादि में भिन्नता पर चर्चा करें। भाग 5.3 और इसके दोनों उप-भाग देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 5.4 देखें

2) हाँ। विस्तृत जानकारी के लिए भाग 5.5 देखें

3) भाग 5.5 देखें

4) अधिक जानकारी के लिए भाग 5.5 देखें

5.9 संदर्भ ग्रंथ

'जार्मो एक्स्पिडिशॅन'. सितम्बर 9, 1995. *सांइस* (न्यू सिरीज़). 122 (3167): 460 (अमेरिकन एसोसिएशन फॉर द अडवांस्मन्ट ऑफ सांइस). वाशिंगटन डी.सी.

ब्रेडवुड, लिंडा एस. सितम्बर, 1952. 'अर्ली फूड प्रोडयूसर्सः एक्स्कॅवेशॅन्स इन इराकी कुर्दिस्तान'. *ऑर्कीऑलजी,* 5 (3): 157-164.

फेगन, ब्रायन. एम. एवं एन. दुर्रानी, नाडिया, 2016. *द पीपल ऑफ दी अॅर्थः ऐन इनट्रोडकशन टू वर्ल्ड प्रीहिस्ट्री.* लंदनः रोटलेज.

फ्लेनरी, के. वी. 1973. 'द ऑरिजिंस ऑफ एग्रीकल्चर', *ऐन्यूअल रिव्यू ऑफ ऐन्थ्रोपॉलजी,* 2: 271-310.

होडर, इयान (संपादित). 2010. *रिलिजॅन इन द इमर्जन्स ऑफ सिविलाइज़ेशनः केटालहोयुक ऐज़ ए केस स्टडी.* केम्ब्रिजः केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

केनयॉन, कैथलीन एम, 1959. 'सॅम ऑब्ज़र्वेशनस ऑन द बिगिनिंगस ऑफ सेटल्मेन्टस इन द निअर ईस्ट', *द जर्नल ऑफ द रॉयल ऐन्थ्रोपॉलजीकल इन्स्टीट्यूट ऑफ ग्रेट ब्रिटेन एंड आयरलैंड,* 89 (1): 35-43.

प्राइस, टी. डगलस एवं ऑफर-बार योसेफ. 2011. 'द ऑरिजिन्स ऑफ एग्रीकल्चरः न्यू डाटा, न्यू आईडियाज़', *करंट ऐन्थ्रोपॉलजी,* 52 (4), 163-174.

विजेसूर्या, अमलका. *थयोरीज़ अबाउट ऑरिजिन ऑफ डोमेस्टिकेशन एंड एग्रीकल्चर* अकेडमिया. इडीयू.

(https://www.academia.edu/14869132/Theories_about_Origin_of_Domestication_and_Agriculture)

5.10 शैक्षणिक वीडियो

ऑरिजिन ऑफ एग्रीकल्चर
https://www.youtube.com/watch?v=MEv-rH0e03Q

इकाई 6 कृषि के परिणाम*

इकाई की रूपरेखा

6.1 उद्देश्य

6.2 प्रस्तावना

6.3 मानव जैव-प्रणाली पर कृषि का प्रभाव

6.3.1 मानव आहार में परिवर्तन

6.3.2 मानव में कपाल एवं चेहरे संबंधी (Craniofacial) परिवर्तन

6.3.3 मानव प्रवृति में परिवर्तन

6.3.4 मानव सूझबूझ और प्रश्न करने की शक्ति में वृद्धि

6.3.5 नई महामारियां और बीमारियां

6.3.6 जनसंख्या में वृद्धि और बस्तियों का विस्तार

6.4 प्रारंभिक कृषि समुदायों की सामाजिक संरचना पर कृषि का प्रभाव

6.4.1 ग्रामीण संस्कृति का आविर्भाव

6.4.2 जनजातीय समुदायों का आविर्भाव

6.4.3 सामाजिक संरचना में जटिलता

6.4.4 नई व्यवस्था और टकराव

6.4.5 अनुष्ठान और धार्मिक प्रणाली की संरचना

6.5 भौतिक संस्कृति के नए रूप

6.5.1 मृदभांड

6.5.2 कपड़ों की बुनाई

6.5.3 धातुकर्म

6.5.4 वस्तुओं का आदान-प्रदान

6.6 सारांश

6.7 शब्दावली

6.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.9 संदर्भ ग्रंथ

6.10 शैक्षणिक वीडियो

6.1 उद्देश्य

इकाई 1 से 5 में हमने मानव की उत्पति से स्थायी कृषि के चरण और एक स्थान पर बसकर रहने वाले समुदायों के बारे में चर्चा की। इस इकाई में हम कृषि के आगमन से मानव और उनके निवास स्थानों पर पड़ने वाले परिणामों की चर्चा करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद, आपः

- मनुष्य के आहार और शारीरिक बदलावों का वर्णन कर सकेंगे,
- सामाजिक संरचना पर कृषि के प्रभाव का वर्णन कर पाएंगे, और
- कृषि और नई भौतिक संस्कृति के मध्य सम्बंध को रेखांकित कर सकेंगे।

* प्रो. प्रभात कुमार बसंत, इतिहास एवं संस्कृति विभाग, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

6.2 प्रस्तावना

शिकार-संग्रहण जीवनशैली से कृषि आधारित उत्पादन व्यवस्था में परिवर्तित होना मानव इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण घटना है। कृषि में परिवर्तित होना, जिसे अक्सर **नवपाषाणिक** क्रांति की तरह देखा जाता है, के मानव समाज पर क्रमिक परिणाम हुए। यह हमारे लिए ध्यान देने की बात है क्योंकि हमारे द्वारा खाया जाने वाला लगभग सभी भोजन उगाए गए पौधों और पालतू बनाए गए जानवरों से प्राप्त होता है। यह शहरों और सभ्यताओं के आविर्भाव के लिए भी आवश्यक था। इसने जनसांख्यिकीय परिवर्तन के ऐसे प्रतिरूपों को जन्म दिया जिसने खानाबदोश समूहों को छोड़कर कृषक संस्कृति और भाषाओं के विस्तार को बढ़ावा दिया। उदाहरण के लिए, 88% मानव उस भाषा-परिवार की भाषाओं में से एक भाषा बोलते हैं जो आरंभिक **अभिनव युग** में यूरेशिया के दो छोटे प्रदेशों, **उपजाऊ अर्द्धचन्द्र क्षेत्र** (Fertile Crescent) और चीन के कुछ भागों तक सीमित थी। इन प्रदेशों के निवासियों ने इस असाधारण शक्ति को अभिगृहित कर लिया था क्योंकि इन्हें कृषि में प्रारंभिक बढ़त मिल गई थी। जब खानाबदोश स्वयं को सहज रूप से उत्पादक प्रकृति का हिस्सा समझ रहे थे, तब कृषकों ने पर्यावरण को इस तरह देखा जिसे बदला, अपने अनुकूल बनाया और नियंत्रण में किया जा सकता था। लेकिन पर्यावरण को अपनी आवश्यकताओं के अनुसार मोड़ने के लिए भूमि पर कठिन परिश्रम की आवश्यकता होती है। खाद्य का उत्पादन प्रत्यक्ष रूप से आपके द्वारा निवेश की गई ऊर्जा के अनुपात में होता है। इसमें प्रकृति और अन्य समुदायों के प्रति और अधिक आक्रामक रवैया अपनाने की आवश्यकता होती है। परिणामस्वरूप, इस तरह के निवेश से मानव और उसके आसपास के पर्यावरण दोनों के लिए ही महत्वपूर्ण परिणाम हुए।

6.3 मानव जैव प्रणाली पर कृषि का प्रभाव

कृषि के आगमन का अर्थ यह था कि हमारे पूर्वज अनाज और पौधे बड़ी मात्रा में खाने लगे थे। इसका मानव की शारीरिक संरचना (physiology) पर बहुत महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। भोजन पद्धति में परिवर्तनों ने जनसंख्या और प्रकृति के प्रति मानव के नज़रिए पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला।

6.3.1 मानव आहार में परिवर्तन

कृषि के आगमन का सबसे पहला परिणाम मानव के आहार में परिवर्तन था। **पुरापाषाणकाल** में मांस महत्वपूर्ण था और कई क्षेत्रों में मानव आहार का सबसे प्रमुख घटक था। कृषि में निवेश से मानव आहार में विविधता आई और अनाज उनके आहार का एक महत्वपूर्ण घटक बन गया। उदाहरण के लिए, पश्चिम एशिया और यूरोप में गेंहुँ आहार का प्राथमिक अंश था, जबकि दक्षिण और पूर्वी एशिया चावल पर निर्भर था। वहीं दूसरी ओर अफ्रीका के पास बाजरा और अमेरिका के पास मक्का थी। मांस के स्थान पर सब्ज़ियों के प्रयोग ने नमक के इस्तेमाल को आवश्यक कर दिया जिससे यह जल्दी ही स्थानीय व्यापार की एक वस्तु बन गया और कभी-कभी तो, जैसा कि नवपाषाणिक यूरोप में यह लम्बी दूरी के व्यापार का साधन बन गया।

चीनी मिट्टी के बर्तनों (इस इकाई में आगे विस्तार से बताया गया है) का प्रारंभ, जो आग पर भोजन पकाने में टिकाऊ थे, ने मानव को आसानी से भोजन उबालने और पकाने की सुविधा उपलब्ध कराई। इसके साथ-साथ जानवरों को पालतू बनाए जाने से दूध और उसके अन्य उत्पाद भी प्राप्त हुए। मानव आहार में इन आमूल परिवर्तनों ने निश्चित रूप से पाचनक्रिया, रोग-प्रतिरोधक शक्ति और जीवन अवधि को प्रभावित किया और कई विशेष मानव सम्बंधी रोगों को भी जन्म दिया – यह शोध का ऐसा क्षेत्र है जिसमें अभी भी शोध जारी है।

6.3.2 मानव में कपाल एवं चेहरे संबंधी (Craniofacial) परिवर्तन

कृषि के आगमन के साथ और आहार सम्बंधी परिवर्तन से मानव के जबड़े में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। अपने चर और गतिशील जीवन शैली के कारण शिकारी-संग्रहकर्ताओं की खोपड़ी नवपाषाणिक लोगों की तुलना में बड़ी थी। साथ ही, खानाबदोश कठोर भोजन ग्रहण करते थे जिसे चबाने के लिए बड़े जबड़े की आवश्यकता थी। कृषि आगमन के साथ खाना बनाने और प्रसंस्करण के नए तरीके और विधियां अपनाई गईं, परिणामतः भोजन अधिक मुलायम और आसानी से चबाने लायक होने लगा। चबाने की क्रिया में परिवर्तन ने चेहरे की हड्डियों और जबड़े की मशीनी मांग को कम किया और धीरे-धीरे मानव खोपड़ी में हड्डियों की मात्रा में घटाव आया। अंततः इन परिवर्तनों से छोटे जबड़े और दांतों के साथ मानव के चेहरे पहले से छोटे हो गए।

चेहरे में घटाव ने मानव के मुख सम्बंधी स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाला क्योंकि जबड़ों ने दांतों के आकार को कम कर दिया, इन्हें दबा दिया और परिणामस्वरूप दांतों के सड़ने और मानव में समय-समय पर लगने वाले कई रोगों (जो दांतों के आसपास की संरचना को प्रभावित करते थे) की ओर बढ़ा दिया।

6.3.3 मानव प्रवृति में परिवर्तन

कृषि का आगमन मानव की प्रवृति और दिग्विन्यास में आए महत्वपूर्ण परिवर्तनों से जुड़ा हुआ था। खानाबदोश समुदाय में कठिन परिश्रम और अनाजों के भण्डारण की क्षमता किसी प्रकार का गुण नहीं था। अब भोजन उगाने और उसके वितरण की योग्यता, शक्ति और प्रभाव का आधार बन गई। कृषि ने मानव को समय के बारे में सोचने के तरीके को भी बदल दिया। बीज एक मौसम में बोए जाते थे और दूसरे मौसम में फसल काटी जाती थी। इस प्रकार, कृषि आधारित समाज ने आशा और महत्वकांक्षा की अर्थव्यवस्थाओं का निर्माण किया, जिससे हम भविष्य के बारे में ध्यान केन्द्रित कर सकें।

6.3.4 मानव सूझबूझ और प्रश्न करने की आंतरिक शक्ति में वृद्धि

पौधे उगाना और जानवरों को पालतू बनाए जाने से पूर्व-नवपाषाणिक समुदायों के मानव की सूझबूझ और परखने की क्षमता का संकेत मिलता है। मानव के एक बार खेती करने के आरंभ के साथ ये और आगे बढ़ी, जिससे उनमें अवलोकन करने, प्रश्न उठाने और हल करने की क्षमता आई जैसे कि: बीजों में अंकुरण क्यों होता है? फसल विशेष के लिए कौन सा मौसम उपयुक्त होगा? विशेष फसल के लिए किस प्रकार की मिट्टी उपयुक्त होगी? ऐसे और इसी तरह के अन्य कई प्रश्नों ने उन्हें विभिन्न किस्म की फसलों को अलग-अलग मौसम में उगाने के लिए प्रेरित किया होगा।

6.3.5 नई महामारियां और बीमारियां

मानव के दांत सम्बंधी स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव के अतिरिक्त, कृषि के आगमन से लोगों के स्वास्थ्य और स्वच्छता पर दूसरे अन्य महत्वपूर्ण प्रभाव भी पड़े। जहां एक ओर भोजन की नियमित आपूर्ति से उनकी आयु बढ़ी (आस्ट्रेलोपिथेकस की औसत आयु केवल 25 वर्ष थी), वहीं दूसरी ओर पानी इकट्ठा करने, फसलों में पानी देने या दलदली क्षेत्रों के पास बसने के कारण मच्छर भी पैदा होने लगे। ये मच्छर मलेरिया जैसी बीमारियों के वाहक थे। गांवों के आसपास जमे कूड़े करकट के कारण कीड़े भी आकर्षित होने लगे, जो इनमें से कुछ बीमारियों का कारण बने। मध्यकाल में चूहों से होने वाले ब्यूबॉनिक प्लेग इसका सबसे बड़ा उदाहरण है जिसमें चूहे में पैदा होने वाले कीड़े (पिस्सू) इस बीमारी के वाहक हुआ करते थे।

पालतू जानवरों के अनेक रोगाणुओं ने मानव पर आक्रमण किया। चेचक और खसरे जैसी बीमारियां इसका परिणाम हैं। यूरोप-एशिया के कृषकों ने इन बीमारियों के प्रति रोग प्रतिरोधी क्षमता को विकसित कर लिया था। लेकिन जिस समय यूरोपियों ने अमेरिका की खोज की उस समय रेड इंडियंस में इन रोगों के प्रति रोग प्रतिरोधी क्षमता नहीं थी। संक्रमण वाली बीमारियों जैसे चेचक और खसरे ने इस नई दुनिया की लगभग 95% जनसंख्या को खत्म कर दिया।

6.3.6 जनसंख्या में वृद्धि और बस्तियों का विस्तार

स्थाई कृषि पर आधारित जनसंख्या में वृद्धि और क्षेत्रीय विस्तार दोनों हुए। अभ्रमणशील समुदायों में जनसंख्या वृद्धि अधिक होती है। फसलों से किसानों को ऐसे अनाज की आपूर्ति हुई जिसे कूटकर दलिया भी बनाया जाने लगा, इसके साथ ही बकरी और भेड़ पालने से दूध मिलने लगा। अब शिशुओं के लिए माता के दूध का सेवन कम किया जा सकता था क्योंकि उन्हें पशु दूध, दलिया आदि भोजन मिल सकता था। इससे बच्चों के जन्म के बीच का अंतराल कम हो गया जिससे जनसंख्या तेजी से बढ़ी। एक आंकलन के अनुसार उपजाऊ अर्धचन्द्राकार क्षेत्र में खाद्य उत्पादन की शुरुआत होने से बस्तियों का आकार लगभग दस गुना बढ़ गया। शिकारी-संग्रहकर्ता बीस या तीस के समूह में रहा करते थे क्योंकि ज़्यादा लोगों के रहने से भोजन की कमी पड़ सकती थी। शिकारी-संग्रहकर्ताओं द्वारा जुटाए भोजन की तुलना में किसान ज़्यादा अनाज उपजा सकते थे। अब वे भूमि के छोटे टुकड़े से ज़्यादा लोगों के लिए भोजन उपलब्ध करा सकते थे। शिकारी-संग्रहकर्ताओं के विपरीत किसान ऐसे भोजन का उत्पादन कर सकते थे जिसे अधिक समय के लिए सुरक्षित रखा जा सकता था। इस प्रकार सैकड़ों की आबादी वाले गांवों की स्थापना हुई। कृषि आगमन का अर्थ था कि कोई भी वस्तु ऐसे स्थान पर उपजाई जा सकती थी जहां वह अपने आप नहीं उगती थी। चूंकि 99 प्रतिशत प्राकृतिक वनस्पति का उपभोग मानव द्वारा नहीं किया जा सकता था, अप्राकृतिक पौधों की रचना का अर्थ था कि गांव का अधिकतर क्षेत्र खाने योग्य पौधों से घिरा हुआ था। इस प्रकार उत्पादन की अप्राकृतिक रचना का विस्तार हुआ। कयोनू, जेरिको और जार्मो की खुदाईयों में एक ही स्थान पर शिल्पों के क्रमबद्ध स्तर देखने को मिलते हैं। जार्मो के एक नवपाषाणिक गांव में पकी हुई मिट्टी (baked) के लगभग 24 घरों का एक समूह मिला। इस ऊंचे क्षेत्र में लगभग 12 अलग-अलग अधिकृत स्तर मिले हैं।

एक ओर शिकारी-संग्रहकर्ता जहां भोजन की उपलब्धता के लिए प्रकृति पर निर्भर थे वहीं किसानों ने अनाज उगाने के लिए प्रकृति में बदलाव करके नई भूमि तैयार की। लेकिन किसानों ने इस बात को भी समझ लिया कि कुछ फसलों के बाद मिट्टी की उर्वरता खत्म हो जाती है। अतः उन्हें कृषि के लिए दूसरी भूमि को तैयार करने की आवश्यकता होती थी। इस प्रकार किसानों ने पूर्व में शिकार-संग्रहकर्ताओं द्वारा प्रयुक्त कई अनछुए क्षेत्रों में अपनी बस्तियां बनाईं। कृषि से भूमि की उपादेयता और वहन क्षमता भी बढ़ी। विभिन्न आकलनों से यह बात सामने आती है कि एक शिकारी-संग्रहकर्ता को सालभर में पूरे वर्ष भोजन प्राप्त करने के लिए अंदाजन चार वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र की आवश्यकता थी। जबकि भूमि का एक छोटा सा टुकड़ा कई किसानों का पेट भर सकता था।

भोजन की उपलब्धता की आवश्यकता के कारण कृषि समाजों में बड़े स्तर पर समाज में कार्यों का विभाजन हुआ। दस्तकार औज़ार बनाने के लिए, पुजारी वर्षा के लिए प्रार्थना करने के लिए, योद्धा किसानों को शत्रुओं से बचाने के लिए, और मुखिया आर्थिक शक्ति को सामाजिक पूंजी में परिवर्तित करने के लिए, इस प्रकार कृषि समाज वर्गीकृत होता गया।**उत्तर पुरापाषाणकाल** में एक विशिष्ट व्यक्ति, जादूगर या ओझा होता था। जबकि नवपाषाणिक गांवों में, खेती, पशु-पालन और मिट्टी के बर्तन बनाने जैसी अनेक प्रकार की गतिविधियां अधिक बृहद पृथक

भूमिकाओं की मांग कर रही थीं। कृषि आगमन का अर्थ था बहुत से लोगों के लिए दासता। एक स्थान पर बसने के जीवन के परिणामस्वरूप सामाजिक मतभेदों को सुलझाने के लिए विशेष केन्द्रीय शक्ति की आवश्यकता थी जो एक मध्यस्थ की तरह मतभेदों को सुलझा सके। ये लोग मुखिया के रूप में प्रकट हुए होंगे। सत्ता और धन के भूखे मुखियाओं ने समुदाय के अन्य सदस्यों को खेती करने और उत्पाद का एक हिस्सा उन्हें देने के लिए बाध्य किया होगा।

मनुष्य द्वारा आज भी नए-नए पौधों को उगाया जाना जारी है। हमारे बगीचे में जो रंग-बिरंगे सुन्दर फूल दिखाई पड़ते हैं वे बीसवीं शताब्दी में हिमालय से लाए गए थे। इसी प्रकार चिकित्सा के गुणों से भरपूर कई पौधों की खोज वर्तमान समय में हुई है और उन्हें उगाया भी जाने लगा है। प्रतिदिन वनस्पति विज्ञानी किसी पौधे में कोई उपयोगी गुण ढूंढ लेते हैं और इन गुणों का पता चलते ही इन पौधों की खेती शुरू हो जाती है। दुर्भाग्य की बात यह है कि बड़े पैमाने पर जंगलों की कटाई होने के कारण चिकित्सा की दृष्टि से बहुत सी बहुमूल्य जड़ी-बूटियां उनकी चिकित्सा के महत्व जानने से पहले ही नष्ट हो गईं।

बोध प्रश्न-1

1) स्थाई कृषि ने किन तरीकों से नवपाषाण युग में मानव के आहार को प्रभावित किया?

....

....

....

....

....

2) कृषि का मानव शरीर (physiology) और स्वास्थ्य पर क्या नकारात्मक प्रभाव पड़ा?

....

....

....

....

....

3) नवपाषाण काल में मानव जनसांख्यिकीय पैटर्न पर कृषि के प्रभाव की चर्चा कीजिये।

....

....

....

....

....

6.4 प्रारंभिक कृषि समुदायों की सामाजिक संरचना पर कृषि का प्रभाव

कृषि आगमन ने मानव समुदायों की सामाजिक दुनिया में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए। अधिक संख्या में लम्बे समय से एक साथ रह रहे लोगों के बीच नई तरह की समस्यायें सामने आने लगीं जैसे व्यवस्था और मतभेद, नातेदारी और काम और उत्पाद में आपसी हिस्सेदारी आदि।

इन चुनौतियों ने अधिक केंद्रीकृत सामाजिक संरचना को जन्म दिया। इसी तरह की पुनर्व्यवस्था धार्मिक क्षेत्र में भी देखी जा सकती है।

6.4.1 ग्रामीण संस्कृति का आविर्भाव

एक स्थान पर बस कर रहना कृषि के सबसे महत्वपूर्ण परिणामों में से एक है जिसने गांव पर आधारित बसावट को प्रेरित किया। उत्तर पुरापाषाणकाल और **मध्यपाषाणकाल** में शिकारी-संग्रहकर्ताओं ने अपने घरों को पशुओं के मौसमी प्रवास और फलों और जड़ों की उपलब्धता के आधार पर बदला। कुछ मध्यपाषाण समूहों ने वहां अपने घर बनाए जहां प्रचुर मात्रा में समुद्री संसाधन उपलब्ध थे, परन्तु ऐसा कम ही था। एक अवधि के बाद बसावट की पद्धति में परिवर्तन आया। यांग-शाओ संस्कृति के अवशेष दर्शाते हैं कि घरों के निर्माण की क्षमता उच्च स्तर पर पहुंच गई थी।

शिकार-संग्रहण के विपरीत, कृषि में किसान को एक ही स्थान पर लम्बे समय तक टिके रहने की आवश्यकता होती है। उसे बीज बोने होते हैं, पौधों को पानी देना होता है, साथ ही छोटी पौध को पक्षियों और जानवरों से बचाना होता है। चार-छः महीनों के बाद ही पौधे कटाई के लिए तैयार होते हैं। इसका अर्थ है कि शिकार-संग्रहण के विपरीत कृषि एक ही स्थान पर बसने के लिए प्रेरित करती है। किसानों ने घरों, बाड़े और टाट के अस्तबलों का निर्माण, मिट्टी और घास-फूस के लेप से और कभी-कभी सूखे पत्थर से करना शुरू कर दिया था जो पहले के कालों की सामान्य झोपड़ियों की तुलना में अधिक लम्बे समय तक चल सकते थे। एक ही क्षेत्र में अनेक बस्तियों ने धीरे-धीरे गांवों के अविर्भाव को प्रेरित किया। गांव वाली ये बसावटें अपेक्षाकृत छोटी थीं। उदाहरण के लिए, तुर्की का एक गांव, केटालहोयुक में बहुत कम जनसंख्या थी।

इसीलिए कृषि का आगमन गांव की उत्पति से जुड़ा हुआ है। यद्यपि घुमंतु समुदायों ने भी ऐसे स्थान पर गांव और शहर बसाए जहां साल भर प्रचुर मात्रा में भोजन की आपूर्ति थी लेकिन ऐसे स्थान कम ही थे। जानवरों और पौधों को घरेलू बनाने के दौरान मानव ने आवश्यक रूप से खुद को भी घरेलू बना लिया। आज विश्व जो सड़कों, मार्गों, झोंपड़ियों, घरों, खेड़ों, गावों और शहरों से आच्छादित है वह हमारे कृषक पूर्वजों का ही सृजन है। ऐसे ही स्थानों पर पुरातत्ववेत्ता खुदाई करते हैं।

6.4.2 जनजातीय समुदायों का आविर्भाव

कृषि आगमन से दीर्घावधि सहयोगों की भावना का भी उदय हुआ। शिकारी-संग्रहकर्ता समूहों को शिकार करते समय सहयोग की जरूरत होती थी। एक बार शिकार हो जाने और बंटवारा होने के बाद समूह का अस्तित्व नहीं रहता था। कृषकों को बुआई से लेकर कटाई तक सहयोग की आवश्यकता पड़ती थी। एक शिकार अभियान के विपरीत जो एक दिन से लेकर एक सप्ताह तक चल सकता था, कृषकों को उत्पाद प्रक्रिया में कम से कम चार महीनों के सहयोग की आवश्यकता थी। किसान हर साल फसल उगने का इंतजार करते थे और उस दौरान पिछले मौसम में उगाए गए अनाज को खाते थे। अतः खाद्य उत्पादक समूहों में पूरे वर्ष सहयोग की आवश्यकता थी। इसलिए कोई आश्चर्य नहीं है कि कृषि समाज में नातेदारी का नेटवर्क उनकी विशिष्ट विशेषता बन गया, जो कृषकों के बीच सहयोग का संस्थागत ढांचा बना।

6.4.3 सामाजिक संरचना में जटिलता

गांव में स्थाई रूप से बसने की पद्धति ने सामाजिक और व्यावसायिक विभाजन को बढ़ाया। उत्तर पुरापाषाणकाल में केवल एक विशिष्ट व्यक्ति था, जादूगर या ओझा (saucerer-

shaman), जबकि समुदाय के अन्य सभी सदस्य समान गतिविधियों जैसे शिकार, मछली पकड़ना और कलात्मक वस्तुओं का निर्माण करने में भाग लेते थे। नवपाषाणकाल में गांव की उत्पति के साथ लोगों के व्यवसाय में विविधता आई जैसे किसान, पशुपालक, चरवाहे, कुम्हार, कपड़ा बुनने वाले, पत्थर का काम करने वाले और बढ़ई, आदि। आगामी शताब्दियों में विशेषज्ञता बढ़कर बढ़ई, व्यापारियों और आरंभिक धातु शोधकों के रूप में प्रकट हुई। इस प्रकार, स्थायी बसावटों ने शिल्प विशेषज्ञता के लिए मार्ग प्रशस्त किया। इसी प्रकार के मिट्टी के बर्तन बनाने के क्षेत्रीय केंद्र उत्तरी अफ्रीका के मेरीमडे और फयुम में स्थापित हुए।

कृषि आधारित व्यवस्था में संभवतः श्रम में लिंग के अनुसार भी विभाजन था जैसे कि मृदभांड और टोकरी बनाने का कार्य महिलाओं के लिए आरक्षित था। आरंभिक अवस्था में खेती और पशु पालन का कार्य विशेषतः महिलाओं द्वारा ही किया जाता था। कृषि में तकनीकी अविष्कारों जैसे हल, जल निकास और सिचांई जैसी गतिविधियों, जिनके लिए अधिक शारीरिक श्रम की आवश्यकता होती थी, इन गतिविधियों पर पुरुषों का वर्चस्व हो गया। क्लार्क लार्सेन (1984) के अनुसार, आदमियों ने शिकार और मछली पकड़ना जारी रखा जबकि महिलाएं खेतों पर और घर के अधिक श्रमसाध्य कार्य करती थीं।

सामाजिक स्तरीकरण ने जटिल रूप ले लिया, जो शिकार-संग्रहण समाज में मुश्किल से दिखाई देता है। इस अवधि में मुखिया का पद पैतृक हो गया और वह सैन्य नियंत्रण और अनुमोदन के संयोजन वाले ऐसे शासक की शक्ति का पर्याय बन गया। यहां 'पुजारी' के पद का भी आविर्भाव हुआ जिसके पास धार्मिक अधिकार के साथ-साथ धर्मनिरपेक्ष, आर्थिक और राजनीतिक शक्तियां भी थी।

अफ्रीका के मानवजाति विज्ञान सम्बंधी साक्ष्य प्रकट करते हैं कि शिकार-संग्रहण समुदाय अपने शिकार को आपस में बांट लेते थे। हालांकि, यह एकजुटता भोजन उत्पादन में परिवर्तित होने के साथ ही धुंधली हो गई क्योंकि अब संसाधनों का स्वामित्व प्रतिस्पर्धा का केंद्र बना। हालांकि, प्रारंभिक काल में भी संपत्ति की अवधारणा उपस्थित थी जिसमें शिकार के क्षेत्र निर्धारित थे, परन्तु कृषि के साथ यह किसानों द्वारा अपनी भूमि, उपकरण और मवेशियों के अधिकार के लिए प्रतिस्पर्धा के साथ और मुखर हो गई। व्यक्तिगत संसाधनों की आवश्यकता ने अपराधों जैसे चोरी और लूटमार को बढ़ावा दिया, विशेषकर जब पड़ोस के गांव के कृषक समृद्ध होते थे। कभी-कभी यह गांवों के मध्य टकराव का कारण बन जाते थे, कई नवपाषाणिक गांवों में सुरक्षा की दृष्टि से की गई किलेबंदी इसको उजागर करती है। जेरिको, जहां पर मकानों के समूह के आसपास पत्थर की दीवार मिलती है, के अलावा मेसोअमेरिका में भी सुरक्षा के लिए बनाई गई दीवारें मिली हैं।

6.4.4 नई व्यवस्था और टकराव

स्थाई घर बनाने में काफी श्रम लगता था। इसी प्रकार खेतों में काम करने में भी कड़ी मेहनत करनी होती थी। कृषि समुदायों को संग्रहकर्ताओं की अपेक्षा अपने खेतों और घरों की अधिक सुरक्षा करनी होती थी। मानव विज्ञान संबंधी साहित्य दर्शाता है कि यदि संग्रहकर्ताओं में आपसी टकराव होता था तो हारने वाला दल स्थान छोड़कर हट जाता था। विजेताओं द्वारा उनके उत्पाद का सब कुछ लूट लिए जाने अथवा चाहे वे उन्हें अपने अधीनस्थ कर उन्हें दोयम दर्जा प्रदान करें इसके बावजूद किसानों की प्रवृत्ति अपने गांवों में ही बसे रहने की होती थी। इस प्रकार कृषि आगमन से युद्ध का महत्व बदल गया। इससे असमानता पर आधारित समाजों के निर्माण का मार्ग भी प्रशस्त हुआ। अबू हुरेरा और केटालहोयुक की कुछ कब्रों से प्राप्त विशिष्ट कीमती वस्तुएं समाज में असमानता का संकेत देती हैं।

6.4.5 अनुष्ठान और धार्मिक प्रणाली की संरचना

कृषि और उससे सम्बंधित सामाजिक परिवर्तनों ने धार्मिक व्यवस्था में भी परिवर्तन किया। परिवर्तन मानव विश्वास से उतना अधिक सम्बंधित नहीं था, जितना कि उन्होंने नए अनुष्ठानों और धार्मिक संरचना को अपनाया। इस प्रकार की संस्थाएं विशेष जगहों पर धार्मिक कारण से किए गए सीमांकन में स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। उदाहरण के लिए, महापाषाणिक स्मारक और पत्थर के औज़ार आधुनिक तुर्की के गोबेल्की तेपे स्थल से प्राप्त हुए हैं, जिन्हें समारोह विशेष के प्रतीक के रूप में परिभाषित किया गया। इस स्थान पर पानी की अनुपस्थिति और आवास के लिए अन्य आवश्यक शिल्पाकृतियों का न होना इस बात का संकेत देता है कि यह स्थान एक धार्मिक अनुष्ठान की जगह थी। इसी तरह, तुर्की के केटालहोयुक में ऐसी इमारतें मिली हैं जिन्हें ऐसा माना जाता है कि वह धार्मिक और अनुष्ठान सम्बंधी कार्यों के लिए प्रयोग की जाती थीं।

चित्र 6.1: आधुनिक तुर्की में गोबेल्की तेपे स्थल
साभार: ज़्हेनगन, 2012
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/c/c4/Göbekli_Tepe_site_%281%29.JPG

धार्मिक विश्वास के अनुसार आरंभिक किसान उर्वरता और प्रजनन के विषयों को लेकर अत्यधिक सचेत थे। कृषि गतिविधियों और उससे सम्बंधित पर्यावरण ने मिलकर यहां पौधों, जानवरों और मानवप्रजाति की प्रजनन की क्षमताओं पर नवीन विश्वास प्रकट किया। प्रजनन उपासना पर धार्मिक विश्वास द्वैध (पुरुष और महिला) सिद्धांत पर आधारित था, जिसमें दोनों की पूजा सर्वशक्तिमान के रूप में की जाती थी। केटालहोयुक की इमारतों की दीवारों पर पलस्तर के उभार से बैल के सिर का उठा हुआ चित्र और अलंकृत भित्तिचित्र इस काल में वहां विस्तृत धार्मिक व्यवस्था और प्रतीकात्मकता के होने का संकेत देते हैं।

शवों के साथ कब्रों में वस्तुएं भी रखी जाती थीं, उनका विश्वास था कि ये सब मृत्यु पश्चात् के जीवन में उनके साथ जाती थीं। ये वस्तुएं कृषि की आरंभिक अवस्था में सामान्य सी थीं, लेकिन जैसे-जैसे सामाजिक जटिलता बढ़ी, कब्र में रखी जाने वाली वस्तुएं और कब्र का आकार सामाजिक स्तर और शक्ति प्रदर्शन का प्रतीक बन गया। यहां पर व्यक्तिगत और

सामूहिक दोनों तरह की कब्रें हैं। जेरिको तथा जॉर्डन के आईन गज़ल में मृतक की प्लास्टर से बनी हुई छोटी मूर्तियों के मॉडल भी प्राप्त हुए हैं जो इस बात का संकेत देते हैं कि प्रारंभिक गांव समुदायों में पूर्वजों की पूजा भी की जाती थीं।

बोध प्रश्न-2

1) कृषि ने किस प्रकार ग्रामीण संस्कृति की उत्पति को प्रेरित किया?

....

....

....

....

....

2) कृषि के आरंभ ने किस तरह सामाजिक संरचना को प्रभावित किया?

....

....

....

....

....

3) धार्मिक मान्यताओं पर कृषि के प्रभाव का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

6.5 भौतिक संस्कृति के नए रूप

कृषि के आगमन से भौतिक संस्कृति में महत्वपूर्ण नई भूमिकाएं और परिवर्तन आये। इनमें से प्रमुख मिट्टी के बर्तन बनाना, वस्त्रों की बुनाई और धातुकर्म थे। इन सामग्रियों से परिचय ने आदान-प्रदान की अर्थव्यवस्था को भी स्थापित किया।

6.5.1 मृदभांड

पक्की मिट्टी की मूतियों के प्रमाण उत्तर पुरापाषाण युग में मोराविया (चेक रिपब्लिक) से मिलते हैं जो यह दर्शाते हैं कि संग्रहकर्ता (foragers) मिट्टी के आग के साथ संपर्क में आने से कठोर होने के तथ्य से परिचित थे। तथापि पक्की मिट्टी के बर्तन और पात्रों को बनाने का कार्य केवल खाद्यान्न उत्पादन की प्रक्रिया से उत्पन्न होने वाले भंडारण की ज़रुरतों के साथ शुरू हुआ। मौटे तौर पर, पूर्व काल में शिकारी-संग्रहकर्ता अधिकतर बर्तन बनाने के लिए लकड़ी और खाल जैसी सामग्री का इस्तेमाल किया करते थे, लेकिन उनकी उपयोगिता सीमित थी और उनका प्रयोग खाना पकाने के लिए नहीं किया जा सकता था।

मध्यपाषाण युग के सरल, अपरिष्कृत और विविधता के अभाव वाले मिट्टी के बर्तनों की तुलना में नवपाषाण कालीन मिट्टी के बर्तन गुणवत्ता में बेहतर थे। प्रारंभिक कृषकों द्वारा चिकनी मिट्टी में रेत और लकड़ी जैसी सामग्री को मिलाने के परिणामस्वरूप नवपाषाण कालीन मिट्टी के बर्तन मजबूत बने। आरंभिक कृषक चिकनी मिट्टी को सूखने और आग में पकाने की प्रक्रिया के दौरान उन्हें संकुचन और टूटने से बचाने के लिए यह किया करते थे। क्योंकि इस काल में भट्ठी का कोई प्रमाण नहीं मिलता, इसलिए माना जाता है कि आरंभिक मिट्टी के बर्तन धूप में सुखाकर अथवा अलाव में पकाकर या घरों में भट्ठी में पकाकर तैयार किए जाते थे। हालांकि, चिकनी मिट्टी के बर्तनों ने कृषि के प्रारंभ के साथ प्रमुखता को प्राप्त किया, परन्तु यह प्रकिया विभिन्न संस्कृतियों में समान रूप से नहीं फैली और बहुत से कृषि समुदाय **(एसिरेमिक समुदाय)** मिट्टी के बर्तनों का उत्पादन नहीं करते थे ख़ास तौर पर पश्चिम-एशिया, यूनान और दक्षिण अमेरिका के। वह समुदाय जो मिट्टी के बर्तनों का उत्पादन करते थे उन्होंने समय के साथ विविध रूपरेखा, आकार और शैली के बर्तन बनाए। उदाहरण के लिए, आधुनिक तुर्की के केटालहुयुक (अनातोलिया) से प्राप्त हुए आरंभिक चिकनी मिट्टी के बर्तनों में अंडाकार कटोरे, हैंडल वाले जार और सपाट आधार वाले पात्र शामिल थे। कुछ कृषक पात्रों को प्रतीकों और कलात्मक डिज़ाइन से भी सजाते थे। माना जाता है कि इन प्रतीकों और डिज़ाइनों का अनुष्ठानिक, जादुई या जन-जातीय महत्व था। बिना अलंकरण वाले पात्र दैनिक आवश्यकताओं में काम आते थे जैसे घरों में भंडारण और खाना पकाना।

कृषि के परिणाम

चित्र 6.2: नवपाषाण कालीन चित्रित पात्र – चीन की यांगशाओ संस्कृति (लगभग 5000-3000 बी सी ई)। हेनान प्रांत के मिआओ डिगाउ संस्कृति के शानज़यान क्षेत्र में यह खुदाई 1956 में की गई थी

साभार: प्रो. गैरी ली टॉड, 2011.

स्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/e/e7/Neolithic_painted_pottery_basin%2C_Yangshao_Culture%2C_Miaodigou_type%2C_Henan%2C_1956.jpg

जहां आरंभिक कृषक हाथों से पात्र बनाते थे, छठी सहस्त्राब्दी बी सी ई में पहिए के आविष्कार के साथ, पहिए (चाक) से मिट्टी के बर्तन पश्चिम-एशिया जैसे स्थानों में बनने लगे। मिट्टी के बर्तनों के निर्माण के विभिन्न काल और विविधता किसी भी संस्कृति और उसके पहलुओं की पहचान करने के लिए महत्वपूर्ण पुरातात्विक साक्ष्य उपलब्ध कराते हैं।

6.5.2 कपड़ों की बुनाई

बुनाई भी एक बसी हुई जीवनशैली से संबंधित है। कृषकों द्वारा आरंभिक पालतू जानवरों, जैसे पश्चिम-एशिया की भेड़ और बकरी तथा दक्षिण अमेरिका के एंडीज के क्षेत्रों के लामा (भेड़ की प्रजाति) तथा गुआनाको और विकूना (ऊंट की प्रजातियां) की जीन्सों में परिवर्तन के साथ-साथ उनकी ऊन में भी बदलाव (mutaions) आए और वे कताई के लिए उपयुक्त होने लगे। इस ऊन के प्रयोग से ही कपड़ों की बुनाई की शुरुआत हुई। हालांकि, जैसे कि **इकाई 4** में बताया गया है, प्रारंभ में भेड़ों को पालतू बनाये जाने का कारण उनका ऊनी होना नहीं था। धीरे-धीरे पश्चिम एशिया, मिस्र और यूरोप के कृषकों ने सन (flax) जैसे पौधों का उपयोग भी बुनाई के लिए किया। वहीं नवपाषाणिक युग में भारत और मेसोअमेरिका में कपास की पैदावार आरंभ हो गयी थी। हड्डी से बनी सुई, मछली का कांटा और सूआ आरंभिक बुनाई से संबंधित कुछ उपकरण थे।

6.5.3 धातुकर्म

आरंभिक कृषक और पशुचारी समुदायों की आभूषणों से खुद को सजाने की इच्छा धातुकर्म के प्रारंभिक परिणामों में से एक थी। ग्यारहवी से नौंवी सहस्त्राब्दी बी सी ई के आसपास दक्षिण पूर्वी एशिया में लोगों ने रंगीन कच्ची धातु और स्वाभाविक रूप से पाई जाने वाली धातुओं का इस्तेमाल मानव शरीर को अपने जीवनकाल में और मृत्यु के समय सुशोभित करने के लिए शुरू कर दिया था। शुरुआत में सरल उपकरण और अलंकृत तथा सजावटी गहने, जैसे पेंडेंट और अंगूठियाँ, बनाने के लिए केवल स्थानीय तांबे का इस्तेमाल किया गया, जो कि पश्चिमी एशिया में बहुतायात में था। छिद्रित पेंडेंट के रूप में तांबे से बने क्षुद्राभूषण (छोटे आभूषण) का पहला प्रमाण जाग्रोस पहाड़ों की शानिदार गुफाओं से प्राप्त हुआ है। वर्तमान से सात हज़ार वर्ष पूर्व तांबे से बने क्षुद्राभूषण अली कोश (ज़ाग्रोस पहाड़), यारीम तेपे (उत्तर पूर्वी ईरान) और हेसीलर (तुर्की) से प्राप्त हुए हैं। हालाँकि जहां पर कलाकृतियां निर्मित की गई थीं उन सभी स्थलों पर स्थानीय तांबा उपस्थित नहीं था जिससे आदान-प्रदान की अर्थव्यवस्था के साथ-साथ कृषि के संक्रमण की पुष्टि होती है।

6.5.4 वस्तुओं का आदान-प्रदान

संग्रहकर्ताओं की तरह प्रारंभिक कृषक भी आदान-प्रदान की अर्थव्यवस्था पर निर्भर थे। बीज और अन्य खाद्य सामग्री, कपड़े, नमक, दुर्लभ पत्थर, सिरामिक के बर्तन और कच्चा माल जैसे चकमक पत्थर (flint stone) आदि आदान-प्रदान की प्रमुख वस्तुएं थीं। अक्सर खाद्य सामग्री, पत्थरों, उपकरणों और अन्य कच्चे मालों या फिर स्थानीय पड़ोसी बस्तियों की आवश्यकता को पूरा करने के लिए आदान-प्रदान की जाती थीं। लावा काँच, जिसका व्यापार पहले भी किया जाता था, नवपाषाण कालीन आदान-प्रदान की प्रमुख वस्तुओं में से एक था। इसी प्रकार अनाज, फल और मिट्टी के बर्तनों का आदान-प्रदान किया जाता था। लोग पड़ोसी क्षेत्रों में, पैदल चलकर या पानी में नौका द्वारा, यह आदान-प्रदान किया करते थे। लावा काँच से बने उपकरण नेतुफियन स्थल, जैसे लेवांट में जारमो, से प्राप्त हुए हैं। केटालहोयुक के नेतुफियन स्थल में खंजर और चाकू बनाने के लिए लावा काँच और चकमक पत्थर का इस्तेमाल किया जाता था।

> लावा काँच एक प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला ठोस काँच है जो अत्याधिक तेज धार पैदा करता है। इसका मुख्य रूप से इस्तेमाल चाकू और खुरचनी बनाने में किया जाता था। यह ज्वालामुखी गतिविधि क्षेत्रों में पाया जाता था जैसे इटली, एजियन सागर के कुछ द्वीपों, टॉरस(आधुनिक तुर्की का पहाड़ी क्षेत्र) और आर्मीनिया में। अपने केन्द्रों से दूर-दूर तक लावा काँच के उपकरणों की बहुतायत नवपाषाण अर्थव्यवस्था का आदान-प्रदान संजाल से जुड़े होने का स्पष्ट संकेत देती है।

विभिन्न क्षेत्रों में लोगों के बीच आर्थिक संपर्कों को बढ़ावा देने के साथ-साथ इस आदान-प्रदान ने नवपाषाण समुदायों के बीच संपर्क तथा सामाजिक संबंधों और विचारों के आदान-प्रदान को प्रोत्साहित किया। ऐसा माना जाता है कि इस आदान-प्रदान ने मिट्टी के बर्तनों के आविष्कार, और आखिरकार तांबे और पीतल के धातु विज्ञान के प्रारंभिक प्रसार को नवपाषाण युग के प्रमुख स्थलों में बढ़ावा दिया।

बोध प्रश्न-3

1) कृषि के आरंभ और मिट्टी के बर्तनों के बीच के सम्बंध की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

2) क्या आरंभिक कृषि समुदाय आत्मनिर्भर थे?

....

....

....

....

....

6.6 सारांश

कृषि का आगमन मानव इतिहास का एक अत्यंत महत्वपूर्ण पहलू है। इसके कुछ प्रभाव तत्कालिक थे और लंबे समय के लिए अनुभव किए गए जैसे व्यापक स्तर पर एक स्थान पर निवास करना, जबकि दूसरे प्रभाव धीरे-धीरे आए जैसे कि जनसंख्या में वृद्धि और मानव स्वास्थ्य पर असर। कृषि के आगमन ने मानव को अपने परिवेश का सामना करने के लिए नये तरीकों और रणनीतियों के बारे में सोचने पर मजबूर किया। निश्चित रूप से कृषि के आरंभ ने आरंभिक कृषकों के जीवन तथा जीवनशैली में तत्कालीन क्रांति नहीं लायी थी। लेकिन उसने मानव के जीवन में कई महत्वपूर्ण सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों को प्रोत्साहित किया और जटिल सामाजिक गठनों के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

कृषि की ओर जो संक्रमण हुआ वह विश्वव्यापी नहीं था। बहुत से समुदायों ने शिकारी-संग्रहकर्ता जीवनशैली को चुना। इसके कुछ अपवाद भी हैं, जैसा कि तुर्की के केटालहोयुक में चल रही खुदाई इंगित करती है कि खाद्य का उत्पादन हर क्षेत्र में कृषि की ओर संक्रमण का कारण नहीं था। उदाहरण के लिए, केटालहोयुक से यह प्रमाण मिलता है की हजारों लोग वहां कृषि करने के लिए नहीं, अपितु किसी अन्य रहस्यमय सांस्कृतिक कारण की वजह से वहां आकर बसे थे (देखें www.catal.arch.cam.ac.uk/catal/catal.html)। इस प्रकार आपने इस इकाई में विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में प्रारंभिक कृषि के प्रभावों को जाना।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

6.7 शब्दावली

एसिरेमिक समुदाय (Aceramic communities)	:	वे समुदाय अथवा समाज जो मिट्टी के बर्तन नहीं बनाते थे।
उर्वर अर्धचन्द्राकार क्षेत्र (Fertile Crescent)	:	पहाड़ों तथा पहाड़ों की तलहटी के बीच का एक अर्द्धचन्द्राकार उर्वर क्षेत्र जो पश्चिम में इजराइल, जॉर्डन और सीरिया तक तथा उत्तर में तुर्की और पूर्व में ईरान से घिरा हुआ है।
अभिनवयुग (Holocene)	:	अभिनूतन युग के अंत से आरंभ हुआ, वर्तमान भूवैज्ञानिक युग (1.6 मिलियन वर्ष पूर्व आरंभ और 10,000 वर्ष पहले अंत)।
निम्न पुरापाषाण (Lower Palaeolithic)	:	पुरापाषाणकाल की आरंभिक अवस्था (पैलॉओस+ लीथोस=पेलिओलिथिक)। यह लगभग 33 लाख वर्ष पूर्व से 300,000 वर्ष पूर्व तक रहा।
मध्यपाषाण युग	:	प्रागैतिहासिक काल का एक युग जो हिम युग के तुरंत बाद आता है जब लोग शिकार और भोजन संग्रहण किया करते थे। परंतु कहीं-कहीं आधारभूत खेती भी शुरू की जा चुकी थी।
उत्तर पुरापाषाण	:	पुरापाषाण युग का अन्तिम काल जो लगभग 40,000 से 12,000 वर्ष पूर्व तक अस्तित्व में रहा।
नवपाषाण युग	:	एक प्रागैतिहासिक युग जब खेती की शुरुआत हुई। परतुं अभी तक धातु कर्म की शुरुआत नहीं हुई थी।

6.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) उप-भाग 6.3.1 देखें

2) उप-भाग 6.3.1, 6.3.2 और 6.3.5 देखें

3) उप-भाग 6.3.6 देखें

बोध प्रश्न-2

1) उप-भाग 6.4.1 देखें

2) भाग 6.4 देखें (इसके सारे उप-भाग देखें, ख़ास तौर पर उप-भाग 6.4.3)

3) उप-भाग 6.4.5 देखें

बोध प्रश्न-3

1) उप-भाग 6.5.1 देखें

2) नहीं, उप-भाग 6.5.4 देखें

6.9 संदर्भ ग्रंथ

बेन्डर, बारबरा. (1975) *फार्मिंग इन प्रीहिस्टी, फ्रॉम हन्टर-गैदरर टू फूड प्रोड्युसर.* (लंदन).

बिनफार्डे, लुइस. (1968). 'पोस्ट-प्लेस्टोसीन एडाप्टेशन्स'. *न्यू पर्सपेक्टिव इन आर्कियोलॉजी.* संपा. आर. बिनफोर्ड एवं एल. आर. बिनफोर्ड (शिकागो).

कोहेन, एम. (1977). *द फूड क्राइसिस इन प्रीहिस्ट्री,* (न्यू हेवेन एवं लंदन).

हैरिस, डी. एवं जी. हिलमैन. (संपा.) (1989). *फॉरेजिंग ऐंड फारमिंगः द इवोल्यूशन ऑफ प्लांट एक्स्प्लॉयटेशन.* ऑक्सफोर्ड.

एस. जे. डी. (संपा.) (1996). *हिस्टी ऑफ ह्यूमैनिटी.* भाग प्रथम. *प्रीहिस्ट्री ऐंड बिगनिंग्स ऑफ सिविलाइजेशन्स.* यूनेस्को. (न्यूयार्कः रूटलेज).

लेथम, कैथरीन जे., (2013) 'हयूमन हैल्थ एंड द निओलिथिक रिवोल्यूशन : एन ओवरव्यू ऑफ इम्पैक्ट्स ऑफ द एग्रकल्चरल ट्रांज़ीशन ऑन ओरल हैल्थ, ऐपीडर्मीओलॉजी एंड हयूमन बॉडी', *नेब्रासन एन्थीपोलॉजिस्ट,* भाग 28.

यसुदा, योशीनोरी (सु.), (2002) *द ओरीजिन्स ऑफ पॉटरी एंड एग्रीकल्चर* (नई दिल्ली : ऐली बुक्स प्रा. लि.).

ज़ेदर, मेलिंडा, (2009) 'मेक्रो-इवॅाल्यूश्नरी थ्योरी एंड द स्टडी ऑफ कल्चरल चेंज', *जर्नल ऑफ आर्कीआलॉजीकल रिसर्च* 17 (1), 1-63.

पी डी एफः

https://www.jstor.org/stable/pdf/658383.pdf?refreqid=search%3Ad4069b23e0e47e05824178960ab6f251

https://www.jstor.org/stable/pdf/27768324.pdf?refreqid=search%3Ad4069b23e0e47e05824178960ab6f251

https://www.jstor.org/stable/pdf/3210656.pdf?refreqid=search%3A8ce7a2ef18715618396ad55ff36bd6ad

6.10 शैक्षणिक वीडियो

मैंनकाइन्डः द स्टोरी ऑफ ऑल ऑफ असः बर्थ ऑफ फार्मिंग

https://www.youtube.com/watch?v=bhzQFIZuNFY

136 Blank

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खंड III

कांस्य युगीन सभ्यताएँ

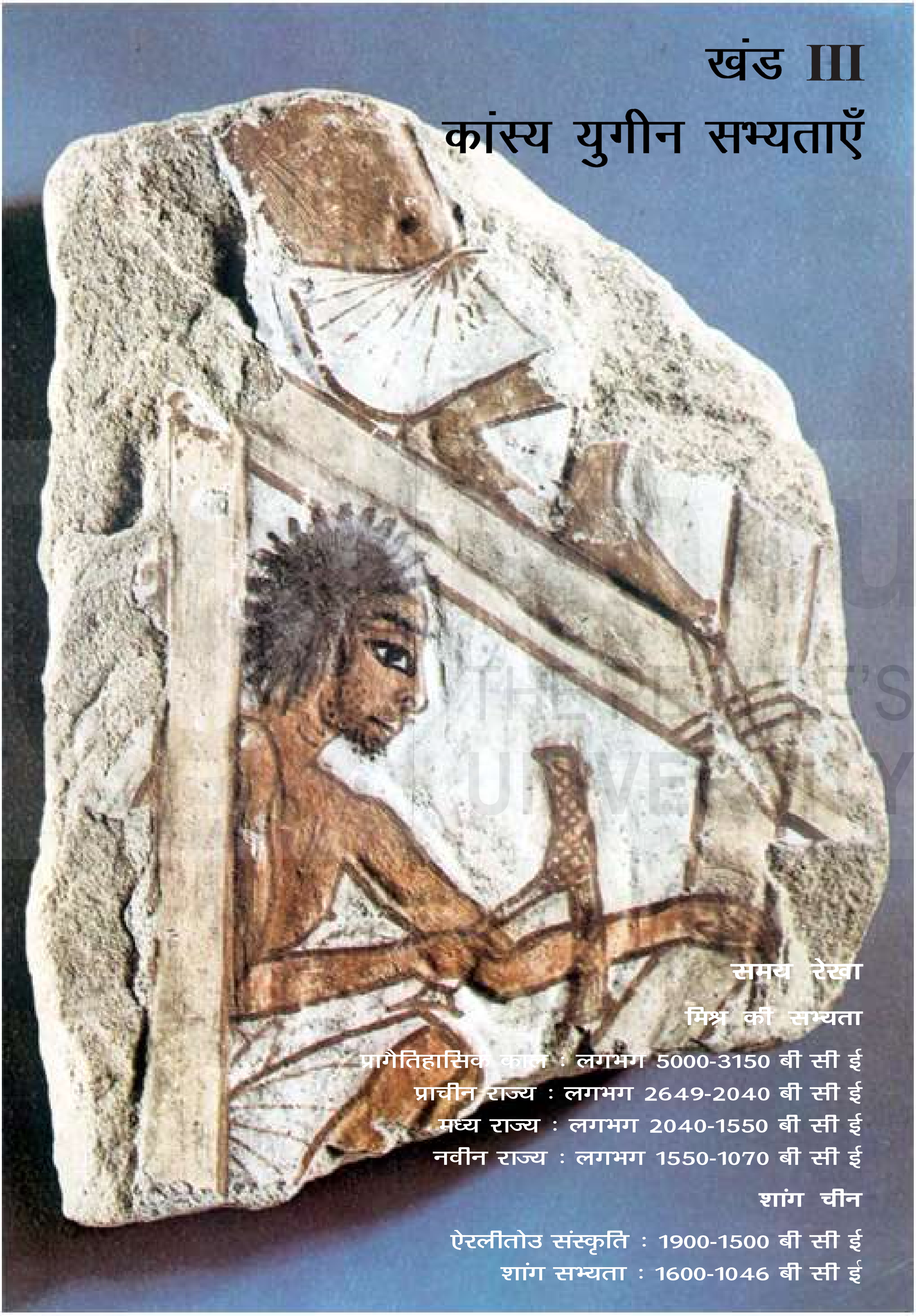

समय रेखा

मिश्र की सभ्यता

प्रागैतिहासिक काल : लगभग 5000-3150 बी सी ई
प्राचीन राज्य : लगभग 2649-2040 बी सी ई
मध्य राज्य : लगभग 2040-1550 बी सी ई
नवीन राज्य : लगभग 1550-1070 बी सी ई

शांग चीन

ऐरलीतोउ संस्कृति : 1900-1500 बी सी ई
शांग सभ्यता : 1600-1046 बी सी ई

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

चित्रांकनः मिश्र के काष्ठकर्मी

फोटोग्राफः n.e.r.g.a.l

स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Egyptain_Carpenter.jpg

इकाई 7 कांस्य युगीन सभ्यताएँ: मुख्य विशेषताएँ*

इकाई की रूपरेखा

7.1 उद्देश्य

7.2 प्रस्तावना

7.3 कांस्य युग के लिए स्रोत

7.4 कांस्य युग में देश और काल

7.5 कांस्य युग में धातु

7.6 नगरीकरण

7.7 अधिशेष और श्रम का विनियोजन

7.8 लेखन

7.9 लंबी दूरी के संपर्क

7.10 कांस्य युगीन समाज

7.11 सारांश

7.12 शब्दावली

7.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.14 संदर्भ ग्रंथ

7.15 शैक्षणिक वीडियो

7.1 उद्देश्य

इस इकाई में हम एक ऐसे काल का अध्ययन करेंगे जिसे पुरातत्वविद और इतिहासकार कांस्य युग कहते हैं, यह एक ऐसा काल है जिसने मानव इतिहास में बसावट, तकनीक, साथ ही सामाजिक और आर्थिक संशलिष्टताओं के मामले में बड़ा परिवर्तन देखा। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- 'कांस्य युग' शब्द के अर्थ की व्याख्या कर सकेंगे,
- कांस्य युग को सभ्यता की अवधारणा से जोड सकेंगे, और
- कांस्य युग द्वारा प्रस्तुत महत्वपूर्ण सामाजिक रूपों, विशेषकर शहरीकरण, लेखन तथा दूरस्थ संपर्क के क्षेत्र में, के परिणामों की पहचान कर सकेंगे।

7.2 प्रस्तावना

वी. गॉर्डन चाइल्ड के शब्दों में कांस्य युग मानव इतिहास के लिहाज़ से 'एक अत्यंत छोटा काल' था, फिर भी समाज के विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण था। अपने आस-पास की सारी वस्तुएँ जिन्हें आज हम पहचानते हैं, मसलन शहर जहाँ हम रहते हैं, या जैसा शिल्प हम रचते हैं, या यातायात की तकनीकी, या यह तथ्य कि लेखन का उपयोग हम अभिलेखन के साधन की तरह करते हैं, इनमें से अधिकाँश का उद्भव करीब-करीब पांच हज़ार साल पहले हुआ था। यह एक ऐसा काल भी था जिसने कांस्य युग की पूर्व परिचित तकनीकों का चरमोत्कर्ष देखा। उदाहरण के लिए, कृषि या पशुपालन पौधों और पशुओं की प्रजातियों के साथ मनुष्यों के करीब दो हज़ार साल लम्बे प्रयोग का परिणाम था। परन्तु यह उत्पादकता का बढ़ा हुआ स्तर ही था जिसने अंततः ज़्यादा जटिल सामाजिक संरचनाओं की राह बनायी।

* प्रो. जया मेनन, शिव नाडर विश्वविद्यालय, नोएडा, उत्तर प्रदेश

चर्चा को शुरू करने के लिए हमें दो शब्दों का संज्ञान लेना ज़रूरी है: 'कांस्य युग' और 'सभ्यता'। 'कांस्य युग' शब्द प्रत्यक्षतः एक ऐसे युग का द्योतक है जब अपने प्रमुख औज़ारों को बनाने के लिए मनुष्यों ने कांसे का उपयोग किया। इसका आशय यहाँ भौतिक पदार्थों के इस्तेमाल के एक अनुक्रम से है जब मनुष्यों ने पहली बार पत्थर का उपयोग किया, फिर तांबा-कांसा से होते हुए आखिरकार लोहे तक पहुंचे। यद्यपि यह सही है कि प्रमुख औज़ारों को बनाने में कांसे का उपयोग हुआ लेकिन 'कांस्य युग' शब्द का असली महत्व नगरीकरण और राज्य समाजों वाले एक विशिष्ट सामाजिक ढाँचे, दूसरे शब्दों में, सभ्यता से इसके परस्पर सम्बन्धों में है।

'सभ्यता' शब्द का उपयोग यहाँ परिष्कृत या परिशुद्ध के अर्थ में नहीं है। शेरीन रत्नागर के अनुसार यह 'सामाजिक विकास का एक चरण है, एक कमरे वाली झोपड़ियों से जटिल भवनों के स्थापत्य तक, मौखिक परम्परा से साक्षरता तक, ग्रामीण गृहस्थी से शहरी जीवन तक, और पत्थर पर निर्भरता से धातु और पत्थर तक' (रत्नागर, 2001: 13)। 'सभ्यता' का सम्बन्ध भौगोलिक विस्तार के माप से, एक ही तरह की (1) लेखन व्यवस्था; (2) कला संहिता; (3) धातुकर्म; और (4) शैली तकनीकों के समुच्चय का उपयोग करने वाले समूहों से भी है। पुरातात्विक आधार पर ये समानताएं बहुत बड़े भौगोलिक क्षेत्र में नियमितता की तरह प्रकट होती हैं। भौतिक सामग्रियों की नियमितता का यह योग उस व्यवस्था को बनाता है जिसे पुरातत्त्वविद 'संस्कृतियाँ' कहते हैं। पुरातात्विक अर्थों में संस्कृतियाँ एक सीमित भौगोलिक क्षेत्र और कालावधि से प्राप्त संकलित पुरावशेषों के समूह के समान हैं। हड़प्पा सभ्यता दक्षिण एशिया में कांस्य युगीन 'संस्कृति' का एक उदाहरण है।

आरंभिक सभ्यताओं का तुलनात्मक विश्लेषण करने वाले ब्रूस ट्रिगर (2003) का विचार है कि सभ्यता विषयक 19वीं शताब्दी का विवेचन, लेखन को मूल विशेषता मानता है, क्योंकि इसने ही अभिलेखन और जटिल वाणिज्यिक लेन-देन को संभव किया। परन्तु इसके बाद गॉर्डन चाइल्ड (1950) ने आरंभिक सभ्यताओं या शहरी समाजों की दस विशिष्टताओं को इंगित किया। इसमें शामिल हैं: (1) बड़ी सघन आबादी; (2) अधिशेष द्वारा गैर-कृषक नागरिकों का जीवन यापन; (3) प्राथमिक उत्पादकों द्वारा किसी देवता या शासक को अधिशेष का भुगतान; (4) भव्य स्थापत्य; (5) एक शासक वर्ग; (6) अभिलेखन की प्रणाली; (7) वास्तविक विज्ञानों का विकास; (8) भव्य कला; (9) लम्बी दूरी का व्यापार और; (10) कुलीनों द्वारा नियंत्रित स्थानीय विशेषज्ञ शिल्पकार। यद्यपि चाइल्ड की तालिका को सभ्यता की अवधारणा समझने में पहला कदम माना जा सकता है, परन्तु लक्षणों की ऐसी तालिकाएँ समाज के वर्गीकरण में सहमतियों के बदले विवाद ही पैदा करती हैं।

ट्रिगर (2003: 44) का मानना है कि: 'इसके बदले आरंभिक सभ्यताओं का एक ज़्यादा उपयोगी चरित्र-चित्रण अनिवार्यतः सामान्य सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक संस्थाओं और उस स्तर तक जटिल समाजों के काम करने के लिए ज़रूरी ज्ञान और विश्वासों के संयुक्त प्रकारों के अनुसार होना चाहिए। तकनीक, बसावट के पैटर्न, कला, और स्थापत्य को केवल इस रूप में समझा जा सकता है कि वे ऐसी संस्थाओं के भौतिक सहयोग में, सामाजिक मेल-मिलाप को संभव करने और समाज के अलग-अलग हिस्सों के विचारधारात्मक उद्देश्यों को बढ़ाने में क्या भूमिका निभाते हैं।'

7.3 कांस्य युग के लिए स्रोत

कांस्य युग के बारे में हम उपलब्ध लिखित रिकॉर्डों और उन समाजों के भौतिक अवशेषों, दोनों से ज्ञान प्राप्त करते हैं। कांस्य युग वह काल है जिसकी पहचान विभिन्न कार्यों के लिए लेखन का उपयोग है। इस प्रकार मेसोपोटामिया का लेखन **'कीलाकार' (cuneiform)** कहलाता है, जबकि मिस्री लेखन ने **'चित्रलिपि' (hieroglyph)** का रूप लिया। यद्यपि भौतिक साक्ष्यों का अधिकांश भाग लेखन से प्राप्त होता है, भौतिक और पुरातात्त्विक साक्ष्यों के दूसरे रूपों

में स्मारक, कला, और दिन-प्रतिदिन उपयोग की अनगिनत वस्तुएं (जैसे मृदभांड, आभूषण, औज़ार) भी शामिल हैं। भौतिक अवशेषों की एक सीमा उसकी प्रकृति के इर्द-गिर्द घूमती है: भौतिक सामग्री जैविक है या अजैविक। अधिकाँश स्थितियों में जैविक सामग्रियाँ (जैसे वस्त्र, बेंत, लकड़ियाँ), अजैविक सामग्रियों जैसे पत्थर, धातु और मृत्तिका की तरह बची नहीं रहतीं। हालांकि, मिस्र की अत्यंत शुष्क स्थितियों में लकड़ी, बेंत, और कपड़ों जैसी जैविक सामग्रियाँ भी बची रह गईं जो हमें लोगों की रोज़मर्रा की जिंदगियों में इनके व्यापक उपयोग का पता देती हैं।

चित्र 7.1 : मिस्र में वैली ऑफ़ किंग्स में स्थित फिरौन **(Pharaoh)** सेति **I** (मिस्र के उन्नीसवें राजवंश के नए राज्य का फिरौन) की कब्र से प्राप्त मिस्री चित्रलिपि
साभार: जॉन बॉड्स्वर्थ, 2007
स्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/c/c9/Hieroglyphs_from_the_tomb_of_Seti_I.jpg

चित्र 7.2 : मिट्टी की पट्टिका पर लिखा पत्र जिसे लगाश के राजा को लुएना नामक उच्च-पुरोहित ने लगभग 2400 बी सी ई में भेजा। यह मेसोपोटामिया की आरम्भिक कीलाकर लिपि में लेखन को दर्शाता है। वर्तमान में यह पट्टिका पेरिस, फ्रांस के लूव्र संग्रहालय में प्रदर्शित है।
साभार: जस्त्रो, 2005
स्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/d/d5/Letter_Luenna_Louvre_AO4238.jpg

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

मेसोपोटामिया और मिस्र दोनों सभ्यताओं का इतिहास अधिकांशतः इन उपलब्ध लिखित स्रोतों पर आधारित हैं क्योंकि इन क्षेत्रों में इस लिपि को पढ़ लिया गया है। इसी समय मिस्री पिरामिड की संपदा और साथ ही मेसोपोटामियाई शहरों में मिले मंदिरों, महलों, और शाही क़ब्रों ने लम्बे समय से पुरातात्त्विक ध्यान को आकर्षित किया है। लेखन और समाधियों से प्राप्त संपदा हमें समाज के अभिजात्य वर्गों के जीवन का पता देती हैं। हाल ही के कुछ वर्षों से घरों और रोज़मर्रा की वस्तुओं के पुरातात्त्विक साक्ष्यों से समाज के दूसरे वर्गों को समझने की शुरुआत हुई है।

7.4 कांस्य युग में देश और काल

प्रमुख कांस्य युगीन सभ्यताएँ फ़रात (मेसोपोटामिया), नील (मिस्र), सिन्धु (हड़प्पा) और पीली नदी (शांग) (नक़्शे पर उनकी अवस्थिति के लिए देखें **मानचित्र 7.1**) की नदी घाटियों में मिलती हैं। **इकाई 8** मिस्र की सभ्यता के बारे में है, जबकि शांग सभ्यता पर **इकाई 9** में विचार किया जाएगा। कांस्य युग और सभ्यता दो अलग-अलग पहलू हैं। दुनिया का हर हिस्सा कांस्य युग से नहीं गुज़रा, फिर भी अगर हम दूसरी सभ्यताओं को देखें तो कई नाम दिमाग में आते हैं, जैसे क्लासिक माया (250-800 सी ई), उत्तर एज़्टेक (आरंभिक 16वीं सदी सी ई) और इंका (आरंभिक 16वीं सदी सी ई) (हालांकि ये सब समय में मेसोपोटामिया, मिस्र, हड़प्पा, और शांग के बाद हैं) **(नक्शे पर उनकी अवस्थिति के लिए देखें मानचित्र 7.1)**।

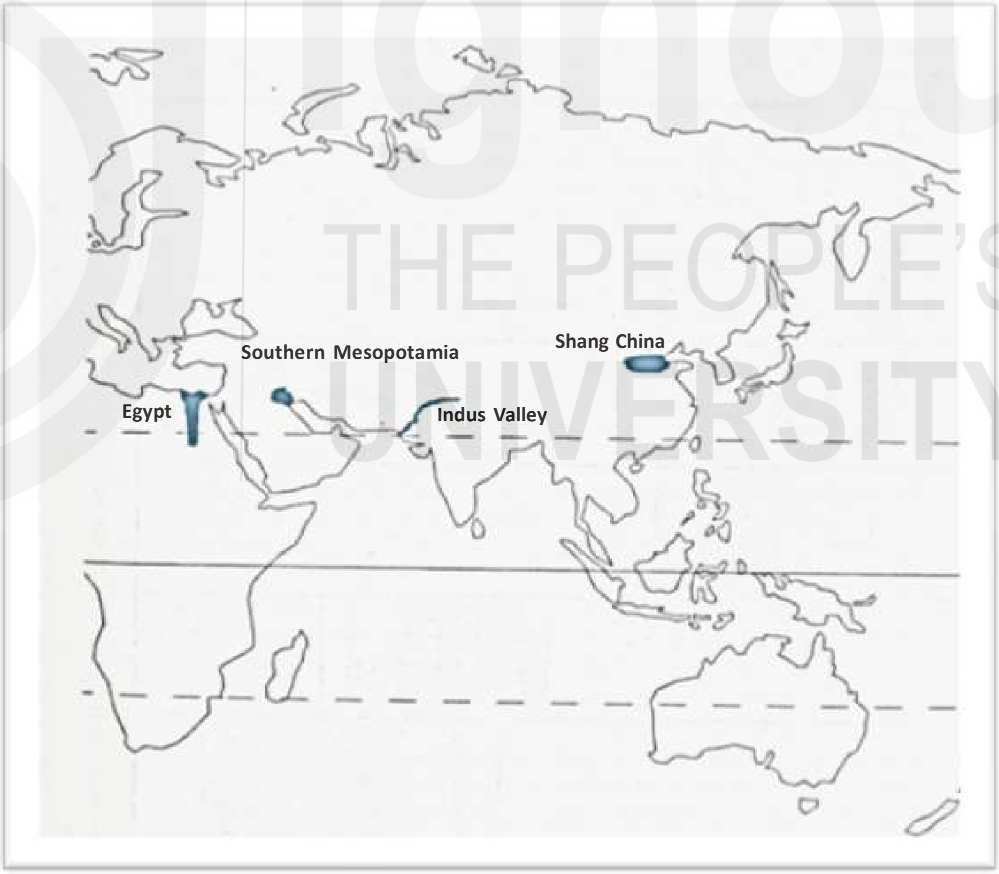

मानचित्र 7.1: आरंभिक कांस्य युगीन सभ्यताओं की अवस्थितियाँ
ब्रूस ट्रिगर, 2003: 31 पर आधारित

सभ्यताएँ कभी-कभी 'प्राथमिक' और 'द्वितीयक' में वर्गीकृत की जाती हैं। प्राथमिक सभ्यताएँ पुरानी दुनिया के हिस्सों में विकसित हुईं और जहाँ पहली बार इनके विशिष्ट चरित्र (जैसे नगरीकरण, लेखन, और लोगों के बीच सामाजिक-आर्थिक ऊँच-नीच) के दर्शन होते हैं। जिन क्षेत्रों में बाद में इन सभ्यताओं का विस्तार हुआ उन्हें द्वितीयक सभ्यताएँ कहते हैं। द्वितीयक सभ्यता की अवधारणा में विस्तार या विसरण दोनों ही हो सकते हैं। हालाँकि बहुत सारे क्षेत्र

जो पहले द्वितीयक सभ्यताओं में शामिल माने जाते थे अब विद्वान वहां देशज विकास के चिह्न देख रहे हैं, जो विसरण (diffusion) के विचार को नकारते हैं।

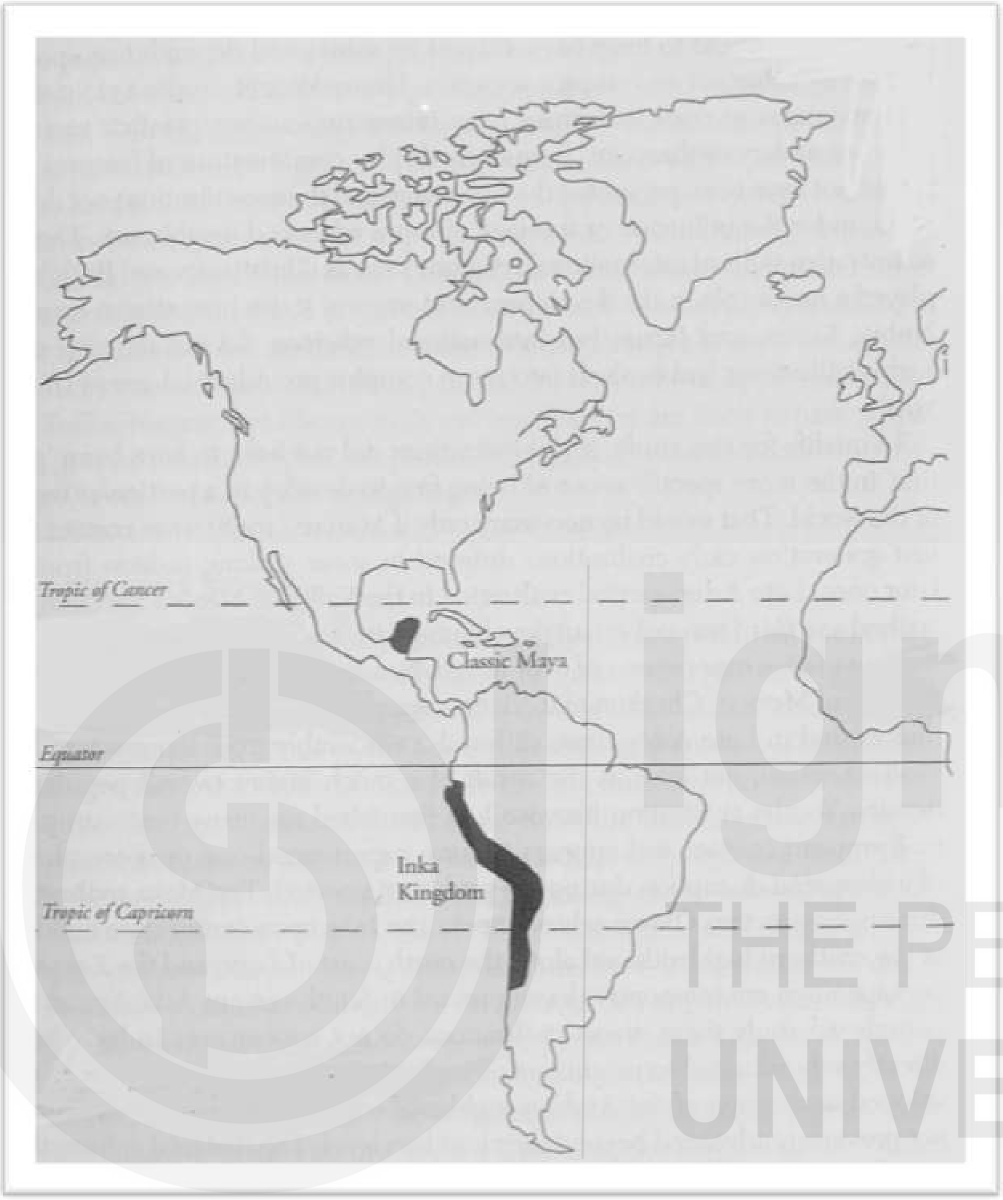

मानचित्र 7.2 : क्लासिक माया और इंका राज्यों की अवस्थिति
ब्रूस ट्रिगर, 2003: 30 पर आधारित

नदी घाटियों में आरंभिक सभ्यताओं का होना महज़ संयोग नहीं है। सभ्यताएँ और आरम्भिक राज्य संरचनाएँ जिस उच्च उत्पादकता पर निर्भर थीं उसे केवल कछारी मैदानों की उपजाऊ मिट्टी में ही हासिल किया जा सकता था। इन घाटियों में दूसरी अधिकाँश जरूरी कच्ची सामग्रियों का अभाव था, जैसे अच्छी किस्म की इमारती लकड़ी, धातुएं और पत्थर।

पुरानी दुनिया (मेसोपोटामिया और मिस्र) की सबसे आरंभिक सभ्यताओं का काल मोटे तौर पर चौथी और तीसरी सहस्त्राब्दी बी सी ई है। दक्षिण एशिया में हड़प्पाई कांस्य युग तीसरी सहस्त्राब्दी बी सी ई का उत्तरार्द्ध है। चीन की शांग सभ्यता और बाद की है जिसका काल दूसरी सहस्त्राब्दी बी सी ई का उत्तरार्द्ध है।

बोध प्रश्न-1

1) 'कांस्य युग' शब्द के अर्थ की व्याख्या कीजिए। 'सभ्यता' शब्द के साथ इसके सम्बन्धों को रेखांकित कीजिए।

....

....

....

....

....

2) कांस्य युग को समझने के प्रमुख स्रोतों का विवरण दीजिए।

....

....

....

....

....

3) सूची 'क' में दी गई नदी का मिलान सूची 'ख' में दी गई उससे संबंधित सभ्यता से करें।

क	ख
नदी	**सभ्यता**
a) फरात	i) मेसोपोटामिया
b) सिन्धु	ii) शांग चीन
c) पीली नदी	iii) मिस्री
d) नील	iv) हड़प्पाई

7.5 कांस्य युग में धातु

नयी धातु के रूप में तांबे का पहला उपयोग कांस्य युग के पहले हुआ, एक ऐसे काल में जिसे 'ताम्रपाषाण' कहा जाता है, या एक ऐसा काल जब तांबा और पत्थर दोनों का उपयोग औज़ार बनाने के लिए मुख्यतः होता था। औज़ार की प्राथमिक सामग्री के रूप में तांबा (यहाँ तक कि कांसा) अनिवार्यतः पत्थर की तुलना में ज़्यादा कारगर नहीं था। पत्थर का महत्व इसके टिकाऊपन, शक्ति, साथ ही सुप्राप्यता, और इससे औज़ार निर्माण में थी। परन्तु तांबे या कांसे की प्राथमिक सुविधा यह थी कि ढलाई की तकनीक द्वारा इनसे जटिल आकारों का निर्माण संभव था। इसका अर्थ था कि धातु को पिघला कर इस प्रकार ढाला जा सकता था कि पिघली हुई धातु अपने ढाले जाने वाले पात्र का आकार ग्रहण कर सकती थी। कांस्य युग में औज़ार निर्माण की प्राथमिक सामग्री तांबा और बहुधा इसकी मिश्र-धातु कांसा थी। कांसा दो धातुओं का मिश्रण होता है, बहुधा तांबा और टिन, लेकिन तांबा और सीसा या साथ-साथ तांबा और आर्सेनिक भी। टिन के संयोग से मिश्र-धातु शुद्ध तांबे से ज़्यादा कठोर हो जाती है जो औज़ार उत्पादन के लिए अधिक उपयुक्त साबित हुई। मिश्र-धातु तकनीक का मतलब था कि धातुकर्म इस हद तक विकसित हो चुका था जहाँ दो धातुओं के मिश्रण से एक नयी धातु का निर्माण हो सकता था। चाइल्ड का विचार है कि धातुकर्म की तकनीक के लिए ऊष्मा द्वारा पदार्थ के भौतिक गुणों में मूलगामी परिवर्तन का अंतरंग ज्ञान ज़रूरी था। इन कौशलों की प्रकृति के कारण धातु-कर्मी को वह संभवतः पहले-पहल विशेषज्ञों में एक मानते हैं।

कांस्य युग में टिन-कांसा पर निर्भरता के दूरगामी परिणाम हुए। तांबा विरल है उससे भी कहीं ज़्यादा टिन। इन सामग्रियों की आवश्यकता का मतलब था इन्हें कछारी मैदानों में, जो सभ्यता

के केंद्र थे, वहां लाना। बहुत संभव था कि शिल्पी, जैसे धातु-कर्मी अयस्कों के स्रोत तक जाते हों, उन्हें पिघलाते और काम के लिए धातुओं को शुद्ध रूप में वापस ले आते हों। इस प्रकार इस शिल्प ने कुछ हद तक गतिशीलता को अनिवार्य बनाया होगा।

कांस्य युग में औज़ारों की कच्ची सामग्री के रूप में धातु ने पूरी तरह पत्थर को विस्थापित नहीं किया। दक्षिण एशिया में हड़प्पावासियों ने सिंध में सिन्धु नदी के किनारे रोहरी की चट्टानों से प्राप्त अच्छी किस्म के बिल्लौर पत्थर (chert: एक प्रकार का पत्थर) से ब्लेड बनाना जारी रखा। पुरातात्त्विक रूप से हमें टूटे और मुड़े हुए ताम्र औज़ार और वस्तुएं मिलती हैं जो संभवतः पुनर्चक्रण (गला कर पुनः उपयोग) के लिए रखी जाती थीं।

तांबे और कांसे के पुनर्चक्रण का फायदा इसलिए संभव था क्योंकि इन सामग्रियों की प्रकृति के कारण इन्हें पिघला कर नए रूपों में ढाला जा सकता था। ताम्र औज़ारों और वस्तुओं के भण्डार उस समाज में धातु विशेष के महत्व और इनकी विरलता की ओर संकेत करते हैं, इसी प्रकार पुनरूपयोग के लिए इनके परिरक्षण की ज़रुरत की ओर भी।

7.6 नगरीकरण

नगरीकरण के साथ जुड़ाव कांस्य युग के प्राथमिक चरित्रों में से एक है। गॉर्डन चाइल्ड नगरीकरण के विकास को क्रान्ति की तरह देखते हैं जिसे वह 'नगरीय क्रांति' कहते हैं। हमने पहले देखा कि वह नगरीकरण की पहचान कुछ विशिष्ट पुरातात्त्विक लक्षणों से करते हैं। अगर कोई उनकी नगरीकरण के लक्षणों की तालिका से पूर्णतः सहमत न भी हो फिर भी यह स्पष्ट है कि कांस्य युग की प्रमुख पहचान नगर हैं। कई नगर, जैसे मेसोपोटामिया में उर और उरुक और दक्षिण एशिया में मोहनजोदड़ो और हड़प्पा, कांस्य युगीन नगरों के शीर्ष प्रतीक हैं। हम उनमें चाइल्ड के लक्षणों को देख सकते हैं: भव्य स्थापत्य, लेखन, कला, माप की व्यवस्था, कृषि अधिशेष के सहारे गैर-कृषि व्यवसाय और विशेषज्ञता की वृद्धि, सामाजिक असमानता, और लम्बी दूरी के व्यापार।

नगरीकरण एक सुरक्षित कृषि आधार पर निर्भर करता है। हमें अवश्य ही ध्यान देना चाहिए कि उपजाऊ अर्धचंद्राकार क्षेत्र (Fertile Crescent; लेवांट से ईरान तक चापाकार आकृति में फैला क्षेत्र) के उत्तरी पहाड़ी इलाके बहुत पहले, करीब दस हजार से आठ हजार साल पूर्व, ही खेती और पशुपालन की शुरुआत के साक्षी रहे हैं। परंतु इन इलाकों में नगरों का विकास नहीं हुआ। नगरीय विकास के लिए लोगों को दक्षिणी मेसोपोटामिया के वृहत कछारी मैदानों में आना पड़ा। यह एक क्रमिक आन्दोलन था। सबसे पहले पहाड़ी इलाकों से आधुनिक बग़दाद के इलाके के उत्तरी कछारों में, फिर बड़े-पैमाने पर आबादी का कछारी मैदानों के उत्तरी हिस्से से दक्षिणी कछारों की ओर प्रवास की शुरुआत प्रारंभिक-मध्य उरुक काल (4000-3400 बी सी ई) में हुई लेकिन प्रभावी रूप से इसकी पहचान प्रौढ़ उरुक काल (3400-3200 बी सी ई) में ही हुई।

मेसोपोटामिया में शहरी विकास पर लिखने वाले रॉबर्ट एडम्स (1972) मानते हैं कि दक्षिणी कछारी क्षेत्रों में नगरों का विकास कई कारकों का संभव परिणाम था: बड़ी संख्या में ग्रामीणों का दक्षिण की ओर प्रवास के साथ ही अभी तक घूमंतू रहने वाले लोगों के बसने के कारण। इसके कारण उरुक जैसे दक्षिणी कछारी नगरों की आबादी में बहुत बढ़ोतरी हुई। आबादी में ऐसी वृद्धि को महज़ एक नगर के भौतिक आकार-विस्तार से देखा जा सकता है: आरंभिक उरुक काल के सत्तर हेक्टेयर से प्रौढ़ उरुक काल तक आते-आते उरुक सौ हेक्टेयर का हो जाता है और अंततः आरंभिक राजवंश काल (3000-2350 बी सी ई) में विशाल चार सौ हेक्टेयर तक बढ़ जाता है। आबादी की ऐसी ही गतिशीलता दक्षिण एशिया में भी देखी जा सकती है, बलुचिस्तान इलाके की पहाड़ियों से सिन्धु घाटी तक। प्रौढ़ हड़प्पाई काल में घाटी

के इलाकों पर लोगों के कब्ज़े से पहले पहाड़ी ढलानों की आरंभिक हड़प्पाई बस्तियाँ और उसी तरह घाटी में आरंभिक आगमन और बस्तियाँ भी आवश्यक रूप से काफी छोटी थीं। अंततोगत्वा मोहनजोदड़ो आकार में सौ हेक्टेयर से भी ज़्यादा हो गया (विस्तार के लिए, देखें, **इकाई 7, बी एच आई सी-101ः भारत का इतिहास-1**)। दोनों मामलों में, बड़े पैमाने पर कृषि उत्पादकता में बढ़ोतरी छोटी पहाड़ी घाटियों में नहीं अपितु महान् नदियों की विस्तृत घाटियों में ही संभव थी।

कृषि उत्पादकता का करीबी सम्बन्ध सालाना और नियमित रूप से अपने किनारों को आप्लावित करने वाली हमेशा जल से भरी नदियों द्वारा जमा होने वाली गाद से था। कृषि उत्पादकता जोत की तकनीक पर भी निर्भर थी। बीज बोने वाला हल (seeder-plough) जैसा नवीन तकनीकी प्रयोग मेसोपोटामियाई कृषि की पहचान थी, जिसने रोपण, बीजों की कम बर्बादी, और अच्छे समय में 1:76 जैसे अत्यधिक बीज-पैदावार अनुपात को भी संभव बनाया। बहुत संभव है कि जैसा उच्च-नगरीकरण हम देखते हैं वह मेसोपोटामियाई कृषि की उच्च उत्पादकता का परिणाम हो, उदाहरण के लिए, उरुक के मामले में हम देखते हैं कि यह तीसरी सहस्त्राब्दी की शुरुआत तक चार सौ हेक्टेयर का आकर अख्तियार कर लेता है।

आरंभिक कांस्य युगीन समाजों के लिए कृषि उत्पादकता इतनी महत्वपूर्ण क्यों थी? बहुत कुछ अभी की तरह ही उच्च कृषि उत्पादकता दूसरे विशेषीकृत लेकिन गैर-कृषि कार्यों में लगे लोगों के पोषण को मजबूत आर्थिक आधार उपलब्ध कराती है। मुद्रा के अभाव में काम करने वाला एक कांस्य युगीन समाज ऐसा इसलिए कर पाया क्योंकि इसकी उत्पादकता ने उत्पादन में हिस्सा न लेने वाले गैर-कृषकों के निर्वाह को भी संभव किया। नगर प्राथमिक रूप से अपने द्वितीयक पेशों से पहचाने जाते हैं, जहाँ लिपिक, सौदागर, शिल्पी, और आनुष्ठानिक पुरोहितों जैसे विशेषज्ञों की जगह होती है। ऐसे पेशे नगरों में इसलिए फलते-फूलते हैं क्योंकि नगरीय केन्द्रों के भीतर या सीमांत पर रहने वाले प्राथमिक उत्पादकों से अधिशेष आता रहता है।

7.7 अधिशेष और श्रम का विनियोजन

अधिशेष और शासक समूह, आरंभिक शहरों के लिए चाइल्ड की यह दो कसौटियां महत्वपूर्ण हैं। अधिशेष केवल निर्वाह के लिए ज़रूरी न्यूनतम से अधिक और ऊपर का अतिरिक्त उत्पादन/आमदनी मात्र ही नहीं है बल्कि अधिशेष में एक राजनीतिक सत्ता निहित है जो अधिशेष के संचय को संभव बनाती है। मेसोपोटामिया की बड़ी सार्वजनिक संस्थाओं (जैसे कि मंदिर, महल, और लोक अधिकारियों या कुलीन समूहों को हासिल विस्तृत भू-क्षेत्र या जागीरें) को हम ऐसी क्रियाविधि की तरह देख सकते हैं जिससे अधिशेष का उत्पादन और संचयन होता था। सूज़न पोलॉक (1999ः 118) इन जागीरों को गृहस्थी-आधारित अर्थतंत्र के समेकित हिस्से की तरह व्याख्यायित करती हैं। मंदिरों, महलों और जागीरों को **'ओइकोइ'** ('गृहस्थियों' के लिए ग्रीक शब्द से व्युत्पन्न) या फिर 'महा गृहस्थी' कहा गया है। ये सब अधिकतर गैर-नातेदारी आधारित, प्रबंधकीय पदों के कर्मचारियों की शक्ति पर निर्भर, साथ में जानवरों के झुंडों, चरागाहों, मैदानों, बागीचों, भंडारण सुविधाओं, और शिल्पियों की कार्यशालाओं वाली बड़ी सामाजिक-आर्थिक इकाईयां थीं। ओइकोस, समुदाय की भेंट पर निर्भर अर्थनीति से दूर ऐसे परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता था जहाँ ओइकोस की अपनी विविध और बड़ी कार्यशक्ति थी।

ओइकोस के द्वारा उत्पादित ज़रूरतों (खाद्यान, तेल, वस्त्र) का उपयोग संस्थानों में स्थित गैर-कृषि उत्पादक गतिविधियों में लगे कर्मचारियों और साथ ही इन संस्थानों के लिए काम करने आने वालों के पोषण के लिए होता था। राज्य द्वारा गैर-कृषक विशेषज्ञों में अधिशेष के पुनर्वितरण का यह चक्र कांस्य युगीन अर्थव्यवस्था में अन्तर्निहित था। अधिशेष के इन्हीं वितरणों के भीतर से हम कांस्य युगीन भव्य स्थापत्य, जैसे मेसोपोटामिया के मंदिरों और

महलों, मिस्र के पिरामिडों, और मोहनजोदड़ो के नगर-दुर्ग टीले पर बने विशिष्ट स्थापत्य के निर्माण को देख सकते हैं। केवल यही नहीं, मेसोपोटामियाई मंदिर अभिलेख हमें सूचित करते हैं कि लिपिक, कुम्हार, और दूसरे शिल्पी, चरवाहे, और सौदागर मंदिरों में ही रहते थे और उनके लिए काम करते थे। श्रम-शक्ति बहुत अधिक विशेषीकृत थी और सेवा की शर्तें अंशकालिक और ठेके से लेकर स्थायी श्रम अनुबंध तक नानारूपी थीं।

मिस्र के सन्दर्भ में बैरी कैम्प (1991) बताते हैं कि मंदिर कर्मचारी समूहों में विभाजित थे और संभवतः अलग-अलग समय काम करते थे और प्रत्येक उप-विभाग दस में से एक महीने सेवा देता था। बाकी समय वे अपने गाँवों में कृषि और अन्य कार्य सम्पन्न करते थे, लेकिन मंदिरों की प्रतिष्ठा के नाते वे मंदिरों को अपना श्रम देते और एवज़ में खान-पान के रूप में कुछ सांत्वना भी पाते। 'इसका व्यवहारिक फल था राज्य द्वारा नौकरियों की व्यापक हिस्सेदारी। कर्मचारियों की संख्या की आवश्यकता कई गुणा बढ़ गयी थी जिससे राज्य द्वारा आंशिक सहयोग पाने वाले लोग भी बढ़ गए। चूंकि यह व्यवस्था केवल अंशकालिक थी, इसलिए अनावश्यक कर्मचारियों की उपस्थिति से यह अवरुद्ध नहीं हुई' (कैम्प, 1991ः 113)। हम यहाँ जो देख रहे हैं वह है पुरोहितों और राज्य की संस्थाओं द्वारा श्रम का व्यापक विनियोजन। उच्च स्तरीय विशेषीकरण वाली कांस्य युगीन अर्थव्यवस्था मुद्रा के अभाव में श्रम विनियोजन के ऐसे ही किसी तंत्र के माध्यम से कार्य कर सकती थी।

बोध प्रश्न-2

1) पत्थर की तुलना में तांबा और कांसा के उपयोग के फायदे बताइये।

....
....
....
....
....

2) नगरीकरण क्या है? शहरी संस्कृतियों की तीन प्रमुख विशेषताएँ बताएं।

....
....
....
....
....

3) कांस्य युगीन अर्थव्यवस्था में 'महा गृहस्थियों' का क्या कार्य था?

....
....
....
....
....

4) मुद्रा के अभाव में कांस्य युगीन अर्थव्यवस्था कैसे काम करती थी?

....
....
....
....

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

7.8 लेखन

श्रम के विनियोजन और बड़ी संस्थाओं और जागीरों के रख-रखाव ने अभिलेखन कार्य को अनिवार्य बनाया। भले ही शुरुआती समाजों में गिनती की सरल व्यवस्थाएं रही हों, विभिन्न आदान-प्रदानों को याद रखने तथा कब, कहाँ और किस प्रकार के लेन-देन हुए इसके अभिलेखन के तरीकों ने जटिल सांकेतिक व्यवस्थाओं को आवश्यक बना दिया। कांस्य युग में लेखन का विकास बड़ी जागीरों द्वारा विविध प्रकार के अभिलेख रखने में तथा खेतों की पैदावार का; जानवरों के झुण्ड की संख्या का; शिल्पकारों को आवंटित कच्चे माल का; शिल्पियों के उत्पादन का; सौदागरों द्वारा लाये गए कच्चे माल आदि का रिकार्ड रखने में हुआ।

अभिलेखन उद्देश्यों में शुरुआती उपयोग के अनंतर लेखन का दायरा बढ़ते हुए मिथकों, स्तुति गीतों व भजनों, आधारभूत कहानियों, शाही शिलालेखों और अंततः कानूनी कोड को भी शामिल कर लेता है। साक्षरता का व्यापक प्रसार संभव नहीं था, और समाज के बहुत छोटे से हिस्से के पास पढ़ने और लिखने की योग्यता थी। यह अनुमान लगाना मुश्किल नहीं होगा कि इस योग्यता के साथ बड़ी शक्ति भी आई।

अलग-अलग कांस्य युगीन समाजों में लेखन ने अलग-अलग रूप ग्रहण किया। मसलन, मेसोपोटामिया में लेखन कीलाकर लिपि (विस्तार के लिए नीचे वर्णित बॉक्स देखें) में विकसित हुई। लेखन के आरंभिक रूप आज उपयोग में नहीं हैं इसलिए इतिहासकारों और पुरातत्त्वविदों के लिए इन्हें पढ़कर समझना ज़रूरी था। पत्थर और मृत्तिका से बनी लेखन युक्त वस्तुएँ अपने लेखों के माध्यम से महत्वपूर्ण ऐतिहासिक सूचनाएँ प्रदान करती हैं। इन आरंभिक लिखित साक्ष्यों के सहारे हमें आरंभिक समाजों, उनके लेन-देन, उनके सामाजिक संबंधों, उनके शासकों और देवताओं, उनके रीति-रिवाजों, और उनके द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं का पता चलता है।

कीलाकार लिपि

- सबसे पुराना लेखन उरुक शहर के एन्ना मंदिर के अहाते में करीब 3200 बी सी ई के स्तरों से मिला था।
- मुख्यतः अलग-अलग आकार की मिट्टी की पट्टिकाओं पर लेखन मिले।
- कछारी परिवेश में अपने बाहुल्य और आसानी से पट्टिका निर्माण के कारण मिट्टी उपयोगी थी (देखें **चित्र 7.2**)।
- लेखन ने जैसा रूप लिया उसे अक्षरों के रूप के आधार पर 'कीलाकार' या फन्नी के आकार का लेखन कहा जाता है।
- अक्षरों का कील आकार उस कलम के कारण था जिससे भीगी मिट्टी में दबा कर चिह्न बनाये जाते थे।
- कीलाकार विभिन्न भाषाओं जैसे सुमेरियन और अक्कादियन के लेखन में उपयोग की जाती थी।
- लेखन का सबसे शुरुआती उपयोग मंदिर और महल जैसी बड़ी सार्वजानिक संस्थाओं में होने वाले लेन-देन के रिकॉर्ड के प्रशासकीय उद्देश्यों के लिए हुआ।
- लेखन का उपयोग समान प्रवर्गों वाले शब्दों की तालिका, जिसे 'कोश तालिका' कहा जाता है, के निर्माण में भी होता था, उदहारण के लिए, *पेशों की मानक तालिका* विभिन्न पेशों के 120 शब्दों का अभिलेखन (रिकॉर्ड) करती है।
- तीसरी सहस्त्राब्दी बी सी ई के मध्य से लेखन का उपयोग भूमि, घर, या दासों पर अधिकारों के हस्तांतरण के अभिलेखन के साथ-साथ शाही लेखों और साहित्यिक पाठों के लिए भी होने लगा था।

(स्रोतः जे.एन. पोस्टगेट, 1992)

7.9 लंबी दूरी के संपर्क

कांस्य युगीन सभ्यताओं की कछारी नदी घाटियों में धातुओं, लकड़ी, और अधिकांश प्रकार के पत्थरों की कमी थी। तांबे और टिन पर निर्भरता तथा कछारी घाटियों में उनकी विरलता का अर्थ था कि धातुओं की प्राप्ति अधिकतर बहुत दूर से होती रही होगी। इस प्रकार कांस्य युगीन दुनिया काफी विस्तृत थी। सीमांत क्षेत्र अधिकतर भौतिक विशिष्टताओं द्वारा निर्धारित होते थे, यथा नदियाँ या पहाड़ी शृंखलाओं से, परन्तु विभिन्न इलाकों में आमतौर पर राज्य द्वारा उनका सीमांकन, रख-रखाव, और प्रशासन किया जाता था। अतः ज़रूरी सामग्री विभिन्न तरीकों से लायी जाती थी। राज्य कच्चा माल प्राप्त करने के लिए अभियानों का आयोजन करते थे, जैसे पत्थरों और धातुओं के लिए मिस्रियों ने सिनाई पर चढ़ाई की। मेसोपोटामियाई मंदिर निर्माण तथा जहाज़-निर्माण के लिए उच्च कोटि की इमारती लकड़ियों, और सजावट के लिए कीमती पत्थरों जैसी जरूरी सामग्रियों की प्राप्ति के लिए शासकों के प्रयत्नों पर निर्भर थे। मिथकों और कहानियों से इसकी कुछ जानकारी मिलती है। ऐसी ही एक कहानी उरुक के राजा एंमेरकर और एन्ना के मंदिर को सजाने के लिए लाजवर्द, कार्नेलियन और ऐसी ही अन्य दूसरी कीमती चीजें पाने के लिए पहाड़ों की सात शृंखलाओं पार अरत्ता नामक भूमि के राजा के साथ उसके समझौते के बारे में है। दूत आते-जाते हैं और कुछ समय बाद कीमती सामानों का एक जखीरा अनाज लदे गदहों के एक कारवाँ के बदले प्राप्त किया जाता है। कहानी का एक हिस्सा यूँ है:

> स्वामी ने तब अपना मुख्य भंडारा खोल दिया... अन्नागार की जौ को उसने पूरी तरह तोला, (यहाँ तक कि) टिड्डी के खाने के हिस्से को भी जोड़ना नहीं भूला। बोझा ढ़ोने वाले गदहों को लादने के बाद – बच गए गदहों को एक किनारे लगाने के बाद – राजा, गहरी प्रज्ञा का स्वामी, उरुक का स्वामी, कुलाबा का स्वामी ने उनको सीधे अरत्ता के लिए रवाना किया। अरत्ता में लोग सूराख से निकली चींटियों की तरह भरे-पूरे घूम रहे थे... दूत के अरत्ता पहुंचने के बाद, अरत्ता के लोग भारवाहक गदहों को आश्चर्य से देखते खड़े हो गए। अरत्ता के प्रांगण में अन्नागार की जौ को दूत ने पूरी तरह तौला, (यहाँ तक कि) टिड्डी के खाने के हिस्से को भी जोड़ना नहीं भूला, ऐसा लगा मानो स्वर्ग की बारिश और चमकते सूर्य की तरह अरत्ता धन-धान्य से भर गया। जब तक देव-गण अपनी शय्या पर साथ-साथ लेटे तब तक अरत्ता अपनी भूख मिटा चुका था (**पोस्टगेट, 1992 से उद्धृत**)।

इसी तरह उरुक के अर्द्ध-मिथकीय राजा गिलगमेश का मिथक हमें बताता है कि कैसे वह एक मंदिर हेतु देवदार वृक्ष लाने के लिए आज के लेबनान जैसे सुदूर उत्तर स्थित 'देवदार वन' तक चला गया था। जिस काम को आमतौर पर छह सप्ताह लगते उसे वह तीन दिनों में कर देता थ, जो कि मिथकों में बहुत सहज है, लेकिन इससे कच्चे माल की प्राप्ति हेतु होने वाले आक्रामक अभियानों का पता चलता है।

गिलगमेश का महाकाव्य

- स्टेफ़नी डैली (1989) लिखते हैं: '*गिलगमेश का महाकाव्य* कीलाकार अक्कादियन में लिखी सबसे लंबी और महान् साहित्यिक कृति है। एक ऐसा आदमी जिसके पास मित्रता, धैर्य और जोखिम की, खुशी और गम की अपूर्व क्षमता है, उस एक शक्तिशाली और शक्तिहीन मनुष्य द्वारा यश और अमरता की साहसिक खोज की यह कहानी है...'।
- सबसे आरंभिक लिखित प्रारूप की तारीख़ 2150 बी सी ई की है, लेकिन दूसरी अन्य कहानियों की तरह संभवतः मौखिक रूप में यह पहले से ही प्रचलित थी।
- इसे महाकाव्य माना जाता है क्योंकि यह एक अर्द्ध-ऐतिहासिक और आंशिक रूप से मिथकीय चरित्र की साहसिक गाथा है, जहाँ देव और देवियाँ हाशिये पर कई किरदार निभाते हैं।
- गिलगमेश का देवत्व उसकी दो तिहाई प्रकृति में है जिसे उसने अपनी माता निन्सुन, देवी वन्य गौ (Lady Wild Cow) से प्राप्त किया था।

- गिलगमेश को एक ऐतिहासिक चरित्र माना जाता है क्योंकि उसके पिता का नाम सुमेरी राजाओं की सूची में उरुक के राजा लुगाल्बंदा के रूप में आता है।
- गिलगमेश की ऐतिहासिकता इस तथ्य से भी प्रकट होती है कि गिलगमेश को उर के तीसरे राजवंश के शासकों का पूर्वज माना जाता है और इससे पता चलता है कि महाकाव्य के संस्करण अलग-अलग शहरों में प्रचलित थे। उर का महान् शासक शुल्गी जिसने 2150-2103 बी सी ई में शासन किया गिलगमेश की कहानियों में बहुत रुचि लेता था। इसके लिए उसने निन्सुन को अपनी माता बताया, इस संदर्भ में उसने गिलगमेश को अपना भाई बनाया।
- स्पष्टतः महाकाव्य में कई छोटी-छोटी कहानियाँ एक साथ बुनी गयी थीं। इसी तरह की एक कहानी गिलगमेश और देवदार वनों के पहरेदार राक्षस हुवावा (या हम्बाबा) की है जो सुमेरी और अक्कादियन संस्करण क्रमशः ज़ाग्रोस पहाड़ों के पूरब और लेबनान के पश्चिम में हैं। यह पुनः अन्य कई मिथकों की तरह कहानियों के कई प्रचलित रूपों की ओर इशारा करता है।
- *गिलगमेश के महाकाव्य* में कई पहलू हैंः मित्रता का मोटिफ (गिलगमेश और एन्किदु), सामग्रियों की खोज (उत्कृष्ट इमारती लकड़ियों के स्रोत देवदार पर्वत पर चढ़ाई), और अमरता की खोज (एन्किदु की मौत पर गिलगमेश की व्यथा)।

चित्र 7.3 : गिलगमेश के महाकाव्य की नव-असीरियन मिट्टी की पट्टिका (संख्या 11) जिसमें 'बाढ़ की कहानी' नामक कहानी वर्णित है

इस पटिया को 'बाढ़ पट्टिका' भी कहा जाता है।

यह पट्टिका वर्तमान में ब्रिटिश म्यूजियम, लन्दन में सुरक्षित है।

साभारः बाबेलस्टोन, 2010

स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/7/7aBritish_Museum_Flood_Tablet.jpg

मेसोपोटामियाई कीलाकार अभिलेख दूर-दराज के इलाकों से संपर्क की जानकारी देते हैं, जैसे दिलमुन (बहरीन के द्वीप के रूप में पहचान), मागन (ओमान के साथ पहचान), और मेलुहा (कई विद्वान हड़प्पा के साथ जोड़कर देखते हैं)। ये अभिलेख मेसोपोटामिया आने वाली सामग्रियों के बारे में बताते हैं, जैसे तांबा, अर्द्ध-कीमती पत्थर, डायोराइट (diorite) और निर्मित सामान। कांस्य युग में बहुत सारी ऐसी सामग्रियाँ जो सीमाओं के आर-पार आती-जाती थीं उनकी प्रकृति संभवतः ऐशो आराम की वस्तुओं की थी या वे शहरों में स्थित बड़ी संस्थाओं के उपभोग में आती थीं।

ऐसे दूरस्थ संपर्क सामानों के आवागमन से कुछ अधिक का भी प्रतिनिधित्व करते हैं। बहुत संभव है कि लोगों के साथ विचार, तकनीक, मिथक, भाषाएँ, और रीति-रिवाजों की आवाजाही भी होती रही हो।

7.10 कांस्य युगीन समाज

लुइस विर्थ (1938) शहर को सामाजिक आधार पर परिभाषित करते हैं, सामाजिक रूप से असमांगी व्यक्तियों द्वारा बसी हुई सापेक्षिक रूप से बड़ी, घनी और स्थायी बस्ती के रूप में। हमें याद रखना चाहिए कि लोग अक्सर आप्रवास करते हैं और शहर में रहने आते हैं। मेसोपोटामिया में नगरीकरण के एडम्स के सिद्धांत को देखने से हमें नगरों में काफी विविधता नजर आती है। दक्षिणी कछारों के नगर ऐसी जगहें थीं जहाँ लोगों का प्रवासन हुआ और हम बड़ी संख्या में ग्रामीणों और उन लोगों की आवाजाही देखते हैं जो पहले घूमंतू थे और जो अब नगरों में बसने लगे थे। इन आरंभिक नगरों की ओर लोगों का आगमन कई कारणों से हुआ जैसा कि हमने पिछले भाग में विचार किया है। इससे एक ऐसी स्थिति पैदा हुई जहाँ हर कोई एक दूसरे को नहीं जानता था तथा लोग और समुदाय अलग-अलग थे। संभवतः नगरवासियों का अनुभव अब गुमनामी और नगर की सीमा में आमने-सामने आने वाले अजनबी रिश्तों से हुआ।

ट्रिगर (2003: 44) ध्यान दिलाते हैं कि 'सामाजिक सम्बन्धों का मुख्य आधार रक्त-सम्बन्धों और नातेदारी में नहीं था बल्कि सामाजिक विभाजनों का एक श्रेणीक्रम था जो क्षैतिज रूप से सभी समाजों में व्याप्त था तथा वे शक्ति, सम्पदा, और सामाजिक मर्यादा में असमान थे।' साफ़ तौर पर नहीं कहा जा सकता कि ये श्रेणियाँ वर्गों का प्रतिनिधित्व करती थीं। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि इन समाजों में संपत्ति, शक्ति, और मर्यादा में घनिष्ठ सम्बन्ध थे। हमें जानकारी मिलती है कि ऐसे व्यक्ति और परिवार थे जिनके पास राजनीतिक शक्ति थी और कुछ ऐसे थे जिनकी आनुष्ठानिक भूमिका थी और ये दोनों उच्च ओहदे और संपत्ति प्रदर्शित करते थे। यह भी संभव है जो लोग बड़ी संस्थाओं जैसे मंदिर या महल में स्थायी रूप से काम करते थे उनके पास अत्यधिक शक्ति और प्रतिष्ठा तथा साथ ही उनकी संपत्ति तक पहुँच थी।

संपत्ति के स्रोत के बारे में यह प्रश्न उठता है कि क्या संपत्ति को भूमि और उस पर स्वामित्व की तरह देखा जाता था? बहुत संभव है कि भूमि नातेदारी-सम्बन्धी समुदायों के नियंत्रण में हो, पर ऐसा भी लगता है कि उच्च-दर्जे के व्यक्तियों ने भूमि के बड़े हिस्से पर अधिकार जमाना शुरू कर दिया था। इसके उलट कई व्यक्ति ऐसे थे जिनका भूमि पर कोई अधिकार नहीं था लेकिन उन्होंने अपने श्रम के सहारे अर्थव्यवस्था में भागीदारी की। ये लोग अक्सर किसी 'महा गृहस्थी' (ओइकोस) के आश्रित सदस्य होते थे। दूसरी ओर, पूर्णतः निर्भर और निम्न हैसियत के लोग, ख़ासकर महिलाएं और बच्चे, संभवतः युद्ध-बंदी थे।

सामाजिक पदानुक्रम के बावजूद कांस्य युगीन समाजों की पहचान नातेदारी पर आधारित पहले से चली आ रही परम्परा से संबंधित थी। ऊपर हमने देखा कि नातेदारी सम्बन्धी समुदाय भूस्वामित्व के सन्दर्भ में अस्तित्व में बने रहे। आरंभिक मेसोपोटामियाई समाजों ने सामूहिक

स्वामित्व की प्रथा का पालन किया जो संभवतः अधिक व्यावहारिक था क्योंकि निजी स्वामित्व जोत की ज़मीन को विखंडित करता जाता। भूमि पर संयुक्त नियंत्रण का मतलब यह भी था कि सबसे अच्छी भूमि (मसलन जो नदी या सिंचाई नहरों के समीप हो) पर खेती एक ही परिवार के द्वारा नहीं की जा सकती थी, और उन्हें लगातार बदला जाता था। मिस्र में लोगों के समुदाय राज्य के बड़े निर्माण प्रोजेक्ट जैसे पिरामिडों के निर्माण हेतु अपने श्रम का अल्पकालिक दान करते थे। बहुत संभव है कि राज्य दैनिक राशन आवंटन द्वारा उनके ठहरने और खाने-पीने की व्यवस्था करता रहा हो।

कांस्य युगीन समाज धर्म से भी काफी प्रभावित थे। ब्रूस ट्रिगर (2003: 409) ध्यान दिलाते हैं कि 'मिस्रवासियों के पास ''धर्म'' के लिए कोई शब्द नहीं था। धर्म दैनिक जीवन से अभिन्न था... प्राचीन मिस्र में राज्य के काम-काज, रोज़मर्रा की ज़िन्दगी, और भौतिक संस्कृति के सभी पक्ष धार्मिक विश्वासों और प्रतीकवाद के रंग में रंगे थे।' भविष्यवाणियों पर ज़ोर, कई देवताओं में विश्वास और, शहर के अधिष्ठाता देव-मंदिरों की केन्द्रीय अवस्थितियों में हम धर्म के महत्व को देख सकते हैं। मंदिर शहर के हृदयस्थल भी थे और नगरवासियों का जीवन अधिकांशतः मंदिरों के गिर्द ही घूमता था। ऐसा प्रतीत होता है कि बहु देवों में विश्वास था और प्रत्येक नगर के अपने अधिष्ठाता देव या देवी होते थे लेकिन दूसरे देवों को समर्पित मंदिर भी थे। मंदिर से बहुत अधिक गौरव जुड़ा था और पूजा स्थलों के निर्माण और भवनों के लिए सामग्रियाँ बहुत दूर-दूर से लायी जाती थीं।

जैसा कि हमने ऊपर देखा कि मेसोपोटामिया के बड़े मंदिर स्वयं में एक संस्थान थे। बहुत संभव है कि सत्ता मंदिरों और उसके कर्मचारियों के हाथों में केन्द्रित रही हो और देवताओं को समस्त भूमियों और खेतों का स्वामी समझा जाता हो तथा अनाज, दही, मछली और दूसरी अन्य खाद्य सामग्रियाँ उनको अर्पित की जाती हों। इस प्रकार मंदिर समुदाय के अन्नागार का काम भी करते हों। तीसरी सहस्त्राब्दी के मध्य तक आते-आते मंदिर की सत्ता को मेसोपोटामिया नगर-राज्यों के राजवंशों के उदय से आघात पहुँचा। क्योंकि कहा जाने लगा, 'राजशाही स्वर्ग से उतरी थी'। सत्ता जो पहले विशिष्ट व्यक्तियों और परिवारों के हाथों में केन्द्रित रहती आई थीं, अलौकिक और सांसारिक दोनों प्रकार की शक्तियां, वह अब दो भागों में विभाजित हो गयी। नगर-राज्यों के अनवरत चलने वाले प्रान्तिक युद्ध और योद्धा-सरदारों के उदय ऐसे तथ्य हैं जिसने धर्म से अलग सत्ता-केन्द्रों की राह बनायी।

राजा को हम कुछ खास मौकों पर आह्वान का धार्मिक अनुष्ठान करता हुआ भी देख सकते हैं, मसलन किसी मंदिर-भवन के उद्घाटन पर, या फसली ऋतुओं के आरंभ और अंत पर, बोने और काटने के मौकों पर। यह उस पुरातन अतीत का अवशेष था जब एक ही व्यक्ति सांसारिक और धार्मिक दोनों भूमिकाओं का निष्पादन करता था और जिसमें धीरे-धीरे, समय के साथ विभाजन होता गया और फिर जिन्हें अलग-अलग व्यक्ति करने लगे। इसकी प्रबल संभावना है कि राजा धरती पर ईश्वर का मनुष्य रूप माना जाता था।

धार्मिक प्रवृत्तियों के अतिरिक्त मृत्यु सम्बन्धित सामाजिक अनुष्ठान भी महत्वपूर्ण थे। इनके बारे में शोध पुरातत्त्व से संभव है क्योंकि कांस्य युग के लोग मृतकों को दफनाने की प्रथा का पालन करते थे। दफनाने की प्रथा न केवल आनुष्ठानिक पहलुओं को समझने में कारगर है बल्कि यह भी दर्शाती है कि सामाजिक ऊंच-नीच कैसे काम करती थी। उदाहरण के लिए, कफ़न में लिपटी सामान्य जनों की साधारण क़ब्रों के विपरीत मिस्र के पिरामिड उन आनुष्ठानिक स्थलों को प्रतिबिंबित करते हैं जहाँ समाज की उच्च श्रेणियाँ दफनायी जाती थीं (विस्तार के लिए इस पाठ्यक्रम की **इकाई 8** देखें)। पिरामिडों के निर्माण और उनमें जमा संपत्ति दर्शाते हैं कि समाज की उच्च श्रेणियों के हाथों में कितनी अकूत संपदा थी जिसे मरे हुओं के हवाले किया जा सकता था। उर में स्थित राजकीय कब्रिस्तान भी इसी तरह से मृतक के साथ अकूत संपदा के अवतरण का प्रतिबिम्ब है।

बोध प्रश्न-3

1) लेखन के विकास के लिए ज़रूरी कारकों की चर्चा करें।

....

....

....

....

....

2) प्राचीन मेसोपोटामिया की लिपि का नाम बताएँ। बताएँ कि यह कैसे लिखी जाती थी।

....

....

....

....

....

3) क्या कांस्य युगीन अर्थव्यवस्था आत्मनिर्भर थी? धातुओं की इसकी ज़रुरत कैसे पूरी होती थी?

....

....

....

....

....

4) प्राचीन मेसोपोटामिया में मंदिरों की भूमिका पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

7.11 सारांश

इस प्रकार हम देखते हैं कि कांस्य युगीन संसार जटिल था जहाँ विभिन्न आबादियाँ अधिकतर शहरी केन्द्रों में अवस्थित थीं। यह एक ऐसी दुनिया थी जो लोगों के बीच नातेदारी के महत्व को प्रकट करती है, हालांकि लोग शहरी क्षेत्रों में आपस में अजनबी स्थितियों में रहते थे। तांबा और टिन के साथ-साथ अन्य ज़रूरी कच्चे माल पर निर्भर रहने के कारण अलग-अलग इलाकों और विविध समुदायों के बीच विस्तृत आदान-प्रदान संभव हुआ। कांस्य युग अपने पूर्ववर्तियों और परवर्तियों की तुलना में काफी विस्तृत था। इस प्रकार सामाजिक व्यवस्था के

रूप में कांस्य युग, नगरीकरण पर अपने ज़ोर, दूरस्थ संपर्क, सामाजिक विविधता, आदिम राजनीतिक संरचना, विशेषीकृत अर्थव्यवस्था और अपनी सभ्यतामूलक प्रकृति के कारण बहुत महत्वपूर्ण है।

7.12 शब्दावली

बिल्लौर (Chert) : महीन रवायुक्त अवसादी चट्टान जो माइक्रोक्रिस्टलाइन या क्रिप्टोक्रिस्टेलाइन सिलिका जैसे पदार्थों से बनी होती है।

कीलाकार (Cuneiform) : कील या फन्नी के आकार का चिह्न स्वरूप लेखन जिसे सरकंडों के कटे हुए किनारों वाले औज़ार से बनाया जाता था। सुमेरियाई लोगों द्वारा अविष्कृत कीलाकार लिपि लेखन की सबसे आरम्भिक पद्धतियों में एक है।

चित्रलिपि (Hieroghyphs) : प्राचीन मिस्री लेखन तंत्र का एक अक्षर। यह किसी वस्तु का शैलीकृत चित्र होता था जो किसी शब्द, शब्दांश या ध्वनि का प्रतिनिधित्व करता था।

ओइकोइ (Oikoi) : प्राचीन ग्रीक शब्द जिसमें तीन सम्बन्धित लेकिन भिन्न अवधारणायें शामिल हैंः परिवार, पारिवारिक संपत्ति, और घर।

बहुदेववाद : एक से ज़्यादा ईश्वर पर आस्था।

7.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 7.2 देखें

2) भाग 7.3 देखें

3) a (i); b (iv); c (ii); d (iii)

बोध प्रश्न-2

1) ज़्यादा जटिल आकारों के निर्माण की योग्यता, औज़ार उत्पादन में लाभप्रद, विशेषीकृत धातुकर्मियों का संभावित उद्भव, गतिशीलता। विस्तार के लिए भाग 7.5 देखें

2) भाग 7.6 देखें

3) भाग 7.7 देखें

4) श्रम के विनियोजन की व्याख्या करें। भाग 7.7 देखें

बोध प्रश्न-3

1) विशाल भू-सम्पत्तियों के विविध प्रकार के रिकॉर्ड रखने के लिए। आरंभिक रिकॉर्डों में उल्लिखित विविध अवयवों की सूची बनाएँ। भाग 7.8 देखें

2) भाग 7.8 का बॉक्स देखें

3) नहीं, कांस्य युग की अर्थव्यवस्था आत्मनिर्भर नहीं थी। लम्बी दूरी के व्यापार की चर्चा करें। भाग 7.9 देखें

4) भाग 7.10 देखें

7.14 संदर्भ ग्रंथ

एडम्स, रॉबर्ट मैककॉमिक.1972. 'पैटर्नस ऑफ अर्बेनाइज़ेशन इन अर्ली सदर्न मेसोपोटामिया', पी.जे. उको, आर. ट्रिंघम और जी.डब्ल्यू. डिम्बलबे. (संपा.). *मैन, सेटलमेंट एंड अर्बेनिस्म,* लंदनः डकवर्थ. पृ. 735-749.

चाइल्ड, वी.जी. 1930. *द ब्रांज ऐज.* कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

चाइल्ड, वी.जी. 1950. 'द अर्बन रेवोल्यूशन'. *द टाउन प्लानिंग रिव्यू.* 21(1): 3-17.

चाइल्ड, वी. गॉर्डन. 1957, 'द ब्रांज ऐज'. *पास्ट एंड प्रेज़ेन्ट.* 12 (नवम्बर)ः 2-15.

डाल्ली, स्टेफनी. 1989. *मिथ्स फ्रॉम मेसोपोटामिया.* ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

केम्प. बैरी. 1991. *एनसिएंट ईजिप्ट.* लंदन और न्यूयॉर्कः रूटलेज.

पोलॉक, सुसान. 1999. *एनसिएंट मेसोपोटामिया.* कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

पोस्टगेट, जे.एन. 1992. *अर्ली मेसोपोटामियाः सोसाइटी एंड इकॉनमी एट द डान ऑफ़ हिस्ट्री.* लंदन और न्यूयॉर्कः रूटलेज.

रत्नानागर, एस. 2001. *अंडरस्टैंडिंग हडप्पा सिविलाईजेशन इन द ग्रेटर इंडस वैली.* नई दिल्लीः तूलिका.

ट्रिगर, ब्रूस जी. 2003. *अंडरस्टैंडिग अर्ली सिविलाइज़ेशन्सः ए कम्पेरेटिव स्टडी.* कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

विर्थ, एल. 1938. 'अर्बेनिस्म एज अ वे ऑफ़ लाइफ'. *अमेरिकन जर्नल ऑफ सोसिऑलजि* 44(1): 1-24.

पी डी एफः

https://www.jstor.org/stable/pdf/503771.pdf?refreqid=excelsior%3Aa01af9604 1a8c040f1a2a8a8c8b5fbb3

7.15 शैक्षणिक वीडियो

ब्रांज़ ऐज मिनीसीरीज़, भाग 1-3ः
https://www.youtube.com/watch?v=jt1aWllpChs (Part 1)
https://www.youtube.com/watch?v=KLhJc3gS-BQ (Part 2)
https://www.youtube.com/watch?v=mvH2q0q4iDs (Part 3)

ब्रांज़ ऐज कोलाप्सः नेशनल ज्यॉग्राफिक डॉक्यूमेंट्री, 2010ः
https://www.youtube.com/watch?v=t6_VGLy2gKM

इकाई 8 मिस्र की सभ्यता*

इकाई की रूपरेखा

8.1 उद्देश्य

8.2 प्रस्तावना

8.3 राजवंश से पहले का मिस्र

8.4 राजवंशों का शासन

8.5 राजत्व और राज्य

8.5.1 प्रशासकीय इकाइयाँ

8.5.2 न्याय

8.5.3 सेना और युद्ध

8.6 समाज

8.7 अर्थव्यवस्था

8.8 धर्म और मंदिर

8.9 बस्तियाँ और स्थापत्य

8.10 मिस्र का पतन

8.11 सारांश

8.12 शब्दावली

8.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.14 संदर्भ ग्रंथ

8.15 शैक्षणिक वीडियो

8.1 उद्देश्य

इस इकाई में हम मिस्र की सभ्यता का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपः

- मिस्र की सभ्यता के स्रोतों का विवरण दे सकेंगे,
- इस सभ्यता के उत्थान के कारणों की व्याख्या कर पाएँगे,
- इस सभ्यता के सामाजिक, आर्थिक, क़ानूनी और धार्मिक संरचनाओं की पहचान कर सकेंगे, और
- मिस्र की सभ्यता के पतन के कारणों को विश्लेषित कर सकेंगे।

8.2 प्रस्तावना

नील की उपजाऊ जमीन ने मिस्री सभ्यता के उद्भव और विकास में सहायता की। हेरोडोटस ने मिस्र को 'नील का उपहार' कहा था। हालांकि नील की सभ्यता मिस्र की पहली सभ्यता नहीं थी। मिस्र की सभ्यता के उदय के काफी पहले से बस्तियों और मनुष्यों के आवागमन के विवरण प्राप्त होते हैं। बदारियन क़ब्रें राजवंशों से पहले के मिस्र के इतिहास को जानने का मुख्य स्रोत हैं। हेलेनिस्टिक (टॉलेमिक) काल, लगभग 323-31 बी सी ई, से पहले के मिस्र का इतिहास राजवंशों में विभाजित है, जबकि 5000-3150 बी सी ई का प्रागैतिहासिक काल

* डॉ सोहिनी बसाक, सेंटर फॉर हिस्टारिकल स्टडीज़, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

मुख्यतः पूर्व-राजवंशीय काल कहलाता है। जैसा कि हम जानते हैं यह महान् सभ्यता नील नदी के किनारों पर विकसित हुई थी। नदी के तटवर्ती इलाके बस्तियों को भोजन के स्रोत, संसाधन और आर्थिक संपन्नता उपलब्ध कराते थे। फिरौन मेनेस के नेतृत्व में हासिल की गई ऊपरी और निचली घाटियों की एकता ने महान् सभ्यता के विकास का मार्ग प्रशस्त किया। मिस्र की सभ्यता तीन ऐतिहासिक कालों में विभाजित की जा सकती है – प्राचीन राज्य (लगभग 2649-2040 बी सी ई), मध्य राज्य (लगभग 2040-1550 बी सी ई), और नवीन राज्य (लगभग 1550-1070 बी सी ई) (केनेट, 2008: 5-6)।

8.3 राजवंश से पहले का मिस्र

कृषि की शुरुआत के पहले मिस्र के लोग मौसमी संसाधनों के संग्रह के सहारे घुमंतु जीवन-यापन करते थे। ये संसाधन भंडारपात्रों में इकट्ठे किये जाते थे। पुराशास्त्रियों के अनुसार भविष्य की मिस्री सभ्यता के बीज इसी में अन्तर्निहित थे। यह भंडारपात्र जो पहले पहल 1920 के आस-पास खोजे गए थे अनाज के 800 वेट्स (1 वेट = 13.6 ग्राम) भार वहन करने में सक्षम थे और जिनमें ज़्यादातर जंगली बीज, **एम्मर गेहूं** और दो और छह-पंक्ति वाले जौ शामिल थे। एक भंडारपात्र भरने के लिए कम से कम पैदावार वाली दो या तीन एकड़ ज़मीन जरूरी थी। बीजों की रोपाई अधिकतर अक्टूबर और नवम्बर में ठीक जाड़ों की शुरुआत के पहले होती थी और वो अगले कुछ महीनो में बढ़ते और पकते थे।

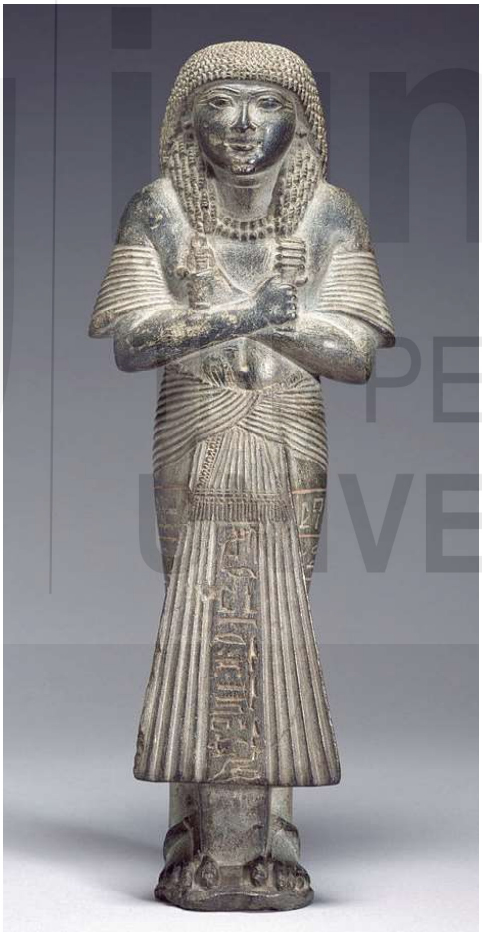

चित्र 8.1: प्राचीन मिस्र के मकबरे से उशाबती मूर्ति, लगभग 1260 बी सी ई
यह गहरा भूरा पत्थर उशाबती, डोरकीपर्स के चीफ, अमेन-एम-आईपेट से संबंधित था
साभार: हेनरी वाल्टर्स, 1923
स्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/c/c3/Egyptian_-_Ushabti_Figure_of_Amen-em-ipet_-_Walters_22177.jpg

पूर्व-राजवंश काल के बारे में साक्ष्यों की कमी के कारण उस काल का पूरा विवरण मिलना मुश्किल है। निचले मिस्री स्थलों से मिली क़ब्रों से परिवार की इकाइयों पर आधारित एक समतामूलक समाज का पता चलता है। निचले मिस्री स्थलों में सामाजिक एकरूपता का पता नहीं मिलता। मेरिमदे (लगभग 4300-3800 बी सी ई) का छोटा सा गाँव अधिकतर कृषक परिवारों की इकाइयों से बना था, जबकि फायुम ए (लगभग 4600-4000 बी सी ई) के नागरिक अधिकतर शिकारी और संग्राहक थे।

निचले मिस्री स्तर से अलग ऊपरी मिस्री स्तर में बदारियन काल (लगभग 4500-3800 बी सी ई) से ही सामाजिक पदानुक्रम का पता मिलता है। बदारियन क़ब्रें अपने आकार और उसमें रखी संपत्ति की विविधता द्वारा मृतकों को प्राप्त विभिन्न हैसियतों का प्रमाण देती हैं (विलकिंसन, 1999: 23, 25)। शवाधान प्रथायें अक्सर समाज के पहलूओं को प्रतिबिंबित करती हैं और प्राप्त क़ब्रों के अनुसार कुछ व्यक्ति दूसरों की तुलना में ऊँचे ओहदों के मालिक थे और सम्पति और संसाधनों तक उनकी पहुँच अधिक थी।

जैसे-जैसे मिस्र का उद्भव एक राज्य (अनुमानतः आरंभिक राजवंश काल के दौरान, अर्थात् लगभग 3100-2686 बी सी ई) के रूप में होता गया वैसे-वैसे सामाजिक अंतर और ऊंच-नीच क़ब्रों के साक्ष्य में अधिक प्रकट होते गए। उदाहरण के लिए, अभिजात्य लोगों की कब्रें वृहत और अलंकृत स्थापत्य वाली थीं जिनमें बड़ी मात्रा में बर्तन, धातु के औज़ार, हथियार और व्यक्तिगत सामान मिलते हैं। राजवंश-पूर्व युग के अंत तक आते-आते स्थानीय अभिजात्य आर्थिक संसाधनों पर एकाधिपत्य स्थापित करने में समर्थ हो गए थे। वृहत मकबरों का निर्माण श्रम और वित्तीय दोनों मामलों में प्रचुर संसाधनों की उपस्थिति का पता देती हैं। अभिजात्य वर्गों के पास दूरस्थ व्यापार के जरिये माल प्राप्ति और कुशल शिल्पियों को मकबरों और क़ब्रों के निर्माण में नियुक्ति की शक्ति थी। राजवंश-पूर्व युग ने अपने सामाजिक अंतरों, संपत्ति के वितरण तथा श्रम-विभाजन वाले मिस्री राज्य के बीज डाले। पदानुक्रम आधारित श्रेणियों के चिह्न वहां पहले से ही मौजूद थे।

8.4 राजवंशों का शासन

प्राचीन समाजों से अलग पुराने राजवंश ने अपने पीछे ऐतिहासिक और पुरातात्त्विक स्रोत छोड़े हैं। ऐतिहासिक स्रोतों, ख़ासकर जो ग्रीक इतिहासकारों और मेनेथो (एक मिस्री पुजारी) ने लिखे हैं, उनका कहना है कि मिस्र के आरंभिक राजाओं की उत्पत्ति दैवीय थी। दूसरी कई आरंभिक सभ्यताओं और प्राचीन राज्यों की तरह आरंभिक मिस्र के राजा खुद को 'शेम्सु' या देवताओं के सेवक कहते थे। मेनेस को पहले राजवंश (लगभग 2180-2040 बी सी ई) का पहला राजा माना जाता है। समकालीन विवरण इसका मूल 'अर्द्ध-दैवीय प्रेतात्माओं' में मानता है। इससे पहले वे 'रे' के रूप में जाने जाते थे (फ्रैंकफर्ट, 1978: 15)।

मेनेथो का लेखन मिस्र के राजाओं और राजवंशों के अध्ययन के लिए सबसे महत्वपूर्ण ढांचा उपलब्ध कराता है। वह मेनेस के द्वारा मिस्र के एकीकरण (लगभग 3100/3000 बी सी ई) से लेकर सिकंदर द्वारा मिस्र की विजय (332 बी सी ई) तक राजाओं के तीस राजवंशों का वर्णन करता है। मेनेस के शासन का राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रभाव काफी गहरा था। मेनेस ने मिस्र के एकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। पहले राजवंश के उत्थान ने अपने साथ बड़े पैमाने पर धातु के औज़ारों के उपयोग के तकनीकी विकास के द्वारा लेखन से परिचय कराया। छेनी जैसी धातु के औज़ारों के उपयोग ने पत्थरों और पिरामिडों पर लेखन में सहायता की। इसने स्थायी अभिलेखन को संभव किया जबकि **पपायरस** (एक प्रकार का कागज़ जो एक जलीय पौधे के तने से बनाया जाता था) पर किये गए पुराने लेखन अल्पकालिक होते थे। मिस्र के राजवंश का उद्भव ऊपरी और निचले मिस्र के एकीकरण से हुआ था। एकीकरण ने मिस्र की सभ्यता के उत्थान के लिए ज़रूरी संसाधनों और जनशक्ति के बेहतर उपयोग में सहायता की।

पहले तीन राजवंशों में राजा का नाम अलंकृत नहीं था और दृश्य वर्णनों में राजा का नाम एक मुखौटे (*सेरेख*) से घिरा था जिसे देवी ओसिरिस के पुत्र होरस के रूप में पहचाना गया था। आगे आने वाले काल की तुलना में आरंभिक दो राजवंशों का अध्ययन और प्रभेद कुछ हद तक स्थानीय क़ब्रों (एबाइडोस के *मस्तबा* मकबरे) के आकार-प्रकार और स्थान से किया जा सकता है। तीसरा राजवंश पिरामिडों के रूप में शाही क़ब्रों के निर्माण के पहले कदम का गवाह बनता है और इस प्रकार एबाइडोस में आरंभिक राजवंशों का शाही कब्रिस्तान अब राजवंशों के दफनाने के स्थान के रूप में समाप्त हो जाता है। पहले तीन राजवंशों को अक्सर मिस्री सभ्यता की नींव का पत्थर माना जाता है और अक्सर ये आरंभिक राजवंश के नाम से जाने जाते हैं।

चित्र 8.2 : मस्तबा का मकबरा
साभारः जॉन बोड्सवर्थ, 2007
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/a/ab/Mastaba-faraoun-3.jpg

इस आरंभिक राजवंश के बाद पुराना राज्य अस्तित्व में आया जिसमें राजवंश IV (2613-2494 बी सी ई) से राजवंश VIII (2173-2160 बी सी ई) तक शामिल हैं।[1] चौथे राजवंश के अनंतर शाही नाम ज़्यादा अलंकृत होने लगे और राजा का नाम एक 'अंडाकार परिधि' में घिरा होता था जिसका अंडाकार रूप सूर्य से घिरी हर चीज़ का प्रतीक था। अगले सौ सालों तक राज्य व्यवस्था अराजकता और संशय में घिरी रही और अक्सर इसे 'प्रथम अंतराल काल' कहा जाता है। इसके अंत ने नौवें राजवंश (लगभग 2160-2130 बी सी ई) के साथ एक मजबूत केन्द्रीय सत्ता का मार्ग प्रशस्त किया। ग्यारहवें से आरंभिक तेरहवें राजवंश (लगभग 1803-1649 बी सी ई) के बीच के काल को मध्य राज्य के नाम से जाना जाता है। पहले, इतिहासकार और पुराशास्त्रियों का विश्वास था कि पुराने और मध्य राज्यों के बीच मिस्र की सभ्यता में संरचनात्मक परिवर्तन हुए थे। यह मान्यता वर्तमान खोजों और अध्ययनों के साथ बहुत हद तक बदल गयी है। अब इतिहासकार मानते हैं कि यद्यपि मिस्र की सभ्यता और अर्थव्यवस्था में नयी तकनीकों और जटिल प्रशासन के आने से मध्य राज्य में निश्चित परिवर्तन हुए थे लेकिन आरंभिक से मध्य राजवंशों के बीच निरंतरता के चिह्न भी देखे जा सकते हैं, मुख्यतः ***मात***, राज्य और धार्मिक विश्वासों की अवधारणा में जिनकी चर्चा इस इकाई में आगे की जायेगी।

मध्य राज्य के पश्चात् 'दूसरा अंतराल काल' (XIII से XVII राजवंश तक) आया जो करीब दो सौ सालों का था। इस काल ने विदेशी मूल के राजाओं का शासन देखा और इसे 'हिक्सोस' राजवंश का काल कहा जाता है। अगली पांच शताब्दियों में नया राज्य (XVII से XX राजवंश तक) का गठन हुआ, तत्पश्चात् चार सौ सालों का 'तीसरा अंतराल काल' (XXI से XXV राजवंश तक) आया। इस काल के बाद साएत्स (XXVI राजवंश) का राजवंश आया। 525 बी सी ई में मिस्र पर ईरानियों का कब्ज़ा हो गया और यह अकेमिनिड साम्राज्य का एक हिस्सा हो गया। मेसिडोनिया के सिकंदर ने 332 बी सी ई में मिस्र पर विजय हासिल की।

[1] कुछ विद्वान राजवंश III को भी पुराने राज्य में शामिल करते हैं।

काल	राजवंश	तिथि
राजवंश-पूर्व काल	—	लगभग 5000-3100 बी सी ई
आरंभिक राजवंश	I-II	लगभग 3100-2686 बी सी ई
प्राचीन या आरंभिक राज्य	III-VI VII-X	लगभग 2686-2181 बी सी ई
प्रथम अंतराल काल	XIवें राजवंश का उत्तरार्द्ध- XIIIवें राजवंश का पूर्वार्द्ध	लगभग 2180-2040 बी सी ई
मध्य राज्य	आरंभिक XIII	लगभग 2040-1730 बी सी ई
द्वितीय अंतराल काल	XIII-XVII	लगभग 1730-1550 बी सी ई
नवीन राज्य	XVIII-XX	लगभग 1550-1080 बी सी ई
तृतीय अंतराल काल	XXI-XXV	लगभग 1080-664 बी सी ई
साएत काल	XXVI	664-525 बी सी ई
अंतिम काल (ईरानी आधिपत्य भी शामिल)	XXVII-XXXI	525-332 बी सी ई
सिकंदर द्वारा मिस्र पर कब्ज़ा	—	332 बी सी ई

स्रोतः कुहर्ट, 1995: 124

8.5 राजत्व और राज्य

मिस्र के एकीकरण ने मिस्र की सभ्यता को आधार प्रदान किया। मिस्र में राज्य के लिए कोई शब्द नहीं था। राजतंत्र दैवीय अवधारणा में गुंथा था। मिस्री राजतंत्र का पवित्र चरित्र ही राजा और प्रशासन का प्रतीक था। एक देवता के रूप में राजा के पास ही मिस्र की भूमि और उसके नागरिकों पर परम अधिकार था। बहुदेववादी समाज में राजा के लिए यह ज़रूरी था कि वह विभिन्न देवताओं से रिश्ता कायम करे। राजा और ईश्वर के बीच संबंध स्थापित करने के लिए 'रे' (मिस्र का एक देवता) का पुत्र जैसी उपाधियों का इस्तेमाल किया जाता था, जो कि अक्सर फिरौन को नामित करने के लिए प्रयोग में आता था। इस प्रकार, राजा को बाज (falcon) होरस और 'ओसीरिस के पुत्र' या 'आईसिस के पुत्र' के रूप में भी पहचाना जाता था। बाद की उपाधियाँ विशेष रूप से प्रथम राजवंश के दौरान महत्वपूर्ण थीं क्योंकि इससे शासकों को अपनी वैधता का दावा करने में मदद मिली।

समकालीन ग्रंथों में आनुवांशिक माता-पिता को बहुत महत्व नहीं दिया गया था। सिंहासन के उत्तराधिकारी का निर्णय स्वयं राजा ही करता था। इससे दरबार और शाही परिवार के अन्दर गुटों के निर्माण की सम्भावना रहती थी। इसलिए राजा मनमाने ढंग से नहीं बल्कि केवल *मात* या न्यायोचित आज्ञप्तियों के अनुसार ही कार्य कर सकता था। *मात* की अवधारणा समाज और इसकी संस्कृति के अन्दर स्थिरता और अपरिवर्तित क्रम की वक़ालत करती थी जहाँ फिरौन ईश्वर का प्रतिनिधि होता था। प्रत्येक नए राजा से *मात* को फिर से जारी करने की उम्मीद की जाती थी (मैनुअलियन और शीड, 2015: 2)।

8.5.1 प्रशासनिक इकाइयाँ

मिस्र गांवों, छोटे कस्बों और शाही भूमियों में विभाजित था। इन्हें प्रशासनिक इकाइयों या

नोम्स में समूहीकृत किया गया था जो स्थानीय गवर्नर या ***नोमार्च*** के नियंत्रण में थे। ऊपरी मिस्र को 22 *नोम्स* और निचले मिस्र को 19 *नोम्स* में बांटा गया था (कुहर्त, 1995: 151)। शाही परिवारों में से अधिकारियों को नियुक्त किया जाता था, जो अपने उच्च जन्म के आधार पर विशेष शाही कार्यों के लिए सबसे उपयुक्त और योग्य माने जाते थे। ऐसा माना जाता था कि वे कुछ हद तक राजा के दिव्य गुण रखते थे (मोरेन्ज़, 1960)। यहां तक कि पिछले फिरौनों के परिवारों को भी सरकारी पदों के योग्य माना जाता था। शाही परिवार का स्थान उच्चतम माना जाता था। हेलवान नगर के प्रारंभिक राजवंश के उच्चतम अधिकारियों के कब्रिस्तान में 10,000 से अधिक कब्रें शामिल हैं जो प्रारंभिक प्रशासन की विशालता को दर्शाती हैं (विल्किन्सन, 1999: 96)। प्रारंभिक राजवंश के निचले पद गैर-शाही व्यक्तियों के लिए भी खुले थे।

प्रशासन शाही परिवार के सदस्यों द्वारा शासित था। सरकारी गतिविधि और शाही कार्यालय मूल रूप से शाही सेवा के कार्यों का विस्तार था। सबसे महत्वपूर्ण आधिकारिक पदनाम वज़ीर या 'सम्पूर्ण भूमि के प्रबंधक' और 'राजा के सभी आदेशों के परामर्शदाता' थे। खनन और विदेशी व्यापार के प्रभारी को 'भगवान का कोषाध्यक्ष' या 'खजांची' कहा जाता था। वज़ीर का पद सबसे महत्वपूर्ण आधिकारिक पद माना जाता था क्योंकि वज़ीर की पहुंच फिरौन तक थी। उसे ओदश था कि सुबह-सुबह वह राजा के यहाँ हाज़िरी दे तथा वह उसके मुख्य कार्यकारी के रूप में काम करता था। प्रारंभ में, इस पद पर शाही परिवार के सदस्यों का कब्ज़ा था, लेकिन बाद में आम लोग भी वज़ीर हुए। प्राचीन साम्राज्य में, शाही प्रशासन आर्थिक और वित्तीय कार्यालयों पर आधारित था। वित्तीय कार्यालयों को अन्नागार (***snwt/snwty***) और खजाने (***pr hd/prwy hd***) में विभाजित किया गया था। राज्य के अन्नागार अधिकारी, राज्य के खजांची और न्याय की उच्च अदालतों के पर्यवेक्षक के पद महत्वपूर्ण थे।

अधिकारियों का कुछ स्तर तक साक्षर होना आवश्यक था। प्रारंभिक राजवंश में, राजनीतिक नियंत्रण के लिए लेखन को एक हथियार की तरह इस्तेमाल किया जाता था तथा सभी प्रशासकों ने लिपिकों की भूमिका निभाई। इससे प्रारंभिक मिस्र के राजवंश को निगरानी और अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण में मदद मिली। प्राचीन साम्राज्य के तीसरे और चौथे राजवंशों के दौरान मिस्री राज्य ने एक बड़ा बदलाव देखा। राज्य एक जटिल-तंत्र बन गया तथा शाही परिवार राज्य के सभी घटकों का प्रबंधन करने में अकेले सक्षम नहीं रहे। इस प्रकार सत्ता के उच्च प्रशासनिक पदों पर, कभी-कभी तो वज़ीर जैसे उच्च पद पर भी, गैर-राजवंशियों को नियुक्त किया गया। कार्यालय में पदों का निर्धारण वंशानुगत दावों पर आधारित नहीं था, और कम से कम सैद्धांतिक तौर पर यह अधिकारियों के सार्वजनिक कर्तव्यों के प्रदर्शन पर निर्भर थे, जैसे कि गरीबों की सहायता करना और उचित निर्णय देना।

चित्र 8.3 : हिक्सोस फिरौन अपोफिस की नाम धारक मुहर
साभारः कीथ शेंगिली-रॉबर्ट्स, 2007
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/a/a2/ScarabBearingNameOfApophis_MuseumOfFineArtsBoston.png

मिस्री राजवंशों के सबसे महत्वपूर्ण प्रमाणों में से एक वहाँ प्रयोग होने वाली मुहरें हैं। हालांकि प्रारंभिक राजवंशों की मुहरें प्रांतीय प्रशासन पर ज़्यादा प्रकाश नहीं डालतीं और ज़्यादातर राजवंशों और कुलीन वर्गों के बारे में ही बात करती हैं। साक्ष्य के ये शुरुआती पुरातात्विक टुकड़े सैन्य और

राजनीतिक अधिकारियों पर भी प्रकाश नहीं डालते। बाद की अवधि में, सबसे अधिक इस्तेमाल की जाने वाली मुहर *स्कैरब* थी। इन मुहरों पर सर्पिल रूपांकन और अधिकारियों की उपाधियाँ मध्य राज्य की विशेषताएँ थीं। ऐसी मुहरों पर अभिलेख कभी-कभी स्थानों और देवताओं को संदर्भित करते हैं। *स्कैरब* पर अक्सर शाही नाम खुदे होते थे, खासकर ग्यारहवें राजवंश से लेकर बाद की अवधि तक। हमें हिक्सोस राजवंशों के अधिकतर नामों की जानकारी *स्कैरब* से मिलती है।

8.5.2 न्याय

मिस्री संस्कृति की न्याय प्रणाली धर्म पर आधारित थी। राजाओं में विधीय शक्तियां निहित थीं और वह ***hp*** या कानून, ***wd*** या अध्यादेश और ***tp-rd*** या नियम बनाने और देश में कानून और व्यवस्था सुनिश्चित करने के लिए ज़िम्मेदार थे। कार्यकारी अधिकारियों और न्यायपालिका के बीच कोई भेद नहीं था। *मात* की अवधारणा मिस्र की न्याय प्रणाली के मूल में थी जिसे राजा द्वारा परिभाषित और प्रत्याभूत किया जाता था। प्राचीन मिस्र में कुछ संहिताबद्ध कानून थे जैसे कि फिरौन को सर्वोच्च न्यायाधीश माना जाता था और सारे कानून उसी से उत्पन्न होते थे। पांचवें राजवंश से, न्यायिक अधिकारियों, जिसमें वज़ीर भी शामिल थे, को कानूनी मामलों का अधिकार मिला और उन्हें *मात* के पुजारियों' की उपाधि मिली। इस प्रकार उच्चतम न्यायाधीश की भूमिका अदा करना वज़ीर के सबसे महत्वपूर्ण कर्तव्यों में से एक था। धर्म में न्याय का यह प्रारंभिक संयोजन पूरे मिस्री इतिहास के दौरान कायम रहा। यहाँ तक कि रानियों और अधिकारियों को भी निष्पक्ष सुनवाई के लिए वज़ीर के कार्यालय में एक विश्वासपात्र अधिकारी के साथ ले जाया जाता था (गार्सिया, 2003ः 10)।

8.5.3 सेना और युद्ध

प्राचीन मिस्र में हिंसा का इस्तेमाल या युद्ध की मंजूरी राजसी सत्ता तय करती थी। मध्य राज्य के समय से, विशिष्ट हथियारों में निपुणता, जनशक्ति के संगठन, नेतृत्व की कुशलता और युद्ध के अनुभव सिंहासन के किसी भी दावे की बुनियादी विशेषताएं थीं। राज्य सेवा के लिए सैनिकों को उनके नगर या *नोम्स* से बाहर नूबिया में मिस्र के किलों में राज्य सेवा के लिए भेज दिया जाता था, जहाँ उन्हें शहरी प्रशासकों और संतरियों या अनुचरों द्वारा नियंत्रित किया जाता था। सैनिकों की पहचान उनके संबंधित मिस्री नगरों से जुड़ी होती थी। द्वितीय मध्यकाल के युद्धों के दौरान, ऊपरी मिस्र के राज्यपाल और नगर के सेनाध्यक्षों ने स्थानीय सशस्त्र बलों को तैनात करके अपने क्षेत्र का बचाव किया। इस काल के बाद सैनिक संगठन बदला और मिस्र में पेशेवर सेना बहाल की गई। हालांकि भाड़े के सैनिकों की तैनाती और युद्ध के कैदियों को शामिल करना मिस्र इतिहास में आम था (निर्स, 2003ः 640-642)। आर्थिक संसाधनों में वृद्धि होने से, नए राज्य के दौरान सेना और मिलिशिया में विस्तार हुआ।

बोध प्रश्न-1

1) राजवंश-पूर्व युग ने मिस्र की सभ्यता के उदय के लिए किस प्रकार मार्ग प्रशस्त किया?

....

....

....

....

....

2) प्राचीन मिस्र में प्रशासन के विभिन्न घटक क्या थे?

....

....

....

....

....

3) *मात* पर एक नोट लिखिए।

....

....

....

....

....

4) मिस्र की सैन्य संरचना का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

8.6 समाज

मिस्र का समाज न्यायिक समानता की अवधारणा पर आधारित था जहाँ राजा न्यायिक निर्णयों का प्रतिमान होता था। मिस्र में आम लोगों के लिए जीवन कठिन था। यह निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है कि क्या लोग ज़मीन से बंधे हुए थे और सार्वजनिक कार्यों के लिए उनसे जबरदस्ती कार्य कराया जाता था। हालांकि निर्माण कार्य में लगे मजदूरों को ज़्यादातर अनाज और जौ के रूप में भुगतान किया जाता था, जो केवल उनके जीवित रहने मात्र के लिए पर्याप्त था। निर्माण कार्यों में लगे श्रमिकों के लिए मौद्रिक पारिश्रमिक के प्रमाण हमें शायद ही कहीं मिलते हैं।

कभी-कभी शिलालेखों में चित्रित बाजार के दृश्य, साधारण स्थानीय बाजारों की एक तस्वीर प्रदान करते हैं, जहां ज़्यादातर खाद्य पदार्थ और पेय पदार्थ, लकड़ी के सिरहानों (मिस्र के लोग तकिए की जगह इसका उपयोग करते थे), गहने, कपड़े, मछली पकड़ने के हुक और धुरी-तकली जैसी वस्तुओं का आदान-प्रदान किया जाता था। शाही अनाज प्रणाली के साथ ही आवश्यक वस्तुओं के आदान-प्रदान के लिए बाज़ार की उपस्थिति विनिमयों के संचलन को इंगित करती है।

प्रारंभिक साहित्य और दर्शन धर्म पर आधारित थे। बाद के चरण में साहित्य धीरे-धीरे धर्मनिरपेक्ष होते गए। मिस्र की प्रेम कविता एक ऐसी ही शैली है। मंच पर खेले गए नाटक नाट्य-कला की उपस्थिति के संकेत देते हैं। ऐसा माना जाता है कि देवताओं के मुखौटे मंचन की सामग्री की तरह बनाये जाते थे जिसका इस्तेमाल नाट्य-कला में होता था। धार्मिक उत्सवों के दौरान पुरोहित भी मुखौटों का इस्तेमाल करते थे (वोलिंस्की, 1987: 22)।

भाषा जो प्रारंभ में केवल प्राथमिक स्तर की थी धीरे-धीरे पेचीदा होती गयी और व्याकरण की

अवधारणा ने जन्म लिया। मिस्री साहित्य की तरह ही विज्ञान का मूल भी धर्म था। उदाहरण के लिए, प्राकृतिक मृत्यु को भी ईश्वर का सन्देश माना जाता था। चिकित्सीय उपचार अधिकतर जादू और मिथकों से संबंधित थे। शुरुआत में चिकित्सीय पेशा पुरोहित के पद से जुड़ा था और प्रायः धार्मिक अनुष्ठानों से भरपूर था। चिकित्सा विज्ञान की तरह ही विज्ञान की अन्य शाखाएँ भी धर्म से जुड़ी थीं। खगोलशास्त्रीय ज्ञान, शवाधान अनुष्ठानों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे ताकि जीवित और मृतक के बीच संबंध स्थापित किया जा सके।

लेखन प्रणाली

करीब 3100 बी सी ई में, चित्रित या खुदी हुए सजावट वाले बर्तनों के टुकड़े मिस्र की पहली लिखित वस्तुएं थीं। लिखाई 'प्रवाही' (cursive) होती थी और इसका इस्तेमाल मुखियाओं या शासकों के नाम, या उनके मकबरों/घरों में माल वितरण के अभिलेखन के लिए होता था। मिस्र में 'चित्रलिपि' द्वारा लेखन कुछ समय बाद शुरू हुआ, इसका प्रयोग मन्नत की वस्तुओं यानी ऐसी वस्तुएं जिनका इस्तेमाल मन्नत मांगने के लिए, मंदिरों की दीवारों और मुखियाओं और शासकों के मकबरों पर, और मकबरों में जमा वस्तुओं से बंधे छोटे हाथीदांत के टैग पर होता था। इसका इस्तेमाल शाही वीरता कर्मों के उच्चतम प्रतीकों की नक्काशी, पत्थर की पट्टिकाओं (palettes), और आनुष्ठानिक राजदंड़ों (maces) पर लेखन करने के लिए किया जाता था। एक अविकसित मिस्री राज्य की पहली राजधानी हिराकोंपोलिस में, मंदिर में आनुष्ठानिक रूप से दफन की गयी पुरानी चीजों के गुप्त भंडार में कई लिखित वस्तुएं पाई गयीं। तस्वीरें, मुख्य रूप से पहचानने योग्य वस्तुओं की तस्वीरें, लेकिन कभी-कभी व्यक्तियों और देवताओं के नामों की तस्वीरें भी, लेखन के एक दूसरे प्रकार को इंगित करती थीं। जबकि साधारण रिकॉर्ड रखने के लिए, कुछ स्ट्रोक के साथ लिखा गया, कर्सिव लेखन, मिस्री समाज की चित्रलिपि या औपचारिक लेखन का एक अनूठा सौंदर्यपरक गुण था। कालिख की पोटली, रंगों को गढ़ने वाला लाल गेरु और कभी-कभी दूसरे रंगों से लैस, सरकंडे की लेखिनी, पतले और मोटे ब्रशों और नुकीली खुरचनी का इस्तेमाल करता लेखक एक कलाकार होता था। संकेतों को बराबर दूरी से बनाया जाता था, और उनके रूप मानकीकृत थे। जीवित चीजों को खाके (profile) में, लेकिन सींग और आंखें सामने की तरफ और इसी तरह अन्य चीजें होती थीं। कुछ मामलों में लेखन एक दूसरे में घुल-मिल जाता था, जिसे हम नक्काशी या चित्रकारी कहेंगे। कभी-कभी कला के एक सहायक के रूप में, मंदिर या मकबरे की दीवार पर चित्रकला के साथ-साथ चित्रलिपि लेखन भी हुए। यह प्रवाही (कर्सिव) रूप समय के साथ बदलता गया, जबकि उसके साथ प्रयोग में आने वाले औपचारिक और सौन्दर्यपरक चित्रलिपि लेखन में समय के साथ बहुत कम बदलाव आये।

स्रोतः शेरीन रत्नागर, 2017 (पुनःमुद्रित), 'राइटिंग एंड आर्टिस्टिक एक्सप्रैशन', खंड 2 : कांस्य युगीन सभ्यता, एम एच आई-01: *प्राचीन और मध्ययुगीन समाज,* नई दिल्लीः इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालयः पृ. 34-351.

8.7 अर्थव्यवस्था

राज्य-कोष मुख्यतः लिनन, शराब और तेल जैसे सामानों से सम्बंधित था। दूसरी तरफ, अन्नागार, अन्न के संचयन के लिए उपयोग में आते थे। क्षेत्रीय और निजी अन्नागार और राज्यकोष भी मौजूद थे। प्राचीन राजवंश में भूमिकर राजस्व का एक महत्वपूर्ण स्रोत जान पड़ता है। खनन और उत्खनन परियोजनाओं ने भी केंद्र सरकार को खनिज संपदा प्रदान की। समकालीन साक्ष्य बताते हैं कि राज्य ने प्राचीन मिस्र की खनन गतिविधियों में सक्रिय रूप से हिस्सा लिया था। तीसरी सहस्राब्दी बी सी ई में धन को पैसे में नहीं मापा जाता था, क्योंकि मुद्रा प्रणाली शुरू नहीं हुई थी। वस्तु-विनिमय का व्यापक रूप से विनिमय के माध्यम के रूप में उपयोग किया जाता था। अर्थव्यवस्था खाद्य पदार्थों, अनाज, मवेशी, रोटी, बियर और लिनन के आदान-प्रदान पर आधारित थी (वार्डन, 2014: 233)। वस्तुओं का मूल्य तांबे, चांदी या अनाज की मात्रा में व्यक्त किया जाता था। तांबा या ***डब्न* (dbn)** या ***डेबेन* (deben)** जिसका वजन .91 ग्राम था नवीन राज्य में विनिमय का एक प्रमुख रूप प्रतीत होता है। चांदी का इस्तेमाल केवल रामसेस तृतीय के शासनकाल के शुरुआती वर्षों में दिखाई देता है (लगभग 1187-56 बी सी ई)। हालांकि, अनाज का उपयोग टोकरी जैसी सस्ती वस्तुओं के मूल्य को व्यक्त करने के लिए किया जाता था। तांबे का वजन 1 *खार* (*khar*; लगभग 48 किलोग्राम) अनाज के रूप में किया जाता था।

मिस्र के लोग गेहूं और जौ जैसी प्रमुख खाद्य फसलें और पटसन और पपायरस (भोजपत्र) जैसी वाणिज्यिक फसलें भी उगाते थे। प्रत्येक वर्ष नील नदी में आने वाली बाढ़ मिस्र के किसानों के लिए अभिशाप थी, लेकिन यह मिट्टी की प्रजनन क्षमता को बहाल करने में भी मदद करती थी। सिंचाई की मदद से किसान लगभग 800 हेक्टेयर जमीन में खेती करते थे। सिंचाई के सबसे पुराने साक्ष्य 3100 बी सी ई के हैं। *शदूफ* नामक मेसोपोटामियन जल उत्तोलक यन्त्र 1500 बी सी ई के बाद इस्तेमाल किये गए (नोमान एवं क्वोसी, 2017: 18)। इस तकनीक से किसानों को गर्मी के शुष्क मौसम में फसलों के उत्पादन और कृषि के विस्तार में मदद मिली। बाढ़ का पानी घटने के बाद, अक्टूबर से मार्च तक नए बीज बोये जाते थे। सिंचाई को पवित्र काम माना जाता था और प्रमुख सिंचाई परियोजनाएं राज्य द्वारा प्रायोजित थीं। इससे नील घाटी के बाहर कृषि के विस्तार में मदद मिली। सिंचाई कार्य की निगरानी स्थानीय अधिकारियों द्वारा की जाती थी। *नोम्स* (प्रशासनिक इकाइयां) स्थानीय सिंचाई इकाइयों के रूप में विकसित हुईं। स्थानीय मजदूरों को नालों के तलकर्षण, नहरों और गड्ढों की खुदाई, मिट्टी के बांधों का निर्माण, ख़ंदक़ घाटी बनाने और डोलचे से पानी खींचने के लिए नियोजित किया जाता था (ह्यूजेस, 1992: 17)। सरकारी अधिकारी देश में अनाज की आपूर्ति में उतार-चढ़ाव को रोकने और अनाज की आपूर्ति को नियंत्रित करने के उपाय करते थे। राज्य के हस्तक्षेपों के बावजूद, फसल की विफलताओं के समय, बाढ़ और अकाल की समस्याओं ने अक्सर मिस्र की कृषि को जकड़े रखा।

प्राचीन मिस्र में खेती

दक्षिण एशिया की तुलना में गेहूं, जौ, सेम, चना और अन्य रबी फसलों की खेती के लिए मिस्र का पर्यावरण अपेक्षाकृत अधिक अनुकूल था। रोपण से पहले सिंचाई के लिए मिस्र के लोगों को क्षेत्रीय प्राकृतिक घाटियों (basins), उसे काटने, या जरुरत के हिसाब से उसकी दीवारों को उठाने और एक स्थान से दूसरे स्थान तक उसके प्रवाह को दिशा देने का काम करना पड़ता था ताकि ज़्यादातर क्षेत्र जलप्लावित रहे। कभी-कभी प्राकृतिक बेसिन को मिट्टी की नीची दीवारों के साथ विभाजित करने की आवश्यकता होती थी, या अतिप्रवाहित नालों को गहरा किया जाता था।

(स्रोत: एम एच आई-01, खंड 2, इकाई 6: 8)

चित्र 8.4 : नवीन राज्य काल का मिस्री भित्ति चित्र जिसमें एक किसान को एक *शदूफ* के साथ काम करते दर्शाया गया है; आईप्यू मकबरा (जो नील नदी के पश्चिमी तट पर स्थित है)

साभार: रॉजर्स फण्ड, 1930

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/1/16/Garden_Scene%2C_Tomb_of_Ipuy_MET_vs2973.jpg

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

वर्तमान लेबनान के तट पर बाइबलोस में पूर्व-राजवंश काल की वस्तुएं पाई गयी हैं। मिस्र की सभ्यता के व्यापार और वाणिज्य में राज्य की एक महत्वपूर्ण भूमिका थी। प्रथम राजवंश से ही ग्राम स्तर से ऊपर के व्यापारों को राज्य नियंत्रित करता था (कर्टिन, 1984 : 71-74)। मिस्र के समकालीन रिकॉर्ड 2000 बी सी ई से पहले व्यापारियों का उल्लेख एक अलग इकाई के रूप में नहीं करते, यद्यपि ऐसा माना जाता है कि बड़े स्तर का व्यापार शाही अन्नागारों और राज्य अधिकारियों से जुड़ा था। पूर्वी भूमध्यसागर के अन्य हिस्सों के साथ मिस्र का व्यापार आमतौर पर सरकार के नियंत्रण में था, लेकिन विदेशी व्यापारियों की उपस्थिति के सबूत भी मिलते हैं।

इस बात के पुरालेखीय साक्ष्य मिलते हैं कि मिस्र के शासकों ने अपने खोजी दलों को पड़ोसी क्षेत्रों में वस्तुओं और माल को व्यापार या अधिग्रहण से हासिल करने भेजा था। वर्तमान समय के लेबनान और मिस्र का एक समृद्ध व्यापारिक संबंध था। दक्षिण में मिस्र के व्यापार के लिए सरकार ने नील नदी से लेकर लाल सागर और आज के यमन तक अभियान भेजे थे। ये आधिकारिक अभियान 2500 बी सी ई से शुरू हुए और ये मुख्य रूप से विलासिता की वस्तुओं जैसे लोबान, आबनूस, गंधरस (myrrh) और सोने का व्यापार करते थे। राजवंशीय काल के दौरान सीरियाई लकड़ी के आयात के सबूत भी मिलते हैं। लेवांट के बंदरगाह शहर बाइबलोस के साथ मिस्री संपर्क के काफी प्रमाण मिलते हैं। मिस्र के लोग ताबूतों के लिए और नौकाओं और मूर्तियों को बनाने के लिए लकड़ी आयात करते थे, क्योंकि मिस्र में अच्छी गुणवत्ता वाली लकड़ी उपलब्ध नहीं थी। उत्तरी सीरिया के एबला और सिनाई रेगिस्तान के फ़िरोज़ा (turquoise) की खानों में भी नियमित अभियान भेजे जाते थे (कुहर्त, 1995: 145)। मिस्र के समुद्री व्यापार और समुद्र में उनकी बढ़ती गतिविधियों के साक्ष्य जहाज़ों और नौकाओं के चित्रों में प्रलेखित हैं। मेसोपोटामियन और सिंधु सभ्यता की नौकाओं की तरह मिस्र की नौकाओं में चौकोर पालियां थीं और फलक की नावों को बेंत से बांध दिया जाता था, हालांकि कांस्य और तांबे जैसी धातुएं भी जोड़ने में कुछ भूमिका निभाती होंगी।

रिचर्ड एल. स्मिथ ने एक बहुत ही रोचक विचार सामने रखा है। उनके अनुसार प्रारंभिक राजवंशों में राजपरिवारों द्वारा किया जाने वाला विदेशी व्यापार उपहार-विनिमय के तंत्र पर आधारित था। एक साक्ष्य दर्शाता है कि फिरौन ने बेबीलोन के राजा को उपहार के रूप में 26 पाउंड सोने, 6.5 पाउंड चांदी, 18.5 पाउंड कांस्य, कपड़ा, सुगंधित तेल से भरे 1000 से अधिक पत्थर के जार, 163 पत्थर के खाली जार, अंगूठियां, हार, दर्पण, हाथीदांत के बक्से तथा अन्य वस्तुएं भेजीं। बेबीलोन के राजाओं से, मिस्रियों ने घोड़े और रथ, चांदी, कांस्य, लाजवर्द (lapis lazuli) और तेल प्राप्त किया। इस प्रकार, शाही व्यापार अनिवार्य रूप से उपहारों के आदान-प्रदान पर आधारित था (स्मिथ, 2009: 48)। सेद्ल्मेयर का मानना है कि मिस्र आर्थिक रूप से धनाढ्य और सांस्कृतिक रूप से अधिक जटिल होता गया। समृद्धि में वृद्धि हुई, और सामान्य मकबरे काफी बड़े होते गये और दफ़नाने के लिए उत्कृष्ट दफन सामग्रियों का इस्तेमाल होने लगा (जी, 2015: 65)।

8.8 धर्म और मंदिर

देवता को व्यक्ति रूप में पहचाना जाता था, जो अक्सर कुछ विशेषताओं या पदों से जुड़ा होता था और उनके नाम या रूप से उन्हें परिभाषित किया जाता था। यह माना जाता था कि इंसानों की तरह देवताओं का प्रादुर्भाव भी एक आदिम ईश्वर यानि देवी-देवताओं में सबसे पहले अथवा मूल देवता से हुआ था। देवता हमेशा अमर नहीं होता था, और यह माना जाता था कि चंद्र-देव थोथ ने देवताओं के साथ-साथ मनुष्यों के जीवनकाल की भी गणना की थी।

मिस्र के तीन सबसे महत्वपूर्ण देवताओं – रे/रा, ताह और ओसीरिस के नामों की व्युत्पत्ति अभी तक निश्चित नहीं है। रे के मामले में 'साथी' के रूप में नाम की व्याख्या करने के प्रयास

किए गए, चंद्रमा के साथी के रूप में सूर्य की भूमिका के लिए एक भ्रम के संदर्भ के रूप में। दूसरी तरफ, ताह को अक्सर मूर्तिकला और ओसीरिस को 'आंख के आसन' से जोड़ा जाता है। नीथ 'भयानक' है और युद्ध की देवी का प्रतीक है, आइसिस ने अपना नाम 'सिंहासन' से प्राप्त किया, अमुन 'छुपा हुआ' अथवा वायु देवता था, जिसने मिस्र के धर्म में बहुत महत्व प्राप्त किया। हैथोर नाम 'होरस के घर' और थोथ को देवताओं के संदेशवाहक के रूप में तथा अतुम या 'जो पूर्णता है' बुद्धि से जुड़ा हुआ है के रूप में नामित किया जाता है (मोरेन्ज़, 1960: 23-24)।

चित्र 8.5 : प्राचीन मिस्र के देवता रा का चित्रण

साभार: जेफ़दहल, 2007

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/0/0d/Re-Horakhty.svg

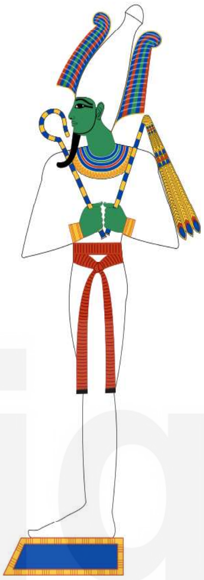

चित्र 8.6 : प्राचीन मिस्र के देवता ओसीरिस का चित्रण

साभार: जेफ़दहल, 2007

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/c/cc/Standing_Osiris_edit1.svg

मिस्र में, राजा द्वारा विभिन्न परोपकारी कृत्यों के माध्यम से देवताओं की सेवा की जाती थी जैसे मंदिर बनाना, प्रतिमाओं का दान करना या उन्हें पुर्नस्थापित करना या उनकी सफाई करवाना। ज़मीन मुख्यतः मंदिर और राज्य के नियंत्रण में थी, और अक्सर इन दोनों के बीच विभाजन का अभाव था। फिरौन अक्सर नए शासन-क्षेत्र स्थापित करते थे, जिसमें अक्सर पूर्ववर्तियों का सफाया कर दिया जाता था। मंदिर की ज़मीन अक्सर फिरौन के नाम से जोती जाती थी। मिसाल के तौर पर, हालांकि देर अल-मदीना (प्राचीन मिस्र का एक गाँव) के कर्मचारी राजा द्वारा नियुक्त किये जाते थे, उनका भुगतान मंदिरों द्वारा किया जाता था (जांसेन, 1995: 182)। मुख्य मंदिरों के आवंटित क्षेत्रों का नियंत्रण राज्य के स्थानीय अधिकारियों के हाथों में था। अनाज की स्थिर आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए मंदिरों में अन्नागार होते थे। मंदिर के अन्नागारों ने पुरोहितों की एक बड़ी संख्या को सहारा दिया जो निर्वाह के लिए मंदिरों या मजारों पर निर्भर थे (टीटर, 2011: 16-18, 36)।

मंदिरों और देव-प्रतिमाओं की देखभाल करना पुरोहितों की ज़िम्मेदारी थी। आम लोग त्योहारों में देवताओं को सम्मानित और महिमामंडित कर उनकी सेवा करते थे। देवताओं और मनुष्यों के बीच का रिश्ता परस्पर निर्भरता का था जहां कृतज्ञता और धर्मनिष्ठा भगवान से आशावादी उम्मीदों के साथ सह-अस्तित्व में थी।

पुरोहित का पद

समकालीन आर्थिक दस्तावेजों के अनुसार, पुरोहित का पद मिस्र के समाज में एक प्रमुख

संस्था थी। पांचवे राजवंश के दौरान, नेफेरिर्करे की अंत्येष्टि उपासना-पंथ में पुरोहित के पद से 250 से 300 पुरोहित जुड़े थे। फायूम और तेयूद्जॉय में अनुबिस जैसे छोटे मंदिर में करीब 50 से 80 पुरोहित कार्यरत थे।

पुरोहित या *Ka* का पद मिस्र के समाज और अर्थव्यवस्था का एक अभिन्न अंग था। प्रारंभ में पुरोहितों के पदों पर ज़्यादातर शाही परिवार के सदस्यों का दबदबा था। हालांकि, जैसे-जैसे प्रशासन जटिल होता गया, बड़ी संख्या में गैर-शाही लोगों को पुरोहितों के पदों पर भर्ती किया गया। पद वंशानुगत थे और अक्सर परिवार के भीतर एक से दूसरे को स्थानांतरित किए जाते थे। पुरोहितों के पद विभिन्न प्रकार के थे जैसे *खेरी बेबेत* या *लेक्टर* (वाचक) पुरोहित, *सेम* पुरोहित, *हेम नेत्चेर* और *इन्मुतेफ़* (Iwnmutef) पुरोहित। *लेक्टर* पुरोहित को पढ़ने की उनकी विशिष्ट क्षमता से पहचाना जाता था और उनका मुख्य कर्तव्य मंदिर और शवाधान के अनुष्ठानों में विशिष्ट धार्मिक ग्रंथों को पढ़ना था। प्राचीन साम्राज्य में, *लेक्टर* शाही परिवार से संबंधित थे, लेकिन मध्य साम्राज्य के काल से कोई भी ज्ञानी व्यक्ति *लेक्टर* पुरोहित बन सकता था। *लेक्टर* प्रशासन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। देवता के पिता का संबंध देवता के प्रतिदिन के चढ़ावों या दिवंगत आत्माओं को दिए जाने वाली भेंट से था। वे ज़्यादातर अमुन, ताह और मिन (प्रजनन क्षमता और शक्ति से जुड़े) पंथ से संबंध रखते थे। नवीन साम्राज्य में, वे मंदिरों में भोजन और अन्य आवश्यकताओं की आपूर्ति करते थे। *सेम* पुरोहित की उपाधि प्रतिष्ठित थी और वह अक्सर अनुबिस और खनम संप्रदाय से संबंधित होता था। अठारहवें राजवंश के मध्य से *सेम* ने मंदिरों की भूमि, पुरोहित और कारीगरों की देखरेख करने वाले पहले पुरोहित के रूप में कार्य किया। *हेम नेत्चेर* के पास बड़ी आर्थिक शक्ति थी, क्योंकि वह प्रतिदिन भेंट की जाने वाली उपयोगी सामग्रियों का निरीक्षक था और अक्सर स्थानीय गवर्नर के रूप में कार्य करता था। मंदिर के प्रांगण के कर्तव्यों की जिम्मेदारी *हेम नेत्चेर* के निचले पदाधिकारियों की थी। *इन्मुतेफ़* अंत्येष्टी के पुरोहित थे जो *सेम* के साथ काम करते थे और शाही और निजी दोनों की अन्त्येष्टी उपासना पद्धति से वास्ता रखते थे। पहला पुरोहित राजा स्वयं को मानता था। मंदिरों या मकबरों की प्रतिमाओं या देवता के चढ़ावों से पुरोहितों का भुगतान वस्तु के रूप में किया जाता था।

अधिकतर पुरोहित दूसरे पेशों से भी जुड़े होते थे जैसे व्यापार या सरकारी कर्मचारी। सांसारिक और धार्मिक पेशों का संयोजन पूरी मिस्री सभ्यता के दौरान देखा जा सकता है। उदाहारण के लिए, छठे राजवंश से संबंधित हरखुफ विदेशियों के पर्यवेक्षक, राजा के मुहर-अधिकारी और एक *लेक्टर* पुरोहित थे। इसी तरह, उन्नीसवें राजवंश से ओनूरिस्मोस नाम के एक पुरोहित को देवता के पिता और ओनूरिसमोस के महापुरोहित के साथ-साथ शाही लेखक और राजा के कुलीन सैनिकों के लेखक की पदवी भी प्राप्त थी। बाइसवें राजवंश से नेबनेत्चेरू कर्णक में अमुन के पुरोहित थे और सारे स्मारकों संबंघी सभी कार्यों के प्रमुख की भूमिका भी निभाते थे।

पुरोहित का चयन किसी विशेष राजवंश में पंथ विशेष की महत्ता पर निर्भर था। बाद के ऐतिहासिक काल के विपरीत, प्राचीन मिस्र में कोई मठवासी संगठन नहीं था और पुरोहित गांवों में रहते थे और एक पारिवारिक जीवन जीते थे। यद्यपि उन्होंने समाज में एक प्रमुख स्थान हासिल कर लिया था, मंदिरों की दीवारों में पुरोहित के प्रतिनिधि चित्र राजाओं की तुलना में अपेक्षाकृत कम सजावटी थे। पुरोहित को ग्रीको-रोमन काल से मंदिर की दीवारों में चित्रित करना शुरू कर दिया गया था और ज़्यादातर उन्हें मकबरे के स्वामियों (जिनका मकबरा था) के लिए मंदिर या अंत्येष्टि संबंधी अनुष्ठानों को निभाते हुए या एक जुलूस के हिस्से के रूप में दिखाया जाता था।

8.9 बस्तियाँ और स्थापत्य

नगरों और बस्तियों के प्रमाण विरले ही मिलते हैं। इनमें से दक्षिणी मिस्र के नगर जैसे

हिराकोंपोलिस, एबिडोस, एलेफान्तिन और इदफु महत्वपूर्ण हैं। बस्तियाँ अधिकतर छोटे प्रांतीय कस्बों की तरह होती थीं। जो एक चौड़ी दीवार से घिरी होती थीं। हर नगर में एक पवित्र स्थान होता था जो चहारदीवारी क्षेत्र के अन्दर होता था। हालाँकि, नगर दीवारों से आरक्षित नहीं होते थे और दीवारें केवल सीमान्त नगरों में ही देखी जा सकती थीं। घर काफी पास-पास निर्मित थे और जनसंख्या घनत्व उच्च था। लीबिया के रेगिस्तान के मरुद्वीपों में महत्वपूर्ण बस्तियाँ थीं जिसमें दाखला, खारगा, बाहरिया और फराफ्रा शामिल हैं। ये बस्तियाँ नील घाटी से जुड़ी थीं। दाखला की खुदाई में दीवार, मिट्टी के बर्तन, भट्टियां, मिट्टी की ईंटों की संरचनाएं और कब्रगाहों के साक्ष्य मिले हैं। मिस्र के पश्चिमी सीमांत क्षेत्र की सुरक्षा के लिए मरुद्वीपों और बस्तियों का नियंत्रण काफी महत्वपूर्ण था। रेगिस्तानों की मानव शक्ति और संसाधनों में मिस्र के प्रशासन के हित निहित थे। यह क्षेत्र डायोराइट, जंबुमणि (amethyst), तांबे और सोने के खनिज संसाधनों में समृद्ध थे। नूबिया एक महत्वपूर्ण बस्ती थी और आबनूस, पैंथर की खालें, हाथीदांत और अच्छे तेल उपलब्ध कराती थी। बुहेन की बस्ती तांबे का स्रोत थी।

मृतकों की सेवा में मिस्र के विश्वास ने, जिसमें उचित अंतिम संस्कार और प्रावधान के लिए दान शामिल हैं, उनके आर्थिक जीवन, प्रशासन और कानून पर काफी प्रभाव डाला। द्वितीय राजवंश के शिल्पकारों ने एबिडोस और हिराकोंपोलिस में मकबरे के निर्माण में पत्थरों का व्यापक उपयोग किया था, प्रथम में चूना, पत्थर और दूसरे के निर्माण में लाल पत्थर का इस्तेमाल किया गया था। पिरामिडों के रूप में महान् शाही मकबरे मिस्री स्थापत्य-कला का सबसे प्रसिद्ध रूप हैं। जोसर के सक्कारा का सीढ़ीदार-पिरामिड पहला पिरामिड था। नेत्जेरिखेत जोसेर को अपने शासनकाल के दौरान, कई वास्तुशिल्पीय मानकों की स्थापना करने के लिए जाना जाता है। उन्होंने निर्माण कार्यों में पत्थर के उपयोग का विस्तार किया और कब्रों को अक्सर पत्थर और लकड़ी के तख्तों से सजाया जाने लगा (मैनुअलियन और स्नाइडर, 2015ः 5-6)।

चित्र 8.7 : सक्कारा में जोसर का सीढ़ीदार-पिरामिड
साभारः चार्ल्सजेशार्प, 2007
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/2/2e/Saqqara_pyramid_ver_2.jpg

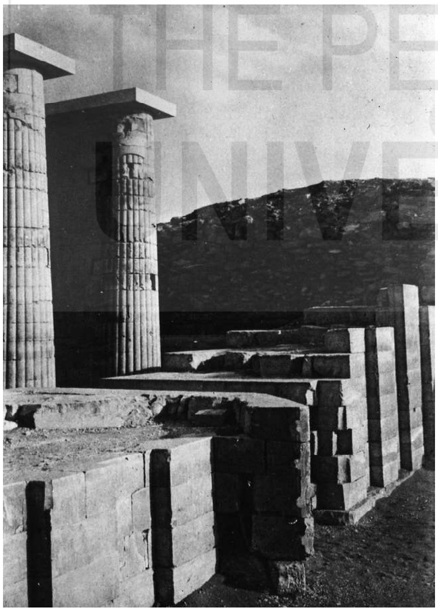

चित्र 8.8 : सक्कारा के पिरामिड का प्रवेश हॉल
साभारः विलियम हेनरी गुडइयर, जोसेफ हॉक्स और जॉन मैक्केनी, 2014
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/8/8f/S10.08_Entry_hall._Step_Pyramid_Complex%2C_Saqqara._image_9497.jpg

महल से संलग्न विशाल भीतरी इलाकों में मकबरों के प्रांगण थे जहाँ पत्थरों पर मिस्र के कुछ सबसे महत्वपूर्ण मृत्यु संबंधी शाही अनुष्ठानों और समारोहों के स्मारक बने थे। चौथे राजवंश

का शानदार पिरामिड अभी भी दुनिया के आश्चर्यों में से एक है। चेओप्स, चेफ्रेन और माइसेरिनस के पिरामिड आज भी स्थापत्यकला के प्रतीक माने जाते हैं। इस काल में कभी-कभी रानियों को भी अपेक्षाकृत छोटे मकबरों में दफ़न किया जाता था। पिरामिड का नक्शा प्रायः पुरानी व्यवस्था की राजनितिक संरचना का चित्र प्रस्तुत करता है। चौथे राजवंश के पिरामिड का नक्शा इस प्रकार का था जैसे कि घर गलियों की ओर खुलते थे। ऐसा तर्क दिया जाता है कि मकबरे की विशालता और राजा के मकबरे से नजदीकी मकबरा और उस मकबरे में दफन किए गए व्यक्ति के राजनीतिक पदानुक्रम को प्रदर्शित करते हैं। इन मकबरों के साथ एक नाव भी संलग्न की गई थी ताकि राजा अपने मरणोत्तर जीवन की यात्रा जारी रख सके।

स्नेफेरू (चौथे राजवंश का संस्थापक राजा) निर्माण कार्यों के विस्तार पर पैसे खर्च करने को तैयार नहीं था। अतः निर्माण कार्यों के लिए सरकारी संरक्षण नियमित और मानकीकृत किया गया। प्रांतों पर अपनी सत्ता कायम करने के लिए, उन्होंने पूरे देश में पिरामिड स्थापित किए। ये पिरामिड हिराकोपोलिस, नाकाड, एबीडोस, जावीयत एल-मेतिन, सेला और अबू रावास के महत्वपूर्ण राजनीतिक और आर्थिक केंद्रों में शाही उपस्थिति के प्रतीक थे। जो लोग शाही कार्यों में लगे थे, जैसे पिरामिड का मुख्य निर्माता और उसका परिवार और नौकर-चाकर और वे लोग जो सीधे राजा की सेवा करते थे, उनकी कब्रें भी शाही क़ब्रों के पास बनायी जाती थीं। शाही मकबरों का विकास और विस्तार शाही अंत्येष्टि मंदिरों की मानकीकृत मान्यताओं के आधार पर किया जाता था, जहाँ राजा मिस्र के परम्परागत दुश्मनों से लड़ता हुआ दर्शाया जाता था। शाही मकबरे व्यक्तिगत, ऐतिहासिक और सैनिक तथ्यों को नहीं दर्शाते। तथापि कुलीनों और गवर्नरों के मकबरे कृषि, बाज़ार, पशुपालन, मदिरा उत्पादन और घरेलू गतिविधियों के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान करते हैं।

थेब्स मिस्र की धार्मिक राजधानी थी। शानदार शाही कब्रगाह शैलकर्तित (rock-cut; चट्टानों को काटकर बनाये गये) मकबरों से बनी होती थी और 500 सालों तक यह शाही कब्रगाह के रूप में इस्तेमाल हुआ। मकबरों में प्राचीन फिरौन और रानियों की ममियां होती थीं। 1922 में, इसी क्षेत्र से तुतेनखामून के मकबरे की खोज की गई। मृत शरीरों का ममीकरण अंत्येष्टि अनुष्ठानों में शामिल था। सूत्रों के मुताबिक, उन्नीसवें राजवंश के राजा सेती प्रथम के शव के संलेपन (embalming) में 70 दिनों का समय लगा। प्राकृतिक रूप से उपलब्ध *नाट्रन* नामक नमक का इस्तेमाल मृत शरीर को शुष्क करने के लिए किया जाता था। फेफड़ों, आंतों, यकृत और पेट जैसे महत्वपूर्ण अंगों को शरीर से हटा कर कैनोपिक जार नामक पात्र में अलग से संग्रहित किया जाता था, जिसे समृद्ध रूप से अलंकृत और भव्य पवित्र स्थान में स्थापित किया जाता था जो चार देवियोंः आइसिस, नेफ्टिस, नीथ और सेल्किस द्वारा संरक्षित होते थे। राजा के शरीर को धोकर राल (resin) तथा लिनन की पोटलियों से भरा जाता था और लिनन की पट्टियों और सुरक्षात्मक ताबीज़ में लपेट दिया जाता था। चौथे राजवंश के बाद पिरामिडों की संख्या और भव्यता तेज़ी से कम होती गयी। इसका सही कारण ज्ञात नहीं है, लेकिन अन्य विविध क्षेत्रों में संसाधनों का इस्तेमाल इसका एक महत्वपूर्ण कारण हो सकता है। पांचवें राजवंश से पिरामिडों की दीवारों पर खुदे 'पिरामिड लेखन' से समकालीन मिस्री समाज और राजनीति की कुछ महत्वपूर्ण जानकारियां हासिल होती हैं।

8.10 मिस्र का पतन

इतिहासकारों और पुरातत्त्वविदों का मानना है कि मिस्र के पतन में कई शताब्दियां लगीं। फसल की असफलताओं, विनाशकारी बाढ़, भूकंप, उपद्रवियों द्वारा फसलों का विनाश, व्यापार मार्गों में व्यवधान और दुश्मन के हमलों, सभी ने मिस्र के पतन में योगदान दिया (कुहर्त, 1995: 386)।

राजा रामेसेस द्वितीय के 67 वर्षों (1279-1213 बी सी ई) के लंबे शासन काल में एक तरफ शांति और समृद्धि रही और दूसरी तरफ धन दौलत की निकासी और आक्रमण। उसने विदेशी व्यापार को मज़बूत किया और भव्य निर्माण परियोजनाएं शुरू कीं। ये परियोजनाएं शाही राजकोष पर बोझ साबित हुईं। इस दौरान समुद्री आक्रमण भी हुए, जिससे देश को काफी नुकसान झेलना पड़ा। इन आक्रमणों ने केंद्रीकृत सरकार को खंडित और कमज़ोर कर दिया। रामेसेस द्वितीय के शासनकाल के बाद कमज़ोर शासकों की एक श्रृंखला ने अर्थव्यवस्था और व्यापार को धीरे-धीरे चौपट कर दिया। इससे पुजारी और स्थानीय गवर्नरों के शक्तिशाली गुटों का जन्म हुआ। उदाहरण के लिए, दक्षिणी मिस्र की सरकार अमन के थेबान पुजारियों और स्थानीय राजवंशों के पुजारियों के नियंत्रण में आ गयी थी। इससे 'पुजारी राजवंश' के युग की उत्पत्ति हुई जो वैवाहिक गठजोड़ों द्वारा और भी मजबूत होता गया।

केंद्रीय सत्ता की कमजोरियों ने मिस्र की अर्थव्यवस्था पर काफ़ी बुरा प्रभाव डाला। व्यापार और वाणिज्य अक्सर बाधित हो जाते थे, राजस्व प्रणाली को संकट का सामना करना पड़ा, और आर्थिक ढांचे विघटित हो गए। थेब्स में, राज्य के कर्मचारियों को संसाधनों की आपूर्ति न होने की वजह से, कई हड़तालें हुईं और कई मकबरे लूटने की शर्मनाक घटनाऐं हुईं (पेम्बर्टन, 2013: 186)। अर्थव्यवस्था और राजनीति के विघटन से मंदिरो के साथ-साथ सामाजिक ढांचे भी चरमराने लगे। अपराधों की संख्या में वृद्धि हुई। सामाजिक व्याकुलता बढ़ रही थी। सीमाओं की रक्षा नहीं की गई, और लूट-मार और हमलों की घटनाएँ बढ़ती गईं। मिस्र की बस्तियों, विशेष रूप से सीमावर्ती इलाकों, को लूटने के लिए अक्सर लीबियावासियों को दोषी ठहराया जाता था। रामेसेस राजवंश के अंत तक, देर-एल-मदीना के गांव के निवासियों को अपने गांव को त्यागने और मेदिनेट हबू (नील नदी के पश्चिमी किनारे पर स्थित) के मंदिरों में शरण लेने के लिए मजबूर होना पड़ा।

आंतरिक अशांति और अस्थिरता के साथ-साथ लगातार विदेशी हमले हुए, जो अंततः मिस्र की सभ्यता के पतन का कारण बना। समुद्री आक्रमणों के बाद पश्चिम से लीबिया के पड़ोसी इलाकों और दक्षिण से नूबिया के हमले हुए। 950-730 बी सी ई तक मिस्र के शासक लीबिया वंश के थे। लिबियाई और न्यूबियन प्रभाव के तहत, मिस्र उस वक्त की राजनीतिक-आर्थिक चुनौतियों को झेलने में सक्षम था। मेसोपोटामिया के समावेशी मॉडल को अपनाया गया। विजेताओं ने विजित क्षेत्रों को नहीं लूटा। इसके बजाए, उन्होंने उन क्षेत्रों पर कुशलतापूर्वक शासन किया और उनकी समृद्धि की दिशा में काम किया। 7वीं शताब्दी में, मिस्र के एक फिरौन के तहत मिस्र फिर से एकजुट होने की कोशिश करने लगा। हालांकि, इन प्रयासों को एक सीमा तक ही सफलता मिली। 671-663 बी सी ई के दौरान असीरियनों के लगातार हुए हमलों ने मिस्र को नष्ट कर दिया। मिस्री सभ्यता को अंतिम झटका 332 बी सी ई में मेसिडोनिया के अलेक्जेंडर के आक्रमण ने दिया, जिसने मिस्र के विनाश का मार्ग प्रशस्त किया।

बोध प्रश्न-2

1) मिस्र के राज्य प्रशासन और समाज पर धर्म के प्रभाव की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

2) मिस्र की आर्थिक संरचना पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

3) मिस्र की सभ्यता के पतन के क्या कारण थे ?

....

....

....

....

....

8.11 सारांश

मेनेस के तहत मिस्र के एकीकरण ने एक महान् सभ्यता को जन्म दिया। धर्म शासन-कला, प्रशासन, राजनीति और समाज का आधार था। राजशाही देवत्व की अवधारणा में सन्निहित थी। राजा या फिरौन दैवीय मंजूरी के दावों के साथ सत्ता के प्रतीक थे। प्रारंभिक राजवंशों के दौरान लगभग सभी कार्यकारी कार्यालयों पर शाही परिवारों का कब्ज़ा था। हालांकि, नौकरशाही के अधिक जटिल होने के साथ-साथ आम लोगों को भी सरकारी कार्यालयों में शामिल किया गया। मिस्र की बस्तियों का आकार और घनत्व समय के साथ बढ़ता गया, बाद की बस्तियों में लीबियाई और न्यूबियन प्रभावों को देखा जा सकता है। मिस्र के लोगों के जीवन में धर्म एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा। कमज़ोर शासकों और निरंतर विदेशी हमलों की वजह से मिस्र की महान् सभ्यता का पतन होने लगा। अलेक्जेंडर का आक्रमण ताबूत में अंतिम कील साबित हुआ। सभ्यता का अंत हो गया लेकिन मिस्री सभ्यता की विरासत आज भी जीवित है।

8.12 शब्दावली

डब्न/डेबेन (***Dbn/Deben***) : तांबे के सिक्के

एम्मर गेहूं : गेहूं की एक किस्म जिसमें बालनुमा अन्न-धारक छोर और प्रत्येक बाली के अन्दर अन्न के दो दाने होते हैं। गेहूं प्राचीन मिस्र के लोगों के लिए एक दैनिक खाद्य था।

मात : न्याय और व्यवस्था की मिस्री अवधारणा

नोमार्च : स्थानीय गवर्नर

नोम्स : प्रशासनिक इकाइयां

पपायरस : प्राचीन मिस्र में पानी के एक पौधे के तने से तैयार

		पदार्थ जिसका इस्तेमाल लेखन के लिए कागज के रूप में किया जाता था ।
फिरौन (Pharaoh)	:	मिस्री राजा का ख़िताब
प्र हड/प्रवी हड (Pr hd/Prwy hd)	:	कोषागार
स्नवत/स्नवती (Snwt/Snwty)	:	अन्नागार

8.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 8.3 देखें

2) उप-भाग 8.5.1 देखें

3) उप-भाग 8.5.2 देखें

4) उप-भाग 8.5.3 देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 8.6, और भाग 8.8 देखें

2) भाग 8.7 देखें

3) मिस्र के पतन के लिए भाग 8.10 देखें

8.14 संदर्भ ग्रंथ

कर्टिन, पी. डी. 1984. *क्रॉस-कल्चरल ट्रेड इन वर्ल्ड हिस्ट्री.* मेलबोर्नः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

फ्रैंकफोर्ट, हेनरी. 1978. *किंगशिप एंड गॉडः अ स्टडी ऑफ़ एन्सियेंट नियर ईस्टर्न रिलिजन ऐज द इंटीग्रेशन ऑफ़ सोसाइटी एंड नेचर.* शिकागोः शिकागो यूनिवर्सिटी प्रेस.

नीर्स, एंड्रिया एम. 2003. 'कोपिंग विथ द आर्मीः द मिलिट्री एंड द स्टेट इन द न्यू किंगडम'. जे. सी. गार्सिया (संपा.). *एंसियेंट इजिशियन एडमिनिस्ट्रेशन.* लाइडेनः ब्रिल.

जी, जे. 2015. 'डिड द ओल्ड किंगडम कोलैप्स? अ न्यू व्यू ऑफ़ द फर्स्ट इन्टर्मीडिएट पीरियड'. टी. एस. पीटर डेर मैनुअलियन (संपा.). *टुवर्ड्स अ न्यू हिस्ट्री फॉर द इजिप्शन ओल्ड किंगडम पर्सपेक्टिव ऑन पिरामिड ऐज.* लाइडेन : ब्रिल. पृ. 65.

ह्यूजेस, जे. डी. 1992. 'सस्टेनेबल एग्रीकल्चर इन एंसियेंट ईजिप्ट'. *एग्रीकल्चरल हिस्ट्री,* स्प्रिंगर. 66 (2): 17-18.

जांसेन, जे. जे. 1975. 'प्रोलेगोमेना टू द स्टडी ऑफ़ ईजिप्ट'स इकोनोमिक हिस्ट्री ड्युरिंग द न्यू किंगडम'. *स्तूदिएन ज़ूर अल्तागिप्तास्खेन कुल्टूर.*

केनेट, डी. 2008. *फैरोओ लाइफ एंड आफ्टर लाइफ ऑफ़ ए गॉड.* न्यूयॉर्कः वॉकर एंड कंपनी.

कुहर्त, अमेलिया. 1995. *द एंसियेंट नियर ईस्ट, c. 3000-300 बी सी ई* (भाग 1). न्यूयॉर्कः रूटलेज.

मैनुअलियन, पी. डी., और टी. श्नाइडर. 2015. *टुवर्ड्स अ न्यू हिस्ट्री फॉर द इजिप्शन ओल्ड किंगडम, पर्सपेक्टिव ऑन पिरामिड ऐज.* लाइडेन : ब्रिल.

मोरेन्ज़, एस. 1960. *इजिप्शन रिलिजन,* (ए. ई. कीप, अनु.). न्यूयॉर्कः कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस.

नोअमन, एम. और डी.ई. कुओसी. 2017. 'हाइड्रोलॉजी ऑफ़ नाइल एंड एंसियेंट एग्रीकल्चर'. एस. ए. मसायोशी सातोह (संपा.). *इरिगेटेड एग्रीकल्चर इन ईजिप्टः पास्ट, प्रेजेंट एंड फ्यूचर.* स्विट्ज़रलैंडः स्प्रिंगर.

पेम्बर्टन, डेलिया. 2013. द *सिविलाइज़ेशन ऑफ़ एंसियेंट ईजिप्ट.* न्यूयॉर्कः रोसेन पब्लिशिंग.

स्मिथ, आर. एल. 2009. *प्रीमाडर्न ट्रेड इन वर्ल्ड हिस्ट्री.* लंदनः रूटलेज.

टीटर, एमिली. 2011. *रिलिजन एंड रिचुअल इन एंसियेंट ईजिप्ट.* न्यूयॉर्कः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

वार्डन, एल. ए. 2014. *पॉटरी एंड इकॉनमी इन द ओल्ड किंगडम.* लाइडेनः ब्रिल.

विल्किन्सन, टी. ए. 1999. *अर्ली डायनेस्टिक ईजिप्ट.* न्यूयॉर्कः रूटलेज.

वोलिंस्की, आरेलीन. 1987. 'इजिप्शियन मास्क्सः द प्रीस्ट एंड हिज रोल', *आर्कीआलाजी,* 40 (1): 22.

पी. डी. एफ.:

https://www.jstor.org/stable/pdf/124743.pdf?refreqid=search% 3A4c533b5ef850847ddaf8a4b0c861c0dd

https://www.jstor.org/stable/pdf/40000484.pdf?refreqid= search%3A32f93b763a1c10b282ab086351828847

8.15 शैक्षिक वीडियो

एन्सिऐन्ट ईजीप्ट हिस्ट्री एंड मिस्ट्रीज़
https://www.youtube.com/watch?v=l6DdNtfBRlU

इन्जीनियरिंग ऑफ ऐन्सिएन्ट ईजिप्ट हाउ पिरामिड्स आर बिल्ट
https://www.youtube.com/watch?v=c9zN5JuubN0

द माइटी ईजिप्शियन सिविलाइज़ेशनः रूल्ड बाय रेमसेस II
https://www.youtube.com/watch?v=6lo7jaH2yGk

द लॉस्ट गॉड्स ऑफ द ईजिप्शियन्स
https://www.youtube.com/watch?v=YWzKAFveXyo

इकाई 9 चीन की शांग सभ्यता*

इकाई की रूपरेखा

9.1 उद्देश्य

9.2 प्रस्तावना

9.3 चीन में कांस्य युगीन सभ्यता के प्रमुख स्थल

9.4 चीन में कांस्य युगीन सभ्यता की प्रमुख विशेषताएँ

9.4.1 कांस्य युगीन वस्तुएँ और कांस्य तकनीकी

9.4.2 दीवारों से घिरी बस्तियाँ

9.4.3 शवाधान

9.4.4 सामाजिक स्तर और वंश परंपरा

9.4.5 राजत्व की प्रकृति

9.4.6 दैवीयकरण और बलिदान

9.4.7 लेखन

9.5 शांग कौन थे?

9.5.1 पुरातात्विक साक्ष्य और लिखित रिकॉर्ड

9.5.2 ज़िया (Xia) का रहस्य

9.6 चीन की कांस्य युगीन दुनियाः अनेक केन्द्र और विनिमय का जाल

9.7 शांग सभ्यता की विरासत

9.8 सारांश

9.9 शब्दावली

9.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.11 सन्दर्भ ग्रंथ

9.12 शैक्षणिक वीडियो

9.1 उद्देश्य

आप इसके पहले की **इकाई 7** में कांस्य युगीन सभ्यता की विशेषताओं और **इकाई 8** में इसके एक प्रमुख उदाहरण मिस्र की सभ्यता के विषय में पढ़ चुके हैं। इस इकाई में हम चीन की कांस्य युगीन सभ्यता के विषय में चर्चा करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- शांग सभ्यता और राज्य, साथ ही तात्कालिक एवं समकालीन चीन में पूर्वजों की संस्कृति का विवरण दे सकेंगे,
- चीन की कांस्य युगीन सभ्यता के उत्खनित प्रमुख स्थलों की सूची बना सकेंगे,
- चीन में कांस्य युगीन सभ्यता की प्रमुख विशेषताओं की पहचान कर पाएंगे,
- उन नए पुरातात्विक साक्ष्यों का विश्लेषण कर सकेंगे जिन्होंने चीनी सभ्यता के उद्भव और विकास के विषय में हमारी अवधारणा को परिवर्तित किया, और
- चीन की सभ्यता में शांग के स्थायी योगदान की सराहना कर सकेंगे।

* डॉ. माधवी थाम्पी, ऑनरेरी फेलो, इंस्टीट्यूट ऑफ चाइनीज़ स्टडीज़, दिल्ली

9.2 प्रस्तावना

दूसरी सहस्त्राब्दि बी सी ई के मध्य से लेकर शताब्दी के अन्त तक चीन में शांग सभ्यता पहली ऐसी सभ्यता थी जिसमें एक प्रमुख सभ्यता की सभी विशेषतायें थीं। जिसमें धातु शोधन प्रक्रिया, शहरी बस्तियाँ, साथ ही ऐतिहासिक इमारतें, स्पष्ट रूप से स्तरीकृत समाज, जिसमें राजा, कुलीन वर्ग, आम नागरिक, एक राजनीतिक धार्मिक राज्य तथा पहली बार चीन में लेखन मौजूद था। यह पहली ऐसी सभ्यता थी जिसके पुरातात्विक साक्ष्य और लिखित दस्तावेज एक दूसरे से मिलते-जुलते थे। अनेकों विशेषताएँ जो सैकड़ों सालों से चीनी सभ्यता के लिए जानी जाती थीं उनका मूल विकास शांग काल में ही हुआ। जिसमें **प्रतीकात्मक (logographic) लिपि**, पितृपूजा, विशालकाय परियोजनाओं में श्रमिकों की बड़े स्तर पर लामबंदी, नौकरशाही की शुरुआत और साठ दिनों पर आधारित परम्परागत कैलेण्डर सम्मिलित हैं।

मानचित्र 9.1: शांग राज्य का विस्तार
साभार: लमास्सू डिज़ाइन, 2009
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/8/80/Shang_dynasty.svg

पिछले सौ वर्षों में, विशेष रूप से पिछले पचास वर्षों में चीन में पुरातात्विक खोजों के प्रभावशाली परिणामों ने चीनी सभ्यता और मुख्य रूप से शांग सभ्यता की अवधारणा को परिवर्तित कर दिया। सम्पूर्ण चीन में प्राचीर युक्त (दीवारों से घिरी हुई) बस्तियाँ और हजारों शवाधान स्थलों की खुदाई इस बात का प्रमाण देती है कि अनेक कांस्य युगीन सभ्यताएं चीन के विस्तृत क्षेत्र में एक साथ अस्तित्व में रहीं और उन्होंने परस्पर एक दूसरे को प्रभावित किया। इन सर्वेक्षणों ने कांसे के इस युग के सबसे बड़े विश्व संग्रह का पता लगाया। साथ ही इससे यह स्पष्ट होता है कि चीन में उस समय में कांसे की ढलाई की प्रचलित तकनीक उस काल के लिए अद्वितीय थी। वास्तव में यह आधुनिक पुरात्वविज्ञान की एक अत्यधिक रोमांचक कहानी है।

9.3 चीन में कांस्य युगीन सभ्यता के प्रमुख स्थल

प्रारम्भिक तृतीय सहस्त्राब्दि बी सी ई में सर्वप्रथम कांसे की वस्तुओं का पता चीन के उत्तर-पश्चिम क्षेत्र से मिलता है। हालांकि, प्रारम्भिक एवं महत्वपूर्ण कांसे की वस्तुओं और कांस्य की ढलाई के साक्ष्य उत्तरी चीन के हेनान प्रांत में **एर्लितोउ (Erlitou)** क्षेत्र में पाये गये थे। यह सर्वप्रथम 1959-1978 में और फिर 1999 में खोजी गई। एर्लितोउ संस्कृति 1900-1500 बी. सी. ई. के बीच फली-फूली। कुटी हुई मिट्टी से बनी हुई दीवारों से घिरी बस्तियाँ, घरों तथा शवाधानों के साक्ष्य इस स्थल से प्राप्त होते हैं। कांसे की वस्तुओं में मुख्य रूप से हथियार और बर्तन साथ ही यहां से कांस्य ढलाई के प्राचीनतम अवशेष मिलते हैं। प्रारम्भ में आनुष्ठानिक कार्यों के लिए कांसे की वस्तुओं का सर्वाधिक प्राचीन संग्रह भी इस क्षेत्र से मिलता हैं। एर्लितोउ संस्कृति को चीन के कांस्य युग के उदय का ऊषा-काल माना जा सकता है।

मानचित्र 9.2: उत्तरी चीन में एर्लितोउ संस्कृति का क्षेत्र (1900-1500 बी सी ई)
साभारः कांगूओले, 2015
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/9/96/Erlitou_map.svg

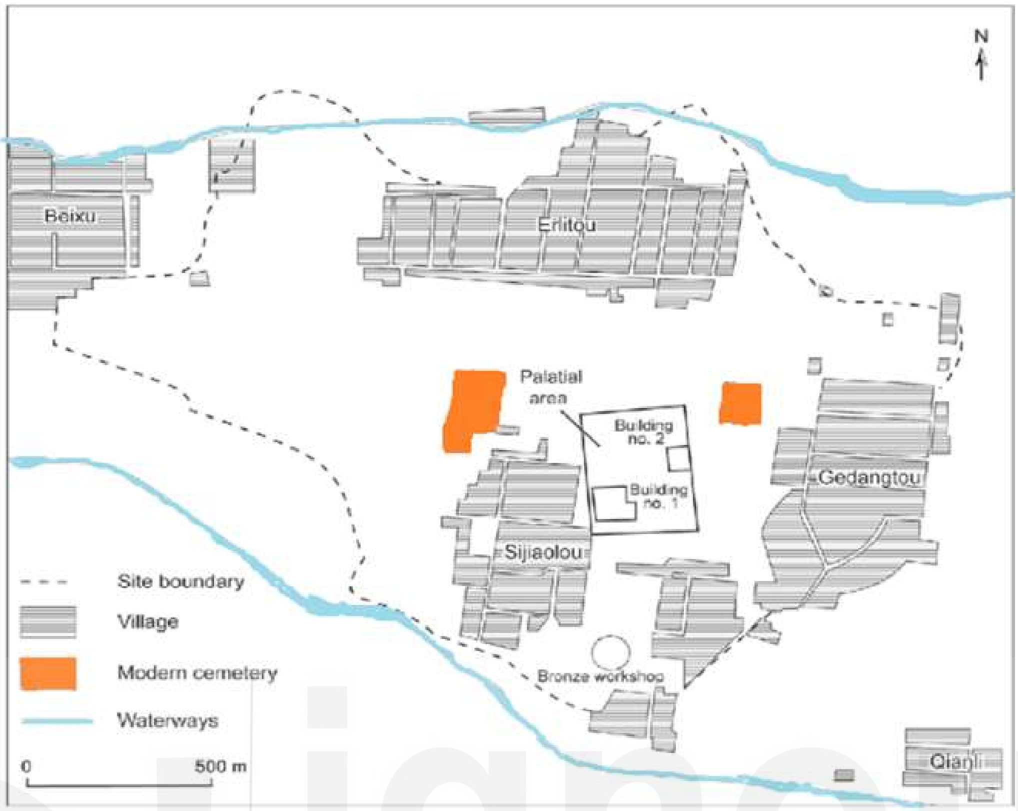

मनचित्र 9.3 : एर्लितोउ स्थल का मानचित्र
गीडिऑन शेलाच एवं यित्जाक जाफे, (2014) 'द अर्लीएस्ट स्टेट्स इन चाइनाः ए लॉंग टर्म ट्रेजेक्टरी एप्रोच', *जर्नल ऑफ आर्किआलजिकल रिसर्च, 22* (4) (चित्र 3) से उद्धृत

एर्लितोउ क्षेत्र से लगभग 85 कि. मी. दूर **एर्लिगांग (Erligang)** संस्कृति (1600-1300 बी सी ई) के अवशेष पाये गये। एर्लिगांग संस्कृति में हमें कहीं अधिक व्यापक और परिष्कृत कांसे ढलाई के कारखाने के साक्ष्य मिलते हैं। कांसे की वस्तुओं के विशाल संग्रह के अलावा यहां ढलाई की कार्यशालाओं के अवशेष भी मिलते हैं। एर्लिगांग सम्भवतः शहरी बस्ती का एक विशाल क्षेत्र है। इसकी पुष्टि यहां से प्राप्त दीवार द्वारा की जाती है जिसका परिधीय क्षेत्र लगभग 7 किलोमीटर था, और जो आधार पर 20 मीटर चौड़ी थी और इसकी ऊँचाई 8 मीटर थी। इन दीवारों, महलों और कांस्य ढलाई की कार्यशालाओं के सबूत एक ऐसे समाज और राजनीतिक संरचना की ओर संकेत करते हैं जो बड़े पैमाने पर श्रमिकों की लामबंदी और नियोजन में सक्षम था।

लेकिन चीन में कांस्य युगीन सभ्यता का सर्वाधिक प्रसिद्ध स्थल **अन्यांग (Anyang)** के निकट है, जो उत्तरी चीन के हेनान राज्य का भी एक भाग है। **'ऑरेकल हड्डियों' (Oracle bones;** ऑरेकल हड्डियों पर विस्तृत जानकारी के लिए देखें **उप-भाग 9.4.6**) पर पाए जाने वाले चीनी लेखन के प्रारम्भिक उदाहरणों के स्रोतों का पता लगाने के प्रयास के रूप में यहां 1928 में खुदाई शुरू हुई थी। अन्यांग के निकट की खुदाई शांग राजवंश (लगभग 1600-1046 बी सी ई) के राजाओं के प्राचीन राजधानी क्षेत्र को दर्शाती हैं, और इस राजवंश के अस्तित्व को भी निश्चित करती है जिसे इसे पहले सिर्फ कुछ बाद के ऐतिहासिक स्रोतों के आधार पर जाना जाता था। यह 30 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैली हुई है जिसमें ऐतिहासिक महल-मन्दिर परिसर, विशाल शवाधान स्थल और कांस्य ढलाई कार्यशालाओं के अवशेष सम्मिलित थे। यह प्रारम्भिक एर्लिगांग संस्कृति से काफी मिलती जुलती है। लेकिन अन्यांग स्थल में मुख्य अन्तर यह है कि यहाँ सर्वाधिक पुराने चीनी लेखन का सबूत मुख्य रूप से हजारों ऑरेकल हड्डियों के साथ-साथ अनेक अनुष्ठान में प्रयोग में की जाने वाली कांस्य वस्तुओं पर भी मिला है। यह लेखन हमें निश्चित रूप से यह पहचानने में मदद करता है कि यह स्थल शांग राजाओं द्वारा शासित था।

इन प्रमुख क्षेत्रों के अतिरिक्त, जो उत्तरी चीन की पीली नदी और उसकी सहायक नदी क्षेत्र में फैला हुआ है, पिछले कुछ दशकों की खुदाई लगातार नये और महत्वपूर्ण क्षेत्रों के अस्तित्व को प्रकट कर रही है। इन स्थलों की प्राचीनता एर्लिताउ, एर्लिगांग और अन्यांग के समकक्ष या अधिक है। ये अन्य स्थल उत्तर और उत्तर पश्चिमी चीन के विभिन्न हिस्सों में स्थित हैं, साथ ही मध्य चीन में दक्षिण तक यांगज़ी नदी क्षेत्र तक स्थित हैं।

9.4 चीन में कांस्य युगीन सभ्यता की प्रमुख विशेषताएँ

पुरातात्विक खुदाई द्वारा बड़ी संख्या में कलात्मक वस्तुएँ तथा बस्तियों का खाका प्राप्त होता है। यह चीन में कांस्य युगीन सभ्यता की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संरचना और प्रणालियों के पुनर्निर्माण में सहायता करती है। यहां पर हम इस सभ्यता के कुछ मुख्य बिन्दुओं पर चर्चा करेंगे।

9.4.1 कांस्य युगीन वस्तुएँ और कांस्य प्रौद्योगिकी

कांस्य वस्तुओं का सबसे विशाल संग्रह चीन में ही पाया जाता है। कभी-कभी विद्वान एवं इतिहासकार चीन में कांस्य युगीन सभ्यता के अन्त की तिथि की पुष्टि करने में असफल हो जाते हैं क्योंकि वहां लोहे का प्रयोग प्रारम्भ होने के बाद भी लगातार धार्मिक अनुष्ठानों और अन्य कार्यों के लिए बड़ी संख्या में कांसे की वस्तुएँ प्रयोग में लायी जा रही थीं।

इस दौरान चीन में कांसे की जो भी वस्तुएँ बन रही थीं उनमें बर्तन और हथियार प्रमुख थे। चीन में 1200 बी सी ई के लगभग घोड़ागाड़ी की शुरुआत के बाद से गाड़ियों के लिए कांसे के पुर्जे भी बनाये जाने लगे। अधिकतर प्राप्त कांसे के बर्तन शराब के प्रयोग से सम्बन्धित थे जिनमें गर्म करने या शराब पकाने के बर्तन और शराब पीने वाले कप थे। कांस्य का दूसरा जो प्रमुख बर्तन मिला वह *डिंग* या तीन पैर वाला भोजन पकाने का बर्तन था। ये सारे बर्तन प्रायः अनुष्ठान और समारोहों में प्रयोग किये जाते थे जिसका अंदाज़ा इनके विशाल आकार से भी लगता है। सबसे बड़े ऐसे बर्तन का भार एक टन से अधिक था!

चीन के बर्तनों की दूसरी प्रमुख विशेषता यह है कि इसके बाहरी आवरण पर पेचीदा नक्काशी बनी होती है। यह उनके उपयोगी कार्यो के अतिरिक्त उन्हें एक सौंदर्यपरक आकर्षण प्रदान करती है। हाल ही में मध्य चीन से खुदाई में प्राप्त प्रमुख वस्तुएँ उत्तरी चीन के कांसे की वस्तुओं से भिन्न हैं, जो एक अलग प्रकार की संस्कृति को प्रस्तुत करती हैं। इसमें यांगज़ी नदी के निचले क्षेत्र से प्राप्त आनुष्ठानिक घंटिया शामिल हैं। यद्यपि सर्वाधिक उल्लेखनीय कांस्य वस्तुएँ दक्षिणी पश्चिमी चीन के सांजिंगडुई (Sanxingdui) में मिलती है। इसमें कांसे का मुखौटा, मानव और जानवरों की आकृतियां, यहां तक कि दुनिया की सबसे पुरानी मनुष्य की आदमकद कांस्य आकृति शामिल हैं।

विभिन्न प्रकार के कांसे की वस्तुओं के अतिरिक्त, वे सभी उत्पादन की एक ही तकनीक, **कांसे की ढलाई, (bronze casting)**, जिसके लिए चीनी मिट्टी के ढाँचे का प्रयोग किया जाता था, अपनाते थे। इस विधि में सर्वप्रथम मिट्टी से वस्तु विशेष का नमूना (model) बनाया जाता था। तत्पश्चात् इसे आग में तपाया जाता था, उसके पश्चात् मूल मॉडल पर एक और परत चढ़ाई जाती थी, फिर इस परत को अनेक भागों में काटकर हटा दिया जाता था। मिट्टी के दोनों मॉडलों के साथ की पतली परत को खुरचा जाता था ताकि जब बाहरी परत को जोड़ा जाता तो दोनों के बीच अन्तर छूट जाए। तत्पश्चात् पिघली हुई धातु (तांबा-टिन-सीसा मिश्रित) को उस रिक्त स्थान में डाला जाता था। इसके ठण्डा होने के बाद बाहरी आवरण को परत दर परत हटा देते थे तब कांसे की वस्तु दिखायी देने लगती थी। फिर इन पर पॉलिश की जाती थी। एक बहुत ही रोचकपूर्ण तथ्य यह था कि बाहरी आवरण पर जो नक्काशी बनाई जाती थी वह कांसे के ठण्डा होने के बाद नहीं, बल्कि यह मिट्टी के सांचे के अन्दर ही बनी होती थी ताकि उसे भी वस्तुओं के साथ ढाला जा सके।

चित्र 9.1 : सांजिगडुई स्थल से प्राप्त सोने के पर्ण वाला कांस्य का मुखौटा
साभारः मोमो, 2011
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/c/c2/Gold_Mask_%28ÄžÑ'b—in%29.jpg

चित्र 9.2 : शांग वंश का कांस्य का मदिरा परिरक्षण पात्र
साभारः इसमून, 2011
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/2/2c/La_Tigresse%2C_bronze_vessel_to_preserve_drink._Hunan%2C_11th_BC._Cernuschi_museum.jpg

चीन में कांसे को ढालने की जो विधि प्रचलन में थी, वह अन्य जगहों में प्रयुक्त हथौड़ा मारकर (hammering) आकृति बनाने की विधि, जैसा कि प्राचीन एथेन्स में था, से कहीं अधिक जटिल और परिष्कृत थी। पुरातत्ववेत्ता और इतिहासकार रॉबर्ट बेगले के अनुसार यह विधि धातु अयस्क की बहुलता और श्रमिकों की उपस्थिति को दर्शाती है (बेगले 1999: 141)। इस विधि से बड़े स्तर पर कुशल श्रम विभाजन तथा कांस्य का उत्पादन किया जा सकता था। चूंकि ताँबे का अयस्क मध्य चीन से निकाला जाता था, अतः परिवहन के लिए इसे सुदूर उत्तरी चीन ले जाने के लिए क्षेत्र के कई जलमार्गों का प्रयोग किया जाता था। यह तथ्य तथा यह तथ्य भी कि चीन की सभी कांस्य उत्पादक सभ्यतायें कांस्य ढलाई की एक समान तकनीक ही अपनाते थे, यह इस बात का सबूत है कि उनमें इतने पहले भी आपस में संपर्क था।

9.4.2 दीवारों से घिरी बस्तियाँ

नई पुरातात्विक खोजों ने उत्तर नवपाषाणकाल की पचास से भी अधिक प्राचीरयुक्त बस्तियों का पता लगाया है जो चीन के व्यापक क्षेत्र में फैली हुई थीं। एर्लितोउ संस्कृति के काल में, ये प्राचीरयुक्त बस्तियाँ मुख्य रूप से उत्तरी एवम् उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र तक सीमित थीं। सबसे बड़ी बस्ती लगभग 100,000 वर्गमीटर में फैली हुई थी और उसमें सम्भवतः 600 मकान मौजूद थे। उत्तर एर्लिगांग संस्कृति के समय तक आते-आते, इन बस्तियों में महल, मन्दिर, विशाल कब्रिस्तान, गोदाम, अनाज घर और साथ ही कार्यशालाएँ भी मौजूद थीं।

इन बस्तियों की एक विशेषता यह है कि दीवारों और मुख्य इमारतों की नींव कुटी हुई मिट्टी से बनी थी। इसके लिए सर्वप्रथम बांस का एक ढाँचा बनाया जाता था जिसमें गीली मिट्टी को परतों में डाला जाता था। जब गीली मिट्टी की इस परत को पीट-पीट कर कठोर कर देते थे तो इस पर दूसरी परत डालने से पहले इसे सूखने के लिए छोड़ दिया जाता था। यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती थी जब तक कि दीवार अपेक्षित ऊँचाई तक न पहुँच जाए। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप दीवारें और संरचना अत्यधिक मजबूत और टिकाऊ बनाती थीं। आश्चर्य की बात तो यह है कि इसी प्रक्रिया का प्रयोग कई सौ साल बाद चीन की महान् विशालकाय दीवार (Great Wall of China) को बनाने के लिए भी किया गया था।

इन विशाल प्राचीरयुक्त बस्तियों का अस्तित्व, मुख्यतः एर्लिगांग काल से, उस समय के राजनीतिक और सामाजिक संगठन की ओर संकेत है जिनके तहत् निर्माण में भारी संख्या में उनके द्वारा श्रमिकों की **लामबंदी (mobilization)** की जाती थी। यह तत्कालीन समुदायों अथवा नव उदित राज्यों की शत्रुओं के आक्रमण से बचाने के लिए स्वयं को सुरक्षा प्रदान करने की आवश्यकता को दर्शाता है।

9.4.3 शवाधान

चीन की कांस्य युगीन सभ्यता के प्रमुख साक्ष्य हज़ारों शवाधान स्थलों से मिलते हैं। उस समय के चीन के निवासी न सिर्फ मृतक को दफनाते थे बल्कि उनके साथ उनकी जरूरत की कुछ वस्तुएं भी कब्र में उनके साथ रख देते थे। वे मानते थे कि मरने के बाद भी मृतक को इन वस्तुओं की आवश्यकता पड़ेगी। मृतक व्यक्ति जितना अधिक धनी अथवा प्रतिष्ठित था, उसकी कब्र से उतनी ही अधिक वस्तुएँ प्राप्त हुईं। इससे हमें उस समय के लोगों की भौतिक संस्कृति, उनके सामाजिक संगठन, राजनीतिक संरचना और यहां तक कि उनकी आस्था और धार्मिक विश्वासों के बारे में भी जानकारी मिलती है।

नदी के पार, अन्यांग के पुरातात्विक स्थल के महल परिसर से एक शाही कब्रिस्तान के अवशेष मिलते हैं। यहाँ शांग राजाओं के आठ मकबरे तथा एक अपूर्ण मकबरा पाया गया है। ये जटिल संरचना के साथ, **गहरे शाफ्ट शवाधान गड्ढे** थे, जिसके लिए अत्यधिक संसाधन और कुशल कारीगरों की आवश्यकता पड़ी होगी, यह कब्रें मिस्र के राजाओं (फिरौन; मिस्र के

राजनीतिक तथा धार्मिक नेता की उपाधि, जिसे आपने **इकाई 8** में पढ़ा होगा) की कब्रों से बहुत अलग नहीं थीं। यद्यपि कई सौ सालों में, थोड़ा बहुत छोड़कर, सारी कब्रें लुटेरों द्वारा लूट ली गई थीं फिर भी अन्यांग की एक शाही कब्र इन डाकूओं से अछूता रह गई। यह कब्र लेडी हाओ (Lady Hao) की थी जो शांग राजा वू डिंग (Wu Ding) (1250-1192 बी सी ई) की पत्नी थी। यह कब्र हालांकि शांग राजाओं की कब्रों से छोटी थी फिर भी आधुनिक चीनी पुरातत्व की आश्चर्यजनक खोज है। कांसे की अनेक तरह की वस्तुओं के अलावा उनकी कब्र से बहुत सी वस्तुएँ प्राप्त हुईं जिनमें हरे रंग के कीमती पत्थरों (jade), हड्डियों, हाथी दांतों से बनी वस्तुएँ, मिट्टी के बर्तन तथा पत्थर शामिल थे। इसके अतिरिक्त हजारों कौड़ी शैल (cowry shells) भी मिले। इन वस्तुओं में कुछ लेडी हाओ द्वारा अपने जीवन काल में एकत्रित किये गये थे और कुछ वह अपने दैनिक जीवन में प्रयोग करती थीं जबकि कुछ अन्य सांकेतिक वस्तुएँ उनकी मृत्यु के बाद उनका साथ देने के लिए रखी गयी थीं। उनकी कब्र में 6 कुत्ते और 16 मनुष्यों के कंकाल भी पाये गये। कांसे की कलात्मक शिल्पकृतियों पर उत्कीर्ण अभिलेखों द्वारा पुरातत्ववेत्ताओं ने आसानी से इस बात का पता लगा लिया कि ये कब्र लेडी हाओ से सम्बन्ध रखती थी। दुर्भाग्यपूर्ण, लेडी हाओ न तो कोई सामान्य महिला थी और न ही केवल शाही सहचारी थी। यहां इस बात का पर्याप्त साक्ष्य मिलता है कि वह एक सैन्य जनरल थी जो युद्धों में फौज की अगुआई किया करती थी।

चित्र 9.3 : लेडी फू हाओ की कब्र, यिंगजू, हेनान, चीन
साभार : क्रिस गीफोर्ड, 2007
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/f/f2/Tomb_Fu_Hao_YinXu.jpg

इन शाही कब्रों के अतिरिक्त, कम से कम तीन हजार से भी अधिक शवाधान स्थल शांग शासनकाल के समय के पाये गये हैं, यद्यपि उनमें से सिर्फ कुछ की ही खुदाई की गयी। कब्रों में पायी जाने वाली विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ और उनकी मात्रा विभिन्न सामाजिक स्तरों की विद्यमानता को दर्शाती है। इन कब्रों से हमें इस बात का पता लगता है कि उस समय के लोगों का अपने पूर्वजों के प्रति लगाव और सम्मान था। उनका विश्वास था कि मृतक को रहने के लिए उन सभी वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है जिसका प्रयोग वह अपने जीवन काल में करते थे। राजाओं और कुलीन वर्गों के लिए इसका अर्थ था कि लोगों की मृत्यु के

बाद उनका साथ देने के लिए अन्य मनुष्यों की बलि देकर उन्हें उनके साथ दफन कर दिया जाता था। ये उनकी पत्नियां, घनिष्ठ अनुचर भी हो सकते थे; वे दास या कैदी भी हो सकते थे जैसा कि कब्रों से कई ऐसे कंकाल पाये गये हैं जिनमें से किसी के सिर कटे थे, अथवा किसी का अंग-भंग किया गया था। शांग के शवाधान स्थलों से जो वस्तुएँ मिलीं उनमें से कुछ पर लेखन भी किया हुआ था। ऐतिहासिक तौर से ये कब्रें चीन की कांस्य युगीन सभ्यता की जानकारी का प्रमुख स्रोत हैं।

बोध प्रश्न-1

1) चीन के प्रमुख कांस्य युगीन स्थलों की सूची बनाओ साथ ही यह भी बताओ कि यह किस अवधि में विकसित हुई?

....

....

....

....

....

2) शांग सभ्यता में कांस्य की वस्तुओं को बनाने के लिए किस तकनीक का प्रयोग किया जाता था?

....

....

....

....

....

3) शांग काल के शवाधानों की प्रमुख विशेषताएँ बताइये।

....

....

....

....

....

9.4.4 सामाजिक स्तर और वंश परम्परा

जैसा कि उपर्युक्त शवाधान स्थलों पर चर्चा से हमें स्पष्ट होता है कि शांग समाज अत्यधिक स्तरीकृत था। महलों व अन्य निवास स्थलों की भिन्नता इस बात का सबूत देती है कि वहां पर स्पष्टतः वर्ग विभाजन था। वहां एक अभिजात्य वर्ग था जिनमें शाही परिवार और कुछ कुलीन वर्ग थे। उनमें से कुछ कुलीन परिवार शांग की राजधानी में रहते थे, जबकि अन्य, दूसरी छोटी-छोटी बस्तियों में फैले हुए थे। इस समाज का अपना अलग व्यवसायिक समूह था जिसमें कांसे की ढलाई करने वाले, कुम्हार, कसाई और गड़ेरिये इत्यादि थे। वहां एक अन्य वर्ग सामान्य जन का भी था जिन्हें कुछ अभिलेखों में 'असंख्य' (the multitude) कहकर

संबोधित किया गया है। विद्वानों में इस विषय पर बहुत अधिक चर्चा हुई लेकिन सामान्य व्यक्ति का दर्जा (status) क्या था इस पर अधिक सहमति नहीं बन पायी – क्या वे गुलाम थे या एक तरीके के कृषि दास थे या सिर्फ किसान, यह उन अभिलेखों से स्पष्ट नहीं होता। स्पष्टतः वे शांग राजाओं की विशाल दीवारों, भवनों तथा कब्रों को बनाने के लिए ज़रूरी अधिक संख्या में श्रमिकों की आवश्यकता को पूरा करते थे, उनमें सम्भवतः कुछ अन्य जगहों से लाए गए कैदी भी शामिल थे।

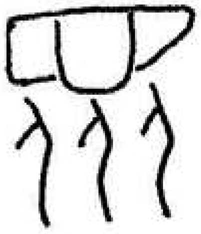

चित्र 9.4 : 'बहुसंख्यक' शब्द का द्योतक चीनी भाषा का चिन्हन

स्रोत : http://www.iub.edu/~g380/3.8-Society-2010.pdf

ऑरेकल बोन्स पर पाये जाने वाले ऊपर दिए गए चिह्न या चीनी लेखन से the multitude को पहचान दी जाती थी (**चित्र 9.4**)। विद्वानों द्वारा इस चिह्न को एक किसान के साथ उसके निरीक्षक अथवा केवल खेत में काम करने के रूप में पढ़ा गया है। आधुनिक चीनी भाषा में *ली-मिन* शब्द को 'आम जनता' और 'मल्टीट्यूड' (बहुसंख्यक) के लिए इंगित किया जाता है।

स्रोत : http://www.iub.edu/~g380/3.8society-2010.pdf. (इंडियाना यूनीवर्सिटी की कक्षाओं में पढ़ने के लिए ऑनलाइन सामग्री) तथा **व्हेन द वर्ल्ड वाज ब्लैकः द अनटोल्ड स्टोरी ऑफ द वर्ल्डस फर्स्ट सिविलाइजेशन, भाग-2, एन्सिएन्ट सिविलाइजेशन्स (*साइंस ऑफ सेल्फ* का भाग-2) (अटलांटाः सुप्रीम डिजाइन पब्लिशिंग, 2013)**

जो भी लिखित या पुरातात्विक साक्ष्य मिले हैं, उनसे यह पता लगता है कि वंश अथवा वंशीय परम्परा का बड़ा महत्व था। यह वंश परम्परा न सिर्फ कुलीन वर्गों के लिए आवश्यक थी बल्कि साथ ही कलात्मक और व्यवसायिक समूहों के लिए भी महत्व रखती थी। यहां पर गोत्रीय संबंधों को जोड़ने के लिए पूर्वजों की पूजा का अथवा उनके प्रति श्रद्धा का प्रचलन था। इस प्रकार पूर्वज मृत्यु के बाद भी अपने गोत्र और वंश पर प्रभाव रखते थे। शांग समाज कुछ अर्थों में वंशों के विभिन्न समूहों का एक संघ माना जा सकता है।

9.4.5 राजत्व की प्रकृति

शांग राजा पितृसत्तात्मक शासक थे। इसका अर्थ था राज्य को एक बड़ा परिवार या जुड़े हुए वंशों का समूह समझा जाता था जिसका मुखिया राजा होता था और वह प्रभुत्वशाली अथवा राजकीय वंश का होता था। उत्तराधिकार वंशानुगत था, यद्यपि यह आवश्यक नहीं था कि राजा अपने बड़े पुत्र को ही नियुक्त करे। राजा अपनी प्रजा पर पूर्ण अधिकार रखता था, यहां तक कि उनके जन्म और मृत्यु पर अधिकार की शक्ति भी उनके पास होती थी।

शांग राजा चीन के केन्द्रीय (Core) भाग पर शासन करते थे जो अधिक बड़ा नहीं था, इसमें उत्तरी चीन के कुछ भाग शामिल थे। इस मुख्य भाग के चारों ओर जो छोटे-छोटे राज्य या रिसायतें थीं वह शांग राजा के वंश या राजा के मित्रों द्वारा शासित की जाती थीं। शांग राजा इन क्षेत्रों का प्रायः नियमित विचरण किया करते थे। इसके अतिरिक्त इसके आगे कुछ और क्षेत्र भी थे जो उपद्रवियों/शत्रुओं द्वारा नियंत्रित किये जाते थे जिनके विरूद्ध शांग राजाओं के प्रायः युद्ध भी होते थे। अधिक संख्या में कब्रों में विकलांग या अस्थि भंग लोगों के जो कंकाल मिले वह शायद इन्हीं युद्धों के बंदियों के थे। शांग राजा स्थायी सेना नहीं रखते थे,

बल्कि रिश्तेदारों, छोटे कुलीनों और सहयोगियों पर निर्भर रहते थे जो आवश्यकता पड़ने पर युद्ध के समय सैनिकों की आपूर्ति करते थे।

इस अवधि के अभिलेख यह दर्शाते हैं कि शांग राजा राज्य शासन के अनेक पहलूओं जैसे युद्ध, खेती की सफलता, शहरों का निर्माण और अन्य ऐसी कई बातों को महत्व देते थे। लेकिन शांग काल में राजत्व की अद्वितीय प्रकृति यह थी कि राजा धार्मिक और राजनीतिक दोनों का प्रमुख होता था। शांग राज्य को एक प्रकार का धर्मराज्य (theocracy) समझा जा सकता है। क्योंकि राजा अपने राजशाही वंश का सर्वोच्च होता था, इसलिए सिर्फ राजा ही अपने पूर्वजों और ईश्वर से सीधे बात कर सकता था, जिसमें सर्वोच्च देवता जो **डी (Di)** कहलाता था, वो भी शामिल था। यह प्रक्रिया जिसे दैवीयकरण (divination) कहते हैं कैसे सम्पन्न होती थी इसका अध्ययन हम अगले भाग में करेंगे। उत्तर शांग काल के दौरान राजा अन्य दैवीय माध्यमों का उपयोग नहीं करते थे बल्कि स्वयं आत्माओं के साथ संवाद किया करते थे। यह विश्वास कि शांग राजा देवताओं और आत्माओं की दुनिया और समाज के मध्य संचार का एकमात्र माध्यम था इस विश्वास से शांग राजाओं के अपनी प्रजा पर अधिकार को काफी बल मिला होगा।

9.4.6 दैवीयकरण और बलिदान

आत्माओं और ईश्वर के एक बहुत बड़े समूह पर शांग लोग विश्वास रखते थे। इनमें से जो सर्वाधिक प्रमुख था उसे डी (Di) या शांग डी (Shang Di) के नाम से जाना जाता था। उनका प्रकृति के अनेक देवताओं में विश्वास था जिनमें वर्षा, तूफान, हवा, सूरज, चाँद आदि सम्मिलित थे। शांग अपने पूर्वजों की आत्माओं की भी पूजा करते थे। उनका मत था कि जो पूर्वज जितने अधिक पहले के होंगे वह उतने ही अधिक शक्तिशाली होंगे। राजाओं का अपने पूर्वजों की आत्माओं और ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए धार्मिक और सांस्कृतिक सभाओं का आयोजन और उनका प्रचार एवं प्रसार करना प्रमुख कार्य था। पुरातात्विक उत्खननों में विशाल महल-मन्दिर परिसर मिले हैं जहां राजा द्वारा इन अनुष्ठानों का आयोजन किया जाता होगा।

राजा न सिर्फ ईश्वर और आत्माओं की पूजा किया करते थे, बल्कि वह अपने शासन से सम्बन्धित अन्य विषयों जैसे अन्य राज्यों से सम्बन्ध, कृषि फसल की दशा, बच्चों की पैदाइश, बीमारियों, प्राकृतिक आपदाओं व अन्य विषयों पर ईश्वर और आत्माओं से प्रायः संवाद भी किया करते थे। दैवीयकरण की यह प्रक्रिया 'ऑरेकल बोन्स' द्वारा सम्पन्न की जाती थी। सर्वप्रथम राजाओं के विषयों और प्रश्नों को संक्षिप्त रूप में इस पर लिख दिया जाता था। ये प्रायः बैलो के कंधे की समतल हड्डियाँ या फिर कछुएँ के अन्दर के कवच (shells) होते थे। भविष्यवेत्ता (diviner; बाद में स्वयं शांग राजा) इन हड्डियों को तब तक गर्म करता था जब तक कि ये चटक (दरार) न जायें। हड्डियों के चटकने के तरीके के आधार पर पूछे गये प्रश्नों के उत्तर की व्याख्या या भविष्यवाणी की जाती थी। प्रश्नों/मामलों से सम्बन्धित वास्तविक परिणाम या उत्तर जो भी समझा जाता था उसको भी इन हड्डियों पर लिख दिया जाता था।

ऑरेकल हड्डियों पर मिली लिखावट का पता सर्वप्रथम 1899 में एक प्राचीन सभ्यता से मिला। उस समय से लेकर अब तक 2 लाख से भी अधिक ऑरेकल हड्डियों के टुकड़े पाये गये हैं। इससे इतिहासकार और पुरातत्ववेत्ताओं को शांग दुनिया की एक बड़ी तस्वीर दिखाई दी जिसका उस समय तक कोई मुख्य साक्ष्य नहीं मिला था। राजाओं और सम्मानित व्यक्तियों के नामों की जानकारी इन हड्डियों से मिली और बाद के ऐतिहासिक तथ्यों से उनकी पुष्टि भी हुई। यद्यपि इन हड्डियों पर लिखावट पूर्णरूप से राजाओं और उनके कार्यों से सम्बन्धित थी, फिर भी वे तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक क्रिया-कलापों के विभिन्न पहलुओं पर भी काफी प्रकाश डालती है।

चित्र 9.5: शांग-वंश की एक ऑरेकल हड्डी
साभार: हेर क्लूगबेज़र, 2004
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/c/c9/Orakelknochen.JPG

दैवीयकरण के अतिरिक्त, अपने पूर्वजों और ईश्वरों को प्रसन्न करने के लिए एक प्रमुख आनुष्ठानिक क्रिया बलिदान थी। चूंकि ऐसा माना जाता था कि इन आत्माओं के प्रसन्न होने से संसार में रहने वाले लोगों के कल्याण पर इसका प्रत्यक्ष असर पड़ता था, इसलिए ऐसा विश्वास था कि उन्हें खुश करने के लिए विस्तृत अनुष्ठान किया जाना ज़रूरी था। इसमें मानव और जानवर दोनों का बलिदान किया जा सकता था। इस इकाई में पहले वर्णित शवाधान स्थल शांग लोगों के कर्तव्य और बलिदान संबंधी धार्मिक विश्वासों के महत्व के विषय में पर्याप्त साक्ष्य प्रदान करते हैं।

9.4.7 लेखन

ऑरेकल हड्डियों की यह महत्वपूर्ण विशेषता है कि पूर्व में चीनी लेखन के जो प्राचीनतम साक्ष्य हमारे पास हैं, इसी पर पाये गये हैं। इस काल में लेखन की खोज के साथ, शांग काल को चीन का वह काल माना जा सकता है जिसमें सभ्यता के सभी लक्षण मौजूद थे।

ऑरेकल हड्डियां और कांस्य की वस्तुओं पर पाये गये लिखित प्रतीक बाद में आगे चलकर चीनी लिपि के अग्रदूत बन गए। चीनी लिखावट प्रतीकात्मक है। एक अकेला प्रतीक, एक विचार या चित्र का प्रतिनिधित्व करता है और स्वयं इसी में निहित इसका अर्थ होता है। उदाहरण के लिए, चीनी शब्दों में बच्चा (child) एक पृथक (single) वर्ण (character) है जैसे 子 और आदमी को चीनी भाषा में 人 इस प्रकार लिखते हैं। यह लिपि ध्वनि विज्ञान पर आधारित लिपियों जैसे अंग्रेजी या हिन्दी से काफी भिन्न है, जहां लिखित प्रतीक ध्वनि को दर्शाते हैं और स्वयं में कोई अर्थ नहीं प्रकट करते। प्राप्त शांग लेखन पूरी तरह से प्रतीकात्मक था। यद्यपि वह आधुनिक चीनी लिपि से थोड़ा अलग है, लेकिन चीनी विद्वानों द्वारा इसे पढ़ा और लिखा जा सकता है।

चित्र 9.6 : राजा वू डिंग के शासन काल की ऑक्स स्केपुला ऑरेकल हड्डी पर उत्कीर्ण लिपि, उत्तर शांग वंश
साभारः बेबलस्टोन, 2011
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/8/8b/Shang_dynasty_inscribed_scapula.jpg

बोध प्रश्न-2

1) आपको अपने अध्ययन काल के दौरान चीन के राजा की स्थिति में क्या कुछ विशिष्ट लगा?

....

....

....

....

....

2) 'मल्टीट्यूड्स' (बहुसंख्यक) कौन थे?

....

....

....

....

....

3) शांग चीन में बलिदान को क्यों आवश्यक समझा जाता था?

....

....

....

....

....

4) चीनी भाषा को लिखने के लिए प्रयुक्त की जाने वाली लिपि की दो प्रमुख विशेषताएँ बताइये?

....

....

....

....

....

9.5 शांग कौन थे?

चीन की कांस्य युगीन सभ्यता की प्रकृति के संबंध में हमारी अवधारणा पूर्ण रूप से बाद के कालों में प्राप्त लिखित रिकॉर्ड्स पर आधारित थी। परन्तु नवीन आधुनिक पुरातात्विक प्रमाणों ने इस बुनियादी काल के संबंध में हमारी समझ को बढ़ाने में विशिष्ट योगदान दिया।

9.5.1 पुरातात्विक साक्ष्य और लिखित रिकार्ड्स

चीन में शांग राजवंश के अस्तित्व के सर्वाधिक प्रारम्भिक सन्दर्भ पहली सहस्त्राब्दी बी सी ई के अन्त में लिखित ग्रन्थों में मिलते हैं जो कि शांग शासन के कई सौ से हज़ार वर्ष बाद लिखे गये थे। इसमें शांग के विषय में जो जानकारी थी वह काफी संक्षिप्त थी। इसके अतिरिक्त और कोई भौतिक साक्ष्य इनके अस्तित्व के बारे में जानकारी नहीं देते थे। एक सौ वर्ष पहले ऑरेकल हड्डियों पर लिखित अभिलेखों की खोज के साथ और बाद में कई स्थानों पर और विशेष रूप से अन्यांग क्षेत्रों की विशेष खुदाई के साथ यह सब परिवर्तित होना शुरू हुआ।

जिन राजाओं के नाम ऑरेकल हड्डियों पर मिले वह ऐतिहासिक दस्तावेजों में भी मिलते थे। लेडी हाओ की कब्र पहली ऐसी कब्र थी जो ऐतिहासिक गाथाओं में शामिल व्यक्तियों से संबंधित थी। चीन की सभ्यता का मिथक जो काफी हद तक धुंधला था अब स्पष्ट होने लगा था। अब जबकि चीन में पुरातात्विक खोजों और खुदाई काफी रफ्तार से चल रही है तब हम यह आशा कर सकते हैं कि यह तस्वीर भविष्य में और स्पष्ट हो जाएगी।

निश्चय ही लिखित ऐतिहासिक विवरणों और पुरातात्विक उत्खननों से प्राप्त साक्ष्यों के मध्य सम्बन्ध ने शांग सभ्यता के बारे में हमारी जानकारी को और अधिक विश्वसनीय बना दिया है। साथ ही, कुछ विद्वान यह मानते हैं कि कैसे ऐतिहासिक कथाएँ शांग सभ्यता की अवधारणा को सीमित कर सकती हैं। प्रायः इतिहासकार और पुरातत्वेत्ता अपनी आकांक्षा की पूर्ति के लिए पुरातात्विक साक्ष्यों को लिखित विवरणों से मिलान करके तोड़-मरोड़ देते हैं या कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों को अनदेखा कर देते हैं। इससे शांग सभ्यता और उनके पूर्ववर्ती के संबंध में जो छवि उभर रही है उसके प्रमुख आयाम नज़रअंदाज़ हो सकते हैं, छूट सकते हैं।

9.5.2 ज़िया (Xia) का रहस्य

ऐतिहासिक कथाओं में प्रतिनिधित्व और पुरातात्विक साक्ष्यों के मध्य विरोधाभास को ज़िया राजवंश संबंधित बहस में उदाहरण के तौर पर देखा जा सकता है। चीन की ऐतिहासिक परम्परा के अनुसार चीन का पहला राजवंश ज़िया का था न कि शांग का। परम्परागत् कथाओं के अनुसार ज़िया का अन्तिम शासक, शांग के पहले शासक द्वारा हराया गया था। इसके परिणामस्वरूप चीन के कई पुरातत्वविद् ज़िया को एर्लितोउ संस्कृति के रूप में देखते हैं जिसका अध्ययन हम इस इकाई के प्रारंभ में कर चुके हैं। यद्यपि इतिहासकार राबर्ट थॉर्प संकेत करते हैं कि 'परम्परागत इतिहास की अपेक्षाओं और एर्लितोउ संस्कृति के समय-स्थान के मध्य मिलान से केवल सुखद अनुभव ही मिलता है परन्तु इस बात को परिपुष्ट करने के साक्ष्यों की कमी रह गयी कि क्या ज़िया राज्य, या लोग, या संस्कृति का कभी कोई अस्तित्व था भी या नहीं' (थॉर्प, 2005: 61)। यह आगे आने वाला समय ही बताएगा कि आगे होने वाली पुरातात्विक खुदाई चीन की कांस्य युगीन सभ्यता में ज़िया को प्राचीनतम सभ्यता के रूप में स्थान देती है या नहीं।

9.6 चीन की कांस्य युगीन दुनिया: अनेक केन्द्र और विनिमय का जाल

पहले चीन की सभ्यता का मूल केन्द्र उत्तरी चीन के वेई (Wei) नदी घाटी क्षेत्र में समझा जाता था और यह माना जाता था वहां से यह एक ही स्रोत पीली नदी का अनुकरण करते हुए पहले पूरब की ओर और बाद में धीरे-धीरे दक्षिण दिशा की ओर बढ़ने लगा।

पिछले दशक की पुरातात्विक खोजों ने इस अवधारणा को उलट दिया है। 1970 के दशक से कार्बन डेटिंग के प्रयोग से यह ज्ञात हुआ कि चीन के विभिन्न छोटे-छोटे भागों में, मुख्यतः चीन के उत्तरी और उत्तर और मध्य-पश्चिमी क्षेत्रों में, उत्तर नवपाषाण और कांस्य युगीन सभ्यतायें एक साथ विकसित हो रही थीं। उदाहरण के लिए, यांगज़ी नदी क्षेत्र में दक्षिण मध्य चीन में हनान प्रान्त में पाए जाने वाले स्थल, विशेष रूप से समारोहों में प्रयोग होने वाली कांस्य की घंटियों, *नाओ* (*nao;* अनुष्ठानिक घंटियाँ) के लिए प्रसिद्ध हैं। इनमें कुछ संस्कृतियाँ एक ही पुरातन काल की हैं, तथा उनकी श्रेष्ठता का स्तर भी उत्तर चीन में केन्द्रित बेहतर ज्ञात संस्कृतियों से तुलनीय है। चीन के अलग-अलग हिस्सों में फैली विभिन्न कांस्य युगीन संस्कृतियों का सह-अस्तित्व आधुनिक चीनी पुरातत्व विज्ञान की सबसे रोमांचक खोज है, जो शायद चीनी सभ्यता के बहु-केन्द्रित स्रोतों की तरफ संकेत करती है।

साथ ही अलग-अलग संस्कृतियों के लोगों में परस्पर आपसी संबंध और विनिमय के स्पष्ट सबूत मिलते हैं। उदाहरण के तौर पर, कांसे की वस्तुओं की ढलाई के लिए आवश्यक तांबे के अयस्क को मध्य चीन की खानों से निकाला जाता था। यह वहां से कई सौ किलोमीटर से भी अधिक दूरी तय करके दक्षिण में स्थित अन्यांग और अन्य क्षेत्रों के विशाल कारखानों और कार्यशालाओं में निर्यात किया जाता था। एक और विशेष बात यह है कि यह पाया गया कि विभिन्न क्षेत्रों में पायी जाने वाली विभिन्न प्रकार की आकृतियों की वस्तुओं को एक ही तकनीक से कांस्य को ढालकर बनाया गया था। इसका कारण सिर्फ तकनीक ही नहीं था बल्कि लोगों के सांस्कृतिक एवं धार्मिक अनुष्ठानों और साथ ही साथ कारीगरों में समानता थी, जो विभिन्न क्षेत्रों में आवागमन करते थे। यही कारण है कि लोग इस मत पर विश्वास करते हैं कि कांस्य युगीन सभ्यता में घोड़े और घोड़ेगाड़ी का प्रयोग 1200 बी सी ई के अंत में चीन में बाहर से, उत्तर-पश्चिम की ओर से आया। हाथियों और व्हेल मछलियों के कंकाल साथ ही साथ कौड़ी शेल भी मिले हैं जिसमें से कुछ भी उस क्षेत्र में नहीं मिलता, लेकिन ये सब अन्यांग के शवाधान स्थलों से मिले हैं। यह विनिमय के व्यापक जालतंत्र के होने का भी सबूत देता है, जो उस समय आवश्यक रूप से पहले ही से अस्तित्व में रहा होगा।

नई पुरातात्विक खोजों के आधार पर, प्राचीन चीन के प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता के.सी. चांग ने 'आदान प्रदान के क्षेत्र' (interaction sphere) का विचार प्रस्तुत किया जिसमें यह बताया कि वर्तमान चीन में जो विभिन्न प्रकार की संस्कृतियां पनप रही थीं वे परस्पर एक दूसरे से आपस में मिलती-जुलती और प्रभावित हो रही थीं। दूसरे विद्वानों ने सुझाव दिया कि कुछ क्षेत्रों, जैसा कि दक्षिणी-पश्चिम चीन के सैन्ज़िन्गडुई (Sanxingdui) में संस्कृति ने विकास के इतने अलग मार्ग का अनुकरण किया कि इस संस्कृति को उस सभ्यता में शामिल करना कठिन है जिसे आमतौर पर 'चीनी संस्कृति' माना जाता है। यद्यपि ये चर्चा अभी तक इतिहासकारों की बहस का विषय है, फिर भी पिछले कुछ समय में यह स्पष्ट हो गया है कि चीन की कांस्य युगीन सभ्यता कहीं अधिक व्यापक और विस्तृत थी जितना कि सोचा भी नहीं गया था।

9.7 शांग सभ्यता की विरासत

ऊपर चर्चित कांस्य युगीन सभ्यता के अनेक तत्व काफी समय बाद तक जारी रहे और इन्होंने एक उस मूलभूत संस्कृति का निर्माण किया जिसे प्रायः 'चीनी सभ्यता' के नाम से जाना जाता है। इनमें निम्न तथ्य सम्मिलित हैं:

- *प्रतीकात्मक लिपिः* वर्तमान में दुनिया की लेखन पद्धतियों में चीन की लिपि अद्वितीय है। अक्षरों का अभाव, चिह्नों द्वारा विचारों और चित्रों का प्रतिनिधित्व, ऐसी विशिष्टताएं हैं कि चीनी लिखित भाषा को अलग से ही पहचाना जा सकता है। ये स्पष्ट रूप से शांग सभ्यता के साथ ही अस्तित्व में आई।

- *वंश का महत्वः* चीनी समाज में बहुत लंबे काल से एक विशिष्ट वंशीय आम समूह की एकजुटता पर विशेष ज़ोर दिया गया है। प्रत्येक व्यक्ति एक विशेष पहचान के साथ अपने वंश से जुड़ा होता था और परम्परागत रूप से वंश इन व्यक्तियों पर अपना प्रभुत्व और उन पर नियंत्रण रखता था।

- *पितृः* चीनी परिवार आज भी अपने मृतक पूर्वजों को याद करने और सम्मान देने पर विशेष महत्व देते हैं। यहां तक कि बहुत से चीनी समाज प्रतिदिन अपने पूर्वजों की कब्रों को साफ करना, खाना देना, पैसे और अन्य आवश्यक वस्तुएँ उनकी कब्र पर रखना जरूरी मानते हैं।

- *बड़े स्तर पर श्रमिकों की गतिशीलताः* चीन की प्रसिद्ध दीवार, पीली नदी पर बने बांध और नहरें, ऐतिहासिक महल, शहरों की दीवारें आदि स्थलों पर चीनी कुशल श्रमिकों का

प्रयोग करके विशालकाय परियोजनाओं के निर्माण के लिए चीन को इतिहास में जाना जाता है। कांस्य युगीन सभ्यता की संरचनाएं, शहर की दीवारें, शाही कब्रें, विशालकाय कांसे की कार्यशालाएं, मन्दिर-महल परिसरों के अवशेष इस बात का प्रमाण प्रकट करते हैं कि ये सब उस समय मौजूद था।

- *मानव और स्वर्ग के बीच मध्यस्थ के रूप में शासक की धारणाः* यह भी एक अवधारणा थी जिसके आधार पर बाद में चीनी राजाओं ने 'स्वर्ग से अधिदेश प्राप्त सत्ता' के अधिकार का दावा किया। इसका विकास शांग राजवंश में हुआ, क्योंकि शांग राजा ही एक ऐसे शासक थे जो सीधे आत्माओं और ईश्वर से बात करने का दावा करते थे।

उपर्युक्त तथा अन्य पहलू चीनी सभ्यता की विरासत के निर्माण काल के रूप में शांग काल की हमारी समझ को न्यायसंगत ठहराते हैं।

बोध प्रश्न-3

1) क्या चीन की नवीन पुरातात्विक खोजें इस काल के लिखित अभिलेखों की पुष्टि करती हैं?

....

....

....

....

....

2) चीन में अलग-अलग कांस्य युगीन क्षेत्रों के मध्य विनिमय-तंत्र पर पचास शब्द लिखिए?

....

....

....

....

....

3) शांग संस्कृति की चार प्रमुख विरासतों की सूची बनाइये।

....

....

....

....

....

9.8 सारांश

चीन की हाल में की गई पुरातात्विक खोजें एर्लितोउ और एर्लिगांग संस्कृति से लेकर अन्यांग के शांग सभ्यता केन्द्रों तक हमारे सामने कांस्य युगीन सभ्यता के विकास का एक स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करती हैं। इन्होंने चीन के विशाल क्षेत्र में फैले अन्य समकालीन कांस्य युगीन

सभ्यताओं के अस्तित्व को भी सामने लाया है। इनके स्पष्टतः परस्पर आपस में तथा बाहरी संसार के क्षेत्रों से एक दूसरे के साथ संपर्क और आदान-प्रदान के संबंध थे। चीन की कांस्य युगीन सभ्यता अपनी उच्च स्तरीय परिष्कृत कांसे की ढलाई और कांसे की सुन्दर वस्तुओं के निर्माण से पहचानी जाती है। उस समय के लोग बड़े पैमाने पर सार्वजनिक परियोजनाओं के निर्माण में सक्षम थे। वे अपने पूर्वजों की वंशीय परम्परा और उनके प्रति कर्तव्यों पर विशेष महत्व देते थे। दूसरी सहस्त्राब्दि बी सी ई के अन्त तक शांग बस्तियां एक शक्तिशाली राज्य के अस्तित्व को प्रकट करती हैं। यह राज्य ऐसे शासक द्वारा चलाया जाता था जो धार्मिक एवं राजनीतिक प्रमुख होता था। उन्होंने एक परिष्कृत लिखावट का विकास किया था और उनके द्वारा छोड़े गये कुछ लिखित दस्तावेजों से हमें उनकी प्रतिदिन की दिनचर्या और आस्था के प्रति समझ की जानकारी मिलती है। इस स्थिति में यह कहा जा सकता है कि वास्तव में चीन का इतिहास शांग से प्रारम्भ हुआ।

9.9 शब्दावली

डी (Di)	:	उच्च या मुख्य देवता के लिए प्रयुक्त परम्परागत चीनी शब्द।
लोगोग्राफ (Logograph)	:	एक लिखित चिह्न जो किसी शब्द या वाक्यांश को प्रदर्शित करता है।
प्रतीकात्मक लिपि (Logographic script)	:	लिखने का एक तरीका जो प्रतीकों पर आधारित होता है।
ऑरेकल हड्डियां (Oracle bones)	:	उत्कीर्ण की गईं जानवरों की हड्डियों और कुछए के कवच का समूह जो चीन में अभिलेख लिखने के लिये प्रयुक्त होते थे और मुख्य रूप से जिनका प्रयोग प्राचीन चीन के शांग राजवंश में दैवीय भविष्यवाणी के लिए किया जाता था।
शाफ्ट शवाधान गड्ढे (Shaft Burial Pits)	:	ऊर्ध्वाधर पक्षों के साथ एक गहरी आयताकार कब्र जिसमें मृतकों को अन्य भौतिक सामानों के साथ दफनाया जाता था।

9.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) एर्लितोउ, एर्लिगांग, अन्यांग के विस्तृत अध्ययन के लिए भाग 9.3 देखें

2) कांस्य ढलाई। विस्तार के लिए उप-भाग 9.4.1 देखें

3) शाफ्ट शवाधान गड्ढे, भौतिक वस्तुएं, मृत्यु के बाद जीवन, सामाजिक विभाजन। विस्तृत वर्णन के लिए उप-भाग 9.4.3 देखें।

बोध प्रश्न-2

1) पितृसत्तात्मक शासन, वंशानुगत उत्तराधिकार, लगातार गतिशीलता, धर्मतन्त्र आधारित राज्य। विस्तृत वर्णन के लिए उप-भाग 9.4.5 देखें

2) उप-भाग 9.4.4 देखें

3) ईश्वर और पूर्वजों की आत्माओं को प्रसन्न करना, जनता की सुख-सुविधा आदि। विस्तृत वर्णन के लिए उप-भाग 9.4.6 देखें

4) प्रतीकात्मक, ध्वनि आधारित लिपि। विस्तृत वर्णन के लिए उप-भाग 9.4.7 देखें

बोध प्रश्न-3

1) हाँ, लेकिन लिखित दस्तावेजों के सभी दावों को पुरातात्विक खोजों द्वारा सत्यापित नहीं किया जा सका है। ऑरेकल हड्डियों और ज़िया (Xia) के रहस्य के विवरण देकर अपने उत्तर को स्पष्ट करिए। विस्तृत वर्णन के लिए उप-भाग 9.5.1 और 9.5.2 देखें

2) कार्बन डेटिंग का महत्व, ताँबे के अयस्क का विनिमय, घोड़े के साक्ष्य, जानवरों की खोपड़ियों और कंकालों के विस्तृत वर्णन। विस्तार के लिए भाग 9.6 देखें

3) विस्तृत वर्णन के लिए भाग 9.7 देखें

9.11 सन्दर्भ ग्रंथ

बाग्ले, रॉबर्ट. 1999. 'शांग आर्कीयोलॉजी'. माइकल लोवी और एडवर्ड एल. शॉघनेसी (संपादन). *कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ एशियन्ट चाइनाः फ्रॉम ओरीजिन्स ऑफ सिविलाइज़ेशन टू 221 बी सी.* कैम्ब्रिज : कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

चांग, क्वांग-चिह. 1980. *शांग सिविलाइज़ेशन.* न्यू हवेनः येल यूनिवसिर्टी प्रेस.

चांग, क्वांग-चिह. 1986. *द आर्कियोलॉजी ऑफ अनशिएन्ट चाइना.* 4th संस्करण. न्यू हवेनः येल यूनिवर्सिटी प्रेस.

केटली, डेविड. 1990. 'अर्ली सिविलाइजेशन इन चाइनाः रिफ्लैक्शन्स ऑन हाउ इट बिक्म चाइनीज' पॉल रॉप (संपादन). *हेरिटेज ऑफ चाइनाः* कंटेम्परेरी पर्सपेक्टिक्स *ऑन चाइनीज सिविलाइज़ेशन.* बर्कलेः कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी प्रेस.

केटली, डेविड. 1999. 'शांगः चाइनाज़ फर्स्ट हिस्टॉरिकल डाइनेस्टी' माइकल लोवी एंड एडवर्ड एल. शॉघनेसी (सं.) *कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ एन्सिएन्ट चाइना.* कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

थॉर्प, राबर्ट एल. 2005. *चाइना इन द अर्ली ब्रांज़ ऐंजः शांग सिविलाइज़ेशन.* फिलाडेल्फियाः पेंसिल्वेनिया यूनिवर्सिटी प्रेस.

पी डी एफः

http://www.iub.edu/~g380/3.1-Shang-2010.pdf

http://www.iub.edu/~g380/3.3-Bones-2010.pdf

http://www.iub.edu/~g380/3.4-Shang_Religion-2010.pdf

http://www.iub.edu/~g380/3.5-Kings-2010.pdf

http://www.iub.edu/~g380/3.6-Bronze-2010.pdf

http://www.iub.edu/~g380/3.8-Society-2010.pdff

9.12 शैक्षणिक वीडियो

हाउ एन्सिएन्ट चाइनीज़ ब्राँज़ेज़ वर क्रिऐटेड
https://www.youtube.com/watch?v=ayuev.vglm

ऑरेकल बोन, शांग डाइनेस्टी
https://www.youtube.com/watch?v=s9gflq0o

194 blank

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

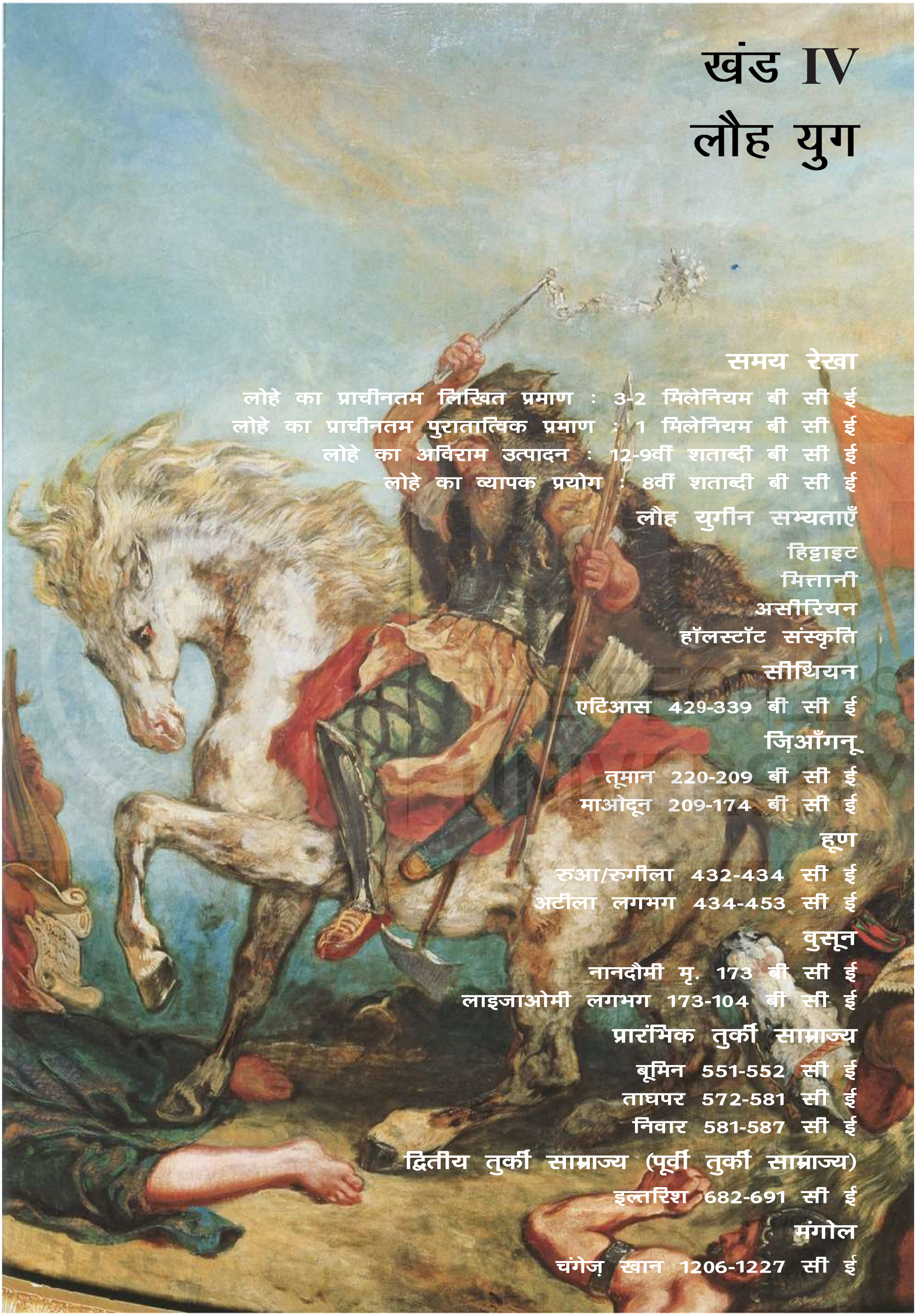

खंड IV
लौह युग

समय रेखा

लोहे का प्राचीनतम लिखित प्रमाण : 3-2 मिलेनियम बी सी ई
लोहे का प्राचीनतम पुरातात्विक प्रमाण : 1 मिलेनियम बी सी ई
लोहे का अविराम उत्पादन : 12-9वीं शताब्दी बी सी ई
लोहे का व्यापक प्रयोग : 8वीं शताब्दी बी सी ई

लौह युगीन सभ्यताएँ

हिट्टाइट
मित्तानी
असीरियन
हॉलस्टॉट संस्कृति

सीथियन

एटिआस 429-339 बी सी ई

ज़िआँगनू

तूमान 220-209 बी सी ई
माओदून 209-174 बी सी ई

हूण

रुआ/रुगीला 432-434 सी ई
अटीला लगभग 434-453 सी ई

वुसून

नानदौमी मृ. 173 बी सी ई
लाइजाओमी लगभग 173-104 बी सी ई

प्रारंभिक तुर्की साम्राज्य

बूमिन 551-552 सी ई
ताघपर 572-581 सी ई
निवार 581-587 सी ई

द्वितीय तुर्की साम्राज्य (पूर्वी तुर्की साम्राज्य)

इल्तरिश 682-691 सी ई

मंगोल

चंगेज़ खान 1206-1227 सी ई

चित्रांकन: अटीला और उसकी लश्कर का इटली पर हमला

फोटोग्राफ: इयूजीन डेलाक्रॉइक्स (1798-1863)

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/1/14/Eugene_Ferdinand_Victor_Delacroix_Attila_fragment.jpg

इकाई 10 लोहे का प्रयोग और उसके निहितार्थ प्रभाव*

इकाई की रूपरेखा

10.1 उद्देश्य

10.2 प्रस्तावना

10.3 लोहे को पिघलाने की तकनीक

10.4 लोहे का आविर्भाव

10.4.1 साक्ष्यः लिखित और अभिलेखीय

10.4.2 पुरातात्विक साक्ष्य

10.5 लोहे का प्रसार और उसके प्रभाव

10.6 निकट पूर्व में लौह युग

10.7 यूरोप में लौह युग

10.8 सारांश

10.9 शब्दावली

10.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.11 संदर्भ ग्रंथ

10.12 शैक्षणिक वीडियो

10.1 उद्देश्य

इस इकाई में हम लोहे को पिघलाने की तकनीक की शुरुआत और लोहे का एक पंसदीदा धातु के रूप में चुनाव की शुरुआत के संबंध में पंद्रहवीं शताब्दी बी सी ई तक आये परिवर्तनों के बारे में जानेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- लोहे के आविर्भाव का विवरण दे सकेंगे,
- लोहे को पिघलाने के तरीकों को जान सकेंगे,
- विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में लोहे की शुरुआत के प्रारंम्भिक केन्द्रों को जान सकेंगे,
- सामाजिक निर्माण पर लोहे के प्रभाव की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे, और
- लोहे के प्रयोग के शुरुआती तथा बाद के काल में प्रयोगों में अंतर कर पायेंगे।

10.2 प्रस्तावना

लौह युग की शुरुआत कांस्ययुगीन सभ्यताओं के पतन, युद्ध शैली में परिवर्तनों, घुमन्तू समूहों के उद्‌भव और व्यापारिक संबंधों के परिवर्तनों के साथ जुड़ी हुई है। लोहे के सर्वाधिक विशिष्ट प्रभावों में युद्ध के तरीकों में परिवर्तन, जैसे कवच, हथियारों के प्रकार तथा रथ के उपयोग के रूप में हैं। आठवीं तथा सातवीं शताब्दी बी सी ई से धीरे-धीरे लोहे का प्रयोग कृषि उपकरणों

* डॉ शतरूपा भट्टाचार्य, लेडी श्रीराम कॉलेज फॉर वीमेन, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

में होने लगा जिसके कारण विशेष सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तन आए। लोहे की कुदाल तथा हल के फाल लोहे की नई तकनीकियों के रूप में विकसित हुए। इसके प्रभावस्वरूप उन्नत उपज तथा सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन हुए। कांस्य के विपरीत, जो कि एक विशिष्ट धातु थी, क्योंकि टिन और ताँबा दोनों ही आसानी से उपलब्ध नहीं थे, लोहे का **अयस्क (ore)** प्रचुर मात्रा में सभी क्षेत्रों में उपलब्ध था। इस प्रकार लोहे के दूरगामी प्रभाव पड़े जो कांस्य के प्रयोग में नहीं दिखाई देते।

कांस्य से लोहे का, एक पसंदीदा धातु के रूप में, प्रयोग को समाज में महत्वपूर्ण परिवर्तनों के तौर पर देखा गया है, विशेषकर तकनीकी परिवर्तनों की दृष्टि से। जे.डी. मुहली (1985) एल. एच. मॉर्गन को उद्धरित करते हुए कहते हैं कि, मानव इतिहास में लोहे की तकनीकी का विकास उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि पशुपालन। कठोर और सस्ता होने के कारण लोहे का युद्धों में हथियार तथा कवच बनाने के लिए प्रयोग हुआ तथा बाद में कृषि उपकरण बनाने में भी इसका प्रयोग किया गया। लोहे के प्रयोग के साक्ष्य दूसरी सहस्राब्दी बी सी ई से ही मिलने लगते हैं जब इसके महत्व का पूरा ज्ञान भी नहीं था, लेकिन प्रमुख धातु के रूप में इसका विकास सातवीं शताब्दी बी सी ई से देखने को मिलता है। इस प्रकार बहुत ही कम समय में लोहा न सिर्फ तकनीकी बल्कि दूसरे परिवर्तनों को लाने में भी एक महत्वपूर्ण धातु के रूप में उभरा।

लोहे के प्रसार को इसकी बहुलता, संकर्षण (एक रसायन विधि जिसके द्वारा अयस्क से आक्सीजन तथा धातु को अलग किया जाता है) में आसानी और इसकी सापेक्षिक कठोरता के संदर्भ में देखा जाता है। ईआन मॉरिस (1989), वी. गॉर्डन चाइल्ड को उद्धरित करते हुये कहते हैं कि, सस्ते और सुलभ लोहे ने कृषि, उद्योगों और युद्ध को सुगम और सार्वलौकिक बनाया। कांस्य के विपरीत, जिसको अभिजात वर्ग के अलावा दूसरे वर्गों के लिये पाना बहुत कठिन था, लोहे की उपलब्धता सभी के लिये सुलभ थी तथा इसी वजह से इसने प्रारंम्भिक ऐतिहासिक परिवर्तनों को जन्म दिया।

लोहे के प्रारम्भिक साक्ष्यों में तलवार, ताबीज़ तथा अन्य दूसरे उत्पाद द्वितीय सहस्राब्दी बी सी ई से मिलते हैं। इस समय कांस्य युग तथा राजप्रसाद प्रथा (palatial system) का पतन भी हो रहा था। पी. विलार्ड (1996) का मानना है कि, कांस्ययुगीन शक्तियों का अंत लोहे के एक प्रमुख धातु के रूप में प्रयोग से जुड़ा हुआ है। उनका कहना है कि ऐसे राजनीतिक विकास का कारण नई तकनीकियाँ जैसे लोहे को पिघलाना आदि शामिल हैं जिन्होंने सैन्य क्षमताओं में परिवर्तन लाने में मुख्य भूमिका अदा की। मारिओ लिवरानी (1996) जैसे विद्वान कांस्य युग की अपेक्षा लौह युग में अधिक संख्या में बस्तियों के प्रसार को लोहे के एक लोकप्रिय धातु के रूप में अधिक प्रयोग के संदर्भ में देखते हैं। वे नये तरह के समाजों को जो घुमन्तू तथा अर्द्ध-घुमन्तू थे, जिन्होंने वैकल्पिक राजनीतिक समाज को जन्म दिया, जैसे पूर्वी भूमध्यसागरीय जो कि लोहे के प्रयोगों तथा इसकी उपलब्धता से जुड़े हुये हैं, को संदर्भित करती हैं। मैकनील (1985) के अनुसार (जे. डी. मुहली में उद्धरित) लोहे की भूमिका को एक उपयोगी धातु के रूप में समझा जा सकता है, जिसका कवच, शस्त्र आदि बनाने में उपयोग किया गया। इसे मध्य पूर्व में 1200-1000 बी सी ई में कबीलों के लगातार आक्रमणों के सिलसिलों तथा पलायनों के साथ जोड़कर भी देखा जाता है। लोहे के भण्डारों की उपलब्धता हर जगह होने के कारण, एक बार पिघलाने की विधि का पता चलने से इसका कांस्य की अपेक्षा अधिक मात्रा में उपयोग किया जाने लगा जो कांस्य के साथ संभव नहीं था। क्योंकि ताँबा तथा टिन जिनसे मिलकर कांस्य बनता था, एक विशिष्ट धातु थी, दोनों ही अयस्क कठिनता से उपलब्ध होते थे। एक तरह से, लोहे को पिघलाने की विधि तथा इसकी कठोर शक्ति ने परिवर्तनों को जन्म दिया जिसने एक बड़े समाज को प्रभावित किया क्योंकि इसका सैन्य शक्ति तथा दूसरी अन्य उपयोगी वस्तुओं के उत्पादन के लिए प्रयोग किया जा सकता था।

यह भी विचारणीय है कि तकनीकी परिवर्तन अकेले समाज में आये परिवर्तनों की व्याख्या नहीं कर सकते बल्कि समाज को इस तरह के परिवर्तनों के अनुकूल होना चाहिये। इस तरह परिवर्तनों में सामाजिक-राजनीतिक-सांस्कृतिक के साथ-साथ मनुष्य भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसलिये आवश्यक है कि जब हम परिवर्तनों में लोहे की भूमिका की बात करें, तो हमें दूसरे संदर्भों जैसे – वातावरण, समाज तथा आर्थिक स्थितियों का भी ध्यान रखना चाहिये जिन्होंने उतना ही महत्वपूर्ण योगदान दिया।

10.3 लोहे को पिघलाने की तकनीक

लोहे को पिघलाना एक अत्यन्त जटिल प्रक्रिया है। हालाँकि धातु के साथ काम करने की विधि दुनिया के कई हिस्सों में छठवीं सहस्राब्दी बी सी ई से ही प्रयोग में थी। लेकिन लोहे के साथ काम करने के लिये अधिक तकनीकी श्रेष्ठता की आवश्यकता थी। लोहे की मानक विधि उसे पिघलाने की (लोहे का गलनांक बिंदु 1540 डिग्री सेल्सियस है जबकि तांबे का 1083 डिग्री सेल्सियस) है। उसके बाद लौह अयस्क को शुद्ध किया जाता है, जिसके लिये लौह भट्टियों में ऑक्सीजन का प्रवाह आवश्यक है। इसके साथ-साथ अपचयन (reduction) की स्थिति को भी बनाये रखना होता है जिससे आक्साइड अयस्क से ऑक्सीजन अलग होता है। इस प्रक्रिया में नियमित अंतरालों के बाद ईंधन की आवश्यकता होती है और नतीजन कार्बन मोनो आक्साइड कार्बन डाईआक्साइड पर हावी होती है।

ब्लूमरी (bloomery) प्रक्रिया में, जो पहले प्रयोग में थी, लोहे को पिघलाने वाले तापमान को प्राप्त करना तथा आवश्यक तापमान को बनाये रखना कठिन था। इस प्रक्रिया से अर्द्धठोस धातुमल (slag) को प्राप्त किया जाता था। इस धातुमल को दोबारा गर्म किया जाता था तथा पीटकर पिटवाँ लोहा (wrought iron) प्राप्त किया जाता था जिसका प्रयोग उपकरण बनाने में किया जाता था। इस प्रक्रिया को कई बार दोहराया जाता था। इस कच्चे लोहे से सिल्ली, सलाखें तथा प्लेट इत्यादि बनाई जाती थीं। इस रूप में लोहे की लचीलापन शक्ति कांस्य के समान होती थी। कालांतर में लोहे को अधिक कठोर बनाने के लिये दूसरे तरीके भी विकसित किये गये।

एक तकनीकी जो स्टीलिंग आफ आयरन (steeling of iron) यानि कार्बुराइज़ेशन (carburization) कहलाती थी, यह एक ऐसी प्रक्रिया थी जिसमें ब्लूम सीधे चारकोल के सम्पर्क में होता है। इससे कार्बन लोहे में फैल जाता है, इस प्रकार आग इसे कार्बन-स्टील में परिवर्तित कर देती है। इस रूप में लोहा, स्टील की सूक्ष्म संरचना में होता है जो लोहे को और अधिक कठोर बनाता है। बारहवीं शताब्दी बी सी ई तक इस तकनीकी का पूर्वी भूमध्यसागर क्षेत्र में चाकू तथा ब्लेड आदि बनाने में सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया था।

क्वेंचिंग (quenching) के प्रयोग से लोहा और कठोर हो गया। क्वेंचिग प्रक्रिया में सामग्री को गरम करना तथा उसे तेजी से पानी, तेल या हवा में ठंडा करना होता है। क्वेंचिग तकनीकी में लोहे को कितनी तेजी से ठंडा किया गया है वह प्रमुख है। हालाँकि क्वेंचिग धातु को कमज़ोर भी बनाता है इसलिये **टैम्परिंग (tempering)** तकनीकी का प्रयोग किया गया। टैम्परिंग में लोहे को लचीला तथा अधिक कठोर बनाने के लिये फिर से गरम किया जाता है। एक तरह से इसे जरूरत के अनुसार आकार दिया जा सकता है। इस प्रक्रिया में चौथी शताब्दी बी सी ई तक श्रेष्ठता हासिल की गई।

सातवीं शताब्दी बी सी ई तक क्वेंचिग तथा **कार्बुराइजेशन** प्रक्रिया का उत्पादन में प्रयोग किया गया, जिसे स्टील कहा गया, जिसमें अधिक लचीलापन था। कठोर लोहे का कांस्य की तुलना में बेहतर हथियारों तथा उपकरणों को बनाने के लिये उपयोग किया गया।

विद्वानों का मानना है कि एक मानक प्रक्रिया के अलावा लोहे को पिघलाने की क्षेत्रीय विभिन्नतायें भी थीं, जो ताँबे को पिघलाने की परंपरागत विधियों से उत्पन्न हुई थीं। इसलिये लोहे को पिघलाने की विधि को तांबे को पिघलाने की उप-विधि के रूप में शुरुआत के साथ देखा जाता है। लोहे की कलाकृतियाँ कई कांस्ययुगीन सभ्यताओं से मिलती हैं, विशेषरूप से पूर्व भूमध्यसागरीय तथा दक्षिण पश्चिम एशिया से, जैसे मध्य तुर्की में अलाका हुयूक (Alaca Huyuk), 2500-2300 बी सी ई में। लोहा ट्रॉय (आधुनिक तुर्की में) में भी पाया जाता था जो कांस्ययुगीन कलाकृतियों से जुड़ा हुआ था। कांस्ययुग के दौरान लोहे को पिघलाने के सबूत, तकनीकी विशेषज्ञता तथा इस पर हिट्टियों के वर्चस्व की पूर्व धारणा को खारिज करते हैं, जिसे हम इस इकाई में बाद में पढ़ेंगे।

10.4 लोहे का आविर्भाव

विद्वान कांस्य से लोहे में बदलाव को समझने के लिये दो दृष्टिकोणों पर दृष्टिपात करते हैं। पहली परिसंचरण अवधारणा (circulation model) जिसके तहत विद्वानों का मानना है कि लंबी दूरी के व्यापार में कमी आने से कांस्ययुगीन सभ्यताओं का पतन हुआ जिससे कांस्य की कमी हुई तथा लोहे के प्रयोग तथा लोहे आधारित अर्थव्यवस्था का विकास हुआ। दूसरी, जमाव की अवधारणा (deposition model) क्योंकि लोहा व्यापक रूप से उपलब्ध था अतः यह दैनिक उपयोग के लिये सबसे उपयुक्त धातु थी। जैसे ही लोहे को पिघलाने की विधि पर श्रेष्ठता हासिल हुई वैसे ही इसने एक पसंदीदा धातु का स्थान ले लिया।

पियरे विलार्ड (1996) लोहे के प्रयोग और प्रसार के तीन चरणों का उल्लेख करते हैं: प्रथम चरण में लोहे के उपकरण प्राप्त होते हैं लेकिन लौह तकनीकी ज्ञात नहीं थी। द्वितीय चरण में लोहे की गुणवत्ता को पहचाना गया (विशेष रूप से उपकरण और हथियार बनाने में) लेकिन कांस्य अभी भी उपयोग में था। और अंतिम चरण में अधिकांश उपकरण और हथियार लोहे के बने हुए थे लेकिन ताँबा अभी भी उपयोग में था। प्रारंभिक चरण में लोहे को सोने और चाँदी के समान मूल्यवान समझा गया। लेकिन बाद में इसकी प्रचुरता, उपलब्धता, पहुँच तथा तकनीकी ज्ञान ने लोहे की अपनी मूल्यवान स्थिति को खो दिया तथा यह एक रोजमर्रा की धातु बन गया।

याल्सीन (1999) का मानना है कि अनातोलिया में लोहे को पिघलाने की प्रक्रिया को चार चरणों में देखा जा सकता है। उनके द्वारा किया गया वर्गीकरण विलार्ड के समान है। पहले दो के अलावा वह तीसरे चरण को बारहवीं से नौवीं शताब्दी बी सी ई में रखते हैं, जब लोहे का नियमित उत्पादन शुरू हो गया, और लोहा प्रभावी धातु बन गया तथा इसका प्रयोग हथियार और उपकरण, आदि बनाने में किया जाने लगा। अंततः आठवीं शताब्दी बी सी ई से लोहे का दैनिक प्रयोग किया जाने लगा तथा लोहे के उपकरणों में कई गुना वृद्धि हुई।

वी. गॉर्डन चाइल्ड (1956) का मानना है कि लौह युग के आने के बाद सभ्यताओं का कांस्य युग की अपेक्षा बड़े क्षेत्रों में विस्तार हुआ। उनके अनुसार लोहे तथा वर्णमाला ने अभिजात वर्ग तथा आम आदमी के संबंधों में भी बदलाव किया। सस्ते लोहे के कारण आम आदमी अब अभिजात वर्ग पर निर्भर नहीं था तथा किसान अपने लोहे के औज़ारों से बेहतर तरीके से भूमि को साफ कर सकते थे। इस तरह लोहे ने अभिजातों की तुलना में किसानों की स्थिति में बदलाव को सम्भव किया। एक तरह से चाइल्ड ने तकनीकी के महत्व पर ज़ोर दिया क्योंकि इसके कारण दूरगामी परिवर्तन आये। एशिया तथा ग्रीस से शुरू होकर, एट्रूस्कन, एक इतावली संघ, के साथ सातवीं शताब्दी बी सी ई में इसका पश्चिम की तरफ प्रसार हुआ। तथा फोनेशियन, जो कि पूर्वी भूमध्यसागरीय सभ्यता थी, की तरफ पन्द्रहवी शताब्दी बी सी ई में प्रसार हुआ।

इस प्रकार लौह युग के आने के साथ इतिहास में हम एक नये युग में प्रवेश करते हैं, जो कांस्य युगीन साम्राज्यों से अलग था। हम एक नई राजनीतिक व्यवस्था, बस्तियों का विस्तार तथा तकनीकी में बदलाव देखते हैं।

10.4.1 साक्ष्यः लिखित और अभिलेखीय

दूसरी सहस्राब्दी बी सी ई में लोहा एक महत्वपूर्ण धातु के रूप में विकसित हुआ। इस अवधि में लोहे को मूल्यवान समझा गया तथा इसकी तुलना सोने तथा चाँदी से की गई। प्रारम्भिक ग्रन्थों में लोहे को राजतंत्र का प्रतीक माना गया। असीरियाई राजा शालमनेसर प्रथम (1274-1245 बी सी ई) ने अपने दस्तावेजों में उल्लेख किया है कि जब उसने असुर में एक मंदिर का निर्माण कराया तब उसने मूल्यावान पत्थरों, सोने, चाँदी, लोहे, टिन, तांबे, इत्यादि का दान किया। एक और असीरियाई शासक तिगल्थ पिलेसर प्रथम (1115-1077 बी सी ई) ने भी स्वयं को लोहे के हथियारों का मालिक होने पर गर्व के रूप में प्रस्तुत किया है। हिट्टी दस्तावेज भी लोहे का उल्लेख द्वितीय सहस्राब्दी बी सी ई में राजशाही धातु के रूप में करते हैं। राजा की तुलना कभी-कभी लोहे की कठोरता तथा मज़बूती से भी की जाती थी। इस तरह से लोहे को इस चरण में राजशाही धातु से जोड़ा जाता था तथा यह एक मूल्यवान धातु था।

लोहे तथा इसके उत्पादों के लिखित साक्ष्य द्वितीय सहस्राब्दी बी सी ई से मिलने लगते हैं। कुल्तेपी (आधुनिक तुर्की में एक प्राचीन व्यापारिक केन्द्र) में पाया गया प्रारम्भिक असीरियाई अभिलेख, जो कि द्वितीय सहस्राब्दी बी सी ई का है, इसमें सोने व चाँदी के बदले में तांबे की जगह अब लोहे से विनिमय किया जाता था। इस तरह लोहे को चाँदी से चालीस गुना मूल्यवान माना गया, जिसमें बाद में चलकर भारी परिवर्तन आया।

इन सभी विभिन्न साक्ष्यों में लोहे के लिये विभिन्न स्थानीय शब्दों का प्रयोग किया गया है। उदाहरण के लिये, प्रारंभिक कुल्तेपी साक्ष्य, जो कि द्वितीय सहस्राब्दी बी सी ई के हैं, में लोहे के लिये ***अमुतुम (amutum)*** शब्द का प्रयोग किया गया है जो कि अक्कादी भाषा का शब्द है, जबकि मेसोपोटामिया में ***कु.अन*** (KU.AN) शब्द का प्रयोग किया गया है। दूसरी तरफ हिट्टियों ने सुमेरियन शब्द ***अन.बर*** (AN.BAR) का प्रयोग अपने अभिलेखों में किया है। साक्ष्यों में प्रयोग किये गये ये शब्द शौर्य तथा शक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं। 1800 बी सी ई से लोहे की उपयोगिता को पहचाना गया तथा इसको हथियार बनाने के लिये पंसद किया गया और जल्दी ही इसके प्रयोग में कई गुना वृद्धि हुई।

इस अवधि के पुरातात्विक साक्ष्यों में बहुलता के साथ खंजर, तलवार के ब्लेड, चाकू इत्यादि लोहे के बने हुये पाये गये हैं। उदाहरण के लिये, 2800 बी सी ई से तुर्की के अलाका हुयूक (Alaca Huyuk) के एक शाही मकबरे से दूसरी मूल्यवान वस्तुओं जैसे सोने के सिर वाली कीलों इत्यादि के साथ छः लोहे के खंजरों को प्राप्त किया गया है। लोहे को युद्ध के दौरान प्राप्त होने वाली लूट तथा भेंट के रूप में भी उल्लेखित किया गया है। सम्वतः यह लोहा कच्ची सामग्री के रूप में था जिससे कोई भी वस्तु बनाई जा सकती थी। असीरियाई राजा तिकुल्ती निनूरता द्वितीय (890-884 बी सी ई) ने उल्लेख किया है कि उसे सौ खंजर भेंट स्वरूप प्रदान किये गये।

हमें लोहे के प्रयोग के लिखित साक्ष्य तीसरी-दूसरी सहस्राब्दी बी सी ई से मिलते हैं, जिससे हमें प्रारंभिक समाजों में लोहे के महत्व का पता चलता है। उनसे हमें यह भी पता चलता है कि लोहे का उल्लेख शाही अभिलेखों तथा दस्तावेजों में किये जाने से हमें इसके एक कीमती धातु होने का पता चलता है, जिसे एक मूल्यवान वस्तु के रूप में अपने पास रखा जा सकता था।

10.4.2 पुरातात्विक साक्ष्य

प्रारंभिक लौह वस्तुयें तथा उसके गौण उत्पाद आकस्मिक थे तथा लोहे को पिघलाने का ज्ञान तथा तकनीकी धीरे-धीरे विकसित हुई और उसमें कौशल प्राप्त किया गया। प्रथम सहस्राब्दी बी सी ई से एशिया में लोहे के हथियार तथा आठवीं शताब्दी बी सी ई से कृषि उपकरण जैसे कुदाल, हल की फाल, विश्व के कई हिस्सों से प्राप्त किए गए हैं।

लोहे का सबसे पुराना पुरातात्विक साक्ष्य लोहे का एक पिघलाया हुआ टुकड़ा है जो उत्तरी ईराक के समारा क्षेत्र से प्राप्त एक कब्र से, जो कि पाँचवी सहस्राब्दी बी सी ई की है, मिलता है। ईरान के तेपे-सियाक से लगभग 4600-4100 बी सी ई की लोहे की तीन गेंदें मिलती हैं। लोहे की ये गेंदें भारी तथा कठोर थीं तथा इनमें निकिल की मात्रा अधिक थी। ऐसा माना जाता है कि इनकी उत्पत्ति **उल्का** (छोटी चट्टान अथवा बाहय अंतरिक्ष से आई धातु की वस्तुयें) के रूप में या अयस्क पिघलाते समय आकस्मिक उप-उत्पादों के रूप में हुई।

अनातोलिया से 3000-2000 बी सी ई की लोहे की वस्तुयें मिलती हैं। मेसोपोटामिया से नौ वस्तुएं जिनमें पिघलाये गये लोहे के दो टूटे खंजर ब्लेड, दो खंडित औज़ार के टुकड़े जिनकी उत्पत्ति उल्का से मानी गयी है, तथा पाँच अज्ञात वस्तुयें मिली हैं। लेकिन, हाल के शोधों से पता चलता है कि दोनों, उल्का में मिला लोहा (उल्कापिंड में पायी जाने वाली धातु) तथा **स्थलीय लोहा** (लोहा जो पृथ्वी से मिलता है, जिसे टेल्यूरिक (Telluric) लोहा भी कहा जाता है) दोनों ही मूल रूप से एक सजावट और प्रतीकात्मक महत्व की एक कीमती धातु थी।

असीरिया से लोहे के साक्ष्य खोरसाबाद, निनेवेह, तथा निमरूद से मिलते हैं। इनमें मध्य नौवीं शताब्दी बी सी ई के लोहे के खंजर, पिन के सिरे, तलवारें, म्यान की मूठ, बाणों, भालों और बल्लयों की नोकें आदि प्रमुख हैं। सातवीं शताब्दी बी सी ई में प्राप्त लोहे के बने कवच भी असीरिया से मिलते हैं। इसके अतिरिक्त कुदाली की मूठ, कुल्हाड़ी, मुदाली, हल, चाकू, हंसिया, आरी, हथोड़ा इत्यादि निनेवेह, खोरसाबाद तथा अन्य दूसरी जगहों से मिले हैं। इस अवधि में लोहे से बनी ज़ंजीर (fetters) तथा लोहे के कलाई बंद (cuffs) का उल्लेख लिखित साक्ष्यों में मिलता है। खोरसाबाद में निर्माण कार्य में भी लोहे का प्रयोग किया गया। ज़ंजीरों का ढेर तथा दरवाजों के कुंदे बड़ी मात्रा में मिले हैं। बाद में यूनानियों तथा ईरानियों ने भी निर्माण कार्य में लोहे का प्रयोग किया।

बोध प्रश्न-1

1) प्राचीन विश्व में लोहे के प्रारम्भिक प्रयोग के क्या पुरातात्विक साक्ष्य मिलते हैं?

....

....

....

....

....

2) लोहे को पिघलाने की तकनीकी का वर्णन कीजिए तथा लोहे को एक पसंदीदा धातु बनाने में इसका क्या योगदान था?

....

....

....

....

....

10.5 लोहे का प्रसार तथा उसके प्रभाव

लोहे की तकनीकी तथा वर्णमाला लेखन का विकास काँस्ययुगीन सभ्यताओं के अंत तक हो चुका था। जे. डी. मुहली (1985) ने मैकनील को उद्धरित करते हुये कहा है कि मध्य पूर्व में लोहे के विस्तार ने 1200-1000 बी सी ई में नये आक्रमणों की लहर तथा पलायनों को जन्म दिया। नये लोग ऐतिहासिक दस्तावेज़ों में दर्ज किये गये जिन्होंने बर्बर तथा अपेक्षाकृत अधिक समतावादी युग की शुरुआत की। हिट्टियों की सैन्य सफलता में लोहे के हथियारों का प्रयोग सफलता का एक मुख्य कारण माना जाता है। इस संदर्भ में विशेष रूप से 1285 बी सी ई में क़ादेश की लड़ाई, मिश्र के फिरौन रैमसेस द्वितीय के साथ हुई हिट्टियों की लड़ाई, तथा उसके बाद दोनों राज्यों के मध्य शांति वार्तायें, अर्थात् 1269 बी सी ई की क़ादेश की संधि आदि का विशिष्ट रूप से वर्णन किया जा सकता है।

जैसा कि आप अगली **इकाई 11** में पढेंगे कि द्वितीय सहस्राब्दी बी सी ई से घुमंतू समूहों ने कांस्य युगीन साम्राज्यों का अन्त किया, जिसने सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक स्तर पर बड़े बदलावों को जन्म दिया। इस समय पूर्व में असीरियन साम्राज्य का विस्तार हुआ (आप असीरियन साम्राज्य की विस्तार से चर्चा **इकाई 12** में पढ़ेंगे)। असीरियन एक सैन्य शक्ति थे और वह लोहे के प्रयोग के लिये जाने जाते थे क्योंकि वे लोहे के भण्डारों, जैसे कि टॉरस पहाड़ों, के निकट स्थित थे। साक्ष्य पुष्टि करते हैं कि इनके द्वारा लोहे का प्रयोग हथियार बनाने के लिये किया गया। कुछ विद्वानों का मानना है कि व्यापार में व्यवधान पैदा होने के कारण तांबे की कमी हुई जिससे लोहे के प्रयोग का प्रचलन बढ़ा। जैसा कि 'लौह पत्र' (इसका विस्तृत वर्णन **भाग 10.7** में किया गया है) प्रमाणित करता है कि प्राचीन विश्व में लोहा वाणिज्यिक संबंधों के लिये एक प्रमुख वस्तु था।

धीरे-धीरे छठवीं शताब्दी बी सी ई से लोहे का प्रयोग सिर्फ हथियार ही नहीं बल्कि कृषि उपकरण जैसे कुदाल, हल की फाल, कुल्हाड़ी आदि बनाने में भी किया गया। लोहे के उपकरणों के प्रयोग ने कृषि में बड़े स्तर के परिवर्तनों को जन्म दिया जिनमें से उत्पादन में वृद्धि प्रमुख है। इस प्रकार पत्थर तथा लकड़ी के उपकरणों को किसानों ने धातु के उपकरणों से बदला जो मज़बूत तथा टिकाऊ थे। इसलिये लोहे को एक लोकतांत्रिक धातु के रूप में वर्णित किया गया है। लेकिन इस तरह के बदलाव बाद में हुए और इन पर चर्चा पाठ्यक्रम में आगे की जाएगी।

प्रथम सहस्राब्दी बी सी ई से लोहे ने अर्थव्यवस्था में एक प्रमुख भूमिका अदा की जिनमें लोहे से बने बेहतर उपकरण, क्षेत्रीय विस्तार इत्यादि शामिल हैं। लोहे के प्रयोग के निहितार्थ प्रभाव व्यापक थे जिनकी चर्चा आगे की गई है।

सैन्य शक्ति तथा लोहे की भूमिका

लोहे ने युद्ध में बड़े परिवर्तनों को जन्म दिया क्योंकि यह कांस्य की तुलना में अधिक मज़बूत था (जैसा कि **भाग 10.3** में चर्चा की गई है)। उभरते राज्यों जैसे कि असीरिया, हिट्टाइट तथा मित्तानी को युद्ध में प्रयुक्त किए जाने वाले लोहे के हथियारों की बखूबी जानकारी थी। चूंकि इन सभ्यताओं ने दूसरी धातुओं की तुलना में लोहे की सापेक्ष उपयोगिता की खोज की, इसके द्वारा वह अपने कवचों तथा हथियारों में परिवर्तन लाए।

इन नये राज्यों ने लोहे के बने कवचों तथा हेल्मेटों के अतिरिक्त तलवारों, कटारों, भालों की नोकों आदि का प्रयोग कर अपनी सैन्य शक्ति की श्रेष्ठता का दावा पेश किया। पी. विलार्ड (1996) के अनुसार लोहे की माँग में वृद्धि, जिसे हथियार तथा उपकरण बनाने के लिये असीरियाइयों ने प्रयोग किया, ने लोहे के प्रयोग और लोकप्रियता को बढ़ाया। इन साम्राज्यों का सत्ता के केन्द्र के रूप में विकसित होने के पीछे यह भी एक कारण था। ये तीन राज्य निकट पूर्व में सत्ता के प्रमुख दावेदार थे तथा इनको प्रथम सहस्राब्दी बी सी ई में लोहे के हथियार तथा उपकरण बनाने में सर्वोच्च दक्षता प्राप्त थी।

इस काल में एक अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तन युद्ध में घोड़ों का प्रयोग था। घोड़ों को निकट पूर्व में द्वितीय सह्स्राब्दी बी सी ई में पालतू बनाया गया तथा धीरे-धीरे युद्ध में इनकी उपयोगिता को पहचाना गया। युद्ध में नई तकनीकी के प्रयोग के अलावा, इसके कारण युद्ध में एक नए योद्धा वर्ग द्वारा रथों तथा घोड़ों का प्रयोग किया गया। ठोस पहिये वाले रथों का पहले सुमेरियाई लोगों ने प्रयोग किया लेकिन आरा वाले पहियों को जिन्हें घोड़े खींचते थे प्रथम सहस्राब्दी बी सी ई में प्रयोग में लाया गया।

रथ तथा घोड़े पर सवार समूहों का इन राज्यों की सफलता में प्रमुख योगदान था। लोहे के हथियारों के प्रयोग के साथ-साथ इनका हिट्टी तथा मित्तानी सैन्य दक्षताओं पर भी प्रभाव पड़ा। इन नई सैन्य तकनीकों का प्रसार दूसरे क्षेत्रों में भी तेज़ी से हुआ तथा ये सैन्य श्रेष्ठता का प्रतीक बन गईं।

कृषि में लोहे का प्रयोग सातवीं शताब्दी बी सी ई से देखा गया जिस काल की लोहे की फाल मेसोपोटामिया से प्राप्त हुई है। सेन्नाचेरिब (लगभग 704-681 बी सी ई) उल्लेख करता है कि लोहे के औज़ारों का प्रयोग पहाड़ों को काटकर नहरें बनाने के लिये किया गया जिससे निनेवेह क्षेत्र में सिचांई के लिये पानी लाया जा सके (विलार्ड, 1996)।

10.6 निकट पूर्व में लौह युग

लंबे समय तक विद्धानों का मानना था कि लोहे को पिघलाने की प्रक्रिया का विकास सर्वप्रथम, हिट्टियों ने किया, और उनके पतन के बाद ही इसका प्रसार निकट पूर्व के दूसरे हिस्सों तथा बाद में पश्चिम में हुआ। लिखित तथा अभिलेखीय साक्ष्यों को इसके संदर्भ में प्रस्तुत किया गया। लोहे के साक्ष्य द्वितीय सहस्राब्दी बी सी ई से मिलते हैं तथा प्रथम सहस्राब्दी बी सी ई से इसका व्यापक प्रयोग होने लगा। भूगर्भीय संरचना के अनुसार काला सागर के आसपास रेत में प्रचुर मात्रा में हैमेटाइट पाया जाता है। जैसा कि पियरे विलार्ड वर्णन करता है (1996) कि, स्ट्रैबो जैसे प्रारंभिक यूनानी विद्धानों का विश्वास था कि इसी क्षेत्र में लोहे की खोज हुई। लोहे के खनन के इस क्षेत्र से द्वितीय सहस्राब्दी बी सी ई में साक्ष्य मिलते हैं। लेकिन प्रश्न यह है कि क्या लोहे को पिघलाने की तकनीकी का प्रसार निकट पूर्व से विश्व के दूसरे हिस्सों में हुआ। इसलिये हमें इस क्षेत्र के साक्ष्यों को अध्ययन करने की जरूरत है जिससे लोहे की तकनीकी के विकास को समझा जा सके। हम हिटि्टयों, मित्तानियों तथा असीरियाईओं के द्वारा लोहे के प्रयोग तथा उसके प्रसार पर दृष्टिपात करेंगे।

हिट्टी-मित्तानी और असीरियन

लगभग दो सौ हिट्टी दस्तावेज लोहे का उल्लेख करते हैं। इसके आधार पर विद्धानों का मानना है कि हिट्टियों ने बड़ी मात्रा में लोहे की बनी वस्तुओं का उत्पादन किया। हिट्टी शासक का एक पत्र (संभवतः हट्टुसिलिस तृतीय [1282-1250 बी सी ई]), जो असीरियाई राजकुमार को लिखा गया था, जिसे 'लौह पत्र' के रूप में जाना जाता है, भी हिट्टियों की लोहे के ऊपर दक्षता का उल्लेख करता है। जैसा कि पत्र में उल्लिखित है कि यह सिर्फ लोहे की एक धातु

की बात नहीं करता, बल्कि एक 'अच्छे लोहे' की बात करता है (माना जाता है कि यह स्टील को इंगित करता है)। यह उनके तकनीकी ज्ञान तथा लोहे की एक कठोर धातु के रूप में उपयोग को भी इंगित करता है। अनातोलिया क्षेत्र में पाया जाने वाला लोहा हिट्टियों की लौह उत्पादन क्षमता की पुष्टि करता है।

विद्वान हिट्टी वर्चस्व के संदर्भ में 'लौह पत्र' का उल्लेख करते हैं जिसमें हिट्टी राजा, जो उस समय 'अच्छे लौह' को उपलब्ध कराने में असमर्थ था, का उल्लेख है। इस पत्र का प्रयोग यह सिद्ध करने के लिये किया जाता हे कि हिट्टियों का लोहे के उत्पादन पर नियंत्रण था तथा लोहा वाणिज्यिक विनिमय का एक उत्पाद था। इसके अलावा इसका उपयोग उनकी तकनीकी श्रेष्ठता को साबित करने, कि वे 'अच्छा लोहा' बना सकते थे जिसे स्टील कहा गया था, को संदर्भित करने के लिये भी किया जाता है।

मानचित्र 10.1 : हिट्टी साम्राज्य (सीमांकित क्षेत्र) तथा उसका विस्तार (आच्छादित क्षेत्र), लगभग 1350-1300 बी सी ई

साभारः Near_East_topographic_map-blank.svg: Semhur

स्रोतः Creative Commons (https://en.wikipedia.org/wiki/File:Map_Hittite_rule_en.svg)

कोर्डानी (2016) ने जे. सीगेलोवा को उद्धरित करते हुये लिखा है कि निम्न प्रकार से हिट्टियों के समय में लोहे के प्रसार की प्रक्रिया को समझा जा सकता हैः सर्वप्रथम प्राचीन हिट्टी काल में अर्थात् 1700-1600 बी सी ई, जिस समय लोहे को मूल्यवान समझा गया तथा उसे अनुष्ठानों से जोड़ा गया। द्वितीय, मध्य हिट्टी काल (1500-1400 बी सी ई) जब लोहे की वस्तुओं में वृद्धि हुई तथा लोहे को उत्सवों की वस्तुओं में शामिल किया गया। तृतीय, हिट्टी साम्राज्य के प्रभुत्व का काल (1300-1200 बी सी ई), जिस समय लोहे की विभिन्न वस्तुओं जैसे खंजर, चाकू, भाले इत्यादि का उत्पादन हुआ। हालांकि इस अवधि में आभूषणों के रूप में लोहे के प्रयोग में कमी आई। इस विभाजन द्वारा सीगेलोवा ने लोहे के प्रयोग के तरीकों को दिखाया, जिसमें उसे मूल्यवान धातु से एक साधारण प्रयोग की धातु के रूप में पहचाना गया।

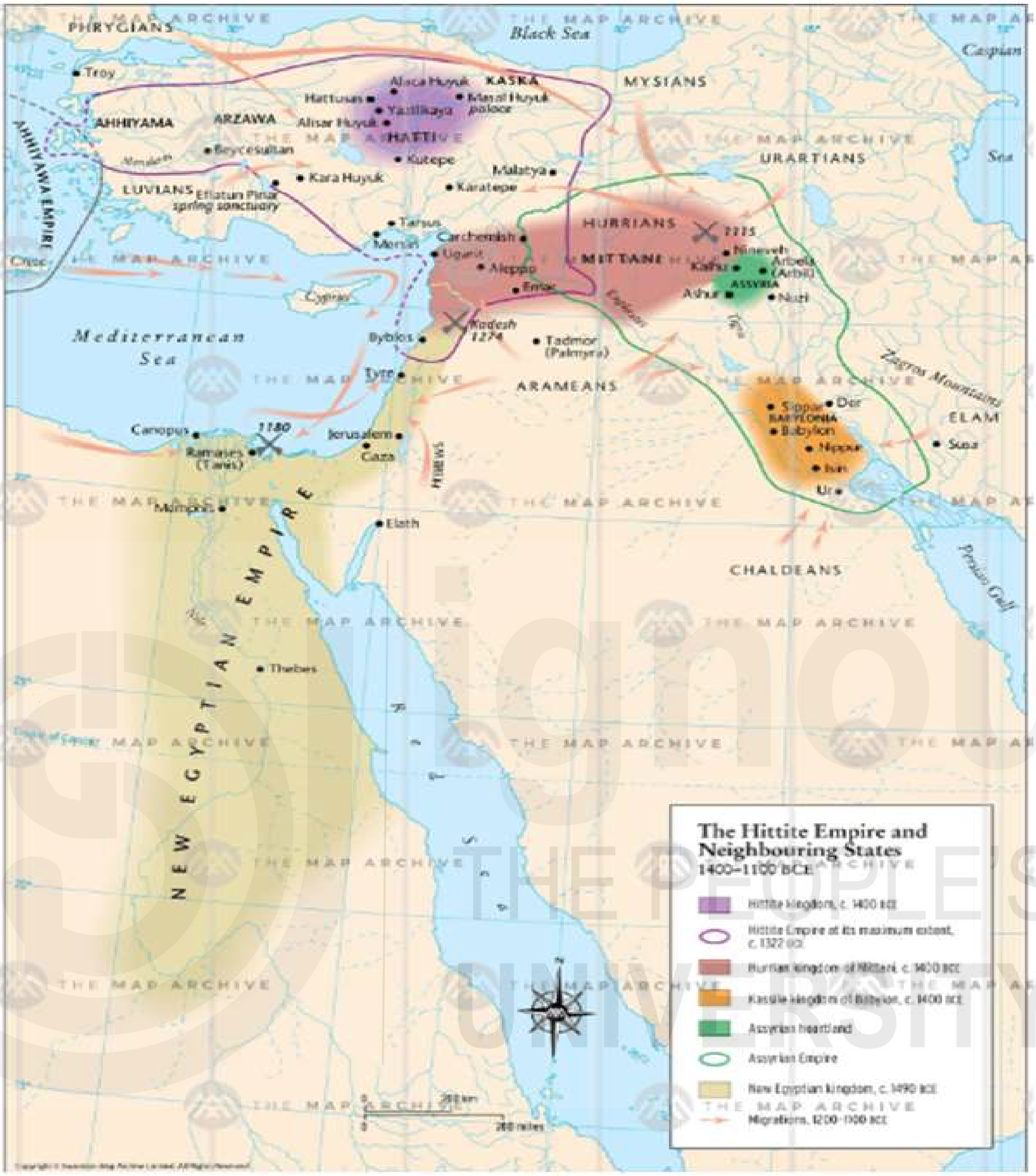

मानचित्र 10.2 : हिट्टी साम्राज्य तथा पड़ोसी राज्य, 1400-1100 बी सी ई

स्रोत: https://www.themaparchive.com/the-hittite-empire-and-neighbouring-states-14001100-bce.html

प्रारंभिक अवधि में (1700-1600 बी सी ई) हिट्टियों ने लोहे का प्रयोग मात्र अनुष्ठानों में किया तथा इसको लाजवर्द तथा दूसरी अर्द्ध-बहुमूल्य वस्तुओं के साथ उल्लेखित किया गया था। मिट्टी की पट्टिकायें, जिन्हें बोगाज्कॉय (तुर्की) के महल में पाया गया है, में लोहे का सोने, चाँदी, ताँबे तथा कांस्य के साथ उल्लेख किया गया है। एक प्रारंभिक हिट्टी साक्ष्य लोहे के सिंहासन तथा एक राजदंड (राजा की छड़ी अथवा राजा द्वारा धारण किए जाने वाला राजदंड) का उल्लेख करता है। लिखित साक्ष्य चाकू, खंजर, तलवार, तथा दूसरे मिश्रित उपकरणों का उल्लेख करते हैं। हिट्टी लेख लौह श्रमिकों का भी उल्लेख करते हैं।

हालांकि याल्सीन तथा दूसरे अन्य विद्वान हिट्टिओं के अलावा ऐसी दूसरी जगहों का उल्लेख करते हैं जैसे कि अनातोलिया, जहाँ भी लोहे को पिघलाया जाता था। इस आधार पर ये

विद्वान लोहे पर हिट्टी एकाधिकार पर प्रश्नचिन्ह लगाते हैं। हिट्टी दस्तावेज, जैसा कि ऊपर वर्णित किया गया है, निस्संदेह दर्शाते हैं कि उनके द्वारा सफलतापूर्वक लौह तथा इससे बने औज़ारों का उत्पादन द्वितीय सहस्राब्दी बी सी ई में किया जाता था, हालांकि पुरातात्विक साक्ष्यों में यहाँ लोहे की सीमित वस्तुएं मिली हैं। इस क्षेत्र का राजनीतिक इतिहास संसाधनों को लेकर मित्तानी तथा हिट्टी सत्ता संघर्ष को इंगित करता है। हिट्टी शासक सप्पीलुलिमस प्रथम (लगभग 1380-1346 बी सी ई) का मित्तानी शासक के ऊपर आक्रमण का यह एक कारण था। तत्पश्चात् हिट्टियों का अलेप्पो तथा अलाका पर नियंत्रण का कारण भी मित्तानी लोहे के भण्डारों पर नियंत्रण के प्रयत्न का प्रयास था। इस प्रकार, यह इस अवधारणा को खारिज करता है कि सिर्फ हिट्टियां को ही लौह कार्य का ज्ञान था।

विद्वानों का मानना है कि लोहे के बने अच्छे उपकरणों को नौवीं शताब्दी बी सी ई का माना जा सकता है। लोहे की कुल्हाड़ी जिसका हैंडल तांबे का था रस शामरा, उगरित से प्राप्त हुई है जिसे मित्तानी राजा तुसत्ता ने फिरौन अमीनोफिस तृतीय (1413-1375 बी सी ई) को चौदहवी शताब्दी बी सी ई में उपहार स्वरूप भेंट किया था, जिसका वर्णन मिस्र से प्राप्त मिट्टी की एक पट्टिका पर उत्कीर्ण है। यह फिर से इस बात का खंडन करता है कि केवल हिट्टियों को ही लोहे का ज्ञान था। इसके अलावा उपहार-सूची में लोहे के खंजर तथा स्टील खंजर में भी अंतर किया गया है। इससे पता चलता है कि मित्तानियों को लोहे को पिघलाने की जानकारी थी तथा वे कार्बुराइज़्ड लोहा अर्थात् स्टील भी बना सकते थे।

इसके अलावा, प्रारंभिक असीरियाई साक्ष्य खोरसाबाद, निमरूद, निनेवेह के लोहे के भण्डारों (iron hoards) से मिलते हैं। यहाँ पर हुई खुदाई में लोहे के बने भाले, खंजर, तीर के फलक, हेलमेट, कवचों के अंश, कुल्हाड़ी, हॅसिया, कीलें, हथौड़ा आदि मिले हैं। सर्वाधिक प्रारंभिक साक्ष्य मंदिरों को दिये गये दान के रूप में मिलता है। शालमानेसर प्रथम (लगभग 1274-1245 बी सी ई) अपने अभिलेख में वर्णित करता है कि, उसने मूल्यवान वस्तुएं जिसमें लोहे की बनी वस्तुएं भी शामिल थीं, असुर (एक अक्कादियन नगर) मंदिर को दान कीं। हिट्टी दस्तावेजों के समान ही प्रारम्भिक काल में यहां भी लोहे को एक महत्वपूर्ण धातु माना जाता था। बाद में लोहे का राजकीय हथियार के रूप में उल्लेख किया गया। राजा तिगलथ पिलेसर प्रथम (लगभग 1115-1077 बी सी ई) ने अपने अभिलेख में शिकार के लिये उसके द्वारा लोहे के तीर की नोक का वर्णन किया है। अतः लोहे का प्रयोग अभिजात वर्ग द्वारा किया जाता था तथा इसे एक मूल्यवान वस्तु समझा जाता था। उदाहरण के लिये, असीरियाई राजा तुकुल्ती निनुर्ता द्वितीय (लगभग 890-884 बी सी ई) ने भेंट में चाँदी तथा लोहे के सौ खंजरों को स्वीकार किया। सातवीं शताब्दी बी सी ई के उत्तरार्ध में राजा असुरबनीपाल (लगभग 668-627 बी सी ई) द्वारा शिकार के समय लोहे के खंजर के प्रयोग का वर्णन मिलता है। नौवी शताब्दी बी सी ई के असीरियाई साक्ष्य भेंट में दी गई वस्तुओं में लोहे का वर्णन करते हैं। असीरियाई राजा असुरनसीरपाल द्वितीय (883-859 बी सी ई) ने पहाड़ों में प्रयोग की जाने वाली लोहे तथा ताँबे की छोटी कुल्हाड़ियों का वर्णन किया है। इस प्रकार लोहा अभिलेखों में वर्णन करने, उपहार देने तथा राजा को भेंट देने के लिये उपयुक्त महत्व की धातु थी। यह राजा की सैन्य शक्ति का प्रतीक था।

असीरियाई रिकॉर्ड तथा पुरातात्विक साक्ष्यों के अनुसार आठवीं शताब्दी बी सी ई के उत्तरार्द्ध से औज़ार बनाने में लोहे का प्रयोग किया जा रहा था। कुदाल, कुल्हाड़ी, कीलें आदि के विषय में विभिन्न शासकों के अभिलेखीय साक्ष्य मिलते हैं। खुदाई के दौरान लोहे की कीलें खोरसाबाद से मिली हैं। निमरूद से खुदाई में कुल्हाड़ी-बसूला प्राप्त हुए हैं। लोहे के हल को सातवीं शताब्दी बी सी ई के साक्ष्यों में उल्लेखित किया गया है[1]। बढ़ई के कुछ औज़ार भी

---

[1] ईसरहाड्डोन (लगभग 680-669 बी सी ई) की सामंतों के साथ सन्धियों में लोहे के हल का प्रयोग उपमा के रूप में किया गया है।

खोरसाबाद के उत्खनन से प्राप्त किये गये हैं (प्लाइनर, इत्यादि, 1974)। इस प्रकार लोहे का उल्लेख प्रारंभ में राजाओं द्वारा एक प्रमुख मूल्यवान धातु के रूप में किया गया तथा बाद में आठवीं शताब्दी से यह एक घरेलू उपयोग की वस्तु बन गया।

बोध प्रश्न-2

1) लोहे को पिघलाने की तकनीकी ने किस तरह निकट पूर्व में नये राज्यों के उदय में सहायता प्रदान की?

....

....

....

....

....

2) हिट्टियों को लौह उत्पादन में सर्वोच्च क्यों माना जाता है?

....

....

....

....

....

10.7 यूरोप में लौह युग

यूरोप में लोहे के साक्ष्य 12वीं-10वीं शताब्दी बी सी ई से मिलते हैं तथा यूनानी बस्तियों में केवल आठवीं शताब्दी बी सी ई से ही प्रचुर मात्रा में इसका उपयोग किया गया। मायसीनियन-मिनोअन कांस्य सभ्यता के पतन के बाद ही 'अंधकारमय युग' या प्रारंभिक लौह युग की शुरुआत होती है। तकनीकी दृष्टिकोण से सबसे महत्वपूर्ण घटना लोहे को पिघलाने की तकनीकी का विकास था। लोहा सस्ता तथा प्रचुर मात्रा में उपलब्ध था और इसका प्रयोग विभिन्न उपकरणों को बनाने में किया गया।

यूरोपीय संदर्भ में, लौह युग में विभिन्न जनजातीय समुदायों का उदय हुआ जैसे सैल्ट्स, एट्रूस्कन, आईबेरियन तथा और अन्य दूसरे समुदाय। यूनानियों ने लोहे के खंजर तथा तलवारों को तथा साथ ही लोहे की तकनीकी को लेवांट (पूर्वी भूमध्यसागर) तथा पश्चिमी एनातोलिया से प्राप्त किया। लोहे की तकनीकी का प्रसार हिट्टियों द्वारा ईरान में तथा उत्तर पूर्व काकेशस से कोबानी क्षेत्र की ओर हुआ। प्रारम्भिक लोहे के हथियार, जो कि यूरोप में 10वीं शताब्दी बी सी ई तक के हैं, वे कांस्ययुगीन सभ्यताओं के समान निर्मित थे।

यूरोप की उत्तर कांस्ययुगीन सभ्यतायें जैसे कि पश्चिमी हंगरी की कलश संस्कृति (1800-1200 बी सी ई) केन्द्रीकृत नहीं थीं, लेकिन उन्होंने अपने वातावरण का अच्छी तरह से उपयोग किया। उनमें किसान, व्यापारी तथा धातुकर्मी शामिल थे। 1000 बी सी ई के पश्चात् उन्होंने अपने व्यापारिक संबंधों द्वारा पूरे यूरोप में लोहे की तकनीकी के प्रसार में मदद की। प्रायः ऐसा माना जाता है कि लोहे की तकनीकी का सर्वप्रथम विकास एनातोलिया में हुआ तथा अन्य क्षेत्रों में उसका प्रसार पूर्वी भूमध्यसागरीय इलाकों में बसने वाले समूहों तथा काला सागर के अर्द्ध-

घुमन्तू समुदायों द्वारा हुआ। प्रारंम्भिक लौह वस्तुओं में अन्य वस्तुओं के अतिरिक्त कांस्य की तलवार की मूठ स्विटज़रलैंड से तथा तलवार ब्लेड और तीर फ्रांस से मिले हैं।

जैसा कि पहले वर्णित किया जा चुका है कि लौह तकनीकी कांस्य से अलग थी, लेकिन लौह धातु के सस्ता तथा प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होने के कारण इसका प्रयोग औज़ार तथा हथियार बनाने में किया गया। लोहे के प्रयोग से कृषि क्षेत्र में जैसे कि कुल्हाड़ी, कुदाली, हल के फाल से अधिक उत्पादन तथा बेहतर भोजन अधिशेष ने यूरोप में परिवर्तन लाने में मुख्य भूमिका अदा की। हम इसकी विस्तृत जानकारी यूरोपीय लौह युग की प्रारंम्भिक संस्कृति में एक अध्ययन के रूप में हॉलस्टॉट संस्कृति में देखेंगे।

हॉलस्टॉट संस्कृति

हॉलस्टॉट संस्कृति दक्षिण ऑस्ट्रियाई शहर साल्ज़बर्ग में विकसित हुई जहां कब्रों में सुनहरी अंबर, कांच, कांस्य तथा लोहे के साक्ष्य मिले हैं। तलवार, खंजर, कुल्हाड़ी भी बड़ी मात्रा में प्राप्त हुई हैं। हॉलस्टॉट संस्कृति मध्य यूरोप में कांस्य से लौह युगीन सभ्यता के संक्रमण को दर्शाती है। उस क्षेत्र में हॉलस्टॉट संस्कृति आठवीं तथा सातवीं शताब्दी बी सी ई में विकसित हुई जहां से यह द्वितीय सहस्राब्दी बी सी ई में पश्चिमी हंगरी की अर्नफील्ड (कलश) संस्कृति, जो कि योद्धा समूह थे, में फैली। उन्हें उनकी दफन संस्कृति के आधार पर परिभाषित किया जाता है जिसमें वे मृतकों का दाह संस्कार कर उसकी राख को एक कलश में दफन करते थे। कालांतर में उनका प्रसार यूरोप के मध्य तथा पश्चिमी क्षेत्रों में हुआ। वे अपनी कांस्य कलाकृतियों तथा किलेबंदी के लिए जाने जाते थे।

हॉलस्टॉट 800 बी सी ई में ऑस्ट्रियन आल्पस में एक मुख्य व्यापार केन्द्र के रूप में विकसित हुआ। नमक की खानों के पास के कब्रिस्तान से कांस्य की वस्तुओं के अतिरिक्त प्रारम्भिक लौह युग के कई लोहे के हथियार जैस चाकू, बाणाग्र, तलवारें आदि प्राप्त हुये हैं। इस क्षेत्र में व्यापार विकसित था तथा ये क्षेत्र शीघ्र ही व्यापारिक केन्द्र के रूप में विकसित हो गया जैसे कि ह्यूनबर्ग। इस काल की प्रमुख विशेषता लकड़ी के बने कमरों में शवाधानों की उपस्थिति थी। कब्रें योद्धा समूह को इंगित करती हैं क्योंकि उनके साथ हेलमेट, कवच तथा अन्य दूसरे प्रकार के बर्तन, जो कांस्य के बने थे, दफन किये गये हैं। कब्र से प्राप्त तलवारें लोहे की बनी हुई हैं तथा कभी-कभी वे कांस्य की भी बनी हुई थीं।

हॉलस्टॉट काल में पश्चिम-मध्य यूरोप के अभिजात वर्ग ने पहाड़ी के ऊपर मजबूत किले रूपी बस्तियां बनाईं जो कि प्रशासनिक केन्द्र भी थीं। उन्होंने अपने मृतकों को आकर्षक आभूषणों, कवच तथा हथियारों के साथ दफनाया। इससे पता चलता है कि यह एक ऐसा समाज था जिसमें युद्ध तथा छापेमारी प्रमुख पहलू थे। इनके भूमध्यसागर के साथ भी अच्छे संबंध थे। पीटर एस. वैल्स (1994) ने किले वाले क्षेत्र को शहर के रूप में परिभाषित किया है, जहां व्यापारिक कार्यकलाप भी होते थे जबकि आर्नोल्ड का मानना है कि यह मात्र प्रतीकात्मक था। हॉलस्टॉट सभ्यता के अंतिम चरण में छोटी तलवारें प्रमुख थीं तथा 500 बी सी ई तक इसके कुछ केन्द्र पश्चिम की तरफ चले गये। ह्यूनबर्ग हॉलस्टॉट शासक का एक ऐसा ही केन्द्र था। यह डेन्यूब, जर्मनी, की पहाड़ी पर स्थित था। यहां किलेबंदी का नवीनीकरण 650-450 बी सी ई में किया गया। दीवारें कभी-कभी मिट्टी की ईंटों से बनी होती थीं, जो कि भूमध्यसागरीय प्रभाव को दर्शाता है। वे लोग मसालिया के साथ, जो राइन के पास यूनानियों का एक व्यापारिक केन्द्र था, काले अंजीर, फूलदानों, सिल्क आदि के अलावा जगों तथा जारों (amphorae) का व्यापार किया करते थे।

अभिजात वर्ग द्वारा एकत्रित धन को कब्रों में देखा जा सकता है। इन कब्रों में लकड़ी की वस्तुओं, मनकों, बर्तनों के अलावा कांस्य की बनी अनेक वस्तुएं प्राप्त होती हैं। हालांकि

भूमध्यसागर से व्यापार पूर्ण रूप से नहीं रूका लेकिन व्यापारिक संबंधों में पतन आया। 400 बी सी ई में इस क्षेत्र को छोड़ दिया गया तथा उसके बाद की कब्रें यहां नहीं प्राप्त होतीं। हॉलस्टॉट संस्कृति के बाद यहां ला तेने (La Tene) संस्कृति विकसित हुई जो उत्तर लौह युग की है और इसका कार्यकाल 600-400 बी सी ई का है। इस काल में उत्पादन तथा व्यापार के क्षेत्रीय केन्द्र पोलैण्ड तथा दूसरे इलाकों में विकसित हुये। इस काल में लोहे का प्रचलन और बढ़ा तथा उसका उपयोग सभी वर्ग करने लगे, और अब यह सिर्फ अभिजात वर्ग तक ही सीमित नहीं रह गया था।

बोध प्रश्न-3

1) यूरोप में लोहे के विकास का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

2) हॉलस्टॉट संस्कृति के काल में स्थापित बस्तियों की प्रकृति क्या थी?

....

....

....

....

....

10.8 सारांश

प्रथम तथा द्वितीय सहस्राब्दी बी सी ई में एशिया तथा यूरोप में हुए तकनीकी परिवर्तनों में लौह प्रौद्योगिकी प्रमुख थी। लोहे की तकनीकी, मुख्य रूप से कार्बुराइज़ेशन तथा क्वेंचिंग तकनीकों की शुरुआत के कारण, इससे बढ़िया तथा मज़बूत हथियार तथा उपकरण बनाना संभव हुआ। हालांकि प्रथम चरण के दौरान लोहे को एक मूल्यवान धातु समझा गया तथा यह राजशाही का प्रतीक था। लेकिन बाद के चरणों में इसने रोज़मर्रा की जिंदगी को प्रभावित किया। लोहा एक कठोर तथा ठोस धातु होने के साथ-साथ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध था। शुरुआत में इसका प्रयोग हथियार बनाने में किया गया लेकिन जैसे-जैसे तकनीकी में विकास हुआ उससे अच्छे तथा मज़बूत उपकरण बनाये जाने लगे, जिन्हें बाद में कृषि क्षेत्र में भी प्रयोग किया गया। सभ्यता के प्रसार के साथ घुड़सवार योद्धा वर्ग, धन के आदान-प्रदान, शहर, व्यापार आदि में लोहा प्रमुख परिवर्तन लाया। हथियारों से लेकर कृषि उपकरणों तक लोहे के विभिन्न निहितार्थ प्रभावों को देखा जा सकता है।

10.9 शब्दावली

कार्बुराइज़ेशन : लोहे को कार्बन पदार्थ तथा चारकोल के साथ गर्म करने की प्रक्रिया जिससे धातु कठोर होती है।

उल्का	:	आकाशीय छोटी चट्टानें या धातु पदार्थ
उल्का लौह	:	उल्कापिंडों में पाया जाने वाला लोहा
अयस्क	:	प्राकृतिक चट्टान या मिट्टी जिससे धातु या खनिज निकाला जा सकता है।
क्वेंचिंग	:	धातु को जल्दी से पानी, तेल या हवा के दबाव से ठंडा करने की प्रक्रिया जिससे विशेष धातु प्राप्त की जा सके, जैसे कि उसे कठोर करना।
प्रगलन	:	एक अयस्क को उसके पिघलाने वाले तापमान से अधिक गर्म करना जिससे शुद्ध धातु प्राप्त की जा सके।
टैम्परिंग	:	धातु को पुनः गर्म करने की प्रक्रिया जिससे इसे मज़बूत तथा कठोर बनाया जा सके।
स्थलीय लौह	:	पृथ्वी से निकलने वाला लोहा

10.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) लिखित साक्ष्य तथा पुरातात्विक साक्ष्यों का उल्लेख करें जो लोहे के प्रारम्भिक प्रयोग को दर्शाते हैं। साथ में लोहे के धीरे-धीरे बढ़ते उपयोगों का वर्णन करें। उप-भाग 10.4.1 और 10.4.2 देखें

2) ब्लूमरी प्रक्रिया को बतायें तथा कैसे कार्बुराइज़ेशन, क्वेंचिंग तथा टैम्परिंग से लोहे को मज़बूत बनाते थे और यह तांबे तथा दूसरी धातुओं से लोहे को अलग करता है। भाग 10.3 देखें

बोध प्रश्न-2

1) नये राज्यों के उदय के बारे में लिखें तथा उन्होंने कैसे लोहे के हथियारों तथा घोड़ों को अपना आधार बनाया। भाग 10.6 देखें

2) 'लौह पत्र' को संदर्भित करें तथा दूसरे साक्ष्यों को बतायें जो हिट्टियों की सर्वोच्चता की बात करते हैं। विद्वान इस अवधारणा को खारिज क्यों करते हैं। उसका कारण भी स्पष्ट करें। भाग 10.6 देखें

बोध प्रश्न-3

1) यूरोप में लौह युग की शुरुआत के बारे में बतायें। भाग 10.7 देखें

2) शहरों की उत्पत्ति के बारे में बतायें तथा फलती-फूलती बस्तियों के बारे में भी बतायें। भाग 10.7 देखें

10.11 संदर्भ ग्रंथ

चाइल्ड, वी. गॉर्डन. 1928. 'दे ओरिजिन ऑफ सम हॉलस्टॉट टाइप्स'. *मैन,* 28: 191-193.

चाइल्ड, वी. गॉर्डन. 1956. *व्हॉट हैपन्ड इन हिस्ट्री.* हारमोन्ड्सवर्थः पेरेग्रिन बुक्स.

कॉर्डानी, वियोलेट्टा. 2016. 'द डेवलपमैंट ऑफ हिट्टाइट आयरन इंडस्ट्री, ए रिअप्रजल ऑफ द रिटन सोर्सिज'. *डाइ वेल्ट देस ऑरियण्ट्स.* बीडी. 46. एच. 2: 162-176.

दानी, ए. एच. एवं जे. पी. मोहन. 1996. (सं). *हिस्ट्री ऑफ ह्यूमैनिटी.* भाग 2, लन्दन.

लिवरानी, मारियो. 1996. *इकॉनोमिक एण्ड सोशियो-पॉलिटिकल डैवलपमेंट्स'. हिस्ट्री आफ ह्यूमैनिटी.* भाग-2. ए. एच. दानी एवं जे. पी. मोहन (सं). पृ. 126:141.

मॉरिस, इआन. 1989. 'सर्कुलेशन, डिपोज़िशन, एंड द फार्मेशन ऑफ द ग्रीक आयरन ऐज'. *मैन.* न्यू सीरीज. भाग 24. नं. 3: 502-519.

मुहली, जे. डी. आर. मेड्डिन, टी. स्टेच एवं ऑजगैन. 1985. 'आयरन इन अनातोलिया एण्ड द नेचर आफ द हिट्टाइट आयरन इंडस्ट्री'. *अनातोलियिन स्टडीज.* 35: 67-84.

मुहली, जे.डी., आर. मेड्डिन, टी.एस. व्हीलर. 1977. 'हाउ द आयरन ऐज बिगेन'. *साइंटिफिक अमेरिकन.* भाग 234. नं. 4: 122-131.

प्लैनर, रैडोमीर. एवं जूडिथ के. ब्जोर्कमन. 1974. 'द असीरियन आयरन एजः द हिस्ट्री ऑफ आयरन इन द असीरियन सिविलाइजेशन'. *प्रोसीडिंग्स आफ द अमेरिकन फिलोसोफिकल सोसाइटी.* 118 (3): 283-313.

विलार्ड, पियरे. 1996. 'द बिगनिंग आफ द आयरन ऐजः इन्वेंशन आफ आयरन वर्क एण्ड इट्स कॉन्सीक्वेंसेज़'. *हिस्ट्री आफ ह्यूमैनिटी.* भाग 2. संपादित ए. एच. दानी एवं जे. पी. मोहन. (लंदन) पृ. 190-204.

वेल्स, पीटर. एस. 1994. 'चेंजिंग माडल्स आफ सैट्लमैंट, इकोनामी, एण्ड रिचुअल एक्टिविटीः रिसेंट रिसर्च इन लेट प्रीहिस्टोरिक सेंट्रल यूरोप'. *जर्नल ऑफ आर्कियोलॉजिकल रिसर्च.* भाग 2: 135-163.

याल्सीन, उनसल. 1999. 'अर्ली आयरन टैक्नोलॉजी इन अनातोलिया'. *अनातोलियन स्टडीज.* भाग 49. *अनातोलियन आयरन ऐजेज़ 4. प्रोसीडिंग्स ऑफ द फोर्थ अनातोलियन आयरन ऐजेज़ कोलोक्यूअम. मेर्सिन* में आयोजित. पृ. 177-187.

पी डी एफः

http://www/jstor.org/stable/pdf/25800588.pdf?refreqid=search%3Ab02adf8dac2d1c844bb8ccc05d03ecfb

http://www/jstor.org/stable/pdf/2802704.pdf?refreqid=search%3Ab07df0441c61f05a888alacbf095a7afaa

http://www/jstor.org/stable/pdf/2802442.pdf?refreqid=search%3Af102c8446f36316dcad0c8119dd09c2f

http://www/jstor.org/stable/pdf/41407098.pdf?refreqid=search%3A8ea56e0714093a0629f6c0a4cf660d0e

10.12 शैक्षणिक वीडियो

प्रीहिस्टॉरिक आयरन स्मैल्टिंग डैमोस्ट्रेशन्स
https://www.youtube.com/watch?v=KP4DjM3jBsw

फॉरगॉटन एम्पायर्सः द हिट्टाइट किंगडम। डिस्कवरी हिस्ट्री चैनल
https://www.youtube.com/watch?v=5SmUAIFFwbk

इकाई 11 मध्य और पश्चिम एशिया में खानाबदोश समूह*

इकाई की रूपरेखा

11.1 उद्देश्य

11.2 प्रस्तावना

11.3 भौगोलिक विशेषताएं: मध्य एशिया

11.4 मध्य एशिया में खानाबदोश जीवन का विकास

11.5 मध्य एशिया में खानाबदोश और खानाबदोश साम्राज्य

11.6 बेदुइन (बद्दू): पश्चिम एशिया के खानाबदोश

11.7 मध्य एशिया के प्रमुख खानाबदोश समूह

- 11.7.1 सीथियन
- 11.7.2 ज़िआँगनू
- 11.7.3 हूण
- 11.7.4 वुसुन
- 11.7.5 तुर्क
- 11.7.6 मंगोल

11.8 राजनीतिक संरचना

11.9 खानाबदोश समाज

11.10 खानाबदोश कला

11.11 सारांश

11.12 शब्दावली

11.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.14 संदर्भ ग्रंथ

11.15 शैक्षणिक वीडियो

11.1 उद्देश्य

इस इकाई में मोटे तौर पर सातवीं शताब्दी बी सी ई से मध्य और पश्चिम एशिया के प्रमुख खानाबदोश समूहों पर चर्चा की जाएगी। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- खानाबदोश जीवन के बारे में व्याख्या कर पाएंगे,
- खानाबदोशों और पशुपालक खानाबदोशों में भेद कर पाएंगे,
- मध्य और पश्चिम एशिया में खानाबदोशों के विकास को समझ पाएंगे,

* डॉ. बिंदु साहनी, फेलो, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडी, शिमला

- मध्य और पश्चिम एशिया के प्रमुख खानाबदोश समूहों की पहचान कर पाएंगे, और
- प्रमुख खानाबदोश समूहों के सांस्कृतिक, राजनीतिक और सामाजिक जीवन के बारे में जान पाएंगे।

11.2 प्रस्तावना

खानाबदोश, पशुचारी खानाबदोश और खानाबदोश साम्राज्य मध्य और पश्चिम एशिया की महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं। मध्य एशिया की खानाबदोश जनजातियों ने हमेशा इतिहासकारों का ध्यान आकर्षित किया है और इन्होंने खानाबदोश इतिहास की दुनिया में एक विशेष स्थान प्राप्त किया है। अपने विविध परिदृश्य के कारण मध्य एशिया कई प्रकार की आबादियों का घर रहा है।

स्थिर जीवन और स्थिरता एक ही स्थान पर मनुष्यों के वास को दर्शाती है, जो प्रायः कृषि द्वारा अपना जीवन यापन करते हैं। दूसरी ओर, खानाबदोश समूह वे हैं, जो एक स्थान से दूसरे स्थान घूमते रहते हैं। खानाबदोश जीवन अपनाने के लिए बुनियादी कारक क्षेत्र विशेष की पर्यावरणीय स्थिति होती है। मध्य एशिया के संदर्भ में खानाबदोश और स्थिर जीवनयापन करने वाले एक दूसरे के समकालीन हैं। कुछ खानाबदोश समूहों ने भोजन-संग्रहण के साथ-साथ पशुचारी खानाबदोश जीवन अपनाया, जिसने आगे चलकर खानाबदोश साम्राज्य की स्थापना के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

अंतिम कांस्य युग में आखेटक-संग्रहकों ने परिवारों के छोटे समूह में रहना शुरू किया, इस प्रकार जनजातियों के गठन की शुरुआत हुई। इन जनजातियों ने पालतू पशुओं को रखना शुरू कर दिया, जिनके लिए चरागाह[1] की तलाश में उन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान जाना पड़ता था। इन शक्तिशाली पशुचारी खानाबदोश समूहों के उदय के साथ, इन्होंने कृषि समाजों पर हमला करना भी शुरू किया, जिसने खानाबदोश साम्राज्यों के गठन का मार्ग प्रशस्त किया।

ए. एम. खजानोव के अनुसार, 'पशुचारी खानाबदोश एक ऐसी खाद्य अर्थव्यवस्था है, जहां पूरा समुदाय भोजन की आपूर्ति के लिए अपने पालतू पशुओं पर निर्भर रहता है'। इस प्रकार खानाबदोश, पशुचारी खानाबदोशों से पूरी तरह अलग हैं। खानाबदोशों में वे लोग शामिल हैं जो अपने अस्तित्व के लिए भोजन की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान घूमते रहते हैं। जबकि पशुचारी खानाबदोश, वे खानाबदोश हैं जो अपनी आजीविका के लिए पालतू पशुओं को साथ में रखते थे और अपने पशुओं के लिए चरागाहों की तलाश में ऐसे स्थानों को पलायन भी करते थे जहां इन पशुओं की सभी आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। मध्य एशिया के लोगों ने पशुचारी खानाबदोश जीवन को अपनाया, जो पूरी तरह से आजीविका के लिए अपने पशुओं पर निर्भर थे। अपने झुंड के लिए उन्हें व्यापक चरागाहों की आवश्यकता थी। अतः वे 4 से 5 परिवारों के समूहों में रहते थे। विभिन्न मौसमी तिमाहियों में वे अपने पशुओं के झुंड के साथ एक जगह से दूसरी जगह पलायन करते थे। सर्दियों में शिविर के लिए वे जंगलों के पास के स्थानों और पहाड़ों की घाटियों में रहते थे।

खानाबदोश जीवन एक या संयुक्त अर्थव्यवस्थाओं पर निर्भर होता है, जिसमें पशुपालन, भोजन संग्रहण कृषि अथवा व्यापार शामिल हैं। खानाबदोश दुनिया की इन विशेषताओं की उत्पत्ति को समझने के लिए सबसे पहले उन परिस्थितियों को समझना होगा जिन्होंने मध्य और पश्चिम एशिया में उनके विकास में मदद की।

---

[1] चरागाह वह भूमि है, जो घास और दूसरे पौधों से आच्छादित होती है और जो पशुओं, विशेष रूप से गाय या भेड़, के चरने के लिए उपयुक्त होती है।

11.3 भौगोलिक विशेषताएं : मध्य एशिया

मध्य एशिया में आधुनिक कजाकिस्तान, उज़्बेकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान, किर्गिस्तान और ताजिकिस्तान के हिस्से शामिल हैं। इस क्षेत्र की प्राकृतिक परिस्थितियों और जलवायु में अत्यधिक विविधता है। क्षेत्रीय रूप से पश्चिम और उत्तर में व्यापक मैदान हैं, जबकि दक्षिणी और पूर्वी क्षेत्र पहाड़ी हैं। कोपेत दाग की पर्वत शृंखला जो दक्षिण पश्चिम से पामीर और पूर्व में तीअन शान तक फैली है, यह अन्य क्षेत्रों से मध्य एशिया को अलग करती है। मध्य एशिया की वन पट्‌टी की चौड़ाई 500 से 1000 मील (800 से 1600 किलोमीटर) और दक्षिण पट्‌टी हंगरी से मंगोलिया तक मध्य एशिया के स्टैप्स मैदानों तक फैली हुई है। इस प्रकार मध्य एशिया में विशाल घास के मैदान थे, और यह क्षेत्र द्वीपों, समुद्रों और झीलों से समृद्ध था, जिसने खानाबदोश साम्राज्यों के विकास में सहायता प्रदान की।

मानचित्र 11.1: मध्य एशिया

साभार : काकाहुआत

स्रोत: विकीमिडिया कॉमंस (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Map_of_Central_Asia.png)

इसके पश्चिम में कैस्पियन सागर तथा पूर्व में बाल्खश झील है, जबकि अराल सागर महाद्वीप के केंद्र में है। यहां दो प्रमुख नदी तंत्र हैं, अमू दरिया ओर सीर दरिया, जो अराल सागर में मिलते हैं। अराल सागर दक्षिण और पश्चिम में दो रेगिस्तानों से घिरा हुआ है, करा कुम ('काली रेत' के रूप में जाना जाता है) और किज़िल कुम ('लाल रेत' के रूप में जाना जाता है)। करा कुम रेगिस्तान उत्तरी तुर्कमेनिस्तान में है और यहां पौधों और सब्जियों की पैदावार के लिए पर्याप्त वर्षा होती है। किज़िल कुम कजाकिस्तान, उज्बेकिस्तान और आंशिक रूप से तुर्कमेनिस्तान में है। इस रेगिस्तान में बसंत के मौसम में हरियाली छा जाती है और यहां सब्जियां और पौधे विरल खानाबदोश आबादी के पोषण करने के लिए पर्याप्त थे।

इनके अलावा, इस क्षेत्र में तीन नखलिस्तान (oasis) हैं – अमू दरिया के पास खीवान नखलिस्तान, ज़रफशान (जेरावशान) घाटी जो समरकंद को बुखारा से जोड़ती है और फरगना घाटी जो पामीर के उत्तर में स्थित है। इन क्षेत्रों में पहाड़ और स्टैप्स (घास के मैदान) हैं जो कृषि के लिए अनुपयोगी थे, लेकिन उनके समृद्ध चरागाह, खानाबदोश आबादी के निवास के लिए उपयुक्त स्थान थे।

मध्य एशिया की सर्वाधिक प्रमुख भौगोलिक विशेषता समुद्री प्रभाव से इसका पूर्ण पृथक्करण है। जल जीवन के लिए आवश्यक है, लेकिन मध्य एशिया ऐतिहासिक रूप से एक ऐसा भौगोलिक क्षेत्र रहा है जहां पानी की कमी थी। इसके अलावा, ऊँची पहाड़ियाँ मध्य एशिया से गर्मियों में बहने वाली हवाओं और मानसून को पूरी तरह से रोकती थीं। उच्च दवाब और हवाओं ने भी सर्दियों की भूमध्यसागरीय बारिश को अवरूद्ध किया। केवल अटलांटिक से गर्मी में पश्चिमी हवा का प्रवाह ही मध्य एशिया तक पहुंचा, लेकिन उसमें भी समय-समय पर परिवर्तन होता रहता था। हवा पतले जलमार्ग (gully) में स्थित कम दबाव की दिशा में अवश्य बहती थी, जो उत्तरी ध्रुवों में उच्च दबाव तथा दक्षिण में सहारा के उच्च दबाव के मध्य स्थित था, इसके बावजूद मध्य एशिया में वर्षा सीमित तथा अनियमित थी।

इस स्थिति में वहां मनुष्य के लिए दो विकल्प थेः जहां पानी उपलब्ध था उन स्थानों पर रहना या जहां भी पानी प्राप्त हो उस मार्ग का अनुगमन करना। इसका अर्थ था कि खाद्य फसलों की कृषि[2] की भूमि का पूर्ण रूप से परित्याग करना। खानाबदोश जनजातियों ने पशुचारी अर्थव्यवस्था को अपनाया, जिसने पुरुषों को खेती-बाड़ी के परिश्रम से दूर रखा तथा एक स्थायी वास को अनावश्यक बना दिया (हंबली 1966ः 10)।

11.4 मध्य एशिया में खानाबदोश जीवन का विकास

छठी सहस्राब्दी बी सी ई से चौथी सहस्राब्दी बी सी ई तक मध्य एशिया शिकारी-संग्राहक और मछली पकड़ने वाली आबादी का निवास स्थान था। 2000 बी सी ई के आसपास कई समुदायों ने धातु के प्रयोग की शुरुआत की जिसने कांस्य युग के लिए मार्ग प्रशस्त किया। मध्य एशिया में खानाबदोश सामाजिक संरचना के गठन की शुरुआत कांस्य युग के अंतिम चरण में हुई (13 से 12वीं शताब्दी बी सी ई)। कांस्य युग में इन शिकारी-संग्राहक और मछली पकड़ने वाली जनसंख्या ने समूहों में व्यवस्थित होना शुरू किया (आमतौर पर ये अलग-अलग परिवार थे) और एक साथ पलायन भी किया करते थे। शिकारी-संग्राहकों के इन समूहों के संगठन ने मध्य एशिया क्षेत्र में छोटी जनजातियों के गठन का मार्ग प्रशस्त किया। 'यहाँ शिकारी और मछुआरों की संस्कृति, जिन्होंने एक प्रकार की उत्पादक अर्थव्यवस्था को अपनाया, ने दूसरी सहस्राब्दी बी सी ई में स्टैप्स और अर्द्ध रेगिस्तान के पशुचारी निवासियों को विस्थापित कर दिया जिन्होंने तथाकथित स्टैप्स की कांस्य युग सभ्यता को जन्म दिया' (दानी, 1993ः 327)। 4500 बी सी ई तक आते-आते छोटे समुदायों ने उस क्षेत्र में स्थाई बस्तियां विकसित कर लीं तथा वे पशुपालन के साथ कृषि में भी संलग्न होने लगे। कजाकिस्तान के विशाल क्षेत्र, विशेष रूप से भूगर्भीय स्थितियों के अनुसार, खानाबदोश जीवन के प्रसार के लिए एक महत्वपूर्ण क्षेत्र था। बिखरे हुए खानाबदोश समूह भेड़, बकरी, घोड़े और ऊंट के झुंड रखते थे और उन्होंने पलायन के समय परिवहन के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान जाने के लिए नए चरागाह खोजने में उनका प्रयोग किया। मनुष्य द्वारा चरागाहों के खोजने के इस अभ्यास को ट्रांसह्यूमन्स (transhumance) के रूप में जाना जाता है। ये खानाबदोश घोड़े, ऊंट, भेड़, गाय-बैल, याक आदि पालते थे और उनसे भोजन और कपड़े भी प्राप्त करते थे। ये समूह आश्रय, ईंधन, परिवहन, अनाज और धातु के लिए अपने स्थायी निवासी कृषक पड़ोसियों पर निर्भर थे, जो उन्हें खानाबदोश जीवन से मिलना संभव नहीं था।

खानाबदोश संस्कृति स्टैप्स के घास के मैदानों में घोड़े को पालतू बनाने के साथ शुरू होती है। प्रारंभ में घोड़ों को केवल भोजन के स्रोत के रूप में और मांस के लिए रखा गया था। मेसोपोटामिया, मिस्र और चीन की सभ्यताओं के वासी अच्छी तरह से घोड़े से परिचित थे, लेकिन उन्हें घुड़सवारी की जानकारी नहीं थी। यह केवल 4000 बी सी ई के आसपास हुआ

[2] कृषि योग्य खेती एक ऐसी कृषि प्रणाली है जिसमें फसलों के उत्पादन पर ध्यान केंद्रित किया जाता है। इसके विपरीत पशुचारी खेती, कृषि का वह रूप है जिसका मुख्य उद्देश्य पशुधन उत्पादन करना है।

जब रथ और चौपहिया गाड़ी को खींचने के लिए परिवहन में घोड़ों का इस्तेमाल किया गया। इस अवधि में मनुष्य ने घोड़े को पालना शुरू कर दिया। पहिया-गाड़ी का प्रयोग मेसोपोटामिया सभ्यता द्वारा पहिए के प्रयोग के बाद किया गया। मेसोपोटामिया से पहिए की गाड़ियों का उपयोग मध्य एशिया की ओर फैला। तीसरी सहस्राब्दी बी सी ई तक घोड़े रथों को खींचने के लिए इस्तेमाल किए जाने लगे। खानाबदोश समूहों ने 2000 बी सी ई के आसपास पहियों वाले युद्ध रथों का उपयोग शुरू किया। 2000 बी सी ई के आसपास, घोड़े के उपयोग की प्रवृत्ति तथा पानी की कमी के कारण इस क्षेत्र में व्यापक कृषि कार्य में बाधा पैदा हुई। पीटर बी. गोल्डन (2011: 10) लिखते हैं कि '2000 बी सी ई से कुछ निर्वाह कृषक अगर पूरी तरह से न सही, काफी हद तक, अपने झुंडों पर निर्भर थे तथा मौसमी स्थानांतरणों में व्यस्त थे, जो स्टैप्स क्षेत्र में चरागाह स्थापित करते थे। वे पशुचारी खानाबदोश बन गये'। 2000 बी सी ई के आसपास घोड़ों के उपयोग तथा पानी की कमी से सिंचाई में कमी हुई जिसने इस क्षेत्र में व्यापक कृषि के प्रयोग में बाधा पहुंचाई। यह मध्य एशिया में खानाबदोश जीवन की उत्पत्ति का मुख्य कारण था।

जब तक मध्य एशिया के खानाबदोश घोड़े से अच्छी तरह से परिचित हुए, यूरेशिया के स्टैप्स क्षेत्र के खानाबदोशों ने घोड़े पर सवार होने के साथ-साथ लोहे की सीट का प्रयोग शुरू कर दिया था। इस काल को स्टैप्स में 'घोड़े की संस्कृति' के काल के रूप में जाना जाता है। सबसे पहले सीथियनों द्वारा घोड़े पर लोहे की चादर को सवारी के लिए प्रयोग किया गया। सीथियनों ने सवारी के लिए काठी[3] (saddle) का भी प्रयोग किया। लगभग इसी समय अलान कबीले (खानाबदोश समूह जो पहले से ही लोहे से परिचित था) ने **रकाब**[4] (stirrup) का उपयोग शुरू किया था।

घुड़सवारी ने इन खानाबदोशों की वेशभूषा में एक भारी परिवर्तन लाया, उन्होंने पायजामा पहनना शुरू किया, जिसने सवारी के समय पैरों के स्वतंत्र प्रयोग में मदद की। सीथियनों ने चमड़े के जूतों का उपयोग भी शुरू किया। चमड़े के जूतों का उपयोग मध्य एशिया में शुरू हुआ और धीरे-धीरे दुनिया के अन्य भागों में फैला। घुड़सवार के शरीर का ऊपरी भाग एक कोट द्वारा ढका होता था। सीथियन एक रक्षात्मक कवच भी पहनते थे, जो एक ढाल (shield) के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। कवच में छाती पर लगाने की एक सुरक्षा प्लेट शामिल थी, जो ऊपर सुरक्षा के लिए पहनी जाती थी। उनके द्वारा हेलमेट का भी इस्तेमाल किया जाता था। ये सभी वस्तुएं चमड़े की बनी होती थीं।

घोड़े की शक्ति के अनुभव तथा घुड़सवारी की शुरुआत के साथ खानाबदोश समूहों ने रथों का प्रयोग छोड़ दिया और सवारी के लिए अलग-अलग घोड़ों का प्रयोग किया जाने लगा। स्टैप्स के पहाड़ी क्षेत्रों में रथ के बजाय घुड़सवारी (लगभग 1700-1500 बी सी ई) अधिक आरामदायक तथा त्वरित थी (गोल्डन, 2011: 11)। घुड़सवारी इस प्रकार एक महत्वपूर्ण कारक था, जिसने क्षेत्र में खानाबदोशों के वर्चस्व को अगली कई सहस्राब्दियों के लिए स्थापित कर दिया (मैकगवर्न, 1939: 47)। घोड़े के साथ-साथ गाय, भैंस, ऊंट और याक को परिवहन के लिए इस्तेमाल किया गया और जो खानाबदोशों की दुग्ध की जरूरतों को पूरा करने में भी सक्षम थे। इन जानवरों में से प्रत्येक की निर्वाह आवश्यकताएं, घास और चराई के मामलों में भिन्न थीं, उनकी नस्लें बनाई गईं और वे स्टैप्स क्षेत्र के विभिन्न इलाकों में महत्वपूर्ण साबित हुईं।

---

[3] गद्दी जिसे घोड़े की पीठ पर बांधा जाता था।

[4] फंदा अथवा छल्ला (बाद में लोहे का बनने लगा) जो घोड़े की काठी के दोनों तरफ जुड़ा होता था जो घोड़े पर सवार होने और सवारी करते समय सवार के पैर की पकड़ को स्थिर रखने में सहायता प्रदान करता था।

खानाबदोश जनजातियों की एक महत्वपूर्ण विशेषता उनकी बस्तियां थीं। खानाबदोश जनजातियां होने के नाते वे टैंट में रहते थे तथा उन्होंने स्थाई घरों का निर्माण नहीं किया। मध्य एशिया के खानाबदोश विशेष तंबू में निवास करते थे, जिन्हें ***युर्त*** के रूप में जाना जाता है। एक समूह के लिए कई *युर्त* होते थे, जिसमें प्रत्येक में 5 लोग रह सकते थे। *युर्त* 'लकड़ी का हल्का सा ढांचा होता था जो जानवरों की खालों अथवा ऊनी कपड़े (felt) से ढका होता था, जिसे आसानी से बनाया और हटाया जा सकता था' (हरमट्टा, 1994ः 485)। उनकी विशेषता थी कि वे किसी अन्य तंबू की तरह हटाए और आसानी से ले जाये जा सकते थे। खानाबदोश समूहों में *युर्त* के प्रकार जनजाति विशेष की स्थिति को इंगित करते थे। *युर्त* सामाजिक पदानुक्रम के अनुसार उप-विभाजित किए गए। 'खानाबदोश विशेष की जितनी अधिक प्रतिष्ठा होती थी उसका उतना ही बड़ा *युर्त* होता था' (एडले इत्यादि, 2008ः 121)। *ये युर्त* आकार में बेलनाकार अथवा गोल होते थे तथा उनकी छतें शंकु आकार की होती थीं। *युर्त* आमतौर पर खाल, लकड़ी और विलो (willow) वृक्ष की शाखाओं, जो चमड़े की आड़ी शहतीर से जुड़ा होता था और साथ ही खाल की परतों से या बुने हुए कालीनों से ढका जाता था। *युर्त* के ढांचे में लकड़ी की जाली द्वारा 6 से 10 तक अलग-अलग खंड किए जाते थे जिसे आसानी से बड़ा अथवा छोटा किया जा सकता था। पोल बांधकर रखने के लिए छत का ढांचा एक हल्की शहतीर (rafter) से बना होता था जो छत को एक साथ गोलाकार छल्ले में रखने में मदद करता था। *युर्त* के अंदर फर्नीचर सरल और फैल्ट चटाईयों और कालीनों से ढका रहता था। संभवतः मध्य एशिया में बुने कालीनों को शुरुआत में फैल्ट से ही बनाया गया[5]।

चित्र 11.1 : ***युर्त***
साभारः एलेक्जांड्र एल. कुन, 1840-1888
स्रोत:https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Syr_Darya_Oblast._Kyrgyz_Yurt_WDL10968.png

हमें हेरोडोटस के लेखन से, जिसने सीथियनों – पहला खानाबदोश समूह – के बारे में उल्लेख किया है, *युर्त* का सर्वप्रथम संदर्भ 449 बी सी ई में मिलता है। प्राचीन पूर्वी ईरानी मसागेताई खानाबदोशों की तुलना सीथियनों से करते हुए वह लिखते हैं कि 'वे किलेबंद नगरों के बिना रहते थे, सीथियनों की तरह रहने के लिए वे चार पहिए वाली गाड़ी (wagons) का प्रयोग करते थे, जिससे वे जहां भी जाएं अपने साथ ले जाएं, वे घुड़सवारी पर धनुष और तीर से लड़ने में अभ्यस्त थे और अपने भोजन के लिए वह कृषि पर निर्भर नहीं थे, बल्कि अपनी मवेशियों पर निर्भर थे' (हेरोडोटस, 1920ः 47)। हूणों, जिन्होंने रोमन साम्राज्य को नष्ट करके एक महान् खानाबदोश साम्राज्य की स्थापना की, ने भी मध्य एशिया में *युर्त* संस्कृति के प्रचार में योगदान दिया।

---

[5] यह एक प्रकार का मोटा कपड़ा होता था जिसे कसकर, दबाकर और उसके अंदर ऊन भरी जाती थी, अक्सर इसे अन्य फाइबरों के साथ मिलाया जाता था।

संक्षेप में, पशुचारी खानाबदोशों की बुनियादी विशेषता घास के मैदान थे, निर्वाह के लिए जानवर, और गतिशीलता थी। एक साथ मिलकर वे भोजन, कपड़े और आश्रय के लिए मौलिक मानवीय जरूरतों की आपूर्ति कर सकते थे। उनका भोजन, दूध उत्पादों और मांस से प्राप्त होता था। मध्य एशियाई खानाबदोश समूहों के लिबास में भेड़ की खाल, कताई और बुनाई किए हुए ऊनी वस्त्र और चमड़े या फैल्ट से बने जूते शामिल थे। फर (fur) एक विलासिता की वस्तु थी जो जानवर की खाल की परतों से बनाई जाती थी।

खानाबदोश वहां गए जहां पर वे घास प्राप्ति की आशा कर सकते थे। यह कठोर वातावरण और मौसम संबंधी अनिश्चितताओं के खिलाफ निरंतर संघर्ष के साथ एक कठिन जीवन था। फिर भी, इन पशुचारी खानाबदोशों का जीवन आत्मनिर्भरता पर आधारित नहीं था। हालांकि मांस आधारित आहार प्रोटीन से संबंधित था, खानाबदोशों को आहार में कार्बोहाइड्रेट प्राप्त करने के लिए अनाज की जरूरत थी। उन्होंने लोहे के उपकरण और हथियार प्राप्त करने के महत्व को भी महसूस किया। खानाबदोश इस प्रकार मध्य एशिया के स्थायी कृषकों, कारीगरों और व्यापारियों के समूहों पर निर्भर थे जिससे वे अपनी जरूरतों को पूरा कर सकते तथा जीवन स्तर में सुधार कर सकते थे। जब भी संभव हुआ खानाबदोशों ने इन स्थायी समूहों से उत्पादों को खरीदा और कुछ मामलों में अपनी जरूरतों को प्राप्त करने के लिए बल प्रयोग भी किया। बल प्रयोग स्थायी समाज के साथ उनके संघर्ष का कारण बना।

इस प्रकार, खानाबदोश जीवन के विकास का कारण जलवायु परिवर्तन तथा पशु धन की बढ़ती मांग थी, जिसने खानाबदोशों की घरेलू आवश्यकताओं को पूरा किया। इसके अलावा, घुड़सवारी और चार पहिए की गाड़ी आदि नई प्रौद्योगिकियों की शुरुआत ने मध्य एशिया में खानाबदोश जीवन के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

11.5 मध्य एशिया में खानाबदोश तथा खानाबदोश साम्राज्य

जैसा कि पिछले भाग में बताया गया है, मध्य एशिया में खानाबदोश जीवन के विकास में भौगोलिक परिस्थितियों ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। मध्य एशिया में पानी की कमी थी, जिसने लोगों को अपने अस्तित्व के लिए पानी की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर पलायन करने के लिए मजबूर किया। इसने पशुचारी खानाबदोशी को जन्म दिया, जिन्होंने अपना ध्यान 'अपने पशुओं के झुंड के साथ एक चरागाह से दूसरे चरागाह पर एक निश्चित बिंदु के आसपास केंद्रित किया। हालांकि वह निश्चित बिंदु भी गतिशील था; लेकिन आमतौर पर ऐसा एक निश्चित क्रम में था' (एडशीड, 1993: 15)। खानाबदोश हमेशा चरागाह भूमि की ओर स्थानांतरित होते थे।

मध्य एशिया की स्थिति खानाबदोश अर्थव्यवस्था के लिए उपयुक्त थी, 'जिसने खानाबदोशों का कृषि कार्य में कठिन परिश्रम और एक जगह पर स्थायी जीवन व्यतीत करना अनावश्यक बनाया' (हेम्बली 1969: 7)। इस प्रकार, मध्य एशिया के लोगों ने पशुचारी खानाबदोश जीवन को अपनाया, जहां वे पूरी तरह से आजीविका के लिए अपने पशुचारी झुंड पर निर्भर थे।

तीसरी सहस्राब्दी तक, मध्य एशिया के मूल निवासियों ने पशुचारी झुंड रखने शुरू कर दिए थे और पशुपालन उनका मुख्य पेशा बन गया था। यह घोड़े की पीठ पर सवारी करने वाली घुड़सवार आबादी दूसरी सहस्राब्दी बी सी ई के दौरान स्टैप्स में रहने वाले चरवाही समूहों के रूप में उभरी (पीटर, 2011: 10)। इन पशुचारी झुंडों के रखरखाव के लिए स्थानीय निवासी पलायन करने लगे। इसी समय, उन्होंने धनुष का उपयोग प्रारम्भ किया। खानाबदोशी के विकास के पहले चरण में इन समूहों ने घोड़े की सवारी की और अपनी आजीविका के लिए पशुचारी झुंड रखने शुरू किए। दूसरे चरण को लोहे के हथियारों के उपयोग, जैसे कि धनुष, द्वारा चिन्हित किया गया। इन धनुषों की मदद से वे घुड़सवारी के साथ चारों दिशाओं में वार

भी कर सकते थे। हथियारों के इस्तेमाल से इन खानाबदोशों ने स्थिर सभ्यताओं पर वर्चस्व की प्राप्ति की (गोल्डन, 2011: 11)।

इन खानाबदोशों को युद्ध रणनीति पर पूरी महारथ हासिल थी। आमतौर पर संपूर्ण जनजाति घुड़सवारी में निपुण थी और उन्होंने एक योद्धा के रूप में कौशल सिद्ध कर लिया था। इसके विपरीत एक जगह बसे हुए समुदायों में आमतौर पर केवल एक दर्जन प्रशिक्षित सैनिक होते थे। युद्ध में श्रेष्ठता ने, बसे हुए समूहों पर खानाबदोशों को वर्चस्व प्राप्ति में मदद की और इस प्रकार खानाबदोश आसानी से स्थिर सभ्यताओं को जीतने में सक्षम हुए। यदि प्रतिद्वंदी (बसे समूह) मजबूत लगते थे तो ऐसी स्थिति में खानाबदोश युद्धभूमि छोड़ने और भागने को प्राथमिकता देते थे। खानाबदोशों का योद्धा समाज अच्छी तरह से संगठित था और वे पानी और घास की तलाश में सुनियोजित मार्ग और चरागाहों की ओर पलायन करते थे।

खानाबदोश दूध के उत्पादों और मांस, कपड़े, आश्रय और उपकरण, जो मुख्यतः पशु उत्पाद थे, पर हमेशा निर्वाह करने में सक्षम थे। वास्तविक खानाबदोश समूह वे थे जो खेती नहीं करते थे और कृषि उत्पादों के लिए अपने स्थिर (sedentary) पड़ोसियों पर निर्भर थे। वे कृषि उत्पादों और विलासिता की वस्तुएं स्थिर समाजों से प्राप्त करते थे। बदले में वे उन समाजों को सामान (पशुओं की त्वचा से बने सामानों को जो खानाबदोशों द्वारा बनाए गए थे) तथा सेवाएं प्रदान करते थे। स्थिर लोगों ने हथियार, गहने, फैशन और परंपरा में खानाबदोशों का अनुकरण किया।

पशुचारी खानाबदोश स्थिर खेती पर निर्भर थे। मध्य एशियाई खानाबदोश विभिन्न जानवरों को पालते थे, हालांकि घोड़े उनकी धन-सम्पत्ति का प्राथमिक प्रतीक थे तथा जीवन का केंद्र बिंदु थे। बैकविद (2011) की टिप्पणी के अनुसार खानाबदोशों ने स्थिर संस्कृतियों के साथ शांतिपूर्ण व्यापार के माध्यम से अपनी विलासिता की अधिकतर वस्तुओं को हासिल किया। लेकिन स्थिर लोगों ने इस व्यापार प्रणाली में अगर कोई भी बाधा खड़ी की तो खानाबदोश उग्र हो जाते थे और आमतौर पर उनके क्षेत्रों को लूट लेते थे। खानाबदोश जनजातियों को आवश्यक अनाज, हथियार, उपकरण और विलासिता के वस्त्रों की आवश्यकता होती थी। इसी तरह स्थिर लोगों को मांस, ऊन, परिवहन के जानवर, फर, चमड़ा और खानाबदोश समूहों से सुरक्षा की आवश्यकता थी।

खानाबदोश हमेशा लड़ने के लिए तैयार रहते थे और किसी भी स्तर पर अगर वे खुद को असुरक्षित पाते थे तो वे स्थिर क्षेत्रों को लूट लेते थे। दूसरी ओर यदि स्थिर लोगों ने खानाबदोशों को हरा दिया तो वह जीत की एवज में कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाते थे। यही कारण था कि खानाबदोश हजारों सालों तक लड़ाई में जीते नहीं जा सके, उन्होंने लूटमार की और स्थिर समाजों पर अपना वर्चस्व बनाया। उनका रिश्ता संक्षेप में बैकविद द्वारा समझाया गया है जो कहते हैं कि, 'नखलिस्तान (स्थिर आबादी) को सरकार और संरक्षण की जरूरत थीः स्टैप्स के खानाबदोश दोनों प्रदान कर सकते थे। स्टैप्स क्षेत्र में प्रशासन और शिक्षा का अभाव थाः जबकि नखलिस्तान में दोनों थे' (बैकविद, 2011: 25)।

इस प्रकार, खानाबदोश साम्राज्य, स्थिर बसे लोगों पर अपना वर्चस्व स्थापित करने के बाद स्टैप्स के खानाबदोशों द्वारा स्थापित किए गए। जब इन खानाबदोश समूहों को एक से अधिक संख्या से विभाजित किया गया, तो उनमें कभी भी स्टैप्स की स्थिर कृषक बस्तियों के खिलाफ खड़े होने की शक्ति नहीं थी, लेकिन जब वे एक ही समूह में एकजुट हुए तो बसे हुए साम्राज्यों के सबसे प्रभावी दुश्मन बन गए (बारफील्ड, 2001: 12)। खानाबदोश साम्राज्यों का निर्माण मध्य एशिया में तीन चरणों में विकसित हुआ। प्रथम बिना किसी शक्तिशाली लीडर के कुलों के कबीलाई संगठन के रूप में। चरागाह सुविधाएं प्राप्त करने के लिए खानाबदोश समूहों में आमतौर पर 4 से 5 परिवार एक साथ डेरा डालते थे, जो एक साथ भ्रमण करते थे। दूसरा

चरण जनजातियों और मुखिया तंत्र के विकास से संबंधित है। मुखिया तंत्रों ने जनजातीय समूहों के प्रमुख के रूप में काम किया। बाद में इन सभी छोटे खानाबदोश समूहों ने एक मजबूत खानाबदोश समूह की सर्वोच्चता स्वीकार कर ली, जिसने कबीलाई संघ (विभिन्न कबीलों का समूह) के गठन का नेतृत्व किया। तीसरे चरण में, इन मुखिया तंत्रों ने स्थिर सभ्यता को पराजित करने के बाद, खानाबदोश साम्राज्यों का गठन किया (क्रेदिन, 2002: 370)। इस कबीलाई एकीकरण में लगभग सभी कबीलाई समूहों के सदस्य शक्तिशाली सैन्य पुरुष थे और इन क्षेत्रों में हमलों में विशेषज्ञ थे। इस प्रकार, इन खानाबदोश समूहों के लिए स्टैप्स के स्थिर बसे हुए समाजों पर हमला करना बहुत आसान था। इसके अलावा, घोड़ों के उपयोग ने उन्हें तीव्रगति से चलने और अपने दुश्मन पर हमला करने में काफी सशक्त बनाया। खानाबदोश समूहों की कुछ विशेषताएं थीं, जिसके कारण वे एक एकीकृत साम्राज्य स्थापित करने में सक्षम हुए। सर्वप्रथम, ये खानाबदोश समूह आत्मनिर्भर, और स्वायत्त थे तथा कबीलाई समुदाय के भीतर एकता का मजबूत बंधन था। दूसरे, सब चरवाहे आर्थिक रूप से स्वतंत्र और व्यक्तिगत रूप से मुक्त थे। इन विशेषताओं ने कबीलाई समूहों को उनकी शक्ति बढ़ाने और खानाबदोश साम्राज्य की स्थापना में मदद की। अतः खानाबदोश साम्राज्यों को इस प्रकार वर्णित कर सकते हैं, 'खानाबदोश साम्राज्य सैन्य पदानुक्रम पर आधारित था जिसका विस्तृत क्षेत्र पर कब्जा था और जो अपने आसपास के क्षेत्रों का शोषण किया करता था, सामान्यतः शोषण के बाहरी रूपों में (डकैती, युद्ध और क्षतिपूर्ति, असमान व्यापार, भेंट आदि)' (क्रेदिन, 2010: 23)।

खानाबदोश साम्राज्य सर्वप्रथम अन्य खानाबदोशों को जीतने के पश्चात् उन्हें कबीलाई संगठनों में शामिल करने के साथ शुरू हुआ। बाद में सभी कुलों और समूहों को शामिल कर मजबूत कबीलाई समूह बनाया गया। वह विशेष खानाबदोश समूह जिसने दूसरों पर श्रेष्ठता हासिल कर ली थी, के द्वारा आसपास के स्थिर बसे हुए लोगों पर हमले किये गये। 'खानाबदोशों की सफलता की कुंजी सैन्य शक्ति थी, यानी घुड़सवार सेना और एक साम्राज्यी संगठन, जिसने खानाबदोश समूहों से राजस्व इकट्ठा करने के बजाय राजस्व को वितरित किया' (बारफील्ड, 2001: 13)। चूंकि खानाबदोश समूह अनपढ़ थे और उन्हें सिंचाई, व्यापार या शहरी व्यवस्था में कौशल हासिल नहीं था, वह शासन प्रबंध की सलाह के लिए पूरी तरह से स्थिर समाज पर निर्भर थे। इसके अलावा, हालांकि खानाबदोशों ने स्थिर समाज पर अपना वर्चस्व स्थापित किया, उन्होंने स्थिर समाज और जीती हुई सभ्यताओं के सामाजिक और राजनीतिक तत्वों को अपनाया।

सैनिक श्रेष्ठता ने इन खानाबदोशों को इस क्षेत्र में राजनीतिक वर्चस्व प्राप्त करने में मदद की। राजनीतिक शक्ति द्वारा खानाबदोश समूह, क्षेत्र विशेष में खानाबदोश साम्राज्य स्थापित करने में सक्षम हुए (खज़ानोव, 1994: 25)। इस प्रकार खानाबदोश एक मजबूत खानाबदोश साम्राज्य स्थापित करने में सफल हुए, क्योंकि उनकी विलक्षण सैन्य विशेषताओं में थे, घुड़सवार सेना और साम्राज्यवादी राज्य संगठन, जिसमें राजस्व खानाबदोश समूहों के बीच वितरित किया जाता था। उनके साम्राज्यवादी नेतृत्व में पहले चरण में थे सत्तारूढ़ वंश और दूसरे चरण में क्षेत्रीय प्रमुख जो कबीलियाई नेतृत्व की देखभाल करते थे और युद्ध में सेनाओं की कमान संभालते थे। संगठन के तीसरे स्तर पर स्थानीय कबीलियाई नेता थे (बारफील्ड, 2001: 14)।

सातवीं और आठवीं शताब्दी में हैफ्थलाइट्स मध्य एशिया में सबसे शक्तिशाली खानाबदोश समूह था, तथा मध्य एशिया का लगभग पूरा क्षेत्र इस समूह की सर्वोच्चता के तहत था। लेकिन 10वीं और 11वीं शताब्दी से समानिद, सेलजुक, तुर्क और ख्वारिज्म सहित कई साम्राज्य इस क्षेत्र में शक्तिशाली रूप में उभरे।

बोध प्रश्न-1

1) मध्य एशिया की उन भौगोलिक विशेषताओं का वर्णन कीजिए जिन्होंने इस क्षेत्र में खानाबदोश जीवन को बढ़ावा दिया।

....

....

....

....

....

2) खानाबदोश जीवन और पशुचारी खानाबदोश जीवन के बीच अंतर स्पष्ट करें।

....

....

....

....

....

3) मध्य एशिया में घोड़े की संस्कृति के विकास और महत्व का मूल्यांकन करें।

....

....

....

....

....

4) खानाबदोश साम्राज्य की विशिष्ट विशेषताएं क्या थीं?

....

....

....

....

....

11.6 बेदुइन (बद्दू): पश्चिम एशिया के खानाबदोश

बद्दू अरब प्रायद्वीप के चरागाहों में विस्तृत खानाबदोश समूह थे। अरब प्रायद्वीप दक्षिण पश्चिम एशिया में स्थित एक क्षेत्र है। यह सर्वाधिक सूखे और गर्म क्षेत्रों में से एक है। यह लाल सागर और फारस की खाड़ी के बीच स्थित है। इस क्षेत्र में कम वर्षा होती है और लगभग पूरा क्षेत्र रेगिस्तान है। यह क्षेत्र एक समय सहारा, जो एक रेतीली पट्टी भी है और इसमें ईरान और गोबी रेगिस्तान के क्षेत्र शामिल हैं, की प्राकृतिक निरंतरता का हिस्सा था। अरब प्रायद्वीप की उत्तरी सीमा एक काल्पनिक रेखा है 'पूर्व में लाल सागर में स्थित अल-अकाबाह की खाड़ी से लेकर यह यूफ्रेट्स तक खींची गई है' (हिट्टी, 1937: 14)। प्रायद्वीप के

दक्षिण में तिहमाह, नज्द और उत्तर मध्य पठार के सीमांत क्षेत्र हैं। हट्टी क्षेत्र ने खानाबदोश समूहों को दो भागों में विभाजित कर दियाः बद्दू और स्थायी रूप से बसे लोग। मवेशियों और ऊंटों के झुंडों को पालना बद्दू लोगों का पारंपरिक व्यवसाय था।

अरब खानाबदोश, जो बद्दू के रूप में जाने जाते हैं, ने अरब प्रायद्वीप के आंतरिक भाग, दक्षिणी सीरिया और इराक पर कब्ज़ा किया। उन्होंने परिवहन के लिए ऊंटों का प्रयोग किया क्योंकि अरब क्षेत्र पूरी तरह से रेगिस्तान है। वह आंशिक रूप से कई क्षेत्रों में बसे हुए भी थे, क्योंकि वह साल भर खेती करते थे और फिर दूसरी जगह पर चले जाते थे। भेड़ और बकरी को नवपाषाण काल से ही पश्चिम एशिया में पालतू बनाया गया था और समय के साथ उन्होंने भेड़ प्रजनन की दक्षता को सीखा और बढ़ाया। इसके लिए चरागाह क्षेत्रों की जरूरत थी और इस प्रकार बद्दू लोगों ने अपनी मवेशियों और ऊंटों के साथ, जिनको 11वीं शताब्दी बी सी ई के आसपास उन्होंने पालतू बनाया, चरागाहों की तलाश में स्थानांतरण करना शुरू कर दिया।

कून जैसे विद्वानों के अनुसार, ऊंट प्रजनक बद्दूओं का मूल उन पशु-प्रजनक लोगों से माना जाता है जिन्हें हधरामौत के गारा[6] के नाम से जाना जाता है। वे पहाड़ों में संसाधन संकट के कारण, उत्तर की ओर रेगिस्तान में पलायन के लिए मजबूर हो गए, जहां वे न तो पशु-प्रजनन ना ही कृषि पर निर्वाह कर सकते थे, अतः उन्होंने ऊंट के प्रजनन को अपनाया, जो रेगिस्तानी वातावरण के लिए अच्छी तरह से अनुकूल था। बद्दू लोगों की उत्पत्ति के बारे में दूसरी धारणा यह है कि वे हधरामौत के पर्वतीय क्षेत्र के काहतानी से विकसित हुए हो सकते हैं। काहतानी शब्द अरब प्रायद्वीप के दक्षिण क्षेत्र से उत्पन्न हुए अरबों के लिए प्रयोग किया जाता है। वह ऊंट-प्रजनक थे और कारवां व्यापार पर उनका एकाधिकार था। काहतानी अपनी उत्पत्ति याबूब इब्न काहतान इब्न हुद से मानते हैं, जो एकेश्वरवादी पैगंबर माने जाते हैं।

पश्चिम एशिया में बद्दूओं की एक महत्वपूर्ण विशेषता स्लेब्स लोगों के एक समूह के साथ उनके संबंध थे। स्लेब्स अरब में शिकारी-संग्रहकर्ता प्रकृति की एक जनजाति से विकसित माने जाते हैं। बद्दूओं की स्लेब्स से अंतर की विशिष्ट विशेषता यह थी कि वे ऊंट या अन्य जानवरों के पशु पालन पर निर्भर नहीं थे। वे काष्ठकार, पशु शल्य चिकित्सक या व्यापारिक गतिविधियों पर निर्भर थे। स्लेब्स के शिल्प और कौशल के कारण, बद्दू अक्सर रेगिस्तान में ऊंट चराने के लिए आवश्यक उत्पाद प्राप्त करने के लिए स्लेबों पर निर्भर थे।

हालांकि, मध्य एशियाई खानाबदोशों की संस्कृति पश्चिम एशियाई खानाबदोश संस्कृति से मिलती जुलती है, लेकिन मध्य एशिया के खानाबदोश पश्चिम एशिया के खानाबदोशों से भिन्न थे। पश्चिम एशिया की तुलना में मध्य एशिया के पशुचारी खानाबदोश आत्मनिर्भर थे। मध्य एशियाई जनजातियों के बीच प्राथमिक पशु घोड़ा था और बद्दूओं में ऊंट-प्रजनन और पालन आम था। भाला, ऊंट-प्रजनन बद्दूओं का प्रधान हथियार था। अरब के खानाबदोश बालों से बने टेंटों[7] (तम्बुओं) में रहते थे, जबकि मध्य एशिया के खानाबदोश *युर्त* में रहते थे (जिसने रेगिस्तान में उन्हें एक आदर्श आश्रय प्रदान किया)।

11.7 मध्य एशिया के प्रमुख खानाबदोश समूह

खानाबदोश समूह जो मध्य एशिया में अपना साम्राज्य स्थापित करने में सक्षम थे, उनमें सीथियन, हूण, तुर्क और भारतीय-यूरोपीय समूह के तोचारी, ईरानी, यूज़्ही, वुसुन और मंगोल थे।

---

[6] अरब प्रायद्वीप के दक्षिण छोर का क्षेत्र।

[7] बद्दुओं द्वारा निर्मित बाल से बने टेंट, बकरी और भेड़ के बालों की ऊन द्वारा बनाए जाते हैं। बकरी और भेड़ के बाल की लड़ी बुनकर, और फिर इसे टेंट की चौड़ाई और लंबाई के अनुसार बुना जाता था।

11.7.1 सीथियन

यूरोप के उत्तर-पूर्व और काला सागर के उत्तरी तट के क्षेत्र के लिए प्राचीन यूनानियों द्वारा दिया गया नाम सीथिया था। सीथियन पहले कबीलाई समूह हैं जो काला सागर के तट पर बसे[8]। सीथियनों के बाद इस क्षेत्र पर हूणों ने कब्जा किया। यूरोप-एशिया का वह भाग जो डेन्यूब नदी और तिआन शान के पहाड़ों के मध्य स्थित है, अल्ताई पर्वत शृंखला के रूप में निरूपित किया गया है और जहां कांस्य युग की शुरुआत हुई, को भी सीथियनों के देश के रूप में जाना जाता था। 750 से 700 बी सी ई के बीच सिमेरियनों – एक खानाबदोश समूह, जिन्हें भारतीय-यूरोपीय मूल का माना जाता है – को दक्षिणी रूस और साइबेरिया के स्टैप्स क्षेत्र से सीथियनों, जो तुर्किस्तान और पश्चिमी एशिया से आए थे, ने बेदखल कर दिया (ग्रोसे, 1970ः 6) और अपना बोलबाला स्थापित किया। सीथियन ईरान से अपनी उत्पत्ति मानते हैं और उन्होंने स्टैप्स के ईरानी प्रदेश, जिसे आज रूसी तुर्किस्तान कहते हैं, में खानाबदोश जीवन को अपनाया।

सीथिया का सबसे शक्तिशाली राजा, राजा ऐटिआस (429-339 बी सी ई) था, जिसने विभिन्न जनजातीय समुदायों को एकजुट कर अपना शासन स्थापित किया। सीथियनों ने दक्षिण रूस और क्रीमिया अर्थात् युक्रेन में (क्रीमिया प्रायद्वीप, काला सागर और आज़ोव सागर के मध्य स्थित है), एक मजबूत साम्राज्य की स्थापना की। यह साम्राज्य 5वीं शताब्दी बी सी ई से दूसरी शताब्दी बी सी ई तक अस्तित्व में रहा।

सीथियन पुरुषों को दाढ़ी पसंद करने के लिए जाना जाता है। वह अंगरखे और ढीली पतलूनें, नुकीली टोपी के साथ पहनते थे जो कि उच्च दबाव वाली मैदानी हवाओं से उनके कानों की रक्षा करती थीं। घोड़े उनके साथी और धनुष उनके प्राथमिक हथियार थे। सीथियनों के अपने कोई मकान नहीं होते थे। वे वैगनों (चार पहिए की गाड़ी जिसे घोड़ा या बैलों द्वारा खींचा जाता था) में रहते थे, जो चार पहिए की छोटी गाड़ियां थी। इन वैगनों ने उनके चलते फिरते घरों के रूप में काम किया। वे एक साथ बड़े समूह में स्थानांतरण करते थे जो कि भली-भांति संगठित थे, तथा उनकी वैगनों में सहायक भी होते थे। उनके पलायन के समय ऐसा लगता था कि पूरा शहर वैगन के साथ स्थानांतरण कर रहा है। इस प्रकार, स्टैप्स में उनके मौसमी स्थानांतरण के लिए घोड़े के अलावा सीथियनों ने गाड़ी और ढकी वैगनों का इस्तेमाल किया। वास्तव में, यह वैगन, जनजातीय समूहों के *युर्त* थे। जब जनजातीय समूह एक जगह रूकते थे तब इन वैगनों को *युर्त* के रूप में (जमीन पर स्थिर झोपड़ी) प्रयोग करते थे। उनकी सोने के रूप में पूँजी फलकों (plaques) और कालीनों, जो सीथियन कला में अद्वितीय थे और जिन्हें सुरक्षित रखा जाता था, के रूप में थी।

सीथियन जनजातियां पूर्ण स्वतंत्रता में रहती थीं। लेकिन उन्होंने एक सुव्यवस्थित 'राज्य' प्रणाली विकसित की जो कई शताब्दियों तक चली। यह 'राज्य' छः प्रमुख प्रांतों में बांटा गया था। प्रांतों को आगे *नोम* या जिलों में उप-विभाजित किया गया, जिन्हें 'नोमार्क' या राज्यपाल द्वारा संचालित किया जाता था। इस्तवान ज़िमोन्यी (2016) का विचार है कि हालांकि हमें सीथियनों के प्रांतों के बारे में कोई सबूत नहीं मिलता है, *नोम* (जिले) विभिन्न खानाबदोश समूह या जनजाति हो सकती हैं, जो सीथियनों द्वारा शामिल की गईं। वे सीथियनों की सेना का एक महत्वपूर्ण हिस्सा थे और इन सभी जनजाति समूहों के सैन्य नेता खानाबदोश समूह के लिए भेंट इकट्ठा करते थे। सीथियन जनजाति संरचना की दृष्टि से सामंती थी।

---

[8] सीथियनों के बारे में अधिक जानकारी के लिए देखेंः http://blog.britishmuseum.org/introducing-the-scythians.

750-700 बी सी ई में सीथियन तुर्गई क्षेत्र और यूराल नदी से दक्षिण रूस में स्थानांतरित हुए, जहां उन्होंने सिमेरियनों को बाहर खदेड़ दिया। सीथियन सातवीं से तीसरी शताब्दी बी सी ई तक रूसी स्टैप्स के एकछत्र स्वामी रहे। उन्होंने डर्बेंट द्वार को पार किया और असीरियन साम्राज्य के संपर्क में आए। सीथियन पड़ोसी सभ्यताओं ईरानी, यूनानी और मेसोपोटामिया, के लिए एक खतरा बन गए। वह हमेशा एकेमिनिड साम्राज्य के साथ संघर्षरत रहे। पश्चिमी सीथियनों को चौथी शताब्दी बी सी ई में मकदूनी (मेसिडोनियाई) साम्राज्य ने पराजित कर दिया और पूर्वी सीथियनों पर जिआँगनू, यूची और वुसुन ने दूसरी शताब्दी बी सी ई में हमला किया। बाद में वे दक्षिण एशिया की ओर चले गए, जहां वे भारतीय सीथियन (भारतीय सीथियन शब्द शकों के संदर्भ में प्रयुक्त किया जाता है जो दूसरी से चौथी शताब्दी में उत्तरी और पश्चिमी एशिया के कुछ हिस्सों में स्थानांतरित हुए) के नाम से जाने गए। दूसरी शताब्दी बी सी ई में तुर्किस्तान के सीथियनों को जिआँगनू और यूची जैसे अन्य समूहों द्वारा हमलों का सामना करना पड़ा और उनका पतन हुआ। और अंत में उन्हें हूणों द्वारा, जो पश्चिम की ओर चले गये, बाहर धकेल दिया गया।

11.7.2 जिआँगनू

जिआँगनू को एशियाई हूणों के रूप में जाना जाता है जो मध्य एशिया की एक और खानाबदोश जनजाति थी, जो तृतीय शताब्दी बी सी ई से पहली शताब्दी सी ई तक मंगोलियाई पठार पर, अर्थात् आज का मंगोलिया, साइबेरिया, पश्चिमी मंचूरिया[9] और आधुनिक चीन के आंतरिक मंगोलियाई प्रांतों में रहते थे। जिआँगनू के बारे में कुछ का मानना है कि उनकी उत्पत्ति अनिश्चित है जबकि दूसरो का तर्क है कि यह समूह कई खानाबदोश समूहों, जो विभिन्न नस्लों के थे, से उत्पन्न हुए। जिआँगनू, खानाबदोशों के प्रथम एकीकृत साम्राज्य के रूप में उभरे। जिआँगनू के समय में चीन कई राज्यों (किन, झाओ, यान, की, लू, वेई, हान, चू) में विभाजित था, अतः जिआँगनुओं के लिए इन विभिन्न राज्यों को जीतना आसान था। वह लगातार चौथी और तीसरी शताब्दी बी सी ई में उत्तरी चीन पर हमले करते रहे।

खुद को इस खानाबदोश समूह से बचाने के लिए चीन के राजा चिन-शी-हवांग-ती (चिन के पहले संप्रभु सम्राट के रूप में जाना जाता है; 259-210 बी सी ई) ने चीन के बड़े हिस्सों को एक साम्राज्य में एकजुट किया और चीन में एशियाई हूणों के हमले रोकने के लिए उसने चीन की महान् दीवार का निर्माण कराया। वह ओरडून और सेंसी से एशियाई हूणों को बाहर निकालने में सफल रहा। तूमान (220-209 बी सी ई) इस जनजातीय समुदाय का सबसे शक्तिशाली शासक था, जिसने मंगोलिया के अन्य सभी खानाबदोश समूहों को एकजुट किया और उत्तरी चीन पर आक्रमण किया। उत्तरी चीन में इस चरवाहे समूह के लिए पर्याप्त चरागाह थे और उन्होंने इस क्षेत्र में अपनी स्थिति को मजबूत बनाने पर ध्यान केंद्रित किया। तूमान के बेटे माओदून (209-174 बी सी ई) ने अपने को अपने पिता से भी अधिक शक्तिशाली साबित किया। उसने 203 बी सी ई में यूज़ही को हराया। उसका पुत्र जीयु (174 बी सी ई) तुलनात्मक रूप से कमज़ोर था जिसके बाद जिआँगनू शक्ति का पतन हुआ।

जिआँगनू का राजनीतिक संगठन पूर्ण पदानुक्रम पर आधारित था, जिसमें समूह के अन्य छोटे नेताओं पर सम्राट का नियंत्रण था। पूर्वी और पश्चिमी क्षेत्रों में वहां चार राज्यपाल थे जो केंद्रीय सरकार द्वारा बनाए गए नियमों का पालन करते थे। हालांकि जिआँगनू राजाओं के पास शक्ति थी, ये चारों राज्यपाल साम्राज्य का विशिष्ट हिस्सा

[9] उत्तर पूर्व एशिया का एक क्षेत्र।

थे और वह मुख्य रूप से जिआँगनू परिवार के सदस्य थे। वे राजा को और 'केंद्रीय साम्राज्य' की शासकीय संस्था को भेंट देते थे। 129 बी सी ई में चीन ने जिआँगनू पर हमला किया और जिआँगनू का मजबूत साम्राज्य दो अलग-अलग साम्राज्यों, अर्थात् पूर्वी और पश्चिमी जिआँगनू, में विभाजित हो गया। पश्चिमी जिआँगनू साम्राज्य बाद में हान (एक चीनी राजवंश; 206 बी सी ई-220 सी ई) हमले द्वारा नष्ट हो गया। हालांकि पूर्वी जिआँगनू ने 31 बी सी ई तक सत्ता को बरकरार रखा, और 18 बी सी ई तक उन्होंने मंचूरिया से काशगर तक एक विशाल क्षेत्र पर अपनी सत्ता को स्थापित किया। अंततः चीन के हान शासकों ने उन्हें 216 सी ई में पराजित किया। परिणामस्वरूप, जिआँगनू ने यूची जनजाति को ज़िन्जियांग और गान्सू क्षेत्र से बाहर निकाल दिया। इस कारण यूची पूर्वी कजाकिस्तान की ओर चले गए। यूची महान् कुषाण साम्राज्य के संस्थापक थे जो उत्तर में तारिम बेसिन से दक्षिण में भारत के उत्तर पश्चिमी क्षेत्र तक फैला था।

कुषाण साम्राज्य को यूची जनजाति ने (135 बी सी ई-375 सी ई) उत्तरी अफ़ग़ानिस्तान के बैक्ट्रिया क्षेत्र में स्थापित किया। यूची दुनहुआंगी क्षेत्र में रह रहे थे, अर्थात् आधुनिक चीनी प्रांत गांसू में। वहां उनको जिआँगनू ने हरा दिया और दक्षिण पश्चिम में दायुआन से दूर जाने के लिए मजबूर किया, वहां उन्होंने डेक्सिया के लोगों पर विजय प्राप्त की और ईरानी, अफ़गान और भारतीय इतिहास में कुषाण के रूप में जाने गए।

11.7.3 हूण

हूण एक खानाबदोश समूह था जो चौथी और पांचवीं शताब्दी सी ई में प्रमुखता से उभरे। उनका मूल स्थान अज्ञात है लेकिन यह माना जाता है कि वे कहीं अल्ताई पहाड़ों और कैस्पियन सागर के पूर्वी छोर के बीच उत्पन्न हुए। हूण अश्वारोही, मांस खाने वाले, और जूते पहनने वाले योद्धा थे, जिन्होंने लगातार चीन पर हमला किया[10]। हूण घोड़े, ऊंट, भेड़ और गधे, तथा अन्य दूसरे जानवरों को अपने पास रखते थे। त्यानशान और अल्ताई के सीथियन क्षेत्र (अब चीन और सोवियत संघ के कब्जे में) को हूणों ने अपने चरागाहों में शामिल किया। वे घुड़सवारी में कुशल थे और उनकी योद्धा प्रकृति ने उन्हें यूरोप में एक उल्लेखनीय पकड़ प्रदान की।

चीन में इस प्रमुख साम्राज्य को ह्स्यूंग-नू के रूप में जाना जाता है, रोमन और भारतीयों ने उन्हें हूण के रूप में संबोधित किया। हूण तीसरी सदी सी ई में एक मजबूत समूह बन गया। तीसरी सदी सी ई के अंत तक पशु-प्रजनन, लोहे के उपकरणों के विकास, और अपने सैन्य कौशल को मजबूत बनाने से हूणों की समृद्धि बढ़ी और यह एक मजबूत और शक्तिशाली ताकत के रूप में उभरे।

454 सी ई तक हूण अकेले चरवाहे समूह थे जो एक स्थान से दूसरे स्थान बिना किसी मजबूत राजा के घूमते रहते थे। 432 सी ई में हूण मुखिया रूआ या रुगिला (मृत्यु 434 सी ई) ने हूण समूहों को एकजुट किया और कबीले को मजबूत बनाया। 376 से 476 सी ई के दौरान रोमन साम्राज्य के पतन के पीछे हूण हमले प्राथमिक कारण थे। रूआ की मृत्यु के बाद उसके दो भतीजे ब्लैडा (लगभग 390-434 सी ई) और एटिला (लगभग 434-453 सी ई) शासक बने। उन्होंने पूर्वी रोमन साम्राज्य के साथ शांति संधि की, जिसमें रोमन सम्राट अपने साम्राज्य को हूणों के हमलों से बचाने की एवज में उन्हें पूर्व में दिए जाने वाले अनुदान से दोगुना अनुदान देने के लिए सहमत हुआ।

---

[10] हूण हमलों और मानचित्र पर अधिक जानकारी के लिए देखें: https://www.enchantedlearning.com/history/asia/huns/

मानचित्र 11.2 : अटीला के साम्राज्य का विस्तार
साभार: स्लोवेंसकी वॉक
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Huns450.png

मध्य एशिया के खानाबदोश समूहों की एक मुख्य विशेषता थी कि वह हमेशा अपने स्थायी बसे हुए समकक्षों को, उनके बर्बर हमलों से अपने राज्य की रक्षा करने के लिए, अनुदान (सोना या अन्य आवश्यक चीजों) देने के लिए मजबूर करते थे। उन्होंने इसी तर्ज पर चीन में भी अपना वर्चस्व स्थापित किया। हूण चीन को लूटते थे और उन्होंने दक्षिण में उनके शहरों और गांवों को काफी लूटा। हूण शक्ति उनके राजा एटिला के तहत 450 सी ई में अपने चरम पर पहुंच गई। एटिला के बाद हूण साम्राज्य तेजी से विघटित हुआ, उसके बेटे साम्राज्य को संगठित रखने में सक्षम नहीं थे।

कबीलाई प्रशासन की प्रकृति लोकतांत्रिक थी और मुखिया के पास खुद को विशेष दर्जा देने के कोई अधिकार नहीं थे। हूण बच्चों को पशु चराने, घुड़सवारी करने और उनके छोटे धनुषों से चूहे, सियार और खरगोशों का वध करने के लिए प्रशिक्षित किया जाता था। हूण अपने भोजन के लिये दूध और मांस पर निर्भर रहते थे। उनके कपड़े चमड़े या फैल्ट के बने होते थे। योद्धा कबीले के सबसे आदरणीय सदस्य होते थे और वे अपनी पसंद का भोजन प्राप्त करते थे।

हूण सुदूर पूर्व के इतिहास में भी महत्व रखते हैं। पांचवी शताब्दी सी ई से उन्होंने तुर्किस्तान पर कब्ज़ा कर लिया, तुर्किस्तान पर कब्ज़े के बाद हूण ईरानियों के सासानिद साम्राज्य के संपर्क में आए। तुर्किस्तान पर आधिपत्य ईरानियों, हूण और हैफ्थेलाइट्स के मध्य संघर्ष का कारण बना। शक्ति की इस लड़ाई में शक्तिशाली सासानिद सम्राट पेरोज प्रथम 484 सी ई में मारा गया। इस जीत के बाद हूणों ने ईरानियों को अपने क्षेत्र को हूणों के हमले से सुरक्षित रखने की एवज में एक भारी भेंट देने के लिए मजबूर किया।

इसके बाद हूण दूर-दूर तक फैल गए और उनके विस्तार के आधार पर वह यूरेशिया के सबसे शक्तिशाली कबीले के रूप में उभरे। उनके वंशज समूहों में से एक, मैगियार, आज भी आधुनिक हंगरी में पाए जाते हैं।

चित्र 11.2 : एलन के साथ लड़ाई में हूण
साभारः पीटर जोहान नेपोमुक गीगर (1805-1880)
स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Hunnen.jpg

हूणों के विजयी दौर को गेपिदों[11] द्वारा प्रतिबंधित किया गया जो कि एक बहादुर योद्धा थे और हूणों की तरह घुड़सवारी करते हुए तीर चला सकते थे। गेपिदिया राजा आदेरिक ने 454 सी ई में मेदाओ की लड़ाई में हूणों को हरा दिया।

11.7.4 वुसुन

मैदान के अधिकांश अन्य खानाबदोश समूहों की भांति वुसुन खानाबदोश चरवाहे भी पानी की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान की तरफ घूमते थे। उनके मूल के बारे में स्पष्टतः पता नहीं चलता, लेकिन ऐसा माना जाता है कि वह मूल रूप से यूरोप से थे, तथा वे सीथियनों की शाखा माने जाते हैं। वे किलियन पर्वत (चीन का वर्तमान किंघाई प्रांत) और दुनहुंग (गांसू, चीन के उत्तर पश्चिम में स्थित है) के मध्य में रहते थे। उन्होंने कारपेथियन से कोकोनोर तक फैले क्षेत्र पर कब्जा कर लिया था। वुसुन के इतिहास को कांस्य युग से खोजा जा सकता है। वुसुन क्षेत्र फरगना घाटी से घिरा हुआ था, जो घोड़े की नस्ल के लिए प्रसिद्ध था और सिल्क मार्ग होने के कारण अत्यंत समृद्ध था। इस प्रकार, दोनों जिआँगनू और चीनी, वुसुन के साथ संबंध रखने में रुचि रखते थे। 80 बी सी ई में जिआँगनू ने वुसुन पर हमला किया और वुसुन को हरा दिया। 72 बी सी ई में वुसुन के मुखिया कुनमी ने जवाबी कार्यवाही के लिए हान से सहायता मांगी और जिआँगनू को हरा दिया। इसने वुसुन की शक्ति को मजबूत किया और कुनमी ने यारकंद पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया।

पश्चिम में यूज़्ही ने वुसुन के साथ युद्ध किया। यूज़्ही ने वुसुन राजा नंदौमी (मृ. 173 बी सी ई) को मार वुसुम को पूरी तरह से नष्ट कर दिया। 162 बी सी ई में जिआँगनू ने यूज़्ही को पराजित किया और उन्होंने यूज़्ही को पश्चिम में स्थानांतरित होने के लिए मजबूर किया। लाइजिओमी, वुसुन राजकुमार, युद्ध में बच गया और उसे जिआँगनू के राजा ने गोद ले

[11] रोमानियाा, हंगरी और सर्बिया के क्षेत्र में स्थित पूर्वी जर्मन जनजाति।

लिया। इससे हमें यह पता चलता है कि जिऑँगनू और वुसुन के सौहार्दपूर्ण संबंध थे। हालांकि वे दूसरी और तीसरी सदी सी ई में सबसे शक्तिशाली बन गए, यह काल हूण शक्ति के प्रसार की अवधि से मेल खाता है और यह वह समय था जब जिऑँगनू और यूज़्ही में एक लंबे समय तक युद्ध चलता रहा।

जब वुसुन राजकुमार लाइजिओमी शक्तिशाली हुआ तो उसने जिऑँगनू की सेना को लेकर यूज़्ही पर इली घाटी में 133-132 बी सी ई में हमला कर दिया। वुसुन राजकुमार ने यूज़्ही को हराया (133 बी सी ई) और उन्हें सोगदिया की ओर स्थानांतरित होने के लिए मजबूर कर दिया। सोगदिया से यूज़्ही का विस्तार दक्षिण एशिया में हुआ। इस जीत ने वुसुन की शक्ति को बढ़ाया। उन्होंने बहुत बड़ा क्षेत्र अपने स्वामित्व में ले लिया और सिल्क मार्ग को नियंत्रित किया। पहला खानाबदोश शाही नगर चीगू, सिल्क मार्ग पर वुसुन द्वारा स्थापित किया गया। वे हान के निकट सहयोगी थे और उनके चीनी हान के साथ सौहार्दपूर्ण संबंध थे और उस क्षेत्र में घोड़ों के मुख्य आपूर्तिकर्ता थे। 115 बी सी ई में हान शासक ज़ान कियान ने वुसुन शासक लाइजिओमी के यहां राजदूत भेजा और हान राजकुमारी ज़िजुन की शादी के लिए पेशकश की। चीन में हान वंश के पतन के बाद वुसुन शक्ति का भी पतन हुआ और धीरे-धीरे वह मध्य एशिया के इतिहास से गायब हो गए, शायद वे बाद में हैफ्थेलाइट्स में सम्मिलित कर लिए गए। चीनी साक्ष्यों में वुसुन का अंतिम उल्लेख 436 सी ई का है। उस वक्त वे चीन के पामीर पहाड़ों में बसे हुए थे, जब चीनी दूत को वुसुन भेजा गया और उन्होंने भी प्रतिउत्तर में मैत्री का हाथ बढ़ाया।

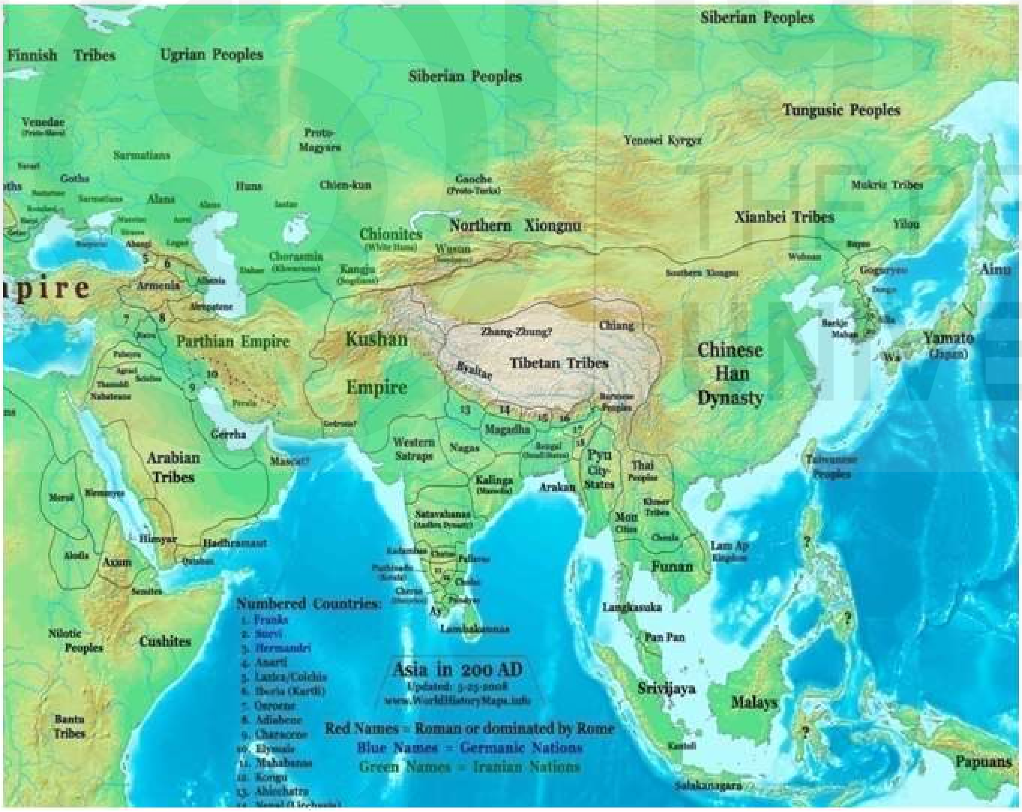

मानचित्र 11.3 : 200 सी ई में मध्य एशिया की जनजातियां
साभारः थॉमस ए लेसमैन
स्रोतः विकीमीडिया कॉमनस (https://commons.wikimedia.org/wiki/file:Asia_200ad.jpg)

11.7.5 तुर्क

लगभग 500 से 1500 सी ई के काल में खानाबदोश समूह लगातार युद्धरत रहते थे। इस समय एक मज़बूत खानाबदोश समूह, तुर्क उभरा। तुर्क एक छोटी सी घुड़सवार जनजाति,

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

जिसका उद्गम अल्ताई पहाड़ों में हुआ था, के वंशज माने जाते हैं। अल्ताई पर्वत क्षेत्र गोबी रेगिस्तान और साइबेरियाई मैदानों के बीच स्थित है। 'तुर्क' शब्द चीनी शब्द 'तु-किन' से लिया गया है जिसका अर्थ 'सशक्त' और 'मजबूत' है, अतः शक्तिशाली लोगों की ओर संकेत करता है। बाद में इस शब्द का प्रयोग तुर्क जनजातियों के समूह के लिए किया जाने लगा (रौदिक, 2007: 24)। अल्ताई तुर्कों को इस प्रकार बहादुर और शक्तिशाली माना गया, जिन्हें बूमिन द्वारा एकजुट किया गया।

बूमिन (551-552 सी ई) इस जनजातीय समूह का सबसे शक्तिशाली मुखिया था जिसने मंगोलियाई स्टैप्स की सभी जनजातियों को एकीकृत कर इस क्षेत्र में एक मजबूत तुर्की साम्राज्य की स्थापना की। उनके दूरदराज के अधिकार क्षेत्र के साथ तुर्कों ने एक मजबूत तुर्की साम्राज्य स्थापित किया जो लगभग दो शताब्दियों के लिए मध्य एशिया में प्रमुख शक्ति बना रहा (रौदिक, 2007 : 37)। तुर्कों ने छठी शताब्दी सी ई में अपना साम्राज्य स्थापित किया जो वर्तमान मंगोलिया से चीन की उत्तरी सीमा में काला सागर तक फैला हुआ था और उन्होंने चीन और पश्चिम के बीच रेशम व्यापार मार्ग को नियंत्रित किया। यह जनजातीय समूह रेशम मार्ग के नियंत्रण से आर्थिक रूप से सुदृढ़ हो गया और उन्होंने सुदृढ़ आर्थिक स्थिति से मध्य एशिया के क्षेत्र में अपना स्थाई निवास बनाया। वह चीनी सीमा पर हमला और लूट किया करते थे। चीन ने उन्हें उपहार भेजकर और चीन की राजकुमारियों को तुर्की कुलीनों को शादी में देकर उन्हें प्रसन्न करने की कोशिश की।

तुर्क पहला मध्य एशियाई समूह हैं जिन्होंने लिखित साक्ष्य छोड़े। वे तुर्की भाषा को बोलचाल में इस्तेमाल करते थे। सबसे पुराना मौजूदा तुर्की लिखित साक्ष्य मंगोलिया में और आर्खोन नदी के पास की कब्रगाहों के पत्थरों पर सातवीं शताब्दी के अभिलेखों से मिलता है। आर्खोन शिलालेख एक पशुचारी खानाबदोश राज्य के आंतरिक तनावों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं। यह वह समय था जब उनकी शक्ति चरम सीमा पर थी, और उनका प्रभुत्व चीन की सीमा से बाइजेंटाइन तक फैला हुआ था।

निवार (581-587 सी ई) के अधीन तुर्कों के बीच एक दरार आ गई और वह पूर्वी और पश्चिमी तुर्क में विभाजित हो गए। पश्चिमी तुर्की साम्राज्य विभिन्न गुटों के बीच पैदा हुए आंतरिक संघर्ष के कारण नष्ट हो गया। आर्खोन शिलालेख इस प्रकार की आंतरिक कलह का कारण वर्णित करता है:

> क्योंकि कुलीनों और आम तुर्क के बीच मतभेद हुए क्योकि चीनियों की धोखाधड़ी और धूर्तता ने छोटे को बड़े भाई, कुलीन को आम के खिलाफ कर दिया, यही तुर्कों के साम्राज्य, जो उनका अपना था, के विघटन का कारण था, और *कघान* के सर्वनाश का कारण भी था, जो उनका अपना *कघान* था।

(हिस्ट्री ऑफ सिविलाइजेशन ऑफ सेंट्रल एशिया, भाग-III, 1994: 331)

द्वितीय तुर्की साम्राज्य 630 सी ई में ऑर्डोस और शांसी के उत्तर में पूर्वी तुर्की जनजातियों द्वारा स्थापित किया गया था। 681 सी ई तक साम्राज्य अपनी पूर्ण चरम सीमा पर नहीं पहुंचा था। 687 सी ई में इल्तरिश (682-691 सी ई) ने मध्य और उत्तरी मंगोलिया पर विजय प्राप्त की। इल्तरिश ने *कघान* की पारंपरिक संरचना को स्थापित किया जिसमें *कघान* ने राज्य को नियंत्रित किया और वे जनजातीय समूह के मुखिया के रूप में उभरे। किरगिज, तुर्कों का एक खानाबदोश समूह, 840 सी ई तक सत्ता में बना रहा।

तुर्क के चरागाह तू-चिन पर्वत पर स्थित थे। वह हर साल अपने चरागाहों का दौरा करते थे और शुक्ल पक्ष के चंद्रमा के समय बलि देते थे। उनका पंसदीदा पेय *कुमिस* था, जो घोड़ी के दूध से तैयार किण्वित (fermented) शराब थी। तुर्की खानाबदोश उत्तराधिकारी को चुनने के लिए लोकतांत्रिक प्रक्रिया का पालन करते थे।

अपने इतिहास के प्रारंभिक काल में, इस तुर्की खानाबदोश समूह ने बौद्ध धर्म[12] को अपनाया लेकिन बाद में उन्होंने इस्लाम को अपनाया। इन धर्मों को अपनाने के बावजूद तुर्कों ने अपने अंत्येष्टि संस्कारों, जिसमें मृत आदमी के तंबू के सामने मृतक शरीर को रखकर जहां उन बच्चों, पोते और अन्य भाई-बंधुओं में से हर एक आकर घोड़ा या एक भेड़ भेंट करता था, को नहीं छोड़ा। इस रीति के हिस्से के रूप में दुख व्यक्त करने के लिए, चाकू द्वारा व्यक्ति विशेष अपने चेहरे को काटता था जिससे आंसुओं में खून मिले। कब्र पर पत्थर रखकर प्रतीक के रूप में शोक व्यक्त किया जाता था और पत्थर की संख्या मृत व्यक्ति द्वारा मारे गए दुश्मनों की संख्या को इंगित करती थी।

इस प्रकार, तुर्कों ने मंचूरिया से काला सागर तक मध्य एशिया का प्रथम अंतर-महाद्वीपीय साम्राज्य बनाया। बाद में वे मंगोल साम्राज्य में शामिल कर लिए गए।

11.7.6 मंगोल

मंगोल एक जनजातीय संघ था जो 12वीं शताब्दी के अंत में मध्य एशिया के स्टैप्स क्षेत्र में बसे हुए थे। इस जनजातीय संघ में कुछ स्टैप्स के खानाबदोश थे, जबकि दूसरे शिकार और मछली पकड़ते थे। वह विभिन्न वंशों और कुलों में संगठित थे, लेकिन वे एक जनजातीय समूह के रूप में एकजुट थे। अता मलिक जुवैनी (1226-1283 सी ई)[13] अपने ग्रंथ में वर्णन करता है कि चंगेज खान (1206-1227 सी ई)[14] के उदय से पहले मंगोल एक शासक रहित, विभाजित और लगातार एक दूसरे के साथ लड़ाई में व्यस्त रहते थे। 'उनमें से कुछ ने डकैती और हिंसा और अनैतिकता तथा व्यभिचार को मर्दानगी और श्रेष्ठ माना'। वह 'कुत्तों' और चूहों' की खाल से तैयार वस्त्र पहनते थे, जो 'अन्य मृत वस्तुओं' और *कुमिस* के साथ उनके आहार का हिस्सा थे (गोल्डन, 2011ः 77)।

मंगोल मंगोलिया में ओनॉन और केरूलेन नदियों के आस-पास अपने पशु चराते थे। मंगोलिया में उस समय अनेक कबीलाई समूह बिखरे हुए थे। मंगोलों के उत्तर में *नेमन* (जनजातीय समूह) थे जो साइबेरिया में इरतिश नदी तक फैले थे। सबसे महत्वपूर्ण जनजातियां मंगोलिया के दक्षिण में *तातार* (जनजाति समूह) और *करायत* पश्चिम में थे। *करायत* तथा *नेमन* के उत्तर में अन्य दूसरी जनजातियां थीं जिनमें से *ओइरोत* (या *ओइराड*) और मर्किट (या *मर्गिद*) बाइकाल क्षेत्र के दक्षिण में बिखरे हुए थे (गोल्डन, 2011ः 77)। इन सभी जनजातियों (*तातार, करायत, नेमन, ओइरोत* और *मर्किट*) को सामूहिक रूप से मंगोल खान ने एकीकरण के बाद 'मंगोलों' के रूप में नामित कर दिया। *खान* जनजातीय सरदारों की उपाधि थी और सभी जनजातियों का नेता *खाकान* कहलाता था (हेंबली, 1969ः 87)। चंगेज खान द्वारा 1206 सी ई में मंगोलों और तुर्कों के एकीकरण के बाद एक संगठित मंगोल कबीले का निर्माण किया गया।

मंगोलों का एकीकरण चंगेज खान से पहले शुरू हो गया था। कैदू, जो मंगोलो का एक कबीलाई नेता था, 11वीं सदी के उत्तरार्द्ध और 12वीं सदी के पूर्वार्द्ध में पहला सरदार था जिसने मंगोलो के नेतृत्व में सभी जनजातीय समूहों को इकट्ठा करना शुरू कर दिया था। कैदू का पोता काबुल (शायद 12वीं सदी के पूर्वार्द्ध) पहला खान था जिसने विभिन्न मंगोल जनजातियों पर शासन किया था (गोल्डन, 2011ः 77)।

> 12वीं सदी के पूर्वार्द्ध में काबुल खान के तहत तीन नदी क्षेत्रों के मंगोल पर्याप्त शक्तिशाली हो गए जिन्हें एक प्रकार के राज्य-संघ *उलुस* में एकजुट किया गया।
>
> **(असिमोर, 1999ः 251)**

---

[12]तघपर (572-581 सी ई) ने बौद्ध धर्म अपनाया थ। तघपर के भाई निवार (581-587 सी ई) ने भी बौद्ध धर्म को बढ़ावा दिया।

[13]एक फारसी इतिहासकार जिसने मंगोल साम्राज्य का वृत्तांत लिखा था।

[14]तुर्की में गेंगीज़ खान के रूप में उल्लेखित।

इस प्रकार, काबुल ने *उलूस* के रूप में जनजातियों का एकीकरण करना शुरू किया। तातार और मंगोलों के लगातार युद्ध के कारण यह एकीकरण 12वीं सदी के उत्तरार्ध में विघटित हो गया। मंगोलों और तातारों के बीच यह संघर्ष चीन के जिन राजवंश के शासकों के हस्तक्षेप के कारण हुए। चीनी शासक जनजातीय समूहों के एकीकरण के पक्ष में नहीं थे, क्योंकि वह हमेशा चीन पर उनके हमले के प्रति आशंकित रहते थे। अतः चीन के जिन राजवंश (1115-1234 सी ई) के शासक मंगोलियाई समूह के कबीलाई संघ को विभाजित करने में प्रयत्नरत रहे, और अंततः तातार को अपने पक्ष में करने में सक्षम हो गए। तातारों (मंगोलिया का शक्तिशाली जनजातीय समूह) ने अंभाघई खान – काबुल के उत्तराधिकारी, को पकड़ने के लिए जिन की मदद की, जिसे 1160 सी ई में चीनियों ने मार डाला। इससे मंगोलों और तातारों के बीच युद्ध शुरू हुआ (गोल्डन, 2011: 77)।

मंगोलिया के जनजातीय समूहों के बीच संघर्ष की इस पृष्ठभूमि के तहत तेमुजिन/चंगेज खान (1206-1227 सी ई) मंगोलों के कुलीन परिवार में 1167 सी ई में पैदा हुआ। उसने अंतर-जनजातीय युद्धों को खत्म किया और तत्पश्चात् उसके बाद मंगोल क्षेत्र का विस्तार मध्य एशिया से आगे तक किया। मंगोलिया की *कुरूलताई* (जनजातीय परिषद) ने 1206 में तेमुजिन को अपने नेता के रूप में नियुक्त किया और गेंगीज खान (सार्वभौमिक नेता) का नाम दिया। उसने जिन वंश के चीन के शासकों को 1211 में अपने अधीन कर लिया। उसके बाद उसने ईरान (1223), तुर्कमेनिस्तान और उज्बेकिस्तान पर हमला किया। उसने उत्तरी चीन के तनगुट के जनजातीय संघ (1226) को भी हराया। मंगोल साम्राज्य मध्य एशियाई इतिहास में सबसे बड़ा खानाबदोश साम्राज्य था। यह पहला खानाबदोश साम्राज्य था जिसने जनजातियों को एक हस्ती के रूप में शामिल किया (सभी मंगोल जनजातियों का एकीकरण) और जिसका विस्तार कई क्षेत्रों में था (चीन और मध्य एशिया के भाग)। 1206 में इस प्रकार चंगेज खान द्वारा स्थापित मंगोल साम्राज्य दक्षिण पूर्व एशिया से पूर्वी यूरोप तक फैला था। अपना क्षेत्रीय वर्चस्व स्थापित करने के बाद चंगेज खान ने एक कानूनी संहिता अपनी जनजाति के लिए बनाई जिसे *यासा* के रूप में जाना जाता है। *यासा* अनिवार्य आदेशों का संग्रह था जिसे समुदाय के सदस्यों को बिना प्रश्नचिन्ह के पालन करना होता था। यह मंगोल रीति-रिवाजों और जीवन के आचार-विचार को भी परिलक्षित करता है।

तेरहवीं शताब्दी में मंगोल वर्चस्व खानाबदोश समूहों की दुनिया के स्थायी बसे हुए समाज़ों पर एक महत्वपूर्ण जीत थी। मंगोलों ने मध्य एशिया के बड़े क्षेत्र पर आगे एक और शताब्दी तक और उनके तुर्की-भाषी वंशजों ने इस क्षेत्र पर अपना प्रभुत्व आगे आने वाली डेढ़ शताब्दियों तक किया।

बोध प्रश्न-2

1) बद्दू कौन थे?

....

....

....

....

....

2) सीथियनों की प्रशासनिक व्यवस्था का 50 शब्दों में संक्षिप्त विवरण दीजिए।

....

....

....

....

....

3) हूणों पर एक संक्षिप्त टिप्पणी 50 शब्दों में लिखिए।

....

....

....

....

....

4) किन परिस्थितियों में कुछ खानाबदोश समूह साम्राज्य स्थापित करने में सक्षम हुए?

....

....

....

....

....

5) गेंगीज खान कौन था? संक्षेप में उसके क्षेत्रीय विजय अभियानों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

11.8 राजनीतिक संरचना

खानाबदोश (जिआँगनू, तुर्क और मंगोल) के सबसे बड़े संघ मध्य एशिया के स्टैप्स क्षेत्र में उभरे। जनजातीय नेता के मुखिया की राजनीतिक सत्ता के बारे में जानकारी जिआँगनू राजा के चीन के सम्राट वेंती (169-56 बी सी ई) को लिखे गए पत्राचार से मिलती हैः 'मैंने सभी तातार जनजातियों, जो घुड़सवारी के वक्त धनुष चला सकते थे, को एकजुट किया। मैंने यूची तुर्बुगताइ, लान्नोर को नष्ट कर दिया एवं अन्य छब्बीस पड़ोसी राज्यों को अपने नियंत्रण में ले लिया। और यदि आप नहीं चाहते हैं कि हंग-नू महान् दीवार को पार करे तो आपको चीनियों को दीवार के पास आने की अनुमति नहीं देनी चाहिए। यह भी देखें कि मेरे दूत सुरक्षित रूप से वापस आयें और उन्हें एक बंदी के रूप में नहीं रखा जाए' (सांकृत्यायन, 1964: 19)। यह खानाबदोश लगातार चीन में बसे स्थायी साम्राज्य के साथ संघर्षरत थे। जिआँगनू और चीनी सतारूढ़ वंश किंन/हान; खानाबदोश तुर्क और चीन के सुइ/तांग; खानाबदोश मंगोल और सांग शासकों के बीच संघर्ष होते रहते थे। जब ये समूह बिखरे हुए थे वह चीन

के शक्तिशाली साम्राज्य के खिलाफ खड़े नहीं हो सकते थे। लेकिन जब ये समूह एक शक्तिशाली नेता के अधीन एकजुट होते थे तो वह हमेशा चीन के सबसे बड़े दुश्मन के रूप में खड़े हुए। यह उनके मजबूत राजनीतिक संगठन के कारण था।

स्टैप्स के इन खानाबदोश समूहों ने एक सुव्यवस्थित राजनीतिक प्रणाली की स्थापना की। खानाबदोश समूहों के राजनीतिक संगठन की संरचना के तीन बुनियादी स्तर थे, प्रथम, केंद्र कबीलाई शासक वंश द्वारा नियंत्रित किया जाता था; दूसरे स्तर पर राज्यपाल थे जो विभिन्न जनजातीय समूहों की देखरेख करते थे और सेनाओं की कमान संभालते थे। संगठन के तीसरे स्तर पर विभिन्न समूहों के स्थानीय जनजातीय नेता थे। वे अपने जनजातीय समुदाय के नेता थे और कबीले के *खाकान* के आदेश के अनुसार अपने कर्तव्यों का निर्वाह करते थे।

मध्य एशिया की खानाबदोश जनजातियों के बीच राज्य शक्ति चंगेज खान के समय से पूर्व तक कमज़ोर बनी रही। चंगेज खान ने स्टैप्स की खानाबदोश संरचना में कई नवीन तत्वों की शुरुआत की। कबीलों का राजनैतिक संगठन वंश-आधारित था जो खून के रिश्ते द्वारा अनेक परिवारों से संबंधित थे। राजनीतिक समूह के नेता के संबंध में कबीलों की सभा द्वारा निर्णय लिया जाता था, जिन्हें *कुरूलताई* रूप में जाना जाता था। *कुरूलताई* जनजातीय समूह के नेता की राजनीतिक स्थिति पर निर्णय लेती थी। *यासा* जनजातीय संगठनों द्वारा अपनाई गई कानून संहिता थी। *यासा* ने समाज के संचालन में मदद की और खानाबदोश साम्राज्य का कानूनी व्यवहार तय किया। खानाबदोश जनजातियां अपने मुखियाओं के नेतृत्व में जीवनयापन करती थीं और इन मुखियाओं के पास अपने जनजातीय लोगों पर नियंत्रण की अत्यधिक शक्तियां थीं। यह जनजातीय मुखिया एक सफल लड़ाई के बाद योद्धाओं के बीच लूट विभाजित करते थे। वे विवादों को भी सुलझाते थे, इस प्रकार वे न्यायाधीश का भी कार्य करते थे।

11.9 खानाबदोश समाज

खानाबदोश यूरेशियन समाज का एक महत्वपूर्ण और अभिन्न अंग थे। उन्होंने पशुधन-पालन की उच्च विकसित तकनीक, पशुओं की चराई, खानाबदोशों के स्थानांतरण और शिल्प और युद्ध के विभिन्न रूपों के साथ एक विशेष अर्थव्यवस्था की स्थापना की। उनकी, पशुधन के व्यक्तिगत स्वामित्व और चरागाहों के सामुदायिक स्वामित्व की दोहरी प्रणाली पर आधारित एक अद्वितीय और अत्यधिक विकसित सामाजिक संरचना थी। दो वजहों से खानाबदोश भ्रमणशील थे: पहला, स्वयं समाज की आंतरिक गतिशीलता, और दूसरा बाह्य गतिशीलता, तेजी से चलने और दूरदराज के क्षेत्रों में स्थानांतरण की क्षमता, शांतिपूर्ण और सैन्य दोनों ही कारणों से। जैसा कि पहले कहा गया है, खानाबदोश आमतौर पर नखलिस्तान के पास रहते थे, जहां बसे किसान शहरी जीवन व्यतीत करते थे। इस प्रकार, वहां उनके बीच आदान-प्रदान होता था, अर्थात, खानाबदोश और स्टैप्स के स्थायी बसे समाजों के बीच गठबंधन का यह रिश्ता जो कुछ स्थानों पर वैवाहिक संबंधों के रूप में भी था, जबकि अन्य स्थानों पर वे आपस में युद्ध में संलग्न थे। बारफील्ड (2001) द्वारा उनके संबंधों का अध्ययन किया गया है और उनका विचार है कि स्टैप्स के खानाबदोशों ने बसे हुए चीन के साम्राज्य के प्रति 'बाहय सीमा रणनीति (outer frontier strategy) को अपनाया। वह व्याख्या करते हैं :

> बाह्य सीमा रणनीति के तीन प्रमुख तत्व हैं: चीनी दरबार को डराने के लिए उग्र, बारी-बारी युद्ध और शांति की नीति द्वारा चीनी शासकों द्वारा प्रदत्त अनुदानों और विशेषाधिकार व्यापार की मात्रा में वृद्धि और जानबूझकर चीनी भूमि पर कब्जा करने से इंकार करना ताकि उसकी रक्षा करने के लिए उन्हें बाध्य न होना पड़े।

(बारफील्ड, 2001: 15)।

इस रणनीति के जवाब में चीन के सम्राटों ने भी तीन नीतियों को अपनाया:

1) रक्षात्मक जवाब, सीमाओं की किलेबंदी करना और खानाबदोशों की मांगों की उपेक्षा करना;
2) आक्रामक तरीके से जवाब देना। अभियानों के लिए घुड़सवार सेना को तैयार करना और स्टैप्स के खानाबदोशों पर हमला; और
3) उदार शांति संधियों के साथ भेंटों द्वारा खानाबदोशों को प्रसन्न करना जो उन्हें अनुदान और सीमा-क्षेत्रों के बाजार तक पहुंच प्रदान करती थी।

बारफील्ड, 2001: 16

इस प्रकार दोनों ने आदान-प्रदान के बंधन साझा किए, हालांकि यह सिर्फ अपनी व्यक्तिगत जरूरतों को पूरा करने के लिए था, लेकिन दोनों समुदाय एक दूसरे के साथ संबंधों में सुधार करने में व्यस्त रहे।

खानाबदोश समाज की प्राथमिक चिंता का विषय अपनी मवेशियों के लिए चरागाहों की खोज करना था। खानाबदोश समाज संप्रभुता, अधिकार-क्षेत्र पर नियंत्रण और संपत्ति अधिकार संबंधी विवाद, जिन्होंने स्थायी बसावट वाली सभ्यताओं के इतिहास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, की समस्याओं से कभी परेशान नहीं हुआ, हालांकि खानाबदोश समाज में वहां शासक द्वारा निरंकुश शासन करने के लिए कोई प्रतिबंध नहीं था। निरंकुश शासन को केवल परंपरा और सामाजिक पदानुक्रम संबंधी कबीले की भावना और विद्रोह के डर की शक्ति से रोका जा सकता था।

खानाबदोश समूहों की सामाजिक संरचना

स्टैप्स समाज विभिन्न जनजातीय समूहों की घुमंतू संस्कृति पर आधारित था। प्रवास चक्र (migration cycle) खानाबदोश संस्कृति का अनिवार्य हिस्सा था। जनजातीय समूहों में पशुओं और मानव समूहों की शक्ति के आधार पर असमानता थी। इन खानाबदोशों की सभी घरेलू जरूरतों को लकड़ी और चमड़े के द्वारा बनाया गया था। समाज में पुरूष और महिला दोनों एक बराबर जिम्मेदारियां साझा करते थे।

> पुरुष की जिम्मेदारियों में पशु चराई के साथ धनुष और तीर और अन्य उपकरण बनाना शामिल था। बाकी समय में वह शिकार, तीरंदाजी और सैन्य अभियान के साथ खुद को व्यस्त रखते थे। अन्य सभी श्रम महिलाओं की जिम्मेदारी थी – घर का काम, दूध निकालना और पशुओं से अन्य उत्पादों को तैयार करना और बच्चों की परवरिश। जब पुरुष अनुपस्थित होते थे तो महिलाओं को पूरा बोझ झेलना पड़ता था।

क्रेदिन, 2018: 2

सीथियन समाज में महिलाओं और पुरुषों को समान रूप से महत्वपूर्ण समझा गया। सीथियन समाज में कई महान् महिला प्रमुख भी शामिल थीं जिन्होंने राजनीतिक मामलों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। उदाहरण के लिए, 530 बी सी ई में ईरानियों ने मसागेताई सीथियनों के क्षेत्र पर साइरस[15] के नेतृत्व में हमला कर दिया। इस युद्ध में साइरस ने सीथियनों को पराजित किया और साइरस ने सीथियनों के सैन्य सेनापति स्पारगेपाइसेस को मार डाला। इस अवसर पर सीथियन रानी टोमीरिस, ने सेना की कमान संभाली और अपने बेटे स्पारगेपाइसेस की मौत का ईरानियों से बदला लिया। प्राचीन काल की सबसे प्रसिद्ध अत्यंत भयानक कहानियों में से एक में, टोमीरिस ने ईरानी राजा साइरस महान् के सिर काटने और उसके खून से शराब पात्र को भरकर, उसमें रखने का आदेश दिया। टोमीरिस की बहादुरी और दृढ़ इरादों की आज भी अत्यधिक सराहना की जाती है। उसकी लोकप्रियता के सबूत के रूप में महिलाओं का नाम टोमीरिस रखना राष्ट्रीय गौरव के प्रतीक के रूप में कज़ाकिस्तान में आम है (देखें रेखाचित्र https://www.wga.hu/html_m/p/preti/tomyris.html जिसमें सीथियन रानी द्वारा ईरान के राजा साइरस के सिर को प्राप्त करते हुए दिखाया गया है)।

[15] साइरस एक महान् राजा था और अकामिनिड साम्राज्य (550 बी सी ई) का संस्थापक था। यह पहला ईरानी साम्राज्य था जिसमें वर्तमान बुल्गारिया, रोमानिया और यूक्रेन के क्षेत्र शामिल थे।

सीथियनों में अपने मृतकों को उनके सामानों के साथ दफन करने की परंपरा थी। *कुरगना* कब्रें सीथियनों की जीवन-शैली पर प्रकाश डालती हैं। *कुरगना* कब्र में पाए जाने वाले सामान से मृतक की सामाजिक स्थिति के बारे में संकेत मिलता है। सीथियन राजा, *इसिक माउंड,* को अपनी लंबी तलवार, एक छोटी कटार, मिट्टी के जार, मांस के साथ लकड़ी की प्लेट और सोने और चांदी के कीमती कटोरों, जो निर्विवाद रूप से उनके धन को दर्शाता है, के साथ दफनाया गया था। अन्य सीथियन कब्रों में अधिक साधारण वस्तुएं थीं जो मृत पुरुषों के साथ दफनाई जाती थीं। यह इंगित करता है कि सीथियन समाज के भीतर सामाजिक स्तरीकरण था।

हूण समाज की अपनी प्रथागत कानूनी प्रणाली थी इसके अनुसार तलवार खींचने पर मौत की सजा थी और चोरी करने पर न केवल चोर की संपत्ति बल्कि उसके संपूर्ण परिवार की संपत्ति को भी जब्त कर उसे दंडित किया जाता था। छोटे अपराधों के लिए चेहरे को काट कर दंडित किया जाता था। हूण समाज आद्य-सामंती (proto-feudal) के रूप में जाना जा सकता है। जैसा कि एक सामंती समाज में देश की भू-जागीरें साम्राज्य के सामंती सरदारों को वंशानुगत आधार पर प्राप्त होती थीं, वहीं हूण समाज में लोगों को जागीर की तरह दिया जाता था। जैसे-जैसे हूणों ने अधिक से अधिक क्षेत्रों पर विजय प्राप्त की विजित राज्यों के शाही घरों के सदस्यों को भी हूण साम्राज्य के लोगों को, जो उन्हें शासन करने में मदद करते थे, दे दिया जाता था। विदेशी बंदी अक्सर दास बनाए जाते थे और वे रोमन दास व्यापारियों को बेच दिए जाते थे। हूण, हूण दास नहीं रखते थे। एक हूण परिवार के स्वामित्व में एक दास के साथ अक्सर अच्छा व्यवहार किया जाता था। उन्हें अपनी स्वतंत्रता खरीदने अथवा लड़ाई में उनके स्वामी की ओर से लड़ने के बदले में अपनी स्वतंत्रता अर्जित करने की अनुमति दी जाती थी। शिकार और तीरंदाजी ने हूणों के दैनिक जीवन में एक प्रमुख भूमिका निभाई। वे सक्रिय रूप से बचपन से ही शिकार पर जाने के लिए अपने बच्चों को प्रोत्साहित करते थे। हूण महिलाएं न केवल घुड़सवारी करने में निपुण थीं, बल्कि वे निपुण तीरंदाज थीं, धनुष, विशेषकर तीर और कमान के प्रयोग में। वे दुश्मन के हमलों से बच्चों और बूढ़े लोगों के बचाव में अपने पतियों की मदद करती थीं। तालास किले की दीवार पर (36 बी सी ई) पुरुषों के साथ मिलकर वे बहादुरी से रोमन और चीनी सैनिकों के विरूद्ध लड़ीं और सबसे बाद में उन्होंने अपनी चौकी को छोड़ा। रक्षा के क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी और बच्चों के प्रशिक्षण में धनुष और तीर को संभालने की शिक्षा देना स्पष्ट रूप से जीवन की आवश्यकताओं की ओर संकेत करता है। इसने खानाबदोश हूण की, जो संख्या में छोटे समूह थे, अपनी स्वतंत्रता की रक्षा में मदद की। हूण सूरज, चांद और अन्य खगोलीय पिंडों की पूजा करते थे और आकाश, पृथ्वी, आत्मा और अपने पूर्वजों को बलि प्रदान करते थे (हरमट्टा, 1994: 159-160)।

तुर्की समाज में सामाजिक और आर्थिक स्थिति के आधार पर समाज के भीतर भेदभाव और पदानुक्रम था। स्टैप्स के खानाबदोश समाज अब धन के आधार पर विभाजित थे। तुर्की शिलालेख में अमीर व्यक्तियों *(Bays)* को गरीब लोगों *(Cygay)* के विपरीत श्रेष्ठतर दर्शाया गया है। गरीब पुरुषों को दयनीय, तुच्छ और दीन-हीन रूप में वर्णित किया गया है। हालांकि, 'तुर्कों का प्रमुख धन और सबसे आकांक्षित लूट पशुधन, विशेष रूप से घोड़ों के झुंड, थे। आम सैनिकों के दफन टीले उच्च जाति के दफन क्षेत्रों की तुलना में तुच्छ थे।

> गरीब किसानों की कब्र में लेकिन न तो महंगे हथियारों और न ही घोड़ों को पाया जा सकता है। गरीब खानाबदोश जिन्होंने अपने पशुओं को खो दिया था, सर्दियों की तिमाहियों में छोटी स्थाई बस्तियों (*बालिक*) में बस गए जहां वे आदिम कृषि करते थे। वह मुख्य रूप से बाजरा उगाते थे और छोटे किलों (*क़ुर्गन* या *क़ूर्गन*) का निर्माण करते थे, जिसमें उनके अनाज का संग्रहण किया जाता था। चाहे किसी भी प्रकार के संघर्ष ने, अमीर और गरीब, बेग और जन साधारण के बीच, कैसी भी खटास पैदा की हो, एक समग्र रूप में यह समुदाय दूसरे क्षेत्र की जनसंख्या से काफी अलग था। जो दास (*कुल कुन,* पुरुष और महिला दास) थे और *एर्स* पर निर्भर थे उनको कोई अधिकार नहीं थे और वे प्राचीन तुर्क समाज की परिधि पर स्थित थे।
>
> **हिस्ट्री ऑफ सिविलाइजेशन ऑफ सेंट्रल एशिया, भाग III : 331**

मंगोलों के जनजातीय समाज को *उलूस* के रूप में जाना जाता था। इस समाज में पशुधन पर कब्जे की संख्या के आधार पर जनजातीय सदस्यों को दर्जा हासिल होता था। ***नोयन*** खानाबदोश समाज के जनजातीय समूह के मुखिया होते थे। वह खानाबदोश साम्राज्य के सम्राट – *खान/खाकान* के सलाहकार थे। उनका मुख्य कार्य छापों और युद्धों के दौरान कबीले और सैन्य नेताओं के प्रवासी स्थानांतरण को भी नियंत्रित करना था। वह जनजाति के सैन्य अभिमानों के आयोजक थे। *अरात* जनजातीय समूहों के भीतर एक और चरवाहा समूह था जो अपेक्षाकृत छोटे झुंडों के स्वामी थे और समूह के नेता से चरागाह प्राप्त करते थे। वह *खान* और *नोयन* को बारी-बारी से अपनी सेवाएं प्रदान करते थे। निचले स्तर पर एक अन्य समूह *बोगोल* था जो संभवतः *नोयन* और *अरात* से संबंधित थे। वे समूह के नेताओं के लिए काम करते थे। चरावाही बड़े पैमाने पर बच्चों और किशारों द्वारा की जाती थी। महिलाएं *युर्त* में दूध, ऊन और मांस आदि तैयार करती थीं। गोबी रेगिस्तान में ऊंट की ज़्यादा देखभाल की जरूरत नहीं थी, हालांकि घोड़ों के लिए चराई के मैदान आवश्यक थे।

11.10 खानाबदोश कला

खानाबदोश समूहों के बीच जातीय और भाषाई मतभेदों के बावजूद स्टैप्स जीवनशैली समस्त खानाबदोश संस्कृतियों और क्षेत्रों में काफी समान थी। भाषाई अंतर के आधार पर मध्य एशिया के स्टैप्स क्षेत्र के खानाबदोशों को तीन मुख्य भाषाई समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः भारतीय-यूरोपीय[16], तुर्क[17], और मंगोल[18]। खानाबदोश जनजातियां 20 से अधिक सदियों तक मध्य एशिया में सक्रिय रहीं। उन्हें मध्य एशिया के बसे लोगों द्वारा बर्बर कहा जाता था क्योंकि जिन वस्तुओं की उन्हें जरूरत होती थी उन्हें लूटने के लिए वे स्थायी बसे लोगों पर हमला करते थे। इन खानाबदोश लोगों की कलात्मक संस्कृति स्थायी बसी सभ्यताओं के प्रभाव के तहत विकसित हुई। यह खानाबदोश, जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानांतरण करते रहे, कांस्य, चांदी और सोने की कलाकृतियां अपने पीछे छोड़ गए। उनकी कला ने पोशाक, उपकरणों के अलंकरण, पट्टा फलक (plaque), घोड़ों के साज-समान (harness) तलवारों के पट्टे और बकसुये, वैगन के चौखटे, हत्थे, तलवार की म्यान और कालीनों पर ध्यान केंद्रित किया।

खानाबदोश जनजातियों की संस्कृति सीथियनों के साथ शुरू हुई, जो कि पहली खानाबदोश जनजाति थी जिसने खानाबदोश साम्राज्य स्थापित किया। सीथियन खानाबदोशों ने कई सांस्कृतिक पहलुओं को खानाबदोश कला में प्रस्तुत किया। सीथियन लड़ाई में कुल्हाड़ी, भाले और तलवारें प्रयोग करते थे। सीथियनों ने धनुष और तीर के प्रयोग की शुरुआत भी की। उनके धनुष हड्डी, पत्थर और कांस्य के बने होते थे। सीथियन पशु कला के रचनाकार भी थे। पशु कला सभी खानाबदोश जनजातियों के बीच सीथियनों के समय से काफी विकसित हुई। इसका यह भी कारण था कि यह खानाबदोश समूह शिकारी और संग्रहकर्ता थे। सीथियन कला ने असीरिसन[19] प्राकृतिक कला को प्रभावित किया। इस प्रकार सीथियन पशुकला को असीरियन प्रकृतिवाद के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। असीरियन कला, राजाओं के महलों की दीवारों पर फली-फूली, लेकिन सीथियनों ने सजावटी पशु मूर्तियों को बनाने के लिए सोने का इस्तेमाल किया। इस प्रकार असीरियन कला के विपरीत सीथियन कला

[16] इस भाषा को शुरूआती दौर में बोलने वाले लोग कॉकेशस और रूस के यूक्रेन और पड़ोसी क्षेत्रों के आस-पास बसे थे। सिमेरियन, सीथियन और सरमातियनों ने भारतीय-यूरोपीय भाषा का प्रयोग किया।

[17] तुर्की संस्कृति और भाषा वर्तमान साइबेरिया में ऊपरी एनीसी नदी के आसपास पांचवी शताब्दी बी सी ई में शुरू हुई थी।

[18] मंगोल भाषी जनजातियां मंगोलिया और मंचूरिया से थीं और उन्होंने उत्तरी स्टैप्स क्षेत्र की ओर विस्तार किया।

[19] असीरियन साम्राज्य मेसोपोटामिया का राज्य था जिसने जानवरों और प्रकृति का उपयोग अपनी कला में 1500 बी सी ई में शुरू किया।

खानाबदोश जनजाति की संस्कृति थी। हालांकि उनकी कलाकृतियों की विषय-वस्तु जानवरों या पक्षियों के चित्र थे, लेकिन उन्होंने उन्हें कहीं अधिक उत्कृष्ट रूप से सजाया। सीथियनों ने अपने गहने और आभूषण तैयार करने के लिए सोने का प्रयोग किया। मध्य एशिया की सभी खानाबदोश कलाओं की विषय-वस्तु पक्षी और पशु बने रहे। पहली सीथियन कलाकृति, कूबन के कलेर्मेस से प्राप्त लोहे और सोने की कुल्हाड़ी (छठी शताब्दी के आसपास की) है, जो पुरानी असीरो-बेबीलोन और लूरिस्तानियन विषय को प्रदर्शित करती है, जिसमें दो साकिन (ibexes) जीवन के पेड़ के आगे खड़े हैं। 'पशुओं को एक यथार्थवादी ढंग से चित्रित किया गया है और कला स्पष्ट रूप से असीरियन पशु कला से प्रेरित है'। सीथियन कला इससे शुरू हुई, जिसे 'असीरियन (या यूनानी) प्रकृतिवाद से अलंकरण के बदलाव के रूप में परिभाषित कर सकते हैं' (ग्रोसे, 1970: 11-12)। सीथियन कला, कोस्त्रोम्स्काया कब्र से प्राप्त स्वर्ण हिरण के साथ अपने विशिष्ट रूप में प्रकट होती है। खानाबदोश कला में प्रकृतिवादी स्पर्श और अलंकरण शैली दोनों अद्वितीय थे। पशु शैली के यथार्थवाद को उनकी कला में चित्रित किया गया है।

चित्र 11.3 : **तेंदुए के साथ सोने की सीथियन पट्टिका, सातवीं शताब्दी बी सी ई के अंत में**

साभार: साईल्को, 2011

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/d/d3/Placca_pantera%2C_da_regione_di_drasnodar%2C_kurgan_chertomlyk%2C_oro_a_sbalzo_e_cesellato%2C_fine_VII-sec_ac…JPG

त्यानशान में नरीन (खिरगिजिया) की खुदाई में सीथियनों के अलग तरह के बाणों की नोकें और मिट्टी के गोलाकार बर्तन मिलते हैं, जो उनकी खानाबदोशी सांस्कृतिक शैली को दर्शाता है। सीथियनों द्वारा प्रयुक्त कांस्य के हथियारों को पूर्वी यूरोप (चेर्तोम लिक) से बाइकाल झील और मंचूरिया की सीमा में भी पाया गया है।

हूण कला के मुख्य स्थल बाइकाल झील क्षेत्रों के होपेइ, शांसी और शेंसी के सीमांत क्षेत्रों में पाए गए हैं जो हूण संस्कृति पर विशेष प्रकाश डालते हैं:

1) चीन की झील के उत्तर स्थल पर त्रास्बैकालिया (दूसरी से तीसरी सदी बी सी ई) में कब्रें हैं जहां 118 बी सी ई के बाद जारी चीनी हान सिक्के पाए गए हैं।

2) बाहरी मंगोलिया में ऊर्गा के पास नोइन उला में हूण राज्य के राजकुमार की एक कब्र पाई गई है जो संभवतः दूसरी शताब्दी की है। कब्र में स्टैप्स कला की कांस्य कलाकृतियां, एक ही तरीके से सजे हुए शानदार ऊनी कपड़े (एक ग्रिफिन बारहसिंघा से लड़ते हुए; शेर एक याक पर हमला करते हुए) आदि पाए गए हैं।

हूण कला की कई विशेषताएं हैं और बेल्ट फलक (plaques) या अन्य प्रकार के फलक, मांउट, हुक और कांसे के बने कुंदे (stud) और 'जानवरों के शैलीगत रूपांकन (motif), अथवा हिरणों के झुंडों को लाठी के सिरे को घुमाकर उन्हें मारने के चित्रण का प्रतिनिधित्व करती हैं'। इस कला को *ऑर्डोस* कला के रूप में जाना जाता है जिसका नाम मंगोल ऑर्डोस जनजाति के नाम पर पड़ा जो 16वीं सदी में शेंसी के उत्तर में पीली नदी के परिपथ पर बसी थी, इस क्षेत्र से विशेष रूप से भरपूर मात्रा में पुरातात्विक अवशेष मिलते हैं' (ग्रोसे, 1970: 24)। ऑर्डोस कला स्टैप्स की शैलीगत पशु कला की एक शाखा थी और उसकी फलकों (plaques) को युद्धरत घोड़ों, हिरन और बाघ, भालू तथा शानदार जानवरों के साथ लड़ाई करते हुए घोड़े अथवा हिरणों से अलंकृत किया गया है।

स्टैप्स के खानाबदोश समूहों में तुर्क कई स्मारकों को बनाने के लिए जाने जाते थे। उनके सबसे विख्यात स्मारकों में से एक है 'पत्थर के आदमी' की मूर्ति। यह 'पत्थर के आदमी' का स्मारक एक तुर्की योद्धा का है जो एक लंबा कोट पहने खड़ा है, जो एक हाथ में आग से भरा कप पकड़े है तथा दूसरे हाथ से एक चाकू के हत्थे को पकड़े हैं। यह दर्शाता है कि पशु और प्राकृतिक कला जो सीथियनों और हूण कला से विकसित हुई, तुर्कों के समय में बदल गई। अब ये इन खानाबदोश जानवरों और प्रकृति के स्थान पर अपने योद्धा सैनिकों को महत्व देने लगे। 'पत्थर के आदमी' की कलाकृति के साथ तुर्की सरदारों की कब्रें भी मंगोलियाई क्षेत्र के कुछ हिस्सों में पाई जाती हैं। इन शवाधान स्थलों में मूर्तियों के साथ तुर्की शिलालेख भी अंकित थे जो मृत व्यक्ति के बारे में प्रकाश डालते हैं। ये शवाधान स्थल, भवनों और मूर्तियों के साथ बड़े परिसरों में योजित किए गए थे।

अन्य खानाबदोश समूहों की तरह मंगोलो ने स्थायी बसे हुए लोगों की कला को अपनाया और सराहना की। सभी मंगोल शासकों (*खान*) ने स्थायी बसे लोगों की कला को अपनया और संरक्षण प्रदान किया। मंगोलों में घर की हर वस्तु को, अपने *गेर* के अंदर और पशुओं के बाडे को सजाने की प्रवृत्ति थी। मंगोल राजधानी कराखरम को चंगेज के बेटे उगुदेइ ने बसाया और अलंकृत किया। मंगोलो को संगीत से प्यार था, संगीत में उन्होंने एक अनूठी गायन शैली विकसित की थी जो गले से गायन या *खूमि* के नाम से जानी जाती है।

बोध प्रश्न-3

1) मध्य एशिया के खानाबदोशों की राजनीतिक संरचना का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

2) सीथियनों और हूणों की सामाजिक संरचना पर पांच पंक्तियां लिखिए।

....

....

....

....

....

3) मध्य एशिया की खानाबदोश कला की मुख्य विशेषताएं बताइये।

....

....

....

....

....

11.11 सारांश

जहां खानाबदोश साम्राज्यों ने कई शताब्दियों तक स्थायी बसे समाजों पर शासन किया, वहीं खानाबदोश कभी नहीं बदले और उन्होंने स्थायी बसे समूहों के तरीकों को भी नहीं अपनाया। लड़ने के लिए खानाबदोशों ने हमेशा धनुष के उपयोग को प्राथमिकता दी। उदाहरण के लिए, जब स्थायी बसी संस्कृतियों के लोगों ने आधुनिक प्रौद्योगिकियों की दिशा में प्रगति कर ली थी तब भी खानाबदोशों ने लड़ने के लिए धनुष का उपयोग जारी रखा। खानाबदोशों की शस्त्र संबंधी कमज़ोरी ने स्थायी बसे समूहों को समय के साथ उन्हें वश में करने का अवसर प्रदान किया। खानाबदोश जीवनशैली में उनकी दृढ़ता और अटल विश्वास का तैमूर जैसा योद्धा, जो तुर्क-मंगोल विजेता और अंतिम खानाबदोश नेताओं में था तथा जिसने भारत और मध्य एशिया में विशाल तिमुरिद साम्राज्य स्थापित करने के बाद भी खानाबदोश जीवनशैली का समर्थन जारी रखा। यह उसकी जीवनशैली से भी प्रदर्शित होता है। हालांकि उनका खानाबदोश जीवन का यह समर्थन, दुनिया को जीतने के अपने सैन्य दृष्टिकोण पर आधारित था क्योंकि एक खानाबदोश की तरह की जिंदगी एक योद्धा के लिए उपयुक्त थी, जो हमेशा लड़ाई के लिए तत्पर रहते थे।

11.12 शब्दावली

बद्दू : खानाबदोश अरबी लोगों का एक समूह है जो उत्तरी अफ्रीका के अरब प्रायद्वीप इराक और लेवांट के रेगिस्तानी क्षेत्रों में बसे हुए थे।

नोयन : *नोयन* मंगोल साम्राज्य में सरदारों की एक उपाधि थी और जिसे बाद में सत्ता के पद के रूप में इस्तेमाल किया जाने लगा।

रकाब : छल्ला या *रकाब* जो घुड़सवार को पैर की बेहतर पकड़ बनाने में सहायता देती है, जो एक बैल्ट द्वारा काठी से जुड़ी होती थी।

युर्त : गोलाकार टैंट जो मध्य एशिया के खानाबदोश लोग अपने रहने के लिए प्रयोग करते थे।

11.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) अधिक जानकारी के लिए भाग 11.3 देखें

2) खानाबदोश जीवन की व्याख्या करें और पशुचारी खानाबदोश जीवन को व्याख्यायित करें। अंतर के लिए भाग 11.2 देखें

3) भाग 11.4 और 11.5 देखें

4) भाग 11.5 देखें। मध्य एशिया में खानाबदोश साम्राज्य की स्थापना के कारणों की व्याख्या करें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 11.6 देखें

2) उप-भाग 11.7.1 देखें

3) उप-भाग 11.7.3 देखें

4) अधिक जानकारी के लिए भाग 11.7 देखें

5) उप-भाग 11.7.6 देखें

बोध प्रश्न-3

1) भाग 11.8 देखें। स्टैप्स के शक्तिशाली खानाबदोश समूहों द्वारा एक सुसंगठित राजनीतिक व्यवस्था का गठन किया गया था।

2) भाग 11.9 देखें

3) भाग 11.10 देखें

11.14 संदर्भ ग्रंथ

एडले, चहरयार. हवीब, इरफान. एवं बाडपाकर, कार एम. 2008. *हिस्ट्री ऑफ सिविलाइजेशन ऑफ सेन्ट्रल एशिया: डेवलपमेंट इन कॉन्ट्रास्ट फ्राम द सिक्सटींथ टू द मिड-नाइनटीथ सेंचुरी.* भाग V. मल्टीपल हिस्ट्री सीरीज. पेरिसः यूनेस्को.

एडशीड, एस. ए. एम. 1993. *सेन्ट्रल एशिया इन वर्ल्ड हिस्ट्री.* लंदनः पालग्रेव मैकमिलन.

आसीमांव, एम. एस. एवं बॉसवर्थ, क्लिफ्रोर्ड एडमंड. 1999. *हिस्ट्री ऑफ सिविलाइजेशन्स ऑफ सेन्ट्रल एशिया.* भाग IV. मल्टीपल हिस्ट्री सीरीज. पेरिसः यूनेस्को.

बारफील्ड, थॉमस जे. 2001. 'द शेडो एम्पायर्स : इम्पीर्रियल स्टेट फार्मेशन अलॉन्ग द चाइनीज-नोमेड फ्रांटियर'. *एम्पायर.* संपादित, सुसान ई अल्कॉक. टेरेंस एन. डी. अल्ट्रॉय, कैशलीन डी. मॉरिसन. एवं कार्ला एम. सिनोपोली. कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

बेकविथ, क्रिस्टोफर आई. 2011. *एम्पायरस ऑफ द सिल्क रोड.* प्रिसटन यूनिवर्सिटी प्रैस. यूनाईटेड किंगडम.

चालिआंड, जेरार्ड. 1934. *नोमोडिक एम्पायर्स फ्रॉम मंगोलिया टू द डेन्यूब.* अनुवाद ए. एम. बैरैट (2004). यू.एस.ए.: ट्रांसेक्सन पब्लिसर्स.

दानी, ए. एच. 1993. संपा. *हिस्ट्री ऑफ सिविलाइजेशन ऑफ सेन्ट्रल एशिया : द डॉन आफ सिविलाइजेशनः अर्लिएस्ट टाइम्स टू 700 बी. सी.* भाग I, पेरिसः यूनेस्को.

गोल्डन, पीटर बी. 2011. *सेन्ट्रल एशिया इन वर्ल्ड हिस्ट्री.* न्यूयार्कः ऑक्सफार्ड यूनिवर्सिटी प्रेस (ओ यू पी).

ग्रोसे, रेने. 1970. *द एम्पायर्स आफ द स्टेपीजः ए हिस्ट्री आफ सेन्ट्रल एशिया.* न्यू ब्रंशविक, न्यू जर्सीः रूटगर्स यूनिवर्सिटी प्रैस.

हरमट्टा, जेनोस. 1994. *हिस्ट्री ऑफ सिविलाइजेशन्स ऑफ सेन्ट्रल एशिया.* भाग II. *700 बी सी टू ए. डी. 250.* पेरिसः मल्टीपल हिस्ट्री सीरीज, यूनेस्को.

हेम्बली, गेविन. 1969. *सेन्ट्रल एशिया,* डेलाकोर्ट प्रेस. लंदनः वीडनफेल्ड एंड निकोलसस लिमिटेड.

हेरोडोटस. 1920. *द हिस्ट्रीज.* इंगलिश अनुवाद ए. डी. गोडेले. कैम्ब्रिजः हारवर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस.

हिट्टी, फिलिप के. 1937. *हिस्ट्री ऑफ द अरब्सः फ्रॉम द अर्लिएस्ट टाइम्स टू द प्रेजेंट.* न्यूयार्कः पालग्रेव मैकमिलन.

खजानोव, अनातोली एम. 1994. *नोमैड्स एंड द आउटसाइड वर्ल्ड.* विस्कोन्सिनः द यूनिवर्सिटी विस्कोन्सिन प्रैस.

खजानोव, अनातोली एम. 2003. 'नोमैडस ऑफ द यूरेशियन स्टेपीज इन हिस्ट्रोकिरल रेस्ट्रोस्पेक्टिव'. *नोमैडिक पाथवेज इन सोशल इवोल्यूशन.* सेन्टर ऑफ सिविलाइजेशन एंड रीजनल स्टडीज ऑफ द रशियन. मॉस्कोः एकेडमी ऑफ साइंसेज.

क्रोदिन, निकोलाई एन. 'नोमैडिज्म, इवोव्यूशन एण्ड वर्ल्ड सिस्टमः पेस्टोरल सोसाइटीज इन थ्योरीज ऑफ हिस्ट्रोरिकल डेवलपमेंट'. *जर्नल ऑफ वर्ल्ड-सिस्टम रिसर्च.* भाग 8, नं. 3.

क्रोदिन, निकोलाई एन. 2003. *नोमैडिक पाथवेज इन सोशल इवोल्यूशन,* सेंटर फॉर सिविलाइजेशन एंड रीजनल स्टडीज ऑफ द एशिया. मॉस्कोः एकेडमी ऑफ साइंसिज प्रैस.

क्रोदिन, निकोलाई एन. 2010. *नोमैड्स इन इनर एशिया ट्रांजिशन.* मॉस्कोः यू आर एस एस.

क्रोदिन, निकोलाई एन. 2015. 'नोमौडिक एम्पायर इन इनर एशिया'. *कॉम्प्लैक्सिटी आफ इंटरैक्शन अलॉग द यूरेशियन स्टेप जोन इन द फर्स्ट मिलेनियम* ए. डी. भाग 7. संपा. जॉन बेमन. माइकेल सहमांदर. बॉन कंट्रिब्यूशन्स टू एशियन आर्कियोलॉजी.

क्रोदिन, निकोलाई एन. 2018. 'एनसियट स्टेप नोमैड सोसाइटीज'. *ऑक्सफोर्ड रिसर्च एनसाइक्लोपीडिया ऑफ एशियन हिस्ट्री.* यू. एस. ए.: ओ यू पी.

लिटविंस्की, बी. ए. 1994. *हिस्ट्री ऑफ सिविलाइजेशन्स ऑफ सेंट्रल एशियाः 250 टू 750 ए. डी.* भाग III. पेरिसः मल्टीपल हिस्ट्री सीरीज, यूनेस्को.

मैकगवर्न, विलियम मॉन्टगोमरी. 1939. *द अर्ली एम्पायर्स ऑफ सेंट्रल एशियाः ए स्टडी ऑफ सीथियंस एंड द हूण्स एंड द पार्ट दे प्लेड इन वर्ल्ड हिस्ट्री, विद स्पेशल रिफरेंस टू द चाइनीज सोर्सिज.* द यूनिवर्सिटी आफ नार्थ कैरोलिना प्रैस.

रौदिक, पीटर. 2007. *द हिस्ट्री आफ द सेंट्रल एशिया.* लंदनः ग्रीनवुड प्रैस.

सांकृत्यायन, महापंडित राहुल. 1964. *हिस्ट्री ऑफ सेंट्रल एशिया, ब्रॉज़ी (200 बी सी) टू चंगेज खान (1227 ए. डी.).* कलकत्ताः न्यू ऐज पब्लिसर्स प्राइवेट लिमिटेड.

सिनोर, डेनिस. (संपा.) 2008. *द कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ अर्ली इनर एशिया.* यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ अमेरिकाः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रैस.

तमर, टी. इ. राइस. 1957. *एनशियंट पीपुल एंड प्लेसेजः द सीथियंस.* (सपां.) डॉ गियान डेनियल. लंदनः फ्रेडरिक ए प्रेइजर.

जिमोन्थी, इस्तवन एवं ओस्मान कारताय. 2016. *सेंट्रल यूरेशिया इन द मिडिल एजिज़.* ब्रीसबेदनः हरासोविट्ज वेरलग.

11.15 शैक्षणिक वीडियो

हॉर्स लॉर्डः ए ब्रीफ हिस्ट्री आफ द सीथियन्स
https://www.youtube.com/watch?v=IAxEtT3Ifa

ट्रेडीश्नल नालेज एंड स्किल्स इन मेकिंग किरगिज एंड कज़ाख युर्तसः यूनेस्को
https://www.youtube.com/watch?v=5fvjX90MfSw

हू आर द टर्क्स?
https://15minutehistory.org/2013/11/13/episode-31-who-are-the-turks

बायोग्राफी आफ गैंगीज़ खान
https://www.youtube.com/watch?v=2UCF-X73y-w

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

244 Blank

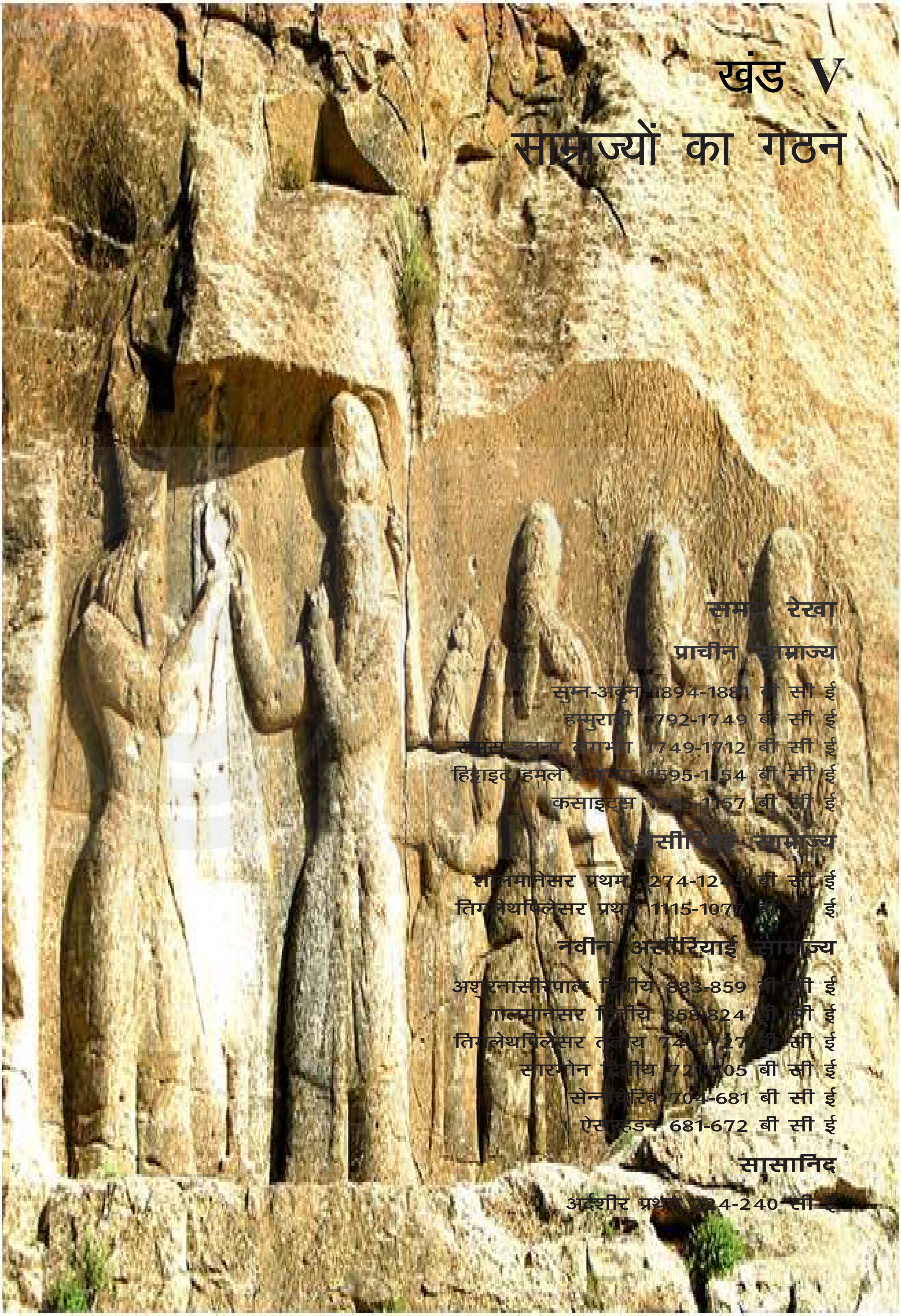

खंड V

साम्राज्यों का गठन

समय रेखा

प्राचीन साम्राज्य

सुम्न-अबुन 1894-1881 बी सी ई

हम्मुराबी 1792-1749 बी सी ई

समसु-इलुना लगभग 1749-1712 बी सी ई

हिट्टाइट हमले लगभग 1595-1154 बी सी ई

कसाइट्स 1595-1157 बी सी ई

असीरियाई साम्राज्य

शालमानेसर प्रथम 1274-1245 बी सी ई

तिगलेथपिलेसर प्रथम 1115-1077 बी सी ई

नवीन असीरियाई साम्राज्य

अशुरनासीरपाल द्वितीय 883-859 बी सी ई

शालमानेसर द्वितीय 858-824 बी सी ई

तिगलेथपिलेसर तृतीय 744-727 बी सी ई

सारगोन द्वितीय 721-705 बी सी ई

सेन्नाचेरिब 704-681 बी सी ई

ऐसरहडन 681-672 बी सी ई

सासानिद

अर्दशीर प्रथम 224-240 सी ई

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

चित्रांकन: अर्दशीर प्रथम की नक्काशीयुक्त पट्टिका, फिरुज़ाबाद, फ्रांस, ईरान

फोटोग्राफ: मिलाद वान्डेई

स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Ardashir_i%27s_relief_at_Firuzabad]Fars,_Iran,_JPG

इकाई 12 साम्राज्यों का गठन: असीरियन और बेबीलोनियन*

इकाई की रूपरेखा

12.1 उद्देश्य

12.2 प्रस्तावना

12.3 बेबीलोनियन साम्राज्य: उदय और क्षेत्रीय विस्तार

12.4 असीरियन साम्राज्य

12.4.1 क्षेत्रीय विस्तार

12.4.2 प्रशासनिक और सैन्य व्यवस्था

12.5 असीरिया का विभाजन और बेबीलोनिया के साथ संघर्ष

12.6 समाज और अर्थव्यवस्था

12.6.1 सामाजिक-आर्थिक विशेषताएं

12.6.2 सांस्कृतिक विशेषताएं

12.7 सारांश

12.8 शब्दावली

12.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.10 संदर्भ ग्रंथ

12.11 शैक्षणिक वीडियो

12.1 उद्देश्य

पिछली इकाई में आपने मध्य और पश्चिमी एशिया के खानाबदोश समूहों के बारे में पढ़ा। यह इकाई बेबीलोनियन और असीरियन साम्राज्यों पर केंद्रित है। यहां आपका परिचय मेसोपोटामिया के क्षेत्र में साम्राज्यों के गठन से होगा। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- बेबीलोनियन और असीरियन साम्राज्यों की स्थापना की प्रक्रिया को समझ सकेंगे,
- उन कारकों की पहचान कर सकेंगे जिन्होंने साम्राज्यों के विस्तार में सहायता की,
- साम्राज्यों की सामाजिक-आर्थिक विशेषताओं का उल्लेख कर सकेंगे,
- साम्राज्यों की सांस्कृतिक विशेषताओं को समझ सकेंगे, और
- साम्राज्यों की वृद्धि एवं विकास और उनके पतन के चरणों को समझ सकेंगे।

12.2 प्रस्तावना

लगभग 1800 बी सी ई से एक नई राजनैतिक संरचना स्वरूप में आई जिसे 'साम्राज्य' कहा जा सकता है। इस राजनैतिक संरचना की उत्पत्ति पश्चिमी एशिया में हुई। ये विस्तृत क्षेत्र

* डॉ. जीना जैकब, सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज़, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

में फैली हुई थीं, और अधिकतर साम्राज्यों की प्रकृति राजतंत्रीय थी। इन राज्यों में सेना के संसाधनों की कमी नहीं थी तथा भेंटों के रूप में राज्य कार्य के लिए धन एकत्र करके साम्राज्य की केन्द्रीय सत्ता को भेजा जाता था। ये साम्राज्य कुलीन समूहों द्वारा चलाए जाते थे जो कि साम्राज्य के केंद्र में स्थित थे। केंद्र में राजधानी और उसके आस-पास के क्षेत्र शामिल थे हालांकि परिधीय प्रदेशों और अन्य स्थानों में रहने वाले लोग साम्राज्य की राजधानी से दूर थे, परन्तु वे भी सत्ताधारी वर्ग का हिस्सा थे, लेकिन सत्ताधारी वर्ग में बहुलता केन्द्र प्रदेशों से थी और उनके एक दूसरे से नातेदारी और रिश्तदारी के सम्बंध थे जो कि सजातीय या एक ही कबीले के होने के कारण थे।

भौगोलिक रूप से विस्तृत और सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक रूप से विविधता वाले प्रदेश, जो साम्राज्य का हिस्सा थे, में विभिन्न व्यवस्थाओं को एक जगह पर सही ढंग से व्यवस्थित करने की आवश्यकता थी। इसके लिए कर व्यवस्था, विस्तृत नौकरशाही ढांचा और स्थाई सेना व्यवस्थित की गई थी। न्याय व्यवस्था को साम्राज्य के सभी समुदायों की आवश्यकताओं को पूरा करने की ज़रूरत थी जिनमें से सभी समाज में उन्नति के स्तर पर नहीं पहुँचे थे। साम्राज्य के विस्तृत होने के कारण कई प्रदेश जो केन्द्र क्षेत्र से बाहर थे उन्हें स्वयं आंतरिक समस्याओं को हल करने की शक्ति के साथ, जब तक वे नियमित रूप से भेंट जमा करते रहते थे तब तक उन प्रदेशों का शासन चलाने की अनुमति थी। कई बाहरी परिधीय क्षेत्र जो पूर्ण नियंत्रण में नहीं थे उन्हें बार-बार सैन्य हस्तक्षेप द्वारा सुदृढ़ बनाने की आवश्यकता थी।

साम्राज्य की उत्पत्ति स्थाई सैन्य बल की ताकत पर विस्तारण की आवश्यकता से हुई थी। निरंतर विस्तार के द्वारा सत्ताधारी उच्च वर्ग ने शक्ति के द्वारा अपनी पद-प्रतिष्ठा को बनाकर रखा और अधिकतर विस्तृत प्रदेशों पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया। उस समय परिस्थिति यह थी कि साम्राज्य जितना बढ़ता था उतने ही अधिक संसाधनों पर उसका नियंत्रण होता था। साम्राज्य के आकार और विस्तार के अनुसार ही उसे उतनी ही बड़ी स्थाई सेना की आवश्यकता थी। इतनी बड़ी सेना के रखरखाव के लिए बड़ी मात्रा में संसाधनों की आवश्यकता थी। इसलिए, साम्राज्य के विस्तार, भेंटरूपी शुल्क का संकलन और सेना के रखरखाव के बीच में एक मूलभूत कड़ी थी।

पश्चिम एशिया में साम्राज्य का निर्माण करने का प्रयास लगभग 1800 बी सी ई के आसपास हुआ था। मेसोपोटामिया में पहले बेबीलोनिया के लोगों ने साम्राज्य स्थापित करने की प्रक्रिया शुरू की। हिट्टियों ने उनका अनुसरण करते हुए इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाया। हिट्टियों के आक्रमणों ने अंततः बेबीलोनियाई साम्राज्य का अंत कर दिया। कई शताब्दियों और लम्बे समय तक चलने वाला बाद का असीरियन साम्राज्य यह सुनिश्चित करता है कि मेसोपोटामिया साम्राज्य उस क्षेत्र में विविध प्रकार के आरंभिक साम्राज्यों के लिए एक प्रतिरूप की तरह रहे।

12.3 बेबीलोनियन साम्राज्यः उदय और क्षेत्रीय विस्तार

बेबीलोन (बब-इलानी, जिसका अर्थ है 'देवताओं का द्वार') उन एमोराई बसावटों में से एक है जो उत्तरी मेसोपोटामिया और सीरिया में अक्काड़ में उभरा[1] एमोरी, एक बहुत बड़ी जनजाति का भाग थे जो कि पश्चिमी सैमाइटिक के तौर पर पहचानी जाती थी, वे प्राचीन बेबीलोनियाई साम्राज्य के विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण थे। साम्राज्य की कार्यकारी भाषा अक्केड़ियन थी और बहुत लम्बे समय तक मेसोपोटामिया की भी मुख्य भाषा बनी रही। सुमेरियन और सुमेरो-अक्केडियन सभ्यताओं की धार्मिक प्रथाओं और विशेष गुण जैसे कि कीलाक्षर (cuneiform)

[1] एमोरी सैमाइटिक (Semitic-speaking) भाषी लोग थे जिन्होंने दक्षिणी मेसोपोटामिया में 21वीं शताब्दी बी सी ई से 17वीं शताब्दी बी सी ई तक अनेक नगर-राज्य स्थापित किए और उन पर शासन किया।

लिपि एमोरियाई लोगों ने अपनाई। सार्गों (लगभग 2334 बी सी ई) और उर (लगभग 2094-2047 बी सी ई) के तीसरे वंश के राजा जैसे शक्तिशाली सुमेरियन और अक्काडियन शासकों से प्रभावित होकर बेबीलोनिया साम्राज्य ने राजतंत्र परंपरा को अपनाया।

पहले वंश के दौरान प्राचीन बेबीलोनियाई साम्राज्य बहुत महत्वपूर्ण बन गया था जिसकी स्थापना सुमु-अबुम (लगभग 1894-1881 बी सी ई) ने की थी। छठे शासक प्रसिद्ध हम्मुराबी (शासन 1792-1749 बी सी ई), के शासन काल के दौरान दक्षिण मेसोपोटामिया एकीकृत किया गया और साम्राज्य उत्तरी मेसोपोटामिया के बहुत बड़े भाग में फैल गया। उसका साम्राज्य इरीदू, उर, लागाश, ज़बलाम, लार्सा, उरुक, अदाब, ईसिन, निपुर केशी, दिलबत, बोर्सिप्पा, बेबीलोन, कीश, मैलगियम, मशकाम, शापिर, कुथा, सिपर, इशनुन्ना, मारी और तुल्तुल नगरों को अपने में सम्मिलित किए हुए था। उसके उत्तराधिकारी समसु-इलुना (लगभग 1749-1712 बी सी ई) ने और अधिक प्रदेशों जिनमें दक्षिण में ईदा-मरास, ईमुतबले, उरुक और ईसिन को मिलाकर साम्राज्य को अधिक विस्तृत किया। यद्यपि उसके शासन काल के पश्चात् साम्राज्य का पतन हो गया। बेबीलोनिया हिट्टियों (लगभग 1600 बी सी ई) द्वारा दक्षिणी मेसोपोटामिया पर आक्रमण तक महत्वपूर्ण राजनीतिक केन्द्र बना रहा, इसी कारण इस क्षेत्र को बेबीलोनिया के रूप में जाना जाता था जिसका सम्बंध प्राचीन बेबीलोनिया साम्राज्य से था।

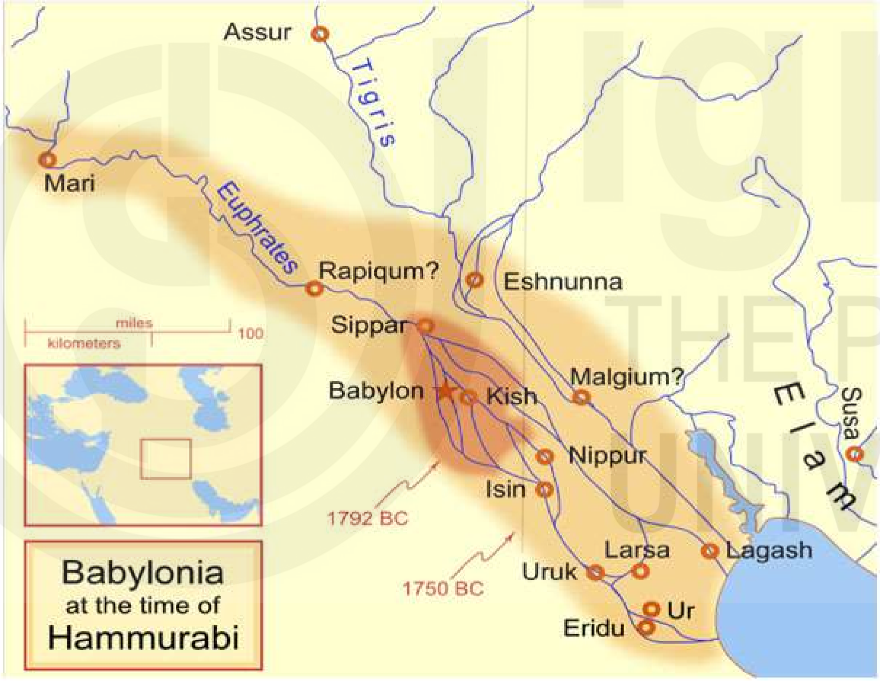

मानचित्र 12.1 : हम्मुराबी शासन काल के दौरान बेबीलोनियाई साम्राज्य की सीमा
साभारः मेप मास्टर, 2008

स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/1/12/Hammurabi%27s_Babylonia_1.svg

लगभग 1600 बी सी ई के दौरान हिट्टियों के आक्रमणों ने प्राचीन बेबीलोनिया साम्राज्य का पतन कर दिया।[2] कैसाइट्स (Kassites; अक्काडियन दस्तावेज़ों के अनुसार इन्हें कांषु के नाम से भी जाना जाता था) लोगों ने हिट्टियों के आक्रमण का लाभ उठाते हुए, ज़ाग्रोस पहाडों से उतर कर, मेसोपोटामिया में नए साम्राज्य को स्थापित किया जो कि 1595-1157 बी सी ई तक अस्तित्व में रहा। कैसाइटों ने मेसोपोटामिया की परंपराओं को बनाए रखा और इसमें घोड़ा पालन कौशल भी जोड़ दिया। उन्होंने मेसोपोटामिया में घोड़े के प्रयोग को प्रचलित किया। दक्षिण मेसोपोटामिया में कैसाइट्स शक्तिशाली थे, उत्तर में कई समूहों का नियंत्रण था, जिसमें सबसे महत्वपूर्ण लगभग 1350 बी सी ई तक मित्तानी थे।

[2] हिट्टियों का सम्बंध प्राचीन अनातोलिया से है। 15वीं शताब्दी बी सी ई में ये उत्तरी लेवांट और उत्तरी मेसोपोटामिया के शासक बन गए।

12.4 असीरियन साम्राज्य

1350 बी सी ई के दौरान पश्चिम एशिया में असीरिया का एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में आविर्भाव हुआ। असीरियाइयों द्वारा स्थापित विशाल साम्राज्य का पश्चिम एशिया के इतिहास पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा और इसने 'साम्राज्यों के काल' को स्थापित किया।

जैसा कि ऊपर बताया गया है, उत्तरी मेसोपोटामिया क्षेत्र में **सैमाइट** समूहों की गतिविधियां बहुत अधिक थीं।[3] कुछ समूह जो ऊपरी टाइग्रिस क्षेत्र में बस गए वे असीरियन कहलाए। यह ध्यान रखना चाहिए कि 'असीरियाइयों' ने सैमाइट और स्थानीय लोगों को मिलाकर नया मिश्रित समूह बनाया। असीरिया नाम उनके सबसे महत्वपूर्ण देवता अश-शुर के नाम से लिया गया है। आधुनिक इतिहासकार शहर को 'असुर' और इसी तरह साम्राज्य को 'असीरिया' और लोगों को 'असीरियाई' कहते हैं।

12.4.1 क्षेत्रीय विस्तार

असीरिया के उत्थान के पहले चरण में महत्वपूर्ण प्रादेशिक विस्तार देखा जा सकता है। मित्तानी शासन (लगभग 1500-1300 बी सी ई) उत्तरी मेसोपोटामिया से खत्म होने लगा, असीरियाइयों ने ऊपरी टाइग्रिस क्षेत्र में 1300 बी सी ई के दौरान नियंत्रण कर लिया और पश्चिम की ओर सीरिया की तरफ मुड़ गए जो कि शालमानेसर प्रथम (1274-1245 बी सी ई) के शासन के अधीन था। यह टिगलाथपिलेसर प्रथम (1115-1077 बी सी ई) का शासन काल था जिस समय सीरिया और बेबीलोनिया की पराधीनता और इसके साथ ही लेबनान के तट पर फीनीशियन्स से भेंट के रूप में धन प्राप्ति के कारण ही असीरिया पश्चिमी एशिया में महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में उभरा।

हालांकि, नए-नए स्थापित हुए इस साम्राज्य को एक महत्वपूर्ण समस्या का भी सामना करना पड़ा जो कि दसवीं शताब्दी बी सी ई में जनजातियों द्वारा आक्रमण के रूप में आई, जिसका दमन इन्होंने 900 बी सी ई के आसपास किया। हालांकि, इसे अशुरनैपाल द्वितीय (883-859 बी सी ई) द्वारा स्थापित 'नए असीरियन साम्राज्य' द्वारा सुलझाया जा सका। असीरिया को उसके मूल आकार में टिगलाथपिलेसर प्रथम के काल के बराबर पुनःस्थापित करने के उद्देश्य से अशुरनैपाल द्वितीय ने सीरिया की ओर बढ़ते हुए उत्तरी मेसोपोटामिया पर अपना नियंत्रण मज़बूत किया। असुर के पास इसने नया शहर कल्हु (आधुनिक निमरुद) बनाया, जिसे उसने अपनी राजधानी बनाया। आरमेनिया, सीरिया, फिलिस्तीन और फारस की खाड़ी के आसपास के प्रदेशों में सैनिक अभियानों के बावजूद उसका उत्तराधिकारी शालमानेसर तृतीय (858-824 बी सी ई) साम्राज्य को बढ़ाने में असफल रहा। यद्यपि वह सीरिया को अपने साम्राज्य में मिलाने में असफल रहा, बेबीलोनिया ने नाम मात्र के लिए असीरियन आधिपत्य को स्वीकार कर लिया। शालमानेसर तृतीय के पश्चात् असीरिया की शक्ति कई दशकों तक पतन की ओर अग्रसर रही, लेकिन टिगलाथपिलेसर तृतीय (744-727 बी सी ई) के शासन काल में असीरिया का पुनरुत्थान हुआ।

बेबीलोनिया पर नियंत्रण को सुदृढ़ करने के साथ-साथ टिगलाथपिलेसर तृतीय ने असीरियन अधिकार क्षेत्र को, सीरिया और फिलिस्तीन के महत्वपूर्ण क्षेत्रों को मिलाकर, विस्तृत किया। पूर्व की ओर भी विस्तार किया गया, टिगलाथपिलेसर तृतीय ने ज़ाग्रोस पर्वतों को पार करते हुए उस समय मेदिया नाम से पहचाने जाने वाले ईरान पर भी नियंत्रण कर लिया। टिगलाथपिलेसर तृतीय के शासन काल के दौरान असीरियन साम्राज्य का विस्तार कैस्पियन

[3] सैमाइट समूह मुख्य रूप से उन सजातीय और सांस्कृतिक समूहों को कहा जाता था जो कि सैमाइट (पश्चिम और उत्तरी अफ्रीका में बोली जाने वाली अफ्रो-एशियाई परिवार की भाषाएं) भाषाएं बोलते थे। जातीयता के आधार पर वे कॉकेशियन जाति से संबंधित थे।

सागर से लेकर भूमध्यसागर तक और ज़ाग्रोस और टॉरस पर्वतों से फारस की खाड़ी तक बढ़ गया था। असीरिया की शक्ति टिगलाथपिलेसर के उत्तराधिकारी सारगॉन द्वितीय (721-705 बी सी ई) के शासन काल में और अधिक बढ़ी। 626 बी सी ई में बेबीलोनिया में असीरियन शासन के विरूद्ध विद्रोह भड़क उठा जिससे सारगॉन के उत्तराधिकारों के शासन का विघटन होने लगा जिसका विवरण बाद में विस्तार से दिया जाएगा। 612 बी सी ई में असीरिया के महत्वपूर्ण शहर निनेवेह (निनुआ) पर बेबीलोनिया और मेदियों के संयुक्त सैन्य बल ने नियंत्रण कर लिया।

मानचित्र 12.2 : नवीन-असीरियाई साम्राज्य (934-911 बी सी ई) के विस्तार के विभिन्न चरण

साभारः सेमहर, 2010

स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/7/7c/Empire_neo_assyrien.svg

12.4.2 प्रशासनिक और सैन्य व्यवस्था

टिगलाथपिलेसर तृतीय ने अपने शासन काल में जिस तरह स्थिरता को संगठित किया वह उसके द्वारा कुशलता से संचालित सेना की प्रकृति और प्रशासनिक व्यवस्था के कारण ही संभव हुआ। उसने इस बात का अनुभव किया कि अगर वह कुशल शासन स्थापित करना चाहता है तो वह स्वयं अपने हाथ में पूरी शक्ति केन्द्रित नहीं रख सकता। अतः उसने अपने प्रांतों को राज्यपालों के अधीन प्रशासनिक इकाइयों में बांटकर साम्राज्यीय शक्ति को मज़बूत करने का प्रयास किया। इन राज्यपालों को अपने प्रशासनिक क्षेत्र में आर्थिक, प्रशासनिक, न्यायिक और सैन्य शक्तियां प्राप्त थीं और ये प्रत्यक्ष रूप से राजा के प्रति उत्तरदायी थे। लेकिन वे निरंकुश शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकते थे क्योंकि सभी मामलों पर राजा की सत्ता तथा निर्णय अंतिम होता था। साथ ही इन्हें ये अधिकार और शक्तियां राजा के नाम पर ही दी गई थीं। इन क्षेत्रों से प्राप्त भेंटों से राज्य के राजस्व में भारी वृद्धि होती थी। असीरियाई सेना की टुकड़ियों की भर्तियां भी इन्हीं क्षेत्रों से की गई थीं जिनका वर्णन विस्तार से नीचे किया जाएगा।

सैन्य टुकड़ियों के लिए मेसोपोटामिया के बड़े भूस्वामियों पर निर्भरता से हट कर टिगलाथपिलेसर तृतीय के शासन काल में स्थाई सेना का निर्माण किया गया। जबरन गरीब किसानों को सेना

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

में भर्ती करने की बजाय टिगलाथपिलेसर तृतीय को यह अनुभव हुआ कि उसे अपने विशाल साम्राज्य को नियंत्रण में रखने के लिए एक प्रशिक्षित सेना की आवश्यकता है जो समय पर उसकी सुरक्षा कर सके। राज्यपालों को अपने क्षेत्रों में सैन्य दस्ते भर्ती कर मुख्य सेना के लिए उपलब्ध कराना होता था। इस तरह सेना में विविध प्रकार की विशिष्ट इकाइयां बन गई थीं। उदाहरण के लिए, पैदल सेना अनातोलिया और सीरिया-फिलिस्तीन से आई, जबकि ऊंट सवार अरब से आए। इसने असीरिया की सेना की दक्षता में महत्वपूर्ण रूप से वृद्धि की।

इस स्थाई सेना ने सुनिश्चित किया कि टिगलाथपिलेसर तृतीय उत्तरी ईरान के मेदिया प्रांत में अपने अधिकार क्षेत्र को विस्तृत करने में सफल हो सका। असल में इस विस्तृत सेना के पालन-पोषण और इसे बनाए रखने के लिए लगातार जीत और लूटपाट की आवश्यकता थी जिसे वे इन आक्रमणों के द्वारा प्राप्त करते थे। यह भी ध्यान रखने योग्य है कि चूंकि सेना में अश्वरोही सेना और रथों को सम्मिलित किया जाने लगा तो घोड़ों की बढ़ती आवश्यकता को पूरा करने के लिए उत्तरी ईरान के पर्वतीय चारागाह, जो घोड़ा-पालन में निपुण थे, को साम्राज्य में मिला लिया गया।

इसके अलावा, संघर्ष और विद्रोह को दबाने के लिए किए गए प्रयासों के तहत टिगलाथपिलेसर तृतीय ने एक नीति अपनाई जिसके अनुसार जनसंख्या को विजित क्षेत्रों की ओर स्थानांतरित किया गया। यह विशेषकर उन क्षेत्रों में किया गया जहां कब्ज़े के दौरान बहुत उग्र संघर्ष चला था। उदाहरण के लिए, 744 बी सी ई में ईरान में लगभग 65,000 लोग सैनिक अभियान के अंत में स्थानांतरित किए गए। असीरियाई साम्राज्य के विरूद्ध लोगों में जो नफरत की भावना थी उसकी झलक बाइबल के पुराने संस्करण (Old Testament) में देखने को मिलती है। यह तरीके चाहे जितने भी कठोर थे लेकिन यह दर्शाता है कि इनसे टिगलाथपिलेसर तृतीय और उसके सरगोनिद उत्तराधिकारियों ने इस साम्राज्य को आगे बढ़ाया और इसने अन्य साम्राज्यों को प्रतिमान के रूप में अपनाने के लिए एक रूपरेखा उपलब्ध कराई।

बोध प्रश्न-1

1) असीरियन साम्राज्य ने स्वयं को किस तरह विस्तृत और व्यवस्थित किया?

....

....

....

....

....

2) हम्मुराबी और उसके उत्तराधिकारियों के काल में साम्राज्यों के अस्तित्व की प्रकृति का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

3) अशुरनीपाल द्वितीय ने किन समस्याओं का सामना किया तथा उनसे निपटने के लिए उसने क्या किया?

....

....

....

....

....

4) साम्राज्य को मज़बूत करने में एक अच्छी सेना किस तरह सहायता करती है?

....

....

....

....

....

12.5 असीरिया का विभाजन और बेबीलोनिया के साथ संघर्ष

जैसा कि पहले विवरण दिया गया है कि टिगलाथपिलेसर तृतीय के शासन काल के दौरान असीरिया ने बेबीलोनिया पर नियंत्रण स्थापित कर लिया था, और इस समय यहाँ कलडीन (Chaldean) जनजाति बस चुकी थी।[4] इन जनजातियों ने सहयोगी इलम[5] कबीलों के साथ मिलकर असीरिया के विरूद्ध संघर्ष किया। बेबीलोनिया ने 692 बी सी ई में असीरिया के विरूद्ध युद्ध छेड़ दिया जिसमें किसी की भी जीत नहीं हुई। 690 बी सी ई में असीरियाई शासक सेन्नाचेरिब (704-681 बी सी ई) ने बेबीलोनिया को पूरी तरह से नष्ट कर दिया। इसका इतना गहरा प्रभाव हुआ कि विनाश के कारण वहां अकाल की स्थिति उत्पन्न हो गई और चीज़ों की कीमतें पच्चहतर गुना तक बढ़ गई थीं। इस संघर्ष का अंत एक साल बाद बेबीलोनिया के आत्मसमर्पण के साथ हुआ। बेबीलोनिया के लोगों को इस युद्ध में बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी, क्योंकि उनके शहर को पूरी तरह से नष्ट कर दिया गया और इसके अपने स्वतंत्र साम्राज्य का अंत हो गया और यह स्थायी प्रांत के रूप में असीरियन साम्राज्य में मिला लिया गया।

सेन्नाचेरिब के पुत्र एसारहद्दोन, जो 681 बी सी ई में सत्ता में आया, ने बेबीलोनिया को फिर से बसाने का आदेश दिया और उसके मौजूदा बचे हुए शेष आवासियों को वापस बुलाया। 672 बी सी ई में अपनी मृत्यु से पहले ही, एसारहद्दोन ने असीरियन साम्राज्य को अपने पुत्रों में विभाजित कर दिया। बड़े पुत्र अशुरबनीपाल को असीरिया मिला, जबकि उसके छोटे पुत्र शमास-शुम-उकीन को राजकुमार के अधिकारों के साथ बेबीलोनिया मिला, लेकिन फिर भी वह स्वतंत्र शासक नहीं था और अधिकतर नियंत्रण उसके बड़े भाई के हाथ में था। 652 बी सी ई में शमास-शुम-उकीन ने मिस्र, सीरिया के कुछ राज्यों और इलम के साथ गुप्त संधि कर असीरिया पर अपनी सैन्य टुकड़ियों के साथ चढ़ाई कर दी। हालांकि, अशुरबनीपाल इलम को संधि में से कूटनीति और पैलेस क्रांति द्वारा हटाने में सफल रहा। बचे हुए सहयोगी बेबीलोनिया को आवश्यक समर्थन देने योग्य नहीं रहे और असीरिया के बेबीलोनिया पर तीन साल तक लगातार हमलों के कारण 648 बी सी ई में बेबीलोनिया की पराजय हो गई। इसके साथ ही इसका शासक शमास-शुम-उकीन भी युद्ध के मैदान में मारा गया। 646 बी सी ई में अशुरबनीपाल इलम को भी हराने में सफल हुआ और उसने इसकी राजधानी सूसा को अपने नियंत्रण में कर लिया।

[4] कलडीन वह जनजाति है जो दसवीं शताब्दी बी सी ई के आरंभ में बेबीलोनिया क्षेत्र में आकर बसी और ये असीरियनों के विरूद्ध स्वतंत्रता की लड़ाई में शामिल हो गए।

[5] कलडीन कबीलों के पारंपरिक मित्र, जिन्होनें यह सुनिश्चित किया कि इन्हें कलडीन और असीरियों के विरूद्ध संघर्ष में हर बार भागीदार बनाया गया।

असीरिया के विरूद्ध बेबीलोनिया का अगला विरोध 626 बी सी ई में कलडीन के शासक, नेबोपोलेसर (658-605 बी सी ई) द्वारा किया गया। वह इलम और बेबीलोनिया की सेना को फिर से संयुक्त कर वापस लाने में सफल रहा। फिर भी बेबीलोनिया को अंततः असीरिया से मुक्त होने में दस साल लगे। मादों (Medes) ने 614 बी सी ई में असीरिया की पुरानी राजधानी असुर पर कब्जा करके बेबीलोनिया की सहायता की। इसके साथ ही नेबोपोलेसर के पुत्र नेबुचाडनेज़्ज़ा का विवाह माद शासक स्याक्ज़ार्स की पुत्री अमिटिस से कर मैत्री-संधि पर मुहर लगाई। 612 बी सी ई में निनेवेह शहर पर मादों और बेबीलोनिया की संयुक्त सेना ने कब्जा कर लिया। हालांकि कुछ असीरियन सैन्य टुकड़ियां इसकी प्रगति रोक पाईं और उन्होंने ऊपरी मेसोपोटामिया पर नियंत्रण बनाए रखा, लेकिन 609 बी सी ई में बेबीलोनिया इन्हें पूरी तरह से हटाने में सफल रहा और अपनी स्थिति को फीनीशिया, सीरिया और फिलिस्तीन में मज़बूत किया। इसी समय, मिस्र का शासक नेको द्वितीय (610-595 बी सी ई) इस प्रदेश में सत्ता की होड़ में था। परिणामस्वरूप पश्चिमी एशिया तीन मुख्य शक्तिशाली ताकतों, मादों (Medes), बेबीलोनिया और मिस्र के नियंत्रण में आ गया। 605 बी सी ई में मिस्र और बेबीलोन, सीरिया और फिलिस्तीन के मध्य घमासान युद्ध हुए। बाद में फीनीशिया के कुछ शहरों ने खुद को विजयी बेबीलोनिया को समर्पित कर दिया। 605 बी सी ई में नेबोपोलेसर की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र नेबुचाडनेज़्ज़ार द्वितीय (605-526 बी सी ई) को सत्ता प्राप्त हुई। 597 बी सी ई में नेबुचाडनेज़्ज़ार ने यहूदियों की राजधानी जेरूसलम पर कब्जा कर लिया और वहां के शासक को विस्थापित कर दिया। बाद में उसने मिस्र के फिरौन एप्राइस के साथ युद्ध किया, जिसने जेरूसलम के शासक को बेबीलोनिया के विरूद्ध विद्रोह करने के लिए भड़काया था। विरोध को दबाने के बाद नेबुचाडनेज़्ज़ार द्वितीय ने जेरूसलम पर फिर से कब्जा कर लिया और वहां के शासक और बहुत से कारीगरों को बेबीलोनिया में निर्वासित कर दिया। नेबुचाडनेज़्ज़ार द्वितीय की 526 बी सी ई में मृत्यु के बाद अगले बारह वर्षों में तीन शासक गद्दी पर बैठे। 556 बी सी ई में यह नेबोनिदस के हाथों में आया जिसने धार्मिक सुधार किये और चंद्र-देवता सिन को महत्व दिया। यह संभव है कि ये धार्मिक विश्वास आरमीनियाई थे और इसे महत्व देने के पीछे उसका उद्देश आरमीनिया जनजातियों को अपने साथ एकीकृत करने की चेष्टा थी। हालांकि बेबीलोनिया के पुरोहित वर्ग ने इसे पसंद नही किया। नेबोनिदस मिस्र की ओर जाने वाले कारवां मार्ग पर कब्जा करने में सफल रहा जो तेईमा के मरूस्थान से होकर गुज़रता था। वह अपने पुत्र बेलशज़्ज़ार को बेबीलोनिया में छोड़ कर स्वयं तेईमा चला गया। बेबीलोनिया की पूर्वी सीमा पर जल्दी ही ईरान के शासक सायरस द्वितीय (लगभग 600-530 बी सी ई) का खतरा मंडराने लगा। तेईमा में दस वर्ष बिताने के बाद नेबोनिदस बेबीलोनिया की सुरक्षा के लिए वापस लौटा। लेकिन अंततः, 539 बी सी ई में बेबीलोनिया ईरान से हार गया और हमेशा के लिए अपनी स्वतंत्रता गवां बैठा।

12.6 समाज और अर्थव्यवस्था

मेसोपोटामिया में क्षेत्र विशेष की राजनैतिक सत्ता के आधार पर सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृति वातावरण में महत्वपूर्ण बदलाव आए।

12.6.1 सामाजिक-आर्थिक विशेषताएं

असीरिया और बेबीलोनिया के साम्राज्यों में सामाजिक-आर्थिक विशेषताओं का विश्लेषण करने के लिए वहां के लोगों और समाज के ढांचे को समझने की आवश्यकता है। ये कारक बताते हैं कि वहां के व्यापार के तरीके कैसे थे? भूमि किस तरह विभाजित थी? तथा वह सामान्यतः प्रत्येक व्यक्ति की आर्थिक और सामाजिक स्थिति को निर्धारित करता था।

मेसोपोटामिया में पहली सहस्राब्दि बी सी ई के दौरान आर्थिक केन्द्र शाही संपत्ति से हटकर

मंदिर और निजी संपत्ति की ओर परिवर्तित हो गया। अर्थव्यवस्था कृषि उत्पादन पर निर्भर थी। उच्च श्रेणी की भूमि मंदिर, शाही परिवार और धनी लोगों के पास थी। छोटे कृषकों की पहुंच विशाल भूखंडों तक नहीं थी इसलिए वे बाज़ार कृषि के लिए अपनी भूमि का प्रयोग करते थे क्योंकि भूमि बहुत मंहगी थी। सिंचाई के द्वारा ही कृषि संभव थी। भूमि की सिचाई नहरों द्वारा की जाती थी। इन नहरों के स्वामी राज्य और मंदिर थे, इनके पानी को प्राप्त करने के लिए शुल्क देना होता था। छोटे भूस्वामी अपनी भूमि अपने परिवार की सहायता से जोतते थे, जबकि बड़े भूस्वामी अपनी भूमि पट्टे पर देते थे।

व्यापार के संदर्भ में बेबीलोनिया फिलिस्तीन, फीनीशिया और मेसोपोटामिया के दक्षिण तथा पूर्व के देशों के मध्य में स्थित था। मिस्र, एलम, सीरिया और अनातोलिया के साथ टिन, तांबा, लोहा, शराब तथा लकड़ी, आदि, वस्तुओं का महत्वपूर्ण व्यापार होता था। पड़ोसी क्षेत्रों में बेबीलोनिया के ऊनी वस्तुओं की विशेष मांग थी। बड़े व्यापारिक परिवारों जैसे ऐजिबी, जिनका मुख्यालय बेबीलोन में था, ने स्थानीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में विभिन्न बैंकिंग तथा वित्तीय गतिविधियों द्वारा महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। बुनकर, लोहार, बढ़ई, आदि शिल्पी अपने उत्पादों को बाज़ार में बेचने के अतिरिक्त एक निश्चित कीमत पर अपने माल की आपूर्ति करने के ठेके लेने में सफल हुए।

उस समय समाज में तीन प्रकार के नागरिक थे। वे जिन्हें पूर्ण अधिकार प्राप्त थे, वे जो निर्भर या अर्ध-स्वतंत्र थे और अंतिम वे जो दास थे। जो नागरिक पूर्ण स्वतंत्र थे वे नगर की सभाओं के सदस्य थे और विवादों के समाधान में सहायता करते थे। ये लोग मंदिर के धार्मिक क्रियाकलापों में भी बढ़-चढ़कर भाग लेते थे और इनका मंदिर के राजस्व में हिस्सा भी निर्धारित था। पुजारियों, राज्य अधिकारियों, बड़ें भूस्वामियों, स्वतंत्र कारीगरों और लेखकों के कानूनी अधिकार सुरक्षित और वंशानुगत थे। उन पर निर्भर आबादी पीढ़ी दर पीढ़ी राज्य, निजी भूस्वामियों और मंदिर की भूमि पर कार्य करती थी। ये व्यक्ति दास नहीं थे और न ही इन्हें बेचा जा सकता था। कृषि का विकास इन स्वतंत्र कृषकों और पट्टे पर भूमि जोतने वालों पर निर्भर था जो भूमि पर कार्य करते थे। यहां तक कि शिल्प उत्पादन भी प्रमुख रूप से इन्हीं स्वतंत्र कृषकों द्वारा किया जाता था। दोनों ही के संदर्भ में यह पाया गया कि ये सभी व्यवसाय आनुवांशिक थे।

स्रोतों की कमी के कारण हमें असीरियाई समाज और अर्थव्यवस्था के बारे में बहुत कम जानकारी है। लेकिन उत्पादन का मुख्य रूप कृषि था, हालांकि छोटे स्तर पर औद्योगिक उत्पादन भी फला-फूला। भूमि मुख्यतः राजकीय भूमि, मंदिर भूमि और अभिजात्य वर्ग के नियंत्रण में थी। असीरियाई विस्तार के कारण उनकी पहुंच लेबनान, अमानूस और पूर्वी अनातोलिया के खनिज स्रोतों तक हो गई। व्यापार भी फला-फूला जिसमें राजकीय तथा निजी व्यापारी दोनों की बराबर सहभागिता थी। विदेशी व्यापार ज़्यादातर विदेशी वस्तुओं जैसे लिनन, कीमती पत्थर, हाथीदांत और रंजक में होता था।

असीरियाई समाज स्वतंत्र व्यक्तियों और दासों में विभाजित था। दास आमतौर पर युद्ध बन्दियों में से बनाए जाते थे और उन्हें बड़े पैमाने पर निर्माण-कार्यों में लगाया जाता था।

12.6.2 सांस्कृतिक विशेषताएं

उस समय मेसोपोटामिया अपनी लेखन-कला के योगदान के कारण जाना जाता था और बाद में पुस्तकालयों के विकास के लिए। प्रधानतः लेखन मिट्टी पर किया जाता था। असीरियन और बेबीलोनिया ने पहली सहस्राब्दि बी सी ई में खाल का प्रयोग और पपायरस (जिससे कागज बनाया जाता था) का आयात आरंभ किया था। इसी समय इन्होंने मोम की पतली परत से ढके हुए तख्तों का प्रयोग किया जिस पर कीलाक्षर (cuneiform) लिपि अंकित की गई।

मेसोपोटामिया की प्रभावित करने वाली सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि यह थी कि उन्होंने किस तरह इतनी संख्या में पुस्तकालय स्थापित किए, विशेषकर जो निनेवेह में अशरबनीपाल के महल में स्थित है। मेसोपोटामिया में लेखकों ने या तो मिट्टी में लिखी पुस्तकों की प्रतिलिपि बनाई थी या फिर ये पुस्तकें इन्होंने स्वयं एकत्र की थीं। पुस्तकालय की 30,000 पट्टालिकाओं (tablets) में दरबार वृतांत, महत्वपूर्ण घटनाओं के विवरण, साहित्यक और वैज्ञानिक कार्यों के विवरण हैं।

महत्वपूर्ण रूप से, अशरबनीपाल का पुस्तकालय ऐसा पहला पुस्तकालय था जो विशेष क्रम में संतुलित रूप से व्यवस्थित था। लम्बे अवतरणों ने अधिक जगह घेरी थी क्योंकि कुछ अवतरण तो चालीस से सौ पट्टिकाओं जितने लम्बे थे। सूचीपत्र बनाने में ध्यान दिया गया था और यह सुनिश्चित किया जाता था कि ये आसानी से प्राप्त हो जाएं और इन्हें आवश्यकतानुसार बदला जा सके। हर पट्टिका पर 'पृष्ठ संख्या' अंकित थी और पुस्तक का शीर्षक पट्टिका के आरंभ के कुछ शब्दों से निर्धारित किया जा सकता था। साहित्यक लेखों में कुछ ऐसा लिखा होता था जो कि पुस्तक के पहले पृष्ठ सदृश्य हो, जिसमें पुस्तक के बारे में संक्षिप्त विवरण दिया होता था। पुस्तक को ढूंढने के लिए उनमें धागे के साथ एक शीर्षक लगा होता था जिसमें पुस्तक का नाम, वह किस श्रृंखला से सम्बंधित है और उसमें प्रयोग हुई कुल पट्टिकाओं की संख्या लिखी होती थी। यह पट्टिकाएं वास्तव में एक प्रकार का सूचीपत्र (catalogue) थीं।

सैन्य टुकड़ियों द्वारा विदेशी धरती की ओर की गई यात्राओं का इतिहास, विशेषकर कलात्मक शैली में लिखे लयबद्ध गद्य उल्लेखनीय हैं। असीरियन रचनाओं में सबसे महत्वपूर्ण है राजा अहिक़र के एक बुद्धिमान लेखक और सलाहकार की कहानी जो कि यूनानी, आरमेनियन और सीरियन तथा अन्य भाषाओं में अनुवादित की गई। इस रचना का सबसे विस्तृत रूप आरमीनियाई संस्करण है।

बेबीलोनिया का सबसे महत्वपूर्ण योगदान हम्मुराबी की 'न्याय संहिता' है। हम्मुराबी ने इससे कई प्रगतिशील सुधार किए जो अधिक मानवीय थे। उसने पुराने 'एक आँख के बदले आँख' जैसे विचार हटा दिए। उसने पुरानी संहिताओं 'उरुकागिना', 'उर-नम्मू', तथा 'लिपित-इशतर' से विचार ग्रहण किए। साथ ही उसने प्रचलित 'धन द्वारा क्षति पूर्ति' की व्यवस्था में भी परिवर्तन किया।

बेबीलोनिया वासियों की खगोलशास्त्र में अत्यधिक रुचि थी और उन्होंने सूरज, चन्द्रमा, विभिन्न नक्षत्रों और ग्रहों के प्रयोगसिद्ध आंकड़ों और जानकारी को एकत्रित किया था। इन खगोलविद्ों ने चन्द्रमा से सम्बंधित खगोलीय तत्वों के संचरण को देखा और उन खगोलीय तत्वों के संचरण, जो नग्न आंखों से देखे जा सकते थे, को मानचित्रों पर चिन्हित किया। इन अनुभवों ने समय के साथ बेबीलोनिया में गणितीय खगोलशास्त्र का विकास किया। पांचवी शताब्दी बी सी ई के महान् खगोलविद् नेबुरियानस और किदिन्नु ने इस क्षेत्र में रचनात्मक योगदान दिया। इन्होंने चन्द्रमा के घटने-बढ़ने की दशा और सौर वर्ष की लम्बाई के सम्बंध में ज्ञान विकसित किया।

आठवीं और सातवी शताब्दियों में कला के क्षेत्र में मेसोपोटामिया ने असीरियन नक्काशी वाली मूर्तिकला की रचना के क्षेत्रों में विशिष्ट रूप से प्रगति की। इनमें शहरों पर कब्जा, शत्रु की भूमि पर चढ़ाई और शिकार के दृश्य अंकित हैं। कलाकार स्थिर चित्रों, लोगों, और जानवरों की रचना से हटकर प्राकृतिक दृश्यों के चित्र बनाने लगे थे। असीरियन निपुण धातु-कार्मिक थे। उन्होंने कांसे की अलंकृत उकेरी हुई पट्टिकाएं भी बनाई थीं। मेसोपोटामिया अपने मंदिर **ज़िगरैटों (ziggurat)** के लिए भी बहुत प्रसिद्ध था। बाइबल में बेबल के बुर्ज के नाम से जाना जाने वाले ज़िगरैट के संदर्भ में कहा जाता है कि यह सात मंज़िला ज़िगरैट नेबूकदनेज़्ज़ा द्वारा

बनाया गया था। ऐसा माना जाता है कि बेबीलोनिया का प्रसिद्ध हैंगिंग गार्डन भी इसी के द्वारा बनवाया गया था जो कि प्राचीन विश्व के अजूबों में से एक माना जाता है।

चित्र 12.1: बेबल टॉवर का चित्र
साभारः पीटर ब्रुगेल द एल्डर, 1563
स्रोतःhttps://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/5/50/Pieter_Bruegel_the_Elder_-_The_Tower_of_Babel_%28Vienna%29_-_Google_Art_Project.jpg

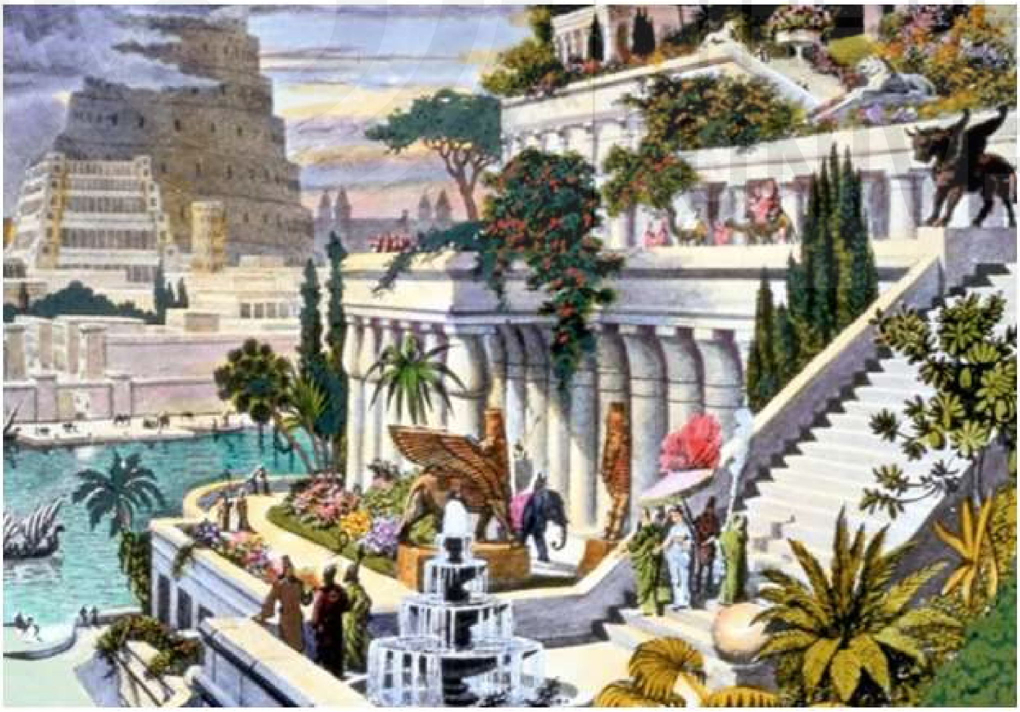

चित्र 12.2: बेबीलोनिया के हैंगिंग गार्डन का चित्र
साभारः मार्टिन वेन हीमर्स्कर्क (1498-1574)
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/a/ae/Hanging_Gardens_of_Babylon.jpg

शिल्प उत्पादन के क्षेत्र में फिनिशिया के शहर कांच के काम के लिए जाने जाते थे जो कि निर्यात करने के लिए बनाया जाता था। इसके साथ ही यहां का जामनी रंग में रंगी हुई ऊन

और लिनन का कपड़ा बहुत प्रसिद्ध था। पहली सहस्राब्दि बी सी ई के मध्य तक दक्षिणी अरब मसालों और रत्नों के व्यापार में भी शामिल हो गया जो कि भारत और सोमाली तट से आते थे।

बोध प्रश्न-2

1) असीरियन साम्राज्य के पतन के क्या कारण थे?

....

....

....

....

....

2) अर्थव्यवस्था में राजस्व का मुख्य स्रोत क्या था? अर्थव्यवस्था के प्राथमिक सहभागी कौन थे?

....

....

....

....

....

3) असीरियन ग्रंथों तथा उनके रखरखाव का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

....

....

....

....

....

4) व्यापार की मुख्य वस्तुएं क्या थीं? वे सभी कहां पहुंचाई जाती थीं?

....

....

....

....

12.7 सारांश

इस इकाई में हमने साम्राज्यों के गठन पर विचार किया है – कैसे उनका विकास हुआ, कैसे वह बने रहे और फिर कैसे उनका पतन हुआ। हर एक साम्राज्य की कहानी पृथक है। यहां हमने जनजातियों के आवागमन से क्षेत्रीय विस्तार होने की प्रकिया को समझा। एक बार भू-क्षेत्र पर कब्ज़ा कर लेने के बाद उसे नियंत्रण में बनाए रखने के लिए स्थानीय आबादी से सेना के रखरखाव के लिए शुल्क एकत्रित किया जाता था। सेना की प्रकृति के अध्ययन से

साम्राज्य की स्थिरता का ज्ञान होता है। एक स्थिर साम्राज्य के स्थायित्व के लिए स्थायी सेना के रखरखाव करने की आवश्यकता थी क्योंकि इससे वह अन्य क्षेत्रों पर विजय प्राप्त करके आर्थिक संसाधनों को व्यापार और अन्य आर्थिक गतिविधियों को बढ़ाने में सफल हो सकता था। एक स्थिर साम्राज्य के दायरे में रहकर ही शासक कला, वास्तुकला के विकास, और व्यापार और अन्य सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रति महत्वपूर्ण समय और ऊर्जा का निवेश कर सकते थे।

12.8 शब्दावली

पपायरस : लंबे पौधे जैसी घास जिससे एक प्रकार का कागज़ बनाया जाता है जिसका इस्तेमाल ख़ासतौर पर प्राचीन मिस्र के लोग किया करते थे।

सैमेटिक : अरब और मध्य पूर्व के यहूदियों से संबंधित

ज़िगरैट : मेसोपोटामिया के मुख्य शहरों में पाये जाने वाले पिरामिडीय आकार के सीढ़ीदार मंदिर टावर

12.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 12.4 देखें
2) उत्तर में हम्मुरब्बी द्वारा साम्राज्य-विस्तार और समेकन पर चर्चा सम्मिलित होनी चाहिए। भाग 12.3 देखें
3) उप-भाग 12.4.1 देखें
4) उप-भाग 12.4.2 देखें

बोध प्रश्न-2

1) आन्तरिक विवाद, ईरान (Persia) के उदय पर चर्चा कीजिये। भाग 12.5 देखें
2) कृषि, छोटे भूमि धारकों पर चर्चा कीजिये। उप-भाग 12.6.1 देखें
3) उप-भाग 12.6.2 देखें
4) उत्तर में कांच, धातुओं आदि पर चर्चा सम्मिलित होनी चाहिए। उप-भाग 12.6.1 देखें

12.10 संदर्भ ग्रंथ

हरमन, जोआचिम एवं एरिक ज़ुरचर (संपा.). 1996. *हिस्टी ऑफ़ ह्युमैनिटी: साइन्टिफ़िक ऐंड कलचरल डिवेलॅप्मेन्ट, फ्रॉम द सेवन्थ सेन्चुरी टू द सेवन्थ ए. डी.* भाग 3. पाठ 7. न्यूयार्क: यूनेस्को. रूटलेज.

क्रिवाक्ज़ेक, पॉल. 2014. *बेबीलोनः मेसोपोटामिया एंड द बर्थ ऑफ सिविलाइजेशन.* ग्रेट ब्रिटेनः अटलांटिक बुक्स.

मैकनील, डोनाल्ड जी. 1967. 'द कोड ऑफ हम्मुरब्बी', *अमेरिकन बार एसोसिएशन जर्नल.* 53 (5): 444-446.

पिन्चेस, थियोफिलस जी. 1917. 'द लेंग्वेज ऑफ द कस्साइट्स". *द जर्नल ऑफ द रॉयल एशिआटिक सोसाइटी ऑफ ग्रेट ब्रिटेन एंड आयरलैंड.* 101-114.

राडनर, केरन. 2015. *एन्शैन्ट असीरिया: ए वेरी शॉर्ट इन्ट्रोडक्शन.* ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

रेगोज़िन, जेनाएड ऐलेक्सहवना. 1894. *द स्टोरी ऑफ असीरिया: फ्रॉम द राईज़ ऑफ द इम्पायर टू द फ़ॉल ऑफ निनेवेह.* न्यूयार्क: टी. फिशर अनविन.

केम्ब्रिज इंगलिश डिक्शनरी: http://dictionary.cambridge.org (http://www.britannica.com)

पी डी एफ:

'द रिलिजन ऑफ द कस्साइटस'. 1885. *द यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस जर्नल.* भाग-1 (3).

https://www.jstor.org/stable/pdf/527374.pdf?refreqid=search

12.11 शैक्षणिक वीडियो

असीरियन एम्पायर
https://www.youtube.com/watch?v=UZhEcoBPO1k

द पावर ऑफ बेबीलोन
https://www.youtube.com/watch?v=HpHIw-NPGJI&t=628s

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 13 साम्राज्यों का गठन: सासानिद*

इकाई की रूपरेखा

13.1 उद्देश्य

13.2 प्रस्तावना

13.3 साम्राज्य का विकास और सुदृढ़ीकरण

13.3.1 शापुर प्रथम

13.3.2 शापुर प्रथम के उत्तराधिकारी

13.4 बाइज़ेंटाइन और सासानियन सम्बंध

13.5 प्रशासनिक संस्थाएं

13.5.1 कानून व्यवस्था

13.5.2 सेना

13.5.3 रक्षा प्रणाली

13.5.4 अस्त्र-शस्त्र

13.6 अर्थव्यवस्था

13.7 सामाजिक संगठन

13.8 संस्कृति

13.8.1 वास्तुकला

13.8.2 कला और मूर्तिकला

13.8.3 साहित्य

13.9 धर्म

13.10 सारांश

13.11 शब्दावली

13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.13 संदर्भ ग्रंथ

13.14 शैक्षणिक वीडियो

13.1 उद्देश्य

पिछली इकाई में आपको साम्राज्य की अवधारणा, उसकी वृद्धि और पतन से परिचित कराया गया है। इस इकाई में हम सासानियन साम्राज्य, उसकी उत्पत्ति और विकास के बारे में पढ़ेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- सासानियन साम्राज्य के विस्तार और विकास को पहचान सकेंगे,
- धर्म और राज्य के बीच संबंध को समझ सकेंगे,

* डॉ. जीना जैकब, सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज़, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

- कला और वास्तुकला का साम्राज्य के विकास में योगदान को समझ सकेंगे, और
- साम्राज्य के सैन्य अभियानों के तरीके और उनके प्रभाव को समझ सकेंगे।

13.2 प्रस्तावना

तीसरी शताब्दी सी ई से सातवीं शताब्दी सी ई के दौरान सासानियन साम्राज्य वर्तमान ईरान क्षेत्र का महत्वपूर्ण साम्राज्य था। इस साम्राज्य का मूल महत्व इस तथ्य में है कि कला, कृषि और शहरीकरण कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें इस अवधि के दौरान ईरान में विशिष्ट विकास हुआ। पूर्व-इस्लामिक ईरानी साम्राज्यों में इसे 'स्वर्ण युग' के तौर पर पहचाना जाता है।

सासानिद साम्राज्य के इतिहास के बारे में अधिक जानकारी नहीं मिलती और इसके आरंभिक इतिहास की पुनर्रचना करना बहुत मुश्किल था। ऐसा माना जाता है कि इस साम्राज्य का उदय पर्सिस प्रांत के एक छोटे शासक के पार्थियन 'राज्य' और ऐसे ही कुछ अन्य पड़ोसी शासकों के विरूद्ध एक सफल संघर्ष के साथ हुआ। स्थानीय शासकों द्वारा प्रमाणित सिक्कों पर एकेमिनियाई शासकों डेरियस (550-487 बी सी ई) और आरतेज़ेरेक्सेस (465-424 बी सी ई) जैसे शासकों के नामों से ऐसा माना जाता है कि साम्राज्य में कुछ अर्थों में एकेमिनियाई परंपराओं की निरंतरता परिलक्षित होती है।

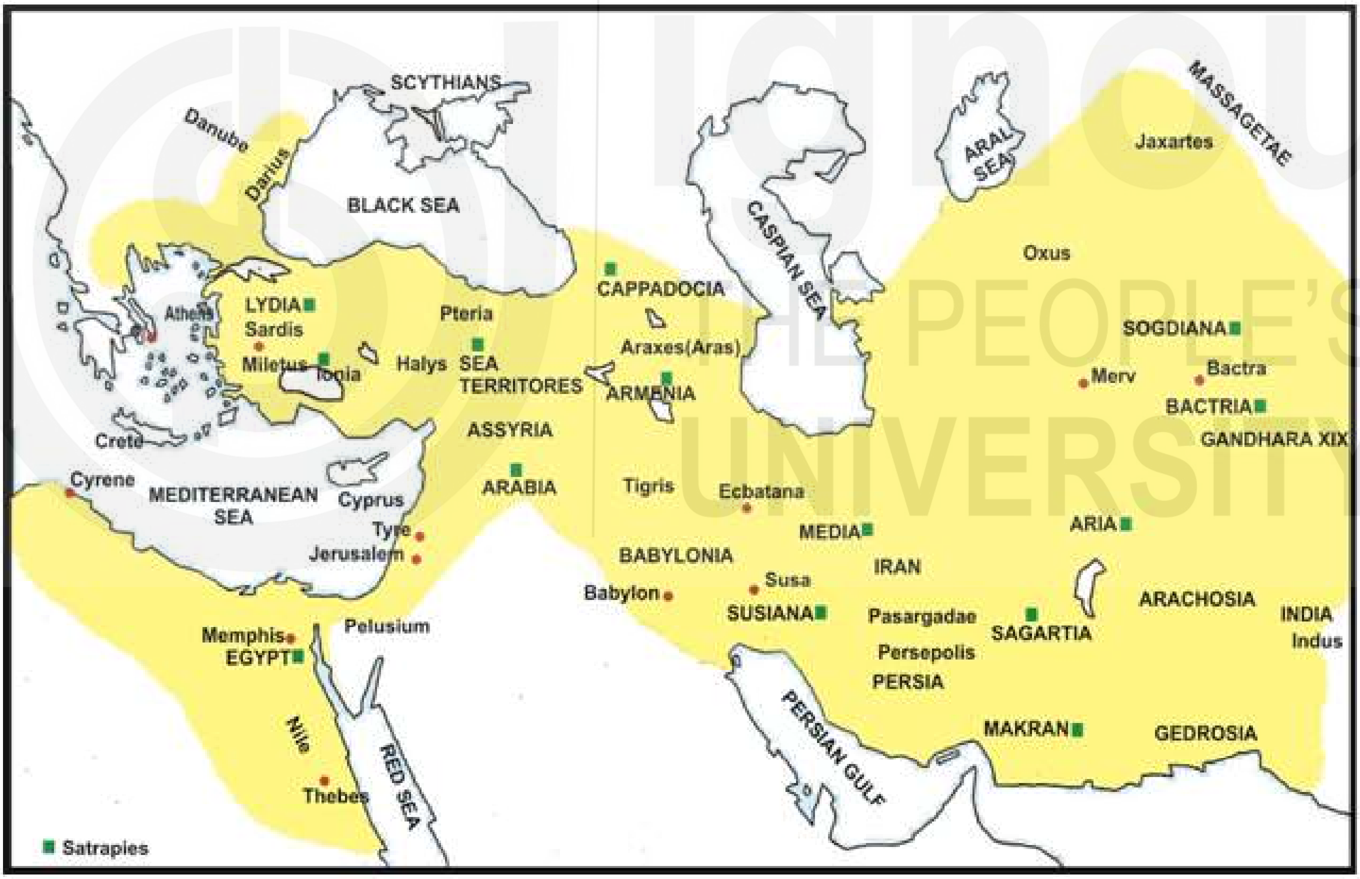

मानचित्र 13.1: ईरानी साम्राज्य का डेरियस-I के शासनकाल तक विस्तार
स्रोत: एम. एच. आई-01: प्राचीन और मध्यकालीन समाज, इग्नू अध्ययन सामग्री, 1990, खंड 3, इकाई 11, मानचित्र 1, पृ. 22

साम्राज्य के शासन काल को तीन चरणों में विभाजित किया था। तीसरी और चौथी शताब्दी को वह अवधि माना गया है जिसमें साम्राज्य स्थापित हुआ था और उस समय शासकों की महत्वाकांक्षाएं एक विस्तृत और विशाल साम्राज्य की स्थापना की थी। दूसरा चरण, पांचवी और

छठी शताब्दी के आरंभ में हेफ्थलियों[1] द्वारा सीमा पर आक्रमणों के कारण साम्राज्य के पतन की अवधि माना जाता है। हालांकि शेष छठी और सातवीं शताब्दी में खुसरो (531-579 सी ई) के अधीन पुनरुत्थान देखने को मिलता है। खुसरो के शासन काल में साम्राज्य ने महान्तम ऊंचाईयों को छुआ जिसमें ऐश्वर्य और वैभव को बल मिला और जिसने अंततः शक्ति की प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा दिया, जिसके कारण शासक लगातार बदलते रहे। इस अस्थिरता ने अरब सेना को इस क्षेत्र में घुसपैठ करने के लिए अवसर प्रदान किया।

एक दिलचस्प तथ्य पर ध्यान देना आवश्यक है कि सासानिद साम्राज्य में हर शासक के शासन काल के आरंभ से उनके शासन काल की गणना आरंभ होती थी। इसलिए, विशेषकर 'सासानिद युग' को समझना बहुत कठिन है। जबकि 205-206 सी ई में पाबाग के विद्रोह को सासानिद युग के आरंभ की तरह देखा जाता है, हमज़ा लिखते हैं कि पार्थियनों के अर्दशीर प्रथम (शासनकाल 224-242 सी ई) से हारने के बाद नए युग का 224 सी ई में उदय हुआ।

सासानियों के बारे में जानकारी ईरानी और गैर-ईरानी दोनों ही स्रोतों से प्राप्त होती है। फरात नदी के किनारे पुरातात्विक स्थलों से प्राप्त अवशेषों ने सासानियों की सैन्य व्यवस्था की पुनर्रचना करने में सहायता की लेकिन इस पर ध्यान देना चाहिए कि वहां कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जहां अब तक अधिक खोजे नहीं की गई हैं जैसे अंथा और थिलुथा। फ्रांसीसी टीम ने बेक्ट्रा जैसे क्षेत्रों की खोज की जिसने किलेबंदी से सम्बंधित जानकारी प्रदान करने में सहायता की। सिक्के, जिनके बारे में इस इकाई में आगे विस्तार से अध्ययन किया जाएगा, सासानिद साम्राज्य के कालानुक्रम को समझने में काफी सहायता प्रदान करते हैं। शिलालेख और मुहरें इस अवधि के अध्ययन को युक्तिसंगत बनाने में सहायता करती हैं। शिलालेख साम्राज्य के संस्थापक अर्दशीर प्रथम के काल के आरंभ के समय से मिलते हैं। ये शिलालेख न सिर्फ सासानियों के राजनैतिक विचारों की झलक देते हैं बल्कि इसके साथ-साथ ये उनके धार्मिक जीवन के बारे में भी बतलाते हैं। दुर्भाग्यवश, सासानिद काल से सम्बंधित सभी लिखित दस्तावेज उपलब्ध नहीं हैं, जैसा कि हम **पपायरी** और पार्चमेंट[2] पर लिखे दस्तावेज़ों के सम्बंध में देखते हैं कि वे पढ़े नहीं जा सकते और इसीलिए व्याख्या के लिए उपलब्ध नहीं हैं।

यूनानी और लैटिन ग्रंथ, जैसे कि डिओ कैसियस (एक रोमन राजनीतिज्ञ और यूनानी मूल का इतिहासकार) सासानियों के उदय का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत करते हैं। प्रोपकोपियस जैसे इतिहास लेखक, जो रोमन जनरल बेलिसेरीयस (500-565 सी ई) के साथ उसके सासानियों के विरूद्ध अभियानों में गया था, ने भी सासानियों के इतिहास के कुछ काल के बारे में वृतांत लिखा है। बाइज़ेंटाइन स्रोत अधिक विश्वसनीय नहीं हैं। वहीं दूसरी ओर यद्यपि आरमेनियाई स्रोत प्रचुर मात्रा में हैं फिर भी इनका प्रयोग विवेकपूर्ण ढंग से करना चाहिए क्योंकि ये भी कभी-कभी अविश्वसनीय होते हैं। सिरियाई ग्रंथ 'क्रोनीकल ऑफ अरबेला' आरंभिक सासानिद काल के अध्ययन के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण माना जाता है। यहां तक कि चीनी यात्रियों ने भी सासानियों से पारस्परिक आदान-प्रदान के दस्तावेज छोड़े हैं। फिरदौसी (लगभग 977 सी ई) द्वारा फारसी भाषा में लिखित *शाहनामा* में सासानिद काल का प्रमाणिक इतिहास है। इब्न अल-बल्खी द्वारा लिखित *फार्स-नामा* (बारहवीं शताब्दी के दौरान लिखी गई) को सबसे महत्वपूर्ण प्राथमिक स्रोत माना जाता है जो कि पर्याप्त प्रमाणिक जानकारी प्रदान करता है।

---

[1] हेफ्थली मध्य एशिया के सबसे शक्तिशाली घुमंतू समूह थे, जैसा कि इस पाठ्यक्रम की **इकाई 11** में इस पर चर्चा की गई है। बाद में तुर्किस्तान पर अधिकार ईरानियों, हूणों और हेफ्थलियों के मध्य विवाद का कारण बना।

[2] इन लिखित दस्तावेजों की अधिक जानकारी के लिए: ज़ैनी, अर्श (2018)। 'मिडिल पर्शियन पपायरी, ओस्ट्रेका एंड पार्चमेंट्सः एन इन्ट्रोडक्शन', *सासानिका पपायरोलोजिकल स्ट्डीस.* नं.1. जार्डन सेंटर फॉर परशियन स्ट्डीस. यूनिवर्सिटी ऑफ केलिफोर्निया, इरविन (https://www.sasanika.org/wp-content/uploads/Sasanika_PS01_Zeini.pdf)

13.3 साम्राज्य का विकास और सुदृढ़ीकरण

माना जाता है कि सासानियन साम्राज्य का संस्थापक सासान (आरंभिक तीसरी शताब्दी सी ई) था जिसके बारे में हमारे पास अधिक जानकारी नहीं है। अर्दशीर प्रथम, जिसे सासान का पौत्र माना जाता है, सासानियन साम्राज्य का प्रथम सबसे महत्वपूर्ण शासक माना जाता है। हालांकि, इस पौराणिक कथा के अनेक रूपांतरण हैं। अरब इतिहासकार तबरी के अनुसार सासान, अर्दशीर का दादा था और पाबाग पिता। हालांकि, शापुर प्रथम (लगभग 240-270 सी ई) के शासन काल के दौरान प्राप्त यूनानी, मध्य फारसी और पार्थियन त्रिभाषीय शिलालेख में सासान पाबाग के पिता के रूप में वर्णित नहीं किया गया है। जबकि सासान को केवल एक अधिपति के रूप में उल्लेखित किया गया है और पाबाग को राजा कहा गया है। अर्दशीर को 'ईरान के राजाओं का राजा' और उसके पुत्र शापुर प्रथम का वर्णन 'ईरान और गैर-ईरान के राजाओं का राजा' के रूप में किया गया है। विद्वानों का मत है कि बहुत हद तक संभव है कि सासान अर्दशीर का दूर का पूर्वज रहा हो जिसके नाम पर साम्राज्य का नामकरण है। इसे इस तरह भी समझा जा सकता है कि सासान अर्दशीर का पिता रहा हो जिसे पाबाग ने सासान की मृत्यु के बाद गोद लिया हो, जैसा कि ज़रतुश्तों में यह आम प्रथा थी।

पाबाग के शासन काल का समय निश्चित नहीं हैं। 58वें वर्ष का उल्लेख मिलता है परन्तु यह निश्चित नहीं है कि यह समयावधि किस युग से सम्बंधित है। यही निश्चित किया जा सकता है कि पाबाग वो शासक था जिसने पार्थियन शासन काल में फारस (Fars) के काफी क्षेत्रों को संगठित किया। इसने शायद इस्तखर के शासक का तख्ता पलट दिया था या फिर पार्थियन प्रदेश से अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी थी। पाबाग की मृत्यु की तारीख की जानकारी नहीं है और ऐसा माना जाता है कि उसे एक बार फिर से पार्थियन शासन के अधीन ले आया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि पाबाग का शासन फारस (Fars) प्रदेश तक ही सीमित रहा और जितना भी विस्तार हुआ संभवतः अर्दशीर प्रथम द्वारा किया गया था।

बुक ऑफ द डीड्स ऑफ अर्दशीर, जो 224-651 सी ई के दौरान किसी समय में लिखी गई थी, वह शासकों के बारे में ऐतिहासिक कहानियां, गाथाओं के रूप में उपलब्ध कराती है। इसका ऐतिहासिक महत्व काफी माना जाता है क्योंकि इसमें कई भौगोलिक क्षेत्रों का उल्लेख है। हालांकि, यह स्पष्ट नहीं है कि अर्दशीर मूल रूप से कहां से था। 224 में पिता पाबाग और भाई शापुर, अरसासिद शासन (आरमेनिया राज्य पर 54-428 सी ई तक) के विरूद्ध विद्रोह कर रहे थे। उनकी मृत्यु के बाद अर्दशीर प्रथम ईरान, खुर्ज़िस्तान और केरमान को जीतने में सफल रहा। उसने पार्थियनों पर भी निर्णायक जीत हासिल की। यह जीत फिरूज़ाबाद के शिलालेख पर उत्कीर्ण की गई है। यह वह समय था जब शापुर प्रथम ने 'राजाओं का राजा' (*शहंशाह*) की उपाधि धारण की थी, फिर भी हात्रा (241 सी ई) के युद्ध में पराजय प्राप्त की और उसे आरमेनिया से बाहर कर दिया गया जहां अरसासिद राज्य का एक सामान्तर वंश शासन कर रहा था। वह पूर्वी ईरान में मर्व तक पहुंच गया था। दक्षिण-पश्चिम में सासानियन सेनाएं बहरीन तक और उत्तर-पश्चिम में पार्थिया और रोम की पुरानी सीमारेखा तक पहुंच गई थीं। विद्वानों का मानना है कि उसके साम्राज्य की सीमाओं का इसके आगे सही तरीके से आंकलन करना संभव नहीं है। अर्दशीर प्रथम को इस बात का अनुभव हुआ कि उसे प्रदेश के प्रशासनिक ढांचे में बदलाव करने की आवश्कता है। इसकी आवश्यकता रोमन साम्राज्य के ईरान की सीमाओं तक पहुंचने के कारण पड़ी, जो प्रदेश की सीमाओं के पास के कमज़ोर और छोटे राज्यों को बीच में प्रतिरोधक के रूप में उपयोग करके उनका लाभ उठा रहा था। 239 सी ई में सासानियों द्वारा हात्रा पर कब्ज़ा करना रोमन साम्राज्य के लिए एक बहुत बड़ा धक्का था। रोमन साम्राज्य ने 239 सी ई में दूरा को और इसी तरह कर्रहाए और निसीबिस को 235 सी ई के आरंभ में सासानियों के हाथों गंवा दिया।

मानचित्र 13.2 : सासानी साम्राज्य की सीमारेखा और उसका विस्तार

साभार: कीबे 101

स्रोत: विकीमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Sassanian_Empire_621_A.D.jpg)

13.3.1 शापुर प्रथम

शापुर प्रथम अपने पिता की मृत्यु के बाद 240/241 सी ई में सत्ता में आया, जिसकी तारीख की सही जानकारी प्राप्त नहीं है। शापुर प्रथम के शासन काल के बारे में जो जानकारी उपलब्ध है वो परसेपोलिस के पास *ज़रतुश्त का काबा* के नाम से जाने, जाने वाले स्मारक के आधार पर अंकित त्रिभाषी शिलालेख (मध्य ईरानी, पार्थियन और यूनानी) से प्राप्त होती है। इससे हम उसके सैनिक अभियानों, साम्राज्य के संगठनों और दरबार के साथ-साथ विभिन्न प्रांतों, जो उनके साम्राज्य का हिस्सा थे, के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। सामरिक दृष्टि से शापुर प्रथम रोमन शासक गॉर्डियन तृतीय (238-244 सी ई) को पराजित करने में सफल रहा। उसका उत्तराधिकारी फिलिप द अरब (244-249 सी ई) शापुर प्रथम को भारी शुल्क देकर अपने पद को बचाए रखने में सफल रहा। शापुर ने सीरिया पर आक्रमण किया और बहुत बड़ी संख्या में उसके शहरों पर नियंत्रण कर लिया। शापुर ने वेलेरियन (रोमन साम्राट 253-260 सी ई) को 258 सी ई में पराजित किया और लगभग उसके 40 शहरों पर नियंत्रण करने में सफल रहा जिनमें से एक प्रमुख एन्टीओक भी है।

साम्राज्य की पूर्वी सीमा विवादित थी। हेरात, तूरान और सिंध जैसे प्रदेश इसमें सम्मिलित थे, परन्तु इनकी सही सीमा निर्धारित करना बहुत कठिन है। पश्चिम कुषाणों के प्रदेश शापुर प्रथम द्वारा जीते गए और उन्हें सासानियन राज परिवार के नियंत्रण में दे दिया गया। आर्मेनिया और जॉर्जिया जैसे क्षेत्र भी इसके नियंत्रण में थे। सिक्कों पर लिखे अभिलेखों से हमें साक्ष्य प्राप्त होते हैं कि इसने 'ईरान और गैर-ईरान के राजाओं का राजा' की उपाधि धारण की थी। यह दर्शाता है कि इसने प्राचीन ईरान की सीमाओं के पार फैले विस्तृत क्षेत्र तक नियंत्रण कर लिया था। शापुर प्रथम के समय में ही सासानिद साम्राज्य का नियंत्रण सर्वाधिक क्षेत्र पर हुआ। हाल ही के अध्ययन 'ईरान' के सम्बंध में बताते हैं कि 'ईरान' की संकल्पना जातीयता और भाषा तक ही सीमित नहीं रह गई थी बल्कि यह धार्मिक और सांस्कृतिक पहचान का भी द्योतक था।

13.3.2 शापुर प्रथम के उत्तराधिकारी

शापुर प्रथम के पुत्र नार्सेह (292-302 सी ई) के शासन काल के दौरान 'गैर-ईरानी' क्षेत्रों पर नियंत्रण ढीला पड़ गया। इससे क्षेत्रीय गवर्नरों को अपनी मनमर्जी करने की स्वतंत्रता मिल गई। रोमन साम्राज्य ने पहले से ही तिगरेन्स द ग्रेट (95-55 बी सी ई) को पश्चिमी आर्मेनिया का नियंत्रण सौंपा हुआ था। नार्सेह आर्मेनिया के पूर्वी क्षेत्र का शासक था। नार्सेह के पूर्वज, बहराम प्रथम (271-274 सी ई) और बहराम द्वितीय (274-292/93 सी ई), दोनों ही ने साम्राज्य के पूर्वी क्षेत्र के कई प्रदेशों पर नियंत्रण खो दिया था।

शापुर द्वितीय (309-379 सी ई) अन्य दूसरा सबसे शक्तिशाली सासानिद शासक था। अपने 70 साल के लम्बे शासन काल में इसने चियोनितों, संभवतः ईरानी मूल की एक जनजाति जो विशेषकर बैक्ट्रिया में प्रतिष्ठित थी, के विरूद्ध पूर्वी सीमाओं को सुरक्षित रखने के लिए विभिन्न अभियान चलाए। इसने ईराक में *लाइम्स* (सुरक्षा सीमा रेखा) बनाने का कार्य शुरू किया ताकि अरब बेदोइन (बद्दू; मध्य पूर्व रेगिस्तान के अरबी बोलने वाले घुमंतू लोग) को अपने प्रदेश में आने से रोक सकें। ऐसा माना जाता है, उसने रोमन साम्राज्य द्वारा सीरिया के रेगिस्तान में सुरक्षा सीमा निर्माण से प्रेरित होकर ईराक में सीमा का निर्माण किया था। सिक्कों पर प्राप्त लेखों से पता चलता है कि शापुर द्वितीय मर्व शहर में रहता था। अपने शासन काल के दौरान शापुर द्वितीय जॉर्जिया के सिंहासन पर अपनी पसंद के शासक को बिठाने में सफल रहा। इस समय रोम ने आर्मेनिया पर अपना संरक्षण खो दिया था। हालांकि, शापुर द्वितीय ने अपने शासनकाल के अंत समय में आर्मेनिया को विभाजित कर दिया। जिसका एक छोटा हिस्सा रोम को मिला। शापुर द्वितीय के शासनकाल का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि उसके समय में केन्द्रीय सत्ता संगठित हुई और अग्नि मंदिर के आस-पास धार्मिक सत्ता के पदानुक्रम का निर्माण हुआ।

बहराम पंचम (420-438 सी ई) को अपनी वीरता और शिकार की योग्यताओं के लिए आदर्श शासक माना जाता है। हालांकि, उसे प्रशासन अधिक पसंद नहीं था जिसे उसने अपने मंत्रियों पर छोड़ दिया था। इसके शासन के दौरान पूर्वी सीमा से चियोनितों की ओर से बहुत मुश्किलें पैदा हो रही थीं और वह उन पर विजेता बन कर उभरा।

पीरोज़ (459-484 सी ई) अल्बानिया, जॉर्जिया और आर्मीनिया जैसे प्रदेशों के साथ शांति स्थापित करने का प्रयास कर रहा था जो कि इस समय तक अधिकतर ईसाई धर्म अपना चुके थे। 469 सी ई में हेफ्थेलाइट्स द्वारा उसे पराजित कर क़ैद कर लिया गया और बाद में उसे 484 सी ई में मार डाला गया। उसका उत्तराधिकारी वलाख्श हेफ्थलाइट्स को बहुत भारी शुल्क देता था जिसने ईरानियों को बहुत शर्मसार किया। ईरानियों ने पहले ही पीरोज़ के शासनकाल में सात वर्ष के लम्बे अकाल में बहुत पीड़ा सहन की थी।

पीरोज़ के पुत्र कवाद प्रथम (488-531 सी ई) के शासनकाल के दौरान एक बहुत दिलचस्प घटना घटी। मज़दक के नेतृत्व में एक आंदोलन खड़ा हुआ जिसकी तुलना साम्यवाद से की गई है। मज़दक, जिसके विचार मैनीकेइज़्म (Manichaeism; सासानी साम्राज्य के दौरान मानी नामक ईरानी पैगम्बर द्वारा चलाया गया एक बहुत बड़ा धार्मिक आंदोलन) से प्रभावित थे। कवाद ने इस विचार का समर्थन किया कि धन-सम्पत्ति और महिलाओं का समान रूप से बटवारा होना चाहिए जिससे कुलीनों की शक्ति को अत्यधिक कम किया जा सके। कवाद के इन प्रयासों के कारण कुलीन और धार्मिक प्रमुखों ने उसे अपदस्थ कर जेल में डाल दिया। कवाद वहां से भागने में सफल हुआ। वह भागकर हेफ्थेलाइट्स के पास चला गया जिन्होंने कवाद की पुनःसत्ता प्राप्त करने में सहायता की। इसने नई कर व्यवस्था और भू-स्वामित्व प्रथा आरंभ की जो छोटे कुलीन वर्ग के लिए लाभदायक थी, जबकि बड़े भूस्वामी अपने पूर्ववर्ती

विशेषाधिकार प्राप्त नहीं कर पाए। खुसरो प्रथम (531-579 सी ई) साम्राज्य को वैभव और समृद्धि की स्थिति में लेकर आया। इसने मज़्दकाइट्स द्वारा उत्पन्न अव्यवस्था को नियंत्रित किया और कर प्रणाली तथा सैन्य क्षेत्र में अनेक सुधार किए।

13.4 बाइज़ेंटाइन और सासानियन संबंध

सासानियन लगातार रोम और बाइज़ेंटाइन के विरूद्ध युद्ध में व्यस्त रहे। शापुर तृतीय के पुत्र याज़देगर्द प्रथम (399-420 सी ई) जैसे शासक बाइज़ेंटाइन के विरूद्ध आक्रमण करने के लिए आमादा थे, परन्तु प्रतीत होता है कि जो राजदूत ईरान भेजे गए थे उन्होंने उनकी नीतियां बदलने में सहायता की। आगे चलकर याज़देगर्द प्रथम के समय संबंधों में मधुरता आई। बाइज़ेंटाइन के शासक आर्केडियस (377-408 सी ई) ने उसे अपने पुत्र थिओडोरियस द्वितीय का अभिभावक बनने के लिए कहा। इस पर विवाद किया जा सकता है कि यह मात्र एक सामान्य सी अभिव्यक्ति थी परन्तु उस समय दोनों ही शासकों के लिए इसका बहुत बड़ा अर्थ था।

बहराम प्रथम के शासनकाल के दौरान बाइज़ेंटाइन के साथ सम्बंध तनावपूर्ण हो गए क्योंकि उसने अपने साम्राज्य में ईसाईयों पर पुनः अत्याचार आरंभ कर दिए थे। ये सुरक्षा के लिए बाइज़ेंटाइन की ओर भागे और वहां बहराम पंचम (420-438 सी ई) ने इन्हें प्रत्यर्पित करने की मांग की। हालांकि, थिओडोसियस द्वितीय (401-450 सी ई) ने इसे स्वीकार नहीं किया। इससे युद्धों का प्रकोप आरंभ हो गया जिसमें बाइज़ेंटाइन को कई लड़ाइयों में सफलता प्राप्त हुई। 422 सी ई में बहराम पंचम ने शांति के लिए प्रस्ताव रखा। बहराम पंचम ने अपने साम्राज्य में ईसाईयों को पूजा-अर्चना की स्वतंत्रता प्रदान की और बाइज़ेंटाइन के कॉकेशस में डर्बन दर्रे के रखरखाव में अपना योगदान देने के लिए तैयार हो गया।

बहराम पंचम का उत्तराधिकारी और पुत्र यार्देगर्द द्वितीय (438-457 सी ई) जैसे ही सत्ता में आया उसने बाइज़ेंटाइन के विरूद्ध शत्रुता छेड़ दी। थिओडोसियस द्वितीय (488-531 सी ई) के अधीन बाइज़ेंटाइन ने यथास्थिति को बनाए रखने के लिए उसके शिविरों में अपने सेनापति भेजे। कवाद प्रथम के शासनकाल के दौरान बाइज़ेंटाइन और सासानियों के बीच एक बार फिर से शत्रुता आरंभ हो गई क्योंकि इन्होंने डर्बन की सुरक्षा के लिए पैसा देने से इनकार कर दिया था। कवाद को अपने सहयोगी हेफ्थेलाइटों को पैसे चुकाने की आवश्यकता थी। शत्रुता के कारण साम्राज्य के उत्तर-पूर्व और दक्षिण भाग के थिओडोसिओपोलिस और अमिडा पर कब्ज़ा हो गया। बाइज़ेंटाइन और सासानियों के मध्य लड़ाई दोनों में से बिना किसी की असल जीत के चलती रही। 504 सी ई में बाइज़ेंटाइन के पास अवसर था कि वे अमिडा को फिर से प्राप्त कर सकते थे परन्तु वे ऐसा करने में असफल रहे। अंततः सात-वर्ष की संधि के साथ शांति स्थापित की गई जो आगे चलकर लम्बी समयावधि के लिए बढ़ा दी गई।

ख़ुसरो प्रथम (अनुशेरवान के नाम से भी जाना जाता है) ने मज़्दकाइट आंदोलन के द्वारा आई कठिनाइयों, जिनके बारे में पहले बताया गया है, का सामना करने के लिए बाइज़ेंटाइन के साथ इस शर्त पर शांति स्थापित की कि ईरानी कुछ विशेष किलों को खाली करेंगे और साथ ही यह कि वे कॉकेशस की सुरक्षा को बनाए रखने के लिए सहायता भी करेंगे। खुसरो प्रथम द्वारा कर व्यवस्था और सेना में किए गए सुधार संभवतः बाइज़ेंटाइन से प्रभावित थे, लेकिन इन सुधारों से जो सेना तैयार हुई उसका प्रयोग बाइज़ेंटाइन के विरूद्ध किया गया।

शांति काल के पश्चात् बाइज़ेंटाइन और सासानियों के मध्य फिर से शत्रुता छिड़ गई। खुसरो प्रथम की चिंता का मुख्य कारण पश्चिम में बाइज़ेंटाइनों द्वारा रोमन साम्राज्य की पुनःस्थापना था। सासानियों को लखमिद अरब (लगभग 300-602 सी ई तक दक्षिणी इराक़ का एक अरब साम्राज्य) और आर्मेनिया का समर्थन प्राप्त था। यद्यपि शासक जस्टीनियन प्रथम (527-565

सी ई) ने खुसरो प्रथम को युद्ध से हटाने की कोशिश की परन्तु वो असफल रहा। सीरिया की ओर जाती हुई खुसरो प्रथम की सैन्य टुकड़ियां एंटिओक पहुंच गई, जो कि पहले से ही कुछ साल पहले आए भूकंप को झेल रहा था, ऐसे में किसी सैन्य आक्रमण को सहन करने की उसकी स्थिति नहीं थी। शहर पर आक्रमण किया गया और उसे पूरी तरह जला दिया गया। जस्टीनियन ने शांति की गुहार लगाई और यह तय हुआ कि शांति तब स्थापित होगी जब बाइज़ेंटाइन पांच हज़ार पांउड सोना युद्ध क्षतिपूर्ति के तौर पर दे, इसके साथ ही हर साल पांच सौ पाउंड अदा करे। तथापि, खुसरो प्रथम ने वापसी के रास्ते में आने वाले बाइज़ेंटाइन शहरों से एक बड़ी राशि हड़प ली। उसने एक शहर की घेराबंदी भी कर ली थी और तब तक उन्हें नहीं छोड़ा जब तक लोगों ने शांति के बदले रकम नहीं चुका दी। इस कारण जस्टीनियन ने युद्ध विराम को रद्द कर दिया और अपने सेनापति को ईरान पर आक्रमण करने के लिए भेज दिया।

मानचित्र 13.3 : चौथी से सातवीं शताब्दी के मध्य बाइज़ेंटाइन/रोमन और सासानिद साम्राज्य की सीमाएं
साभार: स्पलाकिडस
स्रोत: विकीमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Roman-Persian_Frontier_in_Late_Antiquity.svg)

ईरानी, पेत्रा सहित अनेक शहरों पर कब्ज़ा करने में सफल रहे जो बाइज़ेंटाइन के तहत थे। जस्टीनियन की सेना को दूसरे कई क्षेत्रों में पीछे हटना पड़ा। इस ख़बर से खुसरो प्रथम को आत्मविश्वास मिला कि वह बाइज़ेंटाइन को हरा सकता है। इस आशा से कि वह बाइज़ेंटाइन साम्राज्य के पूरे हिस्से और फरात के पार के हिस्सों को नियंत्रित करने में सफल रहेगा, खुसरो प्रथम ने इदेसा पर आक्रमण कर दिया। इदेसा के लोग जैसे-तैसे खुसरो प्रथम की सेना को पीछे ढकेलने में सफल रहे। उसे आखिरकार अपनी सैन्य टुकड़ियों को वापस बुलाना ही पड़ा और अंततः जस्टीनियन और खुसरो प्रथम के बीच पांच वर्ष की शांति स्थापित हुई। हालांकि, यह शांति संधि चौथे वर्ष में टूट गई। 551 सी ई में कुछ और समय के बाद पांच वर्ष का युद्ध विराम हुआ। भयानक संघर्षों की श्रृंखला के बाद 556 सी ई में दोनों के बीच में स्थाई हल निकालने की कोशिश की गई। अंततः 562 सी ई में बहुत कोशिशों से पचास वर्षों की शांति संधि पर हस्ताक्षर हुए।

बोध प्रश्न-1

1) शापुर प्रथम और उसके उत्तराधिकारियों के शासनकाल के दौरान सासानिद साम्राज्य के विस्तार और वृद्धि के बारे में संक्षिप्त परिचय दें।

....

....

....

....

....

2) सासानिद साम्राज्य के अध्ययन के लिए विभिन्न स्रातों पर चर्चा करें।

....

....

....

....

....

3) सासानिद साम्राज्य के महत्वपूर्ण शासकों के कालानुक्रम पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

4) बाइज़ेंटाइन और सासानिद साम्राज्य के मध्य संबंध का विश्लेषण कीजिए।

....

....

....

....

....

13.5 प्रशासनिक संस्थाएं

सासानिद साम्राज्य का प्रशासन विस्तृत रूप से पार्थियन राज्य के प्रारूप जैसा था, जहां पर प्रांतों के शासक केन्द्रीय सरकार से अर्धस्वतंत्र होते थे तथा प्रांतों को शासित करते थे। इस प्रशासन के अधीन और भी राज्य थे, जिन्हें अधीनस्थ राज्यों के नाम से जाना जाता था, जो शासक को भेंट (tribute) अदा करते थे।

सासानिद साम्राज्य के संबंध में अधिकतर जानकारी हमें शापुर प्रथम के शिलालेख (एस.के. ज़ेड [SKZ] के नाम से जाना जाता है) से प्राप्त होती है। इस शिलालेख से हमें पता चलता है कि किस तरह प्रशासन व्यवस्था चलती थी। यहां पर चार शासक थे जो कि गवर्नर थे।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

उनके पास उत्तराधिकार का अधिकर था, जिसका अर्थ था कि उनके बाद उनके बच्चे उनके उत्तराधिकारी बनेंगे। पदानुक्रम में गवर्नन के नीचे तीन रानियां, वॉयसराय, मंत्री और महत्वपूर्ण परिवारों के सदस्य थे। इन पंद्रह के साथ-साथ शिलालेख में अन्य महत्वपूर्ण उच्च पदाधिकारियों के बारे में भी उल्लेख मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि पदानुक्रम में स्थान प्रशासनिक व्यवस्था में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका के आधार पर दिया जाता था। कुलीन समाज चार भागों में बंटा हुआ थाः अधीनस्थ राजकुमार, महान् परिवार, द 'ग्रेटस'[3] और कुलीन।

प्रशासन में लगभग एक दर्ज़न पद विभिन्न पदाधिकारियों को दिए गए थे। हालांकि, यह स्पष्ट नहीं है कि उन अधिकारियों के कार्यों की प्रकृति क्या थी क्योंकि धार्मिक और राजनैतिक अधिकारियों में भेद करना कठिन है। अग्नि मंदिरों में कार्यान्वन के लिए *मागियों* (ज़ोरोस्टर के अनुयायी) की कई श्रेणियां थी। *राद* नामक अधिक समर्थ न्यायधीश के साथ *दादवर* द्वारा न्यायिक प्रकार्य संभाला जाता था।

विभिन्न मोहरों के जो अवशेष प्राप्त हुए हैं उनसे विद्वान सासानिद साम्राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था के बारे में जानकारी हासिल करने में सफल रहे हैं। प्रशासन की मूल इकाई प्रांत था जो 'सत्रप' द्वारा शासित थी। कुछ प्रांतों को मिलाकर एक क्षेत्र बनता था जो कि *फ्रामदार* (इसके कार्यों के विषय में कोई जानकारी नहीं है) और एक *अमरगार* (लेखाकार) के नियंत्रण में होता था। सबसे छोटा संकाय जिला (*कुस्त*) था जहां धार्मिक प्राधिकार विशेषरूप से मज़बूत था।

13.5.1 कानून व्यवस्था

सासानिद साम्राज्य के लिए कानूनी व्यवस्था और कानून बहुत महत्वपूर्ण था। उन्होंने कानून के विशुद्धीकरण को बहुत महत्व दिया। *वेंदिदाद,* बाईबल की लेविटिकस संबंधी किताब के समरूप है, जो धर्म के कानून के अनुसार स्वीकार्य और अस्वीकार्य पर व्याख्या करती है। इस काल में कानून संहिताबद्ध नहीं था, बल्कि कुछ न्यायिक फैसलों के रूप में उपलब्ध था जो कि कुछ कानूनी परिस्थितियों के बारे में जानकारी देते हैं। *मदायान-ए हज़ार दादेस्तान* (हज़ार फैसलों की किताब) पारिवारिक कानून, सम्पत्ति कानून और न्यायिक कानून से सम्बंधित घटनाओं का एक विस्तृत संकलन है। इस काल में अधिकतर कानूनी रचनाओं की तरह, कानून की अवधारणा को धार्मिक मूल्यों की अवधारणा के आधार पर देखा जाता था। सासानियों के काल में *अवेस्ता* की कानूनी ***नस्कों*** ('किताबों') का भी प्रयोग किया जाता था, हालांकि, बहुत सीमित रूप में। इसके मुख्य कारणों में से एक यह है कि उस समय वहां दस्तावेज़ों में जो भाषा प्रयोग हुईं और जो कानूनी तर्क दिए गए हैं वे उस समय के समाज के लिए बहुत आदिम प्रतीत होते हैं। कानूनी लेखों का संकलन छठी शताब्दी बी सी ई के आरंभ में किया गया था और ये बदलती परिस्थितियों का सामना करने के लिए सक्षम नहीं थे। यहां पर कई मौखिक भाष्य *नस्कों* में सम्मिलित किए गए। इनका प्रयोग आरंभिक सासानी काल के दौरान कानूनी मसलों के लिए किया जाता था। इन प्रयासों ने सासानी कानूनी परंपरा में पुरानी कानूनी शब्दावली को शामिल करने में सहायता की।

साक्ष्य दशार्ते हैं कि उच्च श्रेणी के पुजारी भी न्यायिक संगठन से जुड़े हुए थे। यहां पर एक विशेष उदाहरण वेह-शापुर का है जिसने खुसरो प्रथम के शासन काल में '*एक आलेख*' लिखा जिसमें पूछताछ की प्रक्रिया के बारे में व्याख्या की गई थी। इस आलेख की कई नकलें देखने को मिलती हैं और ये मोहर द्वारा सत्यापित भी की हुईं हैं, इन्हें अलग-अलग प्रातों में बांटा गया था। इस समय की विधि पुस्तकों में सासानी शासकों द्वारा जारी किए गए कुछ आदेश भी संचित किए गए हैं। इसके अलावा, दरबार के दस्तावेज़, पूछताछ के उद्धरण और अभिलेखीय सामग्री उपलब्ध हैं जिनका इन विधि पुस्तकों में संकलन किया गया है।

[3] उच्च कुलीन लोग जो महत्वपूर्ण शाही उत्सवों में उपस्थित होते थे।

13.5.2 सेना

लगातार युद्धों में व्यस्त रहने के कारण सासानी साम्राज्य को एक महत्वपूर्ण सैन्य व्यवस्था की आवश्यकता थी। जैसा कि पहले बताया गया है खुसरो प्रथम के शासन काल के दौरान उसने कर व्यवस्था में सुधार किया ताकि सेना के लिए धन जुटाया जा सके। आरंभ में जो शुल्क एकत्रित होता था उसे कुलीन वर्ग को दिया जाता था, खुसरो प्रथम उसे केन्द्र सरकार के अंतर्गत लेकर आया। आरंभ में बड़े भूस्वामियों द्वारा अपनी सेना राजाओं की सेना को सहायता के लिए दी जाती थी, लेकिन सुधार के बाद खुसरो प्रथम अस्त्र-शस्त्र से लैस केन्द्रीय स्थाई सेना बनाने में सफल रहा जो केन्द्रीय सरकार द्वारा पोषित थी। सेना के इन अधिकारियों को छोटे गांव तनख्वाह के रूप में दिए जाते थे। इसने छोटे भूस्वामियों के एक नए वर्ग को जन्म दिया। खुसरो प्रथम ने सेना को भी परिधि के केन्द्र के समरूपी चार समूहों में बांटा[4]। ये सुधार प्राथमिक रूप से सेना के संगठन से सम्बंधित थे, हालांकि अस्त्र-शस्त्र और सैनिक ढांचा पूरे सासानी साम्राज्य काल के दौरान समान बना रहा।

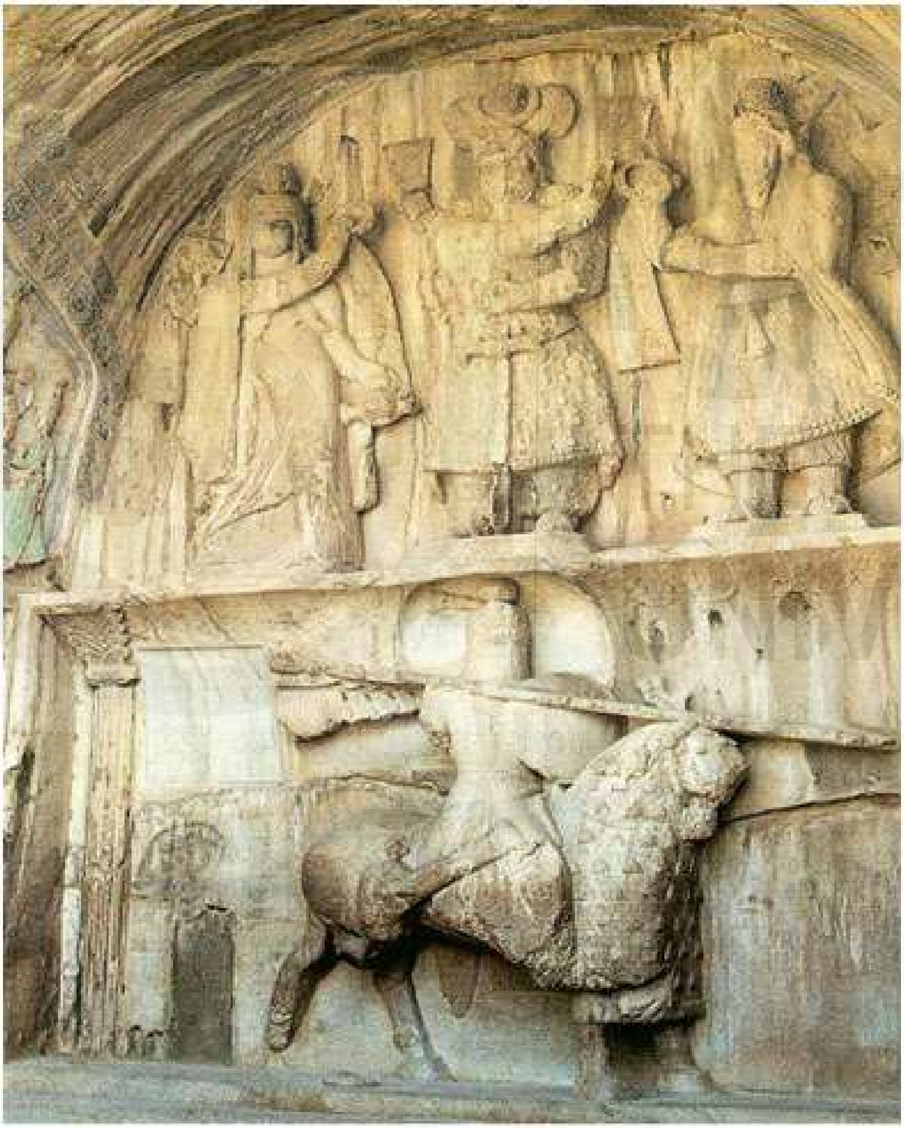

चित्र 13.1 : सासानी क्लिबनारी घुड़सवार के साजो-सामान का ताक-ए बोस्तान का शिला पट्टिका चित्रण

साभारः ज़ेरेश्क

स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Knight-Iran.JPG

[4] साम्राज्य का चार भागों में क्षेत्रीय विभाजन। पश्चिम में मेसोपोटामिया, उत्तर में कॉकेशस, मध्य में और दक्षिण-पश्चिम क्षेत्र में ईरान की खाड़ी, पूर्व में मध्य एशिया। इस व्यवस्था ने अधिक कुशल सेना का निर्माण किया।

चित्र 13.2 : हेफ्थलाईट्स से युद्ध करते हुए सासानी सेनापति सुखरा, शाहनामा पेंटिंग
स्रोत: विकीमिडिया कॉमन्स (https://en.wikipedia.org/wiki/Sukhra%27s_Hephthalite_campaign#/media/File:Sukhra_defeating_the_Hephthalites.jpg)

ऐसा कहा जाता है कि सासानियों ने जो युद्ध कौशल विकसित किया था वह मुख्य रूप से बाइज़ेंटाइन की रणनीति की पुस्तकों से लिया गया था। इसके साथ ही विद्वानों का मत है कि यह कहना सही नहीं होगा कि ये सभी युक्तियाँ मात्र नकल ही थीं। लेकिन कुछ अपने अनुभव के आधार पर भी विकसित हुई होंगी जैसे सेना को इस तरह खड़ा करना कि उनका मुख सूर्य की तरफ न हो या घेरे की स्थिति में सेना की रसद की पूर्ति को सुनिश्चित करने की नीति।

13.5.3 रक्षा प्रणाली

सासानी किले और दीवारों का अच्छा उपयोग करके आक्रमणकारियों को बाहर ही रोक दिया करते थे। हालांकि, यह हमेशा प्रभावकारी नहीं था। सासानियों द्वारा बनाई गई दीवारों के कई सर्वोत्तम उदाहरण मिलतें हैं जैसे सासानियों द्वारा बनाई गई पांच दीवारों का समूह है जो कॉकेशस में डर्बेन्ट को उत्तर की ओर से आने वाले खानाबदोश आक्रमणों से बचाने के लिए बनाई गई थीं। पूर्वी दिशा में भी दीवारें बनाई गई थीं लेकिन उनके बारे में अधिक जानकारी नहीं है। एक 170 किलोमीटर लम्बी दीवार का निर्माण किया गया जो कि एलेक्ज़ेंडर की दीवार के नाम से जानी जाती है। इसके किनारे थोड़ी-थोड़ी दूरी पर किले बनाए गए थे और खाई भी बनाई थी ताकि उत्तर से आने वाले दुश्मन दीवार तक न पहुंच सकें। जस्टीनियन प्रथम के द्वारा बनाई गई दीवार के समानांतर बनाई गई किलेबंदी का श्रेय खुसरो प्रथम को जाता है। दक्षिण में केवल सिराफ में स्थित एक किले के साक्ष्य मिलते हैं।

रक्षा के लिए किले की दीवारों के अलावा शापुर द्वितीय ने सीमाओं पर कुछ अरबों को बसा दिया था ताकि रेगिस्तान से आक्रमण करने वाले अन्य अरबों और रोमनों के किसी भी आक्रमण का सामना किया जा सके।

चित्र 13.3 : डर्बेन्ट की दीवार
सभारः ऑस्कर 11234 (http://sulim27.livejournal.com/38236.html)
स्रोतः विकीमीडिया कॉमन्स (http://www.wikiwand.com/en/Fortifications_of_Derbent)

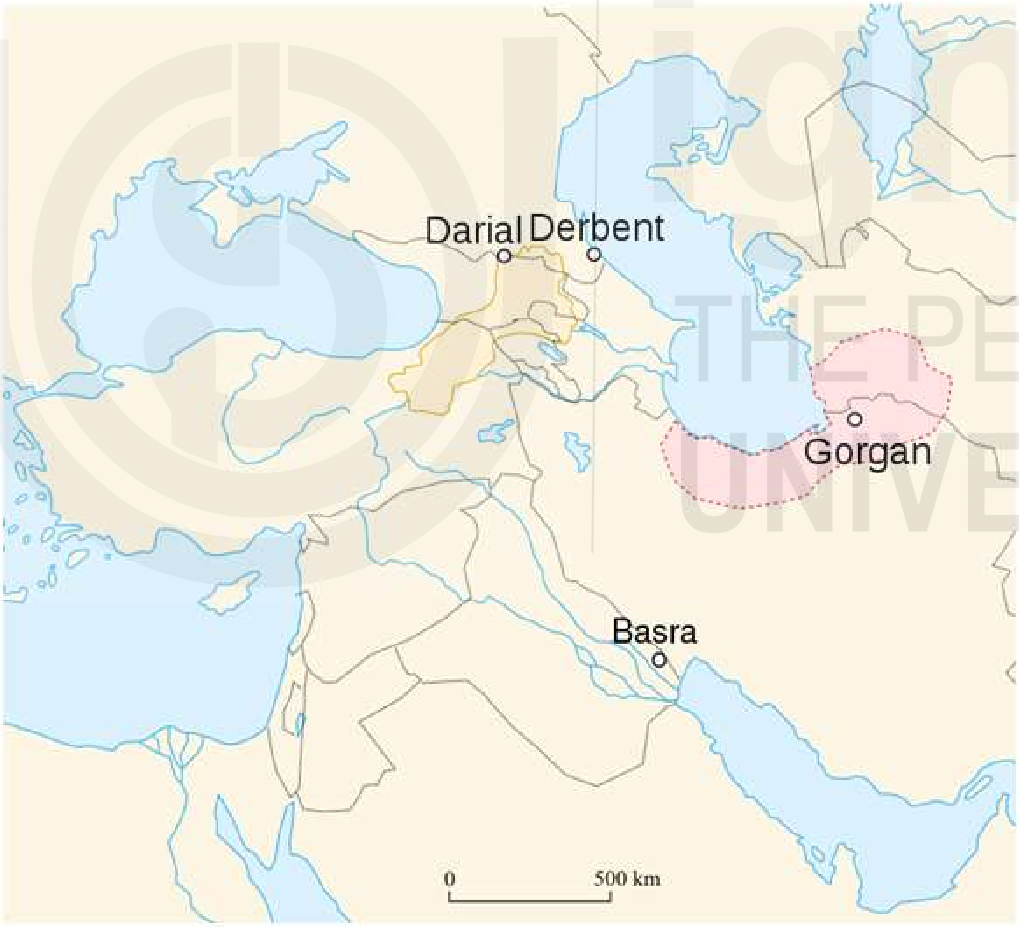

मानचित्र 13.4 : सासनीयों की सुरक्षा सीमाएः डेरियल, डर्बेन्ट, गॉरगन और बसरा
साभारः user:Kiyoweap user:historicair (File: Hyrcania-Alexanders-gates-map.svg)
स्रोतः विकीमीडिया कॉमन्स (https://en.wikipedia.org/wiki/Sasanian_defense_lines#/media/File:Sassanian_defense_lines.svg)

13.5.4 अस्त्र-शस्त्र

सासानी सेना ने तीसरी और चौथी शताब्दी सी ई में अश्वरोही सेना को सबसे अधिक महत्व दिया। ये बख्तर, भाले और तलवार जैसे अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित थे। यद्यपि हल्की

अश्वारोही सेना का पतन होने लगा था, बाद में ये हूणों के विरूद्ध सेना का एक महत्वपूर्ण भाग बन गए, जो कि तीर-अंदाज़ी में उच्च कौशल के लिए पहचाने जाते थे। धनुष, जो ईरानियों द्वारा प्रयोग किया जाने वाला विशिष्ट हथियार था, सासानियों के समय में यह वज़न में काफी हल्का कर दिया गया। यह विकास इनके लिए प्रतिकूल साबित हुआ क्योंकि वे अब बाइज़ेंटाइन द्वारा प्रयोग किए जाने वाले तीर और धनुष को भेदने के योग्य नहीं रहे। अन्य हथियार जैसे दुरमुट (battering ram) और घूमने वाली लाट (moving tower) रोमनों से प्रभावित थे।

चित्र 13.4 : सासानी साम्राज्य और आरमेनिया के मध्य अवारयर के युद्ध को दर्शाती मध्यकालीन पाण्डुलिपि

साभारः कारापेट बेरक्रेत्सी

स्रोतः विकीमीडिया कॉमन्स (https://en.wikipedia.org/wiki/Battle_of_Avarayr#/media/File:Vartanantz.jpg)

चित्र 13.5 : सासानी योद्धाः सासानी काल की सोने की परत वाली चांदी की प्लेट, अज़रबाइजान संग्रहालय, तबरीज़, ईरान

साभारः अलबोर्ज़ फल्लाह

स्रोतः विकीमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Tabrç_Sasanian_Plate_2.jp)

13.6 अर्थव्यवस्था

शापुर प्रथम और द्वितीय दोनों ही अपने विस्तृत निर्माण कार्यों के लिए जाने जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि बड़ी संख्या में, विशेषकर सीरिया से लाए गए मज़दूरों के कारण यह संभव हो सका। नए शहर, महल, बांध, पुल, किले और सिचांई व्यवस्था इनके द्वारा बनाई गई। सासानियों ने एलेक्ज़ेंडर और सेल्युकस की तरह शहरों के नाम स्वयं पर रखने की प्रथा को बनाए रखा।

शासकों के द्वारा कपड़े की कार्यशालाओं को स्थापित करना और बढ़ावा देना महत्वपूर्ण विकास कार्य में से एक था। छठी शताब्दी के आसपास ईरानियों का परिचय रेशम के कीड़ों से हुआ। शापुर द्वितीय ने रेशम पर काम करने के लिए कारीगरों को उपलब्ध कराया, लेकिन उसको विकसित कवाद और ख़ुसरो प्रथम ने किया जब कई विशेषज्ञ आए। ईरान, जो अब तक सिल्क के व्यापार में लगा हुआ था अब सिल्क की वस्तुओं का निर्यात भी करने लगा जो ईरान और रोमनों को सिल्क 'युद्ध' की ओर ले गया जो एकाधिकार की चेष्टा और कर के रूप में परिलक्षित होता है। कुछ रेशमी कपड़ों के नमूनों में जानवरों को भी चित्रित किया गया जिसमें वास्तविक मोटिफ जैसे मेढ़ा या काल्पनिक पंख वाला घोड़ा थे। मेढ़ा वास्तविक था जबकि *सीमुर्घ* जो कि मोर और ग्रिफिन (griffin) के मध्य एक संकर प्रजाति है।

चित्र 13.6: सासानी कालीन कपड़े पर सीमुर्घ
साभार: http://www.hp.uab.edu/image_archive/ugp/
स्रोत: विकीमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Textile0001.jpg)

बांध तथा अन्य सिचांई की सुविधाओं के निर्माण ने कृषि में उत्पादन को बढ़ावा दिया जिसके कारण अनाज, चावल और गन्ने का निर्यात संभव हुआ।

सिक्के इस समय के इतिहास को समझने के लिए बहुत महत्वपूर्ण स्रोत हैं क्योंकि ये एक निरंतरता प्रदान करते हैं। आरंभिक साम्राज्य के अर्दशीर प्रथम के सिक्कों की ढलाई ईरानियों के भूतकाल को समझने में मदद करती है (**चित्र 13.7**)। शुरुआत में खुदाई में प्राप्त सिक्के आरंभिक पार्थियन शैली से मिलते हैं, जैसा कि शासक का शीर्ष भाग उसके छायाचित्रों में देखने को मिलता है। बाद के कुछ वर्षों में यह बदल गया जब दैवीय आकृतियां, जो कि सिक्कों पर छापी जाती थीं, उनके स्थान पर अग्नि वेदी को लाया गया। इसके साथ ही सिक्कों पर यूनानी भाषा को पहलवी द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया। सिक्कों पर जो चित्र बदला गया आरंभ में उसमें कुछ तत्व समाविष्ट थे जैसे पार्थियन शैली के भित्तिचित्र में ताज, बाद में इसे मात्र ताज में बदल दिया गया। अंततः प्रत्येक सासानी शासक के ताज की अपनी विशेषताएं थीं जो कि इन सिक्कों में बेहतर तरीके से दर्शायी गई हैं।

चित्र 13.7 : अर्दशीर प्रथम के सिक्के (224-240 सी ई)
साभारः क्लासिकल न्यूमिसमेटिक ग्रुप
स्रोतः विकीमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:BahramVCoinHistoryofIran.jpg)

सासानी सिक्के इसलिए भी अधिक महत्वपूर्ण हैं क्योंकि ये प्रथम असली पतले-चपटे सिक्के थे। इस तरह के सिक्के उस समय बहुत प्रचलन में थे और समय के साथ-साथ और जगहों पर भी प्रचलित हो गए। इनका प्रभाव अरब और बाईज़ेंटाइन सिक्कों पर भी देखा जा सकता है। यूरोप में मध्यकाल से आधुनिक काल के दौरान इसी तकनीक का प्रयोग करके *देनार, देनीयर* और *पेनी* बनाए गए (**चित्र 13.8**)।

चित्र 13.8 : जस्टीनयन द्वितीय का सॉलीडस (solidus), द्वितीय शासन काल (705-711 सी ई)
साभारः क्लासिक न्यूमिसमेटिक ग्रुप
स्रोतः Wikimedia Commons (https://en.wikipedia.org/wiki/Byzantine_coinage#/media/File:Solidus-Justinian_II-Christ_b-sb1413.jpg)

सामान्यतः जो सिक्के प्रयोग किए जाते थे वे चार ग्राम के चांदी के ड्राच्म (*drachme*) थे जिनका वज़न कभी नहीं बदला। यह ध्यान देने योग्य है कि ये सिक्के अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत थे, विशेषकर मध्य एशिया और दक्षिणी रूस, वे क्षेत्र जिनके साथ ईरानियों के महत्वपूर्ण व्यापारिक संबंध थे। सोने का प्रयोग प्रतिदिन के उपक्रमों के लिए नहीं किया जाता था, इसका प्रयोग केवल स्मारकीय तमगों को बनाने में किया जाता था।

हालांकि सिक्कों की बारीकियों को पास से देखने पर अर्दशीर प्रथम और शापुर प्रथम के उत्तराधिकारियों के काल के ये सिक्के बहुत ही उत्तम गुणवत्ता के थे, जिनको देखकर ऐसा लगता है कि वे संभवतः यूनानी सांचा काटने वालों द्वारा बनाए गए थे। विद्वान इस दावे पर प्रश्न करते हैं, कुछ इसका यह कहकर खंडन करते हैं कि इन सिक्कों की गुणवत्ता में अर्दशीर प्रथम के गवर्नरशिप काल से उसके राजा बनने के संक्रमण काल के सिक्कों में कोई

विशिष्ट अंतर नज़र नहीं आता। इसी तरह शापुर प्रथम के सिक्कों में जहां काफी परिष्कृतता थी, इनमें गुणवत्ता संबंधी इतनी विभिन्नता नहीं थी कि जिसका साभार रोमन और यूनानी कारीगरी को दिया जा सके। अकेमीनियन शासकों के सिक्के उच्च गुणवत्ता के माने जाते हैं जो कि ईरानी सांचा काटने वालों द्वारा बनाए गए थे। यह भी संभव है कि सासानियों ने इसी पद्धति का अनुसरण किया हो।

सासानियों के सिक्के राजाओं के छायाचित्रों और उनके ताज के लिए विशेषकर उल्लेखनीय हैं। यह ईरानी शैली के छायाचित्रों का एक विशेष लक्षण था जिसके द्वारा आरंभिक आर्सेसिद परंपरा से इसे पृथक दिखाने की कोशिश की गई थी। इसके साथ-साथ इसका उद्देश्य रोमन परंपरा को भी चुनौती देना था। इसे ज़ोरास्ट्रियनवाद के विचारों को बढ़ावा देने की दृष्टि से भी देखा जा सकता है। छायाचित्रों की प्रकृति आर्सेसिद काल से अपने को पृथक करती प्रतीत होती हैं, जहां छायाचित्र में चेहरा सीधी ओर देखता हुआ बनाया जाता था। स्मारकीय सिक्कों के अलावा सामने की ओर देखते हुए चेहरों के छायाचित्र प्रचलित नहीं थे। सिक्कों के किनारों पर बने अभिलेख रोमन सिक्कों से प्रभावित थे। सिक्कों के चलन का पतन शापुर द्वितीय के शासन काल से देखा जा सकता है। पतन धातु की गुणवत्ता के साथ-साथ तकनीकी प्रारूप दोनों में ही देखा जा सकता है। सिक्कों पर बने चित्र लापरवाही से बनाए जाने लगे जिससे वे कार्टून सदृश्य व्यंग चित्र लगने लगे थे। ताज, जो प्रत्येक शासक की राजसी शान का प्रतीक था, अव्यवस्थित ढंग से बनाए जाने के कारण उन्हें पहचानना कठिन हो गया था। साम्राज्य के आरंभ के सिक्के जिनकी तुलना दीवारों पर बनी मूर्तियों से की जा सकती थी, बाद के समय में अपनी विशेषता खो चुके थे। कला की अन्य शैलियां अपेक्षाकृत अधिक विकसित हुईं, अतः सिक्के अधिक समय तक कला की व्याख्या में अपना स्थान बना कर नहीं रख सके, और इसलिए केवल अपने आर्थिक उपभोगी आधार के रूप में ही प्रचलित रहे।

चित्र 13.9 : शापुर द्वितीय का सासानी चांदी का सिक्का
साभारः रेज़ॉ अब्बासी संग्रहालय (ट्रुथबिथोवन)
स्रोतः विकीमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Shapur_II_Sassanid_silver_coin.JPG)

सासानी चांदी अक्सर सिक्कों के संदर्भ में पहचान और तिथिबद्ध भी की जाती रही है। सासानी चांदी की मुख्य विशेषता उस पर की गई नक्काशी की प्रकृति है। इन चित्रों पर मुख्यतः राजगद्दी पर बैठे हुए शासक या शिकार का चित्रण अंकित हैं। सिक्कों को संदर्भ बिन्दु मानते हुए सिक्कों के दोनों तरफ बने चित्रों की तुलना के आधार पर चांदी के प्रयोग का

तिथिक्रम निर्धारित किया जा सकता है। इसके साथ ही यह भी ध्यान देने योग्य है कि सिक्कों की अपनी परिसीमा थी जिसके कारण सिक्कों पर छायांकन उतनी बारीकी से संभव नहीं था क्योंकि उससे कहीं अधिक परिष्कृत और सूक्ष्म नक्काशी वाले ताज मौजूद थे। फिर भी यह देखा जा सकता है कि चांदी की वस्तुएं विस्तृत मात्रा में थीं जिनमें प्लेट और बर्तन जैसे कि कटोरे। इनके बारे में सवाल उठता है कि इन्हें कहां और किनके लिए बनाया गया था। कुछ बड़े कटोरों पर शेर और औरतों के ऊपरी अर्ध भाग के चित्रण की सजावट मिलती है। ऐसा माना जाता है कि बिना ताज वाले व्यक्ति विशेष शासक या देवी-देवता नहीं होंगे, बल्कि वे कुलीन वर्ग के प्रतिनिधि या राज परिवार के सदस्य रहे होंगे।

बोध प्रश्न-2

1) सासानियों के अंतर्गत कानून व्यवस्था पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

2) सासानी साम्राज्य की असाधारण रक्षा प्रणाली की विशेषता पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

3) सासानियों के लिए मज़बूत सेना की आवश्यकता को रेखांकित कीजिए। वे किस प्रकार अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित थे?

....

....

....

....

....

4) सासानी सिक्कों के महत्वपूर्ण लक्षणों को दर्शाइए।

....

....

....

....

....

13.7 सामाजिक व्यवस्था

सासानी सामाजिक संस्थाओं का विकास समाज में लम्बे अन्तराल के दौरान हुआ। उपलब्ध स्रोतों के आधार पर समाज का एक विस्तृत चित्र प्रस्तुत करना बहुत कठिन है। हालांकि, ऐसा प्रतीत होता है कि एक विशेष समयावधि में समाज में कोई परिवर्तन नहीं आया बल्कि यह रूढ़िवादी और स्थिर प्रकृति की ही रही। दिलचस्प यह है कि ईरानी समाज की प्रकृति जटिल थी जो कि बहुत अधिक स्तरीकृत थी। शासक वर्ग में न केवल राजा और उसका परिवार और कुलीन वर्ग था बल्कि इसमें वे शासक भी थे जो सम्राट के अधीनस्थ सामंत थे, इसमें दरबार के सदस्य और समृद्ध उच्च अधिकारी भी सम्मिलित थे। मध्यम और छोटे सेवारत अभिजात्य वर्ग को राज्य भुगतान, राशन और भूमि के द्वारा पोषित करते थे और कुछ विशेष मामलों में ये वंशानुगत थे। समाज के अन्य घटकों में पुजारी, मध्यमवर्ग, जो मुख्यतः व्यापारी और कारीगर थे, बड़ी संख्या में ग्राम्य के समुदायों में रहने वाले और अंततः दास भी सम्मिलित थे। इस काल में इस क्षेत्र में घूमने वाले बड़ी संख्या में घुमंतु खानाबदोश समूह भी थे।

समाज चार प्रमुख वर्गों में विभाजित था। पहले में पुजारी और न्यायधीश, दूसरे में योद्धा, तीसरे में लिपिक और बड़ी संख्या में नौकरशाह और अंत में चौथा वर्ग कृषक, व्यापारी और कारीगरों का था। यह वर्ग विभाजन अत्यन्त कठोर और वंशवाद पर आधारित था। एक वर्ग से दूसरे में जाना संभव नहीं था। प्रत्येक वर्ग की देखभाल के लिए एक प्रशासक होता था जो उस वर्ग से होना जरूरी नहीं था। पांचवी शताब्दी से प्राप्त साक्ष्यों के अनुसार प्रधानमंत्री के पुत्रों को विभिन्न वर्गों का अध्यक्ष नियुक्त किया गया था। हालांकि, इन संस्थागत परिवर्तनों ने नागरिकों और गैर-नागरिकों, कुलीन वर्ग और अन्य में आंतरिक असामनता को खत्म नहीं किया। इन सभी विविध समूहों के साथ-साथ दास भी समाज में मौजूद थे जिनके पास कोई अधिकार नहीं थे।

इस काल में यह देखा जा सकता है कि एक नागरिक को पूर्ण नागरिकता के अधिकार तभी प्राप्त हो सकते थे जब वह किसी न किसी वर्ग से सम्बंधित हो और नागरिक समुदाय विशेष का भाग हो। इसका अर्थ यह था कि यदि वह किसी समुदाय का हिस्सा नहीं थे तो उनके साथ बहिष्कृत की तरह ही व्यवहार किया जाता था। नगर समुदाय का भाग होने पर ही वे वहां रह सकते थे और सम्पत्ति खरीद सकते थे। समुदाय का अर्थ था मज़बूत सामाजिक संबंध जो कि इसके सदस्यों को सहयोग और एकता देता था। वे अनाथ बच्चों तथा विधवाओं की सामुहिक रूप से देखभाल करते थे। सिर्फ समुदाय के सदस्य ही धार्मिक पूजा-पाठ और सामाजिक गतिविधियों में भाग ले सकते थे। औरतों और बच्चों के पास सीमित कानूनी अधिकार थे।

जो व्यक्ति ज़रतुश्त धर्म का त्याग कर देता था उसे अपने पूर्व परिवार अथवा समुदाय में किसी भी पद पर बने रहने की अनुमति नहीं थी। हालांकि उसे व्यक्तिगत संपत्ति रखने और पहले से लिए हुए करार को पूरा करने की अनुमति थी। लेकिन अन्य समुदाय का भाग बनने के बाद वह अपना स्थान दूसरे समुदाय विशेष के सदस्य के तौर पर पुनः ग्रहण कर सकता था तथा तदनुसार कार्य कर सकता था।

जो समुदाय का हिस्सा नहीं थे उनमें, प्रदेश में यूं ही बस गए लोग, पूर्ण नागरिक अधिकार वाले नागरिकों के गैर-कानूनी बच्चे और स्वतंत्र दास या समुदाय से निकाल दिए गए लोग सम्मिलित थे। इसका अर्थ यह था कि दासों के विपरीत वे स्वतंत्र लोग थे, लेकिन उनके कोई नागरिक अधिकार नहीं थे। दासों को वस्तु समझा जाता था जिन्हें इच्छानुसार बेचा जा सकता था। दासों को भूमि के एक भाग की तरह ही या फिर व्यक्तिगत रूप से उनका प्रयोग किया जा सकता था। हालांकि यह दासों के आम लक्षण हैं लेकिन विद्वानों का मत है कि यह एक

तरफा दृष्टिकोण है। धार्मिक और कानूनी ग्रंथों के अध्ययन से यह पता चलता है कि दास को 'व्यक्ति' समझा जाता था क्योंकि उसमें बोलने, सोचने और कार्य करने की क्षमता थी। यह परिभाषा दास को मालिक द्वारा खरीदी गई अन्य 'वस्तुओं' से अलग करता है। प्रशिक्षण देकर दास से कई कार्य करवाए जा सकते थे जिसमें आर्थिक कार्य भी सम्मिलित हैं जो कि सीमित अधिकारों के क्षेत्र में था। जिन्हें मालिक, दास को कुछ हद तक कार्य करने की अनुमति दे सकता था। कानून की पुस्तकों में दासों के नागरिक मामलों में कोर्ट में पेशी के साक्ष्य भी मिलते हैं। यहां पर दासों के द्वारा मालिकों पर क्रूर व्यवहार के लिए किए गए मुकद्दमों के साक्ष्य भी मिलते हैं। एक मामले में दास ने मालिक पर उसे दज़ला (Tigris) नदी में फेंकने का आरोप लगाया था। दूसरे मामले में कोर्ट ने मालिक को दास के शरीर को विकृत करने के अपराध में जुर्माना भरने का आदेश दिया था। कोर्ट में दास गवाही भी दे सकता था लेकिन अकेले स्वतंत्र रूप से नहीं बल्कि उसके साथ एक पूर्ण नागरिक की गवाही की भी आवश्यकता थी। मालिकों द्वारा दासों को पूर्ण या आंशिक रूप से दासता से मुक्त किया जा सकता था। यहां पर वे दास भी थे जिन्हें 'मंदिर के दास' या पवित्र दास, *हाइर्डओलोई* (*hierdouloi*) के नाम से जाना जाता था। ये आदमी और औरत दोनों में से कोई भी हो सकता था लेकिन ये अन्य दासों से अलग थे क्योंकि इनका संबंध मंदिर से था जो पूर्ण रूप से धार्मिक था। ये सभी मंदिर के प्रति समर्पित थे। इन व्यक्ति विशेषों को 'आदमियों के समक्ष स्वतंत्रता' थी लेकिन इनकी 'दासता' 'अग्नि' से थी, यह अग्नि जरतुश्त धर्म से संदर्भित थी और जो पूर्ण नागरिक की पात्रता के लिए आवश्यक थी। इसलिए, इस दासता को सासानियों की दास व्यवस्था का रूप नहीं माना जा सकता क्योंकि यह धार्मिक व्यवस्था से सम्बंधित थी।

13.8 संस्कृति

हालांकि, अर्दशीर प्रथम के समय में सासानी कला और मूर्तिकला में वृद्धि हुई, लेकिन यह पूर्वकालिक कला की निरंतरता थी। इसका एक कारण यह था कि अर्दशीर प्रथम यद्यपि शासक बना, फिर भी पार्थियनों पर पूरी तरह से नियंत्रण नहीं कर सका। यहां तक कि मुद्रा प्रणाली जो कि सासानियों का महत्वपूर्ण योगदान था, वह भी पूर्व के ईरानी शासकों की परम्पराओं की निरंतरता की पुनःपुष्टि करती है। इन सिक्कों की कला की प्रकृति में जो परिष्करण था, वह साम्राज्य की आरंभिक उकेरी हुई मूर्तिकलाओं में भी देखा जा सकता है। बढ़ते हुए समय के साथ उच्च स्तर की मूर्तिकला का पतन हुआ और कला की कलात्मकता कम होती गई। इस काल में धार्मिक साहित्य की प्रधानता के अतिरिक्त कुछ लौकिक साहित्य लेखन भी देखा गया जो भिन्न था।

13.8.1 वास्तुकला

अधिक खुदाई न होने के कारण सासानी वास्तुकला के संबंध में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी है। हालांकि, किलों और महलों के अवशेषों का अध्ययन करके विद्वान राजाओं की समृद्धि और राजाओं का कला के प्रति प्रेम का विवरण देने में सफल हुए हैं। अरब-ईरानी स्रोतों के अनुसार इन इमारतों के लिए मज़दूर मुख्यतः सीरिया से आए जहां से जनसंख्या बड़ी संख्या में ईरान की ओर विस्थापित हुई। इन मज़दूरों के द्वारा शहरों, बांधों, किलों और सिचांई संसाधनों का निर्माण किया गया।

सासानी वास्तुकला को मेहराबी छत, गुम्बद और *ईवान,* जो कि चारों ओर कमरों से घिरा आंगन होता है, जो महलों में एक आम स्थान के रूप में बनाया जाता था से चिन्हित किया जाता है। रिहायशी मकान आंगन के चारों ओर स्थित होते थे। यह योजना महलों के निर्माण के लिए मानक बन गई। इमारतें अक्सर **गच्चीकारी (stucco)** से सज्जित की जाती थीं। क्योंकि इमारतों की निर्माण-सामग्री में एशलर (अच्छी तरह तराशे हुए पत्थर) की बजाय बिना तराशे हुए पत्थर और मोर्टार (पत्थर को जोड़ने के लिए) का प्रयोग किया जाने लगा।

चित्र 13.10 : अर्दशीर प्रथम का महल, फिरूज़ाबाद, ईरान
साभारः अली पारसा
स्रोतः विकीमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/Category:Palace_of_Ardashir#/media/File:Ardeshir.jpg)

कुछ इमारतों का स्रोतों की मदद से कल्पना के साथ पुनःनिर्माण किया जा सकता है इनमें अर्दशीर प्रथम का फिरूज़ाबाद में स्थित महल भी है। यह सासानी साम्राज्य के पहले के समय का बना हुआ है इसे अर्दशीर, जो उस समय फार्स का राजकुमार था, ने बनवाया था। ऐसा माना जाता है कि यह महल जिस स्मारकीय शैली और प्रकार का प्रतिनिधित्व करता है वह फार्स में एक सामान्य स्तर पर विकसित थी। महल की योजना अकेमिनिडों की वास्तुकला शैली का अनुसरण करती प्रतीत होती है। इनमें प्रयोगित शैली के अनुसार इसमें दो मुख्य परिसर होने चाहिए, आम और कार्यालयी या *अपादान* और व्यक्तिगत रिहायशी *हरम* परिसर और दोनों ही एक दूसरे से जुड़े हुए होते थे। *अपादान* पार्थियन शैली में एक बड़े विस्तृत *ईवान* में बना हुआ था। हालांकि, यहां *ईवान* की खुली प्रकृति में परिवर्तन कर उसे गलियारे (प्रकोष्ठ या प्रवेश कक्ष) में परिवर्तित किया गया जो एक बड़े कमरे की ओर जाता है जो कि संभवतः आमंत्रण कक्ष या सिंहासन कक्ष हो सकता है। चौकोर कमरे पर एक बड़ा गुम्बद था जो **स्क्विंच (squinch)** (बड़े ढांचे पर गुम्बद को उठाने के लिए चौकोर कक्ष के आंतरिक कोने पर सीधा या मेहराबदार ढांचा [dome]) पर बनाया जाता था। स्क्विंच सिद्धांत गुम्बद के निर्माण में सासानी वास्तुकला के महत्वपूर्ण योगदानों में से एक था। यह प्रारूप भविष्य में भी प्रयोग किया गया, यहां तक कि बाद के वर्षों में मस्जिदों की वास्तुकला के निर्माण में भी इसने सहायता की। उसमें खिड़की के लिए कोई व्यवस्था नहीं थी और रोशनी गुम्बद की संकरी दरार से आती होगी।

सारांश में फिरूज़ाबाद के महल के फर्श की योजना विशाल आयताकार थी जो उत्तरी भाग में पूरी इमारत की अपेक्षा ज़रा सी उठी हुई थी। यह आम जनता के लिए स्थान था जिसमें प्रवेश खुले *ईवान* के द्वारा होता था। *ईवान* के दोनों ओर समकोण कमरे थे, उनके ऊपर बेलनाकार मेहराबदार छतें (vaults) थीं। तीन बड़े चौकोर कमरे, सिंहासन का कमरा और सेवकों की कोठरियां परिसर के दक्षिण में प्राप्त हुए हैं। इन सभी के ऊपर गुम्बद थे जो बगली द्वार (स्क्विंच; squinch) पर बनाए गए थे। रिहायशी परिसर के लिए जो प्रवेश द्वार था, वही हवा के आने-जाने का एकमात्र ज़रिया था। उसके ठीक विपरीत दिशा में हवा के प्रसार के

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

लिए एक अन्य दरवाज़ा था। ऐसा प्रतीत होता है कि दरबार के हिस्से में वर्णित किया छोटे व्यक्तिगत रिहायशी घर बने हुए थे जिनकी छतें बेलनाकार थीं। जैसा कि ऊपर वर्णित किया गया है कि जल्दी सूखने वाले जिप्सम और मोर्टार को ढकने के लिए गच्चीकारी (stucco) का प्रयोग किया गया जो कि ऐतिहासिक काल से निर्माण कार्य में प्रयोग होने वाली उपलब्ध स्थानीय सामग्री थी।

यद्यपि यह मुख्य योजना थी जिसका प्रयोग अधिकतर महलों के निर्माण में किया गया, लेकिन बिशापुर और टेसिफोन स्थित शापुर प्रथम के शासन काल के दौरान बने महलों में इसमें में अधिकतर बदलाव देखा जा सकता है। इन महलों में अधिकतर पार्थियन और हेलिनिस्टिक लक्षणों को अपनाया गया था। टेसिफोन के महल के संदर्भ में इसकी अवस्थिति पर तर्क दिया जा सकता है क्योंकि यह पुराने स्थित पार्थियन महल के ऊपर बनाया गया था। *ईवान* बंद आंगन की ओर जाता था और दूसरी ओर भी इसी तरह की समान संरचना बनी हुई थी। महल की योजना काफी हद तक असुर के पार्थियन महल से ली गई थी। आकार के मामले में इस महल का अपना विशेष महत्व है, यह पार्थियनों के द्वारा निर्मित किए गए अन्य सभी महलों से कहीं अधिक विशाल था। दुर्भाग्यवश इनमें से अधिकतर बचे नहीं। नींव के अवशेष संकेत देते हैं कि इमारत पांच विशाल आयताकार कमरों में विभाजित थी। ये गलियारों से जुड़े हुए थे और अलग-अलग आकार और आकृति वाले छोटे कमरों के द्वारा अलग किए हुए थे। विद्वानों का मत है कि बड़े कमरों के ऊपर बेलनाकार मेहराबदार छतें (vaults) थीं जबकि छोटे कमरों के ऊपर गुम्बद थे।

चित्र 13.11 : टेसिफोन का मेहराबी द्वार, सासानी राजधानी शहर टेसिफोन का एकमात्र मौजूदा अवशेष

साभारः सेन डिआगो एअर एंड स्पेस म्यूज़ियम

स्रोत: विकीमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Ctesiphon_Arch.jpg)

बिशापुर की खुदाई द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान बाधित हुई और बाद में दुबारा कभी इसकी शुरुआत नहीं की गई। इसमें सिर्फ एक दूसरे को काटते हुए कमरे मिले हैं जो चार क्रॉस की आकृति में उसकी मेहराबनुमा छत के सबसे ऊपर एक बड़ा गुम्बद है जिससे पूरा परिसर घिरा हुआ था। इस क्षेत्र के अंतर्गत एक अग्नि मंदिर भी स्थित था। जबकि जिप्सम, छोटे अनगढ़ पत्थर और चूने का प्रयोग लगातार होता रहा जिससे यह महल अलंकरण में अद्वितीय है जो कि यूनानी-रोमन कला से प्रेरित प्रतीत होता है। खड़े हुए आदमियों या घोड़े की पीठ पर सवारों के कुछ नक्काशी वाले अलंकरण पूर्ण रूप से पर्सिपोलिस से लिए गए हैं।

चित्र 13.12 : ईरान में बिशापुर में शापुर प्रथम के महल के फर्श पर ईरानी-रोमन पच्चीकारी कला (mosaic) का अलंकरण

साभारः कोरडनराड

स्रोत: विकीमीडिया कॉमन्स (https://en.wikipedia.org/wiki/Bishapur#/media/File:Mosaic01.jpg)

13.8.2 कला और मूर्तिकला

गच्चीकारी (stucco) का प्रयोग विभिन्न चित्रकलाओं की सज्जा के तौर पर किया गया जिसमें मुख्यतः युद्ध और शिकार के दृश्य देखे जा सकते हैं। इन दृश्यों में सुन्दर फूल-पत्तियां और ज्यामितीय आकृतियां भी सजावट के लिए प्रयोग की गई हैं।

चित्र 13.13 : लड़ती हुई जंगली-बकरियों (आइबेक्स) का गच्चीकारीयुक्त चित्रण, 5-6 शताब्दी

साभारः देदेरो

स्रोतः विकीमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wikiFile:Relief_plaque_with_confronted_ibexes,_Iran,_Sasanian_period,_5th_or_6th_century_AD,_stucco_originally_with_ polychrome_painting_-_Cincinnati_Art_Museum_-_DSC03952.JPG)

चित्र 13:14 : अनाहिता पात्र, 350-500 सी ई सासानिद चांदी और सोने की परतयुक्त, ईरान

साभारः देदेरो

स्रोतः विकीमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Anahita_Vessel,_300-500_AD,_Sasanian,_Iran,_silver_and_gilt_-_Cleveland_Museum_of_Art_-_DSC08131.JPG)

विशाल नक्काशीदार मूर्तियां सासानी काल की कला की मूल विशेषता है। आरंभिक वर्षों में एक मूर्ति के अलावा अधिकतर मूर्तिकलाएं मुख्य रूप से फार्स में बनाई गईं थीं। इस कला द्वारा व्यक्तियों और उनकी गतिविधियां अमर हो गई। हालांकि, यह इनकी मूल शैली नहीं थी बल्कि इस तरह की स्मारकीय मूर्तियां अक्कादियनों के अंतर्गत भी देखी गई। इन मूर्तियों का विकास तीसरी शताब्दी सी ई में हुआ प्रतीत होता है। यह ध्यान देने योग्य है कि अधिकतर मूर्तियां नदियों या पानी के स्रोतों के पास ही प्राप्त हुई हैं। इन मूर्तिकलाओं में मुख्य रूप से दो मूल विषय देखने को मिलते हैं। एक जिसमें देवी-देवता राजा को शक्ति से विभूषित करते हुए दिखते हैं। यह फीते में अंगूठी के चित्रण द्वारा दिखाया जाता है जो कि शक्ति का प्रतीक है। हालांकि ऐसा विश्वास था कि ये दृश्य धार्मिक लक्ष्यार्थ से बनाए गए थे परन्तु ऐसा माना जाता है कि ये मुख्यतः राजनैतिक प्रचार के लिए बनाये गये थे। यह इस विचार के प्रचार के लिए किया गया था कि शासक दैवीय शक्ति से विभूषित है। ऐसा चित्रित करते हुए कलाकार ने शासक और देवी-देवता को एक दूसरे के प्रतिबिम्ब की तरह दिखाया है जैसा कि नक्श-ए रूस्तम की नक्काशी में भी देखा जा सकता है। यहां अर्दशीर प्रथम और अहुरा मज़दा[5] को घोड़े की पीठ पर संतुलित रूप से एक दूसरे के समानान्तर आमने-सामने बैठा हुआ दिखाया गया है। देवी-देवता और शासक दोनों के पैरों में विरोधियों को लिटाया हुआ दर्शाया गया है।

चित्र 13.15 : अर्दशीर प्रथम अहुरा मज़दा से शक्ति की अंगूठी प्राप्त करते हुए
सभारः हारा 1603
स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Naqsh-e-Rostam_(Iran)_Relief_Sassanid_Period.JPG

दूसरे मूल विषय में शत्रु पर विजय का चित्रण देखा जा सकता है। आरंभिक मूर्तिकला फिरूज़ाबाद में बनाई गई जहां अर्दशीर प्रथम को पार्थियन सत्ता का तख्ता पलट करते हुए चित्रित किया गया। परंपरानुसार पूरी लड़ाई को चित्रित नहीं किया गया। वहीं दूसरी ओर, अर्दशीर प्रथम या उसके पुत्र को पार्थियनों के विरूद्ध घोड़े पर सवार होकर भाले से युद्ध करते हुए चित्रित किया है जिसमें उन्हें अपने विरोधियों को परास्त करता दर्शाया गया है। सबसे महत्वपूर्ण विकास यह देखा जा सकता है कि जहां आरंभिक मूर्तिकलाएं तुलनात्मक रूप से

[5] ज़रतुश्तों के सर्वोच्च और पूज्य देवता।

सीधे-सादे रेखाचित्रों द्वारा बनाई गई थीं, सासानियों द्वारा बनाई गई मूर्तियों में परिधानों, हथियारों, ताज आदि की विस्तृत व्याख्या देखने को मिलती है। दूसरा दिलचस्प उदाहरण मूर्ति के फलक (panel) का है जिसके बाईं ओर देवता ओहर्मज़ाद (आहुरा मज़दा) का घोड़ा अहरीमन[6] को कुचल रहा है जबकि दाईं ओर शापुर प्रथम का घोड़ा शासक गॉर्डियन तृतीय को अपने पैरों तले कुचले हुए है। उस समय में इस तरह के दृश्यों को चित्रित करना कलाकार की विशेष युक्ति थी। अन्य प्रकार के दृश्यों में शासक को दूसरे उच्च पदाधिकारियों या उसके परिवार से घिरा हुआ या शिकार करते हुए दिखाना भी बहुत प्रचलित थे। ख़ुसरो द्वितीय के शासन काल के दौरान शिकार के दृश्य विस्तृत व्याख्या के साथ चित्रित किए गए हैं। अर्दशीर प्रथम के शासन काल के दौरान मूर्तिकला ने विशिष्ट ख्याति प्राप्त की और शापुर तृतीय (383-388 सी ई) के समय तक विकसित होती रही, तदनुपरान्त इसने अपना महत्व खो दिया। दो सौ वर्ष के बाद खुसरो द्वितीय (590-628 सी ई) के अधीन यह फिर से जीवित हुई। इसने नक्काशीदार मूर्तिकला को पवित्र स्थल ताक़-ए बुस्तान में मान्यता दी। यह सासानी कला का एकमात्र पूर्ण नमूना है जो बचा रहा। हालांकि इसमें जिस कला का प्रयोग किया गया उसकी पूर्ण व्याख्या नहीं की गई है और इसीलिए इसका महत्व पूरी तरह से समझे जाने की आवश्यकता है।

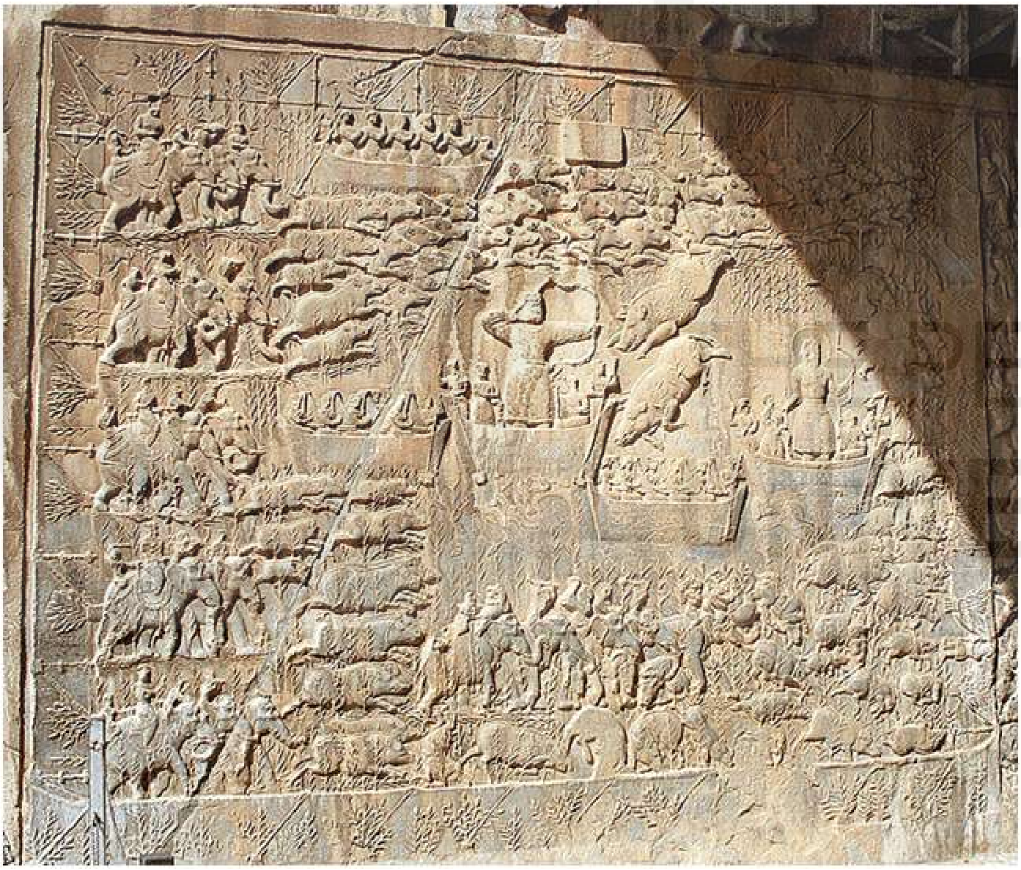

चित्र 13.16 : ताक़-ए-बुस्तान में सूअर का शिकार करते हुए
साभारः फिलिप केविन
स्रोतः विकीमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Taq-e_Bostan_-_Low-relief_the_boar_hunt.jpg)

13.8.3 साहित्य

सासानी शासन काल में साहित्यिक ग्रंथ प्राप्त होने के कोई साक्ष्य नहीं मिलते। इन्होंने लिखित की बजाए मौखिक संप्रेषण को अधिक महत्व दिया। इस समय मुख्यतः जिस भाषा का प्रयोग किया गया वो यूनानी थी जो कम से कम तीसरी शताब्दी के बाद नहीं तो उसके

[6] अहुरा मज़दा का विरोधी; पाप का प्रतीक।

अंत तक प्रचलन में रही। इसके बाद अधिकतर पार्थियन प्रयोग की गई और सासानियों द्वारा कब्जा कर लेने के बाद भी बोली जाती थी। पहलवी या मध्य ईरानी भी प्रयोग की गई। ये दोनों भाषाएं केवल अरमाइक लिपि में लिखी जा सकती थीं, अतः वे भाषा की ध्वनि को सही से प्रतिबिम्बित नहीं कर सकीं। यहां पर शब्दों की ईरानी में व्याख्या के लिए शब्दकोश जैसी एक पुस्तक भी बनाई गई। वर्णमाला में कमी, घसीटा लिखावट और अन्य परिवर्तन होने के कारण उत्तर जीवी साहित्य को पढ़ना कठिन हो गया। अधिकतर साहित्य का संकलन नौवी और दसवी शताब्दी सी ई के दौरान किया गया।

समय के साथ केवल कुछ लौकिक साहित्य ही बच सका। लघु साहित्य जैसे *'खुसरो एंड द पेज'* जिसमें शासक एक युवा व्यक्ति से दरबार के तौर-तरीके संबंधी जानकारी मांगता है या पार्थियन मूल की कविता *मेमोरीस ऑफ ज़रेर* जो एक महाकाव्य का अवशेष है और पौराणिक शासक कयानिड्स के बारे में जानकारी देता है। *बुक ऑफ किंग्स* में पौराणिक और ऐतिहासिक शासकों के बारे में कहानियां संकलित हैं। इसके बारे में सिर्फ कुछ भाग अरबी अनुवाद से जाने जा सकते हैं और घुमा-फिराकर ग्यारहवी शताब्दी के फिरदौसी के *शाहनामा* से थोड़ा-बहुत पता चल सकता है।

यहां पर *अवेस्ता* के भाष्य का पहलवी भाषा में अनुवाद और इस समय के धार्मिक साहित्य की अधिक उपलब्धता है। अधिकतर साहित्य मज़दा धर्म के समर्थकों का है जो कि इस समय तक अल्पसंख्यक धर्म हो गया था। *स्कंद गुमेनिग* और *डेनकर्ड* इस तरह के साहित्य के उदाहरण हैं। यहां पर विश्व के पौराणिक इतिहास, ज़ोरास्टर की किंवदंतियां और 'मानव' की उत्पत्ति, जो साफ तौर पर यूनानी दर्शनशास्त्र से प्रभावित देखा जा सकता है, पर भी कुछ साहित्य मिलता है। ज़रतुश्त धर्म की विचारधारा का मूल विषय मृत्युपर्यन्त जीवन और आत्मा के विश्वास पर अधिक बल देता है। यह *अरदा विराज़ नामाग* में विराज़ की कथा में देखा जा सकता है। यह ईरान में बहुत प्रसिद्ध कथा है जिसमें दस्तावेज़ों के अनुसार शापित आत्माओं को बहुत भयानक दंड दिए जाने का उल्लेख है।

दादेस्तान-ए देनिग या पहलवी *रिवायत* ऐसे ग्रंथ हैं जो विभिन्न विषयों को एक साथ लाए। मज़दा धर्म का पतन हो रहा था, धर्मशास्त्री अपने धर्म से सम्बंधित कानून की सारी जानकारी, मतों और रीत-रिवाजों को बचाना चाहते थे। यह सब मध्यकालीन पाण्डुलिपि परंपरा के द्वारा आंशिक रूप से संरक्षित किए गए। मनिकाईनों के लेख बहुत हद तक बेहतर तरीके से संरक्षित किए गए क्योंकि धार्मिक नेता होने के नाते मनि को अपनी ब्रह्माण्ड संबंधी शिक्षाओं को विभिन्न भाषाओं में लिखने के लिए अपने शिष्यों का आश्रय प्राप्त था। मनि की शिक्षाएं मज़दा की बजाए, मूर्तिपूजक (pagan) और यहूदी ईसाई धर्म, जो कि उस क्षेत्र का धर्म था, की अध्यात्म विषय की समझ से अधिक प्रभावित प्रतीत होती हैं। विभिन्न विषयों पर मनि के साहित्य का एक बहुत बड़ा संकलन प्राप्त हुआ है जिसमें से कुछ का मध्य एशिया में बोली जाने वाली भाषाओं में भी अनुवाद किया गया।

बोध प्रश्न-3

1) उदाहरण सहित उन लक्षणों का विश्लेषण कीजिए जो सासानी वास्तुकला को चिन्हित करते हैं।

....

....

....

....

....

2) सासानी साम्राज्य के दौरान कला के कौन-कौन से रूप विकसित हुए?

....

....

....

....

....

3) सासानियों के अंतर्गत साहित्य के क्षेत्र में हुए विभिन्न विकासों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

4) सासानी साम्राज्य के दौरान सामाजिक संस्थाओं की मुख्य विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

13.9 धर्म

सासानी काल से पहले के काल में यहां यहूदी, ईसाई और ज़रतुश्त धर्मों में आपस में बहुत संघर्ष था। विभिन्न धर्म एक दूसरे से समझौता करने की कोशिश कर रहे थे। इसका अंत सासानी काल में राज्य द्वारा स्वयं के रूढ़िवादी धर्म को स्थापित करने के साथ हुआ। सासानी काल के दौरान राज्य और धार्मिक संस्थाओं के बीच संबंध बहुत स्पष्ट थे।

मनिकाईवाद का संस्थापक, मनि (216-276 सी ई) ईरानी धार्मिक परिदृश्य पर सासानियों से पूर्व समय में आया। उसने ईरानी विचारों को बहुत आसान तरीके से प्रस्तुत करके बहुत महत्वपूर्ण प्रभाव छोड़ा। मनिकाईवाद का साहित्य बहुत अच्छी तरह से संरक्षित किया गया है क्योंकि मनि अपने अनुयाईयों से चाहते थे कि उनकी शिक्षा अधिक से अधिक भाषाओं में उपलब्ध हो। ऐसा माना जाता है कि इनके विचारों से सासानी शासक शापुर प्रथम बहुत प्रभावित था। उसने मनिकाईवाद को इसके अंतर्राष्ट्रीय चरित्र के कारण ज़रतुश्त मत से अधिक महत्व दिया जबकि उसका अपना पिता ज़रतुश्त का अनुयायी था। इस काल में ईरान में दी गई उसकी शिक्षाएं लोगों को प्रभावित करने में सफल रहीं। मनिकाईवाद व्यापार मार्ग के विकास की सहायता से बहुत आगे और सुदूर चीन तक फैल गया – जहां मनि को मिंग वंश तक बुद्धा का वैद्य उत्तराधिकारी माना गया, तत्पश्चात् चीन में इस व्याख्या को चुनौती दी गई।

यह भी देखा जा सकता है कि शापुर प्रथम ने ईसाई धर्म के अनुयायियों का बहुत समर्थन

किया। एक किंवदंति के अनुसार वरहरान द्वितीय (276-293 सी ई) ने बाद में ईसाई धर्म को अपना लिया था। हालांकि दस्तावजों में ऐसा पाया गया है कि इसने ईसाईयों का उत्पीड़न किया था। चौथी शताब्दी सी ई में ईसाईयों को मज़दाई पादरियों द्वारा सताया गया। यह सीरियाई भाषा में *एक्ट्स ऑफ द पर्शियन मार्टिअर्स* नामक ग्रंथ में दर्ज है। यह ग्रंथ ईरान में ईसाईयों के व्यवहार के बारे में भी जानकारी देता है। धर्मशास्त्र के नए अध्ययन केन्द्र स्थापित हुए। महत्वपूर्ण अध्ययन केन्द्रों में से एक गुंडेसपुर में था। जब धर्मशास्त्र की कई संस्थाएं बंद हो गईं तब कई शिक्षक गुंडेसपुर चले गए। इस कारण ईरान में बड़े पैमाने पर अरस्तुवाद का प्रवेश हुआ। एथेन्स की धार्मिक संस्था को सम्राट जस्टीनियन द्वारा बंद करा दिया गया जिसके कारण यहां के सात शिक्षक गुंडेसपुर में चले आए। दर्शनशास्त्र के अतिरिक्त गुंडेसपुर में चिकित्सा के प्रति भी महत्वपूर्ण रूझान था जो इस काल में धर्मशास्त्र के काफी निकट होता था। स्रोतों से ज्ञात होता है कि शापुर द्वितीय के शासन काल के दौरान चिकित्सक और धर्मशास्त्री दोनों ही के द्वारा दैनिक कार्य का संचालन करने से पहले धार्मिक कार्य कलाप को पूरा करना पड़ता था।

हालांकि, सासानी काल के दौरान सबसे महत्वपूर्ण धर्म ज़रतुश्त ही था। अर्दशीर प्रथम के सिंहासन पर बैठने के बाद राज्य और धर्म के बीच संबंध नज़दीकी और एक हो गये थे। इस काल से प्राप्त सिक्कों से राजा और ज़रतुश्त मत के बीच निकट संबंध की एक झलक देखने को मिलती है, जहां अर्दशीर प्रथम का चित्र सिक्के की एक ओर तथा अग्नि को दूसरी ओर दर्शाया गया है (**चित्र 13.7**)। अग्नि राजपद का प्रतिनिधित्व करती थी जो साम्राज्य के शासन काल के प्रत्येक शासक के प्रारंभ को प्रतिबिम्बित करती थी। अर्दशीर प्रथम ने धर्म के प्रमुख देवता अहुरा मज़दा को नक्काशियों में चित्रित करवाया। अहुरा मज़दा को सासानी साम्राज्य के अन्य शासकों को मानाभिषेक (investiture) अंगूठी देते हुए भी चित्रित किया गया है (**चित्र 13.15**)। कभी तो शासक खुले रूप से ज़रतुश्त मत पर आश्रित होते दिखते हैं और कभी दूसरे धर्मों पर अत्याचार करते हुए और अन्य धर्मों को अपने समाज में स्वीकार करते हुए दिखाई देते हैं।

धर्म के मुख्य देवी-देवता अहुरा मज़दा, मिहर, अनाहिता और वरहरान थे। अहुरा मज़दा सभी देवताओं में उच्चतम माने जाते हैं जिन्होंने सभी शासकों को शासन करने के अधिकार से विभूषित किया। आहुरा मज़दा की उपस्थिति, जिनका नाम सूर्य के ऊपर रखा गया था, संभवतः शक-कुषाणों द्वारा सूर्य को दिए गए महत्व के कारण हो सकता है, जो भारत तक सूर्य उपासना लेकर आए थे। देवता मिहर को रथ के साथ दिखाया जाता है। अनाहिता पानी की देवी थी। देवी-देवताओं में अंतिम वरहरान का नाम बड़ी संख्या में सासानी शासकों ने अपनाया। ज़रतुश्त मत में वरहरान नाम अग्नि को भी दिया गया था। यहां पर अन्य देवता भी थे हालांकि, वे उतने अधिक लोकप्रिय नहीं थे जितने ये चार थे।

साम्राज्य में नियमित व्यक्ति विशेषों के लिए धार्मिक शिक्षा पुजारियों द्वारा सिर्फ अपने पुत्रों को ही दी जाती थी ताकि वे उनके बाद उनका स्थान ले सकें। हालांकि, समुदाय में प्रत्येक व्यक्ति को आनुष्ठानिक संस्कार द्वारा धर्म में सम्मिलित कराया जाता था जो कि बच्चे के सात से दस वर्ष की आयु के बीच में होता था। बच्चे को प्रार्थनाओं का वाचन कराया जाता था तथा अन्य अनुष्ठानों के साथ-साथ उसे धर्म अंगीकार करने की स्वीकृति भी करनी होती थी।

प्रत्येक व्यक्तिविशेष को जीवन भर नियमित रूप से पुजारियों से विमर्श करना पड़ता था। विभिन्न प्रकार के शुद्धिकरण के समारोह किए जाते थे जिनमें विवाह से पूर्व, बच्चे के जन्म के पश्चात्, मृत्यु के पश्चात् या समारोहों के पश्चात् और वर्ष के अन्तिम दस दिन मृतक को याद करना सम्मिलित थे। *यासना* नामक अनुष्ठान या बलि अग्नि के सामने उसी स्थान पर हो सकती थी जहां पर समारोह किया जाना हो। यजमान को इसके लिए भुगतान करना पड़ता था जिसे 'आत्मा की प्रतिष्ठापना' कहा जाता था। अग्नि को विशेष स्थान दिया जाता

था ताकि उसमें भेंट आसानी से दी जा सके और वह स्वायत्त सत्ता लगे। सिक्कों के पीछे उसके चित्रण से स्पष्ट होता है कि शासकों के लिए अग्नि बहुत प्रमुख थी। हालांकि, अन्य आमजन भक्त अग्नि को केवल दूर से देख सकते थे। वे प्रदक्षिणालय में अग्नि कुंड के चारों ओर प्रदक्षिणा कर सकते थे। इनके धर्म में अग्नि को बहुत महत्व मिला। इसे सर्वोपरि देखा गया और जिसका कोई भी अन्य प्रतिद्वन्दी नहीं हो सकता था। जलती हुई अग्नि में या दुबारा जलाई गई अग्नि में बड़ी लपट को मिलाया नहीं जा सकता था। केवल जलते हुए अंगारों को मिलाया जा सकता था। यद्यपि उस समय इस संस्कार का सासानियों के अंतर्गत बहुत महत्वपूर्ण स्थान था, लेकिन वर्तमान समय में अब पारसी इसका अनुकरण नहीं करते।

बोध प्रश्न-4

1) सासानियों का ईसाईयों के प्रति क्या रवैया था?

....

....

....

....

....

2) सासानियों के अंतर्गत धर्म के मुख्य पहलुओं पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

3) सासानी साम्राज्य में सिक्कों की क्या भूमिका थी? धर्म और अर्थव्यवस्था के संदर्भ में इसकी चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

13.10 सारांश

इस इकाई में हमने सासानिद साम्राज्य के बारे में जानकारी प्राप्त की, कैसे उसका विस्तार हुआ और कैसे वह एक मुख्य ताकत के रूप में विकसित हुई। पार्थियनों के बाद, सासानी शक्ति में अर्दशीर प्रथम के समय से लेकर खुसरो प्रथम के समय तक वृद्धि हुई। उन्हें बहुत से समूहों के साथ बड़ी संख्या में सैन्य अभियानों से गुज़रना पड़ा। विशेष रूप से बाइज़ेंनटाइनों और मज़दाकाइटों के साथ संघर्ष प्रमुख थे। सासानियों ने बहादुरी से लड़ाई की, जिसमें कभी वे जीते तो कभी वे हारे। खुसरो प्रथम के शासन में कराधान और सेना में सुधार हुए जिसे बड़ी संख्या में उसकी सैन्य विजयों के रूप में देखा जा सकता है। सासानियों

द्वारा इस्तेमाल किये गये हथियारों में भी बदलाव आया और संभवतः वह हथियार उनकी ज़रुरतों के अनुकूल नहीं थे। उन्होंने बहुत से हथियार रोमनों से भी अंगीकृत किये थे, जैसे मोटे शहतीर (battering ram)।

समय के साथ, सासानियों ने कला, वास्तुकला, व्यापार और मुद्रा निर्माण के क्षेत्रों में भी अपनी छाप छोड़ी। सिक्के कलाकृतियों के तिथिक्रम निर्धारण में मदद करते हैं। हालांकि शुरुआत में सिक्कों पर की गई नक्ककाशी और प्रतिमाएं समान प्रकार की गुणवत्ता दर्शाती हैं, जो कि बाद के सिक्कों में देखने को नहीं मिलती क्योंकि अब मूर्तिकला ज़्यादा विकसित प्रकार की कला बन गई थी। खुदाई में मिले कुछ ध्वंसावशेषों के अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सासानियों द्वारा निर्मित संरचनाएं अद्वितीय थीं और अपने समकालीनों में से किसी को भी स्पर्धा दे सकती थीं। उन्होंने बंद मेहराबदार-छतों वाले कमरों के साथ खुली जगहों के उपयोग की नई शैलियों को जन्म दिया। संभवतः उनका सबसे प्रमुख योगदान वास्तुकला के क्षेत्र में स्क्विन्चों (squinch) का उपयोग कर गुंबदों का निर्माण करना था।

धर्म ने साम्राज्य के विकास में, जिसने शासकों को वैद्यता प्रदान की, एक मुख्य भूमिका निभाई थी। हालांकि वहां पर बड़ी संख्या में धार्मिक अत्याचार भी हुए और ज़रतुश्त धर्म में बहुत से बदलाव और परिवर्तन भी इस कारण किये गए थे। कानूनी और धार्मिक ग्रंथ एक दूसरे पर बहुत ज़्यादा निर्भर थे, इस कारण कानून इस हद तक धार्मिक नैतिकता पर निर्भर था कि धर्म विवादों पर निर्णय लेने का आधारभूत माध्यम बन गया था।

13.11 शब्दावली

नस्क् स **(Nasks)** : *अवेस्ता*, ज़रतुश्तों का धार्मिक मूलपाठ, के उप-भाग में करीब 21 *नस्क* हैं।

पपायरी **(Papyri)** : पपायरस का बहुवचन, लंबे पौधे जैसी घास जिससे कागज की किस्म बनाई जाती है।

स्क्विन्च **(Squinch)** : एक चौकोर कक्ष के आंतरिक कोणों में सीधी या मेहराबी संरचना जिससे कि चौकोर कक्ष पर गुंबद, को संभालने के लिए संरचना बन सके।

गच्चीकारी **(Stucco)** : दीवारों की सतहों की कोटिंग करने के लिए या वास्तुकला में सजावट के लिए इस्तेमाल होने वाला एक महीन प्लास्टर।

13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 13.3 देखें

2) भाग 13.2 देखें। जवाब में यूनानी और लैटिन स्रोतों के साथ-साथ विभिन्न ईरानी और गैर-ईरानी स्रोतों पर चर्चा शामिल होनी चाहिए।

3) भाग 13.3 (साथ में उप-भाग 13.3.1 और 13.3.2) देखें

4) भाग 13.4 देखें। जवाब में बाइज़ेंनटाइन और सासानिद साम्राज्यों के बीच युद्ध और घेराबंदी पर चर्चा शामिल होनी चाहिए।

बोध प्रश्न-2

1) उप-भाग 13.5.1 देखें

2) उप-भाग 13.5.3 देखें

3) उप-भाग 13.5.2 और 13.5.4 देखें

4) भाग 13.6 देखें

बोध प्रश्न-3

1) उप-भाग 13.8.1 देखें। फिरूज़ाबाद के महल और बाद में महल निर्माण के क्षेत्र में किए गये बदलावों पर चर्चा की जा सकती है।

2) उप-भाग 13.8.2 देखें। गच्चीकारी में सजावट के रूप में विभिन्न चित्रों में इस्तेमाल, विशेष रूप से युद्ध और शिकार के दृश्यों को दर्शाया गया है। इन चित्रों में सजावट के लिए सुंदर पुष्प और ज्यामितीय पैटर्नस दर्शाये गये हैं। विशाल शिल्प मूर्तियां सासानिद कला का एक और मुख्य तत्व थीं।

3) उप-भाग 13.8.3 देखें

4) भाग 13.7 देखें

बोध प्रश्न-4

1) भाग 13.9 देखें। जवाब में सासानिद साम्राज्य के दौरान विभिन्न धर्मों के बीच संघर्ष के पहलू पर चर्चा शामिल होनी चाहिए।

2) भाग 13.9 देखें

3) भाग 13.6 और 13.9 देखें। सिक्के साम्राज्य के विभिन्न शासकों के शासनकाल के अध्ययन का मुख्य स्रोत हैं।

13.13 संदर्भ ग्रंथ

हरमन, जोआचिम एवं एरिक जुरचर (संपा.). (1996). *हिस्टी ऑफ ह्युमैनिटी खंड* III. *साइन्टिफ़िक एंड कलचरअल डिवेलॅप्मॅन्ट.* पेरिसः यूनेस्को.

यारशेटर, अहसान (संपा.). (2008). *कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ ईरान.* खंड III. भाग I और II. कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

अंसारी, अली. (2014). *ईरानः वेरी शॉर्ट इन्ट्रोडक्शन.* ऑक्सफ़ोर्डः ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

13.14 शैक्षणिक वीडियो

द सासानिद एम्पायरः बी बी सी रेडियो 4
https://www.bbc.co.uk/programmes/b008g2x5

बाइज़ेंन्टाइन-सासानियन वॉर्स
https://www.youtube.com/watch?v=5et5qmbATYc

292 blank

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खंड VI
प्राचीन यूनान

समय रेखा

मिनोअन सभ्यता : 2000-1400 बी सी ई
माइसीनियन सभ्यता : 1600-1200 बी सी ई
'अंधकार युग' : 1200-800 बी सी ई
आर्केइक यूनान : 805-500 बी सी ई
क्लासिकीय यूनान : 500-323 बी सी ई
हेलेनिस्टिक यूनान : 323-100 बी सी ई

चित्रांकन: होमर के एपोथिऑसिस की नक्काशी युक्त पट्टिका

फोटोग्राफ: आई के ए वीन

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/7/76/Archelaus_Relief.jpg

इकाई 14 यूनान में लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था*

इकाई की रूपरेखा

14.1 उद्देश्य

14.2 प्रस्तावना

14.3 यूनानी कौन थे?

14.4 प्राचीन यूनानी सभ्यता का भौगोलिक विस्तार

14.5 प्रारंभिक यूनानी सभ्यता

14.5.1 मिनोअन सभ्यता

14.5.2 माइसीनियन सभ्यता

14.5.3 'अंधकार युग'

14.6 पुरातन, क्लासिकीय और हेलेनिस्टिक यूनानः लोकतांत्रिक राजनीति के साथ प्रयोग

14.6.1 दास प्रथा और यूनानी सभ्यता

14.6.2 व्यापार, नगर-राज्य, कृषि उत्पादन, दास प्रथा

14.7 यूनानी राजनीति, इसका अर्थ और संरचनायें: पुरातन से क्लासिकीय यूनानी सभ्यता तक

14.7.1 संक्रमण काल : पुरातन युग और निरंकुश शासन

14.7.2 क्लासिकल यूनान में लोकतांत्रिक राजनीतिः एथेंस, कोरिंथ, स्पार्टा

14.8 यूनानी समाज में महिलायें

14.9 सारांश

14.10 शब्दावली

14.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.12 संदर्भ ग्रंथ

14.13 शैक्षणिक वीडियो

14.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- यूनानी सभ्यता की कालानुक्रमिक और भौगोलिक सीमा का विवरण दे सकेंगे,
- यूनानी सभ्यता के विविध स्रोतों की सूची बना सकेंगे,
- यूनानी समाज, अर्थव्यवस्था और राज्य व्यवस्था और उनके अंतर संबंधों के मुख्य तत्वों को पहचान पायेंगे,
- बता पायेंगे कि कैसे और क्यों दास प्रथा यूनानी सभ्यता की नींव थी,
- बता पायेंगे कि यूनानी सभ्यता, एक प्राथमिक ग्रामीण आधार होने के बाद भी शहरी सभ्यता के रूप में क्यों पहचानी जाती है,

* डॉ. नलिनी तनेजा, स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

- विभिन्न समय तथा अलग-अलग क्षेत्रों में आये परिवर्तनों को रेखांकित कर पायेंगे, विशेषतः लोकतांत्रिक व्यवस्था की प्रकृति के बारे में, और
- उन विविधताओं को पहचान पायेंगे जो यूनानी सभ्यता में निहित थीं और जिन्होंने आधुनिक यूरोप की सभ्यता के मार्ग को आकार दिया।

14.2 प्रस्तावना

जब हम प्राचीन यूनानी सभ्यता की बात करते हैं तो यह वह आधुनिक यूनानी राष्ट्र-राज्य नहीं है जो 19वीं सदी की शुरुआत में आधुनिक राष्ट्रवाद के समय अस्तित्व में आये। प्राचीन काल की यूनानी सभ्यता में हम एक बदलती हुई भौगोलिक इकाई के बारे में बात करते हैं जिसका केन्द्र भूमध्यसागर था, जो एक छोटे से क्षेत्र में फैला हुआ था तथा इसका विस्तार विजयों के द्वारा हुआ, विजयों द्वारा क्षेत्रों को आत्मसात किया गया और अंत में सिकंदर के साम्राज्य के विस्तार के साथ यह एक विस्तृत साम्राज्य का हिस्सा बन गया। वे तत्व जिन्होंने यूनानी सभ्यता का निर्माण किया, उनमें 'बाहरी प्रभावों' के साथ-साथ उन क्षेत्रों का भी प्रभाव था जिनको जीता गया।

विजय और बदलती हुई सीमायें यूनानी सभ्यता की विशेषता थी। हालांकि मोटे तौर पर हम यूनानी सभ्यता को प्रारंभिक यूनान, 'अंधकार युग', और क्लासिकीय काल में वर्गीकृत कर सकते हैं। निरंतरता तथा परिवर्तन यूनानी सभ्यता की विशेषताएं थीं, जो सभी कालों में देखी जा सकती थीं, इनमें से कुछ सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन कुछ विशेष काल में ही देखे जा सकते थे जबकि कुछ पहलू सम्पूर्ण यूनानी सभ्यता में व्याप्त रहे।

इसके अलावा, हमें यह भी समझना चाहिए कि विविधता प्राचीन सभ्यताओं की पहचान है, और ऐसा नहीं है कि यह आधुनिकता के साथ ही आई है। इस अर्थ में विविधता बहुलवाद से अलग है। जहां बहुलवाद विविध प्रभावों में से एक स्वैच्छिक और कभी-कभी सचेत और पूरी जानकारी के साथ विभिन्न प्रभावों को दर्शाता है, विविधता एक स्वतंत्र इकाई के रूप में ज़्यादातर अनजाने में और कभी-कभी इसके बारे में जागरूकता के साथ आती है। यूनान के संदर्भ में, जहां आम जनता ने अपने मूल या स्रोतों की जानकारी के बिना जीवनशैली का पालन किया, यूनानी विचारकों और दार्शनिकों को यूनानी सभ्यता पर विभिन्न संस्कृतियों के प्रभाव के बारें में पूरी जानकारी थी, जिसे आप अगली इकाई में पढ़ेंगे, जो सांस्कृतिक परंपराओं के बारे में है।

प्राचीन यूनानी सभ्यता की विविधता को रेखांकित करने वाले साक्ष्यों में भाषाई, साहित्यिक और पुरातात्विक स्रोत हैं। इन स्रोतों ने इतिहास लेखन में यूनानी सभ्यता की इस विविधता के मूल्यांकन में मदद की है, जबकि 19वीं सदी में यूनानी सभ्यता के एक 'पश्चिमी' सभ्यता होने पर ज़ोर दिया जाता रहा। वास्तव में यह पश्चिमी घटक था जो आधुनिक यूरोप तथा पश्चिमी सभ्यता के उदय में प्रमुख कारक समझा जाता था। पूर्व तथा पश्चिम के मध्य की गहरी खाई तथा यूनानी सभ्यता को मुख्य रूप से आर्य सभ्यता समझने का दावा इतिहास लेखन में आए नवीन परिवर्तनों, जो मानव इतिहास को आधुनिक विविधता के साथ समकालिक परिवर्तनों तथा विभिन्न साक्ष्यों के रूप में देखता है, के कारण अब मान्य नहीं हैं। मानव इतिहास को यूनानी सभ्यता के माध्यम से यूरोप की उत्पत्ति की एक सीधी रेखा के रूप में नहीं देखा जाता है और न ही यूरोपीय यूनान को पुनर्जागरण और ज्ञानोदय के माध्यम से आधुनिकता की नींव के रूप में देखा जाता है। यूरोपीय इतिहास के स्थान पर विश्व इतिहास को मानव सभ्यता के सूचकांक के रूप में देखने से यह बदलाव दिखाई देता है। यूनान की अवधारणायें इस बदलाव के लिये, अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, यह बात हम इस इकाई को पढ़ने के बाद समझ पायेंगे।

यह उल्लेखनीय है कि प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिकों और विचारकों को इस बारे में जानकारी थी तथा उन्होंने पूर्वी प्रभावों जैसे मिस्री फोनिशियन्स, मेसोपोटामिया और एशिया माइनर में हो रहे बदलावों की प्रशंसा की और ग्रीस पर उनके प्रभावों को सराहा तथा व्यक्त किया। हालांकि यूरोप के स्थानीय विकास महत्वपूर्ण थे लेकिन यूनानी सभ्यता के विकसित तथा समृद्ध होने में केवल यही तत्व उत्तरदायी नहीं थे।

प्राचीन काल में एक ही समय में अलग-अलग जगहों पर विभिन्न विकास हो रहे थे। यूनानी सभ्यता, दूसरी अन्य सभ्यताओं की तरह, विभिन्न क्षेत्रों और समाजों में विचारों और भौतिक संस्कृति के प्रसार का परिणाम थी। इन अलग-अलग अवधारणाओं की झलक, यूनानी सभ्यता की अफ्रीकी-एशियाई जड़ों के बारे में मार्टिन बरनाल के आलेख में प्रदर्शित होती है (*ब्लैक एथेना, द एफ्रो एशियाटिक रूट्स ऑफ क्लासिकल सिविलाइजेशन*)।

भौतिक संस्कृति और सामाजिक संरचनाओं के संदर्भ में, यूनानी सभ्यता का उदय लोहे के व्यापक उपयोग के साथ जुड़ा हुआ है, जैसा कि गॉर्डन चाइल्ड (1986) और मोसेस आई. फिनले (1987) के द्वारा स्पष्ट किया गया है। अधिकांश विद्वानों के द्वारा यह भी रेखांकित किया गया है कि यूनानी समाज अनिवार्य रूप से एक दास समाज था, हालांकि श्रम के दूसरे रूप भी अस्तित्व में थे। और यह एक ऐसा पहलू था जिस पर भव्य शहर, शहरी जीवन, संस्कृति, और बौद्धिक उपलब्धियाँ, जिनके लिये यूनान इतनी अच्छी तरह से जाना जाता है, आधारित थी। हालाँकि कृषि में विकास तकनीकी कारकों तथा फसलों के प्रसार की तरफ इशारा करता है, स्थानीय कृषि तकनीकों का विकास विश्व के कई स्थानों पर स्वतंत्र रूप से लोहे के प्रयोग के साथ हुआ जो शहरी सभ्यता के विकास में भी प्रमुख था। इस प्रौद्योगिकी का प्रसार भूमध्यसागर के आसपास के क्षेत्रों, जो यूनानी सभ्यता के गठन का मूल केन्द्र थे, में हुआ। लोहे के व्यापक उपयोग के साथ, विकास और परिवर्तन की गति, प्राचीन समाजों के संदर्भ में, काफी तेजी से हुई। प्राचीन यूनान की उपलब्धियों की यह प्रगति जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में प्रतिबिंबित होती है।

एक पहलू जिसमें यूनानी सभ्यता असाधारण थी वह यह था कि राज्यों और साम्राज्यों के गठन के इस दौर में भी यह एक साम्राज्य के रूप में विकसित नहीं हुआ। यह स्वतंत्र नगर राज्यों की सामूहिकता में बना रहा। कभी भी राजनीतिक रूप से या क्षेत्रीय रूप से ये एकजुट नहीं हुये, फिर भी इन्होंने सभ्यता की एकता का गठन किया। इसका क्लासिकीय युग कला विज्ञान और दर्शन में उच्च उपलब्धियों से चिन्हित होता है जो 500 बी सी ई से 338 बी सी ई तक चला, जब सिकंदर की मकदूनियाई सेना ने यूनानी राज्यों पर विजय प्राप्त की। हालाँकि इसकी शुरुआत 2000 बी सी ई के आसपास हुई, जब क्रीट जहां यूनानी आबादी का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रहता था, यूरोप की प्रथम कांस्य युगीन सभ्यता के रूप में विकसित हुआ। इस संदर्भ में हम पुरातन (800-500 बी सी ई) और क्लासिकल और हेलेनिस्टिक यूनान (500-100 बी सी ई) के बारे में भी चर्चा करने से पहले मिनोअन सभ्यता (2000-1400 बी सी ई), माइसीनियन सभ्यता (1600-1200 बी सी ई) और 'अंधकार युग (1200-800 बी सी ई) के बारे में बात करेंगे। हम यहाँ लगभग इतिहास के 2000 वर्षों के बारे में चर्चा कर रहें हैं जिसके उत्तरार्ध में परिवर्तन कहीं अधिक गति के साथ हुआ, लेकिन फिर भी यह बदलाव हमारे आधुनिक युग में एक व्यक्ति के जीवन के भीतर प्रौद्योगिकी, समाज और ज्ञान के क्षेत्र में आने वाले महत्वपूर्ण बदलावों की तुलना में कुछ भी नहीं था।

इस इकाई में हम उन बिंदुओं की चर्चा करेंगें जो क्लासिकीय युग के समाज, अर्थव्यवस्था और राज्य व्यवस्था को परिभाषित करेंगे। हालाँकि आप यह भी जान पायेंगे कि पहले की सदियों ने किस प्रकार क्लासिकल सभ्यता की नींव रखी जो कांस्य युग से लौह युग में विकसित हुई जो कि प्रमुखतः क्लासिकीय यूनान था। हम यह भी विस्तार से देखेंगे कि अर्थव्यवस्था और

समाज की स्थापना ने यूनान की लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था और उसकी प्रमुख विशेषताओं का निर्माण कैसे किया।

14.3 यूनानी कौन थे?

फिनले (1987: अध्याय-1) का मानना है कि जो लोग आद्य-यूनानी भाषा बोलते थे (यूनानी भाषा का प्रारंभिक प्रारूप) शायद 2200 बी सी ई के आसपास द्वितीय सहस्राब्दी बी सी ई में यूनानी प्रायद्वीप में प्रवासित हुये। उनके आगमन ने माइसीनियन कांस्ययुगीन सभ्यता (1600-1200 बी सी ई) को जन्म दिया, जो प्रारंभिक लिपि जिसे रेखीय बी लिपि कहा जाता है, जो कि प्रारंभिक यूनानी लिपि थी, का प्रयोग करते थे। लेकिन सदियों बाद इस क्षेत्र में यह समझना कठिन हो गया कि जिसे यूनानी तत्व कहते थे वह 'पूर्व-यूनानी' से कैसे अलग थे, ठीक उसी प्रकार जैसा कि इस मिश्रित मानव प्रजाति को अलग करना मुश्किल हो गया। प्रजाति, भाषा और संस्कृति का एक दूसरे से इस क्षेत्र में कोई संबंध नहीं था (फिनले, 1987: 15)। हाल के इतिहास लेखन की रोशनी में आज हम कह सकते हैं कि भारत में भी यही हमारी प्राचीन विरासत की कहानी है।

हालाँकि युद्ध और विजय अभियान इस आदान-प्रदान के महत्वपूर्ण घटक थे और इस प्रक्रिया के लिये लोकप्रिय शब्द 'उपनिवेशवाद' का प्रयोग किया जाता है, लेकिन यह आधुनिक अर्थ में उपनिवेशवाद तो नहीं था, अतः इतिहासकार इसका प्रयोग प्रवास की घटना के रूप में करते हैं। 2000 वर्षों के काल, जिसकी हम चर्चा कर रहे हैं, में भूमध्यसागर के आसपास त्वरित स्थानांतरण और युद्ध निरंतर होते रहे जिन्होंने 5वीं शताब्दी बी सी ई में क्लासिकल यूनानी सभ्यता को जन्म दिया, इसके बावजूद कि पहले की सदियों के अन्तराल को 'अधंकार युग' के रूप में जाना जाता है, तथा जिस अवधि में लिपि का प्रयोग या तो बंद हो गया या इतिहासकारों को इसके कोई साक्ष्य नहीं मिलते। धातु विज्ञान, कृषि और भाषा का ज्ञान क्लासिकल यूनानी सभ्यता में 'अंधकार युग' के माध्यम से स्थानांतरित हुआ।

इन सदियों में बोली जाने वाली बोलियाँ और भाषाओं के शब्द विभिन्न भाषा स्रोतो से मिलते हैं, लेकिन हमेशा 'दूसरों' या 'बर्बरों' के बीच अंतर को रेखांकित किया गया। फिनले का मानना है कि यूनानियों ने अपनी बोलियों में स्वयं को यूनानी के रूप में इंगित नहीं किया। माइसीनियन सभ्यता के दिनों में वे एकियन के रूप में, जिसे होमर की कविताओं में भी निर्दिष्ट किया गया है, जाने जाते थे। 'अंधकार युग' के समय में 'हैलेनिक' शब्द, इस क्षेत्र के सामाजिक और सांस्कृतिक तत्वों को परिभाषित करने के लिये प्रयोग किया जाता था, और अंत में जिसके द्वारा विभिन्न नगर-राज्यों, भूमध्यसागर के आसपास के क्षेत्रों और जिन क्षेत्रों में सिकंदर ने विजय प्राप्त की, 'हेलास' नामकरण के रूप में जाने गये। इन सभी सीमांकन क्षेत्रों में उनमें एक समान संस्कृति और जीवनशैली से संबंधित होने की चेतना थी, लेकिन कई संदर्भो में यह विविध थी तथा उनका मानना था कि वे गैर-यूनानियों से भिन्न भी थी (फिनले, 1987: 15-18)।

14.4 प्राचीन यूनानी सभ्यता का भौगोलिक विस्तार

जैसा कि पहले बताया गया है जब हम प्राचीन यूनानी सभ्यता की बात करते हैं तो हम वर्तमान यूनान से कहीं बड़े क्षेत्र की बात करते हैं। प्राचीन यूनानी सभ्यता का विस्तार पश्चिमी अनातोलिया, थ्रेस, एजियन सागर के द्वीपों, क्रीट, साइप्रस, यूनान के मुख्य भाग, दक्षिण इटली और सिसिली तक फैला हुआ था। यह मुख्य रूप से भूमध्यसागर और एजियन सागर के आसपास का क्षेत्र था। भौगोलिक रूप से कहा जाये तो इसने इस क्षेत्र की महत्वपूर्ण विशेषताओं के निर्माण में सहायता की। जलवायु, भौतिक संरचना और देश के कानून और सबसे ऊपर बंदरगाहों और व्यापार और परिवहन के रास्ते उपलब्ध कराने के अलावा प्रवासियों

तथा कबीलों के भारी आवागमन को सुसाध्य बनाने में समुद्र का महत्वपूर्ण योगदान था। यूनानी शहरों में से अधिकांश अपने पूरे इतिहास में समुद्र तट से अधिक दूरी पर स्थित नहीं थे।

यूनान की मुख्य भूमि एक प्रायद्वीप है जो चारों तरफ से समुद्र से घिरा हुआ है। इसके दक्षिणी हिस्से को पेलापोनीस कहा जाता है, जो मुख्य भाग से एक खाई द्वारा जुड़ा है जहां कोरिंथ शहर विकसित हुआ। अन्य प्रमुख शहर एथेंस, अट्टिका क्षेत्र में स्थित है जो लगभग एजियन सागर से घिरा हुआ है। अट्टिका के उत्तर पश्चिम की ओर के क्षेत्र को बोइटिका कहा जाता है जिसका प्रमुख शहर थेब्स है। इसके अलावा उत्तर पूर्व की ओर मैसीडोनिया और थ्रेस हैं, और फिर तुर्की की ओर मर्मारा सागर के दूसरी ओर पश्चिमी अनातोलिया है। यूनानी प्रायद्वीप और पश्चिमी अनातोलिया ऐजियन सागर के विपरीत कोनों पर हैं तथा इनके बीच द्वीपों की एक बड़ी संख्या है जिसमें सबसे महत्वपूर्ण क्रीट है। दक्षिण इटली और सिसली में भी यूनानी आबादी थी।

कृपया **मानचित्र 14.1** को देखें जिसमें क्लासिकल यूनान कालीन शहरों तथा क्षेत्रों को दर्शाया गया है:

मानचित्र 14.1 : यूनानी नियंत्रण के तहत प्रदेशः क्लासिकल यूनान (स्रोतः MHI-01, प्राचीन एवं मध्यकालीन समाज, खंड 3, इकाई 12, पृष्ठ-34)

14.5 प्रारंभिक यूनानी सभ्यता

विभिन्न समुदायों, जो प्रारंभिक यूनान के क्षेत्रों में बसे हुये थे, ने अपनी संस्कृति और आजीविका के साधनों का विभिन्न क्षेत्रों में विकास किया। इन आजीविका के साधनों की अपनी कुछ विशेषताएं थीं जबकि दूसरी अन्य विशेषताएं समय और स्थान के अनुरूप परिवर्तित हुईं।

प्राचीन यूनानी सभ्यता का विकास लगभग कांस्य युग से लौह युग में संक्रमण के साथ हुआ। इस क्षेत्र में लोहे के सर्वप्रथम चिह्न मिनोअन सभ्यता में मिलते हैं, जो कि इस क्षेत्र की पहली कांस्य युगीन सभ्यता थी, जिसमें यूनानी आबादी थी। दूसरी ओर, माइसीनिअन सभ्यता यूनान की मुख्य भूमि पर स्वतंत्र रूप से विकसित हुई।

इन दोनों पर मेसोपोटामिया तथा फोनिशियन सभ्यता का प्रभाव था, तथा साथ ही लंबे समय से अनातोलिया तथा पूर्वी भूमध्यसागरीय समाजों में होने वाले परिवर्तन भी शामिल थे। मेसोपोटामिया और मिस्र की तरह मध्य अनातोलिया में भी एक परिपक्व कांस्य सभ्यता विकसित हुई थी।

विकसित व्यापार तथा विभिन्न कबीलों के कृषीय समुदायों के साथ अन्तर्संबंधों ने दो तरह की भाषाओं के उद्‌भव को प्रेरित कियाः सेमेटिक तथा इंडो-यूरोपीय। दोनों के अवशेष तत्कालीन विभिन्न यूनानी बोलियों में पाये जाते हैं। दास प्रथा आंरभिक काल से यूनानी अर्थव्यवस्था और समाज की एक प्रमुख विशेषता थी तथा यह निरंतरता का एक महत्वपूर्ण पहलू भी थी।

14.5.1 मिनोअन सभ्यता

प्राचीन क्रीट गाथाओं में प्रसिद्ध मिनोस नामक राजा के नाम पर जानी जाने वाली मिनोअन सभ्यता (2000-1400 बी सी ई) की खोज सर आर्थर इवान्स ने पुरातात्विक खुदाई के माध्यम से प्रारम्भिक 20वीं सदी में की थी। खुदाई में बड़े महलों के अवशेष मिलते हैं। यह राजनीतिक सत्ता और उच्च वर्ग के आवासों और आर्थिक गतिविधि के केंद्र थे, जिनमें गेहूं, जैतून और अंगूर के कृषि उत्पादन के साथ-साथ भेड़ पालन और ऊन उत्पादन भी शामिल था, यह यूनानी सभ्यता की उस प्रमुख विशेषता की ओर इंगित करती है जिसकी ग्रामीण सभ्यता के शहरी सभ्यता तथा शहरी जीवन के साथ घनिष्ठ संबंध थे, इसका भूमध्यसागरीय क्षेत्र और उसके इतर समृद्ध व्यापार था। मृदभांड विकसित थे तथा इस द्वीप पर कई शहर स्थापित थे जो बहुत प्रसिद्ध थे।

हालांकि उनकी लिपि को अभी पढ़ा नहीं गया है, यह ज्ञात है कि उनकी एक लिपि थी जिसका इस्तेमाल मिस्र, अनातोलिया, लेबनान के तट, साइप्रस और एजियन के साथ सक्रिय बातचीत में किया जाता था। इस तरह के संबंध तथा वस्तुओं और लोगों के आदान-प्रदान और स्थानांतरण (जिसे औपनिवेशीकरण भी कहा गया) ने, हालांकि लगभग 1400 बी सी ई में इसके अचानक अंत के बावजूद, मिनोअन सभ्यता के एक नए चरण को जन्म दिया, जो कि इस मिनोअन ऐतिहासिक अनुभव में सम्मिश्रित था। हालांकि मिनोअन लिपि को 'रेखीय अ' कहा जाता है, एक अन्य लिपि 'रेखीय ब' भी उपयोग में थी तथा एक और अन्य क्रीटन चित्र लिपि भी प्रयोग में थी। इस प्रकार वहां प्राचीन यूनान में तीन अलग-अलग लिपियां थी, जो एक दूसरे से संबंधित भी थीं तथा उनमें समानताएं भी थीं। इस क्षेत्र में प्रचलित लिपि का सबसे पुराना रूप क्रीटन चित्रलिपि का है जो चित्र आधारित थी और 2000 बी सी ई के आसपास विकसित हुई। रेखीय अ लगभग 1700 बी सी ई में मिनोअन सभ्यता के दौरान अस्तित्व में आई, और रेखीय ब 1450 बी सी ई के आसपास प्रचलन में आई और मायसीनियन सभ्यता के दौरान प्रयोग में बनी रही। चित्रलेख ज़्यादातर मिट्टी की पट्टियों पर मिलते हैं, लेकिन उन्हें अभी पढ़ा नहीं जा सका है। जबकि क्रीटन चित्रलिपि चित्र आधारित थी। रेखीय अ, देखने में एक रेखीय थी, जिसमें शब्दांश लेखन प्रणाली थी। 'रेखीय अ' लिपि के ज़्यादातर अभिलेख एक वर्गाकार क्षेत्र में व्यवस्थित हैं, जो 4 से 9 लाइन के हैं। वे ज़्यादातर क्रीट क्षेत्रों में पाए गये हैं तथा कुछ क्रीट के बाहर भी पाए जाते हैं।

'रेखीय अ'

मिनोअन द्वारा विकसित यह यूरोप की प्रथम लिखित पद्धति है। यह 1800 बी सी ई और 1450 बी सी ई के बीच उपयोग में थी। इसमें मोटे तौर पर 77 से 85 ध्वन्यात्मक प्रतीक थे जो अभी तक पढ़े नहीं जा सके हैं। लेकिन संकेत दृश्यों और संख्या के संयोजन से मुख्य रूप से यह व्यापार के माल की सूची बनाने के लिए इस्तेमाल की गई प्रकट होती है। इसकी अक्षरमाला और चिन्ह ध्वनि, साकार वस्तुओं और अमूर्त सोच का प्रतिनिधित्व करते हैं। धर्म और अनुष्ठान के साथ जुड़े स्थानों पर भी ये पाए गए हैं। यह बाएं से दाएं तथा समानांतर लिखी जाती थी।

'रेखीय ब'

मायसीनियन सभ्यता के दौरान विकसित यह लिपि आधुनिक विद्वानों द्वारा पहचानी गई लिखित यूनानी लिपि है, और इसको ज़्यादातर मुख्य भूमि पर मिट्टी की पट्टियों पर बड़ी संख्या में पाया गया है। इसके अतिरिक्त, इसमें शिलालेख तथा सूची सामग्री संकलन के बही-खाते भी मिलते हैं। यह भी बाएं से दाएं लिखी जाती थी और यह लोगोग्राम रूप में है, जो लगभग चित्र आधारित है। इस प्रकार यह चित्रलेख और रेखिक अ की कुछ विशेषताएं साझा करती है। इसमें 90 शब्दांश संकेत हैं, जिनकी आधुनिक विद्वानों द्वारा पहचान कर ली गई है।

स्रोत: https://www.omniglot.com/writing/lineara.htm

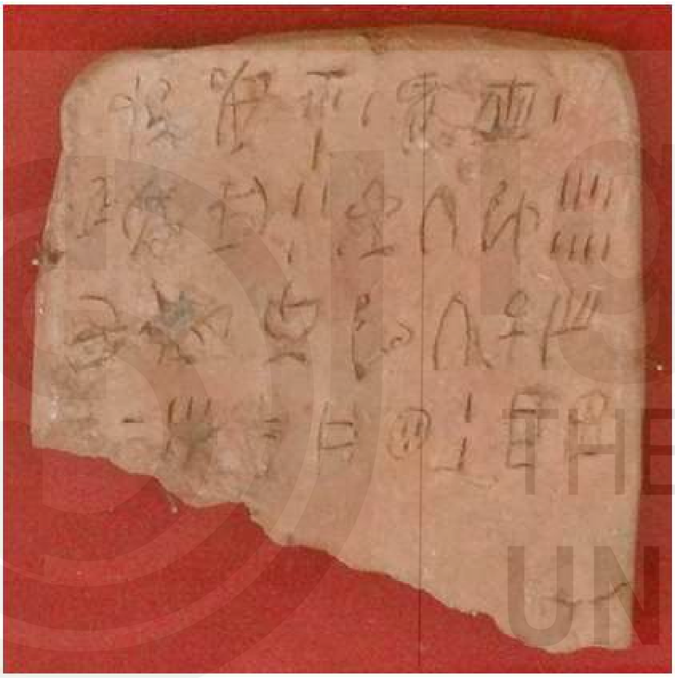

चित्र 14.1 : ज़ाक्रोस के महल से रेखीय अ की पटि्टका, सितिया पुरातात्विक संग्रहालय
साभारः ओलाफ टॉश्च
स्रोतः https://en.wikipedia.org/wiki/file%sitia-Museum_linear A_0.2pg

चित्र 14.2 : ज़ाक्रोस के महल से रेखीय ब पटि्टका, सितिया पुरातात्विक संग्रहालय
साभारः विंटेज विभाग (vinatgedept)
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/2/25/Clay_Tablet_inscribed_with_Linear_B_seript.jpg

14.5.2 मायसीनियन सभ्यता

1600 बी सी ई के बाद से, पेलापोनीस प्रायद्वीप और यूनान की मुख्य भूमि में स्वतंत्र विकास के तहत एक अन्य सभ्यता का विकास हुआ। इसका नाम मुख्य उत्खनित स्थल माईसीन के नाम पर मायसीनियन सभ्यता (1600-1200 बी सी ई) के रूप में जाना जाता है। यह विभिन्न कबीलों के स्थानांतरण से विकसित हुई तथा जिसके परिणामस्वरूप बस्तियों और योद्धाओं द्वारा शासित पृथक राज्यों का जन्म हुआ। समय के साथ, 1400 बी सी ई के लगभग इन्होंने क्रीट के द्वीप को जीत लिया, जो मिनोअन सभ्यता का केंद्र था। साथ ही उन्होंने अपने शासन के अंतर्गत अलग राज्यों के रूप में उनके प्रसिद्ध द्वीप शहरों को शामिल किया। यह निवासी विभिन्न यूनानी बोलियां बोलते थे जो उनके शासन के दौरान एक भाषा के रूप में विकसित हुई। इन्होंने 'रेखीय ब' लिपि को अपनाया, जिसमें क्रीट भी शामिल था। रेखीय ब लिपि इस प्रकार मायसीनियन सभ्यता की लिपि है और यह मायसीनियन यूनानी लिपि के रूप में जानी जाने लगी। इस लिपि में ज़्यादातर मिट्टी की पट्टियों पर महल प्रशासन संबंधी आर्थिक लेन-देन और कभी-कभी सैन्य गतिविधियां दर्ज हैं। यह लिपि यूनानी वर्णमाला से कई सदी पहले की है। ज़्यादा जानकारी के लिए देखें: https://www.omniglot.com/writing/lineara.htm;https://www.britannica.com/topic/Greek-language।

उन्नीसवीं सदी के अंत में हेनरिक श्लाइमन द्वारा मायसीनियन सभ्यता की खोज की गई और वहां पाई मिट्टी की पट्टियां इस काल के लिए लिखित साक्ष्य के रूप में प्रमुख स्रोत हैं। मिट्टी की पट्टियां विस्तृत विदेशी व्यापार, मिट्टी के बर्तन, कपड़ा और तेल, और सोना, तांबा और टिन का व्यापक उपयोग, जिसका प्रायः निर्यात किया जाता था, को दर्शाती हैं। हालांकि महल परिसर, जैसा कि मिनोअन के मामले में था, शहरी केंद्रों को दर्शाते हैं। ये शहर मजबूत किलों से घिरे होते थे जो बड़े योद्धा प्रमुखों की उपस्थिति की तरफ इशारा करते हैं, जो शहरों पर अपने महलों से शासन करते थे। यही योद्धा प्रमुख भू-अभिजात वर्ग भी था, जो नौकरशाही के विकसित ढांचे के माध्यम से राजनीतिक शक्ति और अर्थव्यवस्था दोनों को नियंत्रित करता था। इसमें छोटे अधीनस्थ कस्बों और ग्रामीण क्षेत्रों से करों की वसूली और उपहारों की प्राप्ति, कांस्य का उत्पादन, ऊनी कपड़े की बुनाई होती थी और कृषि उपज और कुटीर उत्पादन दोनों में समुद्री व्यापार शामिल था। वे अपनी सभी आर्थिक गतिविधियों के व्यापक दस्तावेज़ रखते थे। उनके धन और शक्ति की ताकत माईसीन की कब्रों के साक्ष्यों में झलकती हैं जैसा कि टीरियंस एथेंस, थेब्स, ग्ला और पायलोस के अवशेषों से स्पष्ट है (काशलिंस्की, इत्यादि, 1995)।

अधिशेष के रूप में आय की निकासी में निश्चित रूप से मिनोअन सभ्यता की अपेक्षा अधिक वृद्धि हुई और इस काल में राजनीतिक नियंत्रण भी अधिक सुदृढ़ था। लेकिन इस अवधि में भी राजनीतिक इकाई स्वतंत्र राज्यों के रूप में ही थी जो साम्राज्यों के उदय के काल में भी यूनानी सभ्यता की एक महत्वपूर्ण विशेषता थी।

मायसीनियन सभ्यता का 1200 बी सी ई के आसपास अत्यधिक प्रवासीकरण और युद्धों में वृद्धि के परिणामस्वरूप अंत हो गया और शायद कुछ प्राकृतिक आपदाओं या सामान्य संकट ने 12 वीं शताब्दी बी सी ई के दौरान पहले से ही चरमराये कमज़ोर कृषि आधार को और अधिक प्रभावित किया। यूनानी इतिहास के इतिहासकार पतन के किसी भी एक कारण पर सहमत नहीं हैं। लेकिन लगभग पतन की इस स्थिति के कारण योद्धा शासक वर्ग के सैन्य आधिपत्य को राजस्व तथा राजनीतिक सत्ता दोनों के क्षेत्र में गहरा धक्का पहुंचा, इस प्रकार एक नए युग, जिसे 'अंधकार युग' (1200 बी सी ई से 800 बी सी ई) के रूप में जाना जाता है, की शुरुआत हुई।

14.5.3 'अंधकार युग'

ऐसा माना जाता है कि 1200 बी सी ई के आसपास यूनानी संस्कृति और समाज आदिम स्तर की तरफ लौट गए, यह चरण 800 बी सी ई तक चला। मायसीनियन काल के पतन के तत्काल बाद कुछ शहरों ने अपनी चमक खो दी और आर्थिक गतिविधियों के समृद्ध केंद्रों की जनसंख्या में ह्रास हुआ। कुछ शहरों को पूरी तरह लूट लिया गया और वे पूरी तरह से नष्ट हो गए। इस अवधि में यूनान गरीब, अधिक ग्रामीण और सामान्य रूप से शासित था, उसके शासक वर्ग में मुख्यतः लघु योद्धा थे जो एक दूसरे पर छापा मारते थे और आपस में लड़ते-रहते थे। राजनीतिक व्यवस्था के रूप में बहुत छोटे-छोटे राज्य थे, जिसमें सत्तारूढ़ योद्धा अन्य कुलीन वर्गों के साथ सत्ता साझा करते थे। यह वही अवधि है जिसमें बाद में जाकर **कुलीनतंत्र** की शुरुआत हुई। योद्धा प्रमुखों और कुलीन वर्ग के बीच अत्यधिक स्तरीकरण था और वे आपस में संघर्षरत रहते थे जिनके साथ वे सत्ता में भागीदारी के लिए मजबूर थे। तथा वे कृषक वर्ग, जो उत्पादन का आधार थे तथा साथ ही जो सबसे ज़्यादा उत्पीड़ित वर्ग था, के साथ भी संघर्षरत रहते थे।

अर्थव्यवस्था में कुछ हद तक आत्मनिर्भरता दिखाई देती है, लेकिन पुरातात्विक साक्ष्यों से पता चलता है कि टिन और तांबे के लंबी दूरी के व्यापार में गिरावट आई। कब्रिस्तान भी अपेक्षाकृत छोटे थे और मायसीनियन कब्रिस्तानों की तुलना में इनमें विलासिता की वस्तुओं की कमी भी थी। रेखीय 'ब' लिपि भी गायब हो गई थी और इसके साथ इस चरण के बहुत से लिखित दस्तावेज भी समाप्त हो गए।

लेकिन 1000 बी सी ई से अर्थव्यवस्था और भाषा का पुनरुद्धार हुआ। लोहे और इसके साथ जुड़ी प्रौद्योगिकी की शुरुआत भी इस समय की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है। सरल उपकरण बनाने में लोहे के उपयोग ने टिन और तांबे के व्यापार की क्षति के बोझ से उबरने में मदद की और इसका प्रयोग जल्द ही व्यापक हो गया। यह एक निर्णायक विकास था। यूनानी बोलने वाले लोगों का एशिया माइनर, एजियन द्वीपों और आनातोलिया के पश्चिमी तट के क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों के साथ सामाजिक मिश्रण का यह एक बड़ा दौर था। इसके परिणामस्वरूप तीन प्रमुख बोलियों: आयोनिक, डोरिक, एओलिक का विकास हुआ। इस अवधि के अंत में लिखाई का पुनरुत्थान हुआ जिसे फोनिशियन लोगों से लिया गया था, जिसे दाएं से बाएं लिखा जाता था तथा जिसे यूनानी भाषा में बखूबी प्रयुक्त किया गया।

इस प्रकार, अन्य सभी इतिहासों के 'अंधकार युग' की तरह, यूनानी इतिहास की यह अवधि भी समान रूप से 'अंधकार युग' नहीं थी। वास्तव में सिर्फ इतना था कि ऐसे कुछ तत्व जिनकी प्रधानता थी उनके विकास को झटका लगा या चीजें उस रूप में नहीं रहीं जिसके वे आदी थे। इसके अलावा कुछ ऐसे नए घटनाक्रम और उपलब्धियां थीं, जिन्हें बहुत बाद में जाना गया। अतः जब अक्सर ऐसा होता है, इसको 'अंधकार युग' कहा गया क्योंकि लंबे समय तक इसके बारे में ज़्यादा जानकारी उपलब्ध नहीं थी, और इस अवधि के साक्ष्य भी सुलभ नहीं थे, या हमारे नजरिए भी इसकी सराहना नहीं करते, कि क्या हो रहा था। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि आज इसे पूर्णतः स्वीकार किया जाता है कि इस अवधि को वास्तव में 'अंधकारमय' नहीं कहा जा सकता क्योंकि कुछ महान् साहित्य उस समय के दौरान और इस अवधि में लिखा जा रहा था। यूनान में होमर के *इलियड* और *ओडिसी* दो मशहूर महाकाव्यों की इसी अवधि में रचना की गई। इस प्रकार यूरोप के मध्ययुगीन काल की तरह, यूनान के इस प्राचीन काल को एक लंबे समय तक स्थिर या अपरिवर्तनीय के रूप में नहीं देखा जा सकता। वास्तव में, इस अवधि में, यहां तक कि सूक्ष्म स्तर पर ही सही, इसने क्लासिकल यूनानी सभ्यता के लिए एक मंच तैयार किया।

बोध प्रश्न-1

1) प्रारंभिक यूनान के कुछ महत्वपूर्ण शहरों के नामों की सूची बनाएं और व्याख्या करें कि यूनान का भौगोलिक विस्तार अपने प्रारंभिक विकास के लिए कैसे अनुकूल था।

....

....

....

....

....

2) प्रारंभिक यूनान में प्रयुक्त लिपियां क्या थीं?

....

....

....

....

....

3) मिनोअन और मायसीनियन सभ्यताओं के बीच प्रमुख अंतर क्या था?

....

....

....

....

....

4) उन तथ्यों का विवरण दें जिसके आधार पर कुछ इतिहासकारों द्वारा यह निष्कर्ष निकाला गया कि यूनान में 'अंधकार युग' उतना भी अंधकारमय नहीं था, जितना माना जाता है।

....

....

....

....

....

14.6 पुरातन, क्लासिकीय और हेलेनिस्टिक यूनानः लोकतांत्रिक राजनीति के साथ प्रयोग

हालांकि समाज और राजनीतिक संगठनों में समय और स्थान के साथ कुछ बदलाव संभव है, लेकिन इस पूरी अवधि को कई कारणों से एक संपूर्ण काल के रूप में समझा जा सकता है। समाज, अर्थव्यवस्था और संस्कृति के विभिन्न पहलुओं में निरंतरता और व्यापकता दोनों को देखा जा सकता है। यह अवधि प्राचीन सभ्यता का केंद्र बिन्दु है, जिसके साथ यूनानी

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

सभ्यता की उपलब्धियों को पहचाना जाता रहा है। यह वह काल भी है जिसे प्राचीन विश्व में लोकतंत्र के साथ यूनानियों के विभिन्न प्रयोगों के रूप में भी देखा जाता रहा है।

पुरातन काल (800-500 बी सी ई) लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था के उद्‌भव और सामाजिक एवं आर्थिक उत्पादन, जो दास प्रथा प्रणाली पर खड़ा था, के बीच संबंधों का संकेत देता है। यह क्लासिकीय युग के दौरान और भी सुदृढ़ हो गया (500-323 बी सी ई)। एथेंस प्राचीन विश्व में नगर-राज्य के सबसे लोकतांत्रिक रूप के साथ, दास प्रथा का भी सबसे दमनकारी उदाहरण है।

समुदाय की स्वतंत्रता का विचार, भूमिपति शासक वर्ग पर आधारित मुखियाओं के कुल के शासन के आधार पर विकसित अवधारणा से भिन्न है। पुरातन काल के दौरान कई राज्यों में लोकतांत्रिक व्यवस्था विकसित हुई जिसका गठन और प्रक्रिया आम जनता की भागीदारी के आधार पर विकसित हुई। भूमि धारक वर्गों और अन्य लोगों, जो अपना धन व्यापार से प्राप्त करते थे, और किसानों, कारीगरों और छोटे निर्माताओं के बीच संघर्ष राज्यों के विभिन्न संस्थानों में गैर-कुलीनों की भागीदारी की प्रक्रिया का निर्धारण करने में महत्वपूर्ण थे।

क्लासिकीय काल में परिषदें और विधानसभाएं, जो प्राचीन लोकतंत्र की विशिष्टता को दर्शाते हैं, यूनानी दुनिया में हर जगह व्याप्त थीं। वहां पर एक ओर वे राज्य भी थे जो कुलीनतंत्र के समान थे, तथा दूसरी ओर एथेंस था जिसमें सर्वाधिक लोकतांत्रिक व्यवस्था थी। लेकिन इनमें समानताएं भी थीं जो उन्हें उत्पादन के प्राचीन संबंधों, जिनमें दास प्रथा सबसे महत्वपूर्ण है, के ढांचे के भीतर बांधती थी। हम इस इकाई के आगे के खंडों में इन मतभेदों और समानताओं तथा लोकतंत्र के साथ-साथ इसकी सीमाओं और उपलब्धियों की रूपरेखा प्रस्तुत करेंगे। हम उदाहरण के रूप में प्रयोग करने के लिए कुछ राज्यों में इसके विकास की भी जानकारी देंगे।

इससे पहले कि हम विभिन्न क्षेत्रों में नगर-राज्यों के उद्‌भव और विकास की धारणा के इस सूत्र की चर्चा करें जिसने प्राचीन यूनान को एक सूत्र में पिरोया था, यहां प्राचीन यूनान के सामाजिक-आर्थिक आधार को समझना उपयोगी होगा। इस संदर्भ में हम दास प्रथा और भूमध्यसागरीय क्षेत्र में समुद्री व्यापार के बारे में बात करेंगे।

सिकंदर (Alexander) की विजयें और मैसीडोनिया साम्राज्य राजनीति के क्षेत्र में तीव्र अवरोध को चिन्हित करता है। संस्कृति के क्षेत्र में ही सही कम से कम यह स्पष्ट है कि क्लासिकल अवधि में यूनान की कई उपलब्धियों ने जीवन और कला तथा साम्राज्य के एक बड़े भाग तथा उससे बाद की संस्कृति को प्रभावित किया, वहीं यूनान भी इससे लाभान्वित हुआ। राजनीतिक दृष्टि से, इन विजय अभियानों ने न केवल यूनानी राज्यों को मैसीडोनियन साम्राज्य में समावेशित किया, बल्कि नगर-राज्य संरचनाओं तथा इसकी लोकतांत्रिक व्यवस्था का भी अंत किया।

14.6.1 दास प्रथा और यूनानी सभ्यता

जब हम यूनानी सभ्यता की एक शहरी सभ्यता के रूप में बात करते हैं, जिनका मुख्य राजनीतिक पहलू नगर-राज्य थे, तो हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि ये नगर-राज्य मुख्य रूप से एक ऐसी कृषि प्रधान व्यवस्था, जिसका आधार दासों पर था, पर निर्भर थे। पैरी एंडरसन (2013) स्पष्ट रूप से कहते हैं: 'इस शहरी संस्कृति और राजनीतिक व्यवस्था के पीछे किसी भी तरह से कोई सहगामी शहरी अर्थव्यवस्था नहीं थी: इसके विपरीत, धन जिस पर बौद्धिक और नागरिक जीवन निर्भर था, उसे ग्रामीण इलाकों से एकत्रित किया गया था। कृषि ने इनके पूरे इतिहास में हमेशा उत्पादन के प्रमुख रूप का प्रतिनिधित्व किया, जिस पर निर्बाध रूप से शहरों की किस्मत आधारित थी' (एंडरसन,1974: 19)। कस्बे केवल मुख्य रूप से निर्माताओं,

व्यापारियों या कारीगरों के समुदाय से मिलकर नहीं बने थे, बल्कि भूमिपतियों तथा कृषि अधिपतियों के केंद्र थे, जिनका शहरों में बोलबाला था। यह स्पार्टा के कुलीनतंत्र और लोकतांत्रिक एथेंस दोनों के लिए ही सच था। संक्षेप में, प्रारम्भिक यूनानी काल से ही यूनानी सभ्यता ने शहर और ग्रामीण इलाकों, शहरी राजनीति तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था के बीच विशिष्ट संबंध स्थापित किया, जैसा कि उपरोक्त भाग में बताया गया है।

ग्रामीण उत्पादन से प्राप्त राजकोषीय राजस्व शहरी उत्पादन की तुलना में काफी अधिक था। अभिजात वर्ग द्वारा प्रयुक्त विलासिता की वस्तुओं का संपन्न व्यापार था। शहरों की सुंदर कलाकृतियों तथा भव्यता, उसकी वास्तु कला, मिट्टी के बर्तन, मूर्तिकला के निर्माण में और शानदार खेलों के संगठन में अत्यधिक धनराशि खर्च होती थी (इन आयामों पर **इकाई 15** में विस्तार से चर्चा की जाएगी)। इसमें से कुछ भी कृषि अधिशेष अर्थव्यवस्था और किसानों के परिश्रम के बिना संभव नहीं था। समान रूप से, यूनान की लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था, नगर-राज्य के विभिन्न संस्थानों और विधानसभाओं और परिषदों की कार्यप्रणाली, जिसकी इस इकाई में चर्चा करेंगे, उस धन और अधिशेष पर आधारित थी, जिसे प्राचीन यूनानी अर्थव्यवस्था द्वारा उत्पन्न किया गया था।

एक कृषि अर्थव्यवस्था जो विकास के अपने स्तर में अत्यधिक अल्पविकसित थी उससे किस प्रकार इतना अधिक अधिशेष निचोड़ा जा सका? कृषि और उद्योगों में, घरेलू श्रम और सैन्य शक्ति के लिए यूनानी समाज में उत्पादन के एक पहलू के रूप में दास प्रथा एक महत्वपूर्ण आयाम था। इतिहास में पहली बार कृषि और शहरी अर्थव्यवस्था, खनन, हस्तशिल्प और विभिन्न प्रकार की खेती में दास या अवैतनिक बंधुआ मजदूरों का उत्पादन में बड़े पैमाने पर इस्तेमाल किया गया था। लूट और भेंट वसूली के अतिरिक्त दासों का अधिग्रहण विजय अभियानों तथा भौगोलिक विस्तार का प्रमुख उद्देश्य था। इस सब ने और अधिक विजय अभियानों, नवीन बस्तियों के निर्माण और अभिजात वर्ग के विशेषाधिकारों को स्थापित करने तथा कई नगर राज्यों की गरिमा को स्थापित करने में योगदान दिया।

दास स्वयं एक प्रयोग की वस्तु बन गए और यहां तक कि उनके परिवारों, जिसमें बच्चे भी शामिल थे, पर भी उन स्वामियों का अधिकार हो गया, जिन्होंने उन्हें हासिल किया था। अपना कर्ज ना चुका पाने के कारण स्वतंत्र किसान जब अपने ऋण का भुगतान नहीं कर पाते थे तो उन्हें दास बना लिया जाता था। महिलाएं आरंभिक काल से ही दास आबादी का एक महत्वपूर्ण हिस्सा थीं। होमर भी अपनी कविताओं में उनका वर्णन करता है। प्रारंभिक मायसीनियन सभ्यता के संदर्भ में मिट्टी की पटि्टकाओं में वहां 550 महिला दासों के वस्त्र उत्पादन में कार्यरत होने तथा कई अन्य महिला दासों के महल में कार्यरत होने का संदर्भ मिलता है।

दासों के काम करने की स्थिति और जीवन की दशा काफी दयनीय थी। मालिकों के नियंत्रण में श्रमिकों की एक बड़ी संख्या होने के कारण, उनके स्वामियों द्वारा निवेश तथा प्रौद्योगिकी में सुधार लाने की ओर अधिक प्रोत्साहन नहीं दिया गया। दूसरी ओर, मानव श्रम के शोषण से और अधिक क्या निकाला जा सकता था इसकी भी एक स्पष्ट सीमा थी। अतः जब विजय अभियानों के माध्यम से विस्तार मुश्किल हो गया तो दास प्रथा को अपने आप में संकट से गुजरना पड़ा। यह ध्यान देने योग्य है कि यूनानी सभ्यता का उदय और पतन विशिष्ट रूप से दास प्रथा से जुड़ा हुआ था।

दास प्रथा के अलावा अन्य प्रकार के श्रम भी अस्तित्व में थे। इसमें स्वतंत्र किसान थे जो न केवल भेंट अर्पित करते थे, बल्कि इनका एक बड़ा हिस्सा ऋण के बंधकों में शामिल था। हालांकि यह मुख्य रूप से दास प्रथा के अधिशेष की निकासी थी जिसके कारण प्राचीन यूनान में शासक वर्ग अपनी विशिष्ट जीवनशैली बनाए रखने में सफल रहा। उस विशेषाधिकार और

विलासिता का एक महत्वपूर्ण हिस्सा राजनीतिक वाद-विवाद, दार्शनिक विचारों तथा इतिहास में लोकतंत्र के साथ सबसे पहले प्रयोग का परीक्षण शामिल थे। हालांकि यह लोकतांत्रिक व्यवस्था अत्यंत अल्पविकसित थी और वह किसी भी तरह से आधुनिक लोकतंत्र की धारणा के समकक्ष नहीं थी।

हालांकि उपरोक्त चर्चा से यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि सामाजिक परिदृश्य में हर जगह व्याप्त दास प्रथा में समानता थी। जो लोग स्वतंत्र थे और राजनीतिक व्यवस्था में भाग ले सकते थे और जो स्वतंत्र नहीं थे या दास थे, इसीलिए उन्हें नागरिक नहीं माना गया था, के बीच एक बुनियादी दरार थी। लेकिन इस विभाजन से परे, यूनानी समाज का स्वरूप समस्त नगर-राज्यों में एक गहरे वर्गीकृत समाज का था।

विशेषाधिकार प्राप्त के बीच सत्ता बंटवारे की प्रकृति भिन्न थी। आर्थिक भूमिकाओं के निर्वाहन में आपसी मतभेद था और यहां तक कि दासों के साथ संबंधों में भी विभिन्न नगर-राज्यों में मतभेद था। यह उनके आकार, सैन्य शक्ति और विशिष्ट आर्थिक गतिविधियों पर निर्भर करता था। उदाहरण के लिए, दास मालिकों में बड़े भूमिपतियों और सैन्य पुरुषों और योद्धा प्रमुखों से लेकर मध्यम वर्गीय तथा सम्पन्न किसानों तक थे। दूसरी ओर, दासों की प्रकृति एक **चल संपत्ति दास** (वह प्रणाली जिसमें एक दास पर उसके स्वामी का एक संपत्ति के रूप में स्वामित्व हो) के रूप में थी जो कृषि के क्षेत्र में काम करने वाला, एक घरेलू दास और दासों की निगरानी करने वाला एक पर्यवेक्षक दास भी हो सकता था। वह एक यूनानी हो सकता था और उस नगर-राज्य के वंश से संबंधित हो सकता था, जहां का वह निवासी था अथवा एक 'विदेशी' जिसे युद्ध और विजय के दौरान दास बनाया गया था, हो सकता था।

फिनले का मानना है कि विभिन्न नगर-राज्यों में सबसे अधिक दास विदेशी थे। वह दासों के वर्गीकरण और उनके विभिन्न व्यवसायों, जो आमतौर पर गैर-नागरिक दासों के रूप में थे, उनकी विशिष्ट भूमिकाओं का वर्णन करता है। वह उन उत्पाद क्षेत्रों का वर्णन करता है जहां वे मिश्रित रूप में थे, स्वतंत्र और बेगार श्रमिक या बंधक के रूप में। वह वर्णन करता है कि जिन्हें स्वतंत्र श्रमिक कहा जाता था वह सिर्फ दास ना होने के कारण स्वतंत्र थे, इसका यह मतलब नहीं था कि वह आधुनिक समाज की तरह अपने श्रम के पारिश्रमिक के संबंध में मोलभाव कर पाते। एक ऋण बंधक को आसानी से दास बनाया जा सकता था। इतिहासकारों की विभिन्न गणनाएं और आंकड़े अलग-अलग परिस्थितियों को दर्शाते हैं। साथ ही, उनकी संख्या उत्पादकों या श्रमिकों, यहां तक कि घरेलू श्रमिक भी, जो कभी-कभी वस्त्र उत्पादन तथा शिल्प उत्पादन में कार्यरत रहते थे, के द्वारा अधिशेष निकासी में दासों के महत्व को इंगित करती है। संक्षेप में, वहां विभिन्न नगर-राज्यों के बीच दास प्रणाली में विभिन्नता थी, और राज्यों के भीतर दास प्रथा में जटिलता थी।

स्पष्टता और संक्षिप्तता के लिए हम एथेंस और स्पार्टा के राज्यों के उदाहरण प्रस्तुत करेंगे। स्पार्टा में 'अंधकार युग' के अंत से ही बड़ी मात्रा में दास प्रथा का प्रचलन था। वहीं एथेंस में दास प्रथा, युद्ध अभियानों के साथ फैली लेकिन स्पार्टा और एथेंस में अंतर था। स्पार्टा में, दास सामूहिक रूप से राज्य के स्वामित्व में थे और *हैलॉटरी* व्यवस्था का हिस्सा थे, जबकि एथेंस में ज़्यादातर दास निजी स्वामित्व में थे और उन्हें वस्तुओं के रूप में बाज़ार में खरीदा और बेचा जा सकता था। स्पार्टा में दासों को राज्य द्वारा अलग-अलग परिवारों को, उत्पादन की आधारभूत इकाइयों को, या योद्धा सरदारों और भूमिपति शासक वर्गों को उनके द्वारा रखरखाव तथा उत्पादन के शासकीय अनुबंधों में उनके योगदान के आधार पर, उनके सामाजिक वर्गीकरण और सामाजिक भेद को ध्यान में रखते हुए, सौंपा जाता था। लेकिन जिन्हें वे प्रदान किये गए थे उन पर, उनका स्वामित्व नहीं था। इस कारण, स्पार्टा की दास व्यवस्था अपेक्षाकृत कम दमनकारी थी, क्योंकि दासों को अपने परिवार से अलग नहीं किया

जाता था। स्पार्टा में सामाजिक समझौते और उनकी राजनीतिक प्रणाली का आधार, मध्यम और छोटे किसान उत्पादक थे, जबकि एथेंस में श्रम और उत्पादन के आधार, मुख्य रूप से चल संपत्ति दास (chattel slaves) थे, जो वस्तुओं की तरह उनके स्वामियों द्वारा प्रयोग किए जाते थे और उनको एक अलग प्रकार के उत्पीड़न का सामना करना पड़ा। नगर राज्यों में दास स्वामित्व की प्रकृति या उन्हें सुपुर्द नियत कार्य काफ़ी हद तक इससे प्रभावित थे कि राजनीतिक शासन प्रणाली में इन नगर-राज्यों में नागरिक किस प्रकार अपना वक्त, ताकत तथा क्षमता का प्रयोग करते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि धन और आर्थिक दायित्व दोनों राज्य की संरचना और संस्थानों में राजनीतिक भागीदारी के विशेषाधिकार और राजनीतिक प्रभुत्व की प्रकृति को निर्धारित करते थे।

इस प्रकार, कुछ इतिहासकारों का मानना है कि एथेंस जो अपने लोकतंत्र के लिए जाना जाता है, वास्तव में वहां दास प्रथा का गंभीरतम रूप था, जबकि स्पार्टा जो अपने राजनीतिक रूप में कुलीनतंत्र था, वहां किसानों ने अपेक्षाकृत अधिक आत्मनिर्भरता का उपभोग किया। या दूसरी तरह से यह कहा जा सकता हैः दास प्रथा की सबसे दमनकारी विशेषताओं तथा दास चल सम्पत्ति ने एक ऐसी राजनीतिक संरचना को जन्म दिया जिसने उन लोगों को जिन्हें नागरिक होने का दर्जा प्राप्त था, विशेषकर अत्यधिक विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग को, राजनीतिक भागीदारी की अधिक स्वतंत्रता प्रदान की, जबकि *हैलॉटरी* और अधिक आत्मनिर्भर किसानों ने एक कुलीनतंत्र आधारित राजनीतिक संरचना को उत्पन्न किया। कई इतिहासकारों ने इस पर टिप्पणी की है और हम यूनानी राजनीतिक व्यवस्था पर चर्चा में आगे इसके बारे में बात करेंगे।

14.6.2 व्यापार, नगर-राज्य, कृषि उत्पादन, दास प्रथा

व्यापार, कृषि उत्पादन और दास प्रथा, जिसने सातवीं से पांचवी सदी बी सी ई में समृद्ध नगर-राज्यों का निर्माण किया, विशिष्ट अंतर-संबंधों को रेखांकित करने के लिए महत्वपूर्ण है। जैसा कि वर्णित किया गया है, शहरी नागरिकों ने भूमि से धन अर्जित किया और भूमि पर बिना किसी भागीदारी के शहरों में रहे और उन्होंने अपनी आवश्यक वस्तुओं की खरीदारी नगरों में की। उनकी आय का मुख्य साधन अनाज, शराब और तेल थे, ये वे वस्तुएं थीं जिनका उत्पादन शहरों की भौतिक सीमाओं के बाहर किया जाता था। इस प्रकार वस्त्र उद्योग, फर्नीचर और कांच के उत्पादों के अतिरिक्त, यहां तक कि ग्रामीण उत्पादों के लाभ का एक बड़ा हिस्सा शहर में किए गए विनिमय का परिणाम था। शहरों के बीच तथा निकट-पूर्व के साथ व्यापार जल परिवहन के माध्यम से होता था।

इस सभ्यता के तटीय चरित्र, जिसमें कोई शहर तट से 25 मील से अधिक की दूरी पर स्थित नहीं था, ने न केवल भूमिपति मालिकों की आय को व्यापार के माध्यम से संभव बनाया, बल्कि इसके साथ ही शहरों की भव्यता को भी स्थिरता प्रदान की। इनके निवासी मुख्य रूप से किसान और भूमिपति थे, जो यूनानी सभ्यता के मुख्य बिंदु थे। इस भव्यता का एक बड़ा हिस्सा सामूहिक और सार्वजनिक अनुष्ठानों की शक्ति, राजनीतिक बहस और विधानसभाओं और परिषदों की लोकतांत्रिक राजनीति के उन दृश्यों और सहभागी पहलुओं में परिलक्षित होता है, जिसके बारे में हम इतना अधिक सुनते आए हैं। हम यह भी कह सकते हैं कि लोकतांत्रिक राजनीति के इस सर्वाधिक प्रारम्भिक प्रदर्शन का प्रमुख लक्ष्य स्व-शासन और एक महान् सभ्यता के बारे में जागरुकता के विचार को प्रोत्साहन देना था, जैसा कि वे सोचते थे कि यह साम्राज्यों में सम्राट के महिमा गान से भिन्न है।

छठवीं शताब्दी बी सी ई के मध्य में 1500 यूनानी नगर-राज्य दास प्रथा, कृषि उत्पादन तथा अन्तः नगरीय व्यापार से जुड़े हुए थे, जिसने धन के सृजन को, एक शहरी शासक वर्ग के

लाभ तथा विलासिता को इस स्थिति में समर्थन प्रदान किया जबकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से साधारण औज़ारों पर निर्भर थी तथा समस्त राजनीति और शासन नगर-राज्यीय व्यवस्था के रूप में जुड़े हुए थे।

बोध प्रश्न-2

1) यूनानी सभ्यता के विकास में भूमध्यसागरीय और समुद्री व्यापार के महत्व पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

2) यूनानी सभ्यता में दास प्रथा के महत्व की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

3) 'नगर-राज्यों और संस्थानों को चलाने के लिए धन कहां से आता था'? इसके बारे में आप क्या समझते हैं?

....

....

....

....

....

14.7 यूनानी राज्य व्यवस्था, इसका अर्थ और संरचनाएंः पुरातन से क्लासिकीय यूनानी सभ्यता तक

प्राचीन यूनान में राज्य व्यवस्था के बारे में जानकारी का एक प्रमुख स्रोत अरस्तु का *'एथेंस का संविधान'* है, जो इतिहास और समकालीन राजनीति से संबंधित है। ऐसा माना जाता है कि उसने उक्त अवधि के लगभग 158 संविधानों का संकलन मुख्य रूप से एथेंस के संविधान के अध्ययन तथा उसकी तुलना के उद्देश्य से संकलित किया था। लेकिन समकालीन होने के साथ वह खुद अभिजात वर्ग से जुड़ा हुआ था तथा उसका वृतांत ऐसे अनेक स्रोतों पर आधारित था जिसे खुद उसके द्वारा सत्यापित नहीं किया गया था। अतः उसकी जानकारी को दूसरे अन्य और आधुनिक ऐतिहासिक अनुसंधानों से मिलाना तथा पुष्टि करना जरूरी है।

जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है पुरातन युग और यूनानी सभ्यता की क्लासिकीय

अवधि में राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों ने (उपरोक्त उल्लेखित विवरण पर आधारित) नगर-राज्यों के विकास में योगदान दिया, न कि साम्राज्य के विकास में। यह विकास यूनानी दुनिया में विभिन्न रूपों में दिखाई देता है। भूमिपति शासक वर्गों और किसानों के बीच सामाजिक तनाव इस काल की विशेषता थी, जिसका हल अलग ढंग से किया गया, विभिन्न सामाजिक और राजनीतिक समझौतो के साथ, जिसने नगर आधारित भूमिपतियों की शक्ति और नागरिकों और दासों के मध्य स्थित अंतर को संरक्षित किया। युद्ध, राजनीतिक संघर्ष और इस युग की सामाजिक समस्याओं ने सदियों से होने वाले राजनीतिक परिवर्तन की दिशा में योगदान दिया। यह विभिन्न नगर-राज्यों की राजनीतिक संरचनाओं और लोकतांत्रिक सक्रिय राजनीति में स्पष्टतः दिखाई देता है।

पोलिस और *डेमोस* यूनानी दुनिया में महत्वपूर्ण और व्यापक रूप से प्रचलित विचार थे। दोनों शब्दों – *पोलिस* और *डेमोस* – का यूनानी संदर्भ में विशिष्ट अर्थ था। *पोलिस* का प्रयोग एक संस्था के बजाय समुदाय के संदर्भ में अधिक इस्तेमाल किया जाता था, जिसे सार्वलौकिक स्व-शासन और भागीदारी के मध्य संबंधों के रूप में अनुभव किया जा सकता था। न ही यह किसी क्षेत्र विशेष को सूचित करती थी, हालांकि समुदायों का कुछ विशिष्ट क्षेत्रों पर आधिपत्य था: जैसे कि एथेंस, जहां साम्राज्य में एक से अधिक *पोलिस* शामिल थीं, ठीक उसी तरह से विजयों के पश्चात् स्पार्टा की भी वही स्थिति थी।

डेमोस का अर्थ सामान्य जनता से था, वे सभी लोग जो एक समुदाय से संबंधित थे, यहां बल आम सदस्यों, जो *पोलिस* का हिस्सा थे, पर था न कि उसके अन्दर निवास करने वाले किसी विशिष्ट समूह पर, जिनका कि समाज, अर्थव्यवस्था तथा राजनीति पर प्रभुत्व था। लोकतंत्र शब्द *डेमोस* से लिया गया है। इस प्रकार उसका प्रयोग समस्त लोगों के नाम पर और सैद्धांतिक रूप से सभी लोगों के द्वारा के संदर्भ में प्रयुक्त होता है। इसका कुछ अर्थ यह भी है जिसका प्रयोग आधुनिक लोकतंत्र में भी किया जाता है, हालांकि प्राचीन लोकतंत्र का संदर्भ कहीं अधिक प्राथमिक और सीमित है, यहां तक कि सैद्धांतिक रूप से भी, जैसा कि हम देखेंगे, कि यह मात्र अल्पविकसित सिद्धांत और व्यवहार के मध्य अंतर के रूप में ही ऐसा नहीं था। जैसा कि फिनले ने कहा है, 'प्रत्यक्ष भागीदारी एथेंस के लोकतंत्र का एक महत्वपूर्ण बिंदु है, और हम इसके साथ ही कई अन्य नगर-राज्यों को जोड़ सकते हैं। समस्त नागरिकों को व्यापक विधानसभा में, बड़े और छोटे सभी मामलों में उपस्थिति और मतदान और बहस के माध्यम से भाग लेने का अधिकार था। और यहां तक कि एक महत्वपूर्ण अनुपात नहीं होने की स्थिति में भी, कभी-कभी निर्णयों की सदस्यों द्वारा, जिनकी संख्या कुछ मामलों में सैकड़ों में या कभी-कभी एक हज़ार से ऊपर भी हुआ करती थी, पुष्टि की जाती थी। इसके अलावा, कहने के लिए कोई अलग नौकरशाही या अलग पुलिस या न्यायिक सेवा आदि नहीं होती थी (इस पर विस्तृत चर्चा के लिए देखें फिनले, 1987: 70-93)।

इस प्रकार प्रश्न अपने चुने हुए प्रतिनिधियों के माध्यम से, भागीदारी का नहीं था, बल्कि स्वयं भागीदारी का था, चाहे किसी भी स्तर पर उन्हें अधिकृत किया गया हो। *प्रतिनिधि के बजाय प्रत्यक्ष भागीदारी प्राचीन लोकतंत्र की महत्वपूर्ण विशेषता थी, जो लोकतंत्र के आधुनिक अर्थ के विपरीत है*। वहां कोई अलग से कार्यकर्ताओं तथा नौकरशाहों की प्रशासन न्यायिक सेवा या पुलिस सेवा के लिए भर्ती नहीं की गई थी। इन कार्यों को नागरिकों द्वारा, जो इसके लिए अधिकृत थे, संपादित किया जाता था; कभी-कभी किसी विशिष्ट अवधि के लिए और कभी-कभी उन्हें चुना भी जाता था। इन्हें सभाओं में भाग लेने के लिए भुगतान भी किया जाता था ताकि उन्हें अपने कार्यकाल के दौरान प्रतिकूल आर्थिक परिस्थितियों का सामना ना करना पड़े या वे उसमें भाग लेने के लिए असमर्थ न हो जाएं। ताकि सार्वजनिक कार्य के लिए छोड़ी गई अपनी आजीविका की भरपाई करने में वे सक्षम हों।

पोलिस और *डेमोस* खुद के भीतर पर्याप्त विविधता समायोजित करने की क्षमता रखते थे तथा इसका संदर्भ राज्य की किसी विशिष्ट संरचना से नहीं था। स्पार्टा का कुलीनतंत्र और लोकतंत्र की प्राचीन धारणा पर आधारित संविधान दोनों ही *पोलिस* के अंदर समाहित थे, जिसके साथ एक विशिष्ट नगर-राज्य की जनसंख्या संबंधित थी। अन्य *पोलिसों* के संबंध में एक *पोलिस* की स्वतंत्रता, यूनानी लोकतांत्रिक राजनीति की एक प्रमुख विशेषता थी, और विजय अभियानों और नए क्षेत्रों में औपनिवेशीकरण ने इसका सम्मान किया। इस प्रकार, एथेंस जब एक साम्राज्य बन गया (कुछ ही लोगों को पता है कि बाद में यह एक साम्राज्य बन गया था), इसने बेरहमी से शासित क्षेत्रों पर शासन किया, लेकिन फिर भी *पोलिस* क्षेत्रों के भीतर शासन की स्वतंत्रता थी। स्पार्टा ने अपने द्वारा विजित क्षेत्रों में कुलीनतंत्र की स्थापना की।

लोकतंत्र और स्वतंत्रता के विचारों की अवधारणा, जिसने राज्य के संबंध में पहली बार आवाज़ उठाई, उसका अर्थ राजा के शासन के विपरीत सामूहिक शासन और सामूहिक उत्तरदायित्व तथा समुदाय द्वारा शासन था, जो व्यावहारिक रूप से चाहे कितना ही असमान था। एक बार फिर से यूनानियों ने उद्देश्य और अस्तित्व की अवधारणा, जो कि धर्मनिरपेक्ष थी न कि दैवीय, पर बल दिया। लोकतंत्र और न्याय का अर्थ कानून के शासन से था; न कि राजा की इच्छा से, हालांकि चाहे यह कितना भी अपूर्ण और व्यवहार में विषम क्यों न था।

राज्य की संरचना के प्रत्युत्तर में वहां जनता को तर्क से अपने साथ लेने का विचार विकसित किया गया, जो आधुनिक राजनीतिक अभियानों की अवधारणा का अग्रदूत था। राजनीतिक बहस और वाकपटुता द्वारा अनुनय लोकतांत्रिक राजनीति का एक महत्वपूर्ण बिंदु था, और एक अच्छा जननेता होना एक विशिष्ट गुण तथा सम्मान की बात थी। अच्छा प्रवक्ता और शक्तिशाली तर्क से वोटों को अपनी ओर खींचना परिषदों और विधानसभाओं की सर्वव्यापी अंतर्भूत विशिष्टता थी।

एक नगर-राज्य में स्थिति समुदायों के विभिन्न खंडों में समुदाय से संबंधित दबावों और संघर्षों के विपरीत व्यक्तियों के अधिकारों के संघर्ष को महत्व दिया गया। लोकतांत्रिक राजनीतिक संरचना की कार्यप्रणाली की व्यापक संरचना में सामाजिक संघर्ष, अस्थिरता तथा परिवर्तनशीलता व्याप्त थी, वह चाहे एथेंस का संप्रदाय आधारित लोकतंत्र हो या स्पार्टा का कुलीनतंत्र हो। और वहीं एथेंस और स्पार्टा के बीच वर्चस्व के लिए संघर्ष भी था।

यूनानी राज्य व्यवस्था के संदर्भ में नागरिकता का तात्पर्य स्वतंत्र जनसंख्या से था। दास नागरिक नहीं थे, न ही महिलायें या विदेशी या जो मूल रूप से शहर के निवासी नहीं थे। दासों के अलावा, जो किसी भी तरह नागरिक नहीं थे, वहां स्वतंत्र गैर-नागरिक भी थे उन्हें स्पार्टा में *पेरिओइकोई* और एथेंस में *मेटोइकोई* कहा जाता था। इस प्रकार यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि इन नगर-राज्यों में बहुमत जनसंख्या गैर-नागरिकों की थी, जो भूमि के स्वामित्व सहित कई सामाजिक अधिकारों से वंचित थे। इन गैर-नागरिकों को कुलीनतंत्र या लोकतंत्र की संरचना में भाग लेने की अनुमति नहीं थी। हालांकि वे इनकी कार्यप्रणाली से प्रभावित होते थे। अर्थव्यवस्था और समाज में जिन्हें 'विदेशी' समझा जाता था के योगदान की स्वीकार्यता का अर्थ नागरिकता और राज्य में उनकी भागीदारी नहीं था।

जैसा कि कुछ इतिहासकारों ने दर्शाया है और हम भी अर्थव्यवस्था और समाज के संदर्भ में इस पर चर्चा कर चुके हैं, समस्त कालानुक्रमिक अवधि के दौरान दास प्रथा और यूनानी दुनिया के भौगोलिक विस्तार पर आधारित प्राचीन सामाजिक संरचनाओं की इस विविधता को समझने का सबसे अच्छा तरीका तीन विशिष्ट नगर-राज्यों – कोरिंथ, स्पार्टा, एथेंस – का परीक्षण करना होगा। अन्य नगर-राज्य थोड़ी बहुत भिन्नता के साथ इन्हीं नगर-राज्यों के कुलीनतंत्र और लोकतंत्र के अनुरूप थे।

14.7.1 संक्रमण कालः पुरातन युग और निरंकुश शासन

मध्य सातवीं शताब्दी बी सी ई तक ज़्यादातर नगर-राज्य 'अंधकार युग' के किसी भी आम राज्य की तरह कुलीन कबीलों द्वारा शासित थे। वंशीय संबंध ही प्राथमिक वैद्यता तथा राजनीतिक सत्ता का सामाजिक आधार था।

पुरातन काल के राजनीतिक संविधानों के बारे में हमें जानकारी नहीं है क्योंकि वह क्लासिकल युग तक अस्तित्व में नहीं रहे। लेकिन जैसा कि पैरी एंडरसन ने कहा है, वह 'शायद शहरी जनसंख्या पर विशेषाधिकार प्राप्त वंशानुगत कुलीन वर्ग के शासन पर आधारित थी, जिसके द्वारा नगर पर विशिष्ट कुलीन परिषद की सरकार द्वारा राज्य किया जाता था' (एंडरसन, 2013ः 30)।

कालांतर में, जनसंख्या में वृद्धि, नए क्षेत्रों में उपनिवेशवाद, अर्थव्यवस्था में बदलाव के कारण उत्पन्न होने वाले सामाजिक तनावों में वृद्धि ने शहर पर नवीन समूहों ने कब्जा तथा शासन किया। ये अनाधिकृत कब्ज़ा करने वालों के रूप में जाने जाते थे। लेकिन उन्हें फिर भी, जनता का समर्थन प्राप्त था और उन्होंने अपने दावों और शासन की स्थापना निरंकुशता से की। एक नए चरण की शुरुआत हुई, जिसे निरंकुश शासन के काल के रूप में जाना जाता है। उनके अधीन जन्म और वंश के आधार पर आधारित कुलीन वर्ग ने सत्ता पर एकाधिकार नहीं किया। यह काल राजतंत्र और क्लासिकीय यूनान और प्राचीन लोकतंत्रों, एथेंस में विशेष रूप से, के मध्य सेतु का काल था।

निरंकुशतावाद (tyranny) में प्रशासन द्वारा सख़्ती से शासन शामिल है और यह भागीदारी पर आधारित नहीं था, जैसा कि बाद की शताब्दियों में हुआ जब कुछ नगर-राज्य लोकतंत्र के रूप में विकसित हुए। फिर भी उस शासन को लोगों का समर्थन प्राप्त था और इसलिए यह उन सभी नकारात्मक अर्थों के भाव का संकेत नहीं देता, जैसा कि इस शब्द का अर्थ आज के संदर्भ में माना जाता है। निरंकुश शासकों ने व्यापार से अर्जित किए धन और नई अधिग्रहीत शक्ति द्वारा जन्म पर आधारित परंपरागत कुलीनों को विस्थापित किया, और उनके द्वारा पीड़ित किसानों का समर्थन जीतने के लिए परिवर्तन लाया गया। इस प्रक्रिया में उन्होंने उन संस्थानों को कमज़ोर किया, जिनके माध्यम से अभिजात वर्ग राजनीतिक सत्ता को एकाधिकार में किए हुए था। निरंकुश शासकों ने उस वर्ग का प्रतिनिधित्व किया जिन्होंने व्यापार और अन्य स्रोतों से धन अर्जित किया था। थेसली के अलावा उनके शासकों द्वारा छोटे खेतों को कई राज्यों में संगठित किया गया। परिवर्तन और जो रास्ते इन निरंकुश शासकों ने अपनाए, और इस काल में कृषक वर्ग ने जिस प्रकार विभिन्न नगर-राज्यों की राजनीति को प्रभावित किया, उस आधार पर वे कभी-कभी एक मुक्तिदाता की तरह देखे जाते हैं।

और क्यों, विशेष रूप से, उनके शासन की निरंकुश और तानाशाही प्रकृति के बावजूद, क्या हम इनमें से कई यूनानी निरंकुश शासकों को लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था के निर्माण में एक संक्रमण काल के प्रतिनिधि के रूप में मान सकते हैं? उदाहरण के लिए, कह सकते हैं कि, पांचवी शताब्दी बी सी ई में एथेंस की कई विशेषताओं की जड़ें छठी शताब्दी बी सी ई के सोलोन के सुधारों में पाई जाती हैं। उल्लेखनीय यह है कि सोलोन को चुना गया था और यह ज़िम्मेदारी उसे विरासत में नहीं मिली थी। वह एक भूमिपति था जो व्यापार में भी संलिप्त था और उसने सामाजिक समझौतों की उस अवधारणा को जन्म दिया, जिसमें भूमिपति अभिजात वर्ग के एकाधिकारों को चुनौती दी गई तथा उसे उन व्यक्तियों के साथ साझा किया गया जिन्होंने धन-सम्पदा तथा प्रतिष्ठा, उत्पादन तथा व्यापार के माध्यम से अर्जित की थी। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए वह किसानों को उनके कर्ज से मुक्त करने के लिए तैयार था। यह एक ऐसी विशेषता बन गई जिसे क्लासिकल यूनान के नगर-राज्यों में से कुछ ने इसे समाविष्ट कर लिया। इसके अलावा निरंकुश शासक ज़्यादातर पुरुष थे, जिन्होंने खुद

अपने प्रयास के माध्यम से सत्ता हथियाई थी और जिनके कोई वंशानुगत दावे नहीं थे और न ही उन्होंने अपनी स्थिति को दैवीय ठहराया। उन्होंने कानून को अपना आधार बनाया। जैसा कि कुछ इतिहासकारों ने बताया है, कुछ शुरुआती कानूनों को इस निरंकुश शासकों के काल में ही संहिताबंद किया गया। हम क्लासिकल अवधि के दौरान विभिन्न नगर-राज्यों में लोकतांत्रिक राजनीति की कार्यप्रणाली के बारे में चर्चा में इन निरंकुश शासकों के बारे में थोड़ा और विस्तार से बात करेंगे। साथ ही यह ध्यान में रखना होगा कि शायद सबसे अच्छी तरह से ज्ञात एथेंस कई नगर-राज्यों में से केवल एक था। एंडरसन के अनुसार निरंकुश शासकों ने 'क्लासिकल *पोलिस* की ओर महत्वपूर्ण रूप से संक्रमण किया', और उनके काल में ही 'क्लासिकल यूनानी सभ्यता की आर्थिक और सैन्य नींव रखी गई थी' (एंडरसन, 2013: 30)।

इसका प्रथम उदाहरण मध्य सातवीं शताब्दी में कोरिंथ में था, जिसे निम्न वर्ग का समर्थन प्राप्त था, बाद में एथेंस में सोलोन के द्वारा सुधार किये गये, जिनकी चर्चा नीचे की गई है।

14.7.2 क्लासिकल यूनान में लोकतांत्रिक राजनीतिः एथेंस, कोरिंथ, स्पार्टा

लोकतांत्रिक रूपों की उत्पत्ति, जो क्लासिकल अवधि के दौरान अस्तित्व में आए, को चिओस में देखा जा सकता है। मध्य छठवीं शताब्दी के दौरान चिओस पहला शहर था जिसने पूर्व से दासों का आयात किया था (एंडरसन, 2013: 37; फिनले, 1987: 46)। *पोलिस*, 'स्वयं शासित राज्य' थे, जिसका प्रयोग यूनानी नगर-राज्यों का वर्णन करने के लिए किया जाता था, जिनमें एथेंस सबसे बड़ा था जो कि लगभग 1000 वर्ग मील क्षेत्र में फैला हुआ था तथा जिसकी जनसंख्या 2,50,000 थी (फिनले, 1987)। *पोलिस*, कानून, गैर-गुलामों की कानूनी स्वतंत्रता और राजनीतिक सत्ता का एकमात्र स्रोत था। अतः *पोलिस* को किस तरह से संगठित किया जाता था इसका प्राथमिक महत्व है। *पोलिस* के गठन में मूल प्रश्न है, जैसा कि फिनले कहते हैं, कि किसे शासन करना चाहिएः कुछ लोगों द्वारा या बहुमत द्वारा तथा सामाजिक समझौतों को किस प्रकार संगठित किया जाना चाहिए। इस मुद्दे को युद्धों ने और विदेशी समस्याओं ने और विस्तार की महत्वाकांक्षाओं ने और भी अधिक जटिल बना दिया (फिनले, 1977: 54-60).

ईरान के साथ युद्ध और क्लासिकल यूनान में संक्रमण का घटनाक्रम एक ही समय में हुए। ईरानी, डेरियस और बाद में ज़रक्सेज़ के शासन के विस्तार के समय यूनानी राज्यों से संघर्ष में आए, जो 500 से 450 बी सी ई तक चला; और दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष था यूनानी राज्यों में आपस में विशेष रूप से एथेंस और स्पार्टा के बीच की वर्चस्व के लिए लड़ाई। स्पार्टा भूमि पर मुख्य सैन्य शक्ति थी, जबकि एथेंस की सबसे मजबूत नौसेना थी।

ईरानियों के साथ युद्ध का मतलब था रक्षा के लिए आपसी एकता की आवश्यकता, जिसने 478 बी सी ई में एथेंस के नेतृत्व में राज्यों के एक संघ में 'डेलियन लीग' (Delian League) का गठन किया। इससे अंततः एथेंस भी साम्राज्य के रूप में परिवर्तित हो गया, और एथेंस ने पूरी तरह से पेलापोनीसस प्रायद्वीप पर कब्जा करने की कोशिश की जिसके कारण स्पार्टा और एथेंस के मध्य संघर्ष हुआ। स्पार्टा ने अपने हितों की रक्षा करने के लिए 'पेलापोनीसियन लीग' (Peloponnesian League) का गठन किया। उन दोनों के बीच हुए युद्धों के दो चरणों 431-421 बी सी ई के बीच प्रथम पेलापोनीसियन युद्ध और 421-404 बी सी ई के बीच द्वितीय पेलापोनीसियन युद्ध में अतंतः एथेंस की हार हुई और उसकी नौसेना पूर्णरूप से नष्ट हो गई, जो कि उसकी श्रेष्ठता का प्रमुख आधार थी।

स्पार्टा के लिए अब थेब्स एक चुनौती था, जिससे संघर्ष 362 बी सी ई तक जारी रहा। इस समय मैसीडोनिया फिलिप द्वितीय के अधीन, जिसने यूनानी राज्यों को केरोनिया में हराया

था, एक शक्तिशाली ताकत के रूप में उभर रहा था। उसके बाद, उसके पुत्र सिकंदर महान् ने अपने विजय अभियानों की शुरुआत की, जिसने क्लासिकल यूनान और *पोलिस* का अंत कर दिया। यूनान मैसीडोनिया के शासन के अधीन आ गया।

सैन्य सेवा को भी नागरिकता के साथ जोड़ा गयाः क्योंकि कोई भाड़े की सेना नहीं थी, कई राज्यों में वयस्क पुरुष इस भूमिका को पूरा कर रहे थे। यहां तक कि क्लासिकल युग में भी ज़्यादातर राज्यों में, पूर्ण नागरिकता के लिए योग्यता वंशानुगत थी, हालांकि एथेंस में जब माता-पिता दोनों नागरिक हों तब ही नागरिक बन सकते थे। कई राज्यों में यह विशेषाधिकार संपत्ति के एक निश्चित राशि के स्वामित्व पर भी निर्भर था।

कोरिंथ

आठवीं और सातवीं शताब्दी बी सी ई के दौरान **कोरिंथ** में कुलीनों के एक परिवार का शासन था, जिसे बाक्कीयाड के रूप में जाना जाता था, जो अंततः साइप्सेलस/क्लाइस्थनीज़ द्वारा परास्त हुए तथा उसके बाद उसके बेटे पेरिआंडर, 657 से 550 बी सी ई तक, ने निरंकुश शासक के रूप में नगर पर शासन किया।

कोरिंथ एक वाणिज्यिक केंद्र था, जो अपनी भौगोलिक स्थिति और स्थलडमरूमध्य (isthmus; प्रत्येक ओर भूमि की एक सकरी पट्टी) की वजह से, इसकी नागरिकों की विधानसभा पर कुलीनतंत्र का प्रभुत्व था। यहां निरंकुश शासकों ने करों का पुनर्गठन किया था, जो सीमा शुल्क पर अधिक निर्भर था। अतः इसने किसानों को प्रभावित नहीं किया। पेरिआंडर (627-585 बी सी ई), जो निरंकुश शासन के संस्थापक शासक क्लाइस्थनीज़ का बेटा था, ने स्थलडमरूमध्य, जहां व्यापारी जहाजों से माल उतारने के लिए कोरिंथ की खाड़ी में लाते थे, जो धन की प्राप्ति का एक मुख्य स्रोत था, पर एक पक्की सड़क का निर्माण किया। यह एक प्रमुख बंदरगाह और नौ-सैनिक शक्ति बन गया, जो प्रसिद्ध काली मिट्टी के बर्तनों के उत्पादन का एक केन्द्र बन गया, जो पूरे भूमध्यसागर में प्रसिद्ध थे। उन्होंने यहां कबीलाई और परिषद व्यवस्था की स्थापना कर व्यापक राजनीतिक भागीदारी की भी नींव रखी। इन्होंने यहां किसी भी प्रकार के निरंकुश शासक के मनमानीपन को समाप्त किया और स्थिरता प्रदान की। लेकिन फिर भी इसकी संरचना और सदस्यता की लंबी अवधि में केवल 80 लोगों के हाथ में सत्ता प्रदान की, न कि *डेमोस* या वयस्क पुरुषों की विधानसभा के हाथों में। इस प्रकार यह एक समृद्ध नगर बन गया जो राजनीतिक संस्थाओं में कुलीनतंत्र रहा। जबकि कोरिंथ समाज एक कुलीन वर्ग, व्यापारी, शिल्पकारों और किसान वर्ग के मिश्रित रूप में विकसित हुआ, जिस पर कुलीनतंत्र का शासन था तथा जिसका आधार दास प्रथा थी।

स्पार्टा

स्पार्टा में इसी प्रकार के सामाजिक तनावों ने दो-स्तरीय संरचना का विकास कियाः योद्धा प्रमुखों का एक छोटा सजातीय समूह जिसने दासों की एक विशाल आबादी पर शासन किया। स्पार्टा, कोरिंथ और एथेंस की तरह निरंकुश शासन के रास्ते नहीं गया, लेकिन मेसानिया (पेलापोनीस क्षेत्र का दक्षिण-पश्चिमी भाग) की विजय के बाद इसने एक बड़ी दास आबादी को प्राप्त किया, जो राज्य के स्वामित्व के अधीन थी, लेकिन जिन्हें कुछ भूखंडों (जो असमान रूप से जन्म स्थिति के आधार पर आवंटित किए गए थे) के साथ, भिन्न-भिन्न नागरिक पुरुष आबादी को सौंपा जाता था। दास प्रथा का रूप अपेक्षाकृत कम गंभीर था और यह कम विकसित थी, लेकिन इस व्यवस्था के कारण नागरिकों के मध्यम और छोटे भूमिपतियों (जिन्हें व्यापार अथवा उत्पादन, जो दासों द्वारा किया जाता था, में कार्य करने की अनुमति नहीं थी) के वर्ग से भी एक शक्तिशाली पूर्णकालिक पैदल सेना का गठन किया गया। इन्हीं में से विधानसभा के सदस्य भी बनाए गए थे और जिन्होंने विधानसभा में अपनी भूमिका भी अदा की।

शीर्ष पर दो राजा थे जिनके अधिकार वंशानुगत थे और जो परिषद् (***गेरुसिया***) के सदस्य भी थे। *गेरुसिया* एक उच्च राजनीतिक परिषद थी, जिसके सदस्य सिर्फ 28 पुरुष थे जिनकी आयु 60 वर्ष से ऊपर होनी चाहिए थी, उसमें दोनों राजा भी शामिल थे। परिषद् अकेले ऐसे निर्णय ले सकती थी, जिन पर विधानसभा में निर्णय लिया गया था। लेकिन वास्तव में नागरिकों की संख्या बहुत ही कम थी जो कुल पुरुष जनसंख्या की 12 प्रतिशत से भी कम थी।

विधानसभा एथेंस की तुलना में कहीं अधिक निष्क्रिय थी। सबसे महत्वपूर्ण सदस्य पांच मजिस्ट्रेट या *ईफोर्स* थे, जिनके पास अंतिम कार्यकारी शक्तियां थीं और वे आसानी से विधानसभा के निर्णय को रद्द कर सकते थे। हालांकि हैरानी की बात यह है कि स्पार्टा में *हॉपलाइट्स* के रूप में मध्यम किसानों ने नगर-राज्य के संविधान द्वारा मताधिकार का पहला विशेषाधिकार प्राप्त किया। लेकिन प्रारंभिक परिवर्तन लंबे समय तक यहां बने रहे। एथेंस सहित अन्य नगर-राज्यों में कहीं अधिक उन्नत संविधान के काफी बाद तक इस प्रकार राजतंत्र, कुलीनतंत्र और लोकतंत्र मिश्रण दृढ़ता से एक कुलीनतंत्र के पक्ष में झुका हुआ था। यह परिषद् और विधानसभा के संघटन द्वारा सुनिश्चित किया गया था, एथेंस की तुलना में यहाँ विधानसभा की अपेक्षा परिषदों के अधिकार कहीं ज़्यादा थे।

एथेंस

एथेंस का अपना संविधान था, जैसा कि कुछ अन्य राज्यों के पास भी था, जबकि कुछ के पास कोई संविधान नहीं था। यह अपनी कानूनी संहिताओं और राजनीतिक संरचनाओं के विकास की एक लंबी अवधि के माध्यम से यूनानी राज्यों में सबसे लोकतांत्रिक रूप में विकसित हुआ। इसलिए हम यहां इसके बारे में अधिक विस्तार से अध्ययन करेंगे।

एथेंस में सुधारों का एक लंबा इतिहास है जो छठी शताब्दी बी सी ई से पहले शुरू हुआ। ड्रैको (650-600 बी सी ई) को पहले विधायक के रूप में जाना जाता है, जिसे एथेंस के नागरिकों, जो अत्यधिक कठोर कानून के माध्यम से शासित थे, के द्वारा चुना गया था, जिसे नगर-राज्यों के लिए कानून बनाने का अधिकार दिया गया। उसके द्वारा यह निर्मित एथेंस का सबसे पहला संहिताबद्ध संविधान था, जो सभी साक्षर लोगों के लिए उपलब्ध था, यह पहले के मौखिक कानून से अलग था, जिसे मात्र कुछ लोगों द्वारा ही जाना जाता था तथा उसकी व्याख्या की जाती थी और जिसे मनमाने ढंग से लागू किया जाता था। इस कानून में हत्या और गैर इरादतन हत्या के बीच अंतर स्पष्ट किया गया। उसके कानून को कठोर कहा जाता था क्योंकि छोटे से अपराधों के लिए भी मौत की सज़ा का प्रावधान था। इसकी मुख्य विशेषता ऋण बंधन थी, जो ऋण नहीं चुकाया जाने की स्थिति में था। यह एक बहुत बड़े अन्याय और सामाजिक असंतोष का स्रोत बना।

लोकतांत्रिक सुधारों की एक श्रृंखला बाद में सोलोन द्वारा शुरू की गई (लगभग 638-558 बी सी ई; जो एथेंस का राजनेता और पुरातन एथेंस का कानून निर्माता था)। इसे एथेंस के लोकतंत्र के पिता के रूप में जाना जाता है, इसे 594 बी सी ई में संघर्ष और वर्ग संघर्ष के युग में सामाजिक आम सहमति लाने के लिए चुना गया था)। उसने एक निरंकुश शासक की तरह सत्ता हथियाई नहीं। उसने समुदाय द्वारा स्व-शासन के लिए नियमों को तैयार किया। जैसा कि अरस्तु ने संविधानों के संबंध में अपने अध्ययन में बताया है, और जिससे फिनले भी सहमत हैं, उसके तीन सबसे महत्वपूर्ण उपाय थेः i) ऋण के लिए दासता का उन्मूलन, ii) एक पीड़ित व्यक्ति की ओर से अदालत में न्याय की तलाश के लिए तीसरे पक्ष के अधिकार का सृजन, और iii) लोक अदालतों में अपील की शुरुआत। तीनों में एक बात समान थीः ये वास्तव में समुदाय की उस विचारधारा से प्ररित थे जिसके द्वारा कमज़ोर बहुसंख्यक वर्ग को अभिजात वर्ग की ज्यादतियों तथा अतिरिक्त कानूनी शक्तियों से बचाया जा सकता था (फिनले, 1987ः 430)।

सोलोन ने भू-स्वामित्व के आधार पर नागरिकों को चार वर्गों में विभाजित किया। एथेंस की परिषद् एक व्यापक प्रतिनिधि संस्था थी जिसकी सदस्यता पहले तीन वर्गों के लिए खुली थी, जिसमें कुलीन, अमीर और मध्यम किसान शामिल थे। इसमें से केवल पहले दो सैन्य और राजनीतिक और न्यायिक विभागों में नियुक्त किए जा सकते थे; जबकि नगर-राज्य संरचना में सबसे शक्तिशाली वर्ग बड़े भूमिपतियों का था, जो अल्पसंख्यक थे। अन्य राज्यों की तुलना, में यहां विधानसभा संरचना में सबसे अधिक लोकतांत्रिक थी और इसमें सभी नागरिकों को भागीदारी और मतदान का अधिकार प्राप्त था। प्राथमिक राजनीतिक इकाई *डेमे* थी, सभी नागरिक जिसके सदस्य थे। इस प्रकार *ड्रैको* के कानूनों ने नागरिकों के सृजन और उनके अधिकारों की रूपरेखा प्रस्तुत करने में कई नए कदम उठाए। हालांकि कर्ज का भुगतान करने की असमर्थता में अब बंधक या दास नहीं बना सकते थे, फिर भी भूमिपति कुलीन वर्ग का अभी भी अधिकांश भूमि पर नियंत्रण बना रहा।

पेइसिस्ट्राटस, जो 545-527 बी सी ई में सत्ता में था, एक निरंकुश शासक था, लेकिन कुछ यूनानी नगर-राज्यों में निरंकुश शासकों की तरह, जैसा कि उपरोक्त निरंकुश शासन के भाग में बताया गया है, उसने भी कुछ सुधार किए तथा क्लासिकल युग में नगर-राज्यों के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

क्लाइस्थनीज़ (570-508 बी सी ई) के साथ एक नए चरण की शुरुआत हुई, जो मुख्य *आर्कान* (525-524 बी सी ई) यानी एथेंस के मजिस्ट्रेट के रूप में कार्यरत था। उसने राजनीतिक परिवर्तनों की शुरुआत की, जैसे पैत्रक (gens), परिवार (phratry) और कबीले का विघटन, कबीले आधारित समुदायों के स्थान पर क्षेत्रीय निर्वाचक क्षेत्रों की स्थापना तथा क्षेत्र और संपत्ति के आधार पर, जो कि वर्गीकरण का आधार बना, निर्वाचन सिद्धान्त की स्थापना। परिषद् या *बाउल* की संरचना के आकार को विस्तृत किया गया, सदस्यों को समूह (lots) के आधार पर चयनित किया गया और *पोलिस* जिसकी सबसे निचली इकाई अब *डेमे* थी, उसे भी क्षेत्रीय आधार पर गठित किया गया। भूमिपति उच्च वर्ग कई *डेमों* में बिखरे हुए थे, इसने लोकतांत्रिक सिद्धांतों को कोई सहायता प्रदान नहीं की बल्कि कुलीनतंत्रों के बीच संघर्ष को बढ़ावा दिया, उसने सरकारी पदों को पूरी तरह से जन्म या नातेदारी के सिद्धांत पर आधारित न कर उसके लिए चयन की शुरुआत की, लेकिन क्योंकि उसने कुलों की शक्तियों का विघटन किया था, इसीलिए उसे कभी-कभी लोकतांत्रिक सिद्धांतों को आगे बढ़ाने का श्रेय दिया जाता है।

प्रशासन और सुधारों के साथ अनुभवों की यह श्रृंखला प्राचीन यूनान में ऐथेंस के लोकतंत्र के लिए आधार बनी। हालांकि यह कह सकते हैं कि एथेंस के लोकतंत्र का सामाजिक आधार ऋण के आधार पर बंधक या दास बनाने का उन्मूलन था, जिसे सोलोन ने सुधार के माध्यम से किया था। इसने बड़े अभिजात भूखंडों के मालिकों को एकाधिकार से रोका, और इसने मध्यम और छोटे खेतों में स्थिरता लाई। इसने छठी शताब्दी बी सी ई में क्लासिकल एथेंस के लोकतंत्र में एक बड़ी सामाजिक भागीदारी का पथ प्रदर्शित किया। यूनानी नागरिकों में मामूली कृषि संपत्ति के साथ दूसरे अन्य लोगों को भी शामिल किया गया। और इसने 'सशस्त्र नागरिक पैदल सेना' के अस्तित्व को संभव बनाया। व्यवहार में इन पहलुओं ने ऐसे संविधान के लिए योगदान दिया जिसके द्वारा किसी भी अन्य नगर-राज्य की तुलना में लोगों द्वारा बड़ी संख्या में प्रत्यक्ष लोकतंत्र में भागीदारी संभव हुई। इन्होंने एथेंस के संविधान की नींव रखी, जिसने विधानसभा को प्रत्यक्ष लोकतंत्र और आम नागरिकों की भागीदारी का एक महत्वपूर्ण अंग बना दिया। बाज़ार में स्थित विधानसभा एथेंस के लोकतंत्र का सक्रिय केंद्र बन गई।

पांचवी शताब्दी बी सी ई के दौरान क्लासिकल एथेंस में युद्ध और शांति, कराधान, धर्म-संप्रदायों के नियमन, सेना, युद्ध वित्त, लोक निर्माण, आदि के नियमन पर प्रस्तावों, साथ ही संधियों और युद्ध वार्ताओं पर विधानसभा इन सभी महत्वपूर्ण मुद्दों पर निर्णय लेने के लिए एक

प्राथमिक संस्था थी। इसके ऊपर एक परिषद् थी, जो कि एक निर्वाचित संस्था थी, जिसमें लगभग 500 सदस्य थे, जिन्हें एक वर्ष की अवधि के लिए चुना जाता था। इन निर्वाचित सदस्यों को अपने कार्यकाल के दौरान वेतन दिया जाता था, जिससे यह सुनिश्चित किया जाता था कि जो समय उनके द्वारा परिषद् के कार्यों में बिताया गया उससे हुए नुकसान के लिए उन्हें मुआवजा दिया गया था, ताकि जो धनी नहीं थे वे भी सदस्य बन सकते थे। हर अधिकारी सीधे ***डेमोस*** के प्रति उतरदायी था।

तथापि स्पार्टा की तरह एथेंस में भी शक्तियां परिषद् के पक्ष में भारित थीं, हालांकि विधानसभा और *डेमेस* में जन भागीदारी कहीं अधिक विस्तृत थी। हालांकि चर्चा और बहस लगातार होती थी, और अन्य नगर-राज्यों की तुलना में यह कहीं अधिक स्वतंत्र तथा आज़ाद ख्याल की थी, फिर भी गैर-नागरिकों को सभी सामाजिक अधिकारों और राजनीतिक भागीदारी से वंचित रखा गया था।

सैद्धांतिक रूप से, विधानसभा, जिसमें पांचवी शताब्दी बी सी ई में लगभग 43,000 सदस्य थे, के हाथ में अंतिम राजनीतिक निर्णय और शक्तियां थीं। वास्तविक संदर्भ में, सभी निर्णय पहले से ही सूक्ष्म परिषद् में लिए जा चुके होते थे, जहां धनी प्रभुत्व में थे, जिन्हें बाद में विधानसभा में ले जाया जाता था, जहां केवल उनकी पुष्टि की जाती थी। और सभा के सदस्यों का केवल एक छोटा सा प्रतिशत ही वास्तव में नियमित रूप से भाग लेता था। और परिषद् के भीतर से जो समितियां बनाई जाती थीं, उन पर 1200 धनी नागरिकों का एकाधिकार था। ये समितियां कराधान निर्धारण, लोक निर्माण के लिए अनुबंध, खानों के लिए रियायतें, सैन्य और नौसैनिक बलों पर नियंत्रण रखती थीं। ये विदेशी मामलों को भी निर्देशित करती थीं, उनके पास पुलिस शक्तियां थीं और वे न्याय व्यवस्था को नियोजित करती थीं। धार्मिक समारोहों की अध्यक्षता अमीर लोग करते थे। यहाँ की कानूनी प्रणाली के तहत गैर-नागरिकों को किसी प्रकार की सुरक्षा की पेशकश नहीं की गई, दास प्रधान रूप से अपने मालिकों के प्रति जवाबदेह थे, जिन पर उनका संपत्ति के रूप में स्वामित्व था, और महिलाएं अपने पति और पिता के प्रति जवाबदेह थीं। एक ही अपराध के लिए नागरिकों और दासों के बीच दंड के प्रावधान मनमाने और असमान थेः नागरिकों पर अक्सर जुर्माना लगाया जाता था, दासों को चाबुक और शारीरिक क्रूरता से दंडित किया जाता था। सेनापति बिना किसी भी समय-सीमा के बार-बार निर्वाचित किए जा सकते थे और वे एथेंस समाज के सबसे प्रभावशाली वर्ग में से थे।

राज्य संपत्ति, विजय प्राप्त क्षेत्रों से भेंट, व्यापार, अप्रत्यक्ष करों और दास परिश्रम से अर्जित अधिशेष, तथा स्वयं सशस्त्र नागरिक नगर-राज्यों के लिए सामाजिक आधार और राजस्व प्रदान करते थे। हालांकि भूमि के स्वामित्व के आधार पर कर का निर्धारण नहीं होता था। इस प्रकार, अंततः प्राचीन यूनान की लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था में अमीरों के प्रभुत्व का प्रमुख कारण यही था। साथ ही यह बताता है कि क्यों और कैसे एथेंस, सबसे अधिक दमनकारी दास प्रथा प्रणाली के अस्तित्व के बावजूद अपने समय में यूनानी संविधानों में सर्वाधिक लोकतांत्रिक था।

लेकिन यूनानी संवैधानिक सिद्धांत या सिद्धांत की कार्यप्रणाली में शक्तियों के विभाजन की परिकल्पना नहीं की गई थी, जैसा कि हम आधुनिक समय में करते हैं। परिषदें और विधानसभाएं, सभी व्यावहारिक प्रयोजनों के लिए, कानून के न्यायालय भी थे, जो विवादित मुद्दों पर फैसला करते थे। जब अलग-अलग अदालतें विकसित भी हो गईं तो उनका गठन परिषद् के सदस्यों में से किया गया तथा जिन पर उनका प्रभुत्व भी था। तृतीय पक्षीय शिकायतों को समय के साथ स्वीकृति मिली, लेकिन झुकाव केवल उन पक्षों की शिकायतों पर था जो उस संघर्ष से संबंधित थे। वहां आपराधिक (क्रिमिनल) और नागरिक (सिविल) मामलों के बीच कोई भेद नहीं थे, जैसा कि आज आधुनिक समय में किया जाता है, यद्यपि निजी और सार्वजनिक मुद्दों के बीच कुछ भेद अवश्य किए गए थे।

पोलिस की सामाजिक संरचना, लोकतांत्रिक राजनीति के औपचारिक तत्वों के बावजूद, स्तरीकृत थी। यह स्तरीकरण इस क्रम में थाः अरिस्टोई, *पेरिओकोई,* दास, ज़ेनोई। इन वर्गों में अपेक्षाकृत सामाजिक स्थिति और असमान राजनीतिक प्रभाव सहित असमान अधिकार की स्थिति लगातार बनी रही। यह ध्यान देने योग्य है कि नागरिकों और गैर-नागरिकों के बीच अपरिहार्य औपचारिक राजनीतिक अधिकारों को छोड़कर, उनमें फर्क की दरार बहुत स्पष्ट रूप से चिन्हित और पैनी थी।

पांचवी शताब्दी बी सी ई का सबसे महत्वपूर्ण नेता पेरिक्लेस (494-429 बी सी ई) था, जो एक सुवक्ता और एक सेनापति था, विशेष रूप से ईरान और पेलापोनीसियन युद्धों के दौरान एक प्रभावशाली राजनेता बनकर उसने 461 से 429 बी सी ई के मध्य एथेंस का नेतृत्व किया। सुवक्ता होने तथा अपने व्यक्तित्व के प्रभाव की शक्ति के कारण उसने एथेंस के लोकतंत्र में नए तत्वों, बहस और अनुनय, के महत्व का सूत्रपात किया। उसने सार्वजनिक वित्त के प्रशासन में दक्षता को बढ़ाया, कराधान और कुलीनों की सैन्य ज़िम्मेदारी और सार्वजनिक व्यय, जिसके द्वारा बुनियादी ढांचों की संरचना की गई, इन सभी को सुनिश्चित किया। उसे डेलियन लीग को एथेंस के साम्राज्य में बदलने का श्रेय दिया जाता है। साहित्य और कला में अपनी रूचि के माध्यम से एथेंस से बाहर के नगर-राज्यों में यूनानी प्रथाओं का प्रभाव बढ़ाने का श्रेय भी उसे जाता है। अधिकारियों को अन्य यूनानी राज्यों के साथ संबंध बनाए रखने के लिए, विजय प्राप्त क्षेत्रों से भेंट इकट्ठा करने और कराधान के लिए नियुक्त किया गया था। वह एक्रोपोलिस के निर्माण के लिए भी काफी हद तक ज़िम्मेदार था।

सबसे उन्नत यूनानी नगर-राज्य एथेंस की प्रमुख ताकत नौसेना थी, जिसकी सहायता से बड़े क्षेत्रों में साम्राज्य का विस्तार किया गया, जब तक कि सिकंदर (336-323 बी सी ई) द्वारा उसके विजय अभियानों को रोका नहीं गया। सिकंदर की विजयों के पश्चात् यूनानी राज्य मैसीडोनिया साम्राज्य का हिस्सा बन गये, जिसके बाद नगर-राज्यों की लोकतांत्रिक प्रक्रिया के प्रयोग का अंत हो गया। हालांकि यूनानी संस्कृति मैसीडोनिया के संपर्कों के माध्यम से दूर-दूर तक फैली और यह हेलेनिक संस्कृति के रूप में जानी जाने लगी। एथेंस के साम्राज्य के दौरान यूनानी राज्यों और नवीन विजित क्षेत्रों के प्रति अलग ढंग से व्यवहार किया गया। विजित क्षेत्रों के कई राज्यों में शासन अपेक्षाकृत अधिक केंद्रीकृत, अधिक क्रूर था और इन पर कराधान का बोझ कहीं अधिक था। इस प्रकार साम्राज्य ने एथेंस के संसाधनों में काफी कुछ जोड़ा, जिससे एथेंस मैसीडोनियाई विजय अभियान तक एक मुख्य यूनानी नगर-राज्य बना रहा। मैसीडोनियाई विजय ने नगर-राज्य की धारणा को समाप्त कर दिया, इसने राजनीतिक प्रशासन और न्याय और अपराधों की सजा से जुड़े संस्थानों या संस्कृति और नगरों के अभिन्यास को परिवर्तित किया। मैसीडोनियाई शासन में शहरी सम्मिश्रण और समझौता दिखाई देता है, जो रोमन साम्राज्य के उदय तक चला। आप इसके बारे में हमारे पाठ्यक्रम **बीएचआइसी-104** में पढ़ेंगे।

14.8 यूनानी समाज में महिलाएं

महिलाओं, जो यूनानी समाज का 50 प्रतिशत का हिस्सा थीं, के विषय में तथा उनकी समाज तथा राजनीति में भूमिका की चर्चा के बिना यूनानी सभ्यता पर परिचर्चा अधूरी है। आधुनिक समाज की तरह गरीब और श्रमिक आबादी के मध्य महिलाएं कार्यबल का हिस्सा थीं। वह खेतों और घरों में काम करती थीं। यूनानी समाज में वे भी दास समूह का एक महत्वपूर्ण हिस्सा थीं। उनके श्रम से उत्पन्न अधिशेष ने भूमिपति वर्ग के धन तथा विलासिता में बढ़ोत्तरी की। महिलाएं घरेलू दास के रूप में और वस्त्र और हस्तशिल्प उद्योगों में कार्यरत थीं। पुरुषों की तरह, उन्हें युद्ध में कैदी बनाया गया और दासों में बदल दिया गया, और यह सब उनके ऊपर महिलाओं के रूप में शोषण के अतिरिक्त था जो जारी रहा। यह सभी यूनानी नगर-राज्यों के बारे में सच है।

प्राचीन समाज का अनुमान आधुनिक मानकों के अनुसार नहीं लगाया जा सकता। लेकिन फिर भी, प्राचीन समाजों को 'स्वर्णिम' स्थिति के रूप में चित्रण के प्रयास के आलोक में इस तथ्य पर यहां यह जोर देना आवश्यक है कि, जहां यह सत्य है कि महिलाओं ने इन समाजों की महानताओं के फल का भोग किया तथा उसमें भाग लिया लेकिन इन समाजों की महानता का वर्णन अतिशयोक्ति पूर्ण है क्योंकि महिलाओं की अधीनता बहुत अधिक थी। देवियों की पूजा अवश्य की जाती थी, सत्तारूढ़ वर्ग में कुछ प्रसिद्ध विदूषी महिलाएं भी थीं, जिनका विवरण साहित्यिक स्रोतों से मिलता है। कई महिलाओं ने प्रारम्भिक काल में सार्वजनिक धार्मिक अनुष्ठानों में भी भाग लिया, लेकिन हम कह सकते हैं कि सत्तारूढ़ और श्रमिक दास या गैर-दास श्रमिकों की महिलाओं में एक बड़ा अंतर था। यह अंतर विलासिता, आराम और पारिवारिक धन के उपभोग तथा कुछ हद तक शिक्षा के क्षेत्र में स्पष्टतः परिलक्षित होता है। वहां गणिकायें भी थीं, जिनकी उपलब्धियां तथा ज्ञान उच्च थे। वेश्यावृत्ति यूनानी समाज का एक अन्य पहलू था।

महिलाएं नागरिकों की तरह स्वतंत्र नहीं थीं। वास्तव में, उन्हें नागरिक नहीं माना गया और वे विधानसभाओं में किसी भी स्तर पर भाग नहीं ले सकती थीं, उच्च संस्थाओं की तो बात ही नहीं। महिलाओं को विरासत और संपत्ति के स्वामित्व की अनुमति नहीं थी। परिवार में जो पहले से ही निजी संपत्ति के उद्‌भव के साथ पितृसत्तात्मक समाज की ओर अग्रसर था, उनकी स्थिति अधीनस्थ थी, पिता और पति के नियंत्रण में थी। हम अपनी अगली इकाई में संस्कृति और रोजमर्रा की जिंदगी के संदर्भ में उनके बारे में अधिक बात करेंगे।

बोध प्रश्न-3

1) क्या आप सहमत हैं कि विविधता प्रारंभिक काल से ही यूनानी सभ्यता की एक विशेषता थी? कुछ उदाहरण दीजिए।

....

....

....

....

....

2) एथेंस और स्पार्टा के राजनीतिक ढांचे का वर्णन करें, जैसा कि यह क्लासिकल कालीन यूनान में विकसित हुआ।

....

....

....

....

....

3) प्रारंभिक यूनानी इतिहास में निरंकुश शासन काल के संबंध में आपके क्या विचार हैं?

....

....

....

....

....

4) प्राचीन यूनानी सभ्यताओं में महिलाओं की स्थिति पर एक संक्षिप्त विवरण दीजिए।

....

....

....

....

....

14.9 सारांश

इस इकाई में हमारा प्रयास प्रारंभिक काल से यूनानी राज्य व्यवस्था की विविधता को रेखांकित करने का रहा है। हमने प्राचीन यूनान के नगर-राज्यों के कामकाज तथा संरचनाओं और लोकतंत्र के साथ उनके कुछ प्रयोगों को देखा। हमने देखा कि व्यवहार में यह लोकतंत्र सीमित था तथा केवल एक छोटे से अल्पसंख्यक वर्ग के लिए ही उपलब्ध था। हालांकि इस काल में कुछ वैचारिक बहसों और नए विचारों का उदय हुआ, जिसकी हम अगली इकाई में चर्चा करेंगे। यहां आपने देखा कि कैसे यूनानी सभ्यता की महान् उपलब्धियों में दासता का महत्वपूर्ण योगदान था, यहां तक कि वास्तव में इसने इसकी नींव का गठन किया। आप अब दास प्रथा, राजनीतिक प्रयोगों और भूमध्यसागर के आसपास व्यापार के केंद्रीकरण और यूनानी सभ्यता के उदय तथा विकास के मध्य संबंधों का विशलेषण करने में सक्षम होंगे। आप अब नागरिकों और दासों के बीच के अंतर को समझ गए होंगे। हालांकि हमने दासों और उनके रोजमर्रा के कामकाज से जीवन में आने वाली समस्याओं का वर्णन नहीं किया है। यह काफी स्पष्ट है कि उन्हें कोई भी सामाजिक अधिकार प्राप्त नहीं थे और उन्हें किसी भी उत्पादित वस्तु की तरह खरीदा और बेचा जा सकता था। आपने यूनानी समाज में अन्य वर्गों, जो दास नहीं थे, लेकिन नागरिक भी नहीं थे और नागरिकों और दासों के मध्य स्थित थे, उनकी स्थिति के बारे में भी जानकारी प्राप्त की होगी। महिला दासों की स्थिति के बारे में भी चर्चा की गई है। आपने यह नोटिस किया होगा कि उनका शोषण उनके पुरुष साथियों की अपेक्षा कहीं अधिक था।

14.10 शब्दावली

चल संपत्ति दास (Chattel slaves) : दासों का एक रूप जिसमें एक व्यक्ति और उसके परिवार को जीवन भर के लिए दास बनाया जाता था और उन्हें संपत्ति माना जाता था और साथ ही उनका व्यापार भी किया जा सकता था।

डेमेस : यूनानी नगर-राज्यों में स्थानीय परिषदें जिनके गठन में या तो कई छोटी बस्तियाँ या गांव (hemlets) या एक शहरी जिला शामिल होता था।

गेरुसिया : स्पार्टा में 30 पुरुष बुजुर्गों की परिषद्, उनमें से दो स्पार्टा के राजा होते थे जबकि अन्य 28 पुरुषों की आयु 60 से अधिक होती थी।

कुलीनतंत्र	:	सरकार का एक ऐसा रूप जिसमें सत्ता कुछ लोगों या धनी और विशेषाधिकार प्राप्त परिवारों के हाथ में होती थी।
पोलिस	:	एक स्व-शासित यूनानी नगर-राज्य
थेसली	:	प्राचीन यूनान में एक पारंपरिक प्रशासन का क्षेत्र। मायसीनियन काल के दौरान यह एओलिया के रूप में जाना जाता था।

14.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 14.4 देखें

2) रेखिक अ/मिनोअन लिपि और रेखिक ब लिपि

3) उप-भाग 14.5.1 और 14.5.2 देखें

4) साहित्य कार्य, अनियमित पतन, आदि, उप-भाग 14.5.3 देखें

बोध प्रश्न-2

1) उप-भाग 14.6.2 देखें

2) उत्पादन, घरेलू काम, अधिशेष, आदि के लिए योगदान। उप-भाग 14.6.1 देंखें

3) विस्थापित पारंपरिक अभिजात वर्ग, छोटे खेतों का समेकन, आदि। उप-भाग 14.6.2 देखें

बोध प्रश्न-3

1) राजनीतिक व्यवस्था, दासता के अंतर को विभिन्न नगर-राज्यों में चिन्हित करें, जैसे इस इकाई के भागों और उप-भागों में बताया गया है।

2) उप-भाग 14.7.2 देखें

3) निरंकुशता के काल के मूल्यांकन के लिए उप-भाग 14.7.1 देखें

4) वे नागरिक नहीं थीं, तथा पुरुषों के अधीनस्थ थीं, उप-भाग 14.8 देखें

14.12 संदर्भ ग्रंथ

एंडरसन, पेरी. 2013. *पैसेज फ्रॉम एंटिक्विटी.* लंदन और न्यूयार्कः वर्सो.

चाइल्ड, गॉर्डन. 1986. *व्हॉट हैपंड इन हिस्ट्री.* पेंगुइन बुक्स.

बरनाल, मार्टिन. 1991. *ब्लैक एथेना, द एफ्रोएशिः याटिक रूट्स ऑफ क्लासिकल सिविलाइजेशन.* लंदनः विंटेज.

फिनले, एम. आई. 1977. *द एनसियंट ग्रीक्स.* न्यूयार्कः पेगुइन बुक्स.

फिनले, एम. आई. 1999. *द एनसियंट इकोनॉमी.* अपडेटेड एडीशन. बार्कले एण्ड लॉस एंजेलेसः यूनिवर्सिटी आफ कैलीफोर्निया प्रेस.

हरमन, जोचिम एवं एरिक जुरचर (संपा). *1996. हिस्ट्री आफ ह्यूमैनिटीः साइंटिफिक एंड कल्चरल डेवलपमेंट.* भाग III . *फ्रॉम द सेविंथ संचुरी बी. सी. टू द सेविंथ संचुरी ए. डी.* लंदन एवं न्यूयार्कः यूनेस्को एवं रुटलेज.

फारूकी, अमर. 2001. *अर्ली सोशल फार्मेशन्स.* नई दिल्लीः मानक पब्लिकेशन्स.

फगन, ब्रायन एम. 2004. *पीपुल आफ द अर्थः एन इंट्रोडक्शन टू वर्ल्ड प्रीहिस्ट्री.* 11th एडीशन. पियरसन प्रेंटिस हाल.

पी डी एफः

एनसिएन्ट हिस्ट्री एन्साइक्लोपीडिया

https://www.ancient.eu/Linear A Script/

https://www.britannica.com/tipic/Greek-language

14.13 शैक्षणिक वीडियो

एनसिएन्ट ग्रीक डेमोक्रेसी

https://www.youtube.com/watch?v=NR-tjUYfYSE

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 15 यूनानी सांस्कृतिक परम्पराएँ*

इकाई की रूपरेखा

15.1 उद्देश्य

15.2 प्रस्तावना

15.3 भौतिक संस्कृति और जीवनशैली

15.4 यूनानी वैश्विक दृष्टि: धर्म, सार्वजनिक अनुष्ठान और देवता

15.5 किंवदंतियाँ, मिथक और कहानियाँ

15.6 साहित्य

15.7 विज्ञान

15.8 चिकित्सा

15.9 दर्शनशास्त्र

15.10 इतिहास और इतिहासलेखन

15.11 कला, वास्तुकला और मूर्तिकलाः सामूहिक से व्यक्तिगत तक

15.12 खेल और व्यायाम

15.13 लिंग (जेण्डर) और परिवार

15.14 सारांश

15.15 शब्दावली

15.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.17 संदर्भ ग्रंथ

15.18 शैक्षणिक वीडियो

15.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- यह समझ सकेंगे कि सांस्कृतिक परम्पराओं से हमारा तात्पर्य केवल दृश्य कला और निष्पादन कलायें नहीं है, अपितु जीवनशैली और सोचने का तरीका भी है,
- जान सकेंगे कि यूनानी संस्कृति शून्यक में नहीं उभरी, इसने पहले की संस्कृति को समायोजित किया और अपने आसपास की संस्कृतियों को प्रभावित किया,
- यूनानी सांस्कृतिक परम्पराओं का यूनानी समाज और राज्यव्यवस्था की सक्रियता, जो सदियों में विकसित हुई, के संबंध को समझ सकेंगे,
- यूनानी समाज की, उस समय के संदर्भ में, उपलब्धियों की सराहना कर पाएंगे,

* डॉ. नलिनी तनेजा, स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

- आधुनिक यूरोप के विकास में यूनानी समाज और अन्य तत्वों की, जो यूनानी संस्कृति से संबंधित नहीं थे, योगदान की सराहना कर सकेंगे,
- यह जान सकेंगे कि यूनानी सभ्यता के अलावा अन्य प्राचीन सभ्यताओं ने भी मानव विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई,
- यूनानी समाज के वर्ग चरित्र और उसके निर्माण में अधिकार विहीन वर्ग के योगदान का मूल्यांकन कर सकेंगे, और
- यह विश्लेषित कर सकेंगे कि यूनानी समाज की गहन असमानताओं ने यूनानी सभ्यता में विलासिता, अभिव्यक्ति और स्मारकीय संरचनाओं की उन्नति को कैसे आकार प्रदान दिया और स्वीकृत किया।

15.2 प्रस्तावना

यूनानी सांस्कृतिक परम्पराओं की जानकारी के स्रोत दुर्लभ हैं, परन्तु विविध प्रकार के हैंः i) पुरातात्विक खुदाईयों से प्राप्त वास्तुकला-संबंधी अवशेष, मूर्तियां, मिट्टी के पात्र, कलाकृतियां और अन्य उपयोग की वस्तुएं, ii) किंवदंतियां तथा विवरण जो मौखिक रूप से प्रसारित होते रहे और बाद में लिखित रूप में भी मिले हैं – जिनमें समय के साथ तब्दीलियाँ आईं, और iii) संपन्न साहित्यिक और दार्शनिक योगदान, जिन्हें भी पहले मौखिक रूप से प्रसारित और बाद में लिखित रूप में हस्तांतरित किया गया। यूनानी ऐतिहासिक ग्रंथ यूनानी समाज द्वारा स्वयं के अतीत को लिखने और समझने का पहला सचेत प्रयास था। इसलिए, जब हम सांस्कृतिक परम्पराओं की बात करते हैं तब हम उनकी कलात्मक उपलब्धियों के अलावा पुरातात्विक उत्खननों से प्राप्त अन्य पहलुओं को भी ध्यान में रखते हैं।

इस इकाई में हम सांस्कृतिक उत्पादन और दार्शनिक अन्वेषण के माध्यम से यूनानी धर्म, लिंग और वर्ग असमानताओं के बारे में बात करेंगे। साथ ही हम यूनानी चिकित्सा और विज्ञान के बारे में भी बात करेंगे क्योंकि यह महत्वपूर्ण है कि आप कई विषयों के बारे में समझ विकसित करें। इस इकाई में हम कुछ विशिष्ट पहलुओं का गहराई से अध्ययन न करके संपूर्ण सांस्कृतिक विकास का सिंहावलोकन करेंगे। यह इकाई आपको अनेकानेक विषयवस्तुओं से अवगत कराएगी। **इकाई 14** में हमारा प्रयास यूनानी लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था के सामाजिक आधार का गहराई से अध्ययन करना था।

इसके अतिरिक्त यूनानी सांस्कृतिक परम्पराओं को केवल क्लासिकल युग की परम्पराएं या स्थिर और कालातीत नहीं समझना चाहिए। जब हम यूनानी जीवन और सामाजिक अभिव्यक्ति के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करेंगे तब इन परम्पराओं में समय के साथ बदलाव और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के विकास की भी चर्चा करेंगे। यहां हमारा प्रयास बहुत से नामों या किताबों के शीर्षकों को जानने के बजाए प्रवृत्तियों को रेखांकित करना और उनके स्पष्टीकरण की ओर होगा।

15.3 भौतिक संस्कृति और जीवनशैली

विशेष रूप से हम प्राचीन यूनान की भौतिक संस्कृति, दैनिक जीवन और व्यवसायों के बारे में पुरातात्विक अवशेषों – जैसे सार्वजनिक इमारतें, उनमें मिलने वाली कलाकृतियां और मिट्टी के पात्रों – के माध्यम से जानते हैं। यह अवशेष हमें पिछली इकाई में वर्णित मिनोआई काल (2000-1400 बी सी ई) से लेकर क्लासिकल युग के ग्रीस, यूनानी साम्राज्य तक के परिवर्तनों की जानकारी देते हैं। यहां हम यूनान के बाहर सिकंदर के विजय अभियान पथ क्षेत्र में यूनानी संस्कृति के प्रतीकों के विस्तार पर चर्चा करेंगे। यूनानी सांस्कृतिक अभिव्यक्ति

का प्रभाव महाद्वीप के बाहर एशिया में विस्तारित हुआ, उदाहरण के लिए, भारतीय उपमहाद्वीप की गान्धार कला, जिसके बारे में आप जानते होंगे।

यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि बहुत सी भौतिक सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ प्रतिदिन के गैर-धार्मिक जीवन से संबंधित थीं, परन्तु बहुत सी भौतिक सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ धार्मिक अभिव्यक्ति के साथ भी जुडी हुई थीं। मंदिर और धार्मिक इमारतें कलात्मक अभिव्यक्ति के कार्यस्थल हैं। दृश्य और वास्तुकला तकनीकें, जो विचारों के धर्मनिरपेक्ष तौर-तरीकों से प्राप्त हुईं, दूसरी ओर धर्मनिरपेक्ष वस्तुएं अक्सर धार्मिक रूपांकनों का वहन करती हैं। कब्रें ऐसे स्थान हैं जहां यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता हैः अनुष्ठान में इस्तेमाल होने वाली साम्रगी और मृतकों की आत्मा के लिए देवताओं के तुष्टीकरण में अक्सर हर प्रतिदिन इस्तेमाल होने वाली वस्तुएं पूर्वजों को उपहार के रूप में भेंट की जाती हैंः ऐसा करते समय वह मृतकों और जो उनके लिए शोक कर रहे हैं उनका सामाजिक स्तर भी बताते हैं। कब्रों से जो अवशेष प्राप्त होते हैं वह अमीरों से ही जुड़े हो सकते हैं। किसी भी स्थिति में, गरीबों की कब्रें समय की कठिनाइयों का सामना नहीं कर पायी होंगी।

आरंभिक मिनोआई सभ्यता क्रीट द्वीप के शहरों में अच्छी तरह से जुड़ी सड़क व्यवस्था, नगरों में भली-भांति संगठित सड़क-योजनाएं, जल निकासी व्यवस्था, और अभिजात वर्ग और गरीब घरों के बीच स्पष्ट भेद दर्शाती हैं। विशाल महल परिसर, भंडारगृह, कार्यशालाएं और बैठक कक्ष एक केंद्रीय चौक के चारों तरफ बने होते थे। पाए गये **भित्तिचित्र (frescoes)** उत्तर कांस्य युग के दैनिक जीवन का चित्रण प्रस्तुत करते हैं (किश्लेन्सकी, और अन्य, 2008: 37-38)। हालाँकि, इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि यह मुख्य रूप से अपने समय की अभिजात्य संस्कृति थी; साक्ष्यों के अभाव में यह नहीं बताया जा सकता कि गरीब अगर उनके पास कोई अतिरिक्त समय होता था तो वे उसे कैसे व्यतीत करते थे। यह स्पष्ट है कि उस समय अधिकतर उत्पादित धन इन विशाल महल परिसरों में व्यय किया जाता था।

चित्र 15.1 : मिनोआई शहरों की शहरी-संरचना
साभारः कोरवैक्स
स्रोतः https://en.wikipedia.org/wiki/File:Knossos_sewers_PA067399.JPG

ग्रीस में माइसीनियन सभ्यता (1600-1200 बी सी ई) की जानकारी तीस क्रबों के रूप में मिले साक्ष्यों से मिलती है, खासतौर पर छत्रक (bee-hive) आकार के मक़बरे जो 'वास्तुकला और चिनाई की शानदार उपलब्धियों का नमूना पेश करते हैं, ऐसी सुंदरता जो अब तक यूरोप में पहले नहीं देखी गयी थी। पैमाने और पत्थर के छत्रक वज़न वाले विशालकाय वॉल्ट (vault;

मेहराबदार गुम्बद वाले कक्ष) लगभग सोलह सौ सालों तक विश्व के सबसे बड़े वॉल्ट थे' (किश्लेन्सकी, और अन्य, 2008: 39)। सोने के गहने, कांस्य की तलवारें, कुल्हाड़ियां, चाकू और बर्तन विशिष्ट वर्ग की संपत्ति और सैनिक चरित्र को दर्शाते हैं, जबकि चारों ओर बिखरे विशाल महल परिसर और कुछ पांच सौ गाँव इस सभ्यता के फैलाव और इसके समुद्री व्यापार को दर्शाते हैं।

चित्र 15.2 (a) : माइसीनियन कब्रें
साभारः आन्द्रियास त्रैप्ते
स्रोतः https://en.wikipedia.org/wiki/Grave_Circle_A,_Mycenae#/media/File:Grave-Circle-A-Mycenae.jpg

चित्र 15.2 (b) : माइसीनियन कब्र से प्राप्त वस्तुएं; प्राचीन अगोरा संग्रहालय, एथेंस
साभारः दोरीओ
स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Offerings_from_a_Mycenaean_Pit_Grave_of_an_infantil_girl_(1400_BC.)._Ancient_Agora_Museum,_Athens.jpg

आर्काइक (Archaic) ग्रीस (800-500 बी सी ई) और क्लासिकल (Classical) ग्रीस (490-323 बी सी ई) में लोहे ने कांस्य का स्थान ले लिया। आभूषण, उपकरण और हथियार बेहतर तकनीकों को दर्शाते हैं: लोहे के साथ काम करना आसान था, और क्योंकि लोहा सस्ता था इसलिए वह ज़्यादा आसानी से प्राप्त किया जा सकता था।

सिकंदर के विजय अभियानों और उसके साम्राज्य के विस्तार के बाद हम एक अलग तरह की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति को देखते हैं, जिसमें विजय प्राप्त किये गए क्षेत्रों के तत्व शामिल थे और वे भी जिन्होंने उन क्षेत्रों पर प्रभाव डाला। इस संश्लेषण ने बाद में आधुनिक यूरोप को प्रेरित किया।

चित्र 15.3 : आर्काइक और क्लासिकल ग्रीस कालीन लोहे के औज़ार
साभारः ब्राउवर्स, जोशो. 2015.
स्रोतः https://www.ancientworldmagazine.com/articles/swords-in-ancient-greece/

15.4 यूनानी वैश्विक दृष्टिः धर्म, सार्वजनिक अनुष्ठान और ईश्वर

हम यूनानी वैश्विक दृष्टि और विचारधारा की विधाओं पर चर्चा यूनानी धर्म के विवरण से शुरू कर रहे हैं क्योंकि किसी भी पूर्व-आधुनिक समाज की वैश्विक दृष्टि, नैतिकता और सही और गलत की भावना को समझने के लिए उनके धर्म को समझना महत्वपूर्ण है। धर्म सामाजिक परिवेश के संदर्भ में गठित होता है, परिणामस्वरूप धर्म सार्वजनिक जीवन और राज्यव्यवस्था का नैतिक मूल्य होता है, और ब्रह्मांड के निरूपण और उसमें मानव के स्थान का निर्धारण करता है। यह निश्चित रूप से, यहां तक कि प्राचीन काल के संदर्भ में भी, अपरिवर्तित नहीं था।

आरंभिक क्रीट समाज (2000-1550 बी सी ई) में पुरुष और महिला देवी-देवता थे, परन्तु वे विशेष रूप से देवियों की अधिक आराधना करते थे, जिनमें मातृ-देवी (मातृ-देवी या सर्प-देवी के रूप में उल्लिखित) मुख्य थीं। मातृ-देवी दुनिया में फैली अच्छाई और बुराई का निर्धारण करती थीं। बैल के सींग धार्मिक अनुष्ठानों के साथ जुड़े हुए थे, हालांकि नरबलि के कुछ चिह्न भी पाये गये हैं।

चित्र 15.4 : क्रीट की मातृ-देवी (सर्प-देवी)
साभारः सी मेसीअर
स्रोतः Wikimedia Commons

चित्र 15.5 : क्रीटः बैल के सींग
साभारः मार्क कार्टराइट
स्रोतः https://www.ancient.eu/crete

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

अंधकार युग से लेकर पुरातन युग और क्लासिकल ग्रीस में सार्वजनिक अनुष्ठान, धर्म और पूजा की पद्धतियाँ और पूजा के स्थल अधिक विस्तृत तथा जटिल होते गए, हालांकि छोटी संरचनायें सभी नगर-राज्यों के क्षेत्रों में फैली हुई थीं। बलि की भेंट वेदियों पर की जाती थी, इनमें से कुछ आम लोगों द्वारा भी की जाती थीं, जिनमें निर्धारित पुजारी का होना ज़रुरी नहीं था। 'अंधकार युग' से ही वेदियां विशिष्ट देवी-देवताओं को समर्पित की जाने लगीं और उन्हें अनुष्ठानों के स्थान के बजाय देवी-देवतों का देवालय माना जाता था। आरंभ में लकड़ी के मंदिर बनाये जाते थे और क्लासिकल ग्रीस में पत्थर के मंदिर आदर्श बन गये, जिन्होंने समकोण कमरे की आकृति धारण की, जो एक छत के साथ काफी हद तक स्तंभों से घिरे हुए अनावृत क्षेत्र थे। इन मंदिरों को सामुदायिक स्थानों के तौर पर देखा जाता था और भारत की तरह देवताओं की इच्छाओं को पूरा करने में या धन्यवाद करने के लिए प्रसाद समर्पित किया जाता था। देवी-देवता मानवीय गुण सम्पन्न थे और उनसे जुड़ी गाथायें करीब-करीब मानव कहानियों के सदृश्य ही थीं, जो जीवन के उतार-चढ़ाव और युग-संघर्ष को दर्शाती थीं।

चित्र 15.6 : प्राचीन यूनानी वेदिकाएं
साभारः ज़ेड
स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki File:Ancient_Greek_Altar_Hermes_Delos_130033.jpg

विशिष्ट देवी-देवताओं को समर्पित मंदिरों का स्वयं के लिए साल में उत्सव का एक निर्धारित समय था और उन पर केंद्रित अन्य सामुदायिक समारोह, पर्व, खेल-कूद की प्रतियोगितायें और दावतें होती थीं। इन मंदिरों की पहचान उन विशेष शहरों के साथ की जाती थी जहां उन्हें बनाया गया था। इनमें से दो महत्वपूर्ण मंदिर – डेल्फी का मंदिर और ओलंपिया का मंदिर – थे जो क्रमशः अपोलो (सूरज, प्रकाश, संगीत और उपचार के देवता) और ज़ीअस (आकाश और बिजली के देवता) को समर्पित थे। अपोलो को भविष्यवाणी के साथ संबंधित किया जाता था और यूनानी अक्सर उनके मंदिर में लड़ाई या संघर्ष के परिणाम से संबंधित 'ऑरेकल' भविष्यवाणी सुनने जाया करते थे। अपोलो को संगीत, चिकित्सा और न्याय का देवता भी माना जाता था। डायोनाइसस भावनाओं और मदिरा के देवता थे जिन्हें आरंभ में लोक-देवता माना जाता था जिसे बाद में उन्हें उच्च धर्म के देवता की श्रेणी में अपनाया गया। पोसाइडन को समुद्र, भूकंप और जल का देवता माना जाता था।

चित्र 15.7 : प्राचीन ग्रीस में ओलंपिया का मंदिर
साभारः अवा बाबिली
स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Temple_of_Olympian_Zeus_Athens_Greece_9.jpg

हालांकि देवताओं को एक बेहतर जीवन के लिए तुष्ट और प्रसन्न किया जाता था लेकिन उनसे जुड़ी कहानियां उन्हें पूजने वाले मनुष्यों की कमज़ोरियों सहित उस समय के सामाजिक मूल्यों को प्रतिबिम्बित करती थीं। उनसे जुड़े मिथक, दास प्रथा, प्रचलित राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्था को मंजूरी और समर्थन प्रदान करती थीं। उदाहरण के लिए, पैन्डोरा की कहानी। अपने प्राचीनतम संस्करण में पैंडोरा बुराई का प्रतिनिधित्व करती थी, परन्तु बाद में जिज्ञासा, न कि बुराई, के रूप में चित्रित की गयी। उसी प्रकार आर्चिलोकस, एक यूनानी कवि, एक कविता में होमरिक उपाख्यान की व्याख्या और पुनःकथन में बहुत स्वतंत्रता लेते हुए यह सवाल उठाते हैं कि लड़ाई से हारा हुआ और जीवित वापस लौटने को कायरता कहना उचित था, बजाय परिस्थितियों की मांग अनुसार मरना (किश्लेन्सकी, और अन्य, 2008: 52)।

पैन्डोरा (सबसे प्रतिभाशाली / सबसे संपन्न) यूनानी पौराणिक कथाओं के अनुसार धरती पर अवतारित प्रथम महिला थीं। वह हेफाएस्टस (अग्नि के देवता और कारीगरों के संरक्षक) के द्वारा, ज़ीअस के निर्देश पर, (देवताओं के देवता) बनाई गईं ताकि दो भाइयों – एपिमेथियस और प्रोमेथियस – को सज़ा मिल सके जिन्होंने ज़ीअस की अनुमति के बिना लोगों को आग देकर ज़ीअस को खिन्न किया था। इस मिथक के कई संस्करण हैं। मिथक के एक और संस्करण में प्रोमेथियस (अग्नि के देवता और दैवीय जादूगर) ने स्वर्ग से अग्नि को चुराकर मनुष्यों को उपहार में दिया था। हेसॉइड की *थिओगनी* के अनुसार समस्त देवी-देवताओं ने पैन्डोरा को अद्वितीय भेंटें प्रदान की थीं (अधिक जानकारी के लिए शैक्षणिक वीडियो देखें)।

15.5 किंवदंतियाँ, मिथक और कहानियाँ

किंवदंतियाँ, मिथक और कहानियाँ आधुनिक युग तक पूर्ण रूप से समाज के साथ रहती हैं। यूनान के अपने मिथक और किंवदंतियाँ ऐसी शक्तिशाली कहानियाँ थीं जो यूनानी जीवन, नैतिकता और प्रतिदिन के सामाजिक मानदंडों को शासित करती थीं। हमारे अपने महाकाव्यों की तरह वह शुरू में मौखिक थीं। समय और स्थान में कई पुनःकथनों के अधीन, वे किसी समय में लेखन-शैली में प्रतिबद्ध हुईं और इन पुनःकथनों के माध्यम से लिखित होने के बाद भी इनमें परिवर्तन होते रहे। ऐसा इसलिए था क्योंकि हर पीढ़ी उन्हें अपने ज्ञान, तर्क और

सामाजिक पूर्वामिरूचियों के प्रकाश में देखती है। अतः मिथक कहानियाँ थीं जिनमें ऐतिहासिक तथ्य शामिल नहीं थे, फिर भी वह हमें उस समय से संबंधित चिंतन, सामाजिक मूल्यों, मानसिकताओं और विचारों की जानकारी प्रदान करते हैं। यह समग्र कहानी-संग्रह प्राचीन साहित्य का निर्माण करता है। होमर की कविताएं और उपाख्यान सुविख्यात हैं, परन्तु हम डेल्फी या अपोलो या अन्य देवताओं के ऑरेकल से जुड़ी कहानियों का उल्लेख भी कर सकते हैं।

ऐसा कहा जाता है कि विभिन्न नगर-राज्यों को एक साथ संगठित रखने में और एक आम सभ्यतागत लोकाचार स्थापित करने में इन काल्पनिक कथाओं और किंवदंतियों का योगदान था जिन्हें यूनानी सभ्यता के समस्त क्षेत्रों में अत्यंत पसंद किया जाता था। जैसा विद्वानों द्वारा बताया गया है कि इन काल्पनिक कथाओं और किंवदंतियों का अर्थ 'सिर्फ चीज़ों के काल्पनिक स्पष्टीकरण की तुलना से कहीं अधिक था। वह सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक परंपराओं के प्रभुत्व का समर्थन करती थीं'। और 'पुरातन युगीन यूनानियों ने लगातार प्राचीन मिथकों पर फिर से काम किया, उनका पुनःकथन, विषयवस्तु का समायोजन, और इस प्रकार उसकी अर्थपूर्ण व्याख्या की'...और 'इस संशोधन और पुनःकथन की प्रकिया में मिथक विश्व में तर्क के लिए एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में उभरे' (किश्लेन्सकी, और अन्य, 2008: 52)। पूर्व-भाग में हमने पैन्डोरा के बदलते चित्रण पर चर्चा की। प्रोमेथियस और अपोलो की कहानियों में भी समय के साथ परिवर्तन आया। देवताओं और मानव के बीच के संबंध को चित्रित करने में उपासना को स्वतंत्रता के साथ संयुक्त किया गया। भारतीय महाकालों की भांति मानव जीवन के घटनाचक्र को दर्शाते हुए देवताओं को मानव आकृति में प्रस्तुत किया गया। देवताओं से जुड़ी लगभग सारी कहानियों में उन्हीं घटनाओं का उल्लेख था जो मनुष्य के जीवन में भी हो सकती थीं। देवताओं को हमेशा दैवत्व पालन करते हुए ही नहीं बल्कि बुराई और प्रतिशोध का अनुगमन करते हुए भी दर्शाया गया है। प्रोमेथियस के विश्वासघात के लिए ज़ीअस उन्हें पैन्डोरा, प्रथम महिला, जिसे कहानी के सर्वाधिक प्राथमिक संस्करण में बुराई का प्रतीक दर्शाया गया है, को उपहार में देकर उनसे प्रतिशोध लेते हैं। इसको उपहार के रूप में स्वीकार कर मनुष्य ने खुद पर बुराई ली।

यूनानी मिथक मात्र देवताओं से ही जुड़े नहीं थे, बल्कि यह कहानियाँ शहरों और उनके आरम्भ; नदियों, पहाड़ों और धार्मिक स्थलों; त्योहारों और मौसमों; और स्पष्टतः विश्व के आरम्भ से भी जुड़ी थीं। उदाहरण के लिए, मनुष्य की स्थिति से जुड़ी कहानी यह हैः कि वह राक्षसों और देवताओं के बीच खड़े हैं क्योंकि प्रोमेथियस ने ज़ीअस के साथ विश्वासघात कर मनुष्य को अग्नि सौंपी। विभिन्न मौसम इसलिए अस्तित्व में हैं क्योंकि पर्सीफोन, ज़ीअस की बेटी, का हेडेस, मृतकों के देवता, ने अपहरण कर लिया था और इसलिए पर्सीफोन को हर साल के चार महीने हेडेस के अंधेरे राज्य में व्यतीत करने पड़ते थे, इत्यादि (इन कहानियों और मिथकों के संदर्भ के लिए किश्लेन्सकी, और अन्य, 2008: 52 देखें)।

बोध प्रश्न-1

1) क्या आप इस बात से सहमत हैं कि विभिन्न कालों में यूनानी सांस्कृतिक परम्पराओं में समय के साथ बदलाव आया और ऐसा कई प्रभावों के कारण हुआ ?

....

....

....

....

....

2) यूनानी धर्म के मुख्य पहलुओं पर चर्चा कीजिए। यूनानियों द्वारा पूजे जाने वाले कुछ महत्वपूर्ण देवताओं का भी उल्लेख कीजिये।

....

....

....

....

....

3) यूनानी समाज में मिथक और किंवदंतियों का क्या महत्व था ?

....

....

....

....

....

15.6 साहित्य

यूनानी साहित्य ने दो मुख्य रूप अपनाएः काव्य और नाट्य, जो शुरुआत में मौखिक थे और बाद में लिखित रूप में प्रचलित हुए। काव्य और नाट्य में समय के साथ, यूनानी सभ्यता के शुरुआती चरणों से पांचवीं और छठी शताब्दी के क्लासिकल ग्रीस काल तक, परिवर्तन आए। कला और साहित्य के सामाजिक इतिहासकार ऑर्नल्ड हॉसर ने विस्तार से इन घटनाओं का वर्णन किया है – सामूहिक मंत्र उच्चारण और आमंत्रण से व्यक्ति विशेष लेखक का और निर्माता के रूप में महत्वपूर्ण बनने तक का सफर। वह इस बात पर भी बल देते हैं कि व्यक्तिगत सृजन का उद्देश्य समुदाय की आवश्यकता थी, विशेषकर युद्ध और शहर के गौरव-गान के समय और मनोरंजन या सार्वभौमिक मूल्यों की शिक्षाप्रद अभिव्यक्ति के लिए।

प्राथमिक मंत्र, जैसा कि सभी आरंभिक समाजों में था, जादू, प्राकृतिक देवताओं के आह्वान से जुड़े सामूहिक अनुष्ठान से संबंधित लोकप्रिय गीत, युद्ध और काम संबंधी गीतों, ऑरेकल भविष्यवाणियों और प्रार्थनाओं के साथ जुड़े थे। लेकिन वीर युग की शुरुआत के साथ काव्य के सामाजिक प्रकार्य और कवि की सामाजिक स्थिति पूरी तरह से बदल गयी। व्यक्तियों के भाग्य के संबंध में विशिष्ट गीत थे, जबकि इनके लेखन का श्रेय अक्सर एक व्यक्ति को दिया जाता था, जो समय के साथ वास्तव में व्यक्तिगत बन गए जबकि इनका प्रदर्शन अभी भी सामूहिक था। *इलियाड* और *ओडिसी* जैसे महाकाव्यों में विभिन्न कलाकार विभिन्न पात्रों की भूमिका निभाते हैं। इन काव्यों का वातावरण कुलीनतंत्रीय और दरबार के साथ जुड़ा हुआ था। काव्य के मुख्य रूप महाकाव्य, तद्नुपरान्त संबोधगीत (odes) और जय गान (paeans) थे। वह धार्मिक मामलों से अधिक सांसारिक मामलों से संबंधित थे। क्लासिकल युग से वह समुदाय और नगर-राज्यों द्वारा अधिकृत होने लगे। लोक साहित्यिक अभिव्यक्ति और शिक्षित वर्ग अथवा विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग के काव्यों के बीच भिन्नता थी। कवि को 'बुद्धिजीवियों' के रूप में उच्च दर्जा प्राप्त था (हॉसर, 2003: 50)।

सबसे प्रख्यात कविताओं में होमर के दो महाकाव्य, *इलियाड* और *ओडिसी*, थे। यह निश्चित नहीं है कि होमर ही इनके एकमात्र लेखक थे या समय के साथ इनमें कुछ भागों को जोड़ा गया हो। कुछ समय तक यह मौखिक थे और भाटों और कलाकारों, जो उसका मंत्रोच्चारण

करते थे, द्वारा उनमें बदलाव किया जाता रहा, जब तक 750 बी सी ई में वह लिखित रूप में प्रचलित नहीं हुए। वे होमर के जीवनकाल, 'अंधकार युग' (1200-700 बी सी ई) जिसमें वह जीवित था, और बीते हुए समय को दर्शाते हैं। वह भूमध्यसागरीय क्षेत्र के आसपास के शहरों की महानता को स्मरण करते हैं, जैसे कांस्य युग में एथेंस और कोरिन्थ। हालांकि इसमें वर्णित जीवन और समाज का विवरण 'अंधकार युग' के साथ जुड़ा है। उनके नायक उसी युग के हैं।

इलियाड **ट्रॉय के युद्ध**, अधिक विशेष रूप से ट्रॉय की दस साल की घेराबंदी और यूनानी रानी हेलेन को बंधकों से बचाने के लिए की गई लड़ाई, की पृष्ठभूमि पर आधारित है। *ओडिसी* की कहानी ट्रॉय के पतन से शुरू होती है और अपने नायक, ओडीसियस, के जीवन में आये परिवर्तनों को दर्शाती है।

दोनों महाकाव्य, *इलियाड* और *ओडिसी,* न सिर्फ अपने समय के संदर्भ में बतायी गयी कहानियों की घटनाओं के बारे में बताते हैं और नैतिक मूल्यों और विभिन्न नायकों को वर्णित करते हैं, अपितु इन महाकाव्यों के लेखक मानव जीवन के कुछ सार्वभौमिक तत्वों को भी दर्शाते हैं। उदाहरण के लिए, मनुष्य प्रेम और पीड़ा की परिस्थितियों में क्या करते हैं, वह कैसे विपरीत परिस्थितियों में धीरज से काम लेते हैं, मृत्यु का सामना करने पर वह क्या करते हैं। संक्षेप में यह महाकाव्य 'मानव त्रासदी के मूलभूत' तत्वों से युक्त हैं। ये महाकाव्य समाजशास्त्रीय आंकड़े और वैश्विक मूल्यों के मिश्रण से युक्त हैं, जो यूनानी सांस्कृतिक परम्पराओं की विशिष्टता है। होमरिक उपाख्यान यूनानी मिथकों का हिस्सा बन गये जिन्होंने पूरी यूनानी दुनिया को एक साथ जोड़े रखा, और जिनका मंचन यूनानी क्लासिकल युग और हैलेनिक युग में किया जाता था। हेसिओड का काव्य किसानों और आम जीवन के साथ अधिक आत्मीयता दर्शाता है। साप्फो (लेस्बोस द्वीप से संबंद्ध, 630-570 बी सी ई), अपने संगीतमय काव्य के लिए जानी जाती थीं, जो वीणा के साथ गाये जाने के लिए लिखे जाते थे। पिंडार (थेब्स के एक प्रगीतकार, 518-438 बी सी ई) के चार अलग-अलग शहरों में आयोजित यूनानी त्योहारों पर कथित संबोधनगीत चार पुस्तकों में एकत्र थे। उदाहरण के लिए, 'ओलंपियन ओड 1' एक विजय-काव्य हो सकता है, जिसे संभवतः विजेता के परिवार के किसी सदस्य द्वारा अधिकृत किया गया हो और विजेता की घर वापसी के अवसर पर गाया और नृत्यांकन किया जाता हो। पुरातन युग (Archaic period) में सामूहिक से महाकाव्य और व्यक्तिगत रूप में परिवर्तन हुआ। इस प्रकार क्लासिकल ग्रीस में हमें एक उल्लेखनीय परिवर्तन देखने को मिलता है जब 'दोनों विषय-वस्तु और घटनाक्रम, जो तत्कालीन समुदाय के लिए उच्च नैतिक चिंताएं थीं, समस्त समुदाय के बन गये न की किसी व्यक्ति विशेष के', (फिनले, 1977: 97)। होमरिक कविताएं और ऊपर उल्लेखित अन्य कृतियां इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

काव्य और शुरुआती सामूहिक प्रदर्शनों के तत्वों ने यूनानी समाज में नाट्य-कला को जन्म दिया। यह नाटक सार्वजनिक त्योहारों पर, शहर के सामुदायिक केंद्रों में, खुले रंगमंच पर करीब 1,000 कलाकारों की भागीदारी और 12,000 या उससे अधिक दर्शकों के बीच प्रस्तुत किये जाते थे। प्रतियोगिताएं, न्यायपीठ की व्यवस्था (jury) और पुरस्कारों का आयोजन भी होता था जहां व्यक्तिगत नाटककार और विशिष्ट प्रदर्शन टीमें प्रसिद्व बन सकती थीं। महाकाव्य, काव्य, गद्य और गीतात्मक अन्तराल इन नाटकों में संयुक्त थे। इनमें अक्सर विशिष्ट प्रसिद्व ऐतिहासिक परिस्थिति का उल्लेख होता था जो ऐतिहासिक स्मृति का हिस्सा थी।

त्रासदी (tragedy) और हर्षप्रधान नाटक दो मुख्य तरह के चित्रण थे। त्रासदियां मनुष्य के शाश्वत नैतिक प्रश्नों, उनके भाग्य और दुविधाएं, अच्छा और बुरा, से संबंधित थीं। वह कैसे

विपरीत परिस्थितियों का सामना करते थे, और वह अपने व्यक्तित्व और नैतिकता के आधार पर इन सवालों का समाधान कैसे करते थे। हर्षप्रधान नाटक वर्तमान सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य, अक्सर समकालीन स्थितियों के साथ संबंधित थे जो व्यंग्य से भरे थे और महत्वपूर्ण लोगों का मज़ाक उड़ाते थे। हर्षप्रधान नाटक आलोचनात्मक थे, अक्सर तीक्ष्ण, जिनमें हास्य और एक विशेष प्रकार का आनंद संयुक्त था, जो त्रासदियों से भिन्न था। त्रासदियां शिक्षाप्रद होने के लिए बनी थीं जिनका मक़सद विचारप्रेरक और गहन चिंतन पैदा करना था।

पांचवीं शताब्दी के तीन मुख्य नाटककार एशिलस, सोफोक्लीज और यूरीपाइडिस थे जिन्होंने करीब तीन सौ नाटक लिखे जिनमें से कुल तैंतीस प्राप्त होते हैं (फिनले, 1977: 104)। हालांकि एथेंस प्रमुख केंद्र था, परन्तु इन नाटकों को हर जगह संरक्षण प्रदान किया गया और इन लेखकों के नाटकों का प्रदर्शन तीसरी शताब्दी तक जारी रहा। ऐरिस्टोफेन्स हर्षप्रधान नाटककारों में सबसे प्रख्यात थे। विद्वानों ने लोकतांत्रिक राजनीति और यूनानी नाट्यशाला में अन्वेषित विषयों के बीच एक कड़ी को दर्शाया है। सोफोक्लीज का *ओडिपस द किंग* आज शायद यूनानी नाटकों में सबसे प्रख्यात नाटक है।

15.7 विज्ञान

मिथकों पर फिर से कार्य और साहित्यिक महाकाव्यों के पुनःकथन ने समय के साथ, छठी शताब्दी तक, खोजबीन को अग्रसर किया। यह खोजबीन गैर-धार्मिक संदर्भ में ब्रह्मांड की उत्पत्ति और प्रकृति की जांच, ज्ञान के क्षेत्र में, विचारों के आदान-प्रदान और प्रवास और व्यापार के परिणामस्वरूप अन्य समाजों के साथ संपर्क के माध्यम से प्रोत्साहित हुई। पहला प्रयास पूर्वी यूनानी बस्ती, माइलीटस, में छठी शताब्दी बी सी ई के आसपास उल्लेखित है। अवलोकन और तर्कसंगत विचार विश्लेषण के उपकरण बने जिन्होंने चौंकाने वाली नई परिकल्पनाओं को जन्म दिया। जो पूरी तरह से वैज्ञानिक नहीं थीं लेकिन फिर भी वह धर्म और मिथकों के दायरे से परे थीं। ब्रह्मांड और उसके चारों ओर की दुनिया के लिए उनके द्वारा प्रतिपादित प्राकृतिक व्याख्या की वजह से वे विज्ञान शास्त्रियों या प्राकृतिक दार्शनिकों के रूप में जाने जाने लगे।

उदाहरण के लिए, थेल्स ने निष्कर्ष निकाला की जल ब्रह्मांड के निर्माण का मौलिक तत्व है। एनेग्ज़ीमेण्डर के मतानुसार जल पदार्थ है। हेराक्लीटस द्वारा स्पष्ट किया गया कि परिवर्तन अत्यावश्यक लक्षण था क्योंकि न तो जल और ना ही पदार्थ अपरिवर्तित रह सकते थे। उसके बाद उन्होंने परिवर्तन और स्थिरता के बीच संबंधों का अनुमान लगाया और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि ब्रह्मांड के कार्य में कुछ व्यवस्था और तर्क होना चाहिए, भले ही वे हमें अभी तक पता नहीं चल पाया है। डेमोक्रिटस (470-400 बी सी ई) ने अपने निष्कर्ष को परीक्षण पर आधारित नहीं किया और प्राकृतिक दार्शनिकों से प्रेरणा लेकर यह तर्क दिया कि ब्रह्मांड का कोई मूल तत्व है जिसको विभाजित नहीं किया जा सकता और जो जीवन सहित विश्व का मूलभूत है। यह मूल तत्व अपने परिवर्तन और विभिन्न क्रम-परिवर्तन और संयोजनों में भी हमारे आसपास की विविधता की व्याख्या करता हैः इस मूल तत्व को उन्होंने परमाणु कहा।

चार बातें यहाँ महत्वपूर्ण हैंः i) दुनिया के संदर्भ में जवाबों की खोज वास्तविक मौजूदा दुनिया के ढांचे के भीतर की जा रही थी; ii) पूछे जाने वाले प्रश्न सही थे, भले ही उनके जवाब हमेशा सही न रहें हों; iii) यह स्वीकृत था कि किसी भी समय में ज्ञान की सीमा तय नहीं थी और अध्ययन की जा रही घटना का पूरा ज्ञान उस विशेष समय में प्राप्त नहीं था, नए साक्ष्य के आधार पर हमेशा अधिक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता था; और iv) पाये गये जवाब विशिष्ट खानों या भागों में विभाजित नहीं थे, एक घटना के बारे में ज्ञान अन्य घटनाओं के अग्रिम ज्ञान का आधार बन सकता था। इस समय तक, अर्थात छठी शताब्दी बी सी ई के बाद से, धार्मिक

और पौराणिक व्याख्याओं को चुनौती देना संभव हो गया था। संभवतः ऐसा सभी वर्गों के लोगों के बीच प्रचलित नहीं था, हालांकि शिक्षित वर्गों के बीच यह स्वीकार्य किया गया कि नए विचारों को समाज में जगह मिलनी चाहिए।

जिज्ञासा और प्राकृतिक दुनिया के अवलोकन की भावना ने 'खगोल विज्ञान, रेखागणित और चिकित्सा के क्षेत्रों में विशाल प्रगति' को अग्रसर किया, फिर चाहे पृथ्वी केंद्रित ब्रह्मांड के बारे में अनुमान, हूमोरल के रोग का सिद्धांत और अरस्तु का गिरती हुई वस्तुओं का सिद्धांत अंत में गलत साबित हुए।

हूमोरल के रोग का सिद्धांत

हूमोरल के रोग का सिद्धांत, जिसे चार परिहास के सिद्धांत के रूप में भी जाना जाता है, मानव शरीर के कामकाज का एक मॉडल था। वह हिप्पोक्रेट्स (460-370 बी सी ई) और गैलन (129-216 बी सी ई) के उपदेशों के लिए केंद्र बिंदु था। चार मनोवृत्तियों या व्यक्तिगत मनोवैज्ञानिक स्वभाव में असंतुलन – विषादपूर्ण, रक्तपात पूर्ण, प्रकृति या क्रोधी और श्लेष्म – के परिणामस्वरूप रोग हो सकते थे। यथा, इस सिद्धांत के अनुसार रोगों का इलाज संतुलन बहाल करने में निहित था।

अरस्तु का सिद्धांत

यूनानी दार्शनिक अरस्तु (384-322 बी सी ई) के गिरती हुई वस्तुओं के सिद्धांत के अनुसार, हल्की वस्तुओं की अपेक्षा भारी वस्तुएं तेज़ी से गिरती हैं। उसका मानना था कि एक गिरती हुई वस्तु की एक निश्चित 'प्राकृतिक गिरने की गति' होती है जो उस वस्तु के भार के समानुपाती होती है।

पाइथागोरस (570-495 बी सी ई), प्रारंभिक यूनानी आयोनियन गणितज्ञ, को एक महत्वपूर्ण गुणोत्तर थ्योरम खोजने का साभार प्राप्त है, जो उनके नाम से जानी जाती है – पाइथागोरस प्रमेय (थ्योरम)। इस थ्योरम के हिसाब से एक समकोण त्रिभुज की दो भुजाओं की लम्बाइयों के वर्गों का योग कर्ण की लम्बाई के वर्ग के बराबर होता है। हालांकि इस थ्योरम की जानकारी में अन्य गणितज्ञों, विशेषकर मिस्र और मेसोपोटामिया के गणितज्ञों का योगदान था, पर पाइथागोरस का गणित के क्षेत्र में बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा। सामान्य तौर पर भी, उनके प्रभाव से विज्ञान के क्षेत्र में, और यहां तक कि मूर्तिकला और वास्तुकला के क्षेत्रों में भी, विकास हुआ। विज्ञान के क्षेत्र में मिथकों और धर्म में वर्णित आस्थाओं पर उन्होंने प्रश्न चिन्ह लगाया और मूर्तिकला और वास्तुकला के क्षेत्र में भावना और आकार और अनुपात की सापेक्षता के माध्यम से अपनी भूमिका निभाई। यूनानियों ने शून्य की धारणा में भी अपना योगदान दिया। आर्किमिडीज़ (287-212 बी सी ई) अपनी एक भौतिक विज्ञान के नियम की खोज के लिए जाने जाते हैं जो कि उनके नाम से – आर्किमिडीज़ सिद्धांत के रूप में – प्रख्यात है। यूक्लिड (323-283 बी सी ई) एक और जाना माना नाम है जिनका संकलन कई शताब्दियों तक रेखागणित के अध्ययन का आधार बना।

एलेक्जेंड्रा में एक अद्भुत पुस्तकालय था जिसमें किताबों और हस्तलेखों के विशाल संग्रह मौजूद थे। वह उस समय ज्ञान का भंडार था जहां भूमध्य क्षेत्र से ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में रुचि रखने वाले विद्वान ज्ञान प्राप्ति के लिए आया करते थे।

प्राचीन यूनानी अतीत के अपने लेखकों के संरक्षण में तत्पर थे। पहली शताब्दी बी सी ई में एलेक्जेंड्रा में स्थित महान् पुस्तकालय ने लगभग 500,000 पुस्तकों को लोगों तक पहुंचाया। इस पुस्तकालय को एक अन्य बड़ी अनुसंधान संस्था, माओसेयान, का हिस्सा माना जाता है जो म्यूसिस – कला की नौ देवियों – को समर्पित था। यह पुस्तकालय या उसके संग्रह का एक भाग गलती से जूलियस सीज़र द्वारा 48 बी सी ई में गृह युद्ध के दौरान जला दिया गया था और ऐसा माना जाता है कि उसके बाद उसे फिर से बनाया गया था। रोमन काल के दौरान इसका पतन हो गया।

15.8 चिकित्सा

चिकित्सा और शारीरिक ज्ञान की तुलना अगर हम आधुनिक मानकों के साथ न करें तो, अपने समय में प्रचलित मानकों के साथ तुलना करने पर हम पाते हैं कि यूनानी चिकित्सा कहीं आगे थी। यूनानियों ने तीसरी शताब्दी बी सी ई में एक समय के लिए मृत जानवरों के शरीरों के साथ प्रयोग किया, जिससे उन्हें मानव शरीर के आंतरिक अंगों, मांसपेशियों और हड्डियों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त हुई।

असल में, यह अधिकांशतः ज्ञात नहीं है कि शुरू में अरस्तु (384-322 बी सी ई) जंतु-विज्ञान के शोध में गहराई से लीन थे। उनके शुरुआती लेखन में से कुछ जो बचे हैं वह समुद्री जीवन सहित करीब 540 जंतु-विज्ञानिक जातियों के बारे में चर्चा करते हैं। अरस्तु के मुर्गी के भ्रूण और अंडों, समुद्री जानवरों की पाचन प्रणाली, मधुमक्खियों की आंखों की संरचना, इत्यादि से प्रयोग और अनुसंधान ने 'जीव-विज्ञान के अध्ययन को ठोस अनुभवजन्य नींव' प्रदान की। हेरोफाइलस (330-260 बी सी ई) ने मस्तिष्क, तंत्रिका तंत्र, मानव नेत्र, अग्नाशय (पेनक्रियाज) और डिम्बवाही नली (फैलोपियन ट्यूब) के विषय में जाँच की, और धमनियों और उनकी ह्रदय तक खून ले जाने वाली वाहिकाओं के रूप में भूमिका को खोजने का साभार भी उन्हें ही जाता है। इरेसिस्ट्रेटस (330-255 बी सी ई) ने वाल्व और ह्रदय के कार्य में उनकी भूमिका का वर्णन किया। इसमें से अधिकतर जानकारी समय की कसौटी पर खरी उतरी और तब तक मान्य रही जब तक अरब वैज्ञानिकों और दार्शनिकों ने वैज्ञानिक ज्ञान के क्षेत्र की प्रगति में अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया (नन्दा, 2016: 115-117)।

इन खोजों ने चिकित्सा के क्षेत्र में प्रगति में मदद कीः विभिन्न रोगों और उनके इलाज के कारणों के बारे में टिप्पणियां और उनके विश्लेषण ने सहायता की। चिकित्सा और हीलिंग के कौशल आंशिक रूप से जादू-टोने से मुक्त किए गए। हिप्पोक्रेट्स सबसे प्रख्यात नाम है जिन्हें विभिन्न रोगों के लक्षणों के आधार पर रोगों के प्राकृतिक कारणों की खोज का श्रेय जाता है। चीन, भारत, रोम और साथ ही प्रमुख रूप से ग्रीस के प्राचीन विद्वानों का यह मानना था कि मानव शरीर पृथ्वी के समान तत्वों – हवा, पानी, मृदा और अग्नि – से मिलकर बना है। इन तत्वों में असंतुलन के कारण ही रोग उत्पन्न होते हैं।

हिप्पोक्रेट्स पीले पित्त, काले पित्त, कफ और खून – को चार बलगमों (humours) के नाम से संबोधित करता था और उसका यह दावा था कि स्वास्थ्य इन चार बलगमों के बीच संतुलन है। हिप्पोक्रेट्स ने काफी गैर-यूनानी स्रोतों की पढ़ाई की और अनेक ग्रंथ लिखे जिन्हें बाद में संकलित किया गया। हालांकि यह स्पष्ट नहीं है कि इन ग्रंथों में दूसरों के विचार और कार्य शामिल थे या नहीं। हालांकि इन विचारों को आधुनिक चिकित्सा के क्षेत्र में एक छोटा सा स्थान प्राप्त है परन्तु महत्वपूर्ण बात यह बदलाव था कि रोगों के प्राकृतिक कारणों और दवा से उनके इलाज की तलाश की जा रही थी न कि जादू-टोने और धार्मिक विश्वास से। हालांकि दोनों विचारधारायें सदियों तक साथ-साथ जारी रहीं और लोग आज भी दोनों में विश्वास रखते हैं।

15.9 दर्शनशास्त्र

दर्शनशास्त्र या तत्वज्ञान के क्षेत्र में प्रगति और मानव अस्तित्व के साथ व्यस्तता ब्रह्यांड के अध्ययन की उपशाखा थी। इस लंबे युग के दौरान कई विचारक उभरे जिनमें सबसे प्रख्यात 400 बी सी ई के आसपास सुकरात से शुरू होकर, प्लेटो और फिर अरस्तु थे। मानव अस्तित्व और ब्रह्यांड के बारे में सोच में बदलाव सुकरात से शुरू हुई, जो प्लेटो के शिक्षक थे। ऐसा कहा जाता है कि सुकरात द्वारा स्थापित तर्क और वितर्क के स्तर ने यूनानी दर्शनशास्त्र में इतना बदलाव किया कि सुकरात से पहले के यूनानी दर्शन को पूर्व-सुकरात युग के रूप में

संबोधित किया जाने लगा। बेशक सुकरात की शुरुआत किसी शून्य में नहीं हुई थी। वह समस्त क्षेत्र में विस्तारित विचारों के प्रवाह, जिसके साथ यूनानी दुनिया संपर्क में आई, को ही आगे बढ़ा रहे थे।

प्लेटो (427-347 बी सी ई) के विचार जिसे दर्शनशास्त्र की आदर्शवादी धारा की प्रेरणा माना जाता है, जो विचारों तथा विश्वासों को महत्व देते थे और मानते थे कि भौतिक चीजों का अस्तित्व हमारी उन चीजों के प्रति धारणाओं में निहित होता है। उदाहरण के लिए, अगर हम किसी पदार्थ को पेड़ के निश्चित रूप में अवधारित कर लेते हैं तो हम उस पदार्थ को पेड़ का अस्तित्व प्रदान कर देते हैं। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो वास्तविकता को केवल अवलोकन और विचार से ही समझा जा सकता है। जैसा कि एक लेखक ने कहा है, 'जिस तरह से प्लेटो ने बुद्धि और पदार्थ के बीच रिश्ते पर प्रश्न उठाया, यह उनका दर्शनशास्त्र में स्थायी योगदान था' (फारुकी, 2001: 189)। प्लेटो, एथेंस में अपने द्वारा स्थापित, विद्यापीठ में शिक्षक थे। प्लेटो शिक्षा के महान् अभिवक्ता थे जिन्होंने समाज में 'सही ढंग से' शिक्षित लोगों की प्राथमिक भूमिका की व्याख्या की।

अरस्तु, प्लेटो के शिष्य थे, वे बुद्धि और पदार्थ के बीच रिश्ते को पूरी तरह से विपरीत ढंग से समझते थे। इस अवधारणा को दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में भौतिकवादी दृष्टिकोण या परिप्रेक्ष्य के नाम से जाना जाता है। जैसा कि हमने पहले भी कहा था कि अरस्तु का शुरुआती काम विज्ञान के क्षेत्र में था और प्रयोग और वर्गीकरण से संबंधित था। उनका मानना था कि पदार्थ हमारी अवधारणा से परे है और हम उसे केवल अपने अनुभव से समझ सकते हैं। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो, हमारे विचार और भौतिक विश्व की समझ पहले से अस्तित्व में मौजूद चीजों के अध्ययन से विकसित हुई।

इन सभी विचारकों और दार्शनिकों में आम बात यह थी कि वे अपने समय की सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों पर आधारित थे। सुकरात को उनके विचारों और उनके सवालों की प्रकृति की वजह से मृत्यु दंड दिया गया था क्योंकि वह बिना सवाल उठाये, वार्तालाप और भिन्न मतों के माध्यम से, चीज़ें स्वीकार नहीं करते थे। उनका तरीका विस्फोटक माना जाता थाः हालांकि वह एथेंस की मौजूदा राजनीतिक परिस्थितियों के प्रशंसक थे। प्लेटो ने अपना प्रमुख कार्य *यूटोपिया* (Utopia), जिसका संबंध एक आदर्श समाज के साथ था, लिखा परन्तु उनके गणतंत्र की कल्पना में आम लोगों की कोई भूमिका नहीं थी और वह पूरी तरह से निरंकुश था जो केवल उन्हीं लोगों द्वारा शासित किया जा सकता था, जो शिक्षित थे। अरस्तु ने एथेंस सहित अपने समय के बहुत से संविधानों का विश्लेषण किया, जिसकी लोकतंत्र की कई विशेषताओं को मान्यता देने के लिए प्रशंसा की जाती है। परन्तु उन्होंने एथेंस के संविधान की सीमाओं और उसका कुछ विशिष्ट लोगों के लिए ही सुरक्षित होने का अनुभव नहीं किया, जो उस संविधान की एक महत्वपूर्ण विशेषता थी।

उन विद्वानों में से किसी ने भी, एक संस्था के रूप में, गुलामी पर सवाल नहीं उठाये। वास्तव में उन्होंने गुलामी का समर्थन किया यह मानते हुए कि गुलाम निम्न प्राणी थे जिनकी भूमिका विशेषाधिकार युक्त और उनकी श्रेणी से श्रेष्ठ लोगों की सेवा और गुलामी करना था जो कि विद्वान थे। महत्वपूर्ण यह है कि, जैसा कि विश्व के कई हिस्सों में, इन विचारकों और दार्शनिकों ने गुण, अच्छाई, नैतिकता और न्याय के गठन पर सवाल उठाये और उन्हें मानव अस्तित्व और राज्य व्यवस्था, जिसका वे हिस्सा थे, के संदर्भ में परिभाषित करने का प्रयास किया।

15.10 इतिहास और इतिहासलेखन

यह समझना भ्रम होगा कि प्राचीन समय के लोगों को अपने अतीत की कोई अवधारणा नहीं थी या उनका अपना समाज कैसे अस्तित्व में आया या जीवन और ब्रह्मांड की प्राकृतिक

योजना में उनका अपना क्या स्थान था इससे उनका कोई संबंध नहीं था। इतिहासकारों ने जैसा विभिन्न समाजों, चीन, भारत और प्राचीन ग्रीस सहित, के लिए बताया है, में इस तरह की व्यस्तताओं की प्रचुरता थी। इन शुरुआती कोशिशों को 'इतिहास' और उनकी अभिव्यक्ति को इतिहासलेखन नहीं कहा जा सकता। लेकिन इस तरह की अभिव्यक्ति हमें उस समय के समाज और उसमें आए परिवर्तनों के बारे में बहुत कुछ व्यक्त करती है। जैसा कि कई विद्वानों ने उल्लेख किया है कि प्राचीन यूनानी अपने 'पूर्वजों' के प्रति काफी जागरुक और ऋणी थे। उनका मानना था कि यूनानी सभ्यता के निर्माण में समस्त पूर्ववर्ती प्रभावों का योगदान था।

यूनानी विचारकों ने, जिनमें इतिहासकार भी थे, अतीत का चिंतन किया। उनके प्रकृति, ब्रह्मांड और मावन जाति के नैतिक आयामों पर विशिष्ट मत थे, जबकि उन्होंने वर्तमान के बारे में भी चिंताओं को व्यक्त किया। इतिहास, दर्शनशास्त्र और आज हम जिन्हें समाजशास्त्र और मावनविज्ञान के तत्व कहते हैं, वास्तव में पूरी नैतिक दुनिया के बीच शायद ही कोई विभाजन रेखा थी। उस समय, विशेषज्ञता और बहु-अनुशासनिक दृष्टिकोण के अस्तित्व में आने से कहीं पहले, ज्ञान के क्षेत्र में गैर-पृथक्करण था।

जिसे हम इतिहासलेखन के तत्वों के रूप में जानते हैं उनकी शुरुआत का श्रेय यूनानियों को जाता है। इतिहास शब्द भी स्वतः यूनानी शब्द *इस्टोरिया* से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है खोज और हेरोडोटस 'इतिहासलेखन के पितामह' के नाम से प्रसिद्ध हैं। हम यहां हेरोडोटस और थ्यूसीडाईडस के साहित्य पर चर्चा करेंगे, जिन्होंने यूनानी में लिखा और जो पाँचवी शताब्दी बी सी ई के क्लासिकल ग्रीस सभ्यता के काल में थे। हेरोडोटस और थ्यूसीडाईडस के ग्रंथों में हम उस समय के सामाजिक और राजनीतिक संदर्भ के तत्वों को पहचान सकते हैं, हालांकि किसी भी सामान्यीकरण से सावधान रहना चाहिए क्योंकि, जैसा कि किसी भी सोच और महान् हस्तियों के संदर्भ में होता है, वे विचारक एक निश्चित मौलिकता का प्रदर्शन करते थे। वे अपने काल के मुख्य विचारों का प्रतिनिधित्व करने के साथ-साथ वे स्वयं के समय से कहीं आगे की बातें करते थे।

हेरोडोटस और थ्यूसीडाईडस

हेरोडोटस को विश्व का पहला इतिहासकार माना जाता है। दूसरी ओर, थ्यूसीडाईडस को पहला वैज्ञानिक इतिहास लिखने का श्रेय दिया जाता है। उन दोनों का इतिहासलेखन के प्रति शैली, व्याख्या और उद्देश्य के संदर्भ में दृष्टिकोण भिन्न था।

हेरोडोटस (484-425 बी सी ई) की रचनाः *हिस्ट्रीज़*

थ्यूसीडाईडस (460-400 बी सी ई) की रचनाः *हिस्ट्री ऑफ द पेलापोनेशियन वॉर*

लेकिन फिर भी जब हम इन दो इतिहासकारों की कृतियों को देखते हैं तो हमें उनमें इतिहासलेखन के कुछ स्वीकृत आवश्यक तत्व मौजूद दिखाई देते हैं। उदाहरण के लिए, यूनानी इतिहासकारों के ग्रंथों में स्रोतों के महत्व को मान्यता दी गई थी। उन्होंने चश्मदीद गवाहों का वर्णन, साक्षात्कार, लिखित स्रोतों की एक श्रृंखला के अतिरिक्त परंपराओं, धार्मिक संस्थाओं और समकालीन ग्रंथों से प्राप्त जानकारी का वर्णन प्रस्तुत किया। यथा हेरोडोटस ईरानी राजा साइरस के बारे में लिखते समय कहते हैं कि, 'और इसके साथ ही मैं उन ईरानी विद्वानों का अनुसरण करुंगा जिनका लक्ष्य साइरस के कारनामों का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन करना नहीं अपितु उनका लक्ष्य साधारण सच का विवरण करना था। मेरे विवरण के अतिरिक्त साइरस की कहानी के विवरण के मुझे तीन और भिन्न व्याख्यायें मालूम हैं जो मेरे वर्णन में हैं' (किताब I, भाग 95)।

थ्यूसीडाईडस कहता है, 'जिस तरह से अधिकांश लोग परंपराओं के साथ संव्यवहार करते हैं, यहां तक कि अपने देश की परंपराओं के साथ, उसका उद्देश्य उन सब को बिना किसी समीक्षा के जिस रूप में वे वितरित की जाती हैं, उन्हें समान रूप से ग्रहण करना है...'।

इस प्रकार, जैसा कि हम देख सकते हैं, यूनानी इतिहासकारों के ग्रंथों में स्रोतों में शामिल व्यक्तिपरक तत्व की मान्यता, पक्षपात की संभावना की आशंका, सही जानकारी को खोजने का महत्व और स्रोतों को जाँचकर निकालने का तरीका मौजूद था।

स्पष्टतः इतिहासकारों ने विशेषाधिकार प्राप्त, कुलीन, साक्षर पाठकों के लिए लिखा। लेकिन उन्होंने अपने लेखन की शैली और प्रारूप को कवियों या नाटककारों से भिन्न करने की कोशिश की। वे अपने कथन में उस समय के निर्णायक घटनाक्रम को प्रस्तुत करने और उन्हें विशिष्ट स्थान और समय में निर्धारित करने का प्रयत्न करते हैं। हालांकि, इन निर्णायक घटनाओं के कारण वे पता नहीं लगा पाये थे और अक्सर इन घटनाओं के लिए देवताओं के हस्तक्षेप को जिम्मेदार ठहराया जाता था। इन घटनाओं को, नैतिक रूप से बुराई का दर्जा न देकर, सही और गलत के बीच संघर्ष के रूप में देखा जाता था। भाग्य, दैवीय कोप और किस्मत की धारणा को यूनानी समाज में स्वीकृति प्राप्त थी और डेल्फी की आकाशवाणी की पवित्रता पर कोई प्रश्न नहीं उठाया गया था। परन्तु मानव माध्यम को भी एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में देखा जाता था। इतिहासकारों द्वारा शहरों के महत्व के पतन के भौतिकवादी कारकों को नज़रअन्दाज़ किया गया। उदाहरण के लिए, उनके द्वारा एथेंस और स्पार्टा के दृष्टांत में संघर्ष को भौतिक कारकों से और वर्चस्व के लिए उत्पन्न होता देखा गया। और ऐथिनियन साम्राज्य के विजय अभियानों के विश्लेषण को भी इसी दृष्टि से भौतिक कारकों के संदर्भ में देखा गया।

डेल्फी की भविष्यवाणी

यूनानी किंवदंतियों के अनुसार, डेल्फी भगवान अपोलो की पवित्रता से संबंधित एक महत्वपूर्ण धार्मिक स्थल था। डेल्फी की भविष्यवाणी (oracle; पुजारिन) अपोलो के लिए बात करती थी और उन्हें ज़रुरी प्रश्नों पर सलाह दिया करती थी। इस आकाशवाणी कि वजह से डेल्फी एक महत्वपूर्ण नगर-राज्य के रूप में उभरा (ज़्यादा जानकारी के लिए, शैक्षणिक वीडियो देखें)।

उनकी चिंताओं का केंद्र और रुचि के विषय सीमित थे। लेकिन यह आधुनिक इतिहासलेखन के युग में भी देखा जा सकता है। यूनानी इतिहासकार यादों को बनाए रखना और उन्हें भविष्य के लिए रिकॉर्ड करना चाहते थे, विशेषरूप से उन्हें जिन्हें वह शानदार समझते थे, जैसे अपने समय या उससे पहले की लड़ाई और युद्व का वर्णन। उदाहरण के लिए, हेरोडोटस (484-425 बी सी ई) का मुख्य लेखन यूनानियों की उत्पत्ति, और यूनानियों और ईरानियों के बीच संघर्ष और युद्व की घटनाओं का विवरण था। यह लेखन मानव विकल्पों, सोच-समझ कर की गई कारवाई और सामाजिक बाधाओं को ध्यान में रखते हुए लिखा गया। हेरोडोटस ने महत्वपूर्ण शहरों का व्यापक रूप से दौरा किया, कहानियां और जानकारियां एकत्र कीं और सक्षम रूप से 'छठी शताब्दी बी सी ई के अंत में सभ्य दुनिया का महान् चित्रण प्रस्तुत किया। हेरोडोटस के वर्णन में ईरानी साम्राज्य से लेकर महान् पिरामिडों के निर्माण तक के विवरण शामिल हैं... धीरे-धीरे कहानी का गठन यूनानी और पूर्व की ओजस्वी सभ्यताओं के बीच टकराव को प्रस्तुत करता है (किश्लेन्सकी, और अन्य, 2008: 79)। इसके अतिरिक्त उन्होंने विभिन्न कहानियों और किंवदंतियों को पुनः चुना और उन पर यह बताते हुए टिप्पणी की कि उन्होंने उन कहानियों और किंवदंतियों को क्यों चुना। उन्होंने यूनानी और ईरानियों के बीच संघर्ष का विवरण प्रस्तुत किया जिसमें यूनानियों और ईरानियों दोनों की उपलब्धियां और महानता शामिल थीं। उन्होंने इस युद्व को सभ्यता और बर्बरता के बीच एक महान् लड़ाई के रूप में देखा जिसका केंद्र शिकायतों और प्रतिकार की इच्छाओं पर आधारित था। हेरोडोटस द्वारा मेसोपोटामिया में कृषि और ईरानियों के जीवन का वर्णन स्वयं अवलोकन पर आधारित था और काफी विस्तृत था।

थ्यूसीडाईडस (460-400 बी सी ई) के अध्ययन का विषय **पेलापोनेशियाई युद्ध** था। युद्ध

के आरंभ में एक ऐथेनियन सेनापति के रूप में उनका वर्णन कहीं ज़्यादा स्वयं अवलोकन पर आधारित था न कि उपलब्ध लेखन पर। उनका वर्णन मुख्य रूप से नगर-राज्यों की कार्यप्रणाली के मुद्दों और राजनीतिक शक्ति के प्रश्नों से संबंधित था, जिसे वह शामिल राज्यों के तर्कसंगत स्व-हितों से उत्पन्न होता देखते थे। वह मानव समाज की क्रियाशीलता के बारे में लिखना चाहते थे जिसमें राज्यों के उत्थान और पतन का कारण नैतिकता की वृद्धि और पतन से जुड़ा दर्शाया गया। फिर भी, उनके वर्णन में परिवर्तन, विकास और सत्ता की राजनीति मानव माध्यम पर आधारित थी।

इस प्रकार, इन दो प्रमुख यूनानी इतिहासकारों में हमें एक बौद्धिक प्रयास देखने को मिलता है जो दर्शनविज्ञान और विज्ञान के समानांतर है: प्राचीन परंपराओं और धारणाओं के स्रोतों के यथातथ्य लेकिन पर्याप्त रूप से उनसे बाहर निकलते हुए चिह्नित परिवर्तन को स्थान प्रदान करना जिसे किसी भी इतिहासलेखन के इतिहास में मान्यता प्राप्त है।

हालांकि हम चाहते हैं कि आप याद रखें कि ऐसी घटनाएं केवल यूनानी समाज तक ही सीमित नहीं थीं।

बोध प्रश्न-2

1) क्लासिकल ग्रीस में साहित्य के मुख्य रूप क्या थे ? क्लासिकल ग्रीस की कविता और रंगमंच की प्रकृति का वर्णन करते हुए कुछ प्रभावशाली लेखकों के नाम बताइये।

....

....

....

....

....

2) यूनानी प्राकृतिक दार्शनिकों का ब्रह्मांड की जानकारी में क्या योगदान था ?

....

....

....

....

....

3) यूनानी मानव शरीर रचना विज्ञान के मुख्य पहलुओं को रेखांकित कीजिये।

....

....

....

....

....

4) चिकित्सा के विकास में हेरोडोटस का क्या योगदान था ?

....

....

....

....

....

5) मस्तिष्क और भौतिक द्रव्य के बीच के रिश्ते को समझने में प्लेटो और अरस्तु में क्या विशेष मतभेद थे ?

....

....

....

....

....

....

6) यूनानी इतिहासलेखन में थ्यूसीडाईडस के योगदान पर चर्चा कीजिये।

....

....

....

....

....

....

15.11 कला, वास्तुकला और मूर्तिकलाः सामूहिक से व्यक्तिगत तक

दृश्य-कला, वास्तुकला और मूर्तिकला भी समुदाय के लिए सामूहिक से व्यक्तिगत रूप तक और व्यक्तिगत उत्पादन से समुदाय के उपयोग तक की यात्रा दर्शाती हैं। दृश्य-कला को उपयोग की वस्तुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता था और सार्वजनिक समारोहों में वह धर्म के साथ जुड़ी हुई थी। दृश्य-कला जिन कार्यों में प्रयोग की जाती थी वे हमें उनसे कहीं ज़्यादा जानकारी प्रदान करती हैं। निश्चित तौर पर, पिछली इकाई में उल्लिखित (ज़्यादा जानकारी के लिए इस पाठ्यक्रम की **इकाई-14** का **उप-भाग 14.5.2** देखें) महल परिसरों में सबसे पहले हमें इमारत बनाने की तकनीकों और मापदंडों के बारे में जानकारी मिलती हैः स्थितिअनुसार तांबे या लोहे को गलाने, प्रौद्योगिकी और रंगों, आरंभिक काल से सिकंदर के विजय अभियान के बाद हेलिनिस्टिक युग और यूनानी प्रभाव के तहत ग्रीस के अलावा अन्य क्षेत्रों में प्रसारित प्रचलित विचारों और सामाजिक जीवन आदि के बारे में यह परिसर बतलाते हैं। महल परिसरों की दीवारों पर बने फ्रेस्को (भित्ति-चित्र) दैनिक जीवन और संस्कृति को दर्शाते हैं। कांस्य युग के मिनोआई फ्रेस्को चित्रों में हमें कक्षों में होने वाले अभ्यास, अमीर अभिजात वर्ग द्वारा महिलाओं को जैतून के बगीचों में नृत्य करता, या महिलाओं द्वारा खेलकूद का पर्यवेक्षण करते हुए देखने को मिलता है।

चित्र 15.8 (a)
साभारः विकीपीडिया
स्रोतः http://www.oldest.org/artliterature/paintings/

चित्र 15.8 (b)
साभारः केवोराईट
स्रोतः https://en.wikipedia.org/wiki/File:Knossos_fresco_women.jpg

मिनोअन फ्रेस्को चित्र

माइसीनियन युग में चीनी मिट्टी के बर्तनों पर मनुष्यों और पशुओं का चित्रण किया गया था, जिसने अंधकार युग में ज्यामितीय आकृति युक्त साँचों का मार्ग प्रशस्त किया, जो समय के साथ अधिक जटिल और सजावटी होते गए। क्लासिकल ग्रीस के दौरान मिट्टी के बर्तन और भी सजावटी बन गये, और किसानों द्वारा जैतून की कटाई का दृश्य चित्रित किया गया। एक कोरिंथियन फूलदान पर लड़ाई में चढ़ाई करते हुए हॉपलाइट्स (यूनानी नागरिक सशस्त्र सैनिक) का चित्रण किया गया है। बाद के एक अन्य कोरिंथियन फूलदान पर डेल्फी की पुजारिन और याचिकाकर्ता को अपने प्रश्न के उत्तर प्राप्त करते हुए चित्रित किया गया। निकटपूर्व के साथ संपर्क के बाद चित्रों में अपरिचित जानवरों को शामिल करने की शुरुआत हुई और आठवीं सदी तक यह चित्र यूनानी मिथकों और किंवदंतियों को दर्शाने लगे। जैसा कि अनेक विद्वानों ने बताया है कि छठी सदी से उन पर हस्ताक्षर किए जाने लगे, जो चित्रित किए गए नायकों के साथ व्यक्तिगत कलाकारों, कुम्हारों, चित्रकारों के महत्व तथा प्रतिष्ठा को दर्शाता है। क्लासिकल ग्रीस के प्रसिद्ध मृदभांडों में पकी हुई मिट्टी (burnt clay) के बर्तनों और फूलदानों का प्रारंभ हुआ, जिन पर आकृतियां और दृश्य अंकित किए गए थे जिन्हें बारीकी से उकेरा और काले रंग से भरा जाता था।

चित्र 15.9 : मिनोआई मिट्टी के बर्तन
साभारः Zde
स्रोतः https://en.wikipedia.org/wiki/File:Minoan_pottery,_Neopalatial,_Mameloukou_Trypa_cave,_AM_Chania,076133.jpg

मूर्तिकला में भी समान रूप से अलग-अलग कलाकारों, मानव शरीर और पुरुष देवताओं को उजागर किया गया। ज्यामिति में उन्नति ने मूर्तियों को सानुपातिक और त्रि-आयामी पहलू प्रदान किया। बाद में मूर्तिकला में कहानियाँ बताते हुए दृश्य शामिल हुए। इस तरह से पारदर्शी कपड़ों का चित्रण किया गया कि वे शारीरिक बनावट को नहीं छिपाता था, यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि थी जिसने त्रि-आयामी प्रभाव का सूत्रपात किया।

ऐस्क्लेपियस की प्रतिमा (यूनानी मिथकों में वर्णित चिकित्सा का देवता), एपीडॉरस थिऐटर म्यूज़ियम
साभारः मिशेल एफ मेहनर्ट
स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Asklepios_-_Epidauros.jpg

खीनस डि माइलो, लूव्र म्यूज़ियम
साभारः लिविओएन्ड्रौनिको 2013
स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Front_views_of_the_Venus_de_Milo.jpg

मेनान्दर की प्रतिमा (यूनानी नाट्यकार), डायोनीसोस की नाट्यशाला, एथेंस, यूनान
साभारः जेबूलोन
स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Statue_Menander_Dionysus_Theatre_Athens_Greece.jpg

चित्र 15.10 : यूनानी मूर्तिकला

सामान्य रूप से, विशाल मंदिर भक्तों के लिए प्रार्थना करने के बजाय उनकी भव्यता की सराहना करने के लिए बने थे। अनुष्ठान बाहर सभाओं में मनाये जाते थे, जहां त्योहारों के साथ जुड़ी घटनाएं और समारोह आयोजित किये जाते थे। मंदिर संरचना स्तंभों पर खड़ी होती थी, कई बार हज़ारों स्तंभों पर टिकाई जाती थी, जैसा कि सभी बड़े निर्माणित भवनों में मेहराब की प्रौद्योगिकी की खोज से पहले प्रचलित था। सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण मंदिर ओलंपियन देवताओं को समर्पित पार्थेनॉन था।

नगर-राज्यों के भीतर, खेल और अन्य मनोरंजन के लिए स्टेडियम एक महत्वपूर्ण आकृति थे। हमें इस समय के ग्रीस में पिछले युग की तरह के बड़े महल परिसर देखने को नहीं मिलते। वास्तुकला में सामुदायिक भवनों की संख्या अधिक थी और मूर्तिकला उसमें समायोजित हो रही थी। एक्रोपोलिस शहर के ऐसे अवशेषों में से एक है जिसकी आज भी बहुत प्रशंसा की जाती है। भवनों और सामुदायिक समारोहों में से अधिकांश राज्य के राजकोष द्वारा और कभी-कभी समृद्ध व्यक्तियों द्वारा वित्तपोषित थे, जिन्होंने उनका निर्माण कराया और उन्हें प्रायोजित किया।

चित्र 15.11 : पार्थेनॉन मंदिर
साभारः स्टीव स्वेन
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:The_Parthenon_in_Athens.jpg

चित्र 15.12 : स्टेडियम
साभारः ट्रूलाइट 234
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:TheatreatEpidoris.JPG

15.12 खेल और व्यायाम

ज़्यादातर यूनानी नगर-राज्यों में, व्यक्ति, साहस और सैन्य-शक्ति पर ज़ोर देने के साथ अंततः शारीरिक शक्ति, खेल और एथलेटिक्स, शुरुआत में महिलाओं और पुरुषों दोनों के लिए, यूनानी व्यक्तित्व के कीर्तिगान का कारण बन गया जो बाद में एक ऐसे क्षेत्र के रूप में उभरा जो पुरुषों द्वारा अधिकृत था। खेल और व्यक्ति की शारीरिक शक्ति हर जगह दिखाई देती हैः एथलेटिक समारोहों में, यूनानी समाज में खिलाड़ियों द्वारा अर्जित लोकप्रियता, प्रसिद्धि और

प्रतिष्ठा में, और मूर्तिकला और यहां तक कि मिट्टी के बर्तनों में उनके सजीव चित्रण में।

कांस्य युग में, क्रीट भित्तिचित्रों में विशेषाधिकार प्राप्त नागरिकों द्वारा महिलाओं को जैतून के पेड़ों के आसपास नृत्य करता हुआ, कुलीन महिलाओं द्वारा एथलेटिक्स देखते हुए और महिला और पुरुष एथलीटों को खूंखार बैलों की पीठ के ऊपर सवारी करते हुए दर्शाया गया है (किश्लेन्सकी, और अन्य, 2008: 37)।

आधुनिक युग के ओलंपिक खेल प्राचीन यूनान जितने पुराने हैं। हालांकि बीच में एक लंबे समय के लिए इन खेलों में रुकावट आ गयी थी। हमारी जानकारी के अनुसार, 500 बी सी ई तक, 'यूनानी दुनिया में खेलों के पचास सेट थे जो कि नियमित अंतराल में आयोजित कराए जाते थे'। इन खेलों में से सबसे प्रतिष्ठित 'डेल्फी, कॉरिन्थ और निमिया में आयोजित क्राउन खेल थे'। सबसे महत्वपूर्ण खेल वह थे जो हर चार साल ओलंपिया में ज़ीअस के पंथ के जश्न के रूप में आयोजित होते थे। 192 मीटर दौड़ के अलावा पेंटाथलन (pentathlon) का आरंभ हुआ जिसमें घोड़ों और रथ दौड़ के साथ-साथ दौड़ना, कूदना, भाला फेंकना, डिस्कस थ्रो और कुश्ती शामिल थे। अपमान के डर से, कुछ खेलों में संघर्ष अंत तक बना रहता था और भाग लेने वाले के हार न मानने के कारण कभी-कभी उसकी मृत्यु तक हो जाती थी। जीतने वाले को न केवल प्रसिद्धि और संपत्ति की प्राप्ति होती थी, बल्कि वह किंवदंतियों का हिस्सा भी बन जाता था जिनमें उसकी शानदार जीत के बारे में कसीदा (ode) लिखा जाता था, जैसा कि युद्धों के बारे में लिखा जाता था। जीतने वालों का मूर्तियों में एक मज़बूत पुरुष शरीर के प्रतीक के रूप में चित्रण किया जाता था। शहरों के बीच प्रतियोगिता उतनी ही तीव्र होती थी जितना कि व्यक्तिगत ऐथलीटों के बीच। और 'सिर्फ पुरुषों को ओलंपिक खेलों में भाग लेने या उपस्थित रहने की अनुमति थी' हालांकि एक अलग ओलंपिक खेल ज़ीअस की पत्नी हेरा के सम्मान में आयोजित किया जाता था, जिसमें अविवाहित महिलाएं भाग ले सकती थीं (किशलेन्सकी, और अन्य, 2008: 50-51)। ओलंपिक खेलों में भाग लेने का सिलसिला कुछ एक हज़ार वर्षों तक चला जिसका अंत 393 सी ई में हुआ (किश्लेन्सकी, और अन्य, 2008: 49)।

चित्र 15.13 : क्रीडा चित्रण

साभार: National Archaeological Museum, Athens

स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:07Athletengrab.jpg

15.13 लिंग और परिवार

महिलाओं की यूनानी समाज में स्थिति पर हमने पिछली इकाई में चर्चा की हैः कैसे उनकी स्थिति अधीनस्थ थी, वह राजनितिक अधिकारों से वंचित थी और उन्हें नागरिक का दर्जा प्राप्त नहीं था। हमें यह भी देखने को मिलता है कि महिलाएं, गुलामों का एक बड़ा वर्ग थीं। लेकिन हमें इस अधीनता के विशिष्ट तत्वों को रेखांकित करना होगा। कारखानों में गुलामों के रूप

में और घरेलू नौकर-चाकर के काम के अलावा, यह कहा जा सकता है कि महिलाएं घरेलू अनुक्षेत्र तक ही सीमित थीं। इस प्रकार वास्तविकता जटिल थी: एक बड़ा वर्ग अधिशेष मूल्य और उत्पादन के कार्य में योगदान दिया करता था और एक छोटा सा कुलीन अल्पसंख्यक वर्ग धार्मिक और सामुदायिक जीवन में भाग लिया करता था। संक्षेप में यह अल्पसंख्यक वर्ग नागरिक समुदाय था। जिन अनुष्ठानों और धार्मिक त्योहारों में महिलाओं को भाग लेता दर्शाया गया है उनकी भूमिका सहायक के रूप में, और उन्हें महिलाओं के सामाजिक स्तर के अनुसार दर्शाया गया है। इसी प्रकार कुछ अनुष्ठान बच्चों द्वारा सम्पादित किये जाते थे, जिनकी भूमिका नाबालिगों के रूप में और उनके सामाजिक स्तर के अनुसार होती थी।

स्पष्ट है कि नागरिकों की पत्नियां नागरिक दर्जे में इसी हक तक सहभागी थीं कि उनके द्वारा जन्म दिये गये बेटे आगे जाकर नागरिक बनते थे और बेटियां नागरिकों की पत्नियां। कानून के हिसाब से महिलाएं, खासतौर से विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग की महिलाएं, अदालतों में उपस्थित नहीं होती थीं और गवाही भी नहीं देती थीं। उनके विवादों में अदालत में दोनों तरफ से पुरुष ही भाग लेते थे: सिर्फ गरीब और गुलाम महिलाएं ही अदालतों में उपस्थित होती थीं। उनकी गवाही इस हद तक ही मान्य थी कि उन्हें बुलवाने के लिए उनको यातना दी जाती थी: ऐसा माना जाता था कि आमतौर पर महिलाओं पर भरोसा नहीं किया जा सकता। बच्चों से संबंधित विवाद वास्तव में उनके अभिभावकों के बीच के विवाद थे: केवल परिपक्वता प्राप्त करने के बाद ही वो गवाही देने के लिए योग्य, खुद का प्रतिनिधित्व करने, और सेना की सेवा करने के योग्य बन सकते थे और केवल तीस साल की उम्र के पश्चात् ही वह न्यायिक जूरी (jury) के सदस्य बन सकते थे।

केवल कुछ ऊपर उल्लिखित शुरुआती भित्ति-चित्रों के अलावा, जिनमें महिलाएं आरंभिक दौर में एथलेटिक्स में भाग लेती दर्शायी गयी हैं, क्लासिकल कला और साहित्य में उन्हें मुख्य रूप से घर की गतिविधियों में व्यस्त दर्शाया गया है। अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में महिलाएं केवल उन क्षेत्रों में भाग लेती थीं जिन्हें मौलिक नहीं माना जाता था। वह बाज़ार नहीं जाया करती थीं, उन बाज़ारों में भी नहीं जहां छोटे स्तर पर क्रय-विक्रय किया जाता था। युवाओं को भी केवल दोपहर के बाद ही बाज़ार जाने की अनुमति थी जब बाज़ार व्यस्त रहते थे। पुनः यह गरीब महिलाओं पर लागू नहीं होता था, जिन्हें बाज़ार में सक्रिय भागीदार – छोटी वस्तुओं के खरीदार और विक्रेता – के रूप में देखा जा सकता था।

वेश्यावृत्ति एक ऐसा क्षेत्र था जहां महिलाएं प्रबल थीं। लेकिन यहां भी वर्ग विभाजन ने सार्वजनिक वेश्यावृत्ति के क्षेत्र को विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग और परिवारों में प्रचलित वेश्यावृत्ति से अलग स्थान प्रदान किया।

परिवार में महिलाएं संपत्ति और विरासत के मामलों सहित बिना किसी स्वतंत्र व्यक्तिगत अधिकारों के – पिता, भाई, पति, आदि – पुरुष सदस्यों के संरक्षण में रहती थीं। पुरुषों और महिलाओं के बीच घर के श्रम का विभाजन स्पष्ट रूप से सीमांकित था, जो ऐतिहासिक युगों से चला आ रहा था। विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग की काफी महिलाएं शिक्षित थीं परन्तु उनका लेखन और मौखिक कविताएं शायद ही जानी जाती हैं। जैसा कि ऊपर उल्लिखित किया गया है साफ्फो एक प्रख्यात कवयित्री थी। विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग की महिलाएं कढ़ाई करती थीं, ऊनी उत्पाद, इत्यादि बनाया करती थीं। परन्तु वे स्पष्ट रूप से यह स्वयं के उपयोग के लिए किया करती थीं न कि कमाई करने के लिए। जबकि गरीब महिलाओं के संदर्भ में उनका कौशल ही उनकी आजीविका का आधार था।

बोध प्रश्न-3

1) यूनानी मंदिरों की वास्तुकला की क्या विशेषताएं थीं?

....

....

....

....

....

2) शरीर रचना विज्ञान के विकास ने वास्तुकला, मूर्तिकला और दृश्यकला में किस तरह योगदान किया?

....

....

....

....

....

3) यूनानी कला में व्यक्तियों की भूमिका पर कलाकार और कला के विषयों के रूप में चर्चा कीजिये।

....

....

....

....

....

4) खेल, ख़ासतौर पर यूनानी समाज में ओलंपिक्स, के महत्व पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

5) यूनानी समाज में महिलाएं अधीनस्थ थीं, परंतु क्या आप महिलाओं के बीच कुछ अंतर और असमानताओं को बता सकते हैं?

....

....

....

....

....

15.14 सारांश

यूनानी नगर-राज्यों की भूमध्यसागर के आसपास की भौगोलिक स्थिति और पूरे क्षेत्र के सभी पक्षों से संपर्क ने उनकी सांस्कृतिक परंपराओं को आकार दिया और उन पर विविध प्रभाव डाले। यह विचारों की एक ऐसी श्रृंखला के लिए भी ज़िम्मेदार था जिसने विचारधारा में वृद्धि, विद्वता और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के भिन्न रूपों को जन्म दिया। सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के इन भिन्न रूपों में ब्रह्मांड और उसमें मानव के स्थान के विवरण से लेकर दृश्य कला और सामाजिक पदानुक्रम शामिल थे। जैसा कि हमने एक लंबे कालानुक्रमिक अवधि के घटनाक्रम के माध्यम से देखा, सांस्कृतिक परंपराएं न सिर्फ प्रकृति में बहुआयामी थीं, अपितु इन परंपराओं में प्रत्येक पहलू के भीतर समय के साथ बदलाव आया। क्लासिकल ग्रीस की संस्कृति को एक समग्र रूप में, स्वदेशी और अचानक छठी शताब्दी में विकसित होता समझना भ्रांति होगी, हालांकि एथेंस और छठी शताब्दी इस विकास के चरमबिन्दु हैं।

ब्रह्मांड के प्रेक्षणों ने खगोल विज्ञान के क्षेत्र में, गणित और शरीर रचना विज्ञान के समेत सामान्य विज्ञान के क्षेत्र में, और मानव प्रकृति और समाज के बारे में दार्शनिक चिंतन में प्रगति की। अनुपात, तर्क और शरीर रचना विज्ञान के ज्ञान ने दृश्य कला, चित्रकला, मूर्तिकला और चिकित्सा के क्षेत्र में तरक्की की। गणित और ज्यामितीय वास्तुकला में उतने ही महत्वपूर्ण थे जितना कि दुनिया के भावी अन्वेषणों में, ज्ञान के क्षेत्रों में – जो आगे चलकर पृथक रूप से भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान और भूविज्ञान के नाम से जाने गये – और प्रचलित लौह-प्रौद्योगिकी में महत्वपूर्ण थे। यहां पर कारण और प्रभाव के संदर्भ में बात करना मुश्किल है क्योंकि इनमें से ज़्यादातर घटनाएं समकालिक, कुछ अचानक आवेग में और कुछ स्वतंत्र रूप से यूनानी सभ्यता के विभिन्न क्षेत्रों में घटित हुईं। विभिन्न क्षेत्रों में परिवर्तन के विवरण का उल्लेख ऊपर इकाई के विभिन्न भागों में किया गया है।

हमें याद रखना चाहिए कि यूनानी सांस्कृतिक परंपराओं के बारे में अधिकतर जो ज्ञात और प्रख्यात है वह अमीर, विशेषाधिकार प्राप्त और जिनको नागरिक माना जाता था उनसे सरोकार रखता है। बहुत सी सांस्कृतिक अभिव्यक्तियां गरीबों और दासों के बीच विकसित हुई होंगी जिसको पाठ्यपुस्तकों में जगह नहीं मिलती, क्योंकि उनके बारे में उपलब्ध स्रोतों में बहुत थोड़ा ही उल्लेख मिलता है। उपलब्ध स्रोत काफी हद तक विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के दृष्टिकोण को दर्शाते हैं।

हमें विशेषाधिकार प्राप्त और गरीब महिलाओं में लिंग की असमानताओं को समझना चाहिए, हालांकि उनकी अधीनस्थता संबंधी कई आम पहलू दोनों में समान थे। और यह भी कि संस्कृति और ज्ञान में महत्वपूर्ण घटनाक्रम ग्रीस तक ही सीमित नहीं था, यह विश्व भर में फैला हुआ था और इसने मानव सभ्यता के समग्र विकास में योगदान दिया।

अंततः जैसा कि पिछली इकाई में ज़ोर दिया गया है, अत्यधिक जीवंत व्यापार और गुलामी की संस्था यूनानी समाज और राजनीति का आधार थे। व्यापार के असीम प्रवाह के परिणामस्वरूप प्राचीन ग्रीस के विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग के हाथों में संसाधनों और धन का विशाल प्रवाह हुआ। अमानवीय गुलामी ने इस वर्ग के लिए धन और फुर्सत की एकाग्रता, विचारों की दुनिया के लिए समय समर्पित करना, और वास्तुकला, मूर्तिकला और अन्य सार्वजनिक इमारतों के महान् कार्यों को संरक्षण प्रदान करना संभव बनाया। अंत में फिर से दोहराएं तो सामाजिक और आर्थिक इमारत, जिस पर यूनानी सभ्यता की महानता और जो कुछ उसके बारे में जाना जाता है, वह काफी हद तक गुलामी की प्रणाली पर आधारित थी।

THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

15.15 शब्दावली

भित्ति-चित्र (Fresco)	:	भित्ति-चित्र, चित्रण की एक ऐसी तकनीक है जिसमें गीले चूने या प्लास्टर पर चित्र अंकित करते हैं।
यूनानी अन्धकार युग/ होमर युग	:	माइसेनियन सभ्यता के पतन और यूनानी पुरातन युग के बीच का युग
पुरातन ग्रीस (Archaic)	:	आठवी सदी बी सी ई से 490 बी सी ई के बीच ग्रीस के इतिहास का काल
क्लासिकल ग्रीस	:	490 से 323 बी सी ई के बीच का युग
ट्रॉय का युद्ध	:	यूनानी मिथकों के अनुसार आर्कीयनों द्वारा ट्रॉय के खिलाफ किया गया युद्ध
पेलापोनेशियाई युद्ध	:	431-404 बी सी ई में एथेंसवासियों द्वारा स्पार्टा के लोगों के खिलाफ किया गया यूनानी युद्ध

15.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 15.4 देखें। यूनानियों द्वारा जिन देवताओं की आराधना की जाती थी, जैसे अपोलो और ज़ीअस, उनका उल्लेख कीजिये।

2) विभिन्न कालों में यूनानी सांस्कृतिक परम्पराओं में बदलाव और इन परम्पराओं द्वारा अन्य क्षेत्रों में डाले गये प्रभावों पर चर्चा कीजिये।

3) भाग 15.5 देखें। किस तरह यह काल्पनिक कथाएं विभिन्न कहानियों के आसपास धूमती थीं, स्पष्टीकरण दीजिये।

बोध प्रश्न-2

1) भाग 15.6 देखें। साहित्य की रचनाओं में होमर के दो महाकाव्यों का जिक्र होना चाहिए।

2) भाग 15.7 देखें

3) किस तरह स्वास्थ्य और रोगों के प्राकृतिक कारणों के नाम पर बदलाव आया और, जादू-टोने और अंधविश्वासों या धार्मिक विश्वासों के बजाय, दवा के माध्यम से इलाज खोजने के प्रयासों का उल्लेख कीजिये। भाग 15.8 देखें

4) भाग 15.8 देखें

5) प्लेटो द्वारा विचारों को प्राथमिकता दी गई और वह मानते थे कि भौतिक चीज़ों का अस्तित्व हमारी उनके बारे में धारणाओं में अवस्थित होता है। दूसरी ओर, अरस्तु बुद्धि और दर्शन के बीच रिश्ते को एक पूरी तरह से विपरीत ढंग से समझते थे। वह मानते थे कि भौतिक तत्व हमारी धारणाओं से बाहर होते हैं और हम उन्हें हमारे अनुभवों के आधार पर समझते हैं। दूसरे शब्दों में, हमारे विचार और भौतिक विश्व की समझ पहले से अवस्थित स्थितियों के अध्ययन पर विकसित हुई। भाग 15.9 देखें

6) भाग 15.10 देखें

बोध प्रश्न-3

1) भाग 15.11 देखें

2) यहाँ शरीर रचना विज्ञान और वास्तुकला, मूर्तिकला और दृश्य-कला के बीच सम्बन्ध को दर्शाएं। जैसे, किस प्रकार ज्यामिति विकास से मूर्तिकला के क्षेत्र में परिवर्तन आए। भाग 15.11 देखें

3) भाग 15.11 देखें

4) आधुनिक युग के विश्व ओलंपिक प्राचीन ग्रीस से लिए गए हैं। हर चार साल में ज़ीअस के संप्रदाय के उत्सव पर ओलंपिया में आयोजित होने वाले ओलंपिक सबसे महत्वपूर्ण थे। भाग 15.12 देखें

5) भाग 15.13 देखें। आप अभिजात वर्ग और निम्नवर्ग की महिलाओं के बीच अंतर का भी उल्लेख कर सकते हैं।

15.17 संदर्भ ग्रंथ

कर्टिलेज, पॉल. (संपा). 1998. *द केम्ब्रिज इलस्ट्रेटेड हिस्ट्री ऑफ ऐन्शिएन्ट ग्रीस.* केम्ब्रिजः केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

फिनले, मोसेस आई. 1977. *द ऐन्शिएन्ट ग्रीक्स.* यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफ़ोर्नियाः पेंगुइन बुक्स.

हॉसर, आर्नल्ड. 2003 (रिप्रिन्ट). *द सोशल हिस्ट्री ऑफ आर्टः फ्रॉम प्रीहिस्टॉरिक टाइम्स टू द मिडल ऐजेज़.* भाग 1. उप-भाग 3. लंदन एंड न्यूयार्कः रूटलेज.

किश्लेन्सकी, मॉर्क ऐ. गियरी, पैट्रिक, जे. एवं ओ'ब्रायन, पेट्रीशिया. 2008. *सिविलाइज़ेशन इन द वेस्ट.* भाग एः *टू 1500.* न्यूयार्कः पियर्सन लॉंगमैन.

नन्दा, मीरा. 2016. *साइन्स इन सेफ्रॅनः स्केपटिकल ऐस्सेज़ ऑन हिस्टी ऑफ साइन्स.* नई दिल्लीः थ्री ऐस्सेज़ कलेक्टिव.

15.18 शैक्षणिक वीडियो

द मिथ ऑफ पैन्डोराज़ बॉक्स – ग्रीक माइथोलॉजी एक्सप्लेन्ड
https://www.youtube.com/watch?v=lXmHA-XySmk

मिथ ऑफ पैन्डोराज़ बॉक्सः
https://www.youtube.com/watch?v=LGTTAfwHugY

द मिस्टरी ऑफ द डेल्फी ऑरेकल | नेशनल ज्योग्राफिक डाक्यूमेंट्री
https://www.youtube.com/watch?v=ToVeoUzhR0Q

द ऑरेकल ऑफ डेल्फी एन्शिएन्ट | नेशनल ज्योग्राफिक डाक्यूमेंट्री
https://www.youtube.com/watch?v=qM_22g30X-4

QR Code -website ignou.ac.in

QR Code -e Content-App

QR Code - IGNOU-Facebook (@OfficialPageIGNOU)

QR Code Twitter Handel (OfficialIGNOU)

INSTAGRAM (Official Page IGNOU)

QR Code -e Gyankosh-site

IGNOU SOCIAL MEDIA

QR Code generated for quick access by Students

IGNOU website

eGyankosh

e-Content APP

Facebook (@offical Page IGNOU)

Twitter (@ Offical IGNOU)

Instagram (official page ignou)

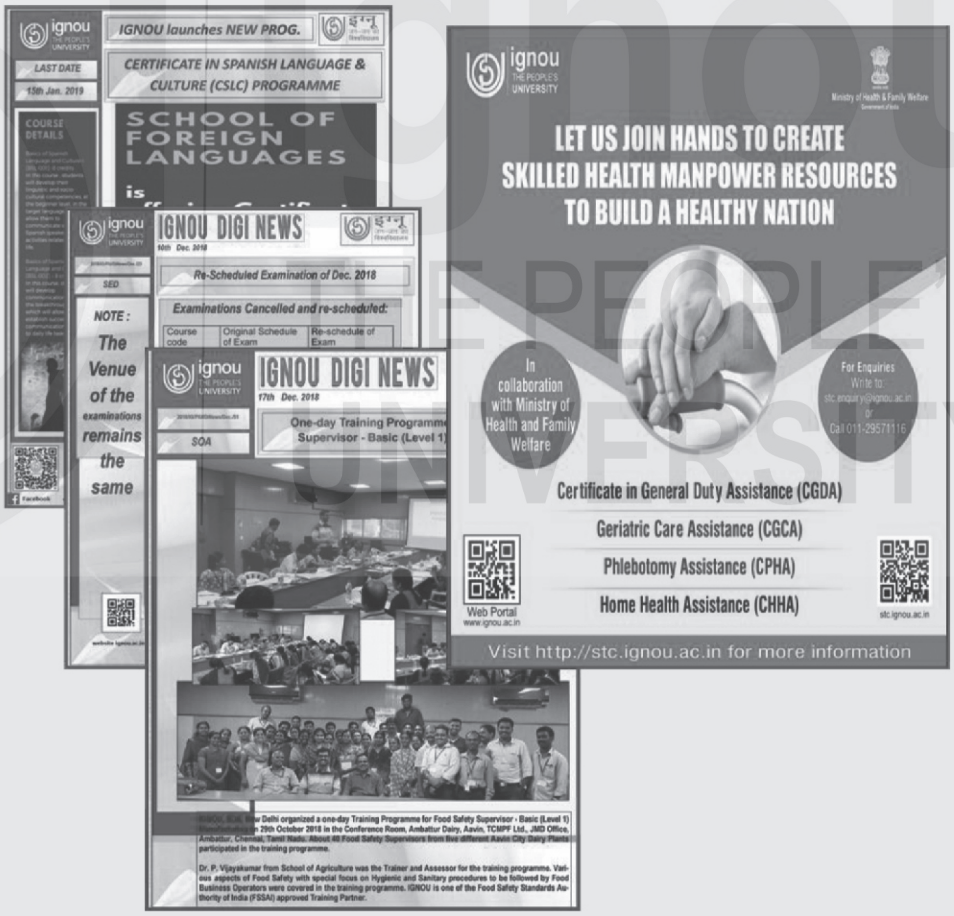

Like us, follow-us on the University Facebook Page, Twitter Handle and Instagram

To get regular updates on Placement Drives, Admissions, Examinations etc.

MPDD/IGNOU/P.O. 6.5K/September, 2020

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ISBN: 978-93-90496-08-2

इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

BHIC-104

मध्यकालीन विश्व की सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक पैटर्न

BHIC-104 मध्यकालीन विश्व की सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक पैटर्न

'' शिक्षा मानव को बन्धनों से मुक्त करती है और आज के युग में तो यह लोकतंत्र की भावना का आधार भी है। जन्म तथा अन्य कारणों से उत्पन्न जाति एवं वर्गगत विषमताओं को दूर करते हुए मनुष्य को इन सबसे ऊपर उठाती है।''

–इन्दिरा गांधी

" Education is a liberating force, and in our age it is also a democratising force, cutting across the barriers of caste and class, smoothing out inequalities imposed by birth and other circumstances."

– Indira Gandhi

इग्नू
जन जन का
विश्वविद्यालय
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

BHIC-104

मध्यकालीन विश्व की सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक पैटर्न

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

विशेषज्ञ समिति

प्रो. दरवेश गोपाल
निदेशक
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. पी. के. बसंत
इतिहास एवं संस्कृति विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

प्रो. आई. एच. सिद्दीकी
पूर्व-प्रोफेसर (इतिहास)
अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी
अलीगढ़, उत्तर प्रदेश

प्रो. एस. एम. अज़ीज़ुद्दीन
इतिहास एवं संस्कृति विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

डॉ. नलिनी तनेजा
स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

डॉ. संगीता पांडे
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. आभा सिंह
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. ए. आर. खान *(संयोजक)*
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम संयोजक : प्रो. आभा सिंह

प्रधान संपादक : प्रो. ए. आर. खान

पाठ्यक्रम संयोजन दल

प्रो. आभा सिंह **डॉ. दिव्या सेठी** **डॉ. प्रियंका खन्ना**

पाठ्यक्रम निर्माण दल

इकाई सं.	इकाई लेखक	अनुवादक
1	डॉ. प्रॉमिला श्रीवास्तव दौलत राम कॉलेज दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	डॉ. दिव्या सेठी इतिहास संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
2	डॉ. प्रॉमिला श्रीवास्तव दौलत राम कॉलेज दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	डॉ. दिव्या सेठी इतिहास संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
3	प्रो. डेनिस पी. लेटन स्कूल ऑफ लिबरल स्टडीज़ अंबेडकर यूनिवर्सिटी दिल्ली	सुश्री अनीता चौधरी नई दिल्ली
4	डॉ. दीक्षा भारद्वाज गार्गी कॉलेज दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	डॉ. दिव्या सेठी इतिहास संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
5	डॉ. नलिनी तनेजा स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	श्री जितेश कुमार जोशी सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
6	प्रो. हरबंस मुखिया और डॉ. बोधिसत्व कार सेंटर फार हिस्टॅारिकल स्टडीज जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	श्रीमती सीमा नई दिल्ली
7	प्रो. डेनिस पी. लेटन स्कूल ऑफ लिबरल स्टडीज़ अंबेडकर यूनिवर्सिटी, दिल्ली	सुश्री अनीता चौधरी नई दिल्ली
8	डॉ. अमृत कौर बसरा दिल्ली कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड कॉमर्स दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	सुश्री अनीता चौधरी नई दिल्ली
9	प्रो. सुशील चौधरी फेलो, रॉयल हिस्टॅारिकल सोसायटी, इंग्लैण्ड और डॉ. अमृत कौर बसरा दिल्ली कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड कॉमर्स दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	श्रीमती सीमा नई दिल्ली

10	डॉ. देबअर्पित मंजीत दयाल सिंह कॉलेज दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	सुश्री कविता कुमारी सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
11	डॉ. देबअर्पित मंजीत दयाल सिंह कॉलेज दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	सुश्री कविता कुमारी सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
12	डॉ. चाँदनी सेनगुप्ता एमिटी यूनिवर्सिटी गुरुग्राम	डॉ. बाल मुकुंद सिन्हा नई दिल्ली
13	डॉ. समाना ज़फ़र डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री एंड कल्चर जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली	सुश्री अनीता चौधरी नई दिल्ली
14	डॉ. शाकिर-उल हसन डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री एंड कल्चर जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली	डॉ. बाल मुकुंद सिन्हा नई दिल्ली
15	डॉ. शाकिर-उल हसन डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री एंड कल्चर जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली	डॉ. बाल मुकुंद सिन्हा नई दिल्ली
16	डॉ. समर मोइज़ रिज़वी डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री एंड कल्चर जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली	सुश्री कविता कुमारी सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

सामग्री एवं प्रारूप संपादन

प्रो. आभा सिंह
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

डॉ. दिव्या सेठी
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

हिंदी परिष्कर

प्रो. ए. आर. खान

हिंदी संयोजक

प्रो. आभा सिंह
डॉ. दिव्या सेठी

आवरण सज्जा

फोटो साभार : अज्ञात चित्रकार, 1898 संस्करण
ऐज फोटो स्टॉक, नेपल्स नेशनल आर्कीऑलॉजिकल म्यूज़ियम कलेक्शन
मुहम्मद बालामी; बालामी कृत *तारीखनामा* का एक पृष्ठ; प्रारम्भिक 14वीं शताब्दी

फोटो स्रोत : विकीमीडिया कॉमन्स

मुद्रण प्रस्तुति

श्री तिलक राज
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन)
एम.पी.डी.डी., इग्नू, नई दिल्ली

श्री यशपाल
अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)
एम.पी.डी.डी., इग्नू, नई दिल्ली

आवरण चित्रण

सुश्री अरविन्दर चावला
आरेख डिज़ाइनर
नई दिल्ली

अक्टूबर, 2020

© *इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2020*

ISBN: 978-93-90496-04-4

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफी (चक्र मुद्रण) द्वारा अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदान गढ़ी नई दिल्ली–110068 से अथवा इग्नू की आधिकारिक वेबसाइट www.ignou.ac.in से प्राप्त की जा सकती है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से रजिस्ट्रार, एम.पी.डी.डी. द्वारा मुद्रित और प्रकाशित।

मुद्रकः गीता ऑफसेट प्रिंटर्स प्रा. लि., सी–90 ओखला औद्योगिक क्षेत्र, फेज़–1, नई दिल्ली–110020

विषय वस्तु

		पृष्ठ सं
पाठ्यक्रम परिचय		7
खंड I	**रोमन गणतंत्र**	**11**
इकाई 1	रोमन साम्राज्यः राजनीतिक व्यवस्था	13
इकाई 2	रोमन साम्राज्यः आर्थिक और सामाजिक संरचना	33
इकाई 3	रोमन जगत में धर्म और ईसाई मत का उदय	54
इकाई 4	रोमन साम्राज्य का संकटकाल	71
खंड II	**यूरोप में सामंतवादः सातवीं सदी से चौदहवीं सदी तक**	**99**
इकाई 5	सामंतवाद का स्वरूप तथा संरचना	101
इकाई 6	सामंतवाद के चरण और उसका पतन	129
खंड III	**धर्म, अर्थव्यवस्था और वैकल्पिक राज्य संरचनाएँ**	**155**
इकाई 7	मध्यकालीन यूरोप में धर्म और संस्कृति	157
इकाई 8	यूरोप में शिल्प उत्पादन का विकास	177
इकाई 9	एशिया और यूरोप में व्यापार और वाणिज्य का विकास	194
इकाई 10	अफ्रीका	218
इकाई 11	लैटिन अमेरिका	241
खंड IV	**मध्य इस्लामिक जगत के समाज**	**261**
इकाई 12	इस्लाम पूर्व का अरब संसार और वहां की संस्कृति	263
इकाई13	इस्लाम का उदय और विस्तार	277
इकाई 14	खिलाफतः उमय्यद और अब्बासिद	299
इकाई 15	इस्लामिक समाजः विभिन्न संप्रदायों का उदय और विस्तार	336
इकाई 16	एशिया का व्यापारिक संसार और अरब	364

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पाठ्यक्रम अध्ययन संबंधी दिशानिर्देश

इस पाठ्यक्रम में हमने अध्ययन सामग्री के प्रस्तुतिकरण का समरूप पैटर्न अपनाया है। यह पाठ्यक्रम परिचय से प्रारम्भ होता है जिसमें कालक्रमानुसार विकास के महत्वपूर्ण चरणों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें 4 विशिष्ट अध्याय हैं जिन्हें 16 इकाइयों में बांटा गया है। अध्ययन की सुविधा के लिए इकाइयों की संरचना एक समान रखी गई है। इकाई के प्रथम भाग, उद्देश्य का प्रयोजन आपको इकाई के अध्ययन से संबंधित विशिष्ट मुद्दों से अवगत कराना है। कृपया इन उद्देश्यों को ध्यान से पढ़िये और प्रत्येक इकाई के भाग को पढ़ने के बाद खुद पुनः उस पर चिन्तन कीजिए। इकाई की प्रस्तावना आपको इकाई की विषयवस्तु से परिचित कराती है तथा आपको इकाई की विषयवस्तु के संबंध में दिशा निर्देश देती है। तत्पश्चात् पाठ्यक्रम की सुगमता के लिए विभिन्न भागों तथा उपभागों में मुख्य विषय की चर्चा की गई है। इकाई के बीच में बोध प्रश्न दिए गए हैं। हमारा निवेदन है कि आप जब भी इन प्रश्नों तक पहुँचे, इन्हें अवश्य पढ़ें तथा हल करें। यह न केवल आपको आपके स्वयं अध्ययन के मूल्याकंन में सहायक होगा, बल्कि इससे आप यह भी जांच सकेंगे कि आपने विषय विशेष को कितना समझा। अपने उत्तर की जांच आप सारांश के बाद दिए गए उत्तर संबंधित मुख्य बिंदुओं के मिलान से कीजिए। प्रत्येक इकाई के अंत में शब्दावली प्रदान की गई है, जिसे इकाई में बोल्ड में दर्शाया गया है। प्रत्येक इकाई के अंत में सदर्भ ग्रंथ सूची प्रदान की गई है। इस सूची में उन स्त्रोतों तथा ग्रंथों की चर्चा की गई है जो आपके अध्ययन के लिये उपयोगी हैं अथवा अध्ययन सामग्री के निर्माण के दौरान प्रयुक्त किए गए हैं। आप उन पर अवश्य नज़र डालें। हमने कुछ शैक्षणिक वीडियो अध्ययन समझ को बढ़ाने के लिए दिए हैं। कृपया आप इन वीडियो को देखें, यह आपकी संबंधित विषय-वस्तु की व्यापक समझ को बढ़ाने में सहायक होगा।

पाठ्यक्रम परिचय

यह पाठ्यक्रम रोमन साम्राज्य (**खंड I**) की स्थापना के साथ शुरु होता है। रोमन साम्राज्य इस मायने में अनूठा था कि उसने रोमन राजतंत्र से गणतंत्र और फिर साम्राज्य तक का संक्रमण देखा। *पैक्स रोमाना,* भूमध्यसागरीय संसार में आगस्टस प्रथम (27 बी सी ई-14 सी ई[1]) द्वारा स्थापित सार्वभौमिक शांति (*Pax Romana*) की स्थिति, लगभग दो सौ सालों तक कायम रही और रोम समृद्ध हुआ। यहां तक कि यह सामंजस्य उत्तर अफ्रीका और ईरान तक विस्तारित हुआ। रोमन शासकों ने इस पूरे क्षेत्र में प्रांतों को संरक्षित और शासित किया, और रोमन न्याय और कानून को प्रशासित किया। रोमन कानूनों की *बारह तालिकाओं* (*Twelve Tables*) ने यह संक्रमण देखा और रोमन न्याय को मानकीकृत किया गया (**इकाई 1-2**)। चौथी शताब्दी सी ई के अन्त तक रोमन साम्राज्य दो भागों में विभाजित हो गया – पश्चिमी और पूर्वी। पश्चिमी साम्राज्य का पतन 476 सी ई में हुआ, जबकि पूर्वी साम्राज्य, जिसे विख्यात रूप से बाइज़ेंटाइन साम्राज्य के नाम से जाना जाता है, लगभग बारह सौ सालों तक टिका रहा और आखिरकार साल 1453 में ऑटोमन आक्रमण द्वारा कॉन्सटेंनटिनोपल का पतन हो गया। धार्मिक क्षेत्र में भी आमूल परिवर्तन हुए। आगस्टस-प्रथम के शासनकाल से रोमन शासकों को ईष्टदेव की तरह देखा जाने लगा। टाइबेरियस के शासनकाल (14-37 सी ई) में ईसा मसीह को सूली पर चढाया गया और कॉन्सटेंनटाइन प्रथम के शासनकाल (312-337) तक ईसाईयों पर यातना, उन्हें मारना और उन पर अत्याचार होते रहे। कॉन्सटेनटाइन प्रथम के शासनकाल से रोमन चर्च के इतिहास में एक नये युग की शुरुआत हुई जब 313 सी ई में सहनशीलता के अध्यादेश/मिलान के अध्यादेश (The Edict of Toleration/The Edict of Milan) द्वारा रोमन चर्च को वैद्य धर्म घोषित किया गया। चौथी शताब्दी सी ई में ईसाई धर्म स्थायी रूप से रोम के राज्य धर्म के रूप में स्थापित हुआ। पश्चिमी साम्राज्य का पतन (476) भी एक महत्वपूर्ण मोड़ था। कमजोर रोमन शक्ति ने कैथोलिक चर्च और पवित्र रोमन साम्राज्य के प्रभुत्व के लिए मार्ग प्रशस्त किया। चर्च, विशेष रूप से बर्बर हमलों के मद्देनजर, व्यवस्था कायम रखने वाली एकमात्र संस्था के रूप में उभरी। ईसाई धर्म के इतिहास में एक और महत्वपूर्ण मोड़ 1054 में पूर्वी चर्चों से विभाजन के साथ आया। ग्यारहवीं शताब्दी से लेकर धार्मिक सुधार आन्दोलन (Reformation) तक पोप की सत्ता सर्वोच्च रही। हालांकि, पंद्रहवीं शताब्दी के अंत तक आते-आते चर्च पर विधर्म (heresy), भ्रष्टाचार और चर्चपरिषद्वाद (conciliarism) ने आघात किया और पोप प्रभावी ढंग से शासन या सुधार करने में विफल रहा। इसके परिणामस्वरूप पोप की शक्ति का पतन हुआ और पंद्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी में धर्म सुधार आन्दोलन के युग की शुरुआत हुई। लूथर, केल्विन और ज़्वींगली ने चर्च पर आक्षेप किया और उसकी आध्यात्मिक शक्ति पर सवाल उठाये (**इकाई 3** और **7**)।

थियोडोसियस की मृत्यु (395) ने रोमन साम्राज्य का दो भागों में विभाजन – पश्चिमी और पूर्वी – की शुरुआत को चिह्नित किया, इस प्रकार रोमन साम्राज्य में संकट की शुरुआत का उद्घोष हुआ (**इकाई 4**)। पश्चिमी रोमन साम्राज्य 410 में विसिगोथ्स, एक जर्मनिक खानाबदोश जनजाति, के आक्रांत और लूट का शिकार हुआ। 476 में ओडोएसर, एक जर्मनिक बर्बर नेता, द्वारा आखिरी रोमन शासक रोमुलस आगस्टुलूस को अपदस्थ करने के साथ पश्चिमी रोमन साम्राज्य के पतन का चक्र पूर्ण हुआ। वास्तव में रोम अपनी विशालता और सेना के कारण विशिष्ट नहीं था, बल्कि वह अपनी बौद्धिक उपलब्धियों से विशिष्ट था। इनमें सबसे उल्लेखनीय थे रोमन कानून (जस्टीनियन कोड), रोमन सड़कों का संजाल, नगर नियोजन के उच्च मानक, स्वच्छता और सीवेज निकाय, बांध, जलसेतु, वास्तुकला, रोमन

[1] बी सी ई = सामान्य से पूर्व; सी ई = सामान्य

सार्वजनिक स्नानागार और सर्वोपरि, लैटिन भाषा की विरासत (सिसरो के भाषण, टेरेंस के नाटक, वर्जिल की कविताएं) थी।

रोमन साम्राज्य के पतन के साथ यूरोप में मध्य युग का आगमन हुआ और इस चरण की मुख्य विशेषता 'सामंतवाद' था जो इस पाठ्यक्रम के **खंड II** का हिस्सा है। मध्ययुगीन विश्व के संदर्भ में पश्चिमी यूरोप को आमतौर पर सामंतवाद के समानार्थक देखा जाता है। मार्क ब्लॉक की *फ्यूडल सोसाईटी* के साथ विद्वानों ने मध्ययुगीन समाज में जीवन के सभी क्षेत्रों में पतन और अधः पतन की प्रवृत्ति की शुरुआत देखी। व्यापार और शिल्प उत्पादन में गिरावट आई, ख़ासतौर पर लम्बी दूरी के व्यापार में। हेनरी पिरेन ने इस घटनाक्रम को 'आर्थिक प्रतिगमन' (economic retrogression) कहा जिसे मध्ययुगीन विश्व की विशेषता माना जाता है। भूमध्यसागर अब 'बौद्धिक और वाणिज्यिक संचार का चैनल' नहीं रहा; 'विनिमय अर्थव्यवस्था', 'बाज़ार विहीन अर्थव्यवस्था' द्वारा प्रतिस्थापित' हो गई, जिसे पिरेन 'व्यावसायिक पक्षाघात' (commercial paralysis) की अवस्था कहते हैं। पिरेन का अध्ययन इस दिशा में विशिष्ट उपलब्धि थी। लेकिन रॉबर्ट लोपेज़, फ्रेन्कोस-लुई गैन्शॉफ, एम. साबे, पेरी एन्डरसन, जैसे इतिहासकार इस्लाम के उदय को यूरोप की उन्नति के घटनाक्रम में एक 'निर्णायक' कारक नहीं मानते। जार्ज ड्यूबी 1000 सी ई के बाद यूरोप में सामंतीय क्रांति की बात करते हैं। हालांकि, सामंतवाद पर इतिहासकारों की बहस आज भी खत्म नहीं हुई है और सामंतवाद को एक विषम घटना के रूप में वर्णित किया जा सकता है जो मध्यकालीन यूरोप में विभिन्न सामाजिक वास्तविकताओं का प्रतिनिधित्व करता था।

खंड III मध्यकालीन विश्व के तीन मुख्य पहलुओं को समाविष्ट करता है। इसमें सर्वोपरि है मध्यकालीन यूरोप में धर्म और संस्कृति (**इकाई 7**)। दूसरा विषय है मध्यकालीन यूरोप में शिल्प उत्पादन तथा उद्योग और व्यापार का विकास (**इकाई 8** और **9**)। तीसरा प्रकरण आपको अफ्रीका में राज्य की संरचना के प्रतिमानों से अवगत कराएगा। यह आपको नई दुनिया में राज्य संरचना और लैटिन अमेरिका में मध्यकालीन सभ्यता – एज़टेक्स (Aztecs) और इन्का (Incas) के बारे में भी जानकारी देगा। मध्यकालीन अफ्रीका के संदर्भ में एक नई धार्मिक विचारधारा, इस्लाम, जिसने पूरे पश्चिमी यूरोप की जड़ों को हिला कर रख दिया था, उसने अफ्रीका को भी समान तीव्रता से प्रभावित किया। अफ्रीका (मोरक्को और सूडान) में पहली प्रमुख राज्य-संरचना इब्न यासीन के नेतृत्व में स्थापित अलमोराविदों का इस्लामिक राज्य था। इब्न यासीन मालिकी विचारधारा का अनुयायी था जिसने 'पवित्र' इस्लाम की स्थापना पर बल दिया। हालांकि बारहवीं शताब्दी के आसपास अल-ग़ज़ाली द्वारा स्थापित सूफ़ीवाद ने अपना विशिष्ट स्थान प्राप्त किया और *फुक़ाह* (न्यायविद) तिरस्कृत किए गए (**इकाई 10**)। लैटिन अमेरिका की राज्य संरचनाओं का अध्ययन करने के लिए हमें इन संरचनाओं में एकीकृत दृष्टिकोण ढूंढने की आवश्यकता नहीं है। बल्कि हम उनमें 'अतिव्यापी नेटवर्क की पहचान' कर सकते हैं। इन्का क्षेत्रों में फैले हुए पवित्र विशाल स्थल शायद ही केंद्रीय राजनैतिक तंत्र का हिस्सा थे। इन्का तीन मुख्य भाषाएं बोलते थे – केचुआ (चिन्च केचुआ) प्रायः उनकी आम बोलचाल की भाषा थी। *खीपु* गांठों द्वारा रिकार्डिंग ने उनकी इतिहास निर्माण की विस्तृत क्षमता को बाधित किया। अतः इन्का इतिहास में तिथिक्रम निर्धारण हमेशा एक समस्या बनी रही। इन्काओं की समय-गणना विधि भी वर्षों के आकलन के संदर्भ में सुनियोजित नहीं थी, यद्यपि उनके द्वारा वार्षिक चक्र को ध्यानपूर्वक रिकार्ड किया जाता था। एज़टेक्स से भिन्न इन्काओं ने आकलन के लिए *खीपु* के अलावा कोई भी अन्य लिखित दस्तावेज नहीं छोड़े हैं। इसीलिए उनके नैतिक व्यवहार, विचार और बौद्धिक ज्ञान परम्परा का अनुमान लगाना कठिन है। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने पीढ़ी दर पीढ़ी प्रेषित दैनिक नैतिक अनुभवों द्वारा सीख ली और उनके आधार पर प्रशासन चलाया। हालांकि विशिष्ट अभिजात वर्ग जैसे अमौता (दार्शनिक, बुद्धिजीवी) का विशिष्ट प्रभाव देखने को मिलता

है। *खीपु* विशेषज्ञ (*खीपु-कमायुक्*) अन्य बुद्धिजीवी थे। हालांकि उच्च स्तर की जल-इंजीनियरिंग और सड़कों के जाल कुछ व्यक्ति विशेष या समूह, जिन्होंने इन आश्चर्यजन तकनीकों और कार्यों को संपादित किया, की उपस्थिति की ओर इशारा करते हैं। एक अन्य समूह ज्ञानी ओझाओं (healers) का भी था। इस पृष्ठ भूमि के तहत **इकाई 10** और **11** में लैटिन अमरीकी पूर्व औपनिवैशिक सभ्यताओं के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक पहलुओं का अध्ययन किया गया है।

खंड IV विशिष्ट रूप से इस्लामिक विश्व की संरचना से संबंधित है। इस्लाम के उदय के अध्ययन संबंधी विभिन्न दृष्टिकोण हैं। इनमें से सबसे पारंपरिक दृष्टिकोण इस्लाम के उदय को 'धर्म के इतिहास' के संदर्भ में देखता है। यह दृष्टिकोण इस्लाम को एक विशिष्ट क्षेत्र में विशिष्ट जातीय समूह द्वारा संचालित समझता है। इस्लाम के अध्ययन संबंधी एक अन्य दृष्टिकोण इसे एक सामाजिक और राजनीतिक आन्दोलन के रूप में देखता है। उनके द्वारा इस्लाम के उदय को 'राजनैतिक वैधता' के एक उपकरण और 'जन-लामबंदी' (mass mobilisation) के एक माध्यम के रूप में देखा गया है। अन्य दृष्टिकोण इसके धार्मिक स्कूलों और कॉलेजों के तंत्र द्वारा ज्ञान के प्रसार को इस्लाम के उदय का एक निर्णायक तत्व समझते हैं। मार्शल हॉजसन 'मुख्तलिफ़ मुस्लिम समुदायों को विस्तृत इस्लामिक सभ्यता के हिस्से' की तरह देखते हैं। हमारी पारंपरिक समझ के अनुसार अरब 'बद्दुओं (Bedouins) के रूप में उत्पन्न' हुए और इस समझ में बद्दुओं की पहचान 'असभ्य' अपरिष्कृत के रूप में की जाती है और अरब क्षेत्र को एक अखण्ड जनसांख्यिकीय क्षेत्र के तौर पर देखा जाता है। अरबों को पशुपालक-खानाबदोश के रूप में चित्रित किया जाता था। इस वर्णन में 'परिवर्तन और विकास' का अभाव है। इस व्याख्या के अनुसार इस्लाम के उदय से ही अरबों के 'वास्तविक इतिहास' का आरंभ होता है। हमें पूर्व इस्लामिक अरेबिया के प्रक्षेप पथ की पहचान को 'विविधता' के तौर पर समझना चाहिए न कि एक समरूप पहचान के तौर पर। इस्लाम के उदय से पूर्व, एक संगठित समूह की तरह अरब पहचान बहुत खंडित थी। इस्लाम के उदय के साथ अरब पहचान पुनःनिर्मित हुई। इसके संस्थापक पैगंबर मुहम्मद के निधन (632 सी ई) के उपरांत इस्लाम को लगातार आंतरिक और बाहरी चुनौतियों का सामना करना पड़ा, जिसमें *उम्मा* (इस्लामिक समुदाय) के नेतृत्व संबंधी चुनौती भी शामिल थी। चार पवित्र ख़लीफाओं के अधीन इस्लामिक शक्ति के आरंभिक समेकन के पश्चात् अरब-इस्लामिक राज्य उमय्यदों और अब्बासिदों के हाथों में चला गया। इस काल के दौरान शक्तिशाली बाईज़ेंटाइन और ईरानी साम्राज्य जड़ से उखाड़ दिए गए और इस्लाम का फैलाव सीरिया, ईराक, मिस्र और अंदलूसिया (दक्षिणी स्पेन) में हुआ। क्लेमोंट की परिषद् में 'धर्म युद्ध' (Crusades) की घोषणा और अन्य घटनाक्रमों ने पूरे मध्यकालीन यूरोप को झंझोड़ कर रख दिया। अतः इस्लाम के उदय का अध्ययन अलगाव में नहीं किया जा सकता, बल्कि हमें इस काल में समस्त विश्व में हुई बहुआयामी घटनाओं को ध्यान में रखना चाहिए। **खंड IV** सातवीं से तेरहवीं शताब्दियों के बीच हुई इन समस्त घटनाओं को समाहित और वर्णित करने का प्रयास करता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

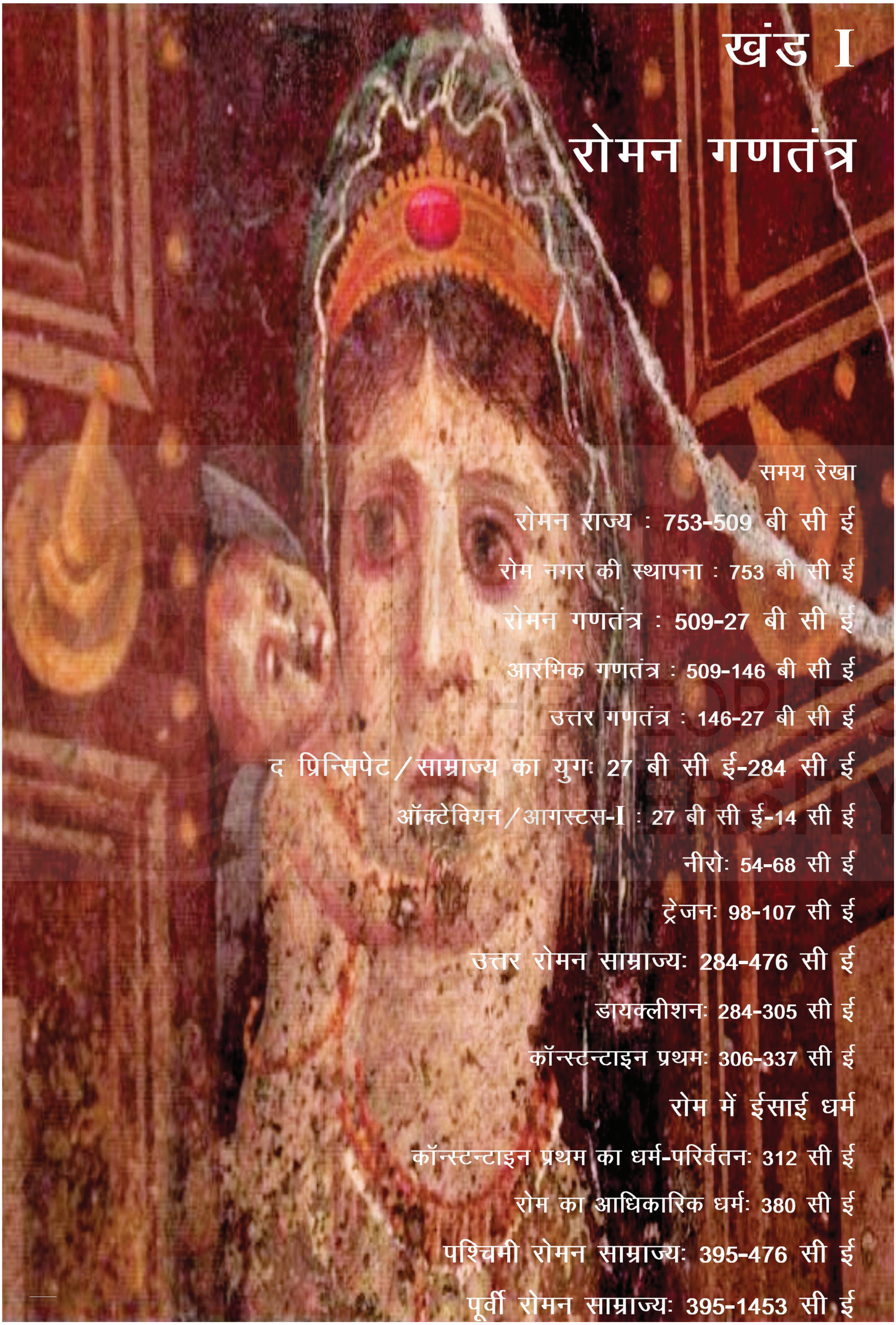

खंड I

रोमन गणतंत्र

समय रेखा

रोमन राज्य : 753-509 बी सी ई

रोम नगर की स्थापना : 753 बी सी ई

रोमन गणतंत्र : 509-27 बी सी ई

आरंभिक गणतंत्र : 509-146 बी सी ई

उत्तर गणतंत्र : 146-27 बी सी ई

द प्रिन्सिपेट/साम्राज्य का युग: 27 बी सी ई-284 सी ई

ऑक्टेवियन/आगस्टस-I : 27 बी सी ई-14 सी ई

नीरो: 54-68 सी ई

ट्रेजन: 98-107 सी ई

उत्तर रोमन साम्राज्य: 284-476 सी ई

डायक्लीशन: 284-305 सी ई

कॉन्स्टन्टाइन प्रथम: 306-337 सी ई

रोम में ईसाई धर्म

कॉन्स्टन्टाइन प्रथम का धर्म-परिवर्तन: 312 सी ई

रोम का आधिकारिक धर्म: 380 सी ई

पश्चिमी रोमन साम्राज्य: 395-476 सी ई

पूर्वी रोमन साम्राज्य: 395-1453 सी ई

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

फोटोग्राफ : प्राचीन रोमन भितिचित्रण, मार्कस फाबियस रूफस के घर से कक्ष 71 पॉम्पी, इटली में प्राप्त। इसमें वीनस को कामदेव की बाहों में लिपटा प्रदर्शित किया गया है। यह संभवत टॉलमी कालीन मिस्र की क्लियोपैट्रा VII का वीनस जेनेट्रिक्स समक्ष चित्रण है जिसमें उसे अपने पुत्र सीज़र, कामदेव के प्रतीक रूप में, के साथ चित्रित/परिकल्पित किया गया है। यह संभवतः सितम्बर 46 बी सी ई में जूलियस सीज़र द्वारा फोरम इयूलियम (फोरम ऑफ सीज़र) में वीनस जेनेट्रिक्स के मंदिर की स्थापना के समकक्ष चित्रित किया गया था। सीज़र के फोरम में महारानी क्लियोपैट्रा की सोने की मूर्ति का निर्माण कराया गया था (जैसा कि दूसरी सदी सी ई में *बेला-सिविलिया* में एप्पियन द्वारा दर्शाया गया है)। प्राचीन रोमन चित्रकारों द्वारा लगभग 46 बी सी ई में चित्रण

साभार : पिन्टरेस्ट

स्रोत : https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/f/fe/Venus_and_Cupid_from_the_House_of_Marcus_Fabius_Rufus_at_Pompeii%2C_most_likely_a_depiction_of_Cleopatra_VII_%282%29.jpg

इकाई 1 रोमन साम्राज्यः राजनीतिक व्यवस्था*

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 रोम का प्रारंभिक इतिहास

1.3 रोमन गणतंत्र की स्थापना और सैन्य विस्तार

- 1.3.1 विजय का पहला चरण
- 1.3.2 विजय का दूसरा चरण

1.4 रोमन गणतंत्र की राजनीतिक संरचना

- 1.4.1 सीनेट
- 1.4.2 मैजिस्ट्रेट
- 1.4.3 जनता
- 1.4.4 सभा

1.5 विभिन्न श्रेणियों (Orders) में राजनीतिक टकराव

- 1.5.1 टकराव का पहला चरण और संविधान में परिवर्तन
- 1.5.2 टकराव का दूसरा चरण

1.6 ग्रैची बंधुओं के सुधार

- 1.6.1 कृषकों या 'एसिडुई (Assidui) वर्ग' का पतन
- 1.6.2 सैनिकों में बढ़ता असंतोष
- 1.6.3 बढ़ती अशांति में शहरी गरीब वर्ग की भूमिका

1.7 गणतंत्र की अंतिम शताब्दी और विजयी सैन्य कमांडरों का उदय

- 1.7.1 प्रथम ट्रायमविरेट (First 'Triumvirate')
- 1.7.2 द्वितीय ट्रायमविरेट (Second 'Triumvirate')

1.8 आगस्टस का युग

- 1.8.1 राजनैतिक और संवैधानिक सुधार
- 1.8.2 प्रशासनिक सुधार
- 1.8.3 सैन्य सुधार
- 1.8.4 सामाजिक और आर्थिक सुधार

1.9 प्रारम्भिक साम्राज्य का विस्तार-क्षेत्र

1.10 उत्तर रोमन साम्राज्य

- 1.10.1 तीसरी शताब्दी सी ई और राजनितिक अस्थिरता
- 1.10.2 डायोक्लेशियन (Diocletian) और साम्राज्य को पुनः सुदृढ़ करने के उपाय
- 1.10.3 कॉन्सटैन्टाइन I

1.11 साम्राज्य का पतन

1.12 सारांश

* डॉ. प्रॅामिला श्रीवास्तव, दौलत राम कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

1.13 शब्दावली

1.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.15 संदर्भ ग्रंथ

1.16 शैक्षणिक वीडियो

1.0 उद्देश्य

ईरानी साम्राज्य के अंत और सिकन्दर के मकदूनियाई साम्राज्य की अखंडता के खंडित होने के साथ ही भूमध्यसागरीय क्षेत्र में एक नई राजनीतिक सत्ता का उदय हुआ। यह रोमन साम्राज्य था जो प्राचीन काल का सबसे बड़ा और दीर्घजीवी साम्राज्य साबित हुआ। इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपः

- रोमन साम्राज्य के दौरान राजनीतिक घटना क्रम को समझ पाएँगे,
- रोमन राज्य की विभिन्न संस्थाओं, जैसे सीनेट, कुलीनतंत्रीय परिषद्, सभा, इत्यादि के बारे में जान पायेंगे,
- समाज की विभिन्न पदानुक्रमिक श्रेणियों को समझ सकेंगे,
- समाज के विभिन्न क्षेत्रों में किए गए सुधारों को सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- आगस्टस द्वारा किए गए मुख्य सुधारों का मूल्यांकन कर सकेंगे, और
- रोमन साम्राज्य के पतन के कारणों की व्याख्या कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

रोमन साम्राज्य का केंद्र इटली में स्थित था और उसमें संपूर्ण भूमध्यसागरीय जगत सम्मिलित था। जैसा कि आमतौर पर कहा गया है कि 'रोम का निर्माण एक दिन में नहीं हुआ था'[1], रोम का इतिहास आठवी शताब्दी बी सी ई में मध्य इटली में एक छोटे से चारागाह समुदाय के तौर पर हुआ था। परन्तु समय के साथ इसने प्राचीन विश्व में एक विस्तृत सम्राज्य की प्रतिष्ठा हासिल की। यह साम्राज्य उत्तर में स्कॉटलैंट से दक्षिण में मिस्र तक, और पश्चिम में पुर्तगाल और पूरब में इराक़ तक विस्तृत था। इस इकाई में प्राचीन रोम के इतिहास के मुख्य कालों और उन्हें समर्थन प्रदान करने वाली राजनैतिक व्यवस्था का परीक्षण किया गया है। यह एतिहासिक चरणः (क) एक राज्य के रूप में रोम का प्रारम्भिक इतिहास; (ख) रोमन गणतंत्र; (ग) प्रिन्सिपेट या आगस्टस का युग; और (घ) उत्तर रोमन साम्राज्य को सम्मिल्लित करता है।

1.2 रोम का प्रारंभिक इतिहास

रोम का आरंभिक इतिहास काफी अपर्याप्त और बिखरा हुआ है और ज्यादातर किंवदतियों पर आधारित है। परंतु हमारा मुख्य स्त्रोत इतिहासकार लेवी (64-17 बी सी ई) हैं जिन्होंने रोम का इतिहास उसकी बुनियाद से लेकर अपने तत्कालीन काल तक लिखा। आरंभिक रोमन मुख्य रूप से एक पशुपालक समुदाय के लोग थे, जो मवेशी, सुअर, बकरी और भेड़ पालते थे और बिखरे हुए गांवों में रहा करते थे, और वे हिंद-यूरोपीय भाषा बोला करते थे जिसे प्रोटो-लैटिन भी कहा जा सकता है। यह पूरी संस्कृति एक पूर्व-नगरीय चरण में प्रासंगिक की जा सकती है। किसी समय में ये बिखरे हुए समुदाय एक बड़ी इकाई में समा गए, जिसे पहली बार रोम के नाम से जाना गया।

[1] जॉन हेवुड, एक अंग्रेजी नाट्यकार।

नगर की स्थापना से संबंधित अनेक किंवदंतियां हैं। एट्रूस्कन किंवदंती के अनुसार, रोम की स्थापना दो भाईयों – रोमुलस और रेमस – द्वारा 753 बी सी ई में की गई थी। ऐसा कहा जाता है कि इसका निर्माण तब हुआ जब टाइबर नदी के किनारे बसी बस्तियों को एक दीवार द्वारा समावृत किया गया। नदी ने रोम शहर को उत्तर की ओर व्यापार मार्ग प्रदान किया और दक्षिण की ओर स्थित इसके ओस्टिया बंदरगाह द्वारा समुद्र तक पहुंच प्रदान की। रोम दो संस्कृतिओं के मध्य स्थित थाः जिसके एक ओर दक्षिण में स्थित यूनानी बस्तियां थीं और दूसरी ओर उत्तर में स्थित एट्रूस्कन सभ्यता थी। भौगोलिक और वास्तविक रूप से रोम एट्रूस्कन और यूनानी संस्कृतियों के संगम का संधि-स्थल था। ऐसा माना जाता है कि रोमुलस उन सात शासकों में से पहले शासक थे जिन्होंने रोम पर 753 बी सी ई से लेकर 509 बी सी ई के मध्य शासन किया।

इस समय इटली में सबसे शक्तिशाली लोग एट्रूस्कन थे। एट्रूस्कन ने रोम पर करीब सौ साल से ज्यादा (616-510 बी सी ई) शासन किया। एट्रूस्कन की उच्च सभ्यता से सम्पर्क में आने से रोम को नई प्रेरणा मिली। इसने रोम के आरंभिक घटनाक्रम पर गहरा प्रभाव डाला। एट्रूस्कन शासन ने शहरीकरण का शुभांरभ किया और रोम पहली बार व्यापार का एक महत्वपूर्ण केंद्र बना। इसके अतिरिक्त रोम के लोगों के अभियांत्रिकीय कौशल ने उन्हें केपिटोलाइन और पेलेटाइन पहाड़ों के मध्य स्थित दलदली भूमि को शुष्क कर खेती योग्य बनाने में सफलता प्रदान की और उन्होंने गहन खेती का भी विस्तार किया। रोमन एट्रूस्कन धार्मिक प्रथाओं से भी प्रभावित थे। उन्होंने मंदिरों और उपासना के लिए मूर्तिओं का निर्माण भी करवाया। अनेक राजनैतिक और सैनिक सुधार किए गए जिनमें जनगणना (भू-सम्पत्ति पर आधारित सैन्य सेवा का दायित्व) और एक नयी राजनीतिक सभा, *कॉमिटा सेंचुरिआटा*, की स्थापना शामिल था।

पुरातात्विक साक्ष्य इटली में एट्रूस्कन सत्ता के छटी शताब्दी में पतन होने की ओर संकेत करते हैं। ऐसा माना जाता है कि रोम में आखरी एट्रूस्कन शासक को निर्वासित कर 509 बी सी ई में गणतंत्र की स्थापना की गई थी।

1.3 रोमन गणतंत्र की स्थापना और सैन्य विस्तार

रोमन विस्तार का अध्ययन दो चरणों में किया जा सकता है। पहला चरण आरंभिक सुदृढ़ीकरण का समय था; जबकि दूसरे चरण में रोम ने भूमध्यसागर के पार अपनी शक्ति को सुदृढ़ किया।

1.3.1 विजय का पहला चरण

सभी लेखक रोम के राजतंत्र के अंत और गणतंत्र की स्थापना को रोमन इतिहास की आधारभूत घटनाओं में से एक मानते हैं। 509 बी सी ई, में टर्किन्स का एट्रूस्कन वंश रोम से निष्कासित कर दिया गया जिसने दो **कॉन्सलों (Consuls)** द्वारा शासित गणतंत्र की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। समस्त पांचवी शताब्दी बी सी ई के दौरान रोम की राजनीति का मुख्य उद्देश्य उसकी अपने प्रदेश और लेटियम (Latium) के मैदानों की अपने सगोत्रीय कुटुम्ब-जनों के सहयोग से शत्रुओं से रक्षा करना था। इस प्रकार, रोम ने पड़ोस की पहाड़ियों की तीन खूंखार जनजातियों के लैटिन नगरों (आसपास के प्रदेश लेटियम के ऊपर इनका नाम पड़ा) के साथ एक संघ का निर्माण किया। 406 बी सी ई में रोम ने अपने सबसे बड़े शत्रु एट्रूस्कन के वेई नगर पर आक्रमण किया और अंततः 396 बी सी ई में अंततः उस पर कब्ज़ा कर लिया। यह विजय रोम के लिए बहुत निणार्यक सिद्ध हुई क्योंकि इससे रोम को मध्य इटली के संपन्न संसाधनों की पहुंच मिली। मध्य इटली में अपनी सत्ता स्थापित करने के पश्चात् रोम दक्षिणी इटली की ओर मुड़ा, जो यूनानियों का एक उपनिवेश था। अंततः रोम

ने यूनानियों से कई घमासान लड़ाइयों के पश्चात् इस क्षेत्र में अपनी सत्ता स्थापित की। 266 बी सी ई तक प्रायद्वीपीय इटली पर लंबी और दुष्कर विजयों द्वारा रोमन कब्ज़ा पूरी तरह से स्थापित हो गया। अब, संपूर्ण प्रायद्वीप प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से रोम के अधीन था।

1.3.2 विजय का दूसरा चरण

इटली पर नियंत्रण के बाद रोम भूमध्यसागरीय जगत (264-133 बी सी ई) का विजेता बनने के लिए निकल पड़ा। तीसरी शताब्दी बी सी ई के मध्य तक रोमन गणतंत्र ने प्यूनिक युद्ध[2] के नाम से पहचाने जाने वाले सैन्य अभियानों की श्रृंखला का आरंभ कर दिया था। ये युद्ध कार्थेज के विरूद्ध लड़े गए, जो कि आधुनिक ट्यूनीशिया में फोनेशियनों द्वारा स्थापित उपनिवेश था, परिणामस्वरूप इसके वृहद कृषि क्षेत्र और सिसली, कोरसिका और पूर्वी आईबेरियन प्रायद्वीप के भागों के व्यावसायिक संसाधनों पर उनका नियंत्रण कायम हो गया। तीन प्यूनिक युद्ध लड़े गए और तीसरे प्यूनिक युद्ध के अंत में कार्थेज के साम्राज्य का पूरी तरह से विनाश हो चुका था और उसके प्रदेशों को रोम में मिला लिया गया। जिन प्रदेशों को प्यूनिक युद्धों के द्वारा साम्राज्य में मिलाया गया था उन्हें रोमन प्रांत सिसली, स्पेन और अफ्रीका के तौर पर पुनर्गठित किया गया।

पूर्व में रोमन गणतंत्र ने मेसिडोनिया और अन्य यूनानी राज्यों से युद्ध किया और उन्हें अपने नियंत्रण में ले लिया। रोमन प्रभाव ने एनातोलिया को भी अपने में समाहित किया और मिस्र तक फैल गया। इस प्रकार, रोमन प्रभाव दूसरी शताब्दी बी सी ई के मध्य तक मध्य भूमध्यसागरीय क्षेत्र में स्थापित हो गया।

मानचित्र 1.1 : रोमन साम्राज्य का महान्तम विस्तार-क्षेत्र, 117 सी ई, ट्रेजन की मृत्यु का काल

साभारः तातारिन

स्रोत:https://en.wikipedia.org/wiki/Roman_Empire#/media/ File:Roman_Empire_ Trajan_117AD. png

2 प्रथम प्यूनिक युद्ध, 264-241 बी सी ई; द्वितीय प्यूनिक युद्ध, 218-201 बी सी ई; तृतीय प्यूनिक युद्ध, 149-146 बी सी ई।

1.4 रोमन गणतंत्र की राजनीतिक संरचना

गणतंत्र के तीन मुख्य घटक थे – सीनेट, मैजिस्ट्रेट और आम जनता। गणतंत्र राज्य के शीर्ष पर दो कॉन्सल थे। उनकी सहायता के लिए बड़ी संख्या में मैजिस्ट्रेट थे। इसके वहां अतिरिक्त प्रत्येक पांच वर्ष में प्रत्येक नागरिक की सामाजिक स्थिति की जांच और जनगणना कराने के लिए जनसंख्या नियंत्रक अधिकारी (*सेंसर्स*) थे। तत्पश्चात् जनजातीय, **अभिजात वर्ग (Patricians)** और **निम्न वर्गों (Plebeians)** की सभाएं भी थीं।

1.4.1 सीनेट

गणतंत्र पर सीनेट का प्रभुत्व था और सदस्यता कुलीन वर्ग (भूमिपति अभिजात वर्ग) तक ही सीमित थी। सीनेट की सदस्यता जीवन भर के लिए थी और यह सह-चयनात्मक थी (अर्थात् केवल मूल सदस्य ही अतिरिक्त नए सदस्यों का चयन कर सकते थे)। इस प्रकार, सीनेट भूमिपति अभिजात वर्ग की एक सभा थी जिसकी सत्ता असीमित थी। सीनेट की सर्वोच्च और निरंतर बढ़ती शक्तियां उसकी कानून बनाने, मैजिस्ट्रेटों की शक्ति पर अंकुश रखने और विदेशी मामलों पर नियंत्रण करने की योग्यता पर निर्भर थी। सीनेट की शक्ति में और अधिक वृद्धि उनके सामूहिक प्रभाव, समृद्धि और उसके सदस्यों के अनुभव से हुई।

1.4.2 मैजिस्ट्रेट

प्रत्येक वर्ष जनता द्वारा गणतंत्र के सर्वोच्च अधिकारियों का चयन किया जाता था। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण वे दो कॉन्सल होते थे जो सीनेट की अध्यक्षता करते थे, और उनमें कार्यकारिणी, सैन्य और न्यायिक शक्तियां निहित थीं। 366 बी सी ई तक कान्सूलेट संस्था पर कानूनी रूप से चुने हुए चंद अभिजात वर्ग के लोगों का एकाधिकार था, तब हाल ही में समृद्ध हुए निम्न वर्ग (plebeians) ने अभिजात वर्ग को दो में से एक कॉन्सल के पद पर उनके सदस्यों के प्रवेश को स्वीकारने पर मज़बूर किया। लेकिन 172 बी सी ई में पहली बार दोनों कॉन्सल निम्न वर्ग (plebeians) से चुने गए। पूर्व कॉन्सल स्वतः ही सीनेट के सदस्य बन जाते थे। इस तरह सीनेट की सदस्यता का विस्तार हुआ और अभिजात वर्ग (Patrician) के अलावा इसमें हाल ही में समृद्ध हुए निम्न वर्ग (plebeians) के सदस्यों को भी शामिल किया गया।

कॉन्सलों के अलावा रोमन गणतंत्र में चुने हुए अन्य अनेक मैजिस्ट्रेट/कॉन्सल थे। दंडाधिकारी (praetor) को कानून प्रशासन का कार्यभार सौंपा गया। प्रारम्भ में नियंत्रक (censor) को प्रशासनिक करों के लिए रजिस्ट्रार के तौर पर नियुक्त किया गया, लेकिन जल्द ही नैतिकता के मामलों में उसे विस्तृत अधिकार प्राप्त हुए। *एडिल्स* (aediles) को लोक कार्य, और रोम में सड़कों और इमारतों के निर्माण का कार्यभार सौंपा गया था।

1.4.3 जनता

अपनी विभिन्न सभाओं में जनता मैजिस्ट्रेट का चुनाव करती थी, स्वीकृत और अस्वीकृत विधेयकों को उनके सामने रखा जाता था, और वे युद्ध और शांति के मामलों पर निर्णय लिया करती थी। सिद्धांत में, संप्रभुता का सिद्धांत प्रजा के अंदर ही निहित था, लेकिन वे मैजिस्ट्रेट द्वारा बुलाने पर ही मिल सकते थे और उनके सामने जो मुद्दा रखा जाता था वे उस पर बिना किसी बहस के मत दिया करते थे।

1.4.4 सभा

कॉमीशिया (*Comitia*) का अर्थ है जहां पर लोग एकत्र होते हैं। इस प्रकार, रोमन सभाएं *कॉमीशिया* के नाम से जानी जाती थीं। मैजिस्ट्रेट समय-समय पर महत्वपूर्ण मामलों में मतदान के लिए इन सभाओं को बुलाता था।

कॉमीशिया क्युरिआटा (Comitia Curiata)

कॉमीशिया क्युरिआटा सभी नागरिकों की सभा थी। *क्युरिआटा* शब्द रोमन नातेदारी आधारित जनजातीय इकाई *क्युरिएई* से व्युत्पन्न था। ये संख्या में कुल तीस थीं और तीन जनजातीय समूहों में विभाजित थीं जिसमें प्रत्येक में दस *क्युरिएई* थे। *क्युरिएट* के पास मसलों पर चर्चा करने का अधिकार नहीं था, ये केवल उसे स्वीकार या अस्वीकार कर सकती थीं। ये मैजिस्ट्रेट तथा धार्मिक अधिकारियों का चुनाव करती थीं, कानूनों को स्वीकृति देती थीं और युद्ध और शांति पर निर्णय लेती थीं। यह *क्युरिएई* ही थी जिसने राजशाही के उन्मूलन का निर्णय लिया और गणतंत्र की स्थापना की। किसी भी *सेंचुरिआटा* का आदेश तब तक कानून नहीं बन सकता था जब तक *क्यूरिएई* ने इसे स्वीकृत नहीं किया हो।

यद्यपि निम्न वर्ग (plebeians) और अभिजात वर्ग (Patrician) दोनों ही इन *क्युरिएई* का हिस्सा थे, अक्सर अभिजात वर्ग अपने प्रभुत्व का प्रयोग कर मुद्दों को प्रभावित करते थे। बाद में निम्न वर्ग की आवाज़ इस सीमा तक अप्रसांगिक हो गई कि प्रत्येक *क्युरिएई* ने मतदान के लिए सभा में केवल एक ही व्यक्ति को भेजना आरंभ कर दिया। धीरे-धीरे अभिजात वर्ग का प्रभाव इस हद तक बढ़ गया कि इसमें मुश्किल से ही निम्न वर्ग के हित की किसी बात का प्रतिनिधित्व होता हो। अतः सभा को पुनः संगठित करने की मांग और दबाव बढ़ने लगा, जिसके कारण नई सभा, *कॉमीशिया सेंचुरिआटा* का गठन हुआ।

सर्वियस इन्लियस (r. 575-535 बी सी ई) ने *कॉमीशिया क्यूरिआटा* के प्रमुख अधिकार *कॉमिशिया सेंचुरिआटा* को स्थानांतरित कर दिए। फिर भी *क्यूरिआटा* के पास *सेंचुरिआटा* द्वारा पारित किसी भी मसले को पारित करने या अस्वीकार करने का अधिकार कायम रहा। प्यूनिक युद्धों के काल में, *क्यूरिआटा* ने अपना महत्व पूर्णरूप से खो दिया और उसका अस्तित्व लगभग समाप्त हो गया तथा उसका अधिकार क्षेत्र मात्र सामाजिक-धार्मिक प्रकृति के मसलों तक सिमट कर रह गया।

कॉमीशिया सेंचुरिआटा

कॉमीशिया सेंचुरिआटा, क्युरिआटा की तरह ही यह भी सभी नागरिकों की सभा थी जिसमें अभिजात वर्ग और निम्न वर्ग दोनों (दास, *पेरेग्रिनी* [विदेशी], महिलाएं और *ऐईरारी* [जो व्यक्तिगत कर (poll tax) के अधीन थे] को छोड़कर) सम्मिलित थे। हालांकि, ये लोग अलग-अलग समूह में बंटे हुए थे। तीस *क्यूरिआई* से 193 '*सेंचुरिआई*' (प्रत्येक *सेंचुरिआई* में 100 पुरुष होते थे, यद्यपि ऐसा हमेशा नहीं होता था) का निर्माण हुआ। ये *सेंचुरिआई* पांच वर्गों में समूहित थीं। इनमें से प्रथम तीन विशेष रूप से कुलीन वर्ग और भूपति वर्ग के लिए थीं। संपत्तिहीन नागरिकों को *प्रोलेतारी* (*proletarii*) के नाम से वर्गीकृत किया गया जो कि अंतिम वर्ग में आते थे, यद्यपि ये संख्या में सबसे अधिक थे और पहले तीन वर्ग संख्या में काफी कम थे। लेकिन, संख्या का मतदान के संदर्भ में कोई अर्थ नहीं था क्योंकि, प्रति व्यक्ति (एक मत एक व्यक्ति) का मत नहीं गिना जाता था बल्कि प्रति '*सेंचुरिआई*' का एक मत गिना जाता था और *प्रोलेतारी* को 193 *सेंचुरिआई* में से प्रति *सेंचुरिआई* केवल एक ही मत प्राप्त होता था। इस प्रकार, अल्पसंख्यक होने के बावजूद अभिजात वर्ग की आवाज़ सभा में प्रभावी होती थी। ये वर्ग अगर किसी विषय पर निर्णय ले लेते थे तो निम्न वर्ग के मत की आवश्यकता नहीं होती थी। यहां तक कि ऐसा बहुत कम ही होता था जब निम्न वर्ग (plebeian) को मत के लिए बुलाया जाता था। यह अश्वारोहियों (*equites*) के साथ भी होता था (मूल रूप से रोमन सेना के घुड़सवार, जो बाद में राजनैतिक महत्व के समृद्ध वर्ग में शामिल हो गए)।

450 बी सी ई के आस-पास गठित *सेंचुरिआटा* गणतंत्र काल के दौरान नागरिकों की प्रमुख सभा बनी रही। सर्विअस इयूलियस ने *कॉमिआटा* के अधिकार क्षेत्र से मजिस्ट्रेटों, कॉन्सलों और नियंत्रकों (censors) को चुनना, कानून पारित करना (ट्वेल्व टेबल का प्रसिद्ध कानून

कॉमिआटा सेंचुरिआटा द्वारा पारित हुआ था), *सेंचुरिआटा* में अपील करने का अधिकार, युद्ध और शांति से संबंधित विषय आदि अधिकारों को स्थानांतरित कर दिया जो कि सभा के विशेषाधिकार थे।

कॉन्सिलियम प्लेबिस अथवा *कॉमीशिया प्लेबिस ट्रिब्यून*

कॉन्सिलियम प्लेबिस विशेष रूप से निम्न वर्ग (plebeians) की विधानसभा थी। यहां निम्न वर्ग से संबंधित सभी विषयों पर चर्चा होती थी। इसके द्वारा प्लेबियन ऐडिलेस (plebeian aediles; सार्वजनिक इमारतों के प्रबंधन के लिए उत्तरदायी) और प्लेब्स ट्रिब्यून का चुनाव किया जाता था। इनके प्रस्ताव केवल *प्लेबी सूला* (कानून केवल *प्लेबिस* पर ही प्रभावी) थे। इस संस्था की स्वीकार्यता और सभा की सफलता इस तथ्य द्वारा आंकी जा सकती है कि जब 494 बी सी ई में प्लेबिस के दबाव में सभा द्वारा चयनित दो व्यक्तियों को, जिन्हें ***ट्रिब्यून*** कहा जाता था, राज्य ने (कॉन्सल के रूप में) प्रतिष्ठित करने की स्वीकार्यता दी। 448 बी सी ई, तक इनकी संख्या बढ़कर दस *ट्रिब्यून* हो गई। इसका महत्व इस अर्थ में है कि इसने निम्न वर्ग (plebeians) को सत्ता में प्रवेश प्रदान किया, इस प्रकार, *ट्रिब्यून* का पद समृद्ध निम्न वर्ग के बीच सबसे अधिक मांग में आ गया।

एक अन्य सभा *कॉमिशिया पॉपुली ट्रिब्यूटा* (जनजातीय लोगों की सभा) भी थी जिसके सदस्य सभी नागरिक थे और ये तीन जनजातीय समूहों में वर्गीकृत थे। यह प्राचीनतम सभा थी जो राजतंत्र के समय से अस्तित्व में थी। जनजाति के सभी युवा पुरुष सभा के सदस्य थे। इसका क्रम जनजातियों के विस्तार के अनुसार व्यवस्थित होता था।

चित्र 1.1ः स्वामी के लिए लिखित टैबलेट पकड़े हुए दास (चौथी शताब्दी की पत्थर के ताबूत पर बनी एक नक्काशी) पुरातत्व संग्रहालय, मिलान (इटली)
साभारः जिओवान्नी डाल' ओर्टो
स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/Roman_Empire#/media/File:Sarcofago_avvocato_V alerius_ Petrn ianus-optimized.jpg

1.5 विभिन्न श्रेणियों में राजनीतिक टकराव

किसी भी सभ्यता में देखा जाए तो समाज और राजनैतिक संरचना में हमेशा घनिष्ठ संबंध होता है। जैसा कि अमर फारूक़ी, वर्णन करते हैं कि रोमन साम्राज्य को नागरिकों के स्थाई रूप से दो 'श्रेणियों' (orders) में विभाजन द्वारा चिन्हित किया जा सकता हैः अभिजात वर्ग

(Patrician) और निम्न वर्ग (Plebeians)। अभिजात वर्ग में भूस्वामी कुलीन थे जो गणतंत्र के आरंभ से ही राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक शक्ति के एकाधिकार का उपभोग कर रहे थे। निम्न वर्ग में गरीब नागरिक थे जो छोटे भूस्वामी, कारीगर, व्यापारी और श्रमिक थे। भूमध्यसागरीय क्षेत्र में विस्तार से एक नए व्यापारी वर्ग (equites; अश्वारोही वर्ग) में वृद्धि हुई जिनकी व्यक्तिगत संपत्ति अक्सर भूस्वामी अभिजात वर्ग (कुलीन वर्ग) से कहीं अधिक थी। अभिजात वर्ग अश्वरोहियों के वाणिज्यिक विकास को बेईमानी की कमाई मानता था और जल्द ही दोनों वर्गों में खुला संघर्ष हो गया, इस संघर्ष में निम्न वर्ग 'अश्वरोही' वर्ग में शामिल हो गया।

पांचवी शताब्दी बी सी ई से अभिजात वर्ग और निम्न वर्ग के मध्य संघर्ष बढ़ा। गणतंत्र के आरंभिक वर्षों से ही सीनेट ने राजनैतिक शक्ति को अपने हाथ में पूर्ण रूप से केंद्रित करने का प्रयास किया और निम्न वर्ग शासन में अपना हिस्सा प्राप्त करने के लिए संघर्षरत था। रोमन स्रोत इस पर ज़ोर देते हैं कि पूरा संघर्ष जो लगभग पांच पीढ़ियों तक चला, वह कम से कम हिंसा और बिना किसी रक्तपात के था। यह इसलिए हुआ क्योंकि इसमें भाग लेने वाले प्रत्येक प्रतिभागी को एक दूसरे के सहयोग की आवश्यकता थी। रोमन अभिजात वर्ग को किसान वर्ग के सहयोग की आवश्यकता थी जिन्हें युद्ध में लड़ने और राज्य की सुरक्षा के लिए सेना में भर्ती किया गया था। निम्न वर्ग को अभिजात वर्ग के नेतृत्व और अनुभव की आवश्यकता थी। इसलिए उनमें समझौता करने की तत्परता थी।

1.5.1 टकराव का पहला चरण और संविधान में परिवर्तन

पांचवी शताब्दी बी सी ई में निम्न वर्ग का उद्देश्य सीनेट और मजिस्ट्रेट के अन्याय और एकपक्षीय कृत्यों के विरूद्ध सुरक्षा प्राप्त करना था। यह सुरक्षा तब प्रभाव में आई जब इन्हें 450 बी सी ई में 'ट्वेल्व टेबल्स'[3] नाम के कानून का लिखित कोड प्राप्त हुआ। इस कोड ने अभिजात वर्ग द्वारा किए जाने वाले न्याययिक प्राधिकरण के एकपक्षीय कृत्यों की सीमा को कम किया। इसके अतिरिक्त, 326 बी सी ई में एक कानून पारित हुआ जिसमें रोमन नागरिकों के द्वारा न चुकाए जा सकने वाले ऋणों के बदले में दास बनाने पर प्रतिबंध लगा दिया गया। इस प्रकार, 'ऋण बंधन' आधारित दासता समाप्त हो गई। 445 बी सी ई में अभिजात वर्ग और निम्न वर्ग के बीच अन्तर्विवाह को पहचान मिली और इससे धनी निम्न वर्ग की बहुत बड़ी व्यथा दूर

चित्र 1.2: ट्वेल्स टेबल्स के पहली बार लागू होने के बाद रोमन नागरिक उसे जांचते हुए

साभार: स्टाफ. 4 जे.लेन. ईडीयू

स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/Twelve_Tables#/media/File:Twelve_Tables_Engraving.jpg

[3] 451-450 बी सी ई में 12 कांस्य की पट्टिकाओं पर *डेकोमवीरी* (decomviri; दस व्यक्तियों का मंडल) के द्वारा कानून का प्रारूप तैयार किया गया जो कि नागरिकों के लिए राज्य द्वारा पारित लिखित कानून के आरंभ की घोषणा करता है। इस प्रकार राज्य के कानून की नज़रों में सभी नागरिकों के लिए समानता की स्थापना हुई।

हुई। 390 बी सी ई के बाद के आर्थिक तनाव (जिसकी चर्चा इस पाठ्यक्रम की **इकाई 2** के **भाग 2.3** और **भाग 2.4** में की गई है) में सार्वजनिक भूमि का सही न्यायपूर्ण विभाजन करना मुख्य मुद्दा था। 367 बी सी ई में, एक लम्बे समय के संघर्ष के बाद, प्रत्येक व्यक्ति द्वारा भूमि पर अधिकार रखने की कुछ सीमा निश्चित किए जाने की स्थापना की गई।

राजनैतिक क्षेत्र में नव समृद्ध निम्न वर्ग, अभिजात वर्ग की सीमित परिसीमा में ज़बरदस्ती घुसना चाहता था। 266 बी सी ई के आस-पास इन्होंने 'अभिजात वर्ग' पर दो कॉन्सलों में से किसी एक में उनके प्रवेश को स्वीकार करने के लिए दबाव डाला। हालांकि, 172 बी सी ई में ही पहली बार दोनों कॉन्सलों की नियुक्तियां निम्न वर्ग में से हुईं (जैसा कि ऊपर बताया गया है)। जैसा कि पेरी एंडरसन का मानना है कि इस परिवर्तन से सीनेट के विस्तार को बढ़ावा मिला, क्योंकि पूर्व कॉन्सल स्वतः सीनेटर बन गए। अभिजात वर्ग की शक्ति में कमी नहीं आई बल्कि निम्न वर्ग के समृद्ध सदस्य ही दूसरी तरफ चले गए और उनके शामिल होने से व्यापक आभिजात्य वर्ग का गठन हुआ।

गणतंत्र के भीतर समृद्ध निम्न वर्ग के संघर्ष के साथ-साथ गरीब निम्न वर्ग द्वारा बढ़े हुए अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्ष चल रहा था। इन्होंने अपनी शक्ति का प्रभावशाली प्रदर्शन तब किया जब इन्होंने रोम छोड़ने और स्वयं अपने लिए पृथक राज्य की स्थापना करने की धमकी दी। इस दबाव के कारण एक जनजातीय सभा का गठन हुआ (आरंभ में इसे *'कॉन्सिलियम प्लेबिस'* के तौर पर जाना जाता था)। 287 बी सी ई के एक कानून के द्वारा *'कॉन्सिलियम प्लेबिस'* के निर्णय राज्य पर बाध्य थे, और उन निर्णयों के पीछे कानून की शक्ति थी (विस्तृत विवरण के लिए **1.4.4 भाग** देखें)।

इसने अपने अधिकारियों, 'ट्रिब्यून' की नियुक्ति स्वयं की जिसके पास अन्ततः रोमन मजिस्ट्रेट के निर्णयों पर वीटो पावर का प्रयोग करने का अधिकार था। ट्रिब्यून संख्या में दो थे और सिद्धांत में निम्न वर्ग के हितों का प्रतिनिधित्व करते थे। यह एक सहायक और समानान्तर संस्था थी जिसकी रचना अमीरों के अत्याचार से गरीबों की रक्षा करने के लिए की गई थी।

संविधान में परिवर्तन के महत्व

ऐसा प्रतीत होता है कि निम्न वर्ग के हित केवल कुछ समय के लिए ही संरक्षित हो पाए। लेकिन जैसा कि पेरी एंडरसन इस बात पर बल देते हैं कि प्रखर और लम्बे सामाजिक संघर्ष के परिणामस्वरूप संविधान, हालांकि लोकप्रिय परिवर्तनों से गुज़र रहा था, लेकिन इसके बावजूद यह कभी निरस्त या बदला नहीं गया। इसके बजाए इस जटिल संविधान ने वंशानुगत अभिजात वर्ग की अखंड शक्ति को बनाए रखा। ट्राइब्यूनेट और जनजातीय सभा (Tribal Assembly) को सामान्य रूप से केंद्रीय संस्था सीनेट, कॉन्सलेट और *सेंचुरिआट* सभा में शामिल कर दिया गया। इन संस्थानों ने अभिजात वर्ग की शक्ति को न तो समाप्त किया और न ही कम किया जो गणतंत्र पर लगातार अपना प्रभाव बनाए हुई थी। अक्सर गरीब वर्ग के संघर्ष को समृद्ध निम्न वर्ग ने आगे बढ़ाया और ट्रिब्यून्स, जिन्हें आमतौर पर धनी व्यक्तियों में माना जाता था, अधिकांशतः लम्बी अवधि के लिए सीनेट के हाथ की कठपुतली बन गए।

1.5.2 टकराव का दूसरा चरण

वर्गों के संघर्ष में लगभग डेढ़ शताब्दी के लिए ठहराव आया। जब यह दुबारा आरंभ हुआ तो नए मुद्दों और नए प्रतिभागियों की सहभागिता पर आधारित था। रोमन गणतंत्र की अंतिम शताब्दी में अभियानों की श्रृंखला ने रोम को भूमध्यसागरीय विश्व में (प्युनिक, मेसिडोनिया, जुगर्थाइन, मिथ्रीडेटिक और गेलिक युद्धों) अपना प्रभुत्व स्थापित करने में सफलता दिलाई। इसने युद्ध बंदियों के आयात को बढ़ावा दिया जिन्हें सीनेटोरियल अभिजात वर्ग के द्वारा दास

के तौर पर काम पर रखा जाता था। वहीं दूसरी ओर देश में अनेक भीषण संघर्ष चल रहे थे (हेन्निबेलिक, सामाजिक और गृह युद्ध) जिसमें हारे हुए लोगों के विशाल क्षेत्रों को हड़प कर सीनेटोरियल अभिजात वर्ग के हाथों सौंपा जा रहा था। इस प्रकार रोमन युद्धों द्वारा विस्तार ने सीनेटोरियल कुलीन तंत्र की शक्ति और समृद्धि में असाधारण वृद्धि की। इससे नई ग्रामीण संस्था '*लैटिफंडिया* का उदय हुआ – जिसमें समृद्ध भूस्वामियों द्वारा विशाल भूखंडो पर दासों के समूहों को काम करने के लिए नियुक्त किया जाता था।

बोध प्रश्न-1

1) रोम के आरम्भिक इतिहास का लगभग 50 शब्दों में वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

2) लगभग 510 से 27 बी सी ई तक रोमन विस्तार के चरणों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

3) प्यूनिकयुद्ध क्या थे? रोमन विस्तार में उनकी भूमिका की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

4) रोम की राजनैतिक संरचना की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

5) विभिन्न 'श्रेणियों (Orders) में राजनैतिक टकराव की क्या वजह थी? क्या इस टकराव ने राजनैतिक संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये?

....

....

....

....

....

1.6 ग्रैची बंधुओं के सुधार

यह चरण कृषकों के पतन और सैन्य विवादों के विलय से चिन्हित है।

1.6.1 कृषकों या 'एसिडुई (Assidui) वर्ग' का पतन

युद्धों में विजय के साथ-साथ यह कृषकों को तेजी से पतन की ओर ले गया। इन्होंने रोम को सफल अभियानों के लिए मानव श्रम उपलब्ध कराया था, जिससे रोम ने भूमध्यसागरीय विश्व में अपना प्रभुत्व स्थापित किया था, लेकिन उन्हें इसके बदले कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ। रोमन कानून के अनुसार वयस्क पुरुष नागरिक जिसके पास न्यूनतम संपत्ति की योग्यता थी उसे अनिवार्य रूप से सेना में कार्य करना जरुरी था। सालों साल लीजन्स (Legions; आधारभूत सैन्य इकाई) में भर्ती होते रहने के कारण हज़ारों की संख्या में इनकी मृत्यु हुई, जबकि जो जीवित रहे वे अपने घर के खेतों को संभालने में अक्षम हो गए, अतः उन पर अभिजात वर्ग द्वारा तेज़ी से कब्ज़ा कर लिया गया। 146 बी सी ई के पश्चात् कृषकों का संघर्ष भूमि सुधार के प्रश्न पर केंद्रित हो गया। अमर फारूक़ी के अनुसार, भूमि सुधार का प्रश्न केवल कृषकों में तीव्र तनाव के कारण ही अति आवश्यक नहीं माना गया, बल्कि वह इसलिए भी अति आवश्यक था क्योंकि बिना भूमि के कृषक सेना में सेवा देने के लिए अयोग्य थे। कृषि में सुधार की अत्यधिक आवश्यकता महसूस की गई। लेकिन यह अभिजात वर्ग को स्वीकार्य नहीं था।

सीनेट के कड़े विरोध के कारण टाइबेरियस ग्रैचुस (पापुलेयर्स, एक सुधारवादी गुट का प्रमुख सदस्य; मृत्यु 133 बी सी ई) द्वारा प्रस्तावित सुधार जिसका उद्देश्य प्रति व्यक्ति द्वारा खरीदी जा सकने वाली भूमि की सीमा को कम करने की ओर था, और अतिरिक्त भूमि को पुनः वितरण करना था, की हार हुई, और ट्रिब्यून की हत्या कर दी गई। बाद में, उसके छोटे भाई, गेयस ग्रैचुस (123 बी सी ई में ट्रिब्यून के लिए चयनित हुआ) ने सामाजिक न्याय के उद्देश्य से और अधिक तीव्र सुधार लागू करने का प्रयास किया। इसके नए सुधारों में प्रांतों के प्रशासन और कर व्यवस्था, गरीब नागरिकों ('***प्रॉलितेरी***' वर्ग) को रियायती अनाज की आपूर्ति सुनिश्चित करने के साथ-साथ न्यायिक और भूमि सुधारों को भी शामिल किया। इसने इतावली मित्र राष्ट्रों तक रोमन नागरिकता का विस्तार करने का प्रस्ताव रखा (इस पाठ्यक्रम की **इकाई 2** में हम इसकी विस्तार में चर्चा करेंगे)।

सीनेट ने पुनः सुधारों का कड़ा विरोध किया और गेयस ग्रैचुस भी सीनेट द्वारा भड़काने के कारण मार दिया गया (121 बी सी ई) और उसके कानूनों को रद्द कर दिया गया। ग्रैची भाईयों के दमन के द्वारा किसानों के भूमि आंदोलन को दबाया गया। इसके अतिरिक्त, विदेशों से सस्ते अनाज के आयात ने इनकी विपत्ति को और बढ़ा दिया। इस प्रकार, किसानों के तनाव ने वर्ग विवाद को तेज़ किया और गणतंत्र के पतन में योगदान दिया।

1.6.2 सैनिकों में बढ़ता असंतोष

इसी समय किसानों के संकट के साथ सैनिकों में बढ़ते हुए असंतोष ने भी गणतंत्र की बढ़ती हुई अव्यवस्था में योगदान किया। **सीनेटोरियल कुलीन तंत्र** ने विस्तारवादी युद्धों और विशाल साम्राज्य के अधिग्रहण से अत्यधिक लाभ प्राप्त किया। लेकिन वे पूर्ण रूप से उन

सैनिकों को प्रतिफल देने के लिए तैयार नहीं थे जिन्होंने विजय द्वारा इस लाभ की प्राप्ति कराई थी। सेवा से भारमुक्त होने के बाद जो सैनिक भूमि अनुदान और दान के लिए आंदोलन कर रहे थे, अब पूर्ण रूप से राज्य द्वारा भ्रमित थे। इसका परिणाम यह हुआ कि अब सैनिक अपने विजयी सेनापतियों की ओर इस आशा से देखने लगे कि वे उनके लिए अपनी व्यक्तिगत शक्ति द्वारा लूट या दान सुनिश्चित करेंगे। जैसा कि पेरी एंडरसन कहते हैं कि, गेयस मारिअस (156-86 बी सी ई) और लुसियस सुला (138-78 बी सी ई) के समय से सैनिक अपने सेनापतियों की ओर आर्थिक पुनर्वास के लिए देख रहे थे, वहीं सेनापतियों ने अपने सैनिकों का उपयोग राजनैतिक उन्नति के लिए किया। परिणामस्वरूप गृह युद्ध का प्रकोप देखने को मिलता है जिसकी वजह से रोमन साम्राज्य में सेना एक महत्वपूर्ण तत्व की तरह उभरी।

1.6.3 बढ़ती अशांति में शहरी गरीब वर्ग की भूमिका

शहरी प्रॉलितेरियत (सर्वहारा वर्ग) ने गृह युद्ध, जिसने रोमन गणतंत्र की अंतिम शताब्दी को चिह्नित किया, के दौरान काफी दवाब डाला। पेरी एंडरसन स्पष्टतः वर्णन करते हैं कि रोमन विस्तारवाद की नीति ने 'एसिडुई' वर्ग (assidui) में कमी की जो बड़ी संख्या में सेना में अनिवार्य और आकस्मिक भरती प्रदान करते थे। परिणामस्वरूप एसिडुई वर्ग में लगातार कमी और प्रोलेतारी (भूमि-हीन नागरिक) की संख्या में वृद्धि आती गई। यह घटनाक्रम कुलीन तंत्र द्वारा भूमि पर बढ़ते एकाधिपत्य का भी परिणाम था। इस प्रकार, रोमन समाज का पूर्ण रूपांतरण हो गया और तीसरी शताब्दी बी सी ई के अंत तक वहां ऐसे नागरिकों का बहुमत था जो भूमि-हीन बना दिये गये थे।

शहरी जनता की दुर्दशा ने सीनेटोरियल शक्ति से संबंधित संकट को और तीव्र रूप से तेज़ कर दिया था। तेज़ी से भूमि से दूर होती ग्रामीण आबादी और बड़ी मात्रा में दासों के आयात ने एक ऐसे विशाल नगर को जन्म दिया जिसका शासन आसान कार्य नहीं था। 53 बी सी ई में पहली बार मुफ्त अनाज बाटा गया और जल्द ही यह रोमन राजनैतिक जीवन का स्थायी तत्व बन गया। यह शहरी प्रॉलितेरियत का समर्थन ही था जो पोंपई द ग्रेट (रोमन सेनापति; मृत्यु 48 बी सी ई) को सत्ता में लाया, जैसा कि पेरी एंडरसन कहते हैं कि, इस समर्थन ने रोमन गणतंत्र के सैनिक पतन का आरंभ कर दिया। बाद में लोकप्रिय समर्थन ने जुलियस सीज़र (मृत्यु 44 बी सी ई) को विजेय बनाया, जो सीनेट के लिए खतरा साबित हुआ। सीज़र की हत्या के पश्चात् एक बार फिर शहरी आमजनों के समर्थन ने सीनेट को आगस्टस (प्रथम रोमन सम्राट; r. 27 बी सी ई 14 बी सी ई) से कांउसल बनने और शक्ति ग्रहण करने के लिए विनती करने पर मजबूर किया।

1.7 गणतंत्र की अंतिम शताब्दी और विजयी सैन्य कमांडरों का उदय

जैसे-जैसे गणतंत्र की अंतिम शताब्दी में सीनेटोरियल कुलीन तंत्र और आम जनता के बीच संघर्ष में वृद्धि हुई, महत्वाकांक्षी राजनेताओं ने कभी एक तो कभी दूसरे पक्ष के साथ होकर इस संघर्ष का लाभ उठाया। सूला की तानाशाही रोमन गणतंत्र के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ था। इसके पश्चात् शक्तिशाली सैनिक सेनापतिओं या 'सैन्य लॉर्ड्स' ('warlords') ने रोमन साम्राज्य पर नियंत्रण किया। उनकी आपसी रंजिशों ने गणतंत्र के पतन की प्रक्रिया को और तेज़ कर दिया। यह अवधि, जिसमें गंभीर सामाजिक और राजनैतिक संकटों का आगाज़ हुआ, पश्चिम एशिया में मुख्य सैनिक अभियानों का काल भी थी।

1.7.1 पहला 'ट्रायमविरेट' (First 'Triumvirate')

सूला, एक सफल सेनापति था जिसने सीनेट के पक्ष का समर्थन किया और सीनेट में बहुत

से सुधार किए। उसने सीनेट की शक्तिओं को मजबूत किया, लेकिन इन सुधारों ने ट्रिब्यून की शक्तिओं को गंभीर रूप से घटा दिया। अन्य सेनापतिओं ने उसके सुधारों को तुरंत नष्ट कर दिया, खास तौर पर पाम्पेई और क्रेसस (मृत्यु 53 बी सी ई) ने। 60 बी सी ई में एक निर्णायक पल तब आया जब पाम्पेई और क्रेसस ने जूलियस सीज़र के साथ मिलकर 'ट्रायमविरेट' बनाया – तीन पुरुषों की सत्तारुढ़ समिति जिसे सेना और जनता का समर्थन हासिल था। इसके साथ ही सीनेट शक्तिहीन हो गई। हालांकि क्रेसस की मृत्यु के पश्चात् दोनों सेनापतिओं के बीच मतभेद पैदा हो गए। सीज़र की सैनिक शक्तिओं और सफलताओं से पाम्पेई को खतरा महसूस हुआ, और अन्त में उसने सीनेट का साथ दिया। सीज़र, एक प्रतिभाशाली सैनिक था जिसने गॉल को विजय किया था, वह प्रतिद्वंद्विओं को हराने में सफल रहा और 44 बी सी ई में वह 'जीवनभर के लिए रोम का तानाशाह' बन गया। परंतु उसके विस्तृत सुधारों ने रोम के बहुत से लोगों में यह शंका पैदा की कि, उसकी महत्वाकांक्षा सम्राट बनने की थी। ब्रूटस, सीज़र का सबसे करीबी दोस्त, के नेतृत्व में हत्यारों के एक समूह ने सीज़र को 44 बी सी ई में मौत के घाट उतार दिया।

1.7.2 दूसरा 'ट्रायमविरेट' (Second 'Triumvirate')

षड्यंत्रकारियों की विजय अनन्त नहीं थी। सीज़र के दो उप-सेनापतिओं – मार्क ऐन्टनी और लेपिडस – सीज़र के गोद लिए उत्तराधिकारी, ऑक्टेवियन, के साथ इन षड्यंत्रकारियों के खिलाफ अभियान करने के लिए सैन्यदल में शामिल हुए। इस प्रकार 'दूसरे ट्रायमविरेट' का गठन हुआ। प्रतिद्वंद्विओं पर सार्थक विजय प्राप्त करने के बाद दूसरा ट्रायमविरेट सत्ता में आया जिसने आपस में साम्राज्य को बांट लिया। जल्द ही उनमें झगड़े पैदा हो गए और लेपिडस को उसकी शक्तिओं से वंचित करने के बाद ऑक्टेवियन ने मार्क ऐन्टनी को ऐक्टियम की लड़ाई (31 बी सी ई), रोमन गणतंत्र का अंतिम युद्ध, में निर्णायक रूप से पराजित किया। अब ऑक्टेवियन रोमन जगत का निर्विवादित सम्राट बन गया और एक नये युग की शुरुआत के साथ गणतंत्र का अंत हुआ।

1.8 आगस्टस का युग

31 बी सी ई में मार्क ऐन्टनी को ऐक्टियम की लड़ाई में पराजित कर ऑक्टेवियन (27 बी सी ई-14 सी ई) सत्ता में आया और उसे सीनेट द्वारा आगस्टस, 'द रेवर्ड', की उपाधि से नवाज़ा गया। यह एक ऐसी उपाधि थी जिसका प्रयोग पूर्व में ईश्वर के लिए किया जाता था। ऑक्टेवियन को अक्सर 'प्रिन्सेप' या 'प्रथम नागरिक' भी कहा जाता था। उसने गणतंत्र के मुखौटे में छुपे राजतंत्र को स्थापित कर रोम में शांति का काल स्थापित किया। आगस्टस ने अपने दत्तक पिता 'सीज़र' के नाम को भी अपनाया। वह रोम का प्रथम सम्राट था, उसके नाम का लैटिन में अर्थ 'सम्राट' यानी 'विजयी सेनापति' था। उसे यह उपाधि सेना द्वारा नवाजी गई। आने वाली पांच शताब्दियों के लिए, रोम पर सम्राटों द्वारा शासन किया गया। इसलिए इस अवधि को रोमन इतिहास में 'साम्राज्य का युग' कहा जाता है।

साम्राज्य की पहली दो शताब्दियों (30 बी सी ई-180 सी ई) में '***पैक्स रोमाना***' (रोमन शांति) का अनुगमग हुआ। भूमध्यसागरीय जगत के एकीकरण ने शासन के सुधार और आर्थिक विस्तार में मदद की। हालांकि, तीसरी शताब्दी सी ई में, रोमन साम्राज्य का पतन आरंभ हुआ। कुछ शासकों ने व्यवस्था को सुधारने के लिए कठोर कदम उठाये लेकिन रोमन साम्राज्य के पतन में अंतिम झटका बर्बर आक्रमणों द्वारा पहुंचा।

आगस्टस के सुधार

आगस्टस ने रोमन साम्राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में सुधार किए:

क) राजनैतिक और संवैधानिक,
ख) प्रशासनिक,
ग) सेना,
घ) समाज और अर्थव्यवस्था।

1.8.1 राजनैतिक और संवैधानिक सुधार

आगस्टस ने अपने मजबूत व्यक्तिगत नेतृत्व के साथ-साथ बाहरी रूप से गणतंत्रीय संस्थानों को संरक्षित करने का निर्णय लिया। उसने सीनेट को अत्याधिक अधिकार प्रदान किये। उसने सीनेट से कई महत्वपूर्ण विषयों पर परामर्श लिए, और सीनेट को इटली और आधे से ज्यादा प्रांतों पर नियंत्रण बनाए रखने की अनुमति प्रदान की। आगस्टस ने सीनेट को लगभग निष्क्रिय **जनजातीय सभा** के विधायी कार्य भी सौपें।

हालांकि, आगस्टस ने ट्रिब्यून की शक्तियां स्वयं अपने पास रखीं जिसने उसको कानून लागू करने और वीटो करने का अधिकार दिया। उसने सीमांत प्रांतों का गवर्नर पद भी अपने पास रखा, जहां पर सेना तैनात थी। उसके द्वारा सेना पर नियंत्रण का मतलब था कि उसकी शक्ति को कोई सफलतापूर्वक चुनौती नहीं दे सकता था। धीरे-धीरे आगस्टस ने अपने हाथों में असीम शक्तियां केंद्रित कर ली और सीनेट धीरे-धीरे पृष्ठभूमि में चली गई। गणतंत्रीय संस्थाओं और मजिस्ट्रेटों का अतीत के उनके नामों के सिवाए और कुछ भी बरकरार नहीं रहा।

1.8.2 प्रशासनिक सुधार

सुधारों की शृंखला द्वारा आगस्टस गणतंत्र के अंतिम काल में हुए नागरिक संघर्ष को कम करने में और रोमन सामाजिक व्यवस्था को स्थिर रखने में सफल रहा। *'प्रेफैक्टी'*, *'प्रोक्यूरेटर्स'*, अथवा *'प्रेसाइड्स'* की उपाधियों के साथ अश्वारोही श्रेणी (Equestrion) से एक नई नौकरशाही को लाया गया। सभी नौकरशाहों को अपने कर्तव्यों के निर्वाह के लिए नकद वेतन का भुगतान किया जाता था और वे *प्रिंसेप्स*[4] के प्रति उत्तरदायी थे। उत्तर रोमन गणतंत्र (146-27 बी सी ई) की अव्यवस्थाओं ने आगस्टस को यह स्पष्ट कर दिया था कि सुरक्षा, एकता, कानून और सुव्यवस्था बनाए रखना अनिवार्य था। इसलिए आगस्टस ने रात के समय गश्त करने वाली पुलिस की एक नियमित सेना और चौकीदारों की सात कंपनियां (*कोहर्ट्स*) गठित की, जो आज़ाद पुरुष थे जिन्होंने पुलिस और फायरमैन की भूमिका निभाई। उन पर नियंत्रण के लिए एक अवश्वारोही प्रीफेक्ट को नियुक्त किया गया। उसने अपने लिए प्रेटोरियन रक्षक (शाही रोमन सेना की एक कुलीन इकाई) नियुक्त किए जो आरंभ में नौ *कोहर्टस* से संघटित थे। इनमें से अधिकतम तीन रोम में और अन्य पड़ोसी क्षेत्रों में तैनात रहते थे। प्रेटोरियन रक्षक के सेनाध्यक्ष आम तौर पर संख्या में पांच होते थे और वे अश्वारोही वर्ग के सदस्य होते थे। वे शासक के मुख्य सहायक बने। इस प्रकार रोमन कुलीन वर्ग का केंद्रीय राजनैतिक कार्यालय पर एकाधिकार खत्म हुआ।

212 सी ई में साम्राज्य का एकीकरण पूर्ण हुआ जब शासक एन्टोनियस ने साम्राज्य में लगभग हर एक आज़ाद निवासी को रोमन नागरिकता प्रदान की। एक शाही डाक सेवा का निर्माण किया गया ताकि साम्राज्य के दूरस्थ प्रांतों को पहली बार नियमित संचार व्यवस्था द्वारा एक साथ जोड़ा जा सके। जल्द ही प्रांतीय गवर्नरों को नियमित वेतन मिलने लगा। इस प्रकार साम्राज्य में केंद्रीय शक्ति का लगातार 'प्रांतीयकरण' हो रहा था।

1.8.3 सैन्य सुधार

आगस्टस ने एक मजबूत पेशेवर सेना का निर्माण किया था। उसने हज़ारों सैनिकों, जो गृह

[4] शुरुआती दौर में सीनेट के प्रमुख सदस्य बाद में, 23 बी सी ई में, आगस्टस ने यह उपाधि धारण की।

युद्धों के बाद अपदस्थ कर दिए गए थे, को भूमि प्रदान की। इनमें से अधिकतर भूमि उसकी निजी संपत्ति से प्रदान की गई थी। इस अनुदानों ने किसान-सिपाहियों को काफी हद तक शांत किया। जुलियस सीज़र ने पहले ही सक्रिय सेवा में नियुक्त सैनिकों का वेतन दुगना कर दिया था। इस बढ़े हुए वेतन का रखरखाव प्रिन्सिपेट द्वारा किया जाता था।

ज्यादातर सैनिक *एसिड्ुई* वर्ग या छोटे भूमिपति वर्ग से नियुक्त किए जाते थे, जो इटली और उसके बाहर के क्षेत्रों में लड़े गए लंबे युद्धों के परिणामस्वरूप तबाह हो गए थे। उनके समर्थन ने ऑक्टेवियन को सत्ता प्रदान की। इसके अतिरिक्त, 6 सी ई से, युद्ध के दिग्गजों (वे सैनिक जिन्हें लंबी सेवा के बाद मुक्त कर दिया गया था) को नकद वेतन दिया जाने लगा था। इसकी राशि 13 साल के वेतन के बराबर थी और यह सेना के लिए खासतौर पर निर्मित किए गए सैनिक खजाने से दिया जाता था (यह इटली के संपत्तिशाली लोगों से प्राप्त विरासत कर और छोटी-मोटी बिक्री द्वारा अर्जित वित्त से प्रदान किया जाता था)। सेना घटकर और कम हो गई, 58 से घटकर 32 *लीजन्स*, और उसे एक पेशेवर और स्थाई बल में तब्दील कर दिया गया। इस बदलाव ने एक क्रांतिकारी सुधार के लिए मार्ग प्रशस्त किया – टिब्रियस के शासन काल से कंस्क्रिप्शन (नागरिकों द्वारा अनिवार्य सैनिक सेवा) को हटा दिया गया । इसने इटली के छोटे भूपतियों को सैन्य बोझ से एक बहुत बड़ी राहत प्रदान की।

1.8.4 सामाजिक और आर्थिक सुधार

आगस्टस ने गरीब नागरिकों के सामने खुद को एक संरक्षक के रूप में प्रस्तुत किया। राजधानी में शहरी प्रोलितेरियत को अनाज वितरण कर संतुष्ट रखा गया। साम्राज्य में मिस्त्र के समावेश के साथ अनाज की आपूर्ति नियमित हुई। बाद में दूसरी शताब्दी सी ई के अंत तक तेल और वाइन भी भोजन के सार्वजनिक वितरण में सम्मिलित हो गए। एक महत्वाकांक्षी निर्माण कार्यक्रम की शुरुआत की गई जिसने गरीबों को काफी रोजगार प्रदान किया। आगस्टस ने अमीर सीनेटरों को राज़ी करने की कोशिश की, कि वे सार्वजनिक इमारतों को अपने स्वयं के खर्चे पर बनायें और नागरिकों को मनोरंजन प्रदान करने की गणतंत्रीय प्रथा को बनाए रखें। परंतु शासकों ने समय के साथ इस संदर्भ की अगुवाई की। आगस्टस गर्व से कहा करता था कि ''मैंने रोम को ईंटों के शहर के रूप में पाया था और उसे संगमरमर का शहर बनाकर छोड़ा''।

धर्म और सदाचार

आगस्टस ने परिवार और धर्म के पारंपरिक मूल्यों को बहाल करने के लिए एक कार्यक्रम विकसित किया था। उसने व्यभिचार पर अंकुश लगाने के लिए, और जल्दी शादी करने और बड़े परिवारों को प्रोत्साहन देने के लिए कानून पारित किए। उसके खुद के सादगी भरे व्यवहार ने लोगों के लिए एक व्यक्तिगत उदाहरण प्रस्तुत किया। उसने कवि ओविड को प्यार भरी उत्तेजक कविताएं लिखने के लिए काले सागर में निर्वासित किया। उसने खुद अपनी एक मात्र बेटी जूलिया को उसके प्रेम संबंधों को अनैतिक मानते हुए पांच साल तक एक छोटे से द्वीप पर निर्वासित किया। जूलिया को पुरुषों के साथ बातचीत करना सख्त मना था और उसके वाइन पीने पर भी प्रतिबंध था। आगस्टस ने रोमनों को पारंपरिक धार्मिक प्रथाओं की ओर लौटने के लिए प्रोत्साहित किया। बहुत सारी नई और पुनःस्थापित इमारतें मंदिर थीं। आगस्टस ने पुराने धार्मिक पंथों को पुनः प्रचलित किया और कुछ विदेशी ईष्ट देवों के पूजन पर प्रतिबंध लगाया।

आर्थिक सुधार

रोम के एकीकरण के दूरगामी आर्थिक परिणाम हुए। *पैक्स रोमाना* की नीति राहदारी कर और अन्य कृत्रिम अवरोधों को दूर करने, समुद्री डकैती और लूटमार का दमन करने, और

भरोसेमंद मुद्रा व्यवस्था स्थापित करने के लिए जिम्मेदार थी। यह सभी कारक साथ में साम्राज्य में लंबे समय तक शांति का अनुभव पहली और दूसरी शताब्दी सी ई में वाणिज्य के बहुमुखी विस्तार की व्याख्या करते हैं। विनिर्माण को भी प्रेरणा मिली, परंतु उसका विस्तार सीमित था क्योंकि संपत्ति कुछ ही लोगों के हाथों में सकेंद्रित होकर रह गई थी और उत्पादित वस्तुओं के लिए कोई सार्वजनिक बाजार नहीं था। आरंभिक साम्राज्य की अर्थव्यवस्था मूलतः कृषीय थी और विशाल *लेटिफंडिया* फल-फूल रहीं थीं (इसके बारे में विस्तृत जानकारी के लिए इस पाठ्यक्रम की **इकाई 2** देखें)।

1.9 प्रारंभिक साम्राज्य का विस्तार-क्षेत्र

प्रारंभिक रोमन साम्राज्य में राजनैतिक और प्रशासनिक एकीकरण, बाहरी सुरक्षा और आर्थिक समृद्धि से समर्थित और उसके अनुरूप था। डेसियन साम्राज्य (डेन्यूब का दक्षिण पूर्वी क्षेत्र) पर विजय प्राप्त कर वहां की सोने की खदानों पर कब्जा कर लिया गया। एशियाई सीमाओं को विस्तारित और सुदृढ़ किया गया। आगस्टस से लेकर ट्रेजन के काल (98-117 सी ई) तक रोमन साम्राज्य का निरंतर विस्तार होता रहा। केवल आधुनिक जर्मनी में ही रोमन सैनिकों को हार का सामना करना पड़ा। यह एक ऐसी नाकामयाबी थी जिसने आगस्टस को रोमन सीमा को राइन और डेन्यूब की सीमा तक रोकने के लिए दृढ़ विश्वास दिलाया। बाद में, 43 सी ई में, सम्राट क्लॉडिअस ने इंग्लैंड पर विजय अभियान की शुरुआत की और अगली शताब्दी के आरंभ में ट्रेजन ने डासिया (आधुनिक रोमानिया) को सम्मिल्लित करते हुए साम्राज्य का विस्तार डेन्यूब से आगे कर दिया। रोमन साम्राज्य की क्षेत्रीय सीमा अपने चरम बिन्दु पर पहुंच गई थी। तीसरी शताब्दी सी ई में ये सीमाएं सिकुड़ने लगीं।

आगस्टस के तत्कालीन उत्तराधिकारी उसके स्वयं के परिवार से आये थे और उन्हें जूलियो-क्लॉडियन शासकों के नाम से जाना जाता था। नीरो (54-68 सी ई) जूलियो-क्लॉडियन वंश का अंतिम शासक था। वेस्पेसियन (69-79 सी ई) पहला शासक था जिसका प्राचीन रोमन कुलीन वर्ग से कोई संबंध नहीं था और वह एक शक्तिशाली सेनापति था। उसने फ्लावियन वंश की स्थापना की। अंतिम फ्लावियन शासक, डोमिशियन (81-96 सी ई), की हत्या के बाद सीनेट ने नेरवा (96-98 सी ई) की नियुक्ति की। इसके बाद साम्राज्य ने, 96 सी ई से 180 सी ई तक 'पांच अच्छे शासकों' के शासन के तहत शांति और समृद्धि के एक नये काल में प्रवेश किया। हालांकि मार्कस ऑरेलियस (161-180 सी ई) के शासनकाल से साम्राज्य के पतन की शुरुआत हो गयी।

1.10 उत्तर रोमन साम्राज्य

साम्राज्य के पतन की शुरुआत दूसरी शताब्दी सी ई के अंतिम वर्षों में हो गयी थी, हालांकि साम्राज्य और सौ वर्षों तक अस्तित्व में रहा।

1.10.1 तीसरी शताब्दी सी ई और राजनितिक अस्थिरता

तीसरी शताब्दी सी ई के दौरान, साम्राज्य ने एक बृहत अस्थिरता के काल में प्रवेश किया। 235 सी ई से 284 सी ई के बीच, पचास से भी अधिक शासक या उनके उत्तराधिकारी विभिन्न सेनाओं द्वारा नामित किए गए। रोमन साम्राज्य की सीमाओं के अंतर्गत आपदाओं का सिलसिला शुरू हो गया। जर्मनिक जनजातियों द्वारा रोमन साम्राज्य पर लगातार आक्रमण किए गए और उसे तबाह कर दिया। फ्रेंक और अन्य जर्मनिक जनजातियों (उत्तरी यूरोपीय) ने गॉल और स्पेन पर आक्रमण किया, अल्लामनी (ऊपरी राइन की जर्मनिक जनजाति) ने इटली में प्रवेश किया, जबकि गॉथों ने समुद्र पार करके एशिया माइनर को लूटा। आंतरिक राजनैतिक संकट और बाहरी आक्रमणों के बाद क्रमिक महामारी ने साम्राज्य में युद्धों द्वारा

पहले से कम हुई जनसंख्या को और कमजोर और कम कर दिया था। आमतौर पर इस संकट को उत्तर रोमन साम्राज्य के पतन की शुरुआत के तौर पर देखा जाता है।

1.10.2 डायोक्लेशियन (Diocletian) और साम्राज्य को पुनः सुदृढ करने के उपाय

साम्राज्य में व्याप्त गृह युद्ध धीरे-धीरे डायोक्लेशियन के शासनकाल (284-305 सी ई) के आरंभ तक आते-आते समाप्त हो गए। डायोक्लेशियन ने सैना को मजबूत करने के प्रयास किए। भूमिपति कुलीनों की जगह सैनिक एक विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग बन गया। सीनेट ने अपनी सारी शक्ति खो दी। डायोक्लेशियन ने यह महसूस किया कि साम्राज्य इतना अधिक विस्तरित हो गया था कि इसे शासित करना किसी एक के बस की बात नहीं थी। अतः डायोक्लेशियन ने टेट्रार्की स्थापित की – चार शासकों की एक समिति, जिसमें एक शासक पर साम्राज्य के एक विशेष क्षेत्र के शासन की जिम्मेदारी थी। प्रथम, डायोक्लेशियन ने द्विशासन (dyarchy) स्थापित की जिसके तहत मेक्सीमियन को सह-सम्राट (सीज़र [कनिष्ठ सम्राट] 286 सी ई में और 288 सी ई में आगस्टस) बना दिया गया। बाद में उसने 293 में गलेरियस और कॉन्सटेनटियस क्लोरस को कनिष्ठ सह-शासक (सीज़र) नियुक्त किया। 305 में, डायोक्लिशियन और मेक्सीमियन दोनों ने पद त्याग दिए और दोनों सह-शासकों (सीज़र) को ऑगस्टस के पद पर पदोन्नत किया गया और इन दो सह-शासकों के अतिरिक्त दो नये सह-शासक – कांस्टैनटियस और मेक्सीमिनस – नियुक्त किए गए। इस प्रकार, दूसरी टेट्रार्की की स्थापना हुई।

1.10.3 कॉन्सटैनटाइन I

डायोक्लेशियन के पदत्याग के साथ ही टेट्रार्की (tetrarchy) ढह गई और एक बार फिर अव्यवस्था फैल गई। कॉन्सटेनटाइन प्रथम (306-337 सी ई) के शासनकाल के साथ व्यवस्था फिर से स्थापित हुई, जो अपने विरोधी सैनिक सेनापतिओं को पराजित करके सत्ता में आया था। 309 से 313 तक की अवधि में सत्ता के सभी दावेदारों का सफाया हो गया। 310 में मेक्सिमियन और 313 में मेक्सिमिनस ने आत्महत्या कर ली, फलतः अब सिर्फ दो शासक रह गये — पश्चिम में कॉन्सटेनटाइन और पूर्व में लिसिनियस। इस प्रकार, टेट्रार्की का अन्ततः पतन हुआ। कॉन्सटेनटाइन 324 में आखिरकार लिसिनियस को हराने में सफल हुआ और पश्चिम और पूरब का एकीकरण करने में सफल हुआ। इसी के साथ कॉन्सटेनटाइन ने खुद को एकमात्र ऑगस्टस घोषित किया। उसने अपनी राजधानी पूर्व, जो कि अपेक्षाकृत अधिक समृद्ध क्षेत्र था, में पुनः स्थापित करने का निर्णय लिया। उसने बोसफोरस क्षेत्र में स्थित यूनानी शहर बाईज़ेंटाइन का पुनर्निर्माण किया और उसे कांस्टैंटिनोपल (आधुनिक तुर्की में स्थित इस्तांबुल) का नाम दिया, जो आगे चलकर पूर्वी रोमन साम्राज्य की राजधानी बनी। इस प्रकार, कॉन्सटेनटाइन प्रथम ने पूर्व में सम्राट की गद्दी के स्थानांतरण की प्रक्रिया को पूर्ण किया। इसके साथ ही रोम की राजनैतिक भूमिका का अंत हुआ। कॉन्सटेनटाइन प्रथम ने रोम की मूर्तिपूजक और गणतंत्रात्मक परंपराओं का खंण्डन किया, और अन्ततः वह ईसाई धर्म में परिवर्तित हो गया (रोमन साम्राज्य में इसाई धर्म के विकास की पूर्ण जानकारी के लिए इस पाठ्यक्रम की **इकाई 3** देखें)। पूर्वी रोमन साम्राज्य ने सभ्यता के 'बाईज़ेंटाइन' चरण में प्रवेश किया और पश्चिम की क्षति के पश्चात् स्वयं को प्राचीन यूनान और रोम की सांस्कृतिक विरासत का मुख्य उत्तराधिकारी घोषित किया।

1.11 साम्राज्य का पतन

पश्चिम में रोमन साम्राज्य का पतन क्रमिक था। साम्राज्य को जर्मेनिक कबीलाई समूहों के लगातार हमलों ने विध्वंस कर दिया (फ्रैंक्स ने गॉल्स पर विजय पाई, आंग्ल-सैक्सनों ने इंग्लैंड

पर कब्जा किया, और लौम्बार्डों ने रोम पर अपनी शक्ति स्थापित की)। 476 सी ई में पश्चिम के अंतिम शासक को एक बर्बर सरदार द्वारा हटा दिया गया। रोमन और इसके पश्चिमी साम्राज्य के पतन को परंपरागत रूप से एक सहस्त्राब्दी से ज्यादा के रोमन इतिहास के अंत की भांति देखा जाता है (विस्तृत जानकारी के लिए इस पाठ्यक्रम की **इकाई 4** देखें)।

बोध प्रश्न-2

1) गणतंत्र के पतन और आगस्टस सीजर के उदय के कारकों का करीब 50 शब्दों में विवरण दीजिये।

....

....

....

....

....

2) कैसे ऑगस्टस सीजर के सुधारों ने एक शान्त, स्थिर और समृद्ध नवीन युग का आरंभ किया?

....

....

....

....

....

3) तीसरी शताब्दी सी ई में किस कारण से रोमन साम्राज्य में संकटकाल उत्पन्न हुआ? किस हद तक डायोक्लेशियन और कॉन्सटैनटाइन I साम्राज्य को फिर से स्थिर बनाने में कामयाब हुए?

....

....

....

....

....

4) निम्न में से कौन से कथन सही और कौन से कथन गलत हैं? कथनों के आगे **सही / गलत** लिखें।

   क) रोम के आरम्भिक विकास में एट्रूस्कन का गहरा प्रभाव था। **(सही / गलत)**

   ख) पैट्रिशियनों और प्लेबियनों के बीच संघर्ष की वजह से सीनेट की शक्ति का पतन हुआ। **(सही / गलत)**

   ग) एक तरफ रोमनसाम्राज्य के विस्तार के लिए किए गए युद्ध सीनेटोरियल कुलीनतंत्र की शक्ति और समृद्धि में वृद्धि का कारण थे, लेकिन वहीं दूसरी ओर इन युद्धों की वजह से कृषक वर्ग का पतन हुआ। **(सही / गलत)**

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

घ) ऑगस्टस सीजर के सुधारों ने रोम में नागरिक संघर्ष को तीव्र किया। **(सही / गलत)**

ड़) जर्मेनिक कबीलाई समूहों के अंतिम प्रहार की वजह से पश्चिम में रोमन साम्राज्यढह गया। **(सही / गलत)**

1.12 सारांश

रोमन साम्राज्य प्राचीन और मध्ययुगीन परंपराओं के मध्य एक महत्वपूर्ण कड़ी उपलब्ध कराता है। इसने राजतंत्र से गणतंत्र तथा गणतंत्र से एक सशक्त साम्राज्य तक का विकास देखा। यह वह काल भी था जब ईसाई धर्म ने रोमन साम्राज्य में प्रवेश किया और धीरे-धीरे यूरोप में अपनी जड़ें जमाई (इस पाठ्यक्रम की **इकाई 3** में इस पर चर्चा की गई है)। राज्य के प्रशासन और कानून निर्माण में लोगों की राजनैतिक भागीदारी (यद्यपि यह केवल 'नागरिकों' तक सीमित थी) ने रोमन परंपराओं को उच्च स्थान पर पहुंचाया। ऑगस्टस के संरक्षणत्व में *'पैक्स रोमाना'* (सार्वभौमिक शांति) की स्थापना ने भूमध्यसागरीय क्षेत्र में रोम के प्रभुत्व को स्थापित किया। लेकिन जर्मेनिक कबीलाई समूहों (फ्रैंक्स, गॉल्स) के लगातार आक्रमणों ने पश्चिमी रोमन साम्राज्य को उसके अंत तक पंहुचा दिया, हालांकि पूर्वी रोमन साम्राज्य 1453 तक टिका रहा।

1.13 शब्दावली

ऐसीडुई (Assidui)	:	छोटे भूमि-धारक किसान
अश्वरोही (Equites)	:	निम्न वर्ग के नवीन समृद्ध सदस्य
बाइज़ेंटाइन साम्राज्य (Byzantine Empire)	:	पूर्वी रोमन साम्राज्य
कॉसल (Consuls)	:	दो सर्वोच्च मैजिस्ट्रेट
लैटिफंडिया (Latifundia)	:	विशाल भूमि-क्षेत्र जहां दासों से काम कराया जाता था
अभिजात वर्ग (Patrician)	:	वंशानुगत कुलीन वर्ग
पैक्स रोमाना (*Pax Romana*)	:	ऑगस्टस के सुधारों द्वारा उद्घाटित शांति और स्थिरता की लम्बी अवधि जो लगभग 200 वर्षों तक बनी रही
निम्न वर्ग (Plebeian)	:	आम नागरिक
प्रॉलितेरी (Proletarii)	:	संपत्ति रहित नागरिक
सीनेटोरियल अभिजात वर्ग (Senatorial Aristocracy)	:	अभिजात वर्ग से संबंधित सीनेट के सदस्य
जनजातीय सभा (Tribal Assembly)	:	एक ऐसी सभा जिसमें केवल निम्न वर्ग के सदस्य थे
ट्रिब्यून्स (Tribunes)	:	अधिकारी (दो) जो कि निम्न वर्ग को अमीरों के अत्याचार से बचाने के लिए जनजातीय सभा द्वारा नियुक्त किए जाते थे।

1.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1.) भाग 1.2 देखें

2.) भाग 1.3 देखें

3.) भाग 1.3 देखें

4.) भाग 1.4 देखें

5.) भाग 1.5 देखें

बोध प्रश्न-2

1.) भाग 1.7 देखें

2.) भाग 1.8 देखें

3.) भाग 1.10 देखें

4.) क) सही; ख) गलत; ग) सही; घ) गलत; ड़) सही

1.15 संदर्भ ग्रंथ

एंडरसन, पेरी, (2000) (रिप्रिन्ट) *पैसेजेज़ फ्रॉम एन्टिक्विटी टू फ्यूडलिज्म* (न्यूयार्कः वर्सो क्लासिक्स).

बर्न्स, एडवर्ड मेक्नाल एवं राल्फ, फिलिप ली, (1991) *वर्ल्ड सिविलाइज़ेशन्स* (न्यूयार्कः नॉर्टन).

फारूकी, अमर, (2001) *अर्ली सोशल फॉरमेशन्स* (नई दिल्लीः मानक प्रकाशन).

कागन, डोनाल्ड, ओज़मेन्ट, स्टिवेन, फ्रैंक, एलिसन, एवं टर्नर, फ्रेंक एम., (2013) *द वेस्टर्न हेरिटेज,* खंड A, भाग 1 (लंदनः पिअरसन ऐड्यूकेशन).

रेनशॉ, जेम्स, (2012) *इन सर्च ऑफ द रोमन्स* (लंदनः ब्रिस्टल क्लासिकल प्रेस).

1.16 शैक्षणिक वीडियो

एनशिएन्ट रोम 101: नेशनल ज्योग्राफिक
https://www.youtube.com/watch?v=GXoEpNjgKzg

द रोमन एम्पायर- ऐपिसोड 1: द राइज़ ऑफ रोमन एम्पायर
https://www.youtube.com/watch?v=cZx7Rr3iVvc

इकाई 2 रोमन साम्राज्यः आर्थिक और सामाजिक संरचना*

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 अर्थव्यवस्था की प्रकृति

- 2.2.1 गणतंत्र के अधीन अर्थव्यवस्था
- 2.2.2 प्रिन्सिपेट (Principate) के अधीन अर्थव्यवस्था की संरचना
- 2.2.3 उत्पादन की दास पद्धति और संकटकाल
- 2.2.4 दास अर्थव्यवस्था का पतन और कोलोनेट (Colonate) व्यवस्था का उदय

2.3 सामाजिक संरचना

- 2.3.1 समाज का पारंपरिक विभाजन
- 2.3.2 'श्रेणियों' में संघर्ष
- 2.3.3 रोमन साम्राज्य का विकास और समाज में परिवर्तन
- 2.3.4 प्रिन्सिपेट के अधीन सामाजिक स्तरीकरण

2.4 दास प्रथा और समाज

2.5 रोमन कला और वास्तुकला

2.6 सारांश

2.7 शब्दावली

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.9 संदर्भ ग्रंथ

2.10 शैक्षणिक वीडियो

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का केंद्रीय विषय प्रारम्भिक गणतंत्र से लेकर प्रिन्सिपेट और भूतपूर्व साम्राज्य तक के रोम की आर्थिक और सामाजिक संरचना का अध्ययन करना है। इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपः

- युद्ध और संघर्षों के विस्तार के चलते रोमन समाज और अर्थव्यवस्था में आए दूरगामी परिवर्तनों को समझ सकेंगे,
- *लैटिफंडिया* नामक नवीन ग्रामीण संस्था के उद्भव को जान पाएँगे,
- उत्पादन की दास पद्धति की मुख्य विशेषताओं को समझ पाएँगे,
- रोमन सामाजिक संरचना में आए परिवर्तनों की प्रक्रिया को समझ सकेंगे,
- दासप्रथा पर आधारित रोमन सामाजिक संरचना का विश्लेषण कर सकेंगे, और
- रोमन कला और वास्तुकला के विशिष्ट पहलुओं की सराहना कर सकेंगे।

* डॉ. प्रॉमिला श्रीवास्तव, दौलत राम कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

2.1 प्रस्तावना

प्राचीन रोम मुख्य रूप से एक कृषक और दास-आधारित अर्थव्यवस्था थी। कृषि और व्यापार अर्थव्यवस्था के मुख्य क्षेत्र थे, छोटे पैमाने के औद्योगिक उत्पादन इसके पूरक थे। समाज, वर्ग और सामाजिक प्रतिष्ठा की धारणा से प्रभावित था। दास श्रम का उच्च स्तर पर प्रयोग उत्तर गणतंत्र काल में सर्वाधिक महत्पूर्ण तत्व था। पहली शताब्दी सी ई से सीनेट ने अपनी शक्तियां खोना प्रारंभ कर दिया था और धीरे-धीरे राजतंत्र की स्थापना हुई। नई कर व्यवस्था लागू हुई और अर्थव्यवस्था में विभिन्न वर्गों की भूमिका भी परिवर्तित हुई। भूस्वामियों द्वारा अपनी जागीरों पर दासों को स्थाई रूप से बसाया गया और उन्हें अपनी देखरेख करने के लिए छोटे भूखंड दिए गए। हालांकि, दासप्रथा पूर्ण रूप से नष्ट नहीं हुई थी, रोमन समाज के विभिन्न क्षेत्रों में परिवर्तनों ने आरंभिक मध्ययुगीन यूरोप और एशिया के इतिहास पर दूरगामी प्रभाव छोड़ा। एक आंकलन के अनुसार जहां लगभग 225 बी सी ई में रोमन इटली में 600,000 दास थे, वहीं 31 बी सी ई में रोमन इटली में इनकी संख्या बढ़कर बीस लाख तक हो गई।

प्राचीन रोम की आर्थिक और सामाजिक संरचना के अध्ययन के लिए इस इकाई को रोमन इतिहास के तीन प्रमुख कालों में विभाजित किया गया हैः गणतंत्र (509-27 बी सी ई) प्रिंसिपेट (27 बी सी ई-284 सी ई) और उत्तर रोमन साम्राज्य (284 सी ई-476 सी ई)। प्रत्येक काल के समाज तथा अर्थव्यवस्था के प्रमुख आयामों का परीक्षण विस्तार से किया गया है।

2.2 अर्थव्यवस्था की प्रकृति

प्राचीन विश्व की रोमन सभ्यता, जिसने बाद की पश्चिमी सभ्यताओं पर गहरा असर छोड़ा था, नगरों पर आधारित थी। इन नगरों ने अपनी संपत्ति ग्रामीण क्षेत्र से अधिशेष हासिल करके प्राप्त की। इस शहरी संस्कृति और राजनीति के पीछे ग्रामीण अर्थव्यवस्था थी, कृषि उत्पादन अर्थव्यवस्था का मुख्य कारक बना रहा, और शहरों ने निरपवाद रूप से अपनी संपन्नता ग्रामीण क्षेत्र से प्राप्त की।

2.2.1 गणतंत्र के अधीन अर्थव्यवस्था

रोमन साम्राज्य के इतिहास में संपत्ति का मुख्य स्रोत भूमि थी। भूमि के विशाल क्षेत्रों पर अनाजों की खेती और अन्य कृषि उत्पाद पैदा किए जाते थे, विशेषकर जैतून और मदिरा बनाने के लिए अंगूर की खेती की जाती थी। इसके साथ ही भूमि मवेशी, भेड़ और घोड़ों के पालन आदि के लिए चारागाह के तौर पर भी इस्तेमाल की जाती थी। 'बारह टेबल' ('Twelve Tables') पांचवी शताब्दी बी सी ई में रोम की विस्तृत कृषीय जीवनशैली के बारे में संकेत देती हैं। कृषि रोमन गतिविधियों का मूलभूत आधार था, जिसमें आमतौर पर लघु भू-धारक अपनी भूमि पर स्वयं कार्य करते थे। पशु-पालन करने के बजाय कृषि और अंगूर की खेती अधिक सामान्य थी। उत्पादकों, व्यापरियों और कारीगरों के लिए शहर कभी भी मुख्य केंद्र नहीं थे। शहरों के केन्द्र में प्रभावशाली भूस्वामी वर्ग रहता था जो गांवों में स्थित अपनी भूसंपत्ति पर और खेतों में मक्का, तेल और अंगूर की मदिरा उत्पादन से अपनी आय अर्जित करता था। इन खेतों के भूस्वामी अधिकतर अनुपस्थित प्रवासी भूस्वामी थे। ग्रामीण क्षेत्र में दास श्रमिकों की मौजूदगी की वजह से ही यह संभव था जिसने शहरों में पनपने वाले भूस्वामी वर्ग को समृद्धि और ऐशो-आराम उपलब्ध कराया।

दास अर्थव्यवस्था

आरंभिक रोम में दासप्रथा मौजूद थी परंतु सिर्फ क्लासिकल काल (दूसरी शताब्दी बी सी ई

से दूसरी शताब्दी सी ई) तक यह एक बहुत बड़ी और विशाल प्रथा के रूप में अस्तित्व में रही, हालांकि अन्य श्रम प्रथाएं – पट्टेदार, निर्भर पट्टेदार और शहरी कारीगर – भी मौजूद थीं। हालांकि उत्पादन की प्रभावशाली प्रणाली दासप्रथा आधारित ही थी। पेरी एन्डरसन के अनुसार, दासप्रथा ही एक ऐसी आर्थिक लगाम थी जिसने शहर और गांवों को एक साथ जोड़ा हुआ था, और यह व्यवस्था शासक वर्ग के लिए अत्यधिक लाभकारी थी। इटली की अर्थव्यवस्था का पारंपरिक संरचना में रूपांतरण भूमध्यसागरीय जगत पर सत्ता स्थापित करने के लिए लड़े गए युद्धों के कारण हुआ। इटली की अर्थव्यवस्था परिवर्तन में दो महत्वपूर्ण पहलू देखे जा सकते हैंः पहला, रोमन कुलीन वर्ग की संपत्ति में वृद्धि, और दूसरा दासप्रथा में भारी वृद्धि।

कृषि की तुलना में उद्योग और उत्पादन का महत्व अपेक्षाकृत कम था। उत्पादन छोटे पैमाने पर किया जाता था, आमतौर पर यह व्यक्ति विशेष या छोटे समूहों द्वारा प्रतिदिन प्रयोग में आने वाली वस्तुएं होती थीं जैसे ईंटें, टाईल्स, बर्तन, चमड़ा उत्पाद और कपड़े।

हॉप्किंस (1978) के अनुसार रोम में सात प्रक्रियाओं ने दासप्रथा की वृद्धि को प्रभावित कियाः (1) लगातार युद्ध, (2) लूट का अंतःप्रवाह, (3) इस लूट का भूमि में निवेश, (4) विस्तृत भूसंपत्तियों का निर्माण, (5) किसानों की दरिद्रता, (6) किसानों का शहरों तथा प्रांतों की ओर प्रवास, और (7) शहरी बाज़ारों में वृद्धि। ये सारी प्रक्रियाएं एक दूसरे से संबद्ध थीं। एम. आई. फिनले (1980) का विचार है कि अर्थव्यवस्था में दासप्रथा दो परिस्थितियों के कारण फैलती है। पहली, जब किसी समाज में श्रम की आंतरिक आपूर्ति उसकी मांग के संबंध में गंभीर रूप से कम हो जाती है। दूसरी, जब अत्यधिक भूसंपत्ति एक छोटे से वर्ग के हाथों में आ जाती है। आरंभिक गणतंत्र (326 बी सी ई) में ऋण-बाध्य दासप्रथा (debt bondage) के उपयोग की वैधता को समाप्त कर दिया गया था। लेकिन, ग्रामीण ऋणग्रस्तता ने भूसंपत्ति को अभिजात वर्ग के हाथों में एकत्रित करने का काम किया। ऋण-बाध्य दासप्रथा के समाप्त होने के साथ बड़े भूस्वामियों के हाथ में कोई बंधुआ श्रमिक नहीं रह गए थे। दासप्रथा इनकी भूसंपत्ति के लिए मानव श्रम प्रदान करती थी। इसके अतिरिक्त, यूनान और कार्थेजिअन्स से सीखे हुए बेहतर खेती के तरीकों ने कुलीन वर्ग को अधिक से अधिक भूमि खरीदने के लिए प्रोत्साहित किया। अनाज की खेती को छोड़कर इन्होंने बड़े पैमाने पर जैतून के तेल, अंगूर की मदिरा का उत्पादन या भेड़ और मवेशी पालना शुरू कर दिया। यह परिवर्तन विशेष रूप से जीती गई भूमि से आए युद्ध बंदियों की आपूर्ति के कारण लाभकारी सिद्ध हुआ क्योंकि इनसे दास के रूप में भूमि पर कार्य कराया जा सकता था। दास श्रम पर आधारित इन बड़े बाग़ानों को '*लैटिफंडिया*' कहा जाता था, जिनका प्रचलन उस समय इटली के कई भागों में था।

रोमन युद्ध संघर्षों के परिणामस्वरूप *लैटिफंडिया* की उत्पत्ति हुई जिसने अर्थव्यवस्था को परिवर्तित कर दिया। दासों की आपूर्ति विजयी युद्धों द्वारा हो रही थी, यद्यपि डाके और समुद्री डकैती भी दास आपूर्ति के महत्वपूर्ण स्रोत थे। *लैटिफंडिया* में हमेशा भूमि के संघटित भाग नहीं शामिल होते थे, जिनकी एक एकल इकाई के रूप में खेती की जा सके। *लैटिफंडियाओं* का आदर्श प्रतिरूप बहुत बड़ी संख्या में मध्यम आकार की **विला** सम्पदा थे, (बड़े भूभाग में कभी-कभी एक दूसरे से सटे हुए लेकिन अक्सर ये पूरे देश में वितरित थे। प्रबंधन कार्य भी दास निरीक्षकों और *बेलिफों* (*bailiffs*) को सौंपे जाते थे, वह दासों के समूहों को खेत में कार्य करने के लिए लगाने के लिए ज़िम्मेदार होते थे जबकि *लैटिफंडिस्ट* (स्वामी) शहरों में रहा करते थे। यहां तक कि *लैटिफंडिस्टों* की फैली हुईं विस्तृत जागीरें उनके यूनानी पूर्वजों से कहीं ज्यादा बड़ी थीं, अक्सर विस्तार में 300 एकड़ से भी अधिक, जबकि संघटित जागीरें जैसे टस्कनी में प्लिनी द यंगर की एस्टेट संभवतः आकार में 3000 एकड़ से भी अधिक रही होगी। पेरी एन्डरसन के अनुसार, इतावली *लैटिफंडिया* के उदय ने बड़े चारागाह पशुपालन

और अंगूरों की मदिरा और जैतून की मिश्रित फसल के साथ-साथ अनाजों की खेती को बढ़ावा दिया।

रोमन गणतंत्र द्वारा विकसित ग्रामीण दास आधारित *लैटिफंडियम* ने पश्चिमी भूमध्यसागरीय क्षेत्र में स्थापित उपनिवेशों में भी प्रवेश किया। इस प्रकिया में स्पेन या गॉल के नदी मार्गों ने सहायता प्रदान की। रोमवासियों के हाथ में और अधिक भूमि आ जाने से खेती के क्षेत्र में अन्य विकास हुए। यद्यपि अनाज का उत्पादन इटली में लगातार महत्वपूर्ण बना रहा और जो कि गुज़र बसर के लिए आवश्यक था, वहां अधिक से अधिक नकदी फसलें जैसे जैतून और अंगूर की पैदावार की जाने लगी। हालांकि ये नकदी फसलें केवल अमीरों के लिए लाभकारी थीं, क्योंकि इन फसलों के उत्पादन का लाभ प्राप्त होने में अनेक वर्ष लग जाते थे।

जैसा कि पेरी एन्डरसन वर्णन करते हैं, स्पेन और गॉल इटली का हिस्सा बने रहे, तथा साम्राज्य के अंत तक रोमन प्रांतों में दासप्रथा बहुत गहराई तक चिह्नित रही। रोमवासियों द्वारा पश्चिमी भूमध्यसागरीय क्षेत्र में नौगम्य नदियों के किनारों पर शहरों की स्थापना की गई। यद्यपि पूर्वी भूमध्यसागरीय क्षेत्रों की तुलना में ये शहर बहुत अधिक संख्या में नहीं थे, लेकिन ये रोमवासियों द्वारा पूर्व में स्थापित शहरों से काफी हद तक बड़े थे। उत्तर गणतंत्र में रोम में दास श्रमिकों के बड़ी संख्या में आने से काफी हद तक इसने न केवल कृषि को परिवर्तित किया, बल्कि इसके द्वारा उद्योग और व्यापार में भी विशिष्ट परिवर्तन आए। पी.ए. ब्रंट के एक अनुमान के अनुसार, केवल रोम में ही संभवतः 90 प्रतिशत कारीगर मूलरूप से दास थे। इनमें से जो उत्पादन में शामिल थे उन्हें अपेक्षाकृत अधिक अवसर प्राप्त थे।

व्यापार और उद्योग

आरंभिक रोम अंतर्राष्ट्रीय व्यापार केंद्रों में प्रमुख नहीं था जैसा कि एथेन्स या कॉरथेज के नगर-राज्य, या उत्तर में स्थित कुछ समृद्ध एट्रूस्कन शहर थे। व्यापार मुख्य रूप से स्थानीय बाज़ारों की आवश्यकताओं की पूर्ति और स्थानीय उत्पादों से संबंधित व्यापार करता था। आरंभ में व्यापार ज़रूरी वस्तुओं या समाज के समृद्ध वर्ग के लिए कुछ विलासिता की वस्तुओं से संबंधित था। व्यापारियों को कोई ख़ास सम्मान प्राप्त नहीं था, यद्यपि समय के साथ उनमें से कई बहुत अमीर बन गए (अश्वारोही वर्ग), परंतु फिर भी भूमिपति वर्ग ने उन्हें समान रूप से स्वीकार नहीं किया। यद्यपि मुद्रा प्रणाली प्रचलन में थी, लेन-देन कांस्य में भार के माप द्वारा होता था। संभवतः 300 बी सी ई तक सिक्के जारी नहीं किए गए थे। व्यापार और वाणिज्य के क्षेत्र में भू-परिवहन एक गंभीर समस्या थी। कुछ ही मुख्य मार्ग थे जिनका निर्माण आरंभ में सेना के प्रयोग के लिए किया गया था, यहां तक कि पक्के मार्ग पर भी बैलगाड़ियों की गति बहुत धीमी थी और उस पर जानवरों की भार ले जाने की क्षमता भी सीमित थी। वहीं दूसरी ओर, भूमध्यसागर से पानी के जहाज़ों के माध्यम से परिवहन काफी सस्ता था, हालांकि आरंभ में इसमें काफी निवेश करने की आवश्यकता थी। सामान को एक स्थान से दूसरे स्थान पहुंचाने के लिए नौगम्य नदियां बहुत महत्वपूर्ण थीं, हालांकि यह ज़्यादातर बहुत छोटे पैमाने पर ही लाया ले जाया जाता था।

प्राचीन रोम में खनन् सबसे बड़ा उद्योग था जो कि विशाल भवन परियोजनाओं के लिए पत्थर और भूमध्यसागरीय क्षेत्रों पर आक्रमण के लिए औज़ारों और हथियारों की आवश्यकता पूर्ति हेतु धातु की आपूर्ति करता था। यूनान और इटली भवन निर्माण, जिसे प्राचीन और आधुनिक दोनों समाजों द्वारा समान रूप से सराहा गया है, के लिए संगमरमर उपलब्ध कराते थे। स्पेन में भारी मात्रा में सोने और चांदी का प्रयोग सिक्के और आभूषण बनाने के लिए किया जाता था। ब्रिटेन में खनन् से लोहा, सीसा और टिन का उत्पादन हथियारों के निर्माण के लिए किया जाता था। हालांकि अधिकतर कार्य दासों और **स्वतंत्र दासों (freedmen:** वे दास

जिन्हें स्वतंत्र कर दिया गया था) द्वारा किया जाता था, लेकिन स्वतंत्र श्रमिक भी उपलब्ध थे।

2.2.2 प्रिन्सिपेट (Principate) के अधीन अर्थव्यवस्था की संरचना

आरंभिक साम्राज्य में अर्थव्यवस्था मूलभूत रूप से कृषीय थी और विशाल भू-खंडों, *लैटिफंडिया,* में वृद्धि हुई थी। रोमन इतिहास में आगस्टस के काल को स्वर्ण काल के रूप में माना जाता था। भूमध्यसागर के एकीकरण ने शासन में सुधार और आर्थिक विस्तार को सुविधाजनक बनाया। अर्थव्यवस्था निरंतर दास प्रथा पर आधारित रही। कृषि और शिल्प उत्पादन से संबंधित तकनीकों में भी सुधार हुआ। उदाहरण के लिए, तेल मशीन से दबाकर तेल निकालने की तकनीक से तेल के उत्पादन में वृद्धि हुई, आटा गूंदने की मशीन से ब्रेड उत्पादन में तेज़ी आई और काँच की धमन-भट्टियाँ दूर-दूर तक फैल गईं। देशियन राज्य पर विजय (168 बी सी ई-106 सी ई) प्राप्त कर उसकी सोने की खाने हड़प ली गईं।

प्राचीन विश्व में रोम के एकीकरण के परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था पर दूरगामी प्रभाव हुए। प्रिन्सिपेट के दौरान (पहली और दूसरी शताब्दी सी ई), व्यापार और वाणिज्य का बहुत विस्तार हुआ। यह कई कारणों से हुआ। पहला, राहदारी और अन्य कृत्रिम अवरोधों को हटाने के लिए *पैक्स रोमाना* उत्तरदायी था। दूसरा, इसने डकैती और समुद्री लूटमार का अंत कर दिया और तीसरा, अब विश्वसनीय मुद्रा व्यवस्था स्थापित हो गई। इसके अतिरिक्त, पश्चिम में सबसे लम्बे समय के लिए शांति स्थापित हो गई जिसने व्यापार और वाणिज्य को प्रोत्साहन दिया। उद्योग में भी कुछ वृद्धि हुई लेकिन इसके विस्तार में यह तथ्य बाधक बना रहा कि शासक वर्ग के हाथों में ही सम्पत्ति का संकेन्द्रण रहा और औद्योगिक वस्तुओं के लिए व्यापक बाज़ार का विकास नहीं हुआ।

साम्राज्य की लगातार विस्तारित होती हुई अर्थव्यवस्था ने ऑगस्टस को विस्तृत, लोकनिर्माण कार्यों के लिए पूंजी से सक्षम किया – मार्सेलस की नाट्यशाला, क्युरिया जूलिया (सीनेट हाउस), क्लामिनियन क्रीकस, क्रीकस मेक्सिमस और ऐक्वा मर्सिया की पानी की क्षमता को तीन कृत्रिम जल नालों – जूलिया, वर्गो और अलसोक्टिवा – द्वारा दुगना किया गया। ऑगस्टस कहा करता था कि 'उसे रोम ईंटों के शहर के रूप में मिला था, और उसने इसे संगमरमर का एक शहर बना कर छोड़ा'। एक महत्वकांक्षी भवन निर्माण कार्यक्रम का आरंभ किया गया जिसने निम्न वर्ग के लिए महत्वपूर्ण रोज़गार उत्पन्न किया। गरीब नागरिकों को अनाज बांटने की प्रथा जारी रही जिसमें दूसरी शताब्दी सी ई के अंत तक अंगूर की मदिरा और तेल को भी शामिल किया गया। 'अच्छे शासकों' के काल में आर्थिक विकास लगातार होता रहा। आंतरिक शांति और कुशल प्रशासन ने दूरस्थ क्षेत्रों तक के व्यापार तथा उत्पादन को सरल बनाकर कृषि के साथ-साथ व्यापार और उद्योग के विकास में सहायता की। छोटे खेत विद्यमान रहे लेकिन अनुपस्थित भूस्वामियों के द्वारा संचालित अधिक से अधिक विशाल भूखंड और नकदी फसलों ने कृषि पर अपना दबदबा बनाए रखा।

2.2.3 उत्पादन की दास पद्धति और संकटकाल

पेरी एन्डरसन के अनुसार, उत्पादन की दास पद्धति यूनानी-रोमन जगत की एक निर्णायक पद्धति थी। यदि इसने यूनानी-रोमन जगत को फलने-फूलने का आधार प्रदान किया था तो उसके पतन के लिए भी यही उत्तरदायी थी। रोमन परिकल्पना में कृषि दासों को 'यांत्रिक वाणी' ('instrumentum vocale`) कहा जाता था, बोलने वाला औज़ार; पशुधन से एक श्रेणी दूर जो एक 'अर्ध-वाणी यंत्र' की तरह संस्थापित था, और औज़ार से दो श्रेणी दूर जो 'मूक यंत्र' ('instrumentum mutum') की तरह संस्थापित थे। यह दास महानगरीय बाज़ारों में बिक्री और खरीद की मानक वस्तुएं बन गए थे। इन्हें एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में स्थानांतरित और

अलग-अलग प्रकार के कौशलों में प्रशिक्षित किया जा सकता था। जैसा कि पेरी एन्डरसन का विचार है कि क्लासिकल प्राचीन संपन्न, समृद्ध शहरी प्रतिष्ठित वर्ग की समृद्धि और सुख-सुविधा इन दास श्रमिकों द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में उत्पादित विशाल अधिशेष पर आधारित थी।

कुछ आलोचकों के अनुसार दासप्रथा ने तकनीकी विकास में बाधा डाली। दासों को कुछ नया करने के लिए प्रोत्साहन नहीं मिला और न ही उनको किसी कीमती उपकरण को देने पर विश्वास ही किया जा सकता था। अंततः दास उत्पादन के संबंध कृषि और उद्योग दोनों के ही उत्पादन को लकवा मारने लगे थे। निःसंदेह दास अर्थव्यवस्था में कुछ तकनीकी सुधार हुए थे। इनकी सहायता से अधिक लाभकारी अंगूर की मदिरा और तेल संवर्धन (अंगूर और जैतून की खेती) का फैलाव; अनाज पीसने के लिए रोटरी मिल की शुरुआत; दो-खेतीय आवर्तन प्रणाली (two-field system); वनस्पति का ज्ञान और खेत के जलनिकास के तरीकों में भी वृद्धि हुई। इस प्रकार तकनीकी विकास पूर्णतः बधित नहीं था। दास महिलाएं अक्सर अनाज की पिसाई और खेतों में कृषि की प्रभारी हुआ करती थीं। कारखानों और दुकानों में ये चरखा कातने वाली, बुनाई करने वाली और कपड़ा बनाने वाली के रूप में कार्य किया करती थीं। हालांकि, कुछ शिक्षित महिलाएं सेक्रेटरी, लिपिक और पठन-पाठन (reader) का कार्य भी किया करती थीं।

लेकिन, जैसा कि वर्णित किया गया है, अर्थव्यवस्था को आगे बढ़ाने के लिए कभी भी बहुत अधिक अविष्कार नहीं हुए थे। कुल मिलकार प्राचीन अर्थव्यवस्था में तकनीक संबंधी गतिहीनता थी। असीमित शोषण योग्य श्रमिकों की प्रचुरता होने के कारण (जो कि दासप्रथा की वजह से था) श्रम बचत वाले उपकरणों के विकास को प्रोत्साहन नहीं मिला। मानव और पशु श्रम पर अधिक निर्भरता ने रोमवासियों को सीमित तकनीकी के दायरे में काम करने की परिस्थिति उत्पन्न की। दास प्रथा की चार शताब्दियों के दौरान श्रम की बचत करने वाला किसी भी प्रकार का उपकरण व्यवहार में नहीं लाया गया और जल्द ही 'रोमन कृषि अर्थव्यवस्था की सीमाएं' अपनी हद में पहुंच गईं और चिरस्थायी हो गईं।

साम्राज्यकाल के दौरान एक और कारक जिसने दास अर्थव्यवस्था के संकटकाल में योगदान दिया वह था दासों की आपूर्ति में तेजी से गिरावट और उनकी कीमतों में वृद्धि। परांपरागत रूप से, दासों की आपूर्ति मुख्य रूप से विदेशी विजय से प्राप्त युद्ध के कैदियों पर निर्भर थी जो प्राचीन समय में दास श्रमिक उपलब्ध कराने का मुख्य स्रोत था, 'ट्रैजन के पश्चात् साम्राज्य की सीमाओं के विस्तार की समाप्ति के साथ युद्ध कैदियों के स्रोत निःसंदेह समाप्त हो गए'।

इसके परिणामस्वरूप आई कमी की भरपाई वाणिज्यक व्यापार नहीं कर सका। इसका परिणाम यह हुआ कि दासों की कीमतें तेज़ी से बढ़ने लगीं और ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि दूसरी और पहली शताब्दी बी सी ई में दासों की कीमतों की तुलना में यह पहली और दूसरी शताब्दी सी ई में आठ से दस गुना अधिक थी। स्वामियों के लिए इनकी तेज़ी से बढ़ती हुई कीमतों ने विरोधाभास और दास श्रमिकों के प्रति खतरे को उजागर किया। दासों के स्वामियों के लिए प्रत्येक युवा दास नश्वर पूंजी निवेश के समान था जो कि उसकी मृत्यु होने पर पूर्ण रूप से समाप्त हो सकती थी। अतः दास स्वामी अब अतिरिक्त दासों को खरीदने में संकोच कर रहे थे।

प्रजनन दर में गिरावट भी दासों की संख्या में कमी का एक अन्य कारण था। दासों को घरों में कैदियों की तरह रखा जाता था और मात्र कुछ महिला दासों को ही नौकरी पर रखा जाता था क्योंकि वे स्वामियों के लिए अधिक लाभदायक नहीं थीं। इसके परिणामस्वरूप प्रजनन

दर में कमी आई, जिससे समय के साथ-साथ श्रम बल में भी कमी आई होगी। दासों की संख्या में इस गिरावट को रोकने के लिए कुछ स्वामियों ने प्रिन्सिपेट के दौरान दास-प्रजनन को बढ़ावा दिया। इससे दास अर्थव्यवस्था के संकटकाल को कुछ समय के लिए टाला जा सका परंतु यह दीर्घावधि के लिए इस संकटकाल का कोई निश्चित समाधान उपलब्ध नहीं करा सका। इसी दौरान, इस दास क्षेत्र के नुकसानों की क्षतिपूर्ति के लिए ग्रामीण क्षेत्र की स्वतंत्र आबादी में वृद्धि हो रही थी। इस प्रकार, प्रिन्सिपेट के अंत तक ग्रामीण अर्थव्यवस्था में संकट उमड़ रहा था।

इस दौरान, व्यापार और उद्योग में कोई वृद्धि नहीं हुई जो कृषि उत्पादन की इस गिरावट को प्रतिसंतुलित कर पाती। मुख्यतः किसानों, दास श्रमिकों और शहरी गरीबों से निर्मित आबादी ने बाज़ार के कार्यक्षेत्र को सीमित कर दिया। संपत्तिशाली वर्गों ने व्यापार के प्रति अपनी परंपरागत उपेक्षा को बनाए रखा। व्यापारी उपेक्षित वर्ग था क्योंकि उसमें लगातार दास प्रथा से स्वतंत्र हुए लोग (फ्रीडमैन) ही सम्मिलित हो रहे थे। रुचि और मांग दोनों की ही कमी ने उद्योग में तकनीकी आधुनिकता के विरूद्ध काम किया और उसकी संभावनाओं को कम किया।

आर्थिक और राजनैतिक संकट ने दास प्रथा के पतन को और बढ़ावा दिया। पहली दो शताब्दी सी ई के दौरान रोमन साम्राज्य अपने चरम पर था परंतु दूसरी शताब्दी सी ई तक यह साफ हो गया था कि आगे कठिन समय आने वाला है। केन्द्रीय प्रशासन ने गिरती हुई अर्थव्यवस्था को बचाने के लिए अधिकतम उपाय किए। मौद्रिक स्थिरता के साथ-साथ राजनैतिक स्थिरता का भी पतन हो गया था। जबकि वहां की आबादी में महत्वपूर्ण गिरावट हो रही थी, सरकार के खर्चों में निरंतर बढ़ोतरी होती रही। धन की बढ़ती आवश्यकता ने सम्राट को कर बढ़ाने की नीति अपनाने के लिए विवश किया और सिक्कों में मिलावट करने के कारणवश मुद्रास्फीति को बढ़ावा मिला। साम्राज्य पर जर्मेनिक जनजातियों द्वारा लगातार आक्रमणों के कारण यह स्थिति और भी दयनीय हो गई। आंतरिक राजनैतिक अस्थिरता और जर्मेनिक जनजातियों द्वारा खूंखार आक्रमणों ने मिलकर इस क्षेत्र में अन्य समस्याओं को बढ़ा दिया। युद्ध और महामारियों द्वारा हुए विनाश से आगे चलकर जनसंख्या में कमी और कमज़ोरी आई। भूमि वीरान हो गई थी और कृषि उत्पादन में तेज़ी से गिरावट आई। गॉल में, शोषित जनसमुदाय का आक्रोश ग्रामीण विद्रोह (जिसे बकॉड कहा जाता है) के रूप में बड़े स्तर पर फूट पड़ा और ऐसा प्रतीत हुआ जैसे साम्राज्य का जल्द ही विनाश हो जाएगा।

बर्बर आक्रमणों ने आर्थिक संकट को और बढ़ा दिया जिसके करणवश सेना में आमूल परिवर्तन हुए। मुद्रास्फीति ने शासक कोमोडस को सैनिकों के वेतन बढ़ाने के लिए विवश किया और सेवेरन शासकों (रोम का एक शाही राजवंश) को बढ़ती हुई कीमतों की बराबरी के लिए इसे दुगुना करना पड़ा। इसने बजट को 25 प्रतिशत तक बढ़ा दिया। आय बढ़ाने के लिए शासकों ने नए करों का सहारा लिया और सिक्कों में मिलावट की। सेना में पुरुषों को आकर्षित करने के लिए अनुशासन में ढील दी गई और सैनिक सेवा सामाजिक उन्नति का जरिया बन गई।

जैसे ही शासकों का ध्यान सीमा सुरक्षा की ओर अधिक हुआ, वे आंतरिक व्यवस्था को बनाए रखने में विफल होने लगे। सिक्कों में मिलावट और मुद्रास्फीति की भांति समुद्री डकैती, लूटमार और सड़कों और बंदरगाहों की अनदेखी ने व्यापार को हानि पहुंचाई। छोटे शिल्पकार और कारीगर सुरक्षा और रोज़गार की तलाश में धीरे-धीरे शहरों से बड़े भूस्वामियों की जागीरों की ओर जाने लगे थे, जबकि आधिकारिक आदेशानुसार इस प्रकार के प्रवास पर पाबंदी लगा दी गई थी। इस दौरान साम्राज्य के ज्यादातर प्रांतों में व्यापार और उद्योग का तेज़ी से पतन हुआ और अनेक शहर नष्ट और विलुप्त हो गए।

2.2.4 दास अर्थव्यवस्था का पतन और कोलोनेट (Colonate) व्यवस्था का उदय

पेरी एन्डरसन के अनुसार, यह संकट जिसकी अभिव्यक्ति ग्रामीण क्षेत्र में हुई थी, उसका अंतिम हल स्वयं इसके द्वारा ही उजागर हुआ जिसने उत्पादन की एक पूर्णतः नई पद्धति के लिए मार्ग प्रशस्त किया। स्वामियों ने प्रत्यक्ष रूप से अपने अनेक दासों का पालन-पोषण करना बंद कर दिया था। इसके बजाए उन्होंने इन्हें भूमि के छोटे भूखण्ड देकर स्वयं अपनी देखभाल करने और अपने स्वामियों को अधिशेष उपज का भुगतान करने के लिए स्थापित किया। उसी दौरान, छोटे कृषकों वाले गांवों और स्वतंत्र पट्टेदार बड़े भूस्वामियों के 'संरक्षण' में आ गए जो राज्य द्वारा थोपे गये वित्तीय करों और अनिवार्य सैनिक भर्ती के विरूद्ध सुरक्षा की तलाश कर रहे थे, और अंततः उनकी आर्थिक स्थिति भूतपूर्व दासों के समान हो गई थी। इस प्रकार, आर्थिक दबाव ने अनेक निचले वर्ग के सदस्यों को '**कोलोनी**' (पट्टेधारी कृषक) बनने पर मज़बूर कर दिया और बाद में धीरे-धीरे कोलोनी ने दासों का स्थान ले लिया तथा कृषि श्रमिकों में परिवर्तित हो गए। 'कोलोनी' पट्टे पर कृषि करने वाले आश्रित कृषक होते थे जो अपने भूस्वामी की भूमि से बंधे होते थे और उन्हें नकद या भूमि के टुकड़े, या उस पर साझा फसल बटवारे के आधार पर भुगतान करते थे। 'कोलोनस' ('कोलोनी' का बहुवचन) सामान्यतः अपने भूखण्ड की फसल का आधा हिस्सा ही प्राप्त कर पाते थे। इस प्रकार, कोलोनेट व्यवस्था की स्थापना से दास प्रथा के आर्थिक महत्व में गिरावट आई, परंतु यह पूर्णतः समाप्त नहीं हुई। दास प्रथा शाही राजघरानों में बची रही और रोमन साम्राज्य के पतन के बाद भी अस्तित्व में रही।

चौथी और पांचवी शताब्दियों सी ई में पश्चिम में साम्राज्य का पतन और अधिक तेज़ी से हुआ। केन्द्र ने धीरे-धीरे उच्च वर्ग के सदस्यों पर अपना नियंत्रण खो दिया और वे ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर निर्भर श्रमिकों के बड़े वर्ग पर अधिकार रखने लगे। वे अपने किलेबंद भू-क्षेत्र (estates) में रहने लगे जिन्हें विला कहा जाता था, जहां कृषक अक्सर बर्बर आक्रमणकारियों और राजस्व एकत्रित करने वाले शाही अफसरों दोनों से ही सुरक्षा तलाश करते थे। वे अमीर भूस्वामियों के शिकार हो गए और उनकी भूसंपत्ति के बंधक बन गए। पांचवी शताब्दी तक पश्चिमी साम्राज्य ग्रामीण अभिजात वर्ग से संबंधित अलग-अलग भूखंडों (estates) में विखंडित हो गया जिनका निर्भर कृषकों के बड़े वर्ग, यानी 'कोलोनी', पर आधिपत्य था। केंद्रीय प्रशासन ने धीरे-धीरे साम्राज्य की जनता को व्यवस्था और सुरक्षा प्रदान करने की योग्यता खो दी। व्यापार और संचार का पतन हो गया और प्रादेशिक क्षेत्र तेजी से आत्मनिर्भर हो गए।

बोध प्रश्न-1

1.) *लैटिफंडिया* के उदय के कारण रोमन कृषि अर्थव्यवस्था में क्या परिवर्तन हुआ?

....

....

....

....

....

2.) रोम में दास प्रथा को बढ़ावा देने वाले कारकों का विश्लेषण कीजिए।

....

....

....

....

....

3.) रोमन साम्राज्य के दौरान दास अर्थव्यवस्था में संकट लाने वाले कारकों पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

4.) युद्धों के प्रसार के कारण रोमन समाज में क्या परिवर्तन आया?

....

....

....

....

....

5.) कोलोनेट व्यवस्था से क्या तात्पर्य है? इसने किस प्रकार ग्रामीण अभिजात वर्ग को शक्तिशाली और समृद्ध बनाया?

....

....

....

....

....

2.3 सामाजिक संरचना

रोमन सामाजिक संरचना अत्यधिक स्तरीकृत थी। समाज अनेक वर्गों में विभाजित था जिनके अपने अंतर्विरोध और आपस में संघर्ष थे। इस भाग में हम सामाजिक श्रेणियों और उनके आपसी संघर्षों के बारे में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

2.3.1 समाज का पारंपरिक विभाजन

रोमन परंपरा इस धारणा में एकमत है कि राजतंत्र के अधीन कुछ परिवारों के समूह जिन्हें *कुलीन वर्ग* (*पेट्रीशियंस; Patricians*) के नाम से जाना जाता था, ही उसका आधार था। ये भूस्वामी अभिजात वर्ग पादरियों, दण्डाधिकारियों, वकीलों और न्यायधीशों का कार्य करते थे। गरीब नागरिक या *निम्न वर्ग* (*प्लेबियंस; Plebeians*) कारीगर, व्यापारी, श्रमिक और छोटे-भू-धारक हुआ करते थे। गणतंत्र के आरंभिक वर्षों में कुलीन वर्ग ने राज्य की सत्ता पर

एकाधिकार और समुदाय के लगभग संपूर्ण संसाधनों पर अधिकार प्राप्त कर लिया था। स्त्रोतों के अनुसार दोनों समूहों के सदस्य पूर्ण नागरिक होते थे, जिनके पास हथियार धारण करने का दायित्व और आम सभा की सदस्यता भी थी। हालांकि, राजाओं (राजतंत्र) के निष्कासन के पश्चात्, निम्न वर्ग पूर्ण रूप से कुलीन वर्ग के अधीनस्थ हो गया जो समृद्ध थे और जिनका सार्वजनिक पदों पर ('Orders') एकाधिकार था।

2.3.2 'श्रेणियों' ('Orders') में संघर्ष

आरंभिक गणतंत्र आर्थिक कठिनाईयों का काल था जिसमें निचली श्रेणियों पर बहुत अधिक भार पड़ा और कुलीन वर्ग (Patrician) के विशेषधिकारों को लेकर भी उनमें असंतोष बढ़ा। इसी दौरान, कुछ निम्न श्रेणियों (बहुत अधिक गरीब नहीं) ने सैनिकों के रूप में योगदान दिया जिस पर सेना की सफलता निर्भर थी और इस तथ्य ने उन्हें मोल-भाव की शक्ति प्रदान की जिसका उपयोग करने में वे बिल्कुल भी नहीं हिचकिचाए। जल्दी ही वहां निम्न वर्ग का आंदोलन शुरू हुआ जो कुलीन वर्ग के राज्य पर एकाधिकार और अमीरों द्वारा गरीबों के आर्थिक शोषण के प्रभाव को कम करने के लिए आरंभ हुआ था जिसे श्रेणियों के संघर्ष के नाम से जाना जाता है (पूर्ण जानकारी के लिए इस पाठ्यक्रम की **इकाई 1** का **भाग 1.5** देखें)।

गणतंत्र की स्थापना के बाद दो से अधिक शताब्दियों तक निम्न वर्ग ने राजनैतिक और सामाजिक समानता के लिए संघर्ष किया। उन्होंने धमकी दी कि यदि उनकी मांगों को पूरा नहीं किया गया तो वे खुद को शहरों से अलग कर लेंगे। लगभग उसी समय समृद्ध हुए निम्न वर्ग के व्यक्तियों ने 366 बी सी ई में दो में से एक काउँसलर के पद प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की, बल्कि 172 बी सी ई में पहली बार दोनों ही पद निम्न वर्ग को प्राप्त हो गए। आरंभिक पांचवी शताब्दी बी सी ई में गरीब निम्न वर्ग 'काउंसिलियम प्लेबिस' ('Concilium Plebis') संस्था को स्थापित करने में भी सफल हुए जिसे बाद में संवैधानिक निकाय के रूप में जाना गया जिसे जनजातीय सभा (Tribal Assembly; 287 बी सी ई) कहा गया, जिसमें उनके ही अधिकारियों की अध्यक्षता होती थी जिन्हे 'जननायक' (ट्रिब्यून; 'Tribunes') कहा जाता था। हालांकि, निम्न वर्ग का संगठन सामान्य रूप से रोमन राज्य से जुड़ा हुआ था और ये कभी भी कुलीनतंत्र के पतन का कारण नहीं था। गणतंत्र में अभिजात वर्ग की सर्वोच्चता कभी भी गंभीर रूप से विचलित नहीं हुई।

समय के साथ निम्न वर्ग ने अन्य मौलिक अधिकारों और अपनी सुरक्षा के तरीकों को प्राप्त कर लिया था। 'बारह टेबल्स के कानून' ('Law of Twelve Tables'; 450 बी सी ई) ने नागरिक कानून के संहिताकरण में मदद की, जिससे कुलीन वर्ग द्वारा न्यायिक प्राधिकार के मनमाने ढंग से प्रयोग में कमी आई। कुलीन और निम्न वर्ग के मध्य विवाह संबंध वैध हुए और 326 बी सी ई में एक कानून पारित किया गया जिसके अनुसार नागरिकों को ऋण (*नेक्सम; nexum*) के बदले दास बनाने की प्रथा को समाप्त कर दिया गया।

2.3.3 रोमन साम्राज्य का विकास और समाज में परिवर्तन

भूमध्यसागरीय जगत में रोम, नगर-राज्य से एक प्रबल शक्ति के रूप में चार सौ वर्षों (509-133 बी सी ई) से कम समय में विकसित हुआ जिसने विशिष्ट रूप से उसकी आर्थिक और सामाजिक संरचना को प्रभावित किया। रोमन विस्तार युद्धों ने सीनेटोरियल अभिजात वर्ग को शक्तिशाली और समृद्ध बनाया। लेकिन इसने छोटे भूमिधारक वर्ग को निरंतर कमज़ोर किया। कृषक भूमि सुधार आंदोलन का अंत ग्रैची बंधुओं के दमन के साथ ही हो गया (इस पाठ्यक्रम की **इकाई 1** का **भाग 1.6** देखे)। लेकिन अब उनकी मांगें सेवानिवृत सैनिकों (युद्ध में बचे सैनिक जो रोमन कृषक वर्ग में से भर्ती हुए थे) को भूमि आवंटन के प्रश्न पर केंद्रित

हो गई थीं। सीनेटोरिसल अभिजात वर्ग ने विजयी युद्धों से बहुत लाभ उठाया था लेकिन उन्होंने उस लाभ को सैनिकों के साथ बांटने से इन्कार कर दिया। सैनिकों ने अपने आर्थिक पुनर्वास के लिए अपने सफल सेनापतियों की ओर देखा। इस प्रकार सेनापतियों ने राजनीति में आगे बढ़ने के लिए अपनी सेनाओं का प्रयोग शुरू कर दिया।

निम्न वर्ग के सबसे निचले स्तर में अब भी संपत्तिहीन नागरिक (श्रमिक वर्ग; proletari class) सम्मिलित थे जिनमें कारीगर, श्रमिक और छोटे दुकानदार थे, चाहे वह दास, दास प्रथा से स्वतंत्र या स्वतंत्र जन्मे लोग थे। 538 बी सी ई में पहली बार निःशुल्क अनाज बांटा गया और शीघ्र ही यह रोमन राजनैतिक जीवन की स्थाई विशेषता बन गई। रोम के बड़े महानगरों में शक्तिशाली पुलिस व्यवस्था न होने के कारण शहरी भीड़ बड़ी ही आसानी से संकट के समय में दबाव बना सकती थी जिसने गणतंत्र के पतन में योगदान दिया।

गणतंत्र के अंतिम काल ने सेना में महत्वपूर्ण सुधार देखे। यह काल जो गंभीर राजनैतिक और सामाजिक संकटों का साक्षी था, पश्चिमी एशिया में महत्वपूर्ण सैन्य अभियानों का काल भी था। गणतंत्र के अंतिम वर्षों में शक्तिशाली सेनानायकों ने राज्य के नियंत्रण के लिए सत्ता प्राप्ति के संघर्षों और हिंसक विवादों में भाग लिया (**इकाई 1** का **भाग 1.7** देखें)।

2.3.4 प्रिन्सिपेट के अधीन सामाजिक स्तरीकरण

एक्टीयम में मार्क एंटोनी पर ऑक्टेवियन की विजय ने एक शताब्दी के लंबे गृह युद्ध का अंत कर दिया और रोम में गणतंत्र के मुखौटे के पीछे छिपे हुए राजतंत्र की स्थापना के द्वारा शांति स्थापित की। समाज ने भी महत्वपूर्ण परिवर्तन देखे। पहला, सीनेट धीरे-धीरे धुंधली होकर परिप्रेक्ष्य में चली गई और घुड़सवार श्रेणी (equestrian orders) से एक नई नौकरशाही आई। राज्य का उत्तरोत्तर सैन्यीकरण हो गया। दूसरा, 'ऑनेस्टिओरिस' (सीनेटर, घुड़सवार श्रेणी) और निचले वर्गों के 'ह्युमिलिओर्स' दोनों के बीच में एक गहरी रेखा खिंच गई। 'ऑनेस्टिओरिस' ने कानूनी विशेषाधिकारों का लाभ उठायाः जिनमें अपराधों के लिए हल्की सज़ा का प्रावधान, उत्पीड़न से प्रतिरक्षा, और शासकों को अपील का अधिकार था। समय के साथ निचले क्रम से उच्च क्रम में जाना और अधिक कठिन हो गया। तीसरा, रोमन अभिजात वर्ग का केंद्रीय राजनैतिक सत्ता पर एकाधिकार खत्म हो गया और साम्राज्य में 'प्रांतीयकरण' की प्रवृत्ति बढ़ने लगी। प्रांतीय कुलीन वर्ग ने ऑगस्टस के सत्ता में आने का समर्थन किया और इन्हें महत्वपूर्ण सफलता भी प्राप्त हुई जब अंततः प्रांतीय परिवारों से सीनेटर और शासकों को चुना जाने लगा। 212 सी ई तक साम्राज्य के लगभग प्रत्येक स्वतंत्र निवासी तक नागरिकता पहुंच चुकी थी। इस प्रकार, रोमन निवासियों ने प्रांतों के उच्च वर्गों को अपने ही प्रशासन में सम्मिलित कर लिया, रोमन कानून और संस्कृति का फैलाव किया और प्रभावशाली लोगों की निष्ठा को जीता।

कुलीन तंत्र (Aristocracy)

जिस समाज में बहुत से प्रांतीय लोगों ने रोमन नागरिकों के रूप में प्रवेश किया था वह समाज वर्ग और रुतबे से प्रभावित था। संपदा, सामाजिक स्तर और समाज में विशेषाधिकार संबंधी भारी असमानताएं थीं। गरीब आमतौर पर *निसुलाय* (*nisulae*, कई परिवारों के आवास के लिए एक अपार्टमेंट इमारत) में रहा करते थे; जबकि अमीर लोगों के पास प्रमुखतः भव्य *डोमस* (केवल एक परिवार के आवास के लिए घर) थे। उच्च वर्गों का शासन, समाज और धार्मिक संगठनों में विस्तृत प्रभाव था। यह प्रभाव 'क्लाइंटेला' गतिविधियों के द्वारा और बढ़ा जिसमें निम्न स्तर (*क्लाएंट; clients* मातहत) के व्यक्ति विशेष, व्यक्तिगत रूप से दूसरे सामाजिक रूप से सम्मानित व्यक्ति (*पेट्रन; patron*, मालिक) पर निर्भर थे, जो अपना मत देकर उन्हें राजनैतिक सहयोग देते थे अथवा उनके राजनैतिक सम्मेलनों में सम्मिलित होते

थे। इसके बदले में सम्मानित व्यक्ति, उदाहरण के लिए, न्यायालयों में अपने प्रभाव का उपयोग करके उनको लाभ पहुंचाता था जैसे ऋण या सुरक्षा प्रदान करके।

रोमन साम्राज्य के नगरों का रख-रखाव और राजनैतिक संचालन अभिजात वर्ग के हाथों में था। अपनी दानशीलता और उदारता के द्वारा इन स्थानीय अभिजातों ने अपने नगरों का निर्माण किया, उन्होंने अपनी भौतिक गतिविधियों को जारी रखा, अपनी साहित्यिक संस्कृति का संरक्षण किया और अपने मनोरंजन उपलब्ध कराये। इसके बदले, उनका सम्मान नगरों के 'शुभचिंतक' (benefactors) या 'संरक्षक' (patrons) के रूप में हुआ, जहां वे अत्यंत प्रभावशाली थे।

2.4 दास प्रथा और समाज

प्रिन्सिपेट और उत्तर रोमन साम्राज्य काल में रोमन समाज स्तरीकृत बना रहा। यह एक पिरामिड की तरह था जिसमें सबसे ऊपर सीनेटरों का छोटा कुलीन वर्ग और 'अश्वारोही' ('इक्विट्स') थे। पिरामिड के आधार पर दास प्रथा कायम थी। यहां तक कि दासों में भी श्रेणियां थीं। *विलिकस*, एक दास प्रबंधक / निरीक्षक था, जो स्वयं एक दास था जो भूस्वमियों की अनुपस्थिति में भूमिं की देख-रेख करता था। उसकी पत्नी घरेलू मामलों की निरीक्षक (*विलिका*) होती थी। गणतंत्र के अंत तक दासों की संख्या लगभग बीस लाख थी और इनकी संख्या साम्राज्यीय काल में भी काफी अधिक बनी रही। दास श्रम का उपयोग अनेक तरीकों से किया जाता था और रोमन जगत में मुख्य रूप से तीन प्रकार के दास होते थेः

i) घरेलू दास जो परिवार के साथ एक ही घर में रहते थे और उससे संबंधित सभी कार्य किया करते थे। लगभग प्रत्येक रोमन घर में कुछ से लेकर हज़ार तक दास हुआ करते थे। पहली शताब्दी सी ई में केलियस आईसोडोसस के पास 4116 दास थे। वास्तव में दास 'समाज में समृद्धि के दिखावे' का प्रतीक बन गए थे। व्यक्ति विशेष के पास दासों की संख्या कुछ हद तक समाज में उसकी प्रतिष्ठा का प्रतीक बन गई, यहां तक कि कम समृद्ध जैसे सैनिक और युद्ध के दिग्गजों के पास भी कुछ संख्या में दास होते थे। समृद्ध घरों में बड़ी संख्या में घरेलू दास होते थे जो नर्स, रसोईया, माली, सफाई कर्मचारी आदि का काम करते थे, लेकिन अधिकतर घरेलू दास विभिन्न प्रकार के कार्य किया करते थे। घरेलू दासों में वर्गीकरण और विशेषीकरण था। प्रोक्यूरेटर (*procurator*) घर के बाहर व्यवसाय संभालता था; *एट्रीएंसिस* (*atriensis*) घर की देखभाल करता था; *डिस्पेंसेटर* (*dispensator*) आपूर्ति और भण्डार संभालता था; *साईलेनिएरियस* (*sileniarius*) दासों में अनुशासन बनाए रखता था।

ii) औद्योगिक दास खदानों, कारखानों, लंबी नावों (galleys) और विशाल भू-जागीरों पर कार्य करते थे जिन्हें *लैटिफंडिया* के नाम से जाना जाता था। ये अधिकतर सबसे कठोर परिस्थितियों में रहते थे और काम करते थे। *लैटिफंडिया* में काम करने वाले दासों की देख-रेख के लिए जो निरीक्षक होता था संभवतः वह भी एक दास होता था जो उनके साथ बहुत ही निर्दयी तरीके से व्यवहार करता था।

iii) सार्वजनिक दासों का स्वामी राज्य होता था और ये अनेक प्रकार के कार्य करते थे जैसे सड़कों और सार्वजनिक इमारतों का निर्माण करना या मंदिरों और स्नानाघरों की सफाई करना। जलसेतुओं (*क्यूरा एक्वारम*; *cura aquarum*) की देख-रेख का कार्य पूर्ण रूप से केवल सार्वजनिक दासों – 'सीज़र के दास' – द्वारा ही कराया जाता था। दासों को सार्वजनिक स्नानघरों में भी रखा जाता था जहां वे मालिश करने, तेल लगाने का कार्य, नाई (delapidators) और इत्र लगाने (perfumers) का कार्य किया करते थे। दावतों के समय ये रसोइये का कार्य करते थे और स्वामियों तथा अतिथियों को शानदार

> भोजन परोसते थे। इनमें से अनेक दास तलवार चलाने वालों (gladiator) का काम किया करते थे। ग्लैडिएटर की उनकी यह भूमिका बहुत ही खतरनाक होती थी। जानवरों के शिकार के समय ग्लैडिएटरों को जानवरों के सामने चारे के रूप में भी डाल दिया जाता था। ये सेना का भी हिस्सा थे, नौसेना में सुबह जगाने वाले और सेना में सेना के अधिकारी के 'अर्दली' (बैटमैन) के रूप में।

रोमन कानून के अनुसार, दासों को उनके स्वामियों की संपत्ति समझा जाता था। एम. आई. फिनले (1980) के अनुसार, दास के स्वामी का अधिकार पूर्णरूप से इस तथ्य से निर्धारित होता था कि दास उस समाज के लिए बाहरी है जहां उसे दास के रूप में प्रस्तुत किया जाता था। उसे सबसे प्राथमिक सामाजिक बंधन – रिश्ते-नातेदारी – से वंचित रखा गया था। यहां दास परिवार भी होते थे, परंतु यह विशेषाधिकार दास के स्वामी द्वारा दिया जाता था जो कि एकपक्षीय होता था और इसे एकपक्षीयता से समाप्त भी किया जा सकता था। इसके अतिरिक्त, दास परिवार को बिक्री के द्वारा दूसरी जगह भेजा भी जा सकता था। दास अपने अपराधों के लिए शारीरिक रूप से जवाबदेह था।

दासों के साथ कैसा व्यवहार होता था?

एक दास के साथ किस प्रकार का व्यवहार होता था यह पूर्णरूप से उसकी परिस्थितियों पर निर्भर करता था। *लैटिफंडिया* और खदानों में काम करने वाले दास आमतौर पर बहुत ही दयनीय स्थिति में रहते थे और काम करते थे। गणतंत्र के दौरान स्वतंत्र नागरिकों और दासों में भेद करने के लिए कोई विशिष्ट चिह्न का प्रयोग नहीं किया जाता था। हालांकि, उत्तर रोमन साम्राज्य काल में कुछ मामलों में उनके गलों में पट्टों का प्रयोग दिखने को मिलता है; इसके साथ ही इन पर 'लम्बे बाल' रखने और 'खाल से बने कपड़ों' का प्रयोग करने पर प्रतिबंध था। ये तकनीकी रूप से 'विवाहित' नहीं हो सकते थे, हालांकि वह *कांट्रीबर्नियम* (*contribernium*, बिना कानूनी अधिकार के शारीरिक संबंध) में प्रवेश कर सकते थे। लेकिन कुछ प्रकार के कार्यों में, विशेषकर कुशल कार्यों में, उनका स्वामी उनके साथ अच्छा बर्ताव करता था और शायद उन्हें स्वयं का कार्य प्रारंभ करने में मदद करता था। लेकिन अंततः वह स्वामी ही था जो उनका भविष्य निर्धारित करता था। कुछ स्वामी अपने दासों के बीमार पड़ने पर उनकी देखभाल करते होंगे, लेकिन अन्य पारंपरिक तौर पर भूस्वामी, कैटो, की राय का पालन करते हुए बीमार दासों के राशन में कटौती, दासों की जुबान काटना या बूढ़े अथवा बीमार दासों को किसी बूढ़े (निर्बल) बैल, पुराने औज़ार और 'अन्य किसी भी अतिरिक्त चीज़' की तरह बेच देते होंगे।

परंतु अमीर स्वामियों के कुछ दास समृद्ध होते थे और यहां तक कि उनके स्वयं के दास भी थे। रोमन प्रिन्सिपेट के दौरान और उत्तर रोमन साम्राज्य के काल में दासता से मुक्त होने से पहले से ही शाही दास अपनी हालत सुधारने के लिए अच्छी स्थितियों में थे। फिनले (1980) ने सही कहा है कि पहली शताब्दी सी ई में शाही परिवारों के दासों को सामाजिक गतिशीलता के सबसे अच्छे अवसर प्राप्त थे।

रोमन साहित्य घरेलू दासों के साथ हुई क्रूरता के उदाहरणों से भरा हुआ है। एक रोमन लोकोक्ति थी कि 'सब दास शत्रु होते हैं'। दसियों हज़ारों दासों का खेतों और खदानों में व्यवस्थित ढंग से शोषण होता था। वह अपने स्वामियों की दया पर निर्भर होते थे। वह अतिश्रम के शिकार, उपेक्षित, अनदेखे, बाहर फेंके, मारे-पीटे और कत्ल किये जा सकते थे, उनके पास स्वयं को बचाने का कोई वास्तविक अवसर नहीं होता था।

स्वामी और दास दोनों की आपसी शत्रुता, जो निःसंदेह दासप्रथा द्वारा अनिवार्य रूप से उत्पन्न की गयी, सामूहिक और व्यक्तिगत दोनों रूप से प्रदर्शित थी (कीथ हॉप्किंस)। 135 और 70

बी सी ई के बीच सिसिली और इटली में तीन प्रमुख दास आंदोलन हुए, जो कि संभवतः हज़ारों नए बनाए गए दासों के बंदीकरण और उपेक्षा से भड़के थे। पहला दास युद्ध (135-132 बी सी ई) रोमन गणतंत्र के विरोध में इयूनस (सीरिया मूल का) और क्लीओन के नेतृत्व में बाग़ान में कार्यरत दासों के विद्रोह के रूप में आरंभ हुआ। बागान दासों ने बागान-स्वामी डेमोफिलस की क्रूरता से हत्या कर दी। हालांकि, 132 बी सी ई में भारी सैन्य टुकड़ियों की तैनाती से इस विद्रोह को कुचल दिया गया। दूसरा दास युद्ध 104 बी सी ई में आरंभ हुआ जिसका नेतृत्व सल्वियस ने और उसकी मृत्यु के बाद एथिनियन ने किया था। यह संघर्षपूर्ण विद्रोह 102 बी सी ई तक चलता रहा। आखिरकार, राज्य की रक्षक सेना द्वारा इसे समर्थन मिला। तीनों विद्रोहों में 73-71 बी सी ई का ग्लेडिएटर दासों का विद्रोह सबसे गंभीर था जिसका नेतृत्व ग्लेडिएटरों के सेनापति स्पार्टकस ने किया था। इसका रोमन इतिहास पर गहरा प्रभाव रहा। पॉम्पे और क्रॉसस ने अपने राजनैतिक लाभ के लिए इसका फायदा उठाया। इसने रोमन गणतंत्र को रोमन साम्राज्य में परिवर्तित करने के बीज भी बोए। 70 बी सी ई के दास विद्रोह (स्पार्टक्स के नेतृत्व में) के बाद कोई बड़े स्तर का विद्रोह नहीं हुआ।

अधिकांश दास प्रतिरोध न तो खुले तौर पर विद्रोह थे और न ही उसमें कोई हत्या हुई। इसने संभवतः छल-कपट, धोखेबाज़ी, झूठ और निष्क्रियता का रूप धारण किया था।

दासत्वमुक्ति / स्वतंत्र दास

स्वतंत्र दासों की तीन प्रकार की श्रेणियां थीः *इंजेनस* (*ingenuus*), ये वे स्वतंत्र व्यक्ति होते थे जिन्हें दास नहीं बनाया जा सकता था; *लिबर्टिनस* (*libertinus*), वे दास जिन्हें **दासमुक्ति (manumission)** के तहत स्वतंत्रता मिली थी; और तीसरे वे जिन्होंने अपनी *'बचत'* (***पेक्यूलियम; 'peculium'***) से स्वतंत्रता खरीदी थी। हालांकि रोमन समाज अपनी प्रतिष्ठा के प्रति बहुत ही सचेत और वर्गीकृत था, परंतु यहां पर कभी-कभी आश्चर्यजनक रूप में सामाजिक गतिशीलता भी थी और इस सामाजिक गतिशीलता का प्रमुख मार्ग दासों को स्वतंत्र (दासमुक्ति) करना था। लगभग सभी दासों को जिन्हें उनके स्वामियों द्वारा मुक्त कर दिया गया था उन्हें रोमन नागरिकता प्राप्त हुई। जो दास धार्मिक मठ से जुड़ जाता था वह स्वतंत्र हो जाता था। हालांकि, इसमें सम्मिलित होने के लिए स्वामी की आज्ञा आवश्यक थी।

कीथ हॉप्किंस (1978) के अनुसार, प्राचीन दासप्रथा के इतिहासकारों ने सामान्यतः दासों की स्वतंत्रता का विवरण मानवता के दृष्टिकोण से किया हैः उन्होंने इसे कठोर व्यवस्था में एक नरम तत्व की तरह देखा है। यह सत्य है कि प्रत्येक दास के लिए स्वतंत्रता उसके स्वामी द्वारा उदारता का कार्य था। लेकिन जैसा कि हॉप्किंस द्वारा इस बात पर बल दिया गया है कि रोमन दास इस स्वतंत्रता के लिए लगातार काफी अच्छी मात्रा में रकम अदा करते थे। कुछ दासों द्वारा काम के वर्षों के दौरान उन्हें छोटी मात्रा में धन कमाने की अनुमति थी, यह 'बचत' ('*पेक्यूलियम*') ही थी जिससे वे अन्ततः अपनी स्वतंत्रता खरीद सकते थे। स्वामी अपनी समृद्धि और शक्ति के दिखावटी प्रतीक के लिए भी दासों को स्वतंत्र करते थे।

रोमन दासों के एक बार स्वतंत्र होने के बाद वह समाज के निचले तबके में घुल-मिल सकते थे। कुछ पूर्व-दासों ने काफी अधिक धन संपदा और सामाजिक ख्याति अर्जित की। प्रांतों में शासकों के पूर्व-दास कर एकत्रण के निरीक्षक के रूप में कार्य करते थे और शासकों के लिए सीनेटरी गवर्नरों की गतिविधियों पर नज़र रखते थे। निजी स्वामी स्वतंत्र दासों का व्यापारिक एजेंट, गुप्त सचिव आदि की तरह प्रयोग करते थे। अनेक कुशल कारीगर दासों ने स्वतंत्रता प्राप्त की और उनमें से कुछ ने अपने लिए भारी मात्रा में संपत्ति एकत्र की। लेकिन एक बार स्वतंत्र होने के पश्चात् भी दासों को अपने मूल कार्य के सामाजिक कलंक से बाहर निकलना होता था। उच्च वर्ग अक्सर स्वतंत्र दासों की समृद्धि का उपहास उड़ाते थे और उन्हें उपेक्षा की नज़र से देखते थे। यद्यपि इनका क्रोध अधिकतर उन स्वतंत्र दासों की ओर निर्देशित

होता था जो सचिव के तौर पर कार्य करते थे और जिन्होंने शासकों से अत्यधिक निकटता होने के कारण अपने लिए शक्ति, प्रभाव और लाभ प्राप्त किया था।

स्वतंत्र दास का उसके पुराने स्वामी से संबंध एक कानूनी अधिनियम द्वारा निर्धारित किया गया था। स्वामी संरक्षक की तरह होता था और स्वतंत्र दास आज्ञापालक था और विभिन्न प्रकार की सेवाओं के लिए उत्तरदायी था। और यदि दास अपना कार्य करने में असफल होता था तो कानूनी रूप से उसे दण्ड भुगतना होता था। इसके अतिरिक्त, स्वतंत्र दास सीनेटर और घुड़सवार श्रेणी (equites) में भर्ती नहीं हो सकते थे, और न ही वे उच्च वर्गों में विवाह कर सकते थे और न ही ***लीजन*** में अपनी सेवाएं दे सकते थे।

दास प्रथा रोमन सभ्यता के लिए इस हद तक अत्यावश्यक थी कि जब दासों की आपूर्ति कम (दूसरी शताब्दी सी ई के अंत में) हो गई तो अर्थव्यवस्था में संकट उभरने लगा। यह संकट राजनैतिक अस्थिरता और विदेशी आक्रमण दोनों के साथ एक साथ आ पड़ा। अंततः साम्राज्य का पश्चिम में पतन होना आरंभ हो गया।

2.5 रोमन कला और वास्तुकला

रोमन कला और वास्तुकला इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि उसने विश्व भर के कलात्मक स्वरूपों को प्रभावित किया।

वास्तुकला

मंदिर, बेसिलिका (basilicas), स्नानागार, नाट्यशालाएं और ऐम्फिथियेटर (गोलाकार इमारत जिसमें दर्शकों के बैठने की व्यवस्था हो) रोमन वास्तुकला के प्रमुख चिन्ह थे। रोम की विशालकाय महान् स्मारकीय वास्तुकला के अवशेष गणतंत्र की स्थापना (509 बी सी ई) के समय छठी शताब्दी बी सी ई से देखे जा सकते हैं। आरंभिक चरण में रोमन वास्तुकला ऐट्रूस्कन शैली – ट्रस्कन बरामदा और टेराकोटा अलंकरण – से अत्यधिक प्रभावित थी। रोम का कैपिटोल स्थित मंदिर काफी हद तक सिग्निया और वेई की ऐट्रूस्कन वास्तुकला के सादृश्य था। लेकिन, रोमन विस्तार, विशेषरूप से 200 बी सी ई से 50 सी ई तक रोम के यूनान के साथ नज़दीकी संबंधों के कारण रोमन वास्तुकला पर यूनानी वास्तुकला के प्रतिरूपों का बढ़ता प्रभाव दिखाई देता है। यह प्रभाव तीसरी शताब्दी बी सी ई में गैबी के मंदिर और अपोलो के पांपेई स्थित मंदिरों (120 बी सी ई), फॉर्चुना विरिलिस के मंदिर (40 बी सी ई) में देखने को मिलता है। ये सारी संरचनाएं हेलेनिस्टिक आंदोलन के गहरे प्रभाव को दर्शाती हैं। हालांकि, रोमन फोरम में स्थित के कांकॉर्द, कैस्टर और पॉलक्स के उत्तर ऑगस्टन मंदिर 'सीमित रूप में विस्तार और अत्यधिक विस्तृत स्थानीय अलंकरण की व्यवस्था की स्वतंत्रता और अलंकृत मोल्डिंग (mouldings) को दर्शाते हैं ('रोमन आर्किटेक्चर', 1965: 404)। रोमन अवधारणाओं का प्रयोग लौकिक वास्तुकला में अत्यधिक प्रत्यक्ष था – पांपेई (120 बी सी ई), ट्यूलिआनम (100 बी सी ई) और टेबुलेरियम (78 बी सी ई) में स्थित स्टेबियन स्नानागारों में रोमन मेहराबदार प्रकोष्ठ (vaulted spaces) की मौजूदगी। हालांकि अलंकरण में हेलेनिस्टिक शैली का प्रयोग किया गया था। इटली के बाहर रोमन प्रभाव को आर्लेस (Arles) और निमेस (Nimes) में स्थित नाट्यशालाओं और एम्फिथियेटरों (16 बी सी ई) में देखा जा सकता था। पहली शताब्दी सी ई से यूनानी मोटिफ (motifs; दृश्यकला) और अलंकरण और भी अधिक वैभवशाली और विस्तृत हुए जो कि कोलेसियम (75-82 सी ई) में प्रत्यक्षतः दिखाई देता है, जो ट्रेजन और हेड्रियन (लगभग 98-138 सी ई) के काल में अपने उत्कर्ष पर पंहुचा – फोरम ऑफ ट्रेजन और तिवोली में स्थित हेड्रियन की विला। फिर भी, प्रांतीय इमारतों ने 'महान् व्यक्तिगत विशेषता' को कायम रखा। 200 सी ई से लेकर कॉस्टेंटाइन के काल तक इमारतों पर 'भौतिक पदार्थ' से अधिक 'भव्यता' पर बल दिया गया। 'दूसरी शताब्दी सी ई के अंत

से पहले से ही तीव्र विषम प्रकाश और प्रतिबिंब के साथ की गई गहरी कटाई ने नक्काशीदार अलंकरण की ठोस शैली की छाप को कम कर दिया' ('रोमन आर्किटेक्चर', 1965: 405)। प्रकाश और प्रतिबिंब का उत्कृष्टतम उदाहरण सेप्टिमियस सेवरस (लगभग 200 सी ई) की मेहराबों में देखने को मिलता है। डायोक्लेशियन के महल (लगभग 300 सी ई) में मेहराबदार कोलोनेड का व्यापक प्रयोग किया गया था।

चित्र 2.1: फ्रांस के निमेस में स्थित रोमन मंदिर
साभार: दानीचाउ, जनवरी, 2011; वाटरबरो, जून, 2019
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/1/10/MaisonCarr%C3%A9e.jpeg

सबसे पहले प्रयोग में आने वाली इमारती सामग्री *तूफ़ा* थी, जो कि प्रचुर मात्रा में उपलब्ध एक आग्नेय शिला (ज्वालामुखी से प्राप्त पत्थर) थी। इस आग्नेय शिला के अपेक्षाकृत कम कठोर होने के कारण इस पर कांस्य के उपकरणों से काम करना आसान था। हालांकि, बाद में अल्बान पहाड़ी से लाए गए सख़्त आग्नेय पत्थरों का प्रयोग किया गया। उत्तर गणतंत्र काल में तिबुर (तिवोली) से लाया गया चूना पत्थर (ट्रेवरटाइन; travertine) इमारतों में प्रयोग होने वाला मुख्य पत्थर था (विशेष रूप से कोलेसियम के बाहरी भाग में)। संगमरमर का प्रयोग प्रमुखतः अलंकरण के लिए किया जाता था। पैलेटाइन पर स्थित फ्लावियन महल और तिवोली में स्थित हेड्रियन की विला में संगमरमर का बड़े पैमाने पर प्रयोग किया गया था। कांस्य का अत्यधिक प्रयोग दरवाज़ों, ग्रिल और पट्टिकाओं (panels) की कटाई में किया गया था। पॉज़ुओलाना (उत्कृष्ट चॉकलेटी लाल आग्नेय मिट्टी), जो पॉज़ुओली (नेपल्स) के नदीतल में बड़ी मात्रा में उपलब्ध थी, चूने के साथ मिश्रित होने पर यह उत्कृष्ट 'प्राकृतिक गारा' (natural hydraulic cementing) उपलबध कराती थी ('रोमन आर्किटेक्चर', 1965: 405)। आरंभिक पत्थर की इमारतों में 'खड़े और आड़े' (headers and stretchers; *opus quadratum*) विधि द्वारा चुनाई किए गए वर्गाकार पत्थर के टुकड़ों का प्रयोग किया गया था। रोमन वास्तुकला की एक और प्रमुख विशेषता पत्थर के स्तंभ और खंबे थे, जो प्रायः एकाश्म (monolithic) थे। पहली शताब्दी बी सी ई तक बैरल महराबों का बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जाने लगा था। रोमन मेहराबों का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण मैक्सेंटियस की बेसिलिका (लगभग 310-320 सी ई) में देखा जा सकता है।

रोमन **बैसिलिका (basilicas)** आवृत (covered) हॉल थे जिनका प्रयोग न्यायालय की तरह किया जाता था और जो बैंकिंग और वाणिज्यिक लेन-देन के स्थान भी थे। इनमें से प्रमुख थे बैसिलिका जूलिया और बैसिलिका एमिलिओन, जो रोम में फोरम के उत्तर और दक्षिणी क्षेत्र में स्थित थे। **रोमन स्नानागार** विश्वभर में रोमन जीवलशैली के प्रमुख चिन्हिक माने जाते हैं। केवल रोम में ही इनकी संख्या एक हज़ार थी। इनमें से सबसे अच्छी तरह से संरक्षित स्नानागार पांपेई में स्थित स्टैबियन स्नानागार है। रोमन समाज का एक और चिन्हिक उसकी नाट्यशालायें और एम्फिथियेटर हैं। इनमें से कुछ प्रमुख नाट्यशालायें जैसे कि पांपेई, सिसिली में स्थित तॉओरमिना, इटली में स्थित ओस्तिया और फ्रांस में ऑरेंज आज भी अस्तित्व में हैं। हालांकि रोम की सर्वाधिक उत्कृष्ट इमारत रोमन रंगभूमि (एम्फिथियेटरों) – कोलोसियम है जिसका निर्माण वेस्पेसियन, टाईटस और डोमिशियन शासकों द्वारा 72-80 सी ई में करवाया गया था। कुछ अन्य महत्वपूर्ण रंगभूमि (एम्फिथियेटर) कैपुआ, पांपेई, पोजुओली, आर्लेस और निमेस में स्थित हैं।

रोमन वास्तुकला की एक और महत्वपूर्ण विशेषता **स्तम्भावलीयुक्त पथ (colonnaded avenues)** थे जो अक्सर अलंकृत मेहराबों से विभूषित हुआ करते थे जैसा कि रोम में स्थित सैप्टिमियस सैवरस की मेहराबें। **फोरम**, वह स्थान जहां पर महत्वपूर्ण कारोबार किया जाता था, रोमन जीवनशैली का एक और महत्वपूर्ण चिह्न था। ट्रेजन का फोरम रोमन साम्राज्य का सबसे अधिक चित्ताकर्षक फोरम था।

सेतु और कृत्रिम जलमार्ग को सही मायनों में रोम के महान्तम स्मारकों के रूप में उल्लिखित किया जा सकता है। रोमन अपने कृत्रिम जलमार्गों में यंत्र पंप (siphon conduits) के सिद्धांत का प्रयोग किया करते थे। सर्वाधिक प्रख्यात रोमन कृत्रिम जलमार्ग निमेस में स्थित पांट ड्यू गार्ड और स्पेन में स्थित तरागोना और सेगोविया हैं।

रोमन कला

रोमन कला रूप अपनी शक्ति दो स्रोतों से प्राप्त करते थे – पहला, जो रोम और उसके आस-पास बनाए गए और दूसरे, वे जो यूनानी कलाकारों और यूनानी प्रभाव में सृजित और 'विदेशी संपर्कों के प्रभाव का दर्पण' थे। रोमन सिक्के यूनानी कलाकारों की कलाकृति थे। सही कहा गया है कि, 'यह अनुमान लगाना गलत नहीं होगा कि अगर रोम इनसे [कलाकारों] यूनानी कला की मातृभूमि में मिला नहीं होता तो उसकी (रोम की) कला, साम्राज्य काल की महान् कला के रूप में कभी विकसित नहीं हुई होती... रोमन कला दो परंपराओं के मेल-जोल से उभरी – पहली, हेलेनिस्टिक कला परंपरा और खासतौर पर उस परंपरा की मूर्तिकला शाखा, और दूसरी रोम की राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और मनोवैज्ञानिक परंपरा' ('रोमन आर्ट', 1965ः 413)। इन तीन कला रूपों में जो रोमन भावना को सबसे भावपूर्ण तरह से व्यक्त करते हैं, का पहला प्रतीक हेलेनिस्टिक काल में खोजा जा सकता है। यह कला रूप सजीव या यथार्थवादी चित्रांकन हैं, जिसमें हर एक रेखा, सलवट और शिकन, और यहां तक कि ज़रा सा दाग भी बेबाकी के साथ अभिलेखित था; कथनात्मक कला के सभी प्रकारों में लगातार या ''चलचित्र'' के अंदाज में कथन; और नक्काशी और चित्रकारी में प्रकृति, गहराई और परिप्रेक्ष्य का त्रि-आयामी प्रतिपादन किया जाता था' ('रोमन आर्ट', 1965ः 413)।

हालांकि रोमन कला पर हेलेनिस्टिक प्रभाव पूर्णतः प्रभावी था, फिर भी बदले में रोमन संरक्षणत्व में हेलेनिस्टिक कला ने नयी ऊंचाइयों को छुआ और 'नवीन जोश हासिल किया' ('रोमन आर्ट', 1965ः 412)। आरंभिक गणतंत्र के कलात्मक रूप ज्यादातर ऐट्रूस्कनों के जरिये पूरी तरह से यूनानी कलाकारों द्वारा निर्मित थे – छठी शताब्दी बी सी ई में ईष्टदेव की एक प्रतिमा को वेई के वल्का की कृति माना जाता है। एथेंस के मेट्रोडोरस को ऐमिलियस पॉलस द्वारा रोम में उसकी मेसिडोनियन विजय का चित्रण करने के लिए नियुक्त किया गया

था। हालांकि पांचवी से तीसरी शताब्दी बी सी ई में रोमन अभियानों और सफलताओं के बाद मध्यस्थों के तौर पर ऐट्रूस्कन प्रभाव धीरे-धीरे लुप्त होता गया और रोमवासी केम्पेनिया और मेगना ग्रेशिया द्वारा सीधे यूनान के संपर्क में आए।

दूसरी शताब्दी बी सी ई में रोमन **मूर्तिकला** की प्रथा रोमन और ऐट्रूस्कनों द्वारा अंतिम-संस्कार के लिए बनाए गए मोम और टेराकोटा (पकी हुई मिट्टी) के मुखौटों में खोजी जा सकती है। लगभग 100 बी सी ई तक हमें रोमनों द्वारा कांस्य, पत्थर और संगमरमर से बनी 'सजीव और यथार्थ शीर्ष प्रतिमाएं (Head) आवक्ष मूर्तियां (busts; धड़) और प्रतिमाएं' मिलती हैं। इस प्रकार का पहला ऐसा साक्ष्य सूला के काल (138-78 बी सी ई) से प्राप्त होता है जो लगभग 75-65 बी सी ई में अपनी चरम सीमा पर पहुंचा। ऐसी प्रतिमाओं का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण आगस्टस और एरा पेसस आगस्टाय (13 बी सी ई) के नक्काशीदार पैनल हैं। आवक्ष मूर्तियों में गहराई उत्तर फ्लेवियन काल में दिखाई देती है, जो ट्रेजन की प्रतिमाओं के साथ और भी गहन हुई। यह गहराई हेड्रियन के काल में और भी गहन हुई। कैपिटोल में स्थित मार्कस ऑरेलियस की कांस्य की घुड़सवार आकृति और कोमोडस हरक्यूलिस की संगमरमर की प्रतिमा रोमन एन्टोनाइन और सेवेरन काल की मूर्तिकला के बेहतरीन उदाहरण हैं। इस काल की एक और महत्वपूर्ण विशेषता विशद् रूप से नक्काशीयुक्त ताबूत (sarcophagi; पत्थर के अंतिम-संस्कार बॉक्स जो आमतौर पर भूमि के ऊपर प्रदर्शित होते हैं) हैं। यह कला एशिया माइनर में जन्मी एक ऐसी कला थी जिसका सीधा आयात रोम और इटली में हुआ और स्वतंत्र रूप से इसका अनुसरण किया गया। हालांकि, तीसरी और चौथी शताब्दी सी ई तक, कला के इन रूपों में निश्चित तनाव देखने को मिलते हैं। चेहरे के विन्यास का सरलीकरण और ढलकते हुए घुंघराले बालों का त्याग और उसके स्थान पर हैट (टोपी; Headgear) के चित्रण का मार्ग प्रशस्त किया।

पहली शताब्दी बी सी ई के उत्तरार्ध से घरेलू भित्ति चित्रण की श्रृंखला दिखाई देने लगती है। इनमें सर्वाधिक उत्कृष्ट चित्रण एस्क्यिुलाइन हिल पर स्थित वेटिकन हॉउस के ओडीसी भित्तिचित्रों में पाई जाती है। इसमें घटनाक्रम को निरंतरता में दर्शाया गया है। एक और प्रख्यात विशालकाय फ्रीज़ (friezes; इमारत के उर्ध्व-खंड में की गई नक्काशी) पांपेई के हरक्यूलेनियम दरवाज़े के बाहर स्थित मिस्ट्री (रहस्यमयी) विला की दीवारों और रोम में नीरो के गोल्डन हाउस पर पाई गई हैं। इन चित्रणों की विषयवस्तु सामान्यतः यूनानी पौराणिक कथाओं से, और कुछ धार्मिक अनुष्ठानों और रोमन किंवदंतियों से ली गई थीं। उत्तर गणतंत्र और आरंभिक साम्राज्यीय भित्तिचित्र 'आश्चर्यजनक रूप से सजीव और अत्यंत यथार्थ' हैं ('रोमन आर्ट', 1965: 417)।

रोमन कला की एक और महत्वपूर्ण विशेषता उसके मोज़ेक फुटपाथ थे। रोमनों ने मोज़ेक की तीन तकनीकें अपनाईः *ओपस टेसेलेटम*[1]: इस मोज़ेक तकनीक में ज्यादातर ज्यामितीय रचनाएं प्रस्तुत की जाती थीं। *ओपस सेक्टाइल*[2]: इस तकनीक के द्वारा अक्सर अपेक्षाकृत बड़े *टेसेराय* (*tesserae*) का प्रयोग कर अमूर्त और शैलीगत बेल-बूटेदार पैटर्नस बनाए जाते थे। *ओपस वरमिक्यूलेटम*[3]: इस तकनीक में छोटे *टेसेराय* (*tesserae*) का प्रयोग कर बेल-बूटेदार रचनाएं बनाई जाती थीं। रोमन मोज़ेक उत्तर हेलेनिस्टिक काल के पेरगामन में स्थित अटालिड्स के शाही महल के मोज़ेक से प्रत्यक्ष रूप से प्रेरित थे। दूसरी शताब्दी बी सी ई में पांपेई में स्थित हॉउस आफ फॉन में सिकंदर का मोज़ेक (नेपल्स) सबसे प्रख्यात रोमन

[1] वह मोज़ेक तकनीक जिसमें समरूप *टेसेराय* (*tesserae*; छोटे क्यूब) का प्रयोग किया जाता था।

[2] वह मोज़ेक तकनीक जिसमें *ओपस टेसेलेटम* में प्रयुक्त क्यूब की तुलना में अधिक बड़े *टेसेराय* का प्रयोग किया जाता था।

[3] वह मोज़ेक तकनीक जिसमें *ओपस टेसेलेटम* में प्रयुक्त क्यूब की अपेक्षा छोटे *टेसेराय* (*tesserae*; छोटे क्यूब) का प्रयोग किया जाता था।

मोज़ेकों में से एक है। चौथी शताब्दी के पियाज़ा आरमेरिना, सिसली में स्थित कंट्री विला अब तक के प्राप्त सबसे बड़े अखंडित श्रृंखलाबद्ध रोमन घरों के मोज़ेक फर्श हैं। चित्रकला की तरह इन मोज़ेकों की विषयवस्तु भी ज्यादातर यूनानी पौराणिक कथाएं और रोमन किंवदंतियों से व्युत्पन्न थी।

चित्र 2.2: ओपस टेसेलेटम पच्चीकारी तीसरी शताब्दी सी ई
साभारः जेस्ट्रो, अक्टूबर, 2006;
स्रोत फोटोग्राफरः मेरी.लेन गुयेन
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/2/23/Mosaic_ducks_Massimo.jpg

चित्र 2.3: बाघिनी एक बछड़े पर आक्रमण करते हुए, संगमरमर ओपस सेक्टाइल (325-350 सी ई), जूनियस बासुस की बैसिलिका, एस्क्युलाइन पहाड़ी, रोम
साभारः जेस्ट्रो, नवंबर, 2006
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/9/90/Tiger_calf_Musei_Capitolini_MC1222.jpg

चित्र 2.4: *ओपस वरमिक्यूलेटम* फर्श पच्चीकारी, बिल्ली और दो बतख, पहली शताब्दी बी सी ई के प्रथम चौथाई
साभारः जेस्ट्रो, दिसंबर, 2009;
स्रोत फोटोग्राफरः मेरी-लेन गुयेन
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/d/d4/Mosaic_cat_ducks_Massimo_Inv124137.jpgcks/k iz'u&2

बोध प्रश्न-2

1) रोमन वास्तुकला पर पांच पंक्तियां लिखिए।

....
....
....
....
....

2) क्या आप इस बात से सहमत हैं कि रोमन कला लगभग पूरी तरह से यूनानी कला रूपों को दर्शाती थी?

....
....
....
....
....

3) निम्नलिखित में से कौन से कथन सही या गलत हैं? सही के आगे (**सही**) अथवा गलत के आगे (**गलत**) लिखें:

क) रोम में ग्राम्य क्षेत्र के दास श्रमिक शहरों में रहने वाले भूस्वामी वर्ग को समृद्धि और आराम उपलब्ध कराते थे। (**सही / गलत**)

ख) प्रिंसिपेट काल में कृषि में गिरावट आई, वहीं व्यापार और उद्योग को झटका लगा था। (**सही / गलत**)

ग) सम्राट ट्रेजन के पश्चात् आक्रमण करने और विजय की नीति को त्याग देने अथवा 'सीमाओं को बंद करने' से रोम में दासों की आपूर्ति में तेज़ी से गिरावट आई। (**सही / गलत**)

घ) ऑगस्टस के सत्ता में आने के बाद और उसके द्वारा सुधारों का एक सिलसिला शुरू होने के पश्चात् भी, सीनेटरी अभिजात वर्ग पहले की ही तरह केंद्रीय शक्ति का आनंद लेता रहा। (**सही / गलत**)

च) रोमन जगत में 'क्लांइटेला' के प्रचलन ने आगे चलकर निम्न वर्ग (Plebeians) के ऊपर उच्च वर्गों की शक्ति को और अधिक बढ़ावा दिया। (**सही / गलत**)

2.6 सारांश

रोमन समाज पूर्णरूप से दासप्रथा पर आश्रित था। उनकी राजनीति, अर्थव्यवस्था और समाज व्यावहारिक रूप से दासों और उत्पादन की दास पद्धति द्वारा शासित था। यद्यपि, तीसरी शताब्दी बी सी ई से पूर्व यह कुछ हद तक केवल अत्यधिक धनी वर्ग के बीच सीमित रह गया था जो दासों को रखने में समर्थ थे। तीसरी शताब्दी बी सी ई के बाद, युद्ध बंदियों और रोमन जगत के विस्तार ने दासों की उपलब्धता को आसान बना दिया और दास प्रथा तीव्र गति से फैली। हालांकि, उत्पादन की दास पद्धति पर आधारित समाज में शोषण व्याप्त था, दास मुक्ति (manumission) के प्रावधान और यह तथ्य कि दास 'संपत्ति' रख सकते थे, ने कुछ दासों को अपनी स्थिति में सुधार लाने में मदद की और वह स्वतंत्र नागरिक बन सके। यद्यपि, दास समाज की प्रकृति पूर्णरूप से शोषक थी, तुच्छ कार्य करने के अलावा दासों में से अक्सर शिक्षित थे और वे शिक्षक के रूप में भी कार्य करते थे। जबकि, कुछ अन्य दास राज्य के विभागों में लिपिक, मुंशी आदि के पद पर नियुक्त किये जाते थे। 135 बी सी ई से दासों में असंतोष के संकेत देखने को मिलते हैं जब सिसिली में बागान-दासों द्वारा विद्रोह किया गया। अंत में उनके संघर्ष की विजय हुई और साम्राज्य की स्थापना के साथ उन्हें स्वतंत्रता प्राप्त हुई, और उत्पादन की दास पद्धति या दास आधारित उत्पादन व्यवस्था क्रमशः समाप्त हुई।

2.7 शब्दावली

कोलोनी : पट्टेदार-कृषक जो अपने भूस्वामियों की भूमि से बंधे होते थे और जिन्हें उत्पादन में से नकद या वस्तु रूप में अपने स्वामियों को मेहनताना देना होता था।

स्वतंत्र दास : वह दास जिसे स्वतंत्र कर दिया गया हो और जिसे नागरिकता प्राप्त हो।

लीजन : रोमन सेना में बड़ी संख्या में शामिल सैनिकों तथा घुड़सवारों की एक इकाई

दासमुक्ति (manumission) : दास को स्वतंत्र करने की प्रक्रिया

***पेक्युलियम*/ निजी सम्पत्ति** : ऐसी व्यवस्था जिसमें दासों को कुछ धन कमाने की अनुमति दी जाती थी जिससे वे अपनी स्वतंत्रता खरीद सकते थे

सर्वस : दासों के लिए प्रयुक्त शब्द

विला : किलेबंद भूसंपत्ति जहां भूस्वामी वर्ग रहा करते थे और किसान यहां भ्रष्ट अधिकारियों और बर्बर आक्रमणकारियों से अपनी सुरक्षा के लिए आते थे

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) उप-भाग 2.2 देखें

2) उप-भाग 2.2.1; 2.2.2 देखें

3) उप-भाग 2.2.3 देखें

4) उप-भाग 2.2.2 देखें

5) उप-भाग 2.2.4 देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 2.5 देखें

2) भाग 2.5 देखें

3) क) सही; ख) गलत; ग) सही; घ) गलत; च) सही

2.9 संदर्भ ग्रंथ

ब्रंट, पी. ए., (1971) *सोशल कॉन्फलिक्टस इन द रोमन रिपब्लिक* (लंदनः चाटो एवं विंडस).

डडले, डी., (1970) *रोमन सोसाइटी* (हार्डमन्ड्सवर्थः पैंगुइन बुक्स).

फिन्ले, एम. आई., (1980) *एंशियंट स्लेवरी एंड मॉडर्न आईडियोलोजी* (न्यूयॉर्कः वाइकिंग प्रेस).

हॉपकिन्स, कीथ, (1978) *कॉन्क्ररर्स एंड स्लेव्स,* भाग-1, *सोशियोलॉजिकल स्टडीज़ इन रोमन हिस्ट्री* (न्यूयार्कः कैम्ब्रिज यूनीवर्सिटी प्रेस).

'रोमन आर्किटेक्चर' (1965) *एनसाईक्लोपीडिया ब्रिटेनिका,* भाग-19 (शिकागोः विलियम बेनटन), पृ. 403-412.

'रोमन आर्ट' (1965) *एनसाईक्लोपिडिया ब्रिटेनिका,* भाग-19 (शिकागोः विलियम बेनटन), पृ. 412-421.

2.10 शैक्षणिक वीडियो

रोमन सोसाइटी एंड पॉलिटिकल स्ट्रक्चरः हिस्ट्री वीडियोज़

https://www.youtube.com/watch?v=3B5pGiWptb4

इकाई 3 रोमन जगत में धर्म और ईसाई मत का उदय*

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 धर्म और रोमन जगतः एक अधिग्रहण आधारित सभ्यता

3.3 ईसा पंथ और रोमन शासन को खतराः उत्पीड़न से प्रोत्साहन तक

3.4 'रहस्यवादी धर्म' और ईसाई धर्म का उदय

3.5 ईसाई धर्म और रोमन राज्य का अन्तिम चरण

3.6 सारांश

3.7 शब्दावली

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.9 संदर्भ ग्रन्थ

3.10 शैक्षणिक वीडियो

3.0 उद्देश्य

रोमन सभ्यता प्रथम स्हस्त्राब्दी बी सी ई की आरम्भिक शताब्दियों के दौरान उभरी, और जैसे-जैसे पूरे भूमध्य-सागर क्षेत्र में इसका विस्तार हुआ यह उन समाजों के पंथों और सम्प्रदायों (जिन्हें आज हम आमतौर पर धर्म कहते हैं), को आत्मसात करने लगी जिससे उसका सामना हुआ। अन्य सभ्यताओं की तरह इस अवधि में रोमन रोजमर्रा की दिनचर्या की लय से जुड़ी धार्मिक प्रथाओं ने सामाजिक और राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति की। रोमन प्राधिकारियों ने राज्य के गठन और सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया में धार्मिक पंथों और व्यवहारों के प्रति संरक्षण और दमन, दोनों तरह का व्यवहार किया। जैसा कि रोमन प्रशासन का स्वरूप बाद में पहली स्हस्त्राब्दी बी सी ई में गणतन्त्रवाद और सीमित राजतन्त्र से निरकुंशता के स्वरूप में परिवर्तित हुआ (सीजरों द्वारा शासित साम्राज्य) और जैसे-जैसे रोमन शासन की सीमाओं का इटालियन प्रायद्वीप के पार विस्तार हुआ, कई नवीन धर्मों का उदय हुआ और अन्य धर्म अपनी उत्पत्ति के स्थान से भी दूर क्षेत्रों में फैले। नये धर्मों में से ईसाई धर्म को 300 सी ई के बाद रोमन जगत में विशेषाधिकार की स्थिति प्राप्त हुई और यह उत्तर रोमन समाजों की (500 सी ई के बाद) शक्ति संरचनाओं में गहराई से अंतःस्थापित हो गया।

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप :

- रोमन जगत में धार्मिक व्यवहारों और परम्पराओं के बारे में जानेंगे,
- ईसाई धर्म के प्रसार के लिए उत्तरदायी कारकों की सूची बना सकेंगे;
- रोमन साम्राज्य में ईसाई धर्म के उदय से जुड़े घटनाक्रम को राजनीतिक संरचना से जोड़कर समझ सकेंगे, और
- प्रारंभिक ईसाई धर्म की विशेषताओं का आकलन कर सकेंगे और यह समझ सकेंगे कि

* प्रोफेसर डेनिस पी. लेटन, स्कूल ऑफ लिबरल स्टडीज, अम्बेडकर यूनिवर्सिटी, दिल्ली

यह किस प्रकार उत्तर रोमन समाजों, विशेषरूप से यूरोप और बाइज़ेंटाइन साम्राज्य, में आगे फैल सका।

3.1 प्रस्तावना

जैसा कि हमने इस पाठ्यक्रम की पिछली इकाइयों में चर्चा की है, इटली में 'रोम' एक शहर के रूप में 800 बी सी ई के आसपास उभरा और एक छोटी सी राज्य-व्यवस्था की राजधानी बन गया। अगली पाँच शताब्दियों तक 'रोम' अपने शक्तिशाली पड़ोसी राज्योंः ग्रीक नगर-राज्यों (जिनमें से कुछ ने इटली प्रायद्वीप में उपनिवेश स्थापित किए थे), विशाल ईरानी साम्राज्य और भूमध्यसागर के उत्तरी, दक्षिणी और पश्चिमी किनारों के साथ विभिन्न कबीलाई राज्यों का कुछ ध्यान ही आकर्षित कर पाया। हालांकि आठ शताब्दियों के बाद 'रोम' का मतलब न केवल एक महान् शहर था बल्कि 6 करोड़ जनसंख्या का एक साम्राज्य था। (लगभग इस समय के चीनी केन्द्रीय साम्राज्य की जनसंख्या के समान) जिसका विस्तार पश्चिमी एशिया ('निकट पूर्व') उत्तरी अफ्रीका और महाद्वीप के एक बड़े भू-भाग, जिसे आज यूरोप कहा जाता है; तक था।

हालाँकि हम एक रोमन सांस्कृतिक प्रारूप का जानकारी प्राप्त कर सकते हैं – कुछ इतिहासकार और अन्य विद्वान रोमनता शब्द का इस्तेमाल करते हैं – लेकिन रोमन जगत में धर्म के अनेक रूप जो प्रचलित थे, अतः उनके बारे में सामान्यीकरण करना अधिक कठिन है। उस समय कई 'प्रमुख' धर्म जैसे ग्रीक प्रारूप में सर्वेश्वरवाद (विविध देवों की पूजा, 'सभी' देवी और देवताओं का पूजन, यहूदीवाद, मेनीकीइज़्म, 'रहस्यवादी धर्म' (जिसमें मिथराः देखें **भाग 3.4**), और संभवतः सौ से भी ज्यादा गौण पंथ और उपासना विधियाँ प्रचलित थीं। और फिर ईसाई धर्म था जो पहली शताब्दी सी ई के दौरान एक रोमन जुडेया पंथ के रूप में उभरा – जिसका निर्माण आंशिक रूप से सदियों पुरानी यहुदी आस्था परम्परा और कुछ इसके विरूद्ध विद्रोह के द्वारा हुआ। चौथी शताब्दी सी ई में ईसाई धर्म को पूरे रोमन साम्राज्य का राजकीय धर्म बना दिया गया। रोमन ईसाई नेताओं ने पोप (**लैटिन** भाषा से लिया गया शब्द *पापा* : पिता) की पदवी को धारण किया, जिसमें पोप लियो प्रथम (पाचँवी शताब्दी सी ई) भी शामिल थे – पोप ईसाई उपासकों के विश्व-व्यापी समुदाय का नेतृत्व करने के इच्छुक थे, भले ही उस समय ईसाई धर्म की कई प्रकार की शाखाएँ एशिया और अफ्रीका में फैली हुई थीं और उनके नेता हमेशा ही रोम शहर के पोप के वर्चस्व को स्वीकार नहीं करते थे। एक तर्क-संगत अनुमान के अनुसार लगभग 400 सी ई तक *पूरे विश्व के आधे से अधिक ईसाई रोमन साम्राज्य की सीमाओं से परे* दूरस्थ ईरान (ईरानी सासानिद साम्राज्य[1] ने रोमन शासन को चुनौती दी जो अब सीरिया, जॉर्डन और टर्की हैं), अरब, आमेनिया, जार्जिया, मध्य एशिया, उत्तरी अफ्रीका, इथियोपिया और शायद भारत तक में भी थे। फिर भी यह महत्वपूर्ण है कि रोम के शहर में, लियो प्रथम के समय से 'पोप', ने एक सर्वोच्च पादरी (Pontiff; लैटिन में, *पोंटिफेक्स मैक्सिमसः* राज्य धर्म के मुख्य पादरी) की पदवी धारण की, जो कि ईसाई धर्म के उद्भव से पहले ही, सदियों से रोमन शासकों द्वारा धारण की गई थी।

यहूदीवादः यहूदियों का एकेश्वरवादी धर्म जो कम से कम 15 बी सी ई से चलता चला आ रहा है। अपने मूल रूप में, यहूदीवाद मानता है कि ईश्वर (यहवेह) ने मूसा को, जो कि गुलाम बनाए हुए इजरायलियों के प्रमुख थे, अपने नियमों और ईश्वरीय आदेशों का लिखित और मौखिक रूपों में खुलासा किया जिनका समावेश *तोराह,* हिब्रू बाइबिल (या ईसाईयों की ओल्ड टेस्टामेंट) के मुख्य भाग में है। मजबूत ईश्वरीय आज्ञायें और निषेधाज्ञायें यहूदीवाद की विशेषता थी; व्यवहार की यह कठोरता ईसाई धर्म और उसके बाद इस्लाम में भी आ गई।

मैनीकीइज़्मः ईरान में उत्पन्न एक धार्मिक आन्दोलन, जिसका नाम मानी (216-274 सी ई) के नाम पर रखा गया, जिनके दर्शन ने अच्छे और बुरे के बीच शाश्वत संघर्ष पर ज़ोर दिया। मानी मूल रूप

से एक यहूदी-ईसाई संप्रदाय से संबंध रखते थे, जिन्हें एल्केसाइट्स कहा जाता था। एक किशोर के रूप में दर्शन का अध्ययन करने के पश्चात्, मानी ने अपने माता-पिता के संप्रदाय को छोड़ दिया और अफगानिस्तान की यात्रा की, जहाँ उनका साक्षात्कार हिन्दू और बौद्ध शिक्षाओं से हुआ। चूँकि मानी के उपदेश को ईरान के बहुसंख्यक, जरतुष्ट धर्म के लिए खतरे के रूप में देखा गया, इसलिए उन्हें कैद कर लिया गया, और उसी दौरान उनकी मृत्यु हो गयी। विद्वान अल-बिरूनी ने मानी के जीवन के कुछ पहलुओं पर रोशनी डाली है। मैनीकीइज़्म ने न केवल सासानिद (ईरानी) शासित क्षेत्रों में बल्कि (अभी भी) रोमन एशिया माइनर, मिश्र और उत्तरी अफ्रीका में ईसाइयों को भी प्रभावित किया।

इतावली प्रायद्वीप के लोगों के लिए, जो रोमनों, एट्रूस्कनों और लातिन के पूर्वजों के रूप में जाने जाते हैं, विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा अभिजात्य वर्ग के साथ-साथ आम लोगों के जीवन का भी अभिन्न अंग थी। रोम मध्य इटली में कबीलाई समाजों के सहमिलन क्षेत्र के रूप में उभरा और उसने अनेक सामाजिक और सांस्कृतिक (धार्मिक सहित) व्यवहारों को समाहित किया। रोमन ईसाई धर्म के निर्माण से बहुत पहले और नज़ारत (Nazarath) के यीशु के जन्म और उनके तथाकथित पुनर्जीवन (Resurrection) की तीन शताब्दियों के बाद तक रोम में 'मूल' या देशज रोमन देवताओं की पूजा की जा रही थी। रोम (राजधानी शहर; रोमन कवियों टिबुलस, ओविड और लिवी द्वारा इस 'अनादि नगर' का यशगान किया गया है) और उसके आसपास के लोग पूर्वजों की पूजा के साथ-साथ अपनी जनजातियों और राज्य के देवताओं की भी पूजा करते थे। परिवार के पूर्वजों को पारिवारिक अनुष्ठानों और समारोहों में याद किया जाता था। यह रोमन *पौराणिक* धर्म था, जिसका स्वरूप चीन और दुनिया भर के अन्य समाजों में प्रचलित धर्मों जैसा था। प्रारंभिक रोमन पूजा में देवी-देवताओं की उपासना के अन्य रूप जैसे सूर्य और चन्द्रमा, प्रजनन और विजय के देवी-देवताओं की आराधना शामिल थी, जैसा कि प्राचीन यूरोप, निकट पूर्व और अफ्रीका के अन्य समाजों में प्रचलित था। प्रारंभिक रोमन राज्य ने मंदिरों और पवित्र स्थलों को संरक्षण प्रदान किया, और लोगों को प्रमुख रोमन अधिकारियों के इष्ट पसंदीदा देवताओं की पूजा करने के लिए बाध्य किया। 'मूल' रोमन देवताओं को सम्मानित करने वाले मंदिर जैसे कि जानूस (आदि और अंत के देवता) और वेस्ता (परिवार या गृह-अग्नि देवी), रोम के महत्वपूर्ण स्थलों और भवनों जैसे रोम के फोरम और केपिटोलाइन हिल में रोम के राजनैतिक और नागरिक प्राधिकरणों के निकट थे।

एक देवता जिसे मुख्य रूप से पूजा जाता था (यद्यपि वह सभी रोमनों के लिए मुख्य नहीं थे) वह ज्यूपिटर था। इस 'देवताओं के राजा' को रोमनों ने हेलनेस् ('यूनानी') की पुरानी सभ्यता से अपनाया था, जो ज़ियस की पूजा करते थे। इस प्रकार, रोमन देवता ज्यूपिटर ग्रीक देवता का ही नवीन नामकरण था। लगभग 400 बी सी ई तक रोमन लोगों ने ग्रीक **देव-समूह** (देवताओं के संग्रह) से कई देवताओं को अपनाया अथवा आयात किया था, ठीक वैसा ही जैसा कि शिक्षित रोमन लोगों से अपेक्षा रहती थी कि वे ग्रीक भाषा द्वारा ग्रीक कविता, नाटक, दर्शन को सीखें। ज़ियस की पत्नी हेरा को रोमन धर्म में जूनो और ज़ियस और हेरा की संतानों – हरमेस्, एरिस, एथेना और एफ्रोडाइट – को रोमन धार्मिक प्रारूप में मरकरी (Mercury), मार्स (Mars), मिनरवा (Minerva) और वीनस (Venus) के रूप में समाहित किया गया। इसी प्रकार क्रोनोस, ग्रीक 'समय-काल के परम पिता' और आद्य-देवता, जो ज़ियस और हेरा के पिता थे, उन्होंने रोमन देवतागण में सैटर्न (Saturn) के रूप में स्थान पाया। क्रोनोस के बेटे और ज़ियस और पोसाइडन (रोमन नेप्च्यून) के भाई हेडिस ने रोमन धर्म में प्लूटो के रूप में प्रवेश किया। चौथी शताब्दी सी ई तक रोमन आधिकारिक व्यवहार

---

[1] सासानिद साम्राज्यः 224 से 651 सी ई तक राजधानी इस्ताखर (पर्सीपोलिस) के साथ, वर्तमान दक्षिण ईरान में सासान राजघराने द्वारा शासित। सासानिद साम्राज्य ईरानियों द्वारा परम्परागत रूप से नियंत्रित और इस्लाम के उदय से पहले का अंतिम ईरानी साम्राज्य था, जिसमें विश्व का एक बड़ा भाग शामिल था। विस्तृत जानकारी के लिए **बी एच आई सी-102** की **इकाई 13** देखें।

में मूल 'ग्रीक' देवताओं के साथ परिवार व राज्य के 'मूल' रोमन देवताओं को पूजने की स्वीकृति भी थी। ज्यूपिटर और सैटर्न के मंदिर विशेष रूप से महत्वपूर्ण थे। उन्हें राज्य की तरफ से आर्थिक सहायता दी जाती थी, और वे रोम में फोरम के निकट स्थित थे। रोमन लोगों ने कई प्रजनन पंथों और 'रहस्यों' का समर्थन किया जो भू-मध्यसागर और एशिया के आसपास विभिन्न स्थानों में उत्पन्न हुए थे (देखें **भाग 3.4**)।

संक्षेप में, हालांकि रोमन जगत में धर्मों के विभिन्न रूप प्रचलन में थे, परन्तु उनका राजनीतिक और सार्वजनिक व्यवस्था के मसलों से अलग कोई सामाजिक अर्थ नहीं था। पाँचवी शताब्दी सी ई के दौरान रोमन राज्य की एक उग्र नई नीति सामने आई जिसमें चर्च के ईसाई नेताओं (रोमन कैथोलिक) द्वारा मान्य पद्धतियों के अलावा अन्य सभी पूजा पद्धतियों को निषेध कर दिया गया। रोमन साम्राज्य के अन्तिम चरण में राज्य ने ईसाइयों, जो उनके लिए वास्तविक उचित प्रजा थे, और रोमन कानूनों की संरक्षता का आनन्द ले रहे थे, तथा **पेगन (बुतपरस्त)** और गैर-ईसाइयों के बीच, जिनकी स्वतंत्रताएँ सीमित थीं, विभेद किया।

3.2 धर्म और रोमन जगत : एक अधिग्रहण आधारित सभ्यता

हम रोमन जगत में ईसाई धर्म के उदय को दो चीजों की अधिक बारीकी से जाँच करके समझ सकते हैं। प्रथम, रोमन संस्कृति के वे पहलू और इसकी विरासत जो इसने अन्य संस्कृतियों से अधिग्रहण की और दूसरा, वह साधन जिनके द्वारा 'रोम' ने उन लाखों लोगों को प्रभावित कर अपनी छाप छोड़ी, जो रोमन केन्द्रीय स्थल से परे थे परन्तु जिन पर इसने शासन किया। लगभग 400 बी सी ई से रोमन समाज पर यूनानी या हेलेनिक प्रभाव का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है।

चित्र 3.1: जानूस की शीर्ष प्रतिमा, वेटिकन म्यूज़ियम, रोम
साभार: Loudon Dodd
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Janus1.JPG

चित्र 3.2: वेस्टा, द विरजिन रोमन पौराणिक गाथाओं में अग्नि, गृह और परिवार की देवी
साभार: Guillaume Rouille (PromptuariiI conumInsigniorum)
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Vesta-Roma.jpg

जैसा कि अपेक्षित था कि जब रोमन शासन का विस्तार गॉल और स्पेन, आल्पस के उत्तर में, डेन्यूब नदी की घाटियों के साथ, निकट पूर्व और उत्तरी अफ्रीका तक हुआ तो इन रोमन प्रांतों के प्रमुख शहर रोमन पंथ के आधिकारिक या समर्थित मन्दिरों से भर गए। रोमन पंथ 'स्थानीय' देवताओं के मंदिरों के साथ मौजूद थे, जिन्हें रोमन लोगों ने स्थानीय आबादी की स्वीकृति प्राप्त करने के लिए संरक्षण प्रदान किया था। उदाहरण के लिए, प्राचीन यहुदी देवता बाल (Baal) को रोमनों द्वारा ज्यूपिटर हेलियोपोलिटेनस के रूप में मान्यता प्रदान की गई थी। और बाल मन्दिरों (उदाहरण के लिए बालबेक, लेबनान में) का रोमनों द्वारा निर्माण या

पुनर्निर्माण किया गया। दोनों प्रकार के भद्र पुरुष – रोमन सीनेट में बैठने वाले पेट्रिशियन और राजनैतिक ओहदे की महत्वाकांक्षा रखने वाले प्लेबियन (गैर-कुलीन) – महत्वपूर्ण मंदिरों के प्रबंधन की चाह रखते थे। चाहे वे मंदिर रोम के शहर में या फिर रोमन सत्ता के अन्य केन्द्रों में रहे हों।

रोमन इतिहास में कई बार, उनके सर्वोच्च लीडरों को, जो कि राजकीय पंथ के मुख्य पुजारी भी थे, उनकी मृत्यु के पश्चात् देवता घोषित किया जाता था। उदाहरण के लिए, गेयस जुलियस सीजर (100-44 बी सी ई) ने स्वयं की एक प्रतिमा को क्वीरीनस, प्राचीन रोमन युद्ध की देवी, के मन्दिर में स्थापित करवाया था। जुलियस सीजर का स्व-देवत्वारोपण असामान्य और आपत्तिजनक था, हालांकि मृत्यु के बाद शासकों को शाही पंथ में शामिल करना वहाँ एक सामान्य बात थी। कई प्राचीन समाजों जैसे कि असीरियन, ईरानी, और मिश्रवासियों में सर्वोच्च शासकों को देवताओं या अर्ध-देवता के रूप में देखा जाता था। पौराणिक नायकों को देवता के रूप में पहचानने और नये पंथ स्थापित करने में रोमन भी अभ्यस्थ थे, जिनमें से कुछ अतिशीघ्र भुला भी दिए जाते थे।

चित्र 3.3: जुलियस सीज़र, तुईलेरीस के बागान में
साभार: जेस्टरो / स्सोलबर्गी
स्त्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Julius_Caesar_Coustou_Louvre.png

चित्र 3.4: कान्सटेनटाइन प्रथम की प्रतिमा, केपिटोलाइन म्यूजियम, रोम
साभार: जीन-क्रिस्टोफ बेनोइस्ट
स्त्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Rome-Capitole-StatueConstantin.jpg

मृतक-उपासना की प्रथा, चाहे वो परिवार के सदस्य हों, राज्य के शासकगण हों, या फिर पौराणिक संस्थापक, पूरे इतिहास में कई समाजों में आम रही हैं। यह धर्म, पूजा और पवित्रता की परिभाषाओं पर प्रश्न चिन्ह लगाती हैं, जिसके बारे में विभिन्न विद्वानों की भिन्न राय रही है। क्या मनुष्यों की आराधना धर्म का हिस्सा है या उससे अलग है? क्या मृतक 'दिव्य' बन सकते हैं? क्या 'पवित्र' तभी माना जा सकता है, जब वह स्पष्ट रूप से 'लौकिक', रोजमर्रा के जीवन से अलग हो? लैटिन शब्द '*रिलीजियो*' (*religio*) क्रिया रूप है जिसका अर्थ 'जोड़ना' या 'बान्धना' है, यह दर्शाता है कि रोमन समाज में धर्म को एक दायित्व या कर्त्तव्य के रूप में समझा गया। एक पंथ (*cultus*) के पास देख-रेख करने वाले या अनुयायी होने चाहिए: 'Cult' और 'cultivation' लैटिन में एक ही मूल के शब्द हैं। कुछ रोमन धार्मिक व्यवहार संस्थागत ढांचे में संगठित हुये, लेकिन अन्य नहीं। सभी रोमन धर्मों में अधिकारी

(पुजारी या पुजारिन) या औपचारिक धर्म-शास्त्र आवश्यक नहीं थे। पंथों के व्यवहार स्वैच्छिक या वैधानिक हो सकते थे। इस प्रकार ज्युपिटर के मन्दिर के पवित्र स्थान में प्रवेश करना, मूर्तियों और सम्मानित वस्तुओं के साथ रास्तों पर जुलूस निकालना, प्रत्येक सप्ताह के किसी एक दिन को बिना श्रम के रूप में देखना (जैसे यहुदी शैबात या **सबाथ**[2]), पूर्वज की प्रतिमा के सामने भोजन या पेय रखना, समूह में इकट्ठे होकर धर्म-गुरू द्वारा पढ़े गये पवित्र धर्म-ग्रंथ के व्याख्यानों को सुनना और समूह में अपने सह-धर्मी साथियों के साथ दीक्षित होने के लिए समारोह में भाग लेना, ये सभी रोमन जगत में धार्मिक व्यवहार की अभिव्यक्तियाँ थीं।

विद्वानों के अनुसार प्राचीन रोमन जगत का अध्ययन करने में अन्य कालों और स्थानों की तरह बहुत सारे मानवीय व्यवहारों को धार्मिक प्रथाओं के रूप में पहचानने का खतरा है। उदाहरण के लिए, जादू और ज्योतिष जो मूल रोमन लोगों में और जिनको उन्होंने आत्मसात किया उनमें प्रचलित थे, उनको किस श्रेणी में रखा जाए? अनेक रोमन लोग इन पुरातन प्रथाओं को धर्म से अलग नहीं मानते थे। धर्म पर शोध करने वाले समाजशास्त्री एमिल दुर्खाइम (1858-1917) द्वारा प्रस्तुत किये गये अवलोकन को हम प्रोत्साहन अथवा चेतावनी के रूप में देख सकते हैं कि धर्म मूल रूप से प्रत्येक समाज द्वारा अपनी स्वयं की पूजा है। फिर भी रोमन धर्म को समझने के लिए उनकी पूजा पद्धति और अनुष्ठानों को ध्यान में रखने के साथ-साथ यह जानना भी महत्वपूर्ण है कि अनुष्ठान विशेषज्ञों या गुरुओं ने कैसे इनकी अनुमति दी, बढ़ावा दिया या इन्हें लागू किया, और राज्य के अधिकारीगण विभिन्न समुदायों के उपासकों (विभिन्न पंथों) के प्रति कैसी भावना रखते थे। जैसा कि हम देखेंगे कि, पहली चार शताब्दियों सी ई में रोमन अधिकारियों ने ईसा मसीह के पंथ को और 'ईसाई' धर्म के प्रसार को एक समस्या के रूप में देखा। जैसा कि इतिहासकार मार्विन पेरी समीक्षा करते हैं:

> अनेक रोमन लोगों के लिए ईसाई सामाजिक व्यवस्था के शत्रु थेः ऐसे अजीब लोग जो राज्य - देवताओं को स्वीकार नहीं करते, रोमन त्यौहारों को नहीं मनाते, पेशेवर लड़ाई (ग्लेडिएटर प्रतिस्पर्धाओं) को हेय दृष्टि से देखते थे, सार्वजनिक स्नानागार से दूर रहते थे, अहिंसा का गुणगान करते थे, मृतक सम्राटों को देवता का सम्मान देने से इन्कार करते थे। और सूली पर चढ़ाये गए एक 'अपराधी' की पूजा करते थे। रोमन अन्ततः ईसाइयों को एक ऐसे सार्वभौमिक बलि के बकरे के रूप में देखते थे, जो साम्राज्य पर अकाल, प्लेग और सैन्य पराजय जैसी विपदाओं के बोझ के लिए उत्तरदायी थे।
>
> **पेरी, 2012: 111.**

यह विचारणीय है कि रोमन नागरिक (राजनीतिक) और धार्मिक अधिकारियों ने आमतौर पर सहयोग किया था, इसलिए नागरिक कानून से ऊपर या परे की गतिविधि के एक क्षेत्र को परिभाषित करते हुए ईसाइयों द्वारा अधिकारियों और कानून की अवहेलना करने के आधार पर ईसाइयों को शाब्दिक अर्थ में एक विद्रोही के रूप में चिह्नित किया जा सकता था। धार्मिक कर्त्तव्यों और नागरिक शक्ति और कानून के बीच संभावित और वास्तविक संघर्ष एक ऐसा विषय है जो 476 सी ई में रोमन राज्य-व्यवस्था के अधिकारिक पतन से पहले और उसके बाद के 'यूरोपीय' इतिहास में भी चलता आया है। हालांकि ऐसे बुनियादी मुद्दे किसी भी तरह से सिर्फ यूरोप में ही अद्वितीय नहीं हैं।

पूर्वगामी भागों में सुझाव दिया गया है कि रोमन जगत में धर्मों का विकास 'केन्द्रीय' रोमन समाज की परम्पराओं द्वारा विदेशी प्रभावों को अवशोषित करके और रोमन राज्य द्वारा उन चुनौतियों के प्रति अनुकूल हो जाने से हुआ था। हालांकि रोमन साम्राज्य के ज्यादातर निवासी नागरिकों से ज्यादा अधीनस्थ प्रजा-जन थे, रोमन नागरिकता सैन्य सेवा द्वारा

---

[2] यहूदी परम्परा में ईश्वर और मूसा की आज्ञा के अनुसार विश्राम और पूजा का अनिवार्य दिन (बुक ऑफ एग्ज़ोडस; Book of Exodus) 31: 13-17, में उल्लेखित है)। ईसाइयों ने इस यहूदी व्यवहार को अपनाया, अधिकांश ईसाई सम्प्रदायों ने सबाथ के पालन का दिन शनिवार से रविवार को स्थानांतरित कर दिया।

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पुष्टिकृत या अर्जित की जा सकती थी। रोमन सेनाओं में सेवा करके, अनगिनत अफ्रीकी, सीरियाई, यूनानी, स्लाव, स्पेनवासी, गॉल (फ्रांसीसि), जर्मनिक और ब्रिटेन के लोगों ने रोमन नागरिकता के कानूनी और राजनीतिक लाभ प्राप्त किए। रोमन साम्राज्य के लिए अपनी सीमाओं पर निरंतर प्रतिरोध का सामना करने से बेहतर बर्बर लोगों को आत्मसात करना था, चाहे वो विजय के माध्यम से हो अथवा गठबंधन द्वारा। यह स्पष्ट है कि रोमन साम्राज्य की सफलता कुछ हद तक *सांस्कृतिक सामंजस्य* की वजह से भी थी – जिस तरह से रोम ने पराजित और अधीनस्थ आबादी की मान्यताओं और व्यवहारों को अपनाया था। यह उनके साथ आपसी समझौतों की एक जटिल प्रक्रिया थी, और यह आवश्यक नहीं कि यह एक पूर्ण निर्धारित रणनीति का परिणाम रहा हो। 'विदेशी' धार्मिक प्रथाओं और देवी-देवताओं को अपनाकर रोमन अधिवासी उस आबादी के साथ घुल-मिल सकते थे जिस पर वो अपना शासन स्थापित करते थे और स्थानीय पंथों के संरक्षक के रूप में प्रतिष्ठा और सम्मान अर्जित कर सकते थे। स्थानीय आबादी, रोमन धार्मिक प्रथाओं को स्वीकार करते हुए और रोमन पंथों को संरक्षण देते हुए रोमनकृत हो गई, जैसा कि उन्होंने रोमन सभ्यता और उसके अन्य कानूनों को स्वीकार किया था।

रोमन जगत के हेलेनीकरण का उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। ग्रीक देवताओं को अपनाने के साथ-साथ, रोमनों को ग्रीक *दार्शनिकों* (*philosophia*) ने विस्मित किया, जिसमें भौतिक पदार्थों के साथ जो (अदृश्य रूप से) पदार्थ के पीछे या परे था, मीमांसा, तत्व मीमांसा और सत्ता मीमांसा (अस्तित्व का प्रश्न) का चिन्तन शामिल था। ईसा से छः या सात शताब्दियों पहले ग्रीक दार्शनिकों ने शरीर और आत्मा के बीच संबंध और शरीर की मृत्यु से परे आत्मा की अमरता की निरंतरता के बारे में अनुमान लगाया था और विचार व्यक्त किए थे। ऑगस्टीन (354-430 सी ई) की *कन्फैशन्स* (*confessions*; आत्मकथा) और उनकी कृति '*द सिटी ऑफ गॉड* हमें यह समझने में मदद करते हैं कि शिक्षित रोमन जिन्होंने ईसाई धर्म स्वीकार किया था, ने पूर्ववर्ती परम्परागत ज्ञान और चिन्तन को कैसे देखा। ऑगस्टीन एक अफ्रीकी रोमन नागरिक था जो हिप्पो का ईसाई बिशप बन गया और एक सन्त के रूप में घोषित हुआ। ऑगस्टीन और अन्य 'चर्च फादरों'[3] ने अपने ईसाई धर्म को तर्क संगत और स्पष्ट करने के लिए ग्रीक दर्शन का उपयोग करने की कोशिश की। ऑगस्टीन के निष्कर्षों के अनुसार यहूदी और यूनानी शिक्षा ईसाइयों के काम आ सकती थीं: गैर-ईसाई मूर्तिपूजकों के ज्ञान को पूरी तरह से अस्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। नवप्लेटोवाद (यूनानी दार्शनिक प्लेटो, 428/427-348/347 सी ई) का उल्लेख तीसरी से छठी शताब्दी सी ई में रोमन जगत के अलेक्जेंड्रिया, एथेंस और कुछ अन्य बौद्धिक केन्द्रों में जिनमें ईसाई समुदाय थे, विकसित हो रहे विचारों की एक प्रवृत्ति थी। नवप्लेटोवादियों ने एक अज्ञेय स्त्रोत के विचार को प्रोत्साहन दिया, 'अनन्त एक' ज्ञानातीत ऐसा स्त्रोत जो सभी यथार्थ के प्रारंभ और अंत में और अवलोकन की जाने योग्य वास्तविकता से परे था। कई ईसाई नवप्लेटोवादियों के साथ सहानुभूति रखने वालों ने इस 'अनन्त एक' को ईश्वर तत्व के समकक्ष रखा। छठी और सातवीं शताब्दी सी ई में ईसाई बुद्धिजीवी प्रोकोपियस (एक इतिहासकार), बूथियस और जॉन फिलोपोनस, अरस्तु और अन्य प्राचीन ग्रीक दार्शनिकों के विचारों का उपयोग **बिशपों** और अन्य चर्च अधिकारियों के साथ विवादों में कर रहे थे, और मूर्तिपूजकों के ज्ञान का इस प्रकार का उपयोग निषिद्ध या दण्डनीय नहीं था[4]। बाद में मध्य युग में, जब धर्मशास्त्री थॉमस

---

[3] या धर्म दूतीय फादर्स (ईसा मसीह के प्रथम शिष्यों के उत्तराधिकारी के रूप में): लगभग 100-700 सी ई में चर्च के प्रशासक, ईसाई शिक्षक और धर्मशास्त्री, जिन्हें संस्थागत ईसाई धर्म के संस्थापक के रूप में देखा जाता है। उनके महत्व का इस तथ्य से संकेत मिलता है कि चर्च फादर को रोमन कैथोलिक और पूर्वी रूढ़िवादी चर्चों द्वारा संत घोषित किया गया था।

[4] बिशप शब्द यूनानी शब्द *एपिस्कोपोस* (episkopos) जिसका अर्थ अभिभावक होता है, से निकला है। इकाई के अंत में शब्दावली देखें।

एक्विनॉस (1224 या 1225-1274 सी ई) ने दर्शन को धर्म के हाथों की कठपुतली बताया, इस अर्थ में वह ईसाईयों के ऊपर मूर्तिपूजक यूनानियों के आभार को स्वीकार कर रहे थे।

3.3 ईसा पंथ और रोमन शासन को खतराः उत्पीड़न से प्रोत्साहन तक

सभी ईसाई चर्चों या संप्रदायों के ईसाई अधिकारियों के अनुसार, नज़ारत के यीशु के माता-पिता (जोसफ और मेरी) का सामान्य परिवार में पालन-पोषण हुआ था। जब उन्हें दिव्य रहस्योद्‌घाटन हुआ, उन्होंने समस्त यहूदी क्षेत्र में उपदेश दिये, जबकि कुछ अन्य यहूदियों के द्वारा उन्हें नकली मसीहा करार दिया गया, और रोमन अधिकारियों ने उन्हें सार्वजनिक व्यवस्था के लिए खतरा मानकर जेरूसलम में प्राणदंड दिया। हम ईसा मसीह की कहानी पर विश्वास करें या ना करें, हम ईसाई बाइबिल न्यू टेस्टामेन्ट के माध्यम से जो पहले ग्रीक में रचा गया था, परन्तु तत्पश्चात् लेटिन, सीरिएक, आर्मेनियन और अन्य भाषाओं में लिखी गई – ईसाई धर्म के उदय के बारे में अन्तर्दृष्टि प्राप्त कर सकते हैं। और इसी प्रकार हम चर्च फादरों के बारे में और उनके द्वारा संकलित कार्यों द्वारा जैसे, टर्टूलियन, साईपेरियन, ओरिगेन, ऑगस्टीन, जेरोम, एम्बरोस, बेसिल, एथनेसियस, एंथनी, जॉन क्रिसोस्तम, अफराहट और एंटिओक के आइज़ैक जैसे व्यक्तियों की कृतियों से इस विषय के बारे में जान सकते हैं। उस समय की अनुकरणीय अग्रणी ईसाई महिलाओं द्वारा और उनके बारे में वर्णित ग्रन्थ भी हमें प्राप्त होते हैं। अन्य उपयोगी स्त्रोत प्रारंभिक सन्तों, पवित्र पुरुषों और स्त्रियों के जीवन की कहानियाँ हैं, जो अपने कार्यों या अवज्ञा के लिए प्रशंसनीय हैं।

ईसाई संत अपने धर्म पर मिटने वाले हुतात्मा (*मार्टिस* = ग्रीक में 'गवाह') थे। उनके बारे में कहानियों ने ईसाई धर्म के व्यवहार की सीख प्रदान की और इसकी आत्म परिभाषा को आकार दिया। वास्तव में संतों की इन गाथाओं ने ईसाई अस्मिता को स्वरूप प्रदान किया। जैसा कि इनसे आशा की जाती है यह स्त्रोत ईसाइयों का पक्ष लेते हैं और बुतपरस्तों या विधर्मियों की आलोचना करते हैं। वे मानवता की मुक्ति के लिए हुतात्माओं की साधुता और कष्ट भोगने की प्रक्रिया को ईश्वरीय योजना के रूप में दर्शाते हैं (पाचँवी शताब्दी सी ई तक आते-आते लैटिन शब्द *पेगन* का मतलब गैर-ईसाई से था)। इस समय के धर्मनिरपेक्ष या गैर-ईसाई स्त्रोत टकराव और पीड़ा के अन्य कारणों को प्रकट करते हैंः ईसाइयों ने रोमन रीति-रिवाजों और सामाजिक मानदंडों – जैसे सम्राटों का मंगलगान करने वाले शाही पंथों – को अस्वीकार किया और कानून का विरोध किया।

बाइबिल के यीशु मसीह (नज़ारत के) के जीवन, मृत्यु और पुनः जी उठने के वर्णन और साथ ही साथ गैर-ईसाई रोमन इतिहासकार जैसे टाइटस फ्लेवियस जोसेफस (37-100 सी ई)[5] के वृत्तांतों से ईसा मसीह पंथ को रोमन राज्य द्वारा संदिग्ध मानने का एक स्पष्ट कारण प्रकट होता हैः इसके अनुसार कुछ यहूदी जो प्राचीन यहूदी राज्य (जुडिया या इजराइल) के रोमन अधिग्रहण से नाराज़ थे, उन्होंने यीशु का मसीहा के रूप में अभिवादन कर 'अभिषेक' किया और यह माना कि वह यहूदियों और शायद अन्य लोगों पर सार्वभौमिक शांति के युग में शासन करेगा। न्यू टेस्टामेन्ट अपने आप में यह स्पष्ट नहीं करता, कि यीशु वास्तव में राजनीतिक शासन के मामलें में अपनी यहूदी मातृभूमि के लिए क्या चाहते थे। यहूदी आजादी के लिए हुतात्मा यीशु मसीहा के रूप में मृत्यु दंड पाये यीशु की अपूर्व कथा ने जुडिया और पड़ोसी क्षेत्र में जो रोमन नियंत्रण में थे, उनके लिए चुनौतियाँ प्रस्तुत की। रोमन

[5] इस विषय में जोसेफस की मुख्य कृतियाँ हैंः *वर्क्स ऑफ जोसेफस,* कम्पलीट एन्ड अनएब्रिज़्ड़ न्यू अपडेटेड एडिशन में सम्मिलित *द जयुइश वार एन्ड एन्टीक्यूटीस ऑफ द ज्यूज़,* विलियम व्हिस्टन द्वारा अनुवादित (पीबॉडी, मेसाचुसेट्सः एम. ए. हेन्ड्रिक्सन पब्लिशर्स, 1987)।

अधिकारियों ने उन्हें अपमानजनक ढंग से सामान्य चोरों के साथ सूली पर चढ़ाया, और नकली और ढ़ोंगी 'यहूदियों के राजा' के रूप में उनका उपहास उड़ाया। इसके बहुत कम प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि उनकी शिक्षाओं को वहन करने वाले संदेशवाहक – प्रचारक, धर्मदूत और चर्च के संस्थापक – पहली शताब्दी सी ई के उतरार्द्ध में यहूदी राजनीतिक और सैन्य उपद्रव में प्रमुख भूमिका निभा रहे थे। रोमन यहूदी ईसा मसीह के सर्वप्रथम अनुयाईयों में से थे, परन्तु बहुत से यहूदियों ने ईसा मसीह को एक नकली मसीहा के तौर पर देखा। हालांकि यह स्पष्ट है कि यीशु की कहानी ने पूरे साम्राज्य में गैर-यहूदियों को आकर्षित किया। ईसाई बाइबिल की मुख्य पुस्तकों में धर्मदूतों द्वारा दिया गया इस तरह का विवरण शामिल था जिसमें एक मनुष्य, जिसके पास एक मानवीय माँ थी, और जो मनुष्य और ईश्वर दोनों का पुत्र था, जो एक धार्मिक शिक्षक था, जिन्हें मरते हुए देखा गया और पुनर्जीवित होते हुए भी देखा गया और स्वर्ग में रहने वाले अपने पिता की ओर जाते हुए देखा गया। जूडावाद (यहूदी) और उभरते हुई ईसाई धर्म दोनों ने मूर्तिपूजा और किसी भी प्रकार के बहुदेववाद के बारे में कठोरता अपनाई। उभरते ईसाई धर्म और स्थापित यहूदी धर्म के बीच कई विभिन्नताओं के बावजूद, दोनों ने केवल एक सर्वशक्तिमान ईश्वर को मान्यता दी – मूसा और इब्राहीम के साथ-साथ ईसा मसीह – और लगभग सभी पंथों के ईसाईयों ने समय के साथ यहूदियों के 'ओल्ड टेस्टामेन्ट' को अपने धर्म की नींव के रूप में स्वीकार किया। सदियों से ईसाईयों और यहूदियों के बीच कभी-कभी तनावपूर्ण और हिसंक सम्बन्ध सामान्य विचारों और विश्वासों के साझा भंडार की सहायता से सामान्य भी होते रहे।

तीसरी और चौथी शताब्दी सी ई के दौरान ईसाई समुदायों के विकास ने रोमन अधिकारियों को उन पर अधिक ध्यान देने, अन्य समुदायों के साथ उनके संबंधों और ईसाइयों के शासन के प्रति रवैये पर अधिक निगरानी रखने के लिए प्रेरित किया। सम्राट कॉन्सटेंटाइन I, जिन्होंने पूर्वी भाग से साम्राज्य पर शासन किया था, ने 313 सी ई में ईसाइयों पर पहले के शासकों द्वारा लगाए गए कानूनी प्रतिबन्धों और उत्पीड़न को हटा दिया। कॉन्सटेंटाइन ने अपने जीवन के अन्तिम काल में ही ईसाई धर्म को अपनाया और उन्होंने ईसाई धर्म को साम्राज्य का आधिकारिक धर्म *नहीं* बनाया। बल्कि उन्होंने रोमन क्षेत्रों में ईसाई धर्म को अन्य धार्मिक विश्वासों और पंथों के साथ सह-अस्तित्व में स्वीकृत किया। कॉन्सटेंटाइन ने ईसाई धर्म को अधिक व्यवस्थित करने के लिए चर्च-समितियों को भी प्रायोजित करवाया, जैसे 325 सी ई में **नाइसिया** (एशिया माइनर) में ईसाई समुदायों में फैल गए ईसाई धर्मशास्त्र और चर्च प्रशासन के विवादों को सुलझाने के लिए एक समिति का आयोजन किया गया। चूंकि कॉन्सटेंटाइन ने अपने आप को ईसाई घोषित किये बगैर ऐसा किया था तो हम यह मान सकते हैं कि उनका मुख्य उद्देश्य 'सार्वजनिक व्यवस्था' को बनाए रखना रहा होगा जो उनका शाही कर्त्तव्य था। सम्राट थियोडोसियस ने 380 सी ई में ईसाई धर्म को रोमन साम्राज्य का राज्य धर्म बनाया और पाँचवी शताब्दी के मध्य तक गैर-ईसाइयों के रोमन साम्राज्य के प्रशासन में शामिल होने पर प्रतिबन्ध लगा दिया। कई इतिहासकारों ने 300 सी ई के अंत और 400 सी ई के प्रारंभ में रोमन और पूर्वी ईसाइयों और अन्य विश्वासों और पंथों का अनुसरण करने वाले लोगों, जिसमें बहुत से रोमन प्रजा के लोग शामिल थे जो ईसा मसीह को ईश्वर के पुत्र के रूप में और *अन्य देवताओं को भी पूजते थे,* के बीच बढ़ती असहिष्णुता के प्रमाणों का हवाला दिया है। लगभग 350 सी ई से पहले जाहिर तौर पर कई अंशकालिक ईसाई भी थे। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि उस समय से पहले के कुछ रोमन या शासक या आम लोग, किसी व्यक्ति के एक से अधिक पंथ में भाग लेने को नैतिक या राजनीतिक समस्या के रूप में नहीं मानते थे, जब तक कि वे लोग नागरिक अधिकारियों और कानून का सम्मान करते थे।

चित्र 3.5: नाइसिया की समिति, 325 सी ई
साभार: फ्रेस्को इन केपेला सिसटीना, वेटिकन
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Nicea.jpg

बोध प्रश्न-1

1. ईसाई धर्म के प्रभुत्व से पहले रोमन जगत के कुछ धार्मिक संप्रदायों या पंथों का नाम बताइये और उनके समर्पित दर्शन या विचारों का संक्षेप में वर्णन कीजिये।

....

....

....

....

....

2. रोमन जगत को 'अधिग्रहण की सभ्यता' क्यों कहा गया था? व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

3. हेलनीकरण और रोमन जगत पर यूनानी दार्शनिकों (*philosophia*) के प्रभाव के कुछ उदाहरणों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

4) रोमन जगत के कुछ लोगों ने प्रारंभिक ईसाई धर्म को जूडावाद (Judaism) धर्म के एक सम्प्रदाय के रूप में क्यों समझा?

....

....

....

....

....

3.4 'रहस्यवादी धर्म' और ईसाई धर्म का उदय

रोमन ईसाई धर्म के उद्भव और इसके विशिष्ट रूपों को समझाने की कोशिश में, कुछ विद्वानों ने ईसाई पंथ और रहस्यवादी धर्मों के बीच विशेष संबंध पर जोर दिया है, जैसे कि एल्युसीनियन रहस्यवाद और मिथ्रावाद। ग्रीक शब्द *मिस्टीस (mystes)* का अर्थ था वह व्यक्ति जिसे गुप्त रहस्य बताए गए हो, विशेष रूप से एक पंथ की सदस्यता के लिए दीक्षित करना या विशेष अनुष्ठान करके सम्मिलित करना। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, कई पुराने पंथ थे – जैसे कि साइबेल, महान् मातृ देवी की पूजा, जिसने पूर्व की ओर से रोमन साम्राज्य में प्रवेश किया था। इस पंथ में प्रजनन क्षमता और बहुलता से अच्छी फसल सुनिश्चित करने के लिए अनुष्ठानों में सामूहिक या लोकप्रिय अनुपालन या सहभागिता की जाती थी। कुछ प्राचीन प्रजनन पंथों में एक महान् नदी की बाढ़ या शीत ऋतु की संक्रांति के बाद सूर्य की 'वापसी' का स्वागत करने के लिए पशु बलि या अनुष्ठान शामिल थे। ग्रीक में पवित्र स्थलों पर एल्यूसीनियन रहस्यों का अभ्यास किया जाता था, और संभवतः 'ग्रीक सभ्यता' से पूर्व के समय में पर्सेफोन के हेड्स (पाताल-लोक) में अवतरण वर्ष के आठ महीनों तक मानव संसार में उसकी वापसी (वसंत और गर्मियों के मौसम) का उत्सव मनाया जाता था। यह पंथ सभी के लिए खुला नहीं था, यह सिर्फ उनके लिए खुला था जो *दीक्षित* थे और जिन्होंने विस्तृत सदस्यता समारोहों में भाग लिया था। इसी तरह मिथ्रावाद, जो पश्चिम एशिया में उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है, और जिसमें वैदिक संस्कृति के तत्व (वेद में मित्र का वर्णन प्रकाश के देवता के रूप में किया किया गया है) शामिल थे, सूर्य की आराधना से संबंधित था। और जिसमें बैलों का बलिदान शामिल था। दीक्षित लोग भूमिगत कक्षों या इमारतों में गुफा के आकार के कमरों (*मिथ्राई*) और पूजा करने वालों के सह भोज के लिए स्थापित बेंचों वाली जगह में एकत्र होते थे। मिथ्रावाद में आनुष्ठानिक शुद्धि के समारोह शामिल थे और इसमें पुनर्जन्म या मृत्यु के बाद जीवन का वादा किया जाता था। रोमन जगत में सैनिक विशेष रूप से इस पंथ के पक्षधर थे। सीरिया, फिलीस्तीन और आर्मीनिया से लेकर हंगरी, जर्मनी और इंग्लैंड तक रोमन काल के सैकड़ों मिथ्राई खंडहर मिलते हैं।

एल्यूसीनियन रहस्य ग्रीस में एल्युसिस पर आधारित डेमिटर और पर्सेफोन के पंथ से संबंधित हैं। इस पंथ में पर्सिफोन के उसकी माँ डेमिटर से अपहरण और फिर उनके पुनर्मिलन के रूप में मनाया जाता था। मिथ्रावाद का नामकरण ईरान और आर्मीनियाई लोगों के देवता मिथ्रा के नाम पर किया गया था, जिसका संभवतः साझा वैदिक आधार था (मित्र की *ऋग्वेद* में प्रंशसा की गई हैं)। मिथ्रवाद की कला/मूर्तिशास्त्र तीन परिदृश्यों में देवता को दर्शाती हैः एक चट्टान से एक बच्चे के रूप में प्रकट होते हुए; एक व्यस्क की वीर मुद्रा में सूर्य को देखते हुए सांड को मारते हुए; और पत्थर में तीर मारते हुए जिससे पानी फूटता है। क्योंकि कोई भी मिथ्राई धर्म पुस्तक या पवित्र ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है, मिथ्रावाद का धर्मशास्त्र कल्पित है। स्पष्ट रूप से पंथ में अमरता या रूपान्तरण का कुछ वादा प्रमुख था। पंथ के सदस्यों की सात अवस्थाएँ या पद-स्थितियां थीं, प्रत्येक अवस्था में अलग-अलग रहस्य प्रकट होते थे।

चित्र 3.6: मिथ्रा रिलीफ
साभार: फॉस्टीना ई.
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Mithras-Relief.jpg

रोम के शहर में सान क्लेमेन्ट और सान प्रिस्का के ईसाई बेसीलिकस (केथड्रेल) के नीचे *मिथ्राका* हैं। यह मिथ्रावाद के चार शताब्दियों के उनके अस्तित्व के दौरान तीन सौ साल तक ईसाई धर्म के साथ उनके सह-अस्तित्व के दौरान उनके आपसी घनिष्ट संबंध का सुझाव देता है। या तो कुछ मिथ्रावादियों ने ईसाई धर्म को भी अपनाया या ईसाइयों ने मिथ्रावाद को अपने 'सच्चे' धार्मिक विश्वास की हास्यानुकृति या नकल के रूप में या फिर इन दोनों के रूपों में देखा। प्रारंभिक ईसाई ग्रंथ और उनके विवरण मिथ्रावादियों के बारे में शिकायतों से भरे हुए हैं। हालाँकि एक दृष्टिकोण से प्रारंभिक ईसाई धर्म मिथ्रावाद से बहुत अलग प्रतीत नहीं होता। ईसाइयों की धार्मिक दीक्षाओं में (चर्च में शामिल होने का संकेत देने के लिए बच्चों या व्यवस्कों का **बैपटिज़्म**), शुद्धि अनुष्ठानों और परम् संस्कारों (sacraments; पवित्र जल के साथ एक पादरी द्वारा आशीर्वाद देना, स्वर्ग में जगह के लिए 'अन्तिम संस्कार') में केवल चर्च के 'सदस्यों' अथवा समागम को अनुमति थी। समागमों में पवित्र कहानियों के बारे में बताना (चर्च के उपदेश) और सामूहिक भोज का उत्सव करना इसमें शामिल थे। ईसाई **यूकेरिस्ट** (पवित्र समागम; 'holy communion'), मनाते थे जो उन्हें ईसा मसीह का उनके प्रेरित धर्मदूतों के साथ खाए गए अन्तिम भोज (Last Supper) की याद दिलाता था।

रोमन साम्राज्य में मिथ्रावाद और ईसाई धर्म एक साथ विकसित हुए और प्रतिद्वन्दिता के माध्यम से इन्होंने एक दूसरे को संगठित होने में मदद की। रहस्यवादी धर्मों ने प्रारंभिक ईसाईयों को अनुष्ठानों और अपनेपन का एहसास कराने वाले समारोहों के विषय में सिखाया। हालांकि, मिथ्रावाद की कोई उत्तरजीवी या प्रत्यक्ष पवित्र पुस्तक या शास्त्र नहीं है, यह मुमकिन है कि ईसाई धर्म ने रूपान्तरण और दिव्य रहस्यों में मनुष्यों की भागीदारी के बारे में मिथ्रा-वादी धर्म के विचार अपनाये। उनकी प्रतिद्वन्दिता के अन्तिम चरण में ईसाइयों ने पांचवी शताब्दी सी ई के दौरान मिथ्रावाद और अन्य रहस्यवादी धर्मों को **विधर्मी** (*heresy;* पाप-पूर्ण और दंडनीय त्रुटि के रूप में) मानते हुए उनका उन्मूलन कर दिया।

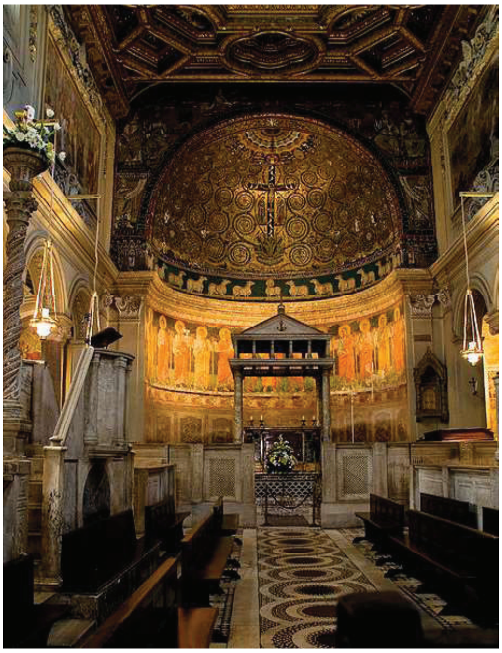

चित्र 3.7: सेंट क्लेमेन्ट की बेसिलिका
साभार: एम पी पी पी (https://www.panoramio.com/photo/3363563)
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Basilica_di_S.Clemente_-_panoramio.jpg

चित्र 3.8: सेन्टा प्रिस्का का अग्रभाग
साभार: विकिमीडिया कॉमन्स
स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/Santa_Prisca,_Rome#/media/File:Santa_Prisca-facciata-antmoose.jpg

3.5 ईसाई धर्म और रोमन राज्य का अन्तिम चरण

रोमन साम्राज्य का पतन एक लंबी प्रक्रिया थी। यह कहना कि 476 सी ई में (कई शताब्दियों में होने वाले अनेक आक्रमणों में से एक) रोम के शहर पर बर्बरों के कब्जे के साथ ही वह समाप्त हो गया सरलीकरण होगा (रोमन साम्राज्य के पतन के बारे में अधिक जानकारी के लिए अगली इकाई (**इकाई 4**) देखें। कॉन्सटेंटाइन I के अन्तर्गत पश्चिमी रोम से 'पूर्वी रोम' का (बाइज़ेंटाइन क्षेत्र में केन्द्रित) औपचारिक अलगाव हुआ और स्वयं को रोमन और ईसाई कहने वाले सम्राटों ने कान्सटेन्टीनोपल से (कॉन्सटेंटाइन शहर, आधुनिक इस्तान्बुल) 1453 सी ई तक शासन करना जारी रखा। कॉन्सटेन्टीनोपल एक धर्म प्रधान (Patriarch) के नेतृत्व में अन्य उभरते हुए ईसाई धर्म, पूर्वी ग्रीक रूढ़िवादी ईसाई धर्म (ऑर्थोडाक्स चर्च), का केन्द्र बन गया। भाषा और ईसाई पूजन पद्धति में पूर्वी रूढ़िवादी चर्च ग्रीक थी, लैटिन नहीं। और पूर्वी रूढ़िवादी चर्च की एशिया, यूरोप और अफ्रीका के ईसाईयों पर अधिकार के लिए रोमन कैथोलिक धर्म के साथ होड़ थी। जैसा कि हमने देखा, ईसाई चर्च की शक्ति तीसरी शताब्दी सी ई से पूरे साम्राज्य में मज़बूत हुई और ईसाई सम्प्रदायों ने रोमन जगत के हाशिये पर स्थित अनुयायियों को इकट्ठा किया। वास्तव में, गॉथ्स का राजा ओडोएसर, जिसने 476 में कान्सटेंटिनोपल में सम्राट के एक प्रतिनिधि या उप-शासक के रूप में रोम पर कब्जा कर लिया था, पहले से ही एरियन सम्प्रदाय का ईसाई था, जिसका पोप द्वारा अनुमोदन नहीं किया गया था।

पोप लियो I ने रोम के साम्राज्य (*इम्पीरियम; imperium*) तथा ईसाई क्षेत्र (*ऑर्बिस क्रिश्चिएनस; orbis Christianus*) को एक समान माना। पांचवी शताब्दी सी ई के शिक्षित रोमन लोगों ने रोमन साम्राज्य को उस 'सार्वभौमिक' साम्राज्य के दैवीय विधान के उत्तराधिकारी के रूप में देखा, जिसमें ईरानी साम्राज्य, असीरियन, बेबीलोन के पुराने साम्राज्यों के साथ-साथ सिकंदर महान् का साम्राज्य भी शामिल था। लियो द्वारा रोमन साम्राज्य (imperium) के साथ एक ईसाई क्षेत्र को समान मानने का समीकरण हमें पोप के

पद और सत्ता की महत्वकाक्षाओं (**papacy**; रोमन पोप का 'कार्यालय' और संस्था) के बारे में बताता है, जो स्वयं को 'निष्ठावन ईसाइयों के रक्षक' के रूप में प्रस्तुत करने की थी और यह उस समय की रोमन सभ्यता के सतत् राजनीतिक और सांस्कृतिक आकर्षण के बारे में भी बताता है। यूरोप के 'मध्ययुग' (लगभग 500-1500 सी ई) के राजा, जो यूरोप में बड़े क्षेत्रों पर शासन करने के इच्छुक थे, जैसे शार्लेमेन (768 सी ई से फ्रैंक्स के राजा, जिन्हें 800 सी ई में रोम के सम्राट पोप लियो III द्वारा ताज पहनाया गया था), और जर्मेनिक राजा ऑटो I (962-972 सी ई में जिन्होंने पवित्र रोमन सम्राट के रूप में शासन किया) ने कैथोलिक चर्च का समर्थन पाने की और साथ ही इसके अधिकार को सीमित करने की कोशिश की। ग्याहरवी शताब्दी सी ई तक, *क्रिश्चियनिटास* (*Christianitas*; ईसाई जगत) एक ऐसा शब्द था जिसका लगातार उपयोग यूरोप के लीडरों द्वारा पश्चिमी और पूर्वी यूरोप के सभी देशों में ईसाई उपासकों और ईसाई शासकों का उल्लेख करने के लिए किया जाता था।

बोध प्रश्न-2

1) 'रहस्यवादी धर्मों (मिथ्रावाद सहित) और प्रारंभिक ईसाई धर्म के बीच की कुछ समानताओं और विभिन्नताओं का वर्णन कीजिये।

....

....

....

....

....

2) पहली और पाँचवी शताब्दी सी ई के मध्य ईसाई धर्म और रोमन राज्य के बीच बदलते संबंधों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

3) ईसा मसीह के पंथ को रोमन शासकों द्वारा खतरा क्यों माना गया? स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

....

3.6 सारांश

जिस तरह रोम ने ग्रीक नगर-राज्यों और बाद के कई राजतन्त्रों से राजनीतिक प्रथाओं को अपनाया, उसी तरह रोमन जगत में ईसाई धर्म ने यहूदी, ग्रीक और पूर्वी विचारों को ग्रहण

किया और उनमें संशोधन किया। रोमन साम्राज्य में ईसाई धर्म की राजनीतिक विजय का परिणाम यूरोप, एशिया और अफ्रीका के समाजों के लिए यह हुआ कि वे स्वयं को रोमन साम्राज्य के उत्तराधिकारी के रूप में देखने लगे (500 सी ई के बाद से)। इस इकाई में प्रारंभिक ईसाई धर्म की कई महत्वपूर्ण विशेषताओं का वर्णन नहीं किया गया है, जैसे कि इसके प्रतीकवाद का विकास, मठवाद की भूमिका ('दुनिया से परे हटकर' लोगों का दिव्य शक्ति का चिन्तन करना) और पादरियों का ब्रह्मचर्य (इसके पुरूष पादरी को विवाह के लिए हतोत्साहित करना) तथा पादरीवर्ग, ईसाई कला और वास्तुकला और शिक्षा के विचारों और मान्यताओं के विषय में प्रारंभिक ईसाई विचारों में स्त्रियों की भूमिका का खंडन करना। लेकिन इसमें यह दर्शाया गया है कि कैसे रोमन साम्राज्य (और उत्तर रोमन यूरोप और निकट पूर्व) के ईसाई कई अलग-अलग मतों का पालन करते थे, जिनके संरक्षकों ने एक-दूसरे को विधर्मी के रूप में दोषी ठहराने की कोशिश की। नागरिक लीडरों को इन विवादों में खींचा गया और जिन्होंने कभी-कभी विभिन्न ईसाई समूहों के बीच विभाजन को दूर करने की कोशिश की; और अन्य समय में उन्होंने विभिन्न ईसाई समूहों को अपने पक्ष में जीतने के लिए विभिन्न मतों के बीच टकरावों का उपयोग भी किया।

ईसा मसीह और उनके देवदूतों की सरलता और 'दुनियादारी' के प्रति उदासीन रहने की मूलभूत कहानियों के साथ, चर्च के प्रमुखों द्वारा पवित्र दरिद्रता की प्रशंसा और राजनीति की दुनिया की निन्दा की जाती थी क्योंकि उनका कहना था कि ये लोगों को नर्क में धकेलती थी। फिर भी चर्च धनी संस्थायें बन गए और पादरीजनों ने राजनीतिक शक्ति को हथियाया। चौथी शताब्दी के बाद से बिशप और चर्च के अन्य अधिकारी मुख्य रूप से धनाढ्य रोमन नागरिक थे, और कुछ ने अपनी चर्चों को संभालने के साथ-साथ अन्य सरकारी संस्थाओं की सेवा की, जैसा कि महत्वाकांक्षी रोमनों ने पूर्व-ईसाई काल में किया था। छठी शताब्दी सी ई के अन्त में रोम के चर्च का प्रशासनिक क्षेत्र इटली का सबसे बड़ा भूमिपति था। उस समय तक पोप, बिशप और मठों की भूसंपत्तियों गॉल (फ्रांस), हिस्पेनिया, (स्पेन और पुर्तगाल) और उत्तरी अफ्रीका में थीं। और पूर्वी रोम में उनके समकक्षों पर भी समान रूप से कृपा की जाती थी। सातवीं शताब्दी सी ई में एक और प्रमुख एकेश्वरवाद, इस्लाम, के उद्भव ने इस क्षेत्र में, जो अंततः यूरोप कहलाया, ईसाई धर्म की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्थिति को और अधिक सुदृढ़ता प्रदान की।

3.7 शब्दावली

बैपटिज़्म (Baptism) : ईसाई धर्म में दीक्षा देने से संबंधित जल छिड़ककर दीक्षित करने वाला अनुष्ठान, जिसमें बपतिस्मा लेने वाला (baptized) चाहे बच्चा हो या वयस्क।

बिशप (Bishop) : ईसाई पादरी वर्ग का एक सदस्य जिसे एक उच्चतर पादरी वर्ग, जैसे एक महानगरीय धर्म प्रधान या पोप द्वारा विधिवत पादरी बनाया जाता है या नियुक्त किया जाता है।

यूकरिस्ट (Eucharist) : ग्रीक *यूकरिस्टिया*, 'धन्यवाद देना' से व्युत्पन्न। कैथोलिक और अधिकांश अन्य ईसाई चर्चों का एक अनुष्ठान (पवित्र समारोह)। यूकरिस्ट उपासकों के संस्कार के माध्यम से उपासक ईसा मसीह और ईश्वर के साथ ऐक्य (एक साथ आना) को प्राप्त करते हैं।

विधर्म (Heresy) : ग्रीक *ईरेसिया,* 'किसी चीज का चुनना'। मतलब एक धर्म को गलत तरीके से या अज्ञानता से चुनना। इसलिए विधर्म का अर्थ जानबूझकर झूठी शिक्षाओं का पालन करना था और विधर्मियों को कानून के तहत दंडित किया जाता था।

लैटिन (Latin) : इतालवी प्रायद्वीप में उत्पन्न भाषा जो रोमन साम्राज्य के प्रशासन की और बाद में रोमन कैथोलिक चर्च की मुख्य भाषा बनी। यह मध्य इटली में रोमन और उनके अधिकार क्षेत्र के पूर्व एक इतालवी जनजाति को भी संदर्भित करती है।

नाइकिया (Nicaea) : एशिया माइनर में 325 सी ई में बैठक ईसाई मत (धर्मशास्त्र) और चर्च प्रशासन के विवादों, जो ईसाइयों के समुदायों के बीच उभरा था, को हल करने के लिए सम्राट कान्सटेंटाइन I द्वारा प्रायोजित सभा या समिति की बैठक।

पेगन/बुतपरस्त (Pagan) : यहूदियों के अलावा अन्य गैर-ईसाई। लेटिन *पेगस;* शहरों से परे एक प्रशासनिक क्षेत्र या गांव। *पेगानस* इस प्रकार एक साधारण या अज्ञानी ग्रामीण व्यक्ति, जो कस्बों और शहरों में पनप रही नयी धार्मिकता से अछूता था।

पेंथियन (Pantheon) : ग्रीक से व्युत्पन्न 'सभी दिव्यताओं' अथवा 'सभी देवता'; का समूह। यूनानियों (हेलेनिक) के पैन्थियोन (देव-समूह) में ऐसे देवी-देवताओं को शामिल किया गया था जिनकी कल्पना एक दूसरे से संबंधित ऐसे रिश्तेदारों की तरह की जाती थी जैसे कि मनुष्यों में होती है।

पेपेसी (Papacy) : पोप के आध्यात्मिक और प्रशासनिक कार्यालय या अधिकार क्षेत्र का संदर्भ देते हुए (लैटिन *पापा*- 'पिता'), रोम के बिशप, सेंट पीटर के धर्म प्रचारक उत्तराधिकारी, विश्वव्यापी कैथोलिक निष्ठा/धर्म के नेता।

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) विस्तृत विवरण के लिए भाग 3.1 देखें

2) भाग 3.2 देखें

3) भाग 3.2 देखें

4) भाग 3.3 देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 3.4 देखें

2) भाग 3.5 देखें

3) भाग 3.5 देखें

3.9 संदर्भ ग्रन्थ

ब्राउन, पीटर, (1978) *द मेकिंग ऑफ लेट एन्टीक्यूटी* (कैम्ब्रिज, एम. एः हारवर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस).

ब्राउन, पीटर, (1993) 'द प्रॉबलम ऑफ क्रिस्चेनाइजेशन', *प्रोसीडिंग्स ऑफ द ब्रिटिश एकेडमी,* 82: 89-106.

इगंलबर्ट, हर्वे, (2012) 'इन्ट्रोडक्शन', स्कॉट फिट्ज़जेरॉल्ड़ जॉन्सन (संपा.), *द ऑक्सफोर्ड हेन्डबुक ऑफ लेट एन्टीक्युटि* (ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस). (आनलाइन एड़ीशनः DOI 10.1093/oxfordhb/98780195336931.013.0000).

लोसल, जोसेफ एवं निकोलस जे. बेकर-ब्राएन (संपा.), (2018) *ए ब्लेकवेल कम्पेनियन टू रिलीजन इन लेट एन्टीक्यूटि* (मेलडेन, एम एः विलि एन्ड सन्स).

पेरी, मारविन, (2012) *वेर्स्टन सिविलाइजेशनः ए ब्रीफ हिस्ट्री,* दसवां संस्करण (यूनाइटेड स्टेटसः वाड्सवर्थ सेनगेज लर्निंग).

सेरिस, पीटर, (2011) *एम्पायर्स ऑफ फेथः द फाल ऑफ रोम टू द राइज ऑफ इस्लाम, 500-700* (ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

सेरिस, पीटर, डेल सान्तो, मैथ्यू एवं बूथ, फिल (संपा.), (2011) *एन ऐज ऑफ सेन्ट्स? पावर कानफ्लिक्ट एन्ड डिसेन्ट इन अर्ली मिडिवल क्रिश्चेनिटी* (लायडन एवं बॉस्टनः ब्रिल).

टेलर, डेविड जी. के., (2000) 'क्रिश्चियन रीजनल डाइवरसिटी', पी. आइसलर (संपा.), *द अर्ली क्रिश्चियन वर्ल्ड,* भाग 1 (लंदन एवं न्यूयार्कः रुटलेजः 330-43).

3.10 शैक्षणिक वीडियो

रोम एंड क्रिश्चिनिटी। नेशनल ज्यॉग्राफीक
https://video.nationalgeographic.com/tv/00000144-2f3a-df5d-abd4-ff7f265c0000

जीजसः राइज़ टू पावर 3/3 क्रिश्चियन्स, नेशनल ज्यॉग्राफीक
https://www.youtube.com/watch?v=F0iDQ65Ubas

इकाई 4 रोमन साम्राज्य का संकटकाल*

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 पृष्ठभूमि और इतिहास

4.3 उत्तर रोमन साम्राज्य

4.4 राजनैतिक अराजकता

- 4.4.1 सैन्य शासन
- 4.4.4 प्रशासन का संकट
- 4.4.3 गृह युद्ध
- 4.4.4 राजनैतिक विखंडन
- 4.4.5 राजनैतिक तंत्र का टूटना
- 4.4.6 पूर्वी साम्राज्य का उदय

4.5 सैन्य पतन

- 4.5.1 अति-विस्तार और सैन्य अधिव्यय
- 4.5.2 रोमन *लीजन* (सैन्य दलों) का कमज़ोर होना
- 4.5.3 भाड़े के सैनिकों का अंतः प्रवाह
- 4.5.4 शासन के नियंत्रण में सैन्य भागीदारी की अविश्वसनीयता

4.6 आर्थिक संकट

- 4.6.1 पतनोन्मुख अर्थव्यवस्था, उच्च मुद्रास्फीति और प्रवासी भूस्वामी
- 4.6.2 निर्वाह का संकट
- 4.6.3 शिल्प उत्पादन और लम्बी-दूरी के व्यापार का पतन
- 4.6.4 मौद्रिक दबाव में वृद्धि, वित्तीय संकट और नैसर्गिक अर्थव्यवस्था का पुनरागमन

4.7 सामाजिक उथल-पुथल

- 4.7.1 जनसंख्या में गिरावट
- 4.7.2 जन भावना में गिरावट
- 4.7.3 ब्रिगैंड्ज (डकैती, लूटमार)
- 4.7.4 अभिजात वर्ग का ग्रामीण क्षेत्र की ओर विस्थापन

4.8 दास आधारित उत्पादन पद्धति में संकट

4.9 जर्मनिक जनजातियों के आक्रमण

4.10 इतिहासलेखनः संकट, पतन और रोमन साम्राज्य का रूपांतरण

4.11 सारांश

4.12 शब्दावली

4.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.14 संदर्भ ग्रंथ

4.15 शैक्षणिक वीडियो

---

* डॉ. दीक्षा भारद्वाज, गार्गी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

4.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपः

- रोमन साम्राज्य के पतन की प्रक्रिया को समझ सकेंगे,
- इस पतन के प्रमुख कारकों की सूची तैयार कर सकेंगे,
- साम्राज्य की क्रमवार विफलता का विश्लेषण कर सकेंगे, और
- साम्राज्य के पतन पर विद्वानों के विचारों के बारे में जान सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

किसी भी सामाजिक-राजनैतिक व्यवस्था के पतन और विनाश को गहन ऐतिहासिक चिंतन और विश्लेषण द्वारा ही चिन्हित किया जा सकता है, विशेषतः रोमन साम्राज्य को जो निःसंदेह प्राचीन विश्व का विशालतम साम्राज्य था। रोमन साम्राज्य दूसरी शताब्दी सी ई में अपने चरम पर था, इसका विस्तार पश्चिमी और पूर्वी यूरोप, उत्तरी अफ्रीका और पश्चिमी एशिया के कुछ भागों सहित अरब प्रायद्वीप को मिलाकर लगभग 6,500,000 किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ था। तीसरी शताब्दी के आरंभ में अपरिवर्तनीय संकटों की श्रृंखला ने रोम को घेर लिया था, जिसने राजनैतिक, आर्थिक, सैन्य और सामाजिक उथल-पुथल को जन्म दिया और अंततः साम्राज्य को पतन की ओर ढकेल दिया। कई संकटों के संयोजन – आंतरिक विघटन और व्यवस्थित विफलता, लगातार जर्मनिक जनजातियों द्वारा बाह्य आक्रमणों – के कारण गंभीर आघातों के परिणामस्वरूप अंततः धीरे-धीरे पश्चिमी रोमन साम्राज्य का पतन हो गया।

4.2 पृष्ठभूमि और इतिहास

पूर्व-आधुनिक विद्वता की क्लासिकीय पहेली – रोम को पतन की ओर ले जाने वाले क्या कारक थे? अनेक विद्वानों ने इसकी व्याख्या की है और विभिन्न सिद्धांत प्रस्तुत किए हैं। आरंभ में, इम्पीरियम रोमनम (रोमन साम्राज्य के लिए प्रयुक्त लैटिन शब्द) के संकट और पतन पर लिखे गए सिद्धांतों ने किसी एक प्राथमिक कारण पर अधिक बल दिया। इतिहासकारों का अनुमान है कि अनेक कारकों के संयोजन ने धीरे-धीरे साम्राज्य को पतन की ओर धकेला। पतन के अनेक कारण खोजे गए और इनमें से अधिकतर राजनैतिक, आर्थिक, सैन्य और अन्य सामाजिक संस्थाओं का विघटन, जर्मनिक आक्रमणों और रोमन साम्राज्य के भीतर अनाधिकृत रूप से कब्ज़ा करने के प्रयास धीरे-धीरे पतन की ओर जाने के संकेत देते हैं। इसके अतिरिक्त, तीसरी शताब्दी सी ई के बाद साम्राज्य का क्षेत्रीय प्रसार रुकने से इसने नए विजित क्षेत्रों से तुरंत मिलने वाले राजस्व लाभों को खो दिया और फिर अपने ही नागरिकों पर कर वृद्धि का सहारा लिया।

ऐतिहासिक पुनरावलोकन की दृष्टि से पतन तीन शताब्दियों की समयावधि के दौरान हुआ। डायोक्लीशियन और कांस्टेनटाइन द्वारा रोमन राज्य के राजनैतिक, आर्थिक और प्रशासनिक पुनर्गठन के प्रयासों के कारण ही यह तीसरी शताब्दी के संकट का सामना करने के योग्य हो सका, परंतु पांचवी शताब्दी और अधिक भारी आघात लाई। चौथी शताब्दी के अंत तक जर्मनिक जनजातियों ने राइन और डेन्यूब नदियों की ओर से साम्राज्य में प्रवेश किया और उन्होंने स्वयं के बल पर वस्तुतः अपने स्वतंत्र राज्यों और कबीलाई तंत्रों की स्थापना की। 410 सी ई में रोम को विसिगोथ राजा, ऐलेरिक, ने लूटा। कुछ आधुनिक इतिहासकार जब तिथि के महत्व पर प्रश्न उठाते हैं तो पश्चिमी रोमन साम्राज्य के विघटन की तिथि 4 सितम्बर 476 सी ई मानी जाती है जब ओडेसर ने सम्राट रोमुलस को अपदस्थ कर रोम के पश्चिमी शासकों की श्रृंखला को समाप्त पर कर दिया था। तत्पश्चात्, पश्चिमी रोमन साम्राज्य की

सैन्य, राजनैतिक अथवा आर्थिक शक्ति नगण्य मात्र रह गई थी और उसने बिखरे हुए पश्चिमी क्षेत्रों पर, जिसे उस समय तक भी रोमन कहा जा सकता था, अपना नियंत्रण खो दिया।

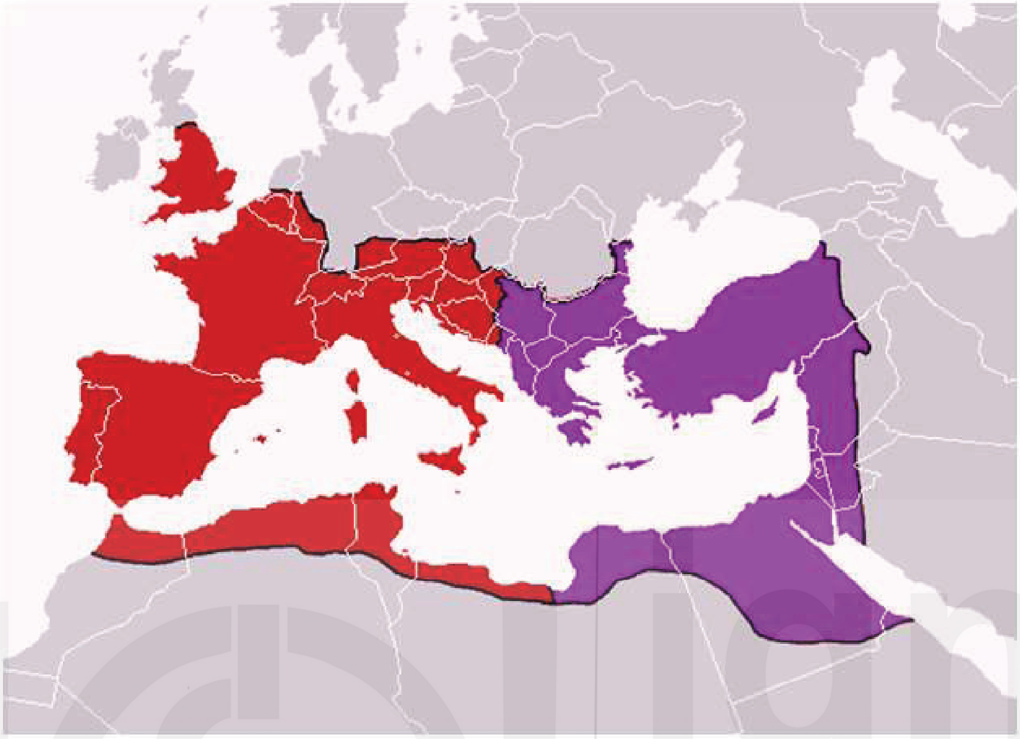

मानचित्र 4.1: थियोडोसियस प्रथम की मृत्यु के पश्चात् 395 सी ई में पश्चिमी और पूर्वी रोमन साम्राज्य की सीमाओं का मानचित्र

साभार: गियूवोगबिल एट एन.विकिपीडिया

स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Theodosius_I%27s_empire.png

तीसरी शताब्दी का संकट

'कुछ मायनों में यह उल्लेखनीय है कि तीसरी शताब्दी सी ई तक रोमन साम्राज्य जीवित रहा। 235 सी ई के पश्चात् आधी शताब्दी तक यह गृह युद्ध, विदेशी आक्रमण, प्लेग और अन्य आपदाओं से पीड़ित रहा जो ज्यादातर साम्राज्यों के अंतिम विघटन का कारण बनने के लिए काफी थे। लेकिन रोम की केंद्राभिमुखी राष्ट्रभक्ति, जो कि रोमन भावना के आदर्श के साथ ही रोम की यथार्थता भी थी, ने अंत में यह सिद्ध कर दिया कि थोड़े समय के लिए यह साम्राज्य को जीवित रखने में सक्षम थी। हालांकि, यह एक अलग रूप में जीवित रहा जिसके लिए इसे धीरे-धीरे बढ़ती हुई आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक दमन के रूप में कीमत चुकानी पड़ी' (रोजर्स, 2009: 218)।

विडंबना यह है कि दो सौ वर्षों की *पैक्स रोमाना* (रोमन शांति) तीसरी शताब्दी के संकट के साथ नष्ट हो गई। राजनैतिक रूप से, 235 सी ई के बाद की आधी शताब्दी (284 सी ई तक) गृह युद्धों से व्याप्त थी और तब पहली बार ऐसा भी हुआ जब रोमन सैनिक आपस में एक दूसरे से लड़ते हुए मारे गए। राज्य सिंहासन के कम से कम पचास दावेदार थे और छब्बीस शासकों ने इस काल में शासन किया जिसमें से पच्चीस की हत्या कर दी गई। उत्तराधिकार की समस्या अत्यधिक प्रखर हो गई और कभी इसका हल सर्वसम्मति से नहीं निकल पाया। प्लेग के प्रकोप से बड़ी संख्या में लोग मारे गए जिससे साम्राज्य में आंतरिक खलबली मच गई और आक्रमणकारियों के लिए यह आसान शिकार बन गया। एथेंस और टारागोना जैसे शहर जो राज्य की सीमाओं से बहुत दूर हो गए थे, 260 के दौर में आक्रमण के शिकार हुए। अनिवार्य आर्थिक प्रतिघात के कारण कर वृद्धि और मुद्रा के मूल्य में गिरावट की गई।

4.3 उत्तर रोमन साम्राज्य

तीसरी शताब्दी के संकट का अंत ऑरेलियन के राज्यकाल के साथ हो गया था, इसे 'शांति और व्यवस्था की पुनर्स्थापना' के नाम से भी जाना जाता है, और यह अधिक दृढ़तापूर्वक डायोक्लीशियन के राज्यकाल में समाप्त हुआ जिसने *टेट्रार्की* (चार का शासन) की प्रणाली द्वारा साम्राज्य में प्रशासन व्यवस्था को सुदृढ़ किया। डायोक्लीशियन ने मेक्सीमियन को, जिसे 286 में सह-शासक बनाया गया, को आगस्टस के तौर पर नियुक्त करते हुए साम्राज्य को दो भागों में विभाजित कर दिया। आगे चलकर उसने 293 में गलेरियस और कांस्टेनटियस को कनिष्ठ (जूनियर) सह-शासक (सीज़र) नियुक्त किया। इस *टेट्रार्की* के अंतर्गत साम्राज्य के प्रभावपूर्ण रूप से चार स्वायत्त भाग हो गए थे और प्रत्येक भाग पर एक अलग शासक का शासन था। डायोक्लीशियन पूर्वी क्षेत्र (निकोमीडिया) पर शासन कर रहा था; मेक्सीमियन ने इटली और अफ्रीका पर शासन किया; कांस्टेनटाइन ने स्पेन, गॉल और ब्रिटेन पर; और गलेरियस ने इलिरिकम, मेसिडोनिया और ग्रीस पर शासन किया। हालांकि, वंशीय महत्वकांक्षा *टेट्रार्की* को अंत की ओर ले गई और कांस्टेनटाइन ने शासक बनने पर साम्राज्य को संगठित करने के लिए दुबारा एकीकृत साम्राज्य की स्थापना की। लेकिन उसने साम्राज्य की गद्दी रोम से कांस्टैंटिनोपल (आधुनिक तुर्की का इस्तांबुल) स्थानांतरित कर दिया। उसने ईसाइयों पर अत्याचार को बंद करवाया और मृत्यु-शय्या पर ईसाई धर्म की दीक्षा ली। इसके साथ रोम की राजनैतिक भूमिका का अंत हो गया।

मानचित्र 4.2 : प्रथम *टेट्रार्की* के दौरान रोम का मानचित्र

साभार: कॉपरमाइन फोटो गैलरी (सीपीजी)

स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Tetrarchy_map3.jpg

थियोडोसियस (379-395 सी ई) के राज्यकाल में ईसाई धर्म राज्य धर्म बन गया और सभी मूर्तिपूजक संप्रदायों पर प्रतिबंध लगाया गया। थियोडोसियस ने साम्राज्य को अपने दोनों पुत्रों के बीच विभाजित कर दिया – आर्केडियस ने विसिगाथों के सहयोग से पूर्वी रोमन भाग (बाइज़ेंटाइन) पर शासन किया और होनोरियस ने वेंडालों की सहायता से रोम के पश्चिमी साम्राज्य पर शासन किया।

जर्मनिक जनजातियों के लगातार आक्रमणों और मुठभेड़ों, जो स्वयं मध्य एशिया के हूणों जैसे कबीलाई समूहों, जिन्होंने सीमाओं को नष्ट कर दिया था, से बचते हुए भाग रही थीं, ने उत्तर-रोमन साम्राज्य की जीवन शैली को ही बदल दिया। अनेक जर्मनिक जनजातियां (गॉथ, वेंडाल, सुर्बी, अलानी और बर्गन्डी की शाखाएं) लगातार रोमन प्रदेशों में प्रवेश करने का प्रयास करती रहीं और उन्होंने अधिकतर क्षेत्र पर कब्ज़ा कर लिया। 404 सी ई में राजधानी को रोम से अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित क्षेत्र रावेना स्थानांतरित कर दिया गया और 410 सी ई में विसिगाथों ने आक्रमण कर रोम को लूटा। 455 सी ई में रोम पर वेंडालों ने आक्रमण किया और 476 सी ई में रोमुलस आगस्टलूस के अपदस्थ होने पर पश्चिमी रोमन साम्राज्य का अस्तित्व ही समाप्त हो गया। यहां तक कि पूर्वी रोमन साम्राज्य भी अपने अनेक प्रदेशों को खोने के कारण काफी हद तक कमज़ोर हो गया था। इस कमज़ोर साम्राज्य को बाइज़ेंटाइन साम्राज्य के तौर पर उल्लेखित किया जाता है। बाइज़ेंटाइन शासक जस्टिनियन प्रथम (527-563 सी ई) ने इटली पर विजय प्राप्त कर साम्राज्य को पुनर्जीवित और एकीकृत करने का एक अंतिम प्रयास किया। परंतु इसका कोई लाभ नहीं मिला। पश्चिम में नई सामाजिक-आर्थिक संरचनाएं उभरीं, हालांकि मौजूदा रोमन संस्थाएं पूर्णरूप से खत्म अथवा लुप्त नहीं हुई थीं। लेकिन, सेना पूर्णतः नए शासकों के नियंत्रण में थी।

4.4 राजनैतिक अराजकता

राजनैतिक रूप से रोमन राज्य, सत्ता के बटवारे, और इसके तीन मुख्य घटकों – सम्राट, प्रशासनिक सीनेटोरियल कुलीनतंत्र और सेना – में संतुलन पर टिका हुआ था। इन प्रारूपात्मक घटकों का कमज़ोर होना और इसमें उत्तराधिकार की अप्रिय समस्या का जुड़ जाना पश्चिमी साम्राज्य के राजनैतिक विनाश का कारण बना। दूसरी शताब्दी सी ई के अंत से, शासकों के चयन में सेना निर्णायक भूमिका निभाने लगी और धीरे-धीरे सीनेट और सेना के मध्य संबंध टूट गए। केंद्राभिमुख प्रवृत्तियां प्रखर होने लगीं और राजनैतिक अराजकता का क्रम बन गया।

'तीसरी शताब्दी सी ई के मध्य तक रोमन राज्य सैद्धांतिक रूप से गणतंत्र रहा। जनता अपने प्रतिनिधि के रूप में शासक को चुनती थी जो उनकी ओर से शासन करता था। वास्तव में शासक कुलीन तंत्र में से चुना जाता था। वंशानुगत सिद्धांत बहुत कमज़ोर था और वहां कुछ ही वंशानुगत उत्तराधिकारी हुए। राजतंत्र की प्रकृति अनिवार्य रूप से निर्वाचनीय थी। एडवर्ड गिब्बन के अनुसार, 'शासक का चुनाव सीनेट द्वारा और सैनिकों की स्वीकृति से होता था' (फारूक़ी, 2001: 260)।

4.4.1 सैन्य शासन

तीसरी शताब्दी में सेप्टीमियस सेवरस (राज्यकाल 193-211 सी ई), सेवरन वंश का प्रथम शासक, ने सेना को प्रशासन का अनिवार्य हिस्सा बनाया और परिणामस्वरूप राजसी दायित्व महत्वाकांक्षी सेनापतियों का मोहरा बन गया। नागरिक शासन से सैन्य तानाशाही में परिवर्तन ने राज्य की आर्थिक आवश्यकताएं बढ़ाईं। अंतिम सेवरन शासक, एलेक्ज़ेंडर सेवरस (राज्यकाल 222-235 सी ई), की हत्या उसके स्वयं के सैन्य दस्ते ने की थी। साथ ही उत्तराधिकार के स्पष्ट नियमों की कमी के कारण लम्बी अवधि तक आन्तरिक अशांति बनी रही जिसमें कठपुतली शासकों, जिनका राज्यकाल बहुत छोटा रहा और जिसे सैन्य तानाशाही द्वारा नियंत्रित किया गया, का एक क्रम देखने को मिलता है।

तीसरी शताब्दी के बाद साम्राज्य को सैनिक संघर्षों, जो कि बर्बर आक्रमणों के रूप में

लगातार हो रहे थे, और एशिया में सासानिद साम्राज्य की ताकत का सामना करना पड़ा। डायोक्लीशियन ने तीसरी शताब्दी के अंत और चौथी शताब्दी सी ई के आरंभ में जो सैन्य सुधार किए, उसमें **कांसक्रिप्शन** (सेना में अनिवार्य भर्ती) को पुनः आरंभ किया और रोम अपनी सेना के आकार को लगातार बढ़ाता रहा जिससे चौथी शताब्दी सी ई में सैनिकों की संख्या 650,000 हो गई। इस विशाल सेना के रख-रखाव के लिए राजस्व करों की मांग गणतंत्र के अंत में प्रचलित करों की मांग से तीन गुना अधिक थी। ए.एच. एम. जोन्स (1964) के अनुसार, करों की अधिकता ने रोमन साम्राज्य के पतन की गति को तेज़ कर दिया। इसके अतिरिक्त, सेना का विभाजन कर दिया गया जिसमें नागरिक सेना को सीमाओं पर, और अनुभवी सैन्य अधिकारियों को शासक के पास नियुक्त किया गया। साम्राज्य पर इसका प्रभाव उल्टा साबित हुआ।

4.4.2 प्रशासन का संकट

एक छोटे नगर राज्य के प्रशासनिक तंत्र का प्रयोग एक व्यापक साम्राज्य को शासित करने के लिए किया जा रहा था, इस तथ्य ने साम्राज्य के पतन को एक पूर्वनिर्धारित निष्कर्ष बनाया। प्रशासन का यह संकट सभी स्तर के शासक वर्ग में तेज़ी से फैल रहे भ्रष्टाचार से दुगना हो गया। सत्ता की भूख, लालच और अधिकार की भावना का परिणाम यह निकला कि यह राजनैतिक अस्थिरता का कारण बन गया। अन्य सभी कारणों में, इतिहासकार ब्रायन-वार्ड पर्किंस (2005) तर्क देते हैं कि भ्रष्ट प्रशासन और राजनैतिक अस्थिरता के क्रूर चक्र ने साम्राज्य के पतन में प्रमुख भूमिका निभाई।

रोमन शासक होना हमेशा से ही एक जोखिम भरा काम था, लेकिन दूसरी और तीसरी शताब्दी के दौरान यह लगभग मृत्यु दण्ड का पर्याय बन गया। गृह युद्धों ने साम्राज्य को अव्यवस्था की ओर ढकेला और **प्रिटोरियन गार्ड्स** – रोम में तैनात चयनित टुकड़ी – जब चाहते थे सम्राट की हत्या कर अपनी इच्छानुसार नए शासक पदारूढ़ कर देते थे और उन्होंने एक बार सम्राट के पद की नीलामी भी की। यह राजनैतिक सड़न सीनेट तक भी पहुंच गई थी जो अपने ही फैले हुए भ्रष्टाचार और अक्षमता के कारण शासकों की अतिवादिता को कम करने में असफल रही।

4.4.3 गृह युद्ध

उत्तर रोमन साम्राज्य के लिए गृह युद्ध आम हो गए। डायोक्लीशियन और कांस्टेनटाइन के अपवादों के अलावा अन्य शासकों के राज्यकाल छोटे थे और शक्तिशाली सेनापतियों के साथ लड़ना आम था। इस आन्तरिक कलह का सबसे हानिकारक प्रभाव दूर तक फैले हुए व्यापार तंत्र का पतन था, जो कि मार्गों और राजमार्गों के निर्माण से विकसित हुआ था। जैसे-जैसे परिस्थितियां यात्रा के लिए अहितकर हुईं, लम्बी दूरी के वाणिज्यिक व्यापार का स्थान अधिक स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं ने ले लिया। गृह युद्धों ने मूलभूत रूप से राजनैतिक अफरा-तफरी और प्रभावकारी प्रशासनिक असमर्थनीयता को बढ़ावा दिया।

4.4.4 राजनैतिक विखंडन

क्रमिक विखंडन और प्रशासनिक विभाजन ने भी साम्राज्य को कमज़ोर किया। 258 सी ई के आस-पास दो बड़े प्रदेश मुख्य रोमन साम्राज्य से टूट कर अलग हो गए और स्वतंत्र गैलिक राज्य और पालमरीन राज्य में परिवर्तित हो गए। गॉल, ब्रिटेन और हिस्पेनिया प्रांतों के साथ गैलिक साम्राज्य रोम के उत्तर और पश्चिम की ओर स्थित था। सीरिया, फिलिस्तीन और मिस्र प्रांतों के साथ पूर्व में पालमरीन साम्राज्य स्थित था।

मानचित्र 4.3: 271 सी ई के प्राचीन रोम का मानचित्र
साभार: विकिमीडिया कॉमन्स
स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Map_of_Ancient_Rome_271_AD.svg

284 सी ई में शासक डायोक्लीशियन ने साम्राज्य को प्रशासनिक तौर पर दो इकाइयों में विभाजित कर दिया था – पश्चिमी रोमन साम्राज्य और पूर्वी रोमन साम्राज्य – और नियंत्रण दो प्रदेशों के शासकों के बीच बंट गया था। *टेट्रार्की* अथवा चार का शासन (विस्तार से जानने के लिए **भाग 4.3** देखें) ने प्रत्येक प्रदेश में सैन्य टुकड़ियों की संख्या में वृद्धि की मांग की जिसने नागरिकों पर राजस्व करों का भार बढ़ा दिया। शाही नियंत्रण की वृद्धि की मांग को देखते हुए डायोक्लीशियन के प्रशासनिक सुधारों ने आगे चलकर साम्राज्य के बीस प्रांतों को सौ में विभाजित कर दिया। इससे नौकरशाही का आकार बड़ा हो गया। इस प्रकार नौकरशाही के आकार में वृद्धि होने से एकीकृत रोमन साम्राज्य आगे चलकर और अधिक विखंडित हो गया।

4.4.5 राजनैतिक तंत्र का टूटना

डायोक्लीशियन और कांस्टेनटाइन का सामूहिक राज्यकाल, साम्राज्य के अपरिवर्तनीय पतन को केवल कुछ समय के लिए टाल सका, जो कि तेज़ी से नष्ट हो रहा था। 337 सी ई में कांस्टेनटाइन की मृत्यु के पश्चात् सेना का विद्रोह फूट पड़ा और उसके परिवार के सदस्यों की हत्या कर दी गई। 340 सी ई में कांस्टेनटाइन के जीवित बचे तीन पुत्रों – कांस्टेनटाइन द्वितीय, कांस्टेन्स प्रथम और कांस्टेनटिनस द्वितीय – ने साम्राज्य को अपने बीच बांट लिया लेकिन आपसी संदेह और शत्रुता इसे अंत की ओर ले गई और इसके अंतिम मूर्तिपूजक शासक जूलियन (361-363 सी ई) की मृत्यु ईरानियों से लड़ते हुए हुई। सम्राट वेलेंटीनियन (364-375 सी ई; पश्चिमी रोमन साम्राज्य) और वेलेन्स (364-378 सी ई; पूर्वी रोमन साम्राज्य) ने रोम के बढ़ते हुए संकट को संभालने का असफल प्रयास किया और अगस्त 378 सी ई में वेलेन्स एड्रियानोपल के युद्ध में विसिगाथों से लड़ते हुए मारा गया। एडवर्ड गिब्बन के अनुसार, यह पराजय रोम के इतिहास में महत्वपूर्ण मोड़ था जिसका पतन अब एकदम निश्चित था।

थियोडोसियस प्रथम (379-395 सी ई) के राज्यकाल के दौरान ब्रिटेन में विद्रोही सेनापति मेग्नुस मेक्सिमस को उसकी सैन्य टुकड़ी द्वारा 383 सी ई में शासक घोषित किया गया और उसने गॉल में ट्रायर नामक स्थान से तीन सुदूर पश्चिमी प्रांतों पर शासन किया। 395 सी ई में फिर से हुए गृह युद्धों के पश्चात् साम्राज्य पूर्व में आर्केडियस और पश्चिम में

ऑनरियस के मध्य विभाजित हो गया। स्टिलिको जो रोमनीकृत वैंडल था और ऑनरियस का प्रतिनिधि भी था, की 408 सी ई में मृत्यु के पश्चात विसिगाथों द्वारा इटली पर लगातार आक्रमण किए गए और 410 सी ई में उन्होंने रोम को लूटा।

4.4.6 पूर्वी साम्राज्य का उदय

आंशिक रूप से पश्चिमी साम्राज्य का भाग्य तीसरी शताब्दी सी ई के अंत में ही तय हो गया था जब शासक डायोक्लीशियन ने साम्राज्य को दो भागों में बांट दिया था – पश्चिमी साम्राज्य जिसकी राजधानी मिलान थी और पूर्वी साम्राज्य जिसकी राजधानी नोवा रोमा थी। 330 सी ई में कांस्टेनटाइन ने शाही राजधानी को नोवा रोमा में स्थानांतरित कर दिया और उस शहर का नामकरण अपने नाम पर कर दिया। यह नगर उस समय से कांस्टैंटिनोपल के नाम से जाना जाने लगा। 395 सी ई में शासक थियोडोसियस ने युक्तिपूर्वक ढंग से यह माना कि साम्राज्य किसी एक के द्वारा प्रशासन चलाने के हिसाब से बहुत विस्तृत है और उसने इसे अपने दोनों पुत्रों में विभाजित कर दिया। साम्राज्य का पूर्व और पश्चिम में यह विभाजन स्थाई सिद्ध हुआ।

अल्पावधि के लिए इस विभाजन ने साम्राज्य को प्रशासन चलाने योग्य बनाया लेकिन समय के साथ इन दो भागों में दूरी आ गयी। पूर्व और पश्चिम संगठित होकर बाहरी आक्रमणों का सामना करने में असफल रहे और दोनों आपस में अक्सर संसाधनों, सैन्य वित्त और नियुक्तियों को लेकर झगड़ते रहे। इस दूरी के बढ़ने से यूनानी-भाषी पूर्वी साम्राज्य समृद्ध होता गया, जबकि लैटिन-भाषी पश्चिम अलग-अलग अनेक संकटों में घिरता चला गया। सबसे महत्वपूर्ण बात, पूर्वी साम्राज्य के मज़बूत होने से बाहरी आक्रमण अब पश्चिम की ओर होने लगे। जबकि कांस्टेनटाइन जैसे शासकों ने सुनिश्चित किया कि कांस्टैंटिनोपल शहर की पूर्ण रूप से किलेबंदी और अच्छी तरह से सुरक्षा हो, इटली और रोम शहर, जिनका अब केवल सांकेतिक महत्व रह गया था, उनको नाज़ुक हालत में छोड़ दिया गया था।

4.5 सैन्य पतन

रोम की अधिकांश ताकत उसकी सेना पर निर्भर थी और उसके द्वारा चिरस्थायी बनाए रखी जाती थी। उत्तरवर्ती सैन्य बल को प्रभावी बनाने के लिए रोमन राज्य ने, अपने आरंभिक चरण से ही सेना के कार्य और विजय को प्रेरक बल के तौर पर शामिल किया। छोटे नगर-राज्य से रोम का एक प्रभावकारी लैटिन संघ बनना और फिर भूमध्यसागर और पश्चिमी विश्व का अद्वितीय नेता बनना, सैन्य शक्ति और कौशल से प्राप्त किया गया था। हालांकि, रोमन ***हॉपलाइट*** सेना (प्राचीन यूनान की शस्त्र सज्जित पैदल सेना), उसकी ***लीजन*** (सैन्य दल) और ***फैलेंक्सेस* (संघटित दल)** के कार्यों ने इसमें फूट के बीज भी बोए। इसके साक्ष्य सुला, मेरियस, पांपेई और गेयस जूलियस सीज़र जैसे सेनापतियों के उत्थान में देखने को मिलते हैं।

पैक्स रोमाना (रोमन शांति) काल शांति लाया लेकिन यह रोमन सेना की सर्वोच्चता के पतन का आरंभ था। क्षेत्रीय अति-विस्तार और सेना के अधिक खर्चों में भी कमी नहीं की जा सकती थी और इसने व्यवस्था को अपाहिज बनाना आरंभ कर दिया था। सैन्य दलों (लीजन) का कमज़ोर होना और भाड़े के सैनिकों की संख्या में वृद्धि ने एक बार फिर सेना की एकता की भावना में कमी लाई और यह इससे इसकी उच्च अति विशिष्टता में कमी आई।

4.5.1 अति-विस्तार और सैन्य अधिव्यय

रोमन सेना रोमन साम्राज्य के विस्तार और सुरक्षा की कुंजी थी और इसका नेतृत्व सम्राट द्वारा किया जाता था। गणतंत्र के पतन के बाद सेना के प्रधानों द्वारा सैनिकों का प्रयोग

राजनैतिक स्वार्थ की पूर्ति के लिए किया जाने लगा। उत्तर रोमन साम्राज्य में डायोक्लीशियन ने सेना को पुनःव्यवस्थित किया और सेना में अनिवार्य भर्ती को लागू किया। उत्तर रोमन साम्राज्य में बड़ी संख्या में बर्बर स्वयंसेवक सैनिक सेना में शामिल हो गए और इन बर्बर स्वयंसैनिकों ने अनेक सर्वोत्कृष्ट सैन्य दल उपलब्ध कराए। कांस्टेनटाइन के धर्म परिवर्तन के बाद और मेक्सेंटियस की मिलवियन ब्रिज पर हार से राज्य के ईसाईकरण के परिणामस्वरूप कांस्टेनटाइन के राज्यकाल में वृहत संस्थागत परिवर्तनों के कारण समस्त साम्राज्य के अभिजात वर्ग के स्वरूप में आमूल परिवर्तन हुए। ईसाई धर्म में नव-परिवर्तित बहुत से लोगों को प्रशासन में महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किया गया और बाद में उत्तर रोमन राज्य की प्रकृति पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा। नव धर्म परिवर्तित ईसाइयों में से अधिकतर पूर्व से नियुक्त किए गए थे और उनमें से कई कांस्टैंटिनोपल में विकसित दूसरी सीनेट के सदस्य बन गए। रोमन साम्राज्य में आधिकारिक धर्म के तौर पर ईसाई धर्म की स्थापना ने राज्य की धर्मनिरपेक्ष संरचना को आघात पहुंचाया। इसमें धार्मिक नौकरशाही एक नया आयाम था और कुछ ही समय में पादरी आधारित यह नौकरशाही रोमन राज्य की धर्मनिरपेक्ष नौकरशाही से कहीं अधिक शक्तिशाली हो गई।

सेना का नियंत्रण *मजिस्टर इक्विटम* के हाथ में था और उनके नीचे *लिमिटांसि* के **ड्यूस** और *कॉमिटेटनेस* के **कॉमिट** थे, सभी विशेष रूप से सैन्य शक्ति रखते थे। वेलेन्टीनियन प्रथम के राज्यकाल (364-375 सी ई) में किले और छावनियों का निर्माण तर्कसंगत युक्ति से किया गया था।

पांचवी शताब्दी के रोमन साहित्यकार, वेजेटियस के लेखों में लम्बे समय से कमज़ोर हो रही सेना में सुधार के लिए आग्रह किया गया है। अपने चरमोत्कर्ष पर रोमन साम्राज्य का विस्तार अटलांटिक महासागर से पूर्वी एशिया की फरात (Euphrater) नदी तक था। इतिहासकारों का मानना है कि इसका विशाल आकार और भव्यता भी इसके पतन के लिए उत्तरदायी था। इतने विस्तृत प्रदेश का प्रशासन चलाने में साम्राज्य को प्रशासनिक और भौतिक संसाधनों की भयानक कमी का सामना करना पड़ा। यहां तक कि उच्च स्तरीय राज मार्गों की व्यवस्था होने पर भी रोमवासी अपनी संपत्ति का प्रबंधन करने के लिए शीघ्रता से संपर्क स्थापित करने में असमर्थ हो रहे थे। रोम को अपनी सीमाओं को स्थानीय विद्रोहियों और बाहरी आक्रमणों से सुरक्षित रखने के लिए अपनी सैन्य टुकड़ियों और संसाधनों को व्यवस्थित करने में काफी संघर्ष करना पड़ा। दूसरी शताब्दी में शासक हेड्रियन (राज्यकाल 117-138 सी ई) को ब्रिटेन में सुरक्षा दीवार, जिसका नामकरण उसके नाम पर किया गया था, बनाने के लिए मजबूर होना पड़ा।

दूसरी शताब्दी सी ई के अंत तक और कोई क्षेत्रीय विस्तार नहीं हुआ। वास्तव में रोमन राज्य जैसे-जैसे अंत की ओर बढ़ा लड़खड़ाने लगा, इसने जर्मनिक कबीलों के प्रति सुरक्षात्मक नीति का प्रयोग किया और अपनी सैन्य शक्ति में वृद्धि करने का अनुसरण किया। आगस्टस की मृत्यु के समय रोमन सेना की स्थाई टुकड़ियों की संख्या 250,000 थी जो चौथी शताब्दी में बढ़कर 650,000 सैनिक हो गई। इतनी बड़ी सेना को व्यवस्थित करने के लिए राज्य ने कड़े आर्थिक कानून बनाए जो हालांकि, बड़े कुलीन वर्ग और दास स्वामियों के हित में थे लेकिन इसने लोगों के एक बड़े वर्ग को भी दूर कर दिया।

4.5.2 रोमन *लीजन* (सैन्य दलों) का कमज़ोर होना

एड्रियन गोल्ड्सवर्दी (2009), एक ब्रिटिश सैन्य इतिहासकार, का मत है कि पश्चिमी रोमन साम्राज्य का पतन किसी सामान्य अवनति के कारण नहीं हुआ था बल्कि रोमन *लीजन* (सैन्य दलों) के कमज़ोर होने से हुआ था। एक समय में रोम की सेना जो प्राचीन विश्व में सबकी ईर्ष्या का कारण था, अब अपने पतन के दौरान अवसरवादी गतिविधियों का एक समूह मात्र बनकर रह गई थी। अपने ही नागरिकों से सैनिकों को भर्ती करने में असमर्थ होने के कारण

डायोक्लीशियन और कांस्टेनटाइन जैसे शासकों ने राज्य की सेना की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विदेशी भाड़े के सैनिकों को भर्ती करना आरंभ कर दिया। *लीजन* (सैन्य दलों) की बनावट और प्रकृति के परिवर्तन में सर्वव्यापी आर्थिक पतन ने भी प्रभाव डाला। सर्वश्रेष्ठ टुकड़ियों को राजसी नियंत्रण केंद्रों के पास केंद्रीय क्षेत्रों में तैनात किया गया न कि सीमाओं पर, जो वैसे भी आसानी से भेद्यनीय थीं। चौथी शताब्दी सी ई तक, सरकार ने आर्थिक संकट से उभरने के लिए सैनिकों को वेतन, राशन और कपड़े आदि के रूप में देने का प्रयास किया लेकिन यह *लीजनों* (सैन्य दलों) को कमज़ोर होने से बचा नहीं सका।

4.5.3 भाड़े के सैनिकों का अंतः प्रवाह

सेना की सहायता के लिए विदेशी भाड़े के सैनिकों को लाने की नीति से रोमन *लीजन* (सैन्य दल) जर्मनिक गॉथ्स और अन्य कबीलों से भर गए। हालांकि ये भाग्यशाली सैनिक बर्बर योद्धा सिद्ध हुए, लेकिन इनकी साम्राज्य के प्रति कोई वफादारी भी नहीं थी और शक्ति की लालसा रखने वाले इनके सेनापति अक्सर अपने सैनिकों का प्रयोग रोमन राज्य के विरूद्ध करते थे।

378 सी ई में, मध्य एशिया के खानाबदोश हूणों ने पश्चिम एशिया और पूर्वी यूरोप पर आक्रमण किया, फलतः विसिगॉथ जनजाति की भिड़न्त वर्तमान तुर्की क्षेत्र में रोमवासियों से हुई। इन्होंने रोम पर दबाव डाला कि वह उनके लोगों को साम्राज्य की सीमा के भीतर बसने की अनुमति दे। रोम द्वारा भाड़े के सैनिकों को भर्ती करने की नीति से अंततः जर्मनिक सैनिकों की संख्या रोम की शाही सेना से अधिक हो गई। यह दुखद है कि कई बर्बर जिन्होंने रोम को लूटा था उन्हें रोमन *लीजन* (सैन्य दल) में कार्य करने के दौरान ही सैन्य प्रसिद्धि प्राप्त हुई थी। उदाहरण के तौर पर, विसिगॉथ सैनिकों ने साम्राज्य के विरूद्ध कार्य किया और रोमन नागरिकों को और रोम नगर को 410 सी ई मेंलूटा।

4.5.4 शासन के नियंत्रण में सैन्य भागीदारी की अविश्वसनीयता

पाँचवी शताब्दी सी ई में रोमन राज्य को एक और समस्या का सामना करना पड़ा, वह यह थी कि बल द्वारा शासन के लिए सेना अब बहुत अधिक विश्वसनीय नहीं रह गई थी। कई बार जब सैन्य बलों को विद्रोहियों को कुचलने और आक्रमण के लिए भेजा जाता था तो उनके द्वारा पहले ही उनके साथ लूट के माल को बांटने का अनुबंध तय कर लिया जाता था। पाँचवी शताब्दी सी ई के पूर्वाद्ध में लगातार विद्रोह होते रहे – इनमें सबसे अधिक सफल मध्य और पूर्वी फ्रांस का बुकांडे विद्रोह रहा जो छठी शताब्दी सी ई में स्पेन तक फैल गया था। बुकांडे के पास स्वतंत्र सैन्य नियंत्रण और कर प्रणाली थी और इसने रोम के साथ संबंधों को तोड़ने की वकालत भी की थी। वास्तविकता यह है कि बुकांडे भगोड़े किसानों द्वारा निरंतर पोषित किया जा रहा था, और सेना की इन्हें नियंत्रित करने में अयोग्यता या इनके अस्तित्व को बने रहने देना गहरी संरचनात्मक कमियों की ओर संकेत करता है। पहला, यह *लैटिफंडियों* और सर्वहारा वर्ग (*proletarii*) के मध्य लगातार संघर्ष की ओर संकेत देता है और दूसरा, राज्य और उसकी सेना, जो उसकी सहयोगी थी, उनके मध्य गहरी होती खाई थी।

बोध प्रश्न-1

1) *टेट्रार्की* के विशेष संदर्भ में डायोक्लीशियन के राज्यकाल के दौरान हुए विकास का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

2) उत्तर रोमन साम्राज्य में राजनैतिक अराजकता की ओर ले जाने वाले मुख्य घटक क्या थे? किन्हीं चार घटकों के बारे में बताइए।

....

....

....

....

....

3) उत्तर रोमन साम्राज्य में अधिव्यय और भाड़े के सैनिकों के अंतः प्रवाह ने सैन्य संस्था को किस प्रकार प्रभावित किया? व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

4.6 आर्थिक संकट

चौथी शताब्दी सी ई में रोमन राज्य की पुनःव्यवस्था से शहरी विकास में एक अस्थाई विकास हुआ और सोने के सिक्के जारी कर मुद्रा में स्थायित्व को फिर से बहाल किया गया। लेकिन दोनों ही प्रतिलाभ सीमित थे। शहरी विकास मुख्यतः नई नियुक्त की गई सेना और प्रशासनिक क्षेत्रों में केंद्रित था। शासकों ने इस विकास को नियमित किया और उत्तर रोमन साम्राज्य में मिलान, सार्डिका और सर्वाधिक महत्वपूर्ण कांस्टैंटिनोपल प्रमुख शहरी केंद्र बन गये। पैरी एंडरसन (1974) के अनुसार, उत्तर रोमन साम्राज्य में सभी प्रांतों में शहरी व्यापार और उद्योग का तेज़ी से पतन हो रहा था। उत्तर रोमन साम्राज्य में राज्य ने कर वृद्धि की नीति का अनुसरण किया। यह नीति पूर्व में सफल रही लेकिन साम्राज्य के पश्चिमी भाग में इसने संकट उत्पन्न किया।

सेना के प्रसार और प्रबंधन के लिए अधिक कर लागू करने की आवश्यकता थी। अधिक धन एकत्र करने और तीव्रता से बढ़ते हुए खर्चों को संतुलित करने के लिए पूर्ववर्ती शुद्ध चांदी के सिक्कों में कम मूल्य की धातु की मिलावट की गई, जिससे मुद्रास्फीति को बढ़ावा मिला। सिक्कों की ढलाई में लगातार गिरावट ने आर्थिक संकट और अतिमुद्रास्फीति उत्पन्न कर दी। सेना का बढ़ता हुआ व्यय कृषि क्षेत्र की कमर तोड़ने का मुख्य कारण सिद्ध हुआ। करों में अत्यधिक वृद्धि और कठोर कर एकत्रण ने अनेक किसानों को उनके खेत त्यागने के लिए मजबूर कर दिया। भूमि परती पड़ी रह गई और शहरों की ओर पलायन ने, जिसने शहरी निर्धन वर्ग में वृद्धि की, ने शहरी केंद्रों पर अत्यधिक भार डाला जो अक्सर इस बढ़ती हुई जनसंख्या को पोषित करने में अक्षम थे।

4.6.1 पतनोन्मुख अर्थव्यवस्था, उच्च मुद्रास्फीति और प्रवासी भूस्वामी

हालांकि रोम जिस तरह बाहरी ताकतों के आक्रमणों से त्रस्त था, उसके साथ ही वह

आंतरिक आर्थिक संकटों से भी जूझ रहा था। लगातार होने वाले युद्ध, दमनकारी कर और मुद्रास्फीति ने अमीर और गरीब के बीच की खाई को और बढ़ा दिया था। रोम वासियों की कोई बजट प्रणाली नहीं थी और इस प्रकार उन्होंने अपने उपलब्ध संसाधनों का अपव्यय किया। 'स्थिति और दयनीय हो गई जब तीसरी और चौथी शताब्दी में नवीन विजित क्षेत्रों ने संसाधनों अथवा लूट के रूप में शायद ही कोई आर्थिक संसाधन जुटाये। हालांकि गणतंत्र के उत्तरार्द्ध में इटली में असीम मात्रा में धन की बरसात हुई जिसका बाद में उपयोग साम्राज्य में खरीद-फरोख्त और परियोजनाओं को पूरा करने के लिए किया गया था। अंततः एक अस्थिर और लापरवाह सरकार, शाही ऋणों से उपजे खर्चों और प्राप्तियों को आधुनिक उपायों का सहारा लेकर संतुलित नहीं कर सकी। अतः सरकार ने उस अर्थव्यवस्था से अधिक मात्रा में करों को वसूल करना जारी रखा और बल का प्रयोग करना पड़ा। यह अर्थव्यवस्था अगतिशील थी और वास्तव में संभवतः पतन की ओर जा रही थी' (www.cupola.gettysburg.edu/cgi/viewcontent.cgi? article=1011 &context= eontem porary-sec1)।

साम्राज्य की अर्थव्यवस्था कुछ नया उत्पादन करने के बजाए मौजूदा संसाधनों के दोहन पर आधारित अथवा लूट की अर्थव्यवस्था (raubwirtschaft) थी। आरनॉल्ड जे. टोयन्बी (1965) जैसे इतिहासकार रोमन साम्राज्य को पूर्णरूप से सड़ी हुआ शोषण करने वाली व्यवस्था के रूप में वर्गीकृत करते हैं जिसमें तर्कसंगत कर नीतियों की कमी थी। उनका तर्क है कि साम्राज्य कभी भी इससे अधिक लम्बे समय तक जीवित नहीं रह सकता था जितना वह बिना मूल आर्थिक सुधारों के रहा जिन्हें कोई भी शासक लागू नहीं कर सका।

शोषक राजस्व एकत्रण प्रणाली और अनुपस्थित भूस्वामित्व की प्रथा ने पहले से ही आर्थिक संकट का सामना कर रहे उत्तर रोमन साम्राज्य का आर्थिक संकट और अधिक बढ़ा दिया। रोमन राज्य की कार्यप्रणाली के विकास और संवर्धन के लिए डायोक्लीशियन और कांस्टेनटाइन ने अधिक केंद्रीकरण और अत्यधिक करारोपण की नीति को अपनाया। यह नीति पूर्व मे तो सफल रही लेकिन पश्चिम में इसने संकटों को और बढ़ा दिया। कुलीनतंत्र ने बढ़ते हुए करों का भार किसानों, *कोलोनी,* (पट्टेदार कृषक) शिल्पकारों और छोटे व्यापारियों पर डाल दिया, जिसने अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों पर विपरीत प्रभाव डाला।

स्थानीय स्तर पर, कर एकत्रण ***डिक्युरिआनों*** (***decuriones***) या ***क्युरियलों*** (***curiales***) के हाथों में था, जो कि स्थानीय कुलीन वर्ग का हिस्सा थे और समय के साथ ये वंशानुगत समूह बन गए। इन्होंने विशेषाधिकार प्राप्त वर्गों से सांठ-गांठ करके अपनी भूमि का न्यूनतम कर मूल्यांकन कराया ताकि वह करों से बच सके। वहीं दूसरी ओर छोटे भूस्वामियों की भूमि का अक्सर अधिक मूल्यांकन किया जाता था। अनुपस्थित प्रवासी भूस्वामियों ने कम विशेषाधिकार वाले वर्ग से अवैध करों को वसूल कर अपने करों की देयता को उनके ऊपर डाला। ए.एच.एम. जोन्स (1964) का मत है कि पश्चिमी रोमन साम्राज्य में भ्रष्ट और अयोग्य अभिजात वर्ग प्रशासनिक और राजस्व के मामलों में राज्य की अध्यक्षता कर रहा था। जब ये शासक की इच्छा को अपने अनुसार सुनिश्चित नहीं कर सके तो वे असहयोग करने लगे और वापस अपनी सत्ता के आधार ग्रामीण क्षेत्रों में चले गए।

4.6.2 निर्वाह का संकट

साम्राज्य का धीरे-धीरे ग्रामीणीकरण हो रहा था। लेकिन ग्रामीण परिवेशों में दूरगामी परिवर्तन हो रहे थे और नई उत्पादन प्रणाली प्रचलन में आ रही थी। प्राचीन काल के उत्पादन की दास पद्धति राजनैतिक और सैन्य प्रसार की व्यवस्था से जुड़ी हुई थी। उत्तर रोमन साम्राज्य में अब शाही सीमाओं का और अधिक विस्तार रूक गया था। इस प्रकार भूस्वमियों ने दासों को भूमि के आश्रित पट्टेदारों में परिवर्तित कर दिया। राज्य द्वारा ज़बरदस्ती राजस्व की वसूली

से बचने के लिए छोटे भूधारकों के गांव, और स्वतंत्र पट्टेदारों ने राज्य के करों के बोझ और कॉन्सक्रिप्शन (अनिवार्य सैन्य सेवा) से सुरक्षा के लिए भूअधिपतियों (लॉर्ड) के हाथों अपनी स्वतंत्रता खो दी और उनकी आर्थिक स्थिति भूतपूर्व दासों के जैसी हो गई। इस तरह दूसरी शताब्दी सी ई से स्वतंत्र किसानों ने अपनी स्वतंत्र स्थिति को खोना आरंभ कर दिया और वे अधिपतियों (लॉर्ड) की भूमि से बंध गए। उत्तर रोमन साम्राज्य के शासकों– डायोक्लीशियन से लेकर वेलेंस और आर्केशियस तक – ने यह घोषित किया कि कर एकत्रण के लिए पट्टेदार अपने गांवों (भूस्वामियों) से बंधे हुए हैं। तत्पश्चात् चौथी और पांचवी शताब्दी में आश्रित पट्टेदारों (***कोलोनी***) पर अधिपतियों की न्यायिक शक्ति बढ़ गई। लेकिन इन परिवर्तनों से भी दासप्रथा समाप्त नहीं हुई और उत्तर रोमन साम्राज्य में राज्य की संरचना अभी भी दासप्रथा पर आधारित थी और यह स्थिति पश्चिमी रोमन साम्राज्य के अंत तक लगातार बनी रही। शहरी शिल्प उत्पादन में दासों की भूमिका में गिरावट आने लगी, लेकिन फिर भी वे घरेलू काम-काज के लिए अभिजात वर्ग के लिए रीढ़ की हड्डी बने रहे।

उत्तर रोमन साम्राज्य की संपूर्ण आर्थिक व्यवस्था आश्रित ग्रामीण उत्पादक, भूअधिपति और राज्य के संबंधों पर आधारित थी। उत्तर रोमन साम्राज्य में सेना और नौकरशाही तंत्र का विकास बहुत विस्तृत हो गया और उत्तर रोमन साम्राज्य द्वारा अपने विस्तृत राज्य तंत्र की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अनेक प्रकार के कर लागू किए गए। नागरिकों को करों का भुगतान अवैतनिक सैन्य सेवा के रूप में करना पड़ रहा था और उन्हें युद्ध के लिए अपने हथियार स्वयं खरीदने पड़ते थे। मार्क्स के अनुसार, 'अभिजात वर्ग ने युद्धों द्वारा सर्वहारा वर्ग को सैनिक के तौर पर कार्य करने के लिए विवश करके नष्ट कर दिया... और उन्हें दरिद्र बना दिया'। सामान्य नागरिक को राज्य के लिए अन्य प्रकार की अनिवार्य सेवाएं भी देनी पड़ती थीं। इन सेवाओं को अंगेरिया के नाम से जाना जाता था। इस प्रकार के कार्यों के लिए श्रमिक वर्ग को आधिकारिक प्रयोजनों जैसे भार उठाना, इमारतों का निर्माण कार्य और मार्गों के निर्माण के लिए बिना मज़दूरी के रखा जाता था।

इतिहासकारों में सामान्य एकमतता है कि तीसरी शताब्दी से भूमि परित्याग की प्रवृत्ति के बढ़ने, गृह युद्धों, अकालों और बार-बार फैलने वाली प्लेग महामारी के कारण जन आबादी की बहुत बड़ी संख्या जीवन निर्वाह के संकट का सामना कर रही थी। आबादी में कमी और जनसंख्या के पलायन ने कृषि श्रमिकों की संख्या में और अधिक कमी पैदा की।

जहां सीनेटर और उनके जैसे वर्गों के लोगों को कर में छूट का विशेषाधिकार प्राप्त था, वही बड़े भूअधिपति अपनी भूमि का मूल्यांकन कम कराने में सफल रहे। छोटे भूस्वामियों की भूमि का मूल्यांकन अक्सर अधिक किया जाता था और उन्हें भारी कर वहन करना पड़ता था। यहां तक कि बड़े भूअधिपतियों की अधिकतर भूमि सीमांत क्षेत्र में थी, जो कि कर के अनुपात के हिसाब से आय के साधन के बजाय बोझ बन गई। अतः भूअधिपतियों ने इस बढ़े हुए कर के दबाव को लगान की वसूली में वृद्धि कर उसका बोझ किसानों के ऊपर डाल दिया। कर के बोझ के साथ-साथ सामुहिक-दासप्रथा ने उत्पादन की संपूर्ण प्रक्रिया को बाधित किया और परिणामस्वरूप, जीवन निर्वाह अपने आप में एक संघर्ष बन गया।

4.6.3 शिल्प उत्पादन और लम्बी-दूरी के व्यापार का पतन

साम्राज्य का निर्माण और रोमनीकरण तीन स्तरों पर किया गया था। इसमें बेहतर संचार प्रणाली, अनेक इटैलियन फसलों की खेती, और अतिरिक्त कृषि उत्पादों (अनाज, अंगूर और तेल) को यूरोप के अन्य भागों में निर्यात करना सम्मिलित था। इन घटनाक्रमों के साथ ही रोमन वस्तुओं की मांग में गिरावट आई, विशेषकर फ्रांस में। रोम से आयात की गई वस्तुएं इटली में बनाई गई वस्तुओं से सस्ती थीं। रोस्टोवज़ेफ (1926) के अनुसार, अधिक करारोपण के भार और दासों की ऊंची कीमतों ने शिल्प उत्पादन में गिरावट पैदा की और प्रतिस्पर्धा

के कारण वस्तुओं की कीमतों में गिरावट आने लगी। अतः स्थानीय उत्पादन का संगठन अब अधिक लाभकारी नहीं रह गया था।

लगभग इसी समय पर अर्थव्यवस्था ने व्यापार में पतन का अनुभव किया, विशेषकर लम्बी दूरी के व्यापार में। रोमन समाज की संरचना बहुत अधिक शोषण करने वाली थी और तीसरी शताब्दी सी ई में सीनेटोरियल कुलीन वर्ग की समृद्धि उनके पूर्वजों की तुलना में पहली शताब्दी सी ई से लगभग पांच गुना अधिक थी। उनके दिखावटी उपभोग और आडंबरपूर्ण जीवनशैली ने विलासपूर्ण वस्तुओं के व्यापार को, विशेषकर पूर्व से, बनाए रखा था। रोम ने भूमध्यसागरीय जगत के एकीकरण को हासिल किया और व्यापक समुद्री व्यापार समुद्रतटों के किनारे जारी रहा। रोम में ओस्तिया और पोर्टस बंदरगाह के रूप में कार्य कर रहे थे और उनकी समृद्धि और भाग्य नगर से जुड़ा हुआ था। हालांकि, जैसे ही राजनैतिक अव्यवस्था और आर्थिक संकट ने रोम को चोट पहुंचाई, लम्बी दूरी के व्यापार को झटका लगा। और हालांकि रोम का पतन हो रहा था, एलेक्ज़ेंड्रिया और एंटिओक समृद्धि की ओर बढ़ते रहे और कांस्टैंटिनोपल चौथी शताब्दी सी ई में प्रसिद्धि के शिखर पर पहुंच गया।

4.6.4 मौद्रिक दबाव में वृद्धि, वित्तीय संकट और नैसर्गिक अर्थव्यवस्था का पुनरागमन

दूसरी शताब्दी के बाद के काल में सैन्य अराजकता फैली, साथ में तीसरी शताब्दी से अनेक विद्रोह भी शुरू हो जाते हैं। राजनैतिक अराजकता का यह काल अनेक मिथ्या दावा करने वालों द्वारा अपने अनवरत युद्धों के खर्चे को पूरा करने के लिए मनमानी कर उगाही के थोपे जाने का साक्षी है। वर्ष 238 सी ई में सात अलग-अलग शासकों ने सिक्के जारी किए थे और अंततः रोम और उसके केंद्रीय करारोपण का विरोध कर रहे आर्थिक रूप से शक्तिशाली प्रांतों में मौद्रिक अराजकता हुई। इस सबका संयुक्त प्रभाव प्रत्यक्ष उत्पादकों पर आर्थिक दबाव में वृद्धि, जिससे कृषि-क्रम पर प्रभाव पड़ा और जिसके परिणामस्वरूप संपूर्ण उत्पादन प्रक्रिया अव्यवस्था की ओर मुड़ गई।

राज्य के बढ़ते हुए दबाव ने मौद्रिक संकट पैदा किया जिसने मुद्रा में अभूतपूर्व अस्थिरता को बढ़ावा दिया। दूसरी शताब्दी से राज्य का युद्धों के लिए अधिव्यय और तीसरी शताब्दी में अनेक सैन्य विफलताओं ने मुद्रास्फीति की गति को तेज़ किया। रोमन राज्य ने अपना राजस्व सोने और चांदी में एकत्र किया, न कि तांबे और कांस्य में। जैसे-जैसे मुद्रास्फीति बढ़ती रही, निम्न स्तरीय धातुओं जैसे तांबा और कांस्य की मात्रा में वृद्धि होती रही। कांस्टेनटाइन के राज्य काल में सोने की मुद्रा स्थिर हो गई थी लेकिन तांबे की मुद्रा अब भी अस्थिर बनी रही। इस मौद्रिक द्वैतवाद के कारण मिलावटी मुद्रा के द्वारा अच्छी मुद्रा प्रचलन से बाहर कर दी गई, और सोने-चांदी के सिक्कों को व्यापार और वाणिज्य में प्रयोग करने की बजाए घरों में उनका संचय किया जाने लगा। व्यापार का लेन-देन प्रभावित हुआ और सिक्कों के नवीनीकरण का नतीजा आम तौर पर और अधिक संचय के रूप में हुआ।

साम्राज्य के अंत की ओर मुद्रास्फीति की दर अत्यधिक थी। इस काल में वहां आर्थिक और जनसांख्यिकीय संकट था। डायोक्लीशियन के सुधार प्रयासों के बावजूद वहां बहुत अधिक मुद्रास्फीति थी जैसा कि, एडिक्ट आफ प्राईसेस के नाम से जाने जानी वाली, कीमतें स्थिर करने के आदेश पत्र से पता चलता है। मिस्र में 301 सी ई में एक सोलिडस (सोने की मुद्रा) 4000 ड्रेक्मा के मूल्य के बराबर थी और 4000 सी ई में यह 130 मिलियन ड्रेक्मा के बराबर हो गई। इस अवमूल्यन ने संकट को बढ़ाया जिसकी छाया कीमतों में वृद्धि के रूप में दिखाई देती है, जिसने मौद्रिक अर्थव्यवस्था को छोड़कर वस्तु विनिमय अर्थव्यवस्था की ओर वापस मुड़ने के लिए बाध्य किया। धीरे-धीरे बाज़ार ने छः ड्रेक्मा के बराबर गेहूँ की एक मात्रा निर्धारित की और अन्य ऐसे रूपान्तरणों ने पूरी मौद्रिक प्रचलन प्रक्रिया को अस्थिर कर दिया।

आर्थिक अव्यवस्था और राज्य के बढ़ते हुए खर्चों से राज्य को असामान्य दबाव का सामना करना पड़ा। वस्तुओं के रूप में कर – गेंहूँ और जैतून का तेल – लगाए जाने लगे और यहां तक कि सैनिकों को वेतन भी इसी रूप में दिया जाने लगा। निश्चित रूप में यह 'प्राकृतिक अर्थव्यवस्था' की ओर वापस जाना था। यद्यपि उच्च अधिकारियों और सेनापतियों को अब भी नकद में वेतन दिया जा रहा था, मुद्रास्फीति ने इनकी जीवनशैली को प्रभावित किया। अनियंत्रित मुद्रास्फीति उद्योग और शिल्प उत्पादन को वास्तव में पतन की ओर ले गई। आक्रमणकारी सेना को वेतन देने, और रोम से रेशम मार्ग (सिल्क रूट; Silk Route) और स्पाईस रूट (Spice Route) के द्वारा चीन और भारत से पूर्वी व्यापार के लिए सोने के प्रवाह को बनाए रखने के लिए धन की आवश्यकता ने मौद्रिक समस्या को और अधिक जटिल बना दिया। अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्र गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त हुए और इटली का महत्व जल्द ही वाणिज्य के केंद्र के रूप में समाप्त हो गया।

4.7 सामाजिक उथल-पुथल

अमीर और गरीब को बांटने वाली विभाजन रेखा, जो सामाजिक संरचना का आधार है, समय के साथ स्थिर हो गयी और अन्य समस्याओं ने रोमन समाज में सामाजिक तनाव और अलगाव को बढ़ा दिया। आरंभ की समस्याएं सामाजिक न्याय के साथ-साथ समावेशन और नागरिकता प्रदान करना, के साथ साम्राज्य का विस्तार सुलझाए न जा सकने वाले विवाद रोम तक ले आया। कुलीन वर्ग का दिखावटी उपभोग उन्हें आम जन, जिनके शोषण पर उनकी जीवनशैली निर्भर थी, से अलग करता था। तीसरी शताब्दी सी ई से जनसंख्या में गिरावट और सेना और नौकरशाही में बढ़ते हुए पदों के कारण निम्नवर्ग के लिए राज्य की जटिल संरचना को पोषित करना मुश्किल हो गया और दंगे और लूट आम हो गए थे। यह सब घटनाक्रम एक साथ चल रहा था, जिसके परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार फैला, सत्ता का दुरूपयोग शुरू हुआ और रोम की नागरिक भावना लुप्त होने लगी। ईसाई धर्म जो एक उत्पीड़ित धर्म था अब एक प्रमुख धर्म के रूप में उभरा और इसका धार्मिक संगठन अक्सर सहयोजित होकर राज्य के सदृश्य हो गया।

रोमन समाज को परिभाषित करने वाला स्पष्ट विभाजन आरंभ से प्रत्येक क्रमिक चरण में पुनर्निर्मित हुआ। उत्तर रोमन साम्राज्य के समय संपन्न वर्ग अश्वरोही वर्ग (Equestrian) था, जो साम्राज्य के सभी भागों में सामाजिक प्रतिष्ठा और आर्थिक समृद्धि का आनंद उठा रहा था। प्रांतों में भी पुरुषों को रोमन नागरिकता और अश्वरोही दर्जा प्रदान करना प्रथा बन गई थी और इसके बदले में वे राज्य के वफादार बन जाते थे, उन्हें नागरिक और सैन्य प्रशासन में महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किया जाता था। अन्य सामाजिक समूह जिनका उच्च सामाजिक दर्जा था उनमें भूस्वामी, दुकानदार, व्यापारी, व्यवसायी और उच्च-पदासीन अधिकारी शामिल थे। इस अवधि के दौरान पूर्व में उच्च नौकरशाही एक नए वंशानुगत अभिजात वर्ग के तौर पर उभरी।

निम्न वर्ग के लोग उच्च वर्ग को सेवा प्रदान करने वाले बने रहे जैसे किसान, कुम्हार, अध्यापक, मनोरंजन करने वाले, निशुल्क श्रमिक और वेश्याएं भी। कुशल कारीगर जैसे कि धातु-कर्मी, नानबाई और ऊन का काम करने वाले व्यापार संघ या *कॉलेजिया* में संगठित थे, जिसने आर्थिक, सामाजिक और कभी-कभी अर्ध-राजनैतिक भूमिका भी निभाई। इसके अतिरिक्त, वहां दासप्रथा थी जो स्वयं आंतरिक विरोधाभास का सामना करते हुए अर्ध-दासप्रथा (*कोलोनेट*) में परिवर्तित हो रही थी। अशांति के काल ने पश्चिमी रोमन साम्राज्य के पतन को बढ़ावा देते हुए वर्ग विभाजन को तीव्र कर दिया और जैसे ही सरकार आर्थिक बर्बादी को नियंत्रित करने के लिए अधिक निरंकुश हुई, व्यवसाय और पद वंशानुगत बन गए।

इस प्रकार, आर्थिक संकट का संबंध संपदा के असमान वितरण से था। जैसे ही निचले वर्ग के किसानों का दर्जा समाप्त हुआ, उनकी स्थिति तेज़ी से बढ़ते हुए समूह *कोलोनी* अथवा निर्भर खेतीहरों जैसी हो गई। किसान भूअधिपतियों के पूरी तरह अधीन हो गए और अब कानूनी रूप से स्वतंत्र किसान और दास के बीच मुश्किल से ही कोई अंतर रह गया था। किसान और दास एकसमान गरीब वर्ग़ में मिल गए और दूसरी शताब्दी से अनेक किसान विद्रोह हुए, जिन्होंने किसानों के तौर पर नहीं बल्कि बेदखल के रूप में दासों के साथ हाथ मिलाकर विद्रोह किया। यह बात ध्यान देने योग्य है कि रोमन साम्राज्य का गौरव कृषकों पर लगाए जाने वाले भूमि कर पर आधारित था। मेटर्नस, जिसने 186 सी ई में सेना को छोड़ दिया था, ने स्पेन और फ्रांस में बड़े स्तर पर विद्रोह किया। स्रोतों में इस विद्रोह को इस प्रकार वर्णित किया गया है कि, 'यह असंख्य बदमाशों, भगोड़े दासों और निराश पुरूषों का जमावड़ा था और जो अन्य सभी बगावतों की तरह भारी सैन्य दमन की नियति को प्राप्त हुए'।

4.7.1 जनसंख्या में गिरावट

पहले से ही क्षीण होती हुई रोमन जनसंख्या को जर्मेनिक आक्रमणकारियों ने और भी क्षीण कर दिया। प्लेग के कारण जनसंख्या में गिरावट और कुल मिलाकर जन्मदर में गिरावट से जनसंख्या में कमी होती रही जो कि सेना के आकार को बढ़ाने में बाधा डाल रही थी। दूसरी और तीसरी शताब्दियों के दौरान दो भिन्न प्लेगों ने लाखों रोम वासियों को खत्म कर दिया। पहला, एंटोनिन प्लेग का प्रकोप 165 सी ई से लगभग 186 सी ई तक रहा जिसमें लगभग 50 लाख रोमवासी मारे गए। ऐसा विचार है कि सम्राट मार्कस ऑरेलियस की मृत्यु प्लेग के कारण हुई थी, इसलिए इस प्लेग का नाम एंटोनिन उसके परिवारिक नाम एंटोनियस के ऊपर रखा गया था। फिर 251सी ई से लगभग 266 सी ई तक चेचक का आक्रमण हुआ जिसे साइप्रियन प्लेग कहा गया जिससे हज़ारों लोगों की मौत हो गई। बीमारियों ने सैनिकों के साथ-साथ किसानों को भी बड़ी संख्या में कम किया (बंडी, केथरीन 2011:2)।

साम्राज्य में जनसंख्या ह्रास के और भी कारण बड़े स्तर पर मौजूद थे जैसे दासप्रथा की मौजूदगी और उसका विस्तार जिसमें दासों को प्रजनन की प्रक्रिया का अधिकार नहीं था। जैसे-जैसे साम्राज्य अंत की दिशा की ओर मुड़ा, जनसंख्या प्रांतों की ओर स्थानांतरित होती गई और करारोपण के दबाव और साहूकारों से धन बचाने के लिए भी गांवों से शहरों की ओर आंतरिक प्रवास होने लगा। इस सामाजिक आर्थिक कारणों के साथ-साथ अन्य मुद्दा वीरान होते हुए खेतों से था जो समुद्र के पास स्थित क्षीणप्राय दलदली क्षेत्रों के विकास और यहाँ मलेरिया के प्रकोप के फैलने से संबंधित था।

साम्राज्य की प्रादेशिक सीमा के विस्तार और उससे संबंधित सैनिकों और नौकरों की संख्या में वृद्धि से बड़ी संख्या में लोग उत्पादन की प्रक्रिया से बाहर हो गए। अनुत्पादी लोग जैसे सीनेटर, नौकरशाह, सैनिक और यहां तक कि पादरी भी – क्योंकि राज्य भी चर्च से जुड़ गया था – इन सबकी संख्या में वृद्धि होने से राजकोष पर लगातार दबाव और किसानों से अधिक राजस्व की मांग बढ़ी। ए.एच.एम. जोन्स का मानना है कि व्यापार और वाणिज्य के पतन पर अधिक बल नहीं देना चाहिए, बल्कि यह अन्य सभी घटकों सहित उत्पादन की अव्यवस्था और इसके साथ ही अनुत्पादी वर्गों का रख-रखाव था जो रोम को धीरे-धीरे पतन के गर्त तक ले गया। रोम में 200,000 शहरी गरीबों और कांस्टैंटिनोपल में 80,000 लोगों को निःशुल्क गेहूँ बांटना भी राज्य के लिए उस समय एक दुविधा का विषय बना हुआ था, विशेष तौर पर उस समय जब उत्पादन में निष्क्रियता और गिरावट हो रही थी। पश्चिमी साम्राज्य की राजधानी रोम की परजीवी प्रकृति ने राज्य के संसाधनों को छीनने वाले अनुत्पादी लोगों की समस्या को पैदा किया जो बदले में नगण्य संसाधन प्रदान कर रहे थे।

4.7.2 जन भावना में गिरावट

चौथी शताब्दी सी ई तक रोमन राज्य समृद्ध जनसंख्या से पहचाना जाता रहा था। जैसा कि उत्पादन की दास पद्धति की मशीनरी पूर्ण रूप से नौकरशाही नियंत्रण पर निर्भर थी, अत्यधिक नौकरशाहीकरण ने भ्रष्टाचार, सत्ता का दुरूपयोग और राजस्व के दुरूपयोग को बढ़ावा दिया। तीसरी शताब्दी से साम्राज्य की इस सार्वजनिक भावना में गिरावट स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

अन्य संबंधित कारण चर्चों का तीव्र विकास था – राज्य के प्रति इसकी उदासीनता और मोक्ष का उपदेश। एडवर्ड गिब्बन ने सर्वप्रथम यह तर्क दिया कि रोम का पतन ईसाई धर्म के प्रसार के साथ परस्परानुबंधित था, और कुछ का तर्क है कि साम्राज्य के पतन में इस नए धर्म के उदय ने योगदान दिया। 313 सी ई में मिलान के एडिक्ट (Edict of Milan) में ईसाई धर्म को वैध कर दिया गया और 380 सी ई में ईसाई धर्म राज्य का आधिकारिक धर्म बन गया। इन निर्णयों ने शताब्दियों के उत्पीड़न को समाप्त कर दिया था, लेकिन इन्होंने शायद पारंपरिक रोमन साम्राज्य के सामाजिक मूल्यों को भी नष्ट कर दिया था। ईसाई धर्म ने रोम के बहुदेववादी धर्म, जिसमें शासक का दर्जा दैवीय था और उसके प्रति निश्चित सम्मान और वफादारी की आशा की गई थी, को विस्थापित कर दिया। इसने राज्य के गौरव की बजाय एक ही देवता को महत्व दिए जाने की ओर ध्यान केंद्रित किया, और अलौकिक मुक्ति की इच्छा पर बल दिया।

इसी बीच, पादरी और चर्च के अन्य अधिकारियों ने राजनैतिक मामलों में तेज़ी से भूमिका निभानी शुरू कर दी जिससे आगे चलकर प्रशासन में कठिनाइयां पैदा हुईं। गिब्बन और उनके समर्थकों ने व्यापक रूप से इस सिद्धांत का समर्थन किया, लेकिन इसका व्यापक खंडन हुआ। हालांकि ईसाई धर्म के प्रसार ने संभवतः रोमन नागरिकता गुणों पर नियंत्रण में थोड़ी बहुत भूमिका अदा की, लेकिन अधिकतर विद्वान आज यह मानते हैं कि ईसाई धर्म का प्रभाव प्रशासनिक, आर्थिक और सैन्य कारणों के प्रभावों की तुलना में बहुत कम था।

4.7.3 ब्रिगैंडेज़ (डकैती, लूटमार)

सामाजिक विद्रोह 390 के दशक में अपने चरम पर पहुंच गए थे। किसानों के विद्रोहों के अलावा, उत्तर रोमन साम्राज्य में बड़े स्तर पर डकैती आम बात थी। यह सामाजिक असंतुलन और विरोध की एक प्रभावशाली अभिव्यक्ति थी। बुल्ला की ब्रिगैंडेज़ (205-207 सी ई) विकृत सामाजिक विरोध का एक विशिष्ट उदाहरण था, जहां सामाजिक न्याय पाने के लिए भागे हुए दास और शाही स्वतंत्र दास बड़ी संख्या में सामाजिक न्याय की आशा में अर्ध-औपचारिक सैन्य दल के रूप में एकत्रित हुए। ये स्थानीय समुदायों के सहयोग से फले-फूले और वर्षों तक यह पकड़े जाने से बचे रहे। विद्रोह का एक और अन्य तरीका यह भी था कि जनसमुदाय का आक्रमणकारियों से बचने के लिए एक साथ पलायन करना, और यहां तक कि चौथी शताब्दी से किसानों ने अपने शोषण और दुखों के मुक्तिदाता के रूप में आक्रमणकारियों का स्वागत किया। इन्होंने इनका अनुकरण करने के प्रयास किए। 285-286 सी ई में, ग्रामीण आबादी ने राजतंत्र के विरूद्ध विद्रोह किया था। बगाडे (Bagaudae; भगोड़े किसान ब्रिगैंड्स) विद्रोह की याद आने वाले अनेक वर्षों तक किसानों में सजीव रूप में जीवित रही। 407 सी ई में 'बगाडे' के नाम से एक और अन्य शक्तिशाली विद्रोह हुआ।

4.7.4 अभिजात वर्ग का ग्रामीण क्षेत्र की ओर विस्थापन

जैसा कि साम्राज्य विभिन्न तनावों और आपदाओं के प्रभावों का सामना कर रहा था, शाही नगरों और शहरों को भी कठिन समय से गुजरना पड़ा। रोमन कुलीन वर्ग – अभिजात वर्ग (Paticians), विशिष्ट जन (Optimates), घुड़सवार सेना (Equites) और घुड़सवार (Equestrians)

आदि विभिन्न वर्ग के रूप में पहचाने जाते थे – जिन्होंने अपनी संपत्ति को ग्रामीण परिवेश और कृषि से प्राप्त की थी, वे शहरों में निवास करते थे, और शहर की विलासिता और मनोरंजन का आनंद उठाते थे। शहर प्रशासनिक और आर्थिक गतिविधियों के केंद्र भी थे, विशेषकर व्यापार और विशिष्ट शिल्प उत्पादन के। अभिजात वर्ग की समृद्धि, प्रतिष्ठा और शक्ति की अभिव्यक्ति उनकी उत्कृष्ट उपभोग (conspicuous consumption) की जीवनशैली में अभिव्यक्त होता था जिसका आनंद अमीर वर्ग उठा रहा था और यह उन वस्तुओं और सेवाओं द्वारा संपन्न था जिनकी आपूर्ति व्यापारियों और शिल्पकारों द्वारा की जाती थी। रोमन साम्राज्य के अंत के दशकों में लम्बी दूरी का व्यापार और शिल्प उत्पादन नष्ट हो गए थे। बार-बार होने वाले आक्रमण या आक्रमणों के डर ने असुरक्षा पैदा की और जब शासकों की चुनाव प्रक्रिया को नियंत्रित करने में यह अभिजात वर्ग अयोग्य हो गया तो यह अभिजात वर्ग अपने ग्रामीण परिवेश में चला गया जहां वे निर्विरोध रूप से लॉर्ड, मास्टर (स्वामी) और संरक्षक थे। इस प्रवृत्ति ने शहरों को बाहरी आक्रमणों के खतरों के प्रति असुरक्षित बना दिया और समाज और अर्थव्यवस्था में ग्रामीणीकरण का प्रारंभ हुआ।

बोध प्रश्न-2

1) उत्तर रोमन साम्राज्य में अर्थव्यवस्था की स्थिति पर चर्चा कीजिए। किन कारणों ने जीवन निर्वाह का संकट उत्पन्न किया?

....

....

....

....

....

2) रोमन समाज में निम्न वर्गों और दासों की स्थिति ने किस हद तक रोमन साम्राज्य के पतन में योगदान दिया?

....

....

....

....

....

3) उत्तर रोमन साम्राज्य में समाज और अर्थव्यवस्था का ग्रामीणीकरण क्यों हुआ? कारण बताइए।

....

....

....

....

....

4.8 दास आधारित उत्पादन पद्धति में संकट

ऐतिहासिक भौतिकवाद[1](Historical Materialism), का उत्पादन प्रणाली में परिवर्तन का सिद्धांत जिसने समग्र सामाजिक और सभ्यता के परिवर्तनों को उत्प्रेरित किया, वह इस तथ्य का पक्ष लेता है कि यह दासप्रथा उत्पादन प्रणाली का संकट ही था जिसने रोमन साम्राज्य के पतन को बढ़ावा दिया। ये विद्वान अपने दृष्टिकोण में एकमत थे कि प्राचीन रोम एक दास समाज था, न कि दासों का समाज, और दासप्रथा इसके विभिन्न तथ्यों को रेखांकित करती थी। साम्राज्य ने निर्दयी बल से शक्ति प्राप्त की थी और हज़ारों लोगों को युद्ध बंदी बनाकर उत्पादन के मात्र एक साधन (*इंस्ट्रूमेंटम वोकेल*; *instrumentum vocale*) के तौर पर उन्होंने उन्हें बंधुआ श्रमिक बना लिया । न्यायिक और कानूनी व्यवस्था ने इसे माफ कर दिया, यहां तक कि उसने दासप्रथा के वैचारिक अस्तित्व और प्रचलन को वैधता भी प्रदान की। उत्तर *पैक्स रोमाना* (रोमन शांति) काल और तीसरी शताब्दी के संकट ने दासप्रथा के आंतरिक विरोधों को उजागर किया। अंततः जब रोम कमज़ोर होकर टूटने लगा तो दासप्रथा व्यवस्था भी टूट गई और यह रोमन साम्राज्य के पतन की ज़िम्मेदार बनी।

रोमन साम्राज्य श्रम की कमी के कारण संकट से जूझ रहा था क्योंकि उसी समय सामाजिक-आर्थिक कठिनाइयों के पहाड़ भी खड़े हो रहे थे। रोम की अर्थव्यवस्था दासों पर, उनके खेतों पर काम करने, और शिल्पकारों के तौर पर काम करने अथवा छोटे पद के नौकरशाह के रूप में काम करने पर निर्भर थी; और इसकी सेना द्वारा इन कार्यों के लिए पारंपरिक रूप से कैदी बनाए गए नए लोग प्रदान किये जाते थे। लेकिन दूसरी शताब्दी में जब विस्तार में रुकावट आई तो रोम में दासों की आपूर्ति और अन्य युद्ध-सम्पदा में कमी आ गई और राजकोश सूखने लगा। पांचवी शताब्दी में एक और धक्का लगा जब वेंडालों ने उत्तरी अफ्रीका पर अपना प्रभुत्व जमाया और साम्राज्य के व्यापार को भूमध्यसागर में लुटेरों के तौर पर छिपकर नुकसान पंहुचाने लगे।

अर्थव्यवस्था के कमज़ोर होने और इसके व्यावसायिक और कृषि उत्पादन में गिरावट आने से साम्राज्य का यूरोप पर नियंत्रण खोना आरंभ हुआ। रोमन साम्राज्य की पहली दो शताब्दियों में दासों की संख्या में प्रभावशाली वृद्धि हुई। दास श्रमिकों पर इनकी निर्भरता ने न केवल इनके नैतिक मूल्यों, नैतिक मान्यताओं और आचारों का पतन किया बल्कि यह आर्थिक पिछड़ेपन और तकनीकी रुकावट का भी कारण बना क्योंकि इसने वस्तुओं को और अधिक अच्छा बनाने के लिए कोई प्रेरणा प्रदान नहीं की। जोसफ टेंटर (1988) का विचार है कि तकनीकी स्थिरता के परिणामस्वरूप भी साम्राज्य का धीरे-धीरे पतन होने लग गया था।

दासप्रथा संकट के कारक के रूप में *पैक्स रोमाना*

रोमन साम्राज्य का एकीकरण और *पैक्स रोमाना* अथवा रोमन शांति की स्थापना रोम के गौरव और सांस्कृतिक संपन्नता की दो लम्बी शताब्दियों की उपलब्धि थी, जो आगस्टस के राज्यकाल (27 बी सी ई-14 सी ई) से मार्कस ऑरेलियस (राज्यकाल 161-180 सी ई) के राज्यकाल तक विस्तृत रहा। हालांकि इसने आरंभिक साम्राज्य को लैटिन भाषा, एकीकृत मुद्रा प्रणाली और वैधानिक नियमावली दी, इसके गंभीर राजनैतिक और आर्थिक परिणाम भी हुए। रोमन शांति की स्थापना के साथ युद्ध कैदियों की आपूर्ति, जो दासों की आपूर्ति का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत था, में कमी आई। दास श्रमिक समस्त इतिहास में स्वयं सन्तान पैदा करने में असमर्थ थे और इस प्रकार दास श्रम आधारित अर्थव्यवस्था में पतन के बीज अंतर्निहित थे। पहली शताब्दी सी ई में इटली की 40 प्रतिशत जनसंख्या दास थी, अतः इसका तात्पर्य यह था कि 40 प्रतिशत लोग स्वयं सन्तान पैदा नहीं कर सकते थे।

[1] यह कार्ल मार्क्स द्वारा प्रस्तावित इतिहास की भौतिकवादी अवधारणा है। इसका तर्क है कि इतिहास विचारों का परिणाम नहीं, बल्कि भौतिकवादी परिस्थितियों के परिवर्तन का परिणाम है – आदिम समाज से दासप्रथा द्वारा उत्पादन, सामंती व्यवस्था, एशियाई और पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली।

सम्राट ट्रेजन (98-117 सी ई) की मृत्यु के पश्चात् कोई नए प्रदेश साम्राज्य में नहीं जुड़े और परिणामस्वरूप युद्ध बंदियों को बड़ी मात्रा में दास बनाने के बहुत ही कम अवसर प्राप्त हुए। लूट और अन्य अतिरिक्त गैर-कानूनी विधियां लगातार चलती रहीं लेकिन ये उतनी संख्या में दास उपलब्ध नहीं करा पाए जो प्राथमिक स्रोत, सैन्य विजयों द्वारा हो सकता था। दासों की आपूर्ति में गिरावट ने एक अभूतपूर्व कमी को पैदा किया जिसके कारण दासों की कीमतों में वृद्धि हुई। तीसरी शताब्दी में प्लेग के प्रकोप ने दासों की आंतरिक आपूर्ति को और भी धक्का पहुँचाया जिससे श्रमशक्ति में कुल मिलाकर काफी कमी उत्पन्न हुई।

पांचवी शताब्दी के दौरान, श्रम की बाहरी आपूर्ति प्रतिबंधित थी और जीते गए क्षेत्रों की स्वतंत्र जनसंख्या को रोमन नागरिक का दर्जा दिया गया था, इससे एक जनसांख्यिकीय समस्या उत्पन्न हुई। अतः दासों को कुछ हद तक अपने पारिवारिक संबंधों को स्थापित करने का अधिकार मिला और *लैटिफंडिया* भूमि से जुड़े कुछ उत्पादन को दास परिवारों को सौंपा जाने लगा। *पैक्यूलियम* (परिवार बनाने का अधिकार और दासों द्वारा संपत्ति खरीदना) में वृद्धि ने इन्हें बसाया और सामुहिक दासप्रथा का पतन किया। इसके अलावा यहां विकास की प्रक्रिया, जिसे *एबलोनेट* (*ablonate*) के नाम से जाना जाता है, के द्वारा दासों को भूमि (*सर्वी कसाती; servi casati*) प्रदान की गई और उसे पट्टे में परिवर्तित कर दिया गया। यद्यपि इस सब पर कर भी लगाया गया था, लेकिन, विशेष रूप से शहरी क्षेत्र में, बड़ी संख्या में दासों को स्वतंत्र किया गया था ताकि उनके श्रम का अधिक बेहतर प्रयोग किया जा सके।

ऐसी स्थिति में जब बड़े स्तर पर जनसंख्या को भूमि आवंटित की जा रही थी, तो पूर्ण साम्राज्य एक आंतरिक बाज़ार बन गया, जिससे भूस्वामी लगान एकत्र करने में असफल हो रहे थे। भूअधिपतियों ने अपनी भूसंपत्ति को दो भागों में विभाजित किया थाः पहले भाग पर दासों द्वारा खेती कराई जाती थी और अन्य भाग पर पट्टेदारों द्वारा। लेकिन श्रम की कमी के कारण पट्टेदार पहले भाग पर दासों की तरह खेती करने पर विवश थे। इसे एक सुप्त दासप्रथा के तौर पर देखा जा सकता है। स्टे क्रॉइक्स (1981) के शब्दों में, 'अपरिहार्य परिणाम यह हुआ कि भूअधिपति संपन्न वर्ग दास श्रम से प्राप्त लाभ दर को समान नहीं बनाए रख सका और अपने जीवन स्तर को गिरने से बचाने के लिए उसने कमज़ोर स्वतंत्र जनसंख्या पर शोषण की दर में वृद्धि की जैसा कि मेरा विश्वास है रोमन शासक वर्ग ने अब वास्तव में विशिष्ट रूप से ऐसा ही किया'।

अर्धदासता (*कोलोनेट*) और *पेट्रोसीनियम*

कृषि में ठहराव, श्रम का संकट और राज्य के द्वारा करारोपण में वृद्धि के दबाव छोटे किसानों के लिए बहुत अधिक घातक साबित हुए। आरंभ में किसानों के पास कुछ 'अधिशेष भंडार' बचता था, लेकिन बाद में चूंकि अधिकांश अधिशेष उससे खींच लिया जाता था, फिर से खेती करने के लिए उसे ऋण ही लेना पड़ता था। इससे किसान ऋणी हो गए और वे *कोलोनी* या निर्भर किसान के दर्जे में आ गए। छोटे किसान स्वयं कर का भार वहन करने में असमर्थ होने के कारण वे भी बड़े भूस्वामियों के अधीन उनके सेवक बन गए और एक बार फिर से दास की स्थिति में आ गए। बटाईदार वर्ग भी *कोलोनी* में परिवर्तित हो गया। और अंततः ये तीनों वर्ग धीरे-धीरे अपने भूखण्डों और भूअधिपतियों से बंध गए, और उनके द्वारा इनसे बड़े हिस्से को हड़पना संभव हो गया। इसके अतिरिक्त, डायोक्लीशियन के कराधान संबंधी विधेयक और कांस्टेनटाइन के कानूनी प्रावधानों ने स्थाई रूप से *कोलोनी* को भूमि से सम्बद्ध कर दिया और यदि इनके स्वामित्व में परिवर्तन होता था तो इन्हें भी भूमि के साथ स्थानांतरित कर दिया जाता था।

चौथी शताब्दी तक आते-आते पैट्रोसीनियम[2] की घटना सर्वव्यापी हो गई थी। गरीब किसानों

[2] रोमन कानून/कानूनी अनुबंध जिसके तहत किसान बड़े भूस्वामियों द्वारा भोजन और आश्रय देने के बदले में कार्य करने के लिए सहमत हो गए थे।

का वर्ग, कभी-कभी पूरा गांव ही, स्वेच्छा से बड़े भूअधिपतियों अथवा मज़बूत स्थानीय अधिकारियों, के पास चला जाता था ताकि हर समय मंडराने वाली लुटेरी फौजों से अथवा भ्रष्ट अधिकारियों द्वारा लगाए जाने वाले भारी करों की वसूली से बच सकें। किसानों को संरक्षण प्राप्त हुआ और उन्हें *पैट्रोसीनियम* अथवा पट्टेदारी अधिकार प्राप्त हो गये लेकिन उन्होंने अपनी स्वतंत्रता और भूमि के स्वामित्व को खो दिया और इनका दर्जा वास्तव में *कोलोनी* के समान ही हो गया था। लम्बे समय में *पैट्रोसीनियम* की प्रक्रिया ने स्थानीय प्राधिकार केंद्र बना दिए और इससे राज्य की प्रशासनिक शक्ति कमज़ोर होने लगी जिससे राज्य राजस्व से वंचित होने लगा था।

'इस प्रकार हम देखते हैं कि विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा भूमि से बंधे हुए निर्भर पट्टेदार किसानों की एक श्रेणी, पश्चिमी रोमन साम्राज्य में तीसरी शताब्दी सी ई के दौरान, अस्तित्व में आई। इन सभी किसानों को *कोलोनी* (पूर्व में चाहे उनका जो भी दर्जा रहा हो) के तौर पर उल्लेखित किया गया और इनमें वे दास भी सम्मिलित थे जिन्होंने अपने व्यक्तिगत भूखण्ड पर परिवार के साथ रहते हुए अपने स्तर में सुधार किया। अतः इस प्रकार के दासों को अन्य कोलोनी से भिन्न करने में शायद ही कोई फर्क बचा था। मौलिक *कोलोनी* जो अपनी स्वतंत्रता खो चुके थे, वे दास जिनके दर्जे में पट्टेदार खेतीहर बनने से मामूली सा सुधार हुआ था, और प्रताड़ित किसान (*पैट्रोसीनियम* को स्वीकार करने वालों सहित) उत्तर रोमन साम्राज्य के दौरान *कोलोनी* की विस्तृत श्रेणी का एक भाग बन गए थे। *कोलोनेट*, या *कोलोनी* पर आधारित नए प्रकार के उत्पादन ने *लैटिफंडिया* द्वारा प्रेषित अधिशेष को हटाकर उसका स्थान ले लिया। और यह काल क्लासिकल ग्रीको-रोमन दासप्रथा और क्लासिकल मध्यकालीन यूरोपीय सामंतवाद के संक्रमण के काल का प्रतिनिधित्व करता है' (फारूक़ी, 2001: 295-96)।

4.9 जर्मनिक जनजातियों के आक्रमण

पश्चिमी रोमन साम्राज्य के पतन का सबसे स्पष्ट कारण इनकी जर्मनिक जनजातियों के विरूद्ध लगातार सैन्य विफलताओं की श्रृंखला की ओर इंगित करता है। आंतरिक संकट के साथ-साथ तीव्र बाहरी दबाव की स्थिति के आने से स्थिति और भीषण हो गई, और वेंडाल, विसिगॉथ और ऑस्ट्रोगॉथ जैसी जनजातियों ने कब्ज़ा और नियंत्रण कर अपने स्वयं के राज्य की स्थापना कर रोम के पतन की प्रक्रिया को पूरा किया। रोम द्वारा गॉल और मध्य यूरोपीय भागों की जीत साम्राज्य को पशुपालक खानाबदोश समूहों के आमने-सामने ले आई, इन समूहों का उल्लेख जर्मनिक जनजातियों के नाम से किया जाता है जो यूरोपियों द्वारा बोली जाने वाली एक इंडो-यूरोपीय भाषा जिसे जर्मनिक कहा जाता था बोलते थे। मूल रूप से ये दक्षिणी स्कॅंडिनेविया और बाल्टिक तट के साथ अन्य प्रदेश, जैसे कि किम्बरी और ट्युटों, के लोग थे। ये लगभग 1000 बी सी ई से दक्षिण से पश्चिम की ओर प्रवास करने लगे। ऐसा माना जाता है कि रोमन साम्राज्य के साथ संपर्क उनकी सामाजिक अर्थव्यवस्था में परिवर्तन लाया, और इसके साथ ही इसने इनकी अपेक्षाकृत समतावादी कृषि-पशुचारण सामाजिक संरचना को अधिशेष संग्रहण और वर्ग भेद पर आधारित योद्धा-सामंतीय व्यवस्था में परिवर्तित कर दिया।

आगस्टस के राज्यकाल से रोम जर्मनिक जनजातियों से उलझता रहा और राइन-डेन्यूब सीमा पर झड़पें और लड़ाईयां आम बात थी। आरंभ में, जनजातियां साम्राज्य को चुनौती देने में कमज़ोर थीं लेकिन मार्कस ऑरेलियस के काल में अन्य जनजातियों द्वारा दबाव से खुला टकराव शुरू हो गया और जर्मनिक जनजातियों ने रोमन प्रदेशों में घुसना आरंभ कर दिया। राज्य ने रक्षात्मक नीति अपनाई, जर्मनिक जनजातियों को बसने की अनुमति दे दी गई लेकिन इसके साथ ही बढ़ती घुसपैठ के खतरे को रोकने के लिए डेन्यूब की सेना की ताकत

में वृद्धि की। तीसरी शताब्दी सी ई के पूर्वार्द्ध में दो उत्तरी जर्मनिक जनजातियां – अलामनी और फ्रेंक – राइन सीमा पर सबसे अधिक दुर्जेय विरोधी थे, और वहीं डेन्यूब की सीमा पर गॉथों का खतरा था। यूरोप की लम्बी सीमा अरक्षणीय सिद्ध हो रही थी और एक समझौते द्वारा रोम ने कुछ चयनित क्षेत्रों पर बसावट की अनुमति दी, सेना में नियुक्ति और वफादार जर्मनिक सरदारों को सहयोगी बनाया और उनके राज्य आक्रामक जर्मनिक जनजातियों और रोम के बीच एक मध्यवर्ती राज्यों के तौर पर कार्य करने लगे। हालांकि, सैन्य-संघर्षों का विकल्प पूर्णरूप से त्यागा नहीं गया था।

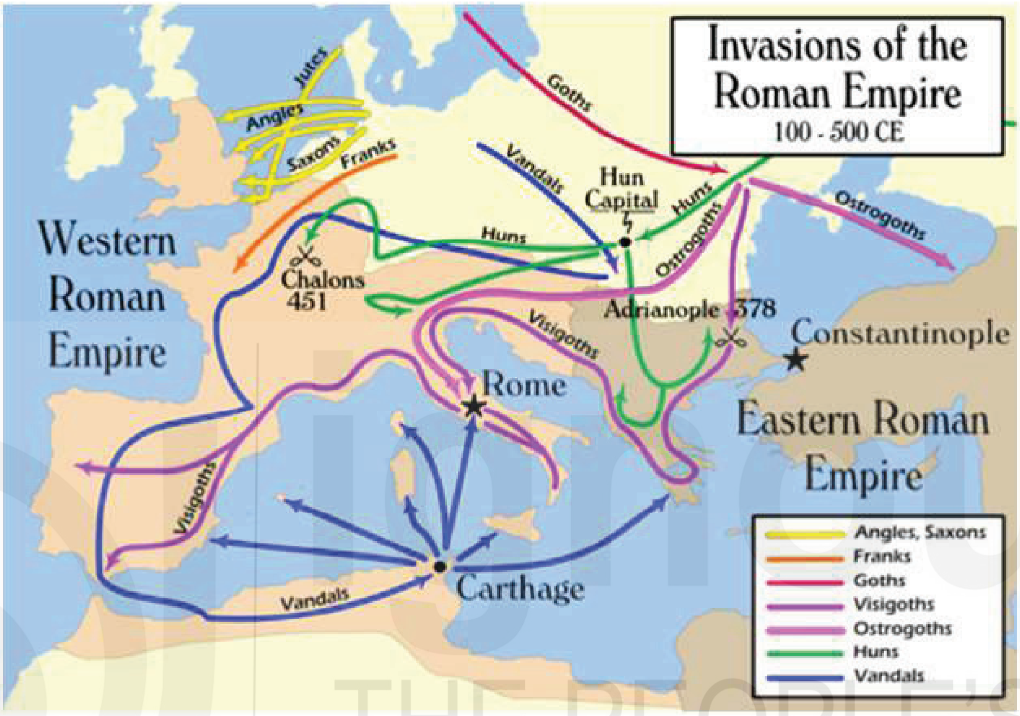

मानचित्र 4.4: रोमन साम्राज्य पर आक्रमण
साभारः यूज़रःमैपमॉस्टर
स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Invasions_of_the_Roman_Empire_1.png

चौथी शताब्दी सी ई के मध्य में पूर्वी यूरोप में जनजातियों के नए विद्रोहों की लहर के साथ स्थिति बद से बद्तर में परिवर्तित हो गई। गॉथ दो समूहों में बंट गए, दोनों ही समान रूप से आक्रामक थे, विसिगॉथ (पश्चिमी गॉथ) और ऑस्ट्रोगॉथ (पूर्वी गॉथ), और ये साम्राज्य के सीमांत क्षेत्र पर निरंतर कब्जा करते रहते थे। हूणों के आक्रमणों से बचकर भागते हुए विसिगॉथ स्वयं अपने सरदार फ्रिटिजर्न के नेतृत्व में 378 सी ई में हेड्रीआनोपोलिस/एड्रीआनोपल की लड़ाई में रोमन सेना से लड़े। रोम की हार हुई और सम्राट वेलेन्स मारा गया। इस युद्ध ने रोम की राजनैतिक नियति के लिए एक गंभीर मोड़ चिन्हित किया। रोम की अपराजेयता अब इतिहास बन चुकी थी और आरंभिक पांचवी शताब्दी से जर्मनिक जनजातियों जैसे वेंडाल सुएबी और अलानी ने राइन की सीमा को पार कर रोम के पश्चिमी प्रांतों पर कब्ज़ा करना आरंभ कर दिया। विसिगॉथ सरदार ऐलेरिक ने 410 सी ई में रोम के शहर को सफलतापूर्वक लूटा और इस आक्रमण की गूंज से संपूर्ण साम्राज्य में हतोत्साह की लहर फैल गई। साम्राज्य ने अगले कई दशकों तक लगातार आक्रमण के खतरे के भय में गुज़ारे, पुनः इस 'शाश्वत नगर' (रोम) को 455 सी ई में दुबारा लूटा गया, इस बार वेंडालों द्वारा। अंततः 476 सी ई में जर्मनिक सरदार ओडोएसर ने एक विद्रोह रच सम्राट रोमुलस आगस्टस (पश्चिमी रोमन साम्राज्य का अंतिक शासक) को अपदस्थ कर दिया और इस प्रकार टूटते हुए साम्राज्य को घातक झटका देने में यह विद्रोह सफल रहा। हालांकि रोमन और जर्मनिक जनजातियों के मध्य पारस्परिक प्रभाव के आदान-प्रदान का इतिहास जर्मनिक जनजातियों के रोमनीकरण के बाद से ही आरंभ हुआ। पश्चिमी रोमन शासक के अपदस्थ होने से यूरोप में पुरातनता

और मध्यकालीन सामंतवादी समाज के मध्य खाई तुरंत ही नहीं स्थापित हुई। इसकी प्रकृति को परिवर्तित होने में शताब्दियों का समय लगा। रोमन साम्राज्य के विभिन्न भागों में कुछ कबीलाई राज्यों का उदय हुआ और इन्होंने समाज में नई संरचनाओं की स्थापना की।

4.10 इतिहासलेखनः संकट, पतन और रोमन साम्राज्य का रूपांतरण

पांचवी शताब्दी की तबाही को एक पर्याप्त कारण के रूप में उद्धृत करते हुए, पश्चिमी इतिहासकार अठारहवीं शताब्दी से ही वर्ष 476 को रोमन साम्राज्य के अंतिम बिंदु के तौर पर देखते आए हैं। इस काल को ग्रीको-रोमन पुरातनता का अंत और मध्यकाल के आरंभ के रूप में चिन्हित किया जाता है। यद्यपि अनेक अन्य इतिहासकारों का तर्क है कि कोई भी निश्चित तिथि रोम के 'पतन' को निर्धारित करने के लिए संतोषजनक नहीं है, क्योंकि पतन एक लम्बी समयावधि के दौरान हुआ। संभवतः संकट और साम्राज्य का अंत इसकी संरचनात्मक कमियों और अत्यधिक खर्चीली शाही प्रकृति के कारण हुआ हो। जबकि आरंभिक विश्लेषण में विद्वान शासक रोमुलस आगस्टस के अपदस्थ होने को संक्रमण काल का एक विकट क्षण समझते थे, यूरोपीय इतिहास पर हाल ही में हुए शोध मध्यकाल के आरंभ की अवधि को लगभग 300 सी ई तक, पीछे की ओर धकेलते हैं। इस प्रकार, बाद का साम्राज्य और इसके उत्तराधिकारी राज्यों का काल, परिवर्तन का काल था, एक शास्त्रीय पुरातनता से सामंतवादी यूरोप में रूपांतरण का काल।

बाईज़ेंटियम के संदर्भ में साम्राज्य का लगातार रूपांतरण और नैरन्तर्य अत्यधिक प्रभावी रूप से वर्णित किया गया है। पूर्वी रोमन साम्राज्य जो बाईज़ेंटाइन साम्राज्य के रूप में जाना गया, अपनी राजधानी कांस्टैंटिनोपल सहित रोम के 'पतन' के एक हज़ार वर्ष बाद तक अस्तित्व में रहा। 'विद्वान लगातार साम्राज्य के पश्चिमी भागों में नैरन्तर्य के प्रतिवाद के लिए आगे आते रहे हैं – किसी एक ने भी आज तक गंभीरता से यह दावा नहीं किया कि पूर्व के प्राचीन और बाईज़ेंटाइन सभ्यता के बीच कोई विभाज्य रेखा थी' (वोग्त, 1967: 5)।

रोमन साम्राज्य के पतन का विषय बहुत बड़ा मुद्दा है। बौद्धिक विद्वता के संदर्भ में सर्वाधिक प्रभावशाली आधुनिक इतिहासकारों में से एक, एडवर्ड गिब्बन, ने अपनी अनेक भागों में लिखित पुस्तक, *द डिक्लाइन एंड फॉल ऑफ द रोमन एम्पायर* (1776) में रोमन साम्राज्य के पतन की सर्वप्रथम व्याख्या प्रस्तुत की। गिब्बन 18वीं शताब्दी के प्रबोधन (Enlightenment) काल के पादरी-विरोधी तर्क का समर्थन करते हैं जो ईसाई धर्म को इस बात के लिए दोषी ठहराता है कि इसने रोम वासियों की नागरिक भावना को नष्ट किया, और चर्च ने राज्य की राजनैतिक शक्ति को हड़पा। जैसे-जैसे 19वीं शताब्दी का ऐतिहासिक विशलेषण आधुनिकता की ओर बढ़ा, रोम के पतन से संबंधित विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोण उभरे। ऐतिहासिक भौतिकवाद के प्रतिपादक, मार्क्स और एंजेल्स ने यह तर्क दिया कि दासप्रथा ने सभी प्रकार के श्रम को निगल लिया था और अब यह विलुप्त हो चुकी थी, अतः रोमन जगत गतिरोध पर पहुंच चुका था।

आरंभिक 20वीं शताब्दी में रूसी विद्वान, माइकल रोस्टोवज़ेफ (1926) ने सामाजिक तनाव और शोषित जन आबादी द्वारा शासकों की शक्ति और संपत्ति में हिस्सा प्राप्त करने की लगातार दबाव की प्रक्रिया को दोषी ठहराया। ब्रिटिश इतिहासकार, एफ. डब्ल्यू. वॉलबैंक (1946), दासप्रथा को रोमन जगत के तकनीकी पक्षाघात और जीवंतता में आम जन-हानि को मूल कारण मानते हैं। मानवशास्त्रीय व्याख्या से संबंधित विद्वान जनसंख्या के पतन को परिवर्तन बिंदु की तरह देखते हैं, इसका नस्लीय विलयन – यूनानियों और प्रच्यवासियों के अंतःप्रवाह के कारण जो विलयन हुआ उसने रोम के मूल वासियों की मौलिक एकता की मूल भावना को कमज़ोर कर दिया तथा शासक वर्ग का संकुचन भी इस पतन का प्राथमिक कारण

था। इस प्रकार, जर्मन इतिहासकार ओ. सीक का विश्वास है कि रोमन जगत का राजनैतिक आयाम व्यवस्थित 'श्रेष्ठ का विध्वंस' था, यह खालीपन गौण और अयोग्य व्यक्तियों से भरा गया अंततः यह साम्राज्य के लिए प्राणघातक सिद्ध हुआ।

अनेक विद्वानों ने रोमन पतन के विषय में नवीन दृष्टिकोणों को प्रस्तुत किया है। जे.बी. बरी (1897), ई. स्टाइन और ए. पिगेनिओल – ये सभी पुरातन रोम और बाईज़ेंटाइन इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान थे जो अलग-अलग यूरोपीय विश्वविद्यालयों से जुड़े हुए थे और इन्होंने अपनी शिक्षा और शोध के द्वारा रोमन पतन की बहस को आगे बढ़ाया। ए. डॉप्श ने दृढ़तापूर्वक तर्क दिया कि जर्मेनिक आक्रमण पुरातन रोम से पूर्णरूपेण कटने का प्रतिनिधित्व नहीं करता, उनका तर्क है कि जर्मेनिक राज्य जो रोमन-साम्राज्य के पतन के बाद उदित हुए उन्होंने रोमन परम्पराओं और संस्थाओं को सतत् बनाए रखा, विशेष रूप से राज्यकला और शासनकला के क्षेत्र में। एस. मज़ारिनो, 20वीं शताब्दी के प्राचीन रोम के प्रमुख इतावली इतिहासकार, के अनुसार रोम का पतन उसकी आर्थिक अवनति और अव्यवस्था के परिणामस्वरूप हुआ। ए. एच. एम. जोन्स (1964) का प्रमाणित शोध इस विषय की विशिष्ट व्याख्या करता है। उन्होंने भौगोलिक और सामाजिक-आर्थिक कारकों पर बल दिया। उनके विचार में जैसे-जैसे पश्चिमी रोमन साम्राज्य राइन और डेन्यूब प्रदेशों में आगे की ओर विस्तृत हुआ, जर्मनिक जनजातियों के साथ संघर्ष अपरिहार्य हो गया। इससे सैन्य शक्ति में वृद्धि करनी पड़ी और प्रत्यक्ष उत्पादकों पर करों का दबाव उत्पन्न हुआ जो कि पतन का मौलिक कारण था।

विश्व इतिहास के दो निष्ठावान इतिहासकार ओसवाल्ड स्पेंगलर (1926) और ए. जे. टोयन्बी (1965), ने रोमन पतन के अध्ययन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। स्पेंगलर ने यह स्वीकार किया कि पश्चिमी रोमन साम्राज्य के विघटन ने प्राचीन विश्व और इसके उत्तराधिकारी राज्यों के बीच एक कड़ी का काम किया। टोएन्बी का विश्वास है कि *इम्पीरियम रोमनम्* का पतन आंतरिक सर्वहारा वर्ग (proletariat) और बाहरी सर्वहारा वर्ग के संयुक्त आक्रमणों के कारण हुआ। हाल ही में पुरातत्ववेत्ता पहली शताब्दी सी ई से खोजे गए कंकालों के अवशेषों के रसायनिक विश्लेषण पर कार्य कर रहे हैं जो इस निष्कर्ष की ओर संकेत करता है कि काफी लंबे समय से रोमवासी सीसे के ज़हर (lead poisoning) के सेवन से ग्रस्त थे और मारे जा रहे थे, इनके भोजन और शराब में सीसा भारी मात्रा में पाया गया है। ब्रायन वार्ड-पर्किंस (2006) रोम के पतन के मूल्यांकन में मूलतः पुरातत्विक दृष्टिकोण से कार्य कर रहे हैं। ये इस ओर संकेत देते हैं कि उत्तर रोमन शताब्दियों में भौतिक संस्कृति में असाधारण गिरावट आई थी और इनका विश्वास है कि 'पश्चिमी रोमन साम्राज्य का पतन आंतरिक अपरिवर्तनीय पतन की बजाए विशेष रूप से सैन्य संकट के कारण हुआ था – जर्मनिक आक्रमण जो पश्चिम में एशियाई लोगों, हूणों, के आगमन और साम्राज्य के भीतर गृह युद्ध द्वारा और अधिक गंभीर बन गए थे'[3]।

बोध प्रश्न-3

1) तीसरी शताब्दी के संकट ने रोमन साम्राज्य के लिए मौत की घंटी का काम किया। क्या आप इस तथ्य से सहमत हैं? अपने उत्तर के लिए कारण दीजिए।

....

....

....

....

[3] *हिस्टॉरिकिली स्पीकिंग* पत्रिका में साक्षात्कार, मार्च / अप्रैल 2006: 33

2) उत्पादन की दास पद्धति का संकट पश्चिमी रोमन साम्राज्य के पतन का प्राथमिक कारण था। चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

3) रोमन साम्राज्य के पतन के इतिहासलेखन की चर्चा कीजिए। रोमन साम्राज्य के पतन पर इतिहासकारों द्वारा प्रतिपादित विभिन्न सिद्धांत कौन-कौन से हैं?

....

....

....

....

....

4) रिक्त स्थान भरिए:

क) ....ने पुस्तक *द डिक्लाइन एंड फॉल ऑफ द रोमन एम्पायर* लिखी।

ख) डायोक्लीशियन द्वारा लागू प्रशासन व्यवस्था को....................... के नाम से जाना जाता था।

ग) .... रोमन साम्राज्य का अंतिम मूर्तिपूजक शासक था और..................ने ईसाई धर्म को राज्य धर्म बनाया।

घ) ....ने 410 सी ई में रोम को लूटा और ....ने 476 सी ई में पश्चिमी रोमन साम्राज्य के अन्तिम शासक को अपदस्थ किया।

ङ) पूर्वी रोमन साम्राज्य को इतिहास में .... के नाम से बेहतर तरीके से जाना जाता है।

4.11 सारांश

इस इकाई में हमने रोमन साम्राज्य के संकट के बारे में चर्चा की है। यह यूनानी-रोमन पुरातनता का अंतिम काल था जो अभूतपूर्व परिवर्तन की अवधि थी – पिछली समस्याओं का आगे बढ़ना, नई समस्याओं का उभरना, अनुकूलनता और सामन्जस्य और अंत में वह दरार जो कि बाहरी आक्रमणों के साथ-साथ हुई जिसने रोमन साम्राज्य को प्रभावहीन होते देखा। अनेक कारकों ने संकट में योगदान दिया। राजनैतिक तौर पर साम्राज्य का दूर-दराज के प्रदेशों में विस्तार ने साम्राज्य के कुशल प्रशासनिक तंत्र को प्रभावित किया। गृह युद्धों का लगातार होना, भ्रष्टाचार, राजनैतिक और प्रशासनिक विखंडन और पूर्वी साम्राज्य के निर्माण के साथ एक वैकल्पिक शक्ति के आधार ने साम्राज्य व्यवस्था को कमज़ोर किया जो कि अब तक एक संयुक्त इकाई था। व्यवस्था को सुधारने के लिए सैन्य तानाशाही को लागू करना एक संक्षिप्त अंतराल था लेकिन इस व्यवस्था ने नागरिकों से बलपूर्वक भारी कीमत वसूली। राज्य और सेना के बीच में वैचारिक मतभेद था जैसे कि नागरिक-सेना को भाड़े की सेना

से बदला जाना, जिस सेना पर बहुत अधिक विश्वास नहीं किया जा सकता था। आर्थिक स्तर पर अर्थव्यवस्था में गिरावट और उच्च मुद्रास्फीति स्तर ने जीवन निर्वाह का संकट उत्पन्न किया। खेतों को त्याग दिया गया; शिल्प उत्पादन और लम्बी-दूरी के व्यापार का विनाश हुआ; और राज्य द्वारा मुद्रा के अवमूल्यन के असाध्य उपाय और मौद्रिक द्वैतवाद ने समस्या को और बढ़ाया। साम्राज्य के सामाजिक ताने-बाने में लगातार परिवर्तन आया और उबलता हुआ तनाव या तो विद्रोह और लूट के रूप में फूटा या फिर परिवर्तन के साथ संयोजन करने में अंतरिम संस्थानों के रूप में व्यक्त हुआ। जर्मनिक जनजातियों की अनियंत्रित घुसपैठ और उनके द्वारा साम्राज्य में घुसने का निरंतर प्रयास, दासप्रथा का संकट और इन सब संकटों ने मिलकर पश्चिमी रोमन साम्राज्य को पतन की ओर बढ़ाया। पूर्वी रोमन साम्राज्य, जिसे बाईज़ेंटियम के नाम से जाना गया, अगली सहस्त्राब्दी तक अस्तित्व में रहा और 1453 सी ई में ऑटोमन तुर्कों के हाथों इसका अंत हुआ।

4.12 शब्दावली

कॉमाइट्स	:	शाही रोमन (दरबार) उपाधियां और पदवियां
अनिवार्य सैनिक सेवा / *कांस्क्रिप्शन*	:	राज्य के लिए अनिवार्य सैन्य सेवा
कुरियलों / कुरियल्स / डिकुरिआनोस	:	समृद्ध मध्यवर्गीय नागरिक। डिकुरिआन शहर की स्थानीय परिषद् के सदस्य होते थे और ये कुरियल्स में से लिए जाते थे।
ड्यूस	:	बाद के ड्यूक; नेता / सेनाध्यक्ष
हॉपलाइट	:	शस्त्रों से सुसज्जित पैदल सेना
लीजन	:	रोमन सेना की एक इकाई। इसकी संख्या निर्धारित नहीं थी। गणतंत्र काल में 5000 सैनिक दस मैनिपल्स (रोमन लीजन का उप-भाग जिसमें 60 से 120 सैनिक होते थे) की तीन पंक्तियों में विभाजित थे। बाद में लगभग 100 बी सी ई में इसे दस *कोहॉर्ट* (खंडों) में बांट दिया गया। इसकी एक घुड़सवार विंग (*अला*) भी थी। तीसरी शताब्दी सी ई के आसपास यह घटकर 1000-1500 पुरुषों का निकाय मात्र बनकर रह गई।
फैलैंक्स	:	यूनानी सेना की आयताकार सैन्य संरचना
प्रिटोरियन गार्ड्स	:	शाही रोमन अंगरक्षक

4.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 4.3 देखें

2) भाग 4.4 देखें

3) भाग 4.5.3 देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 4.6 देखें

2) भाग 4.7 देखें

3) उप-भाग 4.7.4 देखें

बोध प्रश्न-3

1) भाग 4.8 देखें

2) भाग 4.8 देखें

3) भाग 4.10 देखें

4) क) एडवर्ड गिब्बन; ख) *टेट्रार्की;* ग) थिओडोसियस;

घ) विसिगोथ्स; ड़) बाईज़ेंटाइन साम्राज्य

4.14 संदर्भ ग्रंथ

एंडरसन, पैरी, (1974) *पैसेजेस फ्रॉम एंटीक्यूटी टू फ्युडलिज़्म* (लंदनःवर्सो).

बैरी, जे.बी., (संपादित) (1897) *द हिस्ट्री ऑफ द डिक्लाइन एंड फॉल ऑफ द रोमन एम्पायर,* एडवर्ड गिब्बन. 7 भाग (लंदनः मेथेन).

बंडी कैथरीन, (2011) *एनश्यिन्ट रोमः ओवरव्यू ऑफ द डिक्लाइन एंड फाल ऑफ द रोमन एम्पायर.*

क्रॉइक्स, जी.ई.एम. डी स्टे, (1981) *द क्लास स्ट्रगल इन द एंशियंट ग्रीक वर्ल्ड* (न्यूयॉर्कः कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस).

फारूक़ी, अमर, (2001) *अर्ली सोशल फॉरमेशन्स* (नई दिल्लीः मानक प्रकाशन).

गोल्ड्सवर्दी, एड्रीयन, (2010) *हाऊ रोम फैलः डेथ ऑफ ए सुपरपॉवर* (येलः येल यूनिवर्सिटी प्रेस).

गोल्ड्स्वर्दी, एड्रीयन, (2012) *लीजन्स ऑफ रोमः द डेफिनेटिव हिस्ट्री ऑफ ऐवरी इम्पीरियल रोमन लीजन* (न्यूयॉर्कः थॉमस ड्यून बुक्स).

जोन्स, ए.एच.एम, (1964) *द लेटर रोमन एम्पायर 284-602ः ए सोशल, इकॉनॉमिक एंड एडमिनिस्ट्रेटिव सर्वे.,* 3 भाग (ऑक्सफोर्डः बेसिल ब्लेकवैल).

रोजर्स, नाईजेल, (2009) *द राईज़ एंड फॉल ऑफ एंशियंट रोम* (लंदनः लॉरेंज़ बुक्स).

रोस्टोवज़ेफ, मिशेल आई., (1926) *द सोशल एंड इकॉनॉमिक हिस्ट्री ऑफ द रोमन एम्पायर* (न्यूयार्कः बिबलिओ-मोसर).

स्पेंगलर, ओसवाल्ड, (1926) *द डिक्लाइन ऑफ द वेस्ट,* 2 भाग (न्यूयॉर्कः एल्फ्रेड ए नॉफ पब्लिशर्स).

टेंटर, जोसफ, ए., (1988) *द कोलैप्स ऑफ कॉम्पलेक्स सोसाइटीस* (केम्ब्रिजः केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

टोयन्बी, आरनोल्ड जोसफ, (1965) (रिप्रिन्ट) *सिविलाइज़ेशन ऑन ट्रायल एंड द वर्ल्ड एंड द वेस्ट* (क्लीवलेंड एवं न्यूयार्कः द वर्ल्ड पब्लिशिंग कंपनी).

वोग्त, जे., (1967) *द डिक्लाइन ऑफ रोमः द मेटामोरफोसिस ऑफ एंशियंट सिविलाइज़ेशन* (लंदनः विडेनफेल्ड एवं निकोलसन).

वॉलबैंक, एफ.डब्ल्यू., (1946) *द डिक्लाइन ऑफ द रोमन एम्पायर इन द वेस्ट* (लंदनः कॉबेल्ट प्रेस).

वार्ड-पर्किंस, ब्रायन, (2005) *द फॉल ऑफ रोम एंड द एंड ऑफ सिविलाइज़ेशन* (ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

4.15 शैक्षणिक वीडियो

द रोमन ऐम्पायर-ऐपिसोड 6ः द फॉल ऑफ द रोमन एम्पायर (हिस्ट्री डॉक्यूमेंट्री)
https://www.youtube.com/watch?v=JDz-z92Qc4Q

द राईज़ एंड फॉल ऑफ रोमन एम्पायर- डॉक्यूमेंट्री चेनल
https://www.youtube.com/watch?v=ePq7IeGiils

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

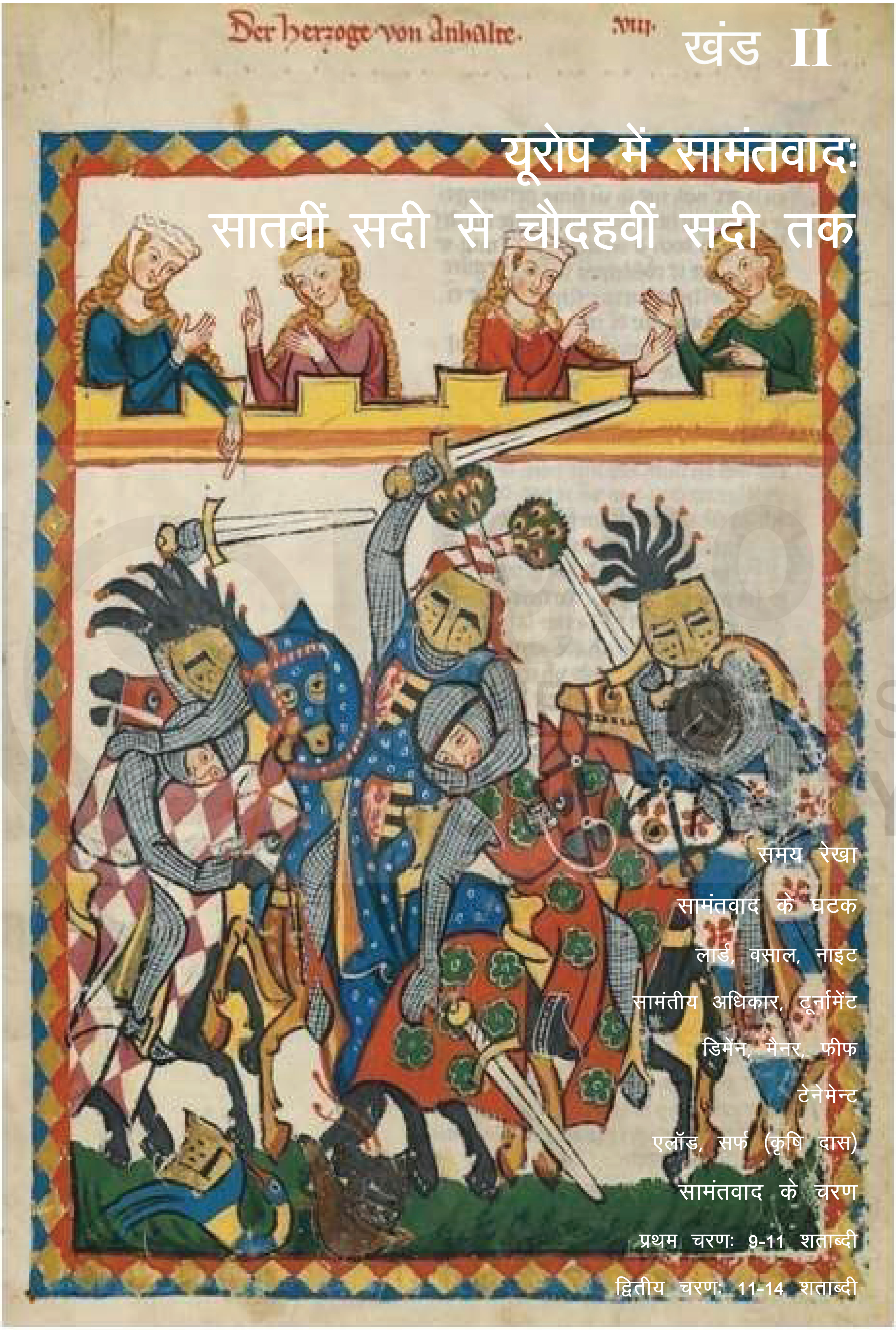

खंड II

यूरोप में सामंतवादः सातवीं सदी से चौदहवीं सदी तक

समय रेखा

सामंतवाद के घटक

लार्ड, वसाल, नाइट

सामंतीय अधिकार, टूर्नामेंट

डिमेंन, मैनर, फीफ

टेनेमेन्ट

एलॉड, सर्फ (कृषि दास)

सामंतवाद के चरण

प्रथम चरणः 9-11 शताब्दी

द्वितीय चरणः 11-14 शताब्दी

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

फोटोग्राफ : टूर्नामेन्ट, कोडेक्स मानेसे यूबी हाइडलबर्ग
Cod. Pal. Germ. 848 पृ. 17 ''हरज़ोग वानॅ अनहाल्ट'' मास्टर ऑफ द कोडेक्स मानेसे (फाउंडेशन चित्रकार) (पृ. लगभग 1305-लगभग 1340)

साभार : पिन्टरेस्ट

स्रोत : http://digi.ub.uni-heidelberg.de/diglit/cpg848/0029
https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/1/1d/Codex_Manesse_%28Herzog%29_von_Anhalt.jpg.

इकाई 5 सामंतवाद का स्वरूप तथा संरचना*

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 सामंतवादः मध्यकालीन समाज का ऐतिहासिक संदर्भ

5.3 सामंतवाद क्या है?

5.4 सामंतवाद के मुख्य घटक

5.5 सामंतवादः रूप तथा संरचना का सिंहावलोकन

5.6 सामंतवाद के अंतर्गत आर्थिक व्यवस्था

5.7 सामंतवादः कानूनी पहलू और राजनीतिक सत्ता

5.7.1 राजनीतिक विकेंद्रीकरण, शाही सत्ता का पतन, संप्रभुता का विखंडन

5.7.2 सैन्य व्यवस्था

5.7.3 अधिपति (लॉर्ड) तथा मातहत (वसाल)

5.8 सामाजिक व्यवस्था

5.8.1 चर्च तथा सामंती समाज

5.8.2 कुलीन वर्ग

5.8.3 कृषक

5.9 शहर तथा व्यापार

5.10 जेंडर

5.11 इतिहासलेखन का प्रश्नः गतिहीनता और अंधकार का युग

5.12 सारांश

5.13 शब्दावली

5.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.15 संदर्भ ग्रंथ

5.16 शैक्षणिक वीडियो

5.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपः

- सामंतवाद को ऐतिहासिक संदर्भ में देख सकेंगे तथा मध्यकालीन इतिहास से इसके संबंधों को समझ सकेंगे,
- इसकी मुख्य विशेषताओं तथा सामंतवाद की अवधारणा से संबंधित बहस को, विशेषतः यूरोप के संदर्भ में, समझ सकेंगे,

* डॉ. नलिनी तनेजा, स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

- यूरोप के विभिन्न भागों में सामंतवाद के उदय के साथ इसकी विशेषताओं में आने वाली भिन्नताओं को जान सकेंगे,
- यूरोप में सामंतवाद की संरचना के विभिन्न पहलुओं को पहचान सकेंगे, विशेषतः उन विशिष्ट सामाजिक संरचनाओं तथा उत्पादन पद्धतियों को, जो यूरोप में सामंतवाद के प्रसार का मूल तत्व थीं,
- उन रूपों को समझ सकेंगे जिनमें यह यूरोप के विभिन्न भागों में विकसित हुआ तथा डिमेन, मैनर, फ़ीफ़ इत्यादि का अर्थ समझ पायेंगे,
- इस तथ्य का विशेषण कर पायेंगे कि यूरोप में इस काल की कला तथा संस्कृति, जिसे सामंती कहा जाता है, उसका सामंतवाद के स्वरूप तथा संरचनाओं से क्या सम्बंध था, और
- यह भली-भांति देख सकेंगे, कि जिसे कालानुक्रम में सामंतवाद के रूप में जाना जाता है, वह एक ही समय में सारी दुनिया में परिघटित नहीं हुआ था।

5.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम मुख्यतः यूरोप में सामंतवाद के स्वरूप तथा संरचना पर चर्चा करेंगे, किंतु हम इन संरचनाओं तथा स्वरूपों पर चर्चा उनके ऐतिहासिक संदर्भ में करने की कोशिश करेंगे। हम इन संरचनाओं तथा स्वरूपों को सामंती समाज की व्यापक विशेषताओं को निर्मित करने वाले अन्य सामाजिक, राज्यव्यवस्था सम्बंधी तथा सांस्कृतिक पहलुओं से जोड़कर देखेंगे। दूसरे शब्दों में, हम सामंतवाद को एक विशिष्ट **उत्पादन की पद्धति** के रूप में देखेंगे। हम यह भी परीक्षण करेंगे कि समाज तथा अर्थव्यवस्था किस तरह से संगठित थी और अपने से पहले के प्राचीन समाजों के पूर्व के अध्ययनों और बाद में उदित होने वाले पूँजीवाद से यह किस प्रकार भिन्न थे। इस प्रकार हम मध्यकालीन समाजों के उन व्यापक पहलुओं को जानेंगे जिन्होंने उनके परिवेश को रूप प्रदान किया।

स्पष्टतः इसका अर्थ यह नहीं है कि सामंतवाद के उदय से पूर्व के जीवन का पैटर्न अचानक से लुप्त हो गया, या जिसे हम पूँजीवाद के रूप में जानते हैं उसकी शुरुआत की जड़ें सामंती समाजों में नहीं थीं, खासकर बाद के वर्षों में हुए कुछ निश्चित विकासक्रमों में। निरंतरता तथा परिवर्तन साथ-साथ चलते हैं, और अलग-अलग काल तथा स्थानों में समय के किसी बिंदु पर आकर यह परिवर्तन आधारभूत तथा दृष्टिगोचर रूप ले लेते हैं। विभिन्न उत्पादन पद्धतियाँ अर्थात् विभिन्न प्रकार के सामाजिक तथा आर्थिक ढाँचे, किसी नए ढाँचे के प्रमुख स्थान ले लेने के ब़ावजूद, सह-अस्तित्व में बने रहते हैं।

अतः जब हम सामंतवाद के स्वरूप तथा संरचना की बात करते हैं तो हम मानव इतिहास के उस काल का ज़िक्र करते हैं, जब सामंतवाद समाज तथा अर्थव्यवस्था के संगठन का सर्वप्रमुख रूप था। संगठन की यह व्यवस्था कुछ निश्चित प्रकार की अर्थव्यवस्था, राज्यव्यवस्था, संस्कृति, मानसिकता तथा विचार पद्धतियों का प्रतिनिधित्व करती है। इस दृष्टिकोण से सामंतवाद केवल सामाजिक तथा आर्थिक संगठनों के स्वरूपों तथा संरचनाओं का अध्ययन मात्र नहीं है, बल्कि सामंती समाज का सम्पूर्णता में अध्ययन है।

अंत में, यद्यपि हम यह कहते हैं कि यूरोप में सामंतवाद नौंवी सदी से चौदहवीं सदी के बीच का काल है,[1] कुल मिलाकर यह काल अपरिवर्तनीय नहीं था। हम प्रारम्भिक चरण, मध्य चरण

[1] सामंतवाद का उदय सर्वप्रथम कहां हुआ और विशिष्ट रूप से कब हुआ; और कब सामंतवाद का पतन हुआ तथा कब पूँजीवाद ने इसका स्थान ले लिया, इन सब पर विवाद है।

तथा अंततः उच्च मध्य युग का निरूपण करते हैं। बाद की शताब्दियाँ, पहले की शताब्दियों से बहुत भिन्न थीं।[2] अतः सामंतवाद के स्वरूप तथा संरचना का अध्ययन मध्यकालीन समाज के इन परिवर्तनों तथा चरणों से अभिन्न रूप से जुड़ा है। प्रथम चरण (9वीं से 11वीं सदी) की द्वितीय चरण (11वीं से 14वीं सदी) से स्पष्ट भिन्नता नज़र आती है, जिसकी कुछ विशेषताओं का विकास या रूपांतरण 11वीं सदी के संक्रमण काल में हुआ था। इन परिवर्तनों में शामिल थे, कृषि उत्पादन के विस्तार, तरीकों, पद्धतियों तथा संगठन में बदलाव, जनसंख्या, व्यापार, सामाजिक स्तरीकरण, सांस्कृतिक अभिव्यक्ति तथा सांस्कृतिक संरचना में बदलाव, तथा कुछ राजनीतिक परिवर्तन भी। इन परिवर्तनों या विशेषताओं से, किसी न किसी रूप में, दुनिया भर के मध्यकालीन समाजों को चिन्हित किया जा सकता है।

ठीक उसी तरह, जैसे दासता को प्राचीन समाजों की विशेषता माना जाता है तथा प्राचीन अर्थव्यवस्था को दासप्रथा की उत्पादन पद्धति पर आधारित माना जाता है (हालांकि सभी उत्पादन कार्य दासों के श्रम द्वारा नहीं किए जाते थे), उसी तरह सामंतवाद (या पूँजीवाद के पूर्व इसी तरह के समान आर्थिक ढाँचे) को मध्यकाल से पहचाना जाता है, तथा मध्यकालीन अर्थव्यवस्था के रूप में जाना जाता है तथा इस काल को मध्यकालीन समाज कहते हैं। 14वीं सदी को पश्चिमी यूरोप में सामंतवाद के पतन तथा पूँजीवाद के विकास के आरम्भिक स्वरूपों की और संक्रमण का काल माना जाता है।[3]

5.2 सामंतवादः मध्यकालीन समाज का ऐतिहासक संदर्भ

अक्सर यह समझा जाता है कि मध्यकाल का अर्थ सामान्य रूप से मानव इतिहास के 'मध्य' (बीच के पड़ाव) से है। जिन शताब्दियों का ज़िक्र हम मध्यकाल या उसके चरणों के रूप में करते हैं उनका समय हर जगह एक सा नहीं है। सामंतवाद या जिसे मध्यकालीन समाज कहा जा सकता है, दुनिया के सभी हिस्सों में कालानुक्रम में एक ही समय पर उदित नहीं हुआ था।

हमें यह अवश्य याद रखना चाहिए कि सामंतवाद और मध्यकालीन समाजों की ऐतिहासिक परिस्थितियाँ एक-दूसरे का प्रतिबिम्ब नहीं थीं: दुनिया के अलग-अलग क्षेत्रों में भौगोलिक स्थिति, आर्थिक हालात, राजनीतिक उतार-चढ़ाव तथा बाह्य प्रभावों ने मध्यकालीन समाजों की प्रकृति को आकार प्रदान किया। तथापि, समाज तथा अर्थव्यवस्था की कुछ ऐसी विशेषताएँ तथा स्वरूप हैं, जिन्हें हम मध्यकालीन या विशेष रूप से सामंतवादी कहते हैं। यहाँ हम यूरोप, विशेषकर पश्चिमी यूरोप के संदर्भ में, तथा इसकी आधारभूत विशेषताओं की बात करेंगे, न कि विभिन्न चरणों में आए बदलावों या भिन्नताओं विषय में जिसे आप पाठ्यक्रम की अगली इकाई में पढ़ेंगे।

5.3 सामंतवाद क्या है?

सामंतवाद से अभिप्राय उन परिवर्तनों से है, जो पश्चिमी यूरोप में 8वीं से 14वीं सदियों के बीच घटित हुए। इन परिवर्तनों के केंद्र में फ़ीफ़ (एक प्रकार की भू-संपत्ति) कही जाने वाली भूमि का अनुदान था, जिसके चारों ओर हमारे अध्ययन काल के सामाजिक तथा आर्थिक सम्बंध केन्द्रित थे। फ़्यूडलिज़्म (सामंतवाद) शब्द की उत्पत्ति जर्मेनिक शब्द 'फ़्यूड' से हुई है, जिसका शाब्दिक अर्थ भूमि के टुकड़े से है। औद्योगिक क्रांति से पूर्व के पूर्व-आधुनिक युग में भूमि ही सम्पत्ति का मुख्य स्त्रोत थी। कौन इस भूमि का अधिपति था, कौन इस पर काम करता था, तथा किन शर्तों के साथ, तथा प्रत्येक को इस भूमि से कितनी आय होती थी; ये

[2] सामंतवाद के चरणों के बारे में विस्तार से आप अगली **इकाई (6)** में पढ़ेंगे।

[3] इस विषय (सामंतवाद से पूँजीवाद का संक्रमण) पर जीवंत बहस है, जिसमें विभिन्न समाज-शास्त्रियों ने दशकों से अपना योगदान दिया है।

न केवल समाज के आर्थिक हालात के संकेतक थे, बल्कि निजी सम्पत्ति तथा रुतबे के निर्धारक भी थे। अतः वे सम्बंध जो इस भूमि के उत्पादन तथा आय को संचालित करते थे, सामंती समाजों को समझने के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। समाज का प्रत्येक हिस्सा जिन शर्तों के साथ इस भूमि का उपयोग करता था, वे ही उनके आपसी सम्बन्धों को भी निर्धारित करती थीं। इस अर्थ में सामंतवाद इस महत्वपूर्ण सम्बंध से निर्धारित होने वाले सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक तंत्र के समुच्चय का प्रतिनिधित्व करता है।

कृषिदासता (serfdom) वह आधारभूत संस्था थी जिसने सामंतवाद की व्यवस्था को निर्धारित कियाः दासता से भिन्न, इसमें भूमि पर काम करने वालों पर भूमि के स्वामी सत्ताधारी कुलीनवर्ग के सदस्य का *स्वामित्व* था। लॉर्ड (Lord; अधिपति) से यह संबंध यद्यपि दासता की अपेक्षा कम कष्टदायक था, तथापि ऐसा था कि इसमें भी उसका शोषण होता था तथा उसके श्रम का इस हद तक शोषण होता था कि उसके पास मुश्किल से जीवन निर्वाह के लिए कुछ शेष रहता था। अधिकांशतः वह अपने औजारों और श्रम से खेती करता था तथा उसे अपनी आजीविका के साधन उस भूमि के टुकड़े से प्राप्त करने होते थे, जिससे वह बंधा हुआ था, न कि लॉर्ड की भूमि पर काम के बदले उसे कोई पारिश्रमिक प्राप्त होता था। यह पारिश्रमिक एक तरह से श्रम के रूप में लगान था, उस **भूमि के टुकड़े** पर जो लॉर्ड द्वारा उसे दी गई थी, ताकि वह स्वयं (लॉर्ड) के लिए श्रम का बंदोबस्त सुनिश्चित कर सके। यह व्यवस्था उस समय प्रारंभ हुई जब दासता व्यवहारिक नहीं रह गई थी।

5.4 सामंतवाद के मुख्य घटक[4]

सामंती समाज का ढांचा पदानुक्रम आधारित था जिसमें व्यक्तियों को अलग-अलग पद प्रदान किए गए थे। राजा इस संरचना के सर्वोच्च स्थान पर था जो कई अधिपतियों को भूसम्पत्ति (fief; फ़ीफ) या 'जागीरें' (estates) प्रदान करता था। अधिपति अपने कई मातहतों (vassal; वसाल) को भूसम्पत्ति वितरित करता था जिनके खास कर्तव्य और जिम्मेदारियां होती थीं। 'नाइट्स' (knights) इस पदानुक्रम के सबसे नीचे पायदान पर स्थित थे और सैन्य सेवाएं प्रदान करते थे। पूरी व्यवस्था व्यक्तिगत निष्ठा और समर्पण के मजबूत बंधन के रूप में काम करती थी। इस भाग में हम सामंतवाद के इन मुख्य घटकों का वर्णन करेंगे।

अधिपति (लॉर्ड), मातहत (वसाल) और समर्पण (होमेज)

वह वैधानिक प्रक्रिया, जिसके तहत एक व्यक्ति अपने को एक संरक्षक के हवाले कर देता था, 'इकरारनामा' ('commendation') के नाम से जानी जाती थी। इसमें दोनों ही पक्षों पर कई बंधन और दायित्व होते थे। जो व्यक्ति स्वयं को अनुबंधित करता था वह वसाल कहलाता था। वह अपने मालिक यानी अधिपति (लॉर्ड) की सेवा और सम्मान करने का वचन देता था बशर्ते इस सेवा और सम्मान के बदले में उसे एक आज़ाद आदमी का हक प्राप्त होता रहेगा। अधिपति (लॉर्ड) अपने वसाल की देखरेख और सुरक्षा का वचन देता था। इस इकरारनामे को वैद्यता प्रदान करने के लिए कुछ औपचारिकताएं भी पूरी करनी पड़ती थीं।

समर्पण (homage; होमेज) इस इकनारनामे का प्राथमिक संस्कार था। मेरोविन्जियन युग में सभी वर्ग के लोगों को यह रस्म करनी पड़ती थी, परन्तु कैरोलिन्जियन राजाओं के शासनकाल में यह अभिजात वर्ग के सदस्यों तक ही सीमित हो गया। होमेज ग्रहण करने की इस प्रक्रिया में दो तत्व शामिल थेः *इमिक्सिटो मेनम* (*immixito manuum;* इसमें वसाल घुटनों के बल, नंगे सिर और निहत्था, अपने हाथ जोड़कर अपने लॉर्ड के हाथों के बीच रखता था, जो अपने दोनों हाथों से उसके हाथों को थाम लेता था) और *वोलो* या स्वीकृति का

[4] यह खंड इग्नू पाठ्यक्रम **MHI-01**: ***प्राचीन और मध्ययुगीन* समाज, ब्लॉक 6, इकाई 21** से लिया गया है। इस भाग के लेखक डॉ. बोधिसत्व कार, सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज़, जे.एन.यू. नई दिल्ली हैं।

इजहार, जिसमें वसाल अपने को लॉर्ड के अधीन घोषित करता था और लॉर्ड इस आत्मसमर्पण को बोलकर स्वीकार करता था। आठवी शताब्दी के मध्य में इन वसालों की प्रतिष्ठा में वृद्धि का एक प्रमाण यह मिलता है कि कैरोलिन्जियनों ने स्वामीभक्ति की शपथ का एक समारोह (वसाल द्वारा अपने लॉर्ड के प्रति स्वामीभक्ति की स्वीकारोक्ति) शामिल किया जिसमें इस बात पर बल दिया गया कि ये वसाल अभिजात वर्ग के सदस्य हैं और स्वतंत्र व्यक्तियों के तौर पर सेवा करेंगे।

एनफीफमेंट (**enfeoffment**) के समय आमतौर फ़ीफ़ प्रदान करने की प्रक्रिया पर होमेज और स्वामिभक्ति की शपथ (oath of fealty) पूरी कर ली जाती थी। यह एक प्रकार का **अभिषेक** (**investiture**) होता था जिसमें सम्पत्तिगत स्वामित्व का हस्तांतरण होता था और इस अवसर पर वसाल प्राप्त भूसम्पत्ति (फ़ीफ) पर कार्य करने और अपने मालिक के प्रति निष्ठावन रहने का दावा करता था। यदि मातहत (वासल) के दायित्व के सकारात्मक पक्ष को देखें तो इसमें अपने लॉर्ड को कुछ निश्चित सेवाएं प्रदान करना था जिसे आमतौर पर सहायता (*ऑक्सिलियम; auxilium*) और सलाह (*कॉन्सिलियम; consilium*) के रूप में वर्गीकृत किया गया था। इसके अनिवार्य तत्व सैन्य दायित्व के अतिरिक्त, सहयोग के दायित्व में *मैनर* (*manor*) के प्रशासन या लॉर्ड के घरेलू कामकाज (*ऑक्सिलियम*) संबंधी कर्तव्य भी उसमें शामिल थे, जैसे संदेश ले जाना, रक्षक प्रदान करना और जरूरत पड़ने पर लॉर्ड को वित्तीय सहायता देना।

होमेज और स्वामीभक्ति (fealty) के पारस्परिक उत्तरदायित्व की प्रकृति व्यक्तिगत थी। इसलिए करार से सम्बद्ध दोनों पक्षों के अलावा यह किसी और को प्रभावित नहीं करते थे। इसलिए लॉर्ड और वसाल के बीच कोई कानूनी रिश्ता नहीं होता था। हालांकि सिद्धांततः यदि कोई पक्ष अपना दायित्व पूरा नहीं कर पाता था तो उसको दंड देने के प्रावधान थे, परंतु बारहवीं और तेरहवीं शताब्दी तक आते-आते यह व्यवस्था काफी अप्रभावी हो गई थी और अधिकांशतः दायित्व पूरा न करने से जो टकराव उत्पन्न होता था उसका समाधान सशस्त्र संघर्ष द्वारा ही किया जाता था।

भू-सम्पत्ति (फ़ीफ़), काश्तकारी (टेनेमेंट्स) और निजी भूमि (एलॉड्स)

लॉर्ड या वसालों के समूह का प्रमुख लॉर्ड, वसालों को या तो अपने घर में रख सकता था और उन्हें अपने खर्चे पर रोटी, कपड़ा और मकान मुहैया करवाता था या फिर काम के बदले उन्हें भूमि का एक टुकड़ा या जमीन से मिलने वाली नियमित आय दे देता था जिससे वह अपना जीवनयापन करते थे। अधिपति अपने वसाल को जीवनयापन करने के लिए जो सुविधाएं प्रदान करता था, उसके बदले में उसे अपने लार्ड की अनुबन्ध के अनुसार सेवा करनी पड़ती थी और वसाल को मातहती के तहत जो जमीन मिलती थी उसे ***बेनेफिस*** (**benefice**) या *फ़ीफ़* कहा जाता था।

आमतौर पर फ़ीफ़ एक भू-सम्पदा के रूप में होती थी जिसके आकार में भिन्नता हो सकती थी। परंतु एक फ़ीफ़ भू-सम्पदा के अतिरिक्त सार्वजनिक प्राधिकार या दायित्व या अधिकार, जिसमें कर वसूलने और बाजार से शुल्क वसूलने का अधिकार, सिक्का ढालने और न्याय देने का अधिकार, वकील, मेयर, संरक्षण, ग्रहणकर्ता आदि जैसे कार्य करने का अधिकार हो सकता था। इस प्रकार की फ़ीफ़ जिसमें भू-सम्पदा नहीं होती थी किंतु नियमित अंतराल पर निश्चित भुगतान का अधिकार प्राप्त होता था, 'नग़दी फ़ीफ़' (money fief) कहलाती थी। लॉर्ड और वसाल दोनों के संबंध और अधिकार की प्रकृति बदलती शताब्दियों में परिवर्तित होती रही। चूंकि वसाल अनुवांशिक नहीं था, इसलिए वसाल के उत्तराधिकारियों को उसके पारिश्रमिक भुगतान का अधिकार भी वंशानुगत नही था। परंतु बारहवीं शताब्दी के अंत तक लगभग सभी जगह पिता के स्थान पर पुत्र के अभिषेक की प्रथा कानूनी दर्जा प्राप्त कर चुकी थी।

फ़ीफ़ के अन्तर्गत कुछ ऐसी भी सेवाएं शामिल थीं जिसमें व्यक्तिनिष्ठता के साथ-साथ पेशेवर विशेषज्ञता भी शामिल थी। इस लिहाज से यह ***विलयन*** (***villein***; कृषि दास) काश्त कृषि दास से काफी अलग था जिसमें बेगार और वस्तु के रूप में कई प्रकार के कर शामिल थे। आमतौर पर *विलयन* (*villein*) काश्त में दस से तीस एकड़ जमीन होती थी। ये जमीन लॉर्ड की *मैनर* (manor) में से दो या तीन जगहों पर दी जाती थी। कानूनी तौर पर लॉर्ड की मर्जी के अनुसार कृषक इस पर काम करता था, परंतु व्यावहारिक तौर पर यह स्थानीय परंपराओं द्वारा संरक्षित होती थीं और आमतौर पर कर अदा करते रहने पर उनका अर्द्ध-वैधानिक आधिपत्य और पैतृक अधिकार मान्य होता था।

सामंती भू-अधिकार – *विलयन* काश्त और फ़ीफ़ – निश्चित रूप से भूमि की मिल्कियत का सबसे ज्यादा प्रचलित माध्यम था। परंतु सम्पत्तिगत अधिकारों का केवल यही एक रूप नहीं था। इसके अलावा 'एलौड' भी थे जो लचीली और संकीर्ण सामंती व्यवस्था की परस्पर निर्भरता के कारण काफी हद तक स्वतंत्र थे। एलौडियल अधिकार में पूर्ण स्वामित्व प्राप्त होता था और इसमें किसी प्रकार की सेवा या भुगतान की शर्त नहीं जुड़ी होती थी। यहां यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि वे सामंत वर्ग के आर्थिक शोषण से पूरी तरह बच नहीं पाते थे जिनका स्थानीय बाजारों और समग्र रूप से क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण था। एलौडियलों को समय-समय पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से बिचौलियों के माध्यम से उन्हें शुल्क देना पड़ता था।

मैनर

कृषि अर्थव्यवस्था में उत्पादन की आधारभूत इकाई मैनर (manor) थी, और किसान के स्तर पर यह आधारभूत इकाई उसका परिवार या घर था। मैनर वह भू सम्पत्ति थी, जिसका नियंत्रण सामंती लॉर्ड के हाथ में था, इसमें कई गांवों की ज़मीन शामिल हो सकती थी, या कई गांवों में मौजूद जमीनों के हिस्से या एक ही गांव में विभिन्न ज़मीनों के हिस्से शामिल थे। महत्वपूर्ण यह है कि यह ऐसी संस्था थी, जो लॉर्ड विशेष की ज़मीन को चिन्हित करती थी। अतः कुछ ऐसे लॉर्ड थे जिनका नियंत्रण सैकड़ों गांवों पर था, जहां किसान आबाद थे और उनके द्वारा कृषि की जाती थी, वहीं दूसरे भू-स्वामियों की जमीनों पर कुछ दर्जन भर परिवार ही काम करते थेः सामंतवाद के अंतर्गत यह सत्ताधारी वर्गों में पदानुक्रम और स्तरीकरण का सर्वाधिक स्पष्ट प्रतीक था। जहां तक रोजमर्रा की जरूरतों का प्रश्न है, मैनर भूसंपत्ति कई अर्थों में आत्मनिर्भर थीः अनाज, लोहार, बढ़ई, संगतराश, घरेलू कामकाज, इन सब का प्रबंध इस भूसंपत्ति के भीतर ही हो जाता था। स्त्रियाँ और बच्चे भी काम करते थे, घरों में और शराबखानों में, कताई और बुनाई में। लॉर्ड द्वारा इस्तेमाल होने वाला विलासिता का सामान और नमक या कुछ धातु के सामान व्यापार के माध्यम से बाहर की दुनिया से आते थे। लॉर्ड के इलाके में जंगल शिकारगाह के काम आते थे, तो चरागाह जानवरों को चराने के काम। मैनर में लॉर्ड की गढ़ी (दुर्ग) और उसके घर में काम करने वाले परिचारक वर्ग के परिवार भी रहा करते थे।

लॉर्ड ने इस भूमि पर नियंत्रण कैसे पाया? इसका कुछ हिस्सा उसे फ़ीफ़ के रूप में मिला था, कुछ उसने सैन्य शक्ति के बल पर पाया था और कुछ उसे अनुदान या तोहफे के तौर पर मिला था। उसने इसका अधिकतम उपयोग लाभ के लिए कैसे किया? उसने अपनी मेनोरियल (manorial) भू-संपत्ति को दो हिस्सों में बांटाः *डिमेंन* (demesne), जहां उसक दुर्ग था और परिचारक वर्ग रहते थे; और वह भूमि जो उसने किसानों को खेती और अपनी आजीविका कमाने के लिए दी थी, जिसके बदले में किसान परिवार उस लॉर्ड के *डिमेंन* में बिना किसी अन्य भुगतान के काम करते थे। दूसरे शब्दों में, किसान को लगान के बदले में अपने श्रम की सेवाएं प्रदान करनी होती थीं। इस सब व्यवस्था को दोनों पक्षों ने संयुक्त रूप

से स्वीकार नही किया था, बल्कि लॉर्ड द्वारा अपनी शक्ति का इज़हार करते हुए आरोपित किया गया था। इसमें किसानों पर लॉर्ड की शक्ति के अनुपात के आधार पर भिन्नता भी हो सकती थी। लॉर्ड की भूमि के ये दोनों घटक तथा भुगतान की शर्तें सामंतवाद के इन विशिष्ट उत्पादन के संबंधों से जुड़ी हुई थीं।

इस प्रकार जहां किसान भूमि से बंधा हुआ था। वहीं लॉर्ड अपनी पसंद की शर्तों पर नियमित श्रम की आपूर्ति को लेकर आश्वस्त था। डिमेंन की भूमि का प्रबंधन लॉर्ड द्वारा प्रत्यक्ष रूप से किया जाता था, किंतु इस पर भी उसी प्रकार काम होता था जिस प्रकार किसान की भूमि में, अर्थात यह भी टुकड़ों में बँटा हुआ था और उसी प्रकार की प्रौद्योगिकी व कृषि संबंधों द्वारा संचालित होता था। यद्यपि बाद के चरणों में, लॉर्ड ने नई तकनीकी को अपनाने तथा नगद भुगतान पर मजदूरों को काम पर लगाना शुरू किया, जब उन्हें यह बेहतर लगता था। किंतु किसान को कुछ निश्चित दिनों के लिए लॉर्ड के डिमेंन पर काम करना होता था, जो बुवाई और फसल कटाई इत्यादि के लिए सर्वाधिक उपयुक्त समय होता था। भुगतान का तरीका बदल सकता था, लेकिन लॉर्ड तथा किसानों के बीच संबंध मूलभूत रूप से वैसे ही रहे, यानी कृषि दासता (serf) का, जैसा कि यहां वर्णन किया गया है। इस प्रकार, सामंती व्यवस्था में किसान न केवल उस ज़मीन पर काम करता था जो उसे दी गई थी और जिससे वह अनाज या नगदी के रूप में उपज का हिस्सा देता था, बल्कि वह लॉर्ड के खेतों में भी काम करता था। जैसा कि आप अनुभव करेंगे, यह प्राचीन विश्व में प्रचलित दासता की व्यवस्था से बिल्कुल भिन्न था। सामाजिक संबंधों और आर्थिक संगठन की इस व्यवस्था को कृषिदासता (serfdom) के रूप में जाना जाता है।

लियो ह्यूबरमैन (Leo Huberman) ने कृषिदास की कई श्रेणियों का उल्लेख किया हैः डिमेंन कृषिदास (demesne serfs); जो स्थाई रूप से लॉर्ड की भूमि से बंधे थे तथा केवल उसी पर जीवनयापन और कार्य करते थे; 'बोर्डार' (bordars), जिनके पास गांव के छोर पर बमुश्किल दो या तीन एकड़ ज़मीन थी; और 'कोटार' (cottars), जिनके पास कुछ अधिक ज़मीन होती थी, जिस पर उनकी झोपड़ी खड़ी होती थी। 'कोटर' सबसे निरीह थे, क्योंकि उन्हें भोजन के बदले और बाद के काल में मामूली सी रकम के बदले अपना श्रम लॉर्ड को उपलब्ध कराना पड़ता था। यद्यपि समय के साथ एक ऐसा वर्ग उभरा जिसे 'विलन' (villein) के रूप में जाना जाता है, उनके हालात बेहतर थे, क्योंकि लॉर्ड के साथ उनके कर्तव्य या दायित्व निश्चित थे और उनमें से कुछ किसी भी प्रकार की श्रम सेवाएं नहीं देते थे। समय आने पर उनके पास ही स्वतंत्रता का सबसे अच्छा मौका था, हालांकि वे एक छोटा सा अल्पसंख्यक समूह था।

सबसे शोषणकारी वे 'सामान्य चीजें' (banalities) या 'एकाधिकार' थे जो लॉर्ड को मैनर की सुविधाओं के अधिपति होने के नाते प्राप्त थे। वन भूमि, चरागाह, कार्यशालाएं, शराबखाने, आटे की चक्की – सब कुछ जो मैनर में था – उसके इस्तेमाल के लिए कृषकों को मनमाने दाम चुकाने पड़ते थे। कृषकों को इन सुविधाओं को प्राप्त करने हेतु अन्यत्र जाने की अनुमति नहीं थी। उन करों को भी ध्यान में रखना चाहिए, जो संपत्ति, विरासत पर और यहां तक कि कृषकों द्वारा अपने मकान की मरम्मत करने या विवाह के उत्सव मनाने पर भी देना होता था। ऐसा प्रतीत होता है कि किसान को, चाहे वह कोई भी कार्य करें, लॉर्ड को उसका भुगतान करना पड़ता था! यह सब लॉर्ड द्वारा आरोपित होता था, यद्यपि वह स्वयं उस ज़मीन का मालिक नहीं था, बल्कि केवल किसी उच्चस्थ लॉर्ड का अधीनस्थ भूधारक मात्र था।

एक संस्था के रूप में कृषिदासता यूरोप में सामंतवाद का अंतर्निहित तत्व थी। किसान को जमीन या वस्तुओं को खरीदने या बेचने का अधिकार नहीं था, इधर-उधर जाने की या ज़मीन के उत्तराधिकार की आजादी नहीं थी, यहाँ तक कि विवाह, परिवार और निवास के मामले में भी उसे स्वतंत्र निर्णय लेने की आजादी नहीं थी। अधिकांश किसान एक ही मैनर के भीतर

जन्म लेते, अपनी जिंदगी गुजारते और मर जाते थे। एक तरह से मैनर ही उसकी दुनिया थी और इस भू-संपत्ति पर उसके श्रम और संघर्ष ही उसकी जिंदगी के अनुभव थे।

किसानों को अन्य शुल्क भी चुकाने पड़ते थे, जैसे ***टाइथ* (tithe)** जो उत्पादन का दसवाँ हिस्सा था, यह मुख्यतः चर्च को देय था, किंतु प्रारंभिक चरण में लॉर्ड का भी इसमें हिस्सा होता था। इसे एक धार्मिक कर कहा जाता था, यह उन करों के अतिरिक्त था जो चर्च को भूस्वामी के रूप में हासिल होते थे।

समय के साथ, *फ़ीफ़* तथा अन्य भूमि, जिन पर सामंती लॉर्ड का नियंत्रण था, वंशानुगत हो गईं। सामंतवाद के संपूर्ण काल में किसान के श्रम तथा जिंदगी पर लॉर्ड का कड़ा नियंत्रण बना रहा। जब तक सामंतवाद उत्पादन की पद्धति का प्रमुख रूप बना रहा। ***एलौड*** के रूप में भूमि का एक बहुत छोटा सा हिस्सा इस व्यवस्था के बाहर रहा या इसके प्रभाव से बाहर रहा, और इस मामले में भी, भू-धारी कुलीनों और किसानों द्वारा नियन्त्रित ज़मीनों के बीच अंतर था।

यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि यद्यपि सामान्यतः फ़ीफ़ के अनुदान का मतलब भू-संपत्ति से था, यह कभी-कभी सामान्य रूप में कुछ अधिकारों का अनुदान भी हो सकता था। उदाहरणार्थ, कुछ शुल्कों या बाजार करों का संग्रहण, या मुद्रण और न्याय के अधिकार या ऐसे कुछ निश्चित कार्य, जिन्हें 'नग़दी फ़ीफ़' कहा जा सकता था। ये विशेषकर ग्यारहवीं सदी में अधिकांशतः फ्रांस, जर्मनी तथा इंग्लैंड में प्रचलन में थीं।

किसान का घर तथा परिवार आधारभूत सामाजिक व आर्थिक इकाई थी, जो लॉर्ड के साथ मजबूती से उन दासता के संबंधों द्वारा बंधी थी, जिन्हें कानूनी वैधता और राजनीतिक संरक्षण हासिल था। *वहीं दासता के सम्बंध की यह प्रकृति सम्पूर्ण सामंती समाजिक व्यवस्था का ढाँचा थी।* न्यायिक नियंत्रण के कारण, हम कह सकते हैं कि सामंतवाद में सामाजिक तथा राजनीतिक पहलू भी शामिल थे, जिन पर नीचे चर्चा की गई है।

नाइट्स (योद्धा), टूर्नामेंट्स (प्रतिस्पर्धा) तथा शौर्य (Chivalry)

जॉर्ज ड्यूबी के अनुसार नाइट्स (knights) 'सामंती शोषण के प्रमुख एजेन्ट' थे। वस्तुतः एक 'नाइट' वह घुड़सवार होता था जो किसी अधिपति सामंत (liege-lord) के अधीन होता था। वह तीव्र तथा गतिपूर्ण हमले का उपयोग कर घोड़ा अपने सवार के शत्रु को रौंद सकता था तथा सवार बिना अपने दुश्मनों के हथियारों की ज़द में आए लम्बे बरछे का उपयोग कर उन्हें घायल कर सकता था। और इस तरह फुर्ति के साथ अपने घोड़े से उतरते हुए यह सवार फ़िर किसी घातक हमले के लिए तैयार रहता था। इस तकनीक का सबसे भयावह प्रभाव तब सामने आता था, जब घुड़सवार साथ में मिलकर लड़ते थे। इनका उपयोग समय-समय पर किसानों को डराने तथा उनसे शुल्क वसूलने हेतु ज़ोर-जबरदस्ती में भी होता था।

दसवीं शताब्दी का अंत होते-होते हिरण या जंगली सुअर के शिकार के साथ-साथ शौर्य टूर्नामेंट (प्रतियोगिता) भी 'नाइटों' के मनोरंजन का एक प्रमुख साधन बन गई जिसके जरिए योद्धा आपस में युद्धकलाओं का अभ्यास भी करते थे। टूर्नामेंट ने मध्यकालीन योद्धाओं के लिए आदर्श आचार संहिता को प्रचलन में लाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया, जिसे शिवेलरी (chivalry; शिष्टता) के रूप में जाना जाता है। धीरे-धीरे जब चर्च भी धर्मयुद्धों में शामिल होने लगी तो ईश्वर के प्रति श्रृद्धा और ईसाई सिद्धांतों की रक्षा नाइटों के शिवेलरी कर्तव्य बोध और आचार संहिता में शामिल हो गए। बारहवीं शताब्दी तक इस शिवेलरी (कर्तव्य बोध) की सीमा का विस्तार हुआ और महिलाओं का सम्मान करना और निहत्थों की रक्षा करना भी इसमें शामिल हो गया। परंतु शिवेलरी (कर्तव्य बोध) की यह आचार संहिता नाइटों के आचरण और व्यवहार की एक मार्ग निर्देशिका मात्र थी। जरूरी नहीं है कि हर नाइट इस आचरण का व्यवहार में पालन ही करता

हो। समय के साथ, नाइटों के लिए बनाई गई आचार संहिता (शिवेलरी) भद्र समाज के सज्जन व्यक्ति के आचरण की आचार संहिता में परिणत हो गई।

बोध प्रश्न-1

1) मध्यकालीन समाज के ऐतिहासिक संदर्भ का संक्षिप्त विवरण दीजिए। सामंतवाद से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

....

....

2) लॉर्ड और वसाल के मध्य क्या संबंध थे?

....

....

....

....

....

3) मैनर का संक्षिप्त वर्णन दीजिए।

....

....

....

....

....

4) सामंतीय काल में शिवेलरी (chivalry; शिष्टाचार) कैसे परिभाषित की जाती थी?

....

....

....

....

....

5.5 सामंतवादः रूप तथा संरचना का सिंहावलोकन

सामन्तवाद, और मध्यकालीन अर्थव्यवस्था सामान्यतः सारभूत रूप से एक वर्ग समाज का प्रतिनिधित्व करती है जो गैर-आर्थिक नियंत्रण पर आधारित था, लेकिन जिसमें आर्थिक ढाँचा, जिसे सत्ताधारी वर्ग ने थोपा था, वह प्राचीन समाजों से काफी भिन्न था। इसका मतलब है, कि संस्थागत तथा कानूनी तंत्र इसके सृजन तथा इसकी निरंतरता के लिए उतना ही

महत्वपूर्ण थे जितना कि आर्थिक ढाँचा। मानव इतिहास के मध्यकाल तथा सामंतवाद के युग में सम्पत्ति का प्रमुख स्रोत भूमि बनी रही। भूमि का नियंत्रण अधिपति के पास बना रहा या उनके पास था जो राजनीतिक तथा सैन्य सेवाओं के बदले भूमि धारण करते थे। यह हमेशा अपरिवर्तनीय नहीं था विशेष कर सामन्तवाद के बाद के चरण में।

मुख्य सामाजिक वर्गों में शामिल थेः भूस्वामी तथा किसान जो इन ज़मीनों में काम करते थे, भिन्न-भिन्न रूप में, तथा जिनका भूस्वामी के साथ सम्बंध कानूनी प्रतिबंधों से तय होता था, जिसमें उन्हें लॉर्ड के लिए काम करना होता था, उसके प्रति सेवाओं तथा कर्तव्यों का निर्वाह करना तथा कर चुकाना होता था। सम्बन्धों की इस योजना में चर्च अनन्य रूप से महत्वपूर्ण स्थान रखती थी, अंशतः भूस्वामी के रूप में और अंशतः धर्म व अंतरात्मा के रक्षक के रूप में। मध्यम वर्ग पूरी तरह से अनुपस्थित तो नहीं था, पर इन समाजों में काफ़ी कमज़ोर था, यह परिस्थिति चौदहवीं सदी तक आते-आते काफ़ी बदल चुकी थी।

सामंतवाद इस तरह से मोटे तौर पर भूस्वामी तथा किसानों के बीच विभाजन के साथ बहुल सोपानक्रमों वाला समाज था, जिनमें से प्रत्येक अपने से नीचे या ऊपर के सोपान से कर्तव्यों, दायित्वों तथा अधिकारों के समूह से बँधे हुए थे, लेकिन किसी भी संदर्भ में उनके समान अधिकार नहीं थे। कुल मिलाकर यह 'सम्पूर्ण सामाजिक वातावरण' (*ambience sociale totale*) था, जिस प्रकार मार्क ब्लॉक (सामंतवाद के प्रख्यात इतिहासकार) इसे देखते हैं। सामंतवाद में ये तत्व शामिल थे: फ़ीफ़ अर्थात वेतन के बजाय सेवा वाली कृषि भूमि (tenement), बाहुबल तथा राजनीतिक संरक्षण के माध्यम से भूमि पर नियंत्रण रखने वाले योद्धाओं का आधिपत्य, क्षेत्रीय स्थिरता को सुनिश्चित करने वाले संरक्षण के बंधन जो समाज के हर स्तर से सेवा के माध्यम से जुड़े थे। इसने योद्धा-भूधारक वर्ग के लिए मातहती (vassalage) का रूप ग्रहण किया, जिसने **संप्रभुता के विखंडन** (parcellization of sovereignty) तथा किसानों के लिए *मैनर* केंद्रित कृषिश्रम के आर्थिक संगठन को जन्म दिया।

विभिन्न शताब्दियों में तथा अलग-अलग क्षेत्रों में अर्थव्यवस्था सरल से लेकर जटिल रूप लिए हुए थी। इस विभिन्नता को शहरों, व्यापार, वास्तुकला की उपलब्धियों, सामाजिक आदर्शों के विकास तथा अमीरों की जीवनशैलियों के साथ-साथ शहरों, शहरीय केंद्रों तथा व्यापारिक वर्गों के उदय से भी मापा जा सकता है।

राजनीतिक संप्रभुता मूलतः विखंडित थी, जिसमें सर्वोच्च सर्वव्यापी 'पवित्र रोमन साम्राज्य' था। पूर्वी तथा मध्य यूरोप में, हालाँकि, सामंतवाद का आगमन तथा विकास निरंकुश राजतंत्रों के अंतर्गत हुआ था। किसी समाज को सम्पूर्णता में समझने तथा उसकी आधारभूत विशेषताओं को रेखांकित करने के लिए उसके परिपक्व रूप का अध्ययन किया जाना चाहिए। जब हम सामंतवाद के रूप तथा संरचना की बात करते हैं, तो हम उन तत्वों की ओर इशारा करते हैं, जिन्होंने इसके परिपक्व तथा विकसित रूप को गठित किया था। कोई भी समाज, हालांकि, अपनी विकसित अवस्था में अकस्मात् ही नहीं पहुँच जाता है, तथा इसकी कई विशेषताओं को पहले के वर्षों में भी देखा जा सकता है। इतिहासकार सामंतवाद के उदय तथा पतन को लेकर एक जीवंत चर्चा में शामिल रहे हैं।

सामंतवाद के उदय पर विवाद

सामंतवाद के शुरुआती इतिहासकार जैसे एफ. डब्ल्यू. मैटलैंड, कार्ल बूचर, फ़्यूस्ते दे कुलांज ने इस व्यवस्था के कानूनी पहलुओं पर अधिक बल दिया है। इनमें से अधिकांश इतिहासकारों ने इन विशेषताओं के मूलों को चिन्हित किया तथा इसके तत्वों की जर्मनिक राज्यों तथा रोमन साम्राज्य से निरंतरता पर ज़ोर दिया है। जाने-माने बेल्जियन इतिहासकार हेनरी पिरेन के

लेखन के साथ इस क्लासिकल युग की निरंतरता के सिद्धांत ने नया मूलगामी रूख़ अख़्तियार किया। पिरेन ने अपने सिद्धांत को यूरोप में सामंतवाद के विकास पर इस्लामी विस्तार के प्रभाव के आधार पर गढ़ा है। हेनरी पिरेन ने प्राचीन दुनिया की परम्पराओं के टूटने तथा भूमध्यसागरीय एकता के अंत की व्याख्या अरबों के विस्तार के रूप में की है। पिरेन के इस सिद्धांत को स्वीकृति तथा आलोचना दोनों ही मिली हैं। कुछ इतिहासकारों ने यूरोप में सामंतवाद के उदय में इस्लाम की भूमिका तथा भूमध्यसागरीय व्यापार व वाणिज्य में अवरोध की निर्णायक भूमिका पर सवाल खड़े किए हैं। दूसरी ओर, इस सिद्धांत की आलोचना ने नई दिशाओं में विभिन्न अनुसंधानों को प्रेरित किया है।

बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक सामंतवाद को लेकर दो अवधारणाएँ मुख्यतः सामने आईं – पहली अवधारणा, मुख्यधारा का उदारवादी मत, सामंतवाद को आज्ञाकारिता तथा अधीनस्थता के व्यवहारों पर आधारित संस्थानों के समूह के रूप में देखती है। दूसरी अवधारणा, जिसे खासकर मार्क्सवादी तथा सोवियत इतिहासकारों ने प्रचलित किया। उन्होंने सामंती समाज के आर्थिक ढाँचे के परीक्षण पर ध्यान दिया है। सामंतवाद की सीमित कानूनी अवधारणा तथा आर्थिक निर्धारणवाद सम्बंधी अवधारणा, दोनों से ही दूर जाते हुए फ्रांसीसी इतिहासकार मार्क ब्लॉक ने इस परिघटना को उन विभिन्न स्वरूपों की पड़ताल के रूप में समझने की कोशिश की है, जिसे वे 'मानव का मानव से बंधन' ('ties between man and man') कहते है। ब्लॉक ने यह तर्क दिया कि नातेदारी के बंधन सामंतवाद के विकास के साथ और प्रगाढ़ होते गए।

अब हम अपना ध्यान सामंतवाद के उदय की ओर करते हैं। अतः ब्लॉक के लिए सामंतवाद की अवधारणा स्थानीय परिघटनाओं के तुलनात्मक अध्ययन से सम्बंध रखती है, बजाय कि मध्यकालीन समाज-व्यवस्था के लिए एक सर्वव्यापी व्याख्या से। ब्लॉक के सिद्धांत की कई आधारों पर आलोचना हुई है।

ब्लॉक से प्रेरित होकर युद्धोत्तर काल में मध्यकालीन समाज के सबसे मौलिक तथा प्रभावशाली इतिहासकारों में से एक जॉर्ज ड्यूबी ने सामंती संस्थाओं के आर्थिक आयामों से इतर वैचारिक आयामों पर ध्यान देने का प्रयास किया। ड्यूबी द्वारा फ्रांस के मकोनाएस क्षेत्र में दसवीं से बारहवीं सदी तक के राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक जीवन के विस्तृत अध्ययन ने उनके एक पीढ़ी के ऐतिहासिक अनुसंधानों ने उन्हें उस पर ध्यान केंद्रित करने को प्रेरित किया है, जिसे वे ग्याहरवीं सदी की 'सामंती क्रांति' कहते हैं। यह तर्क देते हुए कि फ़ीफ़ कभी भी सामंती व्यवस्था में 'एक परिधीय या गौण भाग से अधिक कुछ नहीं रही है', ड्यूबी ने अपना ध्यान इस काल में सामाजिक भूमिकाओं के पुनर्व्यवस्थापन पर केंद्रित किया है। 'सामंती क्रांति' शब्द से अभिप्राय सम्पूर्ण सामाजिक प्रक्रिया से है जो धीमी थीं किंतु नज़र में आती थी, जिसने युद्ध तथा लूट की पुरानी अर्थव्यवस्था को ना केवल रूपांतरित किया बल्कि कुलीन परिवार के ढाँचे को पितृवंशीय स्वरूप प्रदान किया तथा मानसिक अभिवृत्तियों के दायरे में भी संबंधित बदलावों को प्रभावित किया। ड्यूबी के लेखन ने इतिहासकारों के बीच तीख़ी बहस को जन्म दिया और कई आधारों पर आलोचना भी झेलनी पड़ी जैसे सामंती क्रांति में महिलाओं की भूमिका को कम आँकना।

लिन व्हाइट जूनियर ने सामंती समाज को आकार देने में प्रौद्योगिकी की भूमिका पर विशेष बल देते हुए इस बहस में 1962 में महत्वपूर्ण दखल दिया। इस नए स्तर पर, व्हाइट ने यह दावा किया कि घोड़े की रक़ाब तथा नाल की खोज ने सामंती समाज के सैन्य संगठन को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। बाद के इतिहासकारों ने व्हाइट द्वारा प्रौद्योगिकीय सुधारों को इस काल की बृहत् विशिष्ट सामाजिक तथा आर्थिक प्रक्रियाओं से अलग रखकर देखने की आलोचना की है। इस अर्थ में, हिल्टन तथा सॉयर का तर्क है कि व्हाइट के सिद्धांत में तकनीकी निर्धारणवाद का प्रबल तत्व निहित है। इसी बहस में, पेरी एंडरसन ने

यह तर्क दिया कि प्रौद्योगिकीय नवाचारों की मात्र उपस्थिति उनके व्यापक स्तर पर इस्तेमाल किए जाने की गारंटी नही होती। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि कई इतिहासकारों ने व्हाइट के इस आधारभूत अनुमान पर सवाल खड़े किए, कि फ्रैंक लोग ही रक़ाब का सर्वप्रथम उपयोग करने वाले थे।

यद्यपि इस परम्परा में सामंतवाद को भूमि तथा प्राकृतिक अर्थव्यवस्था के वर्चस्व वाली पद्धति के रूप में लम्बे समय से अध्ययन किया जा रहा था, इस सिद्धांत का पूर्ण तथा विकसित रूप 1978 में ब्रिटिश इतिहासकार पेरी एंडरसन के लेखनकार्य में सामने आया। एंडरसन का विश्लेषण सामंतवाद को प्रतिगामी अर्थव्यवस्था या पतन और विखंडन के युग के रूप में देखने के पारंपरिक वर्गीकरण का विरोध करता है। यह विचार रखते हुए कि सामंतवाद क्लासिकल दास उत्पादन पद्धति की अपेक्षा कृषि उत्पादकता तथा कृषि अधिशेष बढ़ाने की एक अधिक उन्नत व्यवस्था थी, उनका तर्क है कि सामंतवाद में कई संरचनागत अंतर्विरोध थे, जिनका कुल परिणाम कृषि अर्थव्यवस्था को आगे ले जाने में दिखाई देता है। यद्यपि उनका सिद्धांत केवल एक पहलू पर ज़ोर देकर सामंती समाज के व्यापक परिदृश्य को अनदेखा कर देता है। हाल के वर्षों में सामंतवाद की बहस मौजूदा ऐतिहासिक साहित्य के पुनर्मूल्यांकन की ओर रूख कर चुकी है।

कैसे और किन क्षेत्रों में सामंतवाद का उद्भव हुआ?

सामंतवाद के उद्भव को उन परिस्थितियों में खोजा जा सकता है जो रोमन साम्राज्य के पतन के बाद सामने आईंः वही कारक जो दास उत्पादन पद्धति के पतन के लिए जिम्मेदार थे, तथा जर्मनिक कबीलों के हमलों ने भी स्थानीय कुलीनों द्वारा सत्ता के हरण व साथ-साथ आश्रित श्रम के उदय, जो सामंती समाजों की पहचान था, को संभव बनाया। यह सब सातवीं सदी में घटित हो चुका था। व्यापार और वाणिज्य व मुद्रा और विनिमय तथा शहरों के पतन की विशेषताएँ, तथा रोमन प्रशासनिक संस्थाओं तथा सैन्य नियंत्रण के खत्म होने के बाद केंद्रीकृत राजनीतिक सत्ता की अनुपस्थिति आरम्भिक चरणों में सामंतवाद के मुख्य पहलु बने रहे।

लेकिन सब कुछ नष्ट नहीं हुआ था, यूरोप में सामंतवाद रोमन परम्पराओं तथा जर्मनिक कबीलों, जिन्हें अक्सर 'बर्बर' कहा जाता है, की परम्पराओं का सम्मिश्रण था। जैसा कि पेरी एंडरसन ने दर्शाया है, सामंतवाद के अधिकांश संस्थान, वस्तुतः, मिले-जुले मूल वाले थेः फ़ीफ़, मैनर तथा कृषिदासता इसी प्रकार के सम्मिश्रण का नतीज़ा थे (एंडरसन, 1974: 130-131)। लोक न्याय तथा परस्पर दायित्वों की परम्पराओं के साथ-साथ लिखित कानून की रोमन परम्परा सामंती समाज के प्रमुख निर्माणकारी तत्व थे।

संक्रमण के काल में, स्थानीय कुलीनों को रियायत तथा दासता के स्वरूप में परिवर्तन, जो बेहतर उत्पादन में एक रुकावट था, से ऐसी व्यवस्था की ओर बदलाव हुआ जिसमें लॉर्ड की किसान की जीविका के प्रति जिम्मेदारी उसके तथा उसके परिवार के भरण-पोषण के लिए ज़मीन का कुछ टुकड़ा मात्र देने से अधिक नहीं थी। लॉर्ड को न तो किसान को उपकरण उपलब्ध कराने होते थे और न ही नई तकनीकों को परिचित कराने की आवश्यकता होती थी, सिवाय उसकी अपनी डिमेंन पर जिसका सारा उत्पादन उसकी आय थी। जिसे किसान के अधिकाधिक शोषण से हासिल किया जाता था। दूसरी ओर, किसान को लूटेरों से सुरक्षा की आवश्यकता थी, जो किसी विशेष लॉर्ड से जुड़कर सुनिश्चित की जा सकती थी।

सामंतवाद के तीन क्षेत्रीय रूप

सोवियत इतिहासकारों का अनुगमन करते हुए पेरी एंडरसन ने सामंतवाद के तीन क्षेत्रीय रूप सामने रखे : i) पहले क्षेत्र में उत्तरी फ्रांस और इसके पड़ोसी क्षेत्र शामिल थे। **'यूरोपीय सामंतवाद के इस केन्द्रीय क्षेत्र'**, के लिए जो मोटे तौर पर कैरोलिंजियन साम्राज्य की मातृभूमि के समान था, एंडरसन ने रोम और जर्मनिक तत्वों के बीच एक 'संतुलित संश्लेषण' पाया; ii) **दूसरा क्षेत्र** इस मुख्य क्षेत्र के दक्षिण में पड़ता था जिसमें प्रोवेन्स, इटली और स्पेन शामिल थे। यहां, खासतौर पर इटली में, प्राचीन रोम और 'बर्बर' उत्पादन के तरीकों को फिर से एक साथ मिलाकर प्रस्तुत करने वाली रोम की विरासत का विशिष्ट प्रभाव था। ग्रामीण समाज विविधता से पूर्ण था। इसमें मैनर (अधिकांशतः लोम्बार्डी और उत्तरी इटली में), स्वतंत्र किसान (प्रमुखतः मध्य इटली में), *लैटिफंडिया* (खासतौर पर दक्षिण में) और विभिन्न क्षेत्रों में शहरी भूमिपति रहा करते थे। खासतौर पर क्लासिकीय परम्पराओं को बचाए रखने के लिए दसवीं शताब्दी के बाद उस क्षेत्र में नागरिक राजनीतिक संगठन भी फल-फूल सके; और iii) मुख्य क्षेत्र के उत्तर और पूरब जिसमें जर्मनी, स्कैनडिनेविया और इंग्लैंड शामिल थे, **तीसरा क्षेत्र** था, जिस पर रोम के शासन का प्रभाव मामूली या न के बराबर था। परिणामस्वरूप इन स्थानों पर स्वतंत्र एलोडियल किसानों का इसकी सामुदायिक संस्थाओं पर कब्जा था जिसने सामंतवाद की ओर बढ़ने के संक्रमण की गति को धीमा कर दिया। इसके परिणामस्वरूप बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक सैक्सोनी में कृषि दास प्रथा लागू नहीं की गई और वस्तुतः स्वीडन में तो यह कभी भी ठीक से स्थापित भी नहीं हो पाई।

स्रोत्रः एम एच आई-01: *प्राचीन और मध्ययुगीन समाज*, खंड-6, इकाई, 20: 14

उच्च स्तर पर भूमि अधिकारों का यह दान सेवा के बंधनों से जुड़ा था, विशेषकर सैन्य सेवाओं से, अनुदानों या इनाम की भूमि से अलगः यह व्यवस्था जो मातहती (vassalage) को गठित करती थी, इसका सूत्र नीचे की ओर से सबसे छोटे लॉर्ड से होते हुए सबसे नीचे स्थित कृषक तक जाता था, जो एक कृषिदास (self) होता था। समुदाय द्वारा उपयोग में लाए जाने वाली कुछ सामुदायिक भूमि भी होती थी, जिस पर लॉर्ड का नियंत्रण था। सम्पूर्ण सामंती काल में यह भूमि सामंत तथा किसानों के बीच तनाव का आधार बनी रही, यह ऐसा अंतर्विरोध था जिसकी जड़ें संक्रमण काल में थीं।

अर्थव्यवस्था तथा समाज के सामन्तीकरण की ये प्रक्रियाएँ फ़्रांस तथा बाद के काल में जर्मनी में अधिक पूर्णता तथा तेज़ी के साथ विकसित हुई थीं, किंतु इटली के उन हिस्सों में ऐसा नहीं हुआ जहाँ प्राचीन और नगरीय परम्पराएँ अपनी मज़बूती बनाए हुई थीं, जो नगर राज्यों का आधार थीं। स्पेन में सामंती विकास और भी अधिक अवरूद्ध था, जहाँ राजा भूस्वामियों के ऊपर अपेक्षाकृत अधिक सत्ता का अधिकार रखते थे, और स्कैंडेवेनिया में तो यह प्रायः अनुपस्थित ही थी। सिसली तथा इंग्लैंड में यह अधिक कठोर था तो वहीं स्लाव इलाकों में अपने विशेष स्वरूप में इसका विकास हुआ था।

भूमध्यसागरीय क्षेत्र में सारासेनों तथा मध्य यूरोप में मेग्यारों के नौवीं सदी में आक्रमणों की दूसरी लहर का परिणाम एक नए चरण के रूप में हुआ, जब अधिक विस्तृत क्षेत्रों में कृषिदासता की प्रणाली तथा ऊपर वर्णित निर्भरता व सोपानक्रम के बंधनों पर आधारित समाज का फैलाव हुआ। सामंती व्यवस्था तथा उसके रूप व संरचना के उभार तथा उसमें स्थिरता का आना एक दीर्घकालीन प्रक्रिया थी, जिसमें उत्पादन तथा सामाजिक संबंधों की पुरानी तथा नई शक्तियाँ समायोजन और बलपूर्वक दोनों प्रकार से बने रहने हेतु संघर्ष कर रही थीं।

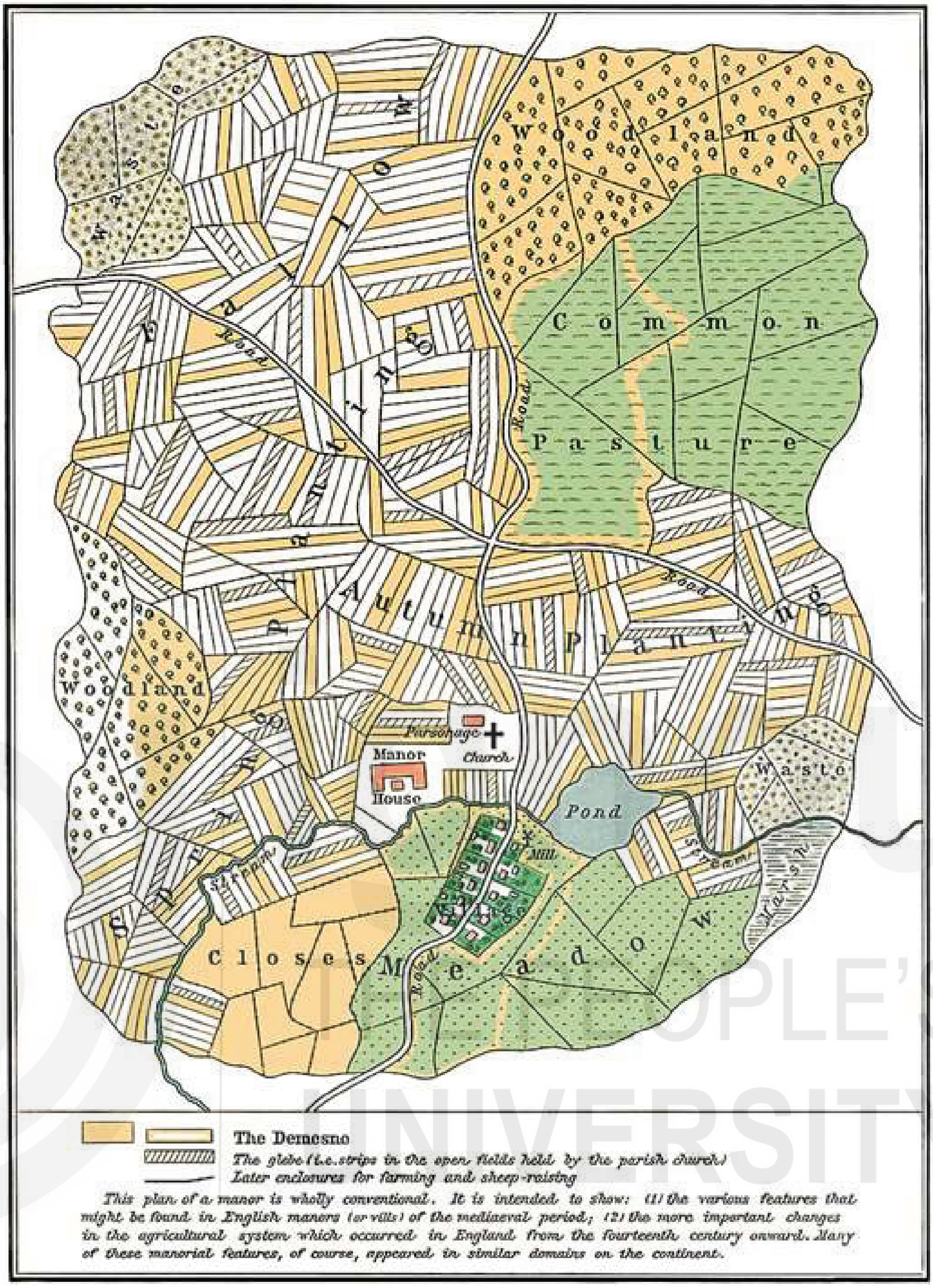

मानचित्र 5.1ः सामंती मैनर पर आधारित मानचित्र

साभारः विलियम आर. शैफर्ड, *हिस्टोरिक्ल एटलैस*, न्यूयॉर्क, हेनरी होल्ट एंड कम्पनी, 1923-(1)

स्रोतः https://en.wikipedia.org/wiki/Demesne#/media/File:Plan_mediaeval_manor.jpg

पूर्व में, स्टेप्स तथा उत्तरी क्षेत्रों के विषम जलवायु वाले क्षेत्रों में लंबे समय से चले आ रहे चारागाही खानाबदोश व्यवस्था ने कृषि दासता की शुरुआत को विलंबित किया। हालाँकि, अंततः *बोयार* (शक्तिशाली भूमिपति) जो राजतंत्र के अतिक्रमण द्वारा शक्ति हासिल कर चुके थे, उन्होंने ऐसी व्यवस्था को आरोपित किया, जिसमें किसान को भूमि से बांध दिया गया था। कृषिदासता शोषणकारी परिस्थितियों में किसानों के भाग जाने पर उनके श्रम की उपलब्धता को सुनिश्चित करने वाली एक युक्ति बन गई। इसे अक्सर 'द्वितीय कृषिदासता' के रूप में संबोधित किया जाता है, क्योंकि कालानुक्रमिक रूप से यह पश्चिमी यूरोप की अपेक्षा देर से उभर कर आई थी तथा नौंवी से चौदहवीं शताब्दी के पश्चिमी यूरोप और पन्द्रहवीं से अठारहवीं सदी के पूर्वी यूरोप की व्यवस्था से बिल्कुल भिन्न थी। सोलहवीं सदी से पूर्व के प्रयासों को रूसी विजयों तथा बड़े स्तर पर किसानों के विद्रोह के प्रतिरोध द्वारा बाधित कर दिया गया था। साथ ही यहां रोमन साम्राज्य की तरह के प्राचीन साम्राज्य जैसा कोई पूर्व

उदाहरण नहीं था और न ही जर्मनिक कबीलों के आक्रमण के प्रभावाधीन कानूनों के संहिताबद्ध होने और पारंपरिक व्यवहारों का संश्लेषण मौजूद था। अंततः जब कृषिदासता की यहां स्थापना हुई तो यह पश्चिमी हिस्सों की तुलना में यूरोप के पिछड़े तथा मध्य क्षेत्रों से ज्यादा मिलती-जुलती थी, हा़लांकि मेनोरियल व्यवस्था का असर अत्यंत प्रभावकारी था।

5.6 सामंतवाद के अंतर्गत आर्थिक व्यवस्था

प्राचीन समाजों से भिन्न, सामंती अर्थव्यवस्था में नगरीकरण और व्यापार का स्तर निम्न था। बाजार के लिए उत्पादन काफी कम और शहरों का आकार काफी छोटा था। कृषि आधारित इस अर्थव्यवस्था की मुख्य विशेषता सामंती लॉर्ड की विशाल भू-सम्पत्ति थी। कृषि की तकनीकें सरल थीं, मुख्यतः किसान एक लकड़ी का हल, जिसे बैलों द्वारा खींचा जाता था जिस पर किसान का अपना स्वामित्व होता था और उसी के श्रम द्वारा प्रभुत्व किया जाता था प्रयोग करता था। **द्विचक्रीय कृषि (two field system)** पर थी जहां भूमि के एक हिस्से को प्रत्येक बुवाई के बाद दूसरे मौसम में परती छोड़ दिया जाता था। पहले चरण में प्रौद्योगिक उन्नति के अभाव में कृषि, श्रम सघन बनी रही और लॉर्ड के लिए आय में इजाफा करने का एकमात्र तरीका किसानों को खेत में लंबे समय तक काम कराने और उस पर आरोपित शोषणकारी दायित्वों तथा करों के बोझ में वृद्धि करने से ही संभव था। अतः सामंतवादी अर्थव्यवस्था में सामंती भूमि-धारी वर्गों और किसानों के बीच एक आधारभूत अंतर्विरोध था। संपूर्ण सामंती काल में किसानों द्वारा निष्क्रिय प्रतिरोध या हिंसक विद्रोह के माध्यम से प्रतिक्रिया व्यक्त की गई।

ग्याहरवीं सदी तक जंगलों और दलदली भूमि की सफाई के परिणामस्वरूप नए क्षेत्रों को खेती के अंतर्गत लाया गया। लोहे के हल के प्रचलन से ज़मीन को अधिक गहरे खोदना और समृद्ध पोषक तत्वों तक पहुंचाना संभव हुआ। घोड़े की जीन की तकनीक में सुधार हुआ और घोड़े बैलों की जगह लेने लगे। पवनचक्की तथा पनचक्कियों के प्रसार, नई फसलों की शुरुआत और **त्रिचक्रीय खेती (three field system)** की व्यवस्था के साथ-साथ ऊपर उल्लिखित कारकों ने कृषि उत्पादन और भोजन की उपलब्धता को बढ़ाया। इन विकासक्रमों ने उन भू-स्वामियों को लाभ पहुचाया जो इन बदलावों की कीमत चुका सकते थे, किंतु उन किसानों को नहीं जो अधिकांश क्षेत्रों में भूस्वामी के साथ बदले हुए दायित्वों और परिस्थितियों के संबंध के कारण दरिद्र बनते जा रहे थे। इन किसानों का उत्पीड़न होना जारी रहा, क्योंकि भूमि मुख्यतः सामंती अधिपतियों के हाथों में थी तथा जो अपनी शर्तों के साथ इन किसानों से जमीनों पर काम करवाते थे।

बोध प्रश्न-2

1) सामंतवाद के रूप तथा संरचना की संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत कीजिए।

....

....

....

....

....

2) सामंतवाद के उदय के संबंध में विभिन्न इतिहासकारों के मध्य बहस पर चर्चा कीजिए। इनमें से प्रत्येक सिद्धांत में जिन कारकों पर बल दिया गया है, उनकी व्याख्या कीजिए।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

....

....

....

....

....

3) पेरी एंडरसन के मुताबिक, किन क्षेत्रों में सामंतवाद का उदय हुआ? सामंतवाद के तीन प्रकार के प्रक्षेत्रों वाले उनके वर्गीकरण की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

4) सामंतवाद के अंतर्गत आर्थिक व्यवस्थाएं क्या थीं?

....

....

....

....

....

5.7 सामंतवादः कानूनी पहलू तथा राजनीतिक सत्ता

हम ऊपर चर्चा कर चुके हैं कि सामंतवाद की कुछ गैर-आर्थिक विशेषताएँ भी थीं। ये सामंतवाद को उत्पादन की ऐसी व्यवस्था के रूप में बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण थीं, जिसमें शोषण के कुछ निश्चित रूप अंतर्निहित थे। वस्तुतः सामंतवाद के शुरुआती इतिहासकारों ने विशेष रूप से इन कानूनी पहलुओं पर ही विशेष बल दिया थाः फ़ीफ़, नाइट (knights) या सैन्य सेवाएँ तथा लॉर्ड या भूस्वामियों, जिन्हें **सिन्योर (seignour)** के नाम से भी जाना जाता था, द्वारा किए जाने वाले न्याय-कार्य। ये सामूहिक रूप से शासन की पद्धतियों और संस्थाओं का निर्माण करती थीं तथा इस तरह के शासन को बनाए रखने में सहायक शक्तियों या सैन्य तंत्र को सुनिश्चित करती थीं। नौंवी सदी के दौरान सामंती अधिपति अपने लिए इस राजनीतिक और न्यायिक सत्ता को प्राप्त करने में सक्षम हुए थे, जिसने अंततः उस आर्थिक व सैन्य शक्ति को औपचारिक और कानूनी रूप दिया जिसे वे पहले ही हासिल कर चुके थे, और दसवीं सदी में यह संरचना सुदृढ़ रूप धारण कर चुकी थी।

5.7.1 राजनीतिक विकेंद्रीकरण, शाही सत्ता का पतन, संप्रभुता का विखंडन

रोमन साम्राज्य का पतन केंद्रीय शाही सत्ता के विघटन के अंतिम चरण की ओर प्रवृत हुआ, हालांकि **कैरोलिंजी** तथा **शार्लमेन** के प्रयास महत्वपूर्ण अपवाद साबित हुए, जिन्होंने सामंती विकास की कुछ विशेषताओं में योगदान दिया। किंतु वे केंद्रीय राजनीतिक व्यवस्था को बनाए

रखने में असफल रहे। राजत्व तथा अधिग्रहित जमीन की रक्षा स्थानीय किंतु शक्तिशाली व्यक्तियों के हाथों में चली गई, जो प्रभावी रूप से सैन्य तथा भूमि (साथ ही इन जमीनों पर काम करने वाले किसानों का) का नियंत्रण कर सकते थे। दूसरी ओर उन्हें अपने अधीनस्थ क्षेत्रों में इस व्यवस्था को औपचारिक रूप देने की जरूरत थी।

शार्लमेन के अधीन भी 300 लॉर्ड थे जो भूमियों का प्रबंधन करते थे। पोप से मान्यता प्राप्त करते हुए उसने स्वयं के लिए रोमन सम्राट की उपाधि प्राप्त की और उसके उत्तराधिकारियों ने पवित्र रोमन सम्राटों की। और इस क्षेत्र को 'पवित्र रोमन साम्राज्य' कहा जाने लगा। किंतु ऐसी कोई केंद्रीय राजनीतिक व्यवस्था नहीं थी जो इसको सहारा देती और कालांतर में सामंती लॉर्ड अधिक से अधिक शक्ति हासिल करने में सफल रहे।

लॉर्ड (अधिपति) जो अनेक प्रकार की उपाधियाँ धारण करते थे, जैसे काउंट और ड्यूक, और अपनी सत्ता राजा से प्राप्त करते थे, वह ऐसी ही सत्ता को छोटे अधिपत्तियों को प्रदान करते, जो बदले में अपने मातहत भू-स्वामियों को इसी प्रकार की सत्ता प्रदान करते थेः अंततः एक न्यायिक पदसोपानक्रम का उदय हुआ जो नीचे की ओर सामाजिक स्तरीकरण के सबसे निम्नतम स्तर तक जाता था। प्रत्येक स्तर पर जो सत्ताधारी होता था, वह अपने सैन्य कार्यों तथा भूमि से आय पर नियंत्रण रखने के अतिरिक्त वास्तव में एक शासक की तरह था। यही व्यवस्था थी जिसने संप्रभुता के विखंडन (जिस पर पेरी एंडरसन ने बल दिया है) का सृजन किया, प्रचलित सामाजिक तथा राजनीतिक पदसोपानक्रम पर आधारित कर्तव्यों और दायित्वों से पैदा हुए बिखराव के साथ एक निश्चित क्षेत्र पर कड़ा नियंत्रण।

राजनीतिक सत्ता केंद्रीकृत नहीं थी या राजा में संकेन्द्रित नहीं थी, तथापि शोषण और भूमि पर काम करने वालों पर नियंत्रण उतना ही प्रभावी था जितना कि दासता वाले प्राचीन समाजों में। अधिपतियों को अपने क्षेत्राधिकार में न्याय तथा दंड और शुल्क और श्रम के आरोपण में पूर्ण सत्ता हासिल थी। इस पदसोपानिक (hierarchical) व्यवस्था को मातहती तंत्र (vassalage) द्वारा समर्थन और निरंतरता मिलती थी, और यह ऊपर वर्णित भूमि सम्बन्धों और भूमि नियंत्रण व वसालों से जुड़े सैन्य तंत्र पर आधारित थी।

5.7.2 सैन्य व्यवस्था

जैसा कि अमर फ़ारुक़ी ने इसे बड़े सटीक ढंग से कहा है, 'उनकी सत्ता को शक्ति का सहारा था, अर्थात ऐसे सैन्य समर्थकों को लामबंद करने की सामर्थ्य, जो मात्र उनके प्रति *निजी निष्ठा* रखते हों' (फ़ारुक़ी 2001: 428)। 'निजी निष्ठा' पर जोर देने का तात्पर्य है, कि किसी क्षेत्र में एक व्यक्तिगत लॉर्ड द्वारा उपभोग की जाने वाली शक्ति उसके अधीनस्थों के साथ-साथ उसके उच्चस्थों पर भी उसकी ताकत का स्रोत्र थीः वह अपने से नीचे के लोगों पर शासन और नियंत्रण, दोनों रखता था और अपने से ऊपर स्थित लॉर्ड को नियंत्रण के साधन उपलब्ध कराता था, जिसके साथ उसने स्वयं की स्थिति को बनाए रखने हेतु समझौता किया था। क्योंकि इसके बदले में वह अपने अधिपति की स्थिति को बनाए रखने हेतु सैन्य टुकड़ियां उपलब्ध कराता था।

अनिश्चित्ता के काल में सैन्य व्यवस्था का अभिप्राय मातहत (वसाल) द्वारा भूमि का सैन्य नियंत्रण भी था, जिससे लॉर्ड के लिए राजस्व की स्थिरता और अधिशेष का दोहन सुनिश्चित होता था और साथ ही किसान की जीविका की स्थिति का संरक्षण भी होता था। इस सैन्य तंत्र ने आर्थिक शोषण के बंधनों को ठोस रूप प्रदान किया तथा दास व्यवस्था के बिना ही, जो पूर्ण रूप से न सही, लगभग समाप्त हो चुकी थी, भूमिधारी वर्गों के लिए संपत्ति को सुनिश्चित किया।

युद्ध पैदल तथा घुड़सवार सैनिकों द्वारा किया जाता था। बेहतर रकाब और काठी के प्रचलन

ने सैन्य व्यवस्था में नया आयाम जोड़ दिया था। घोड़े तथा सवार जो कवच से सुसज्जित होते थे, जिनमें आम सैनिक तथा कुलीन लोग युद्ध में भाग लेते थे। कुलीन लोग घोड़ों की पीठ पर सवार होकर और विविध शस्त्रों से सुसज्जित होते थे। मैनर का आवास लड़ाइयों के वक्त तथा सुरक्षा के लिए एक गढ़ी (दुर्ग) और रहने के आवास दोनों का काम करता था। सामंती व्यवस्था में 'नाइट' प्रमुख घुड़सवार योद्धा था जो अपने अधिपति (लॉर्ड) को उस क्षेत्र के दूसरे अधिपतियों की हलचलों व मैनर के भीतर के किसानों से सुरक्षित रखता था। उसे घोड़े पर सवार होकर, मुठभेड़ के दौरान लंबी बरछी से तेज़ हमलों और फुर्ती-भरी चाल में महारत हासिल थी।

सामंतवाद के अंतर्गत न तो एक केंद्रीकृत सेना थी, न ही वेतन प्राप्त केन्द्रीय नौकरशाही। उत्पादन की सामंती व्यवस्था और विकेंद्रित राजनीतिक एवं न्यायिक सत्ता राजस्व के केंद्रीकृत संग्रहण और केंद्रीकृत सेना रखने की अनुमति नहीं देती थी। अतः सोपानबद्ध (hierarchical) सैन्य व्यवस्था सामंती उत्पादन पद्धति का स्वाभाविक और जरूरी हिस्सा था। इन शताब्दियों के दौरान रीतियों और वास्तविक राजनीतिक व्यवहारों के एक व्यापक समूह के सृजन के माध्यम से यह सैन्य व्यवस्था निर्मित हुई थी। इस श्रेणीबद्ध राजनीतिक संरचना की पूरक व्यवस्था के रूप में बंधनों की एक श्रेणीबद्ध (hierarchical) व्यवस्था का सृजन किया गया था।

5.7.3 अधिपति (लॉर्ड) तथा मातहत (वसाल)

सिद्धांततः भूमि का 'मालिक' राजा था किंतु इसे अधिपतियों द्वारा ऐसी श्रेणीबद्ध व्यवस्था के माध्यम से 'धारण' किया जाता था, जो निम्नतम स्तर में किसान तक जाती थी। अतः प्रत्येक स्तर पर लॉर्ड अपने से ऊपर के लॉर्ड का पट्टेदार था और अपने से नीचे वाले को फ़ीफ़ प्रदान करने वाला था। प्रत्येक अधिपति भूमि को अपने से उच्च से प्राप्त करता था, और यह उच्चस्थ इसे अपने से भी ऊपर वाले अधिपति से। यह *वसाल* (vassalage) व्यवस्था थीः निम्नस्थ अधिपति अपने उच्च अधिपति से 'मातहत' (वसाल) का सम्बंध रखता था। प्रत्येक लॉर्ड अपनी सेना जुटाने के लिए एक मातहत (वसाल) को ढूँढता, जिसका एकमात्र तरीका था अपनी भूमि के एक हिस्से को अर्थात् अपने नियंत्रण वाली भूमि के हिस्से पर अधिकार को उस मातहत को सौप देना। इससे उसे जरूरत के समय सैन्य सहायता मिल जाती थी। वसाल अन्य अनुष्ठानिक अवसरों पर भी योगदान देता था, जैसे लॉर्ड को सम्मानित किए जाने या उसके पुत्र के नाइट बनने, इत्यादि अवसरों पर। ये सब उन 'दायित्वों' का हिस्सा थे जो 'निम्नतर' दर्ज़े के व्यक्ति अपने अधिपतियों के प्रति रखते थे।

इन दायित्वों तथा संरक्षक का दर्ज़ा अनुष्ठानों में झलकता था तथा एक सुव्यवस्थित आचार संहिता का इस हेतु पालन किया जाता था। नाइटों के नाम के आगे 'सर' जुड़ा होता था, दूसरे अन्य के साथ, ड्युक, अर्ल, बैरन इत्यादि उपाधियाँ जुड़ी होती थीं। व्यवस्था को श्रेणीबद्धता के अनुष्ठानों से बांधे रखा जाता था, खासकर 'इकरारनामा' (commendation) (किसी व्यक्ति द्वारा स्वयं को अन्य के संरक्षण में सौंपने के समय, इस सम्बंध में, शर्तों तथा दायित्वों का बखान करने का कृत्य) के माध्यम से। इसकी अभिव्यक्ति 'समर्पण' (homage) के माध्यम से हाती थी, जिसमें मातहत निःशस्त्र तथा बिना सिर ढके, घुटनों के बल झुककर, अपने जुड़े हाथों को लॉर्ड के हाथों के बीच सौंपकर, निष्ठा की शपथ लेकर स्वयं को लॉर्ड के हवाले कर देता था। बाद में स्वामीभक्ति या निष्ठा (fealty) की एक शपथ भी जुड़ गई थी, जिसमें अपने हाथों को पवित्र ग्रंथों पर रखकर स्वीकार किए जाने वाले कर्तव्यों को रेखांकित किया जाता था। अक्सर इसके साथ ही अभिषेक (investiture) का कृत्य संपन्न होता था, जो प्रदान की गई फ़ीफ़ के अधिकारों का हस्तांतरण तथा इसके साथ जुड़े हुए दायित्व का प्रतीक था। कभी-कभी अधिपति एक तलवार या राजदंड रख लेता था, जो उसके

उच्च लॉर्ड होने का प्रतीक था। कभी-कभी मातहत (वसाल) को अंगूठी या बरछी या ऐसी ही कोई वस्तु दी जाती थी, जो फ़ीफ़ इत्यादि पाने का प्रतीक थी। वह वस्तु फ़ीफ़ पर अधिकार पाने का कृत्य दर्शाती थी, और फ़ीफ़ वापस लिए जाने पर इस वस्तु को लौटाना पड़ता था।

यह संबंध दो पक्षों के बीच था और अन्य किसी से इसका कोई लेना देना नहीं था। अतः ऐसे किसी कानून का उल्लंघन नहीं होता था जो सार्वभौमिक हो। जैसा कि किसान और लॉर्ड के बीच या दो अधिपतियों (लॉर्ड) के बीच, जिनमें से एक अन्य का मातहत (वसाल) होता था, इनके मध्य हितों का अंतर्निहित टकराव था और हर पक्ष अधिकतम लाभ उठाने के लिए तत्पर था। हालांकि अर्द्ध-दास किसान के संबंध में यह दोनों एक ही ओर खड़े नजर आते थे, चूँकि उन्हें तत्कालीन सामंती सामाजिक आर्थिक व्यवस्था से लाभ प्राप्त था।

इसके अलावा, सापेक्षिक शक्ति तथा इस व्यवस्था के बाहर के परिवर्तन का भी प्रश्न है। सामंतवाद की शताब्दियों में या विभिन्न क्षेत्रों में अधिपतियों (लॉर्ड) और मातहत (वसाल) के अधिकार समान नहीं बने रहे। हालाँकि समय के साथ फ़ीफ़ वंशानुगत बन गई, कानून के अनुसार वास्तव में यह उत्तराधिकार नहीं था। और मातहत (वसाल) या अधिपति (लॉर्ड) की मृत्यु हमेशा इन समीकरणों में परिवर्तन का एक अवसर होती थी। एक दिलचस्प विकासक्रम यह था कि यद्यपि महिलाएं सामंती उत्तराधिकार से पूर्णतः बाहर थीं, पर 10वीं सदी के अंत तक हमें कुछ ऐसे मामले देखने में आते है जहां उन्हें इस उत्तराधिकार को पाने में सफलता मिली। फ़ीफ़ के उत्तराधिकार के संबंध में अल्पवयस्कों के अधिकार हेतु भी नियम थे।

5.8 सामाजिक व्यवस्था

मध्यकालीन समाज औपचारिक रूप से 'तीन श्रेणियों' ('Three orders') में बँटा था, जो उनके कार्य पर निर्भर थीं: जो ज़मीन के लिए और उसकी रक्षा के लिए लड़ते थे अर्थात कुलीनवर्ग; जो प्रार्थना करते और आध्यात्मिक जरूरतों की पूर्ति और धर्मार्थ कार्य करते अर्थात ईसाई पादरी वर्ग; और वे जो शारीरिक श्रम करते अर्थात कृषक वर्ग। यह समाज की चर्च आधारित समझ थी। इस योजना में प्रत्येक श्रेणी विशेष दर्जा, अधिकार और कर्तव्य धारण करती थी। तीसरी श्रेणी 'नियति' से बंधी हुई थी जिसे केवल कर्तव्य प्राप्त थे और उनके पास कोई अधिकार नहीं थे। प्रत्येक श्रेणी के भीतर भी सोपानक्रम (hierarchy) और श्रेणीक्रम (grade) मौजूद थे, इसका परिणाम ऐसे वर्गीकृत समाज में हुआ जिसका ऊपर वर्णन किया गया है।

5.8.1 चर्च तथा सामंती समाज

मध्यकालीन शताब्दियों में कैथोलिक चर्च एक शक्तिशाली संस्था थी, जो काफी बड़ी मात्रा में ज़मीनों की मिल्कियत रखने के कारण एक बड़ा भूस्वामी होने के साथ-साथ लोगों के सामाजिक और धार्मिक-जीवन पर भी वर्चस्व रखती थी। चूँकि इन भूमियों को समान तरह की शर्तों पर धारण किया जाता था, अक्सर अनुदान के रूप में, और उन्ही शर्तों पर खेती की जाती थी, जिस प्रकार से सामंती लॉर्डों द्वारा धारण की गई भूमियों पर, चर्च द्वारा करों (खासकर टाइथ) और समान श्रम सेवाओं की मांग भी की जाती थी, अतः चर्च को सामंती व्यवस्था का एक हिस्सा माना जा सकता है। लेकिन इसके अपने कानून थे और यह राजा पर निर्भर नहीं थी। शासकों और चर्च के बीच संघर्ष और तनाव बने रहते थे। किंतु सामाजिक व्यवस्था और यथास्थिति की रक्षा हेतु इनमें सहयोग भी देखने को मिलता था, क्योंकि जैसा कि ऊपर समझाया गया है चर्च को इस समाज में विशिष्ट विशेषाधिकार उपलब्ध थे।

चर्च के भीतर भी समाज को प्रतिबिंबित करने वाले श्रेणीबद्ध पद स्थित थे। इसके शीर्ष पर पोप था, उसके नीचे बिशप थे, जो धार्मिक कुलीन वर्गों की तरह अपने अधीन भूमि के विशाल

क्षेत्रों से प्राप्त आय पर नियंत्रण रखते थे तथा सुविधा पूर्ण जीवन का उपभोग करते थे। इसके अलावा साधारण पादरी थे, जिनकी स्थिति उन आम लोगों से बहुत बेहतर नहीं थी जिनके बीच वे चर्च-संस्थान में कार्य करते थे। वे चर्च के निम्नस्तरीय अधिकार क्षेत्र में कार्यरत थे। प्रत्येक मैनर में एक चर्च तथा पादरी होते थे जो प्रवचन करने तथा लोगों को सुखी परलोक के लिए, जिस पर उनकी अटूट आस्था थी, उपाय करने के अलावा उनके जीवन में, विवाह, जन्म, मृत्यु तथा कई धार्मिक त्यौहारों पर महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। निष्ठा का प्रदर्शन करने वाली कई प्रथाएं तथा प्रतीक (जैसे घुटनों पर झुकना या झुककर हाथ जोड़ना) ऊपर वर्णित वसाल व्यवस्था की तरह ही थीं।

इसके अतिरिक्त, पादरियों से भिन्न फादर तथा मठ थे, जहां वे लोग रहते थे जो फादर या नन बनकर ब्रह्मचर्य और एकांतवास में रहना स्वीकारते थे। स्त्रियों और पुरुषों के लिए अलग-अलग मठ थे, जहां निवास करने वाले लोग अपने जीवन को प्रार्थना, अध्ययन और शारीरिक श्रम करने हेतु समर्पित कर देते थे। इन संस्थाओं के पास भी भूमि-सम्पदा थीं जो उनकी देखभाल के लिए उन्हें आय उपलब्ध कराती थीं। इनमें से दो सबसे प्रसिद्ध थेः 529 सी ई में स्थापित सेंट बेनेडिक्ट तथा 910 सी ई में स्थापित बरगंडी में स्थित क्लूनी।[5]

चर्च में तथा सामान्य रूप से अध्ययन की भाषा मध्यकालीन समय में लैटिन थी। चर्च पठन-पाठन के महत्वपूर्ण केंद्र थे तथा धर्मनिरपेक्ष विद्यालयों और विश्वविद्यालयों के उदय होने से पहले इन्होंने शिक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। आप लोकप्रिय धर्म, विचारों तथा मानसिकताओं की दुनिया के बारे में इस पाठ्यक्रम की **इकाई 7** में पढ़ेंगे।

5.8.2 कुलीन वर्ग

कुलीन वर्ग भूमि और ग्रामीण जीवन की सामाजिक तथा आर्थिक प्रक्रियाओं पर नियंत्रण होने के नाते सत्ताधारी वर्गों का निर्माण करते थे। वे कुलीन ही थे, जो 'सामंती शुल्कों' को वसूल सकते थे या सैनिकों को एकत्र कर सकते थे। उन्होंने वसाल व्यवस्था को पोषित तथा कायम रखा, जिसमें प्रत्येक 'व्यक्ति दूसरे किसी अन्य व्यक्ति' का मातहत था, अर्थात उस व्यक्ति का जिसके प्रति, संरक्षण के बदले निष्ठा और जरूरत पड़ने पर सेना उपलब्ध कराने का दायित्व रखता था। अधिपति बदले में उस मातहत व्यक्ति को संरक्षण प्रदान करता था, जो उसे जरूरत के समय सेना उपलब्ध कराता था। अपनी फ़ीफ़ के क्षेत्र में या उस सीमित क्षेत्र में जिस पर उसका नियंत्रण था, वह एक राजा के समान ही था।

उनमें सबसे शक्तिशाली ड्यूक और अर्ल थे, जो अपनी फ़ीफ़ सीधे राजा से प्राप्त करते थे। वे राजा के प्रति प्रत्यक्ष निष्ठा रखते थे। ये जिन व्यक्तियों को अपनी फ़ीफ़ के कुछ हिस्सों पर नियंत्रण प्रदान करते थे, उन्हें बैरन (Baron) के रूप में जाना जाता था, जो उन्हें सैन्य समर्थन प्रदान करते थे। इसके पश्चात् नाइट (knight) आते थे, जिनसे नीचे कोई कुलीन नहीं थे जिन्हें वे ज़मीन प्रदान करें। किंतु वे मध्यकालीन युद्धों और संघर्षों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे और शस्त्रों और युद्ध के तौर-तरीकों में उनके प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाता था। उनके शस्त्र कला के प्रदर्शन और शौर्य की कई कहानियाँ हैं, जो मध्यकालीन दरबारी संस्कृति की विशेषता थी, जिनके बारे में आप मध्यकालीन संस्कृति की इकाई में अध्ययन करेंगे।

5.8.3 कृषक

किसान दोनों प्रकार के थे, स्वतंत्र किसान और कृषि दास। दोनों ही सामंती व्यवस्था के अधीन थे। यहां तक कि स्वतंत्र किसानों को भी सैन्य सेवाओं और लॉर्ड की जमीनों पर काम

---

[5] क्लूनी के ईसाई मठ के विद्यमान अवशेषों को देखने के लिए, देंखेः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Clocher_abbaye_cluny_2.JPG

या मैनर में अन्य काम जैसे सड़क, इमारत, बाड़े आदि के निर्माण में योगदान देना होता था। वह हर प्रकार से लॉर्ड की न्यायिक और राजनीतिक सत्ता के अधीन थे। अतः स्वयं की भूमि होने के बाद भी वे इनमें से किसी भी दायित्व से आज़ाद नहीं थे। कृषि दास अधिपति द्वारा नियंत्रित जमीन से बंधे हुए थे, इस अर्थ में कि वह उसे छोड़कर नहीं जा सकते थे, न केवल इसलिए कि उनके पास अन्यत्र जीविका कमाने का साधन नहीं था, बल्कि इसलिए कि वे कार्यों और दायित्वों के संबंधों में कानूनी रूप से बंधे हुए थे। उन्हें अपने उत्पादन के कुछ हिस्से को भी अपने दायित्व के रूप में देना पड़ता था। इनमें से कुछ के विषय में हम सामंती अर्थव्यवस्था वाले भाग में चर्चा कर चुके हैं (इसी इकाई का **भाग 5.7**)।

5.9 शहर तथा व्यापार

यद्यपि सामंतवाद का उदय शहर और व्यापार के पतन, मैनर के भीतर ही सीमित उत्पादन और उपभोग (केवल उन विलासितापूर्ण वस्तुओं को छोड़कर जिनका लॉर्ड द्वारा उपभोग किया जाता था या जो स्थानीय तौर पर उत्पादित नहीं होती थी) के साथ-साथ घटित हुआ, 11वीं सदी से कृषि में सुधार और जनसंख्या वृद्धि ने उत्पादन, मांग और विनिमय को उत्प्रेरित किया। मेलों और प्रदर्शनी इत्यादि में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई और उनके इर्द-गिर्द शहरों का विकास हुआ। शिल्प को बल मिला। शहर उत्पादन के केन्द्र बन गये। शहर, पूर्णकालिक दस्तकारों की वृद्धि, श्रेणियों के संगठनों तथा वस्तुओं का व्यापार करने वाले व्यापारियों के केंद्र बन गए। गैर-कृषीय सामंतीय अर्थव्यवस्था के ढाँचे में श्रेणी (guild) एक महत्वपूर्ण विशेषता बन गई। विभिन्न प्रकार के कामों और उत्पादन के लिए विशेषीकृत श्रेणिया थीं, जो प्रशिक्षुओं को प्रशिक्षण, कीमतों का निर्धारण और काम की परिस्थितियों आदि के निर्णय लेती थीं।

शुरुआती शहर छोटे थे तथा उन अधिपतियों को कर चुकाते थे, जिनकी ज़मीनों पर वे स्थापित थे। लेकिन धीरे-धीरे 12वीं सदी तक और उच्च मध्यकाल में जेनेवा, फ्लोरेंस तथा वेनिस जैसे भव्य इतालवी शहर फलते-फूलते व्यपारिक केंद्रों के रूप में उभरे। अधिकतर यूरोपीय व्यापारिक शहर समुद्री पत्तन (पोर्ट) थे। समृद्धि के साथ इनमें से बहुत से शहर अपने पूर्व के शहरों के विपरीत सामंती नियंत्रण से आज़ाद हो गए। धीरे-धीरे वे अपने मामलों के प्रशासन संभालने तथा ग्रामीण यूरोप की सामंती संरचना का हिस्सा रही कृषिदासता की संस्था से स्वयं को मुक्त करने लगे। किसान जो कृषिदासता की जंजीरों को तोड़ने में सफल रहे थे, उन्होंने भी शहरों की और पलायन करने की कोशिश की।

उन इलाकों में जहां धनी वर्गों ने धर्म में निवेश करने के लिए कैथेड्रल के निर्माण पर खर्च किया था, वहां कैथेड्रल केंद्रित शहरों का विकास हुआ। यहां उन विश्वविद्यालय वाले शहरों को भूलने की जरूरत भी नहीं है जो उच्च मध्य युग में उभर कर आए और समृद्ध होते चले गए। यह विकासक्रम सामंतवाद के रूप तथा संरचना को समझने के लिए महत्वपूर्ण है। यह मानव इतिहास में सामंतवाद को एक अंधकार पूर्ण चरण और साथ ही सामंतवाद को ठहराव-भरी अर्थव्यवस्था और संस्कृति के रूप में देखने वाली स्थापित रुढ़िबद्ध छवि को तोड़ते हैं।

5.10 जेंडर

सामंती समाज में स्त्री तथा पुरुषों के दर्जे में और उनके द्वारा निभाए जानी वाली भूमिकाओं के बीच काफी गहरा अंतर था। स्त्रियों की भूमिका वर्गों के आधार पर विभाजित थी, वहीं सभी स्त्रियाँ अपने परिवारों में अधीनस्थ भूमिका में थीं। किसान परिवारों में वे कठोर परिश्रम करती थीं तथा उनके पास कुलीन वर्ग की स्त्रियों के समान अवकाश का समय नहीं था। कुछ कुलीन स्त्रियां शिक्षित थीं और काफी विदूषी थीं, कुछ (अत्यंत कम) ने भू-संपत्तियों के

प्रबंधन में भी योगदान दिया। लेकिन सामंतवाद का संपूर्ण कानूनी ढांचा महिलाओं की अनदेखी करता था। जिस तरह से फ़ीफ़ और वसाल प्रणाली काम करती थी, उसमें स्त्रियों के लिए कोई स्थान नही था। वह नन बन सकती थीं, किंतु पादरी नहीं। उनपर डायन का तमगा लगाया जा सकता था। और कुछ को संत की उपाधि भी दी गई थी, लेकिन उन्हें कभी एक विशिष्ट व्यक्तिगत पहचान के रूप में नहीं स्वीकारा गया। जब फ़ीफ़ ने एक वंशानुगत स्वरूप ग्रहण किया तो उनमें से कुछ को उत्तराधिकार हासिल हुआ, किंतु यह नियम की अपेक्षा अपवाद ही अधिक था। पुरुषों के मुकाबले स्त्रियों का जीवनकाल कम था। आधारभूत स्वरूप और संरचना में उनका स्थान नगण्य ही था, केवल श्रम के रूप में छोड़कर।

5.11 इतिहासलेखन का प्रश्नः गतिहीनता और अंधकार का युग

सामंतवाद के स्वरूप और संरचना का हमारा सर्वेक्षण यह दर्शाता है कि उत्पादन की दास पद्धति के पतन और केंद्रीय राजनीतिक सत्ता के विघटन से यूरोप में उत्पन्न हुए संघर्ष और युद्ध ऐसी आपदा नहीं थे, जिससे पार नहीं पाया जा सकता था। कृषिदासता यद्यपि शोषणकारी और अमानवीय थी, इसने किसान की उस परिस्थिति को बदला जिसमें वह उत्पादन का एक उपकरण मात्र थे और इंसान होने के हक से भी वंचित थे। किसी व्यक्ति का दास के रूप में उस पर *स्वामित्व* नहीं था, हालांकि वह लॉर्ड के साथ दासता के बन्धन में बंधा था। कृषिदास के रूप में उसने थोड़ी बहुत स्वायत्तता हासिल की थी, हालांकि अधिक नही, किंतु अब वह ज़मीन के उस छोटे से टुकड़े पर अपने तथा अपने परिवार के लिए काम करता था जिस पर उसके अधिकार को सामंती दायित्वों के अधीन मान्यता मिली हुई थी। सामंतवाद के अंतर्गत सामुदायिक भूमियों का अस्तित्व स्वायत्तता तथा सामंती लॉर्डों के विरुद्ध किसानों के विद्रोहों को भड़काने में एक महत्वपूर्ण कारक था। ये प्रतिरोध अंततः सामंती बंधनों के ढीले पड़ने तथा किसानों को कुछ अधिकार प्राप्त होने में एक महत्वपूर्ण कारक थे। इन्होंने भूमिधारी अभिजात वर्ग तथा किसानों के बीच मूलभूत वर्गीय अंतविरोध के उदय को भी संभव बनाया, उस समाज में जो अन्यथा कई श्रेणियों और सोपानों के आपस में गुँथे हुए दावों, अधिकारों तथा दायित्व के कारण वर्गों के उदय के खिलाफ था। भूमि के नियंत्रण के लिए इन प्रतिरोधों और निरंतर होने वाली लड़ाई और संघर्षों ने गतिशीलता पैदा की तथा समाज में एक ठहराव के बजाय इसे गति प्रदान करने में योगदान दिया।

जब दासता अव्यवहारिक हो चुकी थी, तब सामंतवाद के साथ जुड़े नए सामाजिक संबंधों के अंतर्गत ही नई खोजें तथा प्रौद्योगिकी और उत्पादन में वृद्धि तथा अधिशेष के दोहन में अधिक लचीलापन व्यवहारिक और विस्तृत हो पाए थे। इन खोजों तथा सामाजिक व्यवस्था में आए इन आर्थिक बदलावों को अपनाए जाने और उनके अनुकूलन तथा नए कारकों व सामाजिक परिवेश के बीच अंतर्क्रिया ने ही न केवल बंधनों का आधार पैदा किया, अपितु साथ ही चली आ रही सामाजिक व्यवस्था के भीतर गतिशीलता भी पैदा की। बाज़ार और मुद्रा विनिमय की वृद्धि, शहरों का विकास और सशस्त्र युद्धकलाओं में रक़ाब के प्रयोग ने सामंतवाद को मज़बूती प्रदान की थी। नियंत्रण के कानूनी और इतर गैर-आर्थिक (extra-economic) उपाय केवल सामंती समाज संरचना की गतिशीलता और इसकी वास्तविक कार्यप्रणाली में ही सम्भव थे। इसमें समायोजित भिन्नताएं और लचीलापन विभिन्न शताब्दियों में और विभिन्न क्षेत्रों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। पैरी एंडरसन द्वारा किए गए इस अवलोकन की रोशनी में ही विभिन्न विद्वानों द्वारा जिन अलग-अलग कारकों पर बल दिया गया है, उन्हें देखा जाना चाहिए।

चर्च एक ऐसी महत्वपूर्ण स्वायत्त संस्था थी, जिसने अध्ययन के क्षेत्र में निरंतरता को बनाए रखा तथा वह साक्षरता और शिक्षा का एकमात्र अभिकर्ता बनी रही। एक ओर सामंती भूस्वामी और कृषिदासता की विचारधारा का पक्षधर, और दूसरी ओर इसके शिक्षा के प्रयास के बीच

अंतर्विरोध ने धार्मिक तथा धर्मनिरपेक्ष, दोनों विचारों में गतिशीलता का आधार पैदा किया। हम धार्मिक प्रतिरोध आंदोलनों या दुनिया की कार्यप्रणाली पर उठाए गए सवालों तथा प्रतर्जागरणकाल में प्राचीन साहित्य के पुनरुत्थान को, बिना चर्च की इस विरोधाभासी भूमिका को ध्यान में रखे नहीं समझ सकते हैं।

सामंतवाद के उत्तरवर्ती चरण में शहरों के उदय तथा वृद्धि को सम्भव बनाने में संप्रभुता का विखंडन महत्वपूर्ण कारक था, जिसका हम ऊपर ज़िक्र कर चुके हैं। कृषिगत हितों के अधीन प्राचीन काल के नगर-राज्यों तथा शहरों के मुकाबले ये शहर भूमि पर आधारित हितों और नियंत्रणों से कहीं अधिक स्वतंत्र थे। जहाँ प्राचीन शहरों पर भूमि आधारित अभिजात्यों का दबदबा था, उत्तर सामंती काल में समुद्री पत्तनों पर बसे शहरों ने स्वतंत्र प्रशासन का अनुभव किया। इसकी मुख्य विशेषताएं प्रतिनिधित्व में निर्वाचन के सिद्धांत, सामंती व्यवस्था को चुनौती देने वाले शक्तिशाली नए व्यापारी वर्ग का उत्थान और अंततः गैर-कृषि उत्पादन क्षेत्र में गिल्डों (श्रेणियों) का उदय थीं। यह विशेषताएं आखिरकार इन शहरों को सामंती अधिपतियों (लॉर्ड) के प्रभाव से बाहर ले आई। कला, स्थापत्य और साहित्य की कृतियाँ भी इस काल में अनुपस्थित नहीं थीं।

सामंतवाद का उद्भव पाँचवी तथा छठी सदी के विकासक्रमों में निहित था। कोलोनेट के गठन या पुराने दासों के आबाद क्षेत्रों में, भूमिधारी अभिजात्यों को नज़राने और श्रम सेवाओं के बदले किसानों को भूमि से बाँधने की प्रक्रिया शुरू हुई। नौंवी सदी तक सामंतवाद स्थापित और स्थिर रूप ले चुका था। दसवीं सदी में इसका विस्तार हुआ तथा ग्यारहवीं-बारहवीं सदी में यह अपने चरम पर पहुँच गया। चौदहवीं सदी तक ऐसे तत्व उभर कर आ चुके थे जिन्होंने इस व्यवस्था को शिथिल करना शुरू कर दिया था। यह वे नए तत्व थे जिन्होंने इसे खोखला बनाया और पतन की ओर ले गए। सोलहवीं सदी तक, यूरोप, खासकर पश्चिमी यूरोप, उन परिवर्तनों के लिए तैयार था जिनसे आधुनिकता और पूँजीवादी तत्वों का आगमन हुआ।

चौदहवीं सदी संकट का काल था, जो आर्थिक तथा राजनीतिक क्षेत्र में सामने आया। यह यूरोप में सर्वव्याप्त सामान्य संकट था, जिस पर पश्चिमी और पूर्वी यूरोप के क्षेत्रों की प्रतिक्रियाएँ भिन्न-भिन्न थीं। पश्चिम में कुछ क्षेत्रों में सामंती तथा कृषिदासता के बंधन ढीले पड़ने लगे तो कुछ क्षेत्रों में ये मज़बूत हुए; और पूर्व में निरंकुश राजशाही के पूर्ण समर्थन से कृषिदासता का अधिक शोषणकारी प्रयोग सामने आया। आख़िरकार यहाँ पश्चिमी यूरोप के काफी समय बाद इसका अंत ऊपर की ओर से अर्थात् 1861 में रूसी साम्राज्य के निरंकुश शासन द्वारा हुआ।

पश्चिमी यूरोप में अपने आख़िरी दौर में और पूर्वी यूरोप में अपने आख़िरी दौर में, यूरोपीय सामंतवाद अपने शुरुआती चरण से काफ़ी भिन्न था। इसके बारे में आप अगली इकाई में पढ़ेंगे।

बोध प्रश्न-3

1) सामंती सम्बन्धों में लॉर्ड (अधिपति) तथा वसाल (मातहत) के क्या अधिकार तथा दायित्व थे?

....

....

....

....

....

2) सामंतवाद के अंतर्गत सैन्य व्यवस्था की प्रकृति पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

3) मध्यकालीन यूरोपीय समाज में सामंतवाद के अंतर्गत सामाजिक व्यवस्था की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

4) सामंती अर्थव्यवस्था में स्त्रियों की स्थिति पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

5.12 सारांश

सामंतवाद वह सामाजिक ढांचा था जो आधुनिक समाज के उभरने से पहले अस्तित्व में आया था और इसका संबंध मानव इतिहास के मध्यकालीन युग से है। इसका उदय रोमन साम्राज्य के पतन तथा जर्मनिक कबीलों के यूरोप पर आक्रमण की परिस्थितियों में हुआ था, इन्हीं अनुभवों से इसकी विशेषताओं का सृजन हुआ। कृषिदासता सामंती उत्पादन पद्धति की आधारभूत विशेषता थी और इसकी संस्थाओं जैसे फ़ीफ़, मैनर और वसाल को इस तरह अभिकल्पित किया गया था कि यह एक श्रेणीबद्ध समाज को सृजित करती थीं। हालांकि क्षेत्रों पर नियन्त्रण सख्ती से बनाये रखा गया था, सामंतवाद में संप्रभुता विखंडित थी, राजनीतिक सत्ता बिखरी हुई थी। यहां तक कि विभिन्न क्षेत्रों पर कठोर नियंत्रण को निम्नतम स्तर पर निर्भरता तथा अधीनस्थता के साथ-साथ, अन्य सभी स्तरों पर निर्भरता तथा दायित्वों के द्वारा बनाए रखा जाता था। अपने नियंत्रण वाली भूमि पर लॉर्ड या सेन्योर द्वारा किसानों की जिंदगी और उनके कार्य-परिस्थितियों, न्याय तथा दंड पर पूर्ण सत्ता का उपभोग किया जाता था जिसमें अर्द्ध-दास किसानों पर लॉर्ड द्वारा आरोपित बोझों पर कोई लगाम नहीं थी। वे अधिपति/सेन्योर अपने क्षेत्राधिकार वाले इलाकों में स्वयं में सरकार थे। इस व्यवस्था को ही संप्रभुता का विखंडन और राजनीतिक सत्ता का व्यापक बिखराव कहा जाता है। स्थानीय स्तर पर और नीचे से लेकर राजा तक, प्रत्येक स्तर पर इस व्यवस्था को राजनीतिक शक्ति का सहारा था, अर्थात भूमि पर नियंत्रण तथा सेन्योर की प्रतिष्ठा की रक्षा हेतु सेना को

लामबंद करने का अधिकार प्राप्त था। यह सैन्य व्यवस्था स्वाभाविक रूप से वसाल तंत्र से जुड़ी हुई थी, जैसा कि इस इकाई में चर्चा की गई है।

जैसा कि पहले माना जाता था, सामंती समाज कभी भी एक स्थिर समाज नहीं था, और निश्चित तौर पर यह युग अंधकार का युग भी नहीं था। अगर कुछ था, तो वह था संघर्ष और युद्ध, मध्यकाल का निरंतर उपस्थित लक्षण। प्रारंभिक चरणों में शहर, व्यापार तथा मौद्रिक विनिमय का पतन बाद के चरणों में कम होता गया। इसने ऐसी परिस्थितियों के उभरने में सहायता की, जिन्होंने गतिशील संस्कृति और बौद्धिक विकास की परिस्थितियों का सृजन किया तथा वास्तुकला के नए रूप और उत्पादन में नई तकनीकों की शुरुआत की। इसने अंततः सामंतवाद के पतन और आधुनिक समाजों के उदय को जन्म दिया।

चर्च एक शक्तिशाली स्वायत्त संस्थान था जिसका स्वार्थ कृषिदासता और शोषक सामाजिक व्यवस्था के बचाव में था, किंतु सामंती काल में यही साक्षरता और शिक्षा को बढ़ावा देने का एकमात्र स्रोत भी था।

समयानुसार और क्षेत्रानुसार सामंतवाद के स्वरूप और संरचना में भिन्नताएँ आईं। पूर्वी यूरोप में, पश्चिमी पूर्वी यूरोप से भिन्न केंद्रीकृत निरंकुश राजशाही ने कृषिदासता को बनाए रखने में अहम् भूमिका निभाई। पूर्वी यूरोप में शासक की निरंकुश सेवा में हाज़िर केंद्रीकृत सेना और केंद्रीकृत अधिकारी वर्ग के साथ कृषिदासता का अस्तित्व बना हुआ था।

5.13 शब्दावली

एलौड (Allod) : ऐसी भूमि जिस पर एक ही परिवार का स्वामित्व था और पूर्णतः उसी के द्वारा खेती की जाती थी, जो न तो अन्य से श्रम सेवाएँ प्राप्त करता था, और न ही किसी लॉर्ड को अपना श्रम उपलब्ध कराता था। हालांकि ये भाड़े पर मज़दूर रख सकते थे। एलौड की पैदावार पूरी तरह से परिवार के पास ही रहती थी। यह सामंती अर्थव्यवस्था के अंतर्गत वैकल्पिक आर्थिक उत्पादन का एक रूप था।

बेनेफ़िस (Benefice) : अपने प्रभाव से अनुकंपा द्वारा प्राप्त बेनेफ़िस सम्पत्ति जो चर्च के अधिकारियों द्वारा धारण की जाती थी।

कैरोलिंजी (Carolingian) : एक फ्रैंक सत्ताधारी वंश जिसने सातवीं सदी में शक्ति हासिल की। इसने क्रमिक रूप से मेरोविंजी का स्थान लिया। शार्लमेन के अधीन यह पश्चिम में पूर्ववर्ती रोमन साम्राज्य के अधीनस्थ क्षेत्रों को अपने अधिकार-क्षेत्र में लेने में सफल रहा। नौंवी सदी के अंत तक यह साम्राज्य विघटित हो गया।

शार्लमेन (Charlemagne) : यह महान् फ्रैंक सम्राट चार्ल्स (771-814) के नाम से जाना जाता था जिसने पश्चिम में रोमन साम्राज्य के क्षेत्रों पर अधिकार कर विस्तृत साम्राज्य स्थापित किया। 800 ईसवी में उसे पोप लियो तृतीय द्वारा सम्राट का ताज पहनाया गया।

एनफ़ीफ़मेंट (Enfeoffment) : सामंती व्यवस्था में किसी व्यक्ति को भूमि या फ़ीफ़ प्रदान करना।

अभिषेक **(Investiture)**	:	किसी व्यक्ति को औपचारिक रूप से कोई पद देना, विशेषकर संप्रभु द्वारा सम्मानित किए जाने का समारोह।
श्रम शुल्क (कृषिदास)	:	इन्हें 'दायित्व' भी कहते हैं; यह कृषिदासों पर लगाया जाता था, जिसके अंतर्गत उसे डिमेंन भूमि पर खेती करनी होती थी, जिसकी उपज पूरी तरह से लॉर्ड के खलिहानों में जाती थी, हालाँकि उसकी खेती (टेनेमेन्ट) की पैदावार जिस पर वही अपने लिए भी खेती करता था, उसके घरों में जाती थी। श्रम देयताएँ किसानों का आधे से अधिक श्रम हड़प कर लेती थीं, इसके अलावा कुछ अन्य देय भी थे। उसको किसी भी कार्य के लिए कोई भुगतान नहीं होता था।
लैंटिफंडिया (***Latifundia***)	:	रोमन दुनिया में विशाल कृषि भू-सम्पत्तियां, जिन पर अक्सर दास श्रम का उपयोग होता था; अधिकतर *लैंटिफंडिया* भेड़ों और मवेशियों हेतु फ़ार्म थे, और कुछ में ज़ैतून और अंगूर उगाए जाते थे।
मेन्स (***Manse;*** बहुवचन *मानसी*)	:	एक किसान परिवार के श्रम द्वारा कृषित भूमि की एक इकाई, चाहे यह लॉर्ड की हो या किसानों की। यह श्रम देयों के मापन की इकाई थी।
उत्पादन की पद्धति	:	यह शब्द अक्सर मार्क्सवादी विद्वानों द्वारा प्रयुक्त किया जाता है, पर अन्य भी इसका प्रयोग करते हैं, जिससे इतिहास के किसी विशेष काल में जीवन की आवश्यकताओं के उत्पादन के तरीकों का संकेत किया जाता है, इसी के संपूरक विशेष उत्पादन सम्बंध जैसे, स्वामी-दास, लॉर्ड-कृषिदास के सम्बंध आते हैं। मार्क्स तथा एंजेल्स के मुताबिक इसी से जीवन की सामाजिक, राजनीतिक तथा आध्यात्मिक प्रक्रियाओं की सामान्य विशेषताओं का निर्धारण होता है।
संप्रभुता का विखंडन	:	परस्पर अतिव्यापी क्षेत्राधिकार, मिसाल के तौर पर, शक्तिशाली लॉर्ड कम शक्तिशाली लॉर्ड पर सत्ता रखते थे तथा इसी तरह से कम शक्तिशाली लॉर्ड सबसे निचले क्रम में आने वाले किसानों अर्थात कृषिदास (serf) पर अधिकार रखते थे, यह प्रक्रिया पहले पश्चिमी यूरोप में विकसित हुई तथा कालांतर में पूर्वी यूरोप में नज़र आई।
सेनोर/लॉर्ड **(Seigneur)**	:	सामंती लॉर्ड, सामंती व्यवस्था में उच्च दर्ज़े का व्यक्ति।
वृत्ति काश्तकारी **(Stipendiary Tenements)**	:	वृत्ति या परितोषिक के तौर पर उच्चस्थ द्वारा दी गई भूमि या लगान।

भूमि का टुकड़ों में विभाजन (Strip System of Land Division) : काश्त की भूमि को टुकड़ों में बाँट दिया जाता था, जो पूरे गाँव में बिखरी होती थी तथा सबसे बेहतर भूमि के हिस्से लॉर्ड के लिए संरक्षित थे।

पट्टेदारी (Tenure) : वह अधिकार या पट्टा जिसके अंतर्गत भूमि धारण की जाती थी।

त्रिचक्रीय खेत (Three-field System) : खेती की वह व्यवस्था थी जिसके अंतर्गत खेत को तीन हिस्सों में बाँट दिया जाता था। एक हिस्से को पतझड़ में, दूसरे को वसंत में बोया जाता था तथा तीसरे को क्रम से परती छोड़ा जाता था।

टाइथ : मुख्यरूप से चर्च को भुगतान किया जाने वाला कर जो किसानों को अपनी उपज में से दसवें हिस्से के रूप में चुकाना पड़ता था। प्रारम्भिक चरण में लॉर्ड का भी इसमें हिस्सा होता था। इसे धार्मिक कर के तौर भी जाना जाता था।

द्विचक्रीय खेत (Two-field Rotation) : खेती की वह व्यवस्था जिसके अंतर्गत खेत को दो हिस्सों में बाँटा जाता था, एक पर खेती की जाती थी तथा दूसरे को परती छोड़ा जाता था।

विलेन (Villein) : पूरी तरह से लॉर्ड के अधीन या मैनर से जुड़ा काश्तकार।

5.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 5.2 और 5.3 देखें

2) भाग 5.4 देखें, आपके उत्तर में अधिपति (लॉर्ड) और उनको मातहत (वसाल) के साथ संबंध पर चर्चा अवश्य शामिल होनी चाहिए।

3) मैनर सामंतवाद की मूल इकाई है। भाग 5.4 देखें

4) शिष्टाचार (chivalry) का अर्थ परिवर्तित होता रहा, और दसवीं और बारहवीं शताब्दियों में यह और विस्तृत हुआ। भाग 5.4 देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 5.5 देखें

2) भाग 5.5 देखें

3) भाग 5.5 देखें। इस भाग में दिए गये सूचना बॉक्स को देखें।

4) भाग 5.6 देखें

बोध प्रश्न-3

1) उपभाग 5.7.3 देखें

2) उपभाग 5.7.2 देखें

3) उपभाग 5.8 देखें

4) भाग 5.10 देखें

5.15 संदर्भ ग्रंथ

एंडरसन, पेरी, (1974) *पैसेजेज़ फ्रॉम एंटीक्वटी टू फ़्यूडलिज़्म* (लंदन तथा न्यूयॉर्कः वर्सो क्लासिक्स).

ब्लॉक, मार्क, (1961) *फ़्यूडल सोसायटी*, 2 खंड (शिकागोः शिकागो यूनीवर्सिटी प्रेस).

देव, अर्जुन, *द स्टोरी ऑफ सिविलाइज़ेशन : ए हिस्ट्री टेक्स्ट बुक फ़ॉरक्लास IX*, भाग 1 (नई दिल्लीः एनसीईआरटी प्रकाशन).

फ़ारूक़ी, अमर, (2001) *अर्ली सोशल फ़ॉरमेशंस* (नई दिल्लीः मानक प्रकाशन).

लियो, ह्यूबरमेन, (1936) *मैन्स वर्डली गुड्ज़ः द स्टोरी ऑव द वेल्थ ऑव नेशंस* (न्यूयॉर्कः मंथली रिव्यू प्रेस).

5.16 शैक्षणिक वीडियो

मिडीवल फ्यूडलिज़्म : एम जी एच
https://www.youtube.com/watch?v=rR0Dbp3wdKI

इकाई 6 सामंतवाद के चरण और उसका पतन*

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 दो प्रमुख चरण

6.3 प्रथम चरणः 9वीं से 11वीं शताब्दी

6.3.1 कृषि उत्पादनः साधन और विधियां

6.3.2 कृषि उत्पादन का संगठन

6.3.3 निर्वाह-अर्थव्यवस्था (Subsistence Economy)

6.4 द्वितीय चरणः 11वीं से 14वीं शताब्दी

6.4.1 जनसंख्या में वृद्धि

6.4.2 कृषि का विस्तार

6.4.3 कृषि उत्पादन के संगठन में परिवर्तन

6.4.4 अर्थव्यवस्था का विकास

6.4.5 सामाजिक स्तरीकरण

6.5 सामंतवाद के पतन संबंधी सामान्य अवधारणाएं

6.6 प्रौद्योगिकी तथा भूमि और श्रम की उत्पादकता

6.7 शहरी केन्द्रों का उदय

6.8 ग्रामीण परिदृश्य का रूपांतरण

6.9 पतन संबंधी अन्य विचार

6.10 सारांश

6.11 शब्दावली

6.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.13 संदर्भ ग्रंथ

6.14 शैक्षणिक वीडियो

6.0 उद्देश्य

नवीं शताब्दी में शार्लमेन (चार्ल्स द ग्रेट) द्वारा निर्मित विशाल साम्राज्य का पतन होने लगा। केन्द्रीय सत्ता के ढहने के साथ-साथ बाहरी आक्रमण तेज हुआ और व्यापार, वाणिज्य और शहरों की अवनति हुई। कई सेनानायक और सरदार अपने-अपने क्षेत्रों में स्वतंत्र शासक बन गए। इस समय यूरोप में एक नया सामाजिक ढांचे का उदय हो रहा था जिसे सामंतवाद कहा गया। इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपः

- सामंतवाद के दो प्रमुख चरणों में भेद कर सकेंगे,
- इन दोनों चरणों के अनूठे पहलुओं को समझ पाएँगे,

---

* प्रो. हरबंस मुखिया और डॉ. बोधिसत्व कार, सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज़, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली। यह इकाई इग्नू पाठ्यक्रम **एम एच आई-01**: ***प्राचीन और मध्यकालीन समाज*, खंड 6, इकाई 22-23** से ली गई है।

- सामंतवाद के पतन से संबंधित बहस और विद्वानों द्वारा उल्लिखित अवधारणाओं को समझ पाएँगे, और
- सामंतवाद के पतन के लिए उत्तरदायी कारकों का विश्लेषण कर सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

सामंती सामाजिक ढांचे में रोमन के साथ-साथ जर्मनिक तत्व भी मिले हुए थे। राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था के रूप में सामंतवाद 9वीं से 14वीं शताब्दी तक यूरोप पर छाया रहा। परंतु इस अवधि में राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक ढांचे स्थिर और एकरूप नहीं थे। कई परिवर्तन हो रहे थे और नए संबंध उभर रहे थे। इस खंड की पिछली **इकाई 5** को पढ़कर आप निश्चित रूप से यूरोप में सामंती व्यवस्था को अच्छी तरह समझ गए होंगे। आपने गौर किया होगा कि 14वीं शताब्दी में सामंतवाद का धीर-धीरे पतन होने लगा और कुछ समय बाद यूरोप से यह व्यवस्था प्रभुत्वशाली व्यवस्था के रूप में लुप्त हो गई।

इस इकाई में हम पतन की इस प्रक्रिया को समझने के लिए इन सभी विचारों का विश्लेषण करेंगे। यहां हमारा उद्देश्य सामंतवाद के पतन के प्रश्न से संबंधित सभी विवादों से आपको परिचित कराना है। यहां उन सभी विद्वानों के मतों को, जिन्होंने इस पर काम किया है, शामिल करना संभव नहीं है। एक व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करने के लिए हमने यहां कुछ प्रमुख विद्वानों के विचार सामने रखे हैं जैसे किः हेनरी पिरेन, मॉरिस डॉब, कोचुरू ताकाहाशी, गी बुआ, मार्क ब्लॉक, जॉर्ज ड्यूबी, पॉल स्वीज़ी और रॉबर्ट ब्रेनर।

6.2 दो प्रमुख चरण

मध्ययुगीन यूरोप में सामाजिक और आर्थिक जीवन की जटिलताओं को ठीक से समझने के लिए सामंतवाद को निरंतर परिवर्तित हो रही प्रक्रिया के रूप में देखना होगा न कि एक स्थिर ढांचे के रूप में। सबसे पहले मार्क ब्लॉक ने अपने शोधों के द्वारा सामंतवाद में दो चरणों के विकासक्रम का विचार सामने रखा था। उनके अनुसार पहले चरण की शुरुआत रोमन साम्राज्य की राजनीतिक व्यवस्था के पतन और उसके खंडहरों पर बर्बर उत्तराधिकारी राज्यों की स्थापना के साथ हुई और इनका शासन ग्यारहवीं शताब्दी के मध्य तक जारी रहा। इस दौरान आधारभूत सामाजिक संबंध काफी हद तक बने रहे जिसे उत्तर रोमन साम्राज्य के रूप में जाना जाता है। इस चरण में काफी हद तक स्थिर और संगठित ग्रामीण क्षेत्र उभर कर सामने आये जहां व्यापार महत्वपूर्ण तथा प्रमुख नहीं था, सिक्के दुर्लभ थे और वेतनभोगी मजदूर वर्ग लगभग नहीं था। इस क्षेत्रीय स्तरीकृत अभिजात तंत्र में बड़े और छोटे तत्वों के बीच वसालों का एक गठबंधन तैयार हुआ जिनके हाथ में सामाजिक नियंत्रण के साधन और न्याय प्रदान करने की व्यवस्था आ गई। अधिकांश किसान कानून की नजरों में या तो पूर्णतः पराधीन थे या अधिपति (लॉर्ड) पर इतने ज्यादा आश्रित थे कि उनका स्वतंत्र होना भी कोई मायने नहीं रखता था, यह मात्र एक औपचारिकता थी। इस चरण में कृषि अर्थव्यवस्था में अधिशेष बहुत कम पैदा हो रहा था और इसकी मात्रा केवल इतनी थी कि भूमिपति अभिजात वर्ग की सत्ता और हैसियत बनाए रख सके। बाज़ार के लिए उत्पादन बहुत कम होता था; लगान या तो मजदूरी के रूप में या फिर वस्तु के रूप में दिया जाता था; मुद्रा का प्रचलन काफी कम था; और अन्तर्राज्यीय व्यापार के जरिए आनेवाली विलासिता की वस्तुओं की मांग भी काफी कम हो गई थी क्योंकि उच्च वर्ग को भी आय के रूप में नगद धन नहीं बल्कि उपज मिलती थी। परिणामस्वरूप पश्चिमी यूरोपीय जीवन प्रमुखतः ग्रामीण और स्थानीय था।

दूसरे चरण की शुरुआत ग्यारहवी शताब्दी के मध्य में हुई और यह चौदहवीं शताब्दी के अंत तक जारी रही। आबादी में तेजी से बढ़ोत्तरी, जंगलों की कटाई के कारण अधिक कृषि भूमि

की उपलब्धता, प्रौद्योगिक प्रगति, व्यापार का पुनरूत्थान, मुद्रा अर्थव्यवस्था का प्रसार और उत्पादकों पर व्यापारियों की बढ़ती सामाजिक श्रेष्ठता इस बदलाव के कारण थे। ब्लॉक का मानना है कि, इस युग में समाज का विकासक्रम और अर्थव्यवस्था का विकासक्रम बिलकुल विपरीत दिशा में बढ़ने लगे। समाज बहुत धीरे-धीरे विकसित हो रहा था और यह वर्ग संरचना को अलग-अलग वर्गों में बांधकर सीमित, कर रहा था जबकि अर्थव्यवस्था तेजी से विकसित हो रही थी जिसके कारण कृषि दास मुक्त हो रहे थे और व्यापार और वाणिज्य पर प्रतिबंध हटता जा रहा था। माकोने (Maconnais) के विशेष संदर्भ में जॉर्ज ड्यूबी का यह मानना है कि वहां लगभग एक शताब्दी बाद, 1160 में स्थिति बदलने लगी जब कृषि अधिशेष बढ़ा और इसके साथ-साथ मुद्रा अर्थव्यवस्था भी सक्रिय और मज़बूत हुई, शहरी और ग्रामीण परिवेशों में अन्तर आया और सामाजिक उथल-पुथल के अनेक रूप सामने आए। जाक् ल गॉफ (Jacques Le Goff) का मानना है कि सामंती युग के प्रथम चरण से दूसरे युग में प्रगति बहुत धीरे-धीरे हुई और वह काफी लम्बी प्रक्रिया थी। साथ ही यह प्रक्रिया पूरे पश्चिमी यूरोप में एक समान और एक ही समय पर पूरी नहीं हुई थी।

6.3 प्रथम चरणः 9वीं से 11वीं शताब्दी

हालांकि प्रौद्योगिकी कभी अगतिशील नहीं रहती लेकिन इस युग में यह जरूरत से ज्यादा श्रम आधारित थी और उपज काफी कम थी। यद्यपि व्यापार काफी कम था, यह कभी पूर्णतः लुप्त नहीं हुआ। परंतु यह अर्थव्यवस्था की प्रमुख शक्ति नहीं रह गया। उत्पादन अधिकांशतः बाज़ार के लिए नहीं बल्कि निजी उपभोग के लिए किया जाता था।

6.3.1 कृषि उत्पादनः साधन और विधियां

इस चरण में कृषि तकनीक और औज़ार अपर्याप्त और कम असरदार थे। इसलिए आज की तुलना में कृषि की उत्पादकता काफी कम थी। इसके परिणामस्वरूप उपज काफी कम हुआ करती थी। मिट्टी कड़ी होने की वजह से तीन या चार बार खेत जोतना जरूरी होता था। खेत को उपजाऊ बनाने में काफी मेहनत करनी पड़ती थी। खेत को उपजाऊ करने के लिए हाथ, खुरपी, हंसुआ, फावड़े और मिट्टी के ढेलों को फोड़ने वाला पटेला, खेत को गहराई से जोतने और उसमें से खर-पतवार, कांटेदार पौधों को निकालने के लिए प्रमुख औज़ार थे। कृत्रिम रासायनिक खाद का प्रचलन नहीं था और उपलब्ध प्राकृतिक उर्वरक काफी सीमित थे। खेतों को काटने और जलाने (slash and burn) या फिर जले हुए स्थानों पर खेती करने के कारण मिट्टी की उर्वरता की समस्या लगातार बनी रहती थी। किसानों के पास कीटनाशक दवाइयां नहीं होती थीं और वे कबूतर और फाक़्ता पाला करते थे जो न केवल कीटों को खाते थे बल्कि बागानों में उपयोग के लिए थोड़े ही मात्रा में सही पर बेहतर उर्वरक उपलब्ध कराते थे। जमीन को उपजाऊ बनाए रखने के लिए उसे परती छोड़ने की प्रथा थी परंतु जमीन परती छोड़ने से उसमें झाड़-झंखाड़ भी पैदा हो जाते थे। शाकनाशी दवाई न होने से इन्हें निकालना एक बड़ा भारी काम होता था। प्रौद्योगिक पिछड़ेपन के साथ-साथ खेती को खराब मौसम की मार भी सहनी पड़ती थी। यदि वसंत ऋतु में ज्यादा नमी रह गई तो खेत जोतने का समय कम मिलता था। बीज खेत में ही सड़ जाते थे और इस प्रकार फसल मारी जाती थी। शरद ऋतृ में असमय पानी पड़ने से खेत में खड़ी फसल गीली हो जाती थी और इसे काटना, सुखाना और इसमें से अनाज निकालना बड़ा मुश्किल हो जाता था।

जुताई बहुत गहरे तक नहीं हो पाती थी। प्राचीन हलों (ancient swing-plough) का सुडौल फलक जिसमें कभी-कभी लोहे का फाल भी लगाया जाता था, परंतु अधिकांश भाग में आग द्वारा पकाई लकड़ी का ही इस्तेमाल किया जाता था, उससे मिट्टी की केवल ऊपर की परत ही उलट पाती थी और गहरे जाकर जोत नहीं पाती थी। इस लिहाज से **विषम फाल** लगे

भारी हल और पहिएदार मोल्डबोर्ड (ढेले तोड़ने का पटेला) जिसे एक से ज्यादा जानवर मिलकर खींचा करते थे, निश्चित रूप से इस दिशा में प्रगति का सूचक था। छठी शताब्दी तक उत्तरी इटली की पो घाटी में इसका प्रचलन हो चुका था (संभवतः स्लावी क्षेत्रों से यह तकनीक वहां आई थी) और आठवीं शताब्दी तक राइनलैंड में इसका उपयोग होने लगा था। इसमें लगे पहिए हल के फाल और लीक (furrow) में बेहतर तालमेल बनाए रखते थे और बढ़िया जुताई हो पाती थी। मोल्डबोर्ड ढूंढ वाली मिट्टी को पलटता था। लोहे के फाल के कारण हल से मिट्टी के अन्दर गहराई से जुताई होती थी और इस प्रकार मिट्टी में मौजूद खनिजों का अधिक इस्तेमाल हो पाता था और इसके बाद परम्परागत आड़ी-तिरछी दुहरी जुताई की कोई आवश्यकता नहीं रही। इसके अतिरिक्त इससे खेतों में निकल आए झाड़-झंखाड़ की जड़ें भी ऊपर आ जाती थीं और वे फिर धीरे-धीरे खत्म हो जाती थीं। उत्तर पश्चिमी यूरोप की उपजाऊ, भारी और प्रायः नम मिट्टी के लिए इसका उपयोग जरूरी था। इसके उपयोग से जंगली या वन क्षेत्र और दलदल क्षेत्रों में भी खेती किया जाना संभव हो सका। लम्बी हल-रेखा (furrows) में जुताई करने से मिट्टी या खेत काफी मात्रा में पानी सोखते थे और लीकों (furrows) के आकार के कारण मिट्टी का कटाव भी कम होता था। इससे उत्तरी यूरोप के उपजाऊ, खेतों को भारी वर्षा से सुरक्षा भी प्राप्त होती थी।

भारी हल के इस्तेमाल से सबसे बड़ी दिक्कत यह थी कि इसे खींचने के लिए ज्यादा पशु शक्ति लगानी पड़ती थी। चूंकि **मोल्डबोर्ड युक्त हल** को खींचने में चार से लेकर आठ जानवर लगाने पड़ते थे, अतः कुछ किसान ही ऐसे थे जो इस भारी हल को खींचने के लिए आवश्यक संख्या में बैल रख सकते थे। ले गॉफ इस बात की ओर भी ध्यान दिलाते हैं कि मध्यकाल में जानवरों का डीलडौल और ताकत आज के जानवरों से कमतर थी। लेकिन घोड़ों के तेज होने और बैल की अपेक्षा अधिक स्थायित्व होने तथा एक ही आदमी द्वारा हल जोत लेने के बावजूद (बैल से हल जोतने में दो व्यक्तियों को एक साथ लगना पड़ता था) घोड़े से खेत जोतने का रिवाज न तो बहुत तेजी से बढ़ा और न बहुत लोकप्रिय हुआ क्योंकि एक तो घोड़े की कीमत बहुत ज्यादा होती थी और दूसरे इसे जई (oats) खिलाकर पालना मुश्किल होता था (जई के अपेक्षाकृत मंहगे होने के कारण)। तेरहवीं शताब्दी तक दक्षिणी फ्रांस और भूमध्यसागरीय क्षेत्र के खेतों को निर्वाध रूप से बैल और खच्चर ही जोतते रहे।

6.3.2 कृषि उत्पादन का संगठन

पूरा गांव सामुहिक रूप से एक साथ खेत जोतता था क्योंकि हल और इसे खींचे जाने वाले जानवर की कीमत एक परिवार अकेला नहीं चुका सकता था। साधारणतः उपजाऊ मैदानी क्षेत्र के चारों ओर **खुले खेत** होते थे और इसके चारों ओर गांव बसा होता था। इन खेतों में लोगों के खेत एक दूसरे में मिले होते थे और फसल कट जाने के बाद और अनाज घर पहुँच जाने के बाद **गांव के अनाज बीनने वाले लोग** (village gleaners) गिरे हुए अनाज को बीन लेते थे और फिर गांव के जानवर इसमें चरते थे। इसमें एक दूसरे की जमीन के बीच कोई फर्क नहीं किया जाता था। इन खेतों के बाद जंगल और बंजर जमीन होती थी जहां से गांव के लोग लकड़ी, सूखे मेवे और फल, खरगोश-खरहा और अपने जानवरों के लिए चारा हासिल करते थे। प्रत्येक परिवार को खेतों को तैयार करने और उसमें बुआई करने तथा उसे खाली रखने (परती छोड़ने) के समुदाय द्वारा निश्चित कार्यक्रम का पालन करना पड़ता था। उन्हें खेतों से बिखरे हुए अनाज को चुनने (gleaning) और सामूहिक भूमि के प्रयोग के नियमों का पालन करना पड़ता था।

रॉडनी हिल्टन ने गांव के इस सामूहिक कार्य को ही मैनोर व्यवस्था का आधार बताया है। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि खेती कई प्रकार की होती थी और सब जगह न तो खेत परती छोड़ने का रिवाज था और न ही सभी किसानों के बीच खेतों का समान रूप से वितरण होता था। लेकिन आमतौर पर प्रत्येक परिवार को दोनों प्रकार के खेतों में हिस्से जरूर मिलते

थे। एक खेत को वसंत के आरंभ में जोता जाता था और अनाज की फसल लगाई जाती थी और उसके बाद दूसरे खेत को जोता जाता था परंतु उसमें कुछ रोपा नहीं जाता था ताकि हवा और रोशनी ग्रहण कर वह खेत फिर से उपजाऊ बन सके। इसमें झाड़-झंखाड़ उगने दिया जाता था। जैसे ही ये झाड़-झंखाड़ खेत में फूलना और बीज देना शुरू करते थे खेत को दूसरी बार जोत दिया जाता था और उस समय झाड़-झंखाड़ इसके अंदर दब जाते थे। हालांकि इस विधि से खेत की उर्वरता और झाड़-झंखाड़ों से उसे बचाए रखने में मदद मिलती थी परंतु इस व्यवस्था की भारी कीमत चुकानी पड़ती थी। व्यावहारिक स्थिति यह थी कि गांव वालों को पूरा खेत जोतना पड़ता था परंतु वे केवल आधे खेत में ही अनाज उगा पाते थे।

नवीं और दसवीं शताब्दी में खेत के उपयोग में बढ़ोत्तरी हुई। खेत को दो की जगह तीन हिस्सों में बांटकर बारी-बारी से बीन्स, शीतऋतु में उपजाया जाने वाला गेहूँ, और गर्मी में उपजाया जाने वाला गेहूँ बोया जाने लगा और एक खेत परती छोड़ दिया जाने लगा। अच्छी योजना के तहत इसमें एक साल में एक फसल की बजाए तीन फसलें उपजाई जाती थीं। बारी-बारी से दो वर्षीय अंतराल की जगह त्रि-वर्षीय अंतराल के आवर्तन (rotation) के बदलाव से अब दो वर्ष में एक वर्ष भूमि को परती छोड़ने के बजाय तीन वर्षों में एक वर्ष के लिए भूमि को परती छोड़ा जाने लगा, इस प्रकार अब आधे खेत के बजाए दो तिहाई खेत का उपयोग किया जाने लगा। आमतौर पर अधिकांश स्थानों पर गेहूँ उपजाया जाता था परंतु मिट्टी और वातावरण के अनुरूप जई, राई, जौ या अन्य फसलें, मिट्टी की उर्वरता के अनुसार, भी उगाई जाती थीं। किसानों ने अनाज की फसलों के साथ-साथ मटर और बीन्स उगाना भी शुरू कर दिया। इन फलियों से मिट्टी में नाइट्रोजन का तत्व बढ़ा और बेलों ने झाड़-झंखाड़ को बढ़ने से रोका। इनसे मनुष्यों को प्रोटीन मिलता था और जानवरों को जाड़े के दिनों में चारा। बेलें मिट्टी को भुरभुरा रखती थीं और इस प्रकार खेत जोतना आसान हो गया था।

बारी-बारी से फसल रोपने की विधि में सुधार आने और फसलों के सीमित विविधिकरण के अलावा लोहे के बढ़ते उपयोग और पवन चक्की के विशिष्ट इस्तेमाल से भी खेती में उन्नति हुई। खेतों में कुछ अन्य सुधार भी लाए गए। भारी हल का उपयोग करने के कारण कई लोग एक साथ काम करते थे, इसलिए उत्तर में बड़े-बड़े खेतों वाली पट्टीदार कृषि (longacre farming) का इस्तेमाल होने लगा। पुराने भूमध्यसागरीय विधि से की जाने वाली कृषि से उत्तरी हिस्से की कृषि इस लिहाज से अलग थी कि वहां छोटे और चौकोर खेत इस्तेमाल में लाए जाते थे।

6.3.3 निर्वाह-अर्थव्यवस्था (Subsistence Economy)

इस प्रकार के छोट-मोटे कई नए तरीकों के इस्तेमाल के बावजूद कृषि उत्पादन, परिवहन और वितरण की तकनीक का स्तर काफी निम्न था और अभी भी अधिशेष बहुत थोड़ा ही बच पाता था। अभी भी सामान ढोने का प्रमुख साधन मज़दूर ही थे। सड़कें बुरी स्थिति में थीं। गाड़ी और चौपहिया गाड़ियां (वैगन) बहुत कम और बहुत महंगी थीं। हालांकि बारहवीं और तेरहवीं शताब्दी में खासतौर पर उत्तर में जहाजों की भारवाहक क्षमता में बढ़ोत्तरी हुई परंतु पानी के जहाजों की संख्या अभी भी कम थी। 1280 के बाद ही कम्पास का उपयोग अधिक प्रचलन में आया। पुनर्जागरण से पहले क्वाड्रैंट और समुद्री एस्ट्रोलेब का इस्तेमाल शुरू नहीं हुआ था।

पूरे मध्य युग में मनुष्य का शारीरिक श्रम ऊर्जा का प्रधान स्रोत था। इसके बावजूद लोगों को उचित भोजन भी नहीं मिलता था और उनके रहने-सहने की स्थिति भी अच्छी नहीं थी और इसका असर उनके कामकाज पर विशेष रूप से पड़ता था। खराब खाना और चिकित्सा ज्ञान की कमी के कारण लोगों की आयु-अवधि अधिक नहीं थी। बच्चों की मृत्यु दर भी काफी ऊंची थी। कुपोषण के कारण अभिजात वर्ग की अपेक्षा गरीब वर्ग के लोगों का स्वास्थ्य जल्दी खराब होने तथा उनकी असमय मृत्यु होने का खतरा रहता था। परम्परागत उत्पादन

तकनीकों के इस्तेमाल और इनकी अपर्याप्तता और परम्परा से चली आ रही शासकीय विचारधारा ने मध्ययुगीन अर्थव्यवस्था को बिलकुल जड़ बना दिया और मात्र जिंदा रहना ही लोगों का मकसद रह गया था। 'कुछ मुट्ठी भर लोग ही अपने सम्मान की देखरेख और खर्च' कर पाते थे। कृषि उत्पादों के लिए बाजार भी छोटे थे। इसलिए बड़े पैमाने पर उत्पादन किए जाने के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं था। एक परिवार अपने छोटे से खेत में एक या दो भाड़े के व्यक्तियों की मदद से खाने-पीने भर अनाज उपजा लेता था। इसके परिणामस्वरूप पूरे मध्ययुग में कृषक समाज के आन्तरिक स्तरीकरण का दायरा काफी सीमित था।

बोध प्रश्न-1

1) सामंतवाद के पहले चरण की प्रमुख विशेषताएं बताइए।

....

....

....

....

....

2) सामंतवाद के पहले चरण में कृषि के साधनों और पद्धतियों का उल्लेख कीजिये।

....

....

....

....

....

3) सामंतवाद के पहले चरण में कृषि उत्पादन का संगठन और संयोजन कैसे किया जाता था?

....

....

....

....

....

6.4 द्वितीय चरणः 11वीं से 14वीं शताब्दी

दूसरे चरण के दौरान सामंतीय ढांचे में कई प्रकार के परिवर्तन हुए। कृषि उत्पादकता और जनसंख्या में वृद्धि सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन था। इस वृद्धि से ज्यादा जमीन पर खेती की जाने लगी और इससे उपज में वृद्धि हुई। उत्पादन के तरीके में भी परिवर्तन हुआ और सामुदायिक आधारित उत्पादन के स्थान पर किसान व्यक्तिगत तौर पर खेती करने लगे और बाजार के लिए भी उत्पादन होने लगा। गैर-कृषीय वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि होने से अर्थव्यवस्था का विकास हुआ। सामाजिक ढांचा बदला और कृषक वर्ग में स्तरीकरण की प्रवृत्ति तेज हुई। आइए, इन परिवर्तनों पर विचार करने के क्रम में सबसे पहले जनसंख्या वृद्धि पर नजर डालें।

6.4.1 जनसंख्या में वृद्धि

ग्यारहवीं शताब्दी से जनसंख्या में वृद्धि नज़र आने लगी थी। यह वृद्धि चौदहवीं शताब्दी के मध्य तक चली। जनसंख्या वृद्धि के आंकड़ों को देखने से पहले हमें यह जान लेना चाहिए कि इतनी तेजी से जनसंख्या में वृद्धि क्यों हुई। इसका सबसे बड़ा कारण दसवीं शताब्दी में कबीलाई आक्रमणों में तेजी से कमी आना हो सकता है। शांति और सुरक्षा बहाल करने के लिए बनाए गए सामंतीय संस्थानों का भी इसमें योगदान था। किसान परिवारों पर लगे कानूनी प्रतिबंधों में ढील दिए जाने से भी इस प्रक्रिया को बढ़ावा मिला। एक महत्वपूर्ण कारण यह भी था कि प्रौद्योगिकी और कृषीय उत्पादन के तरीके में धीर-धीरे सुधार आ रहा था क्योंकि इसके बिना बढ़ती जनसंख्या का पेट भरना संभव नहीं था।

जनसंख्या की यह वृद्धि बहुत तेजी से हुई। दसवीं शताब्दी और चौदहवीं शताब्दी के मध्य पश्चिम यूरोप की जनसंख्या दोगुनी हो गई। जे. सी. रसेल (*पॉपुलेशन इन यूरोप, 500-1500*), के एक आकलन के अनुसार लगभग 950 सी ई में पश्चिमी यूरोप की जनसंख्या 225 लाख थी जो 1348 में **ब्लैक डेथ** के पहले तक बढ़कर, 545 लाख हो गई। एम. के. बेनेट के एक अन्य आकलन अनुसार पूरे यूरोप की जनसंख्या 1000 सी ई में 420 लाख थी जो 1300 सी ई के आसपास लगभग 730 लाख हो गई। 1200 सी ई के आसपास संभवतः जनसंख्या में तीव्र वृद्धि हुई। 1200 सी ई और 1340 सी ई के बीच फ्रांस की जनसंख्या 120 लाख से बढ़कर 210 लाख हो गई और इसी प्रकार जर्मनी की 80 लाख से बढ़कर 140 लाख, और इंगलैंड की जनसंख्या 22 लाख से बढ़कर 45 लाख हो गई। जनसंख्या वृद्धि की इस अवधि में जनसंख्या में कमी के दो दौर ऐसे भी आए जब यूरोप की जनसंख्या 200 सी ई में 670 लाख थी जो लगभग 700 सी ई में 270 लाख रह गई और 1300 सी ई में 730 लाख से घटकर 1470 सी ई में लगभग 450 लाख हो गई।

6.4.2 कृषि का विस्तार

आबादी में तेजी से वृद्धि होने के कारण ज्यादा उत्पादन की जरूरत महसूस हुई और ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दी के बीच बड़े पैमाने पर जंगलों को साफ किया गया और उन्हें खेत में तब्दील किया गया। अधिकांश क्षेत्रों में मौजूदा खाद्य संसाधन इस बढ़ती आबादी के साथ नहीं बढ़े और बड़ी संख्या में बहिर्गमन के बावजूद जमीन पर दबाव कम नहीं हो सका। ल गॉफ के अनुसार अभी भी उत्पादन बढ़ाने के लिये ज्यादातर ध्यान अधिक जमीन को साफ करके खेती योग्न बनाने पर था, न कि कृषि साधनों या खेती के उपकरणों में परिवर्तन या उन्नति पर। प्रथम सहस्राब्दी के बाद बड़े पैमाने पर जंगल काटकर खेत बनाए गए। स्पेन तथा दक्षिण फ्रांस के कई हिस्सों में बंजर भूमि को सींचा गया और उन्हें खेती योग्य बनाया गया। वेल्स और पूर्वी जर्मनी में बड़े पैमाने पर जंगल काटे गए और फ्लैन्डर्स में समुद्र से प्राप्त जमीन को बड़े श्रमपूर्वक खेतों में तब्दील किया गया। ड्यूबी का मानना है कि बढ़ती आबादी के कारण जंगलों को साफ किया जाना अन्दरूनी जरूरत तो थी ही और साथ-साथ उसे ऊपर से अनुमति भी प्राप्त हुई। एक ओर जहां किसान अधिक जमीन पर खेती करने को आतुर थे ताकि बढ़ती आबादी का पेट भरा जा सके तो दूसरी ओर अधिपति भी अपने संसाधनों को बढ़ाने के लिए तत्पर थे। जमीन को खेत बनाने की प्रक्रिया से कृषि भूमि में भी परिवर्तन आया और घरों से सटे हुए बड़े-बड़े प्रमुख उपजाऊ खेतों में खेती करने के बजाए गांव की सीमावर्त तैयार जमीन पर खेती की जाने लगी। पशुपालन को भी बेहतर ढंग से संगठित और संयोजित किया गया। अकाल पूरी तरह समाप्त तो नहीं हुए परंतु बारहवीं शताब्दी के अंत तक इनमें काफी कमी आई।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

6.4.3 कृषि उत्पादन के संगठन में परिवर्तन

खेती के विस्तार और बेहतर प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल के कारण खेती करने के तरीके में बदलाव आना लाजिमी था। ड्यूबी का मानना है कि बेहतर उपकरणों के इस्तेमाल से अब किसानों के लिए सामूहिक रूप से खेती करना अनिवार्य नहीं रह गया और इसने निजी तौर पर खेती करने को प्रोत्साहन दिया। इस प्रकार इससे कृषीय व्यक्तिवादिता को बढ़ावा मिला। मुक्त क्षेत्रों और 'अभयारण्यों' (जहां आकर बसने वाले लोगों को निश्चित रूप से कुछ विशेषाधिकार प्राप्त थे, उन्हें '**बर्गेस**' का दर्जा दिया गया और वहां रहने के लिए उन्हें कर से राहत दी गई) के निर्माण ने पुराने अधिपतियों को इस बात के लिए मजबूर किया कि वे रियायत दें और अपनी मांगों को कम करें। इस प्रकार ग्रामीण इलाकों में एक प्रकार की आजादी का अहसास होने लगा। अतः जो लोग कृषीय विस्तार में संलग्न थे उनसे कुछ वादे करना और वादों को पूरा करना लाजिमी था। दक्षिणी गौल और उत्तर पश्चिम जर्मन इलाकों को छोड़कर बारहवीं शताब्दी में कृषक परिवार एक उत्पादक इकाई ***मेन्स*** (***manse***) के रूप में अन्ततः समाप्त हो गया। दो नए प्रकार की काश्तकारी-व्यवस्थाएं – लगान और बटाई लागू की गईं। इस प्रकार की व्यवस्था उन क्षेत्रों के लिए की गई थी जहां परिधीय क्षेत्रों में अभी-अभी खेती की शुरुआत की गई थी। सालाना लगान या तो नियत होता था या फिर उपज के एक भाग पर आधारित होता था।

जनसंख्या वृद्धि होने से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई। नए-नए इलाकों को साफ कर खेती की गई और इस प्रक्रिया में निश्चित रूप से सामंती बोझ कम होने से काफी मदद मिली। बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में अधिपतियों ने प्रचलित प्रथाओं के लिए कुछ नियम बनाए। अपनी वित्तीय शक्तियों को नियमित किया और इस प्रकार दासत्व के मजबूत गठबंधन को थोड़ा ढीला किया। इन रियायतों से उनके अधिकार क्षेत्र में किसान परिवारों की संख्या बढ़ी। उत्पादन भी बढ़ा और इससे ग्रामीण जनता के पास अधिक धन संग्रहित होने लगा। जनसंख्या में वृद्धि होने से एक ओर जहां खेतों का बंटवारा हुआ वहीं दूसरी ओर ग्रामीण लोगों की गतिशीलता में भी तेजी आई। खाली पड़े खेत और कृषि श्रमिकों का अभाव आरंभिक मध्ययुगीन अर्थव्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता थी। चूंकि कृषकों और श्रमिकों के अभाव में जमीन का कोई महत्व नहीं था, इसलिए भूपति वर्ग ने मजदूरों की गतिशीलता पर प्रतिबंध लगाना शुरू कर दिया। बारहवीं और तेरहवीं शताब्दियों के बीच अधिक उत्पादकता वाले खेतों की संख्या में वृद्धि हुई और श्रमिकों की आपूर्ति में वृद्धि होने से **दासता से मुक्ति की प्रक्रिया** (manumission) में तेजी आई और बड़ी संख्या में खेतों पर गैर-कुलीनों का अधिकार हो गया।

6.4.4 अर्थव्यवस्था का विकास

घनी आबादी वाले क्षेत्रों का शहरों और राजनीतिक केन्द्रों के रूप में तेजी से विकास हुआ। तकनीकी सुधारों और आविष्कारों से न केवल उत्पादन में वृद्धि हुई बल्कि इसने किसानों की उत्पादकता भी इस हद तक बढ़ा दी कि अब कम लोग खेती में संलग्न रहकर ज्यादा से ज्यादा उत्पादन कर सकते थे और ज्यादा से ज्यादा लोग गैर-कृषीय गतिविधियों में अपने को पूरी तरह लगा सकते थे। जैसा कि हम पहले ही बता चुके हैं कि गैर-कृषीय कार्यों पर बल दिए जाने के कारण उत्तर मध्य युगीन यूरोप के शहर क्लासिकीय युग के शहरों से काफी भिन्न थे। इन शहरों में व्यापारी, शिल्पी, महाजन, चिकित्सक, वकील आदि धनी हो गए और उनकी सामाजिक स्थिति भी मजबूत हो गई। कालान्तर में वे राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्तर पर एक प्रभावशाली और शक्तिशाली शहरी समुदाय के रूप में उभरकर सामने आए। इनमें से कई धन के लेन-देन का काम करते थे और जमीनों को गिरवी रखकर पैसा कमाते थे। ये कुलीन वर्ग के सदस्यों और उच्चस्थ पादरियों को भी वित्तीय संकट के समय मदद करते थे और उनसे पैसा कमाते थे। यह काम खासतौर पर यहूदी किया करते

थे जिन पर ईसाई धर्म की तरह इस प्रकार के ब्याज पर रकम देने का व्यवसाय करने की मनाही नहीं थी। उन्होंने इन गतिविधियों में केन्द्रीय भूमिका निभाई।

बड़े पैमाने पर उत्पादन कार्य शुरू हुआ और लम्बी दूरी के व्यापारों का पुनरुत्थान हुआ। इस दौरान मुख्य रूप से – दास, कपड़ा और ऊन तथा चांदी का निर्यात प्रमुख था। जर्मेनिक अपनी पूर्वी सीमा से या फिर **वाइकिंग्स** द्वारा दास प्राप्त करते थे और इनका निर्यात करते थे और खासतौर पर कॉरडोबा के खलीफा के यहां इनकी बड़ी मांग थी। फ्लेमिश क्षेत्र से सूती कपड़े तथा ऊनी कपड़े जो इंग्लैंड की ऊन से ब्रूजे, लिले, बर्गेस और अरस शहरों में तैयार किए जाते थे और सैक्सोनी से चांदी का निर्यात होता था। इटली और रूस के नदीय मार्गों के माध्यम से ये सामान पूर्व की ओर पहुंचाए जाते थे और वहां से विलासिता की वस्तुएं, रेशम और मसाला मंगवाया जाता था जो काफी मूल्यवान थे और उन्हें लाना भी अपेक्षाकृत आसान था।

सामंती युग के दौरान मुख्यतः उपभोग के लिए कर्ज लेना आम बात थी। उत्पादन के लिए कर्ज लेने की प्रथा न के बराबर थी। ईसाई धर्म के अनुसार उपभोग के लिए कर्ज पर ब्याज नहीं लिया जा सकता था। इसे सूदखोरी माना जाता था और ऐसा करने पर चर्च इसका कड़ा विरोध करती थी। कर्ज लेना प्रशंसनीय नहीं माना जाता था और इस कारण आर्थिक प्रगति और विकास के लिए भी इस प्रकार मदद लेने में लोग हिचकते थे। इस मानसिकता के चलते जमा धन आर्थिक प्रगति में नहीं लग पाता था। अभिजात वर्ग आमतौर पर अपनी जमा राशि उपहारों और दान देने में तथा ईसाईयत के नाम पर या फिर शौर्य प्रदर्शन के लिए दान दिया करते थे। बेतहाशा खर्च करने से अधिपतियों की शान में इजाफा होता था। ऐशो आराम और फिजूलखर्ची में उनकी सारी आमदनी चुक जाती थी। यदि इससे भी कुछ पैसा बच जाता था तो वे इसे अपने पास जमा रखते थे और यह एक प्रकार की गैर-सृजनात्मक आर्थिक गतिविधि थी। संकट या मुसीबत के समय में यह कीमती बर्तन और जमा धन काम आता था (या तो उसे पिघला दिया जाता था या चलन में डाल दिया जाता था) परंतु यह मात्र जीवन निर्वाह के लायक होता था और यह किसी नियमित और निरंतर उत्पादक गतिविधि में उपयोग में नहीं लाया जाता था। इसी प्रकार उच्चस्थ पादरी वर्ग चर्च बनाने और उसकी मरम्मत करने तथा शानो-शौकत (liturgical pomp) आदि गैर-उत्पादक कार्यों में धन खर्च करते थे। हालांकि चर्च की आमदनी के एक बड़े हिस्से का उपयोग गरीबों, जो सामंती शोषण के बिलकुल निचले स्तर पर खड़े थे, के जीवनयापन के लिए होता था।

अब इतिहासकार इस बात से सहमत हैं कि पश्चिम में मध्य काल में मुद्रा पूरी तरह लुप्त नहीं हुई थी। चर्च और कुलीनों के अलावा जिनके पास हमेशा ऐशो आराम की वस्तुएं खरीदने के लिए मुद्रा संचय रहता था, किसानों के पास भी थोड़ा बहुत धन होता था जिससे वे नमक जैसी जरूरी वस्तुएं खरीदते थे जो न तो वे उपजा सकते थे न ही उन्हें यह कहीं से मुफ्त मिल सकता था और वस्तु विनिमय के जरिए भी यह बहुत मुश्किल से मिल पाता था। परंतु मुद्रा का चलन कुल मिलाकर बहुत ही सीमित और कम लचीला था। बैल, गाय, कपड़ा और खासतौर पर काली मिर्च जैसी गैर-धातुगत मुद्राएं अस्तित्व में थीं। प्रथम सामंती युग में केवल अपने सैद्धांतिक मूल्य के कारण मुद्रा का महत्व नहीं था, परंतु इस दौरान मुद्रा में प्रयुक्त बहुमूल्य धातुओं के वास्तविक मूल्य के कारण इसका महत्व था। तेरहवीं शताब्दी के दौरान ले गॉफ मुद्रा 'व्यवस्था के पुनरोदय' (monetary renaissance) या स्वर्ण सिक्के फिर से गढ़े जाने का जिक्र करता है। ऐसा वेनिस, फ्लोरेंस, फ्लैंडर्स, इंगलैंड, फ्रांस और बोहेमिया में चांदी के ग्रोट (groat; इसकी कीमत 4 पेंस के बराबर थी) सिक्कों के प्रचलन के साथ शुरू हुआ। ग्यारहवीं शताब्दी के आंरभ तक दक्षिण में मुस्लिम उत्पादन केन्द्रों के मजबूत होने से दामों में काफी बढ़ोत्तरी हुई और लगभग इसी समय मुद्रा अर्थव्यवस्था का युग समाप्त हुआ। ग्यारहवीं शताब्दी और बारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में दामों में गिरावट आई जो मुद्राहीन

अर्थव्यवस्था के एक नैसर्गिक चरण की ओर इशारा करती है। इसके पूर्ववर्ती चरण ने ईसाई राजशाहियों का विमुद्रीकरण कर दिया था।

दूसरी ओर बारहवीं शताब्दी के मध्य से मुद्रा अर्थव्यवस्था के चरण की फिर से शुरुआत हुई जिसमें मुद्रा का तेजी से चलन हुआ और इससे प्रोत्साहित होकर अधिपतियों ने लगान से प्राप्त धन का उपयोग करना शुरू किया। निजी अदालतों में मास्टर (लॉर्ड) और पट्टेदारों के मध्य छोटे-छाटे टकरावों को सुलझाने के लिए लॉर्ड अपने काश्तकारों से धन लिया करते थे। *'चाम्पर्ट्स'* (*champarts बटाई*) के स्थान पर नई लगान व्यवस्था लागू हुई और मजदूरी का नगद भुगतान होने लगा। इस प्रकार मैनर में अधिक नगद धन जमा होने लगा। यह नगद धन वे विभिन्न जरियों से किसानों से प्राप्त करते थे। इसके बावजूद सामंती युग में मुद्रा का अंश काफी कम रहा।

6.4.5 सामाजिक स्तरीकरण

अर्थव्यवस्था के विकास से सामान्य तौर पर पूरे समाज में असमानता बढ़ी और खासतौर पर कृषक वर्ग का स्तरीकरण हुआ। नई भूमि को खेती योग्य बनाकर खेती करने वाले किसानों (*hospite*) को रियायतें और स्वतंत्रता दी गई। पश्चिमी यूरोप की तमाम भू-सम्पदाओं में स्वतंत्रता की जो प्रक्रिया चली उससे उनकी माली हालत तो बहुत नहीं सुधरी पर उनकी कानूनी स्थिति मजबूत हुई। अब सामंत किसानों से बेगार नहीं करा सकते थे। इसके स्थान पर अब किसानों को श्रम सेवा के रूप में एक नियमित शुल्क (*census*) अदा करना पड़ता था। यह राशि (quit-rent; *taille abonnée*) लिखित अधिकार पत्र (चार्टर) द्वारा तय कर दी गई। अधिपतियों को शुल्क की दर नियत करने के लिए मजबूर किया गया और उन्होंने अपने नागरिकों को कुछ निर्धारित परम्परागत अधिकार दिये जिससे प्रवास दर में वृद्धि हुई। अब लॉर्ड को श्रम सेवाओं का भुगतान नगदी में बदल दिया गया। अब किसानों को अधिपति के यहां मजदूरी करने की जरूरत नहीं थी, इसके लिए वह एक नियत शुल्क देकर इससे छूट प्राप्त कर सकता था। इस प्रकार किसानों को इस बात की स्वतंत्रता मिल गई कि वह किसी दूसरी जगह चले जाएं या फिर अपने खेत में पूरा समय लगाएं। इससे अधिपतियों को भी नगद राशि प्राप्त हुई जिसका उपयोग वे विकसित हो रहे श्रम बाजार से श्रमिक प्राप्त करने में कर सकते थे। इस प्रक्रिया से अकुशल कृषि श्रमिकों की तुलना में ऊपरी तबके के किसानों, विशेषकर उन हलवाहों या श्रमिकों को विशेष फायदा हुआ जिनके पास अपने उपकरण और खेतिहर श्रम मजदूर थे। इस प्रक्रिया में छोटे किसानों की सामाजिक निर्भरता बढ़ी और उनकी आर्थिक स्थिति खराब हुई, जबकि बड़े किसानों के लिए संभावनाओं के द्वार खुल गए। समाज में यह अन्तर बढ़ने से विभिन्न वर्गों के बीच की दूरी बढ़ी और काफी हद तक सामाजिक संबंध पुनर्परिभाषित हुए।

बड़े किसानों के अलावा बर्गेस के कई नागरिकों, शक्तिशाली अधिपतियों और बड़े शहरों के गिरजाघर छोटे और मझोले नाइट वर्ग के सदस्यों के बल पर अमीर बने जिन्होंने कर्ज में डूबने के कारण अपनी जमीनें बेच दीं। वस्तुतः अधिपतियों के बीच वर्ग विभाजन और स्तरीकरण इस युग की एक महत्वपूर्ण विशेषता बन गया। अभिजात वर्ग में न केवल *मिलिटेस* (*milites*) और *बेलाटोर्स* (*bellatores*) के मध्य विभेदीकरण बढ़ा जो नाइट और लॉर्ड की सेवा करते थे, साथ ही साधारण (*banal*) और छोटे अधिपतियों के बीच भी काफी भेद बढ़ गया। साधारण अधिपति (*banal*) अपने जीवनयापन के लिए अपने सामंती विशेषाधिकारों पर ही आश्रित होता चला गया जबकि छोटे अधिपतियों ने बाजार की मांग के अनुसार अपने को ढाला और इसके लिए उत्पादन करना शुरू किया। दोनों ही स्तरों पर हुए इस विभेदीकरण की प्रक्रिया से आने वाले समय में सामंती अर्थव्यवस्था और समाज में काफी परिवर्तन हुआ।

उत्तर मध्ययुग में सामाजिक वर्ग अस्थिरता के दौर से गुजर रहे थे। जो आर्थिक परिस्थितियां

कायम हुईं उनसे व्यापारियों और शिल्पियों को फायदा हुआ और अब किसान भी बेहतर परिवेश में काम कर सकते थे। अधिपति और मातहत (वसाल) के बीच के सामंती दायित्व को नगदी भुगतान के करार में बदल दिया गया। आर्थिक गतिविधि केवल खेती-बाड़ी तक सीमित नहीं रह गई बल्कि इसमें वाणिज्यिक हित भी जुड़ गए और गैर-कृषि उत्पादन कार्य भी शुरू हुआ। अब यूरोप में युद्ध का दौर भी कम हुआ और पराक्रमी कुलीनों को अपनी ऊर्जा धर्मयुद्ध करने में नहीं लगानी पड़ी।

मानचित्र 6.1: शार्लमेन का साम्राज्य जिसमें अधिकांशत आधुनिक फ्रांस, जर्मनी, निम्न तटीय देश, आस्ट्रिया और उत्तरी इटली शामिल था

साभार: हेल-हामा hama – "द पब्लिक स्कूल्स हिस्टॉरिकल ऐटलस," चार्ल्स कोलबैक. लाँगमैन्स, ग्रीन; न्यूयार्क; लंदन; बॉम्बे. 1905

स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/Early_Middle_Ages#/media/File:Europe_814.svg

बोध प्रश्न-2

1) जनसंख्या की वृद्धि और कृषि के विस्तार पर इसके प्रभाव पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

2) सामंतवाद के द्वितीय चरण के दौरान खेती के विस्तार ने कृषि उत्पादन के संगठन और संयोजन में किस प्रकार परिवर्तन को उत्पन्न किया?

....

....

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

....

....

3) सामंतवाद के द्वितीय चरण के दौरान अर्थव्यवस्था में होने वाले प्रमुख परिवर्तनों ने कैसे सामाजिक स्तरीकरण को बढ़ावा दिया?

....

....

....

....

....

6.5 सामंतवाद के पतन संबंधी सामान्य अवधारणाएं

1920 और 30 के दशक में बेल्जियन इतिहासकार हेनरी पिरेन ने अपनी पुस्तकों, *मिडिवल सिटीजः देयर ऑरिजिन एंड द रिवाइवल ऑफ ट्रेड; इकोनोमिक एंड सोशल हिस्ट्री ऑफ मिडिवल यूरोप तथा मोहम्मद एंड शार्लमेन* में सामंतवाद के उत्थान और पतन में व्यापार की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानी थी। पिरेन के अनुसार लम्बी दूरी का व्यापार, जिसे वे, 'ग्रैंड ट्रेड' कहते थे, सभ्यताओं के फलने-फूलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है और किन्हीं कारणों से यदि इसमें बाधा पहुंचती है तो सभ्यता की प्रगति रूक जाती है।

इसी वजह से भूमध्यसागर से होने वाले व्यापार के चलते प्राचीन काल की यूरोपीय सभ्यताओं ने बुलंदी का शिखर छुआ क्योंकि यह न केवल समाज की आर्थिक शक्ति था बल्कि इससे दूर-दूर के देशों और प्रदेशों के विचारों और संस्कृतियों का भी आवागमन होता था। जब सातवीं शताब्दी में मुसलमान-अरब[1] आक्रमणों से भूमध्यसागर पार का व्यापार बाधित हुआ और अरबों ने पूरब (एलेक्जेंड्रिया) और पश्चिम (जिब्राल्टर) में समुद्र के प्रवेश द्वारों पर अपना कब्जा जमा लिया और मध्य में स्थित सारडीनिया पर नियंत्रण कर लिया तो इसके बाद यूरोपीय अर्थव्यवस्था अन्तर्मुखी हो गई और इसका ग्रामीणीकरण हो गया। परिणामस्वरूप यह सुस्त हो गई और यहां तक कि व्यापार भी एक सीमित क्षेत्र में सिमट कर रह गया। पिरेन ने इसे 'प्राचीन विश्व के आर्थिक संतुलन का गड़बड़ाना' कहा। यह शहरी जीवन के अन्त का भी संकेत था जो केवल लम्बी दूरी के व्यापार पर ही टिक सकता था, और अब लम्बी दूरी के व्यापार के समाप्त होने से विचारों का आदान-प्रदान भी समाप्त हो गया; जीवन में निष्क्रियता आ गई। यही सामंतवाद था। अंततः 11वीं शताब्दी में हुए धर्मयुद्धों के द्वारा अरबों को उनके वतन मध्य पूर्व तक धकेल दिया गया, और इस प्रकार यूरोप मुक्त हो गया। 'ग्रैंड ट्रेड' की फिर से शुरुआत हुई और शहरी केन्द्र जीवंत हो उठे। यह सामंतवाद के अन्त का आरंभ था। उन्होंने इस रूपांतरण का महत्व दर्शाने के लिए 'शहरी जीवन व्यक्ति को स्वतंत्र बनाता है' जैसी कहावत को उद्धृत किया।

इस प्रकार पिरेन ने सामंतवाद और व्यापार के बीच आधारभूत द्विभाजीय (dichotomy) संबंध स्थापित किया जिसमें चोली-दामन का साथ है। यूरोपीय सामंतवाद को समझने और उसे एक अवधारणा के रूप में ढालने में इसका एक महत्वपूर्ण योगदान है और काफी लम्बे समय तक यह इतिहासकारों के बीच बहस और विचार-विमर्श का केन्द्र बना रहा। यूरोप के बाहर भी इसका प्रभाव फैला और उदाहरण के लिए भारतीय सामंतवाद की अवधारणा निर्मित करने में भी इसी सामंतवाद/व्यापार द्विभाजन संबंधी अवधारणा का उपयोग किया गया। ई. ऐश्टर

[1] आप भूमध्यसागरीय क्षेत्रीय व्यापार में मुसलमान-अरबों की भूमिका के बारे में इस पाठ्यक्रम **(बी एच आई सी-104)** की **इकाई 16** में विस्तार से पढ़ेंगे।

(E. Ashtor) ने निकट पूर्व के लिए इस अवधारणा का उपयोग किया। इन दोनों ही स्थानों पर इस सिद्धांत का अक्षरशः पालन किया गया।

कुछ मामलों में पिरेन की इस अभिधारणा ने इतिहासलेखन में कुछ आधारभूत परिवर्तन किए। इसका दायरा विकसित हुआ और इसमें पूरे समाज को समाहित किया गया। अभी तक केवल सामंतवाद के उत्थान और पतन को व्याख्यायित करने के लिए छोटे पैमाने पर घटित होने वाले कुछ कारकों और कारणों पर ही बल दिया जाता था। उन्नीसवीं शताब्दी की एक व्याख्या में यहां तक कहा गया था कि सामंतवाद का उदय घोड़े की रकाब की उत्पत्ति से जुड़ा हुआ था! पिरेन की अभिधारणा पर विचार-विमर्श के दौरान इस पर सवाल उठे और इसे पूर्णतः खारिज कर दिया गया, खासतौर पर व्यापार/सामंतवादी द्विविभाजन की केंद्रीयता के परिप्रेक्ष्य में।

सामंतवाद इस अभिधारणा को सबसे गंभीर चुनौती पूंजीवाद के उदय पर विचार करने वाले मार्क्सवादी आर्थिक इतिहासकार कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के मॉरिस डॉब ने दी। 1946 में उन्होंने अपनी पुस्तक *स्टडीज इन द डेवेलप्मेंट ऑफ कैपिटलिज्म* में सामंतवाद के पतन पर विचार करना शुरू किया। इस परीक्षण के दौरान सबसे पहले उन्होंने व्यापार के प्रश्न को उठाया। मार्क्सवादी होने के कारण वे किसी आर्थिक व्यवस्था के परिचालन में व्यापार को स्वायत्त तत्व नहीं मानते थे। उनके अनुसार अपने आप में व्यापार किसी भी आर्थिक व्यवस्था को नहीं बदल सकता है क्योंकि व्यापार दास प्रथा, सामंतवाद, पूंजीवाद या कोई भी अन्य व्यवस्था के आधार पर कायम रह सकता है। यह व्यवस्था की 'आंतरिक संधि' ('internal articulation') अर्थात अन्तर्निहित वर्ग संघर्ष के अधीन ही रह सकता है। इस विचार को विस्तार से समझाने के लिए उन्होंने फ्रैडरिक एंगेल्स के उन्नीसवीं शताब्दी के विचारों को सामने रखते हुए बताया कि सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में पूर्वी यूरोप में व्यापार के पुनरुत्थान से सामंतवादी संबंधों का अंत होना तो दूर की बात है वहां 'दूसरी कृषि दास' व्यवस्था का जन्म हुआ। डॉब जैसे मार्क्सवादियों के लिए कृषि दास प्रथा सामंतवाद का प्रमुख लक्षण है। उनके विचार से व्यापार और सामंतवाद एक दूसरे के अनुपूरक हैं।

मार्क्सवादी विश्लेषण को आधार बनाते हुए डॉब ने अपना मत प्रस्तुत किया और कहा कि पश्चिम यूरोप के सामंतवाद के पतन का कारण इसका 'अन्दरूनी संकट' था; विश्लेषण का एक तरीका जो मार्क्सवादियों को अतिप्रिय था। ग्यारहवीं शताब्दी में धर्मयोद्धाओं ने अरबों को यूरोप से निकट पूर्व की ओर भगाकर उन्हें उनके अपने क्षेत्रों में धकेल दिया। इस युद्ध के दौरान यूरोपीय पूर्व की ऐशो आराम की वस्तुओं जैसे – इत्र, रेशम और मसाले जैसी वस्तुओं के सम्पर्क में आए जिनके बारे में उन्होंने पहले सुन भी नहीं रखा था। धर्म योद्धाओं की भूमिका निभाने के बाद अब वे व्यापारी भी बन गए और लौटकर आने पर ऐशो आराम के समान यूरोप के अभिजात वर्ग को ऊंची कीमत पर बेचने लगे। पूर्वी ऐशो आराम की वस्तुओं के आगमन से पश्चिम का सांस्कृतिक और आर्थिक परिवेश पूरी तरह बदल गया। अब अभिजात वर्ग के सदस्य उनके लिए आतुर होने लगे और वे इसके लिए कोई भी कीमत चुकाने को तैयार थे। इस लालसा से पश्चिम यूरोप और मध्य पूर्व के बीच, हालांकि मात्रा में कम परंतु मूल्य में काफी अधिक, व्यापार होने लगा और इसके कारण यूरोप में संसाधनों का संकट उत्पन्न हो गया। कारण यह था कि भूमिपति वर्ग की आय बढ़ नहीं सकती थी क्योंकि उनकी आमदनी कृषि उत्पादकता पर निर्भर थी और 'प्रौद्योगिकी के निम्न स्तर' के कारण यह स्थिरता प्राप्त कर चुकी थी। अतः इस वर्ग के खर्चे बढ़ने लगे, इनकी मांग बढ़ने लगी परंतु उनकी आमदनी नहीं बढ़ रही थी। अब आमदनी बढ़ाने का एक ही जरिया रह गया था और वह यह था कि किसानों को और ज्यादा निचोड़ा जाए। कृषि अर्थव्यवस्था में किसान धन का प्राथमिक उत्पादनकर्ता था और उसे और निचोड़कर उससे थोड़ा और धन निकाला जा सकता था।

डॉब शहरों के पुनरुत्थान को भी एक दूसरा प्रमुख कारण मानते हैं। इस दृष्टि से वे पिरेन के साथ खड़े नजर आते हैं परंतु पिरेन जहां इस परिघटना को व्यापार के पुनरुत्थान से जोड़कर देखते हैं वहीं डॉब व्यापार से इसका कोई संबंध नहीं मानते हैं। वे बस यह मान लेते हैं कि पश्चिमी यूरोप में शहरों का उदय स्वतः हो रहा था। शहरों का उदय होने से निर्धन किसानों को शहरी उत्पादन की प्रक्रिया में रोजगार का एक विकल्प मिल गया; निश्चित रूप से अधिपतियों की बढ़ती मांगों से पिंड छुड़ाने के लिए किसानों का देहातों से शहरों की ओर भागना वर्ग संघर्ष का ही एक रूप था। यह वर्ग संघर्ष तीन तरफा थाः अधिपति और कृषि दासों के बीच और अधिपतियों और शहरी बुर्जुआ वर्ग के बीच जिनका, सामंती उत्पादन के तरीके का विकल्प सामने आने से, आर्थिक क्षेत्र में वर्चस्व बढ़ रहा था। देहातों से गरीब किसानों के पलायन से अधिपति अपने को लाचार महसूस करने लगे और इस प्रकार सामंतवाद ढह गया। यदि व्यापार की कोई भूमिका थी भी तो कृषिदास और अधिपति के बीच होने वाले वर्ग संघर्ष के बाद ही उसका स्थान आता है। शहर और शहरी बुर्जुआ वर्ग ने इस पतन की प्रक्रिया में मदद पहुंचाई।

मूलतः डॉब पिरेन के सामंतवाद/व्यापार द्विभाजन की अवधारणा पर प्रश्न उठा रहे थे और इन दोनों के बीच अनुकूलता स्थापित कर रहे थे।

स्टडीज इन द डेवेलप्मेंट ऑफ कैपिटलिज्म के प्रकाशन के साथ अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर जो बहस शुरू हुई वह अभी तक समाप्त नहीं हुई है। अमेरिका के एक दूसरे प्रमुख मार्क्सवादी अर्थशास्त्री पॉल स्वीज़ी ने इस किताब की समीक्षा की। स्वीज़ी ने कुल मिलाकर पिरेन की अभिधारणा और व्यापार/सामंतवाद के बीच असंगति का समर्थन किया। डॉब ने इसका जवाब दिया। इस बहस में जापान तक के अन्य प्रमुख मार्क्सवादी आलोचकों ने शिरकत की। जापान के एक इतिहासकार कोचुरू ताकाहाशी ने यह कहकर बहस को एक नया रूख दिया कि पूंजीवाद का जन्म केवल बुर्जुआ वर्ग के उदय के जरिए सामंतवाद के खंडहरों के ऊपर नहीं हुआ; जापान के मामले में मेजी पुनर्स्थापना के बाद पूंजीपति वर्ग ने नहीं बल्कि राज्य ने वहां पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के निर्माण में अहम् भूमिका निभाई। इस विचार का अन्य प्रतिभागियों ने जमकर समर्थन किया। यह पूरी बहस 1952 में *द ट्रांजिशन फ्रॉम फ्यूडलिज्म टू कैपिटलिज्म* शीर्षक से छापी गई। इसके बाद इस बहस में और लोग भी शामिल हुए और इसी शीर्षक के साथ आर. एच. हिल्टन के सम्पादकत्व में यह फिर से 1978 में प्रकाशित हुई। इस बहस में भी मुख्य रूप से सामंतवाद के पतन में व्यापार और शहर की भूमिका पर ही ज्यादा बातचीत हुई। नए संस्करण में जॉन मेरिंगटन का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिन्होंने पूंजीवाद के संक्रमण में शहरों और देहातों के योगदान के बारे में प्रचलित विभिन्न मतों का विश्लेषण किया। उन्होंने 'हां' या 'ना' में जवाब नहीं दिया और दूसरों के द्वारा 'हां' या 'ना' में दिए गए जवाबों का इतिहास सामने रखा; स्वयं वह यह मानते थे कि सामंतवाद के पतन में शहर और व्यापार ने मुख्य भूमिका नहीं निभाई थी। इस बृहद् बहस से एक बात तो साफ स्पष्ट होती है कि इस मुद्दे पर एक मार्क्सवादी दृष्टिकोण नहीं था और मार्क्सवादी न केवल दूसरी विचारधाराओं से असहमत थे बल्कि एक मार्क्सवादी दूसरे मार्क्सवादी के विचारों से भी पूरी तरह सहमत नहीं था।

यदि डॉब ने व्यापार और सामंतवाद की संगति के संबंध में विचार रखे तो दूसरे मार्क्सवादी फ्रांसीसी इतिहासकार गी बुआ ने एक कदम आगे बढ़ाकर दोनों के मध्य सीधा संबंध स्थापित किया। हालांकि वे सीधे तौर पर इस बहस में हिस्सा नहीं ले रहे थे। वस्तुतः उनकी पुस्तक पहले फ्रांसीसी भाषा में छपी और इस बहस के बहुत बाद इसका अंग्रेजी में अनुवाद हुआ। उनकी पुस्तक, *द ट्रांसफॉरमेशन ऑफ द इयर वन थाउजैंडः द विलेज ऑफ लूर्नांद फ्रॉम एन्टिक्विटी टू फ्यूडलिज्म* में उन्होंने फ्रांस के एक गांव (लूर्नांद; Lournand) का लगभग संक्रमण के समय का परीक्षण किया और यह दिखाया कि व्यापार के विकास से अधिपतियों

और किसानों का सामंती गठजोड़ कमजोर होने की बजाए और मजबूत हो गया। डॉब की तरह वे एंगेल्स से अपनी बात नहीं शुरू करते हैं और अपनी बात सिद्ध करने के लिए अठारहवीं शताब्दी के पूर्वी यूरोप का अध्ययन नहीं करते हैं। बल्कि इसके विपरीत वे उस जगह से बात शुरू करते हैं जो सामंतवाद का गढ़ था और उस काल से शुरुआत करते हैं जब सामंतवाद अपने शीर्ष पर था।

हालांकि सामंतवाद के पतन में व्यापार की भूमिका पर बहस चल रही थी और प्रतिभागी इसके पक्ष में भी थे और विपक्ष में भी, फिर भी उनके बीच एक समानता का सूत्र था। पिरेन का यह विचार कि मध्यकालीन यूरोप में प्रौद्योगिकी का स्तर निम्न था और भूमि तथा श्रम की उत्पादकता काफी कम थी, से डॉब, हिल्टन और अन्य दूसरे विद्वान सहमत दिखाई देते हैं। वे सब एक ही बात कहते हैं कि सामंतवाद के पतन में शहर की प्रमुख भूमिका थी और शहर सामंती व्यवस्था का अंग नहीं था। जैसा कि ऊपर बताया गया है कि जहां एक ओर पिरेन शहरीकरण के पुनरुत्थान का कारण बताते हैं, वहीं डॉब ऐसा नहीं करते; वे ऐसा मान लेते हैं कि किसी तरह शहरीकरण हुआ होगा और एक बार ऐसा होने पर गरीब किसान भोजन और आश्रय की खोज में इनकी ओर खिंचते चले गए होंगे। अब जरूरत इस बात की है कि सामंतवाद के पतन संबंधी विचारों में 'प्रौद्योगिकी का निम्न स्तर' और शहरों के उदय दोनों का एक बाह्य कारक के रूप में परीक्षण किया जाए।

बोध प्रश्न-3

1) हेनरी पिरेन का सामंतवाद के पतन के प्रति क्या नजरिया था?

....

....

....

....

2) मॉरिस डॉब और हेनरी पिरेन के विचारों में सामंतवाद के पतन के प्रति क्या अन्तर था?

....

....

....

....

6.6 प्रौद्योगिकी तथा भूमि और श्रम की उत्पादकता

समय और स्थान की दृष्टि से प्रौद्योगिकी का विकसित होना या पिछड़ा होना सापेक्षिक है। किसी भी क्षेत्र या स्थान की प्रौद्योगिकी एक जगह की अपेक्षा दूसरी जगह या एक समय की अपेक्षा दूसरे समय में अविकसित या विकसित हो सकती है। यह भी हो सकता है कि एक समय में दो अलग-अलग क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी का विकास एक जैसा न रहा हो। उदाहरण के लिए, कहा जा सकता है कि पूरी दुनिया में पन्द्रहवीं शताब्दी की प्रौद्योगिकी की तुलना में बीसवीं शताब्दी की प्रौद्योगिकी काफी विकसित थी। इसी प्रकार हम यह कह सकते हैं कि मोटर-गाड़ी बनाने या दवा बनाने के क्षेत्र में अमेरिका की प्रौद्योगिकी अफ्रीका की प्रौद्योगिकी से कहीं आगे थी। दूसरी बात यह है कि प्रौद्योगिकी कभी भी स्थिर नहीं होती। हां, थोड़े समय के लिए ऐसा लग सकता है कि यह स्थिर है। परंतु एक ही क्षेत्र की प्रौद्योगिकी को लम्बे अन्तराल में देखें तो यह पाएंगे कि प्रौद्योगिकी हमेशा विकसित होती रहती है। मध्ययुगीन यूरोप में प्रौद्योगिकी के निम्न स्तर की बात को पिरेन और डॉब दोनों ने ही माना पर यह नजरअंदाज कर दिया कि इस लम्बे अन्तराल में प्रौद्योगिकी काफी परिवर्तित हो रही थी।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

यूरोप में सामंतवादः सातवीं सदी से चौदहवीं सदी तक

इस प्रकार मध्यकालीन यूरोप में कृषि और भूमि के क्षेत्र में श्रमिकों की उत्पादकता बढ़ाने वाली उत्पादन तकनीकी में धीरे-धीरे विकास हो रहा था। हालांकि विकास का यह क्रम काफी लम्बे समय में फैला हुआ था और इस परिवर्तन में कभी-कभी कई दशक या शताब्दियां लग गईं। ये परिवर्तन होने में जो लम्बा समय लगा उससे अपरिवर्तनीयता का बोध होने लगता है। चूंकि भूमि धन अर्जित करने का प्रमुख साधन था और श्रम इसका प्रमुख औज़ार, इसलिए यदि हम इस क्षेत्र की प्रौद्योगिकी और उत्पादकता में होने वाले परिवर्तन का सिंहवालोकन करें तो हमें प्रतीत होगा कि इसमें लगातार परिवर्तन होता रहा है।

मानचित्र 6.2: यूरोप और भूमध्यसागर के आसपास का क्षेत्र, *c.* 1328 पश्चिमी / मध्य यूरोप

साभार: विलियम आर. शैफर्ड, *हिस्टॉरिकल एटलस*, न्यूयार्क, हेनरी होल्ट एंड कंपनी, 1923-[1]

स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/Demesne#/media/File:Plan_mediaeval_manor.jpg

पांचवीं से आठवीं या नवीं शताब्दी के बीच के समय को आरंभिक मध्यकाल कहा जाता है। इस समय अधिकांश दक्षिण यूरोप और भूमध्यसागर के आसपास के क्षेत्रों, जहां सूर्य की रोशनी ज्यादा पड़ने के कारण यह इलाका ज्यादा उपजाऊ था, यहां बीजःउपज का अनुपात लगभग 1:1.6 या ज्यादा से ज्यादा 1:2.5 था।[2] इस समय उपलब्ध प्रौद्योगिकी बहुत साधारण

2 मतलब यह कि 10 किलो बीज बोने पर ज्यादा से ज्यादा केवल 25 किलो अनाज प्राप्त होता था। इसमें से 10 किलो अगले साल की फसल बोने के लिए अलग से रख लिया जाता था। उपयोग के लिए केवल 15 किलो बचता था।

थीः एक हल्के हल से मिट्टी की ऊपरी सतह खुरच ली जाती थी। इसीलिए इस प्रकार के हल को *एरेर* (*araire*) या खुरचने वाला हल कहते थे। इससे जमीन की गहरी खुदाई नहीं हो पाती थी और जमीन के अन्दर की उर्वरता का उपयोग नहीं हो पाता था। जमीन के अन्दर की सतह कड़ी रह जाती थी इसलिए जड़ें बहुत अन्दर तक नहीं जा पाती थीं। इसके कारण बड़े-बड़े खेतों में फसल लगानी पड़ती थी और शारीरिक श्रम भी काफी करना पड़ता था। दूसरी तरफ सूर्य की रोशनी भी चार महीने ही प्राप्त होती थी। इसलिए इन्हीं चार महीनों में खेती का काम पूरा कर लेना होता था। अंतः श्रमिकों की मांग बहुत ज्यादा थी और इनकी आपूर्ति को लेकर हमेशा और हर सामाजिक स्तर पर तनाव बना रहता था।

अब यहीं से कृषि प्रौद्योगिकी का विकास शुरू हुआ। धीरे-धीरे कई तरह के परिवर्तन हुए। भारी हल फाल (*charrue*) का प्रयोग, द्विचक्रीय खेत व्यवस्था के स्थान पर त्रिचक्रीय खेत व्यवस्था, बारी-बारी से फसल रोपना, नई फसलें जैसे मटर और बीन्स उपजाना, जो न केवल प्रोटीन युक्त खाद्य पदार्थ था बल्कि इनकी जड़ें जमीन को नाइट्रोजन उर्वरक प्रदान करती थीं और जमीन दूसरे प्रकार की फसल के लिए पूरी तरह तैयार रहती थी। हलों को खींचने के लिए बैलों का तथा अन्य जानवरों पर बेहतर जुआ (yoke) का उपयोग, बोझा ढ़ोने के लिए अधिक मात्रा में घोड़ों का उपयोग जैसे परिवर्तन लगातार होते रहे। इससे बारहवीं शताब्दी के दौरान श्रम और भूमि की उत्पादकता लगातार बढ़ती रही। अब बीजःफसल का अनुपात 1:4 हो गया जिससे उपभोग के लिए उपलब्ध अधिशेष की मात्रा एकदम से दुगुनी हो गई।[3] इसके अलावा कुछ अन्य प्रौद्योगिक आविष्कार भी हुए। पनचक्की और पवनचक्की के आविष्कार से कई कार्यों में मानव श्रम काफी कम हो गया और इससे कृषि उत्पादन के लिए अधिक मानव संसाधन प्राप्त हो सकते थे। अधिक मात्रा में और बेहतर गुणवत्ता वाली खाद्य सामग्री प्राप्त होने से जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हुई और उच्च उत्पादकता के कारण भोजन की उपलब्धता में वृद्धि हुई और प्रति परिवार खेती की जाने वाली भूमि में कमी आई। जनसंख्या बढ़ने से लोग गांव से बाहर परती जमीनों की खोज में निकले। बारहवीं शताब्दी, जैसा कि जॉर्ज ड्यूबी कहता है, 'कृषि प्रगति' का युग था और बड़ी संख्या में लोगों ने पूर्वी जर्मनिकी के घने जंगलों की ओर प्रवास किया। यहां उन्होंने नई जमीन पर खेती करनी शुरू की। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि जो पहला स्थानांतरण हुआ वह गांव के भीतर ही हुआ, गांव से शहर की ओर नहीं। यह भी महत्वपूर्ण बात है कि इस कृषि प्रसार का नेतृत्व खुद किसानों ने ही किया।

परंतु इस प्रकार की प्रौद्योगिकी में पूंजी बहुत लगती थी। इससे उस किसान वर्ग को फायदा हुआ जिनके पास भारी हल आदि में निवेश करने के लिए धन था; इससे उन्हें अपने निवेश पर खूब फायदा भी हुआ। इस प्रकार किसानों के बीच जो भेद हमेशा से मौजूद था वह धीरे-धीरे बढ़ने लगा। छोटा किसान भी स्वयं को और अपने परिवार के श्रम को निवेशित करने लगा और वह जो कुछ भी इससे बचा पाता था उसका उपयोग वह अपने छोटे खेत में सब्जी उगाने के लिए करता और उसे बाजार में बेचकर वह थोड़ा बहुत मुनाफा कमा लेता था। कभी-कभी तो वह ऐसा कर लेता था; परंतु कभी-कभी जब उसकी फसल मारी जाती थी, तो उसका सारा धन समाप्त हो जाता था और वह फिर भूमिहीन मजदूर बन जाता था। निश्चित रूप से मजदूर, जमीन और उपज तीनों की मांग बढ़ रही थी और अब बाजार की मांग यह तय कर रही थी कि खेत में किस प्रकार की फसल लगाई जाए। इस प्रक्रिया के फलस्वरूप किसानों के बीच स्तरीकरण पनपा जो सामंतवाद के पतन में निर्णायक सिद्ध हुआ। हम आगे इस मुद्दे पर फिर से विचार करेंगे। परंतु इस पर विचार करने से पूर्व आइए पहले यह देख लें कि सामंतवाद के पतन में शहरों की क्या भूमिका थी।

---

[3] पहले के उदाहरण के हिसाब से इस नए अनुपात को देखें तो, 10 किलो बीज लगाने पर 30 किलो अनाज अधिषेश के रूप में उपभोग के लिए बच पाता था।

6.7 शहरी केन्द्रों का उदय

मध्यकालीन शहरों का जन्म कैसे हुआ? पिरेन के अनुसार पूरे यूरोप में 'भव्य व्यापार' ('ग्रेट ट्रेड') के पुनरुत्थान के फलस्वरूप शहरों का जन्म हुआ। डॉब इसे प्रासंगिक नहीं मानते। परंतु दोनों विद्वान ही शहरों के उदय को सामंती अर्थव्यवस्था से बिलकुल बाहर मानते हैं।

जैसा कि हमने ऊपर संक्षेप में विचार किया कि गांवों का स्वरूप तेजी से बदल रहा था। सामंतवाद के महान् इतिहासकार मार्क ब्लॉक ने अपनी पुस्तक *फ्यूडल सोसाइटी* में और बाद में जॉर्ज ड्यूबी ने इस पर काफी जोर दिया। इस परिवर्तन का सार अधिक उपज और बड़ी मात्रा में होने वाला उत्पादन, ज्यादा और अच्छे भोजन की उपलब्धता, समाज के निचले तबकों में जनसंख्या की वृद्धि, गांवों से बाजार में लाए जाने वाले अधिशेष की मात्रा में वृद्धि और इस प्रकार बाजार के विकास में निहित है। इन सबसे शहरी आबादी को प्रारम्भिक मध्ययुगीन शताब्दियों की तुलना में उच्च स्तरीय जीवनयापन का आधार मिला। इस प्रकार मूलतः शहरों के विकास का संबंध गांवों की उन्नति से है, पिछड़ेपन से नहीं।

अब यह बहस का विषय है कि शहरी केन्द्रों के उदय ने सामंतवाद के पतन में क्या और कितनी भूमिका निभाई। एक ओर जहां पिरेन, डॉब और स्वीज़ी जैसे प्रख्यात इतिहासकार इसकी भूमिका पर बल देते हैं तो दूसरे इतिहासकार इससे अलग राय रखते हैं। तेरहवीं शताब्दी से पन्द्रहवीं शताब्दी के बीच जिन शहरों का उदय हुआ उनमें पूरी आबादी के 10 प्रतिशत से ज्यादा लोग नहीं रह सकते थे। अभी तक उत्पादन केन्द्रों के रूप में अर्थव्यवस्था में उनका हिस्सा और योगदान बहुत निर्णायक या अधिक प्रबल नहीं था। कई इतिहासकारों ने इस बारे में सवाल उठाया है कि गांव से पलायन किये हुए किसानों और मजदूरों को ये शहर किस तरह भोजन उपलब्ध कराते होंगे या फिर गांवों से किसानों और मजदूरों के पलायन का प्रतिशत क्या होगा। उनके अनुसार अभी भी गांव की क्षमता से 'ज्यादा जनसंख्या' वहां रहती थी और फ्लैन्डर्स (आधुनिक बेल्जियम-नीदरलैंड-लक्ज़ेमबर्ग के कुछ भाग) जो तेरहवीं और चौदहवीं शताब्दियों के औद्योगिक और आर्थिक रूप से सबसे विकसित क्षेत्र थे, ने भी देहातों पर जरूरत से ज्यादा आर्थिक बोझ डाला हुआ था। अन्य विद्वानों की तरह राबर्ट ब्रेनर ने भी 1970 के दशक में सामंतवाद से पूंजीवाद के संक्रमण के प्रश्न पर हो रहे प्रमुख विवाद की शुरुआत की। उन्होंने भी गांव से शहर की ओर पलायन करने वाले लोगों की तादाद पर एक प्रश्नचिह्न लगाया है।

दूसरी ओर इतिहासकारों ने इस विचार पर भी प्रश्नचिह्न लगाया है कि शहरों ने मजदूरों को आर्थिक स्वतंत्रता प्रदान की। सबसे पहली बात यह कि गांव से शहर में आकर बसने वाले मजदूरों को यदि ज्यादा पैसा मिलता था तो दूसरी ओर शहर में रहने के खर्च भी ज्यादा थे। इसलिए शहर में जाकर नौकरी करना हमेशा उनके लिए लाभदायक नहीं था और हमेशा यह एक 'पुल फैक्टर' (अपनी ओर खींचने वाले कारक) के रूप में काम नहीं करता था। और इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि शहरी बुर्जुआ वर्ग को भी शोषण करने के लिए गांव में ही सस्ते मजदूर उपलब्ध थे; जहां रहन-सहन का खर्च और मजदूरी कम थी तथा वहां मजदूरों या कारीगरों की श्रेणियां भी नहीं थीं। साथ ही गांव में ठेके पर काम देकर मजदूर के साथ-साथ उसके पूरे परिवार के श्रम का उपयोग किया जा सकता था। जबकि शहर में मजदूर दूसरे मजदूरों के साथ-साथ व्यक्तिगत स्तर पर काम करते थे। इसलिए चौदहवीं शताब्दी में पहले फ्लैंडर्स में और उसके बाद पश्चिम यूरोप में दूसरी जगहों पर शहरी व्यापारियों ने गांवों में औद्योगिक उत्पादन करना शुरू किया। 1970 और 80 के दशक में इस परिघटना को पूर्व-औद्योगीकरण (Proto-industrialization; Pi) कहा गया। इस बात के भी प्रमाण मिलते हैं कि फ्लैंडर्स के शहरों में किसानों को सस्ते दरों पर अनाज बेचने के लिए भी बाध्य किया गया।

इसलिए यूरोप में सामंतवाद के आखिरी दौर में किसानों की भागीदारी ज्यादातर देहातों के भीतर ही सीमित रही; किसान अनुकूल परिवेश और जमीन की खोज में एक ग्रामीण इलाके से दूसरे ग्रामीण इलाके में भागते रहे। पश्चिमी यूरोप में चौदहवीं शताब्दी में किसानों ने व्यापक स्तर पर विद्रोह किया तो उनकी प्रमुख मांग यह थी कि उन्हें कहीं भी आने-जाने का अधिकार प्रदान किया जाए और इस आंदोलन को दबाने में शहर, सामंती अधिपतियों की कोई मदद नहीं कर रहा था। इटली के शहरों में हालांकि किसानों को आज़ादी मिली परंतु इतिहासकार गी फुर्क्विन (Guy Fourquin) के शब्दों में 'यह आजादी न तो सबको दी गई और न यह हमेशा बहुत दिन तक टिकी'। एक अन्य इतिहासकार एल. जेनिकॉट (L. Genicot) का मानना है कि शहर भी अधिपतियों की अपेक्षा अधिक शोषक साबित हुए। वे किसानों का इतना ज्यादा शोषण करते थे कि उनकी हालत दिनों दिन बिगड़ती चली गई। हालांकि शहरों में उन्हें न्यायिक स्वतंत्रता जरूर प्राप्त हुई।

6.8 ग्रामीण परिदृश्य का रूपांतरण

हालांकि हम अभी सामंतवाद के पतन के संदर्भ में व्यापार और शहर की भूमिका पर बातचीत कर रहे हैं परंतु हमें एक प्रख्यात इतिहासकार जॉर्ज ड्यूबी की बात पर भी ध्यान देना चाहिए जिनका दृष्टिकोण मार्क्सवाद और पिरेन से बिलकुल अलग था। उन्होंने हेनरी पिरेन और मौरिस डाब तथा अन्य इतिहासकारों द्वारा दी गई दलीलों से अलग हटकर अपनी बात कही। यह महत्वपूर्ण बात है कि ड्यूबी कभी भी इस बहस का सीधा हिस्सा नहीं बने परंतु उनकी दो पुस्तकों, *रूरल इकोनॉमी एंड कन्ट्री लाइफ इन द मिडिवल वेस्ट* और *अर्ली ग्रोथ ऑफ यूरोपियन इकोनॉमी,* ने बहस की धारा ही बदल दी। ड्यूबी ने पश्चिम यूरोप में मध्यकाल के दौरान श्रम और भूमि के क्षेत्र में हुए आन्तरिक विकास की ओर ध्यान दिलाया और इस युग में हो रहे प्रबल परिवर्तनों पर प्रकाश डाला। उनके अनुसार यह प्रबल बदलाव किसी नाटकीय उथल-पुथल का परिणाम नहीं था बल्कि रोजमर्रा के काम में श्रम की प्रक्रिया में धीरे-धीरे होने वाले बदलावों का परिणाम था। सदियों से धीरे-धीरे होने वाले इन बदलावों ने ग्रामीण परिदृश्य को पूरी तरह बदल दिया। इस परिवर्तन का कारण यह था कि समाज के निम्न स्तर पर कृषक वर्ग के भीतर आपसी अन्तर बढ़ता जा रहा था। दूसरी ओर उच्च स्तर पर अधिपतियों के वर्ग में भी विभेद पैदा हो रहा था। आइए, थोड़े विस्तार से इस पर नजर डालें।

देहातों में अधिपतियों की भू-सम्पदाएं औसतन 4000 एकड़ थीं और किसी-किसी के पास 10,000 एकड़ से ज्यादा की भी भू-सम्पदाएं थीं। अधिपति इन भू-सम्पदाओं की खेती, अनाज के भंडारण और बिक्री के लिए पूरी तरह से कारिन्दों (*बेलिफ; bailiffs*) और अधिकारियों (प्रोवोस्ट; provosts) आदि पर निर्भर थे जो खुद भी थोड़ी ऊंची हैसियत वाले किसान थे। इसका कारण यह था कि सामाजिक नैतिकताओं के कारण अधिपति ये काम खुद नहीं कर सकते थे। धीरे-धीरे ये *बेलिफ* और प्रोवोस्ट लॉर्ड की कीमत पर धनी होने लगे। लॉर्ड की *डिमेन* से किसानों से वसूल किया हुआ सारा अनाज और इसे बेचकर प्राप्त किया गया सारा धन वे अपने अधिपतियों तक नहीं पहुंचाते थे और काफी हिस्सा बीच में ही हड़प लेते थे। धीरे-धीरे ये *बेलिफ* साल भर के लिए, फिर दो साल के लिए और फिर लम्बे समय के लिए भू-सम्पदाओं का हिस्सा अधिपति से 'ठेके' पर लेने लगे। 'फार्मिंग' (farming) या 'ठेके' पर कृषि का अर्थ था कि वे खुद खेती करवाते थे और एक तय की गई उपज या धन अधिपति को दे दिया करते थे। ठेके का नफा या नुकसान इन *बेलिफों* को सहना पड़ता था जो अब एक प्रकार के ठेकेदार या 'फार्मर' बन गए थे। अपनी भू-सम्पदा से कर और राजस्व वसूल करने का अधिपति का अधिकार भी 'ठेके' पर लिया जा सकता था। (देखें **मानचित्र 5.1**)

ये *बेलिफ* 'ठेके' पर प्राप्त इन खेतों में मजदूरों को नियुक्त करते थे और इसके लिए उन्हें मजदूरी दिया करते थे क्योंकि उन्हें अधिपतियों के समान कृषिदासों (serfs) से बेगार लेने

की अनुमति नहीं थी। वे खेती केवल मुनाफे के लिए करते थे और फसल को बाजार में बेचकर मुनाफा कमाते थे। इस प्रकार मुनाफे का ध्येय और मजदूरी का भुगतान किया जाना जो पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की खास विशेषताएं हैं, इस बात से फर्क नहीं पड़ता कि यह सब कुछ कृषि क्षेत्र में हो रहा था या उद्योग क्षेत्र में, इस प्रकार सामंती आर्थिक अर्थव्यवस्था में प्रविष्ट होने लगीं। गांव में अब एक पूंजीवादी कृषक या *कुलाकों* (*kulaks*) का कुख्यात *नव धनाढ़्य वर्ग* पैदा होने लगा जो ठेठ सामंती संस्कृति से मेल नहीं खाता था और वह अपनी नवीन प्राप्त समृद्धि के दिखावे में अधिक विश्वास रखते थे, लेकिन सामाजिक दृष्टि से जिनकी स्थिति निम्न थी, परन्तु धीरे-धीरे उन्होंने पूरी अर्थव्यवस्था पर अपना आधिपत्य स्थापित करना शुरू कर दिया। ये सारी घटनाएं एक लम्बे दौर में घटीं और इसमें शताब्दियां लग गईं।

सामंती समाज के दो अन्य घटकों ने भी इस प्रक्रिया में मदद कीः एलौड और अधिपतियों का निचला वर्ग। हमने **इकाई 5** में एलौड के बारे में पढ़ा है जो अपने परिवार सहित अपने हाथों से खेत में काम करते थे और अक्सर अपना अनाज बाजार में बेचते भी थे। सामंती अर्थव्यवस्था में यह एलौड बिलकुल अलग और अनूठे थे। जैसे-जैसे देहातों में होने वाले उत्पादन की पद्धति पर ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बाजारों का प्रभाव बढ़ने लगा वैसे-वैसे ये एलौड अपने खेतों में वही उपजाने लगे, जिससे उन्हें ज्यादा मुनाफा होता था। इस प्रकार इनमें से कुछ, उच्च समृद्ध एलौड, बड़े पूर्व-पूंजीपति उत्पादक के रूप में उभरकर सामने आए जो कि सामंती मूल व्यवस्था से बिलकुल पृथक चीज़ थी।

अभी तक हमने अधिपति वर्ग के बारे में इस प्रकार चर्चा की है जैसे वे बिलकुल एक समरूप समुदाय थे, परंतु बात ऐसी नहीं थी क्योंकि इस वर्ग में भी कृषक वर्ग की तरह कई स्तर थे। एक ओर जहां उच्च स्तर के अधिपति को किसानों से मुफ्त सामान और सेवा लेने के कई अधिकार प्राप्त थे वहीं दूसरी ओर छोटे स्तर के अधिपतियों को ये विशेषाधिकार प्राप्त नहीं थे। उनकी जमीनों पर उनका अधिकार तो था परंतु किसानों से तरह-तरह की सेवाएं लेने का उन्हें अधिकार प्राप्त नहीं था। जैसे-जैसे मजदूर बाहर जाने लगे और मजदूरी बढ़ने लगी वैसे-वैसे छोटे अधिपतियों को संसाधनों की तंगी होने लगी। ऐसी स्थिति में नए विकासों के दबाव में वे भाड़े के मजदूर रखकर बाजार में उत्पाद बेचने के लिए खुद खेती कराने लगे।

इस उथल-पुथल में काफी कुछ ऊपर नीचे हुआ। अभी तक कृषि दास का श्रम अधिपतियों के पास गिरवी था। अब उन्हें अपने श्रम को 'भुगतान में बदलने' की छूट मिल गई। यानी कि अब कोई श्रमिक अपने अधिपति को एकमुश्त राशि अदा कर मुक्त हो सकते थे। इससे कई किसान मुक्त हो गए और वे अब बेहतर स्थितियों की खोज में निकल पड़े या फिर अपनी मेहनत के बल पर अपनी हालत में कुछ सुधार की आशा में, कुछ बुद्धिमतापूर्ण निर्णयों और थोड़ा बहुत भाग्य के सहारे। अन्य किसानों के पास उतनी शक्ति और संसाधन नहीं थे या फिर यदि दुर्भाग्यवश फसल मारे जाने या खेत जोतने वाले जानवर की मौत होने से उनकी स्थिति बदहाली की स्थिति में आ जाती थी। परंतु ये छोटे किसान अपना श्रम विस्तृत हो रहे श्रम बाजार में कहीं भी बेच सकते थे। अधिपतियों के वर्ग में भी सबको बाजार में सफलता नहीं मिलती थी और इस अपरिचित परिवेश में उन्हें अपने आप को नए सिरे से ढालना पड़ता था।

यह सतत हो रहे प्रबल परिवर्तन का एक सामान्य परिदृश्य था। इस धीमे विकास ने लगभग सब लोगों को प्रभावित किया, लेकिन कुछ दूसरों की अपेक्षा तेजी से ऊपर उठ गए या आगे बढ़ गए। इसके फलस्वरूप समाज में तीखा विभाजन हुआ और कोई भी वर्ग, नया या पुराना इसके प्रभाव से बच न सका। इस पूरे परिदृश्य में जहां एक नई अर्थव्यवस्था और एक नए वर्ग का उदय हो रहा था वहीं सबसे ज्यादा नुकसान सामंतवाद को हुआ क्योंकि इसने सामंतवाद की जड़ पर प्रहार किया। सामंतवाद का पतन व्यापार के विकास या शहरों के उदय जैसे बाहरी दबावों के कारण नहीं हुआ बल्कि सामंती व्यवस्था की आंतरिक प्रक्रिया के कारण हुआ। सामंतवाद का पतन इसकी जड़ प्रकृति के कारण नहीं हुआ बल्कि इसके ठीक विपरीत इसके आंतरिक विकासक्रम के कारण हुआ। शहर और व्यापार का उदय अपने

आप में कोई स्वतंत्र परिघटना नहीं थी बल्कि इस आंतरिक विकासक्रम और बदलाव का एक अहम् हिस्सा थी।

अतएव जॉर्ज ड्यूबी ने बिना किसी शोर-शराबे के इस समस्या पर हो रही बहस को एक निर्णायक मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया। इससे इतिहास अध्ययन की धारा भी नई दिशा में बह चली। 1950 और 60 के दशक तक इतिहास अध्ययन और सामान्य तौर पर समाज विज्ञान के अध्ययन के लिए दो प्रमुख विरोधी पक्षों को सामने रखा जाता था। इसे अधिपति बनाम किसान, पूंजीपति बनाम मजदूर और थोड़े बाद में आदमी बनाम औरत आदि दृष्टियों से अध्ययन किया जाता था। पिरेन और डॉब दोनों ने ही व्यापार बनाम सामंतवाद या शहर बनाम देहात के नजरिए पर अध्ययन किया। जब दो विरोधी पक्षों को इस प्रकार सामने रखकर अध्ययन किया जाता है तो इस अध्ययन के क्रम में इन दोनों विरोधी पक्षों के बीच होने वाली सीधी टक्कर को विद्रोह या टकराव के रूप में देखा जाता है और इस बदलाव को टकराव का नाटकीय परिणाम माना जाता है। इसलिए किसी व्यवस्था के पतन को भी एक लम्बी प्रक्रिया के बजाए नाटकीय घटना के रूप में देखा जाता है।

यदि हम इन घटनाओं को एक नाटकीय घटना के रूप में न देखकर रोजमर्रा के जीवन में होने वाले परिवर्तन के रूप में देखें तो जॉर्ज ड्यूबी और अन्य इतिहासकारों के इतिहास लेखन का एक नया रूप सामने आएगा। इस नजरिए से अगर हम देखें तो किसी विद्रोह या क्रांति, युद्ध या हत्या जैसी नाटकीय घटनाओं के सूत्र रोज होने वाले परिवर्तन की घटनाओं से गहराई से जुड़े होते हैं। यह मात्र दो वर्गों के बीच होने वाला विनाशकारी टकराव नहीं होता है। यह रोज की घटना होती है जब दो व्यक्ति आपस में मिलते हैं तो उनके बीच पारस्परिक आदान प्रदान होता है और यह प्रत्येक स्तर पर होता है। सामाजिक भेद एक ऐसी प्रक्रिया है जो एक दिन या एक साल या एक दशक में नहीं पैदा होता है बल्कि इसमें सदियां लग जाती हैं। परंतु इसने निश्चित रूप में मध्ययुगीन पश्चिमी यूरोप के जीवन को भी पूरी तरह बदल दिया। ड्यूबी ने अपने इतिहासलेखन में इसी धीमी परन्तु सतत परिवर्तन की प्रक्रिया को पकड़ने का प्रयास किया है।

6.9 पतन संबंधी अन्य विचार

1960 और 70 के दशक में नव-माल्थसवादियों ने भी सामंतवाद के पतन की अपने ढंग से व्याख्या की। उन्नीसवीं शताब्दी में माल्थस ने एक अवधारणा विकसित की थी कि जमीन, जंगल, पानी आदि जैसे प्राकृतिक संसाधन एक खास सीमा तक ही एक निश्चित आबादी को वहन कर सकते हैं। जब भी मनुष्य की आबादी इस सीमा को लांघती है तो अकाल, महामारी, युद्ध जैसी प्राकृतिक आपदाएं आती हैं जो जनसंख्या को घटाकर उसे संसाधनों के संतुलन में लाकर खड़ा कर देती हैं। इमैनुएल ल रॉय लादूरी (Emanuel Le Roy Ladurie) जैसे कुछ इतिहासकारों ने तर्क दिया कि मध्ययुगीन यूरोप में बढ़ी हुई आबादी का बोझ सहन करने में कृषि अपने को असमर्थ पा रही थी। इसलिए 1314-15 सी ई में अकाल और 1348-51 में प्लेग (ब्लैक डेथ) ने ऐसा कहर बरपा किया कि यूरोप की एक चौथाई आबादी इसके आगोश में समा गई। इससे माल्थस के नियम की पुष्टि होती है। इससे मध्ययुगीन यूरोप का सम्पूर्ण संतुलन गड़बड़ा गया और पूंजीवाद की ओर संक्रमण हुआ।

माल्थस के सिद्धांत को लेकर हमेशा से विवाद रहा है। इसलिए स्वाभाविक है कि सामंतवाद के पतन को लेकर की गई इसकी व्याख्या भी विवादों से परे नहीं रही। माल्थस के सिद्धांत की आधारभूत सीमा यह है कि इसमें यह मान लिया गया कि संसाधन अपेक्षाकृत सीमित और अपरिवर्तनीय हैं और उनमें घट-बढ़ नहीं हो सकता और वे केवल एक खास आबादी का भार ही वहन कर सकते हैं। इस सिद्धांत के आलोचकों का कहना है कि बेहतर प्रौद्योगिकी और बेहतर प्रबंधन से उतनी ही जमीन पर अधिक उपज की जा सकती है। उदाहरण के

लिए, बेहतर ढंग से खेती करने पर उतने ही खेत में ज्यादा अनाज पैदा किया जा सकता है। इसलिए यह मान लेना बिलकुल गलत होगा कि मध्ययुगीन यूरोप में आबादी इतनी अधिक बढ़ गई थी जिसे कृषि उसे वहन नहीं कर सकती थी। आलोचकों का विचार है कि इस प्रकार की व्याख्या से सामाजिक संरचना से जुड़े सामाजिक कारकों की पूरी तरह अवहेलना हो जाती है।

1970 के दशक में और 1980 के दशक के आरंभ में अंग्रेजी की एक शोध पत्रिका *पास्ट ऐंड प्रेजेन्ट* में पूंजीवाद की ओर संक्रमण को लेकर नई बहस की शुरुआत की गई। अमेरिकी इतिहासकार राबॅर्ट ब्रेनर ने 1976 में 'एग्रेरियन क्लास स्ट्रक्चर ऐंड इकोनोमिक डेवेलप्मेंट इन प्री-इंडस्ट्रीयल यूरोप' शीर्षक लेख लिखकर इस बहस की शुरुआत की। ब्रेनर ने मुख्य रूप से वर्ग संघर्ष के संदर्भ में इतिहास को विश्लेषित करने की मार्क्सवादी प्रविधि की श्रेष्ठता पर बल दिया। हालांकि वे सीधे-सीधे सामंतवाद के पतन की बात नहीं कर रहे थे, परंतु यह बहस विषय के दायरे से निकलकर ब्रिटेन और फ्रांस में पूंजीवाद के संक्रमण के विभिन्न तरीकों की व्याख्या की ओर चली गई। इसलिए जब यह लेख प्रकाशित हुआ तो यह मार्क्सवादी इतिहासकारों तक ही सीमित नहीं रहा और इसकी सहमति और असहमति केवल किसी विचारधारा के प्रति निष्ठा के दायरे में नहीं रही। 1985 में *द ब्रेनर डिबेट* के नाम से ये सारे आलेख प्रकाशित हुए।

बोध प्रश्न-4

1) उन तकनीकी परिवर्तनों पर चर्चा कीजिए जिनके कारण यूरोप में उत्पादकता में वृद्धि हुई।

....

....

....

....

2) मध्ययुगीन यूरोप में शहरी केन्द्रों के उदय का संक्षिप्त विवरण दीजिये।

....

....

....

....

3) जॉर्ज ड्यूबी के अनुसार ग्रामीण परिदृश्य का रूपांतरण किस कारण से हुआ था?

....

....

....

....

4) माल्थस का सिद्धांत सामंतवाद के पतन से कैसे संबंधित था?

....

....

6.10 सारांश

यूरोप में सामंती व्यवस्था ने अपनी जड़ें जमाईं और लगभग 500 वर्षों तक यह कायम रही। आरंभिक चरण में इसकी संरचना बहुत सुदृढ़ नहीं थी और यह ज्यादातर अधिपति (लॉर्ड) और मातहत (वसाल) के बीच के गठबंधन पर सीमित थी। धीरे-धीरे इन गठबंधनों को परिभाषित किया गया तथा इसमें कई स्तर बनाकर इसे एक निश्चित स्वरूप प्रदान किया गया। सामंती युग में कुछ नई संस्थाएं विकसित हुईं। आपने गौर किया होगा कि पूरे सामंती युग में एक सा माहौल नहीं रहा और परिवर्तन होते रहे। इस इकाई में हमने दो प्रमुख चरणों – प्रथम 9वीं से 11वीं शताब्दी और द्वितीय चरण 11वीं से 14वीं का जिक्र किया है। ये चरण एक ही समय में स्पष्टता के साथ प्रकट नहीं हुए। बल्कि अलग-अलग समयों में हुए और अलग.अलग क्षेत्रों में विकास और परिवर्तन की दिशा और तीव्रता भी अलग-अलग रही।

आपने देखा होगा कि चूंकि सामंती व्यवस्था में जमीन सम्पत्ति का मूल स्रोत था, इसलिए दोनों ही चरणों में कृषि उत्पादन, प्रौद्योगिकी, खेती करने के तरीके और उत्पादन के संयोजन और संगठन में काफी परिवर्तन आया। जनसंख्या में होने वाले परिवर्तन से भी तत्कालीन आर्थिक और सामाजिक संरचनाओं में परिवर्तन आया। दूसरे चरण में आर्थिक विकास महत्वपूर्ण था और सामाजिक अंतर तेजी से बढ़ा। 14वीं शताब्दी से सामंतवाद के पतन की प्रक्रिया शुरू हो गई।

इस इकाई में हमने सामंतवाद के पतन के संबंध में अनेक विचारों से आपको परिचित कराया है। हेनरी पिरेन ने सामंतवाद के उत्थान और पतन में व्यापार की प्रमुख भूमिका को केन्द्र में रखा। उनका मानना था कि व्यापार और शहरी केन्द्रों के पुनरुत्थान से सामंतवाद के अंत का आरंभ हुआ। मॉरिस डॉब ने पिरेन के मत को चुनौती दी कि व्यापार में अपने बलबूते पर किसी आर्थिक व्यवस्था को पलटने की ताकत नहीं थी। उनके अनुसार सामंतवाद का पतन अपने आंतरिक संकट के कारण हुआ। डॉब ने भी माना कि शहरी केन्द्रों का उदय हो रहा था परंतु उन्होंने व्यापार में हो रही वृद्धि से इसको नहीं जोड़ा। डॉब का मानना था कि सामंती शोषण से मुक्ति पाने के लिए किसान गांव से शहर की ओर भागे जिससे भूमिपति बेबस हो गए और अन्ततः सामंतवाद ढह गया। अधिपतियों और कृषि दासों के बीच और अधिपतियों तथा शहरी बुर्जुआ वर्ग के बीच एक प्रकार का वर्ग संघर्ष शुरू हुआ। कोचुरु ताकाहाशी ने इसमें एक और आयाम जोड़ा और यह कहा कि पूंजीवाद का उत्थान बुर्जुआ वर्ग के जरिए सामंतवाद के खंडहर पर नहीं हुआ बल्कि यह राज्य समर्थित पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का परिणाम था। उन्होंने अपनी बात पुष्ट करने के लिए मेजी शासनकाल के दौरान जापान में हुए पूंजीवाद के उत्थान को उदाहरण के रूप में पेश किया।

प्रौद्योगिकी में सुधार आने से उत्पादकता में वृद्धि हुई और अधिक अधिशेष बचने लगा जिससे कृषक वर्ग का सामाजिक स्तरीकरण हुआ। कई छोटे किसानों की जमीन उनसे छिन गई और वे मजदूर बन गए जबकि धनी किसान ठेकेदार बनकर लगान वसूल करने लगे। अधिपतियों के बड़े-बड़े खेतों में पूंजी समर्थित कृषि होने लगी और मजदूरों को मजदूरी देकर खेती कराई जाने लगी। जॉर्ज ड्यूबी के अनुसार ग्रामीण परिदृश्य का यह रूपांतरण सामंतवाद के पतन का कारण बना। रॉबर्ट ब्रेनर का यह मानना था कि व्यापार के प्रसार से पतन की पूरी व्याख्या नहीं हो पाती और उन्होंने पुनः यह मार्क्सवादी सिद्धांत दुहराया कि अधिपतियों और किसानों के बीच हुआ वर्ग संघर्ष इस पतन का प्रमुख कारण था।

इस इकाई में इस बात का जवाब देने का प्रयास नहीं किया गया है कि यूरोप में सामंतवाद के पतन में व्यापार और शहरों की भूमिका थी या नहीं; इसके बजाए इसमें इससे जुड़े प्रश्नों

और उनके जवाबों के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया गया है। अन्त में यह भी कहा जा सकता है कि इतिहास का महत्व इसके चुनौती भरे क्षितिजों की खोज में निहित है। इस सम्पूर्ण बहस के जो आयाम हमने यहां प्रस्तुत किए हैं वे इस बात को भली-भांति दर्शाते हैं।

6.11 शब्दावली

विषम फाल : एक तरह का हल जिसमें मोल्ड बोर्ड और फाल आदि लगे होते थे

ब्लैक डेथ : यूरोप में 14वीं शताब्दी के मध्य में प्लेग महामारी के रूप में फैला हुआ था और अनुमानतः इसमें यूरोप की आबादी के एक तिहाई से एक चौथाई के बीच लोगों की मृत्यु हो गई थी।

बर्गेस (Burgess) : शहर (boroughs) में रहने वाले लोग जो राजा को कर दिया करते थे। मध्ययुग के अंतिम दौर में 'बर्गेस' शब्द का इस्तेमाल अधिक खुशहाल और विशेषाधिकार प्राप्त शहरियों के लिए किया जाने लगा। चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी के दौरान बर्गेस ताकतवर हो उठे और बरो (borongh) में व्यापार, वाणिज्य और उत्पादन के बल पर काफी धन इकट्ठा कर लिया।

डिमेन (Demesne) : कृषि दासों द्वारा सामंती बेगार के बदले जोती गई जमीन जिसकी फसल सीधे अधिपति (लॉर्ड) के भंडार घर में जाती थी।

मेन्स (बहुवचन मानसी) : भूमि का एक टुकड़ा जिस पर पूरा कृषक परिवार खेती करता था। यह भूमि लॉर्ड की भी हो सकती थी अथवा किसान की भी। यह श्रम शुल्क मापने की एक इकाई भी थी।

दासत्व मुक्ति (manumission) : दासों या कृषि दासों को करारबद्ध सेवा से मुक्त करना

मोल्ड बोर्ड हल : देखिए विषम फाल

खुले खेत : ऐसे खेत जिसमें फसल काटने के बाद या परती रहने पर सब उसका उपयोग कर सकते थे। इसमें खेतों के बीच कोई बाड़ या दीवार नहीं लगाई जाती थी बल्कि मेड़ें बना दी जाती थीं।

राइन लैंड : जर्मनी में राइन नदी से जुड़ा इलाका

वाइकिन्ग : 8वीं-10वीं शताब्दी के स्कैनडिनेवियन व्यापारी और लुटेरे

अनाज बीनने वाले ग्रामीण (village gleaners) : गांव के गरीब लोग जो अनाज कट जाने के बाद बची हुई बालियां और दाने बीनकर ले जाते थे।

6.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 6.2 देखें

2) उप-भाग 6.3.1 देखें

3) उप-भाग 6.3.2 देखें

बोध प्रश्न-2

1) उप-भाग 6.4.1 देखें

2) उप-भाग 6.4.2 और 6.4.3 देखें

3) उप-भाग 6.4.4 और 6.4.5 देखें

बोध प्रश्न-3

1) भाग 6.5 देखें

2) भाग 6.5 देखें

बोध प्रश्न-4

1) भाग 6.6 देखें

2) भाग 6.7 देखें

3) भाग 6.8 देखें

4) भाग 6.9 देखें

6.13 संदर्भ ग्रंथ

एन्डरसन, पेरी, (1974) *पैसेजेज़ फ्रॉम एन्टिक्विटी टू फ्यूडलिज्म* (लंदनः वर्सो).

ब्राउन, ई. ए. आर, (1974) 'द टिरेनी ऑफ ए कन्सट्रक्ट', *अमेरिकन हिस्टोरिकल रिव्यू* (79).

ब्लॉक, मार्क, (1961) *फ्यूडल सोसाइटी,* 2 भाग (शिकागोः शिकागो यूनिवर्सिटी प्रेस).

ड्यूबी, जॉर्ज, (1974) *द अर्ली ग्रोथ ऑफ द यूरोपीयन इकोनोमीः वारियर्स ऐंड पीजेन्ट्स फ्रॉम द सेवेन्थ टू द टवेल्थ सेंचुरी* (इथाका, न्यूयार्कः कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस).

ड्यूबी, जॉर्ज, (1980) *द थ्री ऑडर्सः फ्यूडल सोसाइटी इमेजिन्ड* (शिकागोः शिकागो यूनिवर्सिटी प्रेस).

ड्यूबी, जॉर्ज, (1998) *रूरल इकोनोमी ऐंड कन्ट्री लाइफ इन द मिडिवल वेस्ट* (फिलाडेल्फियाः यूनिवर्सिटी ऑफ पेन्सिलवेनिया प्रेस).

गैनशॉफ, एफ.एल, (1964) *फ्यूडलिज्म* (न्यूयार्कः हार्पर).

जाक, ल गॉफ, (1990) *मिडिवल सिविलाइजेशन* (मैसाचुसेट्सः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

लिन, व्हाइट जूनियर, (1962) *मिडिवल टेक्नोलॉजी ऐंड सोशल चेंज* (ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

होजेट, जेराल्ड ए. जे, (2010) (रिप्रिन्ट) *ए सोशल ऐंड इकोनोमिक हिस्ट्री ऑफ मिडिवल यूरोप* (ऑक्सोनः रुट्लेज).

पिरेन, हेनरी, (1969; प्रथम संस्करण 1925), *मिडिवल सिटीज़ः देयर ओरिजिन ऐंड द रिवाइवल ऑफ ट्रेड* (प्रिंस्टनः प्रिस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस).

पिरेन, हेनरी, (2010) (रिप्रिन्ट) *इकोनोमिक ऐंड सोशल हिस्ट्री ऑफ मिडिवल यूरोप* (लंदन एवं न्यूयार्कः रुटलेज).

डॉब, मॉरिस, (2006) (रिप्रिन्ट) *स्टडीज इन द डेवेलप्मेंट ऑफ कैपिटलिज्म* (न्यूयार्कः इन्टर्नेश्नल पब्लिशर्स).

हिल्टन, रौडनी (संपा.), (2006) (रिप्रिन्ट) *द ट्रांजिशन फ्रॉम फ्यूडलिज्म टू कैपिटलिज्म* (नई दिल्लीः आकार बुक्स).

हरबन्स मुखिया, (1979.1980) 'मॉरिस डॉब्स एक्सप्लेनेशन ऑफ द डिकलाइन ऑफ फ्यूडलिज्म इन वेस्टर्न यूरोप – ए क्रिटीक', *द इंडियन हिस्टोरिकल रिव्यू*, भाग. 6, न. 1.2, जुलाई-जनवरी, पृ. 154-184.

6.14 शैक्षणिक वीडियो

मिडिवल यूरोपः फ्युडलिज़्म | नेशनल ज्योग्राफिक डाक्यूमेंट्री
https://www.youtube.com/watch?v=Ymb9k8Tk_fY

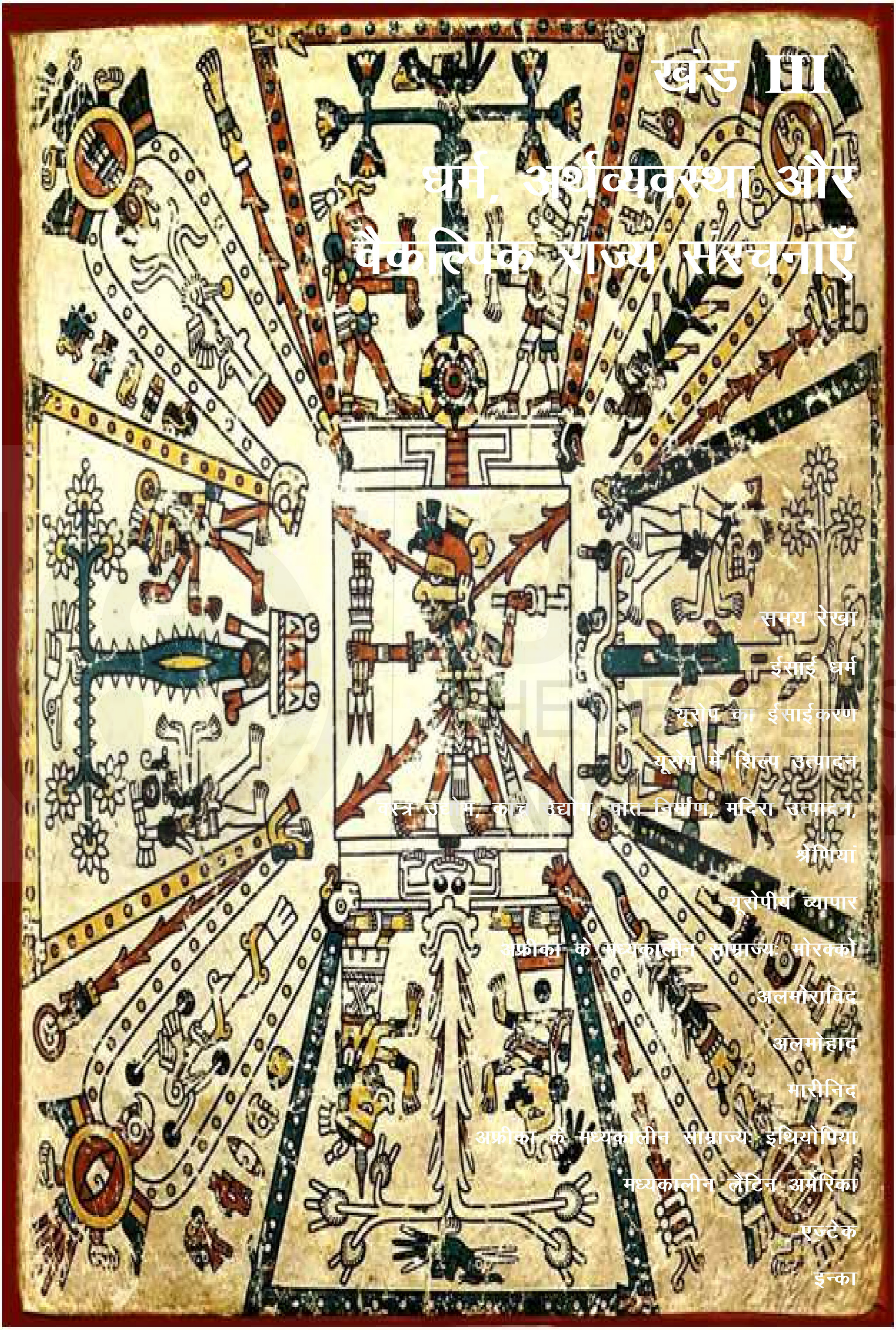

खंड III

धर्म, अर्थव्यवस्था और वैकल्पिक राज्य संरचनाएँ

समय रेखा

ईसाई धर्म

यूरोप का ईसाईकरण

यूसेप में शिल्प उत्पादन

वस्त्र उद्योग, काँच उद्योग, पोत निर्माण, मदिरा उत्पादन, श्रेणियां

यूरोपीय व्यापार

अफ्रीका के मध्यकालीन साम्राज्य: मोरक्को

अलमोराविद

अलमोहाद

मारीनिद

अफ्रीका के मध्यकालीन साम्राज्य: इथियोपिया

मध्यकालीन लैटिन अमेरिका

एज़्टेक

इन्का

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

चित्रांकन : कोडेक्स-फेजरवेरी;

चित्रकारः अज्ञात

ज़्यूटेकुह्ली देवता के साथ एज़्टेकों का ब्रह्मांड़ोत्पत्ति संबंधी रेखांकन; केन्द्र में अग्निदेवता और ब्रह्मांड के चारों कोने चार पेड़ों द्वारा चिन्हित जो कि चिड़ियाओं, देवताओं और कैलेन्डर के नामों से संबंधित है; और प्रत्येक दिशा को ईष्ट देव टेज़्काटलीपोका के विखंडित पैरों द्वारा चिन्हित किया गया है।

स्रोत : https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/7/7e/Xiuhtecuhtli_1.jpg

इकाई 7 मध्यकालीन यूरोप में धर्म और संस्कृति*

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 ईसाई धर्म और यूरोप का ईसाईकरण

7.3 ईसाईयों के गैर-ईसाइयों के साथ संबध

7.4 पादरी वर्ग, नैतिक निर्देश और औपचारिक शिक्षा

7.5 मध्यकालीन पादरियों और चर्च की सामाजिक शिक्षाओं की आलोचना

7.6 सारांश

7.7 शब्दावली

7.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.9 संदर्भ ग्रन्थ

7.10 शैक्षणिक वीडियो

7.0 उद्देश्य

रोमन साम्राज्य में धर्म पर पिछली इकाई (**इकाई 3, बी एच आई सी-104**) में दर्शाया गया है कि प्राचीन काल के अन्त और मध्ययुग की शुरुआत में किस प्रकार ईसाई धर्म राज्य की शक्ति संरचना का हिस्सा था। ईसाई चर्चों, मठों, और चर्च प्रशासित प्रतिष्ठानों ने पूर्व रोमन क्षेत्र में चर्च की भू-सम्पत्तियों पर बड़ी संख्या में मजदूरों को एकत्र और नियंत्रित किया। भूमि के अनुदान के अलावा चर्च के लोगों ने कुलीनों और समाज के अन्य सदस्यों से और राजकीय कोषों से सम्पदा प्राप्त की। यह यूरोपीय समाजों के ईसाईकरण की जटिल प्रक्रिया का केवल एक पहलू था। जैसा कि हम देखेंगे, मध्ययुगीन यूरोप का सामान्य सामाजिक और सांस्कृतिक प्रारूप ईसाई बन गया, यहाँ तक कि गैर-ईसाई लोगों के लिए भी जो यूरोप की अल्पसंख्यक आबादी थे। संस्कृति का अर्थ समाज के मूल्यों, साझा विश्वासों और परम्पराओं के साथ-साथ विशिष्ट कलाओं, भाषाओं इत्यादि से है। अतः मध्यकालीन यूरोपीय संस्कृति का विवरण मध्ययुगीन जीवन के पूरे प्रारूप और उन तरीकों की जाँच होना चाहिए जिन्होंने ईसाई धर्म की मदद से हुए सामाजिक एकीकरण और सामाजिक नियन्त्रण की विशिष्ट सामंती संरचना को संभव बनाया। हालाँकि मध्ययुगीन काल में यूरोप मात्र एक राजनीतिक इकाई नहीं था, बल्कि समाजों का संकलन था, लेकिन 'यूरोपियन समाज' और 'यूरोपियन संस्कृति' के संबंध में धर्म का उपयोगी सामान्यीकरण करना संभव है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- मध्यकालीन यूरोप में ईसाईकरण को एक सामाजिक-सांस्कृतिक प्रक्रिया के रूप में देख सकेंगे,
- यूरोप के कुछ हिस्सों में 'बहुसंख्यक' और 'अल्पसंख्यक' धार्मिक पहचान वाले समूहों के बीच के संबंधों को समझ सकेंगे,

* प्रो. डेनिस पी. लेटन, स्कूल ऑफ लिबरल स्टडीज़, अम्बेडकर यूनिवर्सिटी, दिल्ली

- लगभग 1500 से पहले विशेष रूप से ज्ञान निर्माण, शिक्षा और सामाजिक देखभाल के कार्यों में ईसाई यूरोप में पादरियों की भूमिका को समझ सकेंगे, तथा
- मध्ययुगीन सामाजिक जीवन और संस्थाओं में पादरी और सामान्य लोगों के बीच सहयोग और संघर्षों के कुछ कारणों को सूचीबद्ध कर पायेंगे।

7.1 प्रस्तावना

ग्यारहवीं शताब्दी सी ई तक आते-आते ईसाई पूजा पद्धतियों की जड़ें एशिया और अफ्रीका के कई भागों में होने के बावजूद, यूरोप 'ईसाई जगत' के समानार्थक था और ईसाई धर्म के अधिकार क्षेत्र का पर्याय बन गया था। उस समय ईसाई जगत स्वयं यूरोप की अवधारणा की तुलना में मध्ययुगीन यूरोप के अधिकांश लोगों के लिए एक परिचित अवधारणा थी 'यूरोप' की सीमाएँ (आखिरकार यह कहां शुरू हुईं और कहां समाप्त होती थीं?) यह 12- 13 वीं शताब्दियों में यूरोप की ईसाई जगत के साथ पहचान और भी घनिष्ठ हो गई, खासतौर पर जब समय-समय पर पोप द्वारा धर्मयुद्धों (Crusades) को अनुमोदित किया गया।

धर्मयुद्ध 'ईसा मसीह के क्रास चिन्ह' के मातहत ऐसे सैन्य अभियान थे जो 'पवित्र भूमियों' (जेरुसलम और आसपास के स्थान) के साथ-साथ यूरोप में भी धर्मविरोधी और विधर्मियों के खिलाफ लड़े गये थे। धर्मयुद्ध धार्मिक दायित्व की आड़ में अपनी शक्ति और सम्पदा बढ़ाने के लिए यूरोपीय कुलीन वर्ग के आक्रामक प्रयास थे। लेकिन पोप की अनुमति द्वारा यह अति-क्रूर अभियान आरम्भ किये गये थे (धर्मयुद्धों के बारें में अधिक जानकारी के लिए शैक्षणिक वीडियो देखें)।

पोप के प्रभाव क्षेत्र, पेपेसी (Papacy), का मध्ययुग के दौरान, संपत्तियों और क्षेत्रीय-वैधानिक अधिकार क्षेत्रों के विशाल साम्राज्य के रूप में रोम से बाहर विस्तार हुआ। यूरोप का नागरिक प्रशासन अपनी वैधता के लिए ईसाई चर्चों और पोप की सहमति पर निर्भर था। इसी प्रकार पोप और उनके अधीनस्थ शाही समर्थन और उनके अनुग्रह पर निर्भर थे। ईसाई न्यू टेस्टामेन्ट में कहा गया है (ल्यूक 22: 38) कि सांसारिक/लौकिक सत्ता (सामाजिक और राजनीतिक संबधों में) और आध्यात्मिक सत्ता दो तलवारों द्वारा दर्शाये जाते हैं और *दोनों* तलवारों पर राजकुमार या सम्राट का अधिकार था। मध्ययुगीन यूरोप में जहाँ कहीं भी नागरिक नेताओं और अधिकृत ईसाई अधिकारियों के बीच दरारें पैदा हुईं, वे गंभीर राजनीतिक सकंट के रूप में सामने आए। ईसाई धर्मशास्त्रियों और विधिवक्ताओं ने पवित्र युद्ध के सिद्धान्त विकसित किये और हिंसा को तर्क-संगत ठहराने वाली परिस्थितियों पर वाद-विवाद किया, चाहे वह गैर-ईसाई या साथी ईसाईयों के खिलाफ हों।

समाज का **ईसाईकरण** लोगों द्वारा समान तरीके से ईसाई ईश्वर (पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के तीन रूपों में) की पूजा करने की प्रक्रिया से कहीं अधिक था। ईसाईयत ने यूरोप में कई सैकड़ों अलग-अलग राज्यों और क्षेत्रों में वितरित विभिन्न प्रकार के लोगों के सामाजिक मूल्यों और मानदंडों का निर्धारण किया। आज जब हम शानदार मध्ययुगीन चर्च की वास्तुकला का अवलोकन करते हैं और यूरोपीय महलों के साथ-साथ चर्चों को सुशोभित करने वाले धार्मिक विषयों के भित्ति चित्रों, चित्रकारी और प्रतिमाओं की प्रशंसा करते हैं, तो यह निष्कर्ष निकालने की ओर झुकाव रहता है कि यूरोपीय संस्कृति ने ईसा मसीह और संतों की भक्ति को उदाहरण के रूप में पेश किया जिसे चर्च ने प्रत्येक ईसाई के कर्त्तव्य के रूप में सिखाया। मध्ययुगीन यूरोप की अधिकांश कला चर्चों में की गई, और चर्च सामान्य जन के लिए खुले थे।

हेनरी एडम्स (1838-1918) ने *द एजुकेशन ऑफ हेनरी एड्म्स* (अध्याय 25: 'द डायनमों एंड द वरजिन') में मध्ययुगीन यूरोपीय लोगों में अविवाहित मेरी, यीशु मसीह की माँ, के प्रति श्रद्धा-भाव की तुलना आधुनिक लोगों में तकनीक (उदाहरण के लिए, बिजली उत्पन्न करने के लिए डायनमों का इस्तेमाल), वैज्ञानिक प्रगति और आर्थिक उत्पादन के प्रति जुनून से की है। एडम्स यह दिखाना चाहते थे कि मध्यकालीन यूरोपीय पुरुष और महिलाएं अविवाहित मेरी की शक्ति के प्रति आश्वस्त थे और चर्च में अनुष्ठानों, गिरिजाघरों और चर्च में अन्य ताम-झामों पर विवाद नहीं करते थे, इसी प्रकार जैसे कि आधुनिक लोग प्रौद्योगिकी और आर्थिक उपलब्धि के महत्व और परम् लक्ष्य के बारे में आश्वस्त हैं। हालाँकि कई विद्वानों ने इस अवधारणा को चुनौती दी है कि मध्यकालीन यूरोपीय लोग अपने रोमन पूर्ववर्तियों या 1600 सी ई के बाद उनके उत्तराधिकारियों से अधिक धार्मिक और ईसाई थे। इस इकाई के अगले भागों में दिखाया जाएगा कि कैसे ईसाई धर्म नें मध्ययुगीन यूरोपीय पारस्परिक सामाजिक प्रभावों को प्रभावित किया, और कैसे ईसाई विचारों और मूल्यों के साथ-साथ ईसाई प्रथाओं के बारे में चिंतायें यूरोपीय संस्कृति और समाज में व्यक्त की गयी थीं। यह इकाई यह भी दर्शाएगी कि संस्कृति के क्षेत्र में ईसाई और अन्य धार्मिक समुदायों के बीच संबंध कैसे थे।

7.2 ईसाई धर्म और यूरोप का ईसाईकरण

ईसाई धर्म, चाहे वह रोमन कैथोलिक धर्म था या पूर्वी रोमन या बाइजेन्टाइन साम्राज्य (धर्म प्रधान (patriarch) द्वारा जिसका प्रतिनिधित्व किया गया) द्वारा समर्थित रुढ़िवादी ईसाई धर्म, आठवी शताब्दी सी ई तक आते-आते दक्षिण, पश्चिमी और मध्य यूरोप के अधिकांश भू-भागों में आधिकारिक धर्म बन गया था। इसके तुरंत बाद यह रूस, यूक्रेन, और दक्षिण-पूर्वी यूरोप के भागों में, जो ग्रीक भाषी और स्लाव लोगों का निवास था और इस समय तक पहले से ही रुढ़िवादी ईसाई धर्म का केन्द्र था, में फैल गया। ग्याहरवीं शताब्दी सी ई के अन्त में एक 'महान् विभाजन' ('Great Schism') के रूप में समापन होने से कई शताब्दियों पहले से ही ईसाई धर्म के कैथोलिक और रुढ़िवादी शाखाओं के साथ संबंध बिगड़ गये थे। प्रारंभिक मध्यकाल के ईसाई मिशनरियों ने पोप (या रुढ़िवादी धर्मप्रधान) या बिशप, सैद्धान्तिक रूप से पोप (या पितृसत्तात्मक धर्मप्रधान) के अधीनस्थों, ने उनके प्रतिनिधि के रूप में लोगों के बीच ईसाई धर्म विश्वास फैलाने का काम किया।

नागरिक शासकों के समर्थन के बिना मध्ययुगीन यूरोप में धर्मान्तरण संभव नहीं था। यह आमतौर पर एक राजनैतिक नेता द्वारा ईसाई धर्म को स्वीकार करने का नतीजा था जिसके कारण पूरी आबादी का धर्मान्तरण हुआ। आयरलैंड के पैट्रिक (सेन्ट पैट्रिक, 'द अपोस्टल ऑफ द आयरिश') और वेल्स और ब्रिटेनी में ब्यूनो जैसे मिशनरियों की दन्त कथाओं और आदरणीय महंत बेडे (लगभग 672 से 735 सी ई) के *इक्लीसीऐस्टिकल हिस्ट्री ऑफ द इंग्लिश पीपॅल* जैसे ऐतिहासिक दस्तावेज मिशनरियों के गहन विश्वास, प्रतिकूल परिस्थितियों में उनके धैर्य और उनके जीवन से जुड़ी चमत्कारिक घटनाओं से भरे हुए हैं। प्रारंभिक ईसाई सन्तों में अनेक मिशनरी ऐसे थे जिन्होंने धर्म विरोधियों के हाथों शहादत प्राप्त की थी। इस प्रकार की दन्तकथाओं और दस्तावेजों से ईसाई धर्म को अपनाने के लाभ के बारे में अनुनय और अनुभूतियों के बारे में पता चलता है। नौवीं शताब्दी सी ई के मध्य में बुल्गारियनों के *खान*, बोरिस, ने रुढ़िवादी ईसाई और रोमन कैथोलिक ईसाई मिशनरियों का स्वागत किया, लेकिन अन्ततः उसने अपने राज्य को रुढ़िवादी ईसाई धर्म के पक्ष में ले जाने का चुनाव किया। व्लादीभीर 'द ग्रेट', नोवगोरोड़ के स्लाव राजकुमार और अन्ततः दसवीं शताब्दी सी ई के अन्त में कीव के महान् राजकुमार, ने बाइजेंटाइन सम्राट की पुत्री से विवाह करके और बाइजेंटाइन साम्राज्य से संबंध बनाकर बदले में रुढ़िवादी ईसाई धर्म को स्वीकार कर लिया। कई मिशनरी प्रयासों

के असफल प्रयत्नों के बाद, व्लादीमीर के बाइजेंटाइन के साथ राजनीतिक गठजोड़ के द्वारा रूस का ईसाईकरण शुरू हुआ।

ईसाईकरण समाज और संस्कृति के परिवर्तन की एक क्रमिक प्रक्रिया थी और यह आबादी के नाममात्र धर्मान्तरण के बाद लम्बे समय तक ईसाई धर्म में जारी रही। जब ईसाई धर्म में परिवर्तन कराने वालों को एक शासक का समर्थन प्राप्त होता था, तो यह ईसाईकरण उन लोगों के लिए हिंसा भरी धमकी भी लेकर आया जिन्होंने धर्मान्तरण का विरोध किया या जिन्होंने अपने मूर्तिपूजक तरीके जारी रखे। ईसाई अधिकारी अपने विश्वास के साथ गैर-ईसाई व्यवहारों के सह-अस्तित्व से सन्तुष्ट नहीं थे, वे *सोसीएटास फिडेई* (लैटिनः *Societas Fidei*; एक ही धार्मिक विश्वास वाला समाज) की स्थापना करना चाहते थे। इसका अर्थ था कि ईसाई धर्म का लोगों पर पूर्ण प्रभुत्व और अन्य धर्म विश्वासों का तिरस्कार। यूरोपीय भूमि की कानूनी-राजनैतिक व्यवस्थाओं ने कठोरता से और जान-बूझकर मूर्तिपूजक और 'काफिरों' के व्यवहारों के विरूद्ध ईसाई शिक्षाओं और मूल्यों को उचित ठहराया। अमीर और गरीब दोनों प्रकार के यूरोपीय लोगों के बीच विवाह पादरियों द्वारा विधिपूर्वक संपादित किये जाते थे। जिस विवाह में चर्च की मान्यता नहीं होती थी उसमें संपत्ति के नियत्रण और सामाजिक, राजनैतिक ओहदे के उत्तराधिकार के मसलों में समस्याएँ पैदा होती थीं।

ईसाईकरण को केवल चर्च की पहले से मौजूदा शक्ति के रूप में नहीं समझा जा सकता। यह इसलिए हुआ क्योंकि इसने यूरोप की विभिन्न आबादियों की सामाजिक जरूरतों को पूरा किया या कम से कम पूरा करने का वायदा किया। चर्च ने न केवल शिशुओं, बच्चों और व्यस्कों को 'आर्शीवाद' स्वरूप पाप से 'मुक्ति' के लिए धार्मिक संस्कार (sacraments) प्रदान किये बल्कि फसलों और पशुओं के झुन्डों की रक्षा तथा लोगों की बीमारियों से रोग निवृति हेतु ईश्वर को धन्यवाद देने वाले अनुष्ठान भी किये। मध्ययुगीन यूरोप से राजाओं की रोग निवृति और सुरक्षा के लिए धन्यवाद देते हुए इतनी सारी लिखित प्रार्थनाएँ मौजूद हैं जो चर्च और राजसी सत्ता की अंतर्निर्भरता के बारे में कुछ संकेत करती हैं। लोगों ने न केवल चर्च की प्रार्थना सभाओं में भाग लिया और **पादरियों** से धार्मिक संस्कार (sacraments) प्राप्त किये बल्कि उन्होंने संतों के पुण्य स्थलों में भी पूजा की और संतों से सुरक्षा और सहायता के लिए आह्वान किया।

सभी ईसाईयों के लिए सबसे महत्वपूर्ण संत मेरी, ईसा मसीह की माँ थीं, लेकिन यूरोप के सभी ईसाई क्षेत्रों में लोगों ने कई दर्जन संतों को मान्यता दी। संत विशिष्ट बीमारियों और दुर्भाग्य से सुरक्षा से जुड़े थे, या उन्हें कुछ व्यवसायों (कस्बों या ग्रामीण क्षेत्रों में) के प्रायोजकों या संरक्षकों के रूप में मान्यता दी गई थी। उदाहरण के लिए, सेंट ह्यूबर्ट शिकारियों के सरक्षंक थे, सेंट क्रिस्टोफर यात्रियों के रक्षक थे और सेंट निकोलस[1] रूस के (राष्ट्रीय) संरक्षक संत बन गए। संतों की कब्रों या अन्य पवित्र स्थलों की तीर्थयात्रा समाज में सभी स्तरों के ईसाईयों के लिए एक स्थापित प्रथा बन गई। संतों के किस्से (जीवनियाँ) प्रारंभिक मध्यकालीन यूरोप में साहित्य का सबसे व्यापक रूप से जाना जाने वाला रूप बन गया, जिससे संभवतः पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी के पहले बाइबिल की तुलना में कहीं अधिक लोग परिचित थे। यूरोपीय साक्षरता का सामान्य स्तर कम था, और लोगों द्वारा बाइबिल को एक पुस्तक के रूप में पढ़े जाने की तुलना में चर्च में पादरियों द्वारा प्रार्थना सभाओं में उसका वाचन करके ज्यादा सुनाया जाता था। जबकि संतों की कहानियां ना केवल लिखित रूप में बल्कि मौखिक दन्तकथाओं के रूप में प्रसारित हुई।

---

[1] निकोलस बच्चों के भी सरंक्षक संत बन गए, और मध्य युग के अंत में वह सेंट निकोलस दिवस पर दिसम्बर में बच्चों को गुप्त उपहार देने से जुड़ गए।

चित्र 7.1: जॉन हुस एंड द कांउसिल ऑफ कॉन्सटेन्स
साभारः कार्ल फ्रेडरिक लेसिगं (1808-1880); स्टाडेल म्यूज़ियम
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/2/25/Hus_%28Lessing_1842%29.jpg

चित्र 7.2: क्लेरमोन्ट की परिषद् में पोप अर्बन द्वितीय
साभार : जीन कोलोंबे, बिबलीयोथेक नेशनल दे फ्रांस
स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/Council_of_Clermont#/media/
File:Passages_d'outremer_Fr5594,_fol._19r,_Concile_de_Clermont.jpg

उन लोगों को अनुशासित करने के लिए जो 'भ्रमित' हो गये थे, मध्ययुगीन चर्च के पास सन्मार्ग पर लाने के लिए कई साधन थे, जिनमें धार्मिक अदालतें, न्यायाधिकरण, आयोग और प्रतिबंध या निषघात (उदाहरण के लिए, विद्वानों को पढ़ाने या लिखने से रोकना) शामिल थे। शुरुआती ईसाई शताब्दियों के बाद से ही ईसाई अधिकारियों के बीच व्यापक असहमति के समाधान के लिए समय-समय पर प्रमुख पादरियों की परिषद् बुलाई जाती थी। खलल और अशांति के दशकों के बाद पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रांरभ में जब रोम और एविग्नॉन में एक दूसरे के प्रतिस्पर्धी पोप थे तब कान्सटेंस में एक महान् परिषद्[2] बैठी। धार्मिक असन्तुष्टों या विपथगाामी और वास्तव में जो कोई भी चर्च की शिक्षाओं या घोषणाओं का विरोध करता था, उसे दंडित किया जा सकता था या प्राणदंड दिया जा सकता था और इसमें अन्तिम दंड धर्म बहिष्कारिता हो सकता था। सच्चे ईसाईयों के समुदाय से किसी को बहिष्कृत करके और उन्हें धर्म संस्कारों से बेदखल करने से बहिष्कृत व्यक्तियों को शाश्वत निदां (उनकी आत्माएँ स्वर्ग नहीं जाएँगी) का सामना करना पड़ता था। सेंट पीटर, रोम के प्रथम बिशप, का चित्रण ईसाई मूर्तिशास्त्र – धार्मिक कला और प्रतीकवाद – में स्वर्ग के द्वार की चाबियाँ पकड़े हुए व्यक्ति के रूप में किया गया था। ग्याहरवीं शताब्दी में पवित्र रोमन सम्राट हेनरी चतुर्थ के 'अभिषेक के दौरान उभरे इस सवाल' पर मतभेद था कि क्या राजाओं अथवा पोप को बिशप की नियुक्ति का अधिकार हो, बहिष्कार के खतरे ने हेनरी चतुर्थ को पोप ग्रेगरी VII के पक्ष में प्रस्ताव स्थगित करने के लिए राजी कर लिया गया।

विधर्मी मुकदमों – स्वीकृत चर्च शिक्षाओं के त्याग या विरोधाभास के बारे में पूछताछ – के माध्यम से सामाजिक व्यवस्था में चर्च के स्थान की फिर से पुष्टि की गई, चाहे इन मुकदमों में अभियुक्तों की विधर्मियों के रूप में निन्दा की गई थी या नहीं। उपरोक्त उल्लेखित धर्मयुद्धों ने, 1095 सी ई में पोप अर्बन द्वितीय द्वारा पहली बार हिसंक अभियान शुरू किये जाने के बाद, कई शताब्दियों के लिए ईसाईयों और मुसलमानों के बीच संबंधों को जटिल बना दिया। फिर भी धर्मयुद्ध, संकीर्ण इस्लाम विरोधी गतिविधियाँ नही थीं; उन्हें यूरोप के भीतर मूर्तिपूजकों (जैसे की बाल्टिक सागर के आसपास के क्षेत्र में 'उत्तरी धर्मयुद्ध') के विरूद्ध और उन ईसाई सम्प्रदायों जैसे कि दक्षिण-पश्चिमी यूरोप में कैथार्स और वाल्डेन्सियनों को नेस्तनाबूद करने के लिए भी चलाया गया था, जिन्हें पोप-तन्त्र (Papal) ने विधमी माना था। प्राग में एक धर्म विज्ञानी और विश्वविद्यालय में प्रोफेसर और रेक्टर, जान हुस (1369-1415) पर विधर्म के लिए मुकदमा चलाया गया और प्राणदंड दिया गया और 1436 तक हुस के अनुयायियों को वश में करने के लिए बोहेमिया (मध्य यूरोप) मे कई धर्मयुद्ध चलाए गए। मध्यकालीन यूरोपीय लोग पादरी वर्ग के आक्षेपों से खौफ खाते थे। कारण यह था कि वे वास्तव में यह मानते थे कि पोप स्वर्ग के

चित्र 7.3: सेंट वालपरगा
साभार: मास्टर ऑफ मेसकिर्च (1500-1543); फिलाडेलफिया म्यूजियम ऑफ आर्ट
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Heilige_Walburga.jpg

[2] कान्सटेंस की परिषद् 1414 और 1418 के दौरान बिशोपरिक ऑफ कान्सटेंस में आयोजित की गई थी। इस परिषद् का मुख्य उद्देश्य पोपों के मध्य आई फूट का अन्त करना था। इस परिषद् में 29 कार्डिनल्स, 100 'कानून और देवत्व के विद्वानों', 134 महन्तों (abbots) और 183 बिशप्स और आर्कबिशप्स ने भाग लिया था। इस परिषद् ने जॉन हुस के निष्पादन (execution) को सुगम बनाया (जॉन हुस एक चेक धर्मशास्त्री, दार्शानिक, और प्राग के चार्ल्स विश्वविद्यालय के मास्टर, डीन और रेक्टर थे जो एक चर्च सुधारक बन गये थे)।

द्वार को बंद कर सकते हैं या खोल सकते हैं। एक और कारण यह हो सकता है कि उन्हें समाज में धार्मिक अधिकारियों की अस्वीकृति से होने वाली सामाजिक प्रतिष्ठा के नुकसान का डर था। यह निष्कर्ष निकालना मुश्किल है कि इनमें से किस कारण ने अधिक भय पैदा किया। यह निश्चित है कि चर्च के पास अपने साथी पुरुषों और महिलाओं के बीच व्यक्तियों की पहचान या प्रतिष्ठा को प्रभावित करने के लिए यह निर्धारित करने, कि कौन लोग सम्मान के योग्य थे, या इसके विपरीत, किन लोगों को टाला या अनदेखा किया जा सकता था, यह शक्ति थी।

जहाँ वह क्षेत्र जिसे आज यूरोप के रूप में मान्यता प्राप्त है, ईसाई बन गया, वहीं ईसाई संस्कृति मूर्तिपूजक और गैर-ईसाई व्यवहारों के मिश्रण से प्रभावित थी। **इकाई 3** में दर्शाया है कि कैसे यहूदी, ग्रीक और पूर्वी विचारों और व्यवहारों ने रोमन तथा रूढ़िवादी ईसाई धर्म के निर्माण में मदद की। मूर्तिपूजक, बर्बर लोगों के प्रभाव 'ईसाई' यूरोप के गठन पर बहुत स्पष्ट हैं। जर्मनिक और उत्तरी यूरोप में क्रिसमस के उत्सव पर देवदार के वृक्षों और शाखाओं के उपयोग की परम्परा, इस पेड़ की शाखाओं के साथ अपने घरों को सजाने की एक मूर्तिपूजक परम्परा का अंगीकरण है। यह एक मध्यकालीन प्रथा थी जो आधुनिक समय में दुनिया भर के ईसाई समुदायों में फैल गई। कुछ मूर्तिपूजकों के पवित्र पुरुष और महिलाएँ, या यहाँ तक कि देवताओं को अभी भी यूरोप भर में लोकप्रिय विश्वास के रूप में मान्यता प्राप्त थी और कभी-कभी पुनः उनका ईसाई संतों के रूप में नामकरण किया गया। कुछ ईसाई संतों को मूर्ति पूजक लोगों के प्रतिबंधित मूर्तिपूजक देवताओं या पवित्र लोगों के विशेष गुणों या 'शक्तियों' से जोड़ दिया गया। उदाहरण के लिए, वालबरगा या वालपरगा, जिनका जन्म इंग्लैंड में 8वीं सदी सी ई में हुआ था और जो, अब जहाँ जर्मनी है, वहाँ मिशनरी के रूप में गईं, और उन्हें एक ईसाई संत के रूप में पहचाना गया, जो अन्नमाता (एक जर्मनिक देवी जो रोमन देवी सेरेस के सदृश हैं) का स्थानापन्न रूप है। सेन्ट वालपरगा की शुरुआती तस्वीरें और प्रतिमाएँ उनको अनाज के डंठल को पकड़े हुए दर्शाती हैं, और इससे अन्य सबूतों के साथ यह पता चलता है कि जर्मन किसान उन्हें अनाज के फलने-फूलने और पकने हेतु विशिष्ट आराध्य संत के रूप में चिन्हित करते थे।

उन तरीकों, जिन्होंने उन्हें स्थानीय मूल्यों (और मूर्तिपूजकों के व्यवहारों) के साथ संबद्ध किया, से सन्तों को प्रतिष्ठित करके चर्च उस आबादी के ऊपर मजबूत पकड़ हासिल कर पाया जिसका वह ईसाईकरण कर रहा था। एक अन्य रणनीति मूर्तिपूजकों के त्यौहारों को संशोधित करके उन्हें ईसाई अवकाश दिवसों और अनुष्ठान पालन के कैलंडर में शामिल करने की थी। जब ईसाई अधिकारियों ने अवकाश दिवस घोषित किया, उदाहरण के लिए एक संत दिवस, जो मूर्तिपूजकों के त्यौहार के साथ मेल खाता था, तो उन्होंने परिकल्पना की कि इसके प्रतिकूल-आकर्षण होने से मूर्तिपूजकों की प्रथाओं को अनदेखा किया जाएगा और अन्ततः भुला दिया जाएगा, और यही वास्तव में अक्सर हुआ। मध्ययुगीन लोकप्रिय कल्पना में, संतों के पंथों ने उन पवित्र पुरुषों और महिलाओं का खाली स्थान भरा जो यूरोप में मूर्तिपूजकों के लिए महत्वपूर्ण थे। हालांकि चर्च ने औपचारिक प्रक्रियों के माध्यम से संतों का निर्माण किया (जिसको धन्य घोषणा [beatification] और संत घोषणा [canonization] कहा जाता था)। यह कुछ हद तक पुण्यशीलता और श्रद्धा-भाव के लोकप्रिय आचरण के प्रति प्रतिक्रिया थी। जनसाधारण और पादरी वर्ग के पास संतों में पंथों को स्थापित करने और संरक्षित रखने की शक्ति थी। गौरतलब है कि 16वीं शताब्दी में अंत तक, फ्रेडरिक तृतीय ('द वाइज'), सेक्सनी के ड्यूक और इलेक्टर (जर्मनी में), के पास एक पुरावशेष-मजुंषा थी जो एक निजी संग्रहालय था जिसमें ईसाई संतों से जुड़े हुए लगभग 19000 स्मृति चिन्ह (पवित्र वस्तुएँ) थे। इंग्लैंड के कैन्टरबरी में संतों के कई पवित्र स्थल स्थित थे और आइबेरिया का सेंटियागो दे कॉम्पोस्टेला, सेंट जेम्स के सम्मान का केन्द्र था, जो ईसा मसीह के शहीद हुए

प्रथम धर्मदूतों में थे। ये मध्ययुगीन यूरोप के लोकप्रिय तीर्थस्थलों में से थे और यहाँ तक कि अपेक्षाकृत गरीब लोग भी पुण्य प्राप्त करने के लिए वहां जाते थे।

चित्र 7.4: कैन्टरबरी का गिरिजाघर
साभारः हंस मुसिल
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Canterbury_Cathedral_-_Portal_Nave_Cross-spire.jpeg

चित्र 7.5: सेंटियागो दे काम्पोस्टेला गिरिजाघर
साभारः स्टीफनडी
स्रोतः http://en.wikipedia.org/wiki.Santiago_de_Compostela_Cathedra#/media/File:Catedral_de_Santiago_de_Compostela_agosto_2018_(cropped).jpg

जैसे-जैसे कई क्षेत्रों में कबीलाई समाज सम्मिलित होकर व्यापक राज्यों में एकत्र हुए, पूरे यूरोप में लगभग 600 से 1000 सी ई के दौरान इसी प्रकार ईसाई धर्म सुदृढ़ हुआ। मूर्तिपूजकों के पौरुषता के आदर्शों, जिसमें ईसाई धर्म-पूर्व के रोम के लिंग प्रतिमान सम्मिलित थे, ने राजनैतिक रूप से सक्रिय पुरुषों का महिमामंडन किया। इसके विपरीत, शुरुआती ईसाई शिक्षाओं ने चितंनशील (विचारशील) और तपस्वी (मितव्ययी और विषय-वासना से दूर) जीवन को बढ़ावा दिया। प्राचीन काल के समापन दौर में विधर्मी संसार के क्रियाकलापों के प्रति निर्लिप्तता एक प्रभावी आदर्श था, जैसा कि एकांतवासी धार्मिक भिक्षुकों (स्त्रियों एवं पुरुषों) के ऐतिहासिक साक्ष्य में प्रदर्शित है। यूरोपीय मूर्तिपूजक समाजों में पुरुषत्व अत्यधिक मिलनसार और रणप्रिय था। पुरुषों से उम्मीद की जाती थी कि वे अपने सरदारों या राजाओं द्वारा बुलाई जाने वाली सभाओं और प्रतियोगिताओं में भाग लें। उन्हें शस्त्रविद्या में निपुण होना पड़ता था और युद्ध में अपने साहस का प्रदर्शन करना होता था। हम प्रारंभिक ईसाई यूरोप के कई भागों में ईसाई और मूर्तिपूजकों के मूल्यों के बीच टकराव के सबूत पाते हैं। उदाहरण के लिए, 7वीं-8वीं शताब्दी में फ्रांस में **सामंती** भू-स्वामियों के द्वारा बिशप, पुजारी और भिक्षुओं की कमज़ोर, कुटिल और व्यवहार में स्त्रीतुल्य होने के लिए आलोचना की। पादरियों का ब्रह्मचर्य और इसमें विश्वास कि लोग पारिवारिक दायित्वों की बाधा से दूर अविवाहित रहकर आध्यात्मिक रूप से शुद्ध रह सकते हैं, अधिकांश पूर्व ईसाई यूरोपीय समाजों के पुरुषत्व *और* स्त्रीत्व के आदर्शों के विपरीत था।

मूल्यों के टकराव के अलावा ईसाई धर्म ने समस्त यूरोप में सामंती संबंधों को आकार देने में विशिष्ट भूमिका निभाई। वसाल सामंती जागीरदार (जिनके पास जमीन थी) की अपने लॉर्ड (जिन्होंने भूमि अनुदान में दी) के प्रति निष्ठा सामंती संबंधों का प्रमुख मूल्य था, और ईसाई धर्म ने इस मूल्य को एक कठोर और पारस्परिक कर्त्तव्य बनाने में मदद की। ग्यारहवी शताब्दी सी ई से पूरे यूरोप में कुलीन दरबारों में जीवन को विनियमित करने वाली **शिष्टाचार** (chivalry) की संहिता[3] ने 'सच्चे विश्वास', समाज के कम शक्तिशाली सदस्यों के प्रति दया और दान-पुण्य, व्यक्तिगत संबंधों में सम्मान की सख्त भावना और ईसाई अधिकारियों द्वारा

[3] शिष्टाचार की संहिता या शिष्टाचार संहिता (Chivalry Code) एक अनौपचारिक आचार संहिता जिसे 1170 और 1220 के बीच विकसित किया गया था। लेकिन इसे किसी एक दस्तावेज में कभी व्यक्त नहीं किया गया था। यह संहिता मध्ययुगीन यूरोप में रोमन साम्राज्य के घुड़सवार सैनिक को आदर्श रूप देने के साथ पैदा हुई थी।

परिभाषित 'उचित' पर कायम रहने की निष्ठा और कर्त्तव्य परायणता की माँग की। मध्य युगीन यूरोप में चर्च के लोगों ने स्वयं को यूरोप के बर्बर सरदारों और उनके किसान योद्धा अनुयायियों को काबू में करने के लिए बधाई दी। और उनका कहना था कि उन्होंने इनके स्थान पर ईश्वरीय व्यवस्था और ईसाई शांति के साथ-साथ कृषि संबंधों की एक स्थिर व्यवस्था कायम की। यह भी मान्य तथ्य है कि ईसाई प्रतिष्ठान ने गरीबों और बीमारों की देखरेख के लिए अस्पताल और भिक्षा गृहों (शारीरिक रूप से अक्षम और बिना रिश्तेदारों वाले वृद्ध लोगों के लिए रहने के स्थान) और दान-पुण्य के अन्य रूपों के माध्यम देखभाल प्रदान की। दान-पुण्य पादरी और सामान्य जनों में समान रूप से एक केन्द्रीय ईसाई कर्त्तव्य के तौर पर व्यवहार में लाया जाता था।

7.3 ईसाईयों के गैर-ईसाईयों के साथ संबंध

मध्य युग के अन्त से पहले चर्च के प्रभुत्व के पैटर्न के अपवाद सिर्फ उत्तर पूर्वी यूरोप (स्कैंडिनेविया और बाल्टिक क्षेत्र के कुछ भाग) और आइबेरिया (स्पेन और पुर्तगाल) थे। लगभग (100 सी ई तक ईसाई धर्म की स्कैंडिनेविया और बाल्टिक यूरोप में, जहाँ जर्मन और पोलिश ईसाई योद्धाओं (knights) ने लगभग एक सदी तक 'उत्तरी धर्मयुद्ध'[4] का मंचन किया, बहुत ही कमजोर पकड़ थी। ईसाईकरण के प्रतिरोध का सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण – जिसे शायद ईसाईकरण के एक अलग भिन्न पैटर्न के रूप में वर्णित किया जा सकता है – 1492 तक आइबेरिया था। यहाँ, दमिश्क, बगदाद और मोरक्को (अफ्रीका) में स्थित बहुत से राज्यों पर शताब्दियों से उमय्यद अब्बासिद, अल्मोरविद और अल्मोहाद खलीफाओं के अधीनस्थ मुस्लिम राजाओं और अमीरों द्वारा शासन किया गया था। 'मूर्स' (स्पेनिशः *मोरोस*) 7वीं शताब्दी में उत्तरी अफ्रीका से आइबेरिया में चले गये, जहाँ वह उस स्थानीय आबादी के साथ घुलमिल गये जो उत्तर रोमन काल में आंशिक रूप से ईसाईकृत हो गई थी। अल-अंदलुस नामक क्षेत्र में, जिसमें कार्डोबा के अमीरात (बाद में खलीफा) शामिल थे। वहाँ ईसाई धर्म कानूनी रूप से इस्लाम और यहूदी धर्म के साथ सह-अस्तित्व में था। इस्लामी कानून में, यहूदी और ईसाई 'पुस्तक के लोग' हैं। मुसलमान यहूदी ओल्ड टेस्टामेंट और ईसाईयों की न्यू टेस्टामेंट को सत्य मानते हैं, लेकिन इन्हें अपूर्ण ईश्वरोक्ति (revelations) भी मानते हैं जो मार्ग पैगम्बर मुहम्मद तक ले जाता है। इसलिए वे यह मानते हैं कि यहूदियों और ईसाईयों को उस हद तक अपने स्वयं के सामुदायिक कानूनों का पालन करने की अनुमति दी जानी चाहिए जहाँ तक कि वे *शरीयत* (इस्लामिक कानूनों की व्यवस्था) या खलीफा जैसे इस्लामिक धार्मिक अधिकारियों के लिए उनमें कोई अपमानजनक तत्व नहीं हो। आइबेरिया के इस्लामिक राज्यों में गैर-मुसलमानों द्वारा *जज़िया* (विशेष कर) अदा किया गया। कॉर्डोबा शहर मूरिश स्पेन का रत्न (महत्वपूर्ण स्थान) था, जिसमें कई प्रभावशाली पुस्तकालय थे और जहाँ मुस्लिम, यहूदी और ईसाई विद्वानों के बीच नियमित रूप से विचारों का आदान-प्रदान होता था। जब कॉर्डोबा को 13वीं शताब्दी में ईसाईयों द्वारा पुनः जीत लिया गया, तो वहाँ की भव्य मस्जिद को अवर लेडी ऑफ द अज़म्पशन (Our Lady of the Assumption) के रूप में पुनः निर्मित कर गिरिजाघर के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। कॉर्डोबा मस्जिद-गिरिजाघर में उत्तरी अफ्रीका और मध्य पूर्व के साथ-साथ ईसाई प्रतीकों और रूपांकनों में पाये जाने वाले वास्तुशिल्प के प्रतीक और विशेष लक्षण शामिल हैं।

सिसली और अन्य भूमध्यसागरीय द्वीपों पर भी कुछ समय अरबों और अन्य मुस्लिमों के द्वारा शासन किया गया था, हालाँकि यहाँ की अधिकांश आबादी ईसाई बनी रही और उसने अपने

4 'उत्तरी धर्मयुद्ध' या 'बाल्टिक धर्मयुद्ध' कैथोलिक ईसाई सैन्य व्यवस्थाओं और राज्य द्वारा किये गये धार्मिक युद्ध थे, जो मुख्य रूप से बाल्टिक सागर के दक्षिणी और पूर्वी तटों के आसपास मूर्तिपूजक बाल्टिक , फिनीक और पश्चिम स्लाव लोगों के खिलाफ थे।

धर्म-विश्वासों का अनुसरण जारी रखा। जब नॉर्मन (स्कैंडिनेवियाई-फ्रांसीसी) दुस्साहसी लोगों ने 11वीं और 12वीं शताब्दी सी ई में सिसली पर विजय प्राप्त की, जैसे उन्होंने 1066 सी ई में इंग्लैंड पर विजय प्राप्त की थी, उन्होंने ईसाई यूरोप के अन्य भागों की तुलना में यहाँ पर इस्लाम को काफी हद तक सहन किया।

चित्र 7.6: कॉर्डोबा की मस्जिद
साभार: जेम्स (जिम) गॉर्डन
स्रोत: विकिमीड़िया कॉमन्स

चित्र 7.7: कॉर्डोबा की मस्जिद/गिरिजाघर
साभार: केरबेरोसमानसौर
स्रोत: विकिमीड़िया कॉमन्स

आइबेरिया के अतिरिक्त कुछ यूरोपीय राज्यों ने ईसाई अधिकारियों द्वारा लगाए गए प्रतिबन्धों और निगरानी के साथ यहूदी धर्म को सहन किया था। ईसाई धर्मशास्त्र के अनुसार यहूदी एक 'राष्ट्र' (gens) के रूप में ईसा मसीह के हत्यारे थे, और ईसाई शिक्षा यहूदियों के पूर्ण धर्मान्तरण को एक प्रमुख आध्यात्मिक लक्ष्य के रूप में मानती थी। फिर भी, इतालवी क्षेत्र के अपवाद के अतिरिक्त, जहाँ रोमन कानून यूरोप के अन्य हिस्सों की तुलना में अधिक गहराई से अपनी जड़ें जमाये हुए था, मध्यकालीन यूरोप की कानूनी प्रथाओं ने अधिकारिक ईसाई समाज के अन्तर्गत यहूदियों के स्वयं को शासित करने के सामूहिक या सामूदायिक अधिकारों को स्पष्ट रूप से मान्यता नहीं दी थी। इसके बजाए, यहूदियों को आमतौर पर राजा या रानी के विशेष व्यक्तिगत प्रजाजनों के रूप में कानून के तहत मान्यता दी जाती थी, और वे इस सुरक्षा और अनुग्रह को वापस ले सकते थे। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है कि *रिकॉनक्विस्टा* (*Reconquista*, कैथोलिक राजकुमारों द्वारा मूर राज्यों पर पुनर्विजय) तक आइबेरिया में यहूदियों ने सहनशीलता को महसूस किया। जब 1492 में इन राज्यों की पुनर्विजय पूर्ण हुई, तो यहूदियों के साथ-साथ मुसलमानों को भी ईसाई धर्म में धर्मान्तरण करना पड़ा या फिर इस क्षेत्र से निष्कासन का सामना करना पड़ा।

इस संस्थागत यहूदी विरोधी भावना के बावजूद, मध्ययुगीन यूरोप में, विशेषकर इटली और नीदरलैंड के कुछ भागों में, यहूदी-ईसाई संबंध हमेशा खराब नहीं थे। हालांकि इस अवधि के दौरान यूरोप में यहूदियों को आमतौर पर उच्च नागरिक प्रशासन के पदों से प्रतिबंधित कर दिया गया था, और उन्हें भूमि के स्वामित्व की अनुमति नहीं थी, लेकिन उनके धार्मिक नेताओं ने अधिकारियों और यहां तक कि ईसाई पादरी वर्ग के साथ धर्म, कानून और प्रशासन के मामलों में संवाद किया। *पृथक यहूदी बस्तियों* (*ghettos*; कस्बों में ईसाईयों को यहूदियों से अलग करने वाली चारदीवारी से घिरी बस्तियाँ), में रहते हुए भी यहूदी तब भी सांस्कृतिक और बौद्धिक रूप से ईसाई समाज से अलग नहीं थे। यहूदी ऐसी भाषाएं प्रयोग करते थे जो हिब्रू और यूरोप की स्थानीय देशी भाषाओं का मिश्रण थीं। *लाड़िनो*, या जुडियो-स्पेनिश, इन मिश्रित भाषाओं में से एक है जो सदियों से भूमध्यसागरीय क्षेत्र में इस्तेमाल की जाती रही थी। अधिकतर यहूदी, चाहे वे स्पेन, यूनान और जर्मन राज्यों में निवास करते थे, बहुभाषी थे। सुशिक्षित यहूदी न केवल हिब्रू में बल्कि लैटिन में भी कुशल थे और रोमन कानून के विद्वान भी थे। यूरोप के यहूदी, ईसाई रीति-रिवाजों और सामाजिक मानदडों के बारे में अच्छी तरह

से जानते थे भले ही उन्हें बहुसंख्यक समुदाय द्वारा कलंकित किया गया हो।

बोध प्रश्न-1

1) ईसाई संतगण की संस्था ने मूर्तिपूजक से ईसाई यूरोप में संक्रमण में कैसे सहायता की?

....

....

....

....

....

2) संक्षेप में वर्णन कीजिए कि वे कौन से तौर-तरीके थे जिनके द्वारा मध्ययुगीन चर्च ने ईसाई नियमों और मूल्यों के प्रति जनसमुदाय की आज्ञाकारिता को सुनिश्चित किया?

....

....

....

....

....

3) मध्ययुगीन यूरोप के कुछ भागों में ईसाईयों और गैर-ईसाईयों के बीच सम्बन्धों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

....

....

....

....

....

7.4 पादरी वर्ग, नैतिक निर्देश और औपचारिक शिक्षा

'प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार' (Protestant Reformation) (और अधिक जानकारी के लिए देखें **इकाई 3; बी एच आई सी-108**), 16वीं और 17वीं शताब्दी में पोप की संस्था के विरूद्ध आंदोलन, से पहले सभी लोग जो धार्मिक वर्ग (पादरी, पुरोहित) के थे, पोप द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से नियुक्त किये गये थे और पादरियों को अधिकारिक चर्च संगठनों में संगठित किया गया था। रुढ़िवादी ईसाई क्षेत्रों में धार्मिक पदाधिकारी इसी प्रकार कॉन्सटेंटिनोपल में पितृ सत्तावादी धार्मिक प्रधान (पेट्रियार्क) की अध्यक्षता वाली कमान की श्रृखंला का हिस्सा थे। जॉन ऑफ सेलिसबरी (?1115-1180), जिन्हें एक राजनैतिक सिद्धान्तकार कहा जा सकता है, ने समाज के पुरुषों और महिलाओं को तीन 'वर्गों' (orders) में विभाजित किया: वे जो *प्रार्थना* करते थे, जो *युद्ध* करते थे और जो *काम* करते थे (श्रमिक)। अधिकांश श्रमिक भूमि-कृषक थे जो मध्ययुग के दौरान विभिन्न यूरोपीय क्षेत्रों की आबादी का 70-90% हिस्सा थे। कुलीन वर्ग, जिसकी भूमिका राजा के लिए लड़ाइयाँ लड़ना और समाज के बाकी लोगों की रक्षा करना था, संख्यात्मक रूप से समाज का सबसे छोटा वर्ग था, जिसकी आबादी अधिकांश मध्यकालीन यूरोपीय राज्यों में कभी भी एक प्रतिशत से अधिक नहीं थी। जॉन ऑफ सेलिसबरी द्वारा उल्लिखित **समाज के तीन वर्गों** में से पहला वर्ग जो प्रार्थना करता था,

निश्चित रूप से पादरियों का था। कुछ यूरोपीय राज्यों में दस से पन्द्रह प्रतिशत पादरी थे, या चर्च संगठनों में काम करने वाले सामान्य जन थे (जिन्हें पादरी वर्ग के सहायकों के रूप में देखा जाता था)। शाही परिषदों और अन्य निकायों में जहाँ औपचारिक राजनैतिक विचार-विमर्श या बातचीत होती थी, उनमें राज्य के हितों को आमतौर पर इन तीन वर्गों के संदर्भ में दर्शाया जाता था। समाज के तीनों वर्गों के पास शासक से संबंध के संदर्भ में और एक दूसरे से संबंध के संदर्भ में सामूहिक रूप से विशेषाधिकारों और स्वतन्त्रताओं के अलग-अलग समुच्य थे। यह संबंध हितों के संतुलन के बारे में थे, न कि अधिकारों की समानता के बारे में, क्योंकि समाज के वर्गों की कल्पना एक-दूसरे से समानता की बजाय एक-दूसरे के पूरक के रूप में की गई थी। कुल मिलाकर पादरियों द्वारा 'आत्माओं की देख-रेख' की जिम्मेदारी शरीरों की जिम्मेदारी तक भी विस्तृत थी। जबकि ईसाई धर्मशास्त्रों ने इस बात पर ज़ोर दिया कि दुःख-दर्द, पीड़ा और दरिद्रता मानव जीवन की अपरिहार्य परिस्थितियाँ थीं और यह ईश्वरीय कृपा से मानव जाति के पतन की याद दिलाती थीं (जब ईडन के बाग में आदम् और हौव्वा ने ईश्वर के दिखाए सुरक्षात्मक प्रेम का पालन नही किया था), वहीं चर्च दान-पुण्य और करूणा का भी पक्षधर बन गया था। इसलिए, पूरे मध्ययुगीन यूरोप में चर्च सामाजिक देखभाल की सेवाओं के वितरण का मुख्य समष्टीमूलक संस्थागत माध्यम था।

पादरी वर्ग को सामूहिक रूप से समाज के सदस्यों की आध्यात्मिक मुक्ति का उत्तरदायित्व सौपा गया था। पादरी, पुरोहितों और बिशपों द्वारा लोगों को, वे चाहे किसान और कारीगर हों, व्यापारी या ड्यूक और राजा, पवित्र धर्मग्रन्थों का उपदेश दिया और प्रचार किया और उन्होंने पवित्र संस्कार, चर्च की जन प्रार्थनाएं और अन्य अनुष्ठान संपादित किये। भिक्षु और भिक्षुणी ऐसे पादरी थे जिन्होंने एक विशेष *रेगुला* (*regula*; 'नियम' अनुशासन की नियमावली) के तहत अपना जीवन व्यतीत करने की सौगंध ली थी जैसे कि सेन्ट ग्रेगरी, सेन्ट फ्रांसिस, सेन्ट डोमिनिक या सेन्ट बेनेडिक्ट। हालाँकि भिक्षुओं और भिक्षुणियों को अनेक किसानों और मजदूरों की तुलना में बेहतर भोजन, कपड़े और आवास प्राप्त थे, फिर भी उन्होंने वैराग्य, और सादगी ('गरीबी, पवित्रता और संयम तथा आज्ञाकारिता') की प्रतिज्ञा ली थी, ताकि वे ईश्वर पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सकें। ईश्वर की भक्ति का अर्थ था ईसाई शिक्षाओं का प्रचार या संरक्षण करना, इसलिए लोगों के बीच ईसाई सिद्धान्त (Gospel) फैलाने वाले रोमन कैथोलिक भिक्षु, फ्रायर्स (friars) की श्रेणियों के अलावा भिक्षु और भिक्षुणियों के समुदायों ने विशिष्ट लिपियों के पुस्तकालयों (या स्क्रिप्टोरिया) का रख-रखाव भी किया। मठवासी लिपिकों ने पांडुलिपियों की प्रतियाँ भी बनाईं, उनमें से कुछ का समयकाल ग्रीक और रोमन समय का था, ताकि दुनिया और मानव समाज के लिए सही ज्ञान संरक्षित रह सके। परिभाषा के अनुसार, पादरी यूरोप का साक्षर वर्ग था – 'क्लर्क' शब्द क्लेरिक (पादरियों) का एक वैकल्पिक रूप है – एक ऐसी अवधि के दौरान जब छोटे दर्जे के कुलीन वर्ग के सदस्यों के बीच साक्षरता असामान्य थी पादरियों की शिक्षा की सीमा या परिमाण व्यापक रूप से विविधतापूर्ण थी, जिसमें न्यूनतम साक्षर ग्रामीण पादरियों से लेकर, जो बाइबिल को पढ़ सकते थे और लैटिन में प्रार्थना कर सकते थे, उच्च शिक्षा प्राप्त विद्वान शिक्षक और शोधकर्त्ता शामिल थे जिनको लैटिन और ग्रीक का गहरा ज्ञान था। कुछ पादरी और चर्च-शिक्षित विद्वान, जैसे रोजर बेकन, डन्स स्कॉटस और थॉमस एक्विनास हिब्रू, अरबी या दोनों भी पढ़ सकते थे।

मध्ययुगीन यूरोप में औपचारिक शिक्षा के अधिकांश संस्थान पादरी वर्ग द्वारा संचाालित किये गये और इसमें गाँव से जुड़े चर्च के स्कूलों (बच्चों के लिए) से लेकर गिरिजाघरों के स्कूल से ग्याहरवीं सदी के अन्त में बोलोग्ना, पेरिस, ऑक्सफोर्ड, केम्ब्रिज, वैलेडॉइड तथा अन्य स्थानों के विश्वविद्यालय शामिल थे। एक विश्वविद्यालय शुरू में 'मास्टर्स और विद्वानों' का स्वयं संस्थापित संघ (*यूनिवर्सिटास*) था। कई विश्वविद्यालय ऐसे निगमों में विकसित हुए

जिन्हें पोप की संस्था या नागरिक शासकों से चार्टर या लाइसेंस प्राप्त हुए थे। विश्वविद्यालयों ने दर्शनशास्त्र पढ़ाया (जिसके केन्द्रीय विषय के रूप में *ट्रिवियम* – व्याकरण, तर्क और अलंकार शास्त्र थे), गणित, खगोल, विज्ञान और संगीत, साथ ही कुछ प्राकृतिक विज्ञान और धर्मशास्त्र और कानून जैसे व्यवसायिक विषय (और, कुछ स्थानों में, चिकित्सा) पढ़ाये गये। इन संस्थानों में शिक्षा का अधिकारिक माध्यम लैटिन और कुछ हद तक ग्रीक भाषा थी; और लंबे समय तक अधिकांश निर्देशात्मक ग्रन्थ केवल लैटिन में प्रसारित किये गये थे। लैटिन के बिना – या रूढ़िवादी ईसाई क्षेत्र में, ग्रीक भाषा का ज्ञान ना होना – अशिक्षित समझा जाता था। उच्चतम विश्वविद्यालय की डिग्री, डॉक्टरेट, धर्मशास्त्र और कानून में प्रदान की जाती थी, लेकिन कानून में चर्च के कानून (canon) के साथ-साथ नागरिक कानून भी शामिल था। यहाँ तक कि चिकित्सा के डॉक्टर भी मानव शरीर के बारे में और आत्मा से शरीर के संबंध के बारे में चर्च की शिक्षाओं का सम्मान करते थे। मध्ययुगीन विश्वविद्यालयों में जिन ग्रन्थों का अध्ययन कराया जाता था, उनमें से ऐसे अनेक स्वीकृत ग्रन्थों को पादरियों द्वारा लिखा गया था। यह वे लोग थे जिन्होंने पहली और आठवीं शताब्दी के बीच ईसाई धर्मशास्त्र और चर्च के व्यवहारों को संहिताबद्ध करने में मदद की थी।

चर्च का ज्ञान, जैसा कि हमने पूर्व इकाई में देखा है, प्राचीन काल के ग्रीक और रोमन विचारकों और लेखकों जैसे अरस्तु और प्लेटो से काफी प्रभावित था। प्राचीन रोमन लेखकों में, वर्जिल और सिसरो का विशेष रूप से अध्ययन किया जाता था और मध्ययुगीन लेखन में उनकी परिष्कृत लैटिन शैली के लिए सराहना भी की गई थी। इन अनुमोदित प्राचीन लेखकों (चाहे ईसाई या मूर्तिपूजक) के दावों और विचारों को खारिज करने या उनका खंडन करने का साहस बहुत कम मध्यकालीन विद्वानों ने दिखाया। मध्ययुगीन दार्शनिक थॉमस एक्विनास (1225-1274), जिन्हें कैथोलिक चर्च द्वारा एक सन्त के रूप में स्थापित (घोषित) किया गया था, उन्होंने अरस्तु और प्लेटो दोनों के कार्यों पर टिप्पणियाँ लिखीं और एक ईसाई दार्शनिक परंपरा के निर्माण में, जिसे स्कोलास्टीसिज्म (Scholasticism) के नाम से जाना गया, अरस्तु और प्लेटो के दार्शनिक विचारों से काफी कुछ ग्रहण किया। उत्तर मध्यकाल के युग के तुरंत बाद कुछ दार्शनिकों ने यह तर्क दिया कि एक्विनास और अन्य मध्यकालीन दार्शनिकों की अरस्तु पर निर्भरता मानसिक गुलामी थी। फ्रांसिस बेकन (1561-1626) और यूरोप में 'वैज्ञानिक क्रांति' से जुड़े कुछ अन्य विद्वानों के अनुसार क्लासिकल विचार के प्रति मध्ययुगीन श्रृद्धा ने यूरोपीय लोगों को विशेष रूप से विज्ञान में आगे बढ़ने और नव परिवर्तन लाने से रोका था।

गिरिजाघरों के स्कूलों और विश्वविद्यालयों के लगभग सभी सदस्य जिनमें वह भी शामिल थे जो विश्वविद्यालय में रहकर मास्टर बने (जो छात्रों को पढ़ाते थे और भाषण देते थे), प्राध्यापक, डीन और रेक्टर या विधिपूर्वक (ordained) नियुक्त पादरी थे या सामान्य जन जो चर्च और राज्य की बढ़ती हुई नौकरशाहियों में रोजगार प्राप्त करना चाहते थे। राजकुमारों और राजाओं ने अपने उच्च न्यायालयों, अभिलेखागारों और राज्य के कार्यालयों में पादरियों या पादरियों द्वारा प्रशिक्षित लोगों को भर्ती किया; पादरी वर्ग नागरिक प्रशासन के साथ-साथ धार्मिक प्रशासन के लिए आवश्यक थे। विभिन्न सामाजिक वर्गों (यहाँ तक कि किसान वर्ग के भी) के लड़के कभी-कभी चौदह या पन्द्रह साल की उम्र में विश्वविद्यालयों में प्रवेश करते थे, लेकिन आमतौर पर अठारह या उन्नीस साल की आयु में। जिन्होंने *मेजिस्टर आरटीयम* (*Magister Artium*; एम.ए.) की डिग्री पूरी कर लेते थे, उनके पास अन्य लोगों को किसी अन्य विश्वविद्यालयों में पढ़ाने की अनुमति मिल जाती थी। शैक्षणिक प्रमाणपत्रों की मान्यता के संदर्भ में, मध्यकालीन यूरोपीय विश्वविद्यालय अन्तर्राष्ट्रीय और विश्ववादी थे। 'ज्ञान के प्रेमियों' के लिए एक विश्वविद्यालय से दूसरे में, यहाँ तक कि प्रदेशों से परे भी, प्रवासन करना आम बात थी।

एक दूसरा बिन्दु यह है कि लड़कियों और महिलाओं को यूरोपीय औपचारिक उच्च शिक्षा से काफी हद तक बाहर रखा गया था। सत्रहवीं शताब्दी तक यूरोप के विश्वविद्यालयों में महिला विद्वानों का कोई रिकॉर्ड नहीं है। मध्ययुगीन यूरोप में 'शिक्षित' महिलाएँ, इसलिए आमतौर पर कुलीन वर्ग की सदस्य थीं जिनको निजी ट्यूशन का लाभ प्राप्त हुआ था और जो कभी-कभी बहुत विदुषी होती थीं और पुरुष विद्वानों के साथ मौखिक या लिखित बहस करती थीं। क्रिस्टीन डी पिजान (1364 से लगभग 1430), फ्रांस के राजा के एक इतालवी ज्योतिषी की बेटी, एक ऐसी महिला थीं। ऐसे ही अन्ना कोमनेन (1083-1153 बाइजेन्टाइन सम्राट एलेक्सियोस प्रथम कोमनेनोस की पुत्री) थीं, जिनकी अपने समय में एक चिकित्सक और इतिहासकार के रूप में साख थी। अन्य शिक्षित यूरोपीय महिलाएँ भिक्षुणियाँ (nuns) और महन्तिन (abbesses; मठों और भिक्षु-ग्रहों की महिला अध्यक्ष) थीं। उदाहरण के लिए, हिल्डेगार्ड ऑफ बिंगेन की महन्तिन (1098-1179) को उसके अधीन भिक्षुणियों ने *मैजिस्ट्रा* घोषित किया था। उन्होंने धर्मशास्त्र और चिकित्सा विज्ञान में योगदान दिया। उनकी उनहत्तर संगीतमय कविताओं का एक संग्रह चक्र, *ओरडो विरटूटम* (*Ordo Virtutum*), मध्यकालीन यूरोपीय संगीत का एक महत्वपूर्ण जीवंत उदाहरण है। हेराड़ ऑफ लैंडसबर्ग (लगभग 1130-1195) भी एक महन्तिन थीं और उन्होंने *हॉरटस डैलिसीआरम* (*Hortus deliciarm;* 'गार्डन ऑफ अर्थली डिलाइट्स') शीर्षक से एक सचित्र विश्वकोष (उपयोगी ज्ञान का संग्रह) का लेखन किया। गौरतलब है कि हिल्डेगार्ड और हेराड दोनों ही कुलीन वर्ग में पैदा हुई थीं। अगर वे भिक्षुणियाँ और 'ईसा मसीह की आध्यात्मिक वधुएँ' बनने के बजाय कुलीन वर्ग में पत्नियां या माताएँ बनी होतीं तो यह संदेहास्पद है कि इन महिलाओं को विद्वान बनने और ज्ञान के उत्पादन में योगदान करने की अनुमति मिली होती।

7.5 मध्यकालीन पादरियों और चर्च की सामाजिक शिक्षाओं की आलोचना

इस इकाई में मध्ययुगीन यूरोप में चर्च की सामाजिक और सांस्कृतिक शक्ति पर जोर दिया गया है, लेकिन यह जानना महत्वपूर्ण है कि ईसाई पादरी वर्ग की सत्ता पर *वाद-विवाद* हुआ और *यह वार्तालाप* के द्वारा निर्मित हुई। एक समाज की संस्कृति प्रमुख लोगों और उसकी संस्थाओं द्वारा उस संस्कृति को जैसा प्रस्तुत किया जाता है, उस तरह की आदर्श दर्पण छवि नहीं होती है। बल्कि, संस्कृति प्रभावशाली और अधीनस्थ सामाजिक समूहों के मूल्यों में एक दरार या विकृत दर्पण की तरह होती है। दोनों, अभिजात्य और जनसामान्य यूरोपीय लोगों द्वारा पादरी वर्ग की आलोचना मध्यकालीन यूरोपीय संस्कृति का एक सुस्पष्ट भाग था। यह इतालवी जियोवन्नी बोकासियो (Giovanni Boccaccio) द्वारा रचित व्यंगपूर्ण कहानियों (विशेषकर *द डिकेमरॉन*) और इंग्लैडवासी जियोफ्रे चौसर (Geoffrey Chaucer) द्वारा लिखित *द कैन्टरबरी टेल्स*, विश्वविद्यालय के छात्रों के गीतों और घुमक्कड़ विद्वानों और लोक-गायकों की कविताओं में देखा जा सकता है। मध्ययुगीन काल से उत्तरजीवी गीतों और कविताओं का एक महत्वपूर्ण संग्रह चक्र, *कार्मिना बुराना* (*Carmina Burana*; बेनेडिक्टब्यूर्न, एक जर्मन मठ, के गीत), यूरोपीय पादरी वर्ग और जन सामान्य लोगों के बीच पादरी वर्ग के मूल्यों के इर्द-गिर्द तनावों और उनके जटिल संबंधों को प्रकट करता है। लोकगीत और कथाएँ लालची या आलसी पादरियों के बारे में मध्यकालीन लोकप्रिय (कृषक) मान्यताओं को व्यक्त करती हैं।

गोलियार्ड कवियों के दृश्यरूप (12वीं-14वीं शताब्दी सी ई)

गोलियार्डस गिरिजाघर के स्कूलों और विश्वविद्यालयों के छात्र थे, जो पुजारी बनने या उच्चतर पादरी कार्यालय में कार्य पाने की (या उनके परिवारों की अपेक्षा थी) उम्मीद करते थे। लेकिन उनके पास अक्सर प्रेरणा की कमी थी या वह वास्तविक पादरी बनने के लिए

सम्मान खो चुके थे। *गोलियार्डों* ने पादरी वर्ग का मजाक उड़ाया और जितना संभव हो सका उतना अपवित्र होने की कोशिश की; उनके गाने, खान-पान और जुआ खेलने इत्यादि पर केन्द्रित थे।

उनमें जो लोग पादरियों के सहायक और प्रशिक्षु बन गये, उन्होंने छद्म ईसाई समारोहों का आयोजन किया और 'मूर्खों के भोजों' (feasts of fools) का संचालन किया। तेहरवीं शताब्दी में पेरिस विश्वविद्यालय के रेक्टर उन अधिकारियों में से थे जिन्होंने *गोलियार्ड्स* का व्यवहार खतरनाक और विध्वंसकारी पाया।

गोलियार्ड्स का निंदनीय व्यवहार और मजाक उड़ाने वाली किसानों की लोकोक्तियाँ ज्यादातर आमोदजनक थीं और शायद उन्होंने चर्च की शक्ति के लिए कभी भी गंभीर खतरा उत्पन्न नहीं किया।

जॉन हस, जॉन वाइक्लिफ और अन्य लोगों ने 14वीं और 15वीं शताब्दियों के दौरान पादरियों की पवित्र शक्ति और पोप की सत्ता पर संदेह व्यक्त किये, और इनमें से कुछ आलोचकों ने चर्च के खिलाफ विद्रोहों को संगठित किया, लेकिन हर घोषित हस्साइट या वाइक्लिफाइट के बदले हजारों ऐसे ईसाई थे जो पादरी वर्ग और उनकी भूमिकाओं के प्रति सम्मान रखते थे। यह लोग कुछ 'बुरे' पादरियों के बावजूद पादरी वर्ग की भूमिका को कम नहीं आँकते थे।

इतिहासकार अभी भी इस बात से असहमत हैं कि मार्टिन लूथर द्वारा प्रारंभ की गई चर्च संस्थान के 'अनुचित व्यवहार' की आलोचना (1517-1521) जिसने प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार की उथल-पुथल को जन्म दिया, जो यूरोप के कई भागों में गृहयुद्ध के रूप भड़का, उसका मध्ययुगीन पादरीवाद विरोधी विचारों के साथ कोई संबंध था। इतिहासकार प्रश्न चिन्ह लगाते हैं कि क्या मध्ययुगीन शताब्दियों (लगभग 1300-1600) के अंत के दौरान पादरी वर्ग के विरूद्ध भावना वास्तव में बढ़ रही थी और क्या पादरी वर्ग के खिलाफ विरोध 'समाज की श्रेणियों' के अन्तर्गत संरचनात्मक परिवर्तनों को प्रकट करता है जो शहरों में एक नये प्रकार के 'पैसे वाले' *बुर्जुआ* वर्ग (*bourgeoisie*) के उद्भव से संबंधित था।

स्पष्ट रूप से मध्ययुगीन यूरोप में 'बौद्धिक' गतिविधि वास्तव में चर्च का एकाधिकार नहीं थी। 1300 से 1600 के बीच पुनर्जागरण (इतालवीः *रेनासिमेन्टो* [*Renascimento*]; 'पुनर्जन्म') के रूप में जानी जाने वाली सांस्कृतिक घटना की कई इतिहासकारों ने चर्च की शिक्षाओं और मूल्यों से मानसिक मुक्ति के आन्दोलन के रूप में व्याख्या की है। माना जाता है कि यह एक नया मानव केन्द्रित दृष्टिकोण था, हालाँकि कई पुनर्जागरण काल के मानवतावादियों ने चर्च के प्रति अपनी पवित्र आस्था और सम्मान दिखाने में कसर नहीं छोड़ी। कुछ मानवतावादी स्वयं चर्च से संबंधित थे या उन्हें चर्च द्वारा संरक्षण दिया गया था। पुनर्जागरण काल की एक पुस्तक, जियोवन्नी विलानी की *फ्लोरेन्टाइन क्रॉनिकल* (*Florentine Chronicle*; चौदहवीं शताब्दी में लिखी गई), यह इंगित करती है कि फ्लोरन्स (इटली) में 1330 के दशक में प्राथमिक स्कूलों में पढ़ने वाले 35 से 40% बच्चे लड़के थे और इनमें से अधिकांश शिक्षा पादरी वर्ग के प्रत्यक्ष प्रशासन से बाहर थी। छात्र ज्यादातर लड़के और नवयुवक थे जो कम्पनियों और बैंकों के लेखानुभागों में कार्यरत हुए, जिन्होंने व्यवसायिक पत्रों की प्रतियां लिखीं या बनाईं और जिन्होंने नगरपालिका सरकार के साथ-साथ चर्च प्रशासन में भी 'लिपिक' के रूप में काम किया।

उत्तर मध्ययुगीन शताब्दियों में यूरोपीय समाज और संस्कृति में एक और उल्लेखनीय परिवर्तन लेसाइज़ेशन (laicization) से संबंधित था जिसका अर्थ है वह प्रक्रिया जिसके द्वारा धार्मिक अधिकारियों के द्वारा किये गये कार्यों को गैर-धार्मिक (सामान्य) जनों को हस्तान्तरित किया जाता था। ईसाई धर्म की प्राथमिक शताब्दियों से ही चर्च ने अपने प्रशासन और

अनुरक्षण में सामान्य जन को कुछ भूमिकाएँ निभाने की (जैसे संपत्ति प्रबन्धन करने की) अनुमति दी। चर्च द्वारा निर्देशित गतिविधियों में उन्होंने सामान्यजनों को संलग्न करके इसके द्वारा आम ईसाईयों में धार्मिक विश्वास को प्रोत्साहित किया। और मध्यकालीन शताब्दियों में चर्च ने कुछ सामाजिक कल्याणकारियों को सामान्य ईसाई जनों के साथ साझा किया। जर्मनी में कोल्न (कोलोन), 1500 में लगभग 30,000 निवासियों का एक धार्मिक केन्द्र था जिसमें 19 चर्च, 100 छोटे गिरिजाघर (चैपल), 22 मठ और 12 धार्मिक छात्रावास थे। इस समय कोलनट (Kolnat) में तीन से चार हजार पादरी थे, लेकिन यहाँ तक कि 'धार्मिक' संस्थान जैसे कि हॉस्टल, अस्पताल, तीर्थस्थल, आदि भ्रातासंघ (brotherhoods) और भगिनीसंघ (sisterhoods) जैसी संस्थाओं द्वारा चलाये जा रहे थे, जिनके संचालन में सामान्य जन की भागीदारी थी। कुछ इतिहासकारों ने तर्क दिया है कि समस्त यूरोप में विभिन्न सामाजिक कल्याण संस्थाओं में सामान्य जनों की अधिकाधिक भागीदारी से आवश्यक रूप से यह साबित नहीं होता कि सामाजिक कल्याण गतिविधियों को धर्मनिरपेक्ष बनाया जा रहा था (secularized) या गैर-चर्च तत्वों द्वारा अधिग्रहित किया जा रहा था। इसके बजाय, यह तर्क दिया जाता है कि संस्थाओं में धर्मनिरपेक्षीकरण (लेसाइज़ेशन; laicization) से यह पता चलता है कि ईसाई सामाजिक उत्तरदायित्व (दान-पुण्य, बीमारों की देखभाल आदि) की भावना अधिक से अधिक ईसाई समाज में हर किसी के सरोकार के रूप में देखी जा रही थी। अन्त में, मध्यकालीन यूरोपीय संस्कृति को समझना उन तरीकों को समझे बिना असंभव है कि ईसाई धर्म ने किस प्रकार मध्यकालीन लोगों के दृष्टिकोण का गठन किया और कैसे लोगों ने (चाहे पादरी वर्ग के हों या सामान्य जन) चर्च के साथ अपने संबंध बनाये रखे।

बोध प्रश्न-2

1) मध्यकालीन समाज में ईसाई पादरी वर्ग के कार्यों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

2) मध्ययुगीन यूरोप में महिलाओं को किस प्रकार से औपचारिक ज्ञान ('उच्च शिक्षा') के सृजन में भाग लेने से बाहर रखा गया और किन तरीकों से उनकी इसमें भागीदारी थी?

....

....

....

....

....

3) प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार से पूर्व मध्ययुगीन यूरोप में पादरीवाद विरोधी अभियानों का उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

4) मध्यकालीन यूरोप में ईसाई धर्म के लेसाइज़ेशन (laicization) का अर्थ था पादरी वर्ग और सामान्य जनों के मध्य सम्बन्धों में और उनके द्वारा निभाई गई सामाजिक भूमिकाओं में कुछ समायोजन। मध्ययुगीन यूरोप के सदंर्भ में इन बदलते सम्बन्धों की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

7.6 सारांश

प्राचीन रोमन काल के अन्त में चर्च की संस्थागत शक्ति ईसाईकरण की प्रक्रिया के साथ पूरे यूरोपीय क्षेत्रों में फैल गई। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं था कि व्यवहार में 'नागरिक सत्ता' 'आध्यात्मिक सत्ता' के अधीनस्थ थी। न ही चर्च ने मूर्तिपूजक समाजों पर ईसाई मूल्यों को लादा। मूर्तिपूजक यूरोप की पूजा शैलियों और आदतों को ईसाई व्यवहार में अपनाया गया था, हालांकि उन्हें ईसाई धर्मशास्त्र (धर्म के औपचारिक सिद्धान्त) में इतना अधिक नहीं अपनाया गया था। विधर्मियों के मुकदमे और धर्मयुद्ध चर्च द्वारा उठाए गए दंडात्मक उपायों में शामिल थे जिन्होंने यूरोपीय सामाजिक व्यवहार को प्रभावित किया, जबकि अवकाश दिवस और त्यौहारों का पालन, पवित्र धार्मिक स्थलों का रखरखाव, 'पुरोहिताई संबंधी देखरेख' (pastoral care) की संस्थाएँ और औपचारिक शिक्षा प्रणाली ईसाईकरण के अधिक रचनात्मक माध्यम थे। यूरोप में 'एक धर्म में विश्वास के समाज' की नीति गैर-ईसाई तत्वों को पूरी तरह से हाशिए पर नहीं डाल सकती थी, हालाँकि स्पेनिश कैथोलिक *रिकॉनक्विस्टा* (*Reconquista*) के उदाहरण से यह स्पष्ट है कि जिन गैर-ईसाइयों ने धर्मान्तरण से इन्कार किया, उन्हें कैसे निष्काषित किया जा सकता था या उन्हें लगभग नष्ट किया जा सकता था। चर्च मध्य युग के पश्चात् राजतन्त्र के साथ कई शताब्दियों तक यूरोपीय 'सामन्ती' व्यवस्था का एक आधार स्तम्भ था। ईसाई धर्म यूरोपीय संस्कृति के क्षेत्र में, चाहे वह कुलीन वर्ग की थी या सामान्य जन की, सर्वव्यापी था।

7.7 शब्दावली

पादरी वर्ग/पादरी/चर्च Clergy/clerics/Church : पादरी वर्ग एक धार्मिक संगठन या सम्प्रदाय द्वारा धार्मिक कर्त्तव्यों के लिए औपचारिक रूप से स्वीकार किये गए लोग थे। रोमन कैथोलिक और कुछ अन्य ईसाई सम्प्रदायों में पादरियों को विधिपूर्वक नियुक्त (ordained) किया जाता है; पादरी के रूप में चुने गए लोग उच्च पादरी (उदाहरण के लिए, बिशप या महानगरीय बिशप) द्वारा एक अनुष्ठान के माध्यम से दीक्षित किए जाते हैं और इससे वह पवित्र संस्कार

(sacrament / अनुष्ठान) करने के लिए अधिकृत हो जाते हैं। चर्च (Church) एक धार्मिक इमारत को नहीं बल्कि पूरे संस्थागत रूप को या ईसाई धर्म – इसके कर्मियों, कानूनों, नियमों, प्रशासन, धर्मशास्त्र, संपत्ति इत्यादि – को स्थापित करने को संदर्भित करती है।

शिष्टता
Chivalry
: घुड़सवार योद्धा के लिए एक मध्ययुगीन फ्रांसीसी शब्द से व्युत्पन्न और एक घुड़सवार सैनिक (knight) के ओहदे, दायित्व अथवा शुल्क को उल्लेखित करते हुए, और विस्तार द्वारा उनसे जुड़े लोगों के प्रति ऐसे व्यक्ति के आचरण की अपेक्षा को उल्लेखित करता है। इसके सद्गुणों में सैन्य गुणों (knightly, virtues) के साथ सम्मान, आज्ञाकारिता, श्रद्धा और प्रेम जैसे शिष्टता के प्रमुख मूल्य थे।

ईसाईकरण
Christianization
: ईसाईकरण इसको सदर्भित करता है कि लोग कैसे ईसाई शिक्षाओं को स्वीकार करते हैं और अधिकारिक रूप से पूजा के स्वीकृत रूपों को स्वीकार करते हैं और इसका अर्थ उन विस्तृत प्रक्रियाओं से भी हैं जिनके द्वारा धर्म सामाजिक व्यवहारों और सांस्कृतिक रूपों को प्रभावित करता है।

सामंती / सामंतवाद
Feudal/feudalism
: सामंती ('Feudal') मध्यकालीन लैटिन शब्द *फियोडम* (*feodum*) से है व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ केवल भू-संपत्ति से है और सामंतवाद यूरोप में संपत्ति और भू-नियन्त्रण के एक सामान्य प्रथागत रूप को संदर्भित करता है। सामंती व्यवस्था के तीन प्रमुख तत्व भू-स्वामी (lord), मातहत (vassal) और *फ़ीफ़* (fief; भूमि का एक भूखंड) थे। भूस्वामी एक कुलीन व्यक्ति था, जिसके पास भूमि थी; एक मातहत वसाल ऐसा व्यक्ति था जिसे भू-स्वामी द्वारा भूमि का अनुदान प्राप्त था। फ़ीफ़ के उपयोग और भू-स्वामी की सुरक्षा के बदले में मातहत वसाल भू-स्वामी को कुछ प्रकार की सेवायें प्रदान करता था, जैसे श्रम। फ़ीफ़ के सम्बन्ध में भू-स्वामी और मातहत वसाल के बीच के दायित्व और उनके समरूपी अधिकार सामंतीय सम्बन्ध का आधार हैं।

गोलियार्ड
Goliard
: मूल रूप से बाहरवीं और तेहरवीं शताब्दियों के दौरान व्यंग्यात्मक लैटिन कविता लिखने वाले पादरी वर्ग के एक सदस्य का संदर्भ; यह बाद में एक घुमक्कड़ कवि के अर्थ में लिया गया था, जरूरी नहीं कि वह एक पादरी हो। *गोलियार्ड* नाम बाइबिल के महाकाय गोलियाथ से संबंधित हो सकता है, जिसको शूरवीर राजा डेविड द्वारा मारा गया, या

यह फ्रांसीसी शब्द *गेलियार्ड* ('खुशमिजाज या विनोदी व्यक्ति') का विकृत रूप हो सकता है। पोप इन्नोसेन्ट द्वितीय को लिखे गए एक पत्र में, फ्रांसीसी मठाधीश बर्नाड ऑफ क्लेअरवॉक्स ने पेरिस के विवादास्पद विद्वान पियरे एबेलॉर्ड का उल्लेख किया, जिसकी एक विधर्मी *गोलियाथ* के रूप में निन्दा की गई थी। इन सभी संदभों से पता चलता है कि, चर्च के संबंध में, *गोलियार्ड* का मतलब किसी राक्षसी प्रकृति वाले अनुशासनहीन और विधर्मी व्यक्ति से था।

जनसाधारण (Laity) : वे लोग जो चर्च को पूजा करने और उसका अनुसरण करने के रूप में मान्यता देते हैं, लेकिन पेशे से वे चर्च के सदस्य नहीं होते हैं। उन्हे दीक्षित नहीं किया जाता है और उन्हें पवित्र संस्कार (sacrament) कराने का कोई धार्मिक अधिकार नहीं होता।

समाज के वर्ग/वर्गों का समाज Orders of society/ society of orders : सामाजिक संगठन का एक प्रतिरूप जिसमें समाज के प्रत्येक सदस्य को एक समूह के साथ पहचाना जाता है जो समाज की रचना करता है और इस समूह ('वर्ग') को कानून और/या राजनैतिक प्रतिनिधित्व व्यवस्था में मान्यता प्राप्त है। 'वर्ग' (कभी-कभी इसे 'एस्टेट' (estate) भी कहा जाता है) की पहचान आमतौर पर इसके सामाजिक और व्यवसायी कार्यों से होती है। जॉन ऑफ सेलिसबरी द्वारा चर्चित समाज के तीन भाग वाले वर्गों वाला समाज 1789 तक फ्रांसीसी राजनैतिक व्यवस्थाओं में पाया जा सकता है। 1789 तक 'एस्टेट्स जनरल' (*Etats generux*) नामक फ्रांस की एक राजनैतिक संस्था में पहले, दूसरे और तीसरे एस्टेटस के प्रतिनिधि शामिल थेः कैथोलिक पादरी, कुलीन, सामान्य जन।

7.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 7.2 देखें

2) भाग 7.2 देखें

3) भाग 7.3 देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 7.4 देखें

2) भाग 7.4 देखें

3) भाग 7.5 देखें

4) भाग 7.5 देखें

7.9 सदंर्भ ग्रन्थ

ब्लॉकमेन्स, विम एवं हॉपनब्रोवरर्स, पीटर, (2018) *इन्ट्रोडक्शन टू मिड़िविल यूरोप, 300-1550,* तृतीय संस्करण (एबिन्गड़न व न्यूयॉर्क : रुटलेज़).

ब्राउन, पीटर, (1996) *द राइज़ ऑफ वेस्टर्न क्रिश्चैन्डम : ट्रायम्फ एन्ड डायवर्सिटी, ए.डी. 200-1000* (ऑक्सफोर्ड : ब्लेकवेल).

सिपोला, कार्लो एम., (1993) *बिफोर द इन्डस्ट्रियल रिवोल्यूशन. यूरोपियन सोसायटी एन्ड इकोनोमी, 1000-1700*, तृतीय संस्करण (लंदन : रुटलेज).

लेंसिंग, केरोल एवं एडवर्ड डी. इंगलिश, (संपा.), (2013) *ए विली-ब्लैकवेल कम्पेनियन टू द मिडिवल वर्ल्ड* (चिकेस्टर : विली एन्ड सन्स).

स्मिथ, जूलिया एम. एच., (2005) *यूरोप आफ्टर रोमः ए न्यू कल्चरल हिस्ट्री, 500-1000* (ऑक्सफोर्ड : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

7.10 शैक्षणिक वीडियो

एपिसोड 1 : होली लैंड | क्रूसेड्स | बी बी सी डाक्यूमेन्टरी
https://www.youtube.com/watch?v=vOyswuA8wEs

फर्स्ट क्रूसेड़ पार्ट 1 ऑफ 2 | एपिक हिस्ट्री टी वी
https://www.youtube.com/watch?v=ydVFqpbIIwA

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 8 यूरोप में शिल्प उत्पादन का विकास*

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 संदर्भ और अन्तर्निहित कारक

8.3 शिल्प उत्पादन की प्रकृति

- 8.3.1 वस्त्र उद्योग
- 8.3.2 खनन् और धातु कर्म
- 8.3.3 काँच उद्योग
- 8.3.4 पोत निर्माण
- 8.3.5 मदिरा उत्पादन

8.4 उत्पादन का संगठनः श्रेणियाँ

8.5 कारीगरों का संघटन और स्थिति

8.6 सारांश

8.7 शब्दावली

8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.9 संदर्भ ग्रंथ

8.10 शैक्षणिक वीडियो

8.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- मध्यकालीन यूरोप और एशिया में विभिन्न शिल्पों के विकास को समझ सकेंगे,
- उन कारकों का विश्लेषण कर पाएँगे जिन्होंने इस विकास को प्रेरित किया,
- इस अवधि के दौरान उभरने वाले कुछ शिल्पों के उत्पादन की प्रक्रियाओं की जाँच कर पाएँगे,
- उत्पादन के संगठन और कारीगरों की स्थितियों का मूल्यांकन कर सकेंगे ताकि उनकी सामाजिक, आर्थिक स्थिति में अगर कोई परिवर्तन हुआ है तो उसको समझ सकेंगे, और
- उत्पादन के मौजूदा सम्बन्धों की संरचनाओं और सामाजिक विभेदीकरण की प्रक्रियाओं की व्याख्या कर पाएँगे।

8.1 प्रस्तावना

इकाई 9 में आपको यूरोप में व्यापार और वाणिज्य के बदलते प्रारूप से परिचित कराया जायेगा, जिसने न केवल यूरोप के विभिन्न हिस्सों को जोड़ा बल्कि एशिया और यूरोप के बीच

* डॉ. अमृत कौर बसरा, दिल्ली कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड कामर्स, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

सम्बन्धों की जटिलताओं को भी प्रदर्शित किया। इस इकाई का उद्देश्य उस संदर्भ को प्रकट करना है जिसमें मध्ययुगीन यूरोप में शिल्प उत्पादन का विकास हुआ। यूरोप के भूगोल और प्रेरक कारकों पर ध्यान केन्द्रित कर आपको उन परिवर्तनों से अवगत कराया जाएगा जो समय-समय पर और समस्त क्षेत्रों में घटित हुए थे। उपलब्ध ऐतिहासिक साक्ष्य ऐसे कई शिल्पों को दर्शाते हैं जो प्रचलन में थे। हालाँकि, कुछ शिल्प ऐसे थे जो परिसीमित विशिष्ट क्षेत्रों में थे और जिन्होंने उत्पादन के आर्थिक और संगठनात्मक ढाँचे को बदला। वस्त्र, काँच, धातु कर्म, पोत निर्माण और मदिरा बनाने के शिल्प उत्पादन के विशिष्ट अध्ययनों (केस स्टडीज) के माध्यम से इन पहलुओं को स्पष्ट करने का प्रयास किया जाएगा।

विभिन्न विनिर्माण इकाइयों का विकास उपलब्ध संसाधनों में उतना ही निहित था जितना कि उत्पादन बढ़ाने के लिए तकनीकों, मानव-संसाधनों और संगठनामक कौशल के उपयोग में। यह इकाई उत्पादन की प्रक्रियाओं, संगठनात्मक संरचनाओं और श्रेणियों (**guilds**; जो यूरोप के विभिन्न हिस्सों में स्थापित की गई थीं) की नीतियों और भूमिकाओं के माध्यम से इन पहलुओं का विवरण प्रदान करेगी।

8.2 संदर्भ और अन्तर्निहित कारक

मध्यकालीन यूरोप समरूपी नहीं था। सातवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी के बीच इसमें बहुत से परिवर्तन आए। इन परिवर्तनों में हम उन कारकों की पहचान कर सकते हैं जो शिल्प उत्पादन के लिए आधार प्रदान करते हैं। भौगोलिक विशेषताओं के आधार पर यूरोप के भीतर विभिन्न क्षेत्रों की पहचान की जा सकती है। कोयला, लोहा और जल जैसे प्राकृतिक संसाधनों के साथ-साथ यूरोप में पर्याप्त कृषि योग्य भूमि थी। पृथ्वी के गोलार्द्ध के बीच में स्थित होने के कारण, यह तीन तरफ से पानी से घिरा हुआ है और समुद्र द्वारा दुनिया के अन्य भागों के साथ इसकी संयोजकता तथा सम्बद्धता थी। हालाँकि, विभिन्न क्षेत्रों में जलवायु की परिस्थितियाँ भिन्न-भिन्न थीं। आय का मुख्य स्रोत कृषि था लेकिन कृषि उत्पादन यूरोप के सभी भागों में समान नहीं था। उदाहरण के लिए, इटली में उपजाऊ भूमि के क्षेत्र बिखरे हुए थे और **निम्न तटीय देशों (Low Countries)** में वनस्पति का स्वरूप समान था।

यूरोप के राजनीतिक और आर्थिक संगठन को इतिहासकारों ने सामंतवाद द्वारा परिभाषित किया है। हालाँकि इसके साथ जुड़े व्यक्तियों के अधिकारों और स्थिति को जिस बलपूर्वक लादी गई कार्य प्रणाली के द्वारा परिभाषित किया गया, वह सब जगह समान नहीं थी। भूमि और उपलब्ध संसाधन आय के मुख्य स्रोत थे और व्यापारिक गतिविधियाँ इसका हिस्सा थीं। ग्यारहवीं शताब्दी तक, शहरी क्षेत्रों के विकास, समाज के स्तरीकरण और राजनीतिक तथा धार्मिक संरचनाओं में परिवर्तन के समानान्तर जन-सांख्यिकीय परिवर्तन हुए।

कार्लो एम. सिपोला ने अपने विश्लेषण में मध्यकाल के दौरान यूरोप में निवेश के आधार पर उत्पादन के कारकों का पता लगाया है। उन्होंने इसके तहत श्रम, पूँजी और प्राकृतिक संसाधनों को सूचीबद्ध किया है। अध्ययन की अवधि के दौरान जनसांख्यिकीय प्रारूपों ने श्रम की उपलब्धता को अनिवार्य रूप से प्रभावित किया। ग्यारहवीं शताब्दी से होने वाली जनसंख्या में वृद्धि का अर्थ था कि एक ओर अधिक वस्तुओं की माँग थी और दूसरी ओर श्रम भी उपलब्ध था। ग्रामीण क्षेत्रों में कुशल और अकुशल श्रम दोनों उपलब्ध थे और अधिक महिलाओं को श्रमिकों के रूप में रोज़गार मिल जाता था।

शहरी केन्द्रों के विकास के साथ-साथ समृद्ध वर्ग के उपभोक्ताओं की उपस्थिति, पूँजी और उत्पादक इकाइयों में कुशल कारीगरों की बड़ी मौजूदगी हेतु सुविधाएं सुनिश्चित की गई थीं। यह इटली में अधिक स्पष्ट था जहाँ नगर-राज्य पुनर्जागरण के केन्द्र बन गए थे। अल्फ्रेड

वॉन मार्टिन के पर्यवेक्षण के अनुसार नगर-राज्यों में रहने वाले बुर्जुआ वर्ग के पास धन-दौलत और बुद्धि थी। जॉन स्कॉफील्ड ने पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर यह दर्शाया है कि लंदन विविध शिल्प गतिविधियों का केन्द्र था। सन् 1364 में एडवर्ड तृतीय के एक दान शिलालेख में सत्ताइस शिल्पों के अस्तित्व का उल्लेख मिलता है। इसमें मदिरा बनाने वाले, वस्त्र विक्रेता, रंगरेज, धोबी, स्वर्णकार और लौह-विक्रेता तथा अन्य भी शामिल थे (स्कोफील्ड, 1987 : 115)। जर्मनी में शासकों द्वारा शहरों की स्थापना की शुरुआत की गई। कस्बों के इर्द-गिर्द और ग्रामीण क्षेत्रों में मठ आधारित बर्गों (Burgs) का भी विकास हुआ।

बाजारों द्वारा सुसाध्य यह शहरी केन्द्र लेन-देन के प्रमुख केन्द्र बन गए। व्यापारियों और कारीगरों दोनों को व्यापार की वृद्धि के लिए स्थानीय अधिकारियों द्वारा विशेषाधिकार प्रदान किए गए थे। ऑटो महान् (Otto The Great) के राज्याभिषेक और ओटो तृतीय की मृत्यु के बाद (931-1002) जर्मनी में 'विशेषाधिकारों के अनुदान' (grants of privileges) के माध्यम से 29 नए बाजार स्थापित किए गए।

कार्लो एम. सिपोला के अनुसार, भौतिक पूँजी का प्रतिनिधित्व उन वस्तुओं के उत्पादन में किया जाता था, जिन्हें या तो भविष्य के उपयोग के लिए संग्रहित किया जाता था या आगे उत्पादन के लिए उपयोग किया जाता था। स्थायी पूँजी मिलों के रूप में सुस्पष्ट थी। ऐसी इकाइयों के निर्माण में धन का निवेश राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक शक्तियों का प्रतिनिधित्व करने वाले प्रमुख व्यक्तियों द्वारा संभव किया गया था। पन्द्रहवीं शताब्दी में स्पेन, फ्रांस और इंग्लैंड में निरंकुश राजतन्त्रों की स्थापना ने अत्यधिक उत्पादन की बिक्री और आर्थिक गतिविधियों की सुरक्षा के लिए परिस्थितियों का निर्माण किया। छठी शताब्दी से तकनीकी विकास द्वारा इस प्रक्रिया को और भी अधिक सुविधाजनक बनाया गया था। उत्पादन बढ़ाने के लिए जल चक्कियों और पवन चक्कियों का इस्तेमाल किया गया था। मॉर्क ब्लॉक के अनुसार, जल चक्कियों के उपयोग के बारे में प्रमाण तीसरी शताब्दी से मिलते हैं, लेकिन मध्ययुगीन यूरोप में इनका व्यापक प्रयोग हुआ था, जिसके कारण कारीगरों के मध्य कौशल के विशिष्टीकरण का विकास हुआ।

यूरोप प्राकृतिक संसाधनों में समृद्ध था। कृषि का विस्तार उपलब्ध श्रम और कृषि योग्य भूमि पर निर्भर था। यूरोप के सभी हिस्सों में भेड़ों के पालन के लिए भूमि का व्यापक उपयोग होता था। ऊन की उपलब्धता ने कपड़ा उद्योग को प्रोत्साहन प्रदान किया। स्पेन, इंग्लैंड, इटली और निम्न तटीय देशों के मामलों में यह स्पष्ट दिखाई देता है। प्रारंभ में इंग्लैंड ने ऊन का निर्यात किया। इन व्यापारिक गतिविधियों में जल संसाधन भी महत्वपूर्ण थे। इंग्लैंड में टेम्स नदी व्यापार और वाणिज्य की जीवन रेखा थी। 'खोजों के युग' के दौरान अन्तर्क्षेत्रीय सम्बन्धों का विकास हुआ। यूरोप खनिज संसाधनों में भी समृद्ध था। हालाँकि खनन् के माध्यम से इनका उपयोग तकनीकी और कौशल के उपयोग पर निर्भर था।

8.3 शिल्प उत्पादन की प्रकृति

यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि यूरोप में मध्यकालीन समय में स्थानीय और अन्तःस्थानीय संसाधनों का उपयोग करने वाले अनेक शिल्पों का विकास हुआ था। उत्पादन को परिष्कृत करने और बढ़ाने के लिए कई उपकरणों और प्रौद्योगिकियों का उपयोग होता था। हालाँकि ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक शिल्प विकसित हुए और फूले-फले, लेकिन काफी हद तक इन कार्यों का संकेन्द्रण शहरी केन्द्रों में था। निम्नलिखित उपभागों में समय और स्थान के अनुरूप इन परिवर्तनों को प्रतिबिम्बित करने के लिए कुछ शिल्पों का विशिष्ट अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

8.3.1 वस्त्र उद्योग

यूरोप में कपड़ा बनाने के काम को रोमन साम्राज्य के काल से रेखांकित किया जा सकता है। वास्तव में, हर भेड़ पालन भूमि में कपड़े का उत्पादन होता था। यूरोप में कपड़ा उत्पादन का मुख्यतः अर्थ ऊनी वस्त्र उत्पादन था जो वहाँ के मौसम की परिस्थितियों के कारण आवश्यक थे। हर स्थान की अलग-अलग विशेषताएँ थीं। उदाहरण के लिए, पुनर्जागरण काल के इटली ने रंगाई के क्षेत्र में कौशल विकसित किया और कपड़े के परिष्करण में विशेषज्ञता हासिल की। दक्षिणी इटली में स्थानीय ऊन का उपयोग करके बड़े पैमाने पर ऊनी उद्योग स्थापित किया गया था। निम्न तटीय देशों में, शुरू में वस्त्रों का उत्पादन देशी कच्चे माल से किया जाता था। यह कच्चा माल आरटॉइस, फ्रांसीसी फ्लैन्डर्स और हेनॉल्ट के चरागाहों से प्राप्त किया जाता था, जहाँ भेड़ों को पाला जाता था। रंगाई के लिए, मजीठ (madder) फ्रांस से प्राप्त किया जाता था। वस्त्र उद्योग में इंग्लैंड से आयात की जाने वाले ऊन का उपयोग भी होता था।

इंग्लैंड में ऊनी वस्त्र उद्योग के अपने अध्ययन में, लिप्सन ने चार अवलोकन किए हैं:

- कच्चा माल घरेलू स्तर पर प्राप्त किया जाता था।
- यह हर कस्बे, गाँव और छोटे गाँव में इंग्लैंड का सबसे व्यापक विनिर्माण कार्य था। बुनाई पूरे समुदाय को प्रभावित करने वाला मुख्य घरेलू व्यवसाय था।
- यह प्रथम उद्योग था जिसे राज्य ने विनियमित किया।
- इसका इतिहास घरेलू प्रणाली, श्रेणी प्रणाली और कारखाना प्रणाली के विकास के विभिन्न चरणों से जुड़ा था।

यह भी एक तथ्य है कि वस्त्र उद्योग के निम्न और उच्च चरण थे। इसमें बारहवीं शताब्दी में गिरावट आई और फ्लेमिश कपड़ा उद्योग के विकास को अप्रत्याशित उद्गामी अंग्रेजी उद्योग ने बाधित किया था।

वस्त्र विनिर्माण के चरण

- **छटाई (Sorting)** : एकत्रित ऊन की धुनाई करने के साथ यह कार्य शुरू होता था। यह अकुशल श्रमिकों द्वारा किया जा सकता था क्योंकि एकत्रित ऊन को कूट-कूट कर, धुनका तथा धोया जाता था।
- **कताई (Spinning)** : इस चरण में काम ज्यादातर महिलाओं द्वारा किया जाता था। इसमें लकड़ी के यन्त्रों में संलग्न एक छोटे धातु के कुन्डे के उपयोग के माध्यम से छोटे रेशे की ऊन को धुनकना सम्मिलित था। लकड़ी के यन्त्रों में लगे लम्बे धातु के दाँतों की मदद से लम्बे रेशे की ऊन को काता जाता था। ऊन में तेल लगाकर फिर उसे सूत में काता जाता था। इसके लिए पुराने अटेरन और तकवे का इस्तेमाल किया जाता था। चरखे के उपयोग ने कताई की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाया।
- **बुनाई (Weaving)** : यह कार्य बुनकर करते थे जो बुनाई के लिए सूत तैयार करते थे। आवश्यक संख्या के धागों को अलग-अलग क्रमबद्ध किया जाता था। इनको शटल में प्रवेश कराने के लिए **चरखी** (**Bobbin**) की मदद से **रीलों** (**Spoolers**) में लपेटा जाता था। आमतौर पर, ताना धागा और बाना धागा अलग-अलग काता जाता था। चौड़े कपड़े के उत्पादन के लिए करघे (loom) का उपयोग किया जाता था। कंधे से कंधा मिलाकर बैठे पुरुषों द्वारा यह काम दोहरे करघे (double loom) पर किया जाता था। क्षैतिज करघे (horizontal loom) का उपयोग भी किया जाता था। कम चौड़े वस्त्र की बुनाई के लिए एकल करघे (single loom) का उपयोग किया जाता था।
- **धुलाई (Fulling)** : यह एक मुश्किल काम था जिसको ज्यादातर उन कस्बों में किया जाता था जिनमें जल निकायों की आसानी से उपलब्धता थी। इस अवस्था में कपड़े को **नांद (trough)** में डालकर पदचापों द्वारा रौंदा जाता था। इस प्रकार धोए गए कपड़ों को कपड़े सुखाने के स्टैण्ड पर टाँगकर,

सीधी लकड़ी के सांचे में सुखाया जाता था। इस तरह लटकाए गए बहुत से कपड़ों को कपड़े सुखाने के स्टैण्ड के हुक के साथ बाँधा जाता था। इटली में यह उत्तर के आयातित अनिर्मित कपड़ों के परिष्करण के लिए मुख्य व्यवसाय के रूप में उभरा। इस प्रक्रिया को वेत्ती (Vettii) के घराने के भितिचित्रों और फूलोनिका (Fullonica) की दीवारों पर स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है। बारहवीं शताब्दी में इंग्लैंड और फ्रांस में धुलाई (फुलिंग) की मिलों का आविष्कार किया गया था। इनमें मानवीय श्रम के बजाय जलशक्ति का उपयोग किया गया था। नवीन झुकाव हथौड़ा प्रणाली (tilt hammer system) के तहत, एक घूमने वाले ड्रम को एक पानी से चलने वाले पहिए (water wheel) को धुरी से जोड़ा जाता था। जब यह घूमता था तो तब लकड़ी के हथौड़े उठ जाते थे और कपड़े पर गिरते थे। इस पूरी प्रक्रिया पर नजर रखने के लिए केवल एक व्यक्ति की आवश्यकता थी।

- **परिष्करण प्रक्रिया (Finishing Process)** : कपड़े की अच्छी गुणवत्ता को प्राप्त करने के लिए वस्त्र के अतिरिक्त रेशों को खींचा और कतरा (raising and shearing) जाता था। ऊनी वस्त्रों के रेशों को उभारने (**नेप; nap**) के लिए नमी वाले कपड़ों को ही लकड़ी के खाँचों में कतारों में लगाया जाता था। कपड़ा सुखाने के बाद फिर कतरा जाता था। कतरने वाले ग्राइन्डर के उपयोग ने कपड़े की महीन सतह को सुनिश्चित किया। मुलायम कपड़ा प्राप्त करने के लिए यह प्रक्रिया कई बार दोहराई जाती थी। तत्पश्चात् इसे ब्रश करके, दबाकर फोल्ड किया जाता था।

- **रंगाई (Dyeing)** : यह उत्पादन के किसी भी चरण में किया जा सकता था। यह उत्पादन के मूल्य और गुणवत्ता निर्धारित करने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण था। उत्तर-पश्चिम क्षेत्र में सभी प्रकार के रंजकों का उत्पादन होता था। लकड़ी और मजीठ स्थानीय उत्पाद थे। भूमध्यसागरीय क्षेत्र ने चमकीले लाल, करमीज (kermes) और फिटकरी (alum; जो रंगों को पक्का करने के लिए जरूरी थी) की आपूर्ति की। उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों से लाल तुलसी की प्राप्ति होती थी। काले रंग को बनाने के लिए लकड़ी का उपयोग किया जाता था। पोटाश उत्तरी जर्मनी और बाल्टिक क्षेत्र से आयात की जाती थी। उस समय के नियमों के तहत् इसका उपयोग अनिवार्य था।

रंगाई एक कौशलपूर्ण कार्य था क्योंकि कारीगर को उसके द्वारा उपयोग की जाने वाली सामग्री के गुणों की जानकारी होना आवश्यक था। उसे ऊन, रंजकों और रंगबंधकों (mordents) की गुणवत्ता और मात्रा से भी परिचित होने की जरूरत थी। उसको फिटकरी, ऊन के जमाव और विभिन्न प्रकार की गुणवत्ता वाली ऊन का उपयोग कैसे करना है, इसकी जानकारी भी जरूरी थी। रंगाई की दो तकनीकें थीं। जिसमें एक ऊन के लिए और दूसरी लाल और अन्य कपड़ों की रंगाई के लिए विशेषीकृत थी। यह काम बड़े वृत्ताकार हौजों में किया जाता था। कारीगरों द्वारा डन्डे की मदद से कपड़े को पलटा जाता था। इतालवी कारीगरों को इस काम में विशेषज्ञता हासिल थी।

8.3.2 खनन् और धातु कर्म

मध्यकालीन यूरोप खनिज संसाधनों से समृद्ध था। लोहे के साथ-साथ सोने और चाँदी की धातुओं के भण्डार यूरोप के कई भागों में स्थित थे। खनन् कार्य की प्रवृत्ति सतह के पास मौजूद खनिजों के उपयोग और निकास की थी। व्यापक पैमाने पर कृषि को महत्वपूर्ण समझा जाता था और खनन् में बहुत कम रुचि थी। वास्तव में, तीसरीं शताब्दी के बाद से लौह के खनन् को छोड़कर अन्य धातुओं के खनन् में गिरावट देखी गई। दसवीं शताब्दी से एक परिवर्तन देखा गया, जब खनिजों का राजनीतिक, सैन्य, आर्थिक और सांस्कृतिक कारणों से खनन् किया जाने लगा। शासकों और कुलीन वर्ग ने खनन में अपने हिस्से को सुनिश्चित कर खनिकों को खनिज संसाधनों की खोज और खनन् करने को प्रोत्साहित किया। ऑटो महान् ने खनन् गतिविधियों के लिए वित्तीय रियायतें दीं।

समय के साथ लोहे की माँग इस अवधि में बढ़ी क्योंकि यह उपकरण, हथियार, समुद्री जहाज और गोथिक काल के भवनों के निर्माण के लिए आवश्यक था। इसने अंतर्क्षेत्रीय लेन-देन को भी बढ़ावा दिया। खदान-कर्मी एक स्थान से दूसरे स्थान पर गए और जहाँ-जहाँ लोहे का खनन् किया जाता था, वहाँ छोटी-छोटी भट्टियाँ स्थापित की गईं। यह प्रवृत्ति फ्रांस में दिखाई देती है। इसके लिए बहुत कम पूँजी की आवश्यकता थी। जब एक बार लकड़ी जैसे प्राकृतिक संसाधन, जो लकड़ी के कोयले (चारकोल) को बनाने के लिए जरूरी थे, खत्म

हो जाते थे, खदान-कर्मी दूसरी जगह चले जाते थे।

तेरहवीं शताब्दी के दौरान फ्रांस, इंग्लैंड, स्कॉटलैंड और निम्न तटीय देशों में कोयले की खुदाई सुव्यक्त थी। कोयला प्राप्त करने के लिए खदान-कर्मी छिछले गड्ढ़ों में खुदाई करते थे। हालाँकि उत्खनन् व्यापक था, एक अन्य विधि का भी उपयोग किया गया था। इसमें सतह के कुछ फीट नीचे तल पर एक तरह की चौड़ी गुफा खोदी जाती थी।

तेरहवीं शताब्दी में चाँदी प्राप्त करने के लिए मध्य यूरोप में शाफ्ट (shaft) खनन् का उपयोग किया जाता था। इसकी सामान्य कार्य विधि यह थी कि चाँदी धारक अयस्क के ढ़लान वाले क्षेत्र में छेद करके दर्जनों गड्ढ़े बनाए जाते थे। खान से पानी की निकासी के लिए प्राथमिक तरीकों का इस्तेमाल किया जाता था। आमतौर पर, चमड़े की बाल्टियों से हाथ से पानी निकाला जाता था। कभी-कभी शाफ्ट की तली से, जिसका मुँह घाटी में खुलता था, खंदकों को खोदा जाता था। चौदहवीं शताब्दी में बोहेमिया में खान में आने-जाने वाले लम्बे **क्षैतिज प्रवेश मार्गों (adits)** का इस्तेमाल किया गया। कभी-कभी पानी को बाहर निकालने के लिए घोड़ों द्वारा संचालित मशीनों का प्रयोग किया जाता था।

धातुओं के परगलन (smelting) और परिष्करण के लिए नई विधियों का विकास किया गया। अपरिष्कृत धातुओं को धोने, तोड़ने और पिसाई के लिए शारीरिक श्रम को लगाया जाता था। परगलन कर्मियों ने अयस्कों के शोधन के लिए विभिन्न प्रकार के चूल्हों, बर्तनों, तंदूरों और भट्टियों का उपयोग किया। कम पूँजी की आवश्यकता वाले खुले चूल्हे उपयोग में थे। इस प्रकार चाँदी के अयस्क के परिष्करण को धोने, तोड़ने, पिसाई करने और परगलन की प्रक्रिया से गुजरना पड़ता था। इसके पश्चात् सीसे (lead) को अलग करने के लिए छेदों वाले चूल्हे (cupelling hearth) में ऑक्सीकरण की प्रक्रिया होती थी। धौकनियों (bellows) की मदद से चाँदी को और अधिक परिष्कृत किया जाता था। तेरहवीं शताब्दी के दौरान, हथौड़ों और धौकनियों को चलाने के लिए ट्रेन्ट की चाँदी की खानों में पानी से चलने वाले चक्के स्थापित किए गए थे।

इसकी अगली शताब्दी में, तीन प्रकार की भट्टियों का उपयोग किया गया था। अब उन्होंने पुरानी ब्लूमर भट्टियों (bloomer forges) को हटा दिया। इन तीन में सबसे प्रभावी भट्टी 'स्टूकोफेन' (stuckofen) थी। मध्य यूरोप, पूर्वी फ्रांस और अल्पाइन जिलों में इसका व्यापक रूप से उपयोग किया जाता था। इस भट्टी की ऊँचाई लगभग दस फीट थी। इसकी संरचना में ऊपर और नीचे लगभग दो फीट का एक वृत्ताकार चतुष्कोणीय शाफ्ट शामिल था। बीच के भाग में इसका माप पाँच फीट था। इस भट्टी ने उत्पादन बढ़ाया। इस अवधि के दौरान जल निकासी के अधिक शक्तिशाली इंजन बनाए गए और भूमिगत मार्गों को हवादार बनाने के बेहतर तरीके अपनाए गए। यह हंगरी और सेक्सनी में सुस्पष्ट था। सबसे गहरे गड्ढ़े से पानी को तीन चरणों में निकाला जाता था। तत्पश्चात् इसे प्रवेश मार्ग तक ले जाया जाता था। प्रत्येक चरण पर एक घोड़े द्वारा चालित बड़े पहिए को घुमाने से पंप को गति मिलती थी। इन पहियों को घुमाने के लिए पशुओं को ढ़लावदार शाफ्ट की जगह रखा जाता था जो चूड़ीदार पेंच की तरह घुमावदार और ढ़लावदार था।

वात्या भट्टी (blast furnace) के उपयोग से लोहे और कांस्य के उत्पादन में वृद्धि हुई।

कांसा टिन और तांबे का एक यौगिक था। इसको तैयार करने के लिए मिट्टी में साँचे तैयार या स्थापित किए जाते थे। इन साँचों में गरम तरल डाला जाता था। ढलवां लोहे (cast iron) के लिए भी इस समान विधि का उपयोग किया जाता था। भट्टी में बहुत ऊँचे तापमान पर अयस्क को कार्बन के सम्पर्क में लम्बे समय तक रखा जाता था। इसके परिणामस्वरूप ढ़लवां लोहे का उत्पादन होता था, जिसका आगे डी-कार्बुराइज़ेशन के द्वारा परिशोधन होता था।

यह ऑक्सीकरण की स्थिति के अंतर्गत अयस्क को दोबारा गर्म करके किया जाता था। तैयार उत्पाद, उपकरणों, हथियारों और कवचों को बनाने के लिए उपयोगी था।

8.3.3 काँच उद्योग

काँच का निर्माण पिघलाकर और उसके बाद रेत और लकड़ी के ठंडा होने से होता था। यूरोप को प्राचीन काल से इसका ज्ञान था। तेरहवीं शताब्दी के दौरान खिड़कियों की सजावट में इसका उपयोग व्यापक हो गया था। यह वह समय था जब इटली, विशेष रूप से रोम में, खूबसूरत गिरिजाघर बनाए गए थे। हालाँकि यह एक व्यापक उद्योग केवल सोलहवीं शताब्दी में ही बना। अभिरंजित काँच (stained glass) की कला 1150 और 1500 सी ई के मध्य फली-फूली। जर्मन भिक्षुक टियोफिलस ने अपनी पुस्तक *ऑन डाइवर्स आर्ट्स* में अभिरंजित काँच बनाने का विस्तृत वर्णन दिया। इसमें काँच का काम करने करने वाले और काँच पर चित्रकारी करने वालों का गहरा अध्ययन सम्मिलित था।

विनिर्माण चरण में जब काँच पिघली अवस्था में था, उसमें कुछ धातुओं के पाउडर को मिलाया जाता था और तरल को चद्दर के रूप में समतल किया जाता था। खिड़की बनाने के लिए, पहले प्रस्तावित डिजाइन की एक तस्वीर बोर्ड पर खींची जाती थी। फिर अभिरंजित काँच के विभिन्न टुकड़ों को बोर्ड पर इकट्ठा किया जाता था। इन्हें एच आकार की पट्टियों में फिट किया जाता था जिन्हें कैम्स (cames) कहा जाता था। प्रत्येक काँच के टुकड़े को पास-पास रखकर पैनल को सुरक्षित किया जाता था। एक बार पैनल तैयार होने के बाद इसे वाटर प्रूफिंग के लिए प्रत्येक काँच और सीसे के कैम्स के बीच डाला जाता था। पूरी रचना को लोहे के फ्रेम के साथ स्थिर किया जाता था और खिड़की पर चढ़ाया जाता था।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

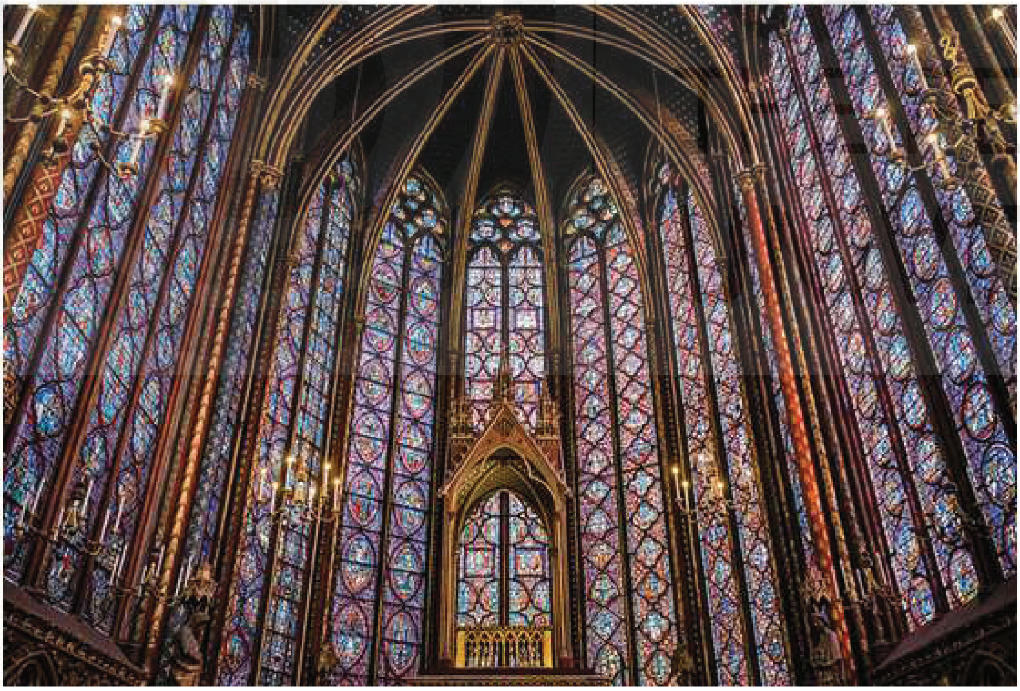

चित्र 8.1: सेंट चैपल अभ्यन्तर-अभिरंजित काँच
साभार: ओल्डमेनिसोल्ड
स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/French_Gothic_architecture#/media/ File:Sainte_Chapelle_Interior_Stained_Glass.jpg

इस उद्योग का केन्द्र वेनिस था। पन्द्रहवीं शताब्दी के दौरान वेनेशियनों ने बड़े शुद्ध पारदर्शी काँच, शानदार पत्थरों के काँच और घुमावदार काँच की छड़ियों का उत्पादन किया। काँच के निर्माताओं द्वारा टैंक भट्टियों का प्रयोग किया जाता था।

8.3.4 पोत निर्माण

पन्द्रहवीं शताब्दी में 'खोज के युग' की पहचान जिन समुद्र पार यात्राओं से होती थी उसको समुद्री जहाज के निर्माण में तकनीकी परिवर्तनों द्वारा सुविधाजनक बनाया गया। जे.एच. पैरी ने अपने विश्लेषण में इस प्रक्रिया में नौपरिवहन उपकरण और नवनिर्मित जहाजों की भूमिका को रेखांकित किया है। फैंकोइस क्रूज़े के अवलोकन के अनुसार भूमध्यसागर, अंटलाटिक और उत्तरी समुद्र के क्षेत्रों के बीच तकनीकी आदान-प्रदान के द्वारा सामुद्रिक यूरोप का निर्माण हुआ था।

दसवीं शताब्दी के दौरान, तटीय व्यापार के लिए कंगूरे वाले जहाजों (cog ships) का उपयोग किया जाता था। पोत का निर्माण नौतल से शुरू किया जाता था। मोटी लकड़ियों की तख्तियों के प्रयोग से जहाज के पेटे (hull) को जोड़ा जाता था। इससे मालवाहक जहाज में भण्डारण के लिए काफी स्थान मिलता था। जहाज के पेंदे (hull) को एक-दूसरे को ढ़कते हुए तख्तों के साथ जोड़ा जाता था। इनको अपनी जगह स्थिर रखने के लिए कील ठोकी जाती थी। चप्पू, जलयान के पीछे की तख्तियाँ और लम्बे सीधे लकड़ी के बीम जहाज के नौतल से जुड़े हुए थे।

मस्तूल जहाज के नौतल से जुड़ा एक एकल लकड़ी का लठ्ठा था। पाल को पकड़ने के लिए एक ओर क्षैतिज लकड़ी की बीम लगाई जाती थी। इसको रस्सियों द्वारा मुख्य मस्तूल से जोड़ा जाता था। पाल एक चौकोर टुकड़ा होता था। मस्तूल को स्थिर रखने के लिए जहाज के दोनों तरफ रस्सियाँ बाँधी जाती थी। एक बार पाल नीचे होने के बाद यह एक लम्बे लकड़ी के खम्बे बोस्प्रिट (bowsprit) से जुड़ता था इससे पाल स्थिर रहता था और उसमें हवा के भरने से पाल को प्रभावी बनने में मदद मिलती थी। पूर्वी मूल के तिकोने पाल (lateen sail; जहाज पर लगाए गए त्रिकोणीय पाल) का उपयोग उत्तर में व्यापक हो गया। लगभग 1430 में पुर्तगालियों द्वारा कार्वेल (caravel) निर्माण तकनीक ने जहाज निर्माताओं के लिए दो या तीन मस्तूल वाले तिकोने पाल वाले बड़े और हल्के जहाजों का निर्माण संभव बना दिया।

चित्र 8.2: बल्लियों, रस्सों आदि से व्यवस्थित तिकोने पाल वाले कारवेल, पुर्तगाली लम्बी दूरी की खोजों के लिए मुख्य पोत

साभार: नेवी ऑफ ब्राजील

स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Caravel_Boa_Esperanca_Portugal.jpg

धीरे-धीरे मालवाहक जहाजों और नौ सेना के जहाजों को विकसित किया गया। जहाज निर्माता 'प्रथम फ्रेम' की विधि का उपयोग करते थे। इस पद्धति के तहत् पहले जहाज का फ्रेम तैयार किया जाता था फिर इसके साथ बाकी तख्ते बांधे जाते थे। उन्होंने पालों के लिए एक से अधिक मस्तूलों के उपयोग का प्रयोग भी किया। इस प्रकार जहाजों को लम्बी समुद्रपार यात्राओं के लिए विकसित किया गया और उन्होंने व्यापार के विस्तार और उपनिवेशों की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसने शक्तिशाली राज्यों के बीच प्रतिद्वंदिता को भी बढ़ावा दिया।

8.3.5 मदिरा उत्पादन

मध्यकालीन यूरोप में कुछ षि उत्पादों का अत्यधिक व्यापारिक महत्व था और उन्हें बाजारों में बेचा जाता था। ऐसा ही एक उत्पाद था मदिरा, जो फलों के रस, मुख्यतः अंगूर के किण्वन (fermentation) द्वारा उत्पादित किया जाता था। मध्ययुगीन यूरोप में मदिरा सबसे अधिक व्यापार की जाने वाली वस्तु बन गई। मदिरा यूरोप में मध्यकालीन जीवन के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित थी। उदाहरण के लिए, धार्मिक समारोहों में इसकी आवश्यकता थी। अंगूर के बागों को विकसित करने में चर्च की भूमिका महत्वपूर्ण थी। अंगूर की खेती श्रम प्रधान थी और इससे जुड़े छोटे किसानों की स्थिति में सुधार हुआ।

चित्र 8.3: वाइन प्रेस का इतिहास
साभारः बुक स्केन
स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:29-autunno,Taccuino_Sanitatis_Casanatense_4182.jp

अंगूर के बागों का विकास पेरिस, रीम्स और मौसेल जैसे दक्षिण-पश्चिमी फ्रांस के भागों, फ्लैडंर्स और इंग्लैंड में हुआ था। इस उद्योग में विशिष्टीकरण तब शुरू हुआ जब स्पेन ने अफ्रीका के अनेक भागों में अपने उपनिवेश स्थापित किए।

मदिरा बनाने के चरण

- **फसल की शुरुआत (Date of Beginning)** की तारीख की घोषणा की जाती थी।
- **चयन (Picking):** यह चरण मदिरा के रंग से तय किया जाता था कि वह लाल या सफेद रंग की थी (आधुनिक बोलचाल में)।
- **अंगूरों को एकत्रित करना (Collection of Grapes):** अंगूरों को टोकरियों में एकत्र किया जाता था और बाद में बड़े कुण्डों में और उन्हें किसी प्रकार के छायादार स्थान पर रखा जाता था, आमतौर पर अंगूर की खेती करने वालों (vigneron) के घर के पास।
- **संकोचन (Pressing):** पहले चरण में अंगूर को मोटा-मोटा दबाया जाता था, अंगूरों को श्रमिकों द्वारा कदमों से या लकड़ी के तख्तों का उपयोग करके दबाया जाता था। दबाने के बाद रस एकत्र किया जाता था।
- ***मार्क* को दबाना (Pressing the *Marc*):** बचे हुए भुर्ता बने अंगूरों के द्रव्यमान या *मार्क* को कम से कम एक बार दोबारा दबाया जाता था। अंगूर की खेती करने वालों (vigneron) का कौशल मदिरा के स्वाद और रंग को निर्धारित करता था। दबाने की संख्या में बदलाव करके वह, मदिरा की अम्लता को बढ़ा सकता था और इसके स्वाद और रंग को बदल सकता था।
- **मदिरा का किण्वन (Fermentation of the Wine):** मदिरा को एक निश्चित तापमान पर, जो न बहुत ठंडा या गर्म होना चाहिए, कई दिनों तक पीपों में रखा जाता था। उस समय जब मदिरा उद्योग की तकनीकी अधिक विकसित नहीं हुई थी, यह अंगूर की खेती करने वाले के अनुभव के अनुसार किया जाता था। लगभग 1590 के आसपास तक बोर्डेलेस (Bordelais) में मदिरा को वाइन प्रेस के द्वारा दबाने का दूसरा चरण आमतौर पर इस्तेमाल नहीं किया जाता था। उत्तरी यूरोप में उत्पादित मदिरा विशेष रूप से मौसेल और राईनलैंड के अंगूर के बगीचों में आमतौर पर तापमान की सीमा के कारण सफेद होती थी। लाल रंग की मदिराओं का उत्पादन अधिक जटिल था। सफेद और लाल रंग की मदिराओं के उत्पादन के बीच मूल अन्तर यह था कि सफेद मदिरा बनाने में किण्वन लंबी अवधि तक हो सकता था। दबाने से पहले अंगूर से डंठल निकालना, उत्पादित मदिरा के प्रकार के निर्धारण का एक और तरीका था। मध्यकालीन मदिरा निर्माता अपने उत्पाद को लम्बे समय तक संग्रहित नहीं करते थे। वे इसे जल्दी से जल्दी बाजार में बेचना चाहते थे। उन दिनों पुरानी मदिरा को बहुत संदेह के साथ देखा जाता था। इसके अतिरिक्त उन दिनों में भण्डारण की कठिनाइयाँ बहुत अधिक थीं। पन्द्रहवीं शताब्दी के अंत तक, पश्चिम यूरोप के कई क्षेत्रों में अंगूरों की खेती और मदिरा को तैयार करना एक स्थापित वाणिज्यिक गतिविधि के रूप में उभरा।

स्रोतः रोज, सूज़न, 2011, *द वाइन ट्रेड इन मिडिवल यूरोप 1000-1500*, लंदन एवं न्यूयार्कः कॉन्टीनमः 33

बोध प्रश्न-1

1) जल-चक्कियों के उपयोग से उत्पादन में वृद्धि कैसे हुई?

....

....

....

....

....

2) यूरोप में ग्रामीण अर्थव्यवस्था की मुख्य विशेषता क्या थी?

....

....

....

....

....

3) मध्ययुगीन यूरोप में भवनों के निर्माण में काँच के उपयोग पर एक संक्षिप्त नोट लिखिए।

....

....

....

....

....

4) मध्ययुगीन यूरोप में वस्त्र विनिर्माण से सम्बन्धित विभिन्न चरणों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

5) मध्ययुगीन यूरोप में खनन् कार्य के लिए प्रमुख विधि क्या थी?

....

....

....

....

....

8.4 उत्पादन का संगठनः श्रेणियाँ

उत्पादन को नियमित करने के लिए और गुणवत्ता, मात्रा, आवश्यक कौशल, कार्यों की समयबद्धता और प्रतियोगिता के उन्मूलन के लिए विशिष्ट संगठनों का गठन आवश्यक था।

ईसाई धर्म की शुरुआत से ही ईसाईयों का भाईचारा अस्तित्व में था और उसने ईसाई निष्ठावानों की आध्यात्मिक और भौतिक जरूरतों का ख्याल रखा। लिप्सन के अनुसार यह 'शहरी अर्थव्यवस्था' ही थी, जिसके कारण यूरोप के कई भागों में श्रेणियों की स्थापना हुई। इसका नेतृत्व राजनीतिक शक्ति प्राप्त व्यापारियों की श्रेणी ने किया। यह विकास इटली में सबसे अधिक स्पष्ट था। धीरे-धीरे शिल्पों की श्रेणियाँ भी अस्तित्व में आईं। इनको राजकीय चार्टरों के माध्यम से स्थापित किया गया था और स्थानीय प्रशासन के साथ इनके निकटता के सम्बन्ध थे।

इन संगठनों की मुख्य भूमिका यह सुनिश्चित करना था कि एक विशेष शिल्प के सभी सदस्य इसके प्रधान सदस्यों के रूप में हों। वस्तुओं के विनिर्माण और उत्पादन के विनियमन को प्रशिक्षुओं की भर्ती करने वाली सुपरिभाषित कार्यप्रणाली के द्वारा सुनिश्चित किया गया। आंतरिक प्रतिस्पर्धा को समाप्त करने और मुकदमेबाजी को कम करने के लिए भी कदम उठाए गए। ऐसे समय में जब धर्म की भूमिका मार्गदर्शक की थी, प्रत्येक श्रेणी ने धर्मार्थ गतिविधियों में भी भाग लिया और उनके अपने संरक्षक संत भी थे।

एक शिल्प की श्रेणी में तीन प्रकार के सदस्य अर्थात् मास्टर (masters; प्रमुख कारीगर), जर्नीमेन-कारीगर (journeymen) और प्रशिक्षु (apprentices) होते थे। प्रशिक्षुता की संस्था शिल्प श्रेणियों की सबसे विशिष्ट विशेषता थी। यह उन लोगों को प्रशिक्षण देने का एक माध्यम था जो अपने हाथों या बुद्धि से काम करते थे। इन शिल्प श्रेणियों की परम्परा यूरोप के सभी भागों में मौजूद थी। लंदन में, यह तेरहवीं शताब्दी के दौरान स्थापित हुई और अन्य शहरों में फैल गई। यह कारीगरों को प्रशिक्षित करने के लिए एक कार्यप्रणाली थी और यह श्रेणियों का एकाधिकार बन गया। दूसरे शब्दों में, जो लोग शिल्पकार बनना चाहते थे उन्हें प्रशिक्षुता की एक निश्चित अवधि से गुजरना पड़ता था। इस प्रणाली के तहत, मास्टर जिस प्रशिक्षु को प्राप्त करता था, उसे प्रशिक्षित करने और उसके खाने-पीने, रहने की देखभाल करने का उत्तरदायित्व भी लेना पड़ता था। कभी-कभी प्रशिक्षु को एक छोटा सा वेतन भी दिया जाता था। मास्टर प्रशिक्षु के व्यवहार के लिए भी उत्तरदायी था और उसके पथभ्रष्ट होने पर उसे दंडित कर सकता था। प्रशिक्षु को अपने मास्टर के प्रति आत्म-अनुशासन, आज्ञाकारिता और वफादारी प्रदर्शित करनी पड़ती थी। लिप्सन ने ठीक ही इंगित किया है कि शिल्प श्रेणियों का अन्तर्निहित उद्देश्य प्रगति की अपेक्षा व्यवस्था और विस्तार की अपेक्षा स्थायित्व था।

प्रत्येक मास्टर को प्रशिक्षुओं की एक विशिष्ट संख्या रखने का अधिकार था। प्रशिक्षुता की अवधि भिन्न-भिन्न, अल्प कार्यकाल से लेकर सात वर्ष तक, होती थी। प्रशिक्षु को ग्यारह साल की उम्र में दीक्षित किया जा सकता था। प्रशिक्षुता खत्म होने के बाद प्रशिक्षु को कारीगर या जर्नीमेन के रूप में काम पर रखा जा सकता था। यह जर्नीमेन की अवस्था भी कुछ सालों तक रहती थी। इसके आगे ऊपर की ओर गतिशीलता के लिए गुंजाइश थी बशर्ते कोई अपने शिल्प कौशल को साबित कर सके।

महिलाओं की बहुत कम श्रेणियाँ थीं। श्रेणियों ने कुल मिलाकर क्रेताओं को बेचे जाने वाले उत्पाद की गुणवत्ता को सुनिश्चित किया। यह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाए गए कि मूल्यों और क्रय को प्रभावित करने वाला वस्तुओं का अतिरिक्त उत्पादन न हो। इन श्रेणियों ने यह भी सुनिश्चित किया कि इसके जो सदस्य विपत्ति में थे और गरीब और वृद्ध व्यक्तियों के लिए संस्थाएँ बनाकर उनकी मदद की जाए। वे धार्मिक और शैक्षणिक गतिविधियों में भी सम्मिलित थे। उदाहरण के लिए, ऐसी ही क्रिस्टी कैम्ब्रिज नाम की एक श्रेणी थी जिसने अपने नाम से एक कॉलेज की स्थापना की। समय के साथ जैसे-जैसे बाजारों का विस्तार हुआ और स्थानीय और अन्तर्राष्ट्रीय मंडियों ने अधिक उत्पादन का मार्ग प्रशस्त किया, अनेक शिल्प श्रेणियाँ लंदन की वस्त्र कम्पनियों में रूपांतरित हो गईं।

इस तरह तकनीकी परिवर्तनों के साथ उत्पादन को नियमित करने वाले संगठन उभरे और शिल्प श्रेणियों ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। हालाँकि, माँग में उतार-चढ़ाव या उत्पाद की गुणवत्ता में गिरावट और जानबूझकर मूल्य में कटौती के मामलों में श्रेणी को चुनौती दी जा सकती थी। सोलहवीं शताब्दी के दौरान इटली के संदर्भ में ऐसा ही हुआ था।

8.5 कारीगरों का संघटन और स्थिति

उपरोक्त वर्णन में यूरोप में प्रचलित केवल कुछ शिल्पों की जाँच पड़ताल की गई है। शहरों में और अन्य व्यापक गतिविधियाँ थीं। उदाहरण के लिए, भवनों के निर्माण का विस्तार हो रहा था। प्रारंभ में, निर्माण की मुख्य सामग्री के रूप में मिट्टी का उपयोग किया जाता था। लेकिन, बाद में इसकी जगह पत्थर ने ले ली। महल, चर्च और अन्य भवन पत्थर का प्रयोग करके बनाए गए। इसका अर्थ यह था कि अकुशल और कुशल श्रमिक दोनों इसके साथ जुड़े हुए थे। निर्माण कार्य के लिए कुशल राज-मिस्त्री लगाए जाते थे। रंगाई, कपड़े की सफाई और कताई से जुड़े कारीगर के काम को महत्वपूर्ण समझा जाता था। खदान कर्मियों को भी

सम्मान दिया जाता था। समाज में जहाज निर्माण करने वालों के स्थान को भी अच्छी तरह से परिभाषित किया गया था। व्यापार के विकास और विलासिता की वस्तुओं के साथ सामान्य वस्तुओं की अधिक से अधिक माँग में वृद्धि का मतलब था कि उनका उत्पादन करने के लिए आवश्यक कौशल प्रदान करने के तरीके सुपरिभाषित थे। शहरी केन्द्रों में कारीगरों ने अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए स्वयं को व्यवस्थित करने का बीड़ा उठाया। राजनीतिक अधिकारियों और शक्तिशाली व्यापारियों जिन्होंने बाजारों को नियंत्रित किया और जिनके पास निवेश के लिए पैसा था, के बीच सम्बन्ध शहरी क्षेत्रों में कारीगरों की स्थिति को परिभाषित करने में महत्वपूर्ण थे। महिलाओं को ग्रामीण क्षेत्रों में आमतौर पर घरेलू आधारित गतिविधियों में रोज़गार दिया जाता था, और शहरी क्षेत्रों में भी उन्हें ज्यादातर अकुशल श्रमिक समझा जाता था।

स्पष्टतः उत्पादन क्रियाकलापों में शिल्प उत्पादन के विकास में कारीगरों ने मुख्य भूमिका निभाई। ये कारीगर अनेक शिल्पों में लगे हुए थे और शिल्प विशेष से जुड़े कई चरणों में काम करते थे। विभिन्न शिल्पों के लिए विविध ज्ञान की जरूरत होती थी और कुशल और अकुशल दोनों किस्म के कारीगर थे। मौजूदा ऐतिहासिक स्रोतों के आधार पर, सामान्य और विशिष्ट स्तरों पर कारीगरों की स्थिति को समझने का प्रयास किया जा सकता है।

एक महत्वपूर्ण कृति में जाक् ल गॉफ ने प्रारंभिक आधुनिक यूरोप में मानसिकता और भौतिक संस्कृति के बीच के सम्बन्धों का अध्ययन किया था। उनके अनुसार त्रिपक्षीय पश्चिमी समाज 'प्रार्थना जन, युद्ध जन, और श्रम जनः *लाओरोराटोर्स* (*laororatores*), *बेलाटोर्स* (*bellatores*) और *लेबोरेटोरीस* (*laboratories*)' से मिलकर बना था। ऐसे समय में जब धार्मिक चेतना और संस्थाओं का वर्चस्व था, पहले दो समूह तीसरे समूह की उपेक्षा करते थे। हालाँकि विस्तृत होती शहरी अर्थव्यवस्था में कारीगरों की भूमिका को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता था। चर्च ने भी इसको स्वीकार किया। बारहवीं शताब्दी के अपराध कबूलकर्त्ताओं की नियमावलियों (confessors' manuals) से संकेत मिलता है कि कारीगर अपने कार्य के बारे में अनेक सवाल पूछ रहे थे और चर्च ने भी मुक्ति प्राप्त करने के लिए हर पेशे की क्षमता को स्वीकार किया था।

रोडनी हिल्टन ने कारीगरों की स्थिति पर प्रभाव डालने वाले अर्थव्यवस्था के एक और पहलू की ओर ध्यान आकर्षित किया है। उनके अनुसार व्यापारियों द्वारा पूँजी उपलब्ध कराई गई और वे ही बाजारों को भी नियंत्रित करते थे। इसका अर्थ था कि कारीगरों को केवल मजदूरी का भुगतान किया जाता था और वे लाभ साझा नहीं कर सकते थे। भुगतान की यह प्रणाली इटली में स्पष्ट थी। वास्तव में, उत्पादन की प्रकृति ही कारीगरों की स्थिति निर्धारित करती थी। ग्रामीण क्षेत्रों में **घरेलू उत्पादन (Household Production)** हावी था। वहाँ पर मात्र कुछ कारीगर ही थे जो भूधारक थे। इसने वस्तु उत्पादन को आसान बनाया। **दादनी प्रणाली (Putting out System - POS)** के तहत् ग्रामीण परिवारों को कच्चा माल उपलब्ध कराया जाता था। यह शहरी केन्द्र थे, जहाँ बाजारों के लिए बड़े पैमाने पर विनिर्माण किया जा रहा था। जिन कारीगरों के पास स्वयं के औजार थे वे अधिक कमा सकते थे। हालाँकि, व्यापारी ही कच्चा माल उपलब्ध कराते थे और बाजारों को नियंत्रित करते थे और इस प्रक्रिया में सारा मुनाफा हड़पते थे।

आर्थिक विषमताएँ मौजूद थीं। उन कारीगरों की स्थिति जैसे कि कपास पीटने वाले (beaters), धुनिया (carders), साफ करने वाले (combers) और ऐसे अन्य जो उद्यमियों के परिसर में काम करते थे, बदतर थी। वे संगठित नहीं थे और उनके स्वयं के बचाव की कोई कार्य प्रणाली नहीं थी। उनके लिए मजदूरी की दरें भी मानकीकृत नहीं थीं। सूती वस्त्र उद्योग में बुनाई, धुलाई, कतराई और रंगाई जैसे कामों के लिए प्रति उत्पादित इकाई दरों (piece work rates) से भुगतान किया जाता था।

समृद्धि के समय में कारीगरों के लिए मजदूरी संशोधन को सुनिश्चित कराना कठिन था। प्राकृतिक आपदाओं और राजनीतिक उथल-पुथल की स्थिति में स्थिति और बदतर हो सकती थी। ऐसे समय में सामाजिक संकट और अशान्ति पैदा होती थी। उदाहरण के लिए, जब तेरहवीं शताब्दी में फ्लोरेंस ब्लैक डेथ (Black Death) से प्रभावित था जिसके कारण श्रम का अभाव था तब मजदूरी में संशोधन की माँग करने वाले कारीगरों के इस कदम को श्रेणियों द्वारा रोका गया। कारीगरों और व्यापारियों की आय में असमानता के कारण व्यापक अशान्ति उत्पन्न हुई। 1280 तक यह अशांति ब्रूगेस (Bruges), यप्रेस (Ypress), डूएई (Douai) और टुरनाई (Tournai) तक फैल गया। आगामी सत्ता संघर्ष में जब फ्रांस के राजा ने फ्लैंडर्स को हड़पने की कोशिश की, तो श्रमिकों द्वारा इसका बचाव किया गया। इस सशस्त्र संघर्ष का नेतृत्व पियरे डी. कोनीन (Pierre de Conine) नामक एक बुनकर ने किया था। फ्लैंडर मुक्त हो गया। 1378 में फ्लोरेन्स में ऊनी उद्योग के श्रमिकों ने विद्रोह किया। सिओम्पी (Ciompi) विद्रोह में अनेक अन्य कारीगर जैसे कि बढ़ई (armoires), पंसारी (grocers), दवा विक्रेता (druggists), लोहार (blacksmiths), पोस्तीनदोज (furriers) भी शामिल हो गए। हालाँकि इसे क्रूरता से दबा दिया गया था।

खदान-कर्मियों और धातु-कर्मियों की स्थिति बेहतर थी। वे संगठित थे और उन्हें अधिकारियों की रियायतें प्राप्त थीं। उदाहरण के लिए, निम्न तटीय देशों (Low Countries) में चूंकि उन्होंने तेरहवीं शताब्दी में शासक राजकुमारों की धन दौलत में वृद्धि कराने में मदद की थी, इसलिए उन्हें सामान्य करों के भुगतान से छूट दी गई थी। काम करने की परिस्थितियाँ कठोर थीं। मध्याह्न का विराम भी एक छोटी सी अवधि के लिए होता था। एक सप्ताह में काम के घंटे चवालीस घंटों से लेकर साठ घंटों तक होते थे।

बोध प्रश्न-2

1) क्या आप इस विचार से सहमत हैं कि मध्ययुगीन यूरोप में श्रेणियों ने शिल्प उत्पादन की वृद्धि के लिए अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण किया? अपने विचारों का समर्थन करने के लिए कुछ ऐतिहासिक प्रमाण प्रदान कीजिए।

....

....

....

....

....

2) मध्ययुगीन यूरोप में कारीगरों की स्थिति का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

8.6 सारांश

इकाई के पूर्वगामी वर्णन में मध्ययुगीन यूरोप में शिल्प उत्पादन की प्रकृति और पद्धतियों का

विवरण दिया गया है। कार्लो एम. सिपोला द्वारा रेखांकित कारकों की बहुलता उन प्राकृतिक और मानवीय परिवर्ती कारकों पर ध्यान केन्द्रित करती है जो यूरोप में शिल्प उत्पादन के लिए जिम्मेदार थे। विभिन्न शिल्प जिसमें विभिन्न प्रक्रियाओं, विभिन्न तकनीकियों और कच्चे माल सम्मिलित थे, अस्तित्व में आए। इस इकाई में कुछ प्रमुख शिल्पों की चर्चा के माध्यम से इन पर प्रकाश डाला गया है। सबसे व्यापक शिल्प वस्त्रों का था जिसकी विभिन्न देशों में अपनी अलग-अलग विशेषताएँ थी। यह दर्शाया गया है कि हालाँकि यूरोप में खनिजों का समृद्ध भंडार था, लेकिन इसका उत्पादन मौजूदा मानसिकताओं और तकनीकों द्वारा अवरुद्ध हुआ। इसमें जहाज निर्माण, काँच बनाने और मदिरा उत्पादन पर भी ध्यान केन्द्रित किया गया है जो कुछ क्षेत्रों में विशिष्ट थे। कारीगरों के कौशल, रिहायशी स्थल और कार्य परिस्थितियां दर्शाती हैं कि किस प्रकार वे बड़े पदानुक्रम आधारित समाज में व्यवस्थित थे।

अध्ययन की अवधि के दौरान शिल्प उत्पादन की प्रकृति को बहुत सी संस्थागत व्यवस्थाओं द्वारा आकार दिया गया था। बाजार के लिए स्वतंत्र रूप से काम करना संभव नहीं था। श्रेणियों के अध्ययन के माध्यम से इकाई में उस कार्यप्रणाली के विषय में चर्चा की गई है, जो उत्पादन के नियमन और प्रशिक्षण प्रदान करने की विधियों का आधार थे। समाज के स्तर पर कारीगरों की विविध संरचना उनकी आर्थिक स्थिति के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई थी। मध्ययुगीन यूरोप के दौरान भौतिक संस्कृति और मानसिकता के बीच सम्बन्ध का अर्थ था कि बहुत कम लोग अपनी सामाजिक स्थिति को बढ़ाने की उम्मीद रख सकते थे। जिनका समाज और राजनीति के स्तर पर सत्ता पर नियंत्रण था उन्होंने कारीगरों की स्थिति में सुधार की अनुमति नहीं दी। कई अवसरों पर क्रमवार विद्रोह हुए लेकिन वे क्रूरता से कुचल दिए गए। इस प्रकार समाज भेदभावपूर्ण था और कारीगरों को दमनकारी परिस्थितियों में काम करना पड़ता था।

8.7 शब्दावली

क्षैतिज प्रवेश मार्ग (Adit) : प्रवेश या जल निकासी के उद्देश्य से खदान में जाने वाले क्षैतिज मार्ग

चरखी (Bobbin) : फिरकी, धागे को धारण करने वाली एक शंकु आकृति। इसको बुनाई में इस्तेमाल किया जाता था।

श्रेणी (Guild) : शिल्पकारों के संगठन जो उत्पादन को विनियमित करने के लिए बनाए गए थे।

घरेलू उत्पादन (Household Production) : वह उत्पादन जो कारीगरों के हाथों में था, जो अपने कच्चे माल, औजार और श्रम से वस्तुओं का विनिर्माण करते थे। इस प्रक्रिया में परिवार के अन्य सदस्य भी योगदान करते थे।

निम्न तटीय देश (Low Countries) : नीदरलैंड (हालैंड), बैल्जियम और लक्ज़मबर्ग

नेप (Nap) : यह कतरनी से पहले बुने हुए कपड़े के खुरदरेपन को संदर्भित करता है।

दादनी प्रणाली (Putting out System - POS) : इसने विनिर्माण क्षेत्र के विकास में एक अलग चरण को चिन्हित किया। व्यापारियों द्वारा कारीगरों को पूँजी या कच्चा माल और उपकरण प्रदान किए जाते

थे। कारीगर अपने स्थान पर या निश्चित स्थान पर व्यापारी के निर्देशों के अनुसार वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए काम करते थे।

रील (Spoolers) : लकड़ी या किसी अन्य सामग्री का एक छोटा बेलनाकार टुकड़ा जिस पर कताई के समय सूत लपेटा जाता है।

नांद (Trough) : पानी रखने के लिए एक लम्बा, खुला पात्र

8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 8.2 देखिए

2) भाग 8.2 और भाग 8.3 (सभी उप-भागों सहित) देखिए

3) उप-भाग 8.3.3 देखिए

4) उप-भाग 8.3.1 देखिए। इस उप-भाग में दिए गए सूचना बॉक्स को देखें

5) उप-भाग 8.3.2 देखिए

बोध प्रश्न-2

1) भाग 8.4 देखिए

2) भाग 8.5 देखिए

8.9 संदर्भ ग्रंथ

सिपोला, कार्लो एम., (1976) *बिफोर द इन्डस्ट्रीयल रेवोल्यूशनः यूरोपियन सोसाइटी एंड इकोनॉमी 1000-1700* (ब्रिटेनः मेटुएन एंड कम्पनी लिमिटेड).

क्रूज़े, फ्रैन्कोइस, (2001) *ए हिस्ट्री ऑफ द यूरोपियन इकोनॉमी 1000-2000* (शारलोट्सविले एवं लंदनः यूनिवर्सिटी ऑफ वर्जिनिया प्रेस).

जिस्ज़तोन, अलेक्जेन्डर, (1987) 'ट्रेड एंड इन्डस्ट्री इन ईस्टर्न यूरोप बिफोर 1200' *द कैम्ब्रिज इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ यूरोप,* भाग II: *ट्रेड एंड इन्डस्ट्री इन द मिडिल एजेस,* (संपा.), पोस्टन, एम. एम. एवं मिलर, द्वितीय संस्करण (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

गॉफ, जाक् ल, (1980) *टाइम, वर्क एंड कल्चर इन द मिडिल एजेज़,* अनुवादक आर्थर गोल्ड हेमर (शिकागो एवं लंदनः द यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस).

गॉफ, जाक् ल, (1989) *मिडिवल सिविलाइजेशन 400-1500,* अनुवादक जुलिया बेरो (बासिल ब्लैकवेल).

लिप्सन, ई., (1959) *द ग्रोथ ऑफ इंगलिश सोसाइटीः ए शार्ट इकोनॉमिक हिस्ट्री,* चतुर्थ संस्करण, पुनःमुद्रित, 1964 (लंदनः एड्म एवं चार्ल्स ब्लैक).

नेफ, जॉन यू., (1987) 'माइनिंग एंड मेटालर्जी इन मिडिवल सिविलाइजेशन' *द कैम्ब्रिज इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ यूरोप,* भाग II: *ट्रेड एंड इन्डस्ट्री इन द मिडिल एजेज़,* (संपा.), पोस्टन, एम. एम. एवं मिलर, द्वितीय संस्करण (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

स्कोफील्ड, जॉन, (1987) 'लंदन 1100-1600: द आर्कियोलॉजी ऑफ ए कैपिटल सिटी', *द कैम्ब्रिज इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ यूरोप,* भाग II: *ट्रेड एंड इन्डस्ट्री इन द मिडिल एजेज़,* (संपा.), पोस्टन, एम. एम. एवं मिलर, द्वितीय संस्करण (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

थ्रूप' सिलविया, एल., (1965) 'दि गिल्ड्स' *द कैम्ब्रिज इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ यूरोप,* भाग II: *ट्रेड एंड इन्डस्ट्री इन द मिडिल एजेज़,* (संपा.), पोस्टन, एम. एम. एवं मिलर, द्वितीय संस्करण (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

पीडीएफः

प्रोफेसर कार, क्वार्टर. अस, 4 मई 2018 को वेबसाइट से लिया गया।

डेविड केटराइट (24 अगस्त 2017), क्वारा, 3 मई 2018 को लिया गया।

ज़ेप, ग्यूसेप (2007) साइन्स एंड टैक्नोलॉजी ऑफ वाइन मेकिंग, https://www.diary science.info/index/124-the science and technology of wine making.html. 4 मई 2018 को वेबसाइट से लिया गया।

मेट्रोपोलिटन म्यूजियम ऑफ आर्ट, अक्तूबर 2001, https://www.metmuseum.org/article/ medievalglass.

8.10 शैक्षणिक वीडियो

द लास्ट वेलवेट मर्चेन्टस ऑफ वेनिस, इलियट स्टाइन, बीबीसी ट्रेवल
http://www.bbc.com/travel/gallery/20181113-the-last-velvet-merchant-of-venice

इकाई 9 एशिया और यूरोप में व्यापार और वाणिज्य का विकास*

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 इस्लाम का उदय और एशिया और यूरोप में समुद्री व्यापार

9.3 मध्ययुगीन यूरोप में व्यापार

9.4 व्यापारिक समुदाय

- 9.4.1 आरमीनियाई
- 9.4.2 यहूदी
- 9.4.3 करीमी व्यापारी
- 9.4.4 एशिया और यूरोप के कुछ अन्य व्यापारी समूह

9.5 व्यापार मार्ग

9.6 वाणिज्यिक गतिविधियों के केन्द्रः बाजार और मेले

- 9.6.1 बाजार
- 9.6.2 मेले

9.7 वाणिज्यिक गतिविधियां

- 9.7.1 ऋण और साहूकारी
- 9.7.2 विनिमय के साधन, धन का लेन-देन तथा बैंकिंग और लेखांकन

9.8 सारांश

9.9 शब्दावली

9.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.11 संदर्भ ग्रंथ

9.12 शैक्षणिक वीडियो

9.0 उद्देश्य

इस इकाई में मध्यकालीन विश्व के समुद्री व्यापार का एक संक्षिप्त विवरण देने का प्रयास किया गया है। इस चर्चा में लगभग सातवी सदी से पंद्रहवीं सदी तक की अवधि शामिल है, जो अरब में इस्लाम के आगमन और मध्य युग के अंत की घोषणा करती है। पंद्रहवीं और सोलहवीं सदी से शुरू हुई यूरोपीय खोज की यात्राओं और आर्थिक परिवर्तनों के बारे में **बीएचआईसी-106** की **इकाई 4** और **इकाई 5** में चर्चा की गई है। इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपः

- सातवीं सदी से पंद्रहवीं सदी के बीच की अर्थव्यवस्था की प्रकृति को समझ पाएँगे,

* प्रो. सुशील चौधरी, फेलो, रॉयल हिस्टॉरिकल सोसाइटी, इंग्लैंड एवं डॉ. अमृत कौर बसरा, दिल्ली कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड कॉमर्स, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली। यह इकाई इग्नू के पाठ्यक्रम **एम एच आई-01** के **खंड-7**, **इकाई 24**ः ***समुद्री व्यापार***; **इकाई 25**ः ***व्यापारिक समुदाय***; और **इकाई 26**ः ***वाणिज्यिक गतिविधियाँ*** से ली गई है।

- इस अवधि में अर्थव्यवस्था को प्रभावित करने वाले घटनाक्रम का विश्लेषण कर सकेंगे,
- प्रमुख व्यापारिक समुदायों को सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्गों, और मुख्य बाजारों और मेलों को चिन्हित कर सकेंगे, और
- एशिया और यूरोप में प्रचलित वाणिज्यिक गतिविधियों को समझ सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

सबसे पहले हम इस्लाम के उदय और विकास एवं इसके प्रभाव की बात करेंगे और यह देखेंगे कि इसका प्रभाव न केवल हिन्द महासागर बल्कि भूमध्यसागर से होने वाले समुद्री व्यापार पर भी पड़ा। इस दौरान समुद्री व्यापार पर अरबों का बोलबाला रहा जो तीन शताब्दियों तक चला। अगले भाग में हम मध्ययुगीन यूरोप के व्यापार और खासतौर पर इस व्यापार में भूमध्यसागर की भूमिका पर प्रकाश डालेंगे। यहां हम मध्ययुगीन यूरोप के आयात और निर्यात व्यापार में शामिल वस्तुओं की भी चर्चा करेंगे (भारतीय समुद्री व्यापार के बारे में **इकाई 13**, **बीएचआईसी-107** और इस व्यापार के बाद के घटनाक्रम के बारे में **इकाई 8**, **बीएचआइसी-112** में विस्तार से पढ़ेंगे)।

हिन्द महासागर में पुर्तगालियों के आगमन की चर्चा अलग भाग में की गई है। इसे देखने से यह भी पता चलता है कि पुर्तगाली हिन्द महासागर के व्यापार में मामूली परिवर्तन ही कर पाए और वे इस क्षेत्र के व्यापार के ढांचे, दिशा और संगठन में कोई आमूल परिवर्तन नहीं कर पाए। ऐसा लगता है कि हिन्द महासागर में पुर्तगालियों की उपस्थिति प्रभावशाली और महत्वपूर्ण तो थी परंतु इस क्षेत्र में इसका कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा।

इस इकाई में आपको मध्यकालीन व्यावसायिक लेनदेन से परिचित कराया जाएगा। यहां हम आपको एशिया, अफ्रीका, यूरोप और अमेरिका में होने वाले व्यापारों के स्वरूप से परिचित कराएंगे। इसके अलावा स्थल और समुद्री मार्गों, बाजारों और मेलों के जरिए होने वाले व्यापार तंत्र के उदय की जानकारी भी इस इकाई में दी जाएगी। साथ ही साथ वाणिज्यिक लेनदेन को आगे बढ़ाने के लिए विभिन्न प्रकार की व्यापारिक पद्धतियों के उपयोग और वाणिज्य के विस्तार में व्यापारियों की भूमिका पर प्रकाश डाला जाएगा।

पांचवीं शताब्दी के आरंभ तक रोमन साम्राज्य एकीकृत राजनीतिक इकाई नहीं रह गया था। इसके पूर्वी प्रांतों में बाइज़ेंटाइन साम्राज्य स्थापित हो चुका था। रोमन साम्राज्य के पश्चिमी प्रांतों पर जर्मनिक कबीलों का आधिपत्य था। शार्लमेन (771-814) का शासन फ्रांस, मध्य यूरोप, उत्तरी इटली और स्पेन के एक छोटे से हिस्से में फैल चुका था।

इस क्षेत्र में राजवंशीय शासन की स्थापना के थोड़े समय बाद सातवीं शताब्दी में अरब प्रायद्वीप में इस्लाम का उदय हुआ। बाइज़ेंटाइन, अफ्रीका और एशिया के विभिन्न प्रांतों में इस्लाम ने धीरे-धीरे अपने पैर जमाना शुरू किया। इन क्षेत्रों की राजनीति पर भी इसका प्रभाव पड़ा। एशिया में दसवीं ओर तेरहवीं शताब्दी के बीच कई प्रकार के परिवर्तन हुए। मंगोलों की विजय यात्रा के साथ-साथ चीन में सुंग संस्कृति, कोरिया में कोरयो और जापान में हेयान संस्कृति का उदय हुआ। इस प्रकार इन अलग-अलग राजनीतिक परिवर्तनों के फलस्वरूप क्षेत्रीय स्थिरता स्थापित हुई। सामंती राजनीतिक व्यवस्था के कारण सैन्य संघर्ष भी हुए। यूरोप में ग्यारहवीं शताब्दी में इस्लाम के प्रसार को रोकने के लिए **धर्मयुद्धों (crusades)** की शुरुआत की गई। इससे पश्चिमी जहाजों के लिए भूमध्यसागर का रास्ता खुल गया। दुनिया के हर हिस्से में व्यापार किया जाता था, परंतु व्यापार की पद्धति और व्यापार की जाने वाली वस्तुओं में काफी विविधता थी।

1000-1300 के बीच यूरोप में वाणिज्य का विस्तार हुआ। कार्लो एम. सिपोला के अनुसार इस युग में व्यापार के व्यापक विस्तार के कारण शहरीकरण, जनसंख्या वृद्धि, नई प्रौद्योगिकी का उपयोग और अर्थव्यवस्था का मौद्रीकरण हुआ। पूरब और पश्चिम के बीच बढ़ते व्यापार में इतालवी व्यापारियों ने बिचौलिए की भूमिका निभाई। दसवीं शताब्दी के दौरान वेनिस के उदय से यह पता चलता है कि इसने पूर्वी बाइज़ेंटाइन, दक्षिणी मुस्लिम और पश्चिमी कैथोलिक क्षेत्रों के बीच सीमांत बाजार के रूप में काम किया। आने वाले वर्षों में व्यापार-तंत्र में बढ़ोत्तरी के कारण जेनेवा, पीसा, पियासेन्जा, सिएना, फ्लोरेंस और मिलान का विकास हुआ। 14वीं और 17वीं शताब्दी के दौरान समुद्रपारीय व्यापार में यूरोप की भागीदारी बढ़ी। हिन्दमहासागर और भूमध्यसागर में कई वाणिज्यिक केन्द्र और बंदरगाह विकसित हुए। पुर्तगाल प्रमुख व्यापारिक राष्ट्र के रूप में उदित हुआ और उसने व्यापारिक गतिविधियों पर अपना प्रभुत्व जमाना शुरू कर दिया। इंग्लैंड, हालैंड, फ्रांस में बड़ी व्यापारिक कंपनियों की स्थापना हुई।

यहां इस इकाई में हम मध्यकालीन विश्व के कुछ प्रमुख व्यापारिक समुदायों की भी चर्चा करने जा रहे हैं। यूरोप और एशिया के ये व्यापारिक समुदाय मध्यकाल के दौरान दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में जाकर व्यापार किया करते थे। इस काल में जहाजरानी के विकास और विभिन्न महाद्वीपों में व्यापार के विस्तार से व्यापारिक गतिविधियों में तेजी आई। गौरतलब है कि निजी व्यापारियों के साथ-साथ बढ़ते व्यापार और पूंजी जुटाने के उद्‌देश्य से बड़ी व्यापारिक कम्पनियां भी स्थापित हुईं। मध्यकाल में होने वाली इन गतिविधियों के बावजूद अलग-अलग देशों में छोटे और बड़े विभिन्न व्यापारिक समुदायों का बोल-बाला रहा। इन सभी पर विस्तार से चर्चा करना यहां संभव नहीं है, इसलिए हमने केवल कुछ उन व्यापारी समुदायों की गहराई से छानबीन की है जो मध्यकालीन व्यापार में अधिक सक्रिय रहे थे। यूरेशिया के प्रमुख व्यापारी समुदायों में हम आरमीनियाई, यहूदी, करीमी और अरब व्यापारियों की चर्चा करेंगे।

9.2 इस्लाम का उदय और एशिया और यूरोप में समुद्री व्यापार

मध्ययुगीन विश्व में इस्लाम का उदय एक महत्वपूर्ण घटना थी जिसका समुद्री व्यापार पर व्यापक प्रभाव पड़ा। कई शताब्दियों तक व्यापक वाणिज्यिक तंत्र के विकास में अरब और मुसलमान व्यापारियों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वस्तुतः यूरोपियों के आगमन के काफी पहले, पूर्वी अफ्रीका और चीनी समुद्र के बीच हिन्द महासागर के तटीय क्षेत्रों में खूब विस्तृत व्यापार हुआ करता था जिस पर मुख्य रूप से मुसलमान नाविकों और व्यापारियों का बोलबाला था। सातवीं शताब्दी के मध्य से लेकर पंद्रहवीं शताब्दी के अंत तक हिन्द महासागर के समुद्री व्यापार की सामान्य दिशा और संरचना बिलकुल स्पष्ट थी। दक्षिण चीन से पूर्वी भूमध्यसागर तक अन्तर-महाद्वीपीय यातायात का एक लंबा सिलसिला कायम था। इसके अलावा हिन्द महासागर में छोटी समुद्री यात्राएं और दूरियां तय करके भी व्यापार किया जाता था।

ऐसा लगता है कि दसवीं शताब्दी के आरंभ और उसके बाद भी अरब जहाज और व्यापारी चीन तक आते-जाते थे, और बीच में पड़ने वाले बन्दरगाहों पर रूकते थे। वस्तुतः हिन्द महासागर को पार कर दक्षिण एशिया और चीन में मुसलमान व्यापारियों और अरब व्यापारियों की सफलताओं ने हिन्द महासागर और भूमध्यसागर के लंबी-दूरी के प्राचीन काल से चले आ रहे दो प्रमुख मार्गों को जोड़ना संभव बनाया[1]। एशिया और पश्चिम के बीच होने वाले

[1] एशिया की व्यापारिक दुनिया और अरबों के बारे में इस पाठ्यक्रम में बाद में **इकाई 16** में चर्चा की गई है।

व्यापार के दो रास्ते थे एक लाल सागर से और दूसरा विभिन्न समुद्रों, नदियों से होता हुआ समुद्री मार्ग और फारस की खाड़ी, इराक और सीरियाई मरुस्थल से होकर गुजरने वाला स्थल मार्ग। इन दोनों ही रास्तों पर पहले उमय्यद खलीफाओं और बाद में अब्बासिदों का पूर्ण राजनीतिक नियंत्रण था। यहां तक कि भूमध्यसागर ने भी, जो कि ईसाई प्रभुत्व वाले उत्तर और मुसलमान प्रभुत्व वाले दक्षिण के रूप में विभाजित था, अन्ततः व्यापारियों की गतिविधियों के जरिए ही आर्थिक एकता प्राप्त की।

मानचित्र 9.1: इटली से भारत का व्यापारिक मार्ग
साभार: मोर्न
स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Italy_to_India_Route.svg

मध्यकाल में एशिया में मुख्य रूप से पूर्वी सभ्यता के चार उत्पादों का व्यापार होता था। रेशम, पोर्सेलिन, चंदन की लकड़ी और काली मिर्च, जिसके बदले में धूप, नस्ली घोड़े, हाथी दांत, सूती कपड़े और धातु से बनी वस्तुओं का विनिमय किया जाता था। जहां तक चीन से व्यापार का संबंध है फारस की खाड़ी के जहाज सातवीं शताब्दी के अंत और आठवीं शताब्दी के आरंभ में कैन्टौन पहुंच रहे थे। उनकी मुख्य रुचि चीन के रेशमी वस्त्रों में थी। चीनी लोग अरबों की दुनिया को अमूल्य और बहुमूल्य वस्तुओं का विशाल भंडार मानते थे। जावा और सुमात्रा के बारे में भी यही धारणा थी। इन दोनों क्षेत्रों से होकर ही अन्तः महाद्वीपीय विदेशी व्यापार हुआ करता था। दक्षिण अरब, फारस की खाड़ी और दक्षिण पूर्वी एशिया बहुमूल्य पत्थरों, मोतियों, धूप, इत्र, चंदन की लकड़ी और मसालों का प्रमुख स्रोत थे और एक हजार वर्षों से भी ज्यादा समय लंबे समय तक यह पूर्व-आधुनिक काल के विलासिता की वस्तुओं के लम्बी दूरी के व्यापार में प्रमुख स्तम्भ बने रहे।

चीन पर मंगोल विजय (1280) के बाद साम्राज्य के समुद्रपार सम्पर्क कमजोर होने के बजाए मजबूत हुए। मार्को पोलो (1298) और इब्न बतूता (मृत्यु 1377) के वृतांतों से पता चलता है कि हांगचाउ (Hangchow) और ज़ैतौन (Zaiton) बंदरगाह नगर इस समय खूब फले-फूले। ज़ैतौन बंदरगाह पर बड़े-बड़े जहाज लंगर डालकर खड़े रहते थे। जहां काली मिर्च से भरे एक जहाज को एलेक्जेंड्रिया और ईसाई प्रदेशों में भेजा जाता था, वहीं ऐसे 100 जहाज ज़ैतौन आते थे। जब इब्न बतूता 1343-1344 में इस शहर में आया तो उसे लगा कि यह विश्व का सबसे बड़ा बंदरगाह है। यहां एलेक्जेंड्रिया, क्यूलौन, मालाबार तट और कालीकट से भी ज्यादा वाणिज्यिक यातायात होता था।

लेकिन दसवीं शताब्दी के अंत और पंद्रहवीं शताब्दी के मध्य के बीच हिन्द महासागर के व्यापार की दिशा में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। अब्बासी खिलाफत के पतन और मिस्र में फातमिदों के उदय से लम्बी दूरी का व्यापार मार्ग बगदाद और डैमस्कस से खिसककर एडेन और फुस्तात की ओर मुड़ गया। भारत में 1303-1304 में दिल्ली के तुर्की सुल्तानों ने गुजरात पर विजय प्राप्त कर ली और इसके समुद्रतटीय शहर इस्लामी सामाजिक और राजनीतिक प्रभाव के दायरे में आ गए। लगभग इसी समय इंडोनेशियाई द्वीप समूहों के व्यापारिक बंदरगाहों और तटीय राज्यों ने भी इस्लाम धर्म को स्वीकार करना शुरू कर दिया था और धर्मांतरण की यह प्रक्रिया लगभग अगली तीन शताब्दियों तक चली।

हिन्द महासागर में हो रही इन नई गतिविधियों के समानान्तर भूमध्यसागर के ईसाई क्षेत्र में भी स्थितियां करवटें बदल रही थीं। स्पेन से मूरिश (अरब) शासकों का निष्कासन और वेनिस और जेनेवा के व्यापारिक वर्चस्व के उदय ने विश्व अर्थव्यवस्था की संरचना में नए समीकरण की प्रतीकात्मक शुरुआत कर दी। इसी समय फातमिदों द्वारा प्राचीन काहिरा में सत्ता के हस्तांतरण से अन्तः महाद्वीपीय व्यापार के लिए एलेक्जेंड्रिया एक महत्वपूर्ण पड़ाव बन गया और इस प्रकार उसका आर्थिक महत्व और भी ज्यादा हो गया। मिस्र के अय्यूबिद शासकों (1170-1260) और उसके बाद मामलूकों (1260-1517) के शासनकाल में लाल सागर के बन्दरगाहों के विकास से काहिरा का आर्थिक महत्व और अधिक बढ़ता चला गया।

परन्तु चीन में मिंग राजवंश (1368-1644) की आर्थिक नीतियों के कारण समुद्री व्यापार पर परस्पर विरोधी प्रभाव पड़ा। तीसरे मिंग सम्राट युंग-लो (Yung-lo; 1402-24) ने हिन्द महासागर के व्यापारिक राष्ट्रों के साथ चीन के आर्थिक संबंध की दिशा में एक नया प्रयोग करने की कोशिश की। इसके तहत 1404 और 1433 के बीच उसने कई समुद्री यात्राओं का आयोजन किया, परंतु 1433 में अन्ततः उसने यह योजना त्याग दी और बाद के मिंग सम्राटों ने विदेशी आगन्तुकों के लिए चीन के समुद्री तटों को बन्द कर दिया। उन्होंने चीनी व्यापारियों के विदेशी व्यापार पर प्रतिबन्ध लगा दिया। इसके बावजूद मिंग शासनकाल में विदेशी व्यापार कई रूपों में जारी रहा, खासतौर पर फिलीपीन्स, टॉन्गकिंग और मलक्का तक व्यापारी छिप-छिपकर जाया करते थे और तस्करी किया करते थे।

9.3 मध्ययुगीन यूरोप में व्यापार

सातवीं शताब्दी में भूमध्यसागर के क्षेत्र में इस्लाम के प्रवेश से पश्चिम के ईसाईयों के लिए यह समुद्री मार्ग बन्द हो गया। परंतु यह रूकावट सभी ईसाईयों के लिए नहीं थी। नेपल्स और बारी जैसे दक्षिणी इतालवी शहर के साथ-साथ पूर्व में वेनिस भी कॉन्सटैंटिनोपल के सम्राट को मान्यता देते रहे। एड्रियाटिक के शीर्ष पर स्थित होने के कारण **सारासीनियाई** विस्तार से उनके लिए कोई गंभीर खतरा नहीं था। वेनिस पहले से ही एक मजबूत और बड़ी समुद्री शक्ति था, 1100 तक आते-आते इसने समुद्र के पूर्वी तट पर पूर्णतः अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया जिसे वह अपना क्षेत्र समझता था और शताब्दियों तक उसका इस क्षेत्र पर नियंत्रण रहा। वस्तुतः यूरोप में दो बड़े वाणिज्यिक आंदोलन हुए। ये आंदोलन मध्ययुग के आरंभ में इसकी सीमाओं पर आरंभ हुए। एक आंदोलन पश्चिमी भूमध्यसागर और एड्रियाटिक, और दूसरा बाल्टिक और उत्तरी सागर में आरंभ हुआ। बाल्टिक और उत्तरी सागर पर स्कैनडिनेवियों का बोलबाला था जो केवल पश्चिम से ही व्यापार नहीं किया करते थे। एक ओर जहां डेन्स और नॉर्वेजियन्स ने कैरोलिन्जियन साम्राज्य पर कब्जा जमा लिया, वहीं इंगलैंड, स्कॉटलैंड और आयरलैंड तथा उनके पड़ोसी स्वीडन ने रूस की ओर रुख किया। धर्मयुद्ध के बाद भूमध्यसागर पर मुसलमानों का वर्चस्व समाप्त होना एक दूसरी महत्वपूर्ण घटना थी। अब पूरा भूमध्यसागर पश्चिमी समुद्री व्यापार के लिए फिर से खुल चुका

था। इन धर्मयुद्धों के परिणामस्वरूप काफी समय तक इतालवी शहर और कुछ हद तक प्रोवेन्स और कैटेलोनिया भी भूमध्यसागर पर छाए रहे।

उत्तरी यूरोप के व्यापार का पूर्वी और भूमध्यसागरीय वस्तुओं से बहुत लेना-देना नहीं था। छठी और दसवीं शताब्दियों के बीच नियमित रूप से व्यापारी और योद्धा यूरोप के सुदूर उत्तर से बाइजेंटाइन तक सामान लाते थे और फिर बाइजेंटाइन से सामानों को लेकर उत्तरी यूरोप की ओर जाते थे। बाद की शताब्दियों में इतालवी व्यापारी बराबर इंग्लैंड और फ्लैन्डर्स के बंदरगाहों की ओर जाने लगे और अपने साथ लेवैन्टाइन और पूर्वी उत्पादों को भी लाने लगे। इसके अलावा इतालवी व्यापारी और उत्तर से आए व्यापारी, जर्मनिक, फ्लेमिंग्स, अंग्रेज और फ्रांसीसी नियमित रूप से आवागमन करने लगे और मध्य तथा उत्तरी यूरोप के बाज़ारों में एक दूसरे से मिलने लगे। मध्ययुग में कई केन्द्रों ने प्रमुखता प्राप्त की। बारहवीं और तेरहवीं शताब्दी में शैम्पेन, चौदहवीं और आरंभिक पंद्रहवीं शताब्दी में ब्रुगज़ (Bruges) और पंद्रहवीं शताब्दी में जेनेवा और एन्तवर्प नामक शहरों का उदय हुआ। पूरे यूरोप से आए व्यापारी इतालवी और इतालवियों द्वारा लाए गए सामानों का दूसरी वस्तुओं से आदान-प्रदान करते थे।

पूरे उत्तरी यूरोप और उत्तरी यूरोप तथा दूसरे देशों के बीच होने वाले व्यापार में उत्तरी क्षेत्र के उत्पादों का बोलबाला था। ये ऐशो आराम और अलंकरण की वस्तुएं नहीं थीं बल्कि जीवनयापन के लिए आवश्यक वस्तुओं का ही ज्यादा व्यापार होता था। दक्षिण में भी खाद्य पदार्थों या कच्चे माल का व्यापार भूमध्यसागरीय क्षेत्र में शुरू हो गया। दक्षिणी व्यापार इस दृष्टि से अलग था कि इसमें केवल भारी भरकम वस्तुएं हीं नहीं बल्कि ऐशो आराम की वस्तुएं भी शामिल थीं। इसके विपरीत उत्तरी यूरोप का व्यापार प्रमुखतः जीवनयापन की वस्तुओं तक सीमित था।

यूरोप में लम्बी दूरी की यात्राओं के जरिए मध्यकाल में वाणिज्यिक विकास हुआ। मसाले इस व्यापार का प्रमुख आकर्षण थे। इस व्यापार ने न केवल वेनिस को धनी बनाया बल्कि पश्चिमी भूमध्यसागर के सभी बड़े बंदरगाहों को समृद्धि प्रदान की। सीरिया, जहां अरब, भारत, और दक्षिण पूर्व एशिया से कारवां के जरिए सामान पहुंचाया जाता था, यूरोप के जहाजों का प्रमुख गंतव्य स्थान था। परंतु तेरहवीं शताब्दी के आरंभ से यूरोप में प्रमुख रूप से चावल, संतरा, खूबानी, अंजीर, किशमिश, इत्र, औषधि और रंग के सामानों का आयात होता था। इसमें सूती कपड़े भी शामिल थे। बारहवीं शताब्दी के अंत से कच्चे सिल्क का भी आयात होने लगा। इन आयातों के बदले में इतालवी लेवेन्ट के बंदरगाह पर लकड़ी और हथियार और वेनिस द्वारा कभी-कभी दासों की भी आपूर्ति करने लगे। परंतु बहुत जल्द ही ऊनी सामान का निर्यात होने लगा। प्रारंभ में इटली में बने मोटे ऊनी कपड़े **(fustians)** और बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से फ्लैन्डर्स और उत्तरी फ्रांस से वस्त्रों का निर्यात होने लगा। परंतु अंग्रेजी जहाज उनके ऊन उत्पादों को निर्यात करने में मदद नहीं किया करते थे। ये सामान मुख्य रूप से महाद्वीपीय जहाजों द्वारा ले जाया जाता था और तेरहवीं शताब्दी तक आते-आते ट्यूटोनिक हानों (Hans) का इन पर लगभग एकाधिकार हो गया। इस प्रकार यदि मध्ययुग में होने वाले समुद्री या विदेशी व्यापार से जुड़ी वस्तुओं को देखें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि औद्योगिक उत्पादों की अपेक्षा कृषीय और खाद्य पदार्थों का ही ज्यादातर व्यापार होता था, मसलन, मसाले, शराब, अनाज, नमक, मछली और ऊन। सबसे पहले **निम्न तटीय क्षेत्रों** (Lower Countries) और बाद में फ्लोरेंस से कपड़े का निर्यात शुरू हुआ।

9.4 व्यापारिक समुदाय

व्यापारिक और वाणिज्यिक लेन-देन की वृद्धि ने व्यवसायिक गतिविधियों और उससे जुड़े

व्यक्तियों को प्रोत्साहित किया। व्यापारी और व्यापारिक समुदाय इन गतिविधियों का केन्द्र बिन्दु थे।सामान की लेन-देन के साथ-साथ इन व्यक्तियों ने साहूकारों, फाइनेंसरों, सर्राफ, ब्रोकरों, बैंकरों, वाणिज्यिक एजेंटों, इत्यादि के रूप में भी काम किया। बड़े साहूकार ज्यादातर समय इनमें से काफी गतिविधियों को एक साथ संपादित करते थे। जबकि इनमें से कुछ खुद को केवल अपने किसी विशेष क्षेत्र तक ही सीमित रखते थे। ऐसी विशेषज्ञता मध्यकाल के अन्त तक धीरे-धीरे उभरकर सामने आई। स्थानीय स्तर पर लेन-देन सीधे तौर पर उत्पादकों के हाथों में था। इसलिए भिक्षु (monks), मछुआरे, किसान और भूमिपति 'अंशकालीन व्यापारी' ('part-time merchants') थे। हालाँकि जैसे-जैसे व्यापार में वृद्धि हुई, यह व्यापार उद्यमी व्यापारियों के नियंत्रण में आ गया।

9.4.1 आरमीनियाई

इंगलिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के निदेशक मंडल ने 1699 में यह टिप्पणी की थी कि 'आरमीनियाई संभवतः दुनिया के सबसे पुराने व्यापारी हैं'। उनकी इस बात में अतिशयोक्ति नहीं लगती। वस्तुतः प्राचीन काल से लेकर पूर्व-आधुनिक युग के अंत तक आरमीनियाई व्यापारी समुदाय यूरेशियाई क्षेत्र में अन्तरराष्ट्रीय और अन्तर-महाद्वीपीय व्यापार में संलग्न थे। अपनी मातृभूमि (आरमीनिया) से बाहर निकलकर वे एशिया और यूरोप के विभिन्न देशों में फैले और न केवल प्रमुख शहरों, बंदरगाहों और व्यापारिक हाटों पर उन्होंने अपने पैर जमाये बल्कि वह, अपने देश से दूर, दूरदराज के अंदरूनी इलाकों में स्थापित उत्पादन केन्द्रों में जाकर रहने लगे। इस प्रकार उन्होंने लम्बी दूरी के व्यापार की बेहतरीन और ठोस अधिसंरचना निर्मित की और एक मजबूत वाणिज्यिक नेटवर्क स्थापित किया और अपना मुख्यालय न्यू जुल्फा में बनाया। आरमीनियाइयों की यह 'व्यापारिक दुनिया' ('trading diaspora') सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी के दौरान अपने आप में अनूठी थी।

आरमीनियाई व्यापार नेटवर्क

सत्रहवीं शताब्दी में आरमीनियाई व्यापार नेटवर्क के उदय और उनके प्रसार को कुछ हद तक पूर्व शताब्दी की ऐतिहासिक घटनाओं से भी मदद मिली जब प्राचीन आरमीनिया ईरानी-ऑटोमन प्रतिद्वन्दिता का शिकार बना। सत्रहवीं शताब्दी के आरंभ में ईरानी सम्राट शाह अब्बास I ने पेशेवर आरमीनियाई व्यापारी और शिल्पियों को जबरन शहर से बाहर निकालकर इस्फहान के इलाके में न्यू जुल्फा नामक नए शहर में ले जाकर बसाया। सम्राट का मुख्य उद्देश्य अपनी नई स्थापित राजधानी शहर इस्फहान को आरमीनियाई उद्यमियों की निपुणता की मदद से एक बड़े व्यापारिक केन्द्र में तब्दील करना था। व्यापारियों ने उन्हें निराश भी नहीं किया। उनके पास पूंजी और एशिया तथा यूरोप में व्यापारिक संबंध थे, इसलिए आरमीनियाइयों ने 'ईरान के कच्चे रेशम के विदेशी व्यापार को विकसित किया, उन्हें नए बाजारों तक पहुंचाया, नए उत्पादों का विकास किया और नए-नए व्यापारिक मार्गों की खोज की'। 1722 में अफगानों द्वारा ईरान पर आक्रमण करने के समय तक विभिन्न शाहों के शासन काल में उन्होंने ईरान की आर्थिक समृद्धि में चार चांद लगाए। इस आक्रमण के बाद न्यू जुल्फा के आरमीनियाइयों को काफी नुकसान पहुंचा और इसके बाद प्रमुख आरमीनियाई व्यापारी दूसरे देशों में जाकर बस गए।

आरमीनियाइयों का नेटवर्क काफी बड़े भौगोलिक क्षेत्र में फैला हुआ था। बंगाल से लेकर दिल्ली-आगरा तक, सूरत से लेकर लाल सागर और फारस की खाड़ी के बंदरगाह तक इनका नेटवर्क था। अब यह लगभग साबित हो चुका है कि भारत के वाणिज्यिक और आर्थिक जीवन में आरमीनियाइयों ने प्रमुख भूमिका निभाई थी। हालांकि यह बताना संभव नहीं है कि आरमीनियाइयों ने कब भारत में अपनी व्यापारिक गतिविधियां शुरू की थीं परंतु इतना तो तय है कि यूरोपियों के आने के काफी पहले से वे भारत में व्यापार कर रहे थे।

एक महत्वपूर्ण व्यापारी समुदाय के रूप में वे सभी व्यापारिक और उत्पादन केन्द्रों, शहरों और बंदरगाहों में मौजूद थे। लेकिन उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि व्यापार में थोड़े मुनाफे की भी गुंजाइश मालूम होने पर वे दूर-दराज के किसी भी इलाके तक जा सकते थे और दूसरे व्यापारी समुदाय से अलग किसी भी वस्तु का व्यापार कर सकते थे।

सैदाबाद (मुर्शिदाबाद का एक उप-नगर), हुगली, कलकत्ता, कासिमबाजार, ढाका और पटना में आरमीनियाई व्यापारियों की अपनी समृद्ध बस्तियां और चर्च हुआ करते थे। आगरा, दिल्ली, बनारस, सूरत, मद्रास, मसूलीपट्टनम और भारत के अन्य शहरों और बंदरगाहों में भी वे बड़ी संख्या में रहते थे। गौरतलब है कि बंगाल/भारत में व्यापाररत आरमीनियाइयों का न्यू जुल्फा से संबंध टूटा नहीं था। इस बात के कई प्रमाण मिलते हैं कि बंगाल में रहने वाले आरमीनियाइयों का सम्पर्क न्यू जुल्फा से था और बंगाल तथा न्यू जुल्फा से लगातार आना-जाना लगा रहता था जिससे यह स्पष्ट होता है कि आरमीनियाइयों की व्यापारिक गतिविधियों में उनके सांस्कृतिक और जातीय बंधन का विशेष महत्व था।

आरमीनियाइयों की सफलता

आरमीनियाई अलग-अलग नहीं बल्कि एक समूह में काम करते थे। उन्हें अपनी पहचान पर गर्व था। उनकी एक भाषा, संस्कृति और धर्म था। इससे उन्हें अपने व्यापारिक तंत्र को बढ़ाने और फैलाने में काफी मदद मिली। प्रश्न यह उठता है कि यूरोपीय ज्वाइंट स्टॉक कम्पनियों के इतने विकसित संगठनात्मक ढांचे से आरमीनियाई व्यापारी कैसे टक्कर ले सके और उनकी सफलता का राज क्या था।

संभवतः विशिष्ट जातीय और धार्मिक अल्पसंख्यक वर्ग होने के कारण एक भरोसे का माहौल, आपस में सूचनाओं का आदान-प्रदान और परस्पर सहयोग व समर्थन आरमीनियाइयों की सफलता का रहस्य था। इसमें कोई संदेह नहीं कि कुछ अन्य प्रवासी समुदायों जैसे यहूदियों में भी ये विशेषताएं थीं परंतु संभवतः आरमीनियाई उनसे इस मामले में आगे थे और इसलिए वे दूसरों की अपेक्षा ज्यादा सफल भी थे।

हालाँकि आरमीनियाइयों की व्यवस्था जो कि परिवार और नातेदारी पर आधारित थी कोई अनूठी बात नहीं थी। सुप्रसिद्ध इतालवी व्यापारी परिवार इसी प्रकार की पारिवारिक व्यवस्था का यूरोपीय उदाहरण है। आरंभिक आधुनिक युग में व्यापार करने का यह सामान्य तौर-तरीका था। भारत में भी खासतौर पर मारवाड़ी और गुजराती तथा पारसी भी इसी तरह से व्यापार किया करते थे। ये सभी अपने-अपने उद्यमों में काफी सफल थे। वस्तुतः आरमीनियाइयों की सफलता का एक प्रमुख कारण यह भी था कि वे अपने घर से बाहर रहकर भी सफल और समृद्ध होने की इच्छा रखते थे और वे जहां भी व्यापार करते थे वहां के परिवेश में घुलमिल जाते थे और वहां की भाषा और रीति-रिवाजों का ज्ञान भी प्राप्त कर लेते थे। यह लचीलापन उनकी विशेषता थी। इन व्यापारियों की एक खूबी यह थी कि वे व्यापार करने का बड़ा से बड़ा जोखिम उठा सकते थे और स्थल व्यापार के जोखिम को पहचानने की भी दृष्टि उनके पास थी। वे हमेशा किसी भी परिमाण की व्यापारिक खेप ले जाने के लिए तैयार रहते थे और इसी में आरमीनियाइयों ने विशेषज्ञता हासिल की, जिस कारण मध्यपूर्व, भारत और यहां तक कि यूरोप में भी उनकी पदचाप सुनाई पड़ने लगी और यही उनकी अभूतपूर्व सफलता का राज़ था।

9.4.2 यहूदी

आरमीनियाइयों की तरह यहूदी व्यापारी समुदायों ने भी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और वित्त के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस्लामी इतिहास की आरंभिक शताब्दियों में यहूदी समुदाय लगभग हर शहर में पाए जाते थे और ये यहूदी इस्लामी राज्य की परिधि से बाहर होने वाले

व्यापार में भी हिस्सा लिया करते थे। उत्तर अफ्रीका और मिस्र से लेकर ईरान और खोरासान तथा भारत में मालाबार तक यहूदी समुदाय प्राचीन काल से ही व्यापार करते आ रहे थे। वस्तुतः मुसलमान आक्रमण के पहले इराक या बेबीलोनिया में यहूदी बहुतायत संख्या में मौजूद थे और यहां वे नेस्टोरियाई ईसाईयों के बाद दूसरे स्थान पर थे। वास्तव में, जब बगदाद इस्लाम की राजधानी बना और आठवीं और नवीं शताब्दी में व्यापार की लहर आई तो यहूदियों ने इसमें सक्रिय रूप से हिस्सा लिया। नवीं शताब्दी में भारतीय व्यापार अन्तरराष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का आधार बन गया। इसके फलस्वरूप आन्तरिक वाणिज्य में अभूतपूर्व तीव्रता आई और जिसके फलस्वरूप एक एकीकृत द्विधातु-मुद्रा प्रणाली विकसित हुई जिसने पूर्वी और पश्चिमी खिलाफत को अपने दायरे में ले लिया।

इस मौके पर बेबीलोनियाई यहूदियों की केन्द्रीय और मुख्य अवस्थिति के कारण उन्होंने न केवल भारत के साथ लम्बे व्यापार की शुरुआत की बल्कि वित्त संगठनों और राज्य वित्त व्यवस्था की भी शुरुआत की। बगदाद और इस्फहान में महत्वपूर्ण और निर्णायक यहूदी सम्पर्कों के साथ बड़े वित्तीय और बैंकिंग संस्थान खुले। आज हम जिस कॉरपोरेट अन्तर्राष्ट्रीय वित्त की बात करते हैं उसकी शुरुआत नवीं शताब्दी के अंत और दसवीं शताब्दी के आरंभ में अब्बासिदों के समय में यहूदियों द्वारा शुरू किया जा चुका था। इस काल में यहूदी बैंकरों का शासकों पर काफी प्रभाव था। वे सरकार को धन मुहैया कराते थे और राज्य की वित्तीय व्यवस्था को सुदृढ़ करते थे और साथ ही साथ राजकोषीय प्रणाली और कृषि राजस्व वसूलने के ठेकों की प्रक्रिया में शामिल थे। दसवीं शताब्दी के आरंभ में यहूदी बैंकरों ने अब्बासिद मुद्रा बाजार पर नियंत्रण स्थापित किया और हुंडी (*सुफ्ताजा*) और चेक (*साक*) जैसी परिष्कृत वित्तीय तकनीकों के विकास में अहम् भूमिका निभाई। बैंकर, व्यापारी (*तुज्जार*) भी हुआ करता था और वह यहूदी तथा मुसलमान व्यापारियों को वित्त भी प्रदान किया करता था। वे अफ्रीकी दास व्यापार के लिए धन उपलब्ध करवाते थे, मध्य एशिया और चीन भेजे जाने वाले कारवां को तैयार करते थे और भूमध्यसागर तथा हिन्दमहासागर में जाने वाले समुद्रपारीय अभियानों का संयोजन करते थे।

इराक और ईरान में वित्त और ऋण संस्थानों में यहूदी मुसलमानों से काफी आगे बढ़ गए। मिस्र में यहूदी और ईसाईयों की आर्थिक और प्रशासनिक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका इनकी आबादी की तुलना में अपेक्षाकृत काफी ज्यादा थी। दसवीं शताब्दी तक मिस्र (उत्तरी अफ्रीका के साथ) अपनी बढ़ती ताकत का निकास खोजने लगा और फातिमिदों ने अपने प्रतिद्वंद्वी इराकियों से भारत के व्यापार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा अपने हाथ में ले लिया। इसके परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में यहूदी काहिरा पहुंचे। पूरब में अब्बासिदों की पकड़ और ताकत ढीली और कमजोर होती चली गई और दसवीं शताब्दी के अंत में पश्चिम में, खासतौर पर सेलजुक आक्रमण के बाद और धर्मयुद्धों की शुरुआत (1096) के बाद, वे कमजोर पड़ने लगे और बगदाद का पतन हो गया। इसका असर व्यापार पर भी पड़ा और यहां तक कि अधिकांश भारतीय व्यापार का रूख मिस्र की ओर मुड़ गया। इसी प्रकार आने वाले सामानों की मात्रा तेजी से बढ़ी। मिस्र में ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दी में जब व्यापार का फैलाव हुआ तो एक बार फिर इस क्षेत्र में यहूदियों का बोलबाला हो गया।

उत्तरी अफ्रीका के यहूदी समुदाय, जिन्होंने दसवीं और ग्यारहवीं शताब्दी में पूर्वी भूमध्यसागर में विस्तृत रूप से व्यापार किया, से संबंधित बहुत से कागजात (गेनिज़ा दस्तावेज़) संयोगवश प्राप्त हुए हैं। इनसे हमें उस समुदाय की व्यापारिक गतिविधियों को समझने में खासी मदद मिलती है। काहिरा गेनिज़ा के इन व्यापारियों के साथ होने वाले पत्र व्यवहार से उनकी लम्बी दूरी के व्यापार के भौगोलिक विस्तार की स्पष्ट जानकारी मिलती है।

इस समुदाय के लोग ट्यूनिशिया में क़ेरवान, मिस्र में एलेक्जेंड्रिया और फ़ुस्तात और लाल सागर के मुहाने पर स्थित एडेन – सब जगह मौजूद थे। इससे दोस्तों और संबंधियों द्वारा

दूर-दराज बैठे मालिक की तरफ से सामान बेचने में काफी मदद मिलती थी। गेनिज़ा के दस्तावेजों से यह स्पष्ट होता है कि यहूदी व्यापारी आपस में दोस्ती और नाते-रिश्तेदारी, आपसी विश्वास और वित्तीय हितों द्वारा जुड़े हुए थे। यह समुदाय इतना सुगठित था कि यदि नियम का उल्लंघन करने वाले सदस्य के खिलाफ यह समुदाय निर्देश जारी करता था तो उसकी साख और सम्मान धाराशाई हो जाते थे। एक बार जिस व्यक्ति पर अविश्वास कर लिया जाता था वह जल्द ही अपनी साख खो बैठता था।

इसके अलावा गेनिज़ा दस्तावेजों के विस्तार से ये भी पता चलता है कि किन यथार्थ परिस्थितियों में भूमध्यसागरीय क्षेत्र का यह व्यापारिक समुदाय उत्तरी अफ्रीका से लेकर भारत तक अपना अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक जीवन बिताता था। इन दस्तावेजों से सबसे रोचक तथ्य यह सामने आता है कि यहूदी व्यापारी ट्यूनिशिया, अन्दलूसिया (स्पेन) और यहां तक कि समुद्र-पार व्यापार में सिसली तक पहुंचे हुए थे। इनमें से कई लोग पश्चिमी भारतीय व्यापार के साथ संबंधित थे और अक्सर मालाबार बंदरगाह, अदन और फुस्तात जाया करते थे। गेनिज़ा दस्तावेजों से यह बिलकुल स्पष्ट है कि उत्तरी भारत में फातमिद सम्पर्क सूत्रों के कारण इन व्यापारियों को व्यापक स्तर पर वाणिज्यिक लेन-देन करने में काफी सहूलियत हुई। परंतु यह भी सत्य है कि हिन्द महासागर से पश्चिम भूमध्यसागर तक प्रत्यक्ष सम्पर्क के आधार पर जहाजों पर सामानों की लदाई नहीं होती थी। गेनिज़ा व्यापारी भारत और मग़रिब के बीच होने वाले व्यापार के लिए बिचौलियों पर आश्रित थे।

वस्तुतः, भारत के पश्चिमी तट से लेकर भरूच के दक्षिण तक और फिर इंडोनेशिया तक लगभग बीस ऐसे स्थान थे जो यहूदियों के व्यापारिक पड़ाव थे और जिनका सम्पर्क मिस्र और लाल सागर से था। परंतु पहले की तरह वे अब बहुत प्रमुख नहीं रह गए थे और दसवीं शताब्दी से बारहवीं शताब्दी तक के भारतीय व्यापार को काफी हद तक भूमध्यसागर में रहने वाले मुसलमानों द्वारा सम्पन्न किया जाता था और वे ही इसके लिए वित्त का प्रबंध भी करते थे। इसके बावजूद काहिरा यहूदी व्यापारिक गतिविधियों और वित्तीय क्रियाकलापों का एक महत्वपूर्ण केन्द्र बनता चला गया। भूमध्यसागर और हिन्दमहासागर के बीच मिस्र एक नवीन बिचौलिए के रूप में उभरा। अतएव ग्यारहवीं शताब्दी में इराक और ईरान के व्यापारी भूमध्यसागर में बसने लगे परंतु इसकी विपरीत प्रक्रिया नज़र नहीं आती। 1050 के बाद से यहूदी बड़ी संख्या में बगदाद से निकलकर स्पेन में बसने लगे। ग्यारहवीं शताब्दी में इतालवी अधिक्रमण के बावजूद भूमध्यसागर अभी भी अधिकांशतः इस्लामी नियंत्रण और भूमध्यसागर में व्यापार करने वाले अरबभाषी यहूदियों के कब्जे में था।

1492 में स्पेन से यहूदियों के निष्कासन के समय काफी बड़ी संख्या में स्पेनी यहूदियों ने कम से कम नाममात्र के लिए ईसाई धर्म अपना लिया। नाममात्र के लिए ईसाई धर्म अपना लेने से उन्हें पहले से ज्यादा आजादी मिल गई। इसी समय 1492 में जिन यहूदियों ने स्पेन छोड़ दिया था वे या तो ऑटोमन बंदरगाहों पर या फिर पुर्तगाल चले गए (जहां उन्हें 1497 में बलपूर्वक ईसाई बना दिया गया)। इन दो महत्वपूर्ण स्थानों से उन्हें नए वाणिज्यिक अवसर प्राप्त हुए और दुनिया के मानचित्र पर उभरे नए व्यापारिक मार्गों से व्यापार करने की सहूलियत मिली। इस प्रकार सोलहवीं शताब्दी के आरंभ में यहूदी और प्रच्छन्न-यहूदी (crypto-Jews) तीन प्रमुख पारसमुद्रीय और वाणिज्यिक क्षेत्र में कार्यरत थे वे या तो ईसाई धर्म से संबंधित थे या उन्हें तुर्की बन्दरगाहों पर पुनर्स्थापित कर दिया गया। उन्हें अब जो आजादी प्राप्त हुई थी उसके कारण उन्हें लम्बी दूरी के व्यापार करने में सहूलियत हुई।

9.4.3 करीमी व्यापारी

काहिरा गेनिज़ा के दस्तोवज जहां एक ओर ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दियों में लम्बी दूरी के व्यापार करने वाले विशिष्ट यहूदी व्यापारी समुदाय के बारे में कई प्रकार की जानकारियां

देते हैं वहीं 'करीम' नाम से प्रसिद्ध विस्मयकारी आर्थिक संगठन पर भी कुछ रोशनी डालते हैं। मिस्र के स्रोतों में लाल सागर के करीमी व्यापारियों को हिन्द महासागर के मसाला व्यापार में सक्रिय रूप से संलग्न बताया गया है। इसके अलावा भारतीय व्यापार के संदर्भ में गेनिज़ा के दस्तावेजों में बार-बार 'करीम' शब्द का उल्लेख हुआ है। इन दस्तावेजों के आधार पर एस. डी. गोयटिन पूरे विश्वास के साथ यह तर्क देते हैं कि बारहवीं शताब्दी में 'करीम' न तो व्यापारियों की कोई श्रेणी थी और न ही अन्तरराष्ट्रीय व्यापार की कोई विशिष्ट शाखा, बल्कि हर साल यात्रा पर जाने वाला एक समुद्री कारवां था। हालांकि गोयटिन इसकी कोई स्पष्ट व्याख्या नहीं करते हैं, पर हम केवल इतना ही अंदाज लगा सकते हैं कि उस समय हिन्द महासागर व्यापार में इस प्रकार के संगठन की क्या जरूरत थी। निस्संदेह 1000 और 1300 सी ई के बीच यूरोपीय एशियाई व्यापार में काफी तेजी आ गई थी और काफी भारी मात्रा में व्यापार होने लगा था। इसलिए समुद्र के रास्ते व्यापारियों के लिए अकेले निकलना खतरनाक होता होगा। अकेले निकलने पर समुद्री डाकुओं का भी खतरा होता होगा और राज्य-कर भी ज्यादा झेलना पड़ता होगा। इसका हल निकालने के लिए धनी व्यापारियों ने कारवां की व्यवस्था की होगी जो मध्यपूर्व के राजनीतिक शासकों से संरक्षण खरीदने में सक्षम रहे होंगे और इस प्रकार हिन्द महासागर के समुद्री डाकुओं के आक्रमण से रक्षा करने में अधिक संगठित होंगे। इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि करीमी व्यापारी मिस्र के लाल सागर तट पर स्थित क्यूरेशिया अल-क़दीम (Quresia al-Qadim) के बंदरगाह से अपना व्यापार संयोजित करते थे। यह व्यापार यमन, दक्षिण अरब और भारत के साथ नियमित रूप से होता था। वे काली मिर्च, मसाले, गेहूं, चावल, चीनी, रेशम और कपड़े का व्यापार किया करते थे।

9.4.4 एशिया और यूरोप के कुछ अन्य व्यापारी समूह

मध्यकाल में पूरी दुनिया में व्यापारिक गतिविधियों में आई तेजी के कारण आरमीनियाइयों और यहूदियों के अलावा कई अन्य व्यापारिक समूह और समुदाय उभरकर सामने आए।

सोगदियाई (Sogdians) व्यापारी आरंभिक मध्ययुग का एक प्रमुख समुदाय था। वे ईरानी मूल के लोग थे और मध्य एशिया के वासी थे (आज का उज़्बेकिस्तान और पश्चिमी तजाकिस्तान)। वे कुशल शिल्पी, दुभाषिये, अश्वपालक और दस्तकार के रूप में प्रसिद्ध थे। सोगदियाई पहले पहल बौद्धग्रंथों का चीनी में अनुवाद करने वाले प्रथम लोगों में से थे। सामान्यतः वे ज़रथुष्ट्र मत में आस्था रखते थे। ईसा पूर्व के आरंभ से ही चीन में उनकी उपस्थिति के प्रमाण मिलते हैं। मध्य एशिया के पश्चिम क्षेत्र, चीन और यहां तक कि श्रीलंका, भारत और चीन के समुद्री रास्तों के बीच में पड़ने वाले अनेक स्थानों में उनके उपनिवेश फैले हुए थे।

7000 कि. मी. लम्बे रेशम मार्ग पर, जो चीन से एशिया होते हुए पूर्वी रोमन साम्राज्य से लेकर भूमध्यसागर के तट तक फैला हुआ था, सोगदियाइयों का पूर्ण वर्चस्व था। इस मार्ग पर ज्यादातर सोगदियाई भाषा बोली जाती थी। नवीं शताब्दी के अंत में इस मार्ग पर व्यापार कम हुआ और चौदहवीं शताब्दी तक यह मार्ग पूर्णतः त्याग दिया गया। चौथी से नवीं शताब्दी सी ई तक सोगदियाई प्रभाव ज्यादा मुखर रहा। सोगदियाई मुख्य रूप से चीनी रेशम का व्यापार किया करते थे। इसके अलावा वे मलमल, काली मिर्च, चांदी और कस्तूरी का व्यापार भी किया करते थे।

चीनी व्यापारी दसवीं शताब्दी के बाद से बड़े पैमाने पर समुद्रपारीय व्यापार में संलग्न हुए। भूगोल, खगोलशास्त्र, कम्पास के आविष्कार और जहाज बनाने की प्रौद्योगिकी संबंधी ज्ञान ने उन्हें इस क्षेत्र में बढ़त दी। हालांकि चीन की सरकार समुद्री व्यापार पर कड़ा नियंत्रण रखती थी और सभी आयातों और निर्यातों की सूक्ष्म निगरानी की जाती थी। सोंग (Song) राजवंश (960-1279) ने व्यापारिक कार्यकलापों को बढ़ावा दिया। चम्पा, खमेर (Khmer)

साम्राज्य, सुमात्रा और मलय प्रायद्वीप के बंदरगाह शहरों से उनके व्यापारिक संबंध थे। तेरहवीं शताब्दी के अंत में मार्कोपोलो ने चीनी जहाजों की खूब प्रशंसा की है। इब्न बतूता (*ट्रेवल्स इन एशिया एंड अफ्रीका 1325-1354*) उनके जहाजों का विस्तृत विवरण प्रदान करता है कि 'पूरी दुनिया में चीनियों के समान कोई धनी नहीं है'। मिंग (Ming) शासन काल (1336-1644) में चीनी व्यापारियों को जबरदस्त प्रोत्साहन दिया गया। 1405 में मिंग सम्राटों ने व्यापार के साथ-साथ नजराना वसूल करने के लिए समुद्री अभियानों का प्रायोजन किया। जहाज पर रेशम और पोर्सलिन लदे होते थे। वे हिन्द महासागर के बंदरगाहों पर जाया करते थे। यहीं से वे बदले में मसाले, हाथी के दांत, दवाएं, लकड़ी और मोती प्राप्त करते थे। चेंग हो (Cheng Ho) या ज़ेंग हे (Zheng He; 1371-1433) ने 300 जहाजों से ज्यादा और 27800 नाविकों और सैनिकों के ज़खीरे के साथ समुद्री अभियान की शुरुआत की थी। 1405-1433 में चेंग हो ने ऐसे सात अभियान भेजे थे जिसने 50,000 कि. मी. की यात्रा की थी तथा दक्षिण पूर्व एशिया, अरब और अफ्रीका के 37 देशों तक पहुँचे थे। इन अभियानों से विशाल क्षेत्र में व्यापार सम्पर्क स्थापित करने में मदद मिली थी। निजी हाथों से व्यापार को दूर रखना भी इस प्रकार के अभियानों का एक मुख्य उद्देश्य था। चीनी सरकार ने सोलहवीं शताब्दी में पहली बार चीन के निजी व्यापारियों को व्यापार करने की छूट दी।

मध्यकालीन भारत में व्यापारिक गतिविधियां बहुत अच्छी तरह से विकसित थीं और बड़े पैमाने पर अंतर्देशीय और विदेशी दोनों व्यापार किया जाता था। इस अवधि में अति विशिष्ट व्यापारिक समुदाय भी उभर कर सामने आए। विशिष्ट वस्तुओं और क्षेत्रों में विभिन्न व्यापारिक समूह कार्यरत थे। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण समूह थेः गुजरात में बनिये, बोहरे और पारसी; राजस्थान में हिन्दु और जैन मारवाड़ी; पंजाब और उत्तर भारत में खत्री; पूर्वी तट पर चेट्टी और कोमाति; और गुजरात, दक्कन और बंगाल में, संभवतः विदेशी मूल के, मुसलमान व्यापारी।

समुद्री व्यापार के क्षेत्र में **वेनेशियाई व्यापारियों** का भी एक प्रमुख समूह था। वे बारहवीं शताब्दी से मिस्र में व्यापार किया करते थे। परंतु तेरहवीं शताब्दी के बाद से वे बड़े पैमाने पर मुस्लिम इलाकों में प्रवेश करने लगे। मिस्र के अय्यूबिद शासकों ने मिस्र और सीरिया में उन्हें व्यापार करने का विशेषाधिकार प्रदान किया। हालांकि चर्च द्वारा (धर्मयुद्ध के कारण) मिस्र से व्यापार करने पर प्रतिबंध लगाने से बीच में थोड़ी रूकावट जरूर आई। तेरहवीं शताब्दी के मध्य में फातिमिदों को अपदस्थ कर मामलूक शासन में आए और उन्होंने भी नए विशेषाधिकार मुहैया कराए। चौदहवीं शताब्दी में वेनेशियाइयों ने साइप्रस, आरमीनिया, ईरान और काला सागर क्षेत्र में अपना व्यापार बढ़ाया। (चौदहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में साइप्रस के राजा द्वारा पुनः चलाए गए धर्मयुद्ध से व्यापार को धक्का लगा)। वेनेशियाई व्यापार समुद्र तटीय क्षेत्र तक ही सीमित रह गया जहां से यहूदी और मुसलमान व्यापारी स्थल मार्ग से अंदरूनी इलाकों में सामान ले जाया करते थे।

बोध प्रश्न-1

1) इस्लाम के उदय ने दसवीं शताब्दी तक समुद्री व्यापार को कैसे प्रभावित किया ?

....

....

....

....

....

....

2) ग्यारहवीं और पंद्रहवीं शताब्दी के बीच यूरोपीय व्यापार का पैटर्न क्या था ?

....

....

....

....

....

3) आरमीनियाई व्यापारियों की व्यावसायिक व्यवस्था का संक्षेप में वर्णन कीजिए। उन व्यापारिक तरीकों का वर्णन कीजिए जो आरमीनियाईयों की सफलता के लिए उत्तरदायी थे।

....

....

....

....

....

4) मध्यकाल के दौरान यहूदी समुदाय ने किस प्रकार व्यावसायिक गतिविधियों में अपना वर्चस्व स्थापित किया था ?

....

....

....

....

....

5) करीमी व्यापारियों पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

9.5 व्यापार मार्ग

विभिन्न इलाकों के भीतर और बाहर से सामानों की आवाजाही व्यापार मार्ग के विस्तार और प्रयोग पर निर्भर थी। मध्यकाल में स्थल और जल मार्गों का उपयोग किया जाता था। राबर्ट लोपेज ने व्यापारिक सम्पर्कों को व्यापक बनाने में अरब व्यापारियों की भूमिका पर प्रकाश डाला है। मध्य एशिया क्षेत्र से होने वाला व्यापार मुख्यतः स्थल मार्ग से होता था। भूमध्यसागरीय क्षेत्र इन कारवां मार्गों के जरिए भारत, ईरान और चीन से जुड़े थे। सिंध और गुजरात में मुसलमान व्यापारियों की व्यापारिक चौकियां थीं। दसवीं शताब्दी में मुंबई के निकट सैयमूर में उनकी एक महत्वपूर्ण बस्ती भी थी।

भारत आने के लिए व्यापारी/यात्री लाल सागर के जोर और जिद्दा नामक बंदरगाहों और फारस की खाड़ी में उबुल्लाह का उपयोग किया करते थे। चूंकि चीनी बेड़े बसरा तक नहीं

जाते थे, अतः सिराफ प्रमुख बंदरगाह के रूप में विकसित हुआ। यह यमन और लाल सागर के मध्य व्यापार का मिलन स्थल बन गया। मसकट शहर और ओमान के तटीय क्षेत्रों ने इस आवागमन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

नवीं शताब्दी में चीनी शासकों की कार्रवाइयों के फलस्वरूप मलक्का व्यापार का केन्द्र बन गया। तांग काल के उत्तरार्द्ध और सुंग काल में चीन के पूर्वी और दक्षिणी समुद्रीय तटों का उपयोग विदेशी व्यापार के लिए किया गया। तांग काल के उत्तरार्द्ध में कैंटन (गुआंगझाओ; Guangzhou) से बड़े पैमाने पर व्यापार होने लगा। दक्षिणी सुंग के शासन काल में चुआन-चाओ, जो कि चाय और पोर्सलिन के लिए मशहूर फूकिन क्षेत्रों के निकट था, प्रमुख बंदरगाह बन गया। कोरिया का भी जापान के साथ व्यापारिक संबंध था।

सन् 1100 से पहले मध्य अफ्रीका के हिंद महासागर से अप्रत्यक्ष सम्पर्क थे। 'खोज के युग' में अफ्रीका, एशिया, अमेरिका और यूरोप के मध्य व्यापारिक संबंध और प्रगाढ़ हुए। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए भूमध्यसागर, बाल्टिक, अटलांटिक, हिंद महासागर और अरब सागर का व्यापक पैमाने पर इस्तेमाल होने लगा। पीरेन की मान्यता के विपरीत कई अध्ययनों से यह पता चलता है कि अरबों के विस्तार से भूमध्यसागर में जहाजों की आवाजाही पर फर्क नहीं पड़ा।

पियेरे चाउनू (Pierre Chaunu) ने ग्यारहवीं शताब्दी में भूमध्यसागर से इतालवी व्यापारियों द्वारा उपयोग किए जाने वाले चार मुख्य मार्गों को सूचीबद्ध किया है। रेशम और चीनी कलाकृतियों का व्यापार दो स्थल कारवा मार्गों से होता था। पहला मार्ग चीन से काले सागर तक, जो दक्षिण साइबेरिया के घास के मैदानी इलाकों के साथ-साथ चलता था। दूसरा रास्ता तुर्किस्तान मरूभूमि से गुज़रता था और ईरान को जोड़ता था। ईरान से यह स्थल मार्ग फारस की खाड़ी के मुहाने से जुड़ता था। इस प्रकार स्थल और समुद्री मार्ग एक दूसरे से जुड़े हुए थे। पियेरे चाउनू ने जिन अन्य दो समुद्री मार्गों का उल्लेख किया है उनका संबंध हिंद महासागर से है। ऐसा ही एक समुद्री मार्ग भारत से मलक्का और ईस्ट इंडीज होकर गुजरता था। यह फारस की खाड़ी से जुड़ता था। फिलिस्तीन और सीरिया के बंदरगाहों तक पहुंचने के लिए इन समुद्री मार्गों का उपयोग करने वाले यात्रियों को मरुभूमि से होकर गुजरना पड़ता था। लाल सागर से अकाबा की खाड़ी या स्वेज़ तक समुद्री मार्ग से पहुंचने पर एलेक्जेंड्रिया तक पहुंचने की स्थल मार्ग की दूरी काफी कम हो जाती थी।

ग्यारहवीं शताब्दी से दक्षिण की ओर व्यापार करने वाले इतालवी और अन्य व्यापारी इंग्लैंड और फ्रांस से होकर कई रास्तों का इस्तेमाल करते थे। इनमें से कई रास्ते ब्रेबन्ट और फ्रांस को जोड़ते थे। उत्तरी फ्रांस से गुज़रने वाले कई मार्ग कॉम्पीगना और ट्रॉयेस में जाकर मिल जाते थे।

बारहवीं शताब्दी के दौरान स्लैवोनिक पूर्व तक पहुंचने के लिए वेस्टफेलिया के डॉर्टमंड से होते हुए उत्तरी जर्मनी के बीचो-बीच हैलवेग, प्रमुख सम्पर्क मार्ग था, परंतु आने वाली शताब्दियों में ब्रुजेज़ और बाल्टिक के बीच चार पार-महाद्वीपीय मार्गों का विकास हुआ। इंग्लैंड के दक्षिणी पूर्वी हिस्से में बाल्टिक और नॉर्वे से लकड़ी का आयात करने के लिए नदीय जल मार्ग सस्ता पड़ता था। पूरब से पश्चिम तक डच नदियों और नहरों का उपयोग करने से हॉलैंड अन्दरूनी तटीय व्यापार का एक प्रमुख केन्द्र बन गया। लूबेक और हैमबर्ग ब्रूजेज़ से आने-जाने वाले सामानों को उतारने-चढ़ाने के प्रमुख केन्द्र बने। वस्तुतः यूरोप की ज्यादातर नदियों – जर्मनी में राइन, वेसर और एलबे, फ्रांस में लॉयर, रोनेक्स और गैरोन के जरिए लम्बी दूरी के भारी-भरकम सामानों की आवाजाही की जाती थी। इंग्लैंड में टेम्स, स्टूर, एवॉन और ट्रेन्ट के अलावा और भी कई नदियों का इस्तेमाल आन्तरिक व्यापार के लिए हुआ करता था।

पूर्वी यूरोप में वोल्गा मार्ग का व्यापक तौर पर उपयोग होता था। रूस और बाइज़ेंटाइन के

बीच होने वाला व्यापार द्विना और रिगा की खाड़ी से होते हुए या फिनलैंड की खाड़ी के मार्फत बाल्टिक से हुआ करता था। द्विना से सामान नाइपर (Dnieper) और काले सागर तक ले जाया जाता था।

मानचित्र 9.2: 1 शताब्दी सी ई का रेशम मार्ग
साभार: रुनेहेलमेट, जनवरी, 2013
स्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/e/ed/Transasia_trade_routes_1stC_CE_gr2.png

नवीं शताब्दी में फ्रिसियन डोरस्टाड, डेनिश हाइथाबु और स्वीडिश बिरका बाल्टिक व्यापार के प्रमुख केन्द्र थे। बाल्टिक देशों और उत्तरी पूर्वी रूस के बीच संपर्क के लिए कई जलमार्ग उपलब्ध थे जो बाल्टिक से नेवा और लाडोगा झील तक और वोलखोव से नोवगोरॉड तक फैले हुए थे।

उपर्युक्त वर्णित समुद्री मार्गों का उपयोग जहाजरानी उद्योग पर निर्भर था। मध्यकाल में अधिकांश जहाज सपाट आकार के होते थे (जिसमें तख्ते जुड़े होते थे; carvel built), और ये हल्के और गति में तीव्र हुआ करते थे। 1277 तक आते-आते जेनोइस जहाज (Genoese Galleys) कार्डिज़ और सेविले से होते हुए फ्रांस, फ्लैंडर्स और इंग्लैंड पहुंचने लगे। भूमध्यसागर में धीरे चलने वाले नेव्स (Naves) जहाजों से सामान ढोया जाता था। गेलीज के मुकाबले ये सस्ते जहाज थे। ये ज्यादा भार ढो सकते थे।

चीन में कई सुधार हुए। तांग और सुंग राजवंश शासन के दौरान मजबूत रडर (rudder) किस्म के जहाजों का प्रयोग किया गया। इनकी लम्बाई 60 मी. से ज्यादा थी। इनका तल बिलकुल चपटा था और आगे का हिस्सा (kneel) पतला था। इन जहाजों में तीन से लेकर एक दर्जन तक मस्तूल थे। इसमें चौड़े आकार के पाल (squrare sails) लगे होते थे। ये एक हजार व्यक्तियों को एक साथ ले जा सकते थे। जहाजी कम्पास के उपयोग से भी समुद्री मार्गों से आवागमन में तेजी आई। बगदाद में पन्टून पुलों (अस्थाई सेतु; pontoon bridges) का उपयोग किया जाने लगा। इसमें दोनों ही पाटों पर मजबूती से खंभे गाड़ दिए जाते थे और उन पर लोहे की चेन बांध दी जाती थी। इस प्रकार स्थानीय परिवहन के लिए नहरों का भी उपयोग होने लगा।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

9.6 वाणिज्यिक गतिविधियों के केन्द्रः बाजार और मेले

विशिष्ट विनिमय और व्यापार केन्द्रों के जरिए विभिन्न वस्तुओं का व्यापार किया जाता था। प्रागैतिहासिक युगों में भी ये किसी न किसी रूप में मौजूद थे। लगभग सभी संस्कृतियों में प्राचीन काल से ही स्थानीय स्तर पर लगने वाली साप्ताहिक या नियतकालिक हाटों के संदर्भ मिलते हैं। इनमें से कुछ हाटों या बाजारों में कोई खास सामान ही मिला करता था जबकि दूसरे बाजारों में विभिन्न प्रकार की वस्तुएं मिलती थीं। स्थाई समाजों के विकास के साथ सावधिक बाजारों के अतिरिक्त व्यापार के नियमित और स्थाई केन्द्र भी विकसित हुए।

9.6.1 बाजार

मध्यकाल में बढ़ती वाणिज्यिक गतिविधियों के कारण बाजारों और शहरों का तेजी से विकास हुआ। लगभग हरेक शहर में एक बाजार होता था और बड़े शहरों में तो एक से ज्यादा बाजार हुआ करते थे। यूरोप के सभी बड़े शहरों लंदन, पेरिस, मास्को, बार्सिलोना, वेनिस, मैड्रिड, लिसबन, बवेरिया, कोलोन, लियोन्स आदि में बड़े बाजार थे जो शहर के विस्तार के साथ-साथ बढ़ते चले गए या कई बार तो इन बढ़ते बाजारों ने शहरों की सीमाओं का भी विस्तार किया। बड़े शहरों में अनाज, मछली, मांस, कपड़ा, पशु (आमतौर पर शहर से बाहर), शराब, पनीर और मक्खन, फल और सब्जी और भी अन्य जरूरी वस्तुओं के अलग-अलग बाजार हुआ करते थे। इन बाजारों के अलावा नियमित रूप से मेले भी लगा करते थे। यूरोप के दूसरे देशों में भी स्थिति अलग नहीं थी।

शिल्पी अपना सामान बेचने के लिए शहर आया करते थे (देखिए **इकाई 8, बी एच आई सी-104**)। चौदहवीं शताब्दी में दिल्ली के एक उदाहरण से वस्तुओं के लेन-देन को ठीक से समझा जा सकता है। मुल्तान होते हुए खुरासान से घोड़े यहां पहुंचते थे। इस शहर में अनाज अमरोहा (उत्तर प्रदेश) से, कोल (अलीगढ़) और मेरठ से शराब, मालवा में धार से पान के पत्ते, अवध (अयोध्या) से साधारण कपड़े, देवगिरी से मलमल, बंगाल से धारीदार कपड़ा और ईरान में तबरीज से ब्रोकेड की आपूर्ति होती थी (*द कैम्ब्रिज इकोनोमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया,* खंड I : 84)।

अरब क्षेत्र में भी सभी बड़े शहरों में बहुतायत मात्रा में बाजार मौजूद थे। एडन, जद्दा, इस्ताबुल, हौरमुज, बगदाद, मक्का, बसरा के बाजारों में दूर-दूर से व्यापारी आया करते थे। चीन में भी लगभग सभी शहरों में बड़े-बड़े बाजार थे और यहां मध्य एशिया, अफ्रीका और भारत से व्यापारी आया करते थे। चीनी व्यापारियों की खास विशिष्टता थी कि वे अपने माल के साथ एक बाजार से दूसरे बाजार में घूमकर व्यापार करते थे। मिस्र में काहिरा में 30 से ज्यादा बाजार थे। जब यूरोपीय उपनिवेशवादी मैक्सिको, ब्राजील और अर्जेंटीना पहुंचे तो उस समय लैटिन अमेरिका में भी उनके अपने बाजार थे। उपनिवेशवादियों के आगमन के बाद इन बाजारों का आकार और भी बढ़ा और उनके व्यापार में वृद्धि हुई।

9.6.2 मेले

आमतौर पर मेलों का संबंध धार्मिक और आनुष्ठानिक उत्सवों तथा समारोहों से होता था। परंतु जैसे-जैसे व्यापारिक गतिविधियों में तेजी आई, वैसे-वैसे ये मेले वाणिज्यिक गतिविधियों के केन्द्र भी बनने लगे। ये मेले अलग-अलग आकारों के हुआ करते थे जहां किसी खास क्षेत्र से, या विभिन्न क्षेत्रों और विभिन्न देशों के लोग आया करते थे। मेले आयोजित करने का कोई एक निर्धारित तरीका नहीं था। महीने में एक बार, कई महीने में एक बार या साल में दो बार या साल में एक बार – अलग-अलग और तरह-तरह के मेले लगते थे। कई मेले तो कई सालों के बाद लगा करते थे। इनमें से कई मेले किसी खास मौसम या खास समय

में लगते थे। कुछ मेले कुछ खास चीजों के लिए ही जाने जाते थे। सावधिक बाजारों और मेलों में बहुत तरह की चीजें मिला करती थीं। यहां दास, सभी प्रकार के जानवर, अनाज, हथियार, शिल्पगत वस्तु उत्पाद से लेकर मूल्यवान या एशोआराम की चीजें भी मिला करती थीं।

जैसे-जैसे व्यापार बढ़ता गया और यह व्यापार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से जुड़ता गया वैसे-वैसे इन बाजारों और मेलों का संबंध स्पष्ट और प्रगाढ़ होता चला गया। मेलों की शुरुआत धार्मिक उत्सवों के रूप में हुई थी, लेकिन बाद में वे व्यापार के केन्द्र बन गए। ग्यारहवीं शताब्दी में सेंट डेनिस में जून में आयोजित लेंडिट मेला एक धार्मिक मेला था। सेंट डेनिस के एबे (abbey) ने राजशाही से इस मेले के आयोजन की अनुमति प्राप्त की थी। 1109 और 1112 के बीच लुइस VI ने सेंट डेनिस के मैदानी इलाकों में एक अन्य मेले का आयोजन शुरू किया। 1213 के बाद दोनों मेले एक मेले में तब्दील हो गए जिसे 'सेंट डेनिस के मैदानी इलाके का लेंडिट मेला' कहा गया। ग्यारहवीं शताब्दी में टॉरहाउट (Torhout) का फ्लैंडर्स मेला वाणिज्यिक और औद्योगिक गतिविधियों का प्रमुख केन्द्र बन गया।

शैम्पेन के मेले अन्तरराष्ट्रीय व्यापार का केन्द्र बन गए। 1114 के बाद से इन मेलों की जानकारी मिलती है। तेरहवीं शताब्दी में आकर इन्होंने अपना पूर्ण स्वरूप ग्रहण किया और उत्कर्ष पर पहुंचे। शैम्पेन और ब्री इलाकों के चार शहरों में 6 मेले लगा करते थेः फ्रांस, इटली, इंग्लैंड, जर्मनी, स्विटज़रलैंड और सेवोय के व्यापारी कपड़े, ऊन, रेशम, चमड़ा, फर-अस्तर, मसाले, मोम, चीनी, अनाज, शराब और घोड़े इन मेलों में बेचने के लिए लाते थे। 1250 के बाद जेनोआ (Genoa) व्यापार का प्रमुख केन्द्र बना। त्रोये, प्रोविन्स, लैगनी और बार-सुर-ओबे के मेलों में भी दूर-दूर से व्यापारी आया करते थे।

माना जाता है कि शताब्दियों से ये मेले लगा करते थे। कुछ लोग लेंडिट मेले की शुरुआत नवीं शताब्दी से मानते हैं। त्रोये मेलों का संबंध रोमन युग से जोड़ा जाता है और यह माना जाता है कि लियोन्स का मेला सन् 172 सी ई से ही लगता आ रहा था। 'यूरोप में ओरलिएन्स के निकट सुली-सुर-लॉयर, ब्रिटेनी में पॉन्टिगनी, सेन्ट-क्लेयर और बेयुमोन्ट डे लूमाग्ने – इन सभी जगहों पर हर साल अलग-अलग आठ-आठ मेले लगा करते थे। मोन्टाउबेन के *जेनरेलाइट* में स्थित लेक्टोरे में नौ मेले लगा करते थे; औक (Auch) में ग्यारह'(ब्रॉडेल 1995, I: 82)।

इनमें से कई मेले आपस में जुड़े होते थे और वे एक विशिष्ट सर्किट का निर्माण करते थे जहां व्यापारी एक मेले से दूसरे मेले में घूमघूम कर अपना सामान बेचते थे। भारत के भी अपने मेले थे। इनमें से कई मेले धार्मिक हुआ करते थे परंतु यहां खरीद-बिक्री के लिए भी लोग जुटा करते थे। विभिन्न धार्मिक शहरों में 6 और 12 वर्षों के अन्तराल में एक बार विशालतम मेला (कुम्भ) लगा करता था। भारत और यूरोप के विभिन्न हिस्सों में विभिन्न वस्तुओं से लदे जहाज मोचा में अपना लंगर डालते थे। मिस्र, सीरिया और अरब क्षेत्र अपने मेलों के लिए मशहूर थे। मक्का की तीर्थयात्रा व्यापारियों के लिए एक बेहतर अवसर होता था। दूर-दराज के इलाके से वे अपना हर प्रकार का सामान लेकर वहां पहुंचते थे। हौरमुज में हर वर्ष 3 से 4 महीने के लिए व्यापार का काल होता था जो एक मेले की तरह ही था। अलेक्जेंड्रिया में दो महीने (सितम्बर-अक्टूबर) में व्यापारिक गतिविधियां तेज रहती थीं क्योंकि यह मौसम जहाजों के पहुंचने के लिए अनूकूल होता था। पूर्वी एशिया में जावा में बैन्टम अपने सक्रिय व्यापारिक बाजारों और मेलों के लिए प्रसिद्ध था। भारत की तरह चीन के मेलों का संबंध भी धार्मिक उत्सवों से था। यहां बाजारों और व्यापार पर राज्य का खासा नियंत्रण था।

इन मेलों में तरह-तरह के और विभिन्न तबकों के लोगों की अद्भुत भागीदारी शामिल होती थी। बड़े व्यापारी, दलाल, छोटे दुकानदार, रेड़ी लगाने वाले और आम आदमी इन मेलों की

रौनक बढ़ाते थे। यहां थोक व्यापार से लेकर व्यक्तिगत स्तर पर खरीद-बिक्री तक हुआ करती थी। प्रत्येक मेले के आकार और महत्व के अनुसार दूर-दराज के देशों से लेकर पड़ोसी क्षेत्रों से व्यापारी यहां अपना व्यापार करने आते थे।

9.7 वाणिज्यिक गतिविधियां

बढ़ती व्यापारिक गतिविधियों और थल और जल मार्ग के जरिए लम्बी दूरी के व्यापारों के कारण वाणिज्यिक लेन-देन जटिल हो गया। व्यापारिक लेन-देन के साथ कई प्रकार के जोखिम जुड़ गए। समुद्री डाकुओं और समुद्र में आने वाली प्राकृतिक आपदाओं का भय बना रहता था। माल खरीदने के लिए पूंजी जुटानी पड़ती थी। दूर-दराज के इलाकों में सामान खरीदने के लिए मुद्रा की जरूरत पड़ती थी और सामान बेचकर मुद्रा लानी पड़ती थी। दूर-दराज के इलाकों से इतनी बड़ी मात्रा में स्वर्ण मुद्राएं ढोकर लाना मुश्किल काम था। इसके परिणामस्वरूप बढ़ते व्यापार के कारण कई नई वाणिज्यिक प्रथाएं और संस्थाएं स्थापित हुईं।

9.7.1 ऋण और साहूकारी

ऋण व्यवस्था व्यापक रूप से व्यापार का एक हिस्सा थी। यहां तक कि क्षेत्रीय और स्थानीय स्तर पर भी थोक विक्रेता खुदरा विक्रेताओं को उधार पर सामान दिया करते थे और खुदरा विक्रेता भी ग्राहकों को उधार सामान दिया करता था। छोटे व्यवसाय में व्यापारी, बिचौलिए और आपूर्तिकर्ता सभी की स्थिति बहुत मजबूत नहीं रहती थी। यदि पैसे न लौटाए गए तो इससे ऋणदाता बर्बाद हो सकता था। बढ़ते व्यापार के कारण व्यापक स्तर पर होने वाले वाणिज्यिक लेन-देन के लिए धन मुहैया कराना जरूरी हो गया था। आरंभ में धन जुटाने का काम बड़े व्यापारियों ने किया। कालांतर में यह काम एक विशेष प्रकार के व्यापारी करने लगे जिन्हें महाजन भी कहा जाता था। हालांकि अधिकांश बड़े व्यापारियों ने ऋण देने का कार्य जारी रखा। भारत में राज्य के कुलीन भी व्यापार के लिए धन उधार दिया करते थे। वे केवल बड़ी मात्रा में ही धन का लेन-देन करते थे और वे केवल बड़े और स्थापित व्यापारियों को ही धन दिया करते थे। यूरोप के कई हिस्सों में भी राज्य के कुलीन व्यवसाय के लिए धन मुहैया कराया करते थे।

यूरोप में लम्बे समय से जहाज के मालिक या व्यापारी को व्यापार करने के लिए ऋण देने का चलन था। एक निश्चित गंतव्य पर जहाज के सुरक्षित पहुंच जाने के बाद ही यह ऋण अदा किया जाता था। समुद्रपारीय ऋण के बड़े फायदे थे। इसमें ऋण लेने वाले को उधार भी मिल जाता था और उसके धन का बीमा भी हो जाता था। परंतु इसमें ब्याज की दर बहुत ऊंची हुआ करती थी। 1230 के आसपास चर्च ने इस ऋण पर प्रतिबंध लगाया। परंतु इसमें बदलाव कर व्यापारियों द्वारा इसमें ब्याज की जगह एक विनिमय करार के रूप में यह प्रथा जारी रही।

पिएरे चाउनू (Pierre Chaunu) ने इतालवी व्यापारियों द्वारा धन जुटाये जाने के कई तरीकों का उल्लेख किया है। एक विधि थी *कमेंडा*, यह एक मौसम के लिए एक प्रकार की सावधिक साझेदारी थी। ग्यारहवीं शताब्दी के वेनिस से यह प्रमाण मिलता है कि *कमेंडा* एक प्रकार की 'साझेदारी' थी जो एक धन प्रदान करने वाले और व्यापारी के बीच में हुआ करती थी। वित्त प्रदान करने वाला पूंजी जुटाता था और व्यापारी व्यापार करने के लिए यात्रा करता था। इसके अलावा व्यापारियों के बीच एक और प्रकार की साझेदारी हुआ करती थी, इसे *कोलेगांज़ा* कहा जाता था। इस व्यवस्था के तहत एक व्यापारी केवल पूंजी उपलब्ध कराता था जबकि दूसरा व्यापारी पूंजी जुटाने के साथ-साथ व्यापार भी किया करता था। जेनोआ से मिले लिखित दस्तावेजों से पता चलता है कि तेरहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जेनोआ में *कमेंडा* का चलन समाप्त होने लगा। इसके स्थान पर ***कैम्पेगनिया*** या साझेदारी का प्रचलन

चला। आरंभ में परिवार के सदस्यों के बीच ही यह साझेदारी होती थी जो एक साथ मिलकर पूंजी लगाते थे। परंतु धीरे-धीरे इसका स्थान ***कॉर्पिडी : कैम्पेगनिया*** या समाज की पूंजी लेने लगी। इस व्यवस्था के तहत इसमें व्यापार में भाग लेने वाला कोई भी इच्छुक व्यक्ति पूंजी का निवेश कर सकता था।

ऋण की अदायगी भी व्यापारिक लेन-देन का एक अभिन्न हिस्सा था। आमतौर पर व्यापारी अपने साथ नगद राशि लेकर नहीं चलते थे या फिर सामान खरीदने के लिए उनके पास नगद राशि की कमी होती थी। उन्हें उधार लेना पड़ता था और व्यापारिक मेलों के दौरान ऋण की अदायगी होती थी। उपलब्ध दस्तावेजों से यह पता चलता है कि मेले के आखिरी दिन ऋण का भुगतान किया जाता था। लेन-देन का लिखित मसौदा तैयार होता था। इन लिखित दस्तावेजों पर कर्ज लेने-वाले व्यापारी के दस्तखत होते थे जो इस ऋण को एक समय के भीतर लौटाने का वादा करता था। इस प्रकार उधार देने की व्यवस्था विकसित हुई। यह सिक्कों को ढोकर लाने-ले जाने पर आश्रित नहीं था। हेनरी पिरेन ने सत्य ही कहा है कि यूरोपीय अर्थव्यवस्था में ये मेले प्रारंभिक वितरण-केन्द्र की भूमिका निभाते थे।

मुद्रा के अलावा विनिमय के लिए दूसरे कई तरीके अपनाए जाते थे। नीदरलैंड में 'मेले का पत्र' इसी तरह की एक व्यवस्था थी। इसमें कई नगर निगम मैजिस्ट्रेटों की मौजूदगी में ऋण का दस्तावेज तैयार किया जाता था। इस पत्र को 'दो हिस्सों' में लिखा जाता था। इसकी एक ही पृष्ठ पर दो प्रतियां बनाई जाती थीं। इसके फाड़कर दो हिस्से किए जाते थे। एक हिस्सा मैजिस्ट्रेट को, और एक हिस्सा ऋण देने वाले को दे दिया जाता था। इन दोनों हिस्सों को आपस में मिलाने पर ही इसे वैध माना जाता था। इस प्रकार 'मेले का पत्र' में निश्चित राशि के भुगतान को लेने का अधिकार निहित होता था।

ऋणदाता कर्जदार से बतौर सूद एक निश्चित ब्याज लिया करता था। यूरोप में ईसाई चर्च ने सूद पर पैसा उधार देने (usury) पर पाबंदी लगा दी थी। चर्च का मानना था कि मेहनत करके पैसा कमाना ही एकमात्र रास्ता है और पैसे पर ब्याज द्वारा पैसा कमाना धर्म के खिलाफ है। इस्लाम में भी सूदखोरी मना है। इसके परिणामस्वरूप तेरहवीं शताब्दी तक केवल यहूदी ही प्रमुख रूप से महाजन बने रहे। यहूदियों के खिलाफ फैले आक्रोश और उनके उत्पीड़न को उनके कर्ज देने के व्यवसाय से जोड़कर देखा जा सकता है। चर्च द्वारा लगाया गया प्रतिबंध पूर्णतः सफल नहीं रहा और कई ईसाई समुदाय पैसा उधार देने का काम करते रहे, और कई बार वे विभिन्न तरीकों की आड़ लेकर या किसी बहाने से ऋण दिया करते थे (एक तरीका यह था कि यदि इस बात की आशंका हो कि कर्जदार को दिया गया पैसा डूब जाएगा तो फिर ब्याज लिया जा सकता था)। विनिमय पद्धति के द्वारा भी ब्याज और सूदखोरी के दायरे से बचा जाता था क्योंकि इसमें पैसा देने के साथ-साथ कमीशन बंधा होता था और यह सूदखोरी के दायरे में नहीं आता था।

ब्याज की दर लगभग 20 प्रतिशत थी परंतु मोल-भाव करके 10 प्रतिशत ब्याज पर भी धन मिल जाता था। भारत में अलग-अलग क्षेत्रों में ब्याज की दरें अलग-अलग थीं और यह दर 9 से लेकर 18 प्रतिशत तक हो सकती थी। असल में ब्याज की दर कई कारकों पर निर्भर करती थी और यह 100 प्रतिशत भी हो सकती थी। इसके निर्धारण में दूरी, ऋण लेने वाले व्यक्ति की विश्वसनीयता, कर्जदार की मोलभाव की क्षमता और व्यापारिक वस्तु और स्थान से जुड़ा जोखिम प्रमुख आधार होता था।

9.7.2 विनिमय के साधन, धन का लेन-देन तथा बैंकिंग और लेखांकन

मुद्रा का उपयोग व्यापारिक गतिविधियों का अभिन्न हिस्सा था। दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में राज्य द्वारा मुद्राओं के वितरण और उपयोग की कई विधियां अपनाई गई थीं। चीन

में तांग और सुंग शासनकाल में सिक्कों के अलावा कागजी मुद्रा और ऋण पत्रों का इस्तेमाल किया जाता था। 811 सी ई से ही तांग ने दूर-दराज के इलाकों से सामान मंगाने के लिए 'उड़न नगद' (flying cash) प्रपत्रों को जारी किया था। इन धन ड्राफ्टों को राजधानी में भुनाया जा सकता था। सुंग काल में ऐसे कई ड्राफ्ट जारी किए गए। उधार का लेन-देन करने वाले व्यापारी इन सरकारी धन ड्राफ्टों का आपस में लेन-देन किया करते थे। निजी बैंकरों ने भी एक अलग प्रकार की कागजी मुद्रा बनाई थी। वे धन जमा करने का प्रमाणपत्र जारी करते थे जिसे तीन प्रतिशत सेवा शुल्क देकर भुनाया जा सकता था। ये प्रमाणपत्र वास्तविक मूल्य पर जारी किए जाते थे। सेचुवान (Szechwan) में चेंगतु के बैंकरों द्वारा जारी किए गए ऐसे प्रमाणपत्र काफी प्रसिद्ध थे। 1204 में जब सरकार ने उन्हें अपने नियंत्रण में लिया तो यह दुनिया की पहली वैध कागजी मुद्रा बनी। ये प्रमाणपत्र तीन साल की अवधि के लिए वैध होते थे और इस पर तीन प्रतिशत सेवा शुल्क लगता था। तोकुगावा जापान में, निजी दायमो (daimo), चावल और चांदी के प्रमाणपत्र को अपने क्षेत्र में कागजी मुद्रा के रूप में इस्तेमाल करते थे। भारत के व्यापारी मुद्रा के साथ-साथ ***हुंडी*** जैसे कागज के प्रमाणपत्रों से लेन-देन किया करते थे।

मध्यकाल में व्यापारिक लेन-देन के लिए मुद्रा के उपयोग के आधार के महत्व को जानना जरूरी है। इसके उपयोग को समझने के लिए विनिमय के माध्यम और जमा खाते की इकाई को समझना जरूरी है। धन का भुगतान करने से पहले इसके मानक मूल्य का निर्धारण करना होता था और बड़े लेन-देन का भुगतान अक्सर वजन के आधार पर किया जाता था। मुद्रा व्यवस्था का इनसे सीधा संबंध था। फ्लोरिन, गिल्डर्स, डुकाट, पाउन्ड या इसी प्रकार की अन्य मुद्राओं का व्यापार में प्रचलन था। मुद्रा विनिमय में माहिर साहूकार सबसे पहले मुद्रा का मोल आंकता था और वह यह ठीक से जांच लेता था कि उसमें उत्कृष्ट धातु का अंश कितना है। गौरतलब है कि लोग सिक्के का मोल उस पर लिखे दाम से नहीं बल्कि उसमें मौजूद धातु मूल्य से आंकते थे। इस स्थिति में मध्यकाल में ढली हुई मुद्रा भुगतान की व्यापक गतिविधियों का साधन नहीं हो सकती थी। पैसे का लेन-देन करने वाले महाजन का योगदान मुद्रा के रूप में विशाल धन राशि पर नियंत्रण और धन का हस्तांतरण और कभी-कभी व्यापारियों और बैंकरों को सवधि ऋण देना भी था।

विभिन्न प्रकार की मुद्राओं और मूल्यों के कारण मुद्रा विनिमय करने वाले सर्राफ महत्वपूर्ण होते चले गए। नवीं शताब्दी में पश्चिमी यूरोप में मुद्रा के लेनदेन का चलन था। बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जेनोआ में भी मुद्रा विनिमय करने वाले सर्राफ सक्रिय थे। उन्हें ***बनचेरी*** (यह शब्द बेन्च से बना है जिस पर सिक्के रखकर महाजन धन का हिसाब-किताब करते थे) के नाम से जाना जाता था। ये मुद्रा विनिमयकर्ता (सर्राफ) मुद्रा का आदान-प्रदान किया करते थे और अपने ग्राहकों का पैसा जमा करते थे। धन को सुरक्षित रखने के लिए उन्हें थोड़ा बहुत कमीशन भी मिलता था। इस जमा किए गए धन का उपयोग दूर-दराज के इलाकों में उधार का भुगतान करने के लिए होता था। बारहवीं शताब्दी के अंत तक *हुंडी* का भी प्रयोग होने लगा। मुद्रा विनिमयकर्ता (सर्राफ) इन बिलों को लिखा करते थे और विदेशों में भी इसके आधार पर व्यापारियों को विदेशी मुद्रा मिल जाया करती थी। उसे उतनी ही राशि के बराबर का भुगतान वापस मिलता था जो उसने सर्राफ को जमा की होती थी।

अर्धस्थाई मुद्रा बाजारों के विकास के साथ मुद्रा विनिमयकर्ता बैंकर की भूमिका निभाने लगे। वे न केवल धन जमा करते थे बल्कि ग्राहकों को ऋण भी दिया करते थे और समुद्रपारीय व्यापार में हिस्सा भी लेते थे। विनिमयकर्ताओं की साझेदारी रहने के कारण ऋणदाता और कर्जदार के अलग-अलग प्रतिष्ठानों में खाता होने के बावजूद धन की आवाजाही संभव थी। चौदहवीं शताब्दी के मध्य तक गैर-विनिमय *हुंडी* और बिलों का खूब उपयोग होता था।

तेरहवीं शताब्दी के आसपास बैंकिंग संस्थान बैंकिंग प्रतिष्ठानों की स्थापना के साथ पूरी तरह से उभरकर सामने आए। इटली इसमें सबसे आगे रहा और जेनोआ, लुक्का, फ्लोरेंस टस्कनी, रोम और वेनिस जैसे शहर बैंकिंग गतिविधि के प्रमुख केन्द्र बन गए। फ्लोरेंस में कई व्यावसायिक घरानों ने बैंक स्थापित किए। तेरहवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में फ्लोरेंस के बार्डी (Bardy) और पेरूज़ी (Peruzzi) घरानों ने इंग्लैंड में भी बैंक खोले। पेरूज़ी की शाखाएं एविगनॉन, ब्रुजेज़, साइप्रस, लंदन, नेपल्स, पेरिस, पीसा, रोहड्स, सिसली, ट्यूनिस और वेनिस में भी थीं। एक आकलन के अनुसार 1338 सी ई में फ्लोरेंस में 80 बैंकिंग घराने काम कर रहे थे जिनकी शाखाएं यूरोप के हर हिस्से में थीं। चौदहवीं शताब्दी के अन्त और पंद्रहवीं शताब्दी के आरंभ में यूरोप के कई शहरों में व्यापारिक घरानों ने बैंकों की स्थापना की। इटली का मेडिसी (Medici) बैंक पंद्रहवीं शताब्दी का सर्वाधिक शक्तिशाली बैंक था। इसका मुख्यालय फ्लोरेंस में था और उसकी शाखाएं रोम, नेपल्स, मिलान, पीसा, वेनिस, जेनेवा, लिओन्स, एविगनॉन, ब्रुजेज़, लंदन और अनेक शहरों में थीं। वे चर्च के वित्तीय प्रतिनिधि भी बने। उन्होंने राजाओं को भी कर्ज दिया और यूरोप में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ावा दिया। व्यापारियों को कर्ज देने के साथ-साथ ये बैंक व्यापार में भी हिस्सा लेते थे। वस्तुतः आरंभिक चरण में बैंकिंग के बजाए व्यापार ज्यादा महत्वपूर्ण था।

मध्यकाल के आखिरी दौर में एक्सचेंज या स्टॉक एक्सचेंज नाम की महत्वपूर्ण संस्था का उदय हुआ जो सभी व्यापारिक गतिविधियों का केन्द्र था। 1681 में इसे 'बैंकरों, व्यापारियों, व्यवसाइयों, मुद्रा विनिमयकर्ताओं और बैंकरों के एजेंटों, दलालों और अन्य व्यक्तियों के मिलन स्थल' के रूप में वर्णित किया गया' (सैम्युअल रिकार्ड, ब्रॉडेल 1995, I: 97 से उद्धृत)।

व्यापार को ठीक ढंग से चलाने के लिए वाणिज्यिक या व्यापारिक सौदों को लिखकर दर्ज करना बहुत आवश्यक है। समुद्रपारीय व्यापार में यूरोप में जोखिम लेखा विधि (Venture Accocunting) का खूब प्रचलन था।

बोध प्रश्न-2

1) मध्ययुगीन एशिया और यूरोप में महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्गों का संक्षिप्त में विवरण कीजिये।

....

....

....

....

....

....

....

2) मध्ययुगीन एशिया और यूरोप में व्यापारियों द्वारा अपनाई गईं विभिन्न वाणिज्यिक प्रथाओं की व्याख्या किजिए।

....

....

....

....

....

....

....

3) इस युग में व्यापार के संदर्भ में मेले किस प्रकार महत्वपूर्ण थे ?

....

....

....

....

....

....

....

4) मध्ययुग में बाजारों की वृद्धि पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

9.8 सारांश

मध्यकाल में समुद्रपार व्यापार ने यूरोप और एशिया के बीच सम्पर्क को बहुत बढ़ावा दिया। व्यापारिक गतिविधियों ने बड़े पैमाने पर इन दोनों क्षेत्रों के समाज, अर्थव्यवस्था और राजनीतिक व्यवस्था को प्रभावित किया। अरब प्रायद्वीप में इस्लाम के उदय के बाद लगभग 300 वर्षों तक अरब व्यापारियों और नाविकों ने समुद्रपार व्यापार पर प्रभुता जमाए रखी। इस व्यापार के कारण हिन्द महासागर और भूमध्यसागर के बीच होने वाले लम्बी दूरी के व्यापार को जोड़कर रखने में मदद मिली।

इस इकाई में आपने उन प्रमुख समुदायों के बारे में अध्ययन किया जिनका मध्ययुग के व्यापार और व्यावसायिक गतिविधियों पर बोलबाला था। हमने इन व्यापारी समुदायों के सामाजिक संगठन, व्यावसायिक विशेषज्ञता और व्यापारिक संगठनों की चर्चा की।

सभी व्यावसायिक समुदायों, जैसे आरमीनियाई, यहूदी, भारतीय, यूनानी, अरबी और चीनी, और उनके प्रसार में कुछ सामान्य विशेषताएं थीं जिससे यह पता चलता है कि उनकी समृद्धि और सफलता का राज़ क्या था और किस प्रकार पूरे यूरेशियाई विशाल क्षेत्र पर उन्होंने अपनी विलक्षण वाणिज्यिक व्यवस्था स्थापित कर रखी थी। उच्च स्तरीय आत्मविश्वास, सदस्यों के बीच परस्पर विश्वास और विस्तृत लेकिन सुगठित अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारी समुदाय के बीच परस्पर सम्पर्क होने से लेनदेन की लागत में कमी, एक खास प्रकार की संस्कृति, धार्मिक

परम्परा और अपने से जुड़ी सामुदायिक संस्थाएं सभी व्यावसायिक समुदायों की विशेषताएं थी। परंतु इसके साथ ही साथ विभिन्न व्यापारी समुदायों की व्यावसायिक व्यवस्थाओं में अन्तर भी था। उदाहरण के लिए, यहूदी समुद्रपार व्यापार में संलग्न थे और वे यहीं तक अपने को सीमित रखने का प्रयास करते थे जबकि आरमीनियाई ज्यादातर स्थल मार्ग से ही व्यापार किया करते थे।

9.9 शब्दावली

द्वीपसमूह **(Archipelago)**	:	किसी खास क्षेत्र में समुद्र के बीच मौजूद कई द्वीप या द्वीपों का समूह
बनचेरी ***(Bancherii)***	:	जेनोआ में मुद्रा विनिमय करने वालों के लिए प्रयुक्त शब्द
कमेन्डा	:	दो व्यक्तियों के बीच व्यापारिक साझेदारी। इसके अन्तर्गत एक व्यक्ति पूंजी लगाता था और दूसरा व्यक्ति उस पूंजी का उपयोग व्यापार करने के लिए करता था
कैम्पेगनिया	:	पूंजी कमाने के लिए परिवार के सदस्यों की साझेदारी
कॉर्पिडी: कैम्पेगनिया	:	कुछ व्यक्ति मिलकर साझेदारी कायम करते थे परंतु वे परिवार या कुल पर आधारित नहीं होती थीं
धर्मयुद्ध **(Crusade)**	:	मध्ययुग में मुसलमानों से पवित्र भूमि (ईसा की जन्मभूमि) हासिल करने के लिए यूरोपीय क्रिश्चन देशों के सैन्य अभियान
प्रच्छन्न यहूदी **(Crypto-Jews)**	:	ऐसे लोग जो यहूदियों या यहूदी धर्म से गुपचुप संबंध रखते थे
आन्त्रेपोट **(entrepot)**	:	आयात और निर्यात तथा संग्रह और वितरण के लिए वाणिज्यिक केन्द्र, गोदाम
फुस्टियन **(Fustians)**	:	मोटा मजबूत सूती कपड़ा
निम्न तटीय देश/क्षेत्र **(Low Countries)**	:	नीदरलैंड (हॉलैन्ड), बेल्जियम और लक्ज़ेमबर्ग
सारासेन **(Saracen)**	:	मध्यकाल में अरब या मुसलमान
हुंडी **(Bill of exchange)**	:	महाजनों/सर्राफों/व्यापारियों तथा उनके ग्राहकों द्वारा हस्ताक्षर किया हुआ लिखित प्रपत्र जिसमें एक नियत स्थल पर धारक को निर्धारित धन देने का वादा किया जाता था।

9.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 9.2 देखें

2) भाग 9.3 देखें

3) उप-भाग 9.4.1 देखें

4) उप-भाग 9.4.2 देखें

5) उप-भाग 9.4.3 देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 9.5 देखें

2) भाग 9.7 देखें

3) उप-भाग 9.6.2 देखें

4) उप-भाग 9.6.1 देखें

9.11 संदर्भ ग्रंथ

ब्रॉडल, फर्नांड, (1995) *द मेडिटरेनियन एंड द मेडीटरेनियन वर्ल्ड इन द ऐज ऑफ फिलिप II,* फ्रेंच से अनुवादित, सिआन रेनॉल्ड्स, 2 भाग (बर्कलेः यूनिवर्सिटी ऑफ केलिफोर्निया प्रेस).

चौधरी, के. एन, (1978) *द ट्रेडिंग वर्ल्ड ऑफ एशिया एंड द इंगलिश ईस्ट इंडिया कम्पनी* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

चौधरी, सुशील तथा मोरिन्यू, माइकल, (संपा.) (1999) *मर्चेन्ट्स, कम्पनीज एंड ट्रेडः यूरोप एंड एशिया इन द अर्ली मॉडर्न इरा* (कैम्ब्रिजःकैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

चाउनू, पियरे, (1979) *यूरोपियन एक्सपेंशन इन द लेटर मिडल एजेज़,* जनरल एडीटर रिचर्ड वॉगन, भाग 10 (एम्सटर्डमः नॉर्थ-हॉलैन्ड पब्लिशिंग कम्पनी).

सिपोला, कार्लो एम., (1976) *बिफोर द इंडस्ट्रियल रिवोल्यूशनः यूरोपियन सोसाइटी एंड इकोनोमी, 1000-1700* (ब्रिटेनः मेथुअन एंड कम्पनी लिमिटेड).

दास गुप्ता, अशिन तथा पियरसन, एम. एन., (संपा.) (1987) *इंडिया एंड द इंडियन ओशन, 1500-1800,* (कोलकाताः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

दास गुप्ता, अशिन (1982) 'इंडियन मर्चेन्ट्स एंड ट्रेड इन द इंडियन ओशन, *सी.* 1500-1750', *कैम्ब्रिज इकोनोमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया,* भाग I, पृ. 407-33.

दास गुप्ता, अशिन, (2001) *द वर्ल्ड ऑफ इंडियन ओशियन मर्चेन्ट 1500-1800,* कलेक्टेड एस्सेज़ ऑफ अशिन दास गुप्ता (नई दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

9.12 शैक्षणिक वीडियो

इंडियन ओशन ट्रेड
https://study.com/academy/lesson/trade-networks-in-the-middle-ages-empires-routes.html

इंडियन ओशन ट्रेडः रुट, नेटवर्क्स एंड हिस्ट्री
https://study.com/academy/lesson/indian-ocean-trade-route-network-history.html

द सिल्क रोडः कनैक्टिंग द एन्शिएंट वर्ल्ड थ्रू ट्रेड
https://www.youtube.com/watch?v=vn3e37VWc0k

इकाई 10 अफ्रीका*

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 मोरक्को : मध्यकालीन साम्राज्य

10.2.1 अलमोराविद

10.2.2 अलमोहद

10.2.3 मारिनिद

10.3 मध्यकालीन मोरक्को की अर्थव्यवस्था, समाज और धर्म

10.4 मध्यकालीन इथियोपिया

10.4.1 इथियोपियाई राजवंश

10.4.2 इथियोपियाई कॉप्टिक ईसाई धर्म

10.4.3 इथियोपिया : भूमि और अर्थव्यवस्था

10.5 मध्यकालीन ज़िम्बाब्वे

10.5.1 ग्रेट ज़िम्बाब्वे का पुरातात्विक स्थल

10.5.2 सामाजिक-आर्थिक जीवन

10.6 सारांश

10.7 शब्दावली

10.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.9 संदर्भ ग्रंथ

10.10 शैक्षणिक वीडियो

10.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- अफ्रीका की उत्तरजीवी मध्यकालीन सभ्यताओं/साम्राज्यों के बारे में जान पायेंगे,
- **मग़रिब** (मोरक्को) में अलमोराविद, अलमोहद, और मारिनिद साम्राज्यों के विकास को समझ सकेंगे,
- मग़रिब में साम्राज्यों के निर्माण में इस्लाम की भूमिका का विश्लेषण कर सकेंगे,
- मग़रिब में साम्राज्यों के निर्माण में ट्रांस-भूमध्यसागरीय और ट्रांस-सहारा व्यापार की भूमिका को समझ सकेंगे,
- जान पायेंगे कि किन भू-राजनीतिक परिस्थितियों ने इथियोपिया में साम्राज्यों/राजशाही/मुखिया तंत्रों के विकास को आकार दिया,
- ग्रेट ज़िम्बाब्वे के मध्ययुगीन इतिहास को समझ पायेंगे, और

* डॉ. देबअर्पित मनजीत, दयाल सिंह कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

- ग्रेट ज़िम्बाब्वे के बारे में मिथकों को जान पायेंगे।

10.1 प्रस्तावना

अफ्रीका एक विशाल और विविधता से परिपूर्ण महाद्वीप है। किसी भी इतिहासकार के लिए अफ्रीका के इतिहास में मध्ययुगीन काल को ठीक-ठीक समझ पाना कठिन है। ऐसे क्षेत्रों का पता लगाना भी एक कठिन काम है, जो पूरे महाद्वीप का प्रतिनिधित्व कर सकें। इसकी आधुनिक राष्ट्रीय सीमाओं में एक क्षेत्र के मध्ययुगीन इतिहास को परिभाषित करना और अधिक कठिन है। राष्ट्रीय सीमाएँ आधुनिक हैं और मध्ययुगीन (जो कि पूर्व-आधुनिक है) समाजों की अपनी क्षेत्रीय सीमाएँ थीं। मध्यकाल आधुनिक सीमाओं से परे है। लेकिन फिर भी आधुनिक राष्ट्रीय राज्यों ने अपनी मध्ययुगीन जड़ों की खोज की है। और यह एक अभेद्य प्रयास रहा है। इस इकाई में हम इस अभेद्य प्रयास को जारी रखते हुए स्वैच्छिक (randum) चयन द्वारा अफ्रीका के तीन क्षेत्रों के मध्यकालीन इतिहास को समझने का प्रयास करेंगे। ये तीन क्षेत्र मोरक्को, इथियोपिया और ज़िम्बाब्वे हैं।

हम यहां जानबूझकर अन्य तीन प्रमुख आधुनिक क्षेत्रों – उत्तरी अफ्रीका (फैरोनिक मिस्र), पश्चिम अफ्रीका (कावकाव, मालेल [माली], घाना और कनेम), और दक्षिण अफ्रीका (बंटू, गुनिस/सान्स्) के अध्ययन को छोड़ रहे हैं। इस पाठ्यक्रम की सीमाओं के कारण हम इन क्षेत्रों के संबंध में विस्तृत चर्चा नहीं कर रहे हैं।

10.2 मोरक्को : मध्यकालीन साम्राज्य

अफ्रीका की उत्तर-पश्चिम सीमा पर, मोरक्को, एक आधुनिक राष्ट्र-राज्य को मोटे तौर पर एक भूतपूर्व फ्रांसीसी उपनिवेश के रूप में जाना जाता है। विशाल क्षेत्र, जिसे आमतौर पर मग़रिब (Maghrib) के रूप में जाना जाता है, पूर्व और पश्चिम मग़रिब में विभाजित है। यहाँ हमारी चर्चा काफी हद तक पश्चिमी मग़रिब और सूडान तक ही सीमित रहेगी। अपने इतिहास में और गहराई में, यह बरबर नामक लोगों की भूमि थी और बड़े पैमाने पर आज भी है। इतिहास बताता है कि बरबर कभी मग़रिब या आधुनिक समय के मोरक्को-अल्जीरिया क्षेत्र के लोगों का आत्म-संदर्भ नहीं था। बरबर उन्हें यूनानियों और अरबों द्वारा दिया गया एक नाम था। बरबर लोग बरबर/अमाज़िघ (Amazigh) बोलने वाली 'जनजातियां' थीं। [अमाज़िघ के लगभग तीन रूपांतर या बोलियाँ हैं : रिफ़ियन (Riffian), तलशिट (Taleshit) और तामाज़ाइट (Tamazight) और ये बरबरों के विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाती हैं। अब यह कहा जाता है कि यह भाषा (या भाषाएँ) बड़े पैमाने पर ग्रामीण क्षेत्रों में बोली जाती हैं और मोरक्को की आधिकारिक भाषा अरबी है।] बरबर एक भाषा, एक धर्म और एक प्रकार की आर्थिक गतिविधि का एक समरूप/सजातीय समुदाय नहीं थे। इसके बजाय वे अलग-अलग स्थलाकृतियों पर आधिपत्य किये हुए थे और विभिन्न उत्पादक गतिविधियों में संलिप्त थे। कुछ बरबर खानाबदोश थे और कुछ अस्थायी कृषक थे। उनकी बस्तियाँ अतलस पहाड़ों के दोनों ओर पाई गईं और दक्षिण में सहारा और पूर्व में ट्यूनीशिया तक और पश्चिम में अटलांटिक के तटों की ओर विस्तृत थीं। वे आपस में लड़ते-झगड़ते थे और साथ ही आपस में अंतर्जातीय विवाह भी करते थे। उनके मतभेदों पर अधिक बल नहीं दिया जाना चाहिए क्योंकि कुछ इतिहासकारों का मानना है कि उनके बीच अत्यधिक समानता भी थी। उन्हें मोटे तौर पर तीन भागों में विभाजित किया गया था, जैसे कि मस्मुडा बरबर (Masmuda Berbers), संहाजा बरबर (Sanhaja Berbers संहाजा बरबर के लगभग 50 अधिक कबीलों में तीन प्रमुख प्रभुत्वशाली जनजातियां बानी गुडाला (Bani Gudala), बानी लमतूना (Bani Lamtuna), बानी मसुफा (Bani Massufa) थीं जिनके सरदार मजबूत और शक्तिशाली थे) और ज़नाटा बरबर (Zanata Berbers) थे। विभिन्न बरबर जनजातियों के अपने मुखिया और

शासन-सिद्धांत थे। इसके अलावा, बरबर क्षेत्र में अन्य समुदायों के मुसाफिर एवं प्रवासी यहूदी और ईसाई, सूडानी आदि भी बसे हुए थे।

7वीं शताब्दी में, इस्लाम (*कुरान* और अरबी के साथ) बरबर देश में पहुंचा। *इस्लामीकरण/अरबीकरण* की प्रक्रिया यहीं से शुरू होती है। कुछ बरबर इस्लाम को अपने धर्म के रूप में स्वीकार करते थे लेकिन उनके द्वारा कुछ स्वदेशी प्रथाओं का पालन जारी रखा गया। इसे 'अशुद्ध' इस्लाम माना गया और 11वीं शताब्दी तक, कुछ इस्लामी विद्वानों, न्यायविदों और कट्टरपंथियों ने इस्लाम के बरबर संस्करण को शुद्ध करने के बारे में सोचा। इसमें एक प्रमुख व्यक्ति इब्न यासीन द्वारा पहल की गई, जो एक तीर्थयात्रा पर मक्का गया था और उसने 'सच्चा' इस्लाम किसे कहा जा सकता है, की बारीकियों को सीखा था। कुछ विद्वान इसे इस्लामी सुधार आंदोलन कहते हैं, जबकि अन्य इसे 'पवित्र' या 'धार्मिक युद्ध' या *'जिहाद'* के रूप में पुकारते हैं। यह उत्तर-पश्चिम अफ्रीका में मोरक्को के विभिन्न बरबर राजवंशों, अलमोराविद (Almoravids; 1056-1147), अलमोहाद (Almohads; 1130-1269), और मारिनिद (Marinids 1196-1464) की स्थापना की प्रक्रिया के रूप में भी था। ये साम्राज्य दक्षिणी मोरक्को/घाना से **अंदलूसिया** (Andalusia) तक विस्तारित थे। हम देखेंगे कि मध्यकाल के दौरान इन क्षेत्रों में अलमोराविद, अलमोहाद और मारिनिद के मध्ययुगीन साम्राज्य कैसे विकसित हुए और मध्यकाल में इनके शासन के अंतर्गत मोरक्को समाज और अर्थव्यवस्था का विकास कैसे हुआ।

10.2.1 अलमोराविद

इब्न यासीन (मृ. 1059) ने दक्षिण-पश्चिम सहारा में ग्यारहवीं शताब्दी में अलमोराविद साम्राज्य की स्थापना की। उन्होंने विशिष्ट उद्देश्य और दृढ़ संकल्प के साथ इस्लाम को शुद्ध करने के लिए और बरबर जनजातियों को उनके विधर्मी या खारिजी[1] (Kharijite) इस्लाम से दूर करने और उन्हें एक अरब साम्राज्य के तहत एकत्रित करने के लिए शुरूआत की। वह एक गजुला बरबर (Gazula Berber) था और अबू के निर्देशों के तहत दक्षिणी सनहाजा (Sanhaja) जनजातियों के मध्य इस्लाम का प्रचार करने गया था। वह इस बात से बहुत परेशान था कि वहां के मुसलमान पैगंबर की 'उचित' शिक्षाओं या इस्लामी कानून – *शरिया* का पालन नहीं कर रहे थे। वह खुद, सूत्रों से प्रकट होता है, विशुद्धतावादी (puritanical) था और इस्लामी न्यायशास्त्र के मालिकी स्कूल से प्रभावित था और एक धार्मिक कट्टरपंथी था। प्रचलित इस्लाम को गुडाला बरबरों के मध्य शुद्ध करने का उसका प्रारंभिक प्रयास सफल नहीं रहा। उसकी धार्मिक सिद्धांतों की कठोर व्याख्या और दंडात्मक उपायों ने उसके खिलाफ विद्रोह की आग को हवा ही दी। गुडालाओं ने न केवल उसका विरोध किया बल्कि उसके घर पर भी हमला किया और उसे अपना जीवन बचाने के लिए भागना पड़ा और अंततः वह वहां से चला गया।

लेकिन वह अंत नहीं था। सिजिलमासा (Sijilmasa; सहारा की उत्तरी सीमा पर एक समृद्ध शहर और व्यापारिक प्रवेशद्वार) के मुसलमानों ने इब्न यासीन को सत्तारूढ़ कबीलाई प्रमुख, ज़नाटा (Zanata) के मघरावा (Maghrawa) के उत्पीड़न से बचाने के लिए आमंत्रित किया। समय बर्बाद किए बिना वह उनके बचाव में आया और शहर और व्यापार केन्द्र पर नियंत्रण कर लिया। उस जगह के लोगों (बानी लमतूनास/Bani Lamtunas) ने न केवल उनकी मदद की बल्कि उन्हें 'सच्चे' इमाम के रूप में स्वीकार किया और उनके पीछे अपने सभी संसाधन जुटाए और उसके बाद उन्होंने दक्षिणी सहारा के एक और शहर और अत्यधिक महत्वपूर्ण व्यापार केंद्र ऑघस्त (Awghust) को अपना निशाना बनाया। और यहाँ से उन्हें कभी भी पीछे मुड़कर नहीं देखना

[1] खारिजी (अरबी ख्वारिजा, जिसे अल-शूराह के नाम से भी जाना जाता है) सबसे शुरुआती इस्लामी संप्रदायों में से एक था। उन्होंने अली और उनके प्रतिद्वंद्वी मुआविया के साथ मध्यस्थता की अली की नीति का विरोध किया। उनका मानना था कि, न केवल कुरैश, बल्कि किसी भी समुदाय के नेता, इमाम बन सकते हैं।

पड़ा क्योंकि इन दोनों व्यापार केन्द्रों ने अलमोराविद साम्राज्य के विस्तार और 'सच्चे' इस्लाम के प्रसार के लिए आवश्यक सभी आर्थिक संसाधन प्रदान किए।

अंत में, 11वीं शताब्दी के मध्य के आसपास, अलमोराविद पूरे क्षेत्र पर अपना साम्राज्य स्थापित करने में सफल होते हैं जो दक्षिण में उत्तरी घाना से लेकर मोरोक्को (मग़रिब) और उत्तर में अंदलूसिया (Andalusia: दक्षिणी स्पेन) तक विस्तारित था। यूसुफ इब्न तशफीन के अधीन अलमोराविद शक्ति अपने चरम पर पहुँच गई और उसे मग़रिब और जलडमरूमध्य के पार दक्षिणी स्पेन में अलमोराविद साम्राज्य स्थापित करने का श्रेय दिया जाता है। स्पेन से सूडानी और ईसाई बंदियों के साथ उन्होंने अपनी सेना का पुनर्गठन और निर्माण किया। इस प्रकार सेना के कबीलाई चरित्र को एक 'विषम' (heterogeneous) शाही सैन्यबल में बदल दिया। उनके काल ने खलीफा से सम्बन्ध विच्छेद की प्रक्रिया की शुरुआत को चिहिन्त किया, हालांकि यूसुफ ने खलीफा के आधिपत्य को स्वीकार करना जारी रखा। खलीफा ने खुद इस क्षेत्र में इब्न तशफीन की शक्ति को स्वीकार किया: 'मैं रेगिस्तान से बाहर नहीं रह सकता, और मैं (यहाँ) केवल आपको अधिकार सौंपने के लिए आया था ...' (लेवत्ज़िओन 2008: 334)। सनहाजाओं को विशेषाधिकार प्राप्त थे और वे अभिजात वर्ग का हिस्सा बन गये। वे सेना के कमांडर और प्रांतों में गवर्नर थे। इस प्रकार यह केवल धार्मिक विचारधारा ही नहीं थी जिसने अलमोराविद साम्राज्य को स्थापित करने में मदद की, बल्कि अन्य कारकों ने भी उनकी शक्ति की स्थापना और सुदृढ़ीकरण में योगदान दिया।

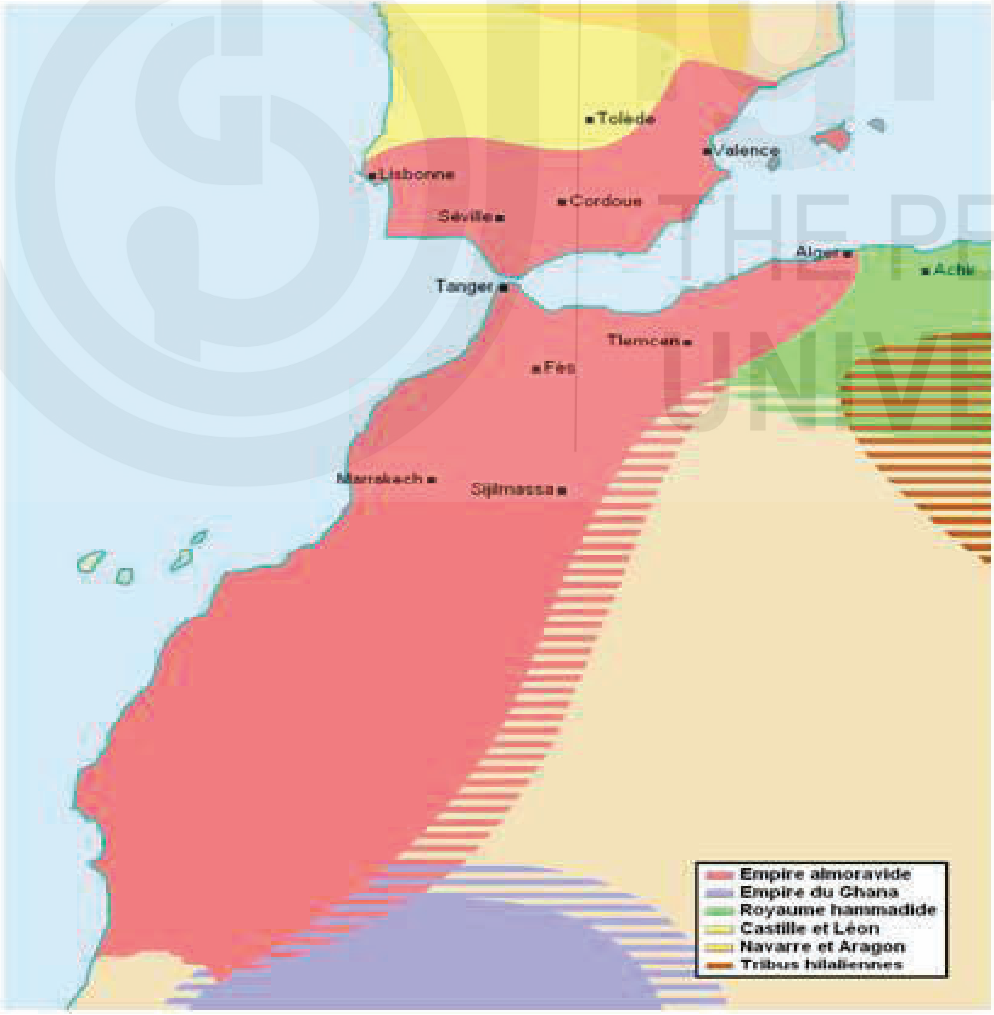

मानचित्र 10.1: अलमोराविद साम्राज्य

साभार : ओमर-टून, फरवरी 2012

स्रोत : https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/c/cb/Empire_almoravide.PNG

10.2.2 अलमोहद

'शुद्ध' इस्लाम को थोपने की मालिकी नीतियों के प्रति बढ़ते असंतोष और अल-अशारी (मृ. 935) और अल-ग़ज़ाली (1058-1111) के सूफ़ी प्रभाव, जहाँ उन्होंने 'कानूनी अभ्यासों के माध्यम से मोक्ष' प्राप्त करने के लिए *फुकाहाओं* (न्यायविदों) की निंदा की, ने अलमोहदों के अलमोराविदों पर हावी होने के मार्ग को आसान कर दिया। 12वीं शताब्दी के मध्य में अलमोहदों के एक *महदी* इब्न तूमार्त (Ibn Tumart), जो आंति-अतलस[2] के मसमुडा कबीले के थे, ने *यूनिटेरियन (एकेश्वरवादी; मुवाहिदीन), स्कूल ऑफ़ फिलासफी* को साझा करते हुए एक और धार्मिक-राजनीतिक आंदोलन शुरू किया, जिसने अलमोहद साम्राज्य का गठन किया और अलमोराविद की तुलना में कहीं अधिक आगे पूर्व में मग़रिब और इफ्रीकिया (आधुनिक ट्यूनीशिया, पश्चिमी लीबिया और पूर्वी अल्जीरिया) तक विस्तार किया। 1125 तक उन्होंने तिनमेल (Tinmel) के अपने मुख्यालय के साथ, स्वयं को मसमूडा क्षेत्र में स्थापित किया। इब्न तूमार्त का 1128 में निधन हो गया। इब्न तूमार्त ने पचास कबीलाई प्रतिनिधियों की एक परामर्शदात्री सभा की स्थापना की, इस प्रकार प्रत्येक कबीलाई समूह को समायोजित किया और उन्हें अपनी पहचान बनाए रखने की अनुमति दी। हालाँकि, उनके अपने कबीले हर्गा (Harga), की प्रिवी कांउसिल की अपने दस सर्वाधिक अंतरंग शिष्यों के साथ सर्वोच्चता बनी रही। उसका उत्तराधिकारी शासक लेमसेन (Tlemcen) का एक ज़नाटा, अब्द अल-मुमिन था। वह राजवंश का वास्तविक संस्थापक था। 1145 में उन्होंने अलमोराविद के ईसाई भाड़े के सैनिकों को हराया और तशफ़ीन बिन अली (Tashfin b. Ali) को बंदी बना लिया। उसने 1146-47 में अलमोराविद की राजधानी, माराकेश (Marrakesh) पर विजय प्राप्त की। अब्द अल-मुमिन ने *अमीर अल-मुमिनिन* (वफ़ादार सेनापति, जो बगदाद के अब्बासिद खलीफा का विशेषाधिकार, वह खिताब जिसे अलमोराविदों ने कभी धारण करने की हिम्मत नहीं की) की उपाधि धारण की। इस प्रकार 'पहली बार अब मोरक्को के शासक को खलीफा माना जाने लगा, यह एक ऐसी परंपरा का प्रारम्भ था जिसे शायद ही कभी छोड़ दिया गया हो' (लेवत्ज़िओन 2008 : 342)। अलमोराविद कभी भी मध्य मग़रिब (अल्जीरिया) की ओर नहीं बढ़े। लेकिन अबू अल-मुमिन ने बानू हम्माद, जिन्होंने मध्य मग़रिब पर शासन किया, के विरूद्ध 1151/52 में उनकी राजधानी बुगी (Bougie) पर विजय प्राप्त की। 1152 में उन्होंने सेतिफ (Setif) पर और 1160 में महदिया पर कब्जा कर लिया। इस प्रकार पहली बार पूरा मग़रिब अलमोहदों के अधिकार में आ गया। 1184 में अलमोहद इफ्रीकिया (Ifriqiya) पर भी अपना अधिकार स्थापित करने में सफल रहे। अलमोहदों ने जलडमरूमध्य को भी पार किया और स्पेन पर कब्जा कर लिया और ईसाइयों की प्रगति को रोक दिया। इस प्रकार पूरा मग़रिब, इफ्रीकिया और स्पेन अलमोहदों के नेतृत्व में संगठित हो गए। हालांकि, इसने उनके संसाधनों को रिक्त कर दिया। अबु याकूब यूसुफ (1163-1184) की स्पेन में *जिहाद* की लड़ाई के दौरान 1184 में मृत्यु हो गई। अबू यूसुफ याकूब (1184-1199) ने 1195 में अलारकोस (Alarcos) में स्पेनिश ईसाई सेनाओं को हराया और अल-मंसूर की उपाधि धारण की। हालांकि, 1212 में लास नवास डी टोलोसा (Las Navas de Tolosa) की लड़ाई में अलमोहदों की हार ने अलमोहद शक्ति के पतन को चिहिन्त किया। 'स्पेन में ईसाईयों का बढ़ता दबाव, इफ्रीकिया में विद्रोह (अरब खानाबदोशों [मखज़िन के रूप में समाविष्ट] की बढ़ती ताकत जिसके कारण ज़नाटा और तुर्कोमान संघर्ष हुए) और कमजोर ख़लीफ़ाओं के उत्तराधिकार ने अलमोहद साम्राज्य की नाजुक संरचना को तितर-बितर कर दिया' (लेवत्ज़िओन 2008: 344)। 1236 में इफ्रीकिया के गवर्नर हफ्सिद (Hafsid) और 1239 में लेमसेन के गवर्नर,

---

[2] आंति-अतलस, अतलस पर्वतश्रृंखला का हिस्सा है जो करीब 500 किलोमीटर क्षेत्र में विस्तृत है और जो सहारा की सीमाओं के साथ-साथ दक्षिण की ओर फैली हुई है। यह श्रृंखला अटलांटिक महासागर में दक्षिण पश्चिम से लेकर उत्तर पूर्व, ओऊआरज़ाज़ाते (Ouarzazate) और आगे पूर्व की ओर ताफिलात तक फैली हुई है।

यघमोरसन (Yaghmorasan) ने खुद को अलमोहदों से स्वतंत्र घोषित कर दिया। स्पेन में भी ईसाई धर्म की जीत हुई और 1276 तक सभी मुस्लिम अधिकृत प्रदेश लुप्त हो गए, यहां तक कि मोरक्को में भी 1248 के बाद ज़नाटा के बानो मार्टिन वास्तविक शासक थे और जब अलमोहदों के आखिरी खलीफा इदरीस अल-वतिक की 1269 में गुलाम द्वारा हत्या कर दी गई तो उनका नियंत्रण मात्र राजधानी मारकेश तक सिमट कर रह गया।

10.2.3 मारिनिद

13वीं शताब्दी के मध्य में, यह मारिनिद ही थे जिन्होंने मोरक्को में खुद को स्थापित किया था, इफ्रीकिया में हफ्सिद अलमोहदों के उत्तराधिकारी बने, जबकि लेमसेन (Tlemcen) में ज़ायनिदों (Zayyanids) ने सत्ता पर कब्जा किया। मारिनिदों (*c*.1250-*c*.1465), जो ज़नाटा के उप-कबीले के बानू-मारिन (Banu-Marin) खानाबदोश थे, और उन्होंने कभी भी स्थिर जीवन या कृषि को नहीं जाना, लेकिन मवेशियों, ऊंट, घोड़ों और दासों पर निर्भर थे, वे अलमोहदों के विरूद्ध संघर्षरत हुए और मोरक्को के एक समृद्ध शहर माराकेश पर विजय प्राप्त की। तत्पश्चात् उन्होंने न केवल नई राजधानी (नवीन फैज़; New **Fez**) का निर्माण किया, बल्कि एक ऐसा साम्राज्य भी बनाया, जिसने उस क्षेत्र पर लगभग दो शताब्दियों तक शासन किया।

खलीफा सईद की मृत्यु के बाद, अबू याह्या के नेतृत्व में बानू मारिन बरबरों (बद्दुओं) ने फैज़ (Fez), ताज़ा (Taza), मेकेन्स (Mekens), साले (Sale) और रबात (Rabat) पर कब्जा कर लिया। फैज़ उनकी गतिविधियों के मुख्य केंद्र के रूप में उभरा। अबू याहिया की मृत्यु 1258 में हुई, जिनके बाद अगले शासक अबू याकूब यूसुफ (1258-1286) ने अपनी शक्ति को मजबूत किया और 1269 में माराकेश पर कब्जा कर लिया जिसने अलमोहद साम्राज्य के अंत की घोषणा की। 1299 में अबू याकूब यूसुफ (1286-1307) ने अल्जीयर्स (Algiers) तक मध्य मग़रिब पर कब्ज़ा कर लिया और आठ साल के लंबे समय तक लेमसेन (Tlemcen) की घेराबंदी की। अबू याकूब यूसुफ के बेटे अबू सबित और अबू रबी 1307-1310 के दौरान उनके उत्तराधिकारी हुए, और बाद में उनके भाई अबू सईद उस्मान (1310-1331) उनके उत्तराधिकारी बने। अबू सईद को अपने बेटे अबू अली से लगातार परेशानियों का सामना करना पड़ा जो सिजिलमासा का गवर्नर था। 1331 में अबू सईद की मृत्यु के बाद उनके बेटे अबुल हसन जो मारिनिद सुल्तानों में सबसे बड़े थे, ने आखिरकार अबू अली के प्रतिरोध को दबा दिया और सिजिलमासा पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। मारिनिदों ने हफसिदों (Hafsids) के साथ सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखे, यहां तक कि अबुल हसन ने हफसिद राजकुमारी से शादी की, जिसने इस गठबंधन को और मजबूत किया। अबुल हसन ने 1337 में लेमसेन (Tlemcen) पर विजय प्राप्त की। 1346 में अबू बकर की मृत्यु के बाद, हफसिद सुल्तान अबुल हसन ने इफ्रीकिया पर कब्जा कर लिया, इस प्रकार उसने पूरे मध्य और पश्चिमी मग़रिब को अपनी एकल सत्ता के तहत संगठित किया। अलमोहदों की तरह वे भी स्पेन में लंबे समय से चली आ रही झड़पों में व्यस्त रहे जिसने उनके संसाधनों को खाली कर दिया और जो उनके पतन का मुख्य कारण था। उन्होंने इफ्रीकिया में अरबों के गंभीर प्रतिरोध का भी सामना किया। जहां हफसिद (Hafsids) अरबों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप से बचते रहे, अबुल हसन के प्रत्यक्ष नियंत्रण की नीति ने अरबों को सीधे टकराव में लाया जिससे अंततः 1348 में कैरौआन (Kairouan) के निकट अरबों के हाथों अबुल हसन की हार हुई। 1350 में उनके बेटे अबू इनान (Abu Inan), जो कि लेमसेन के गवर्नर थे, ने अपने पिता के खिलाफ विद्रोह कर स्वतंत्रता की घोषणा की और अबुल हसन को उच्च-अतलस[3] पहाड़ों में शरण

---

[3] उच्च-अतलस पर्वत श्रृंखला पश्चिम में अटलांटिक समुद्र तट से निकलती हुई पूर्व की ओर मोरक्को-अल्जीरिया के सीमांत प्रदेशों में फैली हुई है।

लेनी पड़ी जहां 1351 में उनकी मृत्यु हो गई। दिलचस्प बात यह है कि मारिनिद कभी भी अतलस क्षेत्र में अपना अधिकार स्थापित नहीं कर सके। मोटे तौर पर, अतलस (Atlas), रिफ (Rif) और जिबाल (Jibal) स्वायत्त रहे। अबू इनान अपने पिता की तरह एक महत्वाकांक्षी सुल्तान था, जिसने *अमीर-अल मुमिनिन* की उपाधि धारण की और दोबारा लेमसेन (1352) और मध्य मग़रिब को अधिकृत किया और बूगी (Bougie) पर 1353 में विजय प्राप्त की। हालाँकि, इफ्रीकिया में बढ़ते अरब प्रतिरोध के कारण उन्हें पीछे हटने के लिए मजबूर होना पड़ा और आखिरकार उनके एक मंत्री द्वारा उसकी हत्या कर दी गई। तत्पश्चात् मारिनिद सल्तनत में पन्द्रवीं शताब्दी में इसके पतन तक अराजकता का एक लंबा दौर चला। अबू इनान के बाद 1358-1465 सी ई के मध्य लगभग सत्रह सुल्तानों ने शासन किया। प्रभावी रूप से 1420 में मारिनिद शासन का अंत हो गया, हालांकि सल्तनत बानू वत्तास (Banu Wattas) सुल्तानों के अधीनत्व में 1465 तक चलती रही। लगातार ईसाई दबाव और अंदलूसिया में मग़रिब सुल्तानों की भागीदारी, मग़रिब में मध्ययुगीन सल्तनतों की प्रमुख विशेषता थी। हालाँकि, 1415 में पुर्तगालियों द्वारा सेउटा (Ceuta) पर कब्जे ने एक और अध्याय को चिहिन्त किया, जिसने 'अफ्रीकी तटों पर ईसाई आक्रमण का सूत्रपात किया'।

1117 में निर्मित माराकेश (Marrakesh) में कुब्बा/कौब्बा (Kubba/Koubba) अलमोराविदों की एकमात्र उत्तरजीवी वास्तुकला है। उत्कृष्ट जल निकासी के माध्यम से पीने के पानी की सुविधा, शॉवर, शौचालय की उपस्थिति से पता चलता है कि यह संभवतः एक बड़ी मस्जिद की संरचना का हिस्सा था और इसका उपयोग वज़ु के लिए हाथ-मुंह धोने के लिए किया जाता था। अलमोहदों के उल्लेखनीय स्थापत्य में मोरक्को स्थित तिन्मलाल (Tinmallal) मस्जिद, रबात स्थित हसन मस्जिद की अधूरी मीनार थे। और ये उनकी राजनीति और धर्म की अनूठी विशेषताएं थीं। मारिनिद महान् भवन-निर्माता थे। उनके द्वारा निर्मित कई कब्रें, अरब स्नानागार, मस्जिदें और मदरसों के अवशेष अस्तित्व में हैं। फैज़ का मदरसा सुल्तान उस्मान अबू सईद (1310-1331) ने बनवाया था।

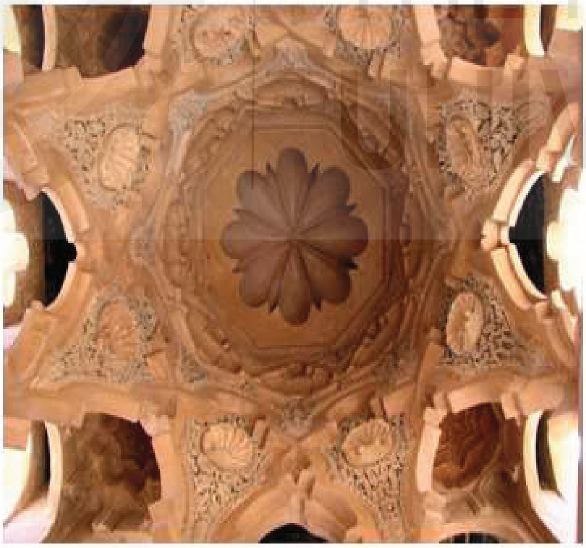

चित्र 10.1: अलमोराविद कौब्बा

साभारः कश्मीर, अगस्त 2005

स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/d/d1/C%C3%BApula_almor%C3%A1vide_%28Marrakech%29.jpg

चित्र 10.2: मारिनिद मदरसा 1323-1325, फ़ैज़

साभारः just_a_cheeseburger, May 2012

स्रोत : https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/0/09/Al-Attarine_Madrasa_%288753523807%29.jpg

बोध प्रश्न-1

1) अलमोराविद कौन थे? उनकी धार्मिक विचारधारा क्या थी?

....

....

....

....

....

2) क्या आप इस बात से सहमत हैं कि अलमोराविद धार्मिक विचारधारा ने मग़रिब में अलमोहद सत्ता की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया?

....

....

....

....

....

3) मग़रिब में मारिनिद शक्ति के विस्तार पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

10.3 मध्यकालीन मोरक्को की अर्थव्यवस्था, समाज, और धर्म

मग़रिब (या पुरातन मोरक्को) में प्राथमिक उत्पादक किसान और खानाबदोश थे। किसान शहरवासियों और खुद के लिए खाद्य फसलों और नकदी फसलों का उत्पादन कर रहे थे। आंशिक रूप से, भूमि निजी तौर पर धनाढ्य लोगों के पास एक कबीला प्रमुख के रूप में थी, लेकिन बड़े पैमाने पर भूमि सामूहिक रूप से किसानों के स्वामित्व में थी। वहां पट्टेदारी (tenant-farming) के साथ-साथ बटाईदारी (share-cropping) दोनों प्रचलन में थे। किसान विभिन्न प्रकार की खाद्य और नकदी फसलों का उत्पादन कर रहे थे।

खानाबदोशों में ऊंट-चरवाहों, पशुपालकों, बकरी पालने वाले किसानों के साथ-साथ बनवासी शामिल थे। ये लोग अपने झुंडों के लिए चारागहों की तलाश में जगह-जगह घूमते थे। अपने आवधिक प्रवास (periodic migrations) के भाग के रूप में वे एक विशेष मौसम में वापस उसी स्थान पर आते थे। उन्होंने जानवरों के पालन के साथ-साथ थोड़ा बहुत कृषि को भी अपनाया। उनके उत्पादों में दूध, मांस, चमड़ा और ऐसे अन्य उत्पाद शामिल थे। ऊंट-चरवाहों ने न केवल जानवरों को महत्वपूर्ण ट्रांस-सहारन व्यापार को बोझा ढोने हेतु पशु उपलब्ध कराये, बल्कि वे रेगिस्तान में व्यापारियों के लिए विशेषज्ञ मार्गदर्शक और सुरक्षा-प्रदात्ता भी थे।

अलमोराविद के सिजिलमासा और ऑघस्त पर अधिपत्य ने, जो विदेशी व्यापारियों के महत्वपूर्ण व्यापारिक संपर्क स्थल थे, ट्रांस-सहारन मार्ग पर नियंत्रण हासिल करने के लिए सनहाजा बद्दुओं और अलमोराविदों को प्रेरित किया। मग़रिब के साथ पश्चिमी सूडान के एकीकरण से क्षेत्र में तीव्र व्यापारिक गतिविधियों के विस्तार में मदद मिली। पहले पश्चिमी सूडान केवल व्यापारियों के माध्यम से मग़रिब से जुड़ा हुआ था, अब उनके विशाल मग़रिब में एकीकरण से क्षेत्र में व्यापारिक गतिविधियों को बढ़ावा मिला। अलमोराविदों द्वारा सिजिलमासा शहर और बाद में ऑघस्त (Awghust) पर नियंत्रण ने सहारा की दक्षिण की सोने की खानों और भूमध्यसागरीय बाजारों के बीच सोने के व्यापार को विनियमित किया। इसने अलमोराविद साम्राज्य के निर्माण के लिए आर्थिक शक्ति प्रदान की। अलमोराविदों ने मोरक्को (सिजिलमासा, अघमत, माराकेश, फ़ैज़) और स्पेन (सेविल, कॉर्डोवा, मलागा, अल्मेरिया) में शुद्ध सोने की *दीनारों* की ढलाई की जिनकी विदेशों में भी प्रखर माँग थी। बदले में वे ढलाई के लिए सूडान के सोने पर निर्भर थे। ट्रांस-सहारन व्यापार के माध्यम से सूडानी सोना अलमोहदों के क्षेत्रों में भी पहुंचता रहा और उनके तहत भी उनकी सोने की दीनारों ने उच्च मान्यता प्राप्त की और यूरोप में उनकी काफी मांग थी।

व्यापारी विभिन्न राष्ट्रीयताओं से थे और प्रत्येक राष्ट्रीयता की अपनी कारवांसराय थी जिसे *फनडुक्स (funduks)* के नाम से जाना जाता था। अलमोराविदों के काल में शहरी केंद्रों में काफी वृद्धि हुई थी। अलमोराविदों का राजधानी शहर माराकेश था, ऑघमत (Awghmat) के आसपास का क्षेत्र समृद्ध व्यावसायिक शहर के रूप में विकसित हुआ। अल-इदरीसी (1152-1157) इसकी समृद्धि की बहुत प्रशंसा करता हैः 'मुलाथथामुन [पर्दे में रहने वाले लोग, अलमोराविद] के काल में कोई भी उनसे अधिक धनवान और बेहतर स्थिति में नहीं था ... उनके दास और एजेंट सत्तर से लेकर सौ ऊंटों के कारवाओं में [सूडान] तक जाते हैं, सभी पूर्णतः (सामान में) लदे होते हैं' (लेवत्ज़िओन 2008: 336)। एक और महत्वपूर्ण व्यापारिक चौकी सिज़िलमासा थी। फ़ैज़ भी एक समृद्ध शहर था। इस अवधि में मध्ययुगीन मोरक्को के साम्राज्यों में यूरोप के यहूदी और ईसाई भी उच्च श्रेणी के राज्य अधिकारियों का हिस्सा थे। यहां तक कि ईसाई भाड़े के सैनिकों के रूप में भी कार्यरत थे। राजधानी माराकेश में एक ईसाई वार्ड और एक चर्च मौजूद थी। विशेष रूप से यहूदी बहुत सफल व्यापारी भी थे। मोरक्को में उनकी संख्या बढ़ती रही क्योंकि वे यूरोप में ईसाईयों द्वारा अधिक से अधिक सताए गए थे मोरानिद शासन के दौरान विशेष रूप से फ़ैज़ से यहूदी विरोधी नरसंहार (pogroms)[4] का विवरण मिलता है। इस समय मोरक्को से पलायन करने वाले अंदलूसिया के मुसलमान राज्य के विभिन्न कार्यालयों से स्थानीय मुसलमानों को बाहर निकालने और स्थानीय अभिजात वर्ग में शामिल होने में काफी सफल रहे थे। स्पेन में अलमोराविदों के विस्तार के परिणामस्वरूप दोनों के बीच उदार सांस्कृतिक आदान-प्रदान हुए। मग़रिब और अंदलूसिया के बीच एक सहजीवी संबंध स्थापित करने में अलमोराविद सफल रहे। स्पेन के विद्वानों और कुलीनों को अलमोराविद नौकरशाही में शामिल किया गया। अंदलूसी वास्तुकारों द्वारा बड़े पैमाने पर भवन निर्माण की गतिविधियाँ सम्पादित की गई थीं।

पूरे मग़रिब और स्पेन पर नियंत्रण ने अलमोहदों को लाभप्रद स्थिति में पहुँचा दिया और उनकी समृद्धि में अत्यधिक योगदान दिया। त्रिपोली, ट्यूनिस और बूगी प्रमुख बंदरगाह थे। माराकेश और फ़ैज़ समृद्ध शहर थे। माराकेश और फ़ैज़ में कई कारवांसरायों का निर्माण किया गया था। हालांकि, ऑघमत ने माराकेश की तुलना में महत्व खो दिया जिसकी सूडान के साथ व्यापार में प्रमुख भागीदारी थी। 1153, 1161, 1168, 1186 और 1211 में संधियों की श्रृंखला ने चुंगियों और सीमाशुल्कों के भुगतान पर मग़रिब के प्रमुख बंदरगाहों में इतावली व्यापारियों का अबाध प्रवेश सुनिश्चित किया। जेनोआ, पीसा, वेनिस और मार्सेल्स के

[4] एक विशेष जातीय समूह का संगठित नरसंहार

व्यापारियों ने 'भूमध्यसागर पर त्रिपोली से सेउता के तटीय शहरों से लेकर मोरक्को के अटलांकिक तट पर स्थित मासा तक अपने कारखानों (*funduqs*) की स्थापना की' (लेवत्ज़िओन 2008: 347)। हालाँकि, तेरहवीं शताब्दी से इटालियन व्यापारियों के एकाधिकार को कैटलोनों (स्पैनिश व्यापारियों) से चुनौती मिली। सूस, सिजिलमासा और वार्गला ट्रांस-सहारन व्यापार के मुख्य प्रवेश्य बन्दरगाह (entrepots) थे। राजधानी माराकेश में बसे ईसाई व्यापारी उसी क्वार्टर में रहते थे जहाँ ईसाई भाड़े के सैनिक रहते थे, वे सैनिकों (militia) को शराब की आपूर्ति करते थे। यहूदी व्यापारियों ने इस व्यापार में बिचौलिए का काम किया। यूरोप से मग़रिब को निर्यात का सबसे पसंदीदा सामान यूरोपीय कपड़ा था तथा इसमें अनाज, मसाले, कीमती पत्थर, मोती, इत्र भी शामिल थे। बदले में यूरोप को प्राच्य उत्पाद (wares), खालें, चमड़े का सामान, फिटकिरी (dye) और मोम प्राप्त होती थी। मारिनिद के अधीन ऑघमत का पतन और लेमसेन व फ़ैज़ यूरोप और पश्चिमी सूडान के साथ व्यापार करने के लिए प्रमुख प्रवेश्य व्यापारिक बन्दरगाहों के रूप में उभरे। फ़ैज के कारीगरों ने यूरोप, पूर्वी देशों (Orient) और सूडान को निर्यात किए जाने वाले उत्कृष्ट कपड़े और चमड़े के उत्पादों का उत्पादन किया। अबू याकूब यूसुफ़ ने लेमसेन के निकट एक नये शहर अल-मंसूरा का निर्माण किया जो जल्द ही प्रमुख वाणिज्यिक केंद्र के रूप में उभरा, जहां यहूदी, ईसाई और मुस्लिम व्यापारी एकत्रित होते थे। अबुल हसन की लेमसेन विजय ने पहली बार पूरे ट्रांस-सहारन व्यापार के बाजारों (मध्य और पश्चिमी मग़रिब) को एक ही सत्ता के तहत लाया।

अलमोराविदों के तहत विशाल क्षेत्रों के एकीकरण के बावजूद, व्यक्तिगत कबीलों ने अपनी विशिष्ट पहचान बनाए रखी। संहाजाओं ने अपने कबीले के लोगों को यहाँ तक निर्देश दिया कि वे अलमोराविदों की *लिथुम* (पर्दा) प्रथा की नकल न करें।

गुलामी और नस्लवाद की प्रथा समाज में इस तथ्य के बावजूद मौजूद थी कि इस्लामी कानून ने कभी भी इस तरह की प्रथाओं को अनुमति नहीं दी। मोरक्को में अलमोहद काल में सूडानी दास बड़ी संख्या में मौजूद थे। बद्दुओं ने दक्षिण के 'अश्वेत' लोगों को 'अश्वेत', गैर-सैनिक, कृषि-संबंधी, गैर-आदिवासी आदि के रूप में हेयदृष्टि से देखा। वे कभी भी उनके साथ अंतर-विवाह नहीं करते थे और हमेशा उन्हें समाज में एक अधीनस्थ स्थिति में रखते थे, हालांकि इनमें से कुछ अपवाद भी थे। दास-श्रम का उपयोग घरेलू कार्यों और कृषि उत्पादन में किया जाता था। मोरक्को के मध्ययुगीन इतिहास में सर्वत्र महिला दास भी मौजूद थीं। प्रथागत कानून द्वारा बद्दुओं को भूमि और घर को **हरातिनों** (Haratins) को बेचने की मनाही थी। हरातिन 'अश्वेत' या अफ्रीकी दास थे, जिन्होंने किसी तरह दासता से मुक्ति प्राप्त कर ली थी। भूमि सामाजिक स्थिति का आधार होने के कारण हरातिनों को भू-अधिकार से बाहर रखा गया था। इतिहासकारों ने नस्लवाद की उत्पत्ति और उसके दासता के साथ समीकरण को मोरक्को के मध्ययुगीन काल में चिन्हित किया है जब कबीलों (बद्दू या अन्य) ने दक्षिण में रहने वाले 'अश्वेत' लोगों पर विजय प्राप्त करके अपनी (श्रेष्ठ) स्थिति और शुद्धता बनाए रखने की कोशिश की (हमेल 2013)। इस प्रकार समाज असामंजस्य और भेदभाव से मुक्त नहीं था।

धर्म

अलमोराविद 'शुद्ध' इस्लाम के समर्थक थे। इब्न यासीन ने *शरिया* (इस्लामिक कानून) को सख्ती से लागू किया। इब्न तशफिन ने भी उन सभी अवैध करों को समाप्त कर दिया जो *शरिया* द्वारा अनुमोदित नहीं थे। उन्होंने *फुकहा* (न्यायविदों) को संरक्षण प्रदान किया और उनसे कानूनी राय और सलाह ली जाती थी। उन्होंने सूफीवाद का घोर विरोध किया और अल-ग़ज़ाली की पुस्तकों को जला दिया। हालाँकि, 12वीं शताब्दी तक अलमोराविदों के प्रति प्रबल प्रतिक्रियाएँ हुईं, विशेष रूप से अल-ग़ज़ाली के बढ़ते सूफ़ी प्रभाव ने अलमोराविदों को

पतन की ओर अग्रसर किया और *फुकहों* की निंदा की गई। अलमोराविद दर्शन के विपरीत अलमोहद शासक इब्न तूमार्त (Ibn Tumart) ने *कुरान* और पैगंबर परंपरा की व्यक्तिगत व्याख्या (*इज्तिहाद; ijtihad*) के अधिकार पर जोर दिया। इसने अलमोराविदों के न्यायशास्त्र के 'एकाधिकार' के खिलाफ 'व्यक्तिगत जांच' को प्रोत्साहित किया। उन्होंने अशराइट (Asharite)[5] और जाहिराइट (Zahirite)[6] दर्शन का अनुसरण किया। अलमोराविदों और अलमोहादों के विपरीत, मारिनिदों ने वैधीकरण के लिए किसी विशिष्ट दर्शनशास्त्र का अनुसरण नहीं किया। ये हफसिद (Hafsids) थे जिन्होंने 'अलमोहद सिद्धांतों के सच्चे संरक्षक' के रूप में खलीफा की उपाधि धारण की, और शुरू में मारिनिदों ने हफसिद खलीफा के प्रति अपनी नाममात्र की निष्ठा भी व्यक्त कर की थी। हालाँकि, तीस साल के भीतर एक बार जब मारिनिदों ने खुद को सुदृढ़ कर लिया तो *खुतबा* (शुक्रवार को पढ़ा जाने वाला उपदेश) पर खलीफा का नाम नहीं पढ़ा जाने लगा। हालांकि, अलमोहद अपने अस्तित्व के लिए सूफी विचारधारा के आभारी थे और सूफीवाद के प्रमुख संस्थापक अलमोहदों के समकालीन थे, लेकिन मारिनिदों के अधीन सूफी *सिलसिलों* (*तरीकों*), विशेष रूप से कादिरिया, ने अपना आकार ग्रहण किया। मोरक्को का यह सूफ़ीवाद 'संतों के पंथ' के सदृश्य हो गया। 'अलौकिक शक्ति और एक पवित्र मुक्ति *(बाराका/baraka),* जिसे शारीरिक संपर्क द्वारा पुरुष विशेष या उसकी कब्र द्वारा स्थानांतरित किया जा सकता है, में सूफी विश्वास ने मारिनिद काल के दौरान निश्चित रूप धारण किया। 'संतों ने पूर्व-इस्लामिक मान्यताओं और रीति-रिवाजों को आत्मसात किया ... इस नए प्रकार के बरबर इस्लाम ने अपने अधिक लोकप्रिय पहलुओं के साथ, ग्रामीण इलाकों के इस्लामीकरण में योगदान दिया, क्योंकि धार्मिक संदेश पहाड़ों के दूरस्थ बद्दू कबीलों तक जा पहुंचा, जो पिछली शताब्दियों में शायद ही इस्लाम के अधिक औपचारिक पहलू के अनुयायी थे' (लेवत्ज़िओन 2008: 362)। ये सूफ़ी सिलसिले *(मुराबत/मैरबाउट) (murabat/marabouts)* शहरी *मखज़िन* (कुलीन) के विरूद्ध प्रतिक्रिया स्वरूप थे और हर गाँव के जीवन का अभिन्न अंग थे, जो अक्सर मध्यस्थ के रूप में धार्मिक मार्गदर्शक की भूमिका निभाते थे। मारिनिद सुल्तान स्वयं इस सूफीवाद के अनुयायी थे। लेमसेन में सुल्तान अबुल हसन ने सूफी संत सिदी अबू मद्यान के मज़ार का निर्माण कराया और अबू इनान ने सिदी अल-हलावी के सम्मान में एक ऐसे ही अन्य मज़ार का निर्माण किया। हालांकि, मारिनिदों के सूफी इस्लाम के प्रति झुकाव के बावजूद न्यायविदों (*फुक़हा; fuqahas*) का महत्व जारी रहा। मारिनिदों ने कई मदरसों की स्थापना की जहां मालिकी स्कूल ऑफ ज्यूरिसप्रुडेंस (न्यायशास्त्र का मालिकी स्कूल) पढ़ाया जाता था। ऐसा ही एक प्रसिद्ध मदरसा फ़ैज़ में स्थापित किया गया था। स्पेन की ईसाई पुनर्विजय (*Reconquista*) ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दी की एक और प्रमुख विशेषता थी।

बोध प्रश्न-2

1) मग़रिब के मध्यकालीन साम्राज्यों की आर्थिक संरचना का संक्षेप में उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

[5] अशराइट स्कूल की स्थापना अबू अल-हसन अल-अशारी (मृ. 936) ने की थी। यह सुन्नी इस्लाम के रूढ़िवादी स्कूल में से एक है जिसने मुताजिलों के तर्क बुद्धि प्रयोग पर जोर का विरोध किया।

[6] इस्लामी न्यायशास्त्र के ज़ाहिराइट स्कूल की स्थापना नौवीं शताब्दी में दाऊद अल-ज़ाहिरी द्वारा की गई थी। वे *कुरान* और *हदीस* के *ज़ाहिरी* (बाहरी) अर्थ में विश्वास करते थे और उसके अनुमानित अर्थ (*क़ियास*) को निरस्त करते थे।

2) मग़रिब के महत्वपूर्ण व्यापारिक बन्दरगाहों (entrepots) और उनके महत्व के बारे में बताइये।

....

....

....

....

....

3) मध्यकाल में मग़रिब के प्रमुख शहरों की एक सूची तैयार कीजिए।

....

....

....

....

....

4) मध्यकालीन मग़रिब के 'शुद्ध' इस्लाम से सूफी इस्लाम में परिवर्तन को रेखांकित कीजिए।

....

....

....

....

....

10.4 मध्यकालीन इथियोपिया

इथियोपिया, अफ्रीका का एक और आधुनिक देश है जो अफ्रीका के पूर्वोत्तर कोने पर स्थित है। इसका मध्ययुगीन इतिहास मोरक्को के मध्यकालीन इतिहास की तरह इस्लाम के उदय से निकटता से संबंधित है। लेकिन साथ ही, मोरक्को के मध्ययुगीन इतिहास के विपरीत यह इथियोपिया के इस्लामीकरण या अरबीकरण का इतिहास नहीं है, बल्कि यह इन प्रक्रियाओं के प्रति प्रतिरोध का इतिहास था। इथियोपिया के लोगों ने विशिष्ट चर्च, मोनोफिसाइट कॉप्टिक चर्च (Monophysite Coptic Church), के संरक्षणत्व में संगठित होकर इस कार्य में सफलता पाई।

10.4.1 इथियोपियाई राजवंश

चौथी शताब्दी सी ई से इथियोपिया के पूर्व-मध्ययुगीन अक्सुमाइट (Aksumite) साम्राज्य ने कॉप्टिक या सीरियाई ईसाई धर्म को राज्य धर्म के रूप में स्वीकार किया था। उन्होंने पूरे ईसाई जगत की सबसे खूबसूरत और भव्य चर्चों में से कुछ का निर्माण किया था। अक्सुमाइट साम्राज्य के पतन का श्रेय आमतौर पर, हालांकि सार्वभौमिक रूप से नहीं, इस्लाम और अरब राज्यों के उदय और परिणामतः आठवीं शताब्दी सी ई के मध्य तक लाल सागर के व्यापार पर अक्सुमाइटों के नियंत्रण में आई गिरावट को जाता है। लाल सागर का व्यापार

इथियोपिया के अक्सुमाइट साम्राज्य के लिए राजस्व का एक बड़ा स्रोत था क्योंकि लाल सागर, भूमध्य और हिंद महासागर के बाजारों के पारगमन मार्ग पर स्थित था।

अक्सुमाइटों के बाद ज़ागवे (Zagwe) वंश ने इथियोपिया पर शासन किया। इस नए राजवंश के आगमन के साथ, ज़ागवे वंश के लोग उत्तरी इथियोपिया की राजधानी अक्सुम (Axum) से दक्षिण में लास्ता (Lasta) प्रांत की ओर चले गएः रोहा (वर्तमान लालिबेला) सर्वाधिक उल्लेखित राजधानी है। ज़ागवे शासकों ने चर्च निर्माण की अक्सुमाइट परंपरा को जारी रखा और दक्षिणी इथियोपिया की जनजातियों के बीच कॉप्टिक ईसाई धर्म का प्रसार किया। यह कहा जाता है कि सम्राट लालिबेला (1185-1225) ने खुद को मूसा (बाइबिल में वर्णित प्रसिद्ध पैगम्बर) का 'प्रामाणिक' वंशज साबित करने के लिए, विशेष रूप से अपनी राजधानी में 11 शैलकर्तित (rock-hewn) चर्चों का निर्माण किया। 1270 में, शेवा (Shewa) के विद्रोह के बाद, सोलोमोनिक राजवंश, एक ऐसा राजवंश जो बाइबिल में वर्णित राजा सोलोमन और रानी शीबा के वंशज होने का दावा करते थे, सत्ता में आए। येकुनोअमलक (YekunoAmlak; 1270-1285) इसके प्रथम राजा थे। इस राजवंश का शासन सम्राट अमदासियोन (AmdaSiyon) के शासन के दौरान अपने शिखर पर पहुंच गया, जिसने 1314-1344 सी ई के बीच शासन किया। उन्होंने न केवल दृढ़ता के साथ अपने क्षेत्र के विभिन्न कोनों से हो रहे विद्रोहों का सामना किया, बल्कि मुसलमानों और मिस्त्रवासियों के खिलाफ एक सैन्य अभियान भी चलाया, जिससे उन्हें इथियोपिया में चर्च के लिए एक बिशप (धर्माध्यक्ष; bishop) भेजने के लिए मजबूर होना पड़ा। शायद इस समय के दौरान *केब्रानागास्त* (*KebraNagast; राजाओं की महिमा*) की रचना की गई थी। *केब्रानागास्त* एक अनूठा ग्रंथ है। यह 'चौदहवीं शताब्दी के आरंभ में छह तिगरायन (Tigrayan) लिपिकों द्वारा संकलित किंवदंतियों का एक समूह है। मुख्य संकलक, यिशाक (Yishak) ने दावा किया कि वह और उसके सहयोगियों द्वारा रचित यह ग्रंथ एक कॉप्टिक पांडुलिपि के अरबी संस्करण का गे'एज (Ge'ez) में अनुवाद मात्र था। वास्तव में, उनकी टीम ने स्थानीय और क्षेत्रीय मौखिक परंपराओं और शैलियों और ओल्ड और न्यू टेस्टामेंट का सार, विभिन्न अप्रमाणिक ग्रंथों, यहूदी और इस्लामी टिप्पणियों, और चर्च के धर्मशास्त्रों के लेखों से व्युत्पन्न सारों को मिश्रित किया है। *केब्रानागास्त* का प्राथमिक लक्ष्य सम्राट येकुनोअमलक (YekunoAmlak) के प्रभुत्व को वैधता प्रदान कराना और उनका संबंध 'सोलोमन वंश परंपरा' के साथ दृढ़ता के साथ 'स्थापित' करना था (मार्कस 2002)।

दावित-I (Dawit-I), जिसने 1380 से 1412 तक शासन किया, के शासन के दौरान इथियोपियाई चर्च खुद एक आंतरिक संघर्ष में डूब गया। यह वैचारिक आधार पर पादरियों के दो गुटों के बीच की लड़ाई थी। इससे एक पक्ष द्वारा, जिसकी राज्य पर मजबूत पकड़ थी, दूसरे पर अत्याचार किया गया। अपनी तमाम कोशिशों के बावजूद दावित-I (Dawit-I) चर्च के भीतर की लड़ाई को समाप्त नहीं कर सका। लेकिन उसके उत्तराधिकारी सम्राट, ज़ारा याकूब (1434 और 1468 के बीच शासन किया), जो खुद एक मठ में प्रशिक्षित थे, इथियोपिया में चर्च के संघर्ष करने वाले गुटों के बीच एक सामंजस्य ला सकने में सफल हुए।

यही वह समय था जब इथियोपियाई ईसाई साम्राज्य के पूर्व और दक्षिण-पूर्व की ओर स्थित मुस्लिम, यहाँ के लोगों को इस्लाम में परिवर्तित कर रहे थे और अपनी छोटी क्षेत्रीय रियासतों को संगठित कर रहे थे। इफ़ात (Ifat) एक ऐसी ही रियासत थी जो हरेर (Harer), अफार (Afar) और सोमाली (Somali) इनमें सबसे अधिक सर्वप्रमुख थी। पूर्व की ओर उनका अस्तित्व, जो लाल सागर के व्यापार को नियंत्रित कर रहा था, तनाव और संघर्ष का एक नियमित स्रोत था। ईसाई और मुस्लिम शासकों के बीच लगातार आक्रमण और जवाबी हमले होते रहते थे। लेकिन इथियोपियाई ईसाई साम्राज्य ने उन सभी का सामना किया और छोटी मुस्लिम रियासतों या शेखों के राज्यों (shaikhdoms) पर हावी हो गए, जो भाषा, संस्कृति और परंपरा के आधार पर विभाजित थे। 15वीं शताब्दी के अंत तक इफ़ात और हरेर के मुसलमान,

अदाल (Adal) के साथ शामिल हो गए और अदाल को एक मजबूत इस्लामी शक्ति बना दिया। 16वीं शताब्दी के मध्य तक, अदाल के एक सैन्य नेता, अहमद इब्न इब्राहिम अल ग़ाजी (या ग्रान, द लेफ्ट हैंडर) ने इथियोपिया के ईसाई सम्राट को एक बड़ी सैन्य चुनौती दी। 1529 में उसने एक सैन्य अभियान भेजा। इथियोपिया का शासक लेबनादेंगेल (LebnaDengel), जिन्होंने 1508 और 1540 के बीच शासन किया, अपने साम्राज्य की रक्षा नहीं कर सका और उन्होंने पुर्तगाल के ईसाई शासक की मदद मांगी। वह मदद लेबना (Lebna) के उत्तराधिकारी गालाव्देवोस (Galawdewos: शासनकाल 1540-49) के समय पहुंची। 1543 में गालाव्देवोस ने न केवल ग्रान को पराजित किया, बल्कि उसकी हत्या भी कर दी और ईसाई साम्राज्य के वर्चस्व को पुनर्स्थापित किया।

यहां दो राज्यों के बीच के संघर्ष, दो धर्मों के बीच या दो प्रमुख धार्मिक समुदायों के बीच अधिक दिखाई देते हैं। बहरहाल, दोनों, इथियोपिया के ईसाई साम्राज्य और अरब-इस्लामिक राज्य मिश्रित समाज थे, न कि एकरूपी धार्मिक समुदाय। इथियोपिया में कई भाषाई समुदाय थे जैसे कि सेमाइटिक (Semitic; गी'ज़, अमहारिक, आगाव आदि), कुशाइटिक (Cushitic; कुश और नीलोटिक) और अन्य कबीलाई भाषाई समुदाय। इसी प्रकार यहां विभिन्न धर्म भी थे। वहां कबीलाई जीववादी (animistic) धार्मिक प्रथाओं के साथ-साथ ईसाई धर्म का अस्तित्व भी था जो राज्य धर्म था। वहाँ न केवल कई धर्मों का बल्कि समन्वयता का अस्तित्व भी था, अर्थात उनके बीच अंतर-संबंध, प्रभाव और अस्पष्ट सीमाएं मौजूद थीं (ब्रॉकेम्पर 1992)। अतः यह कहना गलत होगा कि दो शक्तियों के बीच संघर्ष दो धर्मों का संघर्ष था। इसके अतिरिक्त, इस संघर्ष के पीछे धर्म के अलावा अन्य कारण थे, जैसे कि सोने का व्यापार, हाथी दांत, दास या यहां तक कि उपजाऊ भूमि का नियंत्रण, इत्यादि।

10.4.2 इथियोपियाई कॉप्टिक ईसाई धर्म

मध्ययुगीन इथियोपिया में कई धर्म होने के बावजूद, इथियोपिया के मध्ययुगीन इतिहास के अध्ययन में इथियोपियाई कॉप्टिक ईसाई धर्म की विवेचना की विशिष्ट आवश्यकता है। यह न केवल राज्य चर्च, बल्कि समाज का संगठन और इथियोपिया की मध्ययुगीन अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भागीदार भी था। इथियोपिया में हजारों चर्च थे। सैकड़ों मठ थे और हजारों पादरी और चर्च के अधिकारी थे। अक्सुमाइट राजा कालेब (Kaleb; मृ. 540), जिन्होंने छठी शताब्दी सी ई के मध्य यहूदी शासक द्वारा सताए गए ईसाईयों की मदद के लिए लाल सागर को पार किया था, उन्होंने ईसाई पादरी बनने के लिए अपना सिंहासन तक छोड़ दिया था। चर्च द्वारा समुदाय के लिए लगातार समारोह और प्रीतिभोज आयोजित किए जाते थे।

हम जानते हैं कि चौथी शताब्दी से अक्सुमाइट राजाओं ने ईसाई धर्म को अपनाया और ईसाई धर्म को राज्य धर्म बना दिया। वे सीरियाई और मिस्रवासियों के सदृश्य मोनोफिसाइट कॉप्टिक चर्च से संबंधित थे। ईसाई धर्म की राज्य के साथ यह समबद्धता इथियोपिया में मध्यकाल के दौरान थोड़े बहुत अंतराल के साथ जारी रही। इथियोपियाई ईसाई धर्म, रोमन कैथोलिक धर्म से अलग था। इसमें मठाधिकारी (monastic) और धर्मनिरपेक्ष पादरी थे। मठाधिकारी पादरियों ने गी'ज़ (Ge'ez; यूरोपियन लैटिन के समकक्ष) को सीखा और वे आमतौर पर सन्यासी (ascetic clergy) थे। धर्मनिरपेक्ष पादरी विवाह करते थे और आम ईसाईयों के बीच रहते थे। और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है जिसने इस चर्च/ईसाई धर्म को अन्य चर्चों से अलग बनाया, वह उनका मोनोफिसाइट (*तावाहदो; tawahdo*) सिद्धांत था, जो पवित्र बाइबिल की ओल्ड टेस्टामेंट के एकेश्वरवाद से संबंधित था, और इसमें सेमाइटिक (Semitic) धार्मिक प्रथाओं के कुछ तत्व समाविष्ट थे।

अक्सुमाइट और ज़ागवे (Zagwe) राजाओं की शैलकर्तित (Rock-hewn) चर्च, विशेष रूप से राजा लालिबेला (शासनकाल 1181-1221) द्वारा निर्मित, न केवल भव्यता और वास्तुकला के

लिए प्रसिद्ध हैं, बल्कि यह समय और लोगों के विश्वास का भी प्रतीक हैं। शैलकर्तित चर्चों पर चर्चा उनके संबंध में कुछ प्रकाश डालने में सहायक होगी। शैलकर्तित चर्चों को पहाड़ों के किनारे एकल चट्टानों से उकेरा गया है। अक्सुमाइटों के समय से ही इथियोपिया में ऐसे चर्च बनाए जा रहे थे। लेकिन ज़ागवे (Zagwe) काल के दौरान, राजा लालिबेला ने कुछ बेहतरीन शैलकर्तित चर्च बनाए। वह संत राजा के रूप में भी जाने जाते थे और वे येरूशलेम गये थे। यह माना जाता है कि लालिबेला ने अपने ग्यारह शैलकर्तित चर्चों को पवित्र भूमि (येरूशलेम) की प्रतिकृति के रूप में बनाया था। विशाल चट्टान के एक ही खंड से निर्मित नक्काशीदार ये चर्च बहुत खूबसूरत थे। 'छतें सपाट नुकीली या नक्काशीदार, जो सलीब (cruciform) या सरल रूप में, आमतौर पर एक आकर्षक कंगनी (cornice) के साथ थीं। बाद में, कारीगरों ने आंतरिक सजावट की और चट्टान के अन्दर खुदाई करके नक्काशी और वास्तुकला के असाधारण रूपों को डिजाइन बनाकर खुद को अग्रणी के रूप में स्थापित किया। इस प्रकार की सुन्दरता सामान्य निर्माण प्रक्रियाओं और तकनीकों द्वारा कभी प्राप्त नहीं की जा सकती थी। प्रभावशाली स्तम्भों की पंक्तियों तथा शिखरों के साथ कुछ चर्चों में तीन केन्द्र (naves) थे, अन्य में पांच। बास-रिलीफ (bas-relief) और हॉट-रिलीफ (haut-relief; प्लास्टर के डिज़ाइन) में मेहराबें, खिड़कियाँ, आले, अति विशाल क्रॉस, स्वस्तिक, सजावटी रॉक मोल्डिंग्स और ज्यामितीय आकृतियों के फ्रीज़ (friezes), अर्ध-गुम्बद (apses) और गुम्बद और इसी तरह की दूसरी आकृतियों में इन सभी और अन्य विशेषताओं ने वास्तव में अफ्रीकी महाद्वीप के मर्मज्ञ ईसाई वास्तुकला के लालिबेला चर्चों के चिरस्थाई स्मारकों को चित्रित किया गया है' (टामेन 1998 : 87ñ 104)। हालांकि यहाँ यह भी सन्दर्भ हैं, यद्यपि कुछ अस्पष्ट, कि इस काम के लिए भाड़े के कुशल कारीगरों को भारत सहित दूर-दराज़ के क्षेत्रों से लाया गया था।

चित्र 10.3: शैलकर्तित चर्च ऑफ सेंट जॉर्ज, लालिबेला, इथियोपिया
साभारः बर्नार्ड गेगनॉन, नवंबर, 2012
स्रोत : https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/0/0b/Bete_Giyorgis_03.jpg

वहां हजारों चर्च निर्मित किये गये थे। चर्चों को तीन प्रमुख प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है। सबसे आम चर्च *वेंको* (*venko*) या *गेटर* (*geter*) चर्च थे। दूसरे प्रकार के चर्च डेब्र (*debr*) चर्च थे और वे बड़े पैमाने पर शहरी केंद्रों और शाही शहरों में थे जिन्हें आमतौर पर शाही संरक्षण प्राप्त था। इन दो प्रकार के चर्चों में धर्मनिरपेक्ष पादरी (*the debtaras*), जो विवाहित पुरूष थे, पुजारियों के रूप में कार्य करते थे। वे निश्चित रूप से प्रशिक्षित थे और उन्हें पादरी के रूप में विधिवत दीक्षा दी गई थी और एक ही समय में वे नर्तक, गायक, ज्योतिषी, ताबीज और जुड़ी-बूंटी संबंधी औषधी बनाने वाले और निरक्षरों के लिए लेखन करने वाले थे। तीसरे प्रकार के चर्च गेदम (*gedam*) थे, जो या तो मठ से जुड़े थे या स्वतंत्र थे, लेकिन धर्मगुरू पुजारी मठवासी पादरी (भिक्षु) थे जो ब्रह्मचारी फादर थे। भिक्षु पादरी एक पवित्र और कठिन तपस्वी जीवन व्यतीत करते थे। और इन सभी को मठ-व्यवस्था में प्रशिक्षित किया जाता था और वे शास्त्रों और अनुष्ठानों की भाषा गी'ज़ में दक्ष होते थे। कुछ पादरी विधुर भी थे। वहां ननों की संख्या बहुत कम थी, जो चर्चों में निम्न स्तर के कार्य करती थीं। इस चर्च ने न केवल देश को एक साथ बांधे रखा, बल्कि यह इथियोपिया का गौरव भी था; अफ्रीका का वह एकमात्र देश जिसे कभी किसी यूरोपीय शक्ति द्वारा उपनिवेश नहीं बनाया जा सका था।

10.4.3 इथियोपिया : भूमि और अर्थव्यवस्था

मध्ययुगीन इथियोपिया में अर्थव्यवस्था और शक्ति काफी हद तक भूमि पर आधारित थी। यह उस विचार के विपरीत था जिसमें माना जाता था कि मध्यकाल में राज्य, व्यापार से या अंतरराष्ट्रीय व्यापार से प्राप्त राजस्व पर चलता था, इतिहासकार अब इस बिंदु पर लगभग एकमत हो रहे हैं कि भूमि द्वारा बड़े पैमाने पर अधिशेष उत्पन्न होता था। इथियोपिया में भूमि का स्वामित्व व्यक्तिगत/निजी होने के साथ-साथ सामूहिक भी था।

भू-अधिकार

अधिकांश इथियोपिया में *रिस्त* (*rist*) प्राथमिक भू-अधिकार था, हालांकि क्षेत्रीय विविधताएं भी थीं। यह राज्य और सरदारों के प्रति दायित्वों के साथ एक वंशानुगत भूमि उपयोग अधिकार था। *गब्बर* (*gabbars*) के रूप में जाने वाले किसान *रिस्त* कृषि भू-अधिकार धारक होते थे। प्राथमिक *रिस्त*-धारक या *गब्बर* अपने बच्चों को बेटों या बेटियों के बीच भेदभाव किए बिना इस अधिकार को हस्तांतरित कर सकता था। असाधारण मामलों में, जैसा कि राजद्रोह के मामले में, एक *गब्बर* को उसके अधिकार से वंचित किया जा सकता था। इस *रिस्त* अधिकार को परिवार या कबीले के बाहर किसी को हस्तांतरित/बेचा नहीं जा सकता था और इसलिए, वहाँ पर बेदखली का डर व्यावहारिक रूप से अनुपस्थित था। कुछ अल्पसंख्यक मुसलमान या मोची और चर्मकार थे, जिनके पास कोई *रिस्त* अधिकार नहीं था।

दूसरा प्रमुख भूमि अधिकार चर्चों/मठों और अन्य व्यक्तियों को सामूहिक और व्यक्तिगत रूप से राज्य द्वारा प्रदत्त किया जाता था जिसे *गुल्त* (*gult*) के रूप में जाना जाता था। यह विशिष्ट सेवाओं के लिए वेतन के बदले में दिया गया सेवा अधिकार था। इस अनुदान के लाभार्थी को *गुलताना* (*gultana*) के रूप में जाना जाता था। एक *गुलताना* भूमि की स्वयं खेती कर सकता था या खेती करने के लिए उसे *गब्बर* को *रिस्त* के रूप में तकसीम कर सकता था और उपज के हिस्से में सहभागी हो सकता था। एक *गुल्त* (*gult*) अधिकार हमेशा भूमि पर नहीं था। यह एक बाजार, एक जल-निकाय या चरागाहों पर हो सकता था। कुछ इतिहासकारों का मत है कि *गुल्त* (*gult*) अधिकारों ने पट्टेदारी या भूमिहीन श्रमिकों को पैदा किया, खासकर दक्षिण की ओर, वह क्षेत्र जो 13वीं शताब्दी में विजित किया गया था। यह माना जाता था कि *गब्बरों* को समय-समय पर श्रम सेवाओं, *गुल्त* (*gult*) धारकों को उपज का एक भाग या भेंट के अलावा प्रथागत उपहार भी प्रदान करना होता था। वास्तव में, *गुल्त*

धारक अकेला *गब्बर* का उच्च अधिकारी नहीं था। बल्कि *गब्बर* को *गुल्त* (*gult*) धारक के लगभग सभी अधीनस्थ अधिकारियों को भी संतुष्ट करना पड़ता था जैसे कि राजस्व कलेक्टर, न्यायाधीश, चर्च के पादरी आदि को। कहीं-कहीं, यहां तक कि *गब्बर* के पूरे परिवार को भी *गुल्त* (*gult*) धारक के लिए काम करना पड़ता था।

मध्ययुगीन इथियोपिया सामंती था या नहीं, यह प्रश्न भी इतिहासकारों द्वारा संबोधित किया गया है और यह आम सहमति है कि इथियोपिया में किसान मध्ययुगीन यूरोप की तरह कृषिदास (serf) नहीं थे। उन्होंने अपेक्षाकृत अधिक गतिशीलता से स्वतंत्रता का आनंद उठाया। जो कुछ भी हो, *गब्बर* राज्य और समाज को चलाने के लिए आवश्यक अधिशेष का उत्पादन कर रहे थे। सम्राट, उनके दल और सशस्त्र सैनिक सैन्य अभियान पर देश भर में घूमते थे। इसके अलावा वे कानूनों को लागू करने और प्रशासन के संचालन की निगरानी के लिए भी पूरे क्षेत्र में विचरण करते थे (यही कारण था कि इतिहासकारों ने इथियोपिया में गतिशील राजधानियों (roving capitals) की बात की है)। इन सभी गतिविधियां के दौरान, *गब्बर* प्राथमिक कार्यकर्ता, उत्पादक और शिविर-अनुयायी था।

इथियोपिया में बड़ी संख्या में चारागाही समुदाय थे। अब भी इथियोपिया के उत्तरपूर्वी, पूर्वी और दक्षिणी क्षेत्रों की तराई में स्वदेशी चारागाही समुदाय निवास करते हैं। उनकी आजीविका पालतू पशुओं के पालन-पोषण पर आधारित थी जिसके लिए उन्होंने अपने सीमित प्राकृतिक वातावरण में मौसमी रूप से उपलब्ध चारागाहों और जल निकायों का अधिकतम उपयोग किया। उनमें से कुछ ने पशु-पालन के साथ थोड़ी बहुत कृषि को भी मिश्रित किया है। उनके पास भूमि का सामुदायिक स्वामित्व है और साथ ही उन्हें चारागाह और कृषि भूमि के प्रयोग का भी अधिकार है। इथियोपिया में बढ़ते आधुनिकीकरण के कारण इन समुदायों और उनकी उत्पादक प्रथाओं पर विलुप्त होने का खतरा मंडरा रहा है।

समाज में एक सीमित मात्रा में शिल्प उत्पादन की उपस्थिति थी। शिल्पकार-पुरूष और शिल्पकार-महिलाएं किसान समाज का हिस्सा थे। लंबी दूरी और विदेशी व्यापार (ज्यादातर हाथी दांत, सोना और गुलाम व्यापार की वस्तुएं थीं) भी अर्थव्यवस्था का एक बड़ा हिस्सा था, लेकिन उनकी प्रकृति में उतार-चढ़ाव थे क्योंकि व्यापार मार्ग हमेशा इथियोपियाई राज्य के नियंत्रण में नहीं थे। इसलिए, यह माना जाता है कि इथियोपियाई विद्वानजन और कुलीन वर्ग कभी भी अपनी समृद्धि के लिए पूर्णतः व्यापार पर निर्भर नहीं थे, बल्कि निश्चित रूप से किसान अधिशेष के जरिये एक अपेक्षाकृत आरामदायक जीवन जीते थे।

बोध प्रश्न-3

1) मध्यकाल के प्रमुख इथियोपियाई राजवंशों की सूची बनाइये।

....

....

....

....

....

2) इथियोपियाई कॉप्टिक चर्च पर पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

....

....

3) मध्ययुगीन इथियोपिया में विभिन्न प्रकार के भू-अधिकारों की उपस्थिति का विश्लेषण कीजिए।

....

....

....

....

....

10.5 मध्यकालीन ज़िम्बाब्वे

मध्ययुगीन ज़िम्बाब्वे की पहचान ग्रेट ज़िम्बाब्वे के अवशेष थे, जो एक ऐसा शहर प्रतीत होता है जो लगभग 11वीं शताब्दी से लगभग 1600 सी ई तक लगातार बसावट में था। हालांकि, यह लगभग 1300-1450 सी ई के दौरान अपने विकास की ऊंचाई के चरम बिंदु पर पहुंचा।

10.5.1 ग्रेट ज़िम्बाब्वे का पुरातात्विक स्थल

ज़िम्बाब्वे का मध्ययुगीन इतिहास ग्रेट ज़िम्बाब्वे पर केन्द्रित है, जो ज़िम्बाब्वे में आधुनिक शहर मस्विंगो (Masvingo) से लगभग 20 किलोमीटर दक्षिण पूर्व में पत्थरों द्वारा निर्मित एक विशाल परिसर था। अपने चरम पर पत्थर से निर्मित यह परिसर लगभग 70 हेक्टेयर से अधिक भू-क्षेत्र में फैला हुआ था। ऐसा कहा जाता है कि ग्रेट ज़िम्बाब्वे के इस पाषाण शहर के परिसर का निर्माण 12वीं शताब्दी में शुरू हुआ और 1450 के दशक तक जारी रहा। इस शहर का पतन लगभग 1600 सी ई में प्रतीत होता है। और अब हमारे पास केवल इस ग्रेट ज़िम्बाब्वे के पुरातात्विक अवशेष मात्र बचे हैं। यह किलेबंद शहरी केंद्र दक्षिणी अफ्रीका में ज़ाम्बेज़ी (Zambezi) और लिम्पोपो (Limpopo) नदियों के मध्य स्थित था।

1550 के दशक से यूरोपीय लोगों को ग्रेट ज़िम्बाब्वे के खंडहरों की जानकारी थी और 1609 में, पुर्तगाली इतिहासकार जोआओ डे सांतोस (Joao de Santos) ने इस मिथक की रचना की कि यह भूमि शीबा की रानी (पवित्र बाईबिल में उल्लिखित) की थी जो राजा सोलोमन को देखने के लिए गई थी। यह मिथक कई सालों प्रचलन में रहा। और यहां तक कि 20वीं शताब्दी तक औपनिवेशिक ताकतों और स्थानीय सरकारों ने इस बात से इनकार किया कि यह सूखे पत्थरों से निर्मित परिसर स्वदेशी मूल और डिजाइन का था। पुर्तगाली व्यापारियों ने उल्लेख किया कि इसे स्वदेशी समुदायों द्वारा सिम्बोए (Simboae; कोर्ट हाउस) कहा जाता था। जर्मेनिक भूविज्ञानी कार्ल मॉख ने 1871 में मिथक को यह कहते हुए सही ठहराया कि ग्रेट ज़िम्बाब्वे ओफिर (Ophir) था, जो सोलोमन और शीबा की बाइबिल में वर्णित सीट थी। अनेकों खजाना-खोजी सोने और कीमती धन की तलाश में वहां पहुंचे और उन्होंने साइट के विभिन्न हिस्सों को खोदना शुरू कर दिया और इस प्रकार ग्रेट ज़िम्बाब्वे के हमारे ज्ञान को सीमित करने के साथ-साथ इस स्थल को किसी भी वैज्ञानिक पुरातत्व अध्ययन के लिए क्षतिग्रस्त कर दिया। जैसे-जैसे उपनिवेशवाद का प्रभाव अफ्रीका में बढ़ा, उनके मिथक-निर्माण में भी वृद्धि हुई। दक्षिण अफ्रीकी कंपनी सेसिल रोड्स द्वारा प्रायोजित, ब्रेंट (Brent) और उसके बाद हॉल ने इस मिथक का निर्माण किया तथा उसे फैलाया कि ग्रेट ज़िम्बाब्वे

की पत्थर की वास्तुकला में या तो फिनिशियनों या मिस्त्रवासियों का योगदान है जिन्होंने किसी समय अफ्रीका के इतिहास में ज़िम्बाब्वे को अपना उपनिवेश बनाया था और यह भ्रम फैलाया कि यह कभी भी 'असभ्य' अफ्रीकी लोगों द्वारा नहीं बनाया जा सकता। जिसने भी विवाद किया और कहा कि यह स्वदेशी लोगों और उनकी सभ्यता का निर्माण है, उसका विरोध किया गया। लेकिन 1905 में, पुरातत्वविद् डेविड रैन्डल मैकआइवर (David Randall MacIver) और 1929 में गर्ट्रूड केंटन-थॉमसन (Gertrude Caton-Thomson) ने स्पष्ट रूप से कहा कि ग्रेट ज़िम्बाब्वे का निर्माण और उपयोग अफ्रीकी लोगों द्वारा ही किया गया था। करंगों (Karangas) ने पत्थर की इमारतें बनवाई और शोना (Shonas), जो वर्तमान में ज़िम्बाब्वे का बहुसंख्यक समुदाय है, करंगों के वंशज माने जाते हैं।

चित्र 10.4: ग्रेट ज़िम्बाब्वे का हवाई-दृश्य
साभारः जेनिस बेल, जुलाई, 2015
स्रोत : https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/d/dd/Great-zim-aerial-looking-West.JPG

आज इस स्थल पर शायद ही कोई पत्थर के घर मौजूद हैं। जो बचा है वह है पठार के उस पार लगभग 11 मीटर ऊंची पत्थर की घुमावदार दीवारें। पुरातत्वविदों ने ग्रेट ज़िम्बाब्वे शहर की साइट को तीन सुविधाजनक भागों में विभाजित किया हैः 1) हिल (Hill) (इसके पश्चिमी घेरे और पूर्वी घेरे के साथ), 2) ग्रेट एनक्लोज़र (Great Enclosure) और 3) द वैली (Valley)। दो अन्य बाड़ों (Enclosure) और नीचे घाटी को देखते हुए शीर्ष पर पहाड़ी साईट थी। प्रारंभ में यह सुझाव दिया गया था कि शीर्ष या हिल साइट प्रशासन और शाही कार्यालय का स्थान था। लेकिन यह विवादित है और साइट के कई अन्य संभावित उपयोगों को जैसे आध्यात्मिक नेताओं के निवास, पूर्व-वैवाहिक (प्रशिक्षण) निवास आदि के रूप में सुझाया गया है। किसी भी छत का कोई सबूत नहीं मिलता, लेकिन बाड़े और मार्ग के अवशेष हैं। एनक्लोज़रों (Enclosure) के भीतर शायद फूस की छतों वाले मिट्टी के घर हुआ करते थे। मिट्टी के मकानों को ढाका/दागा (Dhaka/Daga) के नाम से जानी जाने वाली बजरी के मिश्रण के साथ स्थानीय मिट्टी से बनाया गया था। पश्चिमी परिक्षेत्र की दीवारों में अंतरालों पर बुर्ज हैं। शीर्ष छोर पर नक्काशी किए गए पक्षियों के साथ पत्थर के खंभे हैं जो व्यक्तिगत शाही चित्रों का संकेत दे सकते हैं। पश्चिमी परिक्षेत्र में राजा और उसके परिवार के सदस्यों या अन्य प्रमुखों और गणमान्य व्यक्तियों के लिए घर हो सकते हैं। पूर्वी परिक्षेत्र अनुष्ठानों के लिए एक

धार्मिक या पवित्र स्थान हो सकता है क्योंकि यहां पक्षियों के नक्काशीदार चित्र पाए गए थे। इसके अलावा यहाँ कांच के मनकों, ढाका/दागा की परतों वाले फर्श, टूटे हुए मिट्टी के बर्तनों के रूप में अन्य कई पुरातत्व कलाकृतियाँ मिली हैं।

विशाल परिक्षेत्र (Great Enclosure) ग्रेट ज़िम्बाब्वे का सबसे बड़ा पुरातात्विक अवशेष है। यह लगभग 250 मीटर लंबी सूखी पत्थर की दीवार के साथ 10-12 मीटर ऊंचा परिक्षेत्र है। दीवारें नीचे की ओर 5-6 मीटर तक मोटी हो सकती हैं। परिक्षेत्र के प्रसिद्ध शंकु (conical) आकार के टॉवर की ओर जाने वाली दीवारों के बीच संकीर्ण मार्ग थे। अलग-अलग शोधकर्ताओं द्वारा परिक्षेत्र की पहचान एक मंदिर, राजा की कई पत्नियों के लिए एक आवास, राज्य के कुलीनों के लिए एक निजी आवासीय क्षेत्र और अंत में अविवाहित युवकों के लिए एक प्रशिक्षण केंद्र के रूप में भी की गई है। पुरातात्विक स्रोतों को छोड़कर लिखित प्रमाणों और अन्य स्रोतों की अनुपस्थिति में, इस तरह के विशाल भवन या परिक्षेत्र के उद्देश्य के बारे में अभी भी कोई स्पष्टता नहीं है।

परिक्षेत्र से परे घाटी थी जहां प्राथमिक उत्पादक जैसे पशु-पालक और किसान फूस की झोपड़ियों में रहते थे। उन्होंने वहां की भूमि पर खेती भी की और अपने शहर के व्यापार के लिए आवश्यक श्रम भी प्रदान किया। घाटी में पत्थर के परिक्षेत्र और इमारतों के कुछ छोटे अवशेष भी मिलते हैं।

ये सूखी पत्थर की चिनाई है क्योंकि इस चिनाई में किसी चूना-गारे (mortar) का उपयोग नहीं किया गया था, ऐसा माना जाता है कि इसे कम से कम तीन चरणों में बनाया गया था। निर्माण के शुरुआती चरण में, पत्थर चिकनी धार के नहीं थे। मध्य चरण के पत्थरों की छंटाई की गई थी और दीवारों पर अलंकारिक डिजाइन थे। और तीसरे चरण में चट्टानों का केवल अव्यवस्थित संकलन था और निर्माण में कोई कुशलता नहीं थी।

पतन

सभ्यता का पतन कब, क्यों और कैसे हुआ और यह कि ग्रेट ज़िम्बाब्वे को क्यों छोड़ दिया गया, यह स्पष्ट रूप से ज्ञात नहीं है। पुनः इतिहासकार, वैज्ञानिक और पुरातत्वविद् इसके संभावित कारण के बारे में अनुमान लगाते रहे हैं। उनमें से कुछ की राय है कि 1400 तक ग्रेट ज़िम्बाब्वे का पतन हो गया और कुछ अन्य 1500 तक इसका पतन बताते हैं। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि वहां उत्तराधिकार को लेकर संघर्ष थे इसलिए साम्राज्य का पतन हुआ। कुछ का मानना है कि लघु हिम युग (Little Ice Age) लगभग 1300 में शुरू हुई। इससे मवेशियों की बीमारी और अन्य संबंधित समस्याएं पैदा हो गई, इसलिए शोनाओं ने ग्रेट ज़िम्बाब्वे छोड़ दिया। एक विश्वास के अनुसार ग्रेट ज़िम्बाब्वे के आसपास के पर्यावरण में आई क्रमिक गिरावट ने भी पतन में योगदान दिया। सोने के व्यापार के पतन का भी योगदान हो सकता है क्योंकि 1500 तक किलवा (Kilwa) की सल्तनत भी ध्वंस्त हो गई थी, जिसका व्यापार-नेटवर्क पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। संभव हो सकता है कि इन सभी कारकों ने ग्रेट ज़िम्बाब्वे के पतन में योगदान दिया। जो भी कारक रहे हों, इस बात के पर्याप्त प्रमाण हैं कि 15वीं शताब्दी सी ई में खामी राज्य (पश्चिम में) और मुतापा सभ्यता (उत्तर की ओर) ग्रेट ज़िम्बाब्वे के प्रवासियों के आने के साथ अस्तित्व में आईं।

10.5.2 सामाजिक-आर्थिक जीवन

ग्रेट ज़िम्बाब्वे के सामाजिक जीवन पर प्रकाश डालने वाली पुरातात्विक कलाकृतियाँ कई हैं, जैसे टूटे हुए मिट्टी के बर्तन, जानवरों की हड्डियों के टुकड़े और उनके द्वारा उपयोग किए जाने वाले औजारों के टुकड़े। मवेशियों की हड्डियां केवल परिक्षेत्र (enclosure) में पाई गई है, जिसका अर्थ है कि परिक्षेत्र में रहने वाले अभिजात वर्ग के लोग मांस खाने का सामर्थ्य

रखते थे, जबकि यह समाज के गरीब वर्गों के लिए सुलभ नहीं था। या फिर संभवतः मवेशी-स्वामित्व उच्च सामाजिक स्थिति का प्रतीक था जिससे गरीब लोगों को वंचित रखा गया था। पुरातात्विक साक्ष्यों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि शोना लोग लोहा, तांबा, सोना आदि का प्रयोग करते थे और निश्चित रूप से इसके खनन् और धातु विज्ञान के बारे में जानते थे। शोनाओं ने लोहे के औजारों और घंटों का इस्तेमाल किया। तांबे और सोने के तार के आभूषणों के अवशेष भी मिले हैं। लेकिन करंगा (Karangas) और उनके वंशज शोना, बड़े पैमाने पर पशुपालक थे। इससे उन्हें निर्वाह-खेती से हटकर परिवहन, व्यापार और खनन की ओर जाने में मदद मिली होगी। हमें इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि इन धातुओं के लंबी दूरी के व्यापार के लिए वे सोफाला के बंदरगाह शहर और बंदरगाह के उत्तर में और अफ्रीका के पूर्वी तट पर किलवा शहर के व्यापार में संलग्न थे। ग्रेट ज़िम्बाब्वे के निवासियों ने न केवल सोना, तांबा, लोहा और हाथी दांत का निर्यात किया, बल्कि चीनी मिट्टी के बरतन, एशियाई कांच के मनके और ईरानी कटोरों (bowls) का आयात भी किया।

बोध प्रश्न-4

1) ग्रेट ज़िम्बाब्वे की स्थानिक विशेषताओं पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

2) ग्रेट ज़िम्बाब्वे की कलाकृतियां उस अवधि के सामाजिक-आर्थिक जीवन पर क्या प्रकाश डालती हैं?

....

....

....

....

....

3) ग्रेट ज़िम्बाब्वे का पतन क्यों हुआ/इसे क्यों त्याग दिया गया?

....

....

....

....

....

10.6 सारांश

यह इकाई अफ्रीका के तीन प्रमुख क्षेत्रों, मग़रिब (मोरक्को-अल्जीयर्स), इथियोपिया और ज़िम्बाब्वे, पर केंद्रित है। यह ज्ञात होता है कि तीनों अफ्रीकी मध्यकालीन सभ्यताओं/साम्राज्यों

के संदर्भ में मध्यकालीन अवधारणा बिल्कुल अलग-अलग है। मग़रिब ने इस्लाम के हस्तक्षेप को देखा जिसके परिणामस्वरूप तीन प्रमुख साम्राज्यों – अलमोराविद, अलमोहद और मारिनिद का निर्माण हुआ। यहाँ क्षेत्र में आए नवीन राजवंशीय नियंत्रणों के परिवर्तनों में सूफ़ीवाद ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और मग़रिब को वास्तव में सूफ़ी गतिविधियों के शुरुआती केंद्रों में से एक कहा जा सकता है जहाँ प्रसिद्ध सूफ़ी संत अल-ग़ज़ाली रहते थे। इथियोपिया में ईसाई धर्म ने इस क्षेत्र में मध्ययुगीन साम्राज्यों के निर्माण और सुदृढ़ीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। मग़रिब और इथियोपिया के विपरीत, ज़िम्बाब्वे की कहानी काफी अलग है। इस महान् मध्ययुगीन ज़िम्बाब्वे के संबंध में हमारे आंकड़े और जानकारी पूरी तरह से पुरातात्विक खोज पर टिकी हुई है। किसी भी लिखित रिकॉर्ड के अभाव में सभ्यता को अक्सर बाईबिल में वर्णित सोलोमन और शीबा के निवास स्थान के रूप में देखा जाता है।

10.7 शब्दावली

अंदलूसिया : स्पेन

फ़ैज : उत्तरी मोरक्को का एक शहर

फन्दूक : कारवांसराय

हारातिन : मोरक्को के वे अफ्रीकी दास जिन्होंने गुलामी से आजादी प्राप्त की

मग़रिब : मोरक्को-अल्जीयर्स

10.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) उप-भाग 10.2.1 देखें

2) उप-भाग 10.2.1 और 10.2.2 देखें

3) उप-भाग 10.2.3 देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 10.3 देखें

2) भाग 10.3 देखें

3) भाग 10.3 देखें

4) भाग 10.3 देखें

बोध प्रश्न-3

1) उप-भाग 10.4.1 देखें

2) उप-भाग 10.4.2 देखें

3) उप-भाग 10.4.3 देखें

बोध प्रश्न-4

1) उप-भाग 10.5.1 देखें

2) उप-भाग 10.5.2 देखें

3) उप-भाग 10.5.1 देखें

10.9 संदर्भ ग्रंथ

ब्रॉकेम्पर, उलरिख, (1992) 'आस्पेक्ट्स ऑफ रिलीजियस सिंक्रैटिज्म इन सदर्न इथियोपिया', *जर्नल ऑफ रिलिजन इन अफ्रीका,* भाग XXII, नंबर 3.

हेमेल, चौकी एल., (2013) *ब्लैक मोरक्को; ए हिस्ट्री ऑफ स्लेवरी, रेस, एंड इस्लाम* (न्यूयार्कः कैम्ब्रिज यूनीवर्सिटी प्रेस).

हेन्ज़, पॉल बी., (2000) *लेयर्स ऑफ़ टाइम; ए हिस्ट्री ऑफ़ इथियोपिया* (लंदनः सी. हर्स्ट एंड कंपनी).

लेवत्ज़िओन, नेहेमिया, (2008) 'द वेस्टर्न मग़रिब एंड सूडान', *द कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ़ अफ्रीका,* भाग 3, *फ्रॉम c. 1050 टू c. 1600,* छठा संस्करण (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

मार्कस, हेरोल्ड जी., (2002) *ए हिस्ट्री ऑफ इथियोपिया* (कैलिफोर्नियाः यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैलिफोर्निया प्रेस).

निएन, डी. टी., (सं) (1998) *यूनेस्को जनरल हिस्ट्री ऑफ़ अफ्रीका,* भाग IV,*अफ्रीका फ्रॉम द ट्वेल्फ़्थ टू द सिक्स्टीन्थ सेंचुरी* (कैलिफोर्नियाः जेम्स करे).

तम्राट, तद्देसे, (2008), 'इथियोपिया, द रेड सी एंड द हॉर्न', *द केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ़ अफ्रीका,* भाग 3, *फ्रॉम* c. *1050 टू* c. *1600,* छठा संस्करण (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

तामेन, गेटनेट (1998) 'फीचर्स ऑफ़ द इथियोपियन ऑर्थोडॉक्स चर्च एंड द क्लर्जी', *एशियन एंड अफ्रीकन स्टडीज,* भाग 7, नं. 1.

10.10 शैक्षणिक वीडियो

द अलमोराविद एम्पायर (इन अवर टाइम)
https://www.youtube.com/watch?v=SNlc5QSJInY

द अलमोराविद्स एंड अलमोहद्स : द अमेज़िघ बरबर एम्पायर
https://www.youtube.com/watch?v=0qLf-riMnkQ

मेरिनिड डायनेस्टी
https://youtu.be/pIpHyqLwJQw

ग्रेट ज़िम्बाब्वे-अफ्रीकन मिडिवल सिटी (ज़िम्बाब्वे)
https://www.youtube.com/watch?v=uX0VNtaCcMk

रॉक-ह्यून चर्च ऑफ़ लालिबेला, इथियोपिया
https://www.youtube.com/watch?v=gNab_2rWhhQ

इकाई 11 लैटिन अमेरिका*

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 एज़्टेक

- 11.2.1 राजनीति
- 11.2.2 समाज
- 11.2.3 अर्थव्यवस्था
- 11.2.4 संहिता-संग्रह (Codices)
- 11.2.5 धार्मिक विश्वास

11.3 इंका

- 11.3.1 इंका राज्य और साम्राज्य
- 11.3.2 समाज और अर्थव्यवस्था
- 11.3.3 जल प्रबंधन प्रणाली
- 11.3.4 इंका वास्तुकला

11.4 सारांश

11.5 शब्दावली

11.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.7 संदर्भ ग्रंथ

11.8 शैक्षणिक वीडियो

11.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- लैटिन अमेरिकी सभ्यताओं की सामाजिक विशेषताओं को समझ पायेंगे,
- लैटिन अमेरिका के संदर्भ में मध्ययुगीन अवधारणा का निर्माण कर सकेंगे,
- मेसोअमेरिका के एज़्टेक के पदानुक्रम पर आधारित सामाजिक-आर्थिक ढांचे को जान पायेंगे,
- एज़्टेक संहिता संग्रहों (codices) के महत्व को समझ सकेंगे,
- इंका राज्य की संरचनाओं की विशेषताओं को रेखांकित कर सकेंगे,
- इंकाओं की जल प्रबंधन प्रणाली का विश्लेषण कर पायेंगे, और
- एज़्टेक और इंका सभ्यताओं की स्थापत्यगत विशेषताओं को जान पायेंगे।

* डॉ. देबअर्पित मनजीत, दयाल सिंह कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

11.1 प्रस्तावना

लैटिन अमेरिकी इतिहास में मध्ययुगीन काल को किसी निश्चित सीमाओं में परिभाषित नहीं किया गया है। अधिकांश विशेषज्ञ पूर्व-औपनिवेशिक काल को लैटिन अमेरिका के इतिहास में मध्ययुगीन काल की तरह उल्लेखित करते हैं। हम भी यहां ऐसा ही करेंगे। और हम लैटिन अमेरिकी मध्ययुगीन इतिहास के कुछ आयामों को समझने के लिए मेसोअमेरिका से एज़्टेक और दक्षिण अमेरिका के मध्य एंडीज क्षेत्र से इंका के बारे में चर्चा करेंगे।

11.2 एज़्टेक

एज़्टेक 12 और 13वीं शताब्दी के दौरान मैक्सिको बेसिन में आए और उन्होंने वहाँ एक जटिल समाज और संस्कृति विकसित की। शासकों की श्रृंखला, ईष्टदेवों के लिए मंदिर और सबसे अधिक आबादी वाली राजधानियों में से एक तेनोचीटलान (Tenochtitlan), के साथ लैटिन अमेरिकी इतिहास की हर चर्चा में एज़्टेकों का प्रमुख स्थान अभिलक्षित है। उनका आत्म-संदर्भ मेक्सिका था। उन्होंने 16वीं शताब्दी के शुरुआती भाग में स्पेनिश उपनिवेशवादियों के आगमन तक मेसोअमेरिका के एक बड़े हिस्से पर शासन किया और अपना प्रभुत्व कायम रखा।

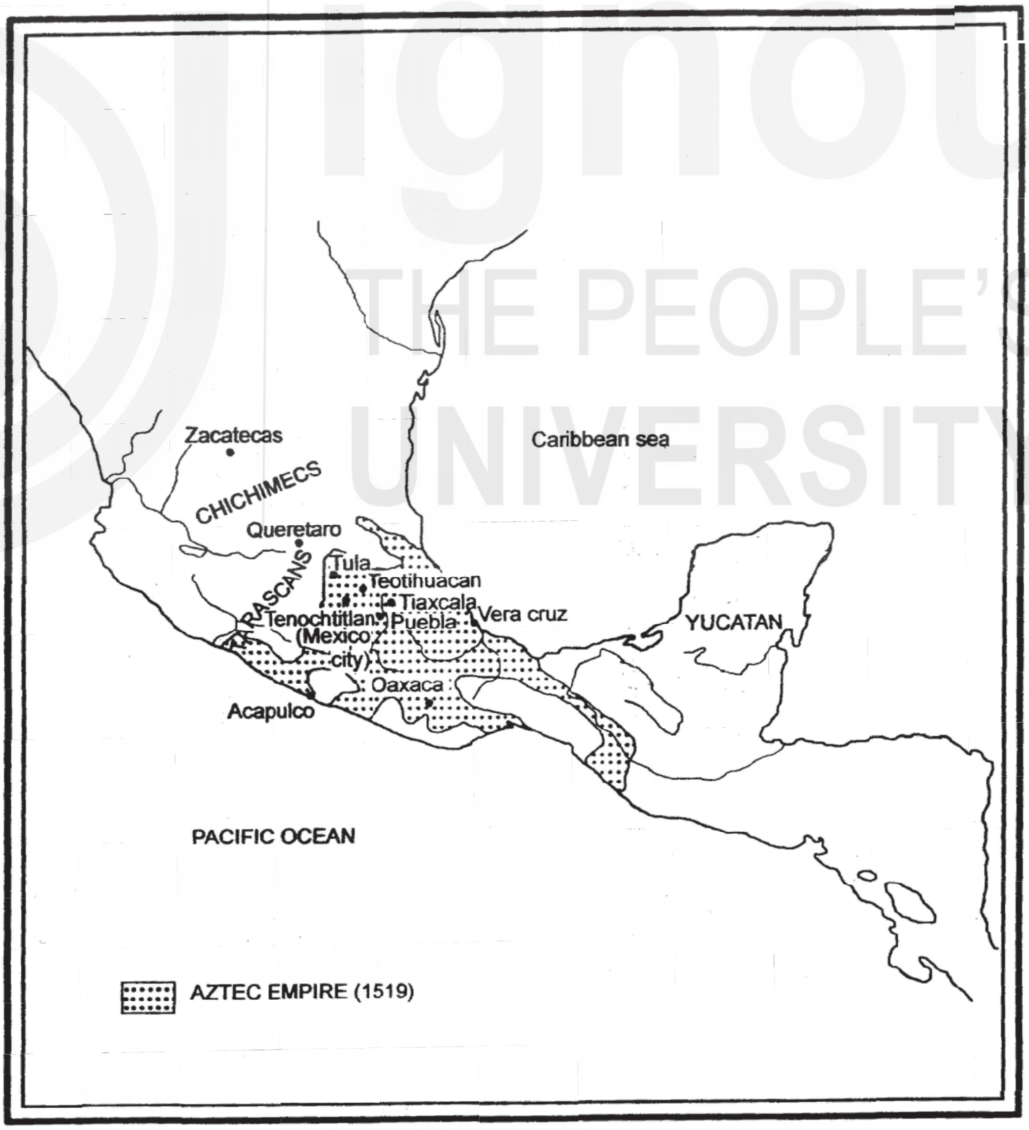

मानचित्र 11.1: एज़्टेक साम्राज्य

स्रोत: इग्नू पाठ्यक्रम MHI-01: *प्राचीन और मध्यकालीन समाज,* खंड 4, इकाई 14, पृ. 8

11.2.1 राजनीति

एज़्टेक वास्तव में उत्तर से आए थे और संभवतः 14वीं शताब्दी के बाद से वर्तमान मैक्सिको सिटी क्षेत्र के आसपास लंबे समय तक टेकपेनेकों (Tecpanecs) के आधिपत्य और प्रभुत्व के अधीन जीवन बसर करते थे। यह 15वीं शताब्दी की शरुआत थी जब एज़्टेक या मैक्सिकास एक स्वायत्त मुखियातंत्र बनकर उभरा। उनके कुछ प्रमुख थे इत्ज़कोट्ल (Itzcoatl; 1426-40), मोत्युक्ज़ोमा इल्हुइकैमिना (Moteuczoma Ilhuicamina), 'द एल्डर' (1440-69), अक्सायाक्त्ल (Axayacatl; 1469-81), टिज़ोक (Tizzoc; 1481-1485) एहुइतज़ोट्ल (Ahuitzotl; 1486-1502) और मोत्युक्ज़ोमा द्वितीय (Moteuczoma II; 1502-1520)। इन प्रमुखों ने टोटोनाका (Totonacas), मिक्सटेक (Mixtecs), ज़ैपोटेक (Zapotec) कबीलों पर एज़्टेक आधिपत्य और वर्चस्व को आगे बढ़ाया। एज़्टेक ने इन सभी कबीलों से भेंट वसूली और इन कबीलों के ईष्टदेवों को हुइत्ज़्लोपोच्तली (टेनोचीटलान में प्रतिष्ठत एज़्टेक देवता) के मंदिर में स्थापित किया। इन कबीलों को समय-समय पर एज़्टेक कर-संग्रहकर्ताओं द्वारा बलिदान के लिए मनुष्यों की आपूर्ति करने के लिए भी कहा जाता था। अधीनस्थ कबीलों द्वारा एज़्टेक को भुगतानकर वस्तु के रूप में किया जाता था, जैसे मक्का, मछली, सोना, जेड, फ़िरोज़ा, पक्षियों, जानवरों आदि में। इसके अलावा वे एज़्टेक सेना को रसद और एज़्टेक कुलीनों या अधिकारियों को जमीन मुहैया करा कर अपना योगदान देते थे। साम्राज्य चलाने के लिए उन्होंने सड़कों, नहरों, के पत्थर के विशालकाय घर और अपने देवताओं के लिए भव्य 'मंदिरों' का निर्माण किया। एज़्टेक कृषि और दूर देशों के साथ व्यापार पर भी निर्भर थे।

एज़्टेक सरदार (ह्युई लातोआनी; Huey Tlatoani), जिन्हें प्रारंभिक औपनिवेशिक इतिहासकारों ने एक राजा के रूप में चित्रित किया था, संभवतः राजा नहीं थे। बाद के शोध साबित करते हैं और तर्क देते हैं कि पहले के टिप्पणीकारों ने एज़्टेक इतिहास और समाज पर अनपेक्षित रूप से यूरोपीय श्रेणियों और अवधारणाओं को थोपा। उनके अनुसार ये एज़्टेक प्रमुख एक राजा नहीं था बल्कि वह उनके प्रमुख के रूप में निर्वाचित किया जाता था। यह पद वंशानुगत नहीं था। एज़्टेक समाज विभेदित था और उनके पिपिल्टिन (pipiltin; अभिजात वर्ग) और *मेसेहुआल्टिन* (mecehualtin; सामान्यजन प्लेबियन (plebeian) दो प्रमुख वर्ग थे। *पिपिल्टिन* (pipiltin) को रैंक, उपाधियों और पदों के अनुसार विभाजित किया गया था ये विभिन्न *पिपिल्टिन* (pipiltin) कई चर्चाओं और विचार-विमर्श के बाद सरदार को 'चुनते' थे। सरदार शक्तिशाली होता था। वह मुख्य सेनापति, प्रधान देवता का मुख्य पुजारी, अंतिम न्यायाधीश और प्रशासनिक प्रमुख भी था। फिर भी यह कहना मुश्किल है कि वह यूरोप के मध्ययुगीन राजाओं की भांति 'पूर्ण रूप से निरंकुश' था।

एज़्टेक राजा कुछ परिषदों की सहायता से शासन करता था और प्रत्येक परिषदों में एक या दो प्रमुख होते थे। उनकी युद्ध परिषद, विभिन्न समारोहों के लिए उत्सव या अनुष्ठान परिषद् और कोष परिषद् थीं। राजा या एज़्टेक प्रमुख इन परिषदों से परामर्श करके शासन करते थे। इन परिषदों के प्रमुख केवल *पिपिल्टिन* (pipiltin) या अभिजात वर्ग के सदस्यों में से थे।

राजधानी शहर तेनोचीटलान (Tenochtitlan)से दूर शहर कई गांवों से घिरे होते थे। आसपास के गांवों के साथ इनमें से कुछ शहरों तथा गांवों को मिलाकर एज़्टेक साम्राज्य के मुखिया-तंत्र या प्रांतों का गठन होता था। ये प्रान्त या तो प्रमुखों द्वारा शासित होते थे जिन्हें या तो राजधानी के *पिपिल्टिन* (pipiltins) या एज़्टेक के सदस्यों में से या एक विजित प्रमुख, जिसने एज़्टेक के शासन को स्वीकार किया था, में से नियुक्त किया जाता था। इन प्रमुखों को तेनोचीटलान (Tenochtitlan) में एज़्टेक के सम्मान के लिए उत्पादन और भेंट के संग्रह का आयोजन करना होता था। यह बड़े पैमाने पर विभिन्न *कैलपुलियों* (*calpullis*) या कुलों पर नियंत्रण के माध्यम से आयोजित किया जाता था।

11.2.2 समाज

यह एक श्रेणीबद्ध समाज था। अभिजातों को उनके कपड़ों द्वारा, जो वे पहनते थे, समाज और धार्मिक अनुष्ठानों में जो स्थान उन्होंने प्राप्त किया था, जिन घरों में वे रहते थे, तथा सरकार और समाज के संचालन में वे जो भूमिका निभाते थे, के सन्दर्भ में स्पष्ट पहचाना जा सकता था। अभिजात शहरी केंद्रों में रहते थे और उनके प्रासाद तेनोचीटलान (Tenochtitlan) के मुख्य मंदिर के ठीक बगल में थे। उनके घर विशालकाय थे तथा पक्के, चिनाई-पत्थर के द्वारा बने होते थे। अक्सायाक्त्ल (Axayacatl) के शासनकाल के दौरान, जब स्पैनियार्ड्स (स्पेन के निवासी) तेनोचीटलान (Tenochtitlan) में आए, तो 400 सैनिकों की पूरी स्पेनिश सेना शासक के महल में रखी जा सकी थी। अभिजात समाज का एक छोटा सा हिस्सा थे। समाज का एक और तबका था जिसमें व्यापारी, योद्धा और पुजारी शामिल थे। *पिपिल्टिन* (*pipiltin*) या अभिजात वर्ग के बच्चे *काल्मेकैक* (*calmecac*) या 'स्कूलों' में भाग ले सकते थे। वे कुछ वर्षों तक शाही तौर-तरीके, धार्मिक अनुष्ठानों और भजनों, कैलेंडर को पढ़ने, युद्ध के कौशल आदि में प्रशिक्षित किये जाते थे। प्रशिक्षण के बाद उन्हें शाही कार्यालयों की जिम्मेदारियाँ सौंपी जाती थीं।

उस समाज में अन्य वर्ग भी था जो सामान्यजन थे। संस्कारों के सामान्य आख्यानों में सामान्यजन, अभिजातों की तुलना में नगण्य भूमिका निभाते थे। इसलिए उनके बारे में विस्तृत जानकारी पाना मुश्किल है। सामान्य जनों में किसान, बढ़ई, संगतराश, खनिक, बहेलिया (feather workers), ताम्र-कर्मी, स्वर्णकार और नक्काश (lapidaries) थे। यद्पि वे कुशल थे और पूरे समाज के लिए पर्याप्त उत्पादन कर सकते थे, फिर भी उन्हें कभी-कभी चुनौतियों का सामना करना पड़ता था। विशेष रूप से किसान, जो वर्षा ऋतु के दौरान बारिश/मानसून पर निर्भर करते थे, के लिए सूखे के दौरान कई बार कष्टमय समय होता था। अकाल और सूखे के दौरान गरीब लोग अपने बच्चों को दास के रूप में बेच देते थे। 1450 के सूखे के दौरान, पहले मोत्युक्ज़ोमा (Moteuczoma; शासक) के शासनकाल में प्राप्त साक्ष्यों के अनुसार गरीब एज़्टेकों ने खुद को टोटोनैक (मेक्सिको के देशज निवासियों) को एक स्त्री को मक्का के 400 भुट्टों[1] के लिए और कामकाजी पुरुष को मक्का के 500 भुट्टों की दर से बेच दिया।

एज़्टेक शासन के तहत भूमि का स्वामित्व जटिल और अस्पष्ट है। यहाँ मंदिर की भूमि, महल की भूमि, राजा की भूमि, *कैलीपुलि/ कालपुली* या कबीले/कुल की भूमि आदि थे। लेकिन आमतौर पर यह माना जाता है कि भूमि का स्वामित्व '*कैलीपुलि/ कालपुली*' के पास था। वास्तव में, यह भी अनुमान लगाया जाता है कि केवल *पिपिल्टिन* (सत्तारूढ़ कुलीन/अभिजात वर्ग) के पास ही निजी संपत्ति के रूप में 'स्वामित्व' वाली भूमि थी। लेकिन इस निष्कर्ष के संबंध में यह तर्क भी दिया जाता है कि यह केवल 'स्वामित्व' के संदर्भ में ऐसा था, क्योंकि उच्चतम पदों/कार्यालयों में *पिपिल्टिन* के सदस्य होते थे। आधिकारिक तौर पर, जब *पिपिल्टिन* कोई आधिकारिक पद नहीं संभाल रहा होता था या कार्यालय से बेदखल हो जाता था तो उसे भूमि विशेष पर से अपना नियंत्रण खोना पड़ता था। लेकिन कुछ *पिपिल्टिन* परिवारों के पास पीढ़ी-दर-पीढ़ी कार्यालय के साथ-साथ निजी संपत्ति के रूप में उस कार्यालय को सौंपी गई भूमि भी उनके अधिकार में रही। उनके पास जो भूमि थी, वे या तो किसानों द्वारा या *मायेक* (*mayeque*) द्वारा खेती करवाते थे। *मायेक* (*mayeque*) एक तरह के श्रमिक नौकर, मजदूर या दास भी हो सकते थे। हालांकि, मेसोअमेरिका के ये दास (*त्लाकोतिन/ tlacotin*), जिन ग्रीस या रोम के दासों के बारे में हम इतिहास में पढ़ते हैं, उनसे भिन्न थे। ये गुलाम अपनी स्वतंत्रता खरीदने में सक्षम थे और साथ ही उन्हें धार्मिक

[1] मक्का की बाली का केन्द्रिय बेलनाकार हिस्सा या भुट्टा जिसमें मक्का के दाने जुड़े होते हैं। उस काल में यह मापन की एक इकाई थी।

अनुष्ठान में मानव बलि के संभावित शिकार होने का जोखिम भी होता था। कैदियों की गुलामी के पीछे ऋण, सजा, करों का भुगतान करने में असफलता या युद्ध में बंधक बनाया जाना प्रमुख कारक थे। एज़्टेक दासता जन्म से निर्धारित नहीं थी। यहां तक कि एक दास के बच्चों को भी दास नहीं माना जाता था। इस प्रकार दासता वंशानुगत नहीं थी। लोग अक्सर खुद को परेशानी के दौर में दास के रूप में बेच देते थे। 1450 के दशक में महान् अकाल में एज़्टेकों ने खुद को खाड़ी तट (Gulf Coast) के लोगों को बेच दिया था।

पॉकटेक (*pochtecas*) व्यापारी थे और संभवतः उनके द्वारा किए जाने वाले वस्तु विशेष के व्यापार के आधार पर विभिन्न वर्गों में विभाजित थे। उदाहरण के लिए, उनमें दास व्यापारी, मक्के के व्यापारी, धातु के व्यापारी, पशु व्यापारी आदि थे। चॉकलेट और कोको के व्यापारी आम व्यापारियों से 'कुछ' उच्च माने जाते थे क्योंकि चॉकलेट और कोको अभिजात वर्ग द्वारा उपभोग की जाने वाली 'विशिष्ट' वस्तुएं थीं। कुछ व्यापारी दासों के व्यापार में विशिष्ट थे। व्यापारी आमजन का हिस्सा थे फिर भी राजा की राजकोष परिषद् द्वारा आमंत्रित किए जाते थे और उनसे परामर्श लिया जाता था। इस प्रकार वे *पिपिल्टिन* या अभिजातों के कुछ विशेषाधिकारों का आनंद लेते होंगे। दूरस्थ क्षेत्रों की उनकी यात्रा ने उन्हें बहुभाषाविद् बनाया। और वे एज़्टेक को बाहरी दुनिया की जानकारी प्रदान करने वाले भी थे। व्यापारी बाजार स्थलों के प्रबंधन का अभिन्न हिस्सा थे। ऋण पदान करने वाले के रूप में अन्य व्यापारियों के लिए वे 'बैंकर' के रूप में भी काम करते थे।

11.2.3 अर्थव्यवस्था

16वीं शताब्दी में हमलावर स्पेनवासियों के लिए एज़्टेक समाज की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता एज़्टेकों का कृषि उत्पादन कार्य था। झील के अंदर बगीचे (या जैसा कि स्पेनवासियों ने उन्हें तैरते हुए बगीचे (floating gardens) कहा) या ***चाइनेमपा*** (***chinampas***) थे। *चाइनेमपा* दलदल के अंदर 10-25 फीट चौड़ी और 200-300 फीट लंबी मिट्टी की पट्टियां थीं। मिट्टी की इन उभरी हुई पट्टियों पर एज़्टेक ऐमरैन्थ (amaranth; गहरे लाल रंग का साग), फलियाँ, मक्का, कुम्हड़ा (squash) और फूलों की विभिन्न किस्में इत्यादि उगाते थे। पट्टियों को बनाए रखने के लिए वे दलदल के फर्श से लगातार मिट्टी को डालते रहते थे जिसने इस तरह भूमि की उर्वरता में इजाफा किया। पट्टियों के इन टुकड़ों पर किसानों ने अपने रहने के लिए बांस और लकड़ी के घर बनाए थे। राज्य *चाइनेमपा* (*chinampas*) से उत्पादों तथा महिलाओं द्वारा बुने गये कपड़ों के रुप में राजस्व एकत्रित करता था। *चाइनेमपा* (*chinampas*) का स्वामित्व सामूहिक था। कुलों (*कैलीपुलि/ कालपुली*) के पास *चाइनेमपा* (*chinampas*) का स्वामित्व होता था और किसान के पास मात्र इसके उपयोग का अधिकार होता था। एक निश्चित भू-पट्टी का उपयोग करने या खेती करने में विफलता के मामले में, किसानों को उपेक्षा के खिलाफ चेतावनी मिलती थी और अंततः अक्सर उन्हें बेदखल कर दिया जाता था। बेदखली के बाद भू-पट्टी फिर किसी और को दे दी जाती थी। परिवार में सदस्यों की संख्या में वृद्धि के साथ, भूमि को आमतौर पर कबीले के भीतर ही संचालित किया जाता था। और यदि कबीले (*कैलीपुलि/ कालपुली*) के पास अधिक भूमि होती थी तो कबीले परिवार से बाहर अधिक भूमि या भू-पट्टियां आबंटित करते थे। *चाइनेमपा* (*chinampas*) कृषि के अलावा एज़्टेक पहाड़ी दलानों पर भी सीढ़ीदार खेती करते थे और विभिन्न फसलों को उगाते थे। एज़्टेक के आहार में कृषि उपज के अलावा कुत्ते, हिरण, मछली, चूहे, इगुआना (iguana), टर्की बत्तख और सांप शामिल थे।

अन्य आर्थिक गतिविधियां चांदी, सोना, टिन, तांबे आदि का खनन् थीं। इन धातुओं का उपयोग इस्तेमाल की वस्तुओं जैसे हाथ की कुल्हाड़ियों से लेकर आभूषणों तक बनाने

में किया जाता था। ये कुशल शिल्पकार थे जो अपने शिल्प के विशेषज्ञ थे। इन शिल्पियों के कुल या *कैलीपुलि/ कालपुली* के पास स्वयं की कोई जमीन नहीं थी। इसलिए, कुछ विशेषज्ञ यह निष्कर्ष निकालते हैं कि *कैलीपुलि/ कालपुली* एक कुल नहीं बल्कि एक व्यापारिक समूह था। लेकिन सभी संभावनाओं में *कैलीपुलि/ कालपुली* रक्त आधारित अंतर्विवाही (endogamous) और पेशेवर समूह थे।

शहरी केंद्रों में बाजार के स्थान थे और ग्रामीण बाजार एक सप्ताह या पांच दिनों के अंतराल में आयोजित होते थे। लेकिन राजधानी के केंद्रीय मैदान में सबसे बड़ा बाजार दैनिक बाजार था। विनिमय मोटे तौर पर वस्तु विनिमय या काम के घंटों की इकाइयों के माध्यम से होता था। लेकिन एज़्टेकों ने कोको-बीन्स, कपास के लबादे, तांबे के ब्लेड या चाकू, छोटे मुड़े हुए शॉलों (mantle) और सोने के बुरादे से भरी पंख की कलमों (quills) को मूल्य या धन की मानक इकाइयों के रूप में इस्तेमाल किया करते थे – दूसरे शब्दों में एक तरह की मुद्रा के रूप में। और प्रयोग की हर वस्तु, गुलामों, वेश्याओं, गायकों से लेकर आहार के लिए कुत्ते, पत्थर, धातु, सब्जियां आदि सभी बाज़ार में वस्तुओं तथा सेवाओं के रूप में उपलब्ध थे। राजधानी के बाज़ार में विक्रेताओं-खरीदारों की खरीद-फरोख्त संबंधी परस्पर अंतःक्रिया को नियंत्रित करने के लिए न्यायाधीश थे और एक अधीक्षक होता था जो प्रत्येक विक्रेता से कर एकत्रित करता था। दूर-दराज के लोग भी अपना माल एज़्टेक बाजारों में लाते थे। बाज़ार स्थल केवल वस्तुओं के आदान-प्रदान का केन्द्र ही नहीं थे, बल्कि आपस में एक-दूसरे से मेलजोल और सामूहिक रूप से एकत्रित होने का स्थान भी थे।

न तो एज़्टेक और न ही मेसोअमेरिका के किसी अन्य कबीले ने कुत्ते के अलावा किसी अन्य जानवर को पालतू बनाया। नतीजतन उनके पास कोई बोझा ढोने वाले जानवर नहीं थे और वे पहिये का उपयोग भी नहीं करते थे। आम लोग न केवल समाज में कुलीन वर्ग के लिए वस्तुओं का उत्पादन करते थे, बल्कि व्यापार और भेंट के लिए अपने कंधों पर सामान का भार भी उठाते थे।

11.2.4 संहिता-संग्रह (Codices)

एज़्टेक संस्कृति की एक अनूठी विशेषता संहिता-संग्रह (कोडाइसेस; एकवचन कोडेक्स) था। संहिताओं को चित्रात्मक ग्रंथ कहा जा सकता है। यहाँ ऐसे लिपिकों का एक समूह था जो इन ग्रंथों को 'चित्रित' किया करते थे। शुरुआती यूरोपीय उपनिवेशवादियों ने उनके ग्रंथों को नहीं समझा और कहा कि एज़्टेक निरक्षर थे। उनके पास कोई लिपि या ग्रंथ नहीं थे। लेकिन यह पूरी तरह से सही नहीं था। लेकिन वास्तविकता सिर्फ इतनी है कि अक्षर और लिपियों की उनकी अवधारणा दूसरों से अलग और अद्वितीय थी, जो कहीं और नहीं मिलती।

संहिताओं के लेखकों या निर्माताओं को *त्लाक्यूलोक्स* (*tlacuiloques*) या लिपिक के रूप में जाना जाता था। तथा ऐसे विद्वान या ज्ञानी पुरुष थे जिन्हें *त्लामातिनिमे* (*tlamatinime*) के नाम से जाना जाता था, जो उन ग्रंथों के स्वामी थे और उन्हें पढ़ा करते थे। अधिकांश *त्लाक्युलोक्स* (*tlacuiloques*) मात्र सामान्य पुरुष शिल्पकार थे, जिनमें महिलाएं शामिल नहीं थीं। लेकिन कुछ *पिपिल्टिन* (कुलीन) भी उनमें थे। कई बार *त्लाक्युलोक्स* (*tlacuiloques*) और त्लामातिनिमे *(tlamatinime)* एक ही व्यक्ति व्यक्ति होता था। एज़्टेक ने संहिताओं (codices) में दिन के हिसाब से युद्धों या प्रमुख घटनाओं का इतिहास, राजाओं और कुलीनों की वंशावली, अनुष्ठानों और धार्मिक आयोजनों, कृषि उत्पादन और राजस्व तथा, कानूनों और कैलेंडर की गाथा अथवा वृतांतों की रचना की थी।

चित्र 11.1: कोडेक्स वेटिकनस बी

साभार: अज्ञात; मूल रूप से Admat द्वारा पोलिश भाषा विकिपीडिया पर अपलोड की गई फाइल; अज्ञात तिथि

स्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/7/76/Codex_Vaticanus_B.jpg

ये चित्रित ग्रंथ कागज या चमड़े (hide) वाले या बुने हुए कपड़े के थे जो एक तरफ या दोनों तरफ चित्रित किए जा सकते थे। इन पुस्तकों में कभी-कभी कागज़ या चमड़े या कपड़े को, जो या तो पूर्ण रूप से तह किये हुए या सपाट होते थे, को ढकने के लिए लकड़ी के आवरण होते थे। संभवतः ये लकड़ी के आवरण अलंकृत भी थे। इन विभिन्न प्रकार के पृष्ठों में सबसे अधिक समय और गहन परिश्रम चमड़े के पन्नों में लगता था और ये तह किये हुए होते थे और स्क्रीनफोल्ड कहलाते थे।

11.2.5 धार्मिक विश्वास

एज़्टेकों ने अपने धार्मिक विचारों को बड़े पैमाने पर दो प्रमुख परपंराओं से उद्धृत किया, एक अपने पूर्ववर्तियों, तेओतिहुआकन (Teotihuacan) और टूला (Tula) से और दूसरा अपने एज़तलान (Aztlan) प्रवासियों से जो अपने स्वयं के देवताओं को अपने साथ लाये। एज़्टेकों के दो प्रमुख देवता थे, त्लालोक (Tlalok; वर्षा और प्रजनन तथा उर्वरता के देवता) जो कि तेओतिहुआकन (Teotihuacan) के तूफान के देवता थे। दूसरे देवता युद्ध और बलिदानों से जुड़े, हुइत्ज़िलोपोचली (Huitzilopochtli) था। सबसे ऊपर टैम्पलो मेयर पिरामिड मंदिर स्थित था जो त्लालोक (Tlalok) और हुइत्ज़िलोपोचली (Huitzilopochtli) को समर्पित था। शहरों और *कैलीपुली / कालपुली* में अलग-अलग देवताओं की पूजा की जाती थी। हुइत्ज़िलोपोचली (Huitzilopochtli) मैक्सिन लोगों का इष्टदेव था। इसी तरह अलग-अलग व्यावसायिक समूहों के अपने अलग देवता थे: राजाओं के संरक्षक, टेज़कतलिपोका (Tezcatlipoca), पुजारियों के क्वेटज़ालकोट (Quetzalcoatl), दाइयों के टेटीओइनान (Teteoinnan) और सुनारों के ज़ीपे

टोटेक (Xipe Totec) थे (स्मिथ 2012: 204)। उनका मानना था कि ओमेटियोल (Ometeotl) ने, जो पुरुष (ओमेटेकुहली; Ometecuhtli) और महिलाओं (ओमेसीहुअल; Omecihuatl) में सर्वोच्च ईश्वर माना जाता है, ने चार बेटों टेज़कतलिपोका (Tezcatlipoca), ज़ीपे टोटेक (Xipe Totec), क्वेटज़ालकोट (Quetzalcoatl), और हुइत्ज़िलोपोचली (Huitzilopochtli) को जन्म दिया, जिनमें से अंतिम दो को पृथ्वी, अन्य देवताओं और लोगों की सृष्टि का श्रेय दिया जाता है।

चित्र 11.2: टेज़कतलिपोका (Tezcatlipoca) का चित्र, कोडेक्स बोर्गिया में वर्णित देवताओं में से एक

साभार : अज्ञात, पूर्व-कोलंबियन

स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/6/67/black_tezcatlipoca.jpg

एज़्टेक धर्म का प्रमुख आधार मानव बलिदान और स्व-रक्त बहाना/आत्मबलिदान था। एज़्टेकों का मानना था कि मानव जाति के लाभ के लिए देवताओं ने खुद को बलिदान किया था इसलिए मानवों को भी प्रतिदान के रूप में मानव रक्त और जीवन को बलिदान करना चाहिए। पुजारी दैनिक अनुष्ठान करने के अलावा 'आत्मबलिदान के द्वारा अपने स्वयं के रक्त का अर्पण, भी करते थे जिसके परिणामस्वरूप अक्सर 'उनके शरीर निरंतर स्व-रक्तपात से जख्मी और क्षत-विक्षत' हो जाते थे। वे कई अलग प्रकार के परलोकों (afterworlds) में भी विश्वास करते थे, जिन्हें व्यक्ति विशेष की मृत्यु के तरीके से निर्धारित किया जाता था जैसे यह विश्वास था कि 'जो सैनिक युद्ध में मारे गए और बलिदान के शहीदों को प्रतीकात्मक रूप से परलोक में उच्च स्थान प्रदान किया जाता था और माना जाता था कि वे पूर्वी मंडल में सूर्य के साथ-साथ उदय से लेकर चरम बिन्दु तक चलते थे। वही जिन महिलाओं की बच्चे के जन्म के समय मृत्यु हो जाती थी वे पश्चिमी मंडल में सूर्य के अस्त होने तक उसके साथ-साथ चलती थीं' (स्मिथ 2012 : 212)। सामान्यजनों और कुलीनों (राजा और शासक वर्ग) को दफनाने के तरीकों में अंतर प्रतीत होता है। कुलीनों के शवाधान कहीं अधिक 'विस्तृत और समृद्ध' थे। घर के भीतर दफन किए जाने की परम्परा दर्शाती है कि एज़्टेक मृतक को अपने परिवार का अंतरंग हिस्सा मानते थे।

मंदिरों में पुजारियों के पदानुक्रम मौजूद थे। छोटे पुजारी (*त्लामाकेज़्टन/ tlamacazton*) थे, जिन्हें एक साल के लिए पुरोहिती के प्रशिक्षण में प्रशिक्षित किया जाता था और वे दैनिक

कर्तव्यों का पालन करते थे। पूर्ण पुजारी *त्लामाकाज़्की* (*tlamacazqui*) थे। सर्वोच्च पुजारियों *त्लेनामाकक* (*tlenamacac*) द्वारा सर्वोच्च अनुष्ठान, मानव बलिदान का संपादन किया जाता था। साथ ही महिला पुजारिनें *सिहुआत्लामाकाज़ेकी* (*cihuatlamacazqui*) भी थीं, हालांकि, महिला पुजारिनें अल्प अवधि के लिए सेवारत होती थीं, आमतौर पर वे शादी के बाद पुरोहिती छोड़ देती थीं। पुजारी साक्षर वर्ग थे और वे पठन-पाठन तथा शिक्षा में लिप्त रहते थे।

हालांकि, 'एज़्टेक राजनीति और धर्म एक-दूसरे से निकटता से जुड़े थे। राजा देवताओं के आशीर्वाद से शासन करते थे, और पुजारी और मंदिर राज्य के संरक्षणत्व में थे। राजनीति की सेवा में मानव बलिदान किए जाते थे... देवताओं और राज्य की विस्मयकारी शक्ति [प्रदर्शित करने के लिए]... न केवल दुश्मन सैनिकों बल्कि स्थानीय गुलामों की भीषण मौतों का साक्षी होना... यह सिद्ध करने का प्रयास था कि जिससे अधिकांश लोग उनके राजा या स्थानीय लोगों के खिलाफ किसी भी रूप में उलझने से पहले दो बार सोचें' (स्मिथ 2012: 225)।

बोध प्रश्न-1

1) एज़्टेक कौन थे ? उनका राजनीतिक ढांचा क्या था ?

....

....

....

....

....

2) एज़्टेकों के पदानुक्रम पर आधारित सामाजिक संगठन पर टिप्पणी कीजिए।

....

....

....

....

....

3) एज़्टेकों की आर्थिक गतिविधियों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

....

....

....

....

....

4) संहिताएं (codices) क्या थीं ? उनसे किस प्रकार की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं ?

....

....

....

....

....

5. एज़्टेक धर्म पर पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

....

....

11.3 इन्का

दक्षिण अमेरिका के मध्य एंडीज में, एक साम्राज्य विकसित हुआ, जिसे इंका साम्राज्य या चार क्षेत्रों के प्रदेश तवांटिनसुयु (Tawantinsuyu) या ताहुआनटिनसुयु (Tahuantinsuyu) के रूप में जाना जाता है। यह 'भारतीयों' का साम्राज्य था (यहाँ पर वर्णित भारतीय नाम क्रिस्टोफर कोलंबस द्वारा नई दुनिया के निवासियों को दिया गया, उसने नयी दुनिया को एशिया के रूप में समझने की गलती की)। इसमें, मैक्सिको और मध्य अमेरिका के माया और एज़्टेक, कैरिबियाई द्वीप समूह के कैरिब, एंडीज के इंका, चिली के अरॉवकानियान, पराग्वे के गुआरानी और ब्राजील के तुपी और एंडीज के स्वदेशी लोगों के रूप में सांस्कृतिक समूहों का एक बड़ा और विविध समूह शामिल हैं। यह साम्राज्य 12वीं और 16वीं शताब्दी के दौरान फला-फूला। 16वीं शताब्दि के उत्तरार्द्ध में (1572) स्पेनवासियों ने इन साम्राज्यों पर विजय प्राप्त की और उन पर अपनी औपनिवेशिक सत्ता स्थापित की।

11.3.1 इंका राज्य और साम्राज्य

इंका साम्राज्य की राजधानी या सत्ता का स्थान कुज़्को/कुस्को (Cuzco/Cusco) में था। यह एक केंद्रीकृत साम्राज्य और प्रशासनिक व्यवस्था थी जो 1000 से 1400 CE (कुछ विशेषज्ञों द्वारा इसे उत्तर मध्यवर्ती काल कहा गया है) के दौरान विकसित हुआ। क्वेंचुआ (Quenchua) भाषी इंकाओं ने शक्तिशाली प्रतिद्वन्दी जातीय समुदायों (*अयलुस*; *ayllus*) जैसे पिनाहुआ (Pinahua) और ल्यूक्रे (Lucre) बेसिन के मोहिना (Mohina) क्षेत्र पर सैन्य विजयों तथा पुनः विजय हासिल कर अपने अधिपत्य क्षेत्र का विस्तार किया। कुज़्को घाटी के उत्तर की ओर अन्टा, अयारमाका समुदाय निवास करते थे, उन्होंने कई युद्धों के बाद भी इंका अधिपत्य को स्वीकार करने से इनकार कर दिया था। लेकिन इंकाओं के सत्तारूढ़ कुलीन वर्ग और इन समुदाय के बीच वैवाहिक संधियाँ उन्हें इंका साम्राज्य का हिस्सा बनाने में अधिक सफल साबित हुईं। पूर्व की ओर, हमेशा से विद्रोही पिनाहुआ (Pinahua) को न केवल इंकाओं द्वारा सशस्त्र संघर्ष में हराया गया था, बल्कि उन्हें उनकी भूमि से दूरस्थ निम्न-भूमि क्षेत्र की ओर धकेल दिया गया था। संभवतः उन्हें उनके ऊपर एक विदेशी गवर्नर के साथ इन क्षेत्रों में बसाया गया था और इस प्रकार उन्हें इंका साम्राज्य का हिस्सा बना दिया गया था। इंकाओं द्वारा कुछ अन्य जातीय समूहों को अन्य प्रतिद्वंद्वी समूहों के खिलाफ संरक्षण दिया गया और इस प्रकार वे इंका साम्राज्य के अपनी इच्छा से सदस्य बन गए।

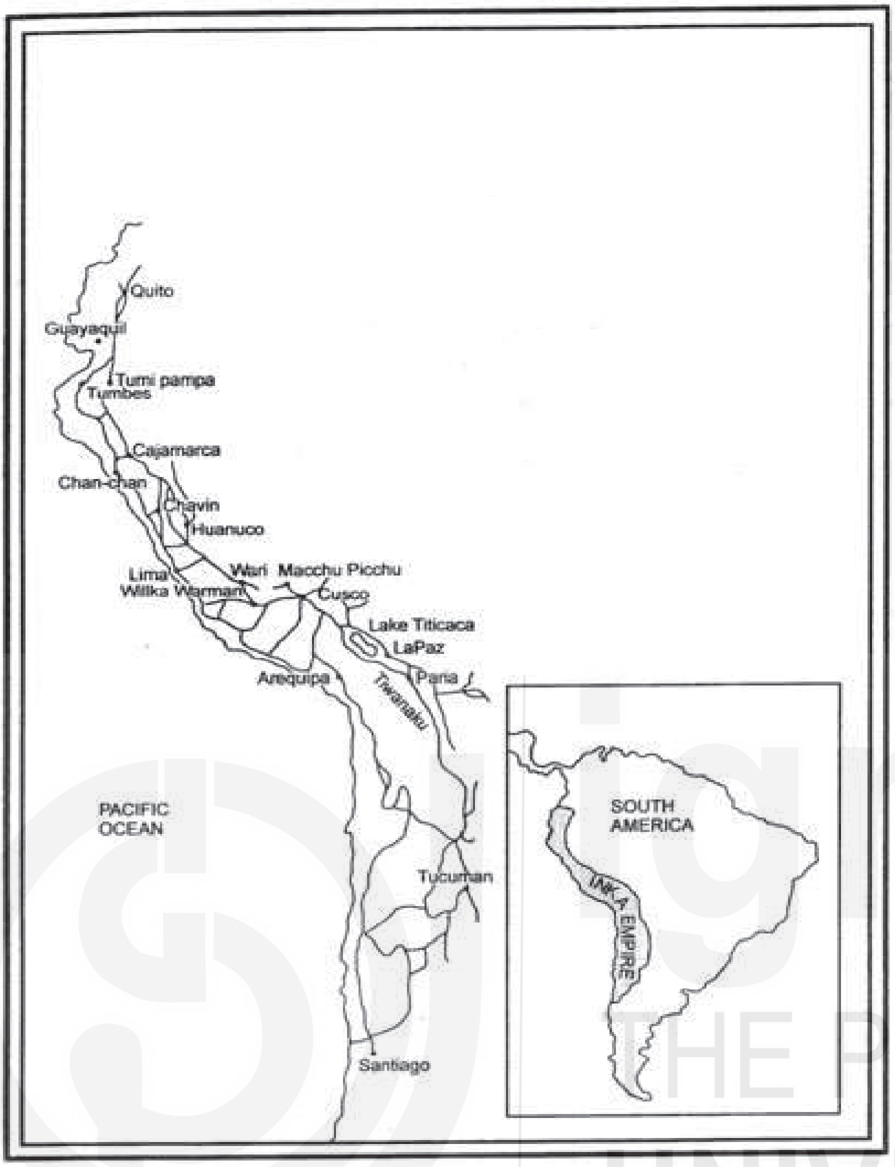

मानचित्र 11.2: इंका साम्राज्य

स्रोत: इग्नू पाठ्यक्रम MHI-01: *प्राचीन और मध्यकालीन समाज,* खंड, 4, इकाई 14, पृ. 13

इंका साम्राज्य निर्माण एक रैखिक (linear) प्रक्रिया नहीं थी। अक्सर, केंद्रीय अधिकारियों को विद्रोह का सामना करना पड़ा और कुछ क्षेत्रों को पुनः जीतने की जरूरत पड़ी। यहां तक कि स्थानीय या प्रांतीय गवर्नरों को भी बदलना या अधीन करना पड़ा। कुज़्कों में राजाओं के लगभग हर उत्तराधिकार अथवा परिवर्तन ने साम्राज्य के संपूर्ण भाग को अस्थिर बनाया। प्रतिस्पर्धित समुदायों और कुलीन वर्ग के शक्तिशाली समूहों ने गद्दी के लिए दावेदारों की हत्या करने, उन्हें अपदस्थ करने या सिहांसन के कुछ दावों का समर्थन करने का प्रयास किया।

इंका प्रमुख या राजा कई पत्नियों के साथ-साथ उपपत्नियां (concubines) भी रखते थे। यह एक कारण था जो अक्सर उत्तराधिकार के विवादों और यहां तक कि भयावह युद्धों और संघर्षों का कारण बना। राजा के परिजन शाही कुलीन थे जो राजा के उत्तराधिकारी के चयन में निर्णायक भूमिका निभाते थे और अक्सर वे दरबार के अंदर और बाहर षड्यंत्रों में लिप्त रहते थे। हालाँकि ऐसा प्रतीत होता है कि जाने वाले मरणासन्न राजा द्वारा अपने उत्तराधिकारी को नामित करने का विशेषाधिकार था। लेकिन उत्तराधिकारी शक्ति का निर्णय काफी हद तक उस सहयोगी अभिजात वर्ग में निहित था जो विभिन्न समूहों या *पैनाकों* में विभाजित थे।

परम्परागत इंका राजा

मनको क़्हापक (Manqo Qhapaq)	विराक़ोचा इंका (Wiraqocha Inka)
ज़िंची रोक़'आ (Zinchi Roq'a)	पचाकुटी इंका युपंकी (PachakutiInka Yupandi)
ल्लोक़ युपंकी (Lloq'e Yupanki)	थुपा इंका युपंकी (ThupaInka Yupanki)
मायता क़्हापक (Mayta Qhapaq)	वयना क़्हापक (Wayna Qhapaq)
क़्हापक युपंकी (Qhapaq Yupanki)	वास्खर इंका (Waskhar Inka)
इंका रोक़'आ (Inka Roq'a)	अटावालपा (Atawallpa)
यावर वक़ाक़ (Yawar Waqaq)	

स्रोतः डी'अल्ट्रॉय, टेरेंस एन., (2015) द *इंकास* (ससेक्सः विली ब्लैकवेल), दूसरा संस्करण, पृष्ठ 6 पर आधारित

इंका राजा एक बड़ी सेना या सशस्त्र लोगों की मदद से शासन करते थे। वे अपने साम्राज्यों के भीतर विद्रोहियों के खिलाफ सैन्य अभियानों के साथ-साथ नए क्षेत्रों में भी सैन्य अभियानों द्वारा उन्हें अपने अधीन कर लेते थे और उन्हें भेंट देने के लिए मज़बूर करते थे। विद्रोहियों को कुचलने या नए क्षेत्रों को अपने अधीन करने के बाद राजाओं ने स्थानीय गवर्नर के रूप में अपने वफादार लोगों को नियुक्त किया। स्थानीय गवर्नर ज्यादातर शाही परिवारों से थे हालांकि यह हमेशा ऐसा नहीं था। प्रांतीय गवर्नर और *मिटीमा* (*mitimaes*)[2] शांति-रक्षक थे।

सैन्य अभियान पड़ोसी क्षेत्रों को जीतने और साम्राज्य के विस्तार का एकमात्र तरीका नहीं था। यह धार्मिक और आनुष्ठनिक एकीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से भी हुआ। आइरेन सिल्वरब्लॉट (1987) के अनुसार क्यूस्को के इंकाओं ने वास्तव में अपने साम्राज्य के हाशिये पर रहने वाले जातीय समुदायों के स्थानीय देवताओं को अपनाया और इस तरह उनकी स्वायत्तता को हथियाया और उन्हें साम्राज्य का हिस्सा बनाया। इंकाओं ने अन्य जातीय समुदायों को सूर्य देवता की पूजा करने पर जोर दिया और साथ ही उन समुदायों के देवताओं को भी सूर्य देव के मंदिर के पास कुस्को में जगह दी और खुद इंकाओं ने उनकी पूजा की। इस प्रकार उन्होंने 'शाही धर्म को संस्थागत' बना दिया जो न केवल शाही धर्म में दूसरों के धर्म का विनियोग या सह-विकल्प था, बल्कि उन समुदायों की संप्रभुता का विनियोग भी था।

यदि हम *थेअक्ला* (*theaclla*; चुनी हुई/सम्मानित महिलाएं) अनुष्ठान, को करने की प्रक्रिया देखें तो यह शाही धर्म के विवरण को विशिष्ट रूप से स्पष्ट करेगा। इंकाओं के पुरुष पर्यवेक्षकों द्वारा युवा महिलाओं को इंकाओं द्वारा जीते गए विभिन्न समुदायों के प्रमुखों के परिवारों में से चुना जाता था, जिन्हें राजधानी कुस्को में लाया जाता था। विस्तृत रस्मों के बाद उनमें से कुछ को इंका राजाओं की पत्नियों के रूप में स्वीकार किया जाता था, कुछ को राज्य के अन्य महत्वपूर्ण पदाधिकारियों या इंका के रिश्तेदारों की पत्नियों/उपपत्नियों के रूप में दे दिया जाता था, कुछ अन्य को सूर्य की पत्नियों के रूप में राज्यचालित मठों में रखा जाता था और कुछ को कुस्को या साम्राज्य के अन्य भागों में विशिष्ट अवसरों पर 'राज्य के प्रयोजनों के लिए' बलिदान किया जाता था। इंका राजपरिवार द्वारा चुने जाने के परिणामस्वरूप युवती के पिता को इंकाओं का एक

[2] *मिटीमा* (*mitimaes*) तत्कालीन विजित प्रदेशों में इंका समुदायों की जबरन आबाद की गई बस्तियां थीं, जिन्हें नए विजित क्षेत्रों में इंका वफादारों को बसाने के उद्देश्य से बसाया गया था; अपने साथ उन्होंने इंका संस्कृति को भी आगे बढ़ाया।

गौरवांवित अधीनस्थ समझा जाता था। और 'चुनी हुई महिलाओं' के अनुष्ठानिक बलिदान (उन्हें नशा देने के बाद जिंदा दफन करने) ने न केवल कुस्को में बल्कि साम्राज्य के विभिन्न सीमांत क्षेत्रों में स्थित अन्य समुदायों के क्षेत्रों में इन क्षेत्रों के राजनीतिक एकीकरण से इन्काओं के साम्राज्य को विस्तृत करने में मदद की, जो एक ही धार्मिक अनुष्ठानों के सहभागी थे। निर्विवाद रुप से यह नातेदारी के माध्यम से हासिल की गई एक विस्तारवादी परियोजना थी (अन्य शत्रुतापूर्ण या मैत्रीपूर्ण समुदायों की महिलाओं से शादी करके और उनसे शाही संतानों का होना)। इसाबेल याया (2012) के अनुसार, इस परियोजना ने एक साथ दो चीजें हासिल कीं, एक तो लगातार बढ़ती श्रम शक्ति पर राजनीतिक नियंत्रण और दूसरा गैर-इंका मूल की महिलाओं की संतानों के 'दावेदारों के लिए प्रतिष्ठा-पदानुक्रम के सर्वाधिक सामरिक पदों' को खोलना।

वराचिकु (*Warachiku*) एक और शाही अनुष्ठान था और एक बड़े पैमाने पर मनाया जाता था तथा वह महीने भर का उत्सव होता था। *वराचिकु* का मतलब था 'सिंह-वस्त्र/लंगोट का दान'। यह कुस्को के शाही परिवार के युवा पुरुषों का वयस्कता में कदम रखने का एक संस्कार था। इस अनुष्ठान के कई परस्पर विरोधी वर्णनों से एक सामान्य तस्वीर यह उभरती हैः इस अनुष्ठान के दौरान गैर-इंका *अयलुस* (समुदाय) के सदस्यों को शहर छोड़ना पड़ता था। अनुष्ठान से गुजरने वाले नौसिखियों को अपने सिर का मुंडन कराना होता था और अपने कान की लौपालि (ear-lobes) को छेदना होता था तब उन्हें राज्य के शाही-परिवार के सदस्यों और राज्य के अधिकारियों के एक जुलुस में इंकाओं के प्रमुख देवताओं से शुरू कर प्रांतीय देवताओं के विभिन्न *वाकाओं* (*wakas*; पुण्य स्थल जो साधारणतः एक चट्टान या पहाड़ हो सकता था) का दौरा करना पड़ता था। चयनित युवतियां भी जुलूस का हिस्सा हुआ करती थीं जो नौसिखियों के लिए *चिचा* (एक पेय) लेकर चलती थीं। विभिन्न पुण्यस्थलों या *वाकाओं* की यात्रा के दौरान नौसिखियों को विभिन्न शारीरिक परीक्षणों द्वारा गुजरना होता था। शारीरिक परीक्षण जिसमें उपवास करना, कुछ पहाड़ियों के ऊपर-नीचे दौड़ना, बड़ों द्वारा थप्पड़ मारना शामिल था; कुछ नृत्य वास्तव में नौसिखियों को घायल कर देते थे और उन्हें रक्त-रंजित कर देते थे। इस अनुष्ठान के दौरान नौसिखियों का पुनः नामकरण किया जाता था। कुस्को में अनुष्ठान तब समाप्त होता था जब नौसिखिये कुस्को में इंका राजाओं और सूर्य देव को श्रद्धासुमन अर्पित करने के बाद औपचारिक रूप से सिंह-वस्त्र (*wara*) प्राप्त करते थे। नौसिखियों की यात्रा में न केवल धार्मिक महत्व के स्थल बल्कि प्रमुख जल स्त्रोतों और सिंचाई तंत्र संबंधी महत्वपूर्ण स्थल शामिल होते थे। पानी के साथ संबंध रखने वाले अनुष्ठान के रूप में इनका महत्व और अधिक रेखांकित हो जाता है क्योंकि यह दिसंबर के महीने में या वर्ष की शुरुआत में आयोजित किया जाता था जो कि एंडीज में भारी बारिश का महीना है।

बोध प्रश्न-2

1) उन प्रक्रियाओं की व्याख्या कीजिए जिनके माध्यम से इंका राजनीति का विस्तार और सुदृढ़ीकरण हुआ।

....

....

....

....

....

2) 'चुनी हुई' महिलाएं' कौन थीं ? इंका राजनीति के सुदृढ़ीकरण में 'चुनी हुई महिलाओं' ने किस प्रकार योगदान दिया ?

....

....

....

....

3) इंकाओं की *वराचिकु* (*warachiku*) प्रथा क्या थी ? इसके महत्व का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

11.3.2 समाज और अर्थव्यवस्था

इंका समाज नातेदारी आधारित समाज था। साम्राज्य स्पष्ट रूप से सबसे बड़ा और विस्तारित कुल ही था। इसमें पदानुक्रम की कई परतें थी। इंकाओं के आधिपत्य के बावजूद विभिन्न नातेदारी आधारित समुदाय या *अयलुस* लगातार आपस में संघर्षरत रहते थे। इंकाओं ने विद्रोहियों का दमन करने और उन समुदायों से भेंट वसूलने के लिए बल या युद्धों का इस्तेमाल किया। जैसा कि पहले ही वर्णित किया गया है कि अनुष्ठानों का उपयोग भी राज्य और शासन प्रणाली की एक रणनीति थी।

इंकाओं के दो कैलेंडर थे। दिन के लिए एक और रात के लिए एक। उन्होंने इन दो कैलेंडरों के अनुसार अपने अनुष्ठान निर्धारित किए थे। दिन के कैलेंडर द्वारा मुख्य रूप से कृषि गतिविधियों के लिए अनुष्ठानों को निर्धारित किया जाता था जैसे कि बुवाई, कटाई और वर्षा संबंधी अनुष्ठानिक आह्वान। यह एक सौर कैलेंडर था। लेकिन रात्रि-कैलेडंर एक चंद्र कैलेंडर था जो मुख्य रूप से शाही गतिविधियों के संस्कारों का मार्गदर्शन करता था, जैसे, पूर्वजों की पूजा, जीवन संबंधी संस्कारों (rites of passage) के अनुष्ठानों आदि के रूप में।

एंडीज की खड़ी चोटियों पर जीवन व्यतीत करते हुए, समतल खेत शायद ही इंकाओं के लिए उपलब्ध थे। इस प्रकार, समतल भूमि की कमी, कठिन जलवायु परिस्थितियाँ और सर्वाधिक महत्वपूर्ण ऊंचाइयों पर स्थित भूमि ने इंकाओं को साम्राज्य की भूमि पर सीढ़ीदार खेती की विलक्षण प्रणाली विकसित करने के लिए प्रेरित किया।

कृषि के लिए वे अद्वितीय मानव-संचालित फुट (foot) हल, *चकितकल्ला* (*chakitaqlla*) का उपयोग करते थे। उनके पास एक उत्कृष्ट भंडारण प्रणाली *कुलाक़* (*qullaqas*) भी थी।

कृषि उत्पादन में मक्का, कपास आदि शामिल थे। आलू और क्विनोआ इंकाओं के लिए विशिष्ट थे। और राज्यों को भेंट अथवा करों का भुगतान उत्पाद के रुप में किया जाता था। पालतू जानवरों में *केमेलिद* (*camelid*; ऊँट की प्रजाति), *इलामा* (*ilamas*) और *अल्पाका* (*alpacas* ; भेड़ की प्रजाति का पशु) इंकाओं के लिए विशिष्ट थे। समस्त प्रजा को राज्य के लिए भी काम करना होता था। सार्वजनिक कार्य बड़े पैमाने पर इस तरह के श्रम के माध्यम से किया जाता था जिसे *मितिमा* (*mitima*) कहा जाता था। *मितिमा* श्रम का उपयोग साम्राज्य के सभी स्थानों को जोड़ने वाली सड़कों के नेटवर्क के निर्माण के लिए किया जाता था। यहां तक कि विभिन्न अनुष्ठानों और सिंचाई प्रणाली को *मितिमा* द्वारा अनुरक्षित किया गया था।

चित्र 11.3: सीढ़ीदार खेती, माचू पिचू
साभार: मार्टिन सेंट-अमेंट-विकिपीडिया-CC-BY-Sa-3.0; जून 2009
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/0/01/80_-_Machu_picchu_-_Juin_2009_-_edit.2.jpg

चित्र 11.4: चकितकल्ला का उपयोग (एंडियन फुट प्लाव).
साभार: फेलिप गुआमान पोमा दे अयला द्वारा चित्रित: एल प्राइमर नुवाकोरोनिका वाई ब्युनगोबेरनो (1615 / 1616)
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/e/e1/Trabajo-inca8.jpg

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इंकाओ ने पहियों का उपयोग नहीं किया और न ही उनकी भाषा की कोई लिपि थी और न ही उन्होंने कुछ लिखा अथवा रिकॉर्ड किया। पहले का कारण एंडीज की भौगोलिक स्थिति हो सकती है, जिसने पहियों के उपयोग को हतोत्साहित किया। लिखित भाषा की अनुपस्थिति की आपूर्ति *क़्युपू* (*quipu*) की उपस्थिति से हुई। यह विभिन्न आंकड़ों के रिकॉर्ड रखने का एक शानदार तरीका था। यह एक व्यवस्थित तरीके से धागों की गाँठ लगाने की विधि थी। लोगों अथवा लेखकों का एक विशेष वर्ग या लिपिक *क्विपोकैमाया* (*quipocamayas*) कहलाता था जो *क्युपुओं* या गाँठ-तार (knotted-strings) तैयार करते थे। इस तरीके से साम्राज्य के विभिन्न हिस्सों में कृषि पैदावार और भंडारण क्षमता का विस्तृत रिकॉर्ड रखते थे। उनके पास राज्य के अलग-अलग *अयलुस* (*ayllus*) के बुद्धिमान प्रतिष्ठित जन बल की संख्या की जानकारी थी जो सैन्य सेवा या साम्राज्य की सड़कों या खानों की नहर प्रणाली के निर्माण के लिए तैयार थे।

स्पेनिश औपनिवेशीकरण के साथ इंका राज्य का पतन हुआ। वास्तव में, स्पेनिशों ने रैड इंडियनों (Red Indians) तक टाइफस, खसरा और इन्फ्लूएंजा जैसी यूरोपीय बीमारियों को पहुँचाया जो एंडीज में मौजूद नहीं थीं। यह घातक साबित हुई। और जिसके कारण 16वीं शताब्दी के दौरान रैड इंडियनों की एक बड़ी आबादी पूर्णतः नष्ट हो गई।

बोध प्रश्न-3

1) इंकाओं की सामाजिक संरचना क्या थी?

....

....

....

....

....

2) इंका कैलेंडर का उपयोग किन उद्देश्यों के लिए किया जाता था?

....

....

....

....

....

3) इंका अर्थव्यवस्था पर पांच पंक्तियां लिखें।

....

....

....

....

....

11.3.3 जल प्रबंधन प्रणाली

इंका वास्तुकला ने जल, उसके वितरण और प्रबंधन को पर्याप्त महत्व दिया। चाहे वह माचू पिचू (इंकाओं का सर्वाधिक विशाल पुरातत्व स्थल) में हो या कुस्को (उनकी राजधानी) में, अलग-अलग उद्देश्यों के लिए या लोगों के विभिन्न समूहों के लिए नहर के पानी की निर्मित-संरचनाएं

अद्भुत हैं। टिपोन (Tipon) में इंका शाही कृषि संपत्ति, जो कुस्को से 20 किलोमीटर पूर्व में है, में एक विस्तृत जल-संरचना के अवशेष पाए गए हैं। टिपोन में एक झरने का दोहन सीढ़ीदार कृषि को सींचने के लिए पत्थर की नालियों, नहरों और हाइड्रोलिक ड्रॉप संरचनाओं द्वारा किया गया था। इसके अलावा, पानी को अन्य लोगों के उपयोग के लिए नीचे प्रवाहित होने की अनुमति देने से पहले कुलीन एन्क्लेव में स्नान कुंड में प्रवाहित किया जाता था। कुस्को के उत्तर-पश्चिम में उरूबाम्बा नदी के पास पिसाक स्थल पर पत्थरों से लदी लबीं घुमावदार नहरें भी थीं। इसके निर्माण का श्रेय 15वीं शताब्दी के मध्य में इंका राजा विराचाकों के पुत्र पनाचुटी को दिया जाता है। यह नहर पूर्व-इंकाओं के अंत्येष्टी स्थल के साथ-साथ सीढ़ीदार कृषि भूमि और आवासीय क्षेत्रों को जलाश्यों के माध्यम से जोड़ने के लिए उपयोग की जाती थी। चिनचेरो (Chinchero) कुस्को के करीब इंकाओं का एक अन्य स्थल, में पानी की कार्यप्रणाली के रूप में सतहगत और भूमिगत दोनों प्रकार की नलिकाएं हैं और कहा जाता है कि इसका निर्माण 15वीं शताब्दी की तीसरी तिमाही में किया गया था। *क्युस्पिगुआनका* (*Quispiguanca*), एक अन्य स्थल हैं, जो कुस्को के करीब है और अंतिम इंका शासक द्वारा संरक्षित था जिसने 16वीं शताब्दी के दौरान स्पेनिश उपनिवेशवादी हुआयना केपैक के साथ संघर्ष किया था, उसके द्वारा इस नहर का निर्माण किया गया था। लेकिन इससे भी अधिक यह स्थान कृत्रिम झीलों और पानी के जलाशयों के जाल के लिये जानी जाती है। इससे कुछ इतिहासकारों का मानना है कि शायद उस समय तक बहते पानी के नियंत्रण और वितरण ने अपने राजनैतिक महत्व को खो दिया था जिसका संबंध इंकाओं का अपनी प्रजा के साथ था। कृषि और गैर-कृषि उद्देश्यों के लिए जल-संचार योजना संबंधी कार्य कुछ उपयोगितावादी विचार प्रदर्शित करते हैं, जिसकी प्रमुख विशेषता खुरदरे पत्थर की चिनाई थी।

चित्र 11.5: इंकाओं के कृत्रिम जलमार्ग (नहरें), टिपोन कुस्को
साभार: रेनबोवसी, लीमा, पेरू जून 2014
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/8/df/Incan_aqueduct_at_Tipon._Cusco%2C_Peru.jpg

11.3.4 इंका वास्तुकला

ओलानतेतांबो (Ollantaytambo), कालाचाका (Callachaca), काल्का (Calca) – इंकाओं के इतिहास के विभिन्न पुरातत्व स्थल – में विभिन्न प्रकार की इमारतें पाई जाती हैं जिन्हें इंकाओं द्वारा अधिकृत किया गया था। इंका के अधिकांश राजाओं के पास राजधानी कुस्को में एक

महल और साथ ही एक ग्रामीण क्षेत्र की संपत्ति थी। माचू पिचू, शाही संपत्ति इंका वास्तुकला को प्रतिबिंबित करने वाले बेहतरीन उत्तरजीवी स्थलों में से एक है। उन्होंने सड़कों के उत्कृष्ट नेटवर्क भी बनाए। इंका चिनाई की विशेषता सेलुलर पॉलीगोनल (cellular polygonal; बहुभुजीय छोटे पत्थरों का उपयोग), और ऐश्लर पॉलीगोनल (ashlar polygonal; तराशे/चौकोर विशाल पत्थरों का उपयोग), एन्केस्ड कोर्स्ड (encased coarsed; पत्थर के ब्लॉक पंक्तिबद्ध रूप से जुड़े हुए नहीं) और सेडीमेंट्री कोर्स्ड (sedimentary coarsed; क्षैतिज पंक्तियों में रखे गए ऐश्लर पत्थर) थी। इंकाओं द्वारा बड़े पैमाने पर मैदानी पत्थरों (अधूरे परिष्कृत पत्थरों के ब्लॉक), मिट्टी-गारा और कच्ची ईटों (धूप में सुखाई गई; मिट्टी तथा जैविक सामग्री से निर्मित) का उपयोग किया गया। इंकाओं की सबसे आम संरचना *कांचा* (*kancha*) थी जो एक आयताकार घेरा होता था जो आमतौर पर एक केंद्रीय कक्ष के चारों ओर तीन अनुक्रमों के एक सममितीय क्रम में होता था।

चित्र 11.6: सैक्सेहुआमन की दीवारों के अवशेष, कुस्को (ऐश्लर पॉलीगोनल मेसनरी)
साभार: एन. विकिपीडिया से स्थानांतरित करके कॉमन्स हेल्पर का उपयोग करते हुए जालो द्वारा कॉमन्स में हस्तांतरित
लेखक: Bcasterline, अंग्रेजी विकिपीडिया, 18 मार्च 2006
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/a/a8Walls_at_Sacsayhuaman.jpg

वास्तुकला के इन ज्यादातर अवशेषों की प्रकृति स्मारक रूप में थी। ये या तो एक युद्ध में जीत को स्मरण करने के लिए थे या उत्तराधिकार के कीर्तिगान के लिए या फिर कुछ विशिष्ट पूर्वजों को ममीकृत करने के लिए निर्मित किये गये थे। लेकिन प्रशासनिक उद्देश्यों के लिए निर्मित सार्वजनिक भवनों और इंका राजाओं के निजी आवासों के बीच एक विशिष्ट विभाज्य रेखा थी। पुरातत्व स्थलों पर पत्थर की चिनाई का काम अभूतपूर्व है। कृषि के लिए भूमि को समतल रखने के लिए बनाई गई सीढ़ीदार मेड़ों में बहुत कौशल और सौंदर्य नहीं दिखाई देता। लेकिन बड़े शाही महल/निवास, पवित्र मंदिर निश्चित रूप से विशिष्ट कौशल का प्रदर्शन करते है जो वैचारिक और उपयोगितावादी दोनों हैं। निस्संदेह ये गहन श्रम कार्य अधिक परिष्कृत हैं, कुशलतापूर्वक तराशे गए पत्थरों के टुकड़े के साथ, बारीक नक्काशीदार और सही घुमाव व कोणों पर जोड़े गये आलों के साथ, दरवाजों और खिड़कियों के साथ, और कई बहुभुजीय संरचनाओं और यहां तक कि कई स्थलों पर (जैसा कि चिनचेरो के समीप) रंगीन पत्थरों का प्रयोग शामिल थे।

बोध प्रश्न-4

1) इंकाओं के नहरों के संजाल पर एक नोट लिखिए।

....

....

....

....

....

....

2) इंका वास्तुकला की विशेषताएं क्या थीं?

....

....

....

....

....

11.4 सारांश

यह इकाई एज़्टेक और इंका राज्य-संरचनाओं के गठन पर केंद्रित है। जहां एज़्टेकों की पदानुक्रमित संरचनाएं वर्ग आधारित थीं, इंका समाज और राज्य बड़े पैमाने पर सगोत्रीय संरचनाओं का विस्तार थे। एज़्टेक कृषि मुख्य रूप से झीलों के अंदर-उद्यान के रूप में थी; जबकि इंका अनिवार्य रूप से सीढ़ीदार कृषि पर निर्भर थे। एज़्टेक इस अर्थ में एक साक्षर समाज था कि उनके ग्रंथों को संहिताबद्ध किया गया था, इसके विपरीत, इंकाओं की कोई लिखित लिपि नहीं थी, उनका लेखन गांठों (*क्युपु*; *quipu*) को छोड़कर। समकालीन दस्तावेजों के अभाव के कारण सभ्यता के विस्तृत इतिहास को जानना मुश्किल है। फिर भी उन्होंने अद्भुत जल प्रबंधन प्रणाली के साथ-साथ कुछ विशेष फसलों का उत्पादन किया जिसने भविष्य में दुनिया भर में खाद्य आदतों (आलू, टमाटर) को बदल दिया।

11.5 शब्दावली

***चाइनेमपा* (Chinampas)** : झीलों के अंदर उद्यान

***क्युपु* (Quipu)** : इंका लेखन गांठें (Writing knots)

***त्लाकोतिन* (Tlacotin)** : मेसोअमेरिका में गुलाम

11.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) उप-भाग 11.2.1 देखें

2) उप-भाग 11.2.2 देखें

3) उप-भाग 11.2.3 देखें

4) उप-भाग 11.2.4 देखें

5) उप-भाग 11.2.5 देखें

बोध प्रश्न-2

1) उप-भाग 11.3.1 देखें

2) उप-भाग 11.3.1 देखें

3) उप-भाग 11.3.1 देखें

बोध प्रश्न-3

1) उप-भाग 11.3.2 देखें

2) उप-भाग 11.3.2 देखें

3) उप-भाग 11.3.2 देखें

बोध प्रश्न-4

1. उप-भाग 11.3.3 देखें

2. उप-भाग 11.3.4 देखें

11.7 संदर्भ ग्रंथ

बेथेल, लेस्ली (सं.), (1984) *द कैंब्रिज हिस्ट्री ऑफ लैटिन अमेरिका*, भाग I, *कोलोनियल लैटिन अमेरिका* (कैंब्रिजः कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

कारास्को, डेविड एवं स्कॉट सेशंस, (1998) *डेली लाइफ ऑफ द एज़्टेक्सः पीपल ऑफ द सन एंड अर्थ* (वेस्टपोर्टः ग्रीनवुड प्रेस).

डी'अल्त्रॉय, टेरेंस एन., (2015) *द इन्कास* (ससेक्सः विली ब्लैकवेल), द्वितीय संस्करण.

गाम्बोया, पेड्रो सर्मिएन्तो दे, (2007) *द हिस्ट्री ऑफ द इन्कास*, अनुवाद एवं संपादन बॉयर, ब्रायन एस. एवं वानिया स्मिथ (टेक्सासः यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्सास प्रेस).

नाइल्स, सुसान ए., (1999) *द शेप ऑफ इन्का हिस्ट्रीः नैरेटिव एंड आर्किटेक्चर इन एन एंडियन एम्पायर* (आयोवाः यूनिवर्सिटी ऑफ़ आयोवा प्रेस).

सिल्वरब्लाट आइरेन, (1987) *मून, सन एंड विचेस : जेंडर आइडियोलाजी एंड क्लास इन इन्का एंड कोलोनियल पेरू* (प्रिन्सटनः प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस).

स्मिथ, माइकल ई., (2012) *द एज़्टेक्स* (ससेक्सः विल ब्लैकवेल), तृतीय संस्करण.

याया, इसाबेल, (2012) *द टू फेसेस ऑफ़ इंका हिस्ट्रीः डूअलिज़्म इन द नैरेटिव्स एंड कॉस्मोलॉजी ऑफ एनशियंट कुज़को* (लाइडनः ब्रिल).

11.8 शैक्षणिक वीडियो

द एज़्टेक एम्पायर
https://www.youtube.com/watch?v=s6RbaAURCql

तेनोचीटलान - द वेनिस ऑफ मेसोअमेरिका (एज़्टेक हिस्ट्री)
http://www.youtube.com/watch?v=fmHVqb6t_8

द सीक्रेट्स ऑफ द इंकास (दो भागों में)
http://www.youtube.com/watch?v=oRSTy9ir6zs

हिस्ट्री ऑफ द इंका एम्पायर
http://www.youtube.com/watch?v=iYYfg2tph3w

खंड IV

मध्य इस्लामिक जगत के समाज

समय रेखा

पूर्व का अरब संसार

अरेबियन उपमहाद्वीप : साराकेनोई / सारासेनी

अरब कबीले : कुरैश, अव्स, खज़राज

पूर्व-इस्लामिक नगर

मक्का, याथरिब / मदीना, तैफ

इस्लाम का उदय

पैगम्बर मुहम्मद की मक्का से मदीना की ओर हिजरत: 622

खलीफा अबू बकर : 632-634

खलीफा उमर : 634-644

खलीफा उस्मान : 644-656

खलीफा अली : 656-661

उमय्यद खिलाफत : 661-684

उत्तर उमय्यद खिलाफत : 684-750

अब्बासिद खिलाफत : 750-1258

फोटोग्राफ : विद्यार्थियों के साथ लाइब्रेरी चित्रण, 1237, पांडुलिपि पृष्ठः याहया इब्न वसेती द्वारा हरीरी मकामा में चित्रण, बिबलियोथेक नेशनल डे फ्रांस

साभार : जेरेष्क, सितम्बर, 2007

स्रोत : https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/2/2c/Maqamat_

इकाई 12 इस्लाम पूर्व का अरब संसार और वहां की संस्कृति*

इकाई की रुपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 अरब के कबीलाई परिसंघ

12.2.1 अरब प्रायद्वीप के प्रभुत्वशाली कबीले

12.2.2 अरब प्रायद्वीप में धार्मिक विविधताएं

12.3 कबीलाई तथा धार्मिक रीति-रिवाज

12.3.1 मक्कावासियों के धार्मिक रीति-रिवाज तथा अनुष्ठान

12.3.2 मदीना के निवासियों के धार्मिक रीति-रिवाज तथा अनुष्ठान

12.4 छठी शताब्दी के पूर्व अरब का व्यापारिक ढांचा

12.5 इस्लाम-पूर्व अरब का राजनीतिक ढांचा

12.6 इस्लाम पूर्व अरब का सामाजिक ढांचा

12.6.1 कबीलाई संरचना और नेतृत्व

12.6.2 असमानता और दासता

12.6.3 ऊँटों वाले अभिजात घुमंत कबीले

12.6.4 अंतर-कबीलाई संघर्ष

12.7 आर्थिक स्थितियां

12.7.1 ऊँटों पर आधारित खानाबदोशी

12.7.2 अरब क्षेत्र में कृषि

12.7.3 अरब क्षेत्र में उद्योग और खनन्

12.8 इस्लाम-पूर्व काल का साहित्य

12.9 सारांश

12.10 शब्दावली

12.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.12 संदर्भ ग्रंथ

12.13 शैक्षणिक वीडियो

12.0 उद्देश्य

इस्लाम के उदय और विकास को समझने के लिए इस्लाम-पूर्व अरब प्रायद्वीप के उस क्षेत्र के इतिहास को जानना महत्वपूर्ण है, जिसमें इसका विकास हुआ। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- अरब के भौगोलिक संदर्भ और भौगोलिक स्थितियों का वहां के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव को समझ सकेंगे,

* डॉ. चांदनी सेनगुप्ता, एमिटी यूनिवर्सिटी, गुरुग्राम

- वहां के विभिन्न कबीलों तथा धार्मिक समूहों और उनके धार्मिक रीति-रिवाजों तथा अनुष्ठानों को जान पायेंगे, और
- इस्लाम-पूर्व अरब के सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक संघटन को समझ पायेंगे।

12.1 प्रस्तावना

अरेबिया एक विशाल प्रायद्वीप[1] है। अरबी भाषा में इसे *जज़ीरत अल-अरब* (अरब लोगों का द्वीप) कहा जाता है। अरेबिया पश्चिम में लाल सागर, दक्षिण में अरब सागर और पूर्व में फारस की खाडी से घिरा हुआ है। इस प्रायद्वीप में कुवैत, बहरीन, कतर, संयुक्त अरब अमीरात, ओमान, यमन और सउदी अरब जैसे आधुनिक राष्ट्र शामिल हैं यहाँ नियमित बारिश बहुत कम होती है। थोड़ी बहुत बारिश सर्दियों में और वसंत ऋतु में देखने को मिल जाती है। अरेबिया में स्थायी नदियां नहीं हैं, लेकिन जमीन से फूटने वाले चश्मों और कुओं से अनेक नखलिस्तान[2] बन गए हैं।

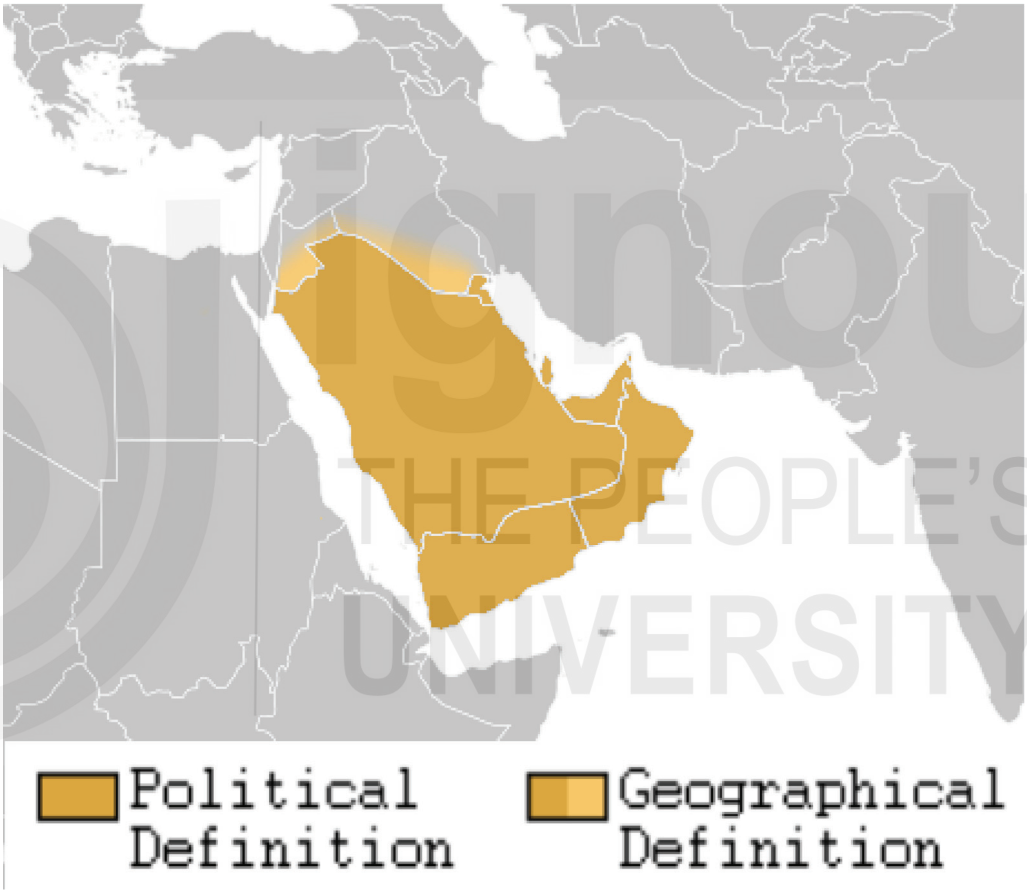

मानचित्र 12.1: अरब प्रायद्वीप

साभार : फारोस; अक्टूबर, 2007

based on PD Image:BlankMap-World.png by User:Vardion

स्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/4/4a/Arabian_peninsula_definition.PNG

यह प्रदेश घुमंतू चरवाहों से आबाद था, जो खुद को अरब कहते थे। सदियों तक मध्य, उत्तरी और पश्चिमी अरेबिया इन भ्रमणशील लोगों से बसा हुआ था। ऊँटों के आने और उनके पालन से वहां एक विशेष प्रकार की पशुपालक खानाबदोश संस्कृति की शुरुआत हुई जो ऊँट पालन पर आधारित थी। इस्लाम-पूर्व अरेबिया में कोई व्यवस्थित सामाजिक ढांचा नहीं था और इस्लाम के उदय के पहले वहां कोई राज्य संरचना भी नहीं थी। अरब के लोग ऐसे

[1] तीन तरफ से पानी से घिरा भू-क्षेत्र प्रायद्वीप कहलाता है।

[2] रेगिस्तान में ज़मीन से निकलने वाला चश्मा और उसके आस-पास का हरित क्षेत्र नखलिस्तान कहलाता है।

विभिन्न कबीलों में बंटे हुए थे, जो कुलों और गोत्रों के आधार पर संगठित थे। वे अपने आवागमन और व्यापार के लिए पूरी तरह से ऊँटों पर निर्भर थे। इसी तरह भोजन और जीविका के लिए कुछ अनाजों और खजूर पर।

इस इकाई में हम आपको इस्लाम-पूर्व अरेबिया के विभिन्न पहलुओं से परिचित कराएंगे, जिनमें कबीलाई बस्तियों और उनकी संरचना, धार्मिक रीति-रिवाजों, व्यापार-तंत्र, सामाजिक ताने-बाने, आर्थिक स्थितियों और राजनीतिक संरचना का विशेष उल्लेख किया जायेगा। इस्लाम-पूर्व अरब समाज की जटिल प्रकृति को समझने के लिए इस इकाई में उन सभी पहलुओं पर विचार किया गया है, जिन्होंने अरब प्रायद्वीप के एक संगठित स्वरूप के विकास में अपना योगदान दिया।

12.2 अरब के कबीलाई परिसंघ

अरब प्रायद्वीप के निवासियों को यूनानी भाषा में साराकेनोई तथा लैटिन में सारासेनी कहा जाता था। इससे पहले उन्हें सेनाइट अरब या तंबुओं में रहने वाले अरब के रूप में जाना जाता था। हालाँकि अरब के ये ऊँट वाले खानाबदोश खुद को अरब ही कहलाना पसंद करते थे। लेकिन इस्लाम-पूर्व का यह अरब प्रायद्वीप विभिन्न कबीलों और धार्मिक समुदायों का घर था।

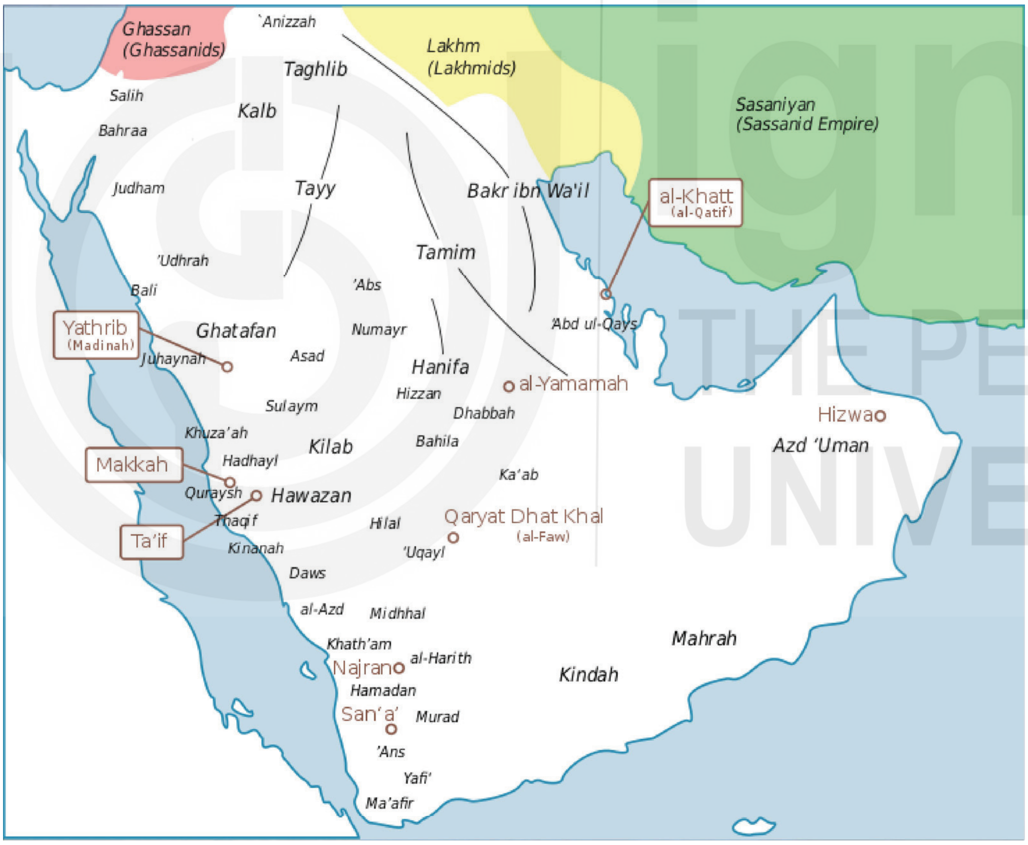

मानचित्र 12.2: अरब कबीले, लगभग 600 सी ई

साभार : मुरेथेब एन आई, मई 2009

स्रोत : Adapted from File:Tribes_english.png;https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/3/30/Map_of_Arabia_600_AD.svg

12.2.1 अरब प्रायद्वीप के प्रभुत्वशाली कबीले

मक्का में पांचवी सदी में विभिन्न कबीलों का गठबंधन कुरैश एक प्रभुत्वशाली कबीलाई राज्यसंघ बन गया। कुरैश एक संगठित धार्मिक संप्रदाय था। वे *माला* नामक एक गोत्रीय परिषद् के माध्यम से मक्का का शासन चलाते थे। कुरैशों ने अपनी पहचान मजबूत बनाने के लिए खान-पान, पहनावे, पारिवारिक प्रतिबंधों तथा कुरैश परिसंघ के भीतर ही सगोत्र

विवाह के नियम बनाये। वे स्थानीय मेलों तथा क्षेत्रीय व्यापार में सक्रिय थे। कुरैशों के बीच आपस में उच्च स्तर की संबद्धता थी। वाणिज्य और व्यापार के अलावा कुरैशों ने कृषि में भी निवेश किया। कृषि कार्यों में उनकी भागीदारी के प्रमाण तैफ शहर में मिलते हैं, जहाँ फल उगाए जाते थे और पूरे अरब प्रदेश में भेजे जाते थे। इस्लाम के उदय के पहले ही कुरैशी उद्यमियों ने तैफ की घाटियों में विशाल जागीरें स्थापित कर ली थीं।

मदीना में अव्स और खज़राज प्रमुख कबीले थे। मदीना में यहूदी कबीलों का प्रभुत्व था और अव्स तथा खज़राज बाद में वहां बसने के लिए आए। जिस समय ये मदीना में रहने के लिए आए, उस समय यहूदी कबीलों के मुकाबले उनकी स्थिति कमजोर थी। धीरे-धीरे वे शक्तिशाली होने लगे, उन्होंने अपने लिए गढ़ बनाए और खजूर के बागान लगाए। इन दोनों कबीलों को बाद में इस्लाम के तहत *अल-अंसार* या मददगार कहा गया।

12.2.2 अरब प्रायद्वीप में धार्मिक विविधताएं

अरब प्रायद्वीप सिर्फ अरब बद्दुओं (Bedouin) की ही भूमि नहीं थी। वहां अनेक दूसरे धार्मिक समूह बसे थे और वे उस क्षेत्र के राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे।

उत्तर अरब में खैबर और मदीना दो बड़ी यहूदी बस्तियां थीं। मदीना के यहूदी जमीनों, किलेनुमा गढ़ों और हथियारों से संपन्न थे। पांचवी शताब्दी में उत्तरी अरब में ईसाई धर्म स्थापित हो चुका था। दक्षिणी अरब में चौथी और पांचवी शताब्दी में यहूदी धर्म स्थापित हुआ तथा बाइजेंटाइन धर्म-प्रचारकों की गहन गतिविधियों से छठी शताब्दी तक ईसाई धर्म का प्रसार होने लगा था। अबीसीनियाइयों ने दक्षिणी अरब पर हमला कर ईसाई बस्तियों को यमन के छोटे नखलिस्तानों की ओर सीमित कर दिया था।

ईसाई चर्च सासानी प्रभाव वाले पूर्वी अरब क्षेत्र में भी सक्रिय थे, विशेष रुप से अल-हीरा में। ईसाई प्रतिनिधित्व उन व्यापारियों द्वारा भी होता था, जो दक्षिण अरब के नजरान से सीरिया के बसरा के बीच आने-जाने वाले कारवांओं के साथ यात्राएं करते थे। यहाँ तक कि **हेजाज़** में भी ईसाई और यहूदी बस्तियां थीं। **हेजाज़** के नखलिस्तानों में यहूदी धर्म का काफी प्रचार था, जहाँ यहूदियों ने खेती योग्य भूमि का काफी विस्तार किया था और खजूर के अनेक बागान लगाए थे। कुछ महत्वपूर्ण अरब परिवारों ने धर्मांतरण कर यहूदी धर्म अपना लिया था।

मदीना में यहूदियों की एक बड़ी आबादी रहती थी। ईसाई धर्म और उससे कुछ कम यहूदी धर्म का प्रवेश घुमंतू कबीलों में भी हो चुका था। मदीना में यहूदी आबादी का फैलाव दोनों क्षेत्रों में था – उत्तर में सफीला या मदीना के निचले इलाकों में और दक्षिण में आलिया या ऊपरी इलाकों में माना जाता है कि कुरेज़ा और नादिर जैसे यहूदी कबीले ऊपरी मदीना में बसे हुए थे, जबकि क़्येनुक़ा नाम का एक तीसरा बड़ा कबीला सफीला में रहता था। लेकिन नादिरों के पास आलिया के बाहर तथा उसकी सीमा पर भी अपनी भू-संपत्ति थी।

अनेक नाम, धार्मिक शब्द और ऐतिहासिक प्रसंग इस्लाम-पूर्व अरब पर इराकी-सीरियाई प्रभाव का भी संकेत देते हैं। उत्तरी अरब के सीमांत क्षेत्रों में सीरियाई तथा इराकी संतों तथा सन्यासियों की पूजा होती थी।

बोध प्रश्न-1

1) कुरैश कबीले की प्रकृति का विश्लेषण कीजिए।

....

....

....

....

2) मदीना के प्रभुत्वशाली कबीलों पर एक टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

3) सही और गलत कथन पर निशान (✓ / ✗) लगाइये :

i) ईसाईयत का प्रतिनिधित्व उन व्यापारियों द्वारा भी होता था, जो दक्षिणी अरब में नजरान से सीरिया के बसरा तक जाने वाले कारवाओं के साथ आते-जाते थे। ( )

ii) मदीना में यहूदियों की एक बड़ी आबादी रहती थी। ( )

iii) बताया जाता है कि कुरेजा और नादिर नामक कबीले निचले मदीना (Lower Medina) में रहते थे। ( )

12.3 कबीलाई तथा धार्मिक रीति-रिवाज

मक्का और मदीना के इस्लाम-पूर्व कबीले मुख्यतः मूर्ति पूजक थे। हालांकि विस्तार से देखने पर पता चलता है कि मक्का और मदीना की धार्मिक परंपराओं में काफी अंतर था।

12.3.1 मक्कावासियों के धार्मिक रीति-रिवाज तथा अनुष्ठान

इस्लाम-पूर्व के अरब निवासी मूर्ति पूजक थे। वे बहुदेववादी थे, यानी वे अनेक देवताओं के अस्तित्व में विश्वास करते थे, लेकिन वे एक सर्वोच्च ईश्वर, अल्लाह में भी विश्वास करते थे, जिसका निवास काबा में था। अल्लाह को वे सर्वोपरि ईश्वर मानते थे या ऐसा ईश्वर जो सबका सृष्टा है, जो अन्य सभी कबीलाई देवताओं पर अपनी शक्ति का इस्तेमाल करता है। चूँकि मक्का के निवासी मूर्ति पूजक थे इसलिए उन्होंने अनेक आकार-प्रकार वाले देवताओं की मूर्तियां बनाईं। इनमें से सबसे प्रचलित वे देवमूर्तियां थीं, जो कुल या कुटुंब के देवताओं की थीं। मक्का का महान् देवता हुबल था, जिसकी मूर्ति एक लाल कीमती पत्थर, कार्नेलियन से बनाई जाती थी।

चित्र 12.1: शेर पर खड़ी अरब देवी अल-लात की प्रतिमा, बगल में अल-मनत और अल-उज़्ज़ा हतरा से प्राप्त द्वितीय शताब्दी की उभरी हुई नक्काशीयुक्त आकृति

साभार : अज्ञात

स्रोत: http://artyx.ru/books/item/f00/s00/z0000023/st004.shtml; https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/c/c8/AllatHatra.jpg

उनकी आरंभिक तीर्थ यात्राएं (*हज*) अल्लाह के घर काबा (cube या घन के लिए प्रयुक्त अरबी शब्द) के लिए होती थीं। यह एक समकोणीय भवन था, जहाँ जाना सबसे बड़ा धार्मिक अनुष्ठान था

और जो मक्का के विभिन्न कबीलों में भाई-चारा बनाए रखने में मददगार था। काबा में मक्का के सभी कुल वंशों के पवित्र चिन्ह एकत्र किए जाते थे। इस तरह इसने उनके विभिन्न पंथों-संप्रदायों को एक में समाहित कर दिया। इसके अलावा मक्का में कुछ अन्य देवी-देवताओं को भी विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त थी, विशेष रूप से तीन देवियों को – अल-लात, अल-उज़्ज़ा और अल-मनत। अल-लात का अर्थ है 'देवी', अल-उज़्ज़ा अर्थात 'सर्व शक्तिशाली,' जो 'शक्ति और 'सुरक्षा की देवी' मानी जाती थी, तथा अल-मनत यानी 'सौभाग्य की देवी'। इनकी मूर्तियां काबा के अंदर रखी गई थीं। श्रद्धालु काबा की प्रतिष्ठा में निर्धारित बार नंगे पांव उसकी परिक्रमा करते थे। इस दौरान वे भवन में लगे पवित्र पत्थरों को स्पर्श करते थे, विशेष रूप से कोने में लगे काले पत्थर को। काबा के निकट ही एक पवित्र कुआँ था, जिसे ज़मज़म कहा जाता था।

मक्का के निवासी कुछ कम शक्ति वाली आत्माओं या *जिन्नों* में भी विश्वास करते थे, जिन्हे अक्सर किसी विशेष कबीले का रक्षक माना जाता था। इनमें से प्रत्येक *जिन्न* किसी स्थान विशेष पर बने मकबरे, किसी पेड़ या किसी बागीचे या किसी खास प्रस्तर खंड से संबंधित होता था। तारों को भी दैवीय समझा जाता था।

12.3.2 मदीना के निवासियों के धार्मिक रीति-रिवाज तथा अनुष्ठान

मक्का की ही तरह मदीना में भी मूर्तियां विभिन्न कबीलाई संगठनों से अलग-अलग स्तरों पर जुड़ी हुई थीं। यहाँ भी मूर्ति-पूजा के रुप में कुल या कुटुंब के देवता की पूजा सबसे ज्यादा प्रचलित थी। कुल या कुटुंब की मूर्तियों से ऊँचा स्थान उन मूर्तियों का था, जिनका संबंध अभिजात्य परिवारों से था। मदीना के प्रत्येक अभिजात्य कुल की अपनी एक विशिष्ट मूर्ति होती थी और उसका अपना एक नाम होता था। इनके अलावा अपेक्षाकृत छोटे कबीलाई समूहों की भी अपनी मूर्तियां होती थीं और उनके अपने नाम भी होते थे।

छोटे कबीलाई समूहों की मूर्तियों को *बत्न* कहा जाता था। इन मूर्तियों को पूजा स्थल के गर्भ में रखा जाता था, जिन्हें *बैत* कहा जाता था। उनको बलि अर्पित की जाती थी। मदीना की कबीलाई व्यवस्था में *बत्न* के ऊपर एक और मूर्ति होती थी, जिसे *हुज़ाम* कहा जाता था। हुज़ाम को बलि भी अर्पित की जाती थी। खज़राज कबीला अल-खमीस की मूर्ति की पूजा करता था। अज़्द, अव्स और खज़राज कबीले अल-सैदा की मूर्ति की पूजा करते थे, जो मदीना के उत्तर में उहूद पर्वत पर स्थित थी।

मदीना में जादू-टोना और अंधविश्वासों का प्रचलन था। लोग बुरी नजरों से डरते थे और उनसे बचाव के लिए ताबीज पहनते थे।

बोध प्रश्न-2

1) मक्का के निवासियों के धार्मिक रीति-रिवाजों का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए।

....

....

....

....

....

....

2) मदीना के कबीलों के धार्मिक रीति-रिवाजों तथा अनुष्ठानों के बारे में पांच पंक्तियां लिखिए।

....

....

....

....

....

3) निम्नलिखित को सुमेलित कीजिए :

i) हुबल	a) सौभाग्य की देवी
ii) हुज़ाम	b) मक्का का देवता
iii) अल-मनत	c) मदीना

12.4 छठी शताब्दी के पूर्व अरब का व्यापारिक ढांचा

पश्चिमी तथा मध्य अरेबिया में व्यापार का सबसे महत्वपूर्ण केंद्र हिजाज़ में स्थित मक्का था। मक्का महत्वपूर्ण केंद्र इसलिए था, क्योंकि यह दो व्यापारिक मार्गों के बीच स्थित थाः फिलिस्तीन और यमन को जोड़ने वाला उत्तर से दक्षिण की ओर जाने वाला मार्ग तथा पश्चिम में एबीसीनिया (इथियोपिया) और लाल सागर तथा पूरब में फारस की खाड़ी को जोड़ने वाले मार्ग। छठी शताब्दी के मध्य में मक्का के कुरैश कबीले ने समुद्र से जुड़ने वाले उत्तर-पूर्वी अरेबिया तथा यमन या अबीसीनिया के व्यापार पर आधिपत्य जमा लिया। उन्होंने न सिर्फ दूर-दराज से होने वाले व्यापार पर बल्कि आंतरिक व्यापार पर भी प्रभुत्व कायम कर लिया।

व्यापार ने अरेबिया को बाकी दुनिया से भी जोड़ा। बाहर से व्यापारी अरेबिया में वस्त्र, आभूषण, हथियार, अनाज और मदिरा (वाइन) लेकर आए। अरेबिया खाल, चमड़े और पशुओं का निर्यात करता था। पूर्व और दक्षिण तटों पर हिंद महासागर के मिलन बिन्दुओं पर वाणिज्य के साथ अरब बाजारों की मंडियां स्थापित हुईं। दक्षिणी अरब के आबाद इलाकों और **चंद्राकार उपजाऊ क्षेत्र** (Fertile Crescent) के बीच कारवांओं ने संपर्क बढ़ाने का काम किया। ये कारवां जब चलते थे तो अपने उत्पादों के अलावा एक ओर तो भारत, पूर्वी अफ्रीका और सुदूर पूर्व से तथा दूसरी ओर पूरे भूमध्यसागरीय क्षेत्र से भी सामान लाने-ले जाने का काम करते थे। बद्दुओं के सीमा क्षेत्र से होकर जो कुछ भी गुजरता था, उस पर उनका पूरा नियंत्रण था।

जहाँ तक अरबों के मुख्य व्यवसाय का संबध है, छठी सदी में उनमें धीरे-धीरे बदलाव आ रहा था। कुछ कबीलों ने व्यापार को अपना मुख्य पेशा बनाना शुरू कर दिया। इन कबीलों ने धीरे-धीरे घुमंतू पशुपालन छोड़ दिया और पूर्णकालिक व्यापारी बन गए। व्यापार की तरफ यह रुझान सबसे ज्यादा हिजाज़ प्रांत में देखने को मिला, मक्का जिसका एक अंग था। सासानियों तथा बाइजेंटाइन के संघर्ष के कारण फारस की खाड़ी और इराक से होकर गुजरने वाले अंतरराष्ट्रीय व्यापारिक मार्ग में बदलाव आया और कुछ व्यापार लाल सागर के रास्ते या स्थल मार्ग द्वारा यमन से सीरिया की ओर होने लगा। इसका नतीजा यह हुआ कि अनेक कारवां हिजाज़ से होकर गुजरने लगे और धीरे-धीरे हिजाज़ के मार्ग का महत्व बढ़ गया। व्यापारिक संपर्कों के पुनर्व्यवस्थापन के कारण हिजाज़, जो व्यापारियों की बस्ती थी, को जो महत्व हासिल हुआ, उसकी वजह से मक्का की ख्याति छठी शताब्दी में बढ़ी।

12.5 इस्लाम-पूर्व अरब का राजनीतिक ढांचा

व्यवहार में अरब किसी लिखित कानूनी संहिता से बद्ध नहीं थे, और उनकी अपनी कोई राज्य संरचना नहीं थी जो कानूनी संहिताओं को लागू करने के लिए बाध्य करती। राजनीति का स्वरूप निरंकुश नही था। व्यक्तिगत प्रतिष्ठा और घनिष्ठ वंशीय निष्ठा सर्वाधिक महत्वपूर्ण थी।

प्रत्येक कबीले का मुखिया युद्ध में नेतृत्व प्रदान करता था, आपसी मतभेदों में पंच का कार्य करता था, और अधिकतर परिस्थितियों में कबीले के पवित्र प्रतीक चिन्हों का संरक्षक था। हालांकि, प्रधान को किसी परिवार अथवा कुल-गोत्र (clan) पर अपनी निर्णय शक्ति थोपने का कोई अधिकार नही था। प्रत्येक व्यक्ति कुल विशेष से संबंध तोड़ने के लिए स्वतंत्र था, और अपने परिवार के साथ कभी भी कबीले को छोड़ सकता था।

कोई भी आम न्यायालय नहीं था। न्यायिक शक्ति के अभाव में अंतर-समूह नियंत्रण को आपसी खूनी रिश्तों के सिद्धान्त के आधार पर प्रतिशोध द्वारा कायम किया जाता था, जैसे कि किसी बाहरी व्यक्ति द्वारा कबीले के सदस्य के प्रति अत्याचार को समस्त कबीले के विरूद्ध अपराध माना जाता था तथा दुश्मनी उस पूरे कबीले के साथ मानी जाती थी जिस कबीले के साथ का वह परदेसी सदस्य होता था। आहत कबीले की प्रतिष्ठा उस अपमान का प्रतिशोध लेकर ही स्थापित की जा सकती थी। सामान्य सिद्धान्त थाः आंख के बदले आंख, जीवन के बदले जीवन।

12.6 इस्लाम-पूर्व अरब का सामाजिक ढांचा

इस्लाम-पूर्व अरब एक घुमंतू-पशुपालक प्रधान समाज था। आइए देखें कि इन कुल-गोत्र आधारित कबीलाई समूहों की आंतरिक संरचना कैसी थी।

12.6.1 कबीलाई संरचना और नेतृत्व

अरब समाज कबीलाई था और यह घुमंतू, अर्ध-घुमंतू तथा स्थायी आबादियों से मिलकर बना हुआ था। बद्दुओं ने अपना एक विशिष्ट प्रकार का सामाजिक संघटन तैयार किया था। वे निरंतर भ्रमण करते रहते थे। इन बद्दुओं की जीवन शैली अरेबिया की एक विशिष्ट पहचान बन गई। ऐसे समुदाय बहुत कम थे, जो आवासीय या स्थायी जीवन व्यतीत करते थे।

समाज की बुनियादी इकाइयां वे छोटे-छोटे समूह थे, जिन्हें कुल या कुनबा कहा जा सकता था। एक कबीला कुछ कुनबों को मिलाकर बनता था, जो किसी एक गोत्र या कुल संबंध को स्वीकार करते थे। मार्शल हॉजसन बड़े समूहों को कबीला और छोटे समूहों को 'कुल' या कुनबा बताते हैं। प्रत्येक कबीले के अपने वास्तविक या काल्पनिक पुरखे थे। शुष्क मौसमी परिस्थितियों की वजह से बड़ी आबादी वाले समूह को एक साथ रखना संभव नहीं था। इसलिए जैसे ही कुनबे बड़े होने लगते, वे अलग जाकर अपनी स्वतंत्र इकाई बना लेते थे। इससे कबीलों का एक समानुपातिक आकार बना रहता था। कबीलों में बराबरी का दर्जा कबीलाई संगठनों द्वारा कायम किया जाता था। कबीले का हर सदस्य एक समान समझा जाता था।

परिवारों के छोटे या बड़े समूहों में आर्थिक और सामाजिक परस्पर निर्भरता की पैतृक प्रणाली थी। परिवार बड़े समूहों से आर्थिक कारणों से जुड़े रहते थे और बड़े समूह अपने से बड़े समूहों से राजनीतिक शक्ति के लिए जुड़े रहते थे। इन समूहों में हर स्तर पर एक तरह की आंतरिक स्वायत्तता मौजूद रहती थी। प्रत्येक स्तर पर ये समूह अपने आपको किसी एक ही वास्तविक या काल्पनिक विरासत से संबद्ध इकाई के रूप में पेश करते थे। प्रत्येक बड़े समूह

के पास अपने चारागाह होते थे। वे अपने क्षेत्र में चरवाही के अपने अधिकार की रक्षा करते थे और उसे दूसरों की कीमत पर और बेहतर बनाने की कोशिश करते थे।

प्रत्येक कबीला अपने लिए एक मुखिया या नेता का चुनाव करता था। यह चुनाव कुछ तो इस आधार पर होता था कि वह किस परिवार का वंशज है और कुछ उसकी व्यक्तिगत योग्यताओं के आधार पर। लेकिन निश्चित रूप से उसके अधिकार और उसकी सत्ता उसकी अपनी ही निजी छवि पर निर्भर करती थी और उसे बनाये रखने के लिए हमेशा सर्तक रहना होता था। इसके लिए उसे अपनी अनेक प्रकार की योग्यताओं का प्रदर्शन करना पड़ता था – अपनी दया और उदारता से अपने अनुयायियों को एकजुट रखना, प्रत्येक स्थिति में संयमित व्यवहार करना, अपने शासितों की अव्यक्त इच्छाओं को समझना और आवश्यकता पड़ने पर अपनी शक्ति और अधिकारों का प्रयोग करना।

12.6.2 असमानता और दासता

सभी कुल बराबर नहीं थे। उनमें से कुछ लूटमार, व्यापार और आवासीय बस्तियों या घुमंतू कबीलों पर हमला कर दूसरों की तुलना में अमीर बन गए थे। समय-समय पर विभिन्न कुलों के कुछ व्यक्ति भी अपना व्यक्तिगत भाग्य बना लेते थे। इसलिए उनका समाज अमीरों और गरीबों में बंटा हुआ था। अनेक कुल, जैसे लोहारों या धातु कर्मियों के कबीले दूसरों द्वारा निम्नतर समझे जाते थे।

कुछ अमीर कुलों के सदस्य अपने धन का उपयोग दासों की खरीद के लिए भी करते थे। फिर भी घुमंतू जिंदगी की स्थितियाँ दास रखने के लायक नहीं होती थीं, इसलिए अक्सर दासों को आजाद कर दिया जाता था। आजाद किए गए दास या *मावला* फिर भी अपने पूर्व मालिकों पर ही आश्रित बने रहते थे।

12.6.3 ऊँटों वाले अभिजात घुमंतू कबीले

अरेबिया के अधिक शुष्क प्रदेशों में बद्दुओं या ऊँट वाले घुमंतू कबीलों को अभिजात्य कबीलों में माना जाता था। ऊँटों के अलावा उनके पास घोड़े भी होते थे, जिनका इस्तेमाल वे हमलों के लिए करते थे। भेड़ और बकरियां चराने वाले चरवाहे भी रहते थे, लेकिन उन्हें कृषि योग्य भूमि के नजदीक रहना होता था, इसलिए वे उन लोगों की कृपा पर आश्रित रहते थे, जो उनकी तुलना में ज्यादा भ्रमणशील थे। शुद्ध रूप से ऊँट पालक, खेतिहरों तथा अन्य पशु पालकों से अधिक भ्रमणशील और साधन संपन्न थे। वे इलाके के अन्य कबीलों पर अपनी इस स्थिति का रौब भी गांठते थे। वे लूट से सुरक्षा और आश्वासन के बदले खेतिहरों से शुल्क भी मांगते थे, जिसे *खव्वा* कहा जाता था।

12.6.4 अंतर-कबीलाई संघर्ष

कबीलों के बीच आपसी संबंध शांतिपूर्ण हो सकते थे, लेकिन गरीबी के कारण अमीरों का धन हासिल कर लेने का लालच बहुत बड़ा था। इसलिए कई कबीले *ग़ज़वा* या दूसरे कबीलों पर हमला करने में व्यस्त रहते थे। इन हमलों के नियम परंपरा से निर्धारित होते थे। ऐसी कोशिश की जाती थी कि बिना कोई जान लिए माल और मवेशी लूट लिए जाएँ, क्योंकि मानव हत्या को प्रोत्साहन नहीं दिया जाता था, और इसके लिए कड़े दंड का प्रावधान था।

बोध प्रश्न-3

1) निम्नलिखित को परिभाषित कीजिए:

   i) ***कबीला*** ....

....

ii) *मावला* ....

....

iii) *ग़ज़वा* ....

....

2) इस्लाम-पूर्व अरब में कबीला प्रमुख की भूमिका का मूल्यांकन कीजिए।

....

....

....

....

....

12.7 आर्थिक स्थितियां

बद्दू आमतौर पर ऊँट पालक थे, नखलिस्तानों के पास स्थायी या अभ्रमणशील आबादी रहती थी और कृषि कार्य करती थी, और अरब आबादी का एक छोटा हिस्सा खनन् में भी कार्यरत् था।

12.7.1 ऊँटों पर आधारित खानाबदोशी

चूँकि प्रायद्वीप का अधिकांश हिस्सा रेगिस्तानी था, इसलिए जीवन का प्राकृतिक तरीका खानाबदोशी और पशुपालन था। ईसा युग के प्रारंभ होने के पहले दूसरी सहस्त्राब्दि में यहां के बाशिंदों ने ऊँटों, जो रेगिस्तान के लिए बेहद अनुकूल थे, को पालतू बनाना सीख लिया था। ऊँटों वाली खानाबदोशी अपने साथ एक बड़ी सामाजिक शक्ति की संभावनाएँ भी लेकर आई। अन्य पालतू पशुओं की तुलना में ऊँट अपने पालकों के लिए ज्यादा भ्रमणशीलता लेकर आए। वे अन्य पशुओं की अपेक्षा ज्यादा लंबे समय तक बिना भोजन और यहां तक कि बिना पानी के भी रह सकते थे, इसलिए जल विहीन क्षेत्रों में दूर-दूर तक यात्राएं कर सकते थे। वे 50 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान वाले क्षेत्रों में भी बिना भोजन और पानी के तीन-तीन हफ्तों तक लगातार यात्रा कर सकते थे। इसलिए उनकी मदद से रेगिस्तान के दुर्गम संसाधनों की खोज की जा सकती थी और उनका लाभ उठाया जा सकता था। ऊँट भारी वजन ढो सकते थे, इसलिए इस काम के लिए भी उनका उपयोग हो सकता था। वे अच्छा दूध भी देते थे। इन कारणों से वे न सिर्फ अपने पालकों के लिए जीवन का आधार साबित होते थे, बल्कि वाणिज्यिक रूप से भी फायदेमंद विकल्प थे। इससे बददुओं ने न केवल रेगिस्तान के नखलिस्तानों में प्रधानता प्राप्त की बल्कि आसपास के प्रदेशों की स्थायी बस्तियों पर भी अपना प्रभाव बनाया। वे न सिर्फ व्यापार करने में बल्कि अनुकूल परिस्थितियों में शुल्क वसूलने में भी सक्षम थे। ऊँटों वाले घुमंतू कबीले भूमध्यसागर तथा दक्षिणी सागर वाले क्षेत्रों में व्यापार में शामिल हो गए।

रोमन और सासानी (ईरानी) साम्राज्यों के बीच का एक बड़ा भूक्षेत्र बद्दू अरब लोगों का था। इस क्षेत्र में मुख्य रूप से उत्तर-पश्चिम और मध्य भाग में ऊँटों वाले घुमंतू कबीलों का प्रभुत्व था। ये शुष्क प्रदेश थे, जहां प्राकृतिक रूप से कहीं-कहीं घास के मैदान और जलाशय थे। यहाँ सतह के नजदीक ही पानी मिल जाता था, जिससे नियमित सिंचाई संभव हो पाती थी।

खानाबदोशी की जीवनशैली में पशुपालक यहाँ अपने मवेशियों की देखभाल कर सकते थे, दूध और कभी-कभी मांस के साथ नखलिस्तानों में पैदा होने वाला गेहूँ और खजूर प्राप्त कर सकते थे। पशुपालकों से कृषकों को पशु मिल जाते थे और अपनी आवश्यकता के वे विशिष्ट उत्पाद भी, जो उन्हें दूर क्षेत्रों से मंगाना पड़ता था।

12.7.2 अरब क्षेत्र में कृषि

इस क्षेत्र में छोटे कृषि समुदायों द्वारा कई तरह के अनाज पैदा किए जाते थे। नखलिस्तानों के पास ऐसी आबादियां आ बसी थीं जो खजूर उपजाती थीं। खजूर सिर्फ एक फल ही नहीं था, बल्कि इसका प्रत्येक हिस्सा किसी न किसी उपयोग में लिया जाता था। अरबों में इसे 'मां और मौसी' कहा जाता था। खजूर और ऊँट का दूध इस क्षेत्र का मुख्य भोजन था।

ओमान और बहरीन में अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि था। बहरीन, मक्का को अनाज निर्यात करता था। वे किसान जो खजूर पैदा करते थे और इधर-उधर छितरे हुए खेतों पर फल और सब्जियां उगाते थे, वे रेगिस्तान के ऊंट-पालक बद्दू थे। बद्दुओं, कृषकों तथा शहरी बाशिदों का जीवन एक-दूसरे पर निर्भर था। इसलिए उन्हें एक साथ मिलजुल कर रहना था।

12.7.3 अरब क्षेत्र में उद्योग और खनन्

अरब में आर्थिक रूप से उन्नत अनेक उत्पादन क्षेत्र थे। सासानियों ने यमन में चांदी और तांबा के खनन् को विकसित करने में मदद की। पूर्वी अरब में भी तांबा और चांदी का खनन् होता था। यमन में चमड़े और कपड़े का उत्पादन होता था। उत्तर मध्य अरब में कूफा-मदीना मार्ग पर बसे अल-रबाद नामक शहर में धातु, काँच, सेरामिक और सिलखडी के सामान बनाए जाते थे।

12.8 इस्लाम-पूर्व काल का साहित्य

एक अस्थायी कबीलाई समाज में कलाओं के विकसित होने के अवसर कम ही थे, लेकिन साहित्य इसका अपवाद था। असल में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक जटिलताओं ने अरब समाज में एक उन्नत और परिष्कृत सांस्कृतिक वातावरण उत्पन्न किया।

सम्पूर्ण अरब बहुभाषी था, हालांकि इस्लाम-पूर्व काल में आरामाइक (प्राचीन सीरियाई) शायद वहाँ सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा थी। लेकिन छठी शताब्दी तक आते-आते अरबी भाषा महत्वपूर्ण हो गई और वह इस क्षेत्र में लिखी और बोली जाने लगी। इस्लामिक युग के सौ साल पहले अरबी लिपि अस्तित्व में आ गई थी। यह आरामाइक से ही ली गई थी, जिस पर नबातियन लिपि का प्रभाव था और जिसे बाद में सीरियाई यहूदियों ने पुनः आकार दिया।

अरबी धर्म की भाषा भी थी। इराकी और हिमियाराइट ईसाईयों ने चौथी शताब्दी में बाईबिल के न्यू और ओल्ड टेस्टामेंट का अनुवाद अरबी में किया था। ईसाई पूजा (liturgies) पद्धति तथा प्रार्थना की किताबें अरबी भाषा में लिखी गई थीं। मदीना के अरबों ने यहूदी स्कूलों में भी अरबी, आरामाइक और हिब्रू सीखी होगी। वहाँ के बिखरे हुए अरब कबीलों के लिए एक समान भाषा उन्हें एकीकृत करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक था। पांचवी सदी के अंत तक अरबी भाषा की एक विशिष्ट भाषाई पहचान विकसित हो चुकी थी। पैट्रिशिया क्रोन का मानना है कि छठी शताब्दी में अरबों में उल्लेखनीय 'सांस्कृतिक एकरूपता' मौजूद थी।

अरब कविताओं का बहुत आदर करते थे। छठी शताब्दी से अरबी में एक विशेष शैली वाली कविताएं रची जाने लगीं, जिन्हें *रजाज़* कहा जाता था। प्रत्येक कबीले के अपने-अपने कवि थे। ये कवि अपने कबीले की वीरता और श्रेष्ठता का बखान करने वाली कविताएं सुनाकर

अपने श्रोताओं का मनोरंजन करते थे। *रजाज़* के अलावा कविता का एक और विकसित रूप भी अरेबिया में सामने आ रहा था, जिसे संबोधन गीत या *कसीदा* (Ode) कहा जाता था। ये कवितायें लंबी होती थीं तथा उन्हें गाकर सुनाया जाता था। *कसीदा* का एक विशेष रूप *मुआलकात* अथवा प्रलंबित कविताएं था जो उन दिनों अरब प्रायद्वीप में बेहद लोकप्रिय हो गया था। इमरुल क़ैस इन *मुआलकात* के आरंभिक और प्रसिद्ध रचियताओं में से एक थे। ऐसा माना जाता है कि वे इस्लाम-पूर्व अरब के प्रथम कवि थे। *मुआलकातों* की रचना करने वाले कुछ दूसरे मशहूर रचनाकारों में तराफा (बक्र कबीला के) ज़ुहैर (बानू मुज़ाइना कबीला के) तथा लबीद (हवाज़ीन के बनू अयीर कबीले से संबंधित) शामिल थे।

बोध प्रश्न-4

1) ऊँटों वाली खानाबदोशी की अवधारणा का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए।

....

....

....

....

....

2) इस्लाम-पूर्व अरब के साहित्य पर एक टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

3) खाली स्थानों को भरिए:

   i) सासानियों ने यमन में .... के खनन् कार्य को विकसित करने में मदद की।

   ii) बहरीन मक्का को .... का निर्यात करता था।

   iii) ऊँटों वाले घुमंतू .... और दक्षिणी सागर के वाणिज्य में शामिल हुए।

   iv) खजूर के पेड़ों को अरब में .... की तरह समझा जाता था।

12.9 सारांश

इस इकाई में इस्लाम पूर्व अरेबिया के संस्थागत ढांचे के सामान्य विवरण की चर्चा की गई है। इसमें कबीलाई व्यवस्था की विशेषताओं के साथ उनके रीति-रिवाजों तथा धार्मिक अनुष्ठानों को रेखांकित किया गया है। अरबों के सामाजिक ढांचे और समाज के विभिन्न अवयवों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें वहां के व्यापारिक नेटवर्क तथा आर्थिक स्थितियों का भी विवरण दिया गया है। इकाई में कबीलाई प्रशासन की प्रकृति के बारे में बताया गया है। इस्लाम-पूर्व काल में साहित्य के विकास का भी संक्षिप्त विवरण शामिल किया गया है।

12.10 शब्दावली

बद्दू (Bedouin) : बद्दू अरब के वे खानाबदोश कबीले थे जो अरब प्रायद्वीप, इराक, लेवांत और उत्तरी अफ्रीका के रेगिस्तानों में रहते थे। यह शब्द अरबी के *बदावी* (रेगिस्तान में रहने वाले) शब्द से बना है। ज़्यादातर वे इस्लाम के अनुयायी थे। हालांकि उपजाऊ चन्द्राकार क्षेत्र (Fertile Crescent) में रहने वाले उनमें से कुछ ईसाई भी थे। *ओल्ड टेस्टामैंट* में उनका जिक्र केदाराइट्स के रूप में हुआ है। असीरियन उन्हें अराबा कहते थे। और खुद वे अपने आप को अरब बुलाते थे।

हेजाज़/हिजाज़ : अल-हेजाज़/हिजाज़ इस्लाम की पवित्र भूमि है। भौगोलिक रूप से यह सउदी अरब के पश्चिमी भाग में स्थित है, जहाँ इस्लाम के दोनों सबसे पवित्र शहर मक्का और मदीना स्थित हैं।

चन्द्राकार उपजाऊ क्षेत्र (Fertile Crescent) : उपजाऊ क्रेसेंट एक चन्द्राकार क्षेत्र है, जिसमें आज के आधुनिक देश इराक, इजराइल, फिलिस्तीन क्षेत्र, सीरिया, लेबनान, मिस्त्र, जार्डन, तुर्की का दक्षिणी छोर तथा ईरान का पश्चिमी छोर शामिल हैं।

12.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) उप-भाग 12.2.1 देखें

2) उप-भाग 12.2.1 देखें

3) (i) ✓ (ii) ✓ (iii) ✗

बोध प्रश्न-2

1) उप-भाग 12.3.1 देखें

2) उप-भाग 12.3.2 देखें

3) (i) b, (ii) c, (iii) a

बोध प्रश्न-3

1) (i) उप-भाग 12.6.1 देखें (ii) उप-भाग 12.6.2 देखें (iii) उप-भाग 12.6.4 देखें

2) उप-भाग 12.6.1 देखें

बोध प्रश्न-4

1) उप-भाग 12.7.1 देखें

2) उप-भाग 12.8 देखें

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

3) (i) चांदी और तांबा, (ii) अनाज, (iii) भूमध्यसागरीय, (iv) माँ और मौसी

12.12 संदर्भ ग्रंथ

फारूकी, अमर, (2002) *अर्ली सोशल फार्मेशंस*, संशोधित संस्करण, (नई दिल्लीः मानक पब्लिकेशंस प्रा. लि).

हॉजसन, मार्शल जी. एस., (2004) *द वेंचर ऑफ इस्लाम*, भाग-1, *द क्लासिकल ऐज ऑफ इस्लाम* (लाहौर : वेन्गार्ड बुक्स प्रा. लि.).

होल्ट पी.एम, एन के. एस. लैंबटन एवं बर्नार्ड लेविस, (1970) *द कैंब्रिज हिस्ट्री* ऑफ *इस्लाम*, भाग-1, *द सेंट्रल इस्लामिक लैंड्स* (कैंब्रिजः कैंब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस).

लेपिडस, इरा एम., (2012) *इस्लामिक सोसायटीज टू द नाइनटींथ सेंचुरीः ए ग्लोबल हिस्ट्री* (नई दिल्लीः कैंब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस).

रॉबिंसन, चेज एफ., (सं.) (2010) *द न्यू कैंब्रिज हिस्ट्री ऑफ इस्लाम, भाग*-1, *द फोर्मेशन ऑफ द इस्लमिक वर्ल्ड, सिक्स्थ टु एलेवेंथ सेंचुरीज़* (कैंब्रिजः कैंब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस).

रॉडिंसन, मैक्सिम, (1971) *मोहम्मद* (एलेन लेनः द पेंगुईन प्रेस).

12.13 शैक्षणिक वीडियो

अरेबिया बिफोर इस्लाम
https://www.youtube.com/watch?v=HDjjp4Nf73I

गॉड्स ऑफ अरब्स बिफोर इस्लाम
https://www.youtube.com/watch?v=3q7EfeFJ7Jg

इकाई 13 इस्लाम का उदय और विस्तार*

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 पैगंम्बर मुहम्मद और इस्लाम का आगमन

13.3 आधुनिक इतिहासलेखन सम्बन्धी दृष्टिकोण

13.4 इस्लाम के उदय से संबंधित मत : इतिहासलेखन पर कुछ पुनर्विचार

13.4.1 मक्का व्यापार मत

13.4.2 देशीय मत

13.4.3 संशोधनवादी मत

13.5 पैगंम्बर मुहम्मद की मृत्यु के बाद इस्लाम का प्रसार

13.6 इस्लाम और पश्चिम : धर्मयुद्ध

13.7 सारांश

13.8 शब्दावली

13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.10 संदर्भ ग्रन्थ

13.11 शैक्षणिक वीडियो

13.0 उद्देश्य

वर्तमान इकाई पहले चार पवित्र खलीफाओं के काल तक इस्लाम के उदय को समाविष्ट करती है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- अरब प्रायद्वीप में इस्लाम के उदय का मूल्यांकन कर पायेंगे,
- इस्लाम-पूर्व अरब के सामाजिक-राजनैतिक, आर्थिक और धार्मिक परिदृश्य को जान सकेंगे,
- अरब प्रायद्वीप में इस्लाम के उद्भव के बारे में विभिन्न दृष्टिकोणों को समझेंगे,
- अरब प्रायद्वीप में इस्लाम के उदय से सम्बन्धित बुनियादी मतों को जानेंगे,
- चार पवित्र खलीफाओं के अधीन इस्लामिक विस्तार के सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया को जानेंगे, और
- सातवीं से तेरहवीं शताब्दी के दौरान समस्त यूरोप और मध्य पूर्व और मगरिब को झकझोर देने वाले दीर्घकालिक धर्मयुद्धों (Crusades) की परिस्थितियों को समझ पायेंगे।

* डॉ. समाना ज़फर, डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री एन्ड कल्चर, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

13.1 प्रस्तावना

छठी शताब्दी सी ई में अरब प्रायद्वीप में, विशेष रूप से हेजाज/हिजाज़ में एक घटना घटी जिसका पश्चिम एशिया, यूरोप और मध्य एशिया पर व्यापक प्रभाव पड़ा और जिसने विश्व के इतिहास का मार्ग बदल दिया। यह घटना इस्लाम का उदय था। यह आन्दोलन इतना तीव्र था कि इसकी शुरुआत से आधी सदी के भीतर ही खलीफाई साम्राज्य अच्छी तरह से स्थापित हो गया और एक सदी के भीतर, इस्लाम एक विश्व स्तर का धर्म बन गया।

13.2 पैगंम्बर मुहम्मद और इस्लाम का आगमन

सातवीं सदी के शुरुआती काल में पश्चिम एशिया में एक ऐसी दुनिया का सम्मिश्रण मौजूद था जिसमें एक तरफ सुसंस्कृत आबाद दुनिया थी और दूसरी तरफ इसके सीमांत प्रदेश में वह दुनिया थी, जो अपने उत्तर में स्थित पड़ोसियों के निकट संपर्क में थी और स्वयं उन संस्कृतियों के प्रभाव में आ रही थी। बाइज़ेंटाइन (1453 में ऑटोमन से पराजित हुआ) की शक्ति और सासानिद साम्राज्य (651 में अरबों से हार गया) पतन की ओर अग्रसर थे, जबकि अरब प्रायद्वीप में बसे कबीलाई समुदाय अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर रहे थे और उनमें से कुछ सीमान्त क्षेत्रों में सीरिया और इराक की राजनीति में सक्रिय भाग ले रहे थे। जल्द ही एक नयी राजनीतिक व्यवस्था का निर्माण हुआ जिसमें शासक समूह का गठन पहले के साम्राज्यों के लोगों के द्वारा नहीं बल्कि पश्चिमी अरब विशेष रूप से हेजाज़ के अरबों द्वारा किया गया था।

इस नयी राजनीतिक व्यवस्था ने ईश्वरीय आह्वान के रूप में खुदा द्वारा मुहम्मद को दिये गये इलहाम (revelation) [*कुरान* के रूप में] से स्वयं को जोड़ा। अबुल कासिम मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह का जन्म 570 सी ई में मक्का में हुआ था। वह कुरैश कबीले के हाशिम कुल से संबंध रखते थे। कुरैशों ने खुद को व्यापार और वाणिज्य के क्षेत्र में भली-भांति स्थापित किया हुआ था और उनकी गिनती अरब के सबसे धनी व्यापारियों में होती थी, हालांकि मुहम्मद का कुल इसके भीतर सबसे प्रमुख नहीं था। व्यापार में उनकी भूमिका के कारण, वे प्रायद्वीप के एकमात्र सबसे शक्तिशाली कबीले के रूप में उभरे। वास्तव में, व्यापार एकमात्र ऐसा स्त्रोत नहीं था जिसने उनकी प्रमुखता स्थापित की। कुरैश कबीले के द्वारा काबा के धार्मिक स्थल का नियन्त्रण, जहाँ स्थानीय देवताओं की प्रतिमाओं को रखा गया था और जो प्रायद्वीप के लोगों के धार्मिक रूझान का केन्द्र था, ने कुरैश कबीले की प्रतिष्ठा को बढ़ाया। उन्होंने कुछ निश्चित मौसमों में मक्का के लिए होने वाली तीर्थ यात्राओं और उनके साथ लगने वाले मेलों को प्रोत्साहन दिया और साथ ही साथ इसके नजदीक ही एक तटस्थ स्थान (अराफात) और उस क्षेत्र के अन्य बाजारों को भी प्रोत्साहन दिया। मुहम्मद अपने चाचा अबु तालिब की देखरेख में एक अनाथ के रूप में बड़े हुए थे। उन्होंने खदीजा नामक एक सम्पन्न विधवा के लिए कार्यरत एक व्यापारी के रूप में अपनी काबिलियत सिद्ध की।

अपने जीवन के तीसरे दशक में मुहम्मद इन प्रश्नों में तल्लीन हो गये कि सत्य और शुचिता से भरा अर्थ पूर्ण जीवन कैसे जीया जाये। उन्होंने शहर के बाहर स्थित हिरा पर्वत पर एक गुफा में एकांत समय में मनोयोग से ध्यान किया। उन्होंने स्वयं को कुरैश कबीले के संस्कारों और रीति-रिवाजों से अलग नहीं किया और जो वास्तव में उनके हमेशा प्रिय बने रहे। लेकिन उन्होंने कुछ और हासिल करने की कोशिश की जो उन परम्पराओं में मौजूद नहीं था। चालीस साल की उम्र के आसपास, हिरा पर्वत में अपने एकातंवास के दौरान उन्होंने एक ऐसी वाणी सुनी और ऐसा अलौकिक दृश्य अनुभव किया जिसमें उन्हें उस ईश्वर की पूजा करने के लिए आह्वान किया, जिसने दुनियाँ को बनाया था – एकेश्वरवादियों का ईश्वर। अपनी पत्नी, खदीजा द्वारा प्रोत्साहित किये जाने पर, उन्होंने स्वयं परमेश्वर से आने वाले आह्वानों

को स्वीकार किया। तत्पश्चात्, उन्हें और संदेश मिले, जिसकी व्याख्या उन्होंने दिव्य इलहाम (revelation) के रूप में की, और उनकी प्रार्थनाओं का सस्वर पाठ नये पंथ का प्रमुख तत्व बन गया। उन ईश्वरीय संदेशों को सामूहिक रूप से *कुरान* कहा जाता था। कुछ समय तक, केवल उनकी पत्नी और कुछ करीबी दोस्त उनके साथ पंथ के अनुयायी बने। लेकिन कुछ वर्षों के बाद ईश्वरीय संदेशों ने उन्हें निर्देश दिया कि वह अपने कुरैश कबीले के सदस्यों से भी परम ईश्वर की पूजा का आह्वान करें। यदि वे इन्कार करते हैं तो उन्हें आने वाली विपत्तियों की चेतावनी दें। एक व्यक्तिगत एकेश्वरवादी से शुरू होकर उन्हें अपने लोगों के लिए पैगम्बर बन जाना था।

जैसे-जैसे मुहम्मद के लिए समर्थन बढ़ता गया, कुरैश के प्रमुख परिवारों के साथ उनके सम्बन्ध खराब होते चले गये। उन्होंने उनके ईश्वर के दूत होने के दावे को स्वीकार नहीं किया और उन्हें ऐसा माना गया कि उन्होंने उनकी जीवन पद्धति पर आक्षेप किया था। मुहम्मद की स्थिति और कठिन हो गई जब एक ही वर्ष में खदीजा और अबु तालिब की मृत्यु हो गई। जैसे-जैसे शिक्षाओं का विस्तार हुआ, स्थापित मान्यताओं के अनुयायियों का विरोध मुखर होता गया। मुहम्मद ने महसूस किया कि अपने लोगों की सुरक्षा के लिए, कुरैश के प्रतिरोध पर काबू पाने के लिए और अपने अनुयायियों की संख्या बढ़ाने के लिए, कुछ राजनैतिक आधार आवश्यक था। अंत में, उनकी स्थिति इतनी कठिन हो गई कि 622 में उत्तर की ओर 200 मील की दूरी पर स्थित एक मरुद्वीप याथरिब, जिसे बाद में मदीना के नाम से जाना गया, में शरण के लिए उन्होंने मक्का छोड़ दिया। 622 सी ई में मदीना की ओर किए गए इस गमन को *हिजरा* के नाम से जाना जाता है, जिस तिथि से मुस्लिम संवत् शुरू हुआ।

मदीना एक कृषि आधारित मरूद्वीप था। मक्का की तरह यह भी एक ही कबीले के बजाय विभिन्न कबीलों का निवास था, लेकिन मक्का के विपरीत यहां प्रमुख कबीलियाई समूहों – अव्स और खज़राज – के बीच चिरस्थायी तीक्ष्ण कलह थी, जो मदीना के अस्तित्व के लिए कई बार खतरा बनी। इसके अलावा, मक्का की तरह मदीना भी सामाजिक परिवर्तनों के दौर से गुजर रहा था जिसने बद्दू (Bedouin) भाईचारे को कमज़ोर कर दिया था। चारागाही जरूरतों की बजाए कृषि ने इसकी अर्थव्यवस्था को संचालित किया, और इसके सामाजिक जीवन का संचालन नातेदारी सम्बन्धों की बजाए अधिक से अधिक स्थानिक निकटता द्वारा प्रभावित हो रहा था। मदीना के निवासियों द्वारा उनका स्वागत किया गया और उन लोगों ने उन्हें अपने विवादों के मध्यस्थ (पंच) के रूप में स्वीकार किया। एक ऐसे समाज में जिसमें कोई सामान्य कानून या सरकार नहीं थी, वहाँ एक धार्मिक दृष्टि वाला व्यक्ति जो न्याययुक्त, व्यवहार कुशल और बुद्धिमान था, अक्सर बैरी कुलों द्वारा मध्यस्थ के रूप में चुना जाता था। उनके प्रारंभिक जीवनी लेखकों ने ऐसे समझौतों की इबारत को संरक्षित किया है जिसमें एक तरफ मुहम्मद के अनुयायियों और दूसरी तरफ दो प्रमुख कबीलों अव्स और खज़राज के साथ ही कुछ यहूदी समूहों के बीच हस्ताक्षर किये गए हैं।

मदीना से मुहम्मद ने अपनी शक्ति को सुदृढ़ करना शुरू किया और जल्द ही कुरैश के साथ एक सशस्त्र संघर्ष प्रारंभ हुआ। समुदाय का मानना था कि जो न्यायोचित था उसके लिए लड़ने के लिए युद्धरत होना आवश्यक था। पहले *मुहाजिरीन,* जो निर्वासित मक्कावासी थे ने, धन प्राप्ति के लिए मक्का के काफिलों पर छापे मारे। यह छापे जल्दी ही लड़ाई में बदल गये। 624 तक, मुहम्मद ने मक्का की अपेक्षाकृत बड़ी सेना को बद्र के युद्ध में हराकर अरब में दूर–दूर तक जबरदस्त प्रतिष्ठा प्राप्त की। इसे दिव्य कृपा के रूप में माना गया जिससे कुछ बद्दू कबीले, जिन्हें काफिले की रक्षा करने की जिम्मेदारी हासिल थी, वे दल-बदल कर मुहम्मद के पक्ष में आ गए। बाद के वर्षों में मक्कावासियों ने पहल करके पहले उहुद (625) की लड़ाई में और फिर खंदक (627) की लड़ाई में मुहम्मद और मदीना पर आक्रमण किये।

हालांकि पहले मुकाबले में मुहम्मद हार गये लेकिन दोनों लड़ाइयां इनके लिए लाभप्रद साबित हुईं। हालांकि उन्हें मक्का की दुष्कर चुनौतियों का सामना करना पड़ा। लेकिन हर बार परिस्थितियों ने उन्हें मदीना के यहूदी कुलों के साथ संबंध सुदृढ करने का मौका दिया।

मुहम्मद का उद्देश्य आजन्म मक्का से लड़ना नहीं था बल्कि इसके निवासियों को इस्लाम में धर्मांतरित करना था। इसलिए, उन्होंने खंदक के युद्ध के बाद विराम दिया। 628 सी ई में मुहम्मद ने अपने अनुयायियों के साथ काबा की तीर्थयात्रा की। इरा लेपिडस के अनुसार, उन्होंने ऐसा यह दिखाने के लिए किया कि इस्लाम मूलतः एक अरब धर्म था और जो मक्का के तीर्थ स्थल के उन रीति-रिवाजों को संरक्षित करेगा, जिनमें मक्का की बहुत बड़ी भागेदारी थी। अब्राहम एक उच्चस्तरीय एकेश्वरवादी धर्म और मक्का के पूजा स्थल के संस्थापक थे, यह विचार पहले से प्रचलन में था, अब उन्हें ना तो एक यहूदी ना ही ईसाई, बल्कि दोनों के एक समान पूर्वज के रूप में और मुसलमानों के पूर्वज के रूप में भी देखा जाने लगा था। कुरैश और मक्का के साथ मुहम्मद के संबंधों में भी बदलाव आया। मक्का की तीर्थयात्रा (हज) को जाते हुए मुहम्मद ने अल-हुदैबिया में एक युद्ध विराम सन्धि की जिसमें मक्का निवासी तीर्थयात्रा के लिए मुसलमानों को प्रवेश की अनुमति देने पर सहमत हो गये और मुहम्मद ने पैगम्बर माने जाने की शर्त नहीं रखी। विशेषतः यह असमान समझौता था। इस समझौते के मुताबिक मक्का के नाबालिग जो बिना माता-पिता की अनुमति के इस्लाम अपनाने जाएंगे, उन्हें वापस लौटा दिया जाएगा जबकि मुस्लिम धर्म त्यागी वापस नहीं लिए जाएंगे। हालांकि यह समझौता असमान था पर मुहम्मद को इससे विशेष लाभ प्राप्त हुआ। मुहम्मद अब एक मान्य सत्ता के रूप में उभरे और मक्का ने उन्हें हराने के अपने प्रयासों को छोड़ दिया। मक्का में मुहम्मद के अनुयायियों की संख्या में लगातार वृद्धि होती रही। सन् 630 में, मक्का शहर के सत्ताधारियों ने मक्का को मुहम्मद को सुपुर्द कर दिया, और उन्होंने बिना किसी प्रतिरोध के मक्का अधीन कर लिया, एवं उनके द्वारा सभी को माफी दे दी गई। उनके द्वारा नई व्यवस्था के सिद्धान्तों को घोषित किया गया जिसके अन्तर्गत उन्होंने काबा के पुण्य स्थल की निगरानी या तीर्थयात्रियों की जल व्यवस्था के अतिरिक्त सभी पारंपरिक विशेषाधिकार, वंशानुगत दावा, या मालिकाना हक के हर दावे को समाप्त कर दिया। वर्ष 632, में मुहम्मद का निधन हो गया।

बोध प्रश्न-1

1) पैगम्बर मुहम्मद के प्रारंभिक जीवन पर पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

....

....

2) पैगम्बर मुहम्मद की शक्ति में वृद्धि को रेखांकित कीजिए।

....

....

....

....

....

3) अरब प्रायद्वीप में इस्लाम के आगमन की प्रक्रिया का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

....

13.3 आधुनिक इतिहासलेखन सम्बन्धी दृष्टिकोण

प्रारंभिक इस्लाम का इतिहास लिखने के मूल रूप से चार प्रमुख आधुनिक दृष्टिकोण हैं:

i) **वर्णनात्मक दृष्टिकोण** : इस्लाम के अध्ययन संबंधी इस दृष्टिकोण में इस्लाम और उसके प्रारंभिक इतिहास का वर्णन करने के लिए पहली बार इस्लामी स्त्रोतों का उपयोग किया गया। इसके लेखक समृद्ध जानकारी के लिए मुस्लिम विद्वानों द्वारा लिखे साहित्य की तरफ आकर्षित हुए और उनका यकीन था कि चूंकि यह इस्लामी स्त्रोत हैं, इसलिए यह इस्लाम के कम पक्षपात पूर्ण वर्णन को प्रस्तुत करेंगे। यह विवाद सम्बन्धी परंपराओं की धर्मान्धता से आगे बढ़ने की दिशा में एक कदम था, लेकिन इसने इस्लामी साहित्यिक स्त्रोतों के दस्तावेज़ीय मूल्य का अधिक आंकलन किया। गिब्बन की पुस्तक द *डिक्लाइन एन्ड फॉल ऑफ द रोमन एंपायर* में इस्लाम पर दिया गया प्रकरण इस श्रेणी में खरा उतरता है। यह 18वीं-19वीं शताब्दियों में एक प्रमुख दृष्टिकोण था।

ii) **स्रोत-आलोचनात्मक दृष्टिकोण** : समय बीतने के साथ, इतिहासकारों ने इस्लामी स्त्रोतों की सीमाओं को महसूस करना शुरू कर दिया। जैसा कि मध्ययुगीन स्रोतों में आमतौर पर सामान्य है, वे कभी-कभी विरोधाभासी विवरण देते हैं। विद्वानों ने इन विरोधाभासों का अध्ययन किया और इसके लिए अलग-अलग सूचना देने वालों को जिम्मेदार ठहराया, जिनके पास एक रिपोर्टर के तौर पर सूचना देने के अलग-अलग लक्ष्य और विश्वसनीयता के अलग स्तर थे (व्यक्तिगत सूचनाओं को सूचनाकारों की श्रृंखला जिसे ***सनद/इस्नाद*** के नाम से जाना जाता है, के माध्यम से समाविष्ट किया जाता था)। प्रारंभिक सूचना देने वालों की समीक्षा से स्त्रोत-आलोचनात्मक दृष्टिकोण उभरा। यह विचार धारा 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में विकसित हुई। एक विचार विकसित हुआ कि प्रारंभिक रिर्पोटों के एक तुलनात्मक विश्लेषण से इस्लामिक इतिहास का पुनर्निर्माण किया जा सकता है। सभी रिपोर्टों की तुलना करके 'कमजोर' सूचना देने वालों से जुड़ी रिपोर्टों को अलग किया जा सकता था ताकि बाद की किंवदंतियों से पहले की ऐतिहासिक सामग्री को अलग किया जा सके।

iii) **परंपरा-आलोचनात्मक दृष्टिकोण** : इसके अधिवक्ताओं ने इस धारणा को चुनौती दी कि पारंपरिक-इस्लामिक साहित्य में उपलब्ध जानकारी पहले के दस्तावेजों की प्रतियों का प्रतिनिधित्व करती हैं या वर्णन करने वालों की एक श्रृंखला के माध्यम से एक चश्मदीद गवाह का वर्णन बनाती है। उनका तर्क है कि हम पाते हैं कि कई साहित्यिक रचनाओं में प्राप्त वर्णन अतीत की मौखिक परंपराओं को केवल लिखित रूप में पेश करते हैं। वर्णनों का उपयोग अतीत के पुनर्निर्माण में बड़ी सावधानी के साथ किया जाना चाहिए क्योंकि आमतौर पर यह जानना असंभव सा है कि संचार के दौरान किस सामग्री को छोड़ा गया, किसको जोड़ा या बदला गया। इस सम्बन्ध में अग्रिम

अन्वेषक इग्नाज गोलज़िहर की रचना *मोहमडन स्टडीज* (1889-90) ने यह अन्तर्दृष्टि प्रस्तुत की कि पैगम्बर के बारे में बहुत से वर्णन बाद में जोड़े गए। 20वीं शताब्दी के अनेक विद्वानों जैसे जोसेफ शख्त, एम. जे. किस्टर, रूबिन आदि ने विस्तृत परंपरा-आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किये।

iv) **संशयवादी दृष्टिकोण** : स्रोतों की जटिलताओं ने अनेक लोगों को यह दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित किया। यह पारंपरिक रूप से संप्रेषित लगभग सभी सामग्री की ऐतिहासिकता को अस्वीकार करता है। इस समूह के विद्वानों का मूल तर्क यह है कि परंपरा में वास्तव में कोई सार, सत्य सामग्री का अंश नहीं हो सकता है, और भले ही इसमें हो तब भी यह संभव नहीं है कि इसको संक्षिप्तीकरण, विखंडन और पुनर्व्याख्या की एक के बाद एक विकृतियों की कई परतों से सुलझाकर अलग किया जा सके। संशयवादी मत ने प्रारंभिक इस्लामी इतिहास के स्रोतों की विश्वसनीयता और इसके प्रति विद्वानों के उचित रवैये जैसे प्रासंगिक सवाल उठाये, लेकिन कभी-कभी इनका दावा अतिरंजित लगता है। इसके अलावा यह दृष्टिकोण नकारात्मक है। हालांकि यह इस पर सवाल करता है कि 'क्या हुआ' लेकिन इसने अभी तक इसके वैकल्पिक पुनर्निर्माण की कि 'क्या होने की संभावना रही होगी', की पेशकश नहीं की। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय योगदान पेट्रिशिया क्रोन की मक्कन *ट्रेड एंड द राइज़ ऑफ इस्लाम,* मिशेल कुक की पुस्तक *हैगरिज्म* (1977) और जॉन वान्स बोरो की *द सेक्टेरियन मिल्यू* (1978) के थे।

यह अलग-अलग दृष्टिकोण उत्तरोत्तर ऐतिहासिक अवधियों में उभरे, लेकिन अपने पूर्ववर्तियों को उखाड़ने की बजाए प्रत्येक नया दृष्टिकोण पूर्ववर्ती दृष्टिकोणों के साथ सह-अस्तित्वों में रहा और सभी दृष्टिकोणों को भिन्न-भिन्न रूप में अभ्यास में लाया जाता रहा है।

बोध प्रश्न-2

1) प्रारम्भिक इस्लाम के इतिहास लेखक के वर्णनात्मक दृष्टिकोण को स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

....

2) प्रारंभिक इस्लामी इतिहास का अध्ययन करने के लिए स्त्रोत-आलोचनात्मक दृष्टिकोण क्या है?

....

....

....

....

....

3) क्या आप संशयवादी प्रणेयताओं से सहमत हैं जो सभी पारंपरिक रूप से सन्प्रेषित सामग्री की ऐतिहासिकता को अस्वीकार करते हैं?

....

....

....

....

....

13.4 इस्लाम के उदय से संबंधित मत : इतिहासलेखन पर कुछ पुनर्विचार

इस्लाम के उदय के सम्बन्ध में तीन बुनियादी मत हैं:

1) मक्का व्यापार मत/व्यापारिक धन मत (Meeca Trade Theory/Commercial Wealth Theory)

2) देशीय मत (Nativist Theory)

3) संशोधनवादी सिद्धान्त (Revisionist Theory)

13.4.1 मक्का व्यापार मत

मक्का व्यापार विचार के प्रतिपादक मोन्टगोमरी वॉट थे। उन्होंने नये धर्म के उदय को गहरे सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों का नतीजा माना और यह देखने की कोशिश की कि कैसे और क्यों इसे कम समय के भीतर अरब कबीलों के बीच इतनी व्यापक स्वीकृति प्राप्त हुई। मोन्टगोमरी वॉट, जिन्होंने मुहम्मद और उनके जीवन पर कई किताबें लिखी हैं जैसे *मुहम्मद एट मक्का* और *मुहम्मद एट मदीना,* इस्लाम के उद्‌भव की पूर्व संध्या पर समाज के स्वरूप की जाँच करते हैं। वह इस्लाम के उदय को उस परिवर्तन की अनुक्रिया के रूप में देखते हैं जो व्यापार और उस क्षेत्र में कुछ कबीलों द्वारा एक स्थान पर बसे रहने की जीवन शैली को अपनाने के कारण आकार ले रहा था। मक्का दो मुख्य व्यापार मार्गों के सन्धि स्थल पर स्थित था जिनमें एक यमन और हिन्दमहासागर के भू-भाग से सीरिया और हेजाज़ के पहाड़ी क्षेत्र से होता हुआ भूमध्यसागरीय भू-भाग तक उत्तर और दक्षिण दिशा में जाता था; और दूसरा, जो कम महत्वपूर्ण था, दक्षिण-पश्चिम दिशा में इराक, ईरान और मध्य यूरेशिया से अबीसीनिया और पूर्वी अफ्रीका तक जाता था। मक्का के व्यापारी लंबी दूरी के व्यापार से सम्बद्ध थे। कुरैश लोगों ने उत्तर-दक्षिण व्यापार मार्ग को नियंत्रित किया था और उन्होंने इस लाभदायक व्यापार के माध्यम से अपनी समृद्धि को बढ़ाया। मक्का में ही सर्वाधिक विशिष्ट परिवर्तन हुए। मक्का के व्यापारिक विस्तार के चलते परंपरागत संबंधों की क्षति हुई और समाज में नए तनाव पैदा हुए। व्यापार से अर्जित धन और तीर्थयात्रियों से होने वाली कमाई ने सभी को समान रूप से लाभ नहीं पहुँचाया। मक्का के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार तन्त्र के केन्द्र के रूप में उदय ने कई प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न कीं: बृहद् सामाजिक स्तरीकरण, बढ़ती हुई सामाजिक विषमताएँ और गरीब वर्गों की धनी वर्गों पर बढ़ती निर्भरता। इसके कारण विभिन्न स्तरों पर टकराव हुआ। कुरैश लोगों के अपेक्षाकृत समान्य कबीलाई संगठन में इस नई स्थिति से निबटने के लिए कोई व्यवस्था नहीं थी। इसके अलावा, ऐसे कबीले भी थे जो सीमित पैमाने पर कृषि को अपना रहे थे और अन्य कबीले जो अरेबिया की सीमा पर मौजूद थे व बसे हुए समाजों के दायरे में आ रहे थे। मुहम्मद के द्वारा एकता का आह्वान इन नयी उभरती सामाजिक विषमताओं को प्रत्युत्तर था और इस्लाम ने इन कबीलों को सामाजिक संगठन के लिए एक व्यवस्था प्रदान की। इस परिदृश्य में मुहम्मद उभरे और उनके उद्‌घोषित संदेश का प्रयोजन कबीलाई इकाईयों को पूरी तरह भंग करना था जिससे एक एकीकृत समुदाय की निर्मिती हुई। चूंकि आन्दोलन ने ईश्वर के सम्मुख सभी जनों की समानता की

घोषणा की, सामाजिक असमानताओं से त्रस्त समुदायों ने अब अधिक सामाजिक-आर्थिक समानता हासिल कर ली या उन्हें इसकी अपेक्षा थी। आन्दोलन ने सामाजिक न्याय पर जोर दिया और अरब समाज में व्याप्त श्रेणीबद्ध वर्ग भिन्नता के सभी रूपों को अस्वीकृत किया। इस वैचारिक मत में पैगम्बर का उद्भव और उनके उपदेशों की सफलता की व्याख्या समकालीन सामाजिक समस्याओं के लिए प्रदान किये गये उनके समाधानों के संदर्भ में की गई है।

इसी तरह की राय अन्य इतिहासकारों जैसे रोडिन्सन ने *मुहम्मद* में, मार्शल होड्सन ने *वेंचर ऑफ इस्लाम* और एम. ए. शाबान की *इस्लामिक हिस्ट्रीः ए न्यू इन्टरप्रिटेशन 600-750 ईस्वीं* में भी प्रस्तुत की गई है।

13.4.2 देशीय मत

वॉट की यह परिकल्पना कि कुरैश लोगों के एक व्यापारिक अर्थव्यवस्था में रूपांतरित होने से मक्का की परंपरागत व्यवस्था क्षतिग्रस्त हो गई, जिससे सामाजिक और नैतिक दुर्भावना पैदा हुई, और मुहम्मद के प्रवचन इनका निदान थे, इस विचार को पेट्रिशिया क्रोन द्वारा चुनौती दी गई जिनका दावा है कि *मक्का विलासिता के साजो-सामान के बजाय सामान्य उत्पादों में व्यापार करता था*। जबकि वॉट ने तर्क दिया कि मक्का भारत, अफ्रीका और भूमध्यसागर के बीच लम्बी दूरी के व्यापार का पारगमन बिन्दु था। किस्टर की मान्यता को आधार बनाते हुए पैट्रिशिया क्रोन का दावा है कि यह व्यापार सामान्य किस्म का था। मक्का का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार चमड़े और कपड़े जैसी वस्तुओं पर काफी हद तक आधारित था। उन्होंने सवाल किया कि 'क्या वे चमड़े के सामान और कपड़ा व्यापार के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय आयामों वाले वाणिज्यिक साम्राज्य की स्थापना कर सकते थे?

व्यापार की वस्तुओं का अवलोकन करते हुए उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि मसालों का व्यापार बहुत कम होता था और सोने और चाँदी का कोई विनिमय व्यापार मौजूद नहीं था। अन्य वस्तुएं जैसे किशमिश, मदिरा, एवं गुलाम और अन्य चीजें विशेष रूप से अरेबिया के भीतर ही बेची गईं। चमड़ा वह वस्तु था जिसका बड़े पैमाने पर व्यापार होता था और इसके अलावा कपड़े, पशु और विविध खाद्य सामग्री, हालांकि कम उल्लिखत हैं, शायद उनका काफी व्यापार था।

पैट्रिशिया क्रोन ने तीन असहममि के बिन्दु प्रस्तावित कियेः **प्रथम,** यह एक पारगमन व्यापार नहीं था। मक्का के व्यापारियों को लंबी दूरी के व्यापारिक नेटवर्क में बिचौलियों के रूप में माना जाता था। वे दक्षिण अरब क्षेत्र और इथियोपिया से देशी और विदेशी वस्तुएँ एकत्र करते थे और सीरिया और इराक तक उनका परिवहन करते थे। लेकिन क्रोन के अनुसार उत्तर में बेची जाने वाली वस्तुएं उत्तरी अरब मूल की ही थीं ना कि भारतीय या दक्षिण-पूर्वी एशिया मूल की। दक्षिण अरब क्षेत्र से खरीदा गया इत्र उत्तर एवं हिजाज़ में पुनर्विक्रय के लिए ही जाता था, ना कि बाइज़ेंटाइन या ईरान साम्राज्य के लिए। इसके अलावा मक्का की कोई भी वस्तु, चाहे वह इत्र हो या अन्य वस्तुएँ वह इन क्षेत्रों में ही पुनर्वितरण के लिए नियत थीं। हिजाज़ के चमड़े की वस्तुएं और कपड़े और यमन का इत्र ये सब वस्तुएँ दक्षिण सीरिया के शहरों और हिरा के बाजारों के लिए था न कि एंटीऑक, कॉन्सटेनटिनोपल या टेसीफोन के लिए। **दूसरा,** यह उस तरह का व्यापार नहीं था जो यूनानी और 'फर्टाइल क्रेसेंट' (Fertile Crescent) के नाम से विख्यात उपजाऊ प्रदेश का ध्यान आकर्षित करता। अरब क्षेत्र के राजनैतिक महत्व का उल्लेख मिलता है लेकिन न तो ग्रीक, लेटिन, सीरियाई, अरामाईक, कॉपटिक और ना ही अरब के बाहर रचित किसी अन्य साहित्य में कुरैश और उनके व्यापारिक केन्द्रों का उल्लेख मिलता है। **तीसरा,** यह ऐसा व्यापार नहीं था जिसमें अरब क्षेत्र में किसी व्यापार मार्ग पर नियंत्रण की मान्यता निहित हो।

पेट्रिशिया का मत है कि स्त्रोतों में उल्लेख न होना खुद व्यापार की प्रकृति को स्पष्ट करती है, और अगर बड़े पैमाने पर व्यापार फैला होता तो यह अरब क्षेत्र के बाहर अवश्य ध्यान आकर्षित करता। इसलिए कुरैश लोग व्यापारी थे और इनकी व्यापारिक गतिविधियाँ इस क्षेत्र में बहुत पुराने समय से चली आ रही थीं। व्यापार मार्गों पर नियन्त्रण (यमन, सीरिया, इराक, इथियोपिया) की बात इसलिए अर्थहीन हैं और स्त्रोत ऐसा कोई दावा नहीं करते कि मक्का के लोगों का किसी भी व्यापारिक मार्ग पर नियन्त्रण था या उनका किसी क्षेत्र विशेष के निर्यात व्यापार पर प्रभुत्व था, अरब क्षेत्र के व्यापार के एकाधिकार की तो बात ही छोड़ दी जाए। स्पष्ट रूप से यह एक स्थानीय व्यापार था। पेट्रिशिया क्रोन के अनुसार मक्का के व्यापारी विलासिता की वस्तुओं की बजाए सामान्य वस्तुओं का व्यापार करते थे।

पेट्रिशिया इंगित करती हैं कि व्यापारिक धन-दौलत की यह छोटी अवधि, मक्का के समाज को बड़े बदलाव के लिए विवश करने वाली नहीं थी। आबादी की कबीलाई व्यवस्था, जो ना तो कभी उजाड़ी जा सकी थी और ना ही अपनी आर्थिक गतिविधियों के सम्बन्ध में एक भिन्न व्यवस्था को अपनाने के लिए मजबूर की जा सकी थी, उसे कमजोर करने के लिए व्यापारिक सफलता का एक सदी से अधिक समय लगता।

इस्लाम के द्वारा मक्का निवासियों को मूर्ति-पूजक दुश्मनों के रूप में देखा गया और उन पर नातेदारी सम्बन्धों और अन्य हिफाज़ती संबंधों की उपेक्षा करने के साथ-साथ ऐसी प्रवृति पालने का आरोप लगाया गया जिसमें शक्तिशाली, कमज़ोर को निगल जाते हैं। हालांकि, स्रोतों को देखकर ऐसा लगता है कि मक्का निवासियों को इस्लाम के बजाए अपनी परंपरागत जीवन शैली पसंद थी। स्रोतों के अनुसार इसके लिए उन्हें दंडित किया गया था। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इस्लाम का संदेश मदीना में स्वीकृत हुआ था। उन्होंने एकेश्वरवाद को स्वीकार किया। मक्कावासियों के धर्मांतरण के लिए पहले उन्हें जीतना पड़ा था। ऐसा लगता है कि जिन समस्याओं के मुहम्मद के पास समाधान थे, वे सभी मदीना के लोगों के सम्मुख व्याप्त समान समस्याएँ थीं।

पेट्रिशिया ने यह तर्क देने के बाद एक और सवाल उठाया कि मक्का का एक सामाजिक सुधार पूरे प्रायद्वीप को क्यों विस्फोटित कर देगा? स्पष्ट रूप से हमें उन मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए जो सिर्फ मक्का के लिए नहीं बल्कि पूरे अरब क्षेत्र के लिए एक समान थे। इस्लाम की उत्पत्ति कबीलाई ढाँचे में हुई। उनके मान्य देवता प्राकृतिक घटनाओं – वर्षा, उर्वरता, बीमारी आदि के सर्वोच्च स्रोत थे – जो मानव जीवन के लिए बहुत महत्वपूर्ण थे लेकिन मानव के नियन्त्रण से परे थे। उनके व्यावहारिक महत्व और इन घटनाओं को नियन्त्रण करने में वे जो सेवाएँ दे सकते थे, उसके लिए उनकी पूजा की गई। लेकिन उन्हें ना तो अपनी भक्ति के बदले भावात्मक प्रतिबद्धता, प्रेम और निष्ठा की आवश्यकता थी ना ही उन्होंने वह प्राप्त किया। देवता एक शक्तिशाली हस्ती से अधिक नहीं था और उसकी सेवा करने का मकसद यह था कि उससे अपेक्षा की जाती थी कि वह अपने सेवकों, भक्तों के पक्ष में अपनी शक्ति का उपयोग करेगा। वार्षिक महातीर्थयात्रा जैसी प्रथाओं को स्पष्ट रूप से किसी भी 'एक' 'अकेले' देवता के नाम पर आयोजित नहीं किया जाता था।

इस्लाम-पूर्व अरब क्षेत्र में मिथक, अर्थव्यवस्था और रीति-रिवाज कम विकसित थे। धार्मिक जीवन समय-समय पर पवित्र स्थलों की यात्रा तक सीमित था। वे प्रकृति और जीवन के गूढ़ अर्थ को लेकर जटिल सवालों में नहीं उलझे हुए थे। जैसे कि क्या मृत्यु ही महासमाप्ति थी? धर्म की अवधारणा प्रकृति और जीवन के अर्थ से संबंधित, 'अन्तिम सत्य' के रूप में मौजूद नहीं थी। इसलिए धर्मान्तरण किसी आध्यात्मिक संकट, धार्मिक पतन या मूर्ति पूजक अलोकप्रियता के कारण नहीं हुए थे। सामूहिक धर्मान्तरण से पता चलता है कि पैगम्बर मुहम्मद ने उन्हें एक कार्यक्रम, रणनीति एवं अरब राज्य निर्माण और विजय प्राप्ति हेतु एक मार्गदर्शक योजना दी।

ऐसा माना जाता है कि पैगम्बर मुहम्मद के जीवन में मोड़ तब आया जब वे कुरैश लोगों के पैतृक देवता पर आक्रामक हुए। उन्होंने अपने कबीले की आधारभूत नींव पर ही हमला किया। यह एकेश्वरवाद नहीं था जो मूर्ति पूजकों के पूजा स्थल या मक्का निवासियों के व्यापार के लिए किसी खतरे के रूप में सामने खड़ा था। मक्का निवासी अपने पूर्वजों पर आक्रमण को सहन करने के लिए तैयार नहीं थे। लेकिन मुहम्मद के मन में एक वैकल्पिक संप्रदाय की परिकल्पना थी। अपने पूर्वजों की अवमानना के द्वारा, उन्होंने प्रदर्शित किया कि उनके ईश्वर के लिए प्रचलित कबीलाई विभाजन अस्वीकार्य था। उन्होंने दर्शाया कि उनका ईश्वर एकमात्र और आराध्य पूर्वज दोनों था। अल्लाह अरबों के पूर्वज इब्राहिम के एकमात्र ईश्वर थे। चूंकि पैतृक देवताओं के इर्द-गिर्द समाज गठित हुए थे, इसलिए कि वह केवल अल्लाह है जिनके इर्द-गिर्द अरबों को फिर से इकट्ठा होना चाहिए और वे सभी पैतृक देवता जिन्होंने वर्तमान विभाजनों को प्रोत्साहित किया, वे मिथ्या थे।

यह वास्तव में दिलचस्प है कि मुहम्मद और उनके उत्तराधिकारी एक ऐसे क्षेत्र में एकीकरण लाने में सक्षम रहे जो कभी राजनीतिक रूप से एकजुट नहीं हुआ था। मदीना का समाज आपसी द्वन्द्वों के चलते विभाजित था, और यह समझने में मुश्किल नहीं होगी कि वह स्वेच्छा से पैगम्बर मुहम्मद के राजनैतिक कार्यक्रम को प्रयुक्त करने को क्यों तैयार हो गए? लेकिन मुहम्मद के समय में मौजूद अरब-जन राज्य संरचनाओं और एकीकरण की परिकल्पना से इतने आकर्षित क्यों हुए?

क्रोन का तर्क है कि उन्होंने राज्य निर्माण और सामरिक अर्जन का निर्देश दिया। सामरिक अर्जन (conquest) विजय के बिना, अरब एकीकरण संभव नहीं था। यह एक ऐसा समय था जब ईरानी और बाइज़ेन्टाइन लोग अरब प्रायद्वीप का अतिक्रमण कर रहे थे, और उनकी उपस्थिति पूरे प्रायद्वीप में महसूस की जा रही थी। अरब क्षेत्र विदेशी शासन के अधीन रह चुका था। ऐसे परिदृश्य में, इस्लाम एक *देशीय आन्दोलन* के रूप में उभरा, या दूसरे शब्दों में यह *विदेशी प्रभुत्व के प्रति एक आदिम प्रतिक्रिया* के रूप में उभरा। देशीय आन्दोलन इस मायने में आदिम थे कि उनमें शामिल लोग बिना किसी राजनैतिक रूप से संगठित लोग थे। पेट्रिशिया प्रारंभिक इस्लाम को विदेशी प्रभावों की घुसपैठ के विरोध में और अरबी जीवन शैली की आसक्ति से पैदा हुए *देशीय आन्दोलन* के रूप में देखती हैं। विदेशी प्रभावों की पहचान पैट्रिशिया उन मूल्यों के द्वारा करती है जो बाइज़ेंटाइन के प्रभाव स्वरूप और ईरानी प्रभुत्व के प्रयासों से आए थे। लेकिन क्रोन इस दृष्टिकोण से भी सहमत हैं कि अरब के कुछ हिस्सों में स्थायी आवास बनाकर रहने की प्रक्रिया चल रही थी जिसके कारण कबीलाई संबंधों की कीमत पर राज्य संरचना का विकास आवश्यक हो गया था।

पेट्रिशिया का मानना था कि पुरातन युग की महाशक्तियों – बाइज़ेंटाइन और सासानिद ईरान के अतिक्रमणों के विरूद्ध अरब प्रतिक्रिया को उत्तेजित करने के लिए मुहम्मद द्वारा एकेश्वरवाद का उपयोग किया गया था। हालांकि, अवधारणा की दृष्टि से आर्थिक और सैन्य साम्राज्यवाद और अरब राष्ट्रवाद के बारे में उनके विचार में अन्तर्निहित दोष हैं। उन्होंने अज्ञात के दायरे में संभावना को रखा है। लेकिन इस समय पर अरब क्यों महत्वपूर्ण हो गये? क्या इतना सफल आन्दोलन केवल विजय पर आधारित हो सकता है? पेट्रिशिया ने स्रोतों के मनमाना चयन से अपने तर्कों को लैस किया। यदि कुरैश लोगों की अन्य कबीलों के साथ वाणिज्य पर किए गए समझौतों की प्रणाली को गढ़ी हुई बात के रूप में खारिज कर दिया जाय, तब कुरैशों द्वारा स्थापित प्रभुत्व और मुहम्मद द्वारा विरासत में प्राप्त प्रभुत्व का कारण बताना और अधिक कठिन हो जाएगा। चूंकि मक्का में प्राकृतिक संसाधनों की कमी थी, इसलिए अनाज और खजूर जैसे खाद्य पदार्थों का आयात करना पड़ता था। इन्हें खरीदने के लिए उनके पास आय के कुछ स्रोत तो होने चाहिए थे।

आर.बी. सार्जेन्ट ने पेट्रिशिया की पुस्तक की समीक्षा करते हुए कहा कि निस्संदेह कुरैश लोगों की वाणिज्यिक गतिविधि को पश्चिमी लेखकों द्वारा बढ़ा-चढ़ाकर बताया गया है। लेमेन्स और उनके सिद्धान्त के अनुयायियों का तर्क है कि मक्का निवासियों को विरासत में जो व्यापार मिला, वह उस परिमाण का था जिसका वर्णन प्लिनी और *पेरीप्लस* में किया गया था (क्लासिकल युग के व्यापार के प्रारूप को ध्यान में रखते हुए)। डब्ल्यू. ए. वॉट ने इस आधार पर अपने मत को विकसित किया। बहरहाल, यह कुरैश लोगों के वाणिज्य के अस्तित्व को नकारता नहीं है। क्रोन ने इस दलील पर भी सवाल उठाया है कि कुरैश लोगों ने व्यापार के लिए उत्तरी यमन तक नियमित यात्राएं कीं और वस्तुओं का व्यापार किया। वह तर्क देती हैं कि ऐसी वस्तु जो सीरिया और बाइज़ेंटाइन में बहुतायत में उपलब्ध थी, उसके आयात करने में इन देशों को क्यों दिलचस्पी होनी चाहिए। क्रोन ने इस बात पर जोर दिया है कि हमें अन्य कारकों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है, जैसे कि *विदेशी दुर्लभ वस्तुओं की माँग, कीमतों में उतार-चढ़ाव, या राजनैतिक क्रियाकलापों के चलते उत्पन्न होने वाले अभाव*। वह यह नहीं मानतीं कि समुद्री डकैती जैसी दुर्घटना/गतिविधियाँ किसी महत्वपूर्ण सीमा तक व्यापार को प्रभावित करतें हैं। इसके विपरीत मौसमी परिस्थितियां और अन्य कारक भी समान रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। हालांकि, ऐसा प्रतीत होता है कि क्रोन का इस विषय पर प्रतिपादन पूरी तरह से यांत्रिक है और इस तरह की घटना की संभावनाओं के लिए कोई गुंजाइश नहीं छोड़ता है। दिलचस्प बात यह है कि एक ओर वह कबीलाई भावनाओं के बारे में बात करती हैं और दूसरी ओर सशक्त अरब चेतना की उपस्थिति की, यह दोनों विरोधाभासी हैं।

हालाँकि पेट्रिशिया क्रोन के लेखन की कई लोगों ने आलोचना की है, पेट्रिशिया की 1987 की रचना और उससे पहले की 1977 में मीशेल कुक (*हेगरिज्म*) की प्रकाशित रचना अपनी उत्तेजक प्रस्तुति के साथ इस्लाम की उत्पत्ति के बारे में विद्वानों के बीच गहन चर्चा का माध्यम बनी।

13.4.3 संशोधनवादी मत

फ्रेड डोनर ने एडिनबर्ग विश्वविद्यालय में दिये गए अपने व्याख्यान में ('द स्टडी ऑफ इस्लाम्स ओरिजिन्स सिन्स डब्ल्यू मॉन्टगोमरी वॉट्स पब्लिकेशंस', नवम्बर 23, 2015, यूनिवर्सिटी ऑफ एडिनबर्ग) इस्लाम की उत्पत्ति के विषय पर किये जा रहे संशोधनवादी कृतियों का एक व्यापक सर्वेक्षण किया। इन प्रथम संशोधनवादी कृतियों के आने से प्रारंभिक इस्लाम का अध्ययन पूरी तरह से पुनर्जीवित हो गया। वह इंगित करते हैं कि 1970 के दशक में इसमें एक आयाम और जोड़ा गया जो पीटर ब्राउन की युगान्तरकारी पुस्तक *द वर्ल्ड ऑफ लेट एन्टीक्विटी* (1971) के साथ शुरू हुआ, वह था उत्तर प्राचीन कालीन अध्ययन। ब्राउन ने अपनी पुस्तक में प्रारंभिक इस्लामी इतिहास (उमय्यद और प्रारंभिक अब्बासिद के पतन तक) के परिशिष्ट के रूप में उत्तर प्राचीन काल पर एक अन्तिम अध्याय शामिल किया था। ब्राउन ने अपने अध्ययन में कई क्षेत्रों को संश्लेषित किया था जिनका अध्ययन मुख्य रूप से अभी तक पृथक-पृथक किया जाता था – उत्तर रोम (या प्रारंभिक बाइज़ेन्टाइन) का इतिहास, चर्च का इतिहास, विशेष रूप से पूर्वी चर्चों का इतिहास, सासानिद इतिहास का अध्ययन और प्रारंभिक इस्लामी इतिहास का अध्ययन। ब्राउन ने उत्तर-प्राचीन काल को समीपवर्ती पूर्व और भूमध्यसागर क्षेत्र में दूसरी से आठवीं शताब्दी सी ई तक बढ़ाने की परिकल्पना की, और इस अवधि को एक पतन की बजाए सबसे गतिशील सांस्कृतिक और सामाजिक सृजनशीलता की अवधि के रूप में चित्रित किया। ब्राउन द्वारा उत्तर-प्राचीन काल के ढाँचे में प्रारंभिक इस्लामिक इतिहास के समाकलन ने प्रारंभिक इस्लाम पर इतिहासकारों के दृष्टिकोण को व्यापक किया।

डोनर के अनुसार, इस अवधि के दस्तावेजी साक्ष्यों, प्रारंभिक इस्लामिक दौर के और बाइज़ेन्टाइन और सासानियन साम्राज्य के सिक्कों और मोहरों और पपायरस-प्रलेखन (Papyrology), के अध्ययन में नया उत्साह उत्पन्न हुआ है। सातवीं शताब्दी से मौजूद पपायरस पर ग्रीक, *कॉप्टीक और अरबी भाषाओं में* लिखी जाने वाली पांडुलिपियों की लम्बे समय से जानकारी थी, लेकिन कुछ अपवादों को छोड़कर इतिहासकारों द्वारा इनका अधिक उपयोग नहीं किया गया था। 1980 के दशक में और विशेष रूप से 21वीं शताब्दी के पहले दशक में कई विद्वानों ने अरबी पपायरस प्रलेखों **(पपायरोलॉजी)** के अध्ययन में सक्रिय रूप से काम करना शुरू किया।

प्रारंभिक इस्लामी युग के पुरातात्विक अध्ययनों में और भी महत्वपूर्ण प्रगति हुई। 1960 के दशक तक, अपेक्षाकृत रूप से कम ऐसे पुरातात्विक कार्य किए गए थे जो निकट पूर्व (Near East) में इस्लामिक काल पर केन्द्रित थे, और अधिकांशतः जो किया गया था, वह मुख्य रूप से इस्लामिक कला या प्रमुख स्थापत्य स्मारकों के जीर्णोद्धार से संबंधित थे। लेकिन 1970 के दशक के शुरू में विशेष रूप से सीरिया, जार्डन, इजराइल और तुर्की में व्यापक रूप से पुरातात्विक अन्वेषणों में तेजी से वृद्धि हुई (इनमें अक्सर एक मानव शास्त्रीय दृष्टिकोण मौजूद था)। ईरान, मिस्र, लेबनान और यमन में भी बहुत महत्वपूर्ण अनुसन्धान कार्य हुए। इन खोजों ने लेवांत (निकट पूर्व, भूमध्य सागर का पूर्वी भाग) के ऐतिहासिक विकास के बारें में, विशेष रूप से प्रारंभिक इस्लामी दौर संबंधित, गंभीर गलतफहमियों को सुधारने में मदद की। उदाहरण के लिए, पहले यह मान लिया गया था कि इस्लाम का उदय समृद्धि के व्यापक पतन के साथ-साथ हुआ था, लेकिन डोनाल्ड विटकॉम, एलन वाम्सली एवं अन्य के सूक्ष्म अध्ययनों से पता चलता है कि लेवांत के कई क्षेत्रों में सातवीं शताब्दी के दौरान और आठवीं शताब्दी में भी समृद्धि जारी रही थी। इस्लाम के उदय को हिंसक विनाश एवं अनिरन्तरता के एक प्रकरण के रूप में देखे जाने के बजाय, जैसा कि पीटर पेन्ट्ज़ ने कहा, यह एक 'अदृश्य विजय' की तरह प्रतीत होता है, क्योंकि लेवांत के अधिकांश स्थलों पर बाइज़ेन्टाइन से इस्लामिक शासन में परिवर्तन इतना धीरे-धीरे हुआ कि वह दृष्टिगोचर नहीं होता। यह ईसाई और इस्लामिक दोनों तरह के साहित्यिक स्रोतों से बनी तस्वीर के विपरीत है, कम से कम पुरातात्विक साक्ष्य की दृष्टि से ऐसा जाहिर होता है।

इन नये शोधों, नये साक्ष्यों, और लंबे समय से मान्य साहित्यिक साक्ष्यों की नयी व्याख्याओं के परिणामस्वरूप अनेक नई योजनाबद्ध शुरूआतें हुईं – यह सुनियोजित करने के लिए कि इस्लाम की उत्पत्ति की पूर्व सन्ध्या पर 'वास्तव में क्या सब हुआ था'। पारंपरिक प्रतिमान से दूर हटकर संशोधनवादी लेखन की एक लहर चल उठी। इन नवीन लेखनों द्वारा अनेक नवीन मतों का प्रतिपादन किया गया। इनमें से कुछ का दावा था कि इस्लाम ईसाई धर्म का ही एक रूप था; जबकि कुछ के द्वारा पैगम्बर मुहम्मद के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लगाये गये। लेकिन यह सभी दृष्टिकोण स्रोतों और प्रमाणों द्वारा समर्थित नहीं हैं, और अनुमान-मात्र प्रतीत होते हैं। हम उनके विस्तार में नहीं जायेंगे क्योंकि ये पर्याप्त शोधों द्वारा अनुप्रमाणित नहीं हैं।

बोध प्रश्न-3

1) मक्का से संबंधित व्यापार सिद्धान्त के मुख्य बिन्दुओं को संक्षेप में लिखिए।

....

....

....

....

....

2) इस्लाम की उत्पत्ति पर देशीय सिद्धान्तकारों के क्या तर्क हैं?

....

....

....

....

....

3) इस्लाम की उत्पत्ति पर डोनर के दृष्टिकोण की चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

13.5 पैगम्बर मुहम्मद की मृत्यु के बाद इस्लाम का प्रसार

पैगम्बर मुहम्मद के निधन ने एक शून्य पैदा कर दिया। यह माना गया था कि मुहम्मद के बाद कोई अगला पैगम्बर नहीं होगा। लेकिन पैगम्बर केवल धार्मिक ही नहीं बल्कि राजनैतिक नेता भी थे। पैगम्बर के रूप में किसी के द्वारा वह पद नहीं संभालने को लेकर सामान्य स्वीकृति बनी। लेकिन किसी को तो राज्य का प्रभार लेना था, और धार्मिक समुदाय का मार्ग दर्शन करना था। चूंकि इस उद्देश्य के लिए कोई विशिष्ट नियम नहीं बनाये गये थे, इसलिए इस बात पर विवाद की काफी गुंजाइश थी। पैगम्बर के बाद धार्मिक और राजनीतिक सत्ता किसके पास होनी चाहिए, यह सवाल समय बीतने के साथ लगातार विवादास्पद होता जा रहा था, जिससे टकराव और अक्सर गहन सैद्धान्तिक मतभेद पैदा हुए।

पैगम्बर ने अपने उत्तराधिकारी की नियुक्ति क्यों नहीं की? सुन्नी परम्परा के अनुसार पैगम्बर जो सचेत गठबंधन और विवेकपूर्ण राजनीति में शामिल थे, उत्तराधिकार पर अव्यक्त हैं क्योंकि वे एकेश्वरवाद की सफलता चाहते थे जिस हेतु उन परम्परागत कबीलाई रिवाज़ों से जुड़े रहना जरूरी था जिनमें सत्ता परिवर्तन अविवादी घटना थी (न कि उपार्जित)। दूसरा कारण यह था कि संप्रदाय की संरचना इतनी कोमल थी कि पैगम्बर ने अपनी इच्छाओं को हावी करने की बात नहीं सोची। एक अन्य तथ्य माना जाता है कि उन्हें होनी का बोध था। हालांकि, निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता है।

यद्यपि सुन्नी मान्यता है कि पैगम्बर ने उत्तराधिकारी नियुक्त किया था, और वह चाहते थे कि समुदाय को अबु बकर एकजुट रखें, जो सबसे पहले धर्मांतरण करने वालों में और सबसे वरिष्ठ थे, और इसलिए स्वाभाविक पसंद थे। लेकिन शिया मान्यता है कि पैगम्बर मुहम्मद ने अली को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया था। पैगम्बर के अंतिम समय में तीन समूह मौजूद थेः मक्का का कुरैश अभिजात्य वर्ग और मदीना के अंसार वे 'मददगार' जिन्होंने महत्वपूर्ण समर्थन प्रदान किया, और वह समूह जिन्होंने तर्क दिया कि उत्तराधिकार पैगम्बर के परिवार के भीतर से ही होना चाहिए।

काफी हद तक, 632 के बाद राजनैतिक सत्ता प्रमुख कुरैश परिवारों के हाथों में ही रही। पैगंबर के सबसे करीबी साथियों में एक, अबु बकर को *खलीफा* (पैगम्बर का उत्तराधिकारी) चुना गया। अगली कुछ शताब्दियों तक मुसलमानों के धार्मिक नेताओं और पैगम्बर मुहम्मद द्वारा स्थापित राज्य के प्रमुख के लिए खलीफा प्रमुख पदवी बन गई। जब अबु बकर ने पद-भार संभाला तो नव-गठित राज्य खतरे में था। कुछ बद्दू कबीले मदीना से टूट कर अलग हो गए थे, क्योंकि अरब क्षेत्र में एक स्थायी राज्य का अंग होने का विचार नया था। अन्य गंभीर मुद्दा यह था कि कुछ कबीलाई धर्मगुरूओं ने खुद को ही पैगम्बर घोषित कर दिया था। मक्का और मदीना के मुसलमानों ने इन नेताओं की नकली पैगम्बर के रूप में निंदा की। अबु बकर को इन कबीलों पर फिर से नियन्त्रण स्थापित करने के लिए कई अभियान संचालित करने पड़े। इन अभियानों को *रिद्दा* (स्वधर्म त्याग या अपनी धार्मिक निष्ठा से पलायन) कहा जाता है। पैगम्बर के निधन के बाद उनके द्वारा की गई सन्धियों को तोड़ देने के चलते, जो लड़ाइयाँ और झड़पें हुईं, उनके फलस्वरूप मुस्लिम सेनाएँ दो महान् शक्तियों – बाइज़ेंटाइन और सासानिद के आमने-सामने जा पहुँचीं। अबु बकर का निधन *खलीफा* बनने के दो साल के भीतर हो गया। उन्होंने उमर इब्न खत्ताब को अपने उत्तराधिकारी के रूप में नामित किया। उमर ने राज्य की सीमाओं का विस्तार करते हुए न केवल स्वयं को अरब क्षेत्र में सुदृढ़ किया बल्कि अरब क्षेत्र के बाहर इराक, सीरिया, फिलीस्तीन और मिस्र में भी बड़े पैमाने पर क्षेत्रीय विस्तार आरंभ किया। पश्चिम एशिया की विजय सासानिद और बाइज़ेंटाइन साम्राज्य की कीमत पर हुई थी।

इस्लाम के उदय होने से पहले अस्सी वर्षों से अधिक समय तक पश्चिम एशिया पर वर्चस्व स्थापित करने के लिए सासानिद और बाइज़ेंटाइन साम्राज्य भीषण युद्ध में लिप्त थे। सीरिया और मेसोपोटामिया युद्ध के मुख्य पक्ष थे, जो दोनों साम्राज्यों के बीच स्थित थे। लम्बे समय के इस टकराव ने दोनों साम्राज्यों को काफी कमजोर कर दिया। जब 633-34 में अरबों ने बाइज़ेंटाइन और सासानिद इलाकों पर चढ़ाई की तो दोनों शक्तियाँ पहले से ही सैन्य रूप से इतनी क्षीण हो चुकी थीं कि वे कोई बड़ा प्रतिरोध करने में असमर्थ थीं। 636 में कादीसीया की लड़ाई में ईरानी सेना पूरी तरह ध्वस्त हो गई। अगले वर्ष साद के नेतृत्व में अरब सेनाओं ने सासानिद राजधानी टेसिफोन पर कब्जा कर लिया। इसके साथ ही इराक में सासानिद शासन का अन्त हो गया और साद ने स्वयं को इराक में सैन्य और नागरिक प्रमुख के रूप में स्थापित किया। इसी तरह, सीरिया के दामिश्क शहर पर सबसे पहले 634 में आक्रमण किया गया और 635 में इस पर कब्जा कर लिया गया। इनकी पराजय ने सीरिया और फिलीस्तीन के अधिग्रहण का मार्ग प्रशस्त किया। इसमें खालिद बिन वालिद ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। 639 में मिस्र पर भी कब्जा कर लिया गया।

हालाँकि मुसलमान संख्या में कहीं कम थे, परंतु वे तीव्रगामी, फुर्तीले, अच्छी तरह से आपस में समन्वित और वे बहुत अधिक अभिप्रेरित थे। बाइज़ेंटाइन और सासानिद साम्राज्यों की प्रतिरक्षा क्षमता कमजोर थी। बाइज़ेंटाइन और सासानिद सेनाओं (छठी और प्रारंभिक सातवीं शताब्दियाँ) के लंबे-चौड़े घमासान युद्धों और लम्बी अवधि के अभियानों के विपरीत, सातवीं शताब्दी के मध्य की इस्लामी सामरिक विजय अपेक्षाकृत अल्पअवधि के आक्रमण, 'हल्ला बोल और काफूर' सेना के द्वारा किए गए थे। उन्होंने शायद ही कभी बड़ी घेराबन्दी की हो याकि उनमें बड़ी संख्या में लोग हताहत हुए हों। अनेक मामलों में हिंसा से बचने के लिए बाइज़ेंटाइन के स्थानीय कुलीन वर्ग ने गुप्त सौदेबाजी कर ली थी। इसके अलावा, जो ईसाई जनसंख्या थी – मिस्र में **कॉप्ट**, सीरिया में **मोनोफाइसाइट**, इराक के **नस्तूरी (Nestorian)** लोगों का बाइज़ेंटाइन और सासानिद अधिपतियों के साथ एक लम्बा विवादी सम्बन्ध रहा था। उनका असंतोष वहां मायने रखता था, जहां ईसाई-अरब सीमाओं पर अवस्थित कबीले और सैन्य सहायक दल विजेताओं से जा मिले और जहाँ किले बन्द शहरों ने हथियार डाल दिये।

उनकी विजय विपक्षी सैन्य शक्तियों के कमज़ोर होने के कारण हुई थी और वे स्थापित हो पाये क्योंकि स्थानीय आबादी नये शासन को स्वीकार करने को तैयार थी। इसके अलावा, सामरिक विजय को अरब लोगों के भारी संख्या में स्थानांतरण के द्वारा भी पक्का किया गया था। बाइज़ेंटाइन और सासानिदों की हार के साथ ही बाशिंदों के बीच चली आ रही सीमाएँ टूट गईं और इसके परिणामस्वरूप अरब क्षेत्र से मध्य-पूर्व क्षेत्रों की ओर लोगों का वृहत पलायन हुआ। हालांकि, बाइज़ेंटाइन ने अपने सबसे समृद्ध और सबसे अधिक आबादी वाले प्रान्त – अनातोलिया और बाल्कन पर अपना नियन्त्रण कायम रखा, लेकिन सीरिया गंवा दिया। बाइज़ेंटाइन का अस्तित्व बचे रहने से अरबों को एक विवादास्पद और खतरनाक सीमा मिली और उनके विस्तार के रास्ते में एक स्थायी अवरोध बना रहा। इसके विपरीत सासानियों को पूरी तरह परास्त कर दिया गया था। कादीसीया की लड़ाई (636) के बाद पूरा इराक उनके हाथों में आ गया। सासानिद साम्राज्य के पतन के बाद, अरबों को ईरान में अनेकों कमजोर लेकिन पहाड़ों और रेगिस्तानों द्वारा संरक्षित दुर्गम रियासतों का सामना करना पड़ा। सासानियन साम्राज्य की उन अर्द्ध-स्वतन्त्र रियासतों को वश में करने में उन्हें लगभग एक दशक लग गया। आखिरकार 654 में खुरासान पर भी कब्जा कर लिया गया।

इतने सारे प्रान्तों के प्रशासन के उत्तरदायित्व के साथ ही विजित लोगों पर शासन व शोषण करने हेतु और अरब से आए प्रवासी लोगों को नियंत्रित करने की जिम्मेदारी नए *खलीफा* और अभिजात वर्ग के हिस्से आई। मदीना के लोगों ने दो बुनियादी सिद्धान्तों पर निर्णय लियाः बद्दुओं के द्वारा कृषक समाज को नुकसान पहुँचाने से रोका जाएगा और यह कि नया अभिजात्य वर्ग विजित आबादी के प्रमुखों और नामी व्यक्तियों के साथ सहयोग करेंगे। द्वितीय खलीफा उमर (634-644) के शासन काल में ये आवश्यक व्यवस्थाएं की गई थीं। उमर की पहली व्यवस्था ने अरब विजेताओं को एक सैन्य अभिजात्य वर्ग के रूप में रूपान्तरित कर दिया, जिन्होंने अधीन किए हुए क्षेत्रों में सेना की तैनाती की और आगे और अधिक क्षेत्रों का अधिग्रहण किया। बद्दुओं के द्वारा कृषि-भूमि को नष्ट करने से रोकने के लिए और विजित लोगों से अरबों को पृथक रखने के लिए, बद्दुओं को किलेबन्द सैन्य शहरों (**अमसार**) में बसाया गया था। तीन सबसे महत्वपूर्ण नये शहर इराक और मिस्र में स्थापित किये गये थे। बसरा, फारस की खाड़ी के मुहाने पर स्थित था और जो सामरिक दृष्टि से मदीना के साथ सीधा संपर्क बनाता था। कूफा उत्तरी इराक, मेसोपोटामिया और उत्तरी और पूर्वी ईरान की प्रशासनिक राजधानी बन गया। और मिस्र की नई राज़धानी फुस्तात जिसने उत्तरी अफ्रीका में अरब साम्राज्य विस्तार के मुख्यालय के रूप में काम किया। जब तक कि 670 में केरावान (ट्यूनीशिया में) राजधानी के रूप में आबाद न हो गया। अन्य प्रान्तों में उन्होंने आमतौर पर नये शहर स्थापित नहीं किये बल्कि वे मौजूदा शहरों, उपनगरों और बाहरी क्षेत्रों के गाँवों में ही बस गये थे।

अमसार ना केवल बद्दु अप्रवासियों के लिए निवास स्थल थे और सेना को संगठित करने का काम कर रहे थे, बल्कि लूट के सामान को वितरित करने में भी मददगार थे। सिद्धान्त रूप में, अरबों को अपने लिए भू-संपत्ति को जब्त करने की अनुमति नहीं थी। विजित क्षेत्र को सामुदायिक संपत्ति माना जाता था और इसलिए विजेताओं को राजस्व, न कि भूमि दी जा सकती थी। इस व्यवस्था ने विजित क्षेत्रों को लूटमार से सुरक्षित रखा और विजय से प्राप्त धन-दौलत को अधिक समानतापूर्वक वितरित होने दिया।

दूसरे, नीति यह थी कि विजित आबादी को जितना संभव हो उतना कम परेशान करना चाहिए। इसका नतीजा यह था कि अरबी मुसलमानों ने विजित प्रदेश के लोगों को इस्लाम में परिवर्तित करने का प्रयास नहीं किया। पैगम्बर ने अरब क्षेत्र में यहूदी और ईसाईयों को अपना धर्म बनाए रखने की अनुमति देने की मिसाल कायम की थी, अगर वे शुल्क देने के लिए सहमत थे। खलीफाओं ने मध्यपूर्व के यहूदियों, जरथुश्ट्रों, जिन्हें वे संरक्षित लोग

(*ज़िम्मी*), और 'पवित्र पुस्तक के लोग' (*अहल-ए किताब*) कहते थे, इनको भी इन विशेष अधिकारों का लाभ दिया गया।

जिस तरह अरबों को धार्मिक परिस्थिति को बदलनें में कोई दिलचस्पी नहीं थी, उसी तरह उन्हें सामाजिक और प्रशासनिक व्यवस्था में भी कोई विघ्न डालने की इच्छा नहीं थी। खलीफाओं ने शुल्कों और करों को एकत्र करने की निगरानी करने, करों का वेतन के रूप में भुगतान करने तथा नमाज़ में मुसलमानों का नेतृत्व करने के लिए गवर्नरों को भेजा था, लेकिन स्थानीय व्यवस्था काफी हद तक स्थानीय लोगों के हाथों में ही छोड़ दी गई थी। व्यवहारिक रूप से अरब और स्थानीय कुलीन वर्ग के बीच के संबंध क्षेत्र दर क्षेत्र भिन्न थे और अरब विजय की परिस्थितियों और मौजूद सामाजिक और प्रशासनिक ढाँचे के अनुसार भिन्न-भिन्न थे।

अरबों ने प्रत्येक प्रान्त में, पहले से चली आ रही करों की प्रणाली को मान लिया। इराक में, उन्होंने भू-कर (*खराज*) और *जिजिया* (poll tax) दोनों को वसूलने की सासानियन व्यवस्था को अपनाया। भूमि की माप की गई और उत्पादकता, उत्पाद का मूल्य, सिंचाई और परिवहन आदि के खर्च को ध्यान में रखते हुए कर लगाया गया। इसके अतिरिक्त, सभी से *जिज़िया* के भुगतान की अपेक्षा थी।

संक्षेप में अरब विजय ने अतीत में बसे आबाद प्रदेशों पर खानाबदोश कबीलों की विजय के परिचित उदाहरण का अनुपालन किया। विजेता सैन्य अभिजात वर्ग बन गए और उनकी आजीविका के लिए स्थाई समाजों का शोषण किया गया। यह शासकीय व्यवस्था विजेता समुदाय के आभिजात्य वर्ग और उनके द्वारा विजित या स्थाई आबादी के बीच एक समझौता था।

उमर 644 में मारे गये। उन्होंने अपने बाद उत्तराधिकारी नामित करने के लिए छः चयनकर्ताओं की परिषद् का गठन किया था। उस्मान तीसरे *खलीफा* (644-656) बने। उस्मान मुहाजिर[1] थे, लेकिन उमय्यद कुल के थे। इससे हाशिमियों में काफी आक्रोश उत्पन्न हुआ। उस्मान ने सभी प्रमुख अधिकारिक पद उमय्यद कुल के लोगों को देकर स्वयं को अलोकप्रिय बना लिया। हालाँकि ईरान की विजय उस्मान के नेतृत्व में पूरी हुई थी लेकिन विस्तार की प्रारंभिक गति 650 के बाद धीमी होती गई। इससे असंतोष और बढ़ता गया। दक्षिणी इराक और मिस्र के कुछ स्थल प्रतिरोध (*तौखलीफ*) के केन्द्र बन गए। मिस्र की फौज में विद्रोह हुआ, और इस अराजकता के बीच, 656 में उस्मान की हत्या कर दी गई।

तथापि, उस्मान के बाद उत्तराधिकार के सवाल पर हिंसक संघर्ष हुआ। यह संघर्ष प्रथम *फितना* अथवा गृह युद्ध कहलाता है। मदीना में, अली के समर्थकों ने मिस्त्र के विद्रोहियों के साथ हाथ मिलाया और अली को अगला *खलीफा* घोषित कर दिया गया। यह उमय्यदों को स्वीकार नहीं था। एक और गुट जुबैर के नेतृत्व में था जिसने इस समझौते का विरोध किया। ज़ुबैर पैगम्बर मुहम्मद के सहयोगी रह चुके थे और उन्हें पैगम्बर की पत्नी आयशा का भी समर्थन मिला। हालाँकि सबसे गंभीर चुनौती सीरिया के गवर्नर और उमय्यद वंशी उस्मान के चचेरे भाई मुआविया की थी। उसके पास सीरिया में एक मजबूत आधार था और उसने अली के खिलाफ विद्रोह कर दिया और अली के प्रति निष्ठा-अभिव्यक्ति की माँग को नकार दिया और उस्मान की हत्या का बदला लेने के लिए आह्वान किया। सीरिया को छोड़कर अन्य सभी क्षेत्रों ने अली को खलीफा के रूप में स्वीकार कर लिया। मुआविया के इंकार के फलस्वरूप उत्तरी मेसोपोटामिया में सिफिन (657) की लड़ाई हुई। लड़ाई अनिर्णायक रही और युद्ध के दोनों पक्ष मध्यस्थता के लिए सहमत हो गये। कुछ भी ठोस

1 वे लोग जो 622 में पैगम्बर मुहम्मद के साथ मक्का से मदीना के लिए उत्प्रवास किया था।

निर्णय नहीं निकल सका। मुआविया सीरिया का वास्तविक शासक बना रहा। अली ने वहां से शेष साम्राज्य पर शासन किया और अपनी राजधानी कूफा स्थानांतरित कर दी (मदीना सत्ता केन्द्र के नज़रिए से अब एक बहुत संकटशील चुनाव था, इसके अलावा कूफा में बड़ी संख्या में अली के अनुयायी थे)।

आखिरकार, गृहयुद्ध अथवा *फितना* ने मुस्लिम समुदाय के भीतर स्थायी विभाजन पैदा कर दिया। सिफिन का युद्ध प्रथम प्रमुख साम्प्रदायिक विभाजन का कारण बना। मुसलमान समाज इस बात को लेकर विभाजित था कि *खलीफा* की गद्दी पर पदस्थ होने का वैध अधिकार किसके पास था। वे मुसलमान जो मुआविया के उत्तराधिकार और उसके बाद *खलीफा* के ऐतिहासिक अनुक्रम को स्वीकार करते थे; और दूसरे वे जो यह मानते थे कि अली एकमात्र वैध *खलीफा* थे और पैगम्बर के परिवार से सम्बन्ध रखने के कारण अली का नेतृत्व दिव्य सम्पन्न था और वे ऐसे सच्चे उत्तराधिकारी थे जो कोई भी गलती नहीं कर सकते थे, और इसलिए केवल उन्हें और उनके वंशजों को उत्तराधिकारी होना चाहिए था। मुआविया और अली के बीच इनके अलावा एक और विलगित समूह था जो मध्यस्थता के विरोध में था। उनकी राय में अली का आचरण उमय्यदों के साथ एक समझौता की तरह था और इसलिए अब वह मुस्लिम समुदाय का नेता नहीं हो सकते थे। इस चरमपंथी रूख को अपनाने वालों को *खारजी* कहा गया। उनकी यह राय थी कि *खलीफा* का पद वंश द्वारा निर्धारित किया जाना चाहिए, लेकिन *खलीफा* को व्यापक मुस्लिम समुदाय के द्वारा चुना जाना चाहिए और तभी तक उन्हें इस पद पर बने रहना चाहिए जब तक कि वह उस पद के संचालन में निष्पाप बने रहें। अपना पक्ष रखते हुए वे अली से अलग हो गये। इन तीनों समूहों ने इस्लाम के प्रति अपनी अलग-अलग दृष्टि विकसित की। इसके चलते मुस्लिमों के प्रमुख मतों – सुन्नी और शिया का सूत्रपात हुआ। इसके विषय में आप **इकाई 15** में पढ़ेंगे। अन्ततः एक *खारजी* ने 661 में अली की हत्या कर दी और खलीफा का पद उमय्यद वंश के हाथ में चला गया।

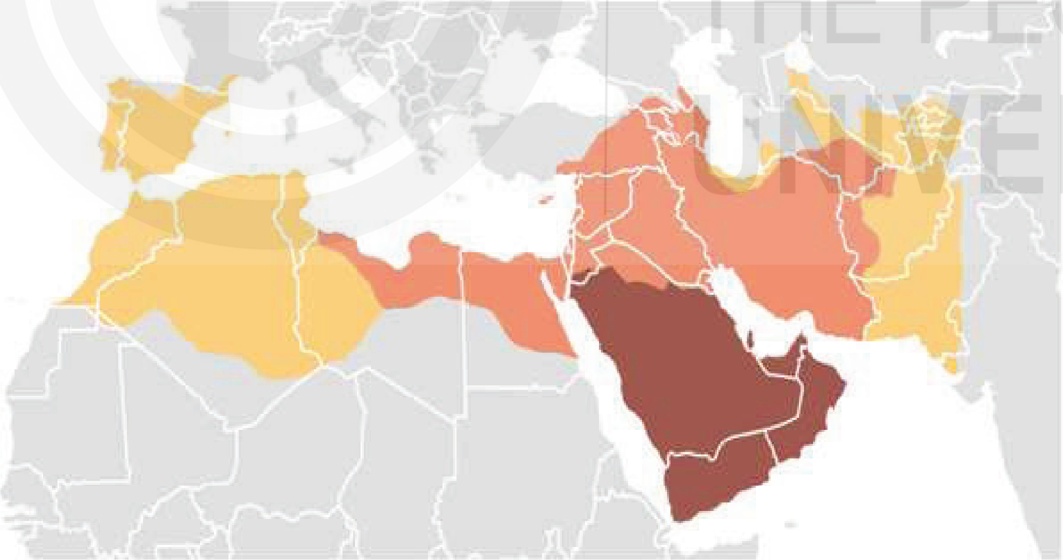

Expansion under the Prophet Muhammad, 622-632; Expansion during the Patriarchal Caliphate, 632-661; Expansion during the Umayyad Caliphate, 661-750

मानचित्र 13.1: इस्लाम का विस्तार

लेखक: दीब्यूशे, जुलाई, 2010

स्रोत: http://guides.library.iit.edu/content.php?pid=27903&sid=322018 (via Image:Age_of_Caliphs.png);
https://en.wikipedia.org/wiki/Spread_of_Islam#/media/File:Map_of_expansion_of_Caliphate.svg

13.6 इस्लाम और पश्चिम : धर्मयुद्ध

635-645 की अरबों की विजय के साथ इस्लाम ने ईसाई पश्चिम में प्रवेश किया। हमने देखा है कि कैसे अरबों ने बाइज़ेंटाइन और ईरान को अधीनस्थ किया था। बाइज़ेंटाइन अपने बेशकीमती क्षेत्रों – सीरिया, मिस्र, फिलीस्तीन और अन्त में 698 में उत्तरी अफ्रीका (मगरिब) तक को अरबों के हाथों हार गये। इससे ग्रीक-भाषी बाइज़ेंटाइन निवासियों को अनातोलिया (तुर्की) में प्रवासन के लिए मजबूर होना पड़ा। आइबेरियन प्रायद्वीप की ओर, मुस्लिम सेनाओं ने कोरडोवा पर कब्जा कर लिया, पिरेनीस पर्वत को पार कर लिया और गॉल प्रदेश (दक्षिण फ्रांस) में अन्दर तक घुसते हुए बोरदो तक जा पहुँचीं। हालांकि, 731 में अरबों को तुलूज़ में हार मिली और अगले साल (732) में उनकों प्वातिएर (टूर्स) की ऐतिहासिक लड़ाई में चार्ल्स मार्टल द हैमर के हाथों करारी हार का सामना करना पड़ा। बाइज़ेंटाइन की 'ईसाई' राजधानी कॉन्सटेन्टीनोपल को परास्त करने के लिए अरबों के प्रयास निरंतर जारी रहे।

अब्बासिदों ने (विस्तृत विवरण के लिए **इकाई 14** देखें) बाइज़ेंटाइन के खिलाफ युद्धों को अपने 'धार्मिक कर्त्तव्य' के रूप में परिकल्पित किया, और उन्हें 'आततायी' पुकारा और उनके विरूद्ध युद्ध को जिहाद का नाम दिया। इस सम्बन्ध में 1071 में बाइज़ेंटाइन को गंभीर चुनौती का सामना करना पड़ा था, जब सेलजुक सेनानायक अल्प अरसलान ने मन्ज़ीकर्ट (पूर्वी तुर्की) में बाइज़ेंटाइन सेनाओं को बुरी तरह से पराजित किया और बाइज़ेंटाइन सम्राट रोमानास चर्तुथ को अपना कैदी बना लिया। इस घटना ने ग्रीक आबादी को अनातोलिया से और भी आगे बाल्कन की ओर प्रवास करने के लिए मजबूर कर दिया। इन गतिविधियों ने ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में स्पेन/आइबेरियन प्रायद्वीप में *रीकॉनक्विस्टा* (*reconquista*: पुनर्विजय आंदोलन) को जन्म दिया। इसके परिणामस्वरूप क्रमिक रूप से ईसाई सेनाओं को तोलदो (1085) और सिसली (1095) में विजय मिलीं। बाइज़ेंटाइन सम्राट अलेक्सियस प्रथम (शासन 1081-1118) ने 1071 की भयंकर हार के बाद अपने ईसाई बिरादरी से अपील की। अलेक्सियस प्रथम की अपील पर पोप अर्बन द्वितीय ने त्वरित प्रतिक्रिया दिखाई और 1095 में दक्षिण फ्रांस के क्लेमोन्ट की परिषद में 'सारासेनों' के खिलाफ 'पवित्र युद्ध' (Holy war) की घोषणा की। इस प्रकार 1095 में पहला धर्मयुद्ध (Crusade) शुरू हुआ। इस युद्ध का नारा था 'पवित्र भूमि, ईसा मसीह की भूमि और ईसाई धर्म के धर्म-प्रचारकों की पुनर्विजय' हो (नीश 2017 : 345)। धर्मयुद्धों की अगली लहर 1099 में शुरू हुई जो काफी हद तक सामंतों (Barons) वाले धर्मयुद्ध थे। धर्मयुद्ध की सेनाओं ने अनातोलिया, ऐंड़ेसा सहित सीरिया, एन्टीओक और त्रिपोली पर कब्जा कर लिया और 1099 में जेरूसलम को लूट लिया।

हालाँकि, सेलजुक *अमीर* ज़ेन्गी, जो मोसुल का शासक था, उसने फ्रेंको से ऐंड़ेसा को 1144 में हथिया लिया। ज़ेन्गी के बेटे नूर अल-दीन ने सीरिया और फिलिस्तीन में ईसाई धर्म-योद्धाओं के कई गढ़ों पर कब्जा कर लिया। इन विजयों ने पोप यूजेनियस तृतीय को यूरोप के कुलीन वर्ग को 'पूर्वी चर्च की रक्षा के लिए' आह्वान करने के लिए बाध्य किया। इस प्रकार दूसरा धर्मयुद्ध शुरू हुआ, जो 1146 से 1148 तक चला। 1174 में नूर अल-दीन की मृत्यु के बाद *जिहादी* सेनाओं की कमान मिस्र में उनके प्रतिनिधि सलाह अल-दीन ने संभाली। उसने उत्तर फिलिस्तीन में हातिन (1187) की लड़ाई में धर्म-योद्धाओं की सेनाओं को बुरी तरह पराजित किया और जेरूसलम पर कब्जा कर लिया।

एक बार फिर पोप ने तीसरे धर्मयुद्ध (1189-1192) के लिए आह्वान किया। 1193 में सलाह अल-दीन की मृत्यु के बाद भी पूरी 13वीं शताब्दी में *जिहाद* जारी रहा। साहसी मामलुक सेनापति बेबर्स (मृत्यु 1277) धर्म-योद्धाओं को लेवांत से पीछे धकेलने में सफल रहे। इसके बाद कई धर्मयुद्ध हुएः दो का नेतृत्व फ्रांसीसी राजा लुई IX ने किया, जिन्हें संत लुईस (1214-1270) की उपधि से विभूषित किया गया।

उस्मान के तत्वाधान में ऑटोमन साम्राज्य की स्थापना के साथ, जेरूसलम को कब्ज़े में करने का धर्म-योद्धाओं का सपना लगभग असंभव हो गया। झड़पों की श्रृंखला चलती रही। ऑटोमन सुल्तान मुराद ने कोसोवो फील्ड (1389) की लड़ाई में सर्बिया की सेना को हराया; 1389 में ऑटोमन सुल्तान बयाज़िद प्रथम ने हंगरी, फ्रांसीसी और जर्मेनिक धर्म-योद्धाओं को निकोपोलिस (हंगरी) की लड़ाई में हराया। ऑटोमन शासक मेहमेद द्वितीय (शासन 1444-1446; 1451-1481) ने 1453 में अन्ततः अन्तिम बाइज़ेंटाइन गढ़ कॉन्सटेंटीनोपल पर कब्जा कर लिया। इस प्रकार धर्म-योद्धाओं की जेरूसलम पर कब्जा करने की सभी आशाओं पर पानी फिर गया।

लेकिन, पश्चिमी देशों के साथ इस्लामिक पारस्परिक संबंधों के गहरे सांस्कृतिक प्रभाव पड़े। उस समय अरब-इस्लाम पश्चिम के लिए विचारों का स्रोत था। यूरोपीय चिकित्सा विज्ञान पर रहाज़ेस और एविसीना, (इब्न सीना) का लंबे समय तक प्रभाव रहा। पश्चिम ने अरबों से खगोल विज्ञान, गणित, रसायन विज्ञान और दृग्विद्या (optics) सीखी। ग्रीक ग्रंथों के अरबी अनुवादों ने ग्रीक ज्ञान को पश्चिम में उपलब्ध कराया। अरस्तु के ग्रंथों का इब्न रूश्द (जिसे यूरोपीयों ने एवेरोस के नाम से जाना; 1126-1198) द्वारा किए गए अरबी अनुवाद को यूरोपीय विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जाता था। शून्य (zero) का ज्ञान और कागज बनाने की तकनीक भी पश्चिम ने अरबों के माध्यम से सीखी, जिसे अरबों ने क्रमशः भारत और चीन से प्राप्त किया।

बोध प्रश्न-4

1) पैगम्बर मुहम्मद की मृत्यु के बाद उठे उत्तराधिकार के विवाद पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

2) खलीफा उमर के तहत इस्लामी क्षेत्रों के विस्तार पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

3) मुस्लिम सेनाएँ अपने बाइज़ेंटाइन और सासानिद प्रतिद्वन्द्वियों पर इतनी सफल क्यों हुईं?

....

....

....

....

....

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

4) धर्मयुद्ध क्या थे? वे क्यों लड़े गये थे?

....

....

....

....

....

13.7 सारांश

अरब प्रायद्वीप में इस्लाम का उदय एक प्रमुख घटना थी जिसने ना केवल प्रायद्वीप को हिला दिया, बल्कि इसके समस्त विश्व पर दूरगामी प्रभाव पड़े। यह पैगम्बर मुहम्मद थे, जिन्होंने अरब प्रायद्वीप के बिखरे हुए कबीलों को एक राज्य के रूप में इकट्ठा किया। हालाँकि इस्लाम का उदय प्रायद्वीप में हो रहे बहुत गहरे सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों का परिणाम था। व्यापार केन्द्र के रूप में अरब प्रायद्वीप की लाभप्रद स्थिति, बाइज़ेंटाइन और सासानिद साम्राज्य के मिलन बिंदु पर स्थित होने से और लाल सागर और फारस की खाड़ी और भू-मध्य सागर के माध्यम से नीचे दक्षिण में हिन्द महासागर के नेटवर्क से जुड़े होने के कारण इसने आर्थिक शक्ति और श्रेष्ठता प्राप्त की। हालाँकि देशीय मत के प्रणेता विद्वान इस पर बल देते हैं कि पैगम्बर की सफलता 'व्यापार में बढ़ती समृद्धि' की तुलना में कबीलों को एकजुट करने में अधिक थी। पैगम्बर की मृत्यु के बाद अबु बकर और उस्मान ने काफी हद तक इस्लाम की सीमाओं के विस्तार और सुदृढ़ीकरण पर ध्यान केन्द्रित किया। वह ऐसा सफलतापूर्वक इसलिए कर पाये क्योंकि उन्होंने स्थानीय सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था में अधिक व्यवधान ना डालने की अहस्तक्षेप की नीति का अनुसरण किया था। और न ही उन्होंने स्थानीय आबादी (यहूदी और ईसाई) के इस्लाम में धर्मांतरण पर बल दिया था। उस्मान के शासन काल में और अधिक सुदृढ़ीकरण हुआ और प्रशासनिक मसलों को सुलझाया गया। लेकिन उनका रवैया अपने उमय्यद कुल के प्रति पक्षपातपूर्ण था, और उन्होंने प्रमुख पदों पर अपने कुल के लोगों को नियुक्त किया जिसने असंतोष को बढ़ावा दिया। लेकिन अली के काल में इस्लाम में मतभेद मुखर हो गये और मुसलमान दो प्रमुख समूहों – सुन्नी और शिया और तीसरा जो अधिक कट्टरपंथी था – *खारिजी* में विभाजित हो गये, जो अन्ततः अली, जो चौथे पवित्र *खलीफा* थे, जिसके बारे में हम **इकाई 15** में जानेंगे, की हत्या के लिए जिम्मेदार थे।

13.8 शब्दावली

कॉप्टिक : ग्रीक भाषा में इस शब्द का अर्थ मिस्र के लोगों से है। यह काफी हद तक मिस्र के ईसाईयों को दर्शाता है। कॉप्टिक काल (चौथी से नौवीं शताब्दी सी ई) के दौरान बड़े पैमाने पर मिस्र की आबादी ईसाई थी।

ईसनाद / सनद : *हदीस* का संचरण की श्रृंखला के माध्यम से प्रमाणीकरण (अनगिनत संख्या में वर्णन करने वाले; *हदीस* के विद्वान)।

मोनोफाइसाइट्स : उनका मानना था कि यीशु के पास एक ही 'स्वरूप' (दिव्य या मानवीय और दिव्य का संश्लेषण) था,

इसके विपरीत डायोफाइसाइट्स का यकीन था कि ईसा मसीह के दो 'स्वरूप' थे – एक दिव्य और दूसरा मानवीय। मोनोफाइसाइट्स को पूर्वी रोमन साम्राज्य के ईसाईयों के रूप में संदर्भित किया गया था जिन्होंने 451 सी ई में चालसीडॉन की परिषद् को अस्वीकृत कर दिया था।

नस्तूरी (Nesterian) : वे पूर्व की चर्च के ईसाई हैं, सीरियाक चर्च, जिसे ईरानी चर्च भी कहा जाता है। इसकी स्थापना 410 सी ई में हुई थी। एफेसस की परिषद् ने नेस्टोरियस (386-451) की निंदा की थी, जिसका नतीजा नेस्टोरियन मतभेद के रूप में हुआ। इसके पश्चात् नेस्टोरियस के समर्थक प्रवास करके सासानियन ईरान में चले गये। नेस्टोरियनवाद ने यीशू के दिव्य और मानवीय स्वरूपों पर बल दिया।

पपायरोलॉजी – पपायरस प्रलेखः पपायरस (भोज पत्र) पर लिखे गये दस्तावेज

13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 13.2 देखें

2) भाग 13.2 देखें

3) भाग 13.2 देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 13.3 देखें

2) भाग 13.3 देखें

3) भाग 13.3 देखें

बोध प्रश्न-3

1) उप-भाग 13.4.1 देखें

2) उप-भाग 13.4.2 देखें

3) उप-भाग 13.4.3 देखें

बोध प्रश्न-4

1) भाग 13.5 देखें

2) भाग 13.5 देखें

3) भाग 13.5 देखें

4) भाग 13.6 देखें

13.10 संदर्भ ग्रन्थ

क्रोन, पेट्रिशिया, (1987) *मैक्कन ट्रेड़ एन्ड द राइज ऑफ इस्लाम* (प्रिसंटनः प्रिसंटन यूनिवर्सिटी प्रेस).

डोनर, फ्रेड, (2011) 'मार्डन एप्रोचेस टू अर्ली इस्लामिक हिस्ट्री' *द न्यू केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इस्लामः द फॉरमेशन ऑफ द इस्लामिक वर्ल्डः सिक्स्थ टू इलेवन्थ सेन्चुरीज़* (केम्ब्रिजः केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस), भाग 1, अध्याय 15, पृ. 625-647.

डोनर, फ्रेड, (2015) 'द स्टडी ऑफ इस्लाम्स ओरिजिंस सिन्स डब्ल्यू. मॉन्टगोमरी वाटॅस पब्लिकेशन्स', प्रेज़ेन्टड शुक्रवार, नवम्बर 23, द यूनिवर्सिटी ऑफ एडिनबर्ग.

फारूकी, अमर, (2012) *अर्ली सोशल फॉरमेशन्स* (नई दिल्लीः मानक पब्लिकेशन्स).

हॉगसन, मार्शल जी.एस., (1961) *द वेन्चर ऑफ इस्लाम, कान्शन्स एन्ड हिस्ट्री इन ए वर्ल्ड सिविलाइज़ेशन,* भाग 1, *द कलासिकल ऐज ऑफ इस्लाम* (शिकागोः शिकागो यूनिवर्सिटी प्रेस).

हूरानी, एलबर्ट, (2010) *ए हिस्ट्री ऑफ द अरब पीपुल्स* (हॉरवर्ड : बेल्कनेप प्रेस ऑफ हॉरवर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

किस्टर, एम. जे., (1986) 'मक्का एन्ड द ट्राइब्स ऑफ अरेबियाः सम नोट्स ऑन देअर रिलेशन्स', मोशे शेरॉन, संपा., *स्टडीज इन इस्लामिक हिस्ट्री एन्ड सिविलाइज़ेशन इन ऑनर ऑफ प्रो. डेविड अयालॉन* (जेरूसलम एवं लाइडनः ई. जे. ब्रिल), पृ. 33-37.

नीश, अलेक्जेंडर, (2017) *इस्लाम इन हिस्ट्रारिकल पर्सपेक्टिव,* द्वितीय संस्करण (न्यूयार्कः रूटलेज).

लेपिडस, इरा एम., (2002) *ए हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक सोसाइटीज* (केम्ब्रिजः केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस), द्वितीय संस्करण.

वॉट, डब्ल्यू. मान्टगोमरी एवं एम. वी. मेकडोनाल्ड, (1988) *द हिस्ट्री ऑफ अल-तबरी,* भाग VI, *मुहम्मद एट मक्का* (अलबेनीः स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयार्क प्रेस).

सरजेन्ट, आर. बी., (1990) 'मेक्कन ट्रेड एन्ड द राइज ऑफ इस्लामः मिसकन्सेप्शन्स एन्ड फ्लॉड पॉलीमिक्स' (रिव्यू आर्टिकल आऩ पेट्रिशिया क्रोन्स वर्क), *जर्नल ऑफ द अमेरिकन ओरियन्टल सोसाइटी,* भाग 110, पृ. 472-486.

13.11 शैक्षणिक वीडियो

द बर्थ ऑफ इस्लामः मुहम्मद, द प्रीचर

https://www.youtube.com/watch?v=MU1tHggYR6k

राइज़ ऑफ इस्लाम

https://www.youtube.com/watch?v=Uvq59FPgx88

इकाई 14 खिलाफत : उमय्यद और अब्बासिद*

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 उमय्यद खिलाफत : सूफ़यानिद काल

14.3 उमय्यद खिलाफत : मारवानिद काल

14.4 बाद के उमय्यद

14.5 उमय्यदों का सौंदर्य शास्त्र और भौतिक संस्कृति

14.5.1 दरबार संस्कृति

14.5.2 महल और मस्जिदें

14.6 उमय्यदों की अर्थव्यवस्था : राज्य, व्यापार और सिंचाई

14.6.1 स्थायी खेती

14.6.2 उमय्यद व्यापार, नगरीकरण और *सुक्क* (बाज़ार)

14.7 उमय्यद सुल्तान और प्रांत (*विलायत*)

14.8 उमय्यद वंश का पतन

14.9 अब्बासी खिलाफत : अब्बास और मंसूर

14.10 अब्बासी खिलाफत : हारुन और अल-मामून

14.11 बाद के अब्बासी खलीफा

14.12 अब्बासी खिलाफत : सिंचाई, कृषक तथा राजकीय भूमि

14.12.1 सिंचाई

14.12.2 अब्बासी खिलाफत के समय के प्रमुख विद्रोह

14.12.3 अब्बासियों के समय में राजकीय भूमि का स्वरूप

14.12.4 अब्बासियों के समय में मिस्र में ठेके पर कृषि की व्यवस्था

14.13 अब्बासी काल में कर और *दीवान*

14.14 सारांश

14.15 शब्दावली

14.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.17 संदर्भ ग्रंथ

14.18 शैक्षणिक वीडियो

* डॉ. शाकिर-उल हसन, डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री एंड कल्चर, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

14.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम उमय्यद और अब्बासी खिलाफत के बारे में पढ़ेंगे, जिनकी स्थापना क्रमशः मुआविया प्रथम और अब्बास अस-सफ्फाह ने की थी। खलीफा अबू बकर और उमर के विजय अभियानों को उमय्यदों ने जारी रखा। भौगोलिक दृष्टि से वह सबसे बड़ा साम्राज्य था। लेकिन खिलाफत में उमय्यदों के शासन काल में वंशानुगत उत्तराधिकार की प्रवृत्ति आ गई। उमय्यद इस्लामी खिलाफत की राजधानी दमिश्क ले गए। 750 सी ई में अब्बासिदों ने उमय्यद वंश का तख्ता पलट दिया, और उन्होंने अपना शासन बगदाद से चलाया। अब्बासी खिलाफत पर ईरानी राजनीतिक तंत्र की परंपराओं, ईरानी अभिजात्य वर्ग और बाद में तुर्की सेना का प्रभुत्व रहा। *वजीर, दीवान* और *इक्ता* जैसी संस्थाओं का विकास अब्बासिदों के ही जमाने में हुआ। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- उन परिस्थितियों का विवेचन कर सकेंगे जिन्होंने उमय्यद खिलाफत के एकीकरण को संभव बनाया,
- उमय्यद और अब्बासी खिलाफत (7वीं से 10वीं सी ई के बीच) के जटिल कर-ढांचे को समझ सकेंगे,
- राजकीय भूमि के विकास, भू-स्वामित्व और इस्लाम के केंद्रीय क्षेत्र में कृषि के प्रसार की व्याख्या कर पायेंगे,
- उमय्यदों के पतन के कारणों की पहचान कर सकेंगे,
- उमय्यदों की कला और स्थापत्य को समझ सकेंगे, और
- अब्बासी साम्राज्य के अधीन खिलाफत की प्रकृति में आये बदलाव की चर्चा कर सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना

जिस समय कूफा में खलीफा अली की हत्या की गई, उस समय मुआविया प्रथम सीरिया का गवर्नर था। अपने विरोधियों के साथ सन्धि स्थापित कर और अवसरवादी स्थानीय शासकों के समर्थन तथा इराक के कुलीन तबके (*अशराफ*) को प्रसन्न कर 661 सी ई में वह खलीफा बनने में सफल रहा। अपने प्रशासन में उमय्यद काफी हद तक तत्कालीन बाइज़ेंटाइन परंपराओं पर निर्भर थे, इसलिए प्रमुख सीरियाई ईसाई भी उनकी प्रशासनिक संस्थाओं में शामिल किए गए। उमय्यदों ने नई सिंचाई की तकनीक द्वारा भूमि के पुनः अर्जन और उसके विस्तार की नई संभावनाएं पैदा कीं। मारवानिद उमय्यद खिलाफत काल में तीन बदलाव सामने आएः (1) सुदूर पूर्व में सिंध तक और पश्चिम में आइबेरियन प्रायद्वीप के पार तक बड़े पैमाने पर विजय अभियान, (2) *दीवान* प्रथा और सिक्कों का अरबीकरण, तथा (3) नौकरशाही तथा प्रशासन का केंद्रीकरण। उमय्यद शासन इस्लाम के प्रति अपनी निष्ठा के कारण टिका रहा, लेकिन साथ ही उसने अरब कबीलों के गठजोड़ का भी सम्मान किया। इसी के साथ किसानों और व्यापारियों से कर के जरिए विशाल राजस्व उगाहने के अपने कौशल के कारण वे खूब फले-फूले। खुरासान के एक मुस्लिम गवर्नर ने एक बार जोर देकर कहा था, 'मुसलमानों की ताकत *खराज* (भूमिकर) में मौजूद है'।

अब्बासिद साम्राज्यवादी राजवंश ने अपना शासन बगदाद से चलाया, अब्बासिद प्रशासन अत्यंत केंद्रीकृत और जटिल हो गया और राजकीय कार्यालयों में ईरानी कुलीनों की भरमार हो गई। अब्बासिद प्रशासन में आश्रय और संरक्षण की प्रमुखता थी। अब्बासिदों ने, पहले खुरासानियों और बाद में तुर्कियों को संरक्षण दिया और ईरानी *दिहकानों* (किसानों) को भी उनमें शामिल किया। *वजीरों* के पद पर ईरानी बरमाकिद परिवार के सदस्यों का वर्चस्व था।

इसीलिये इरा लैपिडस टिप्पणी करती हैं कि अब्बासी शासन काल में क्षेत्रीय और स्थानीय ताकतों को संरक्षण देना अब्बासिदों के लिए जरूरी था क्योंकि, 'हर समुदाय के प्रमुख व्यक्ति उनके मुखिया, भूस्वामी और धनाढ्य एवं समर्थ लोग ही थे, जिनका समाज में रुतबा था, वे विशिष्ट रूप से प्रांतीय और केंद्रीय प्रशासन में पदासीन ताकतवर लोगों से जुड़े हुए थे और उनका संरक्षण प्राप्त करते थे। सरकारी संगठन, सरकारी सूचना और कर वसूली का पूरा ढांचा अपनी प्रकृति में नौकरशाही था, लेकिन जिस सामाजिक तंत्र की सहायता से यह सांगठनिक ढांचा काम करता था, वह केंद्रीय अफसरों और प्रांतीय अभिजात्यों के संपर्कों के आधार पर ही कायम था।'

पाठ्यक्रम की यह इकाई मुआविया प्रथम के अधीन इस्लामी खिलाफत की बदलती तस्वीर को रेखांकित करती है, विशेष रूप से अब्दुल मलिक बिन-मारवान के काल से, जब भू राजस्व पर उमय्यदों का नियंत्रण सख्त हुआ और नए सिक्के प्रचलन में लाए गए। आगे के भाग में यह बताया जाएगा कि किस तरह उमय्यदों के समाज का स्वरूप घुमंतू विजेताओं की जगह आबाद स्थायी समाज में रूपांतरित हुआ, तथा उनकी सौंदर्य-दृष्टि और भौतिक संस्कृति कैसी थी। उमय्यदों के अधीन राजकीय भूमि, व्यापार और सिंचाई व्यवस्था पर यहां विशेष ध्यान दिया गया है। अब्बासिदों के बारे में जो उप-भाग हैं, उनमें आप पढ़ेंगे कि अल-मंसूर ने उनमें क्या क्या सुधार किए। उसने अनेक *दीवानों* के जरिए प्रशासन को भी मजबूत बनाया। बाद में हारून और अल-मामून के समय में उन *दीवानों* की संख्या बढ़ाकर 20 कर दी गई। अल-मामून के समय अब्बासी सेना का संघटन नाटकीय ढंग से परिवर्तित हुआ और सैन्य संस्थाओं में तुर्कों का प्रभुत्व बढ़ गया। आखिरी भाग में आप अब्बासिदों के शासन काल की सिंचाई व्यवस्था, किसानों, खलीफाओं के भू-क्षेत्र, कर विधान और *दीवान* नामक संस्था के बारे में जानेंगे।

14.2 विशाल उमय्यद खिलाफत : सूफयानिद काल[1]

661 सी ई में खलीफा अली की हत्या के तुरंत बाद ही सीरिया के गवर्नर मुआविया प्रथम ने उमय्यद खिलाफत की नींव रखी, जिसके साथ ही प्रथम *फितना* (मुसलमानों में अपने ही बीच गृह युद्ध; *फितना* के बारे में विस्तार से जानने के लिए देखें इकाई 13) की समाप्ति हुई। इस अत्यंत सफल रहे वंश के प्रथम उमय्यद खलीफा मुआविया दो कारणों से अपनी राजधानी दमिश्क ले गयेः एक तो इस शहर में सार्वलौकिक खुलापन था, और दूसरे, मदीना में मुआविया को लेकर लोगों में आक्रोश था। मदीना में मुआविया की कृषि गतिविधियों ने ***अमसारों*** को बड़े पैमाने पर नाराज कर दिया था। मदीना के बाशिंदे यह महसूस करते थे कि एक प्रवासी भूमिपति उनका शहर हथिया रहा है। इसके अलावा मुआविया लगभग 15 वर्षों तक सीरिया का गवर्नर रहा था। इसलिए इतने बड़े साम्राज्य के प्रशासन हेतु सीरिया का विन्यास सटीक था और वहां मुआविया प्रथम की ताकत का मजबूत आधार भी था।

अपने शासन काल में (661 से 680 सी ई) मुआविया प्रथम ने अपने राजनीतिक प्राधिकार को इस प्रकार पुनर्व्यवस्थित किया कि वह प्रशासनिक नौकरशाही की गुटबाजी का सामना कर सके और मुस्लिम *उम्मत* की राजनैतिक एकता को भी बनाए रख सके। मुआविया प्रथम के दौर में इस्लामी खिलाफत का दूर-दूर तक अतुलनीय विस्तार हुआ – उक्बा बिन नफी के नेतृत्व में उत्तर अफ्रीका में फिर से विजय प्राप्त की गई और जियाद इब्न अबी सूफियान के नेतृत्व में पूर्वी इरान के खुरासान में भी, जो ट्रांसोक्सियाना का प्रवेश द्वार था, विजय अभियान हुए। खुरासान में पचास हजार से ज्यादा अरब परिवार बसाने के लिए भेजे गए। खलीफा मुआविया प्रथम ने खुरासान को एक अलग प्रांत बनाकर उबैदुल्ला इब्न जियाद को उसका

[1] मुआविया के उत्तराधिकारी सूफयानिद के रूप में जाने जाते थे क्योंकि मुआविया, अबू सूफयान का वंशज था।

गवर्नर नियुक्त कर दिया। मुआविया प्रथम एक शक्तिशाली सेना तैयार करने में सफल रहा, जिसमें अधिकतर सीरियाई कबीले भर्ती थे। उसने मारमोरा सागर के चारों ओर अपनी नौसेना भी खड़ी की। ये सभी बड़े अभियान लूट की नीयत से चलाए गए, ताकि कबीलों के मुखियाओं को संतुष्ट रखा जा सके तथा आपस में झगड़ रहे कल्ब और कुदा कबीलों का रुख विदेशी जमीन की तरफ मोड़ा जा सके। प्रांतीय करों (***जकात*** और *खराज*) के अलावा मुआविया प्रथम ने राजकीय राजस्व को निम्नलिखित तीन तरीकों से बढ़ाया :

1) ***सीमावर्ती युद्ध*** **:** यह लूट और नज़राना के लिए था ताकि सीरियाइयों की निष्ठा बनाए रखी जा सके।

2) ***विस्तृत कृषि गतिविधियां*** : *मवाली* श्रमिकों की मदद से बड़े पैमाने पर खेती का विस्तार। इसके द्वारा राजकोष के लिए भारी आय सुनिश्चित हुई। इराक में विशाल भू-क्षेत्रों पर खेती शुरू की गई और उस भू-क्षेत्र को खलीफा ने अपने ही नियंत्रण में रखा।

3) ***कर वृद्धि और पारंपरिक नज़रानों की मांग*** **:** मुआविया प्रथम ने मिस्र के करों में वृद्धि की और इसी तरह ईरानियों से *नवरुज* (के नज़राने) की मांग की।

मुआविया प्रथम निस्संदेह एक अनुभवी प्रशासक था। उसने शासन से जुड़े कुलीनों की सरल और कार्यकुशल व्यवस्था बनाई और प्रभावी संचार के लिए एक मजबूत डाक व्यवस्था तैयार की। अरब इतिहासकारों का विचार था कि अपने आपको परम अधिकारी या सर्वोच्च सत्ता के स्वामी के रूप में दर्शाने की जगह मुआविया प्रथम एक *'हिल्म'* (संयमी और आत्म विवेकी व्यक्ति) की तरह काम करता था। वह अपने ऊपर हमेशा नियंत्रण रखता था, निर्णायक और गूढ़ फैसले लेता था और अंतर-कबीलाई शत्रुता के मामले में स्पष्ट संतुलन बनाकर रखता था। एम.ए. शाबान के मुताबिक, 'यह समझते हुए कि किसी भी गुट को पूरी तरह से संतुष्ट करना पूरी तरह से संभव नहीं था, उसने (मुआविया प्रथम) अपने अधिकारों की धौंस दिखाने के बजाय सर्वमान्य समझौते कराते समय लोगों की शांति की व्यापक इच्छा का लाभ उठाया। वह निश्चित रूप से *'अमीर-उल मुमीनीन'* था, लेकिन अन्य अरब सरदारों से बात करते समय ज्यादा से ज्यादा अपने आप को *'बराबरी वालों में श्रेष्ठ'* जैसा ही पेश करता था। उसने अली की सत्ता की अपमानजनक असफलता देखी थी, इसलिए वह अपने आप को धार्मिक सत्ता की दावेदारी से सावधानीपूर्वक अलग रखता था।'

अली की हत्या के बाद मुआविया प्रथम ने उसके बड़े बेटे हसन से संपर्क स्थापित किया और उसके साथ एक शांति संधि की, इराकी संभ्रान्तों (बड़े कबीलाई अरब मुखिया) से समझौते किए और उन्हें आश्वस्त किया कि इराक पर उनकी सत्ता बनी रहेगी, बशर्ते वे उसे खलीफा स्वीकार कर लें। मुआविया प्रथम ने इराकी *अशराफों* (संभ्रांतों) को इराक और ईरान में अबाधित अधिकार दिए। जैसा कि पहले बताया गया है कि मुआविया के आदेश पर बड़ी संख्या में अरब परिवार खुरासान में आबाद हो गए और उन्होंने वहां की अधिकांश उपजाऊ जमीनों पर कब्जा कर लिया। सूफ़यानिदों के दौर में उमय्यद खिलाफत का राज्य संघटन मजबूती से केंद्रीकृत नहीं था। वह कबीलाई राज्य-तंत्र का प्रतिनिधित्व करता था, जिसकी बुनियाद प्रभुत्वशाली पितृसत्तात्मक अरब कबीला प्रमुखों के आपसी समझौतों पर टिकी थी। इसलिए वह प्रशासन और राज्य-तंत्र, दोनों ही मामलों में विकेंद्रित व्यवस्था थी। एक व्याख्या यह भी है कि मुआविया प्रथम ने अन्य प्रांतों पर शासन के लिए अपनी सैन्य शक्ति के इस्तेमाल से परहेज रखा; 'जब कि उसने स्वयं को सीरिया में स्थापित रखा और प्रांतों के प्रशासन के लिए स्थानीय कुलीनों पर भरोसा किया और अपनी ओर से सिर्फ हल्के निर्देष दिए।'

मुआविया प्रथम का विवाह कल्ब कबीले में हुआ था, जो सीरिया का एक शक्तिशाली बद्दू कबीला था। ईसाईयों के प्रति उसने सहिष्णुता बनाए रखी। अपनी मृत्यु के बाद किसी रक्तपात की आशंका से बचने के लिए उसने अपने बेटे यजीद बिन मुआविया (680 से 683

सी ई) को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया और इस तरह इस्लामी खिलाफत को वंशानुगत शासन में बदल दिया।

यजीद को अली के बेटे हुसैन और अब्दुल्ला इब्न ज़ुबैर की ओर से चुनौती मिली। हुसैन के विद्रोह के कारण यज़ीद के तीन साल के शासन के दौरान गृह युद्ध जैसी स्थिति बनी रही। करबला के मैदान में हुए नरसंहार में हुसैन की उनके अनेक रिश्तेदारों के साथ शहादत हुई। अब्दुल्ला इब्न जुबैर ने यजीद के खलीफा होने के अधिकार को नहीं माना था, इसलिए एक दशक तक वह उसका कट्टर विरोधी बना रहा। 683 सी ई में यजीद की मृत्यु के बाद उमय्यद राज्य-तंत्र लडखड़ाने लगा, क्योंकि उसके बाद उत्तराधिकारी के रूप में शासक बना मुआविया द्वितीय अक्षम था और वह राजनैतिक वैधता हासिल नहीं कर सका। 692 सी ई में अब्दुल्ला इब्न ज़ुबैर मक्का में मारे गए। इस बीच उमय्यदों के कबीले में आपसी लड़ाई फूट पड़ी और 684 सी ई में मारवान प्रथम ने सूफयानिद शाखा को सत्ताहीन कर दिया। इसलिए इस शाखा के परावर्ती शासकों को, जो उसके उत्तराधिकारी बने, 'मारवानिद' या 'बानू मारवान' कहा गया (उम्मयद राज़्य के विस्तार के लिए *मानचित्र* 13.1 देखें)।

14.3 उमय्यद खिलाफत : मारवानिद काल

उमय्यदों के मारवानिद् वंश का संस्थापक मारवान प्रथम जब मुआविया द्वितीय को अपदस्थ कर खलीफा बना, तब तक वह काफी वृद्ध हो चुका था। वह खलीफा उस्मान के अधीन काम कर चुका था। उसकी मां अमीना बिंत अलकामा प्रभुत्वशाली *बानू कल्ब* कबीले से संबंधित थीं। चूंकि मारवान प्रथम का सीरिया में स्वयं का कोई आधार नहीं था, वह पूरी तरह से यमनी कबीले के अशराफों पर आश्रित था, जिन्होंने उसे चुना था। अपने राज्यारोहण के समय मारवान प्रथम ने नई व्यवस्था में *कुदा* कबीले पर हमेशा कृपादृष्टि बनाए रखने का वादा किया। जब इब्न बहदल ने सीरियाई *अशराफों* की सभा बुलाई, उसके कुछ ही समय बाद जाबिया में हुए *शूरा* ने कुछ वित्तीय वादों की एवज में मारवान प्रथम को उमय्यदों की ओर से अपना उम्मीदवार घोषित कर दिया।

दूसरे फितना (मुआविया द्वितीय के समय की राजनैतिक अव्यवस्था) के दौरान मारवान प्रथम ने खिलाफत के लिए अब्दुल्ला इब्न जुबैर की उम्मीदवारी का विरोध किया था। जुबैर ने मारवान प्रथम को सफलता पूर्वक हेजाज़ से बाहर खदेड़ दिया। मारवान प्रथम को लग रहा था कि अब जुबैर की ताजपोशी निश्चित है। लेकिन उसी समय खुरासान और बसरा के उमय्यद गवर्नर उबैद इब्न जियाद ने मारवान प्रथम को खिलाफत के लिए उमय्यदों का उम्मीदवार घोषित कर उनकी राजनीति में पुनः वापसी कर दी। सीरिया में रहते हुए इब्न जियाद ने – जिसने बानू कैस और उनके नेता अल-दहक इब्न कैस को परास्त किया – 684 सी ई में कैस (उत्तरी) और कल्ब (दक्षिणी) कबीलों के बीच हुई मर्ज राहित की लड़ाई में इब्न ज़ुबैर की खलीफाई हेतु नुमाइंदगी को स्वीकार किया था। इसी नेता ने खिलाफत के लिए इब्न जुबैर की उम्मीदवारी का समर्थन किया था। इस निर्णायक लड़ाई के बाद उमय्यद उत्तराधिकार का संकट लगभग सुलझ गया और मारवान इब्न अल-हक्काम के खलीफा की गद्दी पर बैठने से 684 सी ई में उमय्यद सत्ता फिर से बहाल हो गई।

अब्दुल मलिक बिन मारवान : उमय्यदी नियंत्रण का सुदृढ़ीकरण

दूसरे *फितना* की समाप्ति पर मुआविया प्रथम के बाद उमय्यद वंश का सबसे यशस्वी शासक अब्दुल मलिक बिन मारवान दो दशकों तक (685 से 705 सी ई) गद्दी पर आसीन रहा। इस अवधि में अब्दुल मलिक को इराक, हिजाज़ और बाइज़ेंटाइन में शत्रु पक्ष से जूझना पड़ा। अब्दुल मलिक ने जो नीतियां लागू कीं और प्रशासनिक सुधार किए, वे उसके परावर्ती विशेषकर अब्बासिदों के जमाने तक जारी रहे, हालांकि उनका दृष्टिकोण अब्दुल मलिक से

बिलकुल अलग था। उसकी नीतियां उमय्यद साम्राज्य में राजनैतिक स्थिरता और समरूपता ले आईं।

दूसरे *फितना* के आरंभ से ही सीरिया, इराक और खुरासान के मुस्लिम सेनापतियों ने बड़ी संख्या में बगावत करते हुए प्रतिद्वंदी खिलाफत के उम्मीदवार अब्दुल्ला बिन ज़ुबैर के साथ मक्का में जा मिले। इसलिए सबसे पहले अब्दुल मलिक ने बाइज़ेंटाइन सम्राट से एक युद्ध विराम संधि की, (जो उमय्यदों के विकट और पुराने शत्रु थे) जिससे कि वह खरीजी प्रभुत्व वाले इराक के बसरा में उमय्यद सत्ता को प्रभावी ढंग से स्थापित कर सकता था, और यह उसने बिना विलंब किए 691 सी ई में किया। अगले साल अब्दुल मलिक की सेना, मक्का में घोषित खलीफा अब्दुल्ला बिन जुबैर की सेना से भिड़ गई। इराक और उमय्यदों के पूर्वी क्षेत्र के गवर्नर अल-हज्जाज बिन युसुफ ने उमय्यदी सेना का नेतृत्व किया और 692 सी ई में मक्का में जुबैर और उसके अनुचरों को परास्त कर दिया। मुस्लिम इतिहास में इस साल को 'संप्रदाय की एकजुटता का साल' के रूप में याद किया जाता है।

अब्दुल मलिक ने बाइज़ेंटाइन राज्य के सम्राट जस्टीनियन द्वितीय (685 से 695 सी ई) से तब तक संधि बनाए रखी, जब तक उसकी आंतरिक समस्याएं प्रभावी ढंग से निबट नहीं गईं। बाइज़ेंटाइन इतिहासकार संत थियोफनीस (758 से 817 सी ई) के शब्दों में, 692 सी ई के बाद (यानी दूसरे *फितना* की समाप्ति) बाइज़ेंटाइन शासक जस्टीनियन द्वितीय ने अरब सिक्कों में नज़राना लेने से मना कर दिया, जिसकी वजह से एक दशक पुराना शांति समझौता टूट गया। अपने साम्राज्य में कायम हो चुकी शांति से बढ़े आत्मविश्वास के बलबूते अब्दुल मलिक अनातोलिया तक आगे चढ़ आया और 693 सी ई में काला सागर के निकट सेबस्टोपोलिस के युद्ध में बाइज़ेंटाइनी सेना (जिनमें ज्यादातर स्लाव थे) को परास्त कर दिया। भविष्य में उमय्यद सत्ता को भीतर या बाहर से कोई चुनौती नहीं मिले, इसके लिए खलीफा ने राज्य निर्माण के ऐसे सफल कदम उठाए जिसके द्वारा आधिपत्य स्थापित करने वाले साधनों को परिवर्तित और मजबूत किया गया तथा सत्ता के केंद्रीकरण के दौर की शुरुआत हुई।

सिक्के

अब्दुल मलिक के द्वारा प्रचलित नए सिक्कों के प्रचलन में आने से पहले उमय्यद साम्राज्य में दो तरह के सिक्के व्यवहार में लाए जाते थे:

अरब-बाइज़ेंटाइन किस्म : प्रारंभिक इस्लामिक सिक्के **यूनानी या अरबी लिखावट** में ईसाई छवियों और प्रतीक चिह्नों के साथ बाइज़ेंटाइन सिक्कों की नकल में ढाले गए थे (चित्र 1)। बाइज़ेंटाइनों के सामान्य पारंपरिक बाइज़ेंटाइनी सिक्कों पर ईसा का चित्र (bust) या

चित्र 1: बाइज़ेंटाइनी सिक्का: जस्टीनियन प्रथम (527 से 565 सी ई) हाफ फोलिस: कांस्टेन्टीनोपल टकसाल : 538-539 सी ई।
साभार: अंग्रेजी विकीपीडिया, मूल अपलोड Panairjdde **द्वारा**
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/5/51/Half_follis-Justinian_I-sb0165.jpg

क्रास का निशान बना होता था। बाइज़ेंटाइनी सिक्कों की नकल में ढाले गए उमय्यदों के सिक्कों का विवरण देते हुए अल-बालादुरी ने लिखा कि रोम, मिस्र से कागज मंगाता था और मुस्लिम रोम से दीनार लेते थे।

अरब-सासानी किस्मः ये वह प्रारंभिक इस्लामी सिक्के थे, जिन पर ईरानी या अरब प्रतीक चिह्न बने होते थे और जो सासानी शैली का अनुकरण करते हुए ढाले गए थे, जिन्हें *दरहम* कहा जाता था। पारंपरिक सासानी सिक्कों पर सामने की ओर बादशाह खुसरू द्वितीय (590-628 सी ई) का चित्र और पीछे की ओर अग्नि वेदी बनी हुई थी (**चित्र 2**)।

चित्र 2: अरब-सासानी सिक्का : बहराम द्वितीय, उसकी रानी शापुरदुखतक और राजकुमार बहराम सकनशाह

साभारः Classical Numismatic Group; https://www.cngcoins.com/Coin.aspx?CoinID=133971

स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/4/46/Bahram_II%2C_with_Queen_and_Prince.jpg

लेकिन 680 सी ई के बाद अब्दुल मलिक मारवान ने अपने शासन क्षेत्र में एक विशेष शैली के सिक्के जारी किए, जो पूरी तरह से अरबी शैली वाले थे और जिसने बाइज़ेंटाइन तथा सासानी सिक्कों को प्रचलन से बाहर कर दिया। अब्दुल मलिक का यह निर्भीक कदम न सिर्फ सिक्कों को, बल्कि उसके पूरे प्रशासनिक ढांचे का अरबीकरण करने का स्पष्ट प्रमाण माना गया। सिक्कों का यह मानकीकरण बुनियादी रूप से 'बाइज़ेंटाइनी शत्रुओं के खिलाफ विचारधारात्मक और आर्थिक युद्ध की अभिव्यक्ति थी'।

चित्र 3: सिक्कों में सुधार के पहले का दीनार (693 से 695 सी ई)

साभारः PHGCOM, 2008

स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/b/bd/First_Umayyad_gold_ dinar%2C_Caliph_Abd_al-Malik%2C_695_CE.jpg

चित्र 4: सिक्कों में सुधार के बाद का *दीनार* (696 सी ई से) : उमय्यद खलीफा अब्द अल-मलिक इब्न मारवान द्वारा दमिश्क (सीरिया) में ढलवाई गई सोने की दीनार : ए एच 75 (697-698 सी ई)

साभार: thefireball777 , November 2014

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/a/a3/Dinar_of_Abd_al-Malik%2C_AH_75.jpg

अब्दुल मलिक की खिलाफत में (**चित्र 3**, सोने की *दीनार*) बाइज़ेंटाइन की सोलीदी (Solidi) शैली की नकल करते हुए सोने, चांदी और तांबे के सिक्कों पर तत्कालीन खलीफा का चित्र ढाला हुआ था और बाद में 696 सी ई में हुए सुधारों के बाद मानक *दीनार* (**चित्र 4**) पूरी तरह से शब्द अंकित (epigraphic) बन गया और उन पर से चित्र तथा प्रतीक हट गए। मारवानियों ने त्रि-धात्विक सिक्के जारी किए और हिजाज़ तथा नज्द की सोने की खानों से सोना प्राप्त करने के लिए खनन् कराया।

संभवतः इस्लामी सभ्यता को अब्दुल मलिक मारवान का सबसे महत्वपूर्ण योगदान यह था कि उसने अपने साम्राज्य के दरबारों तथा प्रशासनिक कार्यालयों में यूनानी, कॉप्टिक तथा ईरानी की जगह अरबी को राज भाषा के रूप में स्थापित किया। इस बदलाव के चलते एक मानकीकृत अरबी भाषा-निपुण लेखक वर्ग का जन्म हुआ, जो सरकारी टैक्स रजिस्टर अरबी में लिख सकते थे। उसने भूमि की पैमाइश की नई पद्धति लागू की, कर वसूली की सहूलियत के लिए प्रत्येक व्यक्ति का पंजीकरण करवाया, सिंचाई के लिए अनेक नहरें खुदवाईं और ट्यूनिस में जहाज बनाने का कारखाना स्थापित किया। इब्न खलदून के शब्दों में वह सबसे महान् शासक था, क्योंकि 'उसने राज्य के शासन के मामले में दृढ़तापूर्वक खलीफा उमर के पदचिह्नों का उनके द्वारा मानवीकृत अरबी अनुसरण किया।' एक मजबूत सीरियाई सेना, अपने सिक्कों और कुशल अरबीकृत केंद्रीय शासन तंत्र की बदौलत मारवान शासक आसानी से अपनी सत्ता का विस्तार और अपने पूरे साम्राज्य को संघठित कर सके।

14.4 बाद के उमय्यद

बाद के उमय्यदों (684 से 750 सी ई) के दौर के सामाजिक आर्थिक वातावरण और अंततः 750 सी ई में इस वंश के पतन को ठीक से समझने के लिए यह जानना जरूरी है कि पहले मारवानी खलीफा अब्दुल मलिक के समय में क्या-क्या रूपान्तरकारी बदलाव लाए गए थे।

सूफयानिद उमय्यद राज्य	मारवानिद उमय्यद राज्य
परोक्ष नियंत्रण: मुआविया प्रथम प्रांतों के कामकाज में हस्तक्षेप नहीं करता था, बशर्ते प्रांतों के गवर्नर दमिश्क को कर अदा करते रहें। आरंभ के चार खलीफाओं और मुआविया प्रथम ने अप्रत्यक्ष नियंत्रण की परंपरा बनाए रखी। जिससे प्रांतीय गवर्नरों को अपने मामलों को अपने ढंग से निबटाने की आजादी थी। सूफयान कोर्ट, कार्यालयों और राजकीय अधिकारियों	**प्रत्यक्ष नियंत्रण:** प्रांतीय शासन परोक्ष रूप से चलाने और उसमें सीधे हस्तक्षेप नहीं करने की सूफयानिदों की नीति के विपरीत, मारवानी अपनी केंद्रीकृत शासन प्रणाली की बदौलत हमेशा अशराफों (कबीलाई नेताओं) और गवर्नरों के बीच संतुलन रखने के प्रयास में लगे रहते थे। दूसरे गृह युद्ध के बाद की परिस्थितियों को देखते हुए खलीफा अब्दुल

पर बाइज़ेंटाइन प्रशासनिक शैली का प्रभाव था। इसका कारण यह था कि मुसलमान हालांकि षासक थे, वे सीरिया, खुरासान और मिस्र में अल्प संख्या में थे। बड़े पैमाने पर धर्मांतरण अल-वलीद के बाद शुरू हुआ चूंकि उमय्यद राज्य ने न सिर्फ खुद को विजय अभियानों से विमुख कर लिया, बल्कि आम लोग भी रोजगार की तलाश में कूफा, बसरा आदि छावनी शहरों की ओर पलायन करने लगे।	मलिक ने सीरियाई सैनिकों की एक विश्वस्त साम्राज्यवादी सेना खड़ी की, जिसकी जवाबदेही अमीर उल मुमिनीन (खलीफा) तथा गवर्नरों के प्रति होती थी। वह सेना उमय्यद साम्राज्य की रक्षा, उसके औपचारिक नियंत्रण और केंद्रीकृत प्रशासन में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी।
निरंतरता और विकेंद्रिकृतः मुआविया और यजीद प्रथम के काल में उमय्यद राज्य तंत्र प्रांतों के सीधे नियंत्रण पर आधारित नहीं था। राजनैतिक और प्रशासनिक ढांचे में इसकी निरंतरता सूफ़यानी उमय्यदों के काल में भी झलकती थी। इसलिए साम्राज्य के दरबार और सरकारी कार्यालयों में शासकीय भाषा यूनानी, कॉप्टिक और फारसी बनी रही। हालांकि सत्ता सीरियाई अरबों के हाथों में थी, सूफयानी प्रशासन के दस्तावेज अभी भी यूनानी में लिखे जाते थे। खरीद-फरोख्त के लिए उन क्षेत्रों में क्रमशः सासानी और बाइज़ेंटाइन सिक्के ही चलते थे।	**रूपांतरित और केंद्रीकृतः** मारवानियों के समय में गवर्नरों का चुनाव उनके कुल गोत्र के संबंधों से नहीं, बल्कि योग्यता के आधार पर होता था। यूनानी और फारसी को हटाकर अरबी को राजकीय भाषा बनाया गया था। और नए इस्लामी सिक्के चलाए गए थे। अब्दुल मलिक ने सीरिया और इराक में राजस्व रजिस्टरों के अरबीकरण की भी शुरुआत की थी, जिन्हें दीवान कहा जाता था। उनमें सैनिकों के नाम और उनके वेतन आदि (पे रोल) दर्ज किए जाते थे। बाद में अल-वलीद के जमाने में मिस्र में ये दीवान सिर्फ अरबी में लिखे जाने लगे। मारवानी अपने प्रांतीय प्रशासन, जनता और गवर्नरों पर सीधा नियंत्रण रखते थे।
योग्यता की जगह रक्त संबंधः सूफयान काल में आमतौर पर गवर्नर (*अमीर*) वही नियुक्त किए गए, जो खलीफा के रिश्तेदार और उमय्यद वंश से होते थे। मुआविया प्रथम संगठित स्थायी सेना के बदले अपने निजी रक्षक रखता था। सूफयानों ने अपनी कोई पेशेवर सेना नहीं खड़ी की, बल्कि किसी भी विद्रोह को दबाने के लिए वे सीरियाई सैनिकों पर आश्रित रहे।	**रक्त संबंधों की जगह योग्यता और कौशलः** सैन्य योग्यता और प्रशासनिक कौशल वाले लोगों को तरक्की देकर प्रांतों का *अमीर* (गवर्नर) बनाया जाने लगा, (जैसे अल-हज्जाज)। अब्दुल मलिक ने सीरियाई टुकड़ियों वाली एक शक्तिशाली स्थायी सेना खड़ी की, जिन्हें उपद्रवग्रस्त इलाकों में भेजा जाता था और सामान्य करों में से जिन्हें वेतन दिया जाता था। इसके अलावा प्रांतीय सेनाएं भी थीं। अब्दुल मलिक के नेतृत्व में मारवानियों ने अरब इस्लामी पहचान की शुरूआत की और उसे आगे बढ़ाया।

अल-वलीद (705-715 सी ई) ने अपने पिता अब्दुल मलिक के सैन्य अभियानों तथा उपक्रमों को ज़ारी रखा। उसके शासन काल में उमय्यद साम्राज्य का भौगोलिक विस्तार अपनी पराकाष्ठा पर जा पहुंचा। अल-हज्जाज और मुहम्मद बिन कासिम के नेतृत्व में मुस्लिम सेना ने क्रमशः ट्रांसऑक्सियाना और पूरब में सिंध तक विजय प्राप्त की। 711 सी ई में पश्चिम में तारिक इब्न ज़ियाद के नेतृत्व में उसने स्पेन तक फतह हासिल की। अल-वलीद ने मिस्र में *दीवानों* (रजिस्टरों) के अरबीकरण का कार्य पूरा किया। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि खुरासान में *दीवानों* के अरबीकरण का कार्य नस्र बिन सयीर ने किया। वलीद ने मदीना में पैगंबर की मस्जिद का भी जीर्णोद्धार कराया और येरुशलम में शिला-गुंबद (Dome of Rock) के निकट एक विशाल भवन का निर्माण कराया, जिसे अल-अक्सा मस्जिद के नाम से जाना जाता है। 715 सी ई में उमय्यदों की गद्दी पर सुलेमान बिन अब्द अल-मलिक आसीन हुआ और 717 सी ई तक शासन किया। इस तथ्य के विशिष्ट ऐतिहासिक प्रमाण मिलते हैं कि उसने न सिर्फ बेहद योग्यता से प्रांतीय गवर्नर हटाए या नियुक्त किए, बल्कि *काज़ियों* (न्यायधीश) का चयन सीधे दमिश्क से किया। प्रांतीय अधिकारी किसी भी नियुक्ति की शक्ति और अधिकार से वंचित कर दिए गए। अब्दुल मलिक बिन मारवान की तरह उसके सभी उत्तराधिकारियों, वलीद प्रथम (705 से 715 सी ई), यजीद द्वितीय (720 से 724 सी ई), हिशाम (724 से 743 सी ई) और वलीद द्वितीय (743 से 744 सी ई) ने कॉस्टैंटिनोपल पर लगातार हमले किए और कई बार उसकी घेरेबंदी भी की।

लेकिन उमर द्वितीय (717 से 720 सी ई) ने उमय्यद कर प्रणाली को पुनर्व्यवस्थित किया, जिसे 'राजकोषीय पुनर्लेख' (*फिस्कल रेसक्रिप्ट*) के नाम से जाना जाता है। अपने राजनैतिक प्रयासों में उमर द्वितीय ने उमय्यद राज्य को अनावश्यक राजनीतिक विवादों में उलझने से बचाकर रखा। एच. ए. आर. गिब्ब का तर्क है कि उमर द्वितीय ने अरबों की एकजुटता बनाए रखी, *मवालियों* (नव दीक्षित) की शिकायतों का समाधान किया और राजनीतिक जीवन तथा धार्मिक दावों के बीच की टकराहट खत्म की। अपने अधिकारों और कर्तव्यों के मामले में नव दीक्षित (*मवाली*) भी अरबों के बराबर और समान समझे गए। ये नव दीक्षित अपनी जगहें छोड़ कर *अमसार* (छावनी शहरों) की तरफ पलायन कर रहे थे। इन नव दीक्षितों की जमीनें खेती योग्य बनाई गईं और कर व्यवस्था (*खराज*) के अंतर्गत लाई गईं। उमर द्वितीय ने बाद में न सिर्फ कॉस्टैंटिनोपल की घेराबंदी के लालच से स्वयं को दूर रखा, बल्कि खारिजियों के विद्रोह के समय सख्ती और ताकत का इस्तेमाल करने की जगह उसे बातचीत से सुलझाने का रास्ता चुना। आखिरी उमय्यद खलीफा मारवान द्वितीय (744 से 750 सी ई) ने अपना शासन दमिश्क से चलाया। उसके शासन के दौरान पूरे इराक और खुरासान में उमय्यदों के खिलाफ हो रहे विद्रोहों को व्यापक समर्थन मिला। 750 सी ई में खुरासान के लोगों ने अबू मुस्लिम के नेतृत्व में बगावत कर दी, जिसने इराक में ज़ाब की लड़ाई में मारवान द्वितीय को बुरी तरह से पराजित किया। आखिर में मारवान द्वितीय और उसका पूरा परिवार (अब्दुर रहमान को छोड़ कर) अब्बासी राजवंश के संस्थापक अब्बास अल-सफा द्वारा मिस्र में मारा गया।

पैट्रिशिया क्रोन के अनुसार, उमय्यदों का बाद का समय सामाजिक-सांस्कृतिक विकास की दृष्टि से समृद्ध था, क्योंकि वह एक *उत्तर-कबीलाई व्यवस्था* के काल की शुरुआत कर रहा था और साथ ही एक *विशिष्ट इस्लामिक संस्कृति* विकसित कर रहा था। उत्तर-उमय्यद काल में आजाद गैर-अरबों, जिन्हें *मवाली* कहा जाता था, का बड़े पैमाने पर इस्लाम में धर्मांतरण हुआ। और अब्दुल मलिक के समय में 'ग्रामीण लोग इस उम्मीद में छावनी शहरों की तरफ पलायन करने लगे कि धर्मांतरण के बाद वहां वे विजेता सेना का अंग बन जाएंगे।' लेकिन पराजित गैर-अरबों के इस्लामीकरण ने, जो बुनियादी तौर पर पहले उनके करदाता थे, अरब समाज के सम्पूर्ण सांस्कृतिक और राजस्व ढांचों की नींव हिला दी। उत्तर उमय्यद काल में अरब सैनिकों के कृषिकरण की प्रक्रिया के रूप में एक दूसरा बड़ा सामाजिक परिवर्तन भी आकार ले रहा था क्योंकि आठवीं सदी के आते-आते मुस्लिम समाज छावनियों में रहने वाले विजेता सैनिकों से रूपांतरित होकर वाणिज्य, व्यापार तथा कृषि में स्थिर समाज व्यवस्था का अंग बन गये थे। जैसा कि खुरासान में हुआ था।

उमय्यद काल में *मवाली*

उमय्यदों के समय में जो गैर-अरब लोग इस्लाम में धर्मांतरित हुए, उनके और अरबों के बीच मालिक-सेवक (*मौला-मवाली*) जैसा संबंध नजर आता है। पहले यह अंतर केवल धारणात्मक था, लेकिन बाद में अरबों को ज्यादा वेतन, पेंशन, जमीनें और अन्य सुविधाएं मिलने लगीं और सामाजिक पदानुक्रम में वे एक उच्च वर्ग बन गये। उमय्यद खास कर *मवालियों* से ज्यादा कर वसूलते थे, जिन्हें पहले से ही *अरबों* से कम तनख्वाह मिलती थी। *अरबों* को *मवालियों* (गैर-अरब धर्मांतरितों) से शादी-ब्याह करने से हतोत्साहित किया जाता था। दक्षिणी इराक में *मवाली* व्यापार और दुकानदारी करते थे और कुछ अपने मालिकों (*अरब-मौला*) के लिए व्यापारिक कारवां ले कर जाते थे। उमय्यदों ने अरब *नसब* (अरब नस्ल, अनुवांशिकी) पर जोर दिया, इसलिए सिर्फ अरब ही मालिक बन सके। हिशाम के काल में उमय्यदों ने खुरासान के धर्मांतरितों का *खराज* शुल्क माफ करने का वादा किया था, लेकिन ईरानी *दहकानों* ने उमय्यद गवर्नरों को चेताया कि इससे राज्य के राजस्व को कितना बड़ा घाटा उठाना पड़ेगा, इसलिए उमय्यदों ने *मवालियों* पर शुल्क लगाना जारी रखा, हालांकि वे धर्मांतरित हो चुके थे। इसने खुरासान में जन-विद्रोह की स्थितियां पैदा कर दीं। इस बीच ये *मवाली* न सिर्फ आर्थिक क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर चुके थे, बल्कि वे प्रशासन में भी अच्छे पदों पर मौजूद थे और बौद्धिक नेतृत्व

देने लगे थे। ज्यादातर *मवाली* बराबर का अधिकार पाने के लिए संघर्ष कर रहे थे, इसलिए उमय्यदों को सत्ता से बाहर करने के लिए हुई अब्बासी क्रांति में वे अग्रणी थे।

नौवीं सदी का एक स्पेनी अरब विद्वान इब्न अब्द रब्बीही (860-940 सी ई) उस समय की अरब व्यवस्था में *मवालियों* की दशा का चित्रण करते हुए लिखता है:

वे (*कुछ अरब लोग*) कहते थे कि इबादत के समय सिर्फ तीन चीजें बाधा डालती हैं – गधे, कुत्ते और *मवाली*। *मवाली कुन्या* (अनुवांशिकी) का प्रयोग नहीं करते थे, उन्हें उनके अपने नाम या उप-नाम से पुकारा जाता था। लोग रास्तों में उनके बराबर नहीं चलते थे और जुलूसों में उन्हें आगे चलने की इजाजत नहीं दी जाती थी। अगर वे भोजन के समय मौजूद होते थे, तो वे (*मवाली*) खड़े रहते थे... जनाजे के समय यदि अरब मौजूद होते थे, तो वे *मवालियों* को जनाजे की नमाज पढ़ने की इजाजत नहीं देते थे।

14.5 उमय्यदों का सौंदर्य शास्त्र और भौतिक संस्कृति

उमय्यदों के समय में अरबी को दरबार की भाषा बनने का गौरव मिला। उमय्यदों ने अनेक कवियों को भी संरक्षण प्रदान किया। उनके समय में भवन निर्माण की गतिविधियां भी काफी तेज रहीं।

14.5.1 दरबार संस्कृति

मुआविया प्रथम ने उमय्यदों की समृद्ध राजधानी दमिश्क से अपना शासन चलाया, जहां उसने एक महल बनवाया था, जो उमय्यदों के दरबार का कार्य करता था। कुछ ही समय बाद अब्दुल मलिक ने अम्मान महल बनवाया, जो एक तरह का स्वागत हाल था, जहां वह अपने सैन्य अधिकारियों से मिलता था। उमय्यद दरबारों की संस्कृति मोटे तौर पर वाचिक (oral) परंपरा पर निर्भर थी, इसलिए वहां कामकाज के लिए लिखित दस्तावेजों की ज्यादा जरूरत नहीं थी। दरबार अरबों और अरब संस्कृति का समर्थन करता था; उमय्यद दरबार में आपस में लगातार झगड़ते रहने वाले कवियों की एक तिकड़ी का प्रभुत्व था, जिसमें अल-अख्तल, फराज़दक और जरीर शामिल थे। वे एक विशेष तरह की कविताएं रचते थे, जो *नकायद* (उड़ान) कहलाती थीं। इस तरह की कविताओं में दो प्रतिस्पर्धी कवि कबीलाई श्रेष्ठता स्थापित करने के लिए काव्य युद्ध में एक-दूसरे को अपमानित करते थे। उन्हें इसलिए संरक्षण मिलता था, क्योंकि जैसा कि *किताब-उल अग़ानी* जैसे स्रोत स्पष्ट करते हैं, अरबी गाने सुनना उमय्यद राजकुमारियों का अपना समय गुजारने का पसंदीदा साधन था।

अन्य विधाओं में, अपनी कविताओं के द्वारा उमय्यदों ने कबीलाई खानाबदोशों (उमन-बदावी) के साथ पारस्परिक संबंध बनाये। उमय्यदों के काल में *गजलें* (संबोध गीत), *कसीदों* (प्रशस्ति गान) से अलग होने लगीं। अबू अल-फराज इस्फहानी (897 से 967 सी ई) का ग्रंथ *किताब-उल अग़ानी* (गीतों की किताब) और इब्न अब्दुल रब्बीह (860-940 सी ई) की रचना *इ'क्द अल-फरीद* (गले का विलक्षण हार) जैसे स्रोत उमय्यदों और अब्बासियों के दरबारों की तहजीब, राजाओं की उक्तियों, परंपराओं और जीवन शैली के बारे में बहुमूल्य जानकारी देते हैं। उमय्यद बादशाह यजीद प्रथम (680-683 सी ई) खुद एक बड़ा संगीतज्ञ था। उसने उमय्यद दरबार में वाद्य यंत्रों का सूत्रपात किया। अब्दुल मलिक द्वारा अरबी को अपने दरबार की भाषा बनाने और अपने साम्राज्य में प्रशासन की भाषा बनाने से अरबी भाषा की तेजी से प्रगति हुई। एक अरब क्लासिकल कवि अल-अख्तल, अब्दुल मलिक का राज कवि था।

14.5.2 महल और मस्जिदें

उमय्यदों ने भव्य महलों वाले शहर, बड़ी-बड़ी मस्जिदें, *सुक* (बाजार) और रेगिस्तानी महल (*कस्र*) बनवाए। अब्दुल मलिक ने विशालकाय शैल गुंबद (Dome of Rock) बनवाया था। अल-वलीद द्वितीय के काल में उमय्यद साम्राज्य का दूर-दूर तक विस्तार हुआ। उसने

जेरिको में *कस्र* आमरा और खिरबत अल-मफजर जैसे किलेबंद महल बनवाए। खिरबत अल-मफजर एक रेगिस्तानी महल था जिसकी दीवारें अद्भुत मानव भित्ति चित्रों से सुसज्जित हैं। उमय्यद राजकुमारियां प्लेग से बचने के लिए ग्रामीण भवनों (*विला रस्टिका*) में रहना पसंद करती थीं। ज्यादातर वे रेगिस्तानी महलों (*कस्र*) में रहने के लिए लालायित रहती थीं। अल-वलीद को तीन मस्जिदों के निर्माण और उनके विस्तार का श्रेय जाता है – मदीना, येरुशलम और दमिश्क। पहले की दो मस्जिदों का पुनर्निर्माण कराया गया। भारी नुकसान के बावजूद 'अल-अक्सा मस्जिद का अपना मूल सौंदर्य काफी हद तक बरकरार रहा'। उसने अल-अक्सा की ऐतिहासिक मस्जिद के निर्माण का कार्य भी पूरा करवाया।

चित्र 14.5: अल-अक्सा मस्जिद, येरुशलम

साभार: Godot13; Andrew Shiva / Wikipedia / CC BY-SA 4.0

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/8/87/Jerusalem-2013-Temple_Mount-Al-Aqsa_Mosque_%28NE_exposure%29.jpg

चित्र 14.6: उमय्यदों का रेगिस्तानी महल (*कस्र आमरा*), जॉर्डन

साभार: GregAsche-commonswiki, Nov. 2005;image under the en:GFDL; CCBY-SA 3.0

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/5/53/Qasr_Amra.jpg

दमिश्क की मस्जिद उसी स्थान पर बनाई गई, जहां पहले रोमनों का बृहस्पति (Jupiter) मंदिर था, जिसे बाइज़ेंटाइनों के समय में चर्च में परिवर्तित कर दिया गया था। इसे मदीना की मस्जिद की तर्ज पर 706-716 सी ई में बनवाया गया था। इसमें मुस्लिम और ईसाई दोनों ही प्रार्थना करने जाते थे। लेकिन बाद में अल-वलीद द्वितीय ने एक भव्य और उस समय की सबसे बड़ी मस्जिद के निर्माण के लिए उस पूरी जगह को खरीद लिया। इब्न बतूता (1304-1369 सी ई) ने अपने *रिहला* में अत्यंत सुंदर शब्दों में इसका चित्रण करते हुए लिखा है, 'यह दुनिया की सबसे उत्कृष्ट मस्जिद है, इसकी बनावट सबसे श्रेष्ठ है और इसका सौंदर्य, लालित्य तथा बनावट अनुपम तथा परिपूर्ण है। यह अतुलनीय और अद्वितीय है।'

अल-मुकद्दसी (945-991 सी ई) ने *अहसन-उत तक़सीम* में दमिश्क की मस्जिद के निर्माण के लिए अल-वलीद द्वितीय के अनुराग के बारे में अपने चाचा को उद्धृत करते हुए लिखा है, 'अल-वलीद बिल्कुल सही था। वह देख रहा था कि सीरिया एक ऐसा देश है, जहां ईसाई बसे हुए हैं। उसने वहां उनके चर्च देखे, जो अत्यंत सुंदर थे, जिनकी सजावट सम्मोहित कर देने वाली थी, जिनकी दूर-दूर तक प्रसिद्धि थी। इसलिए उसने मुसलमानों के लिए एक ऐसी भव्य मस्जिद का निर्माण शुरू कराया, जो चर्च से उनका ध्यान इधर खींच लेगी और दुनिया के आश्चर्यों में से एक होगी।'

बोध प्रश्न-1

1) मुआविया प्रथम ने अपनी खिलाफत की राजधानी क्यों बदली? उसने राजस्व के स्रोत बढ़ाने के लिए क्या उपाय किए?

....

....

....

....

....

2) मलिक बिन मारवान ने उमय्यद खिलाफत की प्रकृति एक ढीले-ढाले संघटन से बदल कर केंद्रीकृत राज्य के रूप में कैसे बनाई?

....

....

....

....

....

14.6 उमय्यदों की अर्थव्यवस्था : राज्य, व्यापार और सिंचाई

के. एन. चौधरी ने उमय्यद और अब्बासी राजवंश की अर्थव्यवस्था पर अत्यंत सटीक टिप्पणी की है कि वह तीन अवयवों पर आधारित थी – स्थायी खेती, नगरीकरण और लंबी दूरी का व्यापार।

14.6.1 स्थायी खेती

लाभ उठाने की व्यापक कोशिशों और विजित प्रदेशों में प्रवास के पीछे अरबों के प्राथमिक उद्देश्यों के बारे में अबू तम्माम (788-845 सी ई) ने *हमासा* में लिखा है:

वह जन्नत नहीं थी, जिसकी तलाश में तुमने पलायन किया
बल्कि, मैं सोचता हूं, तुम्हें रोटी और खजूर ने बुलाया था ।

उपर्युक्त अभिव्यक्त राय सिर्फ मारवानी काल के बारे में ही सच है, क्योंकि अब्दुल मलिक और उसके उत्तराधिकारी अल-वलीद द्वितीय के समय में अरबों को कृषि योग्य भूमि खरीदने की इजाजत थी। लेकिन प्रारंभिक इस्लामी काल में आम नियम यह था कि विजित प्रदेशों जैसे मिस्र, इराक और खुरासान में कृषि भूमि विजेता अरबों में पुनर्वितरित नहीं की जाती थी। जमीनें वहां के मूल बाशिंदों की निजी संपत्ति बनी रहती थीं। आरंभिक अरब शासकों को लगता था कि जमीन को ताकत से हड़पना या खरीद कर हासिल करना कोई आकर्षक सौदा नहीं होगा। हालांकि उमय्यदों की कृषि और परती जमीन (*मावात*) को कृषि योग्य बनाने में विशेष दिलचस्पी थी, क्योंकि इन पर उनके राज्य का राजस्व निर्भर करता था। *जजिया* और *खराज* उमय्यद राजस्व व्यवस्था की रीढ़ की हड्डी थे। अब्दुल मलिक के शासन काल में संपूर्ण जमीन और आबादी के सर्वेक्षण के बाद प्रति व्यक्ति केवल चार *दीनार* सालाना *जज़िया* लगाया गया था। इसके विपरीत उमय्यदों ने अच्छी जमीनें अपने कब्जे में लेकर उन्हें अपने संबंधियों और नातेदारों में बांटा। इस प्रथा से किसानों की निजी छोटी जमीन की मिल्कियत बड़ी कृषि भू-जागीरों में रूपांतरित हो गई।

मुआविया प्रथम ने अल-तैफ और मदीना में बांध और कुंए खुदवाए थे, जिन्हें मुख्य सिंचाई नहरों से जोड़ा गया था। अल-मकद्दसी के मुताबिक लेवांत में मुख्य फसल के रूप में खजूर, जैतून, अंगूर, सेब, नींबू, तरबूज, गन्ना, विविध प्रकार के रंगने के उत्पाद और शहद आदि प्राप्त होते थे।

उमय्यद गवर्नरों ने इराक और सीरिया में सिंचाई का पानी ले जाने के लिए भूमिगत नहरों और जल मार्गों (*कनात, कारेज़, फलज*) की खुदाई पर निवेश किया। इन कृषि उपायों के साथ इराक में खेती की नई-नई तकनीकों ने दक्षिणी अरब के अनेक कबीलों को अपनी जमीनें छोड़कर इन नवीन कृषि-जागीरों पर काम करने के लिए आकर्षित किया। इब्न खुर्दादबिह (820-912 सी ई) अपनी पुस्तक *किताब-उल मसालिक वल ममालिक* में वर्णन करता है कि उमय्यद गवर्नर मसलमा इब्न अब्दुल मलिक जिसे इराक में खारीजियों का विद्रोह दबाने के लिए भेजा गया था उसने वहां बड़े पैमाने पर कृषि और जल सुधार करवाये। सिंचाई की व्यवस्था और उसका रख-रखाव नगर अधिकारियों द्वारा किया जाता था, जिन्हें *साहिब अल-साक़िया* कहा जाता था जो पानी के वितरण का प्रबंधन करते थे। नीचे दी गई तालिका में हम हिशाम बिन अब्द अल-मलिक (724-743 सी ई) के शासन काल में *खराज* से प्राप्त होने वाली रकम के आंकड़े दे रहे हैं। ये आंकड़े अल-बालादुरी ने *फुतुह अल-बुलदान* में दिए हैं:

प्रांत	**खराज की प्राप्ति**
इराक	130,000,000 *दिरहम*
समरकंद	2200,000 *दिरहम*
मिस्र	12,000,000 *दीनार* और 48,000,000 *दिरहम*
फिलिस्तीन	400,000 *दीनार*
जॉर्डन	180,000 *दीनार*
दमिश्क	400,000 *दीनार*
हिम्स, किन्नासरी'न और अल-अवासीम	800,000 *दीनार*

इराक का गवर्नर अल-हज्जाज उन किसानों को नकद धनराशि और कृषि सामग्री लोन पर देता था, जो खेती का दायरा बढ़ाना चाहते थे ताकि इराक में आर्थिक बदहाली सुधारी जा सके। उसने वसीत के निकट अलसी'न नहर तथा अल-ज़ाबी और अल-नी'ल नाम की नहरें खुदवाईं और उन्हें दजला तथा फरात से जोड़ा। 8वीं शताब्दी में, जब उमय्यद साम्राज्य अपनी राजनैतिक सत्ता के चरम पर था, व्यापक, खेती और स्थायी जीवन के लिए हिशाम अब्दुल मलिक (724-743 सी ई) द्वारा दमिश्क और मक्का के बीच बड़े पैमाने पर सिंचाई नहरों (*कनात*) का संजाल, बांध और कुंए बनवाए गए। बाद में इसी भूमिगत नहर तकनीक (*कनात*) का विस्तार उत्तरी अफ्रीका और आइबेरियन प्रायद्वीप[2] में हुआ, जो इस्लाम के ऐतिहासिक विस्तार को दर्शाता है।

विजित भूमि आरंभ से ही तीन श्रेणियों में विभाजित की जाती थीः *स्वादफी / सवाफी* भूमि, *सुल्ह* भूमि और *अहल अल-ज़िम्माह* भूमि।

***स्वादफी / सवाफी* भूमिः** ये खास भूमि की लंबी पट्टियां होती थीं, जो खलीफा और उनके परिवार के लिए रखी जाती थीं। राज्य की संपत्ति की निगरानी के लिए एक अलग *दीवान* हुआ करता था। ऐतिहासिक स्रोतों में इन जमीनों को इमाम की *सवाफी* (*सवाफ अल-इमाम*) के रूप में दर्शाया गया है। ये दस तरह की होती थीं: (1) खुसरो की जमीन; (2) ईरानी राज परिवार के अन्य सदस्यों की जमीनें; (3) डाक चौकियां और डाक मार्ग; (4) अग्नि मंदिर (*बुयूत अल-नेरान*); (5) दलदली जमीनें (*अजम*); (6) युद्ध में मारे गए लोगों की जमीनें; (7) आर्द्र या जल भराव वाली जमीनें जैसे दक्षिणी इराक में *बतिहाह*; (8) वे जमीनें जहां के नागरिक युद्ध के समय जगह छोड़कर भाग गए; (9) वह जमीन जिसे खुसरो ने राजकीय जमीन – *सवाफी* घोषित कर रखा था; और (10) दीवारें (*अरजा*)।

सुल्ह भूमिः वे जमीनें, जिनके नागरिकों ने मुस्लिम विजेताओं का प्रतिरोध नहीं किया और उनसे शांति का समझौता कर लिया, वे *सुल्ह* भूमि कहलाई। वहां के लोगों से यह अपेक्षा की जाती थी कि वे सामुदायिक कर अदा करेंगे और अपनी जमीन की मिल्कियत बरकरार रखेंगे।

अहल अल-ज़िम्माहः संरक्षित गैर-मुस्लिमों की जमीनें।

राज्य के अधिकारी *सवाफी*, *सुल्ह* और *ज़िम्माह* की श्रेणी के अनुसार इन जमीनों के रिकार्ड तैयार करते थे।

उमय्यद काल के उत्तरार्ध में परिस्थितियां बदल गईं। अरब इतिहासकार इस बात के ठोस सबूत पेश करते हैं कि उमय्यद काल के बाद के समय में गरीब किसान अपनी परेशानियों की शिकायत करने लगे थे, पशु-पालकों में विद्रोह होने लगा था और पलायन जैसे प्रतिरोध सामने आने लगे थे। अल-राय अल-नुमायरी ने अब्दुल मलिक इब्न मारवान के सामने शिकायतों की एक फेहरिस्त पेश की थी, जिसमें बताया गया था कि कर (*जकात* और *खराज*) वसूलने वाले अधिकारियों की क्रूरता के कारण किसान कैसी आर्थिक बदहाली का शिकार बन रहे हैं और दयनीय जीवन बिता रहे हैं। किसान सरकारी जमीनों पर काम करने के लिए इराक की ओर पलायन कर रहे थे। वहां दो तरह की जमीनें थीं, *इक्ता अल-मुल्क*, जो निजी संपत्ति थी, और *इक्ता अल-इजार*, जो राज्य की जमीन थी और किसानों को खेती के लिए लगान प्राप्ति के लिए किराए पर दी जाती थी। अल-बालादुरी कहता है कि जब हिशाम के पूर्ववर्ती यजीद द्वितीय ने राज्य की वे जमीनें वापस लेने की कोशिश की, जो पहले किसानों को दी गई थीं, तो उसकी यह योजना न सिर्फ असफल हुई, क्योंकि इसके कारण

[2] आइबेरियन प्रायद्वीप आज के आधुनिक यूरोप का दक्षिण-पश्चिमी कोना है, जिसमें मोटे तौर पर स्पेन, पुर्तगाल, अंडोरा और जिब्राल्टर शामिल हैं।

न केवल हिंसक विद्रोह उठ खड़े हुए बल्कि खलीफा को राज्य की खालिसा जमीनों में से कुछ अतिरिक्त जमीनें अधिकारियों को भी देनी पड़ीं। उमय्यदों ने *नवरूज़* और *मिहराजान* त्योहारों के अवसर पर दो सासानी कर दोबारा लागू किए। अल-याकूबी, *तारीख-याकूबी* में लिखता है कि मुआविया प्रथम ने 'मांग की कि *अस-सवाद* के लोग *नवरूज़* और *मिहराजान* के अवसर पर उसे उपहार और भेंट दें। तो उन्होंने वैसा ही किया, यह राशि लगभग दस हजार *दीनार* के बराबर थी।'

हालांकि आरंभिक इस्लामी काल में अरबों ने शायद ही कभी किसी स्थानीय आर्थिक व्यवधान को प्रोत्साहन दिया हो। उमय्यदों के काल में अरब साम्राज्य के कर ढांचे ने सामूहिक धर्मांतरण और विजित प्रदेशों में जमीन के व्यापक स्तर पर अधिग्रहण तथा उनके पुनर्वितरण को कोई प्रोत्साहन नहीं दिया गया। और न ही राज्य ने भूमि सुधार से स्वयं को अलग-थलग ही किया।

इसके अलावा, छावनी नगरों में रहने वाले अरब स्थायित्व के लिए अपना शौर्यपूर्ण पेशा छोड़कर बल्ख, इस्फहान और खुरासान के गांवों में घुलने-मिलने लगे, उनका कामकाज सीखने लगे और भूस्वामी अभिजात्यों की तरह रहने लगे। हम पहले वर्णन कर चुके हैं कि मुआविया प्रथम के शासन काल में 670 सी ई में 50,000 परिवार खुरासान में बसाए गए थे। 730 सी ई तक आते-आते मात्र 15,000 परिवार सैनिक सेवा में बचे रह गए थे। अन्य क्षेत्रों, जैसे अजरबाइजान में अनेक अरब कबीलाई मुखियाओं ने (ज्यादातर) अवैध ढंग से उजाड़ जमीनें हथिया लीं और उन्हें कृषि योग्य बना लिया। वे भूस्वामी बन गए और उन्होंने वहां नई खेतिहर बस्तियां बसाईं। ईरान में अरब, ईरानी सामाजिक ढांचे में शामिल हो गए, उन्होंने ईरानी महिलाओं से शादी की, वे ईरानी बोलने लगे और वहां के त्योहार मनाने लगे। उमय्यद खिलाफत के दौरान एक सहयोगी कर-तंत्र का विकास हुआ, जिसमें सुशिक्षित ईरानी *मवाली* प्रशासक, छावनी नगरों में रहने वाले अभिजात्य अधिकारियों तथा अपने अरब स्वामियों की ओर से राजस्व और करों का रजिस्टर (*दीवान*) संभालने लगे।

14.6.2 उमय्यद व्यापार, नगरीकरण और *सुक्क़* (बाज़ार)

एक उग्र मध्यकालीन इतिहासकार हेनरी पिरेन (1862-1935 सीई) के मुताबिक इन सभी जगहों पर अरबों की विजय ने 'यूरोप और एशिया में एक अभूतपूर्व भ्रम की स्थिति पैदा कर दी।' उनका (पिरेन) विचार है कि अरबों की विजय से पश्चिमी यूरोप की दूरस्थ व्यापारिक गतिविधियां गतिहीन होने लगीं और पूरब के रास्ते भी बंद होने लगे। यूरोपीय अर्थव्यवस्था बाधित होकर अंतर्मुखी बनने लगी और अपने निर्वाह के लिए उसका ग्रामीणीकरण (व्यापार से प्राप्त धन की अर्थव्यवस्था की जगह प्रकृति और जमीन पर आधारित अर्थ व्यवस्था) होने लगा क्योंकि पूरब से आने वाले सामानों की आपूर्ति बंद हो गई। हालांकि पुरातात्विक और दस्तावेजी साक्ष्य एक दूसरा ही चित्रण प्रस्तुत करते हैं। वे संकेत देते हैं कि पांचवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से ही भूमध्यसागरीय व्यापार में काफी गिरावट आ गई थी। वे इस वाणिज्यिक संबंधों में निरन्तरता के तथ्य को भी रेखांकित करते हैं, क्योंकि मिस्र से फ्रांसीसी मेरोविंजियन राजवंश (450-751 सी ई) के पंजिका कार्यालयों (chancery) में पपायरस (papyrus) की आपूर्ति आठवीं शताब्दी में भी काफी समय बाद तक पहुंचती रही।

आरंभिक इस्लामी बस्तियों का संघटन जो मुसलमानों की उन सैन्य छावनियों से निर्मित हुआ था, जिनमें कबीलाई सैन्य इकाइयां रहती थीं, के विपरीत उमय्यदों ने धीरे-धीरे उन छावनियों में रहने वाले अरबों को निहत्था कर दिया, जो बिना किसी बाधा के तत्कालीन बाइज़ेंटाइन और ईरानी नगरीय ढांचे में समाहित हो गए थे। अपने पूर्ववर्ती बाइज़ेंटाइनों की तर्ज पर उमय्यदों ने भव्य सांस्कृतिक परियोजनाएं आरंभ कीं। उन्होंने अपने नगरों और बस्तियों में आलीशान मस्जिदें, रेगिस्तानी महल, छावनियां और स्नानागार बनवाए, जो एक विशिष्ट

इस्लामी नगरीय प्रकृति और इस्लामी भवन निर्माण की साम्राज्यीय शैली का स्वरूप प्रदर्शित करते थे। इस्लामी विजय के क्रम में वसीत, बसरा, कूफ़ा, फुस्तात, अंजार और इस तरह की अन्य नगरीय छावनी बस्तियाँ, आर्थिक गतिविधियों की बढ़ोतरी के आरंभिक उत्प्रेरक थे। उदाहरण के लिए, बड़े पैमाने पर भवन निर्माण की गतिविधियां, यातायात के लिए सड़कों का संजाल, आसपास के इलाकों से भोजन सामग्री, घरेलू इस्तेमाल की चीजों तथा औजारों की आपूर्ति आदि।

छावनी नगरों का निर्माण अतीत और भविष्य, दोनों से जुड़ा हुआ था। इसने औद्योगिक विस्तार को भी तेजी प्रदान की। आर्थिक सेवाएं देने के लिए इन नगरों में अन्य लोगों, खास तौर पर गैर-अरब व्यापारियों और दस्तकारों का आवागमन बढ़ने लगा। *मवाली* व्यापारियों के बारे में एक उमय्यद कवि अम्र बिन बहर ने अपनी एक काव्य रचना में टिप्पणी की है, 'मैंने इराक के बाजारों पर गौर किया तो पाया कि वहां मात्र *मवाली* उनकी दुकानों के मालिक हैं।' भवनों, जलकूपों, जलाशयों और सड़कों के संजाल जैसे आर्थिक ढांचागत निर्माण के लिए लोहा, कोलतार, डामर और संगमरमर की जरूरत थी। नगरों में अनके प्रकार के उद्योग बाजार की इन जरूरतों की आपूर्ति के लिए उभरे। इसकी वजह से तैफ में धातुकर्म, वस्त्र उद्योग और चमड़े का काम, मक्का में लौह भट्ठियां, हिजाज़ में स्वर्णकारी और अनेक नगरों में कागज बनाने के कारखाने फलने-फूलने लगे। कागज बनाने के लिए कपास, जूट और सिल्क का इस्तेमाल किया जाता था।

मध्य एशिया के अजरबाइजान, मिस्र और ईरान में अरबों के विस्तार से इन जगहों से सोना, चांदी और तांबे की आपूर्ति में विशेष तेजी आई। धातु के विशाल भंडारों के हासिल होने से उमय्यद सिक्कों को व्यापार और वाणिज्य के लिए मजबूत आधार प्राप्त हुआ। आठवीं शताब्दी के एक नगर के स्थानिक निर्माण और उसकी संस्कृति का प्रतीकात्मक वर्णन करते हुए अल-मकद्दसी टिप्पणी करता है कि, 'हलाब (एलेप्पो) एक शानदार और अच्छी तरह से किलेबंद नगर है ... यहां के बाशिंदे संपन्न और सुसंस्कृत हैं। यहां एक विशाल किला और एक भव्य मस्जिद है।'

अल-मकद्दसी विस्तार से ब्योरा देता है कि साबुन, कालीन, फर, उत्कृष्ट तलवारें, तीर-धनुष, अनेक प्रकार की छुरियां, सूई, कैंची और जामा ट्रांसऑक्सियाना के प्रमुख उत्पाद थे। खुरासान और ट्रांसऑक्सियाना कपास उत्पादन के महत्वपूर्ण केंद्र थे। अजरबाइजान और खुरासान सिल्क उत्पादों के लिए भी मशहूर थे। *इस्लामी क्षेत्र* में ही स्थित लेवांत का इलाका अपने शीशे के उत्पादों के लिए जाना जाता था। दमिश्क में एक विशेष प्रकार का चमकीला और मुलायम कपड़ा तैयार होता था, जिसे दमस्क कहते थे। हम पाते हैं कि उमय्यदों ने नगरों की स्थापना का शुभारंभ किया, मजबूत त्रि-धात्विक सिक्कों का प्रचलन शुरू किया और ऐसे धार्मिक तथा आर्थिक ढांचों का विकास किया, जो नगरीकरण की प्रक्रिया में बेहद मददगार साबित हुए। रेशम मार्ग क्षेत्र में इस्लामी विस्तार अल-वलीद प्रथम (705-715 सी ई) के काल में ही शुरू हुआ। उसने ट्रांसऑक्सियाना और फरगना को उनके व्यावसायिक केन्द्रों के साथ फतह करने हेतु खुरासान के उमय्यद गवर्नर कुतयबा बिन मुस्लिम को भेजा। उसने चीन के साथ व्यावसायिक और कूटनीतिक संबंध बनाने के लिए दूत भेजने शुरू किए, यह सिलसिला पूरे उमय्यद काल में जारी रहा।

इस्लाम पूर्व आइबेरियन प्रायद्वीप, अंतरराष्ट्रीय वाणिज्य के मामले में पिछड़ा रहा, लेकिन आठवीं सदी के बाद इसके व्यापारिक ढांचे में बदलाव आया और यह क्षेत्र धीरे-धीरे मुस्लिम जगत को पश्चिमी यूरोप से आर्थिक रूप से जोड़ने वाले पारगमन स्थल में तब्दील होने लगा। बाद की सदियों में स्पेन 'यूरोप का उपवन' (गार्डन ऑफ यूरोप) कहा जाने लगा। समुद्र के जरिए होने वाला अरब व्यापार, छोटे गोलाकार जहाजों, जिन्हें *नफ्स* कहा जाता था, के

माध्यम से होता था। बाजार निरीक्षक (*मुहतसिब*) *सुक्क़* में वस्तुओं के वजन और परिमाण का नियमन करते थे।

14.7 उमय्यद सुल्तान और प्रांत (*विलायत*)

उमय्यद प्रशासनिक ढ़ांचा संस्थागत हो गया, क्योंकि इसमें सैन्य तथा राजस्व प्रशासन की निगरानी के लिए अलग-अलग अनेक *दीवान* जिम्मेदार थे। उमय्यद खलीफा वस्तुतः पूरे साम्राज्य का प्रधान था। वह दरबार (कोर्ट), *शूरा* (सलाहकार परिषद्) तथा केंद्रीय *दीवानों* जैसे *दीवान अल-जुंद* (सैन्य मंडल) जिसकी स्थापना सबसे पहले खलीफा उमर के समय की गई थी, के माध्यम से अपनी नीतियां और प्रशासन चलाता था। वह मुख्य रूप से सैनिकों के नाम, उनके वंश और उनके वेतन भत्तों (*अता*) की पंजिका तैयार करता था और उसका रख-रखाव करता था। *दीवान-ए खराज* (वित्त मंडल) एक अन्य विभाग था, जो राज्य के राजस्व की पंजिका तैयार करता था। मुआविया प्रथम ने *दीवान-ए रसायल* (पत्राचार मंडल) की स्थापना की, जिसका काम राजकीय संचार को सुगम बनाना था। उसने एक डाक प्रणाली की भी स्थापना की। *दीवान अल-खातम* (मोहर मंडल) प्रशासनिक पत्राचारों की गोपनीयता सुनिश्चित करता था और दस्तावेजों की जालसाजी से रक्षा करता था। इन *दीवानों* (सरकारी विभागों) की जरूरत आरंभिक इस्लामी काल में सैन्य और वित्तीय मामलों की देखरेख के लिए पैदा हुई। मुआविया प्रथम और अब्दुल मलिक ने उमय्यद सीमा क्षेत्र में *बरीद* व्यवस्था (गुप्तचर व्यवस्था) को मजबूत बनाया और उसके काम की विश्वसनीयता सुनिश्चित की। उमय्यदों, अब्बासियों और ऑटोमन शासकों द्वारा विशाल साम्राज्यों के केंद्रीकरण में *बरीद* जैसे तंत्र की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका थी।

उमय्यदों के जमाने में सीरिया में सैन्य उद्देश्यों के लिए चार प्रशासनिक खंड (*अजनाद*) थे। इनमें *फिलस्तीन* (फिलिस्तीन की स्थापना सुलैमान बिन अब्दुल मलिक ने 715 सी ई में की थी), जिसकी राजधानी रामला थी, *अल-उर्दून* (तिबरिस), *दिमश्क*, जिसकी राजधानी दमिश्क शहर था और *हिम्स* तथा उसके आसपास के क्षेत्र शामिल थे। बाद में 680 सी ई में उत्तर में एक पांचवां खंड *किन्नास्रीन* भी इनमें जुड़ गया। उमय्यदों के सभी प्रांतों (*विलायत*) में अपनी काली उर्वर जमीन (*अस-सवाद*), जलवायु और दजला तथा फरात जैसी नदियों के कारण इराक सबसे धनी था। इराक में दो बड़े छावनी नगर कूफा और बसरा थे। बाद में अब्दुल मलिक के समय में इराक के गवर्नर अल-हज्जाज द्वारा एक तीसरा छावनी नगर वासित भी बसाया गया। दोनों छावनियों कूफा और बसरा को सैन्य प्रशासन की आवश्यकताओं को देखते हुए 670 सी ई तक अलग-अलग बांट दिया गया। खुरासान उमय्यद साम्राज्य का एक अन्य बड़ा प्रांत था। मर्व और निशापुर इसके दो प्रमुख नगर थे। ट्रांसऑक्सियाना के सैन्य अभियान के लिए इसने आधार स्थल की भूमिका निभाई। मिस्र भी उमय्यदों के अधीन एक महत्वपूर्ण प्रांत था। उमय्यदों ने इन प्रांतों पर अपने प्रतिनिधियों और *शुर्ता* (पुलिस) की मदद से शासन किया। सत्ता में स्थानीय *अशराफों*, कबीलाई मुखियाओं और प्रांतीय अभिजात्यों की जगह सुनिश्चित की गई। उमय्यदों के पूरे प्रशासनिक ढांचे को बुनियादी तौर पर दो कार्य करने होते थे : एक *सैन्य कार्य* यानी सभी कबीलाई गुटों के बीच व्यवस्था बनाए रखना। और दूसरा, *नागरिक कार्य*, अर्थात कर संग्रहण (*खराज* और *ज़कात*) में राज्य की सहायता करना।

14.8 उमय्यद वंश का पतन

744 सी ई के बाद जब सीरियाई सैनिकों ने खलीफा अल-वलीद द्वितीय की हत्या कर दी, तब दावेदारों के बीच फिर से गृह-युद्ध शुरू हो गया, जिसे इस्लामी इतिहास में तीसरे *फितना* के नाम से याद किया जाता है। उमय्यद खलीफा के रूप में यज़ीद तृतीय (744 सी ई) के

राज्यारोहण को बाद में मारवान द्वितीय ने अस्वीकार कर दिया, जो कतई सुलह नहीं चाहता था। उसने आरमेनिया से अपनी सेना लेकर दमिश्क पर आक्रमण कर दिया। अपने समर्थकों की मदद से उसने यजीद तृतीय को बुरी तरह से परास्त किया और खुद को खलीफा घोषित कर दिया। मारवान द्वितीय को क़ल्बी गुट की वजह से नहीं, बल्कि असल में प्रभुत्वशाली क़ै'सी कबीलाई सेना का समर्थन मिल जाने से ताकत मिली। इस गृह-युद्ध की वजह से अनेक बगावतें भड़क गईं और इराक, मिस्र, खुरासान तथा हिजाज़ में आंतरिक लड़ाइयां होने लगीं। मारवान द्वितीय (744-750 सी ई) कूफा में बगावत की आग बुझाने में व्यस्त रहा, जिसका नेतृत्व एक अली वंशीय, अब्दुल्लाह बिन मुआविया कर रहा था। 746 सी ई में अब्दुल्लाह अल-याहया और अल-मुख्तार के नेतृत्व में *इबादी खारिजियों* ने विद्रोह कर दिया, जो हिजाज़ से उमय्यदों को बाहर खदेड़ने की योजना बना रहे थे। लेकिन मारवान द्वितीय ने उन्हें परास्त कर दिया। उसने अत्यंत प्रभावशाली ढंग से हिजाज़ और यमन में *खारिजी* विद्रोह, कूफा में अली अनुयायी शियाओं का विद्रोह और इसी तरह का एक और विद्रोह सीरिया में कुचल दिया। वास्तव में ये सारे विद्रोह इसलिए कुचले जा सके, क्योंकि उनके पास संगठनात्मक और विचारधारात्मक समर्थन का अभाव था।

स्पष्टतः कूफा के अली के अनुयायी क्रांतिकारी पहले भी 736 सी ई में केंद्र में बगावतें कर उमय्यदों को सत्ता से बाहर निकालने में असफल रहे थे। इन स्थितियों में अब्बास अल-सफ्फाह और उसके कबीले के लोगों ने खुरासान के शहर मर्व में घुसपैठ बनाई, *इमामत* की अपनी पहचान छुपाए रखी, भूमिगत गतिविधियां चलाने के लिए अपने गोत्र के लोगों (*निस्बाह*) से गुप्त रूप से संपर्क साधा, और वहां के शोषित, पीड़ित, खासकर असंतुष्ट आबादी के बीच उनके *उद्धार* करने का संदेश प्रसारित किया, ताकि अपने आंदोलन के पक्ष में उनका समर्थन प्राप्त कर सकें (*अल-रिदा मिन अह्ल-बैत*)। इस पृष्ठभूमि में उमय्यदों की सैन्य कमजोरियों ने अब्बासिदों का साहस बढ़ाया, जो खलीफा हिशाम के शासन काल में उजागर होने लगी थीं। उमय्यद सेना को काकेशियन खानाबदोशों (खज़ार), जिन्होंने आरमेनिया पर धावा बोल दिया था, के साथ लड़ाई में भारी नुकसान उठाना पड़ा था। उत्तरी अफ्रीका में बरबर मुसलमानों ने तथा ज़ैद इब्न अली ने कूफा में विद्रोह कर दिया। हिशाम कॉस्टेंटिनोपोल पर निरर्थक हमले और घेरेबंदी करता रहा, जिससे राजकीय कोष खाली हो गया। विद्रोहियों को दबाने में मारवान द्वितीय की व्यस्तता ने एक कुशल सेनापति अबू मुस्लिम के नेतृत्व में खुरासानियों की उम्मीदों को हवा दी।

खुरासान एक दूर-दराज का प्रांत था, जो 747 सी ई में नासिर इब्न सियार और हरीथ के आपसी झगड़ों की वजह से तहस-नहस हो चुका था। हाशिमी-अब्बासी प्रचार (*दावों*) से उत्साहित होकर जल्दी ही अबू मुस्लिम ने भी काला झंडा उठा लिया और खुरासान में 7000 सैनिकों की एक फौज खड़ी कर ली। मर्व में उसने खुरासान के उमय्यद गवर्नर नासिर (मृत्यु 748 सी ई) को बुरी तरह परास्त किया। सिर्फ दो साल के भीतर अब्बास अल-सफ्फाह की सेना, जिसे इराकी *शियाओं* के साथ यमनी कबीले और मर्व में रहने वाले कुछ ईरानी *मवालियों* का समर्थन प्राप्त था, वह अबू मुस्लिम के नेतृत्व में कूफा में प्रवेश कर गई, उत्तरी इराक के पास उमय्यदी सेना से उनकी भिड़ंत हुई और इसने ज़ैब के महान् युद्ध (जनवरी 750 सी ई) में उमय्यदी राजवंश के भविष्य पर सदा के लिए मोहर लगा दी।

बोध प्रश्न-2

1) उमय्यदों के बांध बनवाने और भूमिगत सिंचाई नहरों के निर्माण से कृषि और किसानों पर क्या प्रभाव पड़ा?

....

....

....

....

....

....

2) उमय्यद खिलाफत के समय के व्यापार और नगरीकरण की प्रक्रिया पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए। क्या आप इस बात से सहमत हैं कि अरबों की फतह से बड़े पैमाने पर आर्थिक और सामाजिक व्यवधान पैदा हुए।

....

....

....

....

....

....

14.9 अब्बासी खिलाफत : अब्बास और मंसूर

अब्बासी खिलाफत की स्थापना (750 से 1258 सी ई) अब्बास अस-सफ्फाह (750 से 754 सी ई) द्वारा की गई, जिसने कूफा की प्रतिष्ठित मस्जिद में खलीफा के रूप में निष्ठा की शपथ ली। वहां उसने निर्भीक भाव से उद्घोषणा की, 'अपने आप को तैयार रखो, क्योंकि मैं निर्मम खून बहाने वाला (अस-सफ्फाह) हूँ और विनाश करने वाला प्रतिशोधक हूँ ... अल्लाह ने हमें कुलगोत्र से अपना संदेशवाहक चुना है... उसने हमें अपने वृक्ष की शाखा बनाया है... उमय्यदों ने इस पर (*खिलाफत* पर) अपना एकाधिकार जमा रखा था और हमारे लोगों पर वे अन्याय कर रहे थे। और आखिर में अल्लाह ने अपने लोगों को यह अधिकार वापस दे दिया...।'

चूंकि अब्बासियों ने खिलाफत को अपना पैगम्बर का उत्तराधिकारी होने का अधिकार बताया था, फिर भी उन्होंने अपने शिया अली अनुयायी साथियों को *अहल अल-बैत* का वंशज होने का अधिकार देने से तुरंत मना कर दिया। उन्होंने उमय्यदों के अन्याय से आजाद हुए *खारिजियों* और *मवालियों* को भी समाज का अभिजात्य वर्ग मानने से इनकार कर दिया। अब्बास ने अपनी सारी उर्जा उन उमय्यदों, असंतुष्ट शियाओं और सेनापतियों को खोज कर निकालने, उन्हें बेअसर बनाने और उन्हें खत्म करने में लगाई, जो किसी भी रूप में उसकी सत्ता के लिए चुनौती बन सकते थे। 751 सी ई में अब्बास ने दमिश्क पर कब्जा कर लिया। बाद में अब्बास द्वारा सभी उमय्यद राजकुमारों को मिस्र में एक 'शांति भोज' पर बुलवाया गया, जहां उसने उन सभी के सर कलम करने के लिए हत्यारे नियुक्त कर रखे थे। इसीलिए अब्बास को *अस-सफ्फाह* (खून बहाने वाला) कहा जाने लगा। उस नृशंस रक्तपात में उमय्यदों में से सिर्फ एक विशिष्ट राजकुमार अब्दुर रहमान बच निकला, जो स्पेन भाग गया और बाद में वहां का शासक बना।

इस्लामिक इतिहास में अब्बासी क्रांति के रूप में मशहूर, अब्बासी सत्ता की स्थापना ने दो महत्वपूर्ण परिवर्तनों की आधारशिला तैयार की: एक, इसने लंबे समय से चल रही क्षेत्रीय इस्लामी लड़ाइयों की समाप्ति की। दूसरे, इसने न सिर्फ प्रशासन और सेना में उच्च स्तर (*अब्न-उद दौलाह*) पर खुरासानियों के प्रभुत्व का रास्ता खोला, बल्कि अपने केंद्रीय

प्रशासनिक ढांचे में *वज़ीर* (सहायक) के पद को भी निर्णायक बनाया। अब्बास अपने राजकीय मामलों का प्रबंधन कूफा से करता था। इराक में उमय्यदों को परास्त करने के बाद अब्बास ने अपने विश्वस्त मार्गदर्शक अबू सलामा अल-खलाल को *वज़ीर* (*वज़ीर अल-मुहम्मद*) नियुक्त किया, लेकिन वह शीघ्र ही मारा गया। खालिद अल-बरमक को *दीवान अल-खराज* (राजकोष का सचिव) बनाया गया, क्योंकि विद्रोह के समय उसने खुरासान में *खराज* की वसूली की थी। अब्बास अस-सफ्फाह ने प्रांतों का शासन अपने विश्वस्त गवर्नरों के माध्यम से चलाया – जो या तो अब्बासी कुलगोत्र के सदस्य थे या जो अब्बासी वंश के उद्देश्यों के प्रति समर्पित थे। अबू ज़फर, जो बाद में अब्बास अस-सफ्फाह का उत्तराधिकारी बना, को इराक, अजरबाइजान और आरमेनिया का गवर्नर बनाया गया. हिजाज, यमामा और यमन का दायित्व दाउद बिन अली को सौंपा गया। इब्न अली को सीरिया का गवर्नर नियुक्त किया गया। सेना की कमान आकर्षक व्यक्तित्व वाले खुरासानी योद्धा अबू मुस्लिम के हाथों में सौंपी गई। अब्बास अस-सफ्फाह (मृत्यु 754 सी ई) ने अबू जाफर अल-मंसूर को अपना उत्तराधिकारी नामजद किया, जिसे अब्बासी खिलाफत का असली संस्थापक भी माना जाता है।

प्रतिद्वंदियों का दमनः अब्बासी राज्य के असली संस्थापक अल-मंसूर (754-775 सी ई) ने न सिर्फ अपने प्रतिद्वंदियों का सफाया किया, बल्कि उन लोगों को भी हटाया, जिन्होंने पहले अब्बासियों से हाथ मिलाया था, क्योंकि वह अब्बासी शासन को उनके उद्धारक आंदोलनों से अलग करने की कोशिश कर रहा था। रवादानिया अतिवादियों (*गुलु*) समर्थकों पर मंसूर ने 758 सी ई में अपना शिकंजा जकड़ा। अबू मुस्लिम को एक बड़े खतरे के रूप में उभरता देख अल मंसूर ने 755 सी ई में उसकी हत्या करवा दी। खजारों को आगे आरमेनिया पर हमले से रोक दिया गया। बाद में अल-मंसूर को मुहम्मद अल-ज़किया (मदीना) और इब्राहीम (बसरा) के नेतृत्व में उभर रही अली अनुयायिओं की बगावत को भी 762 सी ई में दबाना पड़ा। अल-मंसूर ने तबरिस्तान की विजय का अभियान भी शुरू किया था।

राजधानी का स्थानांतरणः खलीफा अल-मंसूर एक समझदार और 'दीर्घकालिक निश्चय के साथ चलने वाला' व्यक्ति था। केंद्रीय प्रशासनिक तंत्र का आकार बढ़ने के कारण, खालिद अल-बरमाक की सलाह पर 762 सी ई में अब्बासी खिलाफत की अपनी राजधानी वह दमिश्क से स्थानांतरित कर तिगरिस नदी के किनारे ले गया। इस नए राजधानी नगर का नाम *मदीनत -उस सलाम* (बगदाद) रखा गया। यह भूमध्यसागरीय क्षेत्र से ईरानी प्रभुत्व वाले सार्वभौमिक क्षेत्र की ओर एक बड़ा स्थानांतरण था। बगदाद जल्दी ही एक बड़ा व्यापारिक केंद्र और विशेषकर ईरानी सर्वदेशीयता का प्रतीक बन गया। संभवतः महत्वपूर्ण रूप से अब्बासी सत्ता को ईरानी भाषीय *मवालियों* के बीच केंद्र में रखा गया। अल-मंसूर ने अत्यंत सफलतापूर्वक बगदाद में एक ऐसा नया साम्राज्यिक अभिजात्य वर्ग तैयार किया, जिसमें अरब और गैर-अरब दोनों शामिल हुए। अब्बासी साम्राज्य का कृषीय और वित्तीय आधार होने की वजह से इराक और खुरासान भी उसके अस्तित्व के लिए जीवन रक्षक बने रहे।

***वज़ीर* का संस्थागत दर्जाः** *वज़ीर* का पद जो अब्बासी खिलाफत के साथ स्थापित हुआ था, अल-मंसूर के शासन में एक संस्था के रूप में स्थापित हो गया। एक ईरानी, अबू अयूब को *वज़ीर* नियुक्त किया गया, जो केंद्रीय प्रशासन का नियंत्रण करता था। अब्बासी प्रशासनिक पद-सोपान में *वज़ीर* सर्वोच्च अधिकारी था। वह अपने पद के लिए काफी हद तक खलीफा की सद्भावना पर आश्रित था। इसके पहले *वज़ीर*, राजकुमारों के निजी सलाहकार और मार्ग दर्शक मात्र हुआ करता था। हालांकि अल-मंसूर ने स्वयं किसी निरंकुश की तरह शासन किया और *वज़ीर* को उसने शायद ही ऐसा कोई

अधिकार दिया हो, जिसका वह प्रयोग कर सके। कौशल और दक्षता के आधार पर उसने *मवालियों* को भी *वज़ीर* बनाया। अल-बालादुरी और तबरी ने अबू अयूब को *कातिब अल-मुनिईन* (खलीफा का कलमनवीस) के रूप में वर्णित किया है, *वज़ीर* के रूप में नहीं। बाद में उच्च पदस्थ कुशल बरमाकिद *वज़ीरों* ने प्रशासन का केंद्रीकरण किया। वे अब्बासी राज्य के राजस्व को नियंत्रित करते थे, खलीफा और अन्य प्रशासनिक अधिकारियों के बीच संपर्क का काम करते थे और *उलेमा*, कवि, विद्वान तथा अन्य प्रतिभाओं को संरक्षण प्रदान करते थे। ये सारे कार्य वे (*वज़ीर*) मज़ालिम (फरियाद विभाग) की बैठकों के माध्यम से करते थे।

***वाला* संस्थाः** अब्बास अल-सफ्फाह ने सेना का नियंत्रण अबू मुस्लिम खुरासानी के हाथों में छोड़ रखा था, लेकिन खलीफा के पद की ताकत बढ़ाने के लिए अल-मंसूर ने अबू मुस्लिम का कत्ल करवा दिया था, ताकि खुरासानियों से सैन्य शक्ति छीनी जा सके। अब्बासी साम्राज्य का सैन्य-राजनैतिक अभिजात्य वर्ग, खुरासानी क्रांतिकारियों तथा ईरानी पृष्ठभूमि वाले प्रभुत्वशाली बरमाकिदों से भरा हुआ था। उन्हें बड़े पैमाने पर केन्द्रीय नौकरशाही में नियुक्त किया गया लेकिन प्रांतीय गवर्नरों के पद सीरियाई साम्राज्यीय सेना के हाथों में ही बने रहे। आरम्भ में अरब, *मवालियों* को गुलाम के बराबर समझते थे, क्योंकि वे योद्धाओं के विपरीत शांतिप्रिय किसानों की तरह व्यवहार करते थे। अतः उन्हें *दीवान अल-जुंद* में नियुक्ति का गौरव प्रदान नहीं किया गया। इसके अलावा, *मवालियों* से कई किस्म के अतिरिक्त कर वसूले जाते थे, जैसे *जिजिया, खराज, उश्र* (सिंचित भूमि पर पैदा होने वाली फसल पर लिया जाने वाला कर, जो 5 से 10 प्रतिशत तक होता था) आदि। अब्बासी काल में अल-मंसूर ने सैन्य कार्यों के लिए गैर-अरबों को नियुक्त किया और उन्हें व्यक्तिगत रूप से 'संविदात्मक *वाला*' की मार्फत अब्बासी परिवार से जोड़ा। इस गैर-अरबी सामाजिक साहचर्य में विभिन्न प्रकार की जातियां-प्रजातियां शामिल थीं, जिन्हें *मावला अमीर उल मुमिनीन* कहा जाता था और जिन्हें प्रांतीय गवर्नर जैसे उच्च सरकारी पद प्रदान किये गये। अल-मसूदी ने अल-मंसूर को उमय्यद खलीफाओं के आचरण की निंदा करते हुए उद्धृत किया है कि उनका कार्य धर्म के अनुरूप नहीं था। मक्का में अपने एक भाषण में अल-मंसूर ने कहा, 'ऐ लोगों, मैं धरती पर ईश्वर की शक्ति का प्रतिनिधित्व करता हूं, मैं ईश्वरीय मदद से तुम्हारा नेतृत्व करता हूं ... ईश्वर ने मुझे इसका न्यासी बनाया है और इसकी देखरेख की जिम्मेदारी सौंपी है।'

14.10 अब्बासी खिलाफत : हारून और अल-मामून

अपने भाई अल-हादी की हत्या के बाद हारून (766-809 सी ई) खलीफा बना। अब्बासी साम्राज्य के खलीफा के पद पर आसीन होने के पहले वह अनेक प्रांतों जैसे सीरिया, आरमेनिया, इफ्रीकिया (आज का ट्यूनिशिया, पश्चिमी लीबिया और पूर्वी अल्जीरिया) तथा अजरबाइजान के विजेता सैन्य कमांडर के रूप में अपनी सेवाएं दे चुका था। उसने चीन और बाइज़ेंटाइन के साथ अच्छे संबंध बना कर रखे और उनके साथ व्यापक स्तर पर राजनयिक तथा व्यापारिक संबंध फिर से बहाल किए। हारून अल-रशीद को विरासत में जो अब्बासी साम्राज्य मिला, वह राजनैतिक रूप से स्थिर और आर्थिक रूप से समृद्ध था। जिसने सरकारी संस्थाओं, व्यापार, साहित्य, कला और संगीत के क्षेत्र में असाधारण विकास का मार्ग प्रशस्त किया। उसने विशालकाय भवनों, नगरों, समुद्री बेड़ों और बंदरगाहों के निर्माण में निवेश किया। अब्बासी खिलाफत की सीमाएं पश्चिम में मिस्र से पूरब में मध्य एशिया और भारत तक फैल गईं (अब्बासी खिलाफत के क्षेत्रीय विस्तार के लिए देखें 8-11वीं शताब्दी के मध्य की अब्बासी खिलाफत का मानचित्र *वर्ल्ड हिस्ट्री टू 1500*, विलियम एवं जैक्सन, पृ. 198).

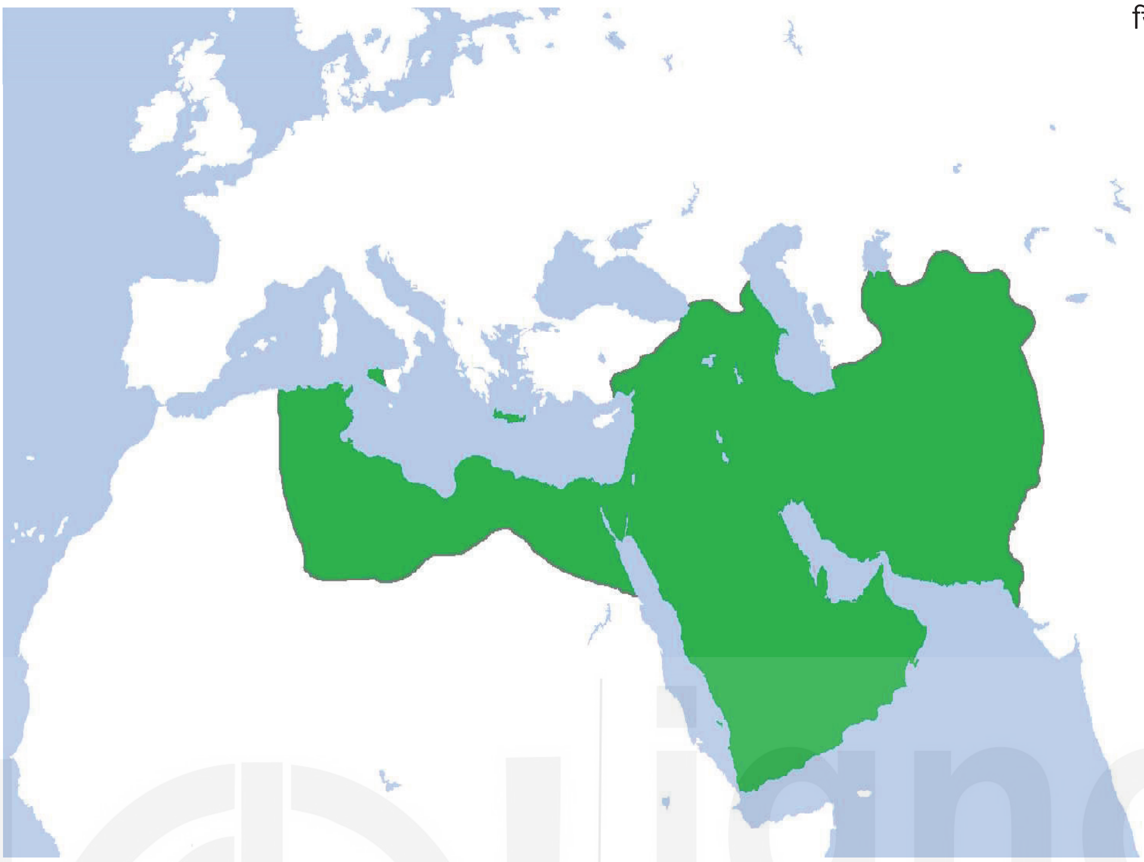

मानचित्र 14.1: अब्बासिद खिलाफत, लगभग 850 सी ई
साभारः गाबागूल, अप्रैल 2009।
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/e/e1/Abbasids850.png

इफ्रीकिया प्रांत को अर्धस्वायत्तताः हारून को अपने शासन के उत्तरार्ध में राजनैतिक अस्थिरता का सामना करना पड़ा। इसकी वजह से प्रांतीय गवर्नरों को खुली छूट मिल गई बरमाकिद परिवार ने इफ्रीकिया को भी अन्य प्रांतों की तरह नियंत्रित करने की कोशिश की। लेकिन उनके तमाम केंद्रीयकरण के प्रयत्न असफल हो गए, जब 800 सी ई में हारून को इफ्रीकिया के गवर्नर इब्राहीम अल-अगलब को अर्ध-स्वायत्त दर्जा देने को बाध्य होना पड़ा। अगलबियों ने 800-909 सी ई तक इफ्रीकिया के सैन्य और राजस्व का प्रशासन संभाला। अगलबी सिर्फ नाम मात्र की अब्बासी खिलाफत की सत्ता स्वीकार करते थे और सालाना उन्हें भेंट देते थे।

बरमाकिद परिवार का विनाशः इतिहासकार अल-तबरी के अनुसार हारून अल-रशीद ने सितंबर 787 सी ई में याहया बिन खालिद बिन बरमक को *वज़ीर* नियुक्त किया। इसमें कोई संदेह नहीं कि हारून ने *वज़ीरों* के बरमाकिद परिवार से अच्छे व्यक्तिगत रिश्ते बनाए थे, लेकिन धीरे-धीरे खलीफा और बरमाकिद परिवार के बीच अविश्वास बढ़ता गया और कभी सबसे शक्तिशाली रहे अल-बरमाकी परिवार का अंतिम रूप से सफाया जनवरी 803 सी ई में हो गया, जब खालिद अल-बरमाक की हत्या कर दी गई। इसी के साथ अब्बासी साम्राज्य के राजनीतिक और सीमाई पतन के दौर की भी शुरुआत हो गई।

खलीफा हारून अल-रशीद ने अल-अमीन को अपना पहला उत्तराधिकारी (*वली अल-अहद*) घोषित किया था, जिसके बाद अल-मामून को खिलाफत मिलनी थी। हारून ने 802 सी ई में मक्का में इस पदारोहण की व्यवस्था के दस्तावेज तैयार करवाए थे, जिसके अनुसार अल-अमीन को साम्राज्य का गवर्नर बनाया जाना था और सांत्वना के रूप में अल-मामून को खुरासान सौंपा जाना था। तैयब अल-हिबरी सहित अनेक इतिहासकार हारून की 802

सी ई की मक्का की प्रसंविदा (दस्तावेज) की इस व्याख्या से असहमति जताते हैं। उनका तर्क है कि अल-मामून ने बाद में इसमें फेर बदल करवा दिया, जिसकी वजह से 'वह असंगत ढंग से अल-मामून के पक्ष में हो गया।' हालांकि 809 सी ई में अल-अमीन (मृत्यु 813 सी ई) और अल-मामून (786-833 सी ई) के बीच एक खूनी गृह-युद्ध (चौथा *फितना*) छिड़ा, जो चार वर्षों से भी ज्यादा समय तक चलता रहा। ईरानियों के समर्थन से अल-मामून अंततः अल-अमीन को हटाने में सफल हुआ। अल-मामून (813-833 सी ई) के अधीन अब्बासी साम्राज्य ने अत्यधिक बौद्धिक जीवंतता, लोक विद्रोह, सीमा का संकुचन और अब्बासी प्रभुत्व का पतन होते देखा।

अल-मामून (813-833 सी ई) अपने आरंभिक छह वर्षों तक मर्व नगर में खुरासानी कुलीनों के बीच रहा। अब्बासी साम्राज्य का प्रशासन *वज़ीर* अल-फद्ल इब्न सहल चलाता था। अल-फद्ल का भाई अल-हसन इब्न सहल वित्तीय मामलों का मंत्री था। अल-मामून एक नई सैन्य नीति लेकर आया, जिसे एक खुरासानी योद्धा ताहिर इब्न हुसैन ने लागू करवाया और जिसे खलीफा ने पूरी अब्बासी सेना का प्रमुख नियुक्त किया। इस नीति ने अरब वर्चस्व पर चोट पहुंचाई और अब्बासी सेना से धीरे-धीरे उनकी टुकड़ियां खत्म होने लगीं। इस बीच खलीफा ने दो तरह की सेना गठित कर खुरासानियों, विशेषकर ताहिरियों की ताकत पर भी लगाम कसीः

शाकीरिया : ये वो स्वतंत्र सैन्य इकाइयां थीं, जिनका गठन और देखरेख उनके अपने ट्रांसऑक्सिनियाई, आरमेनियाई और उत्तरी अफ्रीकी सामंत करते थे। वे खलीफा के सीधे नियंत्रण में नहीं थे। वे अक्सर ताहिरियों की शक्ति को संतुलित करने के काम आते थे। *मग़रिबी* सैन्य टुकड़ियां (उत्तरी अफ्रीकी सैन्य डिविज़न) *शाकीरिया* सैन्य दल का हिस्सा थीं।

ग़िलमन : यह सेना बुनियादी रूप से तुर्की के गुलाम सैनिकों से बनी थी, जिन्हें ट्रांसऑक्सियाना के सीमांत क्षेत्र से या तो पकड़ा गया था या खरीदा गया था। तुर्की गुलाम सैनिकों ने खलीफा की ताकत में इजाफा किया। ये तुर्की सैनिक जल्दी ही बगदादी लोगों से झगड़ने लगे। उन्होंने बगदादी सेना में कुछ अरबी सैनिकों को भी मार दिया। आखिरकार अल-मौआ तसिम के पास और कोई विकल्प नहीं बचा और उसे अपना राजधानी नगर उत्तरी बगदाद में समारा (838 सी ई) में बसाना पड़ा, ताकि सैन्य टुकड़ियों को आम जनता से अलग रखा जा सके।

अल-मामून की खिलाफत के दौरान (813-833 सी ई) समरकंद, फरगना और हेरात के गवर्नर राज्य के निगरानी के बिना सत्तारूढ़ परिवारों से वंशानुगत रूप से नियुक्त किये जाते थे। ट्रांसऑक्सियाना में सामानी और 820 सी ई के बाद खुरासान में ताहिरी भी वंशानुगत रूप से नियुक्त होने लगे।

ट्रांसऑक्सियाना से गुलाम सैनिकों का अधिग्रहण

अल-बालादुरी के अनुसार 'अल-मामून खुरासान में अपने *आमिलों* को लिखता रहता था कि वे ट्रांसऑक्सियाना में उन लोगों पर छापा मारें, जिन्होंने अब तक आत्मसमर्पण नहीं किया और इस्लाम को स्वीकार नहीं किया है। वह अपने दूत भेजता था, जो जाकर रजिस्टर (*दीवान*) में उन लोगों के लिए पेंशन जारी करें, जिन्हें वह पसंद करता था। वह इन क्षेत्रों के लोगों और वहां के सुल्तानों के बेटों की सद्भावना चाहता था और उपहार देकर उन्हें अपने पक्ष में मिलाना चाहता था। वे जब उसके दरबार में आते थे, तो वह उनका सत्कार करता था और ढेरों आशीर्वाद देता था। जब मआतसिम खलीफा बना, तो उसने अपने इस पूर्ववर्ती का यहां तक अनुकरण किया कि उसकी सेना के ज्यादातर सेनानायक ट्रांसऑक्सियाना की सैन्य टुकड़ियों, सोग्दियान, फरगना और उश्र'उसाना, अशाश तथा अन्य क्षेत्रों से लिए गए। उनके सुल्तान उससे मिलने आते थे। उन क्षेत्रों में इस्लाम प्रमुख धर्म बन गया। और उन देशों के बाशिंदे वहां से बाहर जाकर तुर्कों के खिलाफ युद्ध करते थे' (***फुतुह अल-बुलदान***, भाग 2: 205).

अल-मामून को बाइज़ेंटाइनी सीमा पर चली लंबी लड़ाइयों के लिए कम और मिह्ना (धर्माधिकरण), इस्लामी धर्मज्ञानियों के एक समूह मआतज़िलों के लिए अपने समर्थन (विस्तार से जानने के लिए देखें ***इकाई 15***) तथा ज्ञान सदन (*बैत-उल हिकमा*) को आर्थिक मदद देने के लिए अधिक याद किया जाता है। उसका शासनकाल जीवंतता और ओजस्विता से परिपूर्ण था और वह इस्लाम के बौद्धिक इतिहास का एक यशस्वी काल खंड है। खलीफा द्वारा पृथ्वी का एक नक्शा भी तैयार करवाया था – नीचे दिया गया चित्र देखें।

चित्र 14.7: *सूरत-उल अर्ज़* (पृथ्वी का चित्र): अल-मामून

साभार : इब्न फज़लउल्लाह अल-उमरी (1301-1349) की *मसालिक अल-अबसार,* तोपकापी सरे म्यूजियम, इस्तान्बूल, अहमेट 2797, पृ. 292v-293r।

स्रोत: http://www.myoldmaps.com/early-medieval-monographs/2261-ibn-fadi-allah-al/2261-al-umari.pdf

किन आंतरिक कारणों ने अल-मामून को इस धारणा को आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित किया कि *कुरान* की रचना की गई थी? प्रारंभिक इतिहासकारों में यह धारणा प्रचलित थी कि अल-मामून एक 'मुक्त चिंतक' था, इसलिए *मिहना* (धर्माधिकरण) के माध्यम से उसने *उलेमाओं* की सच्चाई उजागर करने और उनका रुतबा नीचा करने की कोशिश की। पैट्रिशिया क्रोन और मार्टिन हाइंड्स ने अल-मामून के *मिहना* के बारे में एक अधिक संतुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। उमय्यदों ने *उम्मा* के नेतृत्व का दावा तीन आधारों पर किया था: धार्मिक प्राधिकार और धार्मिक तथा कानूनी मामलों में हस्तक्षेप; इस्लाम में विश्वास नहीं करने वालों (बाइज़ेंटाइनों) के खिलाफ युद्ध; तथा *हज* यात्राओं का नेतृत्व और सुरक्षा प्रदान करना। अब्बासी शासकों, जैसे हारून ने अनेक बार हज की यात्रा की। फिर भी धर्म और धर्मज्ञान का आधिकारिक और प्रामाणिक विद्वान *उलेमाओं* को ही माना जाता था। अल-मामून ने *उलेमाओं* को बाहर कर उस खोई हुई धार्मिक सत्ता को फिर से वापस हासिल करने का प्रयास किया। इसलिए उसने अब्बासी शासन के अधीन *उलेमाओं* और *काज़ियों* पर निशाना साधा और उन्हें खलीफा या राज्य द्वारा की गई कानून की व्याख्या को स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। और इसके लिए उनका उत्पीड़न भी किया। लेकिन धर्माधिकरण आखिरकार असफल साबित हुआ, क्योंकि, जैसा कि पैट्रिशिया क्रोन ने टिप्पणी की कि,

'खलीफा की समस्या यह थी कि *उलेमाओं* (धार्मिक विद्वानों) का कोई एक ऐसा संगठित रूप नहीं था, जिसे वह सामूहिक रूप से दबा सके। वे सब धार्मिक नेता थे, जो अपने अनुयायियों के अनौपचारिक समर्थन से अपनी प्रतिष्ठा हासिल करते थे। वे नीचे से उभर कर आते थे और खलीफा के पास ऐसी कोई तजवीज नहीं थी, जिससे वह उनसे उनकी यह ताकत या रुतबा छीन सके।' *मिहना* (धर्माधिकरण) की प्रताड़ना तब तक चलती रही, जब तक बड़े पैमाने पर शुरू हुए विरोधों ने 848 सी ई में खलीफा अल-मुतवक्किल को इसे (*मिहना* को) त्याग देने के लिए मजबूर नहीं कर दिया।

14.11 बाद के अब्बासी खलीफा

अल-मआतसिम (833-842 सी ई) के शासन के दौरान तबरिस्तान और अजरबाइजान (बबक द्वारा; मृत्यु 838 सी ई) में अनेक आंतरिक विद्रोह हुए। तुर्की के भाड़े के सिपाहियों की भर्ती कर पहले उन्हें महलों के अभिजात्य रक्षाकर्मियों के रूप में नियुक्त करके, और बाद में 837-838 सी ई में बाइज़ेंटाइनों के खिलाफ अभियान में उन्हें इस्तेमाल कर मआतसिम ने इस्लामी राजनीतिक इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ा। खुरासानी और अरबों के विपरीत, तुर्की अत्यंत कुशल घुड़सवार तीरंदाज थे। वे अपने स्वामी, यानी खलीफा के प्रति पूरी तरह से निष्ठावान थे। उसने *दीवान* से अरबों को सामूहिक रूप से बाहर करने की कीमत पर अब्बासी इस्लामी जगत के लिए बड़े पैमाने पर एक *मामलूक* सैन्य समाज के निर्माण की शुरुआत की। इन तुर्की दास सैनिकों को *मामलूक* या *गुलाम* कहा जाता था। उन्हें बड़े पैमाने पर बन्दी बना लिया जाता था या खरीद लिया जाता था; उन्हें दूसरे सैनिक दलों की तुलना में ज्यादा तनख्वाह दी जाती थी; और परिवारों में ही पाला-पोसा (*परवरिश/तरबियत*) जाता था। यह एक ऐतिहासिक घटना क्रम था, जिसने अब्बासी साम्राज्य के पूर्वी सीमा क्षेत्रों में तीव्र इस्लामीकरण का रास्ता खोल दिया। अल-मआतसिम ने 838 सी ई में अपनी तुर्की *मामलूक* सेना को अमोरियम के मुख्य नगरों को घेर लेने का निर्देश दिया और इस तरह पहली बार तुर्क मध्य अनातोलिया तक बढ़ आए। लेकिन तुर्कों के उच्छृंखल व्यवहार के कारण अल-मआतसिम को अब्बासी साम्राज्य की राजधानी बगदाद से समारा ले जानी पड़ी (हारुन अल-रशीद कालीन अब्बासिद खिलाफत के मानचित्र के लिए देखें https://www.writing-endeavour.com/blog/the-abbasid-caliphate-p9.html)

अल-वतीक (842-847 सी ई), अल-मुतवक्किल (847-861 सी ई), अल-मुंतसिर (861-862 सी ई) और बाद में कुशल राजनीतिज्ञ अल-मुवाफक ने इस तुर्की सैन्य दल की ताकत को सीमित करने की कोशिश की। उत्तर अब्बासी काल ने उत्तराधिकार की अनेक लड़ाइयां देखीं, जिनके साथ ही पश्चिम की ओर बड़े पैमाने पर खानाबदोश पलायन हुआ, जिसने अब्बासी खिलाफत को विघटित कर दिया। हालांकि अब्बासी खलीफा 945-1258 सी ई तक औपचारिक प्रमुख बने रहे, लेकिन वह साम्राज्य स्वतंत्र प्रांतों के समूह जैसा था, जैसे खुरासान ताहिरियों के अधीन, समरकंद सामानियों के अधीन, ईरान बुयीदों के अधीन और मिस्र फातमियों के अधीन, क्योंकि बगदाद में खलीफा अभिजात्य तुर्की रक्षकों के हाथों की कठपुतली बनकर रह गए थे, जो खलीफा से वैसा ही करवाते थे, जैसा वे चाहते थे (उत्तर हारून अल-रशीद कालीन अब्बासी खिलाफत के लिए देखें https://www.writings endeavour.com/blog/the-abbasid-caliphate-p.9.html)।

बोध प्रश्न-3

1) अब्बासिद, उमय्यदों को हटाने में कैसे सफल हुए?

....

....

....

....

....

2) अब्बासी क्रांति का प्रशासनिक ढांचे पर क्या असर पड़ा?

....

....

....

....

....

3) खलीफा अल-मंसूर द्वारा अब्बासी राज्य में क्या बदलाव किए गए?

....

....

....

....

....

14.12 अब्बासी खिलाफत : सिंचाई, कृषक तथा राजकीय भूमि

अब्बासी खिलाफत, अपने दौर में सिंचाई नहरों का संजाल बिछाने के लिए विशेष रूप से जानी जाती है। लेकिन अब्बासी खिलाफत के आखिरी दौर में बड़े पैमाने पर हुए किसानों और गुलामों के विद्रोहों ने साम्राज्य की नींव ही हिला दीं।

14.12.1 सिंचाई

जब अल-मंसूर ने बगदाद को अब्बासी खिलाफत की राजधानी के रूप में अपनाया, तो अब्बासी अभिजात्यों ने वहां की विशाल दलदली भूमि में कृषि का विस्तार करने और उसे समृद्ध करने में बहुत रुचि दिखाई, खासकर इराक के दक्षिणी हिस्से की विस्तृत समतल उर्वर भूमि में, जिसे *सवाद* क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। यह अनाज, सब्जियों और फलों का महत्वपूर्ण स्रोत था। गेहूँ, चावल और जौ *सवाद* क्षेत्र की मुख्य पैदावार थे। उन्होंने लंबे समय से उपेक्षित पड़ी सिंचाई प्रणाली को दुरुस्त किया और उसका कायाकल्प कर दिया। कृषि के विकास के लिए पुरानी *कनातों* (भूमिगत नहरें) की मरम्मत की गई, नई तरह के जलमार्ग (*तुरा*) या खाइयां खोदी गईं, अतिरिक्त जल बहाव मार्ग बनाए गए और उन नहरों को गाद के जमाव से बचाने के उपाय ढूंढे गए। इराक, खासकर उसके *अल-सवाद* क्षेत्र के अलावा, अब्बासिदों के दो अच्छे उपजाउ कृषि क्षेत्र मिस्र और खुरासान थे।

अल-मंसूर के एक सैन्य कमांडर अबुल अल-असद द्वारा जल भराव वाले दलदली क्षेत्र में *नहर अबुल-असद* नाम की एक नई नहर खुदवाई गई, जो काफी गहरी थी। उस क्षेत्र में जल आपूर्ति का वह मुख्य स्रोत थी। वासित में *नहर अल-बिलाह* का निर्माण हुआ। यह एक

विशाल नहर थी, जो अल-महदी के समय में निर्मित की गई थी। पहले वासित एक छावनी केंद्र था। अब्बासी काल में वह बगदाद के विकसित हो रहे बाजार को अपेक्षाकृत सस्ते दामों पर खाद्य सामग्री उपलब्ध कराता था। इस *नहरवां* प्रणाली (नहरों और जल बहाव मार्गों का निर्माण) ने विशाल क्षेत्रों को पुनर्जीवित करने में मदद की। एक इतिहासकार के मुताबिक इन भूमियों से प्राप्त होने वाली फसलें 'अल-हरमैन यानी ''दोनों पवित्र शहरों – मक्का और मदीना'' के बाशिंदों को सहायता और उपहार के रूप में दी जाती थीं, और वहां के गरीबों को खैरात में दी जाती थीं।' इनके अलावा, मक्का के लोगों तक पानी पहुंचाने के लिए *नहर जुबैदा* का निर्माण किया गया। हारून अल-रशीद की मां ने *नहर अल-रयान* तैयार कराई, जिससे वासित का उत्तरी हिस्सा (मुबारक और सिल्ह) खेती के लायक हो गया। जहां से खलीफा हारून के 'सैनिकों के लिए, उनकी जरूरत का सामान आता था', हारून ने उन क्षेत्रों के लिए *नहर अल-कतूल* नामक नहर खुदवाई, ताकि वहां पानी की आपूर्ति हो सके और इसके लिए उसने 'दो करोड़ *दिरहम* खर्च किए'।

अब्बासी साम्राज्य की कर व्यवस्था की भव्यता का मूल आधार कृषि से प्राप्त होने वाला कर ही था। अब्बासी खलीफा, उनके राजवंश की महिलाएं, गवर्नर और सभ्रांत तबके के लोग भी किसानों की जमीनों तक पानी पहुंचाने के लिए जलमार्गों, कुंओं, बांधों और उनसे जुड़ने वाली नालियों (*मुसन्नयात*) और अन्य नहरों के निर्माण में अपना योगदान दिया करते थे। अब्बासियों को राज्य की आय का ज्यादातर हिस्सा *अल-सवाद* की समतल उपजाऊ भूमि से ही मिलता था। राज्य के राजस्व के बारे में लिखी गई अपनी प्रसिद्ध पुस्तक *किताब अल-खराज* में अबू यूसुफ ने खेतों की सिंचाई की व्यवस्था के संबंध में राज्य के कर्तव्यों का विस्तार से वर्णन किया है। अबू यूसुफ लिखता है, 'अगर *सवाद* के बाशिंदों को दजला और फरात से निकाले गए बड़े जलमार्गों से जुड़ने के लिए नहरों की खुदाई करने या उनकी गाद निकालने के जरूरत होती थी, तो उनके लिए यह काम राज्य द्वारा करवाया जाता था और उसका खर्च राजकीय कोष और *खराज* देने वाले (*अहल अल-खराज*) उठाते थे।'

अल-मंसूर ने बगदाद का निर्माण एक योजनाबद्ध संकेंद्रित शहर के रूप में कराया। इसे फरात से निकाली गई चार बड़ी सिंचाई नहरों – *नहर ईसा, नहर सरसर, नहर मलिक* और *नहर कूथा* से जल की आपूर्ति होती थी। पश्चिमी बगदाद में सिंचाई का काम फरात से निकलने वाली नहरों से होता था। पूर्वी बगदाद में सिंचाई का काम *नहर कतूल* से होता था, जिसे दजला नदी से निकाला गया था। नौवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में खुरासान में गवर्नर ने कानून के विद्वानों को सिंचाई के बारे में एक किताब तैयार करने का निर्देश दिया, जो *किताब अल-कुनी* के रूप में लिखी गई। सभी प्रांतों में *दीवान अल-मा'* किसानों के बीच पानी का वितरण करवाता था और सिंचाई प्रणाली तथा सिंचाई व्यवस्था की देख-रेख करता था।

14.12.2 अब्बासी खिलाफत के समय के प्रमुख विद्रोह

अब्बासी काल में सबसे पहले अल-मंसूर के समय में सीरिया में राज्य के अधिकारियों द्वारा किए जाने वाले दमन के खिलाफ तेजी से किसान विद्रोह शुरू हुए। इनका नेतृत्व बुंदर कर रहे थे। अब्बासी काल में अब्बासियों ने दमनकारी शासन से मुक्ति पाने के लिए खुरासान, इफ्रीकिया, मिस्र और दूसरे प्रांतों में भी किसानों ने विद्रोह किए। हारून अल-रशीद के समय में मिस्र में कॉप्टिक ईसाईयों ने भी अब्बासी सत्ता के खिलाफ बगावत की। अज़रबाइजान और ट्रांसऑक्सियाना में हुए भारी कृषक विद्रोहों ने 'अत्याचारी अब्बासी गवर्नरों की सत्ता हिला दी'। 839 सी ई में कुर्द जनजातियों ने मोसुल और तिकरित में विद्रोह का झंडा उठाया।

जिस समय गृह युद्ध के कारण समारा अराजकताओं से घिरा हुआ था, उसी समय ज़ंज विद्रोह भी फूट पड़ा। ज़ंज गुलाम, दक्षिणी पूर्वी बगदाद के दलदली प्रदेशों में, खासकर बसरा में इस्तेमाल किए जाते थे। वे मिट्टी की ऊपरी परत हटाने का काम करते थे। अपनी इस

दयनीय दशा को देखकर उन्होंने कई बार बगावत की। लेकिन इनमें से जो सबसे बड़ी और अदमनीय बगावत थी, उसे ज़ंज की बगावत कहते हैं। वह पंद्रह वर्षों तक (868-883 सी ई) लगातार चलती रही। तबरी दासों के इन सामाजिक आंदोलनों का एक स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करते हैं, क्योंकि वे उस दौर में बगदाद में थे। ज़ंज विद्रोहियों ने बसरा पर कब्जा कर लिया और उसे अपने नियंत्रण में ले लिया। उन्होंने अब्बासी सेना को पराजित कर दिया और उनके नेता अली इब्न मुहम्मद को ***महदी*** घोषित कर दिया गया। हालांकि उनका नेता अन्ततः मारा गया। ज़ंज विद्रोह की प्रकृति के विषय पर इतिहासकार विभाजित हैं कि वह दास विद्रोह था भी या नहीं। यह विद्रोह, गुलामों की बगावत से शुरू जरूर हुआ था, लेकिन बाद में इसमें मुस्लिम किसान, बद्दू और अब्बासी सेना के असंतुष्ट सैनिक तथा दूसरे असंतुष्ट समूह भी शामिल हो गए थे।

14.12.3 अब्बासियों के समय में राजकीय भूमि का स्वरूप

अब्बासी खिलाफत के समय 8वीं सदी में राज्य या सरकार की भूमि *सवाद्फी/ सवाफी* कहलाती थी। उस दौर में भूमि के सुधार के लिए अनेक कार्य हुए थे, इसलिए ऐसा समझा जाता है कि अब्बासी शासकीय भूमि के दायरे में भी काफी इजाफा हुआ था। खलीफा और उनके परिवार के सदस्य अपने लिए निजी भूमि खरीदते थे। खलीफा की निजी भूमि को *दियाल-खिलाफह* कहते थे। ऐसा माना जाता है कि अब्बासी खलीफाओं, जैसे हारून अल-रशीद ने तबरिस्तान के स्थानीय शासक वंदाद हुरमुज़ाद को तबरिस्तान की अच्छी भूमि दस लाख *दिरहम* में उसे बेचने के लिए दबाव डाला था। उसी इलाके में हारून के बेटे ने तीन सौ गांवों की भूमियां खरीदने का प्रयास किया था। मोटे तौर पर हारून के शासन काल में *सवाद्फी* (खलीफा की राजकीय भूमि) भूमि में बढ़ोतरी हुई, लेकिन ज्यादा बढ़ोतरी अल-जज़ीरा (उत्तरी इराक) और सरहदी इलाकों में हुई। मध्य काल में अल-जज़ीरा का मतलब था, दजला के ऊपरी फैलाव और फरात के बीच की जमीन। अल-जज़ीरा में अनाज तथा अन्य खाद्य वस्तुओं का जो उत्पादन किया जाता था, उससे सिर्फ इराक और बगदाद की ही आपूर्ति की जाती थी।

जब अबू अल-अब्बास ने मारवानी उमय्यदों की निजी संपत्ति और जागीरें (*दीया*) जब्त कीं, तो उनकी देख-रेख के लिए एक विशेष *दीवान* नियुक्त किया। इरा लैपिडस का कहना है कि अब्बास राजकीय भूमि में उमय्यदों की जागीरों की जब्ती के कारण बढ़ोतरी हुई। दूसरे शब्दों में, जब अब्बासी सत्ता में आए तो उन्होंने वे जागीरें जब्त कर लीं, जो पहले उमय्यदों के नियंत्रण में थीं। अनेक क्षेत्रों में ऐसे चारागाह चिह्नित थे, जिनमें सिर्फ खलीफा के पशु चराए जाते थे। हसन इब्न मुहम्मद अपनी *तारीख-ए कुम* में बताता है कि प्रत्येक गांव के बगल में अब्बासी खलीफाओं और गवर्नरों के पशुओं के लिए बड़े-बड़े चारागाह सुरक्षित रखे जाते थे।

नौवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में, जब तुर्की भाड़े के सैनिकों की नियुक्ति आरंभ हुई, तो अब्बासी खिलाफत का सैन्य खर्च काफी बढ़ गया। तब राज्य ने उन सैनिकों को वेतन के बदले जमीनें देने का सिलसिला शुरू किया, जिसे इक्ता कहते थे। इसका अर्थ था, जमीन का एक छोटा टुकड़ा (*क़ता*), जो निजी मिल्कियत में हो। बाद के अब्बासी काल में यह जमीन की मिल्कियत का एक महत्वपूर्ण रूप बन गया। संक्षेप में नौवीं शताब्दी में इस्लामी जगत में *इक्ता* प्रणाली ने राजकोष को सैनिकों के भारी भरकम वेतन की अदायगी के बोझ से राहत दी, क्योंकि अपर्याप्त राजस्व और सैन्य अभियानों से प्राप्त होने वाली मामूली लूट राशि के कारण सरकार के लिए उन्हें वेतन देना मुश्किल हो रहा था। एन एस. लैंबटन जैसे इतिहासकारों ने तो यह भी दावा किया है कि 'अब्बासी राज्य की लगातार बिगड़ती जा रही हालत के कारण ही *इक्ता* प्रणाली लागू की गई।' बेकर का दावा है कि पहले *मुक्ता* (*इक्ता* के मालिक) पर कोई सैन्य जिम्मेदारी

नहीं थी। यह तुर्कों के सेना में शामिल किए जाने के बाद हुआ कि इस तरह के राजकीय आबंटन की व्यवस्था में सेना को भी लाभार्थियों की श्रेणी में रखा जाने लगा। बेकर का मानना है कि इक्ता प्रणाली का विकास मूलतः एक प्रशासनिक और नौकरशाही उपकरण के रूप में हुआ था, लेकिन बाद में वह सैन्य अनुदान प्रणाली में बदल गया, ताकि स्वर्ण (मुद्रा) आधारित अर्थव्यवस्था के टूट जाने के बाद सेना का खर्च उठाया जा सके।

अब्बासी खिलाफत की स्थापना के बाद पूरे इस्लामी इतिहास में जो सबसे बड़ी घटना हुई, वह थी चीनी बंदियों के माध्यम से आई कागज बनाने की कला। सबसे पहला कागज उद्योग समरकंद में 751 सी ई में स्थापित हुआ। और फिर 794 सी ई में. बगदाद में। इसके बाद सीरिया, उत्तरी अफ्रीका, मिस्र और स्पेन सहित इस्लामी जगत में आश्चर्यजनक तेजी से कागज उद्योग विकसित हुआ। अरबों ने कागज बनाने की तकनीक में काफी सुधार किया और वे अच्छे किस्म के कागज बनाने लगे। कागज की प्रचुर उपलब्धता ने बड़े पैमाने पर किताबों के उत्पादन का रास्ता खोल दिया। कागज की उपलब्धता से भू-राजस्व प्रक्रिया के दस्तावेजीकरण, पत्राचार और सूचनाओं के आदान-प्रदान का काम भी आसान हो गया।

नौवीं शताब्दी में इराक में कृषि पैदावार में कमी आने लगी तो पूरा *सवाद* क्षेत्र ज़ंज विद्रोह के कारण अराजकता का शिकार बन गया। लेकिन मिस्र का विकास होता रहा। भू-स्वामियों और संपन्न तबके ने सिल्क और अलसी के उत्पादन में निवेश करना शुरू किया। कपास के उत्पादन में भी वृद्धि हुई। मिस्र से हेजाज़ तथा अन्य प्रांतों में कागज, वाइन, ऊनी वस्त्र और अनाज का निर्यात जारी रहा। अब्बासी काल में बसरा, मिस्र और बगदाद में ज्यादातर नगरों और शहरों के जीवन में *सुक्कों* या बाजारों ने एक आवश्यक भूमिका निभाई। इन *सुक्कों* की स्थापना शक्ति संपन्न लोगों द्वारा की जाती थी। वे लोगों को एक जगह एकत्र होने, बातचीत करने तथा खरीद-बिक्री करने के लिए एक वैकल्पिक सार्वजनिक स्थल प्रदान करते थे।

एकीकृत इस्लामिक अरब राज्य में अन्न उत्पादन और सिंचाई तकनीक का पूरे इस्लामी प्रदेश में फैलाव होने लगा। इसे अरब कृषि क्रांति कहा जाता है। यह प्रक्रिया बड़े पैमाने पर लोगों के प्रव्रजन, सीमा विस्तार और स्थान परिवर्तन के माध्यम से परवान चढ़ी। सरकारी नौकरशाही ने सिंचाई नहरों, भूमिगत जल संचय तकनीक (*कनात*), बांध और कुंओं के निर्माण को प्रायोजित किया, क्योंकि गन्ना और कपास जैसी फसलों की खेती के लिए काफी पानी की आवश्यकता होती थी। पानी को खीचने की *नोरिया* (पानी से चलने वाले पात्र) और *साक़िया* (पशुओं द्वारा खींची जाने वाली जल पात्रों की जंजीर) जैसी नई तकनीकों का प्रयोग होने लगा।

14.2.4 अब्बासियों के समय मिस्र में ठेके पर कृषि की व्यवस्था

कृषि राजस्व या कर उगाही को ठेके पर दिए जाने को *दमन* या *किबला* कहते थे। इस घृणित ठेका व्यवस्था में कुछ चुने हुए प्रांत या व्यक्ति विशेष राजकीय *आमिलों* को एक निश्चित रकम अग्रिम दे देते थे, ताकि उन्हें मनमाने ढंग से कर की वसूली की छूट मिल जाए। यह प्रथा विशेष रूप से खुरासान और मिस्र में विकसित हुई, जो बाद में नीलामी प्रथा में बदल गई। दीर्घ काल में अब्बासी सत्ता के लिए यह प्रथा अनर्थकारी साबित हुई। इसने भूमि की उर्वरता नष्ट कर दी और किसानों को बहुत नुकसान पहुंचाया। अबू यूसूफ ने राजस्व कृषि ठेका प्रणाली के बारे में और विशेष रूप से *सवाद* क्षेत्र के बारे में चेतावनी दी थीः

> मुझे लगता है कि *सवाद* या किसी भी अन्य जमीन को राजस्व कृषि के ठेके (*क़िबला*) पर नहीं दिया जाना चाहिए। कर के ठेकेदार या किसान (*मुतकब्बिल*) को यदि पैदावार में खराज से अधिक कुछ प्राप्त होता है, तो वे *खराज* देने वालों पर अतिरिक्त बोझ डालते हैं, और किसान को वह देना पड़ता है, जिसकी देनदारी उनके लिए अनिवार्य नहीं है, इस प्रकार वे उन्हें सुरक्षा प्रदान करने की बजाय उसे प्रताड़ित करते हैं और नुकसान पहुंचाते हैं। इससे या इस तरह की अन्य व्यवस्थाओं से भूमि नष्ट होती है और

> उसकी आश्रित जनता बदहाल होती है। कर का ठेकेदार, उनके इस विनाश की तब तक कोई परवाह नहीं करता, जब तक ठेके से (*किबला*) उसकी अपनी उगाही सुनिश्चित रहती है; और वह ठेके में अधिशेष से निर्धारित अतिरिक्त लाभ प्राप्त करने के अलावा और ज्यादा उगाही कर सकता है। हालांकि वह यह सब प्रजा पर केवल निष्ठुर बल प्रयोग द्वारा ही कर सकता है। वह नृशंसता से उन्हें कोड़े लगाता है, उन्हें कड़ी धूप में खड़ा रखता है, और उनकी गर्दन से भारी पत्थर बांधकर लटका देता है। यह वह कठोर दंड है, जो वह *खराज* अदा करने वालों को देता है।

नौवीं शताब्दी के अंत तक आते-आते अब्बासी शासन ने एक नई वित्तीय व्यवस्था *इक्ता-ए कबाला* कायम की, जिसमें एक निश्चित रकम के कर भुगतान के बदले भूमि आबंटित की जाती थीं। अब्बासी काल में फसलों के आढ़तियों और सिक्के बदलने वाले (मनी चेंजर) व्यापारियों ने कर संग्रहण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। हालांकि गृह युद्ध (*फितना*) के दौरान जमीनों की जब्ती ने उन्हें खुरासान और सीरिया में जा बसने के लिए बाध्य कर दिया। इससे अब्बासी शासन की वित्तीय अवस्था को तगड़ा झटका लगा, क्योंकि राजस्व घटने लगा। अनेक कुलीन अब्बासियों की खुरासान, तबरिस्तान, सीरिया, मिस्र, इराक और अल-यमामा में अपनी निजी जागीरें थीं। उनके मालिक *दीवान-ए* दीया नामक विभाग से सीधे अनुबंध करने के बाद अपनी जागीरों पर कृषकों से फसल की साझेदारी (sharecropping) के हिसाब से खेती करवाते थे।

बोध प्रश्न-4

1) अब्बासी खलीफाओं और कुलीनों ने नहरों, बांधों और कुंओं का निर्माण क्यों कराया?

....

....

....

....

....

2) अब्बासी खिलाफत के समय सिंचाई तंत्र के प्रबंधन के बारे में एक टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

3) अब्बासी साम्राज्य के अधीन राजकीय भूमि और भू-स्वामित्व की प्रमुख किस्में कौन-कौन सी थीं?

....

....

....

....

....

14.13 अब्बासी काल में कर और *दीवान*

खराज (भूमि से प्राप्त होने वाला राजस्व) का आशय था जमीन से होने वाली कृषि पैदावार पर लगाया जाने वाला नियमित लगान। शुरुआती इस्लामी अभियानों के समय जो विजित भूमि मुसलमानों में बांटी जाती थी, उन पर इस तरह का कोई शुल्क नहीं लगाया जाता था, लेकिन वे *उश्र* और *ज़कात* अदा करते थे, जबकि गैर-मुसलमान *खराज* अदा करते थे। यह राज्य की आय का एक बड़ा भाग होता था। भूमि पर लिया जाने वाला कर *खराज*, दूसरे करों की तुलना में बहुत ज्यादा होता था। अबू हनीफा एक मशहूर इस्लामी धर्मशास्त्री और उच्च कोटि के न्यायविद् थे। उन्होंने अब्बासी खलीफा अल-मंसूर के शासन काल (754-775 सी ई) में निगमनात्मक उद्धरणों के आधार पर इस्लामी न्यायशास्त्र तैयार करने का प्रयास किया था, जो *क़ियास* कहलाई। भूमि कर (*खराज* अथवा *उश्र*) और भूमि सुधार के बारे में उनका रवैया लचीला था और वह किसानों के पक्ष में कर-भार कम करने की ओर झुकाव रखते थे (नीचे दिया गया बॉक्स देखें)। उनके शिष्य अबू मुस्लिम ने हारून अल-रशीद के निर्देश पर राज्य के कर विधान को इस्लामी सिद्धांतों के अनुरूप बनाने के लिए इस्लामी कर व्यवस्था के बारे में एक आधिकारिक संकलन *किताब-उल खराज* तैयार किया था।

खराज भूमि के नियम

सिर्फ वही जमीनें *खराज* का विषय हैं, जिन्हें युद्ध में हासिल किया गया है, जैसे *अस-सवाद* (इराक), *अस-शाम* (सीरिया) आदि। अगर सेनानायक ने उसे उन लोगों के बीच बांट दिया, जिन्होंने उसे फतह किया था, तो यह भूमि उसका दसवां हिस्सा (tithe-land) होगा और वहां के बाशिंदे गुलाम होंगे। लेकिन यदि सेनानायक ने ऐसा नहीं किया और उसे पूरे मुस्लिम समाज को दे दिया, जैसा कि उमर ने *अस-सवाद* के मामले में किया था, तो वहां के लोगों को *जिज़िया* का बोझ उठाना होगा और उस स्थिति में वहां की जमीन *खराज* का विषय होगी। लेकिन वहां के लोगों का दर्जा गुलाम का नहीं होगा। यह अबू हनीफा की उक्ति है।

'*जिन पर हमला हुआ*' और जो इस्लाम स्वीकार करते हैं: *खराज*, उनकी जमीन पर लिया जाएगा, और इसके अतिरिक्त फसल पर *ज़कात* (दान कर) लिया जाएगा। यह अल-औज़ा' की उक्ति है। अबू हनीफा और उनके शरिया के सिद्धांत अनुसार: एक ही व्यक्ति से *खराज* और *ज़कात* दोनों नहीं लिया जाना चाहिए... और अगर कोई व्यक्ति *खराज* भूमि पर साल में कई बार फसल उगाता है, तो उससे सिर्फ एक ही बार *खराज* लिया जाना चाहिए। इब्न अबू लैला का कहना है कि जितनी बार फसल मेरे लिए तैयार होती है, उतनी बार मुझसे *खराज* लिया जाता है। अबू हनीफा और मलिक का उस *खराज* भूमि के बारे में मानना है कि जिसका कोई स्वामी नहीं हो अगर उस जमीन पर मुसलमान रहते हैं या उस पर अपना व्यापार चलाते हैं और उसे दुकान या बाजार की तरह इस्तेमाल करते हैं, तो उनसे इसके लिए कोई *खराज* नहीं लिया जाना चाहिए।

उमर ने उन सब लोगों का *खराज* खत्म कर दिया था, जिनका खुरासान में इस्लाम में धर्मांतरण कराया गया था और उन लोगों को आर्थिक अनुदान दिया था, जिन्होंने इस्लाम स्वीकार किया था।

अल-बालादुरी, *फुतुह अल-बुलदान*, परिशिष्ट 1, *खराज भूमि के नियम के संबंध में*, पृ. 237 और 426

उश्र का शाब्दिक अर्थ है दसवां हिस्सा। अबू यूसुफ ने स्पष्ट किया कि '*उश्र* सिर्फ वही लिया जाना चाहिए जो नहरों की खुदाई, घरों और भवनों (*बुयूत*) के निर्माण और जमीन पर किए जाने वाले काम की तकलीफ उठाने के मेहनताने की एवज में *इक्ता* के मालिक की देनदारी होती है।' दूसरे प्रकार के करों में *जिज़िया* (व्यक्तिगत कर), *खुम्स, मक्स*, बाजार तथा बाजार में बिकने वाली वस्तुओं पर कर आदि शामिल थे। बाजार पर लगने वाले कर को *दरीबत अल-असवाक* के नाम से जाना जाता था। एक इतिहासकार लिखता है कि 'अल-मंसूर ने अपनी मृत्यु के समय तक बाजारों पर किसी तरह का राजस्व कर नहीं लादा। जब अल-महदी उसका उत्तराधिकारी बना, तो अबू उबैद अल्लाह ने उसे इस बात का ध्यान दिलाया। उसने

इसके लिए तुरंत आदेश जारी किया और दुकानों पर *खराज* (*हवानित*) लागू कर दिया, ऐसा उसने 873 सी ई में किया।' भारत और चीन से आने वाले जहाजों पर कर लगाया जाने लगा, जो दसवां हिस्सा होता था और जिसे *उशूर अल-सुफुन* कहा जाता था। बसरा जाने वाले जहाजों पर *मक्स* नामक कर वसूला जाता था। बाद में दसवीं शताब्दी में जहाजों पर लगने वाले कर *मक्स* और *उशूर अल-सुफुन* बंद कर दिए गए। अब्बासी राज्य, बाजार में बिकने वाली हर प्रकार की खाद्य सामग्री, फल और सब्जियों पर कर वसूलता था। बाजार में बिकने वाले पशुओं, खासकर घोड़ों, बोझ ढोने वाले खच्चरों, गायों और भेड़ों पर कर लिया जाता था। पेय पदार्थों के उत्पादन, *खुमुर* (वाइन) की बिक्री, सिल्क तथा कपास पर कुछ विशेष प्रकार के शुल्क देने पड़ते थे।

अब्बासी सैन्य, नागरिक और कृषि प्रशासन में काफी सुधार किए गए, वे उमय्यदों से मिली विरासत पर सुनियोजित संशोधन थे। उमय्यदों के शासन काल में *दिहक़ान* करों का संग्रहण करते थे, जबकि अब्बासी राज्य में उन्हें प्रशासनिक अधिकारियों में शामिल कर लिया गया और करों की वसूली सीधे राज्य के अधिकारी करते थे। ईरानी परंपराओं के अनुसार उन्होंने अधिक केंद्रीकरण किया और *वजीर* नामक संस्था को ज्यादा अधिकार सौंपे। उन्होंने अनेक *दीवान* (विभाग) भी बनाए। *वजीर* सभी *दीवानों* की निगरानी करता था। घाटे पर रोक लगाने के लिए अब्बास अल-सफ्फाह के शासन काल में *दफ्तरों* (codices) में पंजीकाओं को व्यवस्थित किया गया और अल-मंसूर के समय में *वजीर* नामक संस्था बनाई गई। आरंभिक अब्बासी काल के ये दो बुनियादी प्रशासनिक बदलाव थे, जिन्होंने राजस्व पर केंद्रीय नियंत्रण सुनिश्चित किया। हारून अल-रशीद ने *काज़ी अल-कुज़ा* नामक एक अलग पद बनाया। *वजीरों* के अधीन इन विभागों और *मजलिसों* (समितियों) की संख्या लगातार बढ़ती रही, यहाँ तक कि खलीफा अल-मुक्तदीर (908-929 सी ई) के शासन काल में बगदाद में लगभग 20 केंद्रीय *दीवान* हो गए थे। उनमें से कुछ का ब्योरा यहां दिया जा रहा हैः

दीवान अल खराज : यह राज्य के केंद्रीय प्रशासन की धुरी था। अब्बासी काल (750-945 सी ई) में *दीवान अल-खराज*, भू-कर तथा उससे जुड़े केंद्रीय सरकार के वित्तीय मामलों की निगरानी करता था। ज्यादातर वह खेती और राज्यों के आर्थिक उत्पादन की देखरेख करता था। वह अन्य *दीवानों* से स्वतंत्र होता था और *वजीरों* पर आंतरिक लेखा परीक्षक की तरह काम करता था।

दीवान अल-अजीमाह : अब्बासियों (750-945 सी ई) द्वारा इस विभाग की स्थापना सर्वोच्च लेखा परीक्षण कार्यालय के रूप में की गई, ताकि वह दूसरे *दीवानों* (विभागों) के लेखा की जांच कर सके, निगरानी कर सके और उन्हें नियंत्रित कर सके। वह विभिन्न *दीवानों* और *वजीरों* के कार्यालयों के बीच संपर्क सूत्र की तरह काम करता था।

दीवान अल-*दैयाह* : इस केंद्रीय कार्यालय की स्थापना अब्बास अल-सफ्फाह द्वारा की गई। अब्बासी खिलाफत के समय यह खलीफा की विभिन्न निजी जागीरों की निगरानी, निवेश और लगान के मामले देखता था।

दीवान अल-खजीन : अब्बासी प्रशासन में यह विभाग प्राकृतिक उत्पादों के सरकारी भंडारों और शस्त्रागारों की देखभाल करता था।

दीवान अल नफाकत : इस विभाग की स्थापना राजसी दरबार के खर्च की व्यवस्था करने के लिए की गई थी। यह दरबार के कर्मचारियों के वेतन, दरबार भवनों के निर्माण, विस्तार तथा मरम्मत का काम देखता था।

दीवान अल-सवाद : यह अब्बासी राज्य का सबसे प्रभुत्वशाली विभाग था। इसकी स्थापना अब्बासियों के शुरुआती दौर में इराक की कृषि भूमि से विभिन्न प्रकार के करों का संग्रह करने वाले घटक के रूप में की गई थी।

दीवान अल-माल : अब्बासी काल के राजस्व का यह प्रांतीय विभाग, 'विभिन्न प्रांतों के संबंध में ऐसे विवरणों की पंजिका (रजिस्टर) तैयार करता था कि कौन सा प्रांत इस्लामी साम्राज्य में किस प्रकार शामिल किया गयाः बल प्रयोग (*अनवाह*) द्वारा या समझौते (*सुल्ह*) द्वारा। इस पंजीयन में भूमि कर के बारे में यह दर्ज होता था कि किस प्रांत में किस बिंदु पर कौन सा कर लगता है (वह प्राप्ति *खराज* है या *उश्र*। *खराज*, लगान के रूप में लिया जाता है या जिज़िया के रूप में)। इस पंजीयन में मिल्कियत के नाम के साथ जमीन का सर्वेक्षण, *खराज* का निर्धारण और उसकी किस्म (वह *मिसहाह* है या *मुकसमाह*, *मिसहाह* के मामले में *खराज* की तय दर और *मुकसमाह* के मामले में पैदावर का तय भाग) का पूरा विवरण रखा जाता था'।

दीवान अल-मा' : यह विभाग बुनियादी तौर पर सिंचाई कार्य की निगरानी और पानी के बंटवारे के लिए जिम्मेदार था। विभाग कृषि उत्पाद का हिसाब रखता था। यह *दीवान अल-खराज* को *इबरह* (औसत पैदावार) की गणना के लिए आवश्यक आंकड़े भी भेजता था।

प्रांतों में राजकोषीय तथा सैन्य प्रशासन दो विभागों के जिम्मे थाः *दीवान अल-हर्ब* (सैन्य मामले) और *दीवान अल-खराज* (राजस्व के मामले), जिनकी नियुक्ति केंद्रीय सरकार करती थी। इन विभागों में अधिकारियों के साथ लिपिक, सिक्के बदलने वाले (मनी चेंजर), टकसाल पर्यवेक्षक (supervisors), *मुहतसिब* (बाजार निरीक्षक), चुंगी अधिकारी तथा सहायक (clerks) शामिल रहते थे। *रुस्तक* सबसे छोटी प्रशासनिक इकाई थी। कैस्पियन पठारी क्षेत्र के प्रशासन की सीधी निगरानी में नहीं आने वाले कुछ प्रांत जिलान, तबरिस्तान, देलाम और जरगान थे। अंदरूनी एशियाई प्रांतों में ट्रांसऑक्सियाना, फरगना, उशरुसना और काबुल इस तरह के क्षेत्र थे।

बोध प्रश्न-5

1) क्या आप इस विचार से सहमत हैं कि उमय्यद और अब्बासी, दोनों राज सत्ताएं कृषि कर पर आधारित थीं?

....

....

....

....

....

2) अब्बासी प्रशासनिक ढांचा बेहद जटिल था। अब्बासी इस विशाल केंद्रीय साम्राज्यिक नौकरशाही, प्रांतीय तथा स्थानीय अभिकर्ताओं तथा प्रभावशाली व्यक्तियों को किस प्रकार नियंत्रित करते थे?

....

....

....

....

....

3) **नाम** **परिभाषा**

अ)	*दीवान अल-मा'*	i)	भूमि कर
ब)	*खराज*	ii)	सिंचाई विभाग
स)	*दमन*	iii)	भूमि का आबंटन
द)	*इक्ता*	iv)	राजस्व कृषि

14.14 सारांश

सारांश में, यह इकाई सातवीं से दसवीं शताब्दी के बीच इस्लामिक समाज के विकास का चित्र प्रस्तुत करती है – प्रशासनिक नवाचार और विभिन्न प्रकार की जागीरें, साथ ही एक ढीली-ढाली विकेंद्रित राज्य सत्ता से एक अत्यंत जटिल और केंद्रीकृत सत्ता के रूप में बदलने वाली खिलाफत की प्रकृति। उमय्यदों ने अपनी प्रशासनिक संस्थाएं बनाईं, अपने सिक्के चलाए तथा बाइज़ेंटाइन और सासानी परंपराओं का अनुकरण करते हुए तथा उन्हें परिष्कृत करते हुए राजस्व तथा दरबार संस्कृति का विकास किया। उन्होंने खिलाफत की सीमाओं का अत्यधिक विस्तार किया, परती जमीनों को उर्वर बनाने के लिए *कनात* और कुंए खुदवाए और जल निकास नालियों (sluices) के साथ बांधों का निर्माण कराया। उमय्यदों ने *दीवानों* की स्थापना के साथ राज्य प्रशासन को और बेहतर बनाया। हालांकि उमय्यदों ने ज्यादातर गैर-मुस्लिम लोगों पर शासन किया। लेकिन उन्होंने शायद ही कभी सामूहिक धर्मांतरण को प्रोत्साहित किया। अब्बासी काल, इस्लामी सभ्यता के श्रेष्ठतम विकास को प्रदर्शित करता है। उन्हें उमय्यदों से एक समृद्ध और केंद्रीकृत प्रशासन विरासत में मिला और उन्होंने शासन की ईरानी परंपरा को भी उसमें शामिल किया। अब्बासी प्रभुत्व के बाद से, साम्राज्य की सेना और नौकरशाही में अरब लोगों की संख्या धीरे-धीरे घटने लगी। उनकी जगह खुरासानी और तुर्क भरे जाने लगे। अब्बासी काल में तुर्कों के इस्लामीकरण और सामुहिक धर्मांतरण की प्रक्रिया देखने को मिलती है।

14.15 शब्दावली

ज़कात : धार्मिक कर, यह कुल संपत्ति के ढाई फीसदी के बराबर था।

नहर : जल मार्ग या सिंचाई के लिए बनाई गई जलधारा

नवरूज़ : इरानी कैलेंडर का पहला दिन

अम्सार : अरबी में *मिस्र* का मतलब होता है छावनी शहर। *अमसार* इसका बहुवचन रूप है।

***न्यूमिस्मेटिक्स* (Numismatics)** : सिक्कों का अध्ययन और संग्रहण

महदी : एक मसीहा, इस्लाम का उद्धारक। इस्लामी विश्वास के अनुसार कयामत के दिन, समस्त पापों से छुटकारा दिलाने के लिए एक *महदी* प्रकट होगा।

14.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 14.2 और 14.3 देखें

2) देखें भाग 14.4, मारवानियों के बारे में। देखें बॉक्स, सूफ़यान तथा मारवानी राज्य के बारे में।

बोध प्रश्न-2

1) उमय्यद अर्थव्यवस्थाः राज्य भूमि, व्यापार तथा सिंचाई उप-भाग 14.6.1 देखें

2) व्यापार, नगरीकरण और *सुक्क* के लिए उप-भाग 14.6.2 देखें। हेनरी पिरेन के तर्क पर जवाब केंद्रित करें।

बोध प्रश्न-3

1) भाग 14.9 देखें

2) भाग 14.9 देखें

3) भाग 14.9 और 14.10 देखें

बोध प्रश्न-4

1) देखें उप-भाग 14.12.1, अब्बासी खिलाफतः सिंचाई, कृषक और राजकीय भूमि।

2) देखें उप-भाग 14.12.1, अब्बासी खिलाफतः सिंचाई, कृषक और राजकीय भूमि।

3) देखें उप-भाग 14.12.3, अब्बासी काल में जागीरों की किस्में: *स्वाद्फी, इक्ता, दमन* और अन्य प्रकार के भू-स्वामित्व।

बोध प्रश्न-5

1) देखें भाग 14.13, कर और *दीवान*। *खराज* तथा अन्य प्रकार के करों पर उत्तर को केंद्रित करें।

2) भाग 14.13 देखें

3) अ, (ii) ब, (i) स, (iv) और द, (iii)

14.17 संदर्भ ग्रंथ

क्रोन, पैट्रिशिया एवं हाइन्ड्स, मार्टिन, (2003) *गॉड्स कैलिफः रिलिजियस अथॉरिटी इन द फस्ट सेन्चुरीज़ ऑफ इस्लाम* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

क्रोन पैट्रिशिया, (2003) *स्लेव्स आन हॉर्सेसः द इवॉल्यूशन ऑफ द इस्लामिक पॉलिटि* (कैम्ब्रिजः कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

दुरी, अब्द अल-अज़ीज़, (2011) *अर्ली इस्लामिक इन्सटीट्यूशन्स- एडमिनिस्ट्रेशन एंड टेक्सेशन फ्रॉम द कैलीफेट टू द उमय्यद्स एंड अब्बासिद्स* (लंदनः आई. बी. टॉरिस).

एस्पोज़िटो, जॉन-एल., (1999) *द ऑक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑफ इस्लाम* (ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

फ्लड, फिनबार बैरी और नेसीपोग्लू, गुलरु, (2017) *ए कम्पेनियन टू इस्लामिक आर्ट एंड आर्कीटेक्चर* (न्यू जर्सीः जॉन विले एंड संस).

फ्राय, रिचर्ड नेलसन, (1975) *द कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ ईरान,* भाग-4, *फ्राम द अरब इनवेजन टू द सेल्जुक्स* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

हन्ना, नेली, (2002) *मनी, लैंड एंड ट्रेडः एन इकानॉमिक हिस्ट्री ऑफ द मुस्लिम मैडीटरेनियन* (लंदनः आई.बी. टॉरिस).

हॉटिंग, जी. आर., (2002) *द फर्स्ट डायनेस्टी ऑफ इस्लाम – द उमय्यद कैलीफेट एडी 661-750* (लंदनः रुटलेज).

हम्फ्रीज़, आर. स्टीफन, (1991) *इस्लामिक हिस्ट्रीः ए फ्रेमवर्क फॉर इन्क्वायरी,* रिवाइज़्ड एडीशन (प्रिंसटन : प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस).

केनेडी, ह्यू, (2004) *द प्रॉफेट एंड द ऐज ऑफ द केलीफेट्सः द इस्लामिक नियर ईस्ट फ्राम द 6 टू 11 सेन्चूरी* (लंदनः लांगमैन).

लैम्बटन, एन. एस., (1991) *लैंडलॉर्ड एंड द पैजेन्ट इन पर्शिया* (न्यूयार्कः आई. बी. टॉरिस).

लैम्बटन, एन. एस., (2013) *स्टेट एंड गवर्नमेंट इन मिडिवल इस्लाम* (लंदनः रुटलेज).

लेपिडस, इरा एम., (2002) *ए हिस्ट्र ऑफ इस्लामिक सोसाइटीज़* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

लेसनर, जेकब, (2017) *द शेपिंग ऑफ अब्बासिद रुल* (प्रिंस्टनः प्रिंस्टन लीगेसी लाइब्रेरी).

रॉबिन्सन, चेज़ एफ., (2010) *द न्यू कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इस्लाम,* भाग-1 (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

शाबान, एम. ए., (1970) *द अब्बासिद रिवोल्यूशन* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

14.18 शैक्षणिक वीडियो

द अर्ली मिडिल ऐजे़स, 284-1000: द स्प्लैंडर ऑफ द अब्बासिद पीरियड

https://www.youtube.com/watch?v=ji8kKMSLEQo

इस्लामिक सोसाइटीज़

https://www.uctv.tv/shows/Islamic-Societies-with-Ira-Lapidus-Conversations-with-History-7242

इकाई 15 इस्लामिक समाजः विभिन्न संप्रदायों का उदय और विस्तार*

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 इस्लाम के उदभ्व के समय अरब प्रायद्वीप

15.2.1 *जहालिया* : इस्लाम पूर्व का अज्ञानता का काल?

15.2.2 महान् साम्राज्यों के मध्य अरब

15.2.3 दक्षिणी अरब प्रायद्वीप

15.3 अरब में इस्लाम और मुहम्मदः प्रारम्भिक इस्लामी समाज

15.3.1 622 सी ई में मदीना के लिए प्रव्रजन

15.3.2 मक्का की फतह

15.4 इस्लामी खिलाफत और इस्लामी जगत में फूट

15.5 उमय्यद खारिजी और शिया

15.5.1 खारिजी कौन थे?

15.5.2 शिया इस्लामिक संप्रदायों का उदय

15.6 अब्बासी खिलाफतः *मुआतज़िला* और *अशारी*

15.7 इस्लामी सूफी संप्रदाय

15.7.1 सूफी आंदोलन का उदय

15.7.2 सूफी *तरीका* का प्रसार

15.8 सारांश

15.9 शब्दावली

15.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.11 संदर्भ ग्रंथ

15.12 शैक्षणिक वीडियो

15.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम इस्लाम के उदय और विस्तार तथा इसके विभिन्न संप्रदायों के बारे में अध्ययन करेंगे। ज़ैसा कि ज्ञात है, इस्लाम का उद्भव अरब में हुआ लेकिन बाद में इसका प्रसार तीन महाद्वीपों – एशिया, यूरोप तथा अफ्रीका में भी हुआ। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपः

- इस्लाम के उदय के समय की अरब प्रायद्वीप की सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों को समझ सकेंगे,

* डॉ. शाकिर-उल हसन, डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री एंड कल्चर, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

- इस्लाम की स्थापना के लिए उत्तरदायी प्रारंभिक संघर्ष को जान सकेंगे,
- मदीना में प्रथम इस्लामिक राज्य (खिलाफत) की स्थापना तथा विश्व इतिहास पर पड़े इसके प्रभाव को जान सकेंगे,
- उमय्यद और अब्बासिद खिलाफतों के उदय की चर्चा कर पायेंगे, और
- इस्लाम में भिन्न मतावलंबी संप्रदायों – खारिजी, शिया, सुन्नी और सूफी पंथों के उदय और विकास के कारणों को समझ सकेंगे।

15.1 प्रस्तावना

हालांकि इस्लाम का उद्‌गम स्थल चट्टानी रेगिस्तानों और रेत से भरा प्रदेश अत्यधिक शुष्क था, परंतु उसने अनेक धार्मिक परंपराओं को जन्म दिया और पोषित किया, जिनमें मिस्र/मेसोपोटामिया के धर्म, ज़रथुष्ट्रों (पारसी) धर्म, यहूदीवाद और ईसाई धर्म शामिल थे। शक्तिशाली इस्लामिक अरब राज्य के निर्माण के पीछे एक बड़े उत्प्रेरक पैगंबर मुहम्मद थे। उन्होंने अपने धर्म इस्लाम के प्रचार की शुरुआत मक्का से की और बाद में उन्हीं इस्लामिक सिद्धांतों पर आधारित राज्य की स्थापना मदीना में की। उनकी मृत्यु के तुरंत बाद ही अरब एक साम्राज्यवादी शक्ति बनकर उभरा और इस्लाम का प्रसार एशिया, यूरोप और अफ्रीका तक जा पहुंचा। लेकिन इस पूरे दौर में इस्लामी समाज को उत्तराधिकार के हिंसक संघर्षों और विभिन्न इलाकों तथा संप्रदायों के विद्रोहों का सामना करना पड़ा। इस्लाम में आस्था और सभ्यता दोनों का समावेश था, क्योंकि मुसलमानों ने राज्य के यूनानी और ईरानी ढांचे को आत्मसात किया था। इस्लाम के भीतर ही अनेक मत-मतांतर पैदा हुए। वहीं यूनानी दार्शनिक विचारों के संपर्क में आने से कई प्रकार की आध्यात्म संबंधी शाखाएं फूटने लगीं और 1258 सी ई में अब्बासी खिलाफत के पतन के बाद रहस्यवादी सूफी सिलसिले भी उभरने लगे।

इस इकाई में छह भाग हैं, पहला हिस्सा इस्लाम पूर्व के अरब प्रायद्वीप के राजनीतिक-सामाजिक परिवेश का वर्णन करता है। दूसरे हिस्से में मुहम्मद के नेतृत्व में इस्लाम के प्रसार और मदीना में इस्लामिक राज्य की स्थापना का स्पष्ट विवरण है। तीसरा हिस्सा खिलाफत और *उम्मा* (इस्लामिक समुदाय) के बीच उभरे मतभेद से पैदा हुए खारिजी, शिया और सुन्नी संप्रदायों के बारे में है। चौथे भाग में शिया संप्रदाय की विभिन्न उप-शाखाओं ज़ैसे इस्माइली, इमामी और ज़ैयदी का ब्योरा है। पांचवां हिस्सा अब्बासी खिलाफत के समय की दो आध्यात्मिक शाखाओं – *मुताज़िला* और *अशारी* के सिद्धांतों और उनके विकास का चित्रण प्रस्तुत करता है। छठा और आखिरी भाग सूफी सिलसिलों के उद्‌भव का विवरण देता है।

15.2 इस्लाम के उद्‌भव के समय अरब प्रायद्वीप

छठी सदी के अरब समाज की प्रकृति मुख्य रूप से कबीलाई थी और वह दो शक्तिशाली साम्राज्यों – रोम (बाइज़ेंटाइन) और ईरानी (सासानिदों) के बीच मध्यवर्ती राज्य के रूप में स्थित था। इन परिस्थितियों में अरबों के मध्य किसी ऐसे सारगर्भित धार्मिक आंदोलन की शुरुआत जो विश्व इतिहास में एक नए अध्याय को आरंभ कर सके, असंभव और अव्यावहारिक स्वप्न की तरह प्रतीत होता है। लेकिन ऐसा ही हुआ और मुहम्मद तथा उनके उत्तराधिकारियों के नेतृत्व में इस्लाम ने एक सफल आंदोलन की तरह न सिर्फ अरबों को एकीकृत किया, बल्कि विशाल साम्राज्यों तथा संस्कृतियों की स्थापना भी की।

इस्लाम पूर्व के एक कवि अम्र इब्न क़ामिया ने बड़े तीखे ढंग से टिप्पणी की थी, *'एक आदमी का* **कबीला** *उसके पंजे (जिसके द्वारा वह अपने शत्रुओं को दूर रखता है) और टेक हैं (जो उसे सहारा देते हैं)।'* इस्लाम पूर्व अरब के लगभग सभी निवासी परस्पर मदद और जीवन

की सुरक्षा के लिए किसी न किसी *कबीले* विशेष से संबद्ध रहते थे। कबीले अनेक कुल-गोत्रों से मिल कर बनते थे। ज़ैसे पैगंबर मुहम्मद, बानू हाशिम कुल-गोत्र में पैदा हुए थे, जो मक्का के कुरैश कबीले का अंग था। व्यापार काफिलों और कारवांओं के माध्यम से होता था। एक अमीर विधवा महिला खदीजा ने मुहम्मद को मक्का और सीरिया के बीच चलने वाले अपने काफिलों की देखरेख और प्रबंधन के लिए नियुक्त कर रखा था।

दुर्खाइम के प्रतिमानों के अनुसार धार्मिक आस्थाएं मानव समाजों की बनावट को प्रतिध्वनित और प्रकट करती हैं। इस्लाम पूर्व अरब की आध्यात्मिक आस्थाएं विभिन्न प्रकार की थीं, क्योंकि वे अनेक देवताओं में श्रद्धा रखते थे। ये सभी कबीले अपनी एक विशेष स्थापित परंपरा के पालन से बंधे थे, जिसे *सुन्ना* कहते थे और जो उनके अपने कबीले की परंपराओं द्वारा मान्य और अनुकूलित होता था। *इमाम* कबीले का नेता होता था और उसके काम ही कानून को स्थापित और अभिव्यक्त करते थे। मक्का निवासी मूर्तिपूजक थे; हर कबीले का अपना एक देवता होता था। काबा में *हुबुल* (कुरैश कबीले का मूर्ति देवता), *लाट*, *मनत* और *उज़्ज़ा* का निवास था। वहां यहूदी धर्म और ईसाई धर्म का भी प्रचलन था। यहां तक कि छठी सदी में यहूदी राजा असद ने अपने राज्य यमन में ईसाईयों का उत्पीड़न भी शुरू किया था।

15.2.1 *जहालिया* : इस्लाम पूर्व का अज्ञानता का काल

इतिहास के इस्लामी स्रोतों में इस्लाम पूर्व काल को *जहालिया* कहा गया है, जिसका मतलब था इस्लामिक एकेश्वरवाद तथा दैवीय नियमों की जानकारी के अभाव का काल। इस्लामी स्रोतों में मुहम्मद के कर्तव्य का प्रतिनिधित्व बहुदेववाद के खिलाफ एकेश्वरवाद को और मुख्य रूप से पैगम्बर अब्राहम के एकेश्वरवाद को पुनःस्थापित करने के संघर्ष के रूप में पेश किया गया है। इस्लामी स्रोत *जहालिया* काल के प्रमुख लक्षणों के रूप में कम उम्र की कन्या हत्या, मूर्ति पूजा, सूदखोरी और कबीलाई झगड़े आदि कुरीतियों का उदाहरण देते हैं। कन्या हत्या की परंपरा के बारे में लैला अहमद कहती हैं कि 'कुरान में कन्या हत्या की जो भर्त्सना की गई है, वह उस शर्म और कुप्रथा को अभिव्यक्त करती है, जो *जहालिया* अरबों में लैंगिकता को लेकर मौजूद थी।'

हालांकि उसी काल में, न सिर्फ मक्का का विकास एक बड़े व्यापारिक केंद्र के रूप में हुआ, बल्कि अरबी साहित्य में ***कसीदा***, जीवनियां और किस्सागोई ज़ैसी अनेक नई साहित्यिक विधाएं भी परवान चढ़ीं। इस्लाम पूर्व अरबी काव्य की सात उत्कृष्ट रचनाओं के रूप में मशहूर *सबा मुआलक़त* उन सात संबोधन गीतों (Odes) का संग्रह है, जिसे काबा में टांगा गया था। इन *कसीदों* (स्तुति गानों) में कबीलाई परंपराओं का चित्रात्मक वर्णन तथा खानाबदोश अरब बद्दुओं की लड़ाई और वीरता का मंत्र मुग्ध करने वाला बखान यह स्पष्ट करता है कि इस्लाम के उदय से पहले भी अरबी भाषा और साहित्य के पास अपनी एक संपन्न परंपरा थी।

इमरु अल-कैस बिन हुज्र अल-किंदी रचित *क़िफा नबकी* को आज भी अरबी की एक उत्कृष्ट रचना माना जाता है। काव्य प्रतिभा के धनी और वीर योद्धा अंतार इब्न शादाद ने *सीरत अंतार* तथा अन्य कई *कसीदों* की रचना की थी। जुहेर बिन अबि सालमा, लेबिद और अल-हरीथ इस्लाम पूर्व अरबी साहित्य की कुछ मशहूर प्रतिभाएं थीं। ये स्रोत बताते हैं कि अरब बस्तियों में आमतौर पर अत्यधिक कबीलाई अराजकता का माहौल रहता था, केवल उन कुछ महीनों को छोड़कर, जिन्हें पवित्र महीने समझा जाता था, जब सब कुछ शांत हो जाता था। इन महीनों में आपसी युद्ध बंद हो जाते थे। लोग अपने कबीले के रिवाजों का पूरी तरह से पालन करते थे और उनके प्रति निष्ठावान रहते थे।

इस्लाम का महिलाओं की स्थिति पर क्या प्रभाव पड़ा, इसके बारे में जेंडर (gender)

इतिहासकारों के दो परस्पर विरोधी विचार हैं। एक समूह, जिसका प्रतिनिधित्व जूडिथ टकर करती हैं, का तर्क है कि *जहालिया* के दौर में स्त्रियां पूरी तरह से कबीलों की निरंकुश सत्ता के अधीन थीं और संपत्ति में उनकी कोई हिस्सेदारी नहीं थी। इस्लाम ने न सिर्फ कन्या हत्या पर रोक लगाई, बल्कि उन्हें संपत्ति में भी अधिकार दिलाया। लेकिन एक अन्य इतिहासकार लैला अहमद इस धारणा को यह कहते हुए नकार देती हैं कि इस्लामी कानूनों ने औरतों की आजादी खत्म कर दी। हालांकि इस्लाम पूर्व अरब में विवाह ज़ैसी कोई निश्चित संस्था नहीं थी, लेयला अहमद तर्क देती हैं कि 'हालांकि *जहालिया* में विवाह का जो भी स्वरूप था, उसके आधार पर यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि उसमें औरतों को ज्यादा अधिकार प्राप्त थे या उसमें नारीद्वेष का अभाव था, लेकिन वे उसका संबंध इस तथ्य से जरूर जोड़ती हैं कि उसमें इस्लाम में दी गई आजादी की तुलना में औरतों को ज्यादा यौनिक आजादी हासिल थी। इस्लाम की स्थापना, इसके द्वारा पितृवंशीय पुरुषवादी वैवाहिक संस्था को वैध मानने की संकल्पना और इनके कारण होने वाले सामाजिक बदलावों ने औरतों की उस स्वायत्तता और भागीदारी में कटौती की।'

बोध प्रश्न-1

1) *'जहालिया'* शब्द का अर्थ संक्षेप में लिखिए। क्या आप इस धारणा से सहमत हैं कि इस्लाम पूर्व का समय अज्ञानता का काल था?

....

....

....

....

....

2) इस्लाम पूर्व के अरब किस प्रकार के धार्मिक रिवाजों का पालन करते थे?

....

....

....

....

....

15.2.2 महान् साम्राज्यों के मध्य अरब

छठी सी ई तक उत्तरी अरब प्रायद्वीप में दो कबीलाई राजनैतिक संघटन अस्तित्व में आ चुके थे – ग़सानिद और लखमिद। हालांकि ग़सानिदों (220-638 सी ई) ने आरंभ में पश्चिमी अरब में बाइज़ेंटाइनों के विस्तार का काफी प्रतिरोध किया, आखिरकार बाइज़ेंटाइन उन्हें पश्चिम की तरफ सासानिदों के विस्तार के खिलाफ एक अधीनस्थ और मध्यवर्ती राज्य बनाने में सफल रहे। ग़सानिदों (आज का सीरिया और जॉर्डन) की राजधानी जाबिया (सीरिया में स्थित) थी। धीरे-धीरे वे प्रधानतः ईसाई बन गए और अक्सर बाइज़ेंटाइन का पक्ष लेते थे। गसानिद शासक अपने नाम के साथ *मलिक* उपाधि लगाते थे और 529 सी ई में एक ग़सानिद राजा अल हरीथ पंचम ने बाइज़ेंटाइन सम्राट से पैट्रीकस की उपाधि प्राप्त की, जिसके नाम से वह सीरिया का शासन चलाता था।

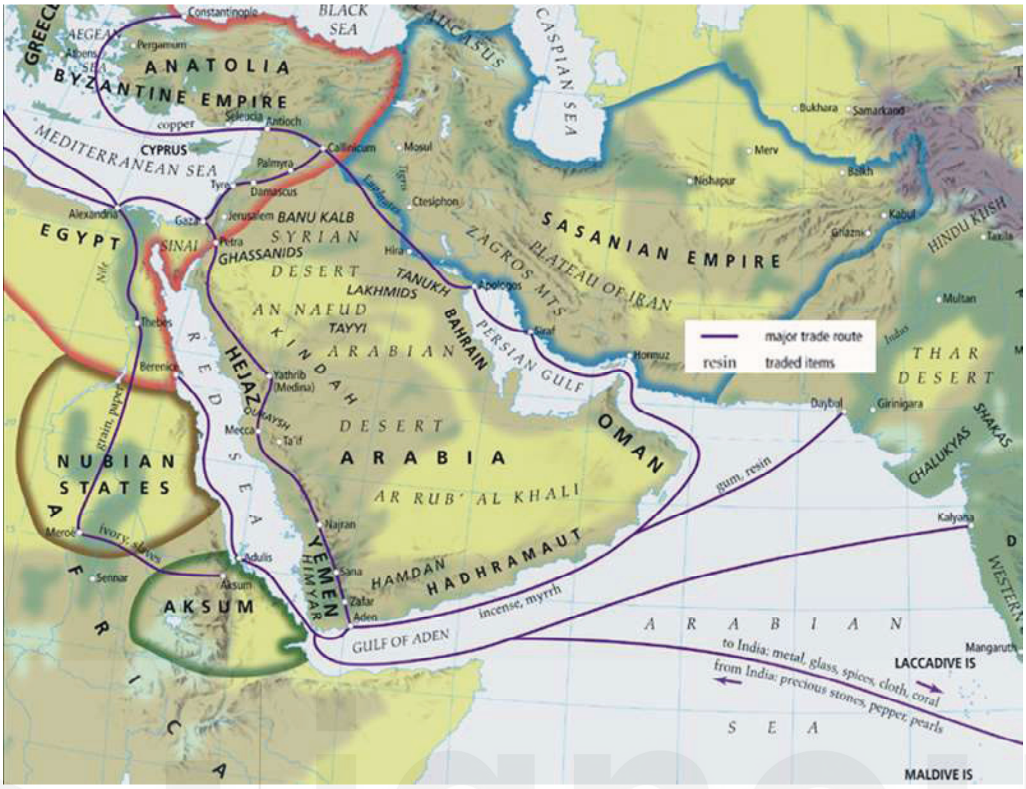

मानचित्र 15.1: इस्लाम पूर्व अरेबिया

साभार: एलन एस. (अक्टूबर 2016) इन्ट्रोडक्शन टू अरब हिस्ट्री (6 सेंचुरी); शार्ट हिस्ट्री वेबसाइट

स्रोत: https://www.shorthistory.org/middle-ages/islamic-world/introduction-to-arab-history-6th-century/

इसी बीच यूफ्रेट्स नदी के निचले हिस्से के निकट दक्षिण में (ईराक में) बानू लखम कबीले के अधीन समान राजनैतिक संघटन उभरा, जिन्हें लखमिद (300-602 सी ई) कहा जाता था, जिसकी राजधानी हीरा थी। वे राजनैतिक रूप से सासानिदों के लिए महत्वपूर्ण थे। लेकिन छठी सदी के आखिरी दशक में सासानी राजा खुसरो द्वितीय (590-628 सी ई) ने लखमिद राजा नुमान अल-मुंदीर का कत्ल करवा दिया, ताकि उस इलाके को सीधे अपने नियंत्रण में ले सके। लेकिन इस विस्तारवादी कदम का उलटा असर हुआ और लखमिदों ने सासानी सैनिकों को सीमा से बाहर खदेड़ दिया। इस तरह उनके बीच की संधि स्थायी रूप से टूट गई।

इतिहासकारों का तर्क है कि ईसा की छठी शताब्दी में उत्तर में बाइज़ेंटाइनों और सासानिदों के बीच के अनवरत संघर्ष के कारण व्यापारिक गतिविधियां बड़े पैमाने पर अरब प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग की ओर मुड़ने लगी थीं। मक्का को अपनी तटस्थता के कारण इससे फायदा हुआ। इसके अलावा, अरबों में यह भावना जगी कि वे हाजरा और इब्राहिम के बेटे 'इश्माइल' या 'हाजरा' के वंशज हैं। अरब अलग-अलग बोलियां बोलते थे, लेकिन वे अरबी भाषा की ही विभिन्न प्रकार की बोलियों के प्रकार थे, जिसे वे आपस में समझ लेते थे। वे यह तथ्य भी समझने लगे कि उनकी भाषा एक ही है, जो अरबी है, जो अलग से पहचानी जा सकती है और जिसके पास अपना काव्य और वाचिक परंपरा (oral tradition) है। इस तरह व्यापार, स्थायी कृषि, स्थानबद्ध जीवन निर्वाह के तरीके, अरब चेतना और समाज में बड़े पैमाने पर अर्जित दौलत ने कबीलों के बीच लंबे समय से संस्थापित संबंधों को कमजोर करना शुरू कर दिया। वे ढीले पड़ने लगे और अन्ततः टूट गए।

15.2.3 दक्षिणी अरब प्रायद्वीप

अरब प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग में तीन बड़े क्षेत्र थे – हेजाज़, ओमान और यमन। छठी शताब्दी के उत्तरार्ध तक मदीना में यहूदी आबादी का प्रभुत्व हो गया था, जिसका नियंत्रण *मरज़ुबान*

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

(सैन्य-नागरिक गवर्नर) द्वारा किया जाता था। मदीना के यहूदी कबीले *नादिर* और *कुरायजा, अव्स* और *खज़राज* ज़ैसे कबीलों से कर वसूलते थे, क्योंकि मदीना छठी शताब्दी के अंतिम दशक तक परोक्ष रूप से सासानिदों के नियंत्रण में रहा। *अव्स* और *खज़राज* अरबों की दो प्रमुख जनजातियां थीं, जिनके पास मदीना की पूरी **नखलिस्तानी** बस्तियों में अपनी जमीनें थीं।

बावजूद इसके, मक्का के कुरैशों ने अपनी बस्तियों को ज्यादा आंतरिक स्थिरता प्रदान की, जो उनके कबीलाई भाईचारे की वजह से नहीं, बल्कि आपसी मैत्री और समझौतों के कारण थी। एफ. राबिन्सन के मुताबिक, 'कुरैशों का विस्तार इस्लाम के उदय के पहले शुरू हो गया था...।' कुरैशों ने व्यापार में अपना पैसा लगाना शुरू किया, वे मक्का के व्यापार पर नियंत्रण करने लगे और समय के साथ उसे एक फलता-फूलता व्यापारिक शहर बना दिया। इसके अलावा, मक्का पहले से भी एक धार्मिक केंद्र था और मक्का के नेता पूरी अरब राजनीति से किसी न किसी रूप में जुड़े हुए थे। कुरैश दो भागों में बंटे हुए थे, *बीताह* और *ज़वाहिर* – *बीताह* ज़मज़म के नखलिस्तान को नियंत्रित करते थे जिसने उन्हें *ज़वाहिरों* पर श्रेष्ठता प्रदान की।

ओमान और यमन, ये दो बड़े क्षेत्र भौगोलिक रूप से भिन्न थे, क्योंकि वहां का मौसम सम शीतोष्ण था, जो कृषि कार्यों के अनुकूल था। प्रायद्वीप के उत्तरी क्षेत्रों के उलट, यमन और ओमान का भारत, इथियोपिया और मिस्र से पुराना व्यापारिक संबंध था। दूसरे शब्दों में, अरब प्रायद्वीप में उत्तरी क्षेत्र के विपरीत दक्षिणी इलाकों को उर्वर भूमि, हिंद महासागर (भारत से व्यापार) को लाल सागर (पूर्वी भूमध्यसागर) से को जोड़ती एक बेहतर अवस्थिति, अनुकूल मौसम और प्रचुर वनस्पतियों का वरदान प्राप्त था। सुगंधी (incense) और ऊंटों के व्यापार पर यमनी सौदागरों और व्यापारियों का कब्जा था। यमनी व्यापारी अपने साथ चमड़ा, मसाले, सिल्क वगैरह भी लाते थे, जो बाइज़ेंटाइनों और सासानिदों, दोनों के लिए उपयोगी था। डियोडोरस साइकुलस ने *बिबलियोथिका हिस्टोरिका* में लिखा है कि अरब (नबातियन) मिर्र (myrrh; गंध रस) और लोबान ज़ैसी विलासतापूर्ण वस्तुओं की आपूर्ति को नियंत्रित करते थे, जो रोमनों और सासानिदों के लिए देव अर्धय तथा औषधीय कार्यों के लिए अत्यंत मूल्यवान चीजें थीं। बाइज़ेंटाइन, जो मुख्य रूप से ईसाई थे, वे चर्च के आयोजनों में लोबान का इस्तेमाल करते थे। हेजाज़ इलाके के बाशिंदे सामान्य तौर पर ऊंट पालक घुमंतू, अर्ध-घुमंतू बद्दू जनजातियों से संबंधित थे। आरंभ में ये बद्दू स्थायी बस्तियों पर हमले करते थे और उनसे संरक्षण शुल्क वसूला करते थे, जिसे *थव्वा* कहा जाता था। समय के साथ नखलिस्तानों में होने वाले पर्यावरणीय बदलावों ने इन्हें कबीलाई सामाजिक संगठनों में आने को बाध्य किया और वे स्थिर जीवन बिताने और कारवाओं वाले व्यापार की ओर उन्मुख होने लगे। इस नई उभरती व्यापार प्रणाली और संपन्नता का एक महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि मक्का एक व्यापारिक केंद्र की तरह विकसित होने लगा। नखलिस्तानों में खजूर ही मुख्य फसल थी, जबकि पर्वतीय क्षेत्रों, ज़ैसे तैफ में अनाज भोजन के मुख्य अंग थे।

इस तरह पांचवीं सदी सी ई के बाद उत्तर की ओर से बैजेंटाइनों और सासानिदों की घुसपैठ के बावजूद इस्लाम पूर्व अरब निवासी अलग-थलग नहीं पड़े, बल्कि विश्व की राजनैतिक धाराओं से नजदीकी से जुड़े रहे। अपने निकट के राज्यों और वहां के लोगों से अरब लगातार संवाद और आदान प्रदान-करते रहे।

15.3 अरब में इस्लाम और मुहम्मदः प्रारम्भिक इस्लामी समाज

पैगंबर होने का दावा करने से पहले मुहम्मद के पूर्व जीवन से संबंधित ऐतिहासिक जानकारी बहुत कम हैं। आमतौर पर वृतांत इस प्रकार उपलब्ध है कि, इस्लाम के पैगंबर मुहम्मद बिन अब्दुल्ला का जन्म मक्का में कुरैश कबीले में 570 सी ई में हुआ था। बचपन में मां-बाप के

गुजर जाने के कारण मुहम्मद की परवरिश उनके चाचा अबू तालिब द्वारा की गई। वे अक्सर प्रार्थना और ध्यान लगाने के लिए मक्का के निकट जबाल अल-नूर में स्थित हीरा की गुफा में जाया करते थे। 610 सी ई में एक शांत रात्रि में हीरा की गुफा में फरिश्ते जिबराइल के माध्यम से पैगंबर पर पहली ईश्वरीय आकाशवाणी (अरबी में *वही*) प्रकट हुई। जिबराइल को देखकर मुहम्मद भयभीत हो गए और शीघ्रता ही वापस घर चले गए। लेकिन कुछ ही समय में वे स्वयं ईश्वर का पैगंबर होने का अहसास करने लगे। तत्पश्चात् मुहम्मद ने अपने नाते-रिश्तेदारों के बीच 13 वर्षों तक मक्का में इस्लाम के बारे में अपने नए संदेशों का प्रचार शुरू कर दिया और कुछ लोग उनके अनुयायी भी बन गए। मुहम्मद के संदेशों का केंद्रीय तत्व *तौहीद* (दैवीय एकेश्वरवाद) और रोजाना पांच वक्त की नमाज था। इस इस्लामिक सिद्धांत का सार तत्व था कि '*अल्लाह के अतिरिक्त कोई अन्य ईश्वर नहीं* है और *मुहम्मद ही उसके पैगंबर* हैं'। मुहम्मद ने मूर्तिपूजा के परित्याग का उपदेश दिया, जिससे मक्कावासी डर गए, क्योंकि उनका केंद्रीय पूजा स्थल काबा उनके अपने कबीलाई देवताओं का देवस्थान ही था।

मक्का में दिए जा रहे मुहम्मद के उपदेशों से अधिकांश कुरैश सशंकित हो गए। उन्होंने इसका विरोध करना और मुसलमानों को प्रताड़ित करना शुरू किया, क्योंकि मुहम्मद के उपदेशों से मक्का के नेताओं की आध्यात्मिक भावनाओं और भौतिक हितों के लिए खतरा पैदा होने लगा। इब्न इशाक (704-770 सी ई) ने कुरैश नेताओं और मुहम्मद के बीच बिगड़ते संबंधों को निम्नलिखित शब्दों में बयान किया है:

> जब कुरैशों ने देखा कि मुहम्मद उनकी बात नहीं मानेंगे और वे धीरे-धीरे उनसे कटते जा रहे हैं और उनके देवताओं का अपमान करते हैं और उनके चाचा तालिब उनके प्रति स्नेह रखते हैं और उनकी रक्षा के लिए वे उठ खड़े होंगे और कभी उनका परित्याग नहीं करेंगे तो उनके कुछ प्रमुख लोग अबू तालिब के पास गए ... और जाकर कहा, ''ओ अबू तालिब, तुम्हारे भतीजे ने हमारे देवताओं को धिक्कारा है, हमारे धर्म का अपमान किया है, हमारी जीवन शैली का मजाक उड़ाया है और हमारे पुरखों में खामियां निकाली हैं। या तो तुम उसे रोको या उसे हमें सौंप दो, क्योंकि तुम भी उसी हाल में हो जिस हाल में उसके विरुद्ध खड़े हम लोग हैं। तुम उसे हमें सौप दो और हम उससे तुम्हें छुटकारा दिलवा देंगे''।

यह धमकी गंभीर और वास्तविक थी। इसके बाद कुरैशों ने मुसलमानों को प्रताड़ित करने के लिए उन्हें पीटने, कड़ी धूप में खड़ा रखने तथा उनका सामाजिक और आर्थिक बहिष्कार करने की शुरुआत कर दी। कुरैशों ने मुहम्मद के अनुयायियों के उस छोटे से समुदाय को चेतावनी दी, '*हम तुम्हारा बहिष्कार करेंगे और तुम्हें भीख मांगने पर मजबूर कर देंगे*'।

नतीजा यह हुआ कि मुहम्मद और उनके इस नव दीक्षित मुस्लिम समुदाय को मक्का वासियों के तीखे विरोध और प्रताड़ना का सामना करना पड़ा। और आखिरकार 13 साल तक इस पीड़ा को झेलने और काफी सोच-विचार करने के बाद मुहम्मद और उनके अनुयायी 622 सी ई में उत्तर की ओर याथरिब (मदीना) चल पड़े। यह प्रव्रजन (*हिजरा*) एक ऐतिहासिक परिघटना है और इस्लाम के इतिहास में इतना महत्वपूर्ण है कि इस्लामी हिजरी कैलेंडर की शुरुआत ही इस घटना से होती है। मक्का में मुहम्मद के कार्यों का सार प्रस्तुत करते हुए इरविंग एम. ज़ैटलिन तर्क देते हैं, 'मक्का में पैगंबर ने प्रवचन किया और सलाह दी, लेकिन इसके आगे उनकी कोई योजना या रणनीति नहीं थी'। यह इस्लाम के इतिहास के एक महत्वपूर्ण तत्व को रेखांकित करता है, क्योंकि मक्का से प्रव्रजित होने के मुहम्मद के फैसले का उद्देश्य 'गहन धार्मिक और गंभीर राजनैतिक दोनों था' क्योंकि मक्का में इस दृढ़निष्ठ एकेश्वरवाद के लिए मुसलमान बहुदेववादी धर्मांधता और असहिष्णुता से दूर भाग रहे थे।

15.3.1 622 सी ई में मदीना के लिए प्रव्रजन

याथरिब (मदीना) पहले से ही एक बहुधर्मी शहर था, वहां अनेक यहूदी जनजातियां, कई प्रकार के गैर-यहूदी और गैर-ईसाई समुदाय बसे हुए थे। उनके बीच मक्का के प्रव्रजित मुसलमानों (*मुहाजिरीन*) के आ जाने से एक नया तबका और आ जुड़ा। मुहम्मद के आगमन का वहां स्वागत हुआ। हालांकि याथरिब (मदीना) एक विभाजित शहर था। आर्थिक और सैन्य रूप से यहूदी जनजातियां वहां प्रभुत्वशाली थीं। 622 सी ई में वहां की 12 यहूदी जनजातियों द्वारा मुहम्मद को पंच के रूप में 'मदीना का संविधान' तैयार करने के लिए बुलाया गया। इब्न इशाक के अनुसार वहां पहुंचने पर 'ईश्वर के संदेशवाहक (मुहम्मद) ने आव्रजक (*मुहाजिरीन*) और *अंसार* (मदीना में रहने वाले मुसलमानों) के बीच एक दस्तावेज तैयार किया, जिसमें उन्होंने यहूदियों को उनके धर्म और आधिपत्य में प्रतिष्ठित करते हुए एक सुलहनामा और प्रतिज्ञापत्र लिखा। उसमें उनके अधिकार और कर्तव्य सुनिश्चत किए गए थे'।

मदीना का संविधान

इब्न इशाक ने इस दस्तावेज के महत्वपूर्ण अवयव इस प्रकार बताए हैं :

1 कोई भी आस्थावान दूसरी आस्था के अनुयायी का विरोध नहीं करेगा। जो भी इससे बगावत करेगा और आस्थावानों के बीच अन्याय, शत्रुता या ईश निंदा फैलाने की कोशिश करेगा, उसके खिलाफ हर हाथ उठेगा, चाहे वह उसका बेटा ही क्यों न हो।

2 जो भी यहूदी हमारा अनुसरण करेगा, उसकी मदद की जाएगी और बराबरी का दर्जा दिया जाएगा और उसे चोट पहुंचाने या उसके दुश्मन की सहायता करने की कोशिश नहीं की जाएगी।

3 जब तक किसी समान शत्रु से युद्ध लड़ा जा रहा है, तब तक यहूदी भी आस्थावानों के साथ युद्ध का खर्च उठाएंगे।

4 यहूदी अपने धर्म का पालन करेंगे और मुसलमान अपने धर्म का। निष्ठा, विश्वासघात के खिलाफ सुरक्षा देगी। यहूदियों के घनिष्ठ मित्र उन्हीं की तरह हैं। मुहम्मद की इजाजत के बिना कोई भी यहूदी किसी सैन्य अभियान पर नहीं जाएगा। लेकिन उसे अपनी क्षति का बदला लेने से रोका नहीं जाएगा।

5 *याथरिब* की घाटी (मदीना) पवित्र होगी और उन सबके लिए अलंघ्य होगी जो इस सुलहनामे में शामिल होंगे। इस समझौते में शामिल सभी पक्ष *याथरिब* पर होने वाले किसी भी हमले के समय एक दूसरे की सहायता करने के लिए वचनबद्ध होंगे।

गेरहार्ड बाउरिंग 'मदीना के संविधान' के आधारभूत परिणामों के बारे में बताते हैं कि 'मदीना के संविधान के रूप में मुहम्मद के मदीनाई समाज के संगठन ने राजनीतिक चिंतन का एक व्यावहारिक प्रारूप दिया, जिसमें एक नई राज्य व्यवस्था कायम करने के बारे में पैगंबर की व्यावहारिक सोच की झलक मिलती है।' मुहम्मद ने *अल-मस्जिद उन-नबी* नामक एक मस्जिद बनवाई, जो उमय्यद राजवंश (661-749) के उदय तक तमाम इस्लामिक राजनीतिक गतिविधियों का केंद्रबिंदु बनी रही। उन्होंने एक ऐसा मुस्लिम समाज (*उम्मा*) तैयार किया, जो अपने कबीलाई संबंधों के कारण नहीं, बल्कि धार्मिक विश्वासों के कारण आपस में जुड़ा हुआ था। मदीना के संविधान ने इस्लाम के साझा धार्मिक विश्वास के आधार पर एक नए तरह के सामूहिक भाईचारे (*असाबिया*) को जन्म दिया।

624 सी ई में मदीना में इस्लाम के निरूपण के दौरान मक्का के कुरैश लगातार मुसलमानों पर हमला करते रहे और *बद्र* तथा *उहुद* में उन्होंने दो ऐतिहासिक लड़ाइयां लड़ीं। बद्र में हालांकि मक्का की फौज मुसलमान सेना से बड़ी थी और उसका नेतृत्व अबू जहल (मृत्यु 624 सी ई), उत्बा और अबू सूफियान ज़ैसे उनके कुशल योद्धा कर रहे थे। मक्का से दमिश्क

जाने वाले काफिलों के लिए बद्र एक नियमित पड़ाव था, क्योंकि वहां कई कुंए थे। बद्र की लड़ाई में मुसलमानों की फतह हुई और यह काफी प्रभावकारी साबित हुई, क्योंकि अरबों ने पहली बार यह महसूस किया कि मुहम्मद और मुसलमान उनके प्रमुख प्रतिद्वंदी हैं और मक्का के कुरैशों की प्रतिष्ठा, श्रेष्ठता और राजनैतिक भूमिका की विरासत के शक्तिशाली दावेदार हैं।

हालांकि उसी वर्ष अबू सूफियान और खालिद बिन वालिद (585-642 सी ई) के नेतृत्व में मक्का के कुरैशों ने उहुद में मुसलमानों को परास्त किया। मक्का वासियों और मुसलमानों के बीच 627 सी ई में आखिरी लड़ाई खन्दक का युद्ध (बैटल आफ ट्रेंचेस) हुई जब मक्का आक्रमणकारियों ने मदीना को 27 दिनों तक घेरे रखा। मुसलमानों ने मक्का के सैनिकों को मदीना में घुसने से रोकने के लिए एक असाधारण तरीका अपनाया। उन्होंने प्रत्येक प्रवेश द्वार पर खाई खोद दी। मदीना की घेरेबंदी अंततः असफल हो गई।

15.3.2 मक्का की फतह

तत्पश्चात् मुहम्मद अपने साथियों को लेकर तीर्थ यात्रा (हज) के लिए निहत्थे मक्का के लिए निकले, लेकिन उन्हें मक्का में प्रवेश से रोक दिया गया। लेकिन बाद में कुरैशों ने अपने एक दूत सुहैल को मुहम्मद से समझौता करने के लिए भेजा। दोनों के बीच एक शांति पत्र पर दस्तखत किए गए, जिसे हुदैबिया की संधि (628 सी ई) के नाम से जाना जाता है। इस संधि के अनुसार दोनों पक्षों में निम्नलिखित मुद्दों पर सहमति हुईः

- कुरैश और मुसलमानों के बीच दस वर्षों के लिए युद्ध विराम रहेगा।
- अपने कुनबे के प्रमुख की इजाजत के बिना यदि कोई भी कुरैश इस्लाम स्वीकार करता है, तो उसे मक्का वापस कर दिया जाएगा। यदि कोई मुसलमान अपने कुरैश धर्म में वापस लौटना चाहता है, तो उसे ऐसा करने की इजाजत होगी और उसे वापस मुसलमानों को नहीं सौंपा जाएगा।
- मुसलमानों को अगले साल (अर्थात् 629 तक) तक तीर्थाटन (हज) के लिए मक्का में प्रवेश की इजाजत नहीं होगी। मुसलमान यहां अपने साथ सिर्फ अपनी तलवार ला सकते हैं।

इस समझौते से मक्कावासी कुरैशों ने मदीना के इस्लामिक राज्य की वैधता को स्वीकार कर लिया, मुसलमानों को सार्वजनिक रूप से अपनी आस्था का पालन करने की इजाजत दे दी और यह संभव बना दिया कि दूसरे कबीले भी मुसलमानों के साथ ऐसे समझौते कर सकें।

महज दो वर्षों के भीतर ही कुरैशों ने हुदैबिया की संधि की शर्तों का उल्लंघन कर दिया। इससे मुसलमान बेहद नाराज हुए और 630 सी ई में उन्होंने एक बड़ी सेना लेकर मक्का पर चढ़ाई कर दी और उसे जीत लिया। मुहम्मद का जीवन अपने चरम उत्कर्ष पर था और मक्का की फतह से उसका चक्र पूरा हो गया। उन्होंने मक्का में काबा के परिसर से सारी मूर्तियां हटा दीं। अरब के सभी कबीलों ने उनका नेतृत्व स्वीकार कर लिया, उन्होंने मक्का वासियों को आम माफी दे दी और वे तुरंत मदीना लौट गए, जहां 632 सी ई में उनका निधन हो गया। इस तरह 622 सी ई में हिजरत के बाद के दस वर्षों का मुहम्मद का जीवन घटनाओं से भरा हुआ रहा। इस अवधि में उन्होंने 'मदीना का नगर राज्य स्थापित किया तथा एक नए समुदाय (*उम्मा*) का संघठन किया, जिसमें वे सभी शामिल थे, जिनकी आस्था एक समान थी और जिसका आधार परंपरा से चला आ रहा रक्त और वंश आधारित कबीलाई संबंध नहीं था'।

यह सही है कि अरब क्षेत्र में एक नए राज्य समाज मदीना का उदय हो चुका था, जो मुख्य रूप से इस्लामिक था, लेकिन वाचिक (oral) काव्य परंपराएं जारी रहीं। *कसीदे* ज़ैसी स्तुति गाथाएं रची जाती रहीं और फलती-फूलती रहीं। अब्दुल्ला इब्न रवाह, काब इब्न मलिक और

हसन बिन साबित (मदीना के निवासी) ज़ैसे अरब रचनाकारों ने मुहम्मद की आस्था और अभियान के पक्ष में बड़े-बड़े कसीदों (प्रशस्ति गाथाओं) की रचना की। जब बनू तमीम के लोगों की मुहम्मद के साथ बहस हुई थी, तो उन्होंने अपने महान् कवि अज ज़ब्रकान बिन बद्र के माध्यम से ही उन्हें चुनौती दी थी। हसन बिन साबित ने तुरंत अपनी रचना के माध्यम से उनका जवाब दिया और बनू तमीम ने अपनी पराजय स्वीकार की।

इस्लाम के उदय संबंधी व्याख्याएं

इस्लाम के उदय और अरब इस्लामिक साम्राज्य के तीव्र फैलाव की व्याख्या को लेकर विद्वानों के बीच घमासान विवाद होता रहा है। इस विवाद की शुरुआत मोंटगोमरी वाट (1909-2006) की किताब *मुहम्मद इन मक्का* (1953) से होती है, जिसमें वे तर्क देते हैं कि छठी शताब्दी सी ई में अरब समाज में बहुत तेजी से बदलाव हुए। कुरैशों के व्यापार और वाणिज्यिक गतिविधियों की ओर बढ़ने तथा स्थिर जीवन शैली अपनाने के कारण, विशेष रूप से मक्का में, धन की जो बाढ़ आई उससे कबीलाई व्यवस्था वाली सामाजिक प्रणाली छिन्न-भिन्न होने लगी। व्यापार के विस्तार, कृषि और नवीन एकत्रित धन ने वास्तव में एक श्रेणीबद्ध और स्तरित समाज का निर्माण शुरू किया, जो गहरे आध्यात्मिक संकट से जूझ रहा था। इसने अरबी समाज में *धन और शक्ति के असमान वितरण*, भारी सामाजिक असमानताओं और सामाजिक विद्वेष को जन्म दिया। इसीलिए मुहम्मद के उपदेशों के केंद्रीय मूल्य सामाजिक समानता, उदारता और भाईचारा थे, क्योंकि अमीरों और गरीबों के बीच की खाई अनवरत बढ़ती जा रही थी।

वाट ने अपने इन निष्कर्षों के लिए *कुरान, हदीस* और मुहम्मद की जीवनियां ज़ैसे अरबी इस्लामी स्रोतों को प्रमाणिक माना। वाट का मानना था कि इस्लाम छठी और आरंभिक सातवीं सदी के घुमंतू खानाबदोश समाज के एक स्थिर जीवन शैली में बदलने की प्रक्रिया को, खासकर हिजाज़ प्रदेश में, सर्वश्रेष्ठ सामाजिक औचित्य प्रदान करता है। सामान्य अर्थ में, बाइज़ेंटाइनों और सासानिदों के बीच चल रहा अनवरत युद्ध फारस की खाड़ी को व्यापारिक गतिविधियों के लिए खतरनाक बनाता जा रहा था। असद के शासन काल में आंतरिक धार्मिक झगड़ों के कारण यमन राज्य का पतन हो गया। इसका स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि मक्का के कुरैशों ने इस पूरे व्यापार पर कब्जा कर लिया। इसने मक्का को एक वित्तीय और फलते-फूलते व्यापार का केंद्र बना दिया। सातवी सदी के आरंभ में, जब कुरैशों का पूरे व्यापार पर लगभग एकाधिकार हो गया था, मक्का की बद्दू जनजातियों के साथ उनका संबंध तनावपूर्ण हो गया, क्योंकि स्थायी जिंदगी बसर करने वालों और घुमंतू बद्दुओं के बीच की असमानता बढ़ती जा रही थी।

1987 में पैट्रिशिया क्रोन (1945-2015) और माइकेल कुक ने अपने अध्ययन का आधार ग्रीको-रोमन तथा इस्लाम के उदय से संबंधित अन्य स्रोतों को बनाया। क्रोन ने कहा कि वाट का यह निष्कर्ष कि वाणिज्यिक और व्यापारिक गतिविधियों से आया धन अरबों की कबीलाई व्यवस्था को कमजोर कर रहा था, अनुचित और अविश्वसनीय लगता है, क्योंकि 'मक्कावासी विलासिता की वस्तुओं की तुलना में आम उपयोग की वस्तुओं की तिजारत करते थे' जो कबीलाई भाईचारे को बेदखल नहीं करता था। क्रोन कहती हैं कि इस्लाम उसी समाज में पैदा हुआ, जिसमें कबीलाई मूल्यों की जड़ें गहरी थीं और वह मक्का में सफल नहीं हुआ, बल्कि मदीना में जाकर हुआ, जहां के लोगों ने उनके उपदेशों को स्वीकार किया। क्रोन इस निष्कर्ष पर भी संदेह करती हैं कि व्यापार से आए भारी धन ने कबीलाई समाज में किसी प्रकार की अव्यवस्था पैदा की और आध्यात्मिक संकट को जन्म दिया।

बोध प्रश्न-2

1) 'मदीना के संविधान' के बारे में आप क्या जानते हैं? मदीना के जीवन पर इसका क्या खास असर पड़ा?

....

....

....

....

....

2) मदीना के मुसलमानों के लिए हुदैबिया की संधि क्यों महत्वपूर्ण थी? मदीना का इस्लामिक राज्य अरब के दूसरे नगर-राज्यों से अलग कैसे था?

....

....

....

....

....

15.4 इस्लामी खिलाफत और इस्लामी जगत में फूट

632 सी ई में मुहम्मद के निधन के बाद मुसलमानों के बीच जो अभूतपूर्व खालीपन पैदा हुआ और उससे विरासत की जो समस्या खड़ी हुई, उसके कारण मुस्लिम समाज गहरे अवसाद में चला गया। मुहम्मद ने अपना वारिस तय नहीं किया था। कबीलाई पूर्वाग्रह फिर से उभरने लगेः बनू हाशिम कुल ने अली को उत्तराधिकारी माना, कुरैश प्रवासियों ने अबू बकर का समर्थन किया और *अन्सारों* की पसंद साद बिन अबादा थे। आखिरकार उसी वर्ष गतिरोध तब टूटा, जब अबू बकर (632-634 सी ई) को इस्लामी राज्य का प्रथम खलीफा चुन लिया गया और उन्होंने *खिलाफत-उल रसूल* की उपाधि ग्रहण की। मुहम्मद की मृत्यु के बाद अनेक अरब कबीलों ने मदीनी राज्य की सर्वोच्चता को चुनौती दी। उन्होंने राजनैतिक स्वतंत्रता पाने की कोशिश की और कर देना भी बंद कर दिया। अबू बकर ने उन तमाम बगावती कबीलों को जल्दी ही शांत कर दिया। इसके लिए उन्हें कई लड़ाइयां लड़नी पड़ीं, जिन्हें इतिहास में *रिद्दा* युद्धों के नाम से जाना जाता है। समय के साथ इस्लामी खिलाफत के नाम से जिस राजनीतिक ढांचे का विकास हो रहा था, वह धर्म और राज्य के मज़बूत गठजोड़ का प्रतिनिधित्व करता था।

अबू बकर के बाद उमर (634-644 सी ई) आये, जिन्होंने खिलाफत की संरचना में आमूल परिवर्तन किए। मध्य काल के मुस्लिम इतिहासकार उन्हें बहुत सारे ढांचागत नए बदलावों का श्रेय देते हैं, मसलन कर वसूली के लिए *दीवान* की नियुक्ति, अधिकारियों के भत्ते का निर्धारण, *काजी* के पद की स्थापना, *बैत-उल माल* (वित्त विभाग) ज़ैसी संस्था का निर्माण, *हिजरी* कैलेंडर की शुरुआत और सैन्य विभाग की स्थापना। उमर ने खिलाफत की अपनी पूरी अवधि में खालिद, अबू उबैदुल्ला और अमर इब्न अल आस सरीखे अपने अनुभवी सेनापतियों की अद्वितीय सैन्य शक्ति की सहायता से सीरिया तथा मिस्र की सीमाओं पर युद्ध लड़े और उन्होंने इराक, लेवांत, फिलिस्तीन और बाइज़ेंटाइनों तथा सासानिदों के साम्राज्य के सभी बड़े मोर्चों पर विजय प्राप्त की। इन प्रथम दो खलीफाओं, अबू बकर और उमर को आरंभिक दस्तावेजों में केंद्रीय किरदारों की तरह चित्रित किया गया है, क्योंकि इन दोनों ने पूरी इस्लामी बिरादारी (*उम्माओं*) को न सिर्फ राजनैतिक रूप से, बल्कि धार्मिक रूप से एकजुट बनाए रखा। यही कारण है कि उमर का नाम बाद में 'हर कल्पित आदर्श कार्य के लिए एक कसौटी बन गया'।

सन् 636 सी ई में उमर के शासन काल में ही यारमुक के युद्ध में बाइज़ेंटाइनी सेना को निर्णायक रूप से परास्त किया गया और उसी साल कदीसिया की एक घमासान लड़ाई में मुस्लिम अरबों ने ईरान की सासानी सेना को रौंद डाला और उनका भाग्य हमेशा के लिए अस्त हो गया। अगले साल अनातोलिया और येरुशलम मुसलमानों के हाथ आ गए और किसी राजनैतिक मुक्तिदाता की तरह उमर ने येरुशलम की चाबियां खुद ग्रहण कीं। इसके बावजूद यहूदियों समेत सभी मतावलंबियों की धार्मिक आजादी बहाल रखी गई। खलीफा

उमर ने कूफा, बसरा और फुस्तात ज़ैसी जगहों पर अनेक सैन्य शहर भी स्थापित किए। अपने नव विजित क्षेत्रों में उमर ने प्रादेशिक गवर्नरों की नियुक्ति की, जिनका काम अपने-अपने प्रदेशों का प्रशासन चलाना था। इन प्रादेशिक गवर्नरों को अमीर कहा जाता था। उदाहरण के लिए, याज़िद इब्न सूफयान को उमर ने सीरिया का गवर्नर नियुक्त किया था। जब याज़िद की मृत्यु हुई, तो उमर ने यह कार्यभार उसके भाई मुआविया प्रथम को सौंपा, जिसने बाद में उमय्यद खिलाफत की नींव रखी।

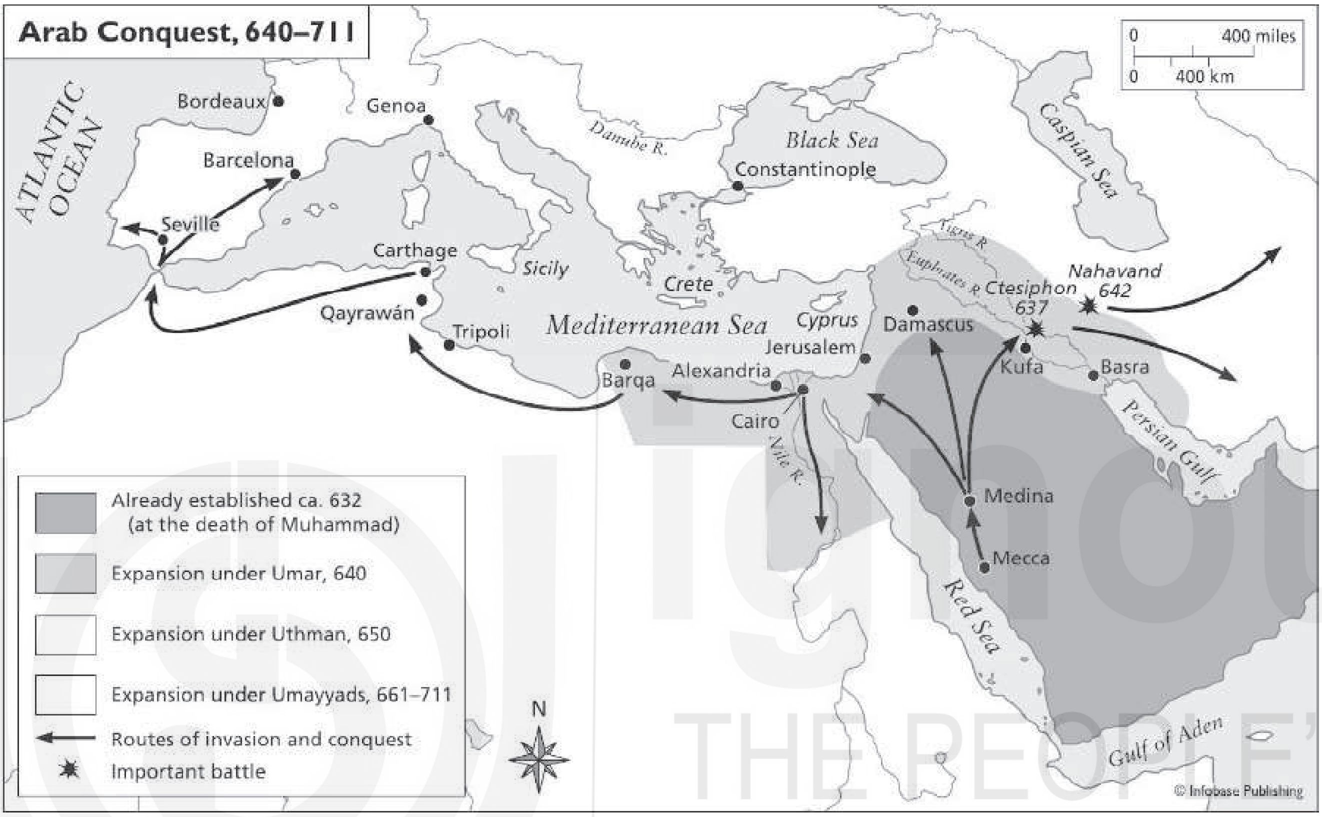

मानचित्र 15.2: 640-711 सी ई के मध्य अरब विजयें

साभारः www.WorldHistory.Biz

स्रोतः https://www.worldhistory.biz/sundries/49416-the-apostasy-wars-632-634.html

644 सी ई से, उमर के पश्चात् छह सदस्यीय परिषद *शूरा* द्वारा उस्मान (644-656 सी ई) के खलीफा (उत्तराधिकारी) चुने जाने के बाद से, इस्लामी सैन्य विजय का दायरा अपने उच्चतम मुकाम (मग़रिब से सिंध तक) पर जा पहुंचा। इसी के साथ व्यापार भी फलने-फूलने लगा, नए सिक्के चलाए गए और इस्लामी धर्मग्रंथों का संहिताकरण संपन्न हुआ। जहां उमर द्वारा अपने साम्राज्य का प्रशासन सख्ती से और अत्यंत केंद्रीकृत ढंग से चलाया गया था। इससे अलग, उस्मान के काल में इस्लामी खिलाफत के अधीन अनेक विशाल क्षेत्रों का विलय होने से, उसके लिए सभी प्रदेशों पर एकीकृत नियंत्रण रख पाना दूर का सपना बन गया। इसलिए प्रादेशिक गवर्नर अपनी-अपनी ताकत बढ़ाने लगे।

संपन्नता और सैन्य शक्ति की प्रगति के बावजूद उस्मान के शासन काल में मिस्र, कूफा और बसरा के सैन्य शहरों में बगावतें हुईं। उन्होंने उस्मान पर कुनबापरस्ती और गबन का आरोप लगाया और कहा कि वह उच्च पदों पर अपने रिश्तेदारों की नियुक्तियों का अनुमोदन कर रहे हैं, और उच्च पदों पर उनका एकाधिकार हो गया है। मिस्र के ये बागी मदीना तक आ पहुंचे, जो इस्लामी खलीफा की राजधानी थी। उनके साथ कूफा और बसरा के वे लोग भी शामिल हो गए, जो उस्मान की कार्य शैली के बारे में समान राय रखते थे। इन्होंने उस्मान का निवास घेर लिया और अंततः उनका कत्ल कर दिया।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

खलीफा अली और प्रथम गृह युद्ध (*फितना*)

मिस्र, कूफ़ा और बसरा के ये विद्रोही आगे खिलाफत के लिए क्रमशः अली, जुबैर और तलहा के इर्द-गिर्द एकत्र हुए। अली (656-661 सी ई) शुरू में खलीफा पद के इच्छुक नहीं थे, लेकिन बाद में उस्मान के उत्तराधिकारी के रूप में चौथे खलीफा बनने को तैयार हो गए। वे मदीना के मुसलमानों के बीच भारी बहुमत से चुने गए, बागी गुटों ने भी उन्हें पूरा समर्थन दिया, अनेक महत्वपूर्ण साथियों और गवर्नरों ने भी ना-नुकुर करने के बाद उनके नेतृत्व में अपनी निष्ठा व्यक्त की, सिवाय सीरिया के गवर्नर मुआविया प्रथम के, जो किसी भी तरह की भेंट देने में आना-कानी करता रहा। सातवीं सदी के उत्तरार्ध में जब अली ने बागडोर संभाली, मुस्लिम जगत आंतरिक राजनीतिक झगड़ों और मतभेदों के कारण टुकड़ों में बंटा हुआ था। कोई किसी की सुनने या मानने को तैयार नहीं था। मुसलमानों के बीच बढ़ रहे वैमनस्य पर सख्ती से रोक लगाने के लिए अली ने न केवल उस्मान द्वारा नियुक्त किए गए सभी गवर्नरों को बर्खास्त कर दिया, बल्कि जमाल की लड़ाई (656 सी ई) के बाद उन्होंने अपनी खिलाफत की राजधानी भी मदीना से कूफा स्थानांतरित कर दी, ताकि सैन्य छावनियों और सीमाओं पर प्रभावी ढंग से नियंत्रण रखा जा सके।

जमाल की लड़ाई का एक परिणाम यह हुआ कि तलहा, जुबैर, आयशा और मुआविया प्रथम के नेतृत्व में एक गुट उन लोगों को सजा और प्राणदंड देने की मांग करने लगा, जिन्होंने उस्मान की हत्या की थी। मुआविया प्रथम ने खलीफा के तौर पर अली की सत्ता के प्रति तब तक निष्ठा व्यक्त करने से इनकार कर दिया, जब तक उस्मान के खून का बदला नहीं लिया जाता। इसकी वजह से फिर एक युद्ध हुआ, जिसमें एक तरफ अली (*शिया अली*) के पक्षधर थे और दूसरी तरफ मुआविया प्रथम (*शिया मुआविया*) के समर्थक। इस राजनीतिक उथल-पुथल की परिणति सिफिन की लड़ाई (657 सी ई) में हुई, जिसे इस्लाम के इतिहास में विशेष रूप से प्रथम *फितना* के रूप में याद किया जाता है। जब झड़पें बढ़ती गईं और मुआविया की सेना पराजित होने ही वाली थी कि अचानक दोनों पक्ष मध्यस्थता द्वारा यह मुद्दा सुलझाने को सहमत हो गए कि अगला खलीफा किसे बनना चाहिए।

अली के मुआविया प्रथम के साथ समझौते के लिए राजी होते ही सिफिन की लड़ाई के बाद बद्दुओं का एक गुट बगावत कर बैठा। उन्हें खारिजी (अलग होने वाला) कहा गया, क्योंकि वे अली की सेना से टूट कर अलग हुए थे। उनका नारा था '*ला इमारा*' – कोई सरकार नहीं। अल-शहरेस्तानी (1086-1153 सी ई) के अनुसार अली ने इन अराजक समानतावादियों से कहा, 'सरकार तो होनी चाहिए, अच्छी हो या बुरी।' इस तरह मुसलमानों के बीच मतभेद बढ़ता गया। खारिजियों का उदय राज्य व्यवस्था को लेकर नगरवासियों और रेगिस्तानी अरब बद्दुओं (अराजक समानतावादी) के दृष्टिकोण के फर्क को स्पष्ट करता है। बाद में जनवरी 661 सी ई में अली जब कूफा की मस्जिद में नमाज पढ़ रहे थे, तब खारिजी खेमे के एक शख्स इब्न मुलजम ने उनकी हत्या कर दी। इसके बाद सीरिया के अरब गवर्नर मुआविया प्रथम (661-680 सी ई) ने सत्ता पर दावा किया, जिन्होंने अली के बड़े बेटे हसन से सुलह के बाद उस लंबे गृह युद्ध को समाप्त किया और उन्होंने अपनी राजधानी दमिश्क से बीस वर्षों तक इस्लामी खिलाफत पर शासन किया।

सुन्नी मुसलमान कौन हैं?

सुन्नी मुसलमान या *अहल अल-सुन्ना* इस्लाम का सबसे बड़ा संप्रदाय है। सुन्नी मुसलमान पहले चार खलीफाओं अबू बकर, उमर, उस्मान और अली की खिलाफत को स्वीकार करते हैं, और उन्हें *रशीदुन* (सही मार्ग दर्शन करने वाले कहते हैं। लेकिन शिया मुसलमान सिर्फ अली की खिलाफत को वैध मानते हैं। सुन्नी इस्लामी न्याय शास्त्र के चार स्कूल हैं: हनफी, मालिकी, शफी और हंबली।

सुन्नी इस्लाम में न्याय के लिए कानून का आधार इन चार को माना जाता है: *कुरान, सुन्ना, इज्मा*

और *कियास*। *कुरान* का आशय इस्लाम के पवित्र धर्मग्रंथ से है। पैगंबर मुहम्मद के जीवन के आदर्श उदाहरणों को *सुन्ना* कहते हैं। *इज्मा* का अर्थ है कानूनी विद्वानों की सहमति। *कियास* का मतलब है सादृश्य के माध्यम से परिणाम निकालना। *कियास* एक तरीका है, जिसमें किसी 'नए मुद्दे पर किसी पुराने मुद्दे (यदि वह समान हो तो) की नजीर से नतीजा निकालते हैं।

बोध प्रश्न-3

1) 632 सी ई में मुहम्मद के निधन के बाद उत्तराधिकार को लेकर मतभेद क्यों शुरू हुए?

....

....

....

....

....

2) अली ने अपने खिलाफत की राजधानी मदीना से कूफा क्यों स्थानांतरित की?

....

....

....

....

....

15.5 उमय्यद : खारिजी और शिया

कुरैश कबीले के उमय्यद कुल के वंशज मुआविया प्रथम ने अपनी राजधानी दमिश्क (सीरिया) में उमय्यद वंश (661-750 सी ई) की नींव रखी। अपनी मृत्यु के पहले अतीत में उन्होंने उत्तराधिकार के लिए होने वाली लड़ाइयां देखी थीं, इसलिए उन्होंने पहले ही अपना उत्तराधिकारी अपने बेटे यजीद को घोषित कर दिया था। और इस तरह उन्होंने इस्लामिक राज्य को खिलाफत से वंशानुगत उत्तराधिकार वाला राज्य (*मुल्क*) बना दिया। यजीद के खिलाफ शियाओं और खारिजियों में कड़ी प्रतिक्रियायें हुईं। उमय्यद की सीमाओं के भीतर मेदिया, कूफा और उत्तरी अफ्रीका को जिन विद्रोहों ने ग्रस रखा था, उन्हें सातवीं सदी के आखिरी वर्षों में अब्द-अल मलिक (685-705 सी ई) ने दबाया। मलिक एक मशहूर उमय्यद खलीफा था, जिसने खिलाफत को एकीकृत करने वाले अनेक सुधार किए :

अ) उसने पुरानी मुद्रा व्यवस्था को खत्म कर सासानिदों और बाइज़ेंटाइनों के सोने के सिक्कों की जगह अपने मुस्लिम सिक्के चलाए। उमय्यदों ने अपनी टकसालों की स्थापना की। उन्होंने *दीनार, दिरहम* और *फिल्स* नामक नए सिक्के चलाए, जिन पर पुरालेख तो होते थे, लेकिन कोई चित्र नहीं होता था।

ब) उसने अपनी खिलाफत के अधीन सरकार और प्रशासन के लिए सिर्फ अरबी भाषा को मान्यता दी। अरबी भाषा सीमांत क्षेत्रों ज़ैसे खुरासान आदि में भी अभिजात्य लोगों की भाषा बन गई। इस प्रकार प्रशासन में नौकरी पाने के लिए अरबी का अच्छा ज्ञान एक अनिवार्य शर्त बन गई।

अनेक इतिहासकारों ने उमय्यद राजनीति की इन धर्मनिरपेक्ष नीतियों (अरबों को विशेषाधिकार देने की) को रेखांकित किया है, जो गैर-अरब नव दीक्षितों और *मावलियों* (ईरानी धर्मांतरित) के साथ सामाजिक भेदभाव को बढ़ाता था। हालांकि *मावलियों* ने काफी जल्दी उमय्यद

सरकार, सेना, राजस्व प्रशासन और धार्मिक कार्यों में अपनी निर्णायक जगह बना ली। शिया इस्लामिक परंपरा के अनुसार उमय्यदों ने पैगंबर मुहम्मद के धर्म और राजनीतिक तंत्र को त्याग दिया और उसे दूषित किया, क्योंकि मुआविया प्रथम ने इस्लामी खिलाफत को *मुल्क* – वंशवादी राजतंत्र – में तब्दील कर दिया।

ज़ैसा कि हम पहले पढ़ चुके हैं, खारिजियों ने अब्दुल्ला इब्न वहाब की अगुवाई में अली की खिलाफत के विरूद्ध बगावत शुरू की थी। अली ने उन पर भारी हमला किया और 659 सी ई में नहरवान के युद्ध में उन्हें बुरी तरह शिकस्त दी। उमय्यदों के समय खारिजियों का प्रतिरोध और विद्रोह चारों तरफ फैलने लगा। वास्तव में वे शियाओं से कहीं ज्यादा उग्र थे और उनकी तरफ दूसरे कई दूसरे वर्ग जैसे असंतुष्ट *मावली*, बद्दू, गरीब किसान, भूमिपति और व्यापारी आकर्षित होने लगे। कुछ इतिहासकारों का मत है कि खारिजियों के उदय का बड़ा कारण खलीफा उस्मान की अनुचित नीतियां थीं, जिस पर वे भाई-भतीजावाद करने, राजकीय कोष और पदों को अपने ही कुनबे में बांटने का आरोप लगाते हैं। इन समानतावादी क्रांतिकारी अरब कबीलों ने पैगंबर मुहम्मद के समर्थन में लड़ाइयां लड़ी थीं। और अब वे अपने आप को नई खिलाफत में उचित हिस्सेदारी से वंचित महसूस कर रहे थे। इसीलिए उन्होंने उस्मान की नीतियों को नापसंद किया और अली के भी खिलाफ एकजुट हो गए।

15.5.1 खारिजी कौन थे?

अरबी में *खवारज* का मतलब होता है 'अलग हो जाना' या 'बाहर निकल जाना'। खारिजी उस पहले ज्ञात संप्रदाय का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो मुस्लिम समुदाय में तीसरे खलीफा उस्मान के वर्चस्व से बाहर छिटक गए और जिन्होंने खलीफा अली के काल में सर्वप्रथम अपनी प्रत्यक्ष मौजूदगी का एहसास कराया। आधुनिक विद्वान इस बात पर एकमत हैं कि खारिजियों के उदय का तात्कालिक मुख्य कारण सिफिन (656-57 सी ई) के युद्ध में मुआविया प्रथम से झगड़े खत्म करने का राजनीतिक हित साधने के लिए किया गया अली का समझौता ही था। *मुहक्किम* खारिजी यह मानते थे कि अली *कुरान* के ईश्वरीय मार्ग से भटक गए हैं, इसलिए इस्लाम के नेता (*इमाम*) के रूप में उनकी सत्ता सवालों के घेरे में है। इसलिए उन्होंने नारा दिया, 'फैसला सिर्फ ईश्वर ही कर सकता है'। अरबों और गैर-अरबों के बीच समानता और नेता (*इमाम*) के प्रति निष्ठा के मुद्दे को लेकर वे बाकी मुसलमानों से अलग हो गए।

खारिजी उमय्यद खलीफाओं को अनधिकार ग्राही (usurpers) मानते थे, इसलिए उन्होंने 660 सी ई से उनके खिलाफ विद्रोह का बिगुल बजा दिया, खासकर इराक क्षेत्र में। खारिजियों को गैर-अरब मुसलमानों से ताकत मिल रही थी, खासकर ईरानी *मावलियों* से। मार्टिन हाइंड के अनुसार खारिजी कट्टरपंथी या धर्मांध नहीं थे, लेकिन वे समझ रहे थे कि उस्मान और अली उनके सामाजिक-आर्थिक हितों को नुकसान पहुंचा रहे हैं। उनका विचार था कि इस्लाम समाज में मौजूद असमानता को संतुलित करने और अंततः पूरी समानता स्थापित करने का माध्यम है। खारिजियों की कुछ कविताओं में ऐसे विचार मिलते हैं कि लोग रुतबे की वजह से नहीं, बल्कि अपनी निजी सोच के कारण भेदभाव करते हैं।

शिया मुसलमानों से बिल्कुल अलग खारिजी यह मानते थे कि सिर्फ कुरैश कबीले या अरब लोग ही नहीं, बल्कि कोई भी *इमाम* बन सकता है, बशर्ते वह न्यायोचित तरीके से शासन चलाए और ईश्वर के प्रतिनिधि के रूप में समाज को दमन से मुक्ति दिलाए। खारिजी यह विश्वास करते थे कि अबू बकर और उमर ने *कुरान* के निर्देशों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता के अनुसार लोगों पर शासन कार्य किया। खारिजियों के अनुसार *इमामत* और *इमाम* तभी तक वैध हैं, जब तक उनका कार्य' 'ईश्वर की इच्छा' की अभिव्यक्ति को क्रियान्वित करता है; यदि *इमाम* अत्याचारी साबित होता है और इस्लाम के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है, तो उसे

हटा दिया जाएगा। उसकी जगह कोई नया हुक्मबरदार बंदा आएगा, जो सच्चा मुस्लिम समाज फिर से स्थापित करेगा। वेलहाउज़ेन टिप्पणी करते हैं कि खारिजियों के विश्वास का मूल सूत्र यह था कि 'सिर्फ सच्चा निष्ठावान मुसलमान ही इस सच्चे संप्रदाय का अंग हो सकता है'।

तबरी (839-923 सी ई) के अनुसार खारिजियों में उमय्यदों के आधिपत्य के दौरान कट्टर सत्ता विरोधी भावना पैदा हो गई थी। *अजराक़ी* खारिजी इराक के अतिवादी थे और नफी बिन अल-अज़राक़ युसुफ के अनुयायी थे। उन्होंने 699 सी ई में इराक में उमय्यदों के खिलाफ बगावत की थी। इराक के तत्कालीन गवर्नर अल-हज्जाज बिन युसुफ (695-714 सी ई) ने 699 सी ई में उन्हें परास्त कर दिया। *अज़राक़ियों* की पराजय के बाद अन्य नरमपंथी खारिजी गुट ज़ैसे *इबादी,* जो अब्द अल्लाह बिन इबाद के अनुयायी थे, एक संगठित समुदाय के रूप में अस्तित्व में बने रहे। *इबादी* परंपरा के मशहूर नेता जाबिर बिन ज़ायद बाद में *इबादी* खारिजियों को लेकर ओमान चले गए। उत्तरी अफ्रीका में खारिजियों ने अपना विरोध जारी रखा।

खारिजियों की शेष मुस्लिम संप्रदाय से तीन बुनियादी मुद्दों पर असहमति थीः

1. **भारी गुनाहः** क्या किसी गुनहगार मुसलमान को आस्थावान माना जा सकता है? खारिजी उमय्यदों की इस धारणा को खारिज करते थे कि गुनाह किसी मुसलमान के भीतर से उसकी आस्था नहीं खत्म करता। लेकिन खारिजी मानते थे कि कोई मुसलमान यदि कोई महापाप करता है, तो उसे धर्मच्युत (*मुर्तद*) समझा जाना चाहिए।

2. ***मुलूक* या वंशानुगत विरासत की अस्वीकृतीः** वे वंशगत आधार पर खिलाफत को नामंजूर करते थे और चुनाव के आधार पर *इमामत* को मान्यता देते थे।

3. **वैधानिकताः** किसकी सत्ता वैध है? खारिजियों ने उस राजनैतिक सत्ता को वैध माना, जो इस्लाम के धार्मिक उसूलों पर आधारित हो। इसके अलावा, उन्होंने मुसलमानों के इस अधिकार पर बल दिया कि वे धार्मिक सिद्धांतों का उल्लंघन करने वाले अपने नेता (*इमाम*) को *इमामत* से हटा सकते हैं।

नयीफ मारुफ ने *अल-ख्वारिज* में 97 खारिजी कवियों की रचनाएं संकलित कीं, जिनमें दस महिलाएं भी हैं। यह दो तथ्यों को रेखांकित करता हैः (अ) खारिजियों ने महिलाओं को उचित दर्जा दिया, (ब) आरंभिक इस्लाम के बौद्धिक तथा सांस्कृतिक इतिहास में खारिजी महिलाओं ने भी योगदान किया था।

15.5.2 शिया इस्लामी संप्रदायों का उदय

अरबी में *तायफा* या *फिरका* का मतलब होता है 'पंथ या संप्रदाय' जिसका आशय है 'मुख्य धारा के किसी बड़े समुदाय से निकला कोई छोटा समूह' या संक्षेप में 'संपूर्ण में से टूटकर निकला एक अंश'। फरहाद दफ्तरी कहते हैं कि 'सभी शिया मुसलमानों को शेष मुस्लिम समाज से अलग करने वाला मुख्य तत्व शियाओं का यह बुनियादी विश्वास है कि पैगंबर ने खुद अली को अपना वारिस मनोनीत किया था। यह मनोनयन (*नास*) ईश्वरीय निर्णय था, जो पैगंबर के माध्यम से अपनी मृत्यु के कुछ ही समय पहले ग़दीर खम्म में पैगंबर द्वारा प्रकट किया गया था'।

अरबी में शिया का अर्थ होता है 'पक्षधर' या 'समर्थक'। अपनी किताब *अल-मिलाल* में अल-शहरेस्तानी (1086-1153 सी ई) ने शिया संप्रदाय को इस तरह स्पष्ट किया है, 'शिया वे लोग हैं, जो विशेष रूप से अली के अनुयायी हैं और उनकी *इमामत* और खिलाफत को पूरी तरह से पैगंबर मुहम्मद की शिक्षाओं और विधान के अनुरूप मानते हैं'। इसलिए शिया और सुन्नी मुसलमानों को अलग करने वाला मुख्य मुद्दा मुहम्मद के उत्तराधिकार का है। शिया मानते

हैं कि अली, मुहम्मद के एकमात्र वैध वारिस थे। वे आरंभ के तीन खलीफाओं – अबू बकर, उमर और उस्मान – को अवैध उत्तराधिकारी समझते हैं। शिया और सुन्नियों के बीच दूसरे मतभेदों में प्रार्थना के तरीके, अस्थायी विवाह (*मुता*) और धार्मिक कर्मकांड (*तक़िया*) आदि शामिल हैं।

शिया इस्लाम की मुख्य रूप से तीन शाखाएं हैं: इस्माइली, *इमामी* ट्वेल्वर्स (Twelvers) और ज़ैदी।

इस्माइली या सेवनर्स (Seveners)

छठे शिया इमाम जाफर अल सादिक (700-765 सी ई) के दो बेटे थे – इस्माइल और मूसा। जिन शियाओं ने इमाम इस्माइल इब्न जाफर को अपना सातवां इमाम और इमाम जाफर अल-सादिक का सही आध्यात्मिक वारिस कबूल किया, वे इस्माइली शिया कहलाए। लेकिन *इसाना अशारा* शियाओं (ट्वेल्वर्स) ने इमाम मूसा अल-काज़िम (745-799 सी ई) को असली और न्यायोचित सातवां *इमाम* माना। क्रांतिकारी इस्माइली शिया, मुहम्मद इस्माइल इब्न की *मेहदी* के रूप में वापसी की उम्मीद करते थे। वे उन्हें फैसले की घड़ी के अग्रदूत के रूप में पेश करते थे। उनके उत्तराधिकारियों ने दसवीं शताब्दी में मिस्र में फातिमी साम्राज्य की स्थापना की जिसके साथ इस्माइली संप्रदाय का धार्मिक दर्शन पूरी तरह से विकसित हुआ। फातिमी काल की शुरुआत के पहले इस्माइलियों का उत्पीड़न होता था, इसलिए जब जान का खतरा होता था, तो वे *तक़ीया* (अपने धर्म और अपनी आस्था को छिपाकर रखना) का सहारा लेते थे। मुहम्मद अल-बाक़िर ने *तक़ीया* का एक पृष्ठांकित सुनियोजित प्रारूप जारी किया था।

इस्माइली शिया मानते हैं कि सिर्फ *इमाम* ही *कुरान* के गुह्य अर्थों के सही व्याख्याकार (*बातिन*) हो सकते हैं, क्योंकि उन्होंने अली से उसका ज्ञान (*इल्म*) उत्तराधिकार में पाया है। इस्माइलियों ने *जिहाद* और *इमामों* के मकबरों के दर्शन पर ज्यादा जोर दिया। इस्माइलियों में निजारी और करमातियान दो पंथ हैं।

1 **बाह्याचारियों (exoteric) और अंतरज्ञानवादियों (esoteric) के बीच फर्क**: इस्माइली शियाओं के लिए इस्लामी धर्मग्रंथों और पवित्र निर्देशों को समझने के दो बुनियादी पहलू थे – बाह्याचार (*जाहिर*) और आंतरिक ज्ञान (*बातिन*)। उनका मानना था कि मुहम्मद द्वारा अभिव्यक्त धार्मिक कानूनों और क्रियाविधियों ज़ैसे बाह्याचारों में समय के साथ बदलाव आए। लेकिन आंतरिक ज्ञान (*बातिन*), जो पवित्र सत्य है (*हक़ायक़*) वह आंतरिक है और सभी शामी (सेमिटिक) धर्मों में समान है।

2 **चक्रीय इस्माइली रहस्य ज्ञान (gnosis; *इरफान*)**: इस्लाइली शियाओं की एक अलग विश्व दृष्टि थी। उनके अनुसार समय या काल, चक्रीय है। इस्माइली विश्वास प्रणाली का एक विशिष्ट अवयव यह था कि 'ईश्वरीय आकाशवाणी का चक्रीय इतिहास या पैगंबर का युग और ब्रह्मांडीय सिद्धांत, मिथकों की भाषा में व्यक्त होते हैं।' इस्माइलियों का विश्वास था कि मानव का धार्मिक इतिहास अलग-अलग अवधियों वाले सात पैगंबर कालों के माध्यम से विकसित हुआ है, जिन्हें *द्वार* कहा जाता है। प्रत्येक *द्वार* का उद्घाटन एक अलग वक्ता (*नातिक़*) द्वारा किया गया, जिसके पास ईश्वरीय आध्यात्मिक संदेश थे, जिसके बाहरी रूपों में धार्मिक आचार (***शरिया***) मौजूद थे। पूर्व के छह *द्वारों* (युगों) के *नातिक* आदम, नूह, अब्राहम, मोसेस, जीसस और मुहम्मद थे।

3 **दावा**: इस्माइलियों ने *दावा* पर जोर दिया और प्रमुख इस्माइली मिशनरियों (*दायी*) ने अनेक ईश्वरपरक और ब्रह्मज्ञान से संबंधित ग्रंथ प्रस्तुत किए। इनमें अल-सिजिस्तानी और इदरीस इमाद अल-दीन सबसे मशहूर ब्रह्मज्ञानी थे। इसके अलावा, इस्माइली मुसलमानों ने यूनानी दर्शन के आधार पर इस्लाम की व्याख्या का पहला व्यवस्थित प्रयास किया।

ट्वेलवर्स या *इथना अशारी*

ट्वेलवर्स शिया को जो बात दूसरे शियाओं से अलग करती है, वह है उनका यह विश्वास

कि बारह ईश्वरीय *इमाम* पूर्ण रूप से दोषरहित हैं। उनकी विचारधारा के अनुसार आखिरी *इमाम* मुहम्मद अल-महदी छुप गए हैं, क्योंकि उनके जीवन को खतरा है (विलोपन या *गायब*) और वे उम्मीद करते हैं कि *इमाम, महदी* के रूप में वापस आएंगे और मानव जाति को दज्जाल के शैतान (क्राइस्ट विरोधी) से मुक्ति दिलाएंगे। ट्वेलवर्स इमामी शियाओं के विचारों के केंद्र में उनका इमामत का सिद्धांत है। उनका मानना है कि पैगंबर मुहम्मद के बाद मुसलमानों को स्थायी रूप से *इमामों* (क्योंकि वे निष्कलंक और पूर्ण रूप से दोषरहित होते हैं) की जरूरत है। ये ईश्वर से निर्देश पाने वाले *इमाम* ही लोगों को उनके धार्मिक मामलों में सही दिशा दिखा सकते हैं और अधिकृत शिक्षक हो सकते हैं।

ईरान और ट्रांसऑक्सियाना के विभिन्न भागों में ट्वेलवर्स शियाओं के अनेक पंथ अस्तित्व में आए। दसवीं शताब्दी में बुयीद शासक (934-1062 सी ई) प्रभुत्वशाली हो गए और *इमामों* के उपदेश संग्रहित किए गए, *हदीस* का संकलन तैयार हुआ तथा इस्लामी न्यायशास्त्र के जाफरी स्कूल का निरूपण हुआ। बुयीद आरंभ में ज़ैदीवाद के समर्थक थे, लेकिन बाद में *इमामी* ट्वेलवर्स शिया मत तथा इस्लामी धर्मशास्त्र की *मुआतज़िला* शाखा की ओर झुक गए। ईरान में स्थित शहर क़ोम्म इमामी शिया शिक्षण के शुरुआती केंद्रों में से एक रहा है। क़ोम्म में शिया धर्मज्ञानी, *मुआतज़िला* इस्लामी धर्मज्ञान की जोरदार तरीके से भर्त्सना किया करते थे, जो 'स्वतंत्र विवेचन' के प्रयोग पर आधारित था। उन्हें *अखबारी* कहा जाता था। बल्कि उनके वरिष्ठ शिक्षक इब्न बाबावैह (923-991 सी ई) धर्मज्ञान और *फ़िक़्ह* (इस्लामी न्यायशास्त्र) में कम से कम तर्क (*अक्ल*) के साथ *हदीस* के प्रयोग की विशिष्ट वकालत करते थे। हालांकि जब बुयीदों के बाद सुन्नी सेलजुक तुर्क आए, तो *इमामी* शियावाद को काफी बड़ा धक्का लगा।

इमामी ट्वेलवर्स शिया न्यायशास्त्र में *हदीस* के चार प्रामाणिक ग्रंथ हैं। नीचे उन ग्रंथों और उनके संकलनकर्ताओं के नाम दिए गए हैं।

लेखक	***हदीस* की किताब**
इब्न बाबावैह	*मन ला यहदुरुहू अल-फकीह*
इब्न याकूब अल कुलयनी	*किताब अल-काफी*
मुहम्मद तूसी	*तहज़ीब अल-अहकाम*
मुहम्मद तूसी	*अल-इस्तिबसार*

सफावी एक सूफी संप्रदाय था, जिसका उदय 15वीं शताब्दी में अरदबील (अज़रबैजान) में हुआ था। शाह इस्माइल के नेतृत्व में सफावियों ने 1501 सी ई में ईरान में अपना साम्राज्य कायम किया। इस संप्रदाय ने जब्ल आमिल और सीरिया से शिया धर्माचार्यों को आमंत्रित कर ईरान को इमामी शियावाद में धर्मांतरित करना शुरू किया। शाह अब्बास (1571-1629 सी ई) के समय इमामी शिया विचारधारा अपने उत्कर्ष पर जा पहुंची, जिसके शासन काल के दौरान ईरान में नुक्तवी और हुरुफी सूफी पंथों पर प्रतिबंध लगा दिया गया और किज़िलबाश *गुलुव्व* की कीमत पर इमामी शियावाद का प्रभुत्व देखने को मिला। अपने पिता से अलग शाह तहमस्प *मसीहा* या अवतार की पदवी ग्रहण करने से बचता रहा। असल में वह अपने आप को '*ज़िल*' यानी 'ईश्वर की परछाईं' कहता था। तहमस्प के शासनकाल में शाह इस्माइल को मसीह के रूप में नहीं, बल्कि ''मसीहा के अग्रदूत के रूप में चित्रित किया जाता था, जिसने 'सही व्यवस्था', अर्थात शियावाद कायम कर, प्रच्छन्न *इमाम* के आगमन का मार्ग प्रशस्त किया''। अब्बास प्रथम ने सफावी साम्राज्य की राजधानी कज़्वीन से स्थानांतरित कर इस्फहान में स्थापित की, जो इमामी शियावाद का गढ़ था।

इमामी शिया के विधि सिद्धांतों में इस्लामी *फ़िक़्ह* (न्याय शास्त्र) की दो शाखाएं हैं : *उसूली*

और *अखबारी*। *अखबारी फ़िक़्ह* शाखा के मुख्य सिद्धांतकार अमीन अल-अस्तराबादी थे। जबकि *उसूली* शाखा वाले इस्लामी कानून के चार आधार *कुरान, हदीस, इज्मा* (जनमत) और *अक्ल* (निगम्य तर्क) को ही विधिसम्मत मानते थे।

इमाम कौन हैं?

इमाम का अर्थ है नेता या वह जो प्रार्थना सभा का नेतृत्व करता है। इस्लामी साहित्य में अक्सर *इमामत* और *खिलाफत* को एक दूसरे की जगह इस्तेमाल किया जाता रहा है। शिया मानते हैं कि *इमाम* पैगंबर मुहम्मद के वास्तविक आध्यात्मिक उत्तराधिकारी होते हैं। वे यह भी मानते हैं कि पूर्व के बारहों *इमाम मासूम* (दोषरहित) हैं। *इमाम* के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं:

1. *कुरान* के गूढ़ रहस्यों तथा पवित्र कानूनों की व्याख्या करना, और जुम्मे की नमाज में जमात का नेतृत्व करना।

2. कानूनी दंड (*अहकाम*) द्वारा न्याय लागू करना, और

3. *ज़कात* और *खुम्स* वसूल करना, *जिहाद* का नेतृत्व करना और युद्ध में प्राप्त लूट (*किस्मत-ए फे*) का बंटवारा करना।

इमाम जाफर (699-765 सी ई) ने *इमामत* के दो बुनियादी सिद्धांतों की व्याख्या की है: *नास* और *इल्म*। *नास* (मनोनयन) का मतलब है पैगंबर के परिवार के उस व्यक्ति को ईश्वर द्वारा सौंपी गई *इमामत* (आध्यात्मिक नेतृत्व) का दायित्व। *इमामत* का चुनाव और दूसरे को उसका स्थानांतरण सीधे मनोनयन (*नास*) द्वारा होता है। *इमाम* जाफर के मुताबिक यह अली और फातिमा के वंशजों के लिए आरक्षित है। *इल्म* (ईश्वरीय ज्ञान) *इमामत* की दूसरी महत्वपूर्ण विशिष्टता है।

ज़ैदी

ज़ैद इब्न अली (उनके पांचवें इमाम) के नाम पर बने ज़ैद संप्रदाय के बारे में यह समझा जाता है कि उन्होंने *इमामत* की संस्था का विकास *इमामी* शाखा से अलग बिल्कुल स्वतंत्र रूप में की। उन्होंने पैगंबर के सिर्फ पांच उत्तराधिकारियों को वैध *इमाम* स्वीकार किया। वर्तमान में ज्यादातर *ज़ैदी* शिया यमन में रहते हैं। बुयीदों (934-1062 सी ई) ने काफी समय तक ज़ैदी शिया इस्लाम का ही अनुसरण किया और *मुताज़िला* मत को प्रोत्साहित किया। ज़ैदियों के अनुसार अहल अल-बैत का कोई भी सदस्य *इमाम* हो सकता है, क्योंकि *नास* अब प्रासंगिक नहीं है। यानी *इमामत* वंशगत नहीं है। *इथाना अशारियों* से असहमत, ज़ैदी शिया यह नहीं स्वीकार करते कि *इमाम* सदा दोषरहित रहेंगे।

आरंभिक शिया सांप्रदायिक कैसे हुए?

1. इस्लाम के शुरुआती दौर में अनेक परस्पर विरोधी धाराएं नजर आती हैं। उनमें से ज्यादातर सुन्नी समायोजन में समाहित हो गईं। शियावाद इस नियति से किस तरह बचा रहा और कैसे उनके और अपने बीच के फर्क को और गहरा बना सका? इस प्रक्रिया के विभिन्न तत्वों में दो प्रमुख तत्व हैं, *गुलत* की आध्यात्मिक स्वतंत्रता और जाफर अल-सादिक की *इमामत* के समय सांप्रदायिक (कट्टर) प्रवृत्तियों की सामरिक रूप से बेहतर स्थिति। पारंपरिक सुन्नी दृष्टिकोण यह है कि अली आरंभ के चार महान् खलीफाओं में से एक थे और सारा समुदाय उन्हें वैध स्वीकार करता है। और उनके प्रति जो निष्ठा पूरे समुदाय में रही, उस निष्ठा को शियाओं ने अतिरेकपूर्ण बना दिया। इस मान्यता के आधार पर शियाओं की शेष इस्लाम के प्रति नाराजगी या मतभेद को समझ पाना मुश्किल है।

2. जैसा कि 'रूढ़िवादी ट्वेलवर्स' और सुन्नी भी मानते हैं, शिया एक के बाद एक हुए बारह *इमामों* वाला कोई एक समान संप्रदाय नहीं था, जिसमें से विभिन्न शिया समूह किसी न किसी की *इमामत* या उसके वैकल्पिक दावेदार के पक्ष में अलग होते गए। शुरुआती शियावाद को बाद की *इमामत* के नजरिए से नहीं देखा जा सकता।

मार्शल हॉगसन, 1955, 'हाउ डिड द शिया बिकम सेक्टेरियन?' *जर्नल ऑफ अमेरिकन ओरियन्टल सोसाइटी*, पृ. 1-13.

बोध प्रश्न-4

1) खारिजी कौन थे? वे खलीफा की सेना से अलग क्यों हुए?

....

....

....

....

....

....

2) दूसरे मुसलमानों से खारिजियों के बड़े मतभेद किन मुद्दों को लेकर थे?

....

....

....

....

....

....

3) 'शिया' शब्द का क्या अर्थ है? शिया इस्लाम की मुख्य शाखाएं कौन सी हैं?

....

....

....

....

....

15.6 अब्बासी खिलाफतः *मुआतज़िला* और *अशारी*

अब्बासी खिलाफत (750-1258 सी ई) की स्थापना अब्बास अस-सफ्फाह ने 750 सी ई में की थी। अब्बासियों ने अपनी राजनैतिक सत्ता उमय्यदों को पराजित कर हासिल की। इसे 'अब्बासिद क्रांति' भी कहा जाता है। अब्बासियों ने बड़े असंतुष्ट शिया समूहों और गैर-अरबी धर्मांतरितों से यह वादा किया था कि वे उमय्यदों के विपरीत एक न्यायपूर्ण वैश्विक मुस्लिम समाज की स्थापना करेंगे। अब्बासी राजनैतिक और सांस्कृतिक जीवन को दमिश्क से अपने खिलाफत की राजधानी बगदाद ले जाने में सफल रहे। बगदाद और सामरा में अब्बासिदों के दरबारों में अनुवादकों, नजूमियों, विद्वानों, उलेमाओं, वैज्ञानिकों, कलाकारों तथा कवियों को संरक्षण दिया जाता था। अल-मामून (813-833 सी ई) विज्ञान और दर्शन शास्त्र के एक बड़े संरक्षक थे। उन्होंने *बैत-उल हिकमा* (ज्ञान सदन) नामक एक राजकीय संस्था की स्थापना की थी। साद अल-अंदलूसी के मुताबिक खलीफा मामून ने बाइज़ेंटाइन सम्राट को अनुरोध किया था कि वे उसे 'प्लेटो, अरस्तू, हिप्पोक्रेटिस, गेलेन, यूक्लिड, टॉलमी और अन्य विद्वानों की कृतियां भेजें'। उनकी विज्ञान और दर्शन की पुस्तकें पहले सीरियाई और अंततः अरबी में अनूदित हुई। लैटिन, संस्कृत और फारसी शोध ग्रंथों का भी अरबी में अनुवाद हुआ।

चित्र 15.1: अल-मामून का *बैत-उल हिकमा*
साभारः मुस्लिम हैरिटेज
स्रोतः https://muslimheritage.com/house-of-wisdom/

यूनान की दार्शनिक पुस्तकों के अनुवाद होने और *बैत-उल हिकमा* में सुकरात, अरस्तू तथा प्लेटो ज़ैसे चिंतकों के विचार उपलब्ध होने से इस्लाम में धर्म शास्त्र की एक ज्ञान संगत शाखा का विकास हुआ, जिसे *मुआतज़िला* के नाम से जाना जाता है। बगदाद और बसरा में *मुआतज़िला* शाखा के प्रणेता वासिल इब्न अता, अमर इब्न उबैद और इब्न अल-मुतामिर ज़ैसे विद्वानों ने *मुआतज़िला* धर्मदर्शन का प्रतिपादन किया। वे इस बात में विश्वास करते थे कि इस भौतिक संसार, ईश्वर की प्रकृति और उसकी इस रचना को सिर्फ तर्क (*कलम*) और विवेक के सहारे ही समझा जा सकता है। दूसरे शब्दों में, उन्होंने इस्लामी धर्मग्रंथ *कुरान* की विवेकसम्मत विवेचना की जोरदार वकालत की, जिसमें तर्क को प्राकट्य ज्ञान से श्रेष्ठ माना गया।

डैनियल ब्राउन के मुताबिक आठवीं-नौवीं शताब्दी की अब्बासी खिलाफत में इस्लामी धर्मशास्त्रियों के तीन समूह थे – *अहल अल-कलम, अहल अल-रे और अहल अल-हदीस*। पहले प्रसिद्ध समूह अहल *अल-कलम* या *मुआतज़िला* की शुरुआत वासिल बिन अता द्वारा की गई, जो हसन अल-बसरी के शिष्य थे। अब्बासी खिलाफत के समय इस्लामी धर्मज्ञान की दो शाखाएं अस्तित्व में आईं – *मुआतज़िला* और *अशारी*। इस्लाम की यह पहली सुव्यवस्थित धर्म ज्ञान शाखा (कलम) नौवीं शताब्दी में अपनी बुलंदियों पर तब पहुंची, जब अल-मामून (813-833 सी ई) ने अपने खिलाफत के राजकीय धर्म दर्शन के रूप में *मुआतज़िला* की व्याख्याओं को स्वीकृति दी।

खारिजियों पर चर्चा में हमने पढ़ा है कि 'गंभीर गुनाह' के मामले में कैसे उनका मत दूसरों से अलग था। खारिजियों ने स्पष्ट रूप से कहा कि 'गंभीर गुनाह' करने वाला इस्लाम में विश्वास ही नहीं करता। उनके कट्टर विरोधी ***मुरीजियों*** का मत था कि 'गंभीर पाप' करने वाला नास्तिक नहीं हो जाता। प्रचलित धारणा के मुताबिक *मुताज़िला* के संस्थापक वासिल इब्न अता (मृत्यु 748 सी ई) और अमर इब्न उबैद (मृत्यु 761 सी ई) थे। उन्हें *मुआतज़िला* इसलिए कहा गया क्योंकि उन्होंने गंभीर अपराध करने वाले की स्थिति के बारे में हसन अल-बसरी के विचार नामंजूर करने के बाद खुद को उनके अध्ययन केंद्र से अलग (*इताज़लू; itazalu*) कर लिया। हसन अल-बसरी का मत था कि गंभीर गुनाह करने वाला *मुनफ़िक़* (ढोंगी) होता है। लेकिन *मुआतज़िला* कहते थे कि ऐसा गुनाह करने वाला आस्तिक या नास्तिक कुछ भी नहीं होता।

मुआतज़िला धर्मदर्शन के पांच उसूल

अबू अल-हुदैल (752-841 सी ई) के मुताबिक *मुआतज़िला* धर्मदर्शन को संक्षेप में निम्न पांच सिद्धांतों के रूप में व्यक्त किया जा सकता है :

ईश्वर की एकता (*तौहीद*) और दृष्टि: *मुआतज़िला* यह विश्वास करते थे कि ईश्वर के प्रतीक को ईश्वर का तत्व नहीं समझा जाना चाहिए। वे मानते थे कि ईश्वर का साक्षात्कार संभव नहीं है, क्योंकि वह स्थान और दिशा से मुक्त है। उनके लिए *कुरान* अल्लाह (ईश्वर) का वचन है। वे संतों की *करामातों* (चमत्कारों) को अस्वीकार करते थे। वे मान्य ईश्वरीय लक्षणों या उनकी पूर्व नियतता पर संदेह करते थे। वे ईश्वर की संपूर्ण एकता में विश्वास करते थे। वे *कुरान* का पाठ अपनी पूर्व निर्धारित धारणाओं और अरस्तूवादी तर्कों के आधार पर करते थे। *मुताजलियों* की नजर में *फलसफी* (दार्शनिक) पैगंबरों से श्रेष्ठ होते हैं, क्योंकि वे सत्य को जानते हैं। उन्होंने अरस्तू के दर्शन और *कुरान* को आपस में मिलाने की कोशिश की।

न्याय और परम स्वतंत्र इच्छा: उनका तर्क था कि ईश्वर का सर्वशक्तिमान न्याय यह अनिवार्य बनाता है कि मनुष्य अपने कर्मों का जनक स्वयं बने। जब मनुष्य कुछ करते समय अपनी इस परम स्वतंत्र इच्छा का सुख पाता है, तभी उसे उसके उस कर्म के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। यदि मनुष्य अपने कर्मों का निर्धारण स्वयं नहीं करता और वह ईश्वर द्वारा पहले से तय होता है, तो उसे उस कर्म के लिए कैसे जिम्मेदार समझा जाएगा, जो उसने ईश्वर की इच्छा से स्वतंत्र होकर, अपनी परम इच्छा से नहीं किया। अल-शहरेस्तानी इसे इस प्रकार व्यक्त करता है, '*मुताज़िला* इस विचार पर एकमत रहते हैं कि मनुष्य स्वयं निर्णय करता है और अपने कर्म करता है, अच्छे और बुरे दोनों; और उसे अपने उन कर्मों का दंड या पुरस्कार अगली दुनिया में मिल जाता है'।

वादा (*अल-वा'द*) और धमकी (*अल-वा'इद*): *मुआतज़िला* पंथ का विश्वास था कि ईश्वर को अपना परम न्याय (*अद्ल*) लागू करना है। क्योंकि *कुरान* का कहना है, '*निश्चय ही ईश्वर अपना वादा नहीं तोड़ता*'। गुनाह करने वालों, दूसरों पर अत्याचार करने वालों और झूठ बोलने वालों को बिना देरी सजा जरूर मिलेगी। लेकिन यदि गुनहगार मृत्यु से पहले अपने किए पर पश्चाताप करता है, तो शायद उसे माफ कर दिया जाएगा। इस तरह अच्छे और बुरे कर्म, उनके परिणाम और क्षमाशीलता के बारे में *मुआतज़िलों* की आस्था, उनके तर्कों में निहित थी।

गंभीर गुनाह करने वाले की मध्य स्थिति: *मुआतज़िलों* का मानना था कि गंभीर अपराध करने वाले को न आस्था वाला कहा जा सकता है और न अनास्था वाला। वे कहते थे कि यदि कोई मुसलमान कोई गंभीर गुनाह करे और बिना उस पर पश्चाताप किए उसकी मृत्यु हो जाए, तो उसे न ईश्वर में विश्वास रखने वाला समझा जाएगा और न ही अविश्वास करने वाला। वह 'बीच स्थिति में' होगा और ईश्वर उसका अलग से न्याय करेगा।

नेकी की जीत और बदी की हार: पांचवें सूत्र की अपनी व्याख्या में *मुआतज़िलों* ने '*अल-अम्र वन-नही* (*al-amrwan-nahy*) की स्थिति को स्वीकारा। उन्होंने कहा कि यदि अनुचित व्यवहार आम लोगों तक फैल जाए या दूसरे शब्दों में बादशाह का राज्य अत्याचारी और अन्यायी हो जाए, तो मुसलमानों के लिए यह अनिवार्य है कि वह इस स्थिति, राज्य या बादशाह के खिलाफ विद्रोह में उठ खड़ा हो। इस तरह *मुताज़िलों* ने अच्छाई लाने और बुराई रोकने के लिए ताकत के इस्तेमाल को मंजूरी दी। ऐसी समझ उन्हें अल-मामून के समय में *मिन्हा* (धर्म न्यायाधिकरण) तक ले आई।

अशारिया

अब्बासी न्यायाधिकरण कठोर और अलोकप्रिय था, इसलिए अब्बासी शासन के खिलाफ बगदाद की गलियों में दंगे भड़क उठे। अंततः खलीफा अल-मुतवक्किल (847-861 सी ई) के काल में 848 सी ई में *मिहना* खत्म हुआ और धार्मिक विद्वानों (*उलेमाओं*) ने इस्लाम की व्याख्या का अधिकार उनसे छीन लिया। दसवीं शताब्दी तक आते-आते खलीफा इस्लामिक न्याय विधान और कानूनी मामलों में ना के बराबर दखल रखने लगे। अशारी धार्मिक मामलों में संतुलित रवैया रखते थे; वे न *मुआतज़िलों* की तरह बहुत ज्यादा तार्किक थे और न *ज़ाहिरियों* की तरह अत्यधिक रूढ़िवादी। अल-गजाली और फख्र अल-दीन अल-राज़ी प्रमुख अशारी चिंतक थे। सेलजुक सुल्तान अशारी विचारधारा का अनुसरण करते थे।

अल-अशारी (मृत्यु 935 सी ई) बसरा के रहने वाले थे। वे अबू अली अल-जुब्बाई (मृत्यु 915 सी ई) के शिष्य थे। अल-अशारी ने पूरे *मुआतज़िला* सिद्धांत को चुनौती दी, हालांकि व्यवहार में द्वंद्वात्मक पद्धति का इस्तेमाल किया। अल-अशारी ने कहा, 'ईश्वर में कुछ विशेष गुण हैं जो उनके भीतर अनन्त काल से मौजूद हैं और उनके अपने सार तत्व के अतिरिक्त हैं'।

1) ***मुखालफा* का सिद्धांतः** ईश्वर की प्रकृति और लक्षण अपने सृजन से भिन्न है, इसलिए मानवीय लक्षण उस पर लागू नहीं होते।

2) **स्वतंत्र इच्छाः** अशारियों का मत था कि मानवीय इच्छाएं और शक्तियां बाहर से प्राप्त गुण हैं। मानव की असली शक्ति वह है, जो ईश्वर उसे देता है और यह भी उस सृजनकर्ता से उसी तरह आती है, जैसे दूसरी अन्य चीजें आती हैं।

3) **प्राकट्य (*Revelation*) और तर्कः** तर्क और प्राकट्य के बीच विवाद की स्थिति में अशारियों ने प्राकट्य को तर्क से श्रेष्ठ और विश्वसनीय माना, क्योंकि प्राकट्य ही सत्य और यथार्थ का बुनियादी स्रोत है। उनके अनुसार अच्छे बुरे की पहचान का एकमात्र पैमाना प्राकट्य ही है। अशारी ऐसा विश्वास करते थे कि अच्छे कर्मों के बिना पर ईश्वरीय दृष्टि प्राप्त करना संभव है।

अशारी धर्मज्ञान का सार तत्व एक विद्वान ने इस तरह स्पष्ट किया है कि 'कर्म अपने आप में अच्छे या बुरे नहीं होते, ईश्वरीय विधान उन्हें अच्छा या बुरा बनाता है'।

बोध प्रश्न-5

1) *बैत-उल हिकमा* क्या था? इसने इस्लामी धर्मदर्शन को किस तरह प्रभावित किया?

....

....

....

....

....

2) *मुआतज़िला* और *अशारियों* में तीन बुनियादी फर्क क्या थे?

....

....

....

....

....

15.7 इस्लामी सूफी संप्रदाय

सूफी शब्द *सूफ* (ऊन) से निकला है। सूफी मुसलमानों के एक विशेष समूह को कहते थे, जो अपनी गहरी रहस्यवादी आस्थाओं के चलते या साधना के लिए ऊन के तकलीफदेह लबादे पहनते थे। सूफीवाद का केंद्रीय तत्व यह था कि इसमें सूफी साधक परम सत्य, जो ईश्वर है, उसके सीधे संपर्क में आने का प्रयास करते थे। इस्लाम में आरंभ से ही रहस्य का तत्व समाहित रहा है। इसने सातवीं और नौवीं शताब्दी के बीच आकार लेना शुरू किया, जब बसरा, बगदाद, सीरिया और ईरान के कुछ मुसलमान रहस्यवादी साधक उभरकर सामने

आए। बारहवीं शताब्दी तक आते-आते सूफीवाद के विकास का दूसरा चरण सामने आया, जब ऐसे साधक समूहों के *सिलसिले* अथवा *तरीका* अस्तित्व में आने लगे। प्रत्येक *सिलसिला* अपनी विशेष आचरण संहिता और नियमावली का पालन करता था और उनकी आध्यात्मिक जड़ें पैगंबर मुहम्मद, जीवन के प्रति उनके धर्म दर्शन और विशिष्ट धर्मनिष्ठा तथा आध्यात्मिक परम्पराओं से जुड़ती थीं। मंगोलों की विजय के समय, विशेष रूप से 1258 सी ई में बगदाद के पतन के बाद से सोलहवीं शताब्दी तक सूफी संत और उनके आध्यात्मिक *तरीकों* का अनौपचारिक संजाल 'अध्यात्म और ज्ञान का केंद्र बना रहा, जिसने इस्लाम के बहुरंगी सांस्कृतिक और जनजातीय समाज के ताने-बाने को एकजुट बनाए रखा'।

15.7.1 सूफी आंदोलन का उदय

सूफी आंदोलन के उदय के बारे में इतिहासकारों के अलग-अलग मत हैं। हालांकि 'प्रसरण-संन्यास सिद्धांत' (expansion-asceticism theory) इनमें से सबसे ज्यादा मान्य है। इस मान्यता के अनुसार ज़ैसे-ज़ैसे इस्लामी साम्राज्य का विस्तार हुआ, मुसलमानों का झुकाव दुनियावी चीजों में ज्यादा होने लगा और वे अधिक आत्मकेंद्रित होने लगे। आठवीं सदी के बाद से सूफी, इस्लाम की निर्मलता को वापस स्थापित करने के प्रयास में जुटने लगे। इस्लामी ऐतिहासिक स्रोतों के अनुसार जब तक पैगंबर मुहम्मद जीवित थे, तब तक इस्लाम के संदेश शुद्ध और मौलिक थे। लेकिन जब मदीना में इस्लामी राज्य की जड़ें जमने लगीं, इस्लाम भी निश्चित रूप से दूर-दूर तक फैलने लगा। कुछ समय बाद मुसलमान धीरे-धीरे राज्य और प्रशासन की सांसारिक गतिविधियों में उलझने लगे, जिसने इस्लाम की मौलिकता और पवित्रता को खत्म करना शुरू कर दिया, क्योंकि इस्लामी समाज शियाओं और सुन्नियों की सांप्रदायिक कलह में फंस गया था। इसलिए, ज़ैसा कि ह्यूस का विचार है, 'शुरुआती मुस्लिम सूफीवाद (asceticism) ने मुस्लिम समाज के तेज फैलाव को एक ''प्रामाणिक'' प्रति उत्तर पेश किया। सूफीवाद, नए साम्राज्य के भौतिकवाद के विपरीत एक अलग दुनिया के पारलौकिक जवाब की तरह विकसित हुआ और रूपायित होने लगा'।

हसन अल-बसरी (642-728 सी ई) आठवीं शताब्दी के एक क्रांतिकारी धर्म उपदेशक और विद्वान थे। वे लोगों को गुनाह से परहेज करने और पवित्र जीवन बिताने के लिए काफी उत्तेजक भाषण दिया करते थे। वे अपने शिष्यों से भौतिक वस्तुओं (*ज़ुहद*) के प्रति लगाव छोड़ने को कहते थे। हसन अल-बसरी के अनुयायियों की संख्या काफी थी, जिन्होंने उनके आध्यात्मिक विचारों को अपनाया और अपने आप को सांसारिक सुखों से दूर किया। 750 सी ई में उमय्यदों के पतन के बाद बगदाद में सूफी विद्वानों का एक गुट उभरा, जिसे अब बगदाद स्कूल कहते हैं। बशीर इब्न उल हरीथ, सरी सक़्ती और जुनैद, बगदाद के सूफी पंथ के तीन नगीने थे।

जुनैद को उसके चाचा सरी सक़्ती ने शिक्षा दी थी। बिस्तामी और अल-हल्लाज ('प्रमत्त' ('intoxicated') सूफी धारा के प्रतिनिधि) के उलट जुनैद ने बगदादी सूफीवाद की 'सौम्य' परंपरा का अनुसरण किया। जुनैद ने ईश्वर से मिलन का अनुभव प्राप्त करने के लिए अपने स्वार्थों और प्राकृतिक इच्छाओं को त्यागने तथा अपने अस्तित्व को मिटा (*फ़ना*) देने की वकालत की। उन्होंने पूरे समुदाय के प्रति क्षमाशील और उदार रहने तथा *शरिया* के मामलों में पैगंबर मुहम्मद का अनुकरण करने पर जोर दिया। अल-हल्लाज से अलग, जुनैद ने *शरिया* के निर्देशों की कभी अवहेलना नहीं की।

15.7.2 सूफी *तरीक़ा* का प्रसार

बारहवीं सदी से *तरीक़ा* कहे जाने वाले संगठित सूफी संप्रदायों में आध्यात्मिक जीवन का धीरे-धीरे परिष्करण होने लगा। रोजमर्रा के झंझटों से दूर अपेक्षाकृत छोटी जगहों पर स्थित

(*ज़ावया*) ये केंद्र बड़े भवनों वाले आराधना स्थलों में बदलने लगे। *तरीक़े* के भीतर सूफी समुदायों में जीवन व्यवस्थित था और वह एक वर्गीकृत/स्तरीकृत पदानुक्रमित सूफी नेतृत्व द्वारा निर्धारित नियमों से संचालित होता था।

कादरिया, सुहरावर्दिया, चिश्तिया, कुबराविया, नक्शबंदिया और सफाविया शुरुआती बड़े सूफी *सिलसिले* (*तरीक़े*) थे, जो तेरहवीं और पंद्रहवीं सदी के बीच अस्तित्व में आए। कादरिया *सिलसिला* बगदाद में, नक़्शबंदिया मध्य एशिया में, शाजिलिया उत्तरी अफ्रीका में और सफाविया अनातोलिया में वजूद में आए। वे बाद में बहुत बड़े भू-क्षेत्र में फैल गए और फलने-फूलने लगे। सोलहवीं सदी में ऑटोमन नक़्शबंदी *सिलसिले* के प्रबल समर्थक थे। और ईरान में सफाविद, सफावी सूफी *पीर* और बादशाह दोनों होते थे। मुगल हालांकि ज्यादातर तटस्थ ही रहे, लेकिन वे नक़्शबंदी *सिलसिले* के अनुयायी भी थे। सत्रहवीं शताब्दी में मुगलों और ऑटोमनों के राजनैतिक आभिजात्य वर्ग में नक़्शबंदी *तरीक़ा* का काफी प्रभाव था। इसलिए चिश्तिया और कादरिया *सिलसिलों* से उनकी झड़पें हुईं। इसे 'नक्शबंदी प्रतिक्रिया' कहा जाता है। अंत में सफाविदों को राजनैतिक शक्ति हासिल हो गई, जिन्होंने हुरुफी तथा नुक्तवी *सिलसिलों* को प्रतिबंधित कर इसे निष्प्रभावी बना दिया।

बोध प्रश्न 6

1) सूफी और सूफीवाद का अर्थ बताइये। सूफी आंदोलन के विकास में प्रसरण-सूफीवाद (expansion-asceticism) का सिद्धांत क्या है?

....

....

....

....

....

2) सूफी आंदोलन के उदय और सूफी *तरीक़ा* (सिलसिले) पर टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

15.8 सारांश

इस्लाम का उदय मक्का में सातवीं शताब्दी के अरबिया में हुआ। उसने एक नई सामाजिक व्यवस्था पैदा की, जो कबीलाई संबंधों की जगह समान धार्मिक विश्वास से एकजुट हुआ था। अरबों ने अपनी सत्ता और धर्म का प्रसार बहुत तेजी से तीन महाद्वीपों में कर लिया। हालांकि उम्मा (मुस्लिम समुदाय) के बीच मतभेद पैदा हुए और फूट पड़ गई और समय के साथ उनके खारिजी, शिया, सुन्नी, रहस्यवादी पंथ ज़ैसे कई संप्रदाय और शाखाएं पैदा हो गईं। इस तरह इस्लाम अनेक संप्रदायों, धर्मशास्त्र की शाखाओं, न्यायशास्त्रों (*फ़िक़्ह*) और दर्शन का एक जटिल सम्मिश्रण बन गया। अरबों के बीच पहला मतभेद मुहम्मद के निधन के बाद उत्तराधिकार को लेकर पैदा हुआ। खारिजियों ने एक क्रांतिकारी आंदोलन की तरह उमय्यदों

का प्रतिरोध किया, नव दीक्षित मुसलमानों ज़ैसे *मावलियों* (मुख्य रूप से ईरानी) ने उमय्यदों द्वारा किए जाने वाले भेदभाव के कारण शियाओं का समर्थन किया। इसके बाद शियाओं की भी अनेक उप-शाखाएं फूट पड़ीं। जहां तक इस्लाम के रहस्यवादी पहलू का सवाल है, सूफीवाद एक आंदोलन की तरह आठवीं शताब्दी में सामने आया, तेरहवीं शताब्दी तक परिपक्व हो गया और सोलहवीं शताब्दी तक पूरे इस्लामी जगत में फैल गया। सूफी अपने सूफी भाईचारे या *सिलसिले* (*तरीका*) के रूप में अलग-अलग संप्रदायों में संगठित हुए, ज़ैसे कादरिया, नक्शबंदिया, चिश्तिया और सफाविया।

15.9 शब्दावली

मुरीजी : एक इस्लामी पंथ, जो न्याय के स्थगन (*इजरा*) में विश्वास करता है। वे यह मानते हैं कि सिर्फ ईश्वर ही यह फैसला कर सकता है कि किसी मुसलमान की आस्था नष्ट हुई है या नहीं। और किसी मुसलमान ने गुनाह किया है या नहीं।

नखलिस्तान : विशाल रेगिस्तान के बीच स्थित उपजाऊ क्षेत्र, जहां पानी उपलब्ध रहता है।

कसीदा : अरबी और ईरानी काव्य की एक विधा जो राजा, कुलीन अथवा किसी व्यक्ति विशेष की प्रशंसा में रची जाती थी।

तरीका : इसका आशय रहस्यवादी सूफी सिलसिले से है। *तरीकत* का अर्थ है रहस्यवादी मार्ग।

कबीला : जनजाति के लिए प्रयुक्त अरबी और ईरानी शब्द। कबीले कुलगोत्र से बनते हैं। कबीलाई एकता रक्त संबंधों के आधार पर पैदा होती है।

सम्प्रदाय : मेक्स वेबर के अनुसार, 'सम्प्रदाय, समान धार्मिक विचार रखने वाले व्यक्तियों का एक स्वैच्छिक संघ है'।

शरिया : *कुरान* पर आधारित इस्लामी कानून

15.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) उप-भाग 15.2.1 देखें

2) भाग 15.2 देखें

बोध प्रश्न-2

1) उप-भाग 15.3.1 देखें। बॉक्स में दी गई सामग्री भी देखें

2) उप-भाग 15.3.2 देखें। इसने मदीना के इस्लामिक राज्य को शांति तथा वैधता प्रदान की। अरेबिया में मदीना मुसलमानों के अधीन राजनीति का केन्द्र बिन्दु बन गया।

बोध प्रश्न-3

1) भाग 15.4 देखें। पैगम्बर मुहम्मद किसी को भी अपना उत्तराधिकारी चुने बिना सद्गति को प्राप्त हुए।

2) भाग 15.4 देखें

बोध प्रश्न-4

1) उप-भाग 15.5.1 देखें

2) भाग 15.5 और उप-भाग 15.5.1 देखें

3) उप-भाग 15.5.2 देखें

बोध प्रश्न-5

1) भाग 15.6 देखें

2) भाग 15.6 देखें

बोध प्रश्न 6

1 उप-भाग 15.7.1 देखें

2 उप-भाग 15.7.2 देखें

15.11 संदर्भ ग्रंथ

अहमद, लैला, (1992) *वीमेन एंड जेंडर इन इस्लामः हिस्टॉरिकल रूट्स ऑफ ए मॉडर्न डिबेट* (येलः येल यूनिवर्सिटी प्रेस).

बॉवरिंग एवं क्रोन, पैट्रीशिया, (संपा) (2012) *द प्रिंस्टन एन्साइक्लोपीडिया ऑफ इस्लामिक पॉलिटिकल थॉट* (प्रिंस्टनः प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस).

क्रोन, पैट्रिशिया, (2014) *मक्कन ट्रेड एंड द राइज़ ऑफ इस्लाम* (एडीनबर्गः जॉजियास प्रेस).

दफ्तरी, फरहाद, (2011) *'द वेराइटीज़ ऑफ इस्लाम', द निव केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इस्लाम, राबर्ट* इरविन (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस), भाग IV, पृ. 105-141.

दफ्तरी, फरहाद, (2007) *द इस्माइलीज़* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

डोनर, फ्रेड एम., (2010) *मुहमद एंड द बिलीवर्सः एट द ओरीजिन्स ऑफ इस्लाम* (हार्वडः हार्वड यूनिवर्सिटी प्रेस).

इस्पोसिटो, जान एल. (1999) *द आक्सफोर्ड हिस्ट्र ऑफ इस्लाम.* (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

ह्यूज, आरोन डब्ल्यू. (2013) *मुस्लिम आइडेन्टटीज़ः एन इन्ट्रोडक्शन टू इस्लाम* (न्यूयार्क एवं चिचोन्टरः कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस).

रॉबिन्सन, फ्रांसिस, (संपा.) (1996) *कैम्ब्रिज इलस्ट्रेटेड हिस्ट्री-ऑफ इस्लामिक वर्ल्ड* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

स्लगेट, एवं क्यूरी, एन्ड्रयू, (2014) एटलस ऑफ इस्लामिक हिस्ट्री (लंदन एवं न्यूयार्कः रूटलेज).

टकर, ज्यूडिथ, (1993) *जैंडर एंड इस्लामिक हिस्ट्री* (इंडियाना यूनिवर्सिटीः अमेरकिन हिस्टॉरिकल एसोसिएशन).

वाट, मॉन्टगोमरी, (1953) *मुहम्मद एट मक्का* (ऑक्सफोर्डः क्लेरेन्डन प्रेस).

ज़ाइटलिन, इरविंग, (2007) *द हिस्टॉरिकल मुहम्मद* (जॉन-विली).

अन्य संदर्भ

https://www.scribd.com/document/134329976/How-Did-Th4-Early-Shia-Become-Sectarian

http://libgen.io/search.php?req=Atlas+of+Islamic+History&lg_topic=libgen&open=0&view=simple&res=25&phrase=1&column=def

15.12 शैक्षणिक वीडियो

व्हाट इज़ सूफीइज़्म?
https://www.youtube.com/watch?v=u0WcsqSDU7U

इस्लामः फैक्ट्स एंड फिक्शन
https://www.youtube.com/watch?v=_LlIH4jBKyQ

अरब वर्ल्डः हैरीटेज एंड सिविलाइजेशन
https://www.youtube.com/watch?v=gg-oyrOFosY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 16 एशिया का व्यापारिक संसार और अरब*

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 इस्लाम के उदय के बाद अरब व्यापार और वाणिज्यिक विस्तार

16.3 आंतरिक व्यापार और शहरी केंद्रों का उदय

16.3.1 व्यापार, धर्म और शहरी विकास के मध्य संबंध

16.3.2 उत्पादन केंद्रों के रूप में शहरों का विकास

16.4 भारत के साथ अरब व्यापार

16.5 चीन और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अरब व्यापार

16.5.1 चीन के साथ अरब व्यापार

16.5.2 दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अरब व्यापार

16.6 सारांश

16.7 शब्दावली

16.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

16.9 संदर्भ ग्रंथ

16.10 शैक्षणिक वीडियो

16.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपः

- अरब व्यापार के विकास और शहरी केंद्रों के उदय में इस्लाम की भूमिका को समझ सकेंगे,
- अरबों की शहरी अर्थव्यवस्था में खानाबदोशों के योगदान की सराहना कर सकेंगे,
- अध्ययन अवधि के दौरान विश्व व्यापार में परिवर्तन का विश्लेषण कर पायेंगे,
- दुनिया के अन्य क्षेत्रों जैसे चीन, भारत और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अरबों के व्यापारिक संबंधों की जांच कर सकेंगे,
- इन व्यापारिक संबंधों की प्रकृति और उनसे संबंधित अन्य कारकों पर चर्चा कर पायेंगे, और
- इस तथ्य को समझ सकेंगे कि अरब दुनिया में पूर्व और पश्चिम दोनों के तत्व शामिल थे।

16.1 प्रस्तावना

हर सभ्यता में शहर व्यापारिक गतिविधियों का केन्द्र होते हैं। अधिकांश सभ्यताएं शहरी

* डॉ. समर मोइज़ रिज़वी, डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री एंड कल्चर, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

केन्द्रों के विकास से गहराई से जुडी हुई हैं; और व्यापार शहरों के विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारकों में से एक है। शायद, यही कारण है कि शहर आमतौर पर मुख्य व्यापार मार्गों पर स्थित होते हैं। हम कह सकते हैं कि व्यापार, शहरी केंद्रों के विकास में एक प्रमुख प्रेरक शक्ति है। जब यूरोपीय देशों में सामंती अर्थव्यवस्था प्रबल हुई, विशेष रूप से रोमन साम्राज्य के पतन के बाद, उस युग ने एशियाई दुनिया में व्यापारिक गतिविधियों के विकास को चिन्हित किया। इस्लाम के उदय से समुद्री व्यापार में बड़े पैमाने पर वृद्वि हुई, और अरब[1] व्यापारियों ने एशियाई और यूरोपीय बाजारों के बीच खुद को बिचौलियों के रूप में स्थापित किया। अरब दुनिया की आर्थिक नींव कृषि, शहरीकरण और लंबी दूरी के व्यापार पर टिकी हुई थी (चौधरी, 1996: 124)। इस्लाम के उदय और इस्लामिक साम्राज्य के विस्तार के बाद, अरब व्यापार को पूरे साम्राज्य में एकीकृत और विनियमित किया गया। यूरोपीय समुद्री यात्राओं के प्रारंभ या ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की नींव और पुर्तगाली, फ्रांसीसी और डच व्यापारिक मिशनों के पहले से ही एशियाई व्यापार पर अरब व्यापारियों का एकाधिकार था। यहां हम अरबों की व्यापारिक गतिविधियों के बारे में विस्तार से चर्चा करेंगे।

16.2 इस्लाम के उदय के बाद अरब व्यापार और वाणिज्यिक विस्तार

अरब दुनिया की भौगोलिक स्थिति ने अरब व्यापारियों को एशिया के स्थल व्यापार के साथ-साथ समुद्री व्यापार पर हावी होने में मदद की। हिजाज़ जैसे प्रधान बंदरगाह वाले शहर (**मानचित्र 16.1** देखें), एक बंजर भूमि, जो लाल सागर में अरब प्रायद्वीप के मध्य तट पर स्थित थी, ने शायद ही कभी दक्षिण-पश्चिमी मानसूनी हवाएं प्राप्त कीं। इससे व्यापार का मार्ग प्रशस्त हुआ जो इस क्षेत्र की एक सामाजिक और आर्थिक आवश्यकता बन गया। अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया की खोज से पहले, एशियाई व्यापार अन्य दो महाद्वीपों अर्थात अफ्रीका और यूरोप तक ही सीमित था। अरब प्रायद्वीप तीनों महाद्वीपों एशिया, अफ्रीका और यूरोप का मिलन बिन्दु था। यह यूरोप और अफ्रीका दोनों की सीमा को छूता है। ईरान का क्षेत्र भारतीय और चीनी व्यापारियों के लिए अन्य महाद्वीपों के साथ संपर्क का मुख्य स्थल मार्ग माना जाता था। अरब देशों का तटीय क्षेत्र लगभग सभी मुख्य समुद्री व्यापार मार्गों के तटों को छूता है, चाहे वह भूमध्यसागर, हिंद महासागर, लाल सागर हों या उस संदर्भ में फ़ारस की खाड़ी। ***जज़ीरत-उल अरब*** की भौगोलिक श्रेष्ठता ने विश्व व्यापार में अरब व्यापारियों के वर्चस्व को स्थापित करने में मदद की।

सातवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में इस्लाम के जन्म से पहले, मध्य पूर्व, जिसमें पश्चिम एशिया और उत्तर पूर्वी अफ़्रीका के कुछ हिस्से शामिल थे, दो शक्ति केंद्रों में विभाजित था – बाइज़ेन्टाइन और सासानियन। हालांकि, वर्ष 629 सी ई ने इस क्षेत्र में एक अन्य शक्ति की उपस्थिति को चिह्नित किया, और वह थे मुहम्मद के नेतृत्व में अरब मुस्लिम। मुहम्मद ने अपना पहला अभियान 629 सी ई में बाइज़ेन्टाइन सीरिया में भेजा था। उनके अभियान ने सासानियन और बाइज़ेन्टाइन दोनों शक्तियों को सचेत किया। 642 सी ई तक मुहम्मद की मृत्यु के दस वर्षों के भीतर, मुस्लिम अरबों ने ईराक सहित ईरान क्षेत्र के एक बड़े हिस्से पर नियंत्रण प्राप्त कर लिया, साथ ही साथ बाइज़ेन्टाइन सीरिया पर भी। सातवीं शताब्दी के छठे दशक के अंत तक आते-आते ईरानी और बाइज़ेन्टाइन साम्राज्य दोनों मुस्लिम अरबों द्वारा धाराशाही कर दिये गए। व्यापार शायद इस्लामी सभ्यता के आर्थिक जीवन का सबसे महत्वपूर्ण पहलू था। बाइज़ेन्टाइन मिस्र, सीरिया, ईरानी इराक और ईरान पर अरब मुस्लिमों के नियंत्रण ने अरब

1 प्रारंभ में, अरब शब्द, अरब प्रायद्वीप में रहने वाले लोगों का द्योतक था। इसमें खानाबदोश बद्दू (Bedouins; जिनके बारे में आपने **इकाई 11, बीएचआईसी-102** में पढ़ा है) और शहर-निवासी, जो पूरे प्रायद्वीप में व्यापार में संलग्न थे, शामिल थे। इसलिए इतिहास में हाल के दिनों तक किसी को अरब के रूप में संबोधित करना साधारण खानाबदोश लोगों का द्योतक था।

व्यापारियों को अपनी व्यापारिक गतिविधियों का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित किया क्योंकि लगभग सभी महत्वपूर्ण तटीय क्षेत्र या समुद्री मार्ग इस्लामी साम्राज्य के प्रत्यक्ष नियंत्रण में आ गए थे। अब, यह देखते हुए कि सीरिया और मिस्र के अरब तटीय क्षेत्रों ने भूमध्यसागर की सीमाओं को छू लिया, ईडन की खाड़ी ने यमन से पूर्वी अफ़्रीकी सोमालिया तक का रास्ता खोल दिया; और अरब सागर पर नियंत्रण ने अरब व्यापारियों के लिए हिंद महासागर व्यापार पर अपना एकाधिकार स्थापित करना संभव बना दिया। फ़ारस की खाड़ी ने अरब व्यापारियों को इराकी और ईरानी विलासिता की वस्तुओं की बौछार चीनी और भारतीय बाजारों में करने में मदद की। अब सभी समुद्री मार्गों के साथ-साथ एशिया से यूरोप तक के स्थल मार्ग सीधे इस्लामिक साम्राज्य द्वारा नियंत्रित थे जिसने अरब व्यापारियों को अपनी व्यापारिक गतिविधियों का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित किया।

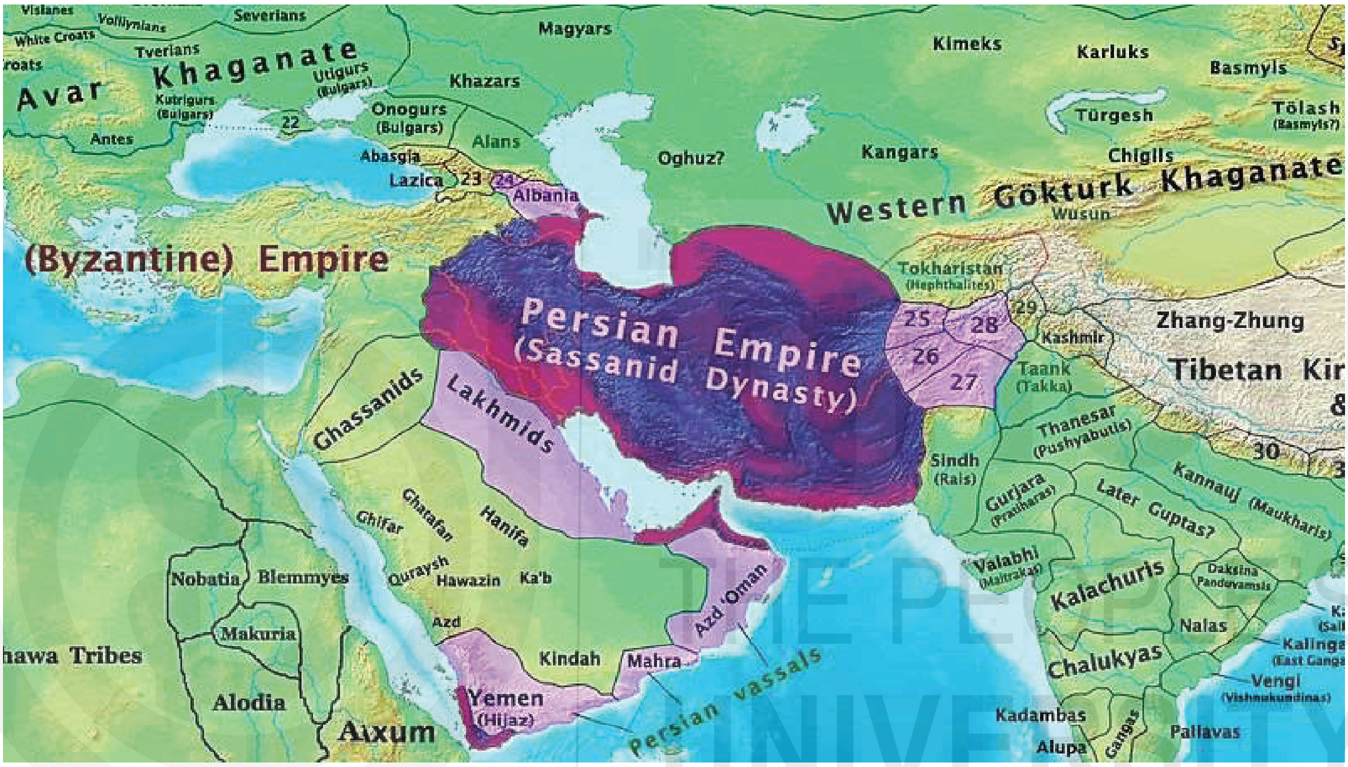

मानचित्र 16.1: 600 सी ई में अरब तथा ईरानी सासानिद साम्राज्य

साभार: थॉमस लेसमैन

स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Persia_600ad.jpg

इस्लामी सभ्यता की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक शहरी केंद्रों का उद्भव और विकास है। शानदार वस्तुओं, मसालों के साथ-साथ शहरी निवासियों द्वारा कपड़े की मांग ने लंबी दूरी या समुद्र पार के व्यापार को प्रोत्साहित किया। इस्लामी राजधानी शहरों के शहरी निवासियों द्वारा विलासिता की वस्तुओं की खपत ने अरब व्यापारियों को अपनी व्यापारिक गतिविधियों का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित किया। अब अरब व्यापार केवल मध्य पूर्व देशों तक ही सीमित नही था, बल्कि मसालों के स्वर्ग – इंडोनेशिया और मलेशिया – तक पहुंच गया। इस्लामी शासक इस्लामी-शहरी सभ्यता के आर्थिक जीवन में व्यापार के महत्व को जानते थे। शक्तिशाली इस्लामी शासकों ने अपने व्यापारियों को लुटेरों से सुरक्षा देने में सफलता प्राप्त की। इस्लामी शासकों के तहत समुद्री मार्गों के साथ-साथ स्थल मार्गों को भी अच्छी तरह से संरक्षित किया गया था। इस्लामी शासकों को इन मार्गों को किसी भी तरह की हिंसा और समुद्री डाकू और लूटेरों के हमलों से बचाने के लिए पुराने समुद्री और स्थल मार्गों को अधिक क्षमता के साथ पुनर्जीवित करने का श्रेय दिया जाना चाहिए। इस्लामी क्षेत्र में सौदागरों और व्यापारियों को पूर्व-इस्लामी युग की तुलना में कहीं अधिक स्वतंत्रता और स्वायत्तता दी गई थी। इस्लामिक धर्मशास्त्र (theology) भी व्यापारियों पर 'नैतिकता' और

'ईमानदारी' की एक निश्चित भावना थोपती थी, जिसके बारे में इस्लाम से पहले के व्यापारी अधिक गंभीर नहीं थे। इस्लाम के आगमन ने व्यापार में बेईमानी को एक गैर-इस्लामिक दस्तूर बना दिया। *कुरान* और *हदीस* की कई आयतों में व्यापारियों को ईमानदारी के साथ अपना व्यवसाय करने का निर्देश दिया गया। मुहम्मद ने ऐसे व्यापारियों पर नज़र रखने के लिए अधिकारियों को भी नियुक्त किया जो अपने व्यवसाय में शातिर तरीकों का इस्तेमाल करते थे। एक अवसर पर उन्होंने व्यापारियों को चेतावनी दी, 'हे व्यापारियों, आप अपने व्यापार के लेन-देन में झूठ बोलने से सावधान रहें'। पिछले समय की तुलना में कानून को अच्छी तरह से संहिताबद्ध किया गया था, जिसने अंततः अरबों को न केवल इस्लामी दुनिया की राजनीतिक सीमाओं के भीतर, बल्कि सुदूर पूर्व देशों और भारत जैसे अन्य क्षेत्रों में भी अपने व्यापार का विस्तार करने में मदद की। उमय्यद और अब्बासिद खलीफ़ाओं द्वारा प्रदान की गई सांस्कृतिक समरूपता, जो धार्मिक और साथ ही भाषाई दोनों थी, ने इस्लामिक क्षेत्र के आंतरिक व्यापार के लिए विभिन्न प्रतिबंधों और बाधाओं को तोड़ने में मदद की।

> मुस्लिम दुनिया के विस्तृत बाजार में आर्थिक उत्पादन और खपत का विकास तीन समानांतर विकासों द्वारा संभव हुआ। सबसे पहले, विजित लोगों के इस्लामीकरण ने आंशिक रूप से समरूप धर्म, नैतिक और न्यायिक प्रणाली का निर्माण किया। दूसरे, सेना और प्रशासन के अरबीकरण ने स्थानीय प्रवेशकों की भर्ती करके या स्टैप्स के लड़ाके लोगों को शामिल कर जातीय और राष्ट्रीय बाधाओं को तोड़ने में मदद की। अंत में, अरबी भाषा को संचार, शिक्षा, साहित्यिक अभिव्यक्ति और सरकार की सार्वभौमिक भाषा के रूप में अपनाने के माध्यम से सेमिटाइजेशन की प्रक्रिया पूरी की गई।
>
> **(चौधरी, 1996:127)**

इस्लामी शासकों द्वारा प्रदान की जाने वाली राजनीतिक स्थिरता ने राजधानी शहरों के निवासियों के आर्थिक जीवन को स्थिरता प्रदान की और उनकी क्रय शक्ति में वृद्धि की, और इस प्रकार विशेष रूप से भारत और सुदूर पूर्व में इंडोनेशिया, मलेशिया और चीन के बाजारों से गैर-अरबी महत्वपूर्ण सामग्रियों या वस्तुओं की मांग को प्रोत्साहित किया।

इस्लामी दुनिया के व्यापारिक नेटवर्क ने भौगोलिक अध्ययन के उद्भव को प्रोत्साहित किया, उदाहरण के लिए ऐसा प्रमुख अध्ययन, अरब अल-इदरीसी (1100-66) द्वारा किया गया। अरब दुनिया के फलते-फूलते व्यापार ने अरबो के गैर-अरबी देशों में प्रवास को प्रोत्साहित किया। इसलिए, यह युग सांस्कृतिक प्रसार द्वारा चिह्नित है। अन्य स्थानों पर पलायन करने वाले अरबों ने नई भाषाएं सीखीं; विभिन्न संस्कृतियों के साथ सामना हुआ; विभिन्न स्थानों का ज्ञान प्राप्त किया – उनकी प्रौद्योगिकियों, साहित्य और विज्ञान का। उन्होंने खुद को नए विचारों से सुसज्जित किया, जिसके परिणामस्वरूप अंततः जहाजों और परिवहन के अन्य संसाधनों की तकनीकी प्रगति हुई। अरब व्यापारी जो अपनी राजनीतिक या सांस्कृतिक सीमाओं से परे विभिन्न स्थानों की यात्रा करते थे, नए विचारों और ज्ञान के साथ घर वापस आए। अरब शहर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का केन्द्र बन गए। विभिन्न स्थानों से व्यापारी इन शहरों में इकट्ठा होने लगे और अंततः इन शहरों की प्रतिष्ठा एक वाणिज्यिक केन्द्र से विश्व ज्ञान के केन्द्र में बदल गई। इन शहरों की यात्रा करने वाला हर व्यापारी सिर्फ अपनी वाणिज्यिक वस्तुओं के साथ ही नहीं बल्कि नई ज्ञान प्रणालियों के साथ भी आया और इन स्थानों को मात्र वित्तीय राजधानियों से नए सांस्कृतिक केन्द्रों में बदल दिया।

मक्का और मदीना के प्रतिरूपी शहरों की तीर्थयात्रा ने लोगों को लाल सागर में अभिसरण करने को प्रेरित किया, जिससे व्यापार इस क्षेत्र की आर्थिक और सामाजिक आवश्यकता बन गया। इन सभी आर्थिक, भौगोलिक और सामाजिक कारकों ने लाल सागर को ऐतिहासिक महत्व प्रदान किया। यही नही, लाल सागर और फारस की खाड़ी बृहद हिंद महासागरीय और भूमध्यसागरीय व्यापार नेटवर्क का हिस्सा थी। इस प्रकार, अरब नौका संचालन में सिद्धहस्त हो गए। इसके अतिरिक्त, जैसा कि आपने पिछली इकाइयों (**12,13,14,** और **15**)

चित्र 16.1: अल-इदरीसी का विश्व मानचित्र
साभार: लीनाड-जेड कॉमन्सविकी
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Al-Idrisi%27s_world_map.JPG

में देखा होगा ऐतिहासिक रूप से अरब दुनिया में पूर्व और पश्चिम दोनों के तत्व थे। अरब व्यापार पर पुर्तगाली आर्थिक हमले 1415 में मोरक्को के कारवां शहर सेंटा की विजय के साथ शुरू हुए। अरबों ने निर्णायक रूप से 1700 से समुद्री व्यापार पर नियंत्रण खो दिया। आप हमारे पाठ्यक्रम **बीएचआईसी-108** में पुर्तगाली, अंग्रेजी और डच साम्राज्यों के प्रभाव और गतिविधियों के बारे में जानेंगे।

16.3 आंतरिक व्यापार और शहरी केंद्रों का उदय

अरब दुनिया में सातवीं और दसवीं शताब्दी के मध्य सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में से एक क्षेत्र में शहरी केंद्रों का उदय था। के. एन. चौधरी का मानना है कि 'इस्लाम की पहली शताब्दी में उमय्यद और अब्बासिदों द्वारा मुस्लिम विश्व प्रणाली की आर्थिक नींव तीन कारकों पर टिकी हुई थीः स्थाई कृषि, शहरीकरण और लंबी दूरी का व्यापार'। तीनों कारक आपस में जुड़े हुए थे। निरंतर कृषि विकास ने शहरी निवासियों की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा किया, जबकि शहरी केंद्रों में व्यावसायिक गतिविधियों और इसकी आबादी द्वारा विलासिता की वस्तुओं की मांग ने लंबी दूरी के व्यापार को प्रोत्साहित किया। कृषि ने न केवल अरबों के लिए निर्वाह अर्थव्यवस्था की भूमिका निभाई, बल्कि इसका व्यावसायिक महत्व भी था। सतत् कृषि विकास ने हस्तशिल्प उद्योगों के सुचारु विकास को प्रोत्साहन दिया जिसके परिणामस्वरूप अंततः अरब दुनिया की व्यापारिक गतिविधियाँ फली-फुलीं।

अरब व्यापारियों ने एशियाई और यूरोपीय व्यापार के मध्य बिचौलियों की महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और क्षेत्र के शहरों ने एशियाई वस्तुओं के भंडार-गृह के रूप में कार्य किया। इन वस्तुओं का अरब व्यापारियों द्वारा यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों मे निर्यात किया जाता था। शहरी

केंद्रों का विकास या शहरों का उदय सीधे व्यापारिक और वाणिज्यिक गतिविधियों के विकास से जुडा हुआ था। जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं और विलासिता की वस्तुओं के व्यापार ने सभी भौगोलिक और आर्थिक बाधाओं के बावजूद शहरों की उन्नति में योगदान दिया। इस संदर्भ में हम अरब प्रायद्वीप के साथ-साथ ईरान, इराक और सीरिया के शहरों का व्यावसायिक केंद्रों के रूप में उद्‌भव देख सकते हैं। 660 सी ई के बाद दमिश्क के नवीन स्थापित इस्लामिक साम्राज्य की राजधानी बनने से अरब दुनिया की व्यापारिक गतिविधियां सीरिया और इराक में स्थानांतरित हुई। इस बदलते परिवेश ने दोनों देशों में कस्बों और शहरों के विकास को प्रोत्साहित किया। बसरा का उदय इस बदलते परिवेश का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। बसरा, जो इस्लामी दुनिया के प्रमुख शहरों में से एक था, एक महत्वपूर्ण बंदरगाह के रूप में कार्य करता था। यह ईरान और इराक के बीच सामरिक रूप से महत्वपूर्ण व्यापार मार्ग पर भी स्थित था। यह उन प्रारंभिक इस्लामिक शहरों में से एक था जो अरब प्रायद्वीप के बाहर स्थित था। 660 में राजधानी के दमिश्क में स्थानांतरित होने के साथ, बसरा को इस परिवर्तन से लाभ हुआ। खिलाफ़त के विस्तार के साथ, व्यापार को पूरे क्षेत्र में एक गतिशीलता मिली। अरब, ईसाई और फ्रैंकिश यूरोपीय दुनिया के बीच आदान-प्रदान का उनके सामाजिक और तकनीकी जीवन पर प्रभाव पड़ा।

आठवीं शताब्दी के मध्य में इराक़ के सबसे महत्वपूर्ण शहर बग़दाद की नींव के साथ, जो अब्बासिदों की राजधानी बन गई, फारस की खाड़ी में व्यापारिक गतिविधियाँ पुनर्जीवित हुईं। अपनी स्थापना से, दसवीं शताब्दी तक, बग़दाद ने इस्लामी दुनिया के मुख्य वाणिज्यिक केन्द्र के रूप में अपनी स्थिति बनाए रखी। इन तीन शताब्दियों में खुद को एक वाणिज्यिक महानगर के रूप में विकसित करते हुये, बग़दाद का अरब व्यापार पर एकाधिकार था। इस क्षेत्र का एक अन्य महत्वपूर्ण वाणिज्यिक शहर समारा था। समारा की स्थापना 836 सी ई में हुई थी और इसने अब्बासिद **खलीफाओं** की नई राजधानी के रूप में कार्य किया। यह एक तटीय शहर था जो दजला नदी के तट पर स्थित था। लेकिन दसवीं शताब्दीं के मध्य तक, बग़दाद ने अरब व्यापार पर अपना एकाधिकार खोना शुरू कर दिया, और बाद में इस्लामी दुनिया की व्यावसायिक गतिविधियां इराक से मिश्र की ओर स्थानांतरित हो गईं। इस समय काहिरा बगदाद के स्थान पर इस्लामिक दुनिया के वाणिज्य और व्यापार के एक प्रमुख केन्द्र के रूप में उभरा। फारस की खाड़ी के स्थान पर वाणिज्यिक और व्यापारिक महत्व लाल सागर और भूमध्यसागर की ओर प्रतिस्थापित हो गया। इस आर्थिक विकास ने मिस्र के करीमी व्यापारियों के उदय को चिह्नित किया। करीमियों ने अपनी व्यापारिक गतिविधियों को मिस्र से लेकर सीरिया, ईरान और इराक तक बढ़ाया। बन्दरगाह शहरों जैसे बसरा, जेद्दा और उबुल्ला से माल को ऊंटों के कारवां के माध्यम से देश के आंतरिक भागों में ले जाया जाता था।

16.3.1 व्यापार, धर्म और शहरी विकास के मध्य संबंध

क्षेत्र में आर्थिक गतिविधियों के विकास में धर्म की भूमिका अपार थी। इस्लाम के संस्थापक पैगंबर मुहम्म्द खुद एक व्यापारिक पृष्ठभूमि से थे। कुरैश कबीला, जिससे वह संबंधित थे, का पूर्व-इस्लामी काल से ही मक्का के व्यापार पर नियंत्रण था। मक्का और मदीना का फलता-फूलता व्यापार मुसलमानों के इन दो शहरों की धार्मिक यात्रा के कर्तव्यों से लाभान्वित हुआ – मक्का मुहम्मद का जन्म स्थान था, और मदीना, जहां उन्होंने *हिजरत* की थी। पहले खलीफ़ा अबू बकर की मृत्यु के बाद खलीफ़ा बने अल-खत्ताब के बेटे उमर ने भूमध्यसागर को लाल सागर से जोडने की कोशिश की। समुद्री यात्रा के लिए सबसे खतरनाक समुद्र होने के बावजूद् मुसलमानों में अनिवार्य हज की रस्म के कारण लाल सागर ने अपना महत्व बनाए रखा। मोका या अल-मुख, यमन का एक बंदरगाह शहर, जो लाल सागर के तट पर स्थित है, मक्का के मार्ग में सबसे महत्वपूर्ण स्थलों में से एक था। हिंद महासागर के रास्ते अरब

सागर से जाने वाले हज यात्री कुछ दिनों के लिए वहां रुकते थे। अपने शुरुआती दिनों में, इस बंदरगाह शहर की अर्थव्यवस्था पूरी तरह से हज यात्रियों पर निर्भर थी। दक्षिण और दक्षिण-पूर्व एशियाई तीर्थयात्रियों के लिए, यह मक्का के अंतिम प्रमुख पड़ावों में से एक था। यातायात अनियमित था, लेकिन वास्तव में महत्वपूर्ण था। तीर्थ नगरों के महत्व पर प्रकाश डालते हुए के.एन. चौधरी ने तीर्थ स्थान और एक वाणिज्यिक केन्द्र दोनों के रूप में जेद्दा के महत्व की विशिष्टता को चिन्हित किया है। लाल सागर पर स्थित एक तटीय शहर जेद्दा, अफ्रीकी और भारतीय हज यात्रियों के लिए मक्का का प्रवेश द्वार था। उनका कहना है कि 'प्रत्येक वर्ष मिस्र, ईरान और भारत के जहाजों के आगमन के साथ, स्थानीय और विदेशी व्यापारी दक्षिण पूर्व एशिया और यूरोप की यथेष्ट महत्व की वस्तुएं, दमिट्टा के लिनन, गुजरात में बुने सूती वस्त्र, ईरानी कालीन और अफ्रीका, दक्षिण पूर्व एशिया तथा यूरोप के कई अन्य सामानों के वाणिज्यिक लेन-देन में लग जाते थे'। धार्मिक महत्व रखने वाले अन्य अरब शहरों में नजफ, कर्बला और रबात थे। धर्म और व्यापार के मिश्रण ने 7वीं और 10वीं शताब्दी के मध्य कई शहरों को जन्म दिया।

16.3.2 उत्पादन केंद्रों के रूप में शहरों का विकास

अरब शहर केवल उपभोक्ता शहर ही नही बल्कि उत्पादन केन्द्र भी थे। इस क्षेत्र के समृद्ध व्यापार ने अरब शहरों को दैनिक उपयोग की वस्तुओं के साथ-साथ विलासिता की वस्तुओं का प्राथमिक उत्पादक और आपूर्तिकर्ता बना दिया। अल-मुकद्दसी, एक अरब भूगोलवेत्ता, ने दसवीं शताब्दी में इस्लामिक साम्राज्य के अन्य शहरों के बाजारों में खुरासान और बगदाद के शहरों और कस्बों द्वारा उत्पादित और आपूर्ति की जाने वाली वस्तुओं की एक विस्तृत सूची प्रदान की। निशाबूर शहर विभिन्न प्रकार के वस्त्रों का उत्पादन करता था। मर्व, रेशम द्वारा बनाए गए नकाबों और बुर्कों (veils) का केंद्र था; कोहिस्तान अपने अच्छे खजूरों और गलीचों के लिए प्रसिद्ध था; वल्वालिज अपने अखरोट, तिल के तेल, चने और बादाम के लिए प्रसिद्ध था; बल्ख, ईरान का प्रमुख वाणिज्यिक केंद्र, अपने सूखे अंगूरों, साबुन और खाल के लिए जाना जाता था। समरकंद तांबे के बर्तन और चांदी के रंग के कपड़े का मुख्य निर्यातक था। बगदाद मंहगे शाही कपड़ों का प्रमुख निर्माता था। बुखारा के खरबूजे की विशेष किस्में और मांस उत्पादन अरब दुनिया में बहुत प्रसिद्ध थे। उपरोक्त विवरण अरब शहरों के मात्र उपभोक्ता शहरों के रूप में अस्तित्व के मिथक को नष्ट करता है।

बोध प्रश्न-1

1) व्यापार और वाणिज्य को बढ़ावा देने में इस्लामी शासकों की भूमिका पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

2) आप इस बात से किस हद तक सहमत हैं कि अरब शहर मुख्य रूप से उपभोक्ता शहर थे ?

....

....

....

....

....

3) शहरी केंद्रों के विकास में व्यापार की भूमिका की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

16.4 भारत के साथ अरब व्यापार

भारत और अरब दुनिया के बीच व्यापारिक संबंध नए नहीं हैं। इन दोनों भौगोलिक क्षेत्रों के बीच इस तरह की गतिविधियों के प्रमाण आध्य-ऐतिहासिक समय से स्थापित व्यापार की ओर इशारा करते हैं। पुरातात्विक साक्ष्य प्राचीन विश्व की दो महान् सभ्यताओं, अर्थात सिंधु घाटी सभ्यता और मेसोपोटामिया सभ्यता के बीच व्यापार संबंध को स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं। सोलोमन के समय से ही, जैसा कि *ओल्ड टेस्टामेन्ट* में वर्णित है, अरब व्यापारी अक्सर मसालों को खरीदने के लिए दक्षिण भारतीय तटीय क्षेत्रों में जाते थे। पान, चंदन और नारियल जैसी कुछ अन्य भारतीय वस्तुएं भी अरब लोगों में बहुत लोकप्रिय थीं। घोड़े, गहने और खजूर उन प्रमुख अरब वस्तुओं में से थे जिनकी भारतीय बाजारों में भारी मांग थी। अरब व्यापारी दक्षिण भारत के पूर्वी और पश्चिमी दोनों घाटों के तटीय क्षेत्र में आकर बस गए थे। इन दोनों क्षेत्रों के बीच पारंपरिक वाणिज्यिक संबंधों को इस तथ्य से समझा जाना चाहिए कि व्यापार में निरंतर वृद्धि को सुविधाजनक बनाने के लिए दक्षिण भारत के पश्चिम तट पर अरब व्यापारियों द्वारा स्थायी बस्तियों का निर्माण किया गया था। पूर्व-इस्लामिक काल में, अरब प्रायद्वीप के दक्षिण-पूर्वी तट पर व्यापार की वस्तु विनिमय प्रणाली का प्रचलन था; जहाँ सीरियाई और मिस्र के सामानों के साथ भारतीय वस्तुओं का आदान-प्रदान होता था।

दूरी और भौगोलिक बाधाओं के मुद्दे के अलावा, स्थल व्यापारियों के लिए सुरक्षा की समस्या भारत के साथ अंतर महाद्वीपीय व्यापार के लिए एक मुद्दा बनी रही। मुख्य रूप से अरब प्रायद्वीप में इस्लाम के उदय के बाद, दोनों क्षेत्रों, भारत और अरब के बीच व्यापार का विस्तार हुआ। पश्चिम एशिया और भारत के बीच पूर्व-इस्लामिक सासानिद व्यापारियों द्वारा समुद्री व्यापार मार्गों पर बनाई गई व्यापारिक संरचनाओं से अरब मुस्लिम व्यापारी लाभान्वित हुए। वे अपनी सामरिक भौगोलिक स्थिति के कारण एशियाई व्यापार पर अपना एकाधिकार स्थापित करने में सफल रहे। भूमध्यसागरीय अर्थव्यवस्था की आर्थिक अस्थिरता, विशेष रूप से रोमन साम्राज्य के पतन के बाद, दक्षिण-पूर्व यूरोपीय और एशियाई बाजारों के बीच मध्यस्थ के रूप में अरब व्यापारियों का महत्व बढ़ा। ईडन की खाड़ी, लाल सागर और फारस की खाड़ी भारत और अरब दुनिया के बीच व्यापारिक गतिविधियों के केंद्र के रूप में उभरे। अलेक्जेंड्रिया बंदरगाह के पुनरूद्धार के कारण हिंद महासागर के साथ भूमध्यसागर का एकीकरण हुआ। इस व्यापार संबंध ने भी इन दोनों क्षेत्रों के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान को सुविधाजनक बनाया। आठवीं से सोलहवीं शताब्दी तक, हिंद महासागरीय व्यापार मार्गों पर अरब और ईरानियों का वर्चस्व था।

मध्य तेरहवीं शताब्दी में बगदाद पर मंगोल हमले ने न केवल अरब दुनिया की राजनीतिक संरचना को प्रभावित किया, बल्कि इस क्षेत्र के वाणिज्यिक लेन-देन को भी अत्यधिक प्रभावित किया। इसने इस क्षेत्र के समुद्री व्यापार के चरित्र को बदल दिया। इस हमले का मुख्य आर्थिक परिणाम भारत और इस्लामी दुनिया के बीच समुद्री व्यापार मार्ग को बदलने में निहित है। हालांकि, इस संकट ने एक अन्य समुद्री व्यापार मार्ग की तलाश करने का अवसर भी पैदा किया। इसने भारत के साथ मिस्र के व्यापार के उदय और मिस्र के व्यापारियों के प्रभुत्व, विशेष रूप से हिंद महासागर के व्यापार पर करीमी व्यापारियों के एक समूह को चिह्नित किया। बगदाद के दो साल के सफल अभियान के ठीक बाद, सितंबर 1260 में अयन जलुत में काहिरा की मामलूक सेना ने मंगोलियाई सेना को बुरी तरह से पराजित कर दिया। मामलूकों के हाथों मंगोलों की इस हार ने पश्चिम की तरफ मंगोलियाई विस्तार को रोक दिया और उत्तरी अफ्रीकी देशों पर मिस्र और इस्लामी प्रभाव को सुरक्षित किया। इस घटना के परिणामस्वरूप काहिरा की स्थिति अंतर्राष्ट्रीय व्यापार केंद्र के रूप में बढ़ गई। एक अन्य अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मार्ग काहिरा के मामलूक शासक द्वारा विकसित किया गया। करीमी व्यापारियों ने काहिरा के शासक वर्ग से संरक्षण प्राप्त करने के बाद, एशियाई और यूरोपीय बाजारों के बीच खुद को बिचौलियों के रूप में स्थापित किया।

करीमी व्यापारियों ने मालाबार क्षेत्र के व्यापारियों के साथ बहुत करीबी संबंध स्थापित किए थे। कन्नूर और कालीकट की उनकी लगातार यात्राओं ने भारत और इस्लामी दुनिया के बीच वाणिज्यिक संबंधों को मजबूत किया। हिंद महासागर और लाल सागर के व्यापारिक मार्गों पर एकाधिकार रखने वाले करीमी व्यापारी कालीकट के स्थानीय शासक **ज़मोरिन** को वित्तीय मदद भी प्रदान कर रहे थे, ताकि उन्हें इस क्षेत्र में वाणिज्यिक और राजनीतिक शक्ति को मजबूत करने में मदद मिल सके। इस वित्तीय सहायता का मकसद इन स्थानीय शक्तियों की मदद से मसाला व्यापार को नियंत्रित करना था। यह भी ध्यान देने योग्य है कि इस समय, दक्षिण भारतीय हिंदू व्यापारियों और अरब मुस्लिम व्यापारियों के बीच सामंजस्य की प्रबल भावना थी। उन्होंने आपस में परस्पर विश्वास और सहयोग का वातावरण विकसित किया। समुद्री डाकुओं द्वारा उत्पन्न कुछ बाधाओं को छोड़कर हिंद महासागर अपेक्षाकृत एक संघर्ष मुक्त क्षेत्र था।

हम सिंध में मुस्लिम शहरों की संस्कृति और आर्थिक वृद्धि में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के योगदान और महत्व को भी अनदेखा नहीं कर सकते। मुहम्मद कासिम के सफल अभियान के बाद बनभोर के प्राचीन जर्जर शहर के नवीनीकरण और मंसूरा, प्रारंभिक आठवीं शताब्दी में सिंध में इस्लामी शासन की राजधानी, के निर्माण को अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। बनभोर, जो समुद्र तट पर स्थित था, ने इस क्षेत्र के समुद्री व्यापार की मांग को सुविधाजनक बनाया, जबकि मंसूरा स्थल व्यापार के केंद्र के रूप में विकसित हुआ। इस समय, कुछ महत्वपूर्ण तटीय शहर, केन्या का तटीय शहर मांडा; सिंध में बनभोर; और फारस की खाड़ी के उत्तरी तट पर सिराफ जो तीन बंदरगाहों को नियंत्रित करता था – बंदर-ए कंगन, बंदर-ए तहेरी और बंदर-दायर; ओमान का सुहर; और सिलोन के उत्तरी तट पर स्थित मतई थे। इन बंदरगाह शहरों ने एक समुद्री व्यापार नेटवर्क विकसित किया, जिसका लाभार्थी बनभोर था। बनभोर ने अपने व्यापारिक व्यापार नेटवर्क के माध्यम से सीरिया, इराक, चीन, सीलोन और केन्या के साथ सिंध की विलासिता की वस्तुओं की मांग को पूरा किया। मंगोलियाई शक्ति का उदय और व्यापार मार्गों में मंगोलों द्वारा पैदा की गई रुकावट इन शहरों के पतन का मुख्य कारण साबित हुई।

16.5 चीन और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अरब व्यापार

> मध्य दसवीं से पंद्रहवीं शताब्दी तक, हिंद महासागर और दक्षिणी चीन सागर में इस्लामिक व्यापार को तीन खंडों, जिनका आधार अदन और होर्मुज, कैम्बे और कालीकट, और मलक्का और गुआंगज़ाउ थे, पर पुनर्गठित किया गया था। पहले क्षेत्र में, 980 के दशक में पहले से ही अल-मुकद्दसी के समय से, मक्का, जेद्दा, सुहार और बहरीन महत्वपूर्ण व्यापारिक शहर थे, जो स्थानीय उत्पादों और आयातित वस्तुओं दोनों के व्यापार में लिप्त थे। और पंद्रहवीं शताब्दी में दो महान् पूर्वी शहरों भारत में कैम्बे और दक्षिण पूर्व एशिया के मलक्का में वाणिज्यिक जीवन अदन और होर्मुज के एम्पोरिया व्यापार में बदल गया। लाल सागर और फारस की खाड़ी में कई अन्य लघु कस्बे और शहर समान रूप से फले-फूले और समृद्ध हुए।
>
> **(चौधरी, 1996:132)**

जब बग़दाद की स्थापना अब्बासिद ख़लीफा अल-मंसूर (762 सी ई) द्वारा की गई, उससे लगभग आधी शताब्दी पूर्व से अरब नाविक चीन और भारत में समुद्री यात्राएं करते रहे थे। मध्यकाल के अरबी यात्रा साहित्य चीन और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अरब व्यापार संबंधों पर व्यापक जानकारी प्रदान करते हैं। शहरों का वर्णन, शहरी आबादी की जीवनशैली और व्यापार मार्गों की व्यापक जानकारी, स्थानीय राजनीति और प्रशासन इस प्रकार साहित्य की मुख्य विषयवस्तु है। *सिंदबाद नाविक की कहानी* (*The Story of Sindbad the Sailor*) शायद इस तरह के साहित्य का सबसे अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करती है। इसने न केवल व्यापारियों की गतिविधियों, समुद्री व्यापार मार्ग का ज्ञान और तटीय समुदायों की आजीविका के तरीकों के बारे में अंतर्दृष्टि प्रदान की, बल्कि समुद्री डाकू और अन्य दुश्मनों के हमलों के खिलाफ रणनीतियों का भी प्रदर्शन किया। सुलेमान अल-ताजिर और अब ज़ईद सिराफी द्वारा रचित प्रारंभिक दसवीं शताब्दी की पुस्तक *सिलसिलत अल-तवारीख,* जिसका अंग्रेजी अनुवाद *एंशियंट अकाउंट ऑफ इंडिया एंड चाइनाः बाय टू मुस्लिम ट्रैवलर्स हू वेंट टु दोज पार्ट्स इन द नाइन्थ सेंचुरी,* यूसबिऊ रेनौदोत (Eusebiu Renaudot) द्वारा किया गया, भारत और चीन के साथ व्यापार करने वाले अरब व्यापारियों का प्रथमदर्शी वृतांत प्रस्तुत करती है। उस समय के अरबी साहित्य की दो अन्य महत्वपूर्ण कृतियां जो अरब मुस्लिम व्यापारियों के बारे में विवरण प्रदान करती हैं, नौवीं शताब्दी में लिखी गई अख़बार *ए-सिन वल-हिंद* और दसवीं शताब्दी की *अजायब अल-हिंद* थे।

16.5.1 चीन के साथ अरब व्यापार

चीन के साथ अरब दुनिया के व्यापारिक संबंधों की उत्पत्ति पुरातन काल से है। सासानिद शासकों की बहुत गहरी व्यापारिक दिलचस्पी चीनी क्षेत्र के साथ थी। जब अरब दुनिया का प्रारंभिक इस्लामिक शासकों के तहत सुदृढ़ीकरण हो रहा था, तब चीन में तांग राजवंश का उदय हो रहा था। तांग वंश की शुरुआत और इस्लाम का उदय लगभग एक साथ हुआ। ईरानी और शुरुआती मुस्लिम अरब व्यापारी ज्यादातर चीन के साथ व्यापार करने के लिए स्थल मार्ग पर निर्भर थे। हालांकि, यह समृद्ध कारवां व्यापार लंबे समय तक जारी नहीं रहा, और आठवीं शताब्दी के अंत तक, तिब्बती कबीलों द्वारा उत्पन्न की गई बाधाओं के कारण इसे लगभग त्याग दिया गया। इस आर्थिक अराजकता ने अन्य तरीकों का पता लगाने के लिए प्रेरित किया और इस प्रकार समुद्री व्यापार को प्रोत्साहन मिला। फारस की खाड़ी में व्यावसायिक गतिविधियों को अब्बासिद शासकों द्वारा पुनर्जीवित किया गया और मध्य आठवीं शताब्दी तक, कैंटन (गुआंगज़ाउ) में मुस्लिम व्यापारियों द्वारा एक मुस्लिम कॉलोनी स्थापित की गई। अब्बासिद खलीफा ने भी दोनों क्षेत्रों के बीच व्यापारिक संबंधों को मजबूत करने के लिए चीन को एक उपहार मिशन भेजा। सोहर (Sohar), मिथकीय पात्र सिंदबाद की जन्मभूमि, साथ ही ओमान की खाड़ी पर स्थित, ओमान के बंदरगाह शहर के रूप में

लोकप्रिय, चीन के प्रवेश द्वार के रूप में जाना जाता था। चौधरी के अनुसार, सोहर से क्विीलोन (Quilon) और क़लाह (Qalah) के माध्यम से कैंटन तक पहुँचने में नब्बे दिन लगते थे। अरब व्यापार की उल्लेखनीय वस्तुओं में से एक चीनी मिट्टी के बर्तन थे।

चित्र 16.2: प्रारंभिक चीन के नीले और सफेद चीनी मिट्टी के बर्तन, लगभग 1335
साभार: मुसी गुइमेट

स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/chinese_influences_on_Islamic_pottery#/media/File: Early_blue_and_white_ware_circa_1335_Jingdezhen.jpg

चीनी में सांग और युआन राजवंशों के शासन के दौरान नौवीं और तेरहवीं शताब्दी के मध्य की अवधि, अरब-चीनी समुद्री व्यापार के लिए स्वर्ण युग थी। हालांकि, जब दक्षिण भारत के चोल राजवंश के सबसे महत्वपूर्ण शासक राजेंद्र चोल ने मध्य और दक्षिणी वियतनाम के तटीय क्षेत्र चंपा पर आक्रमण किया तो इन दोनों क्षेत्रों के बीच व्यापार को ग्यारहवीं शताब्दी के तीसरे और पांचवें दशक के बीच कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इस तथ्य के बावजूद कि चोल साम्राज्य में अरब व्यापारी घोड़ों के मुख्य आपूर्तिकर्ता थे, राजेंद्र चोल ने अरब व्यापारियों को चंपा के माध्यम से चीन के साथ व्यापार करने की अनुमति नहीं दी। इन तीन दशकों के बाद अरब और चीन के मध्य व्यापार फिर से पुनर्जीवित हो गया और गुआंगज़ाउ (Guangzhou) की जगह क्वानज़ाऊ (Quanzhou) मुस्लिम और चीनी व्यापारियों का मिलन बिंदु बन गया। युआन शासन के दौरान, चीन के अधिकांश समुद्री व्यापार को मुस्लिम व्यापारियों द्वारा नियंत्रित किया गया था। इस अवधि के दौरान सरकार और व्यापारियों के बीच एक संयुक्त-उद्यम (joint-venture) प्रणाली स्थापित की गई, और इस उद्यम को युआन सरकार द्वारा बड़े पैमाने पर वित्तपोषित किया गया था।

16.5.2 दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अरब व्यापार

आठवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और ग्यारहवीं शताब्दी में दक्षिण पूर्व एशियाई व्यापार पर मुस्लिम व्यापारियों का वर्चस्व, आंद्रे विंक द्वारा बहुत स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया हैः 'आठवीं से ग्यारहवीं शताब्दी ने हिंद महासागर में सभी प्रमुख मार्गों पर मुस्लिम वाणिज्य के विस्तार के काल का गठन किया, जो हिंद महासागर को अरब भूमध्यसागर में बदल रहा था'। यह अरब दुनिया और चीन के बीच मुख्य व्यापार मार्ग था। अरब व्यापारियों को कैंटन तक पहुंचने के लिए भारत से होकर मलय क्षेत्र में मलक्का के जलडमरूमध्य पर स्थित क़लाह को पार करना पड़ता था। केरल में स्थित क्विलोन, सीलोन, जावा और सुमात्रा के द्वीपसमूह, मलक्का जलडमरूमध्य पर स्थित समुद्री बंदरगाह और चम्पा जो मध्य और दक्षिणी वियतनाम का तटीय क्षेत्र था अरब और चीन के समुद्री व्यापार मार्गों के बीच महत्वपूर्ण पड़ाव थे। चंपा में बसने वाले मुस्लिम समुदाय ने सांग और यूआन राजवंशों के दौरान चीन और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के बीच एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। दसवीं शताब्दी के एक चीनी रिकॉर्ड में, चम्पा (Champa) और ज़बज (Zabaj; कंबोडिया और जावा के बीच स्थित एक राज्य) से सांग दरबार में अरब व्यापारियों के आगमन का उल्लेख मिलता है। इस प्रकार, यह रिकॉर्ड दक्षिणी भारत, सीलोन, जावा, सुमात्रा, मलक्का और वियतनाम जलडमरूमध्य के माध्यम से अरब दुनिया और चीन के बीच व्यापार मार्ग की एक तस्वीर प्रस्तुत करता है। दक्षिण भारत में चोल साम्राज्य के पतन ने तेरहवीं शताब्दी में सुमात्रा द्वीपसमूह में इस्लामी राज्यों के उदय का अवसर प्रदान किया। इन राज्यों ने खुद को अरब और दक्षिण पूर्व एशियाई समुद्री व्यापार के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में स्थापित किया। लेकिन दक्षिण पूर्व एशिया के द्वीपों को अरब दुनिया में केवल पंद्रहवीं शताब्दी में शामिल किया गया। व्यापारी इस समुद्री रास्ते से अगर (aloeswood), सागौन, चीनी मिट्टी के बर्तन, ब्राज़ीलवुड और मलयाली टिन वापस लाते थे। अपने वतन लौटते वक्त यात्रा पर जहाज भारत से अरब के लिए रवाना होते थे या फारस की खाड़ी पर लौटने से पहले वे अफ्रीका के पूर्वी तट के साथ चक्कर लगाते थे (*हिस्ट्री ऑफ ह्यूमैनिटी*, 2000: 305)।

बोध प्रश्न-2

1) भारत के साथ अरब व्यापार की प्रकृति पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

2) अरब और चीन के मध्य व्यापार की प्रकृति का परीक्षण कीजिए। इस व्यापार की किसी उल्लेखनीय वस्तु का नाम बताइये।

....

....

....

....

....

3) दक्षिण पूर्व एशियाई व्यापार पर मुस्लिम व्यापारियों के प्रभुत्व की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

16.6 सारांश

सातवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में भौगोलिक रूप से महत्वपूर्ण क्षेत्र, *जज़ीरत-उल अरब* में इस्लाम का उदय हुआ। समय के साथ बद्दू होने के तत्वों को इस्लामी पहचान के विरोध में माना जाने लगा। अस्तित्व के शहरी तत्वों ने उनके जीवन में प्रवेश किया। इस शहरी अर्थव्यवस्था में खानाबदोश योगदान को अच्छी तरह से समझने की जरूरत है। अरबों के लिए शहरी केंद्र और कारवां व्यापार नया नहीं था। इस्लाम ने अरब दुनिया को एक सजातीय पहचान और राजनीतिक स्थिरता प्रदान की जिसके परिणामस्वरूप अंततः एशिया और उत्तरी अफ्रीका में समुद्री व्यापार में बड़े पैमाने पर वृद्धि हुई। खलीफाओं की केंद्रीकृत सत्ता ने इस क्षेत्र में शहरी केंद्रों के उदय को प्रोत्साहित किया, जिसने एशिया, उत्तरी और पूर्वी अफ्रीका और पूर्वी यूरोपीय देशों के विभिन्न व्यापारियों के एक संगम स्थल के रूप में कार्य किया। फारस की खाड़ी, ओमान की खाड़ी, अरब सागर और लाल सागर के तटीय क्षेत्रों पर स्थित इन शहरों ने भूमध्यसागर, लाल सागर, अरब सागर और हिंद महासागर से मिलकर एक समुद्री व्यापारिक नेटवर्क विकसित किया। किसानों और खानाबदोशों ने भी इस्लाम की शहरी सफलता में योगदान दिया। अरब जगत के समृद्ध व्यापार ने अरबों के गैर-अरब क्षेत्रों में प्रवास को प्रोत्साहित किया, विशेष रूप से अरब सागर और हिंद महासागर के तटीय क्षेत्रों के किनारे। यह प्रवासी आबादी दक्षिण भारत और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के विभिन्न हिस्सों में बस गई, और इसने न केवल दक्षिण एशियाई क्षेत्र में इस्लामी संस्कृति का प्रसार किया, बल्कि अरब, भारत, चीन और अन्य दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के बीच समुद्री व्यापार के लयबद्ध विकास की एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में काम किया।

16.7 शब्दावली

खलीफा : इस्लामी दुनिया में धार्मिक और राजनीतिक प्रमुख। पैगम्बर मुहम्मद की मृत्यु के बाद अबु बकर पहले खलीफा बने।

जज़ीरत-उल अरब : *जज़ीरत-उल अरब* में निम्नलिखित आधुनिक क्षेत्र शामिल हैं : यमन, ओमान, कतर, बहरीन, कुवैत, सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात और जॉर्डन और इराक के कुछ हिस्से

ज़मोरिन : कालीकट का स्थानीय शासक

16.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 16.2 देखें

2) भाग 16.3 देखें

3) भाग 16.3, विशेषकर उप-भाग 16.3.1 और 16.3.2 दोनों देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 16.4 देखें

2) भाग 16.5.1 देखें

3) भाग 16.5.2 देखें

16.9 संदर्भ ग्रंथ

अल-सुवैदी, अहमद, (1993) 'काउंटर ट्रेड एंड द अरब वर्ल्डः ए कंपैरेटिव व्यू', *अरब लॉ,* Q. 8(4): 273.287.

चौधरी, के. एन., (1985) *ट्रेड एंड सिविलाइज़ेशन इन द इंडियन ओशियनः एन इकनोमिक हिस्ट्री फ्रॉम द राइज ऑफ इस्लाम टू 1750* (कैंब्रिजः कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

चौधरी, के.एन., (1996) 'द इकोनॉमी इन मुस्लिम सोसाइटीज़', फ्रांसिस रॉबिंसन (स). *द कैंब्रिज इलस्ट्रेटेड हिस्ट्री ऑफ द इस्लामिक वर्ल्ड* (कैंब्रिजः कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

क्रोन पेट्रिशिया, (2004) *मेक्कन ट्रेड एंड द राइज़ ऑफ इस्लाम* (एडिनबर्गः जॉर्जियास प्रेस).

कोवाल्स्का, मारिया, (1987-88) 'फ्राम फैक्ट्स टू लिटरेरी फिक्शनः मिडिवल अरेबिक ट्रैवल लिटरेचर', *क्वाडर्नि डी स्टुदी अरबी,* भाग 5.6: 397-403.

हिस्ट्री ऑफ हयूमैनिटीः साइंटिफिक एंड कल्चरल डेवलपमेंट, अल-बखित, एम. ए., बज़िन, एल. और सिस्सोको, एस. एम., (सं.) (2000) *खंड* IV: *फ्रॉम द सेवेंथ टू द सिक्सटींथ सेंचुरी* (यूनेस्कोः रुटलेज).

मालेकंदाथिल, पायस, (2007) 'विड्स ऑफ चेंज एंड लिंक्स ऑफ कंटीन्यूटीः ए स्टडी ऑन केरल मर्चेंट ग्रुप्स ऑफ़ केरला एंड द चैनल्स ऑफ देयर ट्रेड, ए.डी. 1000-1800', *जर्नल ऑफ द इकोनॉमिक एंड सोशल हिस्ट्री ऑफ द ओरिएंट,* भाग 50(2): 226.

मुंहाल, मुहम्मद रफीक, (1992) 'अर्ली मुस्लिम सिटीज इन सिंध एंड पैटर्न्स ऑफ़ इंटरनेशनल ट्रेड, *इस्लामिक स्टडीज़,* भाग 31(2): 267-286.

शात्ज़मिलर, माया (2011) 'इकोनॉमिक परफॉर्मेंस एंड इकोनोमिक ग्रोथ इन द अर्ली इस्लामिक वर्ल्ड', *जर्नल ऑफ द इकोनोमिक एंड सोशल हिस्ट्री ऑफ द ओरिएंट,* भाग 54: 132-184.

उम, नैंसी, (2003) 'स्पेशियल नेगोसिएशंस इन ए कमर्शियल सिटीः द रेड सी पोर्ट ऑफ़ मोचा, यमन, ड्यूरिंग द फर्स्ट हाफ ऑफ द ऐटीन्थ सेंचुरी', *जर्नल ऑफ द सोसाइटी ऑफ आर्किटेक्चरल हिस्टोरियंस,* भाग 62 (2): 178-193.

16.10 शैक्षणिक वीडियो

द हज। नेशनल ज्योग्राफिक

https://video.nationalgeographic.com/video/00000144-0a40-d3cb-a96c-7b4dd49c0000

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

NOTE

NOTE

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

QR Code-website ignou.ac.in

QR Code-e Content-App

QR Code - IGNOU-Facebook (@OfficialPageIGNOU)

QR Code Twitter Handel (OfficialIGNOU)

INSTAGRAM (Official Page IGNOU)

QR Code -e Gyankosh-site

IGNOU SOCIAL MEDIA

QR Code generated for quick access by Students

IGNOU website

eGyankosh

e-Content APP

Facebook (@offical Page IGNOU)

Twitter (@ Offical IGNOU)

Instagram (official page ignou)

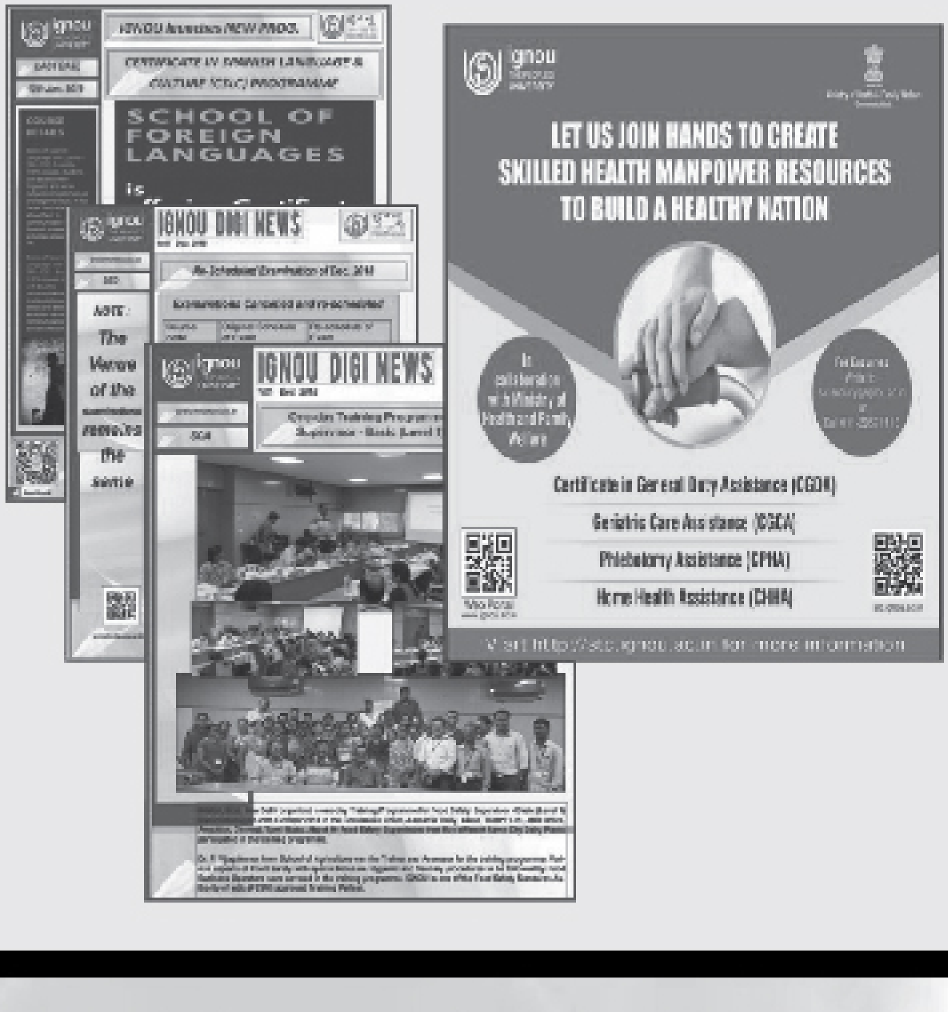

Like us, follow-us on the University Facebook Page, Twitter Handle and Instagram

To get regular updates on Placement Drives, Admissions, Examinations etc.

MPDD/IGNOU/P.O. 8.0K/ October, 2020

ISBN: 978-93-90496-04-4